तुलनात्मक शासन
और
राजनीति

राजनीति पर अन्य महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

विश्व के प्रमुख संविधान

भारतीय शासन एवं राजनीति

भारतीय राजनीति के नये मोड़

पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन का इतिहास

आधुनिक राजनीतिक चिन्तन का इतिहास

प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार एवं संस्थाएँ

Comparative Government and Politics

राजनीतिक संस्थाएँ और तुलनात्मक शासन

भारत का संवैधानिक इतिहास

आधुनिक राजनीतिक सिद्धान्त

तुलनात्मक शासन
और
राजनीति
(Comparative Government and Politics)

डा० परमात्माशरण
एम० ए० पी एच० डी
प्रिंसिपल (रिटायर्ड), मेरठ कालेज, मेरठ।

मीनाक्षी प्रकाशन
मेरठ — नयी दिल्ली

मीनाक्षी प्रकाशन
बेगम ब्रिज, मेरठ ।
○
4 अंसारी रोड, दरियागंज,
नयी दिल्ली ।

तृतीय सशोधित एव परिवर्द्धित सस्करण

मूल्य 27 50 रुपये

डा० परमात्माशरण

मीनाक्षी मुद्रणालय मेरठ मे मुद्रित ।

प्रस्तावना

तुलनात्मक शासन और राजनीति के अध्ययन का महत्त्व विगत दो दशको मे बहुत बढा है और उसके अध्ययन की विधियो मे इतना बडा परिवतन हुआ है कि उसे कुछ लेखको ने क्रान्ति कहा है। विषय के परम्परागत उपागम वास्तव म तुलनात्मक न थे। अध्ययन की इस परम्परा की अपर्याप्तता इन बातो से स्पष्ट है (1) यह प्रादेशिक थी, क्योकि इसका क्षेत्र मुख्यत यूरोपीय देशो व सयुक्त राज्य अमरीका की शासन-पद्धतियो तक सीमित था, (2) अध्ययन का प्रधान उपागम आकृतिक (configurative) था, अर्थात् अधिकतर अध्ययनो की विषय वस्तु विभिन्न शासन-पद्धतियो की मुख्य विशेषताएँ थी, और (3) अनुशासन का रूप अधिकाशत औपचारिक (formal) था, क्योकि अध्ययन का केन्द्र-बिन्दु उनके निष्पादन, अन्तर्क्रिया और व्यवहार न होकर उनके कानूनी प्रतिमान (norms), नियम, विनियम अथवा राजनीतिक विचार और विचारधाराएँ थी।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद अग्रलिखित तीन कारको के परिणामस्वरूप इसके अध्ययन का नया रूप मिला प्रथम, मध्यपूर्व एशिया व अफ्रीका मे अनेक स्वतन्त्र राज्यो का उदय हुआ, दूसरे, अटलाटिक महासागरीय देशो की प्रधानता का अन्त हुआ, और तीसरे साम्यवाद और उस पर आधारित शासन पद्धतिया का एक शक्तिशाली प्रतिद्वन्द्वी के रूप म उदय हुआ।

तुलनात्मक शासन और राजनीति के नये अध्ययन मे उसका विषय-क्षेत्र और अधिक विस्तृत, वास्तविकता परिशुद्ध (precise) और सैद्धान्तिक रूप से व्यवस्थित हुआ है। फलत अध्ययन विधि अधिक वैज्ञानिक बनी है अनेक आधारभूत धारणाओ यथा, राजनीतिक पद्धति, राजनीतिक सस्कृति, समाजीकरण, आधुनिकीकरण, राजनीतिक सचार और नये उपागमो (जैसे व्यवहारवादी, क्षेत्रीय अध्ययन, समस्यागत, समूह सिद्धान्त और मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त आदि) को प्रयुक्त किया गया।

प्रस्तुत सस्करण मे उपर्युक्त बातो तथा विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा स्नातकोत्तर कक्षाओ के लिए इस क्षेत्र मे विहित पाठ्यक्रमो को ध्यान मे रखा गया है। चूकि अभी तक अधिकतर पाठ्यक्रमो का परम्परागत उपागम से पूर्ण सम्बन्ध विच्छेद नही हुआ है, अत पाठको की सुविधा और आवश्यकताओ को सामने रखकर पुस्तक के प्रथम अध्याय म तुलनात्मक शासन और राजनीति के सैद्धान्तिक पहलुओ का विवेचन किया गया है और बाद के अध्यायो मे शासन के विभिन्न पहलुओ को आधार बनाकर अनेक शासन-पद्धतियो का तुलनात्मक विवेचन दिया गया है। हमे विश्वास है कि विषय के शिक्षक और पाठक इस पूर्वगामी सस्करण से कही अधिक उपयोगी पायेंगे और पूर्ववत् अपनायेंगे। हम उन सभी विद्वान् लेखको के प्रति आभारी हैं जिनके मान्य ग्रन्थो से पाठ्य-सामग्री का चयन किया गया है तथा अनेक उपयुक्त उद्धरण भी लिये गये हैं।

—परमात्माशरण

विषय-सूची

1 तुलनात्मक शासन और राजनीति परिचयात्मक 1

(i) तुलनात्मक शासन और राजनीति प्रकृति और क्षेत्र (Comparative Government and Politics Nature and Scope)।

(ii) शासन के तुलनात्मक अध्ययन का विकास और परम्परागत उपागम (Evolution of the Study of Comparative Government and Traditional Approaches)।

(iii) तुलनात्मक विश्लेषण और विधि (Comparative Analysis and Method) तुलनात्मक विश्लेषण (Comparative Analysis), पद्धति विश्लेषण (Systems Analysis), सरचनात्मक कार्यात्मक विश्लेषण (Structural Functional Analysis), निवेश निगत विश्लेषण (Input Output Analysis) तुलनात्मक विधि (Comparative Method)।

(iv) प्रमुख उपागम (Major Approaches) व्यवहारमूलक उपागम (Behavioural Approach) समस्यागत उपागम (Problem Approach) क्षेत्रीय अध्ययन उपागम (Area Study Approach), समूह सिद्धान्त (Group Theory)।

(v) राजनीतिक पद्धति और सम्बन्धित धारणाए (Political System and Related Concepts) राजनीतिक पद्धति (Political System) राजनीतिक विचारधाराएँ (Political Ideologies), राजनीतिक पद्धतियो एव विचारधाराओ मे सम्बन्ध (Relationship between Political Systems and Ideologies)।

(vi) राजनीतिक सस्कृति और सहभागिता (Political Culture and Participation)।

(vii) राजनीतिक विकास और आधुनिकीकरण (Political Development and Modernisation)।

(viii) परिवतन की प्रक्रिया और क्रान्ति (Process of Change and Revolution)।

(ix) मार्क्स और लेनिन का विचारबन्ध या मुख्य विचार (Marxist Leninist Frame work)।

(x) सविधान से बाहर की सस्थाएँ (Political Institutions of Extra Constitutional Nature) अभिसमय (Conventions), विशिष्ट जन (Elite), नौकरशाही (Bureaucracy), जनमत (Public Opinion), राजनीतिक सचार (Political Communication), हित समूह (Interest Articulation), राजनीतिक दल (Interest Aggregation)।

2 राज्य और शासन (State and Government) 24

राज्य, शासन (सरकार), शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त, निरोध व सन्तुलन का सिद्धान्त।

3. राज्यों (अथवा सरकारों) के विभिन्न रूप (Forms of Government) 37

वर्गीकरण क आधार, प्रजातन्त्र, प्रजातन्त्र के गुण-दोष, प्रजातन्त्र की सफलता के लिए आवश्यक बातें, अधिनायकतन्त्र, सोवियत सघ म प्रजातन्त्र है या नही ?

4 सविधानवाद (Constitutionalism) 59

सविधान की व्याख्या, सविधानवाद—प्राचीन और अर्वाचीन, साविधानिक शासन, सविधानो का वर्गीकरण, सविधान का सशोधन और विकास, विभिन्न राज्यो मे सशोधन विधि ।

5 सघवाद—सिद्धान्त और व्यवहार (Federalism Theory and Practice) 88

एकात्मक या सघात्मक शासन, विभिन्न देशो मे सघात्मक व्यवस्था सयुक्त राज्य अमरीका, भारत, सोवियत सघ, स्विटजरलैण्ड, आस्ट्रेलिया, कनाडा, पश्चिमी जमनी, नाइजीरिया, युगोस्लाविया, मलयेशिया ।

6 कार्यपालिका—सैद्धान्तिक पहलू (Executive Theoretical Aspects) 122

कार्यपालिका का महत्त्व और काय, कार्यपालिकाओ के विभिन्न प्रकार, ससदात्मक व अध्यक्षात्मक शासन पद्धतियाँ, कार्यपालिका का अध्यक्ष, अन्तिम विचार ।

7 सासद पद्धति वाले राज्यो मे कार्यपालिकाएँ (Executives in Parliamentary States) 137

ब्रिटेन मे ताज, प्रिवी परिषद् और केबिनेट, भारत मे राष्ट्रपति और सघीय मन्त्र परिषद्, अन्य देश जापान, कनाडा, आस्ट्रेलिया, श्रीलका, पश्चिमी जमनी, नाइजीरिया, इजराइल ।

8 अन्य राज्यो मे कार्यपालिकाएँ (Executives in Other States) 193

सयुक्त राज्य अमरीका मे राष्ट्रपति, फ्रास के पाचवे गणतन्त्र मे कार्यपालिका, अन्य देश स्विट्जरलैण्ड, सोवियत सघ, चीन, युगास्लाविया ।

9 विधायिका—सैद्धान्तिक पहलू (Legislature Theoretical Aspects) 226

विधायिकाओ का उदय और महत्त्व, विधायिका की रचना, विधायिका के सदनो की तुलनात्मक शक्तिया, प्रदत्त (सौंपा हुआ) विधायन, प्रजातान्त्रिक और अधिनायकतन्त्री विधानमण्डल, विधानमण्डलो का पतन और उनके सुधार के लिए सुझाव ।

10 सासद पद्धति वाले राज्यो मे विधायिकाएँ (Legislatures in Parliamentary States) 247

ब्रिटेन मे पालियामण्ट, भारत म सघीय ससद, जापान मे डायट, आस्ट्रेलिया में राष्ट्रमण्डलीय पार्लियामेण्ट, कनाडा मे पार्लियामेण्ट, श्रीलका मे पार्लियामेण्ट ।

11 अन्य राज्यो मे विधायिकाएँ (Legislatures in Other States) 274

सयुक्त राज्य अमरीका म काग्रेस, फ्रास म पार्लियामेण्ट, स्विट्जरलैण्ड मे फेडरल एसेम्बली, सोवियत सघ मे सर्वोच्च सोवियत, साम्यवादी चीन मे राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस, युगोस्लाविया मे फेडरल एसेम्बली ।

12 विभिन्न राज्यो मे विधायी सगठन और प्रक्रियाएँ (Legislative Organisations and Processes in Various States) 298

विधायी सगठन और प्रक्रिया ग्रेट ब्रिटेन भारत, आस्ट्रेलिया, कनाडा, जापान, फ्रास, पश्चिम जमनी, सयुक्त राज्य अमरीका, स्विट्जरलैण्ड, सोवियत सघ, साम्यवादी चीन, युगोस्लाविया ।

13 बजट और वित्तीय प्रक्रिया (Budget and Financial Procedure) 350

सावजनिक वित्त और बजट ग्रेट ब्रिटेन, भारत, सयुक्त राज्य अमरीका, फ्रास ।

14 कानूनी पद्धतियाँ और न्यायपालिका (Legal Systems and Judiciary) 364

कानूनी पद्धतिया, विधि का शासन और प्रशासनिक कानून, विभिन्न प्रकार के कानून,

न्यायपालिका का महत्त्व और उसके कार्य, संविधान का निर्वचन और पुनरवलोकन, न्यायपालिका का संगठन ।

15 विभिन्न राज्यों मे न्यायपालिका का संगठन (Organisation of Judiciary in Various States) 388

ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमरीका, भारत, फ्रांस, जापान, स्विट्जरलैण्ड, आस्ट्रेलिया, कनाडा, सोवियत संघ, चीन, युगोस्लाविया ।

16 विभिन्न राज्यों मे नागरिकों के अधिकार (Citizen's Rights in Various States) 409

अधिकार क्या हैं और क्यों ? विभिन्न राज्यों मे अधिकार · संयुक्त राज्य अमरीका, ब्रिटेन, भारत फ्रांस, स्विट्जरलैण्ड, जापान, युगोस्लाविया, कनाडा, सोवियत संघ, चीन ।

17 मताधिकार, प्रतिनिधित्व और प्रत्यक्ष विधि निर्माण (Franchise, Representation and Direct Legislation) 433

मताधिकार, विभिन्न राज्यों म मताधिकार, प्रतिनिधित्व, प्रत्यक्ष विधि निर्माण ।

18 विभिन्न राज्यों मे निर्वाचन पद्धतियां (Electoral Systems in Various States) 456

राष्ट्रपति का निर्वाचन संयुक्त राज्य अमरीका, फ्रांस, भारत । आम चुनाव ब्रिटेन, भारत, फ्रांस, संयुक्त राज्य अमरीका, जापान स्विट्जरलैण्ड, सोवियत संघ, चीन, युगोस्लाविया ।

19 राजनीतिक दल और दलीय पद्धतियां (Political Parties and Systems) 480

राजनीतिक दल, दलीय पद्धति, एक-दलीय पद्धतिया द्वि दलीय पद्धतिया, बहु-दलीय पद्धतिया ।

20 विभिन्न राज्यों मे राजनीतिक दल (Political Parties in Different States) 502

ग्रेट ब्रिटेन संयुक्त राज्य अमरीका, फ्रांस, स्विट्जरलैण्ड, भारत, जापान, आस्ट्रेलिया, कनाडा, सोवियत संघ, चीन युगोस्लाविया ।

21 दबाव (हित) समूह (Pressure or Interest Groups) 563

दबाव समूह व राजनीतिक दल मे अन्तर, हित समूह संयुक्त राज्य अमरीका, ग्रेट ब्रिटेन, भारत अन्य राज्य ।

22 लोक प्रशासन और नागरिक सेवाएँ (Public Administration and Civil Services) 577

लोक-प्रशासन—ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमरीका फ्रांस, सोवियत संघ, भारत । नागरिक सेवाएँ—ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमरीका भारत ।

23 राज्य के आर्थिक संगठन (Economic Organisations of the State) 598

प्रजातन्त्र—राजनीतिक और आर्थिक, ग्रेट ब्रिटेन मे आर्थिक संगठन, इटली म निगमित राज्य, सोवियत संघ म नियोजन, भारत मे प्रजातान्त्रिक नियोजन, जर्मनी म आर्थिक परिषद् फ्रांस मे सामाजिक और आर्थिक परिषद् ।

24 स्थानीय शासन (Local Government) 610

कुछ सैद्धान्तिक पहलू ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमरीका, भारत, फ्रांस, जापान, साम्यवादी राज्य ।

25 गैर-पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रियायें (Non Western Political Processes) 640

भूमिका, दल विहीन प्रजातन्त्र और विकेन्द्रीकरण गांधी जी के अनुसार विकेन्द्रीकृत व्यवस्था और सर्वोदय, नेपाल मे पंचायत प्रजातन्त्र, युगोस्लाविया म समाजवादी प्रजातन्त्र ।

पहला अध्याय

तुलनात्मक शासन और राजनीति : परिचयात्मक

I

तुलनात्मक शासन और राजनीति प्रकृति और क्षेत्र
(Comparative Government and Politics Nature and Scope)

1 तुलनात्मक शासन और राजनीति क्या है ?

शासन और राजनीतिक पद्धति—तुलनात्मक शासन और राजनीति को भली प्रकार से समझने के लिए सर्वप्रथम हम शासन (government) और राजनीतिक पद्धति (political system) के बीच अन्तर को स्पष्ट करेंगे, क्योंकि इस विषय पर हाल मे लिखी गयी पुस्तको मे शासन के स्थान पर राजनीतिक पद्धति के प्रयोग का चलन हो गया है। तुलनात्मक राजनीति के विद्यार्थियो का सम्बन्ध अब सविधान (constitution) और शासन के रूप अथवा प्रणाली (form of government) से ही नही है वरन तुलनात्मक राजनीतिक पद्धति का एक अग है। राजनीतिक पद्धति म शासन तो सम्मिलित है ही, किन्तु इसमे शासन के अतिरिक्त कुछ अनौपचारिक और गैर सरकारी कारक भी आते है जो कि सार्वजनिक मामलो के क्षेत्र म शासन तन्त्र को प्रभावित करते हैं। इनम ये विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं—(1) उसकी ऐतिहासिक विरासत, भौगोलिक व अन्य साधन, उसके सामाजिक और आर्थिक सगठन, उसकी विचारधारायें और उसकी राजनीतिक शैली (political style), तथा (2) उसके राजनीतिक दलो, हित समूहो (interest groups) और नतृत्व की सरचना। इस प्रकार किसी भी समाज की राजनीतिक पद्धति उसके शासन और उससे सम्बन्धित तथा उस पर प्रभाव डालने वाले पूर्वोक्त दो समूहो मे वर्णित कारको अथवा पहलुओ स मिलकर बनती है। प्रथम समूह मे वर्णित कारक उस समाज की राजनीति का पर्यावरण (environment) बनाते हैं और उसकी राजनीतिक पद्धति की आधारभूत समस्याओ, साधनो, अभिवृत्तियो, समूहो, राजनीतिक गठबन्धनो आदि का ज्ञान कराते हैं और ये सब सरकार के निर्णयो को प्रभावित करते हैं। राजनीतिक पद्धति के इन आधारभूत पहलुओ और शासन के अगो से मिलकर 'राजनीति का गति विज्ञान (dynamics of politics) बनता है। राजनीतिक पद्धति के इन आधारभूत पहलुओ से उठने वाले सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और वैचारिक दाव तथा उनके समर्थन (supports) सदैव अधिकारियो और शासन के अगो के समक्ष इस माग (demand) के साथ रखे जाते हैं कि उन्हे सार्वजनिक नीति मे परिवर्तित किया जाय। राजनीतिक दल, हित अथवा दबाव समूह और राजनीतिक नेता ऐसे दावो को सरकार के समक्ष रखते हैं। इस प्रकार वे राजनीतिक पद्धति के भीतर क्रियाशील अभिकर्त्ताओ (active agents) का काय करते हैं। अतएव राजनीति के ये तथाकथित गतिशील (दूसरे समूह मे वर्णित) कारक राजनीतिक पद्धति के आधारो और शासन की नीति निर्धारण करने वाले अगो के बीच की खाई को पाटते

हैं। राजनीतिक पद्धति का तीसरा और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अंग शासन ही है।

जी० ए० आलमोण्ड के शब्दो मे, 'राजनीतिक पद्धति (सभी स्वतन्त्र समाजो मे पायी जाने वाली) पारस्परिक क्रियाओ की वह पद्धति है जो एकीकरण और अनुकूलन के काय करती है (आन्तरिक क्षेत्र मे तथा अन्य समाजो के प्रति भी)। यह काय न्यूनाधिक वैध बल प्रयोग अथवा उसके प्रयोग करने की धमकी के द्वारा होता है। राजनीतिक पद्धति समाज मे वैध व्यवस्था बनाये रखने वाली अथवा परिवर्तन लाने वाली पद्धति है।'[1] सावजनिक मामला के क्षेत्र म समस्याओ को समझने और निणय करने के लिए स्थापित तन्त्र को राजनीतिक पद्धति कह सकते हैं। वह सरकारी तन्त्र जिसके द्वारा विभिन्न समस्याओ को समझा जाता है और निणय किये जाते हैं, सरकार कहलाता है। समाज के विधायी, कायकारी, न्यायिक और अधिकारीतन्त्र (bureaucracy) के अथ मे शासन तुलनात्मक राजनीति के विद्यार्थी के अध्ययन का एकमात्र विषय नही है। यह तो अधिक विस्तृत राजनीतिक पद्धति का केवल एक भाग है। राजनीतिक पद्धति मे शासन के अतिरिक्त ऐसे अनौपचारिक अथवा गैर सरकारी कारको को भी सम्मिलित किया जाता है जो सावजनिक मामलो के क्षेत्र मे समाज की समस्याएँ प्रस्तुत करने वाले तन्त्र के कार्य करने तथा उसके उत्पादनो को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार शासन के साथ एक दूसरे से सम्बन्धित तथा एक दूसरे को प्रभावित करने वाले कारको के दोनो समूहो के योग से राजनीतिक पद्धति बनती है।[2]

तुलनात्मक शासन और राजनीति—डहल (Dahl) ने ठीक ही कहा है कि आज का नागरिक देश, स्कूल, चच, व्यापारिक फम, नागरिक सघ तथा अन्य अनेक प्रकार के सगठनो मे राजनीति (politics) को देखता है। 'राजनीति' मानव जीवन का वह तथ्य है जिससे अब कोई बच नही सकता। प्रत्येक व्यक्ति किसी भी समय किसी न किसी रूप मे राजनीति मे अन्तग्रस्त रहता है। वैसे राजनीति एक प्राचीन और सवव्यापी अनुभव की वस्तु रही है। एरिस्टॉटल प्रथम महान ग्रीक लेखक था जिसने पोलिस (polis) अथवा राजनीतिक सघ को सबसे अधिक प्रभुत्वपूण (sovereign) और विस्तारपूण बताया और राज्य (polity) के सगठन को सविधान कहा। उसी ने तुलनात्मक शासन (comparative government) के विज्ञान को आरम्भ किया।

किसी भी समाज म सम्पूण नीति सम्बन्धी गतिविधिया सरकारी नही होती (not all policy activity is governmental) और न ही सारी सरकारी गतिविधियाँ राजनीतिक होती हैं (not all governmental activity is political)। राजनीति एक प्रकार की मानव गतिविधि या मानव व्यवहार है, यह सामाजिक व्यवहार (social behaviour) का एक रूप है, जैसे आर्थिक व्यवहार (economic behaviour) भी सामाजिक व्यवहार का एक रूप है। जबकि तुलनात्मक शासन मे विभिन्न राजनीतिक पद्धतियो उनकी विभिन्न सस्थाओ और उनके कार्यों का तुलनात्मक अध्ययन आता है, तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र अधिक विस्तृत है। इसम तुलनात्मक शासन के अतिरिक्त वह सब भी आ जाता है जिसे हम अ-राज्यीय राजनीति (non state politics) कह सकते हैं। दूसरे शब्दो मे, तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र तुलनात्मक शासन से अधिक व्यापक है यद्यपि दोनो मे ही तुलना करना अध्ययन का केन्द्र है। जी० के० रॉबट्स (G K Roberts) के अनुसार, 'तुलनात्मक शासन का प्रयोग राज्यो, उनकी सस्थाओ और उनके कार्यों से सम्बद्ध

[1] The political system is the legitimate order maintaining or transforming system in the society —Almond and Coleman *The Politics of Developing Areas* p 7

[2] A political system is a mechanism for the identification and posing of problems and the making and administering of decisions in the realm of public affairs an area which is variously defined by different societies The official machinery by which these problems and decisions are legally identified posed made and administered is called government Government is not, however the sole concern of students of comparative politics

—Ward and Macridis

पृथ समूहों, यथा राजनीतिक दल व हित समूह के अध्ययन हेतु उपयुक्त है। परन्तु 'तुलनात्मक राजनीति' शब्द का परिप्रेक्ष्य अधिक व्यापक है, इसमें शासन तथा अराज्यीय राजनीति (non-state politics), जनजातियों व निजी संस्थाओं, सामाजिक पर्यावरण (social environment) आदि के अध्ययन का भी समावेश किया जाता है। तुलनात्मक राजनीति के अध्ययनकर्त्ता का अध्ययन विभिन्न राजनीतिक पद्धतियों के नियम बनाने, नियमों का कार्यान्वित करने और नियमों के अनुसार न्याय करने वाले अंगों के अध्ययन तथा संविधान से बाहर के अभिकरणों यथा राजनीतिक दलों और दबाव समूहों के अध्ययन के साथ अन्त नहीं होता। इन सबके अतिरिक्त यह आगे बढ़कर उन विषयों का भी अध्ययन करता है जो कि अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के क्षेत्र में आते हैं।

सिडनी वर्बा ने उपर्युक्त विचार को संक्षेप में इस प्रकार स्पष्ट किया है 'वर्णनमात्र से आगे सैद्धान्तिक दृष्टि से अधिक संगत समस्याओं को देखो, अकेले मामले से आगे अनेक मामलों की तुलना को देखो, शासन की औपचारिक संस्थाओं से आगे राजनीतिक प्रक्रियाओं और राजनीतिक कार्यों को देखो, और पाश्चात्य यूरोप के देशों से आगे एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के नये राष्ट्रों को देखो।'[1] इस प्रकार तुलनात्मक राजनीति में अनेक शासन पद्धतियों के अनुभवों, संस्थाओं, व्यवहारों और प्रक्रियाओं का ऐसे विस्तारपूर्ण ढंग से अध्ययन किया जाता है कि उसमें संविधान से बाहर के अभिकरणों (extra constitutional agencies) का अध्ययन भी आ जाय जिनका किसी भी रूप में शासन के औपचारिक अंगों से कोई भी सम्बन्ध हो। अस्तु, इसका सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण नियमितताओं (significant regularities) राजनीतिक व्यवहार और राजनीतिक संस्थाओं की कार्यशैली में समानताओं और असमानताओं से है।[2] परन्तु आजकल अनेक लेखक तुलनात्मक शासन और तुलनात्मक राजनीति को एक दूसरे के पर्यायवाची के रूप में प्रयोग करते हैं।

2 तुलनात्मक शासन और राजनीति का अध्ययन क्यों किया जाता है ?

इस अध्ययन के साधारण रूप में दो प्रयोजन हैं, जिन्हें हम संक्षेप में इस प्रकार रख सकते हैं प्रथम, यह हमें विदेशों में शासन और राजनीति के क्षेत्र में घटी और सम्भावित घटनाओं का अधिक अच्छी प्रकार से विवेचन करने में सहायता देता है। विदेशों की राजनीतिक संस्थाओं और उनसे सम्बन्धित राजनीति के अध्ययन से हम अपने देश की संस्थाओं को अधिक अच्छी प्रकार से समझ सकते हैं। यह हमारे देश की समस्याओं के उत्तर तो नहीं दे सकता, फिर भी यह हमें ऐसे प्रश्न अवश्य ही सुझा सकता है जिन्हें कि हमें अपनी राजनीतिक शैली के बारे में पूछना चाहिए और उनके उत्तर खोजने का प्रयत्न करना चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि देश में संसद शासन प्रणाली सफलतापूर्वक नहीं चल पा रही है तो हम अन्य देशों की समान शासन पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन करके पता लगाना चाहिए कि उन देशों में उसकी सफलता के क्या कारण हैं और वे देश में कहाँ तक विद्यमान हैं, यदि नहीं तो उन्हें किस प्रकार पैदा किया जा सकता है अथवा असफलता के लिए उत्तरदायी कारकों को किस प्रकार दूर किया जा सकता है।

दूसरे, विभिन्न राज्यों की शासन पद्धतियाँ उनकी ऐतिहासिक व भौगोलिक दशाओं, सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक संस्थाओं तथा विचारों से निर्धारित होती हैं। अधिकतर देशों

[1] Look beyond description to more theoretically relevant problems look beyond the single case to the comparison of many cases look beyond the formal institutions of government to political processes and political functions and look beyond the countries of Western Europe to the new nations of Asia Africa and Latin America —Sydney Verba

[2] J C Johari, *Comparative Politics*, pp 169–70

में शासन पद्धति और विचारधारा का गहरा सम्बन्ध है। उदाहरण के लिए, पाश्चात्य प्रजातन्त्री देशों की विचारधारा उदारवादी प्रजातन्त्र (liberal democracy) की है और वहां पर प्रजातन्त्र की स्वतन्त्र संस्थाओं का अस्तित्व है, किन्तु सोवियत संघ, चीन व अन्य साम्यवादी राज्यों की विचारधारा साम्यवादी है और उनकी शासन पद्धति उसी पर आधारित है, वे अपने देश में स्थापित पद्धति को 'जनवादी प्रजातन्त्र' (people s democracy) कहते हैं, जो अधिकांशत साम्यवादी दल की अधिनायकशाही है।

किसी भी देश की शासन पद्धति उसके लिए बहुत उपयुक्त व सफल सिद्ध हो सकती है, परन्तु उससे भिन्न दशाओं और विचारधारा वाले देशों मे वह पद्धति उसी प्रकार सफल हो सके ऐसा सम्भव नही है। संसद प्रजातन्त्र का उदय और विकास ग्रेट ब्रिटेन मे हुआ और वहां वह बड़ी सफलता से चल रहा है। कनाडा व आस्ट्रेलिया आदि देशों म भी जहा अंग्रेज जाति के लोग जाकर बस गये, यह पद्धति सफल रही है, किन्तु एशिया और अफ्रीका के हाल ही में स्वतन्त्र हुए अनेक राज्यों म इस पद्धति को लागू किया गया, उनम से कुछ मे—भारत व श्रीलंका—यह काफी मात्रा मे सफल रही है परन्तु प्राय अन्य सभी राज्यों म यह असफल रही और इसका स्थान दूसरी पद्धतियों ने ले लिया। विभिन्न राज्यों के शासन अथवा राजनीतिक पद्धतियों तथा उनकी राजनीति का तुलनात्मक अध्ययन करके पता लगाया जा सकता है कि संसद शासन पद्धति को सफल बनाने के लिए क्या दशाएँ आवश्यक हैं।

अतएव यह कहना उचित है कि किसी भी शासन पद्धति को चाहे सैद्धान्तिक दृष्टि से वह कितनी भी अच्छी हो, किसी अन्य देश मे आवश्यक संशोधनों व परिवर्तनों के बिना नही अपनाया जा सकता। जहा तक तुलनात्मक विधि का सम्बन्ध है, यदि हम विभिन्न राज्यों के संविधानों की ध्यानपूर्वक परीक्षा करे तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि शासन की तीन प्रमुख शाखाओं का संगठन उनकी राजनीतिक संस्थाओं के विश्लेषण व उनकी तुलना करने का सुगम साधन है। प्रत्येक राज्य की कार्यपालिका मे कुछ सामान्य अंग और विभाग व मन्त्रालय मिलते हैं, जिनका पुलिस, सशस्त्र सेना, स्थानीय शासन, कृषि, विदेश नीति, न्याय, वित्त आदि से सम्बन्ध है। परन्तु विभिन्न राज्यों मे इन विभागों व मन्त्रालयों का सापेक्ष महत्त्व और संगठन उन राज्यों की विचारधाराओं के अनुसार भिन्न भिन्न है। विभिन्न राज्यों म उनके संविधान, प्रभुता का अधिवास, शक्तियों का पृथक्करण, शक्तियों का विभाजन, विकेन्द्रीकरण की मात्रा, राज्य प्रमुख, कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका की संरचना (structure) तथा उनका संगठन आदि उन राज्यों की शासन पद्धतियां (अथवा राजनीतिक पद्धतियां) और राजनीति के तुलनात्मक विश्लेषण हेतु आवश्यक सामग्री प्रदान करते हैं।

वास्तव म, तुलनात्मक शासन और राजनीति का अध्ययन राजशास्त्र के विद्यार्थियों के लिए विभिन्न कारणों से उपयोगी है। किसी भी देश के विद्यार्थियों के लिए यह एक प्रकार से विदेशों की मार्गदर्शित यात्रा (guided tour) के समान है। जिस प्रकार ऐसी यात्रा से विद्यार्थी को अन्य देशों के बारे म अनेक प्रकार की उपयोगी व शिक्षाप्रद जानकारी प्राप्त होती है, उसी प्रकार शासन पद्धतियों के विद्यार्थी को अन्य देशों की राजनीतिक पद्धतियों के अध्ययन से उपयोगी जानकारी प्राप्त होती है। इस जानकारी को तुलनात्मक विधि या विश्लेषण (comparative method or analysis) द्वारा एकत्रित और व्यवस्थित करके अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है।

उदाहरण के लिए, यदि कोई अमरीकी विद्यार्थी इस प्रकार का अध्ययन करे तो उसे पता लगेगा कि कुछ देशों म स्वास्थ्य सेवायें पूर्णतया राष्ट्रीयकृत (nationalized) हैं और कुछ मे वे व्यक्तियों की कीमत देने की योग्यता पर आधारित हैं, सरकार द्वारा नियन्त्रित व संचालित रेलें भी उतनी ही कुशल हो सकती हैं जितनी कि प्राइवेट कम्पनियों द्वारा संचालित रेलें संयुक्त

राज्य अमरीका मे है, एक पद्धति के अन्तगत व्यक्तिगत स्वतन्त्रताओ का मूल्य बहुत ऊँचा है, परन्तु कुछ दूसरे राज्यो मे समूह के हिन अथवा राज्य के हित को व्यक्तियो की स्वतन्त्रताओ से अधिक महत्त्व दिया जाता है। ऐसे ही यदि कोई भारतीय विद्यार्थी ग्रेट ब्रिटेन, सोवियत सघ, जापान या चीन की शासन पद्धतिया के बारे मे तुलनात्मक अध्ययन करे तो उसे अपने देश की राजनीतिक पद्धति को समझने के लिए एक परिप्रेक्ष्य (perspective) अथवा सापेक्ष महत्त्व का ज्ञान प्राप्त होगा। उसके बाद वह ऐसी अभिवृत्तिया (attitudes) और प्रथाओ (practices) की फिर से परीक्षा कर सकता है जिन्हे कि वह बहुत पहले ही एक रूप म स्वीकार कर चुका है, और वह अपने देश तथा विदेशो की राजनीतिक सस्थाओ की सूक्ष्म परीक्षा (scrutiny) कर सकता है। इस प्रकार उसमे आलोचनात्मक मूल्याकन (critical evaluation) की प्रवृत्ति विकसित होगी, जो कि एक शिक्षित और समझदार व्यक्ति मे होनी चाहिए।

तुलनात्मक अध्ययन की उपयोगिता को एक अन्य प्रकार स भी समझा जा सकता है। विभिन्न देशो की राजनीतिक पद्धतिया (व राजनीति) के अध्ययन से विभिन्न प्रकार के राजनीतिक अन्तरो का पता लगता है। स्वभावत प्रश्न उठता है, ऐसा क्यो है? उदाहरण के लिए अनेक प्रश्न हो सकते है सोवियत सघ मे मार्क्सवाद की जडें इतनी गहरी क्यो जमी? एशिया व अफ्रीका के कम विकसित देश साम्यवाद की ओर क्या खिच रहे हैं अथवा उनमे एक दलीय शासन क्यो स्थापित हुआ है? ब्रिटेन की राजनीति मे ससद पद्धति स्थायित्व क्या ला सकी और वही पद्धति फ्रास मे स्थायित्व क्यो न ला सकी? ब्रिटेन, कनाडा, आस्ट्रेलिया और सयुक्त राज्य अमरीका मे दो ही दल क्यो हैं, जबकि फ्रास, भारत व अन्य दशो मे अनेक दल हैं। अन्त मे, कुछ राजनीतिक पद्धतिया प्रजातन्त्र और प्रतिनिधिक सस्थाओ का खण्डन क्यो करती है जबकि अन्य पद्धतियाँ उन्हे आवश्यक समझती है? इन प्रश्नो का उत्तर देने के लिए यह काफी नही है कि उन अन्तरा को मान लिया जाय और उनकी सूची बना ली जाय जो कि एक राजनीतिक पद्धति को दूसरी से पृथक् करते है। राष्ट्रीय अन्तरा का समझकर वणन करना महत्त्वपूण है, परन्तु तभी जबकि हम उनका स्पष्टीकरण कर सके—उनका विश्लेषण करके उनके लिए कारण दे सकें। यह आवश्यक है कि हम राजनीतिक व्यवहार की नियमितताओ और अन्तरा (regularities and differences of political behaviour) की खोज करें और उनके लिए कारण भी दे।

हम राष्ट्रीय अन्तरो के लिए जो स्पष्टीकरण देंगे वे कई प्रकार के हो सकते है। कुछ मामलो मे, हम समानताओ और अन्तरो को सम्बन्धित राज्यो के इतिहास की घटनाओ से स्पष्ट कर सकते है। उदाहरण के लिए, हम कह सकते हैं कि ग्रेट ब्रिटेन मे ससद सस्थाओ का विकास विशेष रूप से सफल रहा, क्योकि उनकी स्थापना औद्योगिक क्रान्ति से पूव हुई थी। परन्तु फ्रास और जमनी म जब औद्योगीकरण आया उस समय तक इन देशो ने इन सस्थाओ का कोई सारपूण अनुभव नही किया था। यह स्पष्टीकरण आवश्यक रूप मे ऐतिहासिक है।

इसी के पूरक रूप मे सरचनात्मक-कार्यात्मक स्पष्टीकरण (structural functional explanations) हो सकता है। यह सभी राजनीतिक पद्धतियो को कुछ सामान्य और अनिवाय कार्यो की दृष्टि से देखता है, यथा भर्ती (recruitment), संचार (communication) व्यवस्था बनाये रखना, विवादा का न्यायिक निणय कराना इत्यादि तथा उन सरचनाओ (structures) या सस्थाओ की दृष्टि से भी जो कि ये काय करती है। विभिन्न राजनीतिक पद्धतियो मे कोई भी दिया गया काय भिन्न भिन्न सरचनाओ या सस्थाओ द्वारा किया जा सकता है। उदाहरण के लि विवादो का निणय एक समाज में औपचारिक न्यायपालिका द्वारा किया जाता हो पचो—गाँव के मुखिया अथवा—द्वारा। इस प्रकार के अन्तरो के लिए कारण व आर्थिक सगठनो या प्रचलित मूल्य पद्धतिया (value systems) या परिस्थितियो मे खोजे जा सकते हैं।

ऐसे ही, यदि हम हाल ही मे स्वतन्त्र हुए कुछ कम विकसित देशा (underdeveloped countries) की राजनीतिक पद्धतियो की तुलना करें ता उनमे स प्रत्यक मे पुराने विदशी शासका द्वारा वहाँ कायम की गयी सस्थाओ और उनकी परम्पराओ का ज्ञान उनके वतमान अन्तरो को समझने के लिए प्राप्त करना अति आवश्यक है । इस प्रकार मलयेशिया और इण्डोनेशिया के बीच वतमान राजनीतिक अन्तरो के कारणो को उनके ब्रिटिश और डच शासकों के इतिहासो के बीच अन्तरा मे खोजा जा सकता है । इसके आगे उन अन्तरा का सम्बन्ध उनकी सामाजिक सरचना, जनसख्या की विशेषताओ, साक्षरता के स्तरा, नेतृत्व की विशेषताओ और आर्थिक परिस्थितियो स हो सकता है ।

दूसरे शब्दो मे, सरचनात्मक-कार्यात्मक उपागम राजनीतिक पद्धतियो की गहराई मे परिष्कृत परिभाषा (sophisticated definition) की ओर जाने का प्रयास करती है । यह प्रत्येक पद्धति मे सबसे अधिक महत्त्वपूण सस्थाओ को जानने तथा उनके राजनीतिक अन्तरो व समानताओ के वर्गीकरण व स्पष्टीकरण तक पहुँचने का प्रयत्न करती है । हम इसस राजनीतिक व्यवहार और सरकार के कार्यों (governmental performance) के बारे म परिकल्पनाओ (hypothesis) का निर्धारण कर सकते हैं और ऐसे शब्दा म जिनकी सहायता से हम विभिन्न राजनीतिक पद्धतियो की तुलना कर सके । ऐसी परिकल्पनाओ की सत्यता को हम ऐतिहासिक तथा समकालीन साक्ष्य से जाँच (अथवा पहचान) सकते हैं । अत वैध तुलनात्मक अध्ययन के लिए शोध और अनुभव सिद्ध पयवेक्षण (research and empirical observation) वैसे ही अनिवाय तत्त्व हैं जसे कि वे अन्य सभी प्रकार की जाँचा क लिए हैं । इस प्रकार राजनीतिक विश्लेषण (political analysis) करना अति आवश्यक हो जाता है, परन्तु ऐसा करना एक बहुत कठिन काय है और कभी कभी उसमे निराशा का मुँह देखना पड़ता है । परन्तु ऐसे राजनीतिक विश्लेषण द्वारा ही हम विभिन्न राजनीतिक पद्धतिया के बीच विद्यमान समानताओ और अन्तरो के लिए उचित कारणो को खोजकर सरल व युक्तिसगत स्पष्टीकरण तैयार कर सकते हैं ।[1]

3 तुलनात्मक अध्ययन के बारे मे जानने योग्य बाते

मेक्रीडीज (Macridis) के अनुसार तुलनात्मक अध्ययन इस प्रकार किया जाना चाहिए—

(1) सोच समझकर बनायी गयी और सामान्य रूप म मान्य वर्गीकरण की योजनाओ (classificatory schemes) के आधार पर तथ्यो को एकत्रित करना और उनका वणन करना,

(2) समानताओ और अन्तरो की खोज करना तथा उनका वणन करना,

(3) राजनीतिक प्रक्रिया और अन्य सामाजिक बातो (social phenomena) के विभिन्न अगो के बीच अन्तसम्बन्धा को अस्थायी परिकल्पनाओ के रूप मे निर्धारित करना,

(4) इस प्रकार की अस्थायी परिकल्पनाओ को सत्य सिद्ध करन का कठोर अनुभवगामी पयवेक्षण द्वारा सत्य सिद्ध करने का प्रयास करना, तथा

(5) कुछ आधारभूत प्रस्तावो (propositions) का स्वीकार करने की दिशा मे बढना ।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, तुलनात्मक अध्ययन के उपयुक्त पगो पर ध्यान देने से यह बात आसानी से स्पष्ट हो जाती है कि तुलनात्मक पद्धति बहुत कठिन है । शासन और राजनीति के तुलनात्मक अध्ययनकर्त्ता के सामने कई कठिनाइयाँ आती है जिनका यहा उल्लेख करना ही काफी होगा । पहली, आधुनिक युग मे बीत युगा की तुलना मे राजनीतिक सस्थाएँ और प्रक्रियाएँ कही अधिक पचीदा अथवा जटिल हो गयी है । दूसरी, राजनीतिक जीवन और व्यवहार के बारे मे सूचना व तथ्य एकत्रित करना । तीसरी, तुलनात्मक पद्धति मे प्रयोग किये जान के लिए परिवत्य (variables) अनक है और उनका प्रयोग करना कठिन है । चौथी, नियमा (कानूना) और

[1] Macridis and Ward (eds) *Modern Political Systems Europe* pp 4-6

व्यवहार (law and practice) तथा प्रतिमानो और व्यवहार (norms and behaviour) के बीच सम्बन्ध विश्लेषण में अति कठिन समस्याएँ पैदा करते हैं। पाचवी, अनेक राज्या की शासन सस्थाओ व प्रक्रियाओ (यथा साम्यवादी व हाल ही मे स्वतन्त्र हुए अल्प विकसित राज्या) के बारे मे उपलब्ध सामग्री बहुत कम है और उनमे से अधिकतर देशो मे अध्ययनकर्त्ताओ को जाने व अध्ययन की सुविधाएँ पाना भी कठिन है। अन्त मे, तुलनात्मक अध्ययन मे प्रयुक्त होने वाली आधारभूत धारणाआ (basic concepts) और शब्दावली (terminology) को अच्छी प्रकार से समझना आवश्यक है, किन्तु उन्ह समझना काफी कठिन है। आजकल प्रयोग म आने वाली कुछ धारणाआ व शब्दो का यहाँ उल्लेख करना आवश्यक और पर्याप्त है राजनीतिक सस्कृति व समाजीकरण (political culture and socialization), राजनीतिक विकास और आधुनिकीकरण (modernization), राजनीतिक भूमिकाएँ (roles), शक्ति (power), विशिष्ट वग (elite), हित-उच्चारण *(interest articulation)*, *हित समूहीकरण (interest aggregation)*, *राजनीति म* भाग लना (political participation), राजनीतिक व्यवहार (political behaviour), निर्वाचन व्यवहार (electoral behaviour), राजनीतिक प्रक्रिया (political process), इत्यादि।

तुलनात्मक अध्ययन के पूव वर्णित पहलुआ और उसकी कठिनाइयो की जानकारी के वाद यह जान लेना भी आवश्यक है कि तुलनात्मक अध्ययन का परम्परागत उपागम क्या या और उसमे क्या कमियाँ थी। इस विषय का विस्तारपूण विवेचन आगे किया गया है।

4 तुलनात्मक शासन और राजनीति का क्षेत्र

तुलनात्मक शासन का अथ है शासन के कानूनी यन्त्रा (instrumentalities) तथा प्रक्रियाओ का इस दृष्टि स अध्ययन करना कि वे शासन के विभिन्न अगा—निर्वाचक-मण्डल, विधायिका, कायपालिका, प्रशासन और न्यायालयो के बीच अन्तक्रिया का परिणाम हैं। परम्परागत उपागम (traditional approach) म, अनौपचारिक कारका व प्रक्रियाआ (informal factors and processes) जैसे विभिन्न प्रकार के हित समूहो (जो सामान्यत सामाजिक और आर्थिक शक्ति रखते हैं और कभी-कभी तो राजनीतिक शक्ति भी और शासन की औपचारिक सस्थाआ के बाहर अपना काय करते हैं) के ऊपर विचार नही किया जाता। यह उन अधिक जटिल सन्दर्भीय शक्तिया (contextual forces) को भी अपने क्षेत्र से बाहर छोड देती है जिन्हें राजनीतिक पद्धति के वैचारिक नमूनो और सामाजिक सगठन (ideological patterns and the social organization) मे पाया जा सकता है।

जैसा कि अध्याय के आरम्भ मे ही बताया जा चुका है अब 'शासन' की अपेक्षा 'राजनीतिक पद्धति' को अधिक पसन्द किया जाता है और इसका अध्ययन क्षेत्र भी शासन के क्षेत्र से अधिक विस्तृत है। साथ ही 'तुलनात्मक शासन' के स्थान पर 'तुलनात्मक राजनीति' को अधिक पसन्द किया जाता है और यह एक ऐसे क्षेत्र को चिन्तित करने का प्रयास करती है तथा इसकी विधि का 'अभिमुख (orientation) ऐसा है कि जिन्हे परम्परागत उपागम म स्थान नही है। वास्तव म, इसका उद्देश्य राजनीतिक प्रक्रियाओ और सस्थाओ का सच्चे तुलनात्मक ढग से अध्ययन करना है, जिससे कि सामान्य समस्याआ और प्रश्नो के उत्तर दिये जा सकें। ऐसा करने मे यह तुलना के क्षेत्र को अधिक से अधिक पद्धतियो तक विस्तत करती है। यह परम्परागत शासनिक सस्थाआ पर बल देने के बजाय राजनीति का एक सामाजिक काय के रूप मे अध्ययन करती है, जिसम मनन और निणय करना (deliberation and decision making) अन्तग्रस्त है। तथ्य तो यह है कि शासन उन अनेक कारका मे से एक है जो राजनीतिक प्रक्रिया के विश्लेषण मे प्रवेश पाते हैं। *इस अथ म 'तुलनात्मक राजनीति' तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र को अधिक विस्तृत बनाती है,* क्यांकि यह ऐसे कारको को भी सम्मिलित करती है जिनकी ओर अतीत म ध्यान नही दिया जाता

था। विधि की दृष्टि से इसके उपागम म राजनीतिक पद्धतियो की उन विशेषताओ को समझने का प्रयत्न किया जाता है जिनके प्रकाश म राजनीतिक वातो (political phenomena) को समझना सम्भव है। यह केवल समानताओ और अ तरो को ही समझने का प्रयत्न नही करती, वरन् उनके लिए उत्तरदायी कारणो की भी खोज करती है। स्पष्टीकरण के लिए सामा य सवर्गो (common categories) मे रखे जाने योग्य अधिक स अधिक सामग्री—तथ्य और आकडे—आवश्यक हैं और ऐसी परिकल्पनाओ का निर्धारण (formulation of hypothesis), जि हे सत्यापित किया जा सके। अ त मे, इसका उद्देश्य ऐसे ज्ञान समूह का विकास है जिसके प्रकाश मे प्रवृत्तिया की भविष्यवाणी की जा सके और नीति सम्ब धी सिफारिशें भी की जा सके।

तुलनात्मक अध्ययन का आरम्भ राजनीतिक पर्यावरण (political environment) से होता है, जिसे राजनीतिक पृष्ठभूमि भी कह सकते है। प्रत्येक राज्य की राजनीति ऐस स दभ म सचालित होती है जिसे उसकी प्राकृतिक रचना (physical setting), राजनीतिक मूल्य और विचारधाराएँ तथा राजनीतिक सस्कृति ढालती है। राजनीतिक पर्यावरण मे हम इन कारको को सम्मिलित कर सकते है—भौगोलिक दशाएँ, अथव्यवस्था, धम, सचार के साधन, शिक्षा, इतिहास, आदि। इनके अतिरिक्त तुलनात्मक राजनीति की अ य समस्याओ अथवा उसके लक्ष्यो व पहलुओ म हम निम्नलिखित को समान महत्त्व का समझते है।

धारणाएँ और सिद्धा त (Concepts and Theories)—किसी धारणा की भूमिका मे किसी विशेष विश्लेषणात्मक सवग का सुझाव देना है जिसके द्वारा राजनीतिक पद्धति का अध्ययन किया जा सके। जब धारणाओ को एक दूसरे से सम्ब धित कर दिया जाता है, वे सिद्धा त का विकास करती है। सिद्धान्त का प्रयोजन राजनीतिक गतिविज्ञान (political dynamics) के सबस अधिक महत्त्वपूण परिवर्त्यों (variables) को अलग करके उनमे सम्ब ध स्थापित करना है। किसी भी तकसगत और वैज्ञानिक सिद्धा त का आसानी स सामाजिक परिवर्त्यो से सम्ब ध जोडा जा सकता है और उसकी सत्यता को पयवेक्षण व तुलना द्वारा प्रमाणित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, मावस ने ऐसे सिद्धा तो को विकसित किया है जि ह आसानी से कारण और प्रभाव क सम्ब धो (cause and effect relationship) के रूप म ढाला जा सका है। वतमान राजशास्त्री धारणाओ का वृद्धिपूण प्रयोग करने लगे है। वे 'पद्धति' को अ तसम्ब धो के ऐसे नमूने के रूप म देखते हैं, जिसम सरचनाओ और कार्यों के बीच स्पष्ट भेद किया जा सके। कुछ ऐसी आधारभूत धारणाओ का, जो राजनीति की वर्गीकीय योजना (classificatory scheme) का सुझाव देती है। यहा उल्लेख करना ही काफी होगा—राजनीतिक सस्कृति और समाजीकरण, राजनीतिक विकास और आधुनिकीकरण, हित उच्चारण (interest articulation), हितो का समूहीकरण (interest aggregation), शक्ति (power), वैधता (legitimacy), निणय करना (decision making) और विशिष्ट वग (elites), इत्यादि। इनके अतिरिक्त अ य अनेक धारणाएँ हैं, जिनम से हम विचारधाराओ और सस्थाओ (ideologies and institutions) को विशेष रूप से महत्त्वपूण समझते हैं और उनका राजनीति से क्या सम्ब ध है इस बारे म कुछ विचार करेंगे।

विचारधाराएँ और राजनीति—किसी भी राजनीतिक पद्धति के अध्ययन हेतु यह आवश्यक है कि हम उन विचारधाराओ की भी परीक्षा करें जिनका उसम प्राधा य है अथवा जो उसमे प्रधानता पाने के लिए प्रतियोगी हैं। आधुनिक राजनीतिक दल और उनकी राजनीति इसी प्रतियोगिता की उपज है। अत किसी विश्लेपणात्मक योजना मे राजनीतिक विचारधारा एक महत्त्वपूण सवग है। राजनीतिक विचारधारा से हम राज्य व शासन से सम्बन्धित विचारो और विश्वासो के उन नमूनो को समझते हैं जो एक ही साथ आज्ञा पालन व सहमति का आधार बनाते हैं और नियन्त्रण का तन्त्र भी। किसी ऐसे सामा य विश्वास के विना कोई समाज समृद्धिशाली नहीं हो सकता, वरन् जीवित भी नहीं रह सकता। सक्षेप म, राजनीतिक विचारधारा की भूमिका

राज्य की सगठित शक्ति को वैध बनाने मे है। यह सभी जानते हैं कि पाश्चात्य प्रजातन्त्रो की आधारभूत विचारधारा उदारवादी प्रजातन्त्र (liberal democracy) की है, किन्तु सोवियत सघ व अन्य साम्यवादी राज्यो का विश्वास समाजवाद व साम्यवाद के सिद्धान्तो म है। हम भारतवासी प्रजातन्त्र, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता और स्वस्थ राष्ट्रवाद मे विश्वास करते है। किसी भी राजनीतिक पद्धति म प्रतियोगी राजनीतिक विचारधाराओ की परीक्षा करना उनके राजनीतिक नेतृत्व के मूल्यांकन हेतु बडे महत्त्व की है।

राजनीतिक सस्थायें—इनका अध्ययन तो प्राचीन काल से ही होता आया है और अब भी तुलनात्मक अध्ययन का सबसे बडा और महत्त्वपूर्ण भाग है। राजनीतिक सस्थाओ मे हम इन्हे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण समझते हैं—सविधान, कानूनी पद्धति, कार्यपालिका, विधायिका, न्यायपालिका, लोक प्रशासन, राजनीतिक दल, हित अथवा दबाव समूह इत्यादि। राजनीतिक सस्थाओ की सरचना और उनके कार्यों का अध्ययन अति आवश्यक है। इतना ही नही तुलनात्मक अध्ययन म राजनीतिक प्रक्रियाओ (political processes) यथा विधायी प्रक्रिया, वित्तीय प्रक्रिया, प्रशासनिक प्रक्रिया, न्यायिक प्रक्रिया आदि का बडा महत्त्वपूर्ण स्थान है।

राजनीतिशास्त्रियो म प्राचीन काल से ही शासन पद्धतियो का वर्गीकरण किया है। विभिन्न विचारको ने भिन्न भिन्न आधारो पर सरकारो के वर्गीकरण किये है। इन आधारो का सम्बन्ध मुख्यत अग्रलिखित से रहा है (1) राजनीतिक सत्ता का सगठन, (2) स्थापित सत्ता और समुदाय के सदस्यो के बीच सम्बन्ध, और (3) व्यक्ति का शासन म स्थान जिन अनेक सस्थाओ से मिलकर राजनीतिक सत्ता गठित होती है, उन्हे हम 'राज्य' कहते आये है। यद्यपि तुलनात्मक अध्ययन म 'राज्य' का महत्त्व बहुत कम हो गया है फिर भी इसकी उपयोगिता है, क्योकि 'राज्य' इतनी विस्तृत धारणा है कि यह नीति बनाने और उसे लागू करने के सभी पहलुओ को अपने मे सम्मिलित करती है।

सस्थाओ और प्रक्रियाओ के तुलनात्मक अध्ययन के लिए एक अन्य महत्त्वपूर्ण आधार राज्य और व्यक्ति के बीच सम्बन्ध है। इस बारे मे अनेक प्रश्न उठते हैं जिनके उत्तर तुलनात्मक अध्ययन द्वारा खोजने का प्रयत्न किया जाता है। उदाहरण के लिए, व्यक्ति शासन कार्यों मे कितना भाग लेते है? उनके भाग लेने के विभिन्न तरीके क्या है? कुछ प्रकार के राज्यो मे व्यक्तियो का भाग बहुत है, कुछ मे कम, इसका क्या कारण है? व्यक्ति शासन कार्यों म कम या अधिक दिलचस्पी क्यो लेते हैं? मताधिकार के अधिकार पर क्या सीमायें हैं और क्यो? मतदान म भाग लेने वाले व्यक्तियो (मतदाताओ) का प्रतिशत कम है या अधिक और ऐसा क्यो है? इत्यादि।

अन्त मे, तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र म शासन पद्धतियो के सामने आयी या आने वाली अनेक समस्याओ और सरकारी नीतियो का अध्ययन भी आता है। इस प्रकार के अध्ययन म किसी भी समस्या अथवा सरकारी नीति का अध्ययन दो या अधिक समान अथवा असमान पद्धतियो के बीच तुलना करके किया जाता है। उदाहरण के लिए राष्ट्रीयकरण की नीति मतदान व्यवहार सामाजिक कल्याण, नागरिक सेवाओ मे भर्ती आदि से सम्बन्धित समस्याएँ या नीतियाँ। इस प्रकार के अध्ययन के महत्त्व का अनुमान तो इसी बात से लगाया जा सकता है कि तुलनात्मक अध्ययन की अनेक 'उपागमो' मे एक 'समस्याओ के निराकरण' (problem solving) से सम्बन्धित है।

II

शासन के तुलनात्मक अध्ययन का विकास और परम्परागत उपागम
(Evolution of Comparative Government and Politics and Traditional Approaches)

1 परम्परागत उपागम का संक्षिप्त विकास

यद्यपि शासन और राजनीति के तुलनात्मक अध्ययन का महत्त्व विगत कुछ दशकों में बहुत बढ़ा है, किन्तु इस प्रकार का अध्ययन प्राचीन काल से होता रहा है। इसके अध्ययन के विकास को तीन दशाओं (phases) में विभाजित किया गया है अपरिष्कृत, परिष्कृत और वृद्धिपूर्ण परिष्कृत (*un sophisticated, sophisticated and increasingly sophisticated*)। प्रथम दशा में एरिस्टॉटल, मान्टेस्क्यू, मेकियाविली, ब्राइस आदि आते हैं, क्योंकि इन्होंने तुलनात्मक विधि का प्रयोग राजनीतिक संगठनों के कार्य करने के तरीकों को अधिक अच्छी प्रकार से समझने के लिए किया। बीयर (Beer), मेक्रीडीज, उलम (Ulam) को दूसरी दशा में सम्मिलित किया गया, है, क्योंकि उन्होंने तुलनात्मक विधि का प्रयोग अधिक स्वचेतना और इस जान-बूझ के साथ किया कि विभिन्न राजनीतिक पद्धतियों के अध्ययन को अधिक उपयोगी रूप में प्रस्तुत किया जा सके। तीसरी दशा के लेखकों—ईस्टन, डहल, कोलमैन, पोवल, ड्यूट्श (Deutsch) और ब्लाडेल (Blondel) ने तुलनात्मक विधि को परिष्करण की इस सीमा तक पहुँचाया कि अनेक स्थानों पर राजशास्त्र और अन्य सामाजिक शास्त्रों में भेद ही समाप्त हो जाता है और कुछ नयी शाखाएँ—यथा राजनीतिक समाजशास्त्र आदि का आविर्भाव होता है।[1]

प्राचीन ग्रीस मे, जहाँ कि पाश्चात्य राजशास्त्र का जन्म हुआ, सुविख्यात दार्शनिक और राजशास्त्रवेत्ता एरिस्टॉटल ने अपने ग्रन्थ 'The Politics' मे उस समय के अनेक राज्यो का तुलनात्मक अध्ययन करके कुछ सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया। उसने विभिन्न राजनीतिक पद्धतियों (सरकारो) मे अन्तर बताने के लिए यह आधार प्रस्तुत किया (1) निर्णय करने की प्रक्रिया मे भाग लेने वाले व्यक्तियो की संख्या, और (2) शासन शासकों के हित मे है या शासित के हित मे इस आधार पर उसने सरकारो के 6 रूप बताये साधारण राजतन्त्र, अभिजात तन्त्र, बहुतन्त्र (polity), विकृत-अत्याचारी शासन, अल्पतन्त्र (धनिकतन्त्र) और प्रजातन्त्र (भीडतन्त्र)। इसी कारण उसे शासन व राजनीति का प्रथम राजशास्त्री (political scientist) माना जाता है। उसके बाद रोमन काल मे सिसरो व पोलिबियस ने तुलनात्मक राजनीति के क्षेत्र को अधिक व्यापक बनाया।

मध्य युग (middle ages) में इस प्रकार के अध्ययन का कोई उल्लेखनीय विकास नही हुआ। यूरोप के पुनर्जागरण काल (renaissance) मे मेकियाविली (Machiavelli, 1469–1527) ने 15–16वीं शताब्दी मे एरिस्टॉटल की विधि को फिर से अपनाया। उसने अपने समय के इटली मे अनेक राज्यो की राजनीति व कूटनीति (diplomacy) का अध्ययन करके राजनीतिक व्यवहार (political behaviour) को एक आधारभूत धारणा शक्ति (power) के शब्दों मे स्पष्ट करने का सर्वप्रथम प्रयास किया।

17वीं शताब्दी मे मॉन्टेस्क्यू (Montesquieu 1689–1755) ने अपने ग्रन्थ 'The Spirit of the Laws' मे राजनीति का सामाजिक कारकों—समूहों, आर्थिक वर्गों, शिक्षा, परम्परा और विचारधारा—से सम्बन्धित करके समझने का सराहनीय कार्य किया और

[1] J C Johari, *Comparative Politics* p 171

क्रान्तियो (revolutions) व कानूनो के बारे मे सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया। उसने अपने अध्ययन के क्षेत्र मे विषयो के चयन मे आधुनिकता का परिचय दिया। उसने अपना ध्यान मुख्यत स्वतन्त्रता के स्वरूप और उसके श्रेष्ठ सरक्षण—शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त (separation of power theory) पर दिया। उसने अपने पर्यवेक्षण को भौगोलिक, सामाजिक और आर्थिक प्रभावो तक विस्तृत किया, ये ही कारक राजनीतिक पर्यावरण (political environment) को बनाते है। उसका विशेष महत्त्व इस बात मे है कि उसने राजनीति को समूहो, आर्थिक वर्गो, शिक्षा, परम्परा और विचारधारा से सम्बन्धित किया।

19वी शताब्दी मे मिल (J S Mill) ने अपने ग्रन्थ 'Representative Government' (1861) मे राजनीतिक पद्धतियो की तुलना करने के लिए तुलनात्मक विधि को कुछ आगे विकसित किया। मिल ने ऐतिहासिक विधि अथवा उलटी निगमनात्मक (inverse deductive) विधि का प्रयोग इस प्रकार किया कि निष्कर्ष निकालने के लिए अनुभवमूलक सत्यापन (empirical verification) की आवश्यकता पडी। उसके दोनो ग्रन्थो 'Representative Government' और 'System of Logic' का अध्ययन उपयोगी है। परन्तु 19वी शताब्दी मे तुलनात्मक विश्लेषण मॉटेस्क्यू की रेखाओ पर नही बढा, वरन् तुलनात्मक अध्ययनो का रूप ऐतिहासिक रहा, क्योकि राजनीतिक घटनाओ के लिए कारणो को महापुरुषो, मूल जातीय श्रेष्ठता, प्रजातान्त्रिक आशावादिता आदि मे खोजा गया। इस प्रवृत्ति के फलस्वरूप राजनीतिक साहित्य की मात्रा तो काफी रही, किन्तु उसमे निकाले गये निष्कर्ष ऐसे थे जिन्हे अनुभव के आधार पर सत्य सिद्ध नही किया जा सकता।

19वी शताब्दी के अन्त तक तुलनात्मक शासन पर जो ग्रन्थ लिखे गये उनकी ये विशेषताएँ थी—

(1) जहा कही उनमे सैद्धान्तिक उपागम को अपनाया गया, वहाँ उनकी प्रवृत्ति यथार्थता से दूर रहने, अमूर्त विचारो अधिकाशत नैतिक शब्दो मे घिरे रहने की थी।

(2) परम्परागत वर्गीकरणो (classifications) पर चलते हुए, इन अध्ययनो मे प्रजातन्त्र, अभिजाततन्त्र, समाजवाद, अराजकतावाद आदि पद्धतियो को या तो आदर्श रूप मे देखा गया या उनकी आलोचना की गयी, परन्तु ये अध्ययन उन तरीको पर विचार करने मे विफल रहे जिनमे कि (राजनीतिक) पद्धतियाँ विशिष्ट देशो मे यथार्थ रूप मे कार्य करती थी।

(3) राष्ट्रीय पद्धतियो के यथार्थ अध्ययन मे विशेष बल उनके सांविधानिक आलेखो तथा सरकार के विभिन्न पदो व अगो की कानूनी सत्ता (legal authority) पर दिया गया और वह भी अधिकाशत यान्त्रिक ढग से (in a largely mechanical fashion)।

वर्तमान शताब्दी मे तुलनात्मक शासन पर अनेक विद्वानो ने महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे, किन्तु उनमे भी कोई न कोई कमी रही, उन्होने सच्चे अर्थ मे तुलनात्मक विधि का पालन नही किया। जेम्स ब्राइस (James Brzce) प्राचीन काल से चली आ रही परम्परा का अन्तिम प्रतिनिधि रहा। उसने अपने महान् ग्रन्थ 'Modern Democracies (1921) मे अनेक प्रजातन्त्रो का विवेचन किया, जिसमे 'मानव प्रकृति' (human nature) की धारणा का प्रयोग किया गया। कुछ समय पूर्व तक इस क्षेत्र मे विभिन्न देशो की शासन-पद्धतियो का समानान्तर तुलनात्मक अध्ययन (parallel comparative studies) के रूप मे प्राधान्य रहा। आग (F A Ogg) ने The Governments of Europe' मे ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रास, इटली आदि के शासनों की परीक्षा की। ऐसे ही मुनरो (W B Munro) ने अपने ग्रन्थ 'The Governments of Europe' मे अनेक यूरोपीय देशो की सरकारो—प्रत्येक का अलग अलग—का विवेचन किया।

कुछ समय पूर्व ही लिखे गये उल्लेखनीय ग्रन्थो मे ये प्रमुख हैं फाइनर का 'Theory and Practice of Modern Governments' (1932), फ्रीड्रिच (Carl J Friedrich) का

'Constitutional Government and Democracy' (1937) और सेट (Sait) का 'Political Institutions A Preface' (1938)। इन्होंने शासन की संरचना और कार्यों के विश्लेषण में योगदान किया। यद्यपि इन ग्रंथों में पुराने औपचारिक—कानूनी वर्णनों का समावेश है और ये पाश्चात्य राजनीतिक पद्धतियों के अध्ययन तक ही परिमित रहे, फिर भी उनमें नये तरीकों को अपनाने का प्रयास किया गया है।[1]

तुलनात्मक शासन पर कुछ समय पूर्व तक लिखे गये ग्रंथों में अग्रलिखित कई नई उपागम (new approaches) अपनायी गयीं (1) क्षेत्र अध्ययन (area studies), (2) समस्याओं और नीतियों का अध्ययन (the study of problems and policies), (3) संरचनात्मक कार्यात्मक विश्लेषण (structural functional analysis), (4) आकृतिक अध्ययन (configurative studies), और संस्थागत कार्यात्मक तुलना (institutional functional comparison)। इनमें से प्रथम तीन का विवेचन आगे के अध्यायों में किया गया है, अतः चौथी और पाँचवीं का संक्षिप्त परिचय यहीं दिया जाता है। आकृतिक अध्ययन में किसी भी राजनीतिक पद्धति का पूर्णरूप में अध्ययन किया जाता है जिससे कि उसकी व्यक्तिगत विशेषताओं का निर्धारण किया जा सके। देखने पर पता चलता है कि शासन पर लिखा गया अधिकांश साहित्य इसी प्रकार का है, जिसमें किसी एक या दूसरी शासन-पद्धति और उसकी राजनीति (Government and Politics) का अध्ययन मिलता है। यहाँ तक कि हाल ही में लिखे गये ग्रंथों में भी अनेक इसी प्रकार के हैं, किन्तु उनमें नये देशों, यथा फिनलैण्ड, घाना, थाइलैण्ड चिली, नाइजीरिया आदि के शासन और राजनीति को सम्मिलित किया गया है। संस्थाओं और कार्यों की तुलना के अन्तर्गत, जैसा कि नाम से ही पता लगता है। विभिन्न देशों की संस्थाओं—संविधानों राजनीतिक दलों, विधायिकाओं मन्त्रिमण्डलों आदि की रचना और उनके कार्यों की तुलना की गयी है।

2 परम्परागत उपागम की विशेषताएँ

शासन और राजनीति के तुलनात्मक अध्ययन का आधुनिक उपागम तुलनात्मक उपागम से बहुत भिन्न है। मेक्रीडीज ने ठीक ही कहा है कि अब तक किया गया तुलनात्मक अध्ययन केवल नाम में ही तुलनात्मक रहा। यह अंशतः विदेशी शासनों के अध्ययन का भाग रहा, जिसमें कि विभिन्न देशों की सरकारों की संरचनाओं और राज्य की संस्थाओं के औपचारिक संगठन का वर्णनात्मक, ऐतिहासिक अथवा कानूनी दृष्टियों से विवेचन किया गया।[2] अतः अब हम परम्परागत उपागम की विशेषताओं का संक्षिप्त विवेचन निम्न प्रकार कर सकते हैं

अतुलनात्मक (Essentially non-comparative)—तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र में प्रकाशित किये गये ग्रंथों की बड़ी संख्या में या तो किसी एक ही देश की शासन पद्धति का विवेचन किया गया है या अनेक देशों की राजनीतिक संस्थाओं का समानान्तर वर्णन मिलता है। अधिकतर पाठ्य पुस्तकों में पाठक को सांविधानिक आधारों राजशक्ति के संगठन और उन तरीकों से जानकारी करायी जाती है जिनमें कि राजशक्ति को प्रयुक्त किया जाता है। प्रत्येक मामले में 'समस्या क्षेत्रों' (problem areas) का विवेचन देश की संस्थागत संरचना के हवाले से किया गया है।

वर्णनात्मक (Essentially descriptive)—प्राय सभी ग्रंथों में शासन संस्थाओं की

[1] Although these works still contained some of the older formal legal descriptions and were confined to Western political systems yet they marked the breaking of new paths '—Hitchner and Levine *Comparative Government and Politics* pp 5-6

[2] Comparative study has thus far been comparative in name only It has been part of what may loosely be called the study of foreign governments in which the govern mental structures and the formal organization of state institutions were treated in a descriptive historical or legalistic manner '—R C Macridis

सरचना और उनके कार्यों का वणन मिलता है। वणन का अपना महत्त्व है। कि तु वर्णित सस्थाओ की तुलना शायद ही नही की गयी हो। उदाहरण के लिए, शाटवैल द्वारा सम्पादित महाद्वीपीय सरकारो के ग्रन्थ मे इटली, स्विटजरलैण्ड, जमनी व सोवियत सघ आदि की सरकारा (एक के बाद दूसरी) का विवचन किया गया है किन्तु उन्हें एक दूसरे से बाधने वाला सूत्र कही भी नही दिखाई देता। न तो इस बात का कोई आधार दिया गया है कि उ ह क्यो चुना गया और न ही उनम समानताओ व अन्तरा के लिए उत्तरदायी कारको की परीक्षा की गयी है।

राजनीतिक सस्थाओ के वणनात्मक अध्ययन मे मुख्यत दो उपागम—ऐतिहासिक और कानूनी—को अपनाया गया है। ऐतिहासिक उपागम का केन्द्र राजनीतिक सस्थाओ की उत्पत्ति और विकास का अध्ययन है। उदाहरण के लिए, एक ग्रन्थ मे ब्रिटिश सासद पद्धति के अध्ययन को मेग्ना कार्टा (Magna Carta) म आरम्भ कर उसके विकास की विभिन्न मजिलो के रूप म प्रस्तुत किया गया है। जहा कानूनी उपागम को अपनाया गया है वहा पाठक को सरकार की विभिन्न शाखाओ व सस्थाओ की कानूनी शक्तियो की जानकारी प्राप्त होती है। उनम यह खोजने व समझाने का प्रयत्न नही किया गया कि व शक्तियाँ क्या हैं जिन्होने विभिन्न कानूनी रूपो को शक्ल प्रदान की है और न ही विभिन्न सावैधानिक नियमो व कानूनो मे सम्ब ध स्थापित करने वाले कारणो को जानने का प्रयास किया गया।

प्रादेशिक (Essentially parochial)—विदेशी सरकारो क अध्ययन से सम्बन्धित अधिकतर ग्रन्थो मे पाश्चात्य यूरोपीय देशो की सस्थाओ का ही विवेचन मिलता है। फ्रास, ग्रेट ब्रिटेन, जमनी, इटली और कुछ सीमा तक नार्वे व स्वीडन तथा ब्रिटिश उपनिवेश वे देश हैं जिनके बारे मे लिखा गया अथवा शोध की गयी। इसके अतिरिक्त इन ग्र थो म विभिन्न विवेच्य देशो की सरकारो म पायी गयी समानताओ व अन्तरा को समझने का कोई प्रयत्न नही किया गया, केवल कही कही उनका वणन मिलता है।

स्थिर (Essentially Static)—सामा य रूप म परम्परागत उपागम म राजनीति के उन गतिशील कारको (dynamic factors) की ओर ध्यान नही दिया गया है जो कि उसमें विकास और परिवतन लाते हैं। विभिन्न ग्रन्थो मे प्रभुता और उसके निवास, सावैधानिक सरचनाओ प्रशासनिक पद्धतियो का समानान्तर विकास और राजनीतिक दलो का विकास आदि मिलते हैं, किन्तु ये तत्त्व शासन और राजनीति म किस प्रकार परिवतन लाते हैं इस बात का अध्ययन या विवेचन नही किया गया है।

प्रबन्धकीय (Essentially monographic)—विदेशो की शासन-पद्धतियो पर लिखे गये अधिकतर ग्रन्थो का रूप प्रबन्धो (लम्बे निबन्धो) जैसा है। उनम किसी एक शासन-पद्धति अथवा उसमे किसी विशिष्ट सस्था का विवेचन किया गया है। उदाहरण के लिए, अमरीका का राष्ट्रपति पद, ब्रिटेन की सासद पद्धति, सोवियत सघ की शासन प्रणाली, स्विट्जरलैण्ड मे प्रत्यक्ष शासन की सस्थायें, इत्यादि। परन्तु इनमे स कुछ प्रबन्धो मे लेखको न कानूनी उपागम से आगे बढने का अवश्य ही प्रयास किया। क्योकि उन्होने अ राजनीतिक कारको व सस्थाओ को खोजकर प्रस्तुत किया है और प्रजातान्त्रिक पद्धतियो के सामने आयी समस्याओ का विश्लेषणात्मक विवेचन किया है।

3 परम्परागत उपागम की आलोचना

यह सामान्य शिकायत है कि पूवगामी लेखको न कानून और सविधान के विश्लेषण पर अत्यधिक बल दिया, जिसके परिणामस्वरूप वे राज्य के सामान्य सामाजिक ढाँचे पर ध्यान न दे सके, परन्तु यह ध्यान देने की बात है कि सस्थायें और सविधान सामाजिक पर्यावरण (social environment) मे सचालित होते हैं। इस बात को इस प्रकार रखा जा सकता है समाज, जो

सामाजिक पद्धतियाँ हैं, विभिन्न प्रक्रियाओं की सारणी (series of processes) से बनते हैं, मनुष्यों की वे गतिविधियाँ जिन्हें हम राजनीति कहते हैं, समाज के सन्दर्भ में ही घटित होती हैं और उन्हें हम समाज की प्रक्रियाओं का एक पृथक् रूप कह सकते हैं, संविधान और संस्थायें (राजनीतिक दल, संसदें, अधिकारीतन्त्र, आदि) इन प्रक्रियाओं के अधिक स्थायी व बार-बार घटित होने वाले औपचारिक रूप हैं।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, मेक्रीडीज ने कुछ समय पूर्व तक किये गये शासन और राजनीति के अधिकतर तुलनात्मक अध्ययनों में (अ) राजनीतिक संस्थाओं के प्रति अपनायी गयी उपागम को अत्यधिक औपचारिक (excessively formalistic) बताया, और (ब) साथ ही प्रधानतः वर्णनात्मक (predominantly descriptive) कहा, क्योंकि उनकी विधि समस्याओं को हल करने, स्पष्टीकरण करने और विश्लेषणात्मक (problem solving explanatory, or analytic) नहीं है। इस दृष्टि से उसने परम्परागत उपागम की निम्नलिखित कमियों को सामने लाकर रखा है

(1) इसमें विश्लेषण का केन्द्र बिन्दु शासन की संस्थायें रहीं, जिसके कारण समाज व राजनीति की अनौपचारिक व्यवस्थाओं (informal arrangements) और शासन के निर्णयों व शक्ति के प्रयोग में उनकी भूमिका की ओर ध्यान नहीं दिया गया।

(2) अनौपचारिक व्यवस्थाओं की ओर ध्यान न दिये जाने का फल यह निकला कि अध्ययनकर्ताओं ने राजनीतिक व्यवहार के अ राजनीतिक निर्धारकों (non political determinants of political behaviour) तथा शासनिक संस्थाओं के अ राजनीतिक आधारों के बारे में भी ध्यान नहीं दिया।

(3) तुलना पाश्चात्य पद्धतियों के विभिन्न सांविधानिक पहलुओं के औपचारिक शब्दों (in terms of formal constitutional aspects) में की गयी, अर्थात् संसदें, मुख्य कार्यपाल, नागरिक सेवायें, प्रशासनिक कानून, इत्यादि। जो कि सच्चे तुलनात्मक अध्ययन के लिए अधिक उपयोगी धारणायें नहीं हैं।

(4) आनुपातिक प्रतिनिधित्व, विधायन, निर्वाचन-पद्धतियों के कुछ अध्ययनों को छोड़कर, तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र में परिकल्पनाओं और उनके सत्यापन (hypotheses and their certification) पर ध्यान नहीं दिया गया।

(5) राजनीतिक पद्धतियों के प्रति विशुद्धतः वर्णनात्मक उपागम में सांस्कृतिक मानवशास्त्र (cultural anthropology) की विधियों पर भी ध्यान नहीं दिया गया।

(6) अस्तु, तुलनात्मक शासन में दिये गये वर्णन ऐसे नहीं हैं कि जिनके आधार पर परिकल्पनाओं को सत्य सिद्ध किया जा सके और न ही उनमें किसी एक प्रकार की राजनीतिक बात (political phenomenon) के अध्ययन हेतु काफी सामग्री (तथ्य व आँकड़े) मिलते हैं।

(7) क्रमबद्ध दिग्विन्यास (systematic orientation) ने राजनीतिक व्यवहार में समानताओं के बारे में परिकल्पनाओं की खोज में बाधा डाली और तुलनात्मक आधार पर, राजनीतिक गतिशास्त्र (political dynamics—change, revolution, conditions of stability, etc) के बारे में सिद्धान्तों का प्रतिपादन न होने दिया।[1]

1944 में अमरीकी राजशास्त्र संघ (The American Political Science Association) ने एक समिति बैठायी थी, जिसने अपनी रिपोर्ट में में यह बताया कि तुलनात्मक अध्ययन को वास्तविक रूप देने के लिए उसकी विधि में नये अभिमुख (methodological reorientation) की आवश्यकता है। अमरीका की सामाजिक शास्त्रों में शोध परिषद् (Social Science Research Council) के एक सेमिनार ने पूर्वोक्त समिति की,

[1] R C Macridis *The Study of Comparative Government* pp 13–14

आलोचनाओ से सहमति प्रकट की । दोनो ने ही यह अनुभव किया कि उस समय तक किया गया अधिकाश तुलनात्मक अध्ययन नाम मे ही तुलनात्मक था, इसका विषय मुख्यत, पाश्चात्य शासन पद्धतियाँ थी, और उसमे क्रमबद्ध दिग्विन्यास का अभाव था । तुलनात्मक अध्ययन की विधि पर उनके प्रमुख निष्कर्ष, दूसरे अर्थ मे, परम्परागत की उनके द्वारा की गयी आलोचना की मुख्य बातें निम्नलिखित हैं

(1) तुलना मे अमूर्त विचार अन्तग्रस्त होते हैं, अत स्थूल स्थितिया और प्रक्रियाओ की तुलना नही की जा सकती ।

(2) किसी प्रकार की तुलना करने से पूर्व, केवल सवर्ग (categories) और धारणाये स्थापित करना ही काफी नही है, वरन् विश्लेषण के अन्तर्गत सामाजिक और राजनीतिक स्थिति के विशिष्ट अगो (particular components) की सगतता के आधार भी निर्धारित करना जरूरी है ।

(3) यह भी आवश्यक है कि ऐसे विशिष्ट अगो के पर्याप्त प्रतिनिधित्व के लिए भी आधार स्थापित किये जायें जो कि सामान्य विश्लेषण अथवा समस्या विशेष के विश्लेषण मे प्रवेश करते हो ।

(4) अन्तिम रूप मे राजनीति के सिद्धान्त का निर्धारण करने के प्रयास हेतु यह आवश्यक है कि धारणात्मक योजना (conceptual scheme) अथवा समस्या के निर्धारण से निकलने वाली परिकल्पनाओ (hypothesis) को निर्धारित किया जाये ।

(5) परिकल्पना या परिकल्पनात्मक सम्बन्धो की सारणी को सत्य सिद्ध समझा जाय जब तक कि वह झूठी सिद्ध न हो जाय ।

(6) अस्तु, अकेली परिकल्पना के बजाय परिकल्पना की सारणी को निर्धारित किया जाय ।[1]

4 तुलनात्मक राजनीति की वर्तमान स्थिति

हेरी एक्सटीन कहता है कि यदि हम तुलनात्मक राजनीति की वर्तमान स्थिति अथवा उसके पद (status) का पता लगाना चाहते हैं तो हमे उन आधारभूत प्रश्नो को जानने का प्रयत्न करना चाहिए जिनसे कि राजनीतिक पद्धतिया के विश्लेषण के लक्ष्य और प्रक्रियायें शासित होती हैं । ये प्रश्न सख्या मे इतने अधिक हैं और उनमे इतनी अधिक विविधता है कि उनकी सूची बनाना बडा कठिन है । अतएव हम कुछ प्रश्नो के उदाहरण से ही तुलनात्मक राजनीति की वर्तमान स्थिति का पता लगाने का प्रयत्न करेंगे । इन प्रश्नो को विभिन्न शीर्षको के अन्तर्गत निम्न प्रकार रखा जा सकता है

(1) **विधि सम्बन्धी प्रश्न** (Methodological questions)—किस प्रकार के अध्ययन को तुलनात्मक कहा जाय ? तुलनाओ से हम क्या सीख सकते हैं ? क्या सामाजिक विज्ञानो मे तुलनात्मक विधि का वही स्थान है जो कि प्राकृतिक विज्ञानो मे प्रयोगात्मक विधि का है ? क्या इस विधि विशेष का राजनीतिक समस्याओ का अध्ययन करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है ? क्या तुलनात्मक विधि की उपयोगिता केवल सीमित क्षेत्र मे ही नही है ?

(2) **धारणाओ के प्रयोग सम्बन्धी प्रश्न** (questions concerned with the use of concepts)—इन्हे एक्सटीन ने दो समूहो मे रखा है (अ) राजनीतिक पद्धतियो के वर्गीकरण से सम्बन्धित, और (ब) राजनीतिक पद्धतियो के तत्त्वो से सम्बन्धित । वर्गीकरण की विभिन्न योजनाओ मे हम कुछ बातो का ही उल्लेख करेंगे । परम्परागत योजना जो सरकारो का वर्गीकरण इस आधार पर करती है कि निर्णय करने वाली प्रक्रिया मे भाग लेने वालो की सख्या कितनी है—

[1] *Ibid* pp 17–18

III

तुलनात्मक विश्लेषण और विधि
(Comparative Analysis and Method)

1 तुलनात्मक विश्लेपण

तुलनात्मक अध्ययन का उद्देश्य राजनीति के प्रत्येक उपागम को वैज्ञानिक विधि (scientific method) का अग बनाना है। इस बात से सभी सहमत होगे कि खोज बीन या अध्ययन का उद्देश्य ज्ञान अर्जित करना है। समाजशास्त्री (social scientist) के लिए इस बारे मे दो बातें बडे महत्त्व की हैं—प्रथम, विज्ञान को आज मानव अनुभवो को क्रमबद्ध रूप मे व्यवस्थित करने तथा उनमे सम्बन्ध स्थापित करने की प्रक्रिया के रूप मे समझा जाता है, जिससे कि अतीत के अनुभवो का स्पष्टीकरण किया जा सके और भविष्य के बारे मे अनुभवो को पहले से सोचा जा सके। दूसरा, सभी वैज्ञानिक प्रस्ताव (scientific proposition), क्योंकि उनका एक मात्र सम्बन्ध मानव अनुभवा से होता है न कि वस्तुनिष्ठ वास्तविकता (objective reality) से, सापेक्ष अथवा शतमय (conditioned) होते है, न कि पूण (absolute)। वे सम्भावनाओ (probabilities) का विवरण देते हैं, न कि एसे पूण सम्बन्धो का जिनमे परिवतन न हो सके। परन्तु वैज्ञानिक ज्ञान को मानव अनुभव (experience and perception) के शब्दो मे परिभाषित किया जाता है न कि वास्तविकता (reality) या पूणता के शब्दा मे।

वैज्ञानिक विधि के बारे मे यह माना जाता है कि यह 'मूल्यो से स्वत त्र' होता है अर्थात् इसमे नैतिक मूल्यो के लिए स्थान नही है। पर तु मेकइटायर (A C MacIntyre) ने अपने एक लेख 'Is a science of comparative politics possible ?' मे मूल्या से स्वतन्त्र निणयो के बार म कहा है—'राजशास्त्र मूल्या स स्वतन्त्र हो' इस बात पर जोर देता है कि हम अपने स्पष्टीकरणो मे एसे वाक्याशो का प्रयोग नही करते, 'चूकि यह अनुचित था', 'चूकि यह अवैध था,' जब हम किसी शासन या नीति की विफलता को स्पष्ट करते है। उसके कहन का आशय यह है कि पूणरूप से ऐसा करना या कहना सम्भव नही है। डहल (Dahl) ने लिखा है कि इस बारे मे दो मत अथवा समूह हैं। एक समूह का मत है कि राजनीति का सारपूण और महत्त्वपूण पहलू विशुद्धत अनुभवमूलक है और उसका विश्लेपण निष्पक्षता और वस्तुनिष्ठता के साथ किया जा सकता है। परन्तु विरोधी समूह का मत है कि राजनीति के विशुद्ध वज्ञानिक अध्ययन के प्रयास का कोई बडा महत्त्व नही हो सकता। राजनीति का अध्ययन न तो पूणत वैज्ञानिक हो सकता है और न होना ही चाहिए। वे कहते है 'हम राजनीति का अध्ययन न तो सौन्दयपरक कारणो (aesthetic reasons) से करते हैं और न विशुद्ध विचारो स उत्पन्न आनन्द (joys of pure contemplation) के लिए। हम राजनीति का अध्ययन उचित कार्यों को करने, सवश्रेष्ठ को चुनने, इस प्रकार के निणय करन कि हम अपने साथियो के साथ श्रेष्ठ जीवन किस प्रकार बिता सकते है आदि बातें जानने के लिए करते हैं। अत हमे मूल्याकन करना ही पडता है। अतीत के महान् राजशास्त्र वेत्ताआ ने केवल राजनीति का वणन नही किया, उन्हाने मनुष्यो का अच्छे जीवन की खोज करने मे माग-दशन किया।[1] इससे हम यह जान सकते हैं कि तुलनात्मक अध्ययन मे वैज्ञानिक विधि का क्या स्थान है अथवा उसकी क्या सीमा है। इन बातो को ध्यान मे रखकर ही हम तुलनात्मक विश्लेपण और उसके विभिन्न रूपा का विवचन करेंगे।

तुलनात्मक विश्लेषण का महत्त्व शासन व राजनीति के तुलनात्मक महत्त्व के साथ बढा है। इसके तीन लक्ष्य ये हैं

[1] A R Dahl *Modern Political Analysis* pp 101–04

(1) सामान्य रूप मे शासन और राजनीति के बारे मे ऐसे ज्ञान का विकास करना जिसकी सत्यता को प्रमाणित किया जा सके ।

(2) राजनीतिक अनुभवो, सस्थाओ, व्यवहार (behaviour) और प्रक्रियाओ का कारण और प्रभाव तथा वाछनीयता व अवाछनीयता के शब्दो मे मूल्याकन करना ।

(3) इस योग्य बनना कि भावी घटनाओ, प्रवृत्तियो व परिणामो के बारे मे भविष्यवाणी की जा सके ।

मेक्रीडीज का कथन है 'तुलनात्मक विश्लेषण राजनीति के अध्ययन का अखण्ड भाग है। राजनीति का तुलनात्मक अध्ययन तुरत ही वैज्ञानिक की विज्ञानशाला का सुझाव देता है। यह कुछ जटिल परिवर्त्यों का सुझाव देता है, जिन्हे सास्कृतिक पृष्ठभूमि से अलग किया जा सके और जिनका तुलनात्मक रूप मे अध्ययन किया जा सके। राजनीतिक सस्थाओ व पद्धतियो के तुलनात्मक अध्ययन के लिए यथार्थ अथवा विश्लेषणात्मक एकरूपता की पृष्ठभूमि के विरुद्ध परिवर्त्यों की तुलना (comparison of variables against a background of uniformity either actual or analytical) आवश्यक है जिससे कि उन कारको की खोज की जा सके जो अन्तरो के लिए उत्तरदायी हो। इसके तीन कार्य हैं पहला, विश्लेषणात्मक योजना के प्रकाश मे ऐसे परिवर्त्यों का स्पष्टीकरण करना तथा प्रमाणित ज्ञान समूह को विकसित करना। दूसरा, नीति सम्बन्धी पगो का मूल्याकन करना तथा सदस्यो के क्षेत्रो व प्रवृत्तियो का पता लगाना। तीसरा, ऐसी मजिल पर पहुँचना जहा से सस्थाओ और प्रक्रियाओ के बारे मे भविष्यवाणी करना सम्भव हो सके ।

मेक्रीडीज के मतानुसार तुलनात्मक अध्ययन अग्रलिखित पगो के आधार पर आगे बढना चाहिए—

(1) सोच-समझकर बनायी गयी और सामान्य रूप मे स्वीकृत वर्गीकरण की योजनाओ के आधार पर तथ्यो का एकत्रीकरण तथा वर्णन,

(2) समानताओ अथवा एकरूपताओ (uniformities) व अन्तरो की खोजना और उनका वर्णन,

(3) राजनीतिक प्रक्रिया और अन्य सामाजिक वातो के अगो के बीच अन्तर्सम्बन्धो की अस्थायी परिकल्पनाओ (tentative hypothesis) के रूप मे निर्धारण करना,

(4) ऐसी अस्थायी परिकल्पनाओ को बाद मे कठोर अनुभवमूलक पर्यवेक्षण (empirical observation) मे प्रमाणित करना, जिसका प्रयोजन मौलिक परिकल्पनाओ को विस्तृत बनाना तथा अन्त मे प्रमाणित करना हो, और

(5) धीमी प्रक्रिया द्वारा कुछ आधारभूत प्रस्तावो को स्वीकार करना (acceptance of certain basic propositions) ।

उपर्युक्त पगो के अपनाने के परिणामस्वरूप तुलनात्मक राजनीति को नया दिग्विन्यास (orientation) प्राप्त होगा। वैचारिक या नैतिक मूल्यो अथवा राजनीतिक विचारो के ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से अध्ययन के स्थान पर तुलनात्मक शासन मे सिद्धान्तो के प्रतिपादन पर बल दिया जायेगा। तुलनात्मक राजनीति के अनुभवमूलक अध्ययन का दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य तथ्यो और आँकडो को एकत्रित करना है। इस कार्य के लिए भी तर्कसगत ढाँचे (logical frame) की आवश्यकता है, परम्परागत उपागम की यह विशेष कमी रही है कि तथ्य और आँकडो के एकत्रित करने के लिए उसमे योजना और सगत सवर्गों (relevant categories) का अभाव था।

मेक्रीडीज के अनुसार विश्लेषणात्मक योजना के लाभ ये हैं पहला, इस प्रकार से सुझाये गये सवर्गों के आधार पर किये गये राजनीतिक पद्धति के अध्ययन मे अध्ययनकर्त्ता उन्ही सवर्गों के आधार पर दूसरी राजनीतिक पद्धतियो का अध्ययन कर सकता है। दूसरा, कुछ तुलनात्मक

अध्ययन हमे उन विशिष्ट यन्त्रो का अधिक अच्छा ज्ञान करा सकता है जिनका प्रयोग हम कुछ वृहत् ध्येयो की प्राप्ति के लिए कर सकते है जिन पर कि सहमति हो । तीसरा, तुलनात्मक अध्ययन उन क्षेत्रो की ओर सकेत कर सकता है जिनमे कुछ प्रकार के सोचे गये कार्यो के परिणाम ऐसे हो जिनकी पहले से आशा न की गयी हो ।[1]

उदाहरण के लिए, उसने चार आधारभूत विश्लेषणात्मक सवर्गों से मिलाकर एक ऐसी योजना विकसित की है कि जिसके प्रकाश मे राजनीतिक पद्धतियो का अध्ययन किया जा सके और उनकी तुलना भी । वे इस प्रकार हैं

(1) राजनीति के काय रूप म मननात्मक प्रक्रिया और निणय करना (deliberative process and decision making),

(2) शक्ति की आकृति (power configuration) और उसके सामाजिक व राजनीतिक पहलू,

(3) विचारधारा और राजनीतिक प्रेरणा (motivation) तथा सस्थागत सगठन मे उसकी भूमिका,

(4) राजनीतिक सत्ता का सगठन ।[2]

यह वैचारिक ढाचा हम वे सगत सवग प्रदान करता है, जिनसे हम राजनीतिक आकृति-विज्ञान और गतिविज्ञान (morphology and dynamics) का अध्ययन कर सकते हैं । तुलनात्मक (अथवा राजनीतिक) विश्लेषण के कई महत्त्वपूण रूप हैं, जिनम से प्रमुख का विवेचन इस अध्याय म दिया जायेगा ।

2 पद्धति विश्लेपण (Systems Analysis)

दूसरे विश्व युद्ध के बाद, राजनीति का वैज्ञानिक अध्ययन करने के सम्बन्ध मे, यह आवश्यक समझा गया कि राजनीति का एक ऐसा सैद्धान्तिक विश्लेषण विकसित किया जाय जो विभिन्न प्रकार की राजनीतिक सस्थाओ की उत्पत्ति और विकास का स्पष्टीकरण दे सके । आधुनिक राजनीतिक विश्लेषण की एक पूव धारणा यह है कि यदि राजनीतिक व्यवहार के अध्ययन को वैज्ञानिक बनाना है तो उसम खोज बीन का एक उपयोगी यन्त्र गणितीय और सांख्यिकीय विश्लेषण है । साथ ही, अनेक विश्लेषणकर्ताओ ने उस प्रवृत्ति का भी विरोध किया जिसके अनुसार विभिन्न शास्त्रो को एक दूसरे स पृथक समझा जाता है (rigid compartmentalisation of disciplines) और जिसके फलस्वरूप विभिन्न क्षेत्रो म किये जान वाले शोध के बीच एक-दूसरे के परिणामो से लाभ उठाने मे कमी आती है और प्रयासो मे द्विरावृत्ति (duplication) होती है ।

उपर्युक्त बातो को ध्यान म रखते हुए वतमान राजशास्त्रियो ने राजनीति के अध्ययन हेतु एक नया आधारभूत विचार दिया कि राजनीतिक जीवन को एक पद्धति या अन्तर्क्रियाओ की पद्धतियो का समूह (system or a set of system interaction) के रूप मे देखा जाये । इसी विचार से 'पद्धति विश्लेपण' (system analysis) का विकास हुआ । पद्धति की धारणा को प्राकृतिक विज्ञानो से लिया गया है । पद्धति का शाब्दिक अथ है—'जटिल पूण (complex whole) अथवा विभिन्न भागो या एक-दूसरे से सम्बन्धित वस्तुओ का समूह । पद्धति एक सगठित वस्तु है अथवा उसका सगठन होता है और उसके अगो या भागो मे सम्बन्ध होता है । इस प्रकार के विश्लेषणकर्ताओ के मतो मे अन्तर है, फिर भी वे सभी यह मानते हैं कि राजनीतिक जीवन और वे समाज जिसके वे भाग हैं 'सुसगत' (coherent) पद्धतियाँ हैं, जिन सबके लिए सामान्य अन्तर्निभर भाग हैं । पद्धति की उप-पद्धतियाँ (sub systems) हो सकती हैं । कोई उप-पद्धति

[1] R. C Macridis *The Study of Comparative Politics* pp 1-4
[2] *Ibid*, p 60

सम्पूण पद्धति की दृष्टि से उप-पद्धति हो सकती है कि तु पृथक् मे वह स्वय पद्धति हो सकती जिसकी अपनी उप पद्धतियाँ हो। उदाहरण के लिए, किसी देश की राजनीतिक पद्धति की उ पद्धतियो मे हम विधायी पद्धति, वित्तीय पद्धति, प्रशासनिक पद्धति, न्यायिक पद्धति आदि परिचित हैं, परन्तु इनमे से प्रत्येक की उप पद्धतियाँ हैं। विधायी पद्धति मे कानून बनाने प्रक्रिया, बजट पास करने की प्रक्रिया, समितियो का गठन आदि हैं। समिति पद्धति की अप उप पद्धतियाँ है। यथा वित्तीय समितियाँ, स्थायी समितियो आदि का गठन।

सामान्य पद्धति सिद्धान्त (general systems theory) के प्रणेताओ ने यह तक दिया एक या दूसरे प्रकार की पद्धति का विभिन्न शास्त्र-वेत्ताओ को एक आधारभूत स्तर पर अध्य करना चाहिए और सभी प्रकार की पद्धतियो के लिए कुछ आधारभूत सवग होने चाहिए, जो स के लिए सगत हो। डेविड ईस्टन (Devid Easton) ने सरचनात्मक कार्यात्मक उपागम की इ आधार पर आलोचना की है कि इसके द्वारा दी गयी धारणायें न तो पर्याप्त हैं और न ही स प्रकार की पद्धतियो के अध्ययन हेतु काफी विस्तारपूण है। पद्धति सिद्धान्त का विशेष अभिमु क्रमबद्ध अनुभवमूलक विश्लेषण (oriented toward systematic empirical analysis) ओर है। यह ऐसी धारणाओ और काम करने योग्य नमूने (working models) देती है जिनक प्रयोग विभिन्न क्षेत्रो मे अनुभव पर आधारित परिकल्पनाओ को उत्पन्न करने के लिए किया ज सके। इसकी एक उल्लेखनीय उपयोगिता, मानक शब्दावली, तथ्यो और आँकडो को कूटबद्ध कर (coding data) और प्राप्त सूचना के सभरण मे है। सबसे बढकर बात यह है कि पद्धति सिद्धा का सम्बन्ध गत वर्षों मे गणितीय व सांख्यिकीय तकनीको से बढा है।

इस उपागम का प्रयोग तथ्यो और आकडो की बहुत बडी मात्रा को छाँटने (sorting तथा किसी भी पद्धति के तत्त्वो को बाधने वाली एकरूपताओ और नमूनो को पहचानने मे ब मूल्यवान है। सामान्य रूप मे पद्धति सिद्धान्त सूक्ष्म-विश्लेषण की समस्याओ से बृहत विश्लेषण व समस्याओ के लिए सम्भवत अधिक उपयोगी है। अपनी प्रकृति से ही यह सिद्धान्त तथ्यो औ आँकडो के बडे समूहो (aggregates) के वर्गीकरण और विश्लेषण के लिए श्रेष्ठ ढाचा प्रदा करता है। इसके अतिरिक्त यह व्यक्तिगत तत्त्वो अथवा योग देन वाले कारको की तुलना मे पू काम करने वाली वस्तुओ (complete functioning entities as contrasted with individual elements or contributory factors) के अध्ययन हेतु सुसगठित है।[1] सैद्धान्ति अथ म, सभी क्रमबद्ध उपागमें सामान्य पद्धति सिद्धान्त से निकली हैं, परन्तु अग्रलिखित दो उप सबसे अधिक प्रभावशाली है पहली, सरचनात्मक कार्यात्मक और दूसरी, निवेश निगत।

3 सरचनात्मक कार्यात्मक विश्लेषण (Structural Functional Analysis)

यह विश्लेषण अपने वतमान रूप मे दो मानव शास्त्रियो (Malinowski and Radcliffe Brown) के ग्रन्थो मे विकसित हुआ जो कि वतमान शताब्दी की प्रारम्भिक दशको मे प्रकाशित हुए थे। 1950 के बाद स अनेक राजशास्त्रियो ने इस विश्लेषण के सशोधित रूपो को राजनीतिक विश्लेषण की विभिन्न समस्याओ को लागू करना आरम्भ किया। इस उपागम मे दो धारणाएं प्रमुख हैं—सरचनाएँ और काय। जबकि कार्यों का सम्बन्ध काय के नमूनो के परिणामो (consequences of patterns of action) से है। सरचनाओ का हवाला कार्यों के नमूनो और उनके परिणामस्वरूप पद्धति की सस्थाओं (resultant institutions of the system themselves) से है। गेब्रील आलमोण्ड (Gabril Almond) ने इस क्षेत्र मे एक विस्तृत योजना दी है जिसम राजनीतिक पद्धति की कार्यात्मक आवश्यकताओ के रूप म विभिन्न प्रकार के कार्यों (conversion functions capabilities functions and adaptation and maintenance functions)

[1] O R Young *Systems of Political Science* pp 19-23

को अन्तग्रस्त किया है।

हैरी एक्सटीन का कथन है, अब हम राजनीतिक पद्धतियो को एकमात्र प्रभुत्वपूण राज्यों और उनके औपचारिक विभागा के रूप मे नही सोचते, वरन् किसी 'सामूहिक निणय करन वाली सरचनाओं' (collective decision making structure) अथवा 'अधिकारपूण ढग से सामाजिक मूल्यो के नियतन' के लिए सरचनाओ के समूह (set of structure for authoritatively allocating social values), अथवा एसी सरचनाआ जा समाज के एकीकरण (अखण्डता) को *बनाये रखन का काय करती हैं (structure that perform the function of maintaining* the integration of society) अथवा ऐसी सरचनाआ जा समाज के एकीकरण व समायाजन का काय शक्ति क प्रयोग या उसकी धमकी या अय तरीको से करती है, के रूप म सोचते है। सामाजिक सरचनाओ और कार्यो का सामाजिक पद्धतिया पर विभिन्न रूपो मे प्रभाव पडता है।[1] अत्यत सरल शब्दा मे, हम कह सकते हैं कि राजनीतिक पद्धति अनेक सरचनाआ स मिलकर बनती है और उनके भिन्न-भिन्न काय हैं।

आलमोण्ड के मतानुसार, सभी राजनीतिक पद्धतियो की चार मुख्य सरचनाएँ है जिहे 'अतक्रिया के वैध नमूनो' (legitimate patterns of interaction) के रूप मे परिभाषित किया जा सकता है। राजनीतिक सरचनाएँ कई प्रकार के काय करती है, वे बहु कार्यात्मक (multi-functional) है। विभिन्न राजनीतिक पद्धतियो मे राजनीतिक सरचनाएँ भिन्न भिन्न प्रकार के काय कर सकती हैं। परन्तु सभी राजनीतिक पद्धतिया दो आधारभूत समूहो—निवेश और निगत (inputs and outputs)—के काय करती है। इन कार्यो का विवरण आगामी सैक्शन म दिया गया है। निवेश काय वास्तव म राजनीतिक पद्धति की गैर सरकारी उप पद्धतिया, समाज और साधारण पर्यावरण, दबाव समूहा, राजनीतिक दलो, शिक्षालयो, स्वतत्र समाचार-पत्रा आदि द्वारा किये जाते हैं। परन्तु सभी निगत काय सरकार द्वारा किये जाते है।

राजनीतिक पद्धतियो की तुलना उस मात्रा के शब्दो म की जा सकती है जिसमे कि राजनीतिक सरचनाएँ विशेषीकृत (specialised) हो। आलमोण्ड के अनुसार, आधुनिक राजनीतिक पद्धतियो मे हित उच्चारण (interest articulation) के लिए हित समूह, हिता के समूहीकरण (interest aggregation) के लिए राजनीतिक दल और सचार (communication) क लिए *समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन (mass media) की विशेषीकृत सरचनाओ का अस्तित्व* अविशेषीकृत सरचनाओ (non specialised structures) के साथ मिलता है। सभी राजनीतिक पद्धतियो का अस्तित्व एसे समाजा म है जो कि न्यून या अधिक मात्रा म सास्कृतिक दृष्टि स मिश्रित (culturally mixed) है और इस कारण से यून या अधिक मात्रा मे परम्परागत हैं। आलमाण्ड ने अपन ग्रथ 'The Politics of the Developing Areas' मे यह माना है कि राजनीतिक काय की धारणा को परिष्कृत करना आवश्यक है। उसके अनुसार, राजनीतिक पद्धतियाँ कार्यों के विभिन्न स्तरो पर काय करती हैं और राजनीतिक पद्धति का सिद्धान्त उस ढाच से मिलकर बनता है जो कार्यों के विभिन्न स्तरो के बीच सम्बधो को पहचान सके और उनका स्पष्टीकरण कर सके। कार्यों के विभिन्न स्तरो म ये उल्लेखनीय हैं—क्षमताए (capabilities), परिवतन काय (conversion functions) पद्धति को बनाये रखने व समायोजित करन वाले काय (system maintenance and adaptation functions)।

जहाँ तक राजनीतिक विश्लेपण का सम्बध है, सरचनात्मक-कार्यात्मक उपागम के कुछ लाभ हैं। इसके सवग और इसकी धारणायें क्षेत्र की दृष्टि से उतनी बृहत् नहीं है जितनी कि पद्धति सिद्धान्त की है, परन्तु अपने क्षेत्र मे तथ्यो व आँकडो को एकत्रित करने और दिग्विन्यास के प्रयोजना (purposes of orientation) के लिए काफी धनी हैं। इसका सम्बध परिवर्तों के प्रबध योग्य

[1] Eckstein and Apter (eds), *Comparative Politics A Reader*, pp 26-27

समूह (manageable collection of variables) से है और यह मानक सवर्गों का ऐसा समूह (set of standardised categories) है जिसे विभिन्न प्रकार की राजनीतिक पद्धतियो पर लागू किया जा सकता है। अत राजनीतिक पद्धतियो की तुलना के लिए यह बहुत आवश्यक है। परन्तु हाल के वर्षो मे इसकी काफी आलोचना की गयी है। आलोचना का सबसे गम्भीर आधार यह है कि विश्लेषण की यह पद्धति स्थिर (static) है, और यह वतमान स्थिति (status quo) को युक्ति सगत व न्यायोचित ठहराने के लिए प्रयुक्त की जाती है।

4 निवेश निर्गत विश्लेषण (Input Output Analysis)

इस क्षेत्र मे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण राजशास्त्री डेविड ईस्टन है। उसके विचारो का साराश इस प्रकार है—हम राजनीतिक पद्धतियो का अध्ययन इसलिए करते हैं, क्योकि उनके अधिकारपूर्ण निर्णयो (authoritative decisions) क परिणामो का समाज के लिए बहुत महत्त्व है। इन परिणामो को निगत (outputs) कहा जा सकता है। किसी भी पद्धति को जीवित रखने के लिए यह आवश्यक है कि उसमे निरन्तर निवेश (inputs) होता रहे। निवेशा के बिना कोई पद्धति काय नही कर सकती, और निगत के बिना उसके कार्यो को समझा पहचाना नही जा सकता। राजनीतिक पद्धति के निवेश और निगत कार्यो को निम्न प्रकार रखा जा सकता है
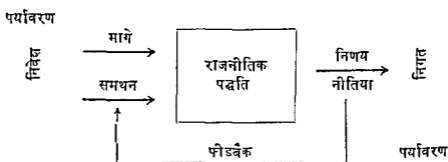
राजनीतिक पद्धति मे निवेश काय समाज, साधारण वातावरण, राजनीतिक दलो, दबाव अथवा हित समूहो, स्कूलो, समाचार पत्रो द्वारा किये जाते हैं, परन्तु सभी निगत काय सरकार द्वारा किये जाते हैं। सम्पूर्ण प्रक्रिया को पर्यावरण के सम्बन्ध म देखना चाहिए। हम सरल ढग स कह सकते हैं कि समाज मे समय समय पर नयी माँगें (demands) उठती हैं और उन्हें समर्थन (support) मिलता है। ये सभी काय, जसा कि पहले बताया जा चुका है राजनीतिक दल, हित समूह, समाचार पत्र आदि करते हैं। *माँगें और उनके समथन राजनीतिक पद्धति के लिए निवेश* हैं। राजनीतिक पद्धति म उन माँगो के फलस्वरूप आवश्यक निणय लिये जाते हैं तथा नीतियाँ बनायी जाती हैं, जो उसके निर्गत कहलाते हैं। समय बीतने पर निगतो से पर्यावरण (environment) मे परिवतन पैदा होते हैं, जिनके परिणामस्वरूप नयी माँगें उत्पन्न होती हैं।

फीडबैक (feebback) का यही विचार है, इसी विचार के अनुसार, अध्ययनकर्त्ता राजनीति के गतिशील कारकों (dynamic factors) को विश्लेषण मे महत्त्वपूर्ण स्थान देता है।

ऊपर चार प्रकार के निवेश कार्य और तीन प्रकार के निर्गत कार्य बताये गये हैं, उनकी संक्षिप्त व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है—शासन व राजनीति मे भाग लेने के लिए व्यक्तियो को समाजीकृत किया जाता है अर्थात् इस प्रकार की शिक्षा व प्रशिक्षण दिया जाता है और उनकी राजनीति मे भर्ती होती है अर्थात् वे राजनीति मे प्रवेश करते है और अनेक प्रकार की भूमिकाएँ (roles) प्रस्तुत करते हैं। समाज मे माँगें उठती हैं, विभिन्न प्रकार के हितों या हित समूह (interest groups) उच्चारण (articulation) करते हैं अर्थात् माँगो को सरकार के सामने रखते हैं। अनेक प्रकार के हितो के समूहीकरण के लिए राजनीतिक दलो का गठन हो जाता है। राज्य और सरकार के बीच विभिन्न प्रकार से संचार होता है, जिसे राजनीतिक संचार (political communication) कहते हैं। इसके मुख्य साधनो मे हम समाचार पत्रो, रेडियो व टेलीविजन (mass media) को गिन सकते हैं।

राजनीतिक पद्धति मे अनेक अधिकारी व शासन के अंग अधिकार पूर्ण निर्णय करते हैं तथा सरकारी नीतियो का निर्धारण करते हैं। इसी कार्य को नियम-बनाना (rule-making) कहा गया है। नियमो को लागू करने (rule application) का काम कार्यपालिका व प्रशासन का है। जो व्यक्ति नियमो अर्थात् कानूनो का उल्लंघन करते हैं, उनके विरुद्ध न्यायिक कार्यवाही (rule-adjudication) की जाती है, यह कार्य न्यायपालिका का है। इस प्रकार राजनीतिक पद्धति के उत्पादन कार्य वही हैं जो कि परम्परा के अनुसार सरकार के माने गये हैं।

निवेश निर्गत उपागम अथवा विश्लेषण मे उपर्युक्त के अतिरिक्त विस्तार की अनेक बातें हैं, जिनका अति संक्षिप्त वर्णन देना ही काफी होगा। माँगो का निवेश (input of demands) पद्धति को कार्य करते रहने के लिए काफी नही। मांगो का समर्थन होना जरूरी है जो राजनीतिक पद्धति मे इन लक्ष्यो के सम्बन्ध मे किया जाता है—समुदाय और शासन। माँगो का कितना समर्थन किया जाय जिससे कि राजनीतिक पद्धति माँगो को निर्णय व नीति के उत्पादन मे परिवर्तित कर सके। यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। यदि राज्य के निर्णय व नीतियाँ ऐसे हो कि समुदाय उनका समर्थन करे तो उससे शासन तन्त्र को बल मिलता है। समुदाय के सदस्यो के राजनीतिक समाजीकरण (political socialization) से भी शासन तन्त्र को समर्थन मिल सकता है।

यंग के मतानुसार, निवेश निर्गत विश्लेषण की अग्रलिखित विशेषताएँ इसे आकर्षक बनाती हैं (1) यह मानव संवर्गों व धारणाओं का ऐसा समूह प्रस्तुत करता है जो तर्क की दृष्टि से पूर्ण है। (2) यह अमूर्त विचारो के ऐसे स्तर पर निर्धारित हुआ है कि इसमे इस बात का खतरा नही है कि यह किसी विशेष प्रकार की राजनीतिक पद्धति से बँध जाय। परन्तु इस उपागम की भी मुख्यत इस आधार पर आलोचना की जाती है कि इसमे क्रान्तिकारी या बड़े पैमाने पर परिवर्तन से सम्बन्धित मामलो पर सापेक्षत बहुत कम बल दिया जाता है, उसके विपरीत कार्यात्मक और परिवर्तन की संशोधन प्रक्रियाओं पर अधिक बल दिया जाता है।[1]

5 तुलनात्मक विधि

यह आरम्भ मे ही बताया जा चुका है कि सभी प्रकार का वैज्ञानिक ज्ञान तुलना पर आधारित है, अत वैज्ञानिक विधि मे तुलना बार-बार अन्तर्ग्रस्त है। चूंकि राजशास्त्र मे प्रयोगात्मक विधि का प्रयोग बहुत ही सीमित अर्थ मे हो सकता है, इसलिए यह तुलनात्मक विश्लेषण या उपागम पर बहुत अधिक निर्भर करती है। परम्परागत उपागम की

[1] O R Young *op cit*, pp 38–48

पूर्व विवेचन किया जा चुका है, यहाँ केवल यह बताना है कि यह उपागम मुख्यत वर्णनात्मक था और पश्चिमी यूरोप व उत्तरी अमरीका के देशों की शासन पद्धतियों के वर्णन तक सीमित था। अत इस बात की आवश्यकता का अनुभव हुआ कि हम उपागम का सम स्तर पर तथा ऊर्ध्वाधर दोनों ही रूपों में वृहत् बनायें (broaden on approach horizontally and vertically)। सम स्तर पर, अधिक से अधिक पाश्चात्य व गैर पाश्चात्य शासन पद्धतियों का अध्ययन करें और ऊर्ध्वाधर दृष्टि से राजनीतिक प्रक्रिया को वृहत् सामाजिक और आर्थिक दशाओं से सम्बन्धित करें। इस प्रकार अध्ययन का विस्तार अति व्यापक हो गया और तुलना का महत्त्व अधिक बढ़ा। नया (तुलनात्मक) उपागम परम्परागत उपागम से अधिक गहराई में जाने वाली तथा क्रमबद्ध (more probing and systematic) है। यह अधिक गहराई में जाने वाली है क्योंकि यह राजनीतिक संस्थाओं के बाहरी रूप (facade) के पीछे सामाजिक आकृति, हित समूहों की दुनिया, राजनीतिक दलों, वैचारिक अभिवृत्तियों तक पहुँचने का प्रयास करती है, क्योंकि ये सब राजनीतिक व्यवहार को ढालती हैं। यह अधिक क्रमबद्ध है, क्योंकि यह राजनीति और पद्धति के सदर्भीय तत्त्वों के बीच सम्बन्ध स्थापित करती है।

विभिन्न राजनीतिक पद्धतियों में राजनीतिक प्रक्रिया के अंगों (segments of political process) के बीच, कुछ संस्थाओं के बीच अथवा राजनीतिक पद्धतियों के बीच तुलना की जा सकती है, जिससे कि अपने सामने और प्रश्नों को स्पष्ट किया जा सके। तुलना के द्वारा किसी वस्तु (phenomenon) की प्रकृति को स्पष्ट किया जा सकता है। जैसे फ्रांस में बहुदलीय पद्धति को उसे ढालने वाले कारकों के प्रकाश में यथा वर्गवाद (sectionalism) आनुपातिक प्रतिनिधित्व मन्त्रिमण्डल द्वारा संसद को विघटन न कराया जा सकना, इत्यादि। मैक्रीडीज ने अपने ग्रन्थ 'Study of Comparative Government' (1955) में चार संवर्ग सुझाये हैं, जो तुलनात्मक अध्ययन में उपयोगी सिद्ध हो सकेंगे—(1) मननात्मक प्रक्रिया और निर्णय करना, (2) शक्ति आकृति (power configuration), हितों के संघर्ष के विशिष्ट हवाले से, (3) राजनीतिक सत्ता के बारे में विचारधारा, परम्परा व विचार आदि, और (4) राजनीतिक सत्ता का संगठन (the structure of government)।

तुलनात्मक विश्लेषण पर हाल में रचित लेखों में दो प्रश्नों पर विशेष रूप से ध्यान दिया गया है—प्रथम, क्षेत्रीय अध्ययन (area studies), और दूसरा पाश्चात्य व गैर पाश्चात्य पद्धतियों में क्या अन्तर है। तुलना के दो मुख्य रूप हो सकते हैं—स्थिर व गतिशील। प्रथम प्रकार की तुलना में अध्ययनकर्त्ता अत्यधिक प्रचलित राजनीतिक रूपों व संस्थाओं का विश्लेषण करता है, अर्थात् वह राजनीतिक पद्धतियों की शरीर रचना (anatomy) का अध्ययन करता है। दूसरे प्रकार की तुलना में राजनीति के गतिशील तत्त्वों का अध्ययन किया जाता है, यथा अधिकारपूर्ण निर्णय किस प्रकार किये जाते हैं, हित समूह व राजनीतिक दल राजनीति को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

परन्तु वर्तमान युग में संस्थायें और प्रक्रियायें पूर्व की अपेक्षा कहीं अधिक जटिल हो गयी हैं। इसलिए तुलनात्मक विश्लेषण अधिक कठिन हो गया है। परन्तु तुलनात्मक अध्ययन के विद्यार्थी के सामने ये कठिनाइयाँ विशेष रूप में आती हैं—(1) राजनीतिक जीवन के बारे में सूचना एकत्रित करना बहुधा कठिन है, (2) जिन परिवर्त्यों पर विचार करना होता है, उनकी संख्या बहुत बड़ी है, साथ ही सच्चे तुलनात्मक ढंग से उनका प्रयोग करना कभी कभी कठिन होता है, और (3) कानून और व्यवहार (law and practice) तथा आदर्श और व्यवहार (norm and behaviour) के बीच अन्तसम्बन्ध कभी कभी ऐसी कठिनाइयाँ पैदा कर देता है जिन्हें हल नहीं किया जा सकता। तथ्यों और आँकड़ों के संकलन में ये कठिनाइयाँ आती हैं—पहली, कुछ देशों में उन तक पहुँचने की मनाही होती है। साम्यवादी देशों, विशेषकर चीन, के बारे

मे तथ्य और आकडे एकत्रित करना अधिक कठिन है। यही कारण है कि पाश्चात्य देशा के बारे म अधिक अध्ययन किय जा सके। दूसरी, कभी कभी तथ्या और आकडा को इकटठा करने म इस कारण स कठिनाई हाती है कि उनका माप करना कठिन है। अनेक प्रकार के राजनीतिक निणयो का माप करना अत्यन्त कठिन है। तीसरे, कुछ बातो के बारे मे सूचना इकट्ठी करना इसलिए कठिन होता है कि व अनाखी घटनाएँ है और उनका तुलनात्मक विश्लपण करना उपयुक्त नही।

लिविस और पाटर स तुलनात्मक राजनीति की समस्याआ म अग्रलिखित को सम्मिलित किया है (1) ऐसे तथ्य और आकडे जिनकी तुलना न की जा सके (non comparable data), (2) पक्षपातपूण तथ्य और आकडे (biased data), (3) आत्मनिष्ठ निणयो स न बचा जा सकना (inescapable subjective judgements), और (4) दोपपूण धारणायें (faulty concepts)। इसके अतिरिक्त तुलनात्मक विश्लपणकर्ता को तथ्यो की विशाल दुनिया स केवल वे ही छाटने होते है जो जाच की जाने वाली समस्या के लिए सगत हा। एसा करने के लिए उसे ऐसे कौशल (strategy) की आवश्यकता है जो उसकी जाच का माग-दशन करे। कौशल की छाँट करने मे कई प्रकार के निणय अन्तग्रस्त है, जिनम स कुछ बडे जटिल हे। निणयो के प्रथम समूह का सम्बन्ध तुलनात्मक जाच के लिए सदभ स है, तुलना का केन्द्रबिन्दु क्या हो और किस स्तर के सिद्धान्तो का प्रतिपादन। कौशल के बारे मे दूसरे बडे निणय का सम्बन्ध 'अधिकतम समान' (most similar) और 'अधिकतम भिन्न' (most different) उपागमो के बीच छाट करने से है।

यह मान लने पर कि विश्लेपण तुलनात्मक होना है, खोज बीन मे अग्रलिखित पगो पर चलना उचित है (1) सामान्य ढाचे (general frame of reference) का खाजना जिस सिद्धान्त क रूप म सामन रखा जाय। (2) सिद्धान्त म सम्मिलित प्रस्ताव (propositions) तथ्यो और आँकडो स उत्पन्न सम्भावित सम्बन्धो के लिए मागदशक का काय करते हैं।[1] शासन के अध्ययन म एप्टर द्वारा लागू की गयी तुलनात्मक विधि का साराश इस प्रकार है—पद्धति मे 'शासन' सबसे अधिक सामान्य इकाई है, (1) जिसकी पद्धति को बनाय रखन हतु पारिभापित जिम्मेदारिया हैं, और (2) व्यवहार मे जिस बल प्रयोग की शक्तिया का एकाधिकार प्राप्त है। शासन अनक प्रकार के काय करते है, जिनमे स कुछ अत्यन्त आवश्यक हैं, जिससे कि सरकार चलती रह। ऐसे कार्यो या गतिविधियो के किय जान के लिए कुछ सरचनात्मक आवश्यकताये (structural requisites) हैं। राज्य के ध्ययो का यह अस्थायी रूप से मान्य समूह हो सकता है, (1) अधिकारपूण निणय करन की सरचना, (2) उत्तरदायित्व और सहमति की सरचना, (3) वल प्रयोग और दण्ड दने की सरचना, (4) साधना के निर्धारण व नियतन की सरचना, और (5) राजनीतिक भर्ती तथा भूमिकाएँ देन की सरचना।

अन्त मे, हम तुलनात्मक शासन व राजनीति के क्षेत्र से कुछ उदाहरण दत हैं (1) क्या नागरिक सेवा काम म वृद्धि न होने पर भी विस्तार मे बढती रहती है ? (C N Parkinson), (2) सविधान का श्रेष्ठ रूप क्या है ? (Aristotle), (3) सविधान म परिवतन और अस्थिरता के क्या कारण हैं ? (Aristotle), (4) क्या अस्थिरता और असमता सम्बन्धित हैं ? (B M Russett), (5) क्या आर्थिक विकास मे तेजगति से की गई वृद्धियाँ और राजनीति म भाग लेना विकासशील दश मे जहाँ स्थायी शासन हो एक दूसरे के विरोधी हैं ? (P R Brass), (6) प्रजातन्त्र अस्तित्व मे किस प्रकार आता है ? (D A Rustov) (7) क्रान्तियाँ क्या हाती हैं ? (J C Davies)।[2]

[1] Lewis and Patter *The Practice of Comparative Politics* pp 54-57

[2] Ball and Lauth (eds) *Changing Perspectives in Contemporary Political Anal[y]* Section II

IV

प्रमुख उपागम
(Major Approaches)

1 व्यवहारमूलक उपागम (Behavioural Approach)

समाज को समझने के लिए परिवर्तनशील उपागमों के विकास में व्यवहारमूलक उपागम नवीनतम उपागम है। समकालीन राजशास्त्र में राजनीतिक व्यवहारवाद सबसे अधिक चुनौती देने वाली विकास सम्बन्धी घटनाओं में से एक है। यद्यपि राजनीतिक व्यवहार की जड़ें यूरोपियन विद्वानों मैक्स वेबर व ग्राहम वालास (Max Weber and Graham Wallas) के लेखों मे मिलती है, तथापि व्यवहारवाद का 1945 के बाद विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण विकास अमरीकी लेखकों द्वारा हुआ। ऐतिहासिक दृष्टि से व्यवहारमूलक उपागम राजशास्त्र मे एक प्रकार का विरोध प्रदर्शन करने वाला आन्दोलन था। अनेक अमरीकी विद्वानों ने राजशास्त्र में चली आ रहीं ऐतिहासिक, दार्शनिक, वर्णनात्मक संस्थागत उपागमों के प्रति घोर असन्तोष व्यक्त किया। उन विद्वानों में सबसे प्रमुख चार्ल्स मेरियम (Charles E Merriam) था, जिसने 1925 में कहा था 'किसी दिन हम (राजशास्त्र में भी) अन्य शास्त्रों की भांति औपचारिक उपागम के स्थान पर दूसरी उपागम को अपनायेंगे और राजनीतिक व्यवहार की जांच को आवश्यक तत्त्व बनाना आरम्भ करेंगे।' संयुक्त राज्य अमरीका में व्यवहारवाद के विकास में कई कारकों ने योग दिया, जिनमे से ये उल्लेखनीय हैं—सोशल साइंस रिसर्च कौंसिल द्वारा दिया गया प्रोत्साहन और सर्वेक्षण की विधियों (survey methods) का वृद्धिपूर्ण प्रयोग। कुछ लेखकों ने व्यवहारमूलक उपागम को एक प्रकार का 'वैज्ञानिक दृष्टिकोण' (scientific outlook) कहा है।

परन्तु राजशास्त्रियों मे अभी तक व्यवहारवाद के अर्थ के बारे मे सहमति नही है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि व्यवहारवाद शोध के लिए राजनीतिक संस्थाओं को आधारभूत इकाई न मानकर राजनीतिक स्थितियों में व्यक्तियों के व्यवहार को विश्लेषण की आधारभूत इकाई मानता है। मानव व्यवहार का पर्यवेक्षण करने, उसके फलस्वरूप संकलित तथ्यों और आंकड़ों का वर्गीकृत करने व मापने के लिए व्यवहारवादी अधिक परिशुद्ध तकनीकों तथा जहाँ कहीं सम्भव हो सांख्यिकीय नियमों के प्रयोग का अनुमोदन करते हैं। व्यवहारवाद के वर्तमान प्रतिपादक निम्नलिखित को व्यवहारमूलक उपागम की प्रमुख विशेषतायें मानते हैं

(1) यह राजनीतिक स्थितियों (political situations) में व्यक्तियों या समूहों के व्यवहार को अध्ययन की आधारभूत इकाई मानता है, राजनीतिक घटनाओं, संरचनाओं, संस्थाओं और विचारधाराओं का राजनीतिक विश्लेषण मे महत्त्व गौण है।

(2) सामाजिक शास्त्रों को 'व्यवहारवादी विज्ञान' (behavioural sciences) समझा जाता है। और राजशास्त्र मे सिद्धान्त और शोध को विकसित करने के लिए कार्य की ऐसी रूपरेखा (frame of reference) का प्रयोग किया जाये जो सामाजिक मनोविज्ञान, समाजशास्त्र और सांस्कृतिक मानवशास्त्र मे प्रयुक्त होती है। विभिन्न सामाजिक शास्त्रों मे परस्पर सहयोग (Inter disciplinary focus) आवश्यक है, क्योंकि सभी के अध्ययन का लक्ष्य मानव व्यवहार है।

(3) राजशास्त्र का ध्येय क्रमबद्ध, अनुभवमूलक सिद्धान्त (systematic empirical theory) की रचना और विकास बताया जाता है। परन्तु अनुभवमूलक सिद्धान्त की रचना यथार्थ तथ्यों पर ध्यान दिये बिना नहीं हो सकती।

(4) यह शोध के कठोर नमूनों (rigorous research designs) का उपयोग और विकास करने का प्रयत्न करता है तथा तथ्यों और आंकड़ों के पर्यवेक्षण, वर्गीकरण व मापने के लिए

परिशुद्ध तकनीकों (precise techniques) लागू करता है और जहाँ कही सम्भव हो सांख्यिकीय व गणितीय नियमो के पालन का अनुमोदन करता है।

चार्ल्स मेरियम द्वारा रचित ग्रन्थ 'New Aspects of Politics' (1925) म इस बात का जोरदार अनुमोदन किया गया है कि राजनीतिक प्रक्रिया म मनोवैज्ञानिक पहलू (psychological dimension) पर अधिक ध्यान दिया जाय। 1928 म स्टुअट राइस द्वारा प्रकाशित रचना Quantitative Methods in Political Science' कदाचित मेरियम के प्रभाव का परिणाम थी। इस उपागम के एक दूसरे महत्त्वपूर्ण पहलू—समाजशास्त्रो मे परस्पर सहयोग पर सेबाइन (G H Sabine) का ग्रन्थ 'Pragmatic Approach to Politics' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ग्रेट ब्रिटेन म कैटलिन (G E C Catlin) ने 'The Science and Methods of Politics' (1927) तथा 'A Study of the Principles of Politics' (1930) मे यह तर्क प्रस्तुत किया कि 'शक्ति क सम्बन्ध' (power relations) राजशास्त्र मे अध्ययन का केन्द्रीय विषय है। इस विचार को क्रमबद्ध रूप से अमरीका म शिकागो स्कूल (Chicago School) की प्रमुख उपज हरल्ड लासवैल (Harold Lasswell) न अपने कई ग्रन्थो मे विकसित किया। उसका कथन है कि राजनीति मे हम इन बातो का अध्ययन करते हैं—'कौन क्या पाता है, कब और कैसे' (Who gets what, when and how), और उसने राजशास्त्र की परिभाषा इन शब्दो मे की 'शक्ति को शक्ल देना और उसमे हिस्सा बाँटना' (shaping and sharing of power)। परन्तु डेविड ईस्टन के मतानुसार, 'शक्ति कई महत्त्वपूर्ण परिवर्त्यों मे से केवल एक है (Power is only one of the significant variables)। यह राजनीतिक जीवन के सम महत्त्वपूर्ण पहलू—ध्येयो की ओर दिग्विन्यास (orientation towards goals) पर ध्यान नही दता। राजशास्त्र समाज के लिए अधिकारपूर्ण मूल्यो का नियतन (authoritative allocation of values) करता है।

अनेक राजशास्त्रियो ने बहुधा व्यवहारवाद के दावो और उपलब्धियो की आलोचना की है। उनकी आलोचना के दो मुख्य आधार हैं—इसकी विधिया और सार (methodology and substance)। उनका मत है कि भौतिकशास्त्री (physicist) और राजशास्त्री जिन वस्तुओ का अध्ययन करते है वे आधारभूत रूप मे एक दूसरे से इतने भिन्न हैं कि भौतिकशास्त्र की विधियो को राजशास्त्र मे लागू नही किया जा सकता। जब हम मनुष्य के भावी प्रेरकों (motives), उसकी अभिवृत्तियो (attitudes) और उसके मूल्यो का अध्ययन करते हैं तो उसमे मापक व सख्यात्मक तरीको का प्रयोग नही किया जा सकता। जहा तक सार का सम्बन्ध है व्यवहारवादी राजशास्त्र को मूल्यों से स्वतन्त्र (value free) बनाना चाहते हैं। परन्तु स्ट्रॉस (Strauss) ने सच ही कहा है कि राजशास्त्रियो को केवल राजनीतिक बातों का ही अध्ययन और विवेचन नही करना है, अपितु उन्हें ऐसे प्रश्नो पर भी विचार करना है—क्या ठीक है, क्या अच्छा है और उचित राजनीतिक व्यवस्था क्या है, इत्यादि।

2 समस्यागत उपागम (Problem Approach)

तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन हेतु यह बडी महत्त्वपूर्ण है। इसमे अमूत विचारो के कई स्तर हैं—बहुत उच्च से लेकर बहुत निम्न तक। उदाहरण के लिए, 'राजनीतिक अस्थायित्व' की समस्या के अध्ययन हेतु उच्च स्तर के अमूत विचारो (high level of abstraction) की आवश्यकता है। परन्तु 'सासद पद्धतियो मे राजनीतिक अस्थायित्व (political instability in Parliamentary systems) की समस्या के अध्ययन हेतु निम्न स्तर के चिन्तन से काम हो जायगा। मेक्रीडीज के अनुसार समस्यागत उपागम के दो मुख्य प्रकार हैं

(1) सिद्धान्त समस्यागत उपागम (theory problem approach) जिसमे किसी समस्या

का सुझाव सैद्धान्तिक या विधि सम्बन्धी विचारों से मिलता है। परन्तु इस प्रकार के उपागम को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—(अ) मध्य क्षेत्र का समस्यागत उपागम (middle range theory approach), और (ब) संकुचित माप का समस्यागत उपागम (narrow gauge theory problem approach)।

(2) नीति की ओर अभिमुख समस्यागत उपागम (policy oriented problem approach) जिसमें किसी समस्या का सुझाव अस्थायित्व के स्थूल रूप या संघर्ष से सुझाया जाता है और उसके अध्ययन का अपनाये जाने योग्य नीतियों की आवश्यकता से सम्बन्ध जोड़ा जाता है। इस प्रकार इस उपागम के तीन प्रकार हैं।[1]

संकुचित माप की सैद्धान्तिक उपागम में ऐसी समस्या को छाँटा जाता है जिसके परिवर्तों व परिकल्पनाओं का क्षेत्र सीमित हो। इसके द्वारा निर्मित परिकल्पनाओं की उपयोगिता मुख्यतः इस बात में है कि वे अधिक वृहत् सैद्धान्तिक नियमों (broader theoretical formulations) का सुझाव देती हैं। इस प्रकार की सुपरिचित परिकल्पनायें वे हैं जिनका प्रयोग पाश्चात्य राजनीतिक पद्धतियों के अध्ययन हेतु किया गया है। जब उन्हें गैर-पाश्चात्य राजनीतिक पद्धतियों के अध्ययन में लागू किया जाता है तो वे दोषपूर्ण सिद्ध होती हैं और उन्हें त्याग दिया जाता है। उदाहरण के लिए, क्या विघटन की शक्ति से अच्छे अनुशासन वाले राजनीतिक दलों की रचना होनी है, जिसके परिणामस्वरूप केबिनेट स्थायी रहती है? जिस प्रकार से यह प्रश्न बनाया गया है उसका सम्बन्ध स्पष्टतः ग्रेट ब्रिटेन और पाश्चात्य यूरोप की संसद पद्धतियों से है। पर्यवेक्षण के बाद पता लगेगा कि इसमें चुनाव पद्धति के ऊपर विचार नहीं किया गया है। अतः इस प्रश्न को फिर से इस प्रकार रखा जा सकता है क्या एक सदन वाली विधायिका में विघटन की शक्ति अनुशासन और मन्त्रिमण्डल के स्थायित्व को लाती है? तुलनात्मक अध्ययन के बाद 'हाँ' या 'ना' में दिया गया उत्तर काफी न होगा।

मध्य-क्षेत्र के सैद्धान्तिक उपागम में अधिक ऊँचे स्तर की सैद्धान्तिक योजना की आवश्यकता है, जिसमें काफी ऊँची मात्रा के सामान्य निष्कर्ष (generalisation) और अमूर्त चिन्तन अन्तग्रस्त हो, परन्तु यह तब भी राजनीति की सामान्य और विस्तारपूर्ण योजना के स्तर से नीचे स्तर पर रहती है, इसीलिए इसका नाम मध्य-क्षेत्र का सैद्धान्तिक उपागम पड़ा है। राबर्ट मर्टन का कथन है 'मध्य क्षेत्र के सिद्धान्त प्रतिदिन प्रतिपादित होने वाली अनेक लघु परिकल्पनाओं (minor working hypothesis) और अति विस्तारपूर्ण चिन्तनों (all inclusive speculations comprising a master conceptual scheme) के मध्य में आते हैं।'[2] परन्तु समस्याओं की छाँट और उनके आधार पर बने नियमों (formulations) का उद्देश्य एक विस्तृत सैद्धान्तिक योजना का विकास हो सकता है। परन्तु यह मध्य क्षेत्र के उपागम का महत्वपूर्ण लक्ष्य नहीं है।

हाल में उपर्युक्त दोनों प्रकार के उपागमों के स्थान पर अनेक लेखकों ने नीति समस्या सम्बन्धी उपागम पर अधिक बल दिया है। इसमें समस्याओं का प्रस्तुत किया जाना और उनकी छाँट का प्रयोजन नीतियों का निर्धारण है। उदाहरण के लिए, जर्मनी पर बहुत लम्बे समय तक मित्र देशों के अधिकार (occupation of Germany by allied troops) को जर्मनी के सैनिक राष्ट्रवाद की निरन्तर समस्या का हल समझा गया। यह एक लम्बे क्षेत्र वाला प्रस्ताव था, जिसका उद्देश्य जर्मन इतिहास से सम्बन्धित सबसे अधिक दृढ़ चिह्नों को नष्ट करना था। इसका बड़ा लाभ यह है कि यह शोध को अनुभवमूलक बनाती है, परन्तु इसमें अति सरलता का खतरा है। अतएव इस प्रकार के उपागम का अग्रलिखित बातों को ध्यान में रखकर प्रोत्साहित करना चाहिए (1) किसी हल को निकालने के लिए एक ही समस्या के अध्ययन की सम्भावना से

[1] R. C. Macridis *Study of Comparative Government* p. 29
[2] R. K. Merton *Social Theory and Social Structures* p. 5

बचना चाहिए। साथ ही समस्या को उसके पूर्ण सन्दर्भ मे, अर्थात् उससे सम्बन्धित समस्याओ के साथ अध्ययन करना चाहिए। (2) समस्याओं के समूह को उसकी सीमाओ के सम्बन्ध मे ध्यान पूर्वक पारिभाषित करना चाहिए। (3) समस्या के समझने और उसका हल खोजने के लिए समय की सीमा निर्धारित करना आवश्यक है।

3 क्षेत्रीय अध्ययन उपागम (Area Study Approach)

तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन मे क्षेत्रीय अध्ययन (area study) की धारणा का प्रयोग बहुत महत्त्वपूर्ण है। परन्तु क्षेत्र की धारणा को अच्छी प्रकार से सोचे बिना अग्रलिखित से पृथक रूप म अथवा मिलाकर सम्बन्धित किया गया है (1) भौगोलिक, (2) ऐतिहासिक, (3) आर्थिक, और (4) सांस्कृतिक। इतना महत्त्वपूर्ण होने पर भी 'क्षेत्र' की 'राजनीतिक लक्षणो (political traits) की दृष्टि से अभी तक उपयुक्त परिभाषा नही की गयी है।

यदि क्षेत्र से सम्बन्धित समान लक्षणो या नमूनो को जान लिया जाय और उनको भौगोलिक दृष्टि से पारिभाषित कुछ इकाइयो से सम्बन्ध जोड़ दिया जाय, तो क्षेत्रीय धारणा की उपयोगिता बहुत बढ जाय। इसीलिए यह अनुभव किया गया कि भावी शोध की दिशा क्षेत्रो के भीतर विस्तारपूर्ण वर्गीकरणीय योजनाओ (classificatory schemes) का विकास होना चाहिए। उदाहरण के लिए, लैटिन अमरीका म निम्नलिखित समस्याओं का क्षेत्र के भीतर तुलनात्मक अध्ययन बड़ा लाभदायक है—

(1) राजनीतिक अस्थायित्व और क्रान्ति,
(2) सांविधानिक समस्याएँ,
(3) अधिनायकशाही,
(4) सैनिकवाद,
(5) प्रादेशिकता और स्थानीयता, तथा
(6) अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति।

इसी प्रकार की समस्याएँ मध्यपूर्व, स्केन्डीनेविया और पाश्चात्य यूरोप के लिए सुझायी जा सकती हैं। क्षेत्र की एक दूसरी परिभाषा मे, जो राजशास्त्रियो के लिए उपयोगी हो सकती है, पाच कार्यात्मक आधार हैं (1) मूल्यो और विचारो (संस्कृति) की अन्तर्क्रिया, (2) प्राकृतिक निकटता, (3) आर्थिक सम्बन्ध, (4) शक्ति सम्बन्धो और शक्ति-समूहो की राजनीतिक अन्तर्क्रिया, तथा (5) सामरिक महत्त्व के विचार। इन आधारो का लाभ यह है कि ये उन कारको की ओर संकेत करते है जो कि क्षेत्र की धारणा मे प्रवेश करते है। फिर भी, राजशास्त्री के लिए उन्हे पर्यवेक्षण योग्य राजनीतिक प्रक्रियाओ मे समानताओ और अन्तरो से सम्बन्धित करना आवश्यक है और परिकल्पनाओ के निर्धारण द्वारा उनका स्पष्टीकरण भी।

मैक्रीडीज के मतानुसार हाल म वैदेशिक पद्धतियो के अध्ययन की रूपरेखा को इस प्रकार से ढाला गया है कि उसकी तुलनात्मक विश्लेषण के लिए अधिक अच्छी सम्भावना है। अशत युद्ध के परिणामस्वरूप और अशत समाजशास्त्रियो व मानवशास्त्रियो द्वारा मानव व्यवहार की विभिन्न गैर पाश्चात्य देशो मे अधिक क्रमबद्ध अध्ययन के फलस्वरूप राजशास्त्री क्षेत्रो के अन्तर्शास्त्रीय अध्ययनो (inter disciplinary studies) म अन्तग्रस्त हो गये है। 'क्षेत्र उन देशो का समूह है, जिनका कुछ नीति सम्बन्धी ध्यानमग्नताओ, भौगोलिक निकटता या सामान्य समस्याओ और सैद्धान्तिक हितो की दृष्टि से एक इकाई के रूप म अध्ययन किया जा सके।' राजनीतिक व आर्थिक पद्धतियो, भाषाओ, इतिहास, संस्कृति और मनोविज्ञान की विश्वविद्यालयो के विभिन्न शास्त्रो (various disciplines) और सरकारी विभागो के प्रतिनिधियो द्वारा संयुक्त रूप मे खोज की जाती है।

देखने से ही यह पता लगता है कि क्षेत्रीय अध्ययन के कार्यक्रम तुलनात्मक विश्लेषण के लिए अच्छी प्रयोगशाला बना सकते हैं। विभिन्न शास्त्रों के मिले जुले उपागम (inter disciplinary approach) ने कुछ संगठनात्मक धारणाओं का सुझाव दिया है जिनके आधार पर तथ्यों और आँकड़ों का संकलन किया जा सकता है, परिवर्त्यों को पहचाना जा सकता है और तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण धारणाएँ संस्कृति और व्यक्तित्व की हैं। परन्तु अधिकतर मामलों में इस प्रकार के अध्ययन प्रथमतः अन्तरों को बताते हैं, उनका स्पष्टीकरण नहीं करते। वैसे भी सामान्य रूप में, क्षेत्रीय उपागम एक तुलनात्मक अध्ययन हेतु क्रमबद्ध रूप रेखा देने में विफल रही है।[1]

4 समूह सिद्धान्त (Group Theory)

आधुनिक युग में बहुलवादी (pluralists) पहले विचारक थे जिन्होंने सामाजिक और राजनीतिक जीवन में समूहों के महत्त्व पर बल दिया। उन्होंने कहा कि मनुष्य की सामाजिक प्रकृति की अभिव्यक्ति अनेक प्रकार के समूहों—धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, व्यावसायिक और राजनीतिक—में होती है। अतः मानव व्यवहार के अध्ययन हेतु इन सभी का अध्ययन उपयोगी और आवश्यक है। जब से व्यवहारवाद और अनुभववाद (empiricism) का राजशास्त्र में आगमन हुआ है, हित अथवा दबाव समूहों के महत्त्व को भली प्रकार स्वीकार किया गया है और निर्णय करने वाली प्रक्रिया (decision making process) अथवा राजनीति के गतिविज्ञान में उनकी भूमिका का महत्त्व बहुत बढ़ गया है।

परन्तु यहाँ पर समूह सिद्धान्त (group theory) को हमें एक विशेष अर्थ में समझना है। यंग (O R Young) के मतानुसार बहुलवादियों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त को समूह सिद्धान्त कहा गया था। राजशास्त्र में समूह सिद्धान्त का क्रमबद्ध विकास आर्थर बैंटले (Arthur Bentley) के ग्रन्थ 'The Process of Government' (1908) से आरम्भ हुआ। उसके मुख्य विचारों का सार इस प्रकार है राजशास्त्र के विद्यार्थी के लिए चाही सामग्री (raw material) व्यक्तियों में नहीं पायी जाती, यह तब मिलती है जब बहुत से मनुष्य मिल जाते हैं। उनके कार्य एक दूसरे के साथ वह सामग्री देते हैं। मनुष्यों के समूह सोचने वाले व भावुक पात्रों (thinking and feeling actors) से मिलकर बनते हैं। वे किसी विचार तथा भाव-प्रक्रिया के द्वारा कार्य करते हैं। उनके विचार और भाव, स्थूल रूप में पृथक् किये जाकर उनकी गतिविधियों के मूल्यों की ओर संकेत करते हैं जो हमारे अध्ययन की सामग्री हैं।

सम्पूर्ण सामाजिक जीवन को, उसके विभिन्न पहलुओं में ऐसे कार्यशील मनुष्यों के समूहों में वर्णित किया जा सकता है। अतः इन समूहों की परीक्षा करने और उसके परिणामों को अपनी जाँच के आधारभूत तत्त्व मानने में अध्ययन के लिए वृहत् क्षेत्र है। सामाजिक जीवन के किसी भी रूप के अध्ययन में बड़ा कार्य उन समूहों का विश्लेषण है। यहाँ 'समूह' शब्द का तकनीकी अर्थ में प्रयोग हुआ है।[2] *समूह और समूह की गतिविधि समान अर्थ वाले शब्द हैं, उनमें थोड़ा सा बल देने* का अन्तर है, जो विभिन्न सन्दर्भों की अभिव्यक्ति की स्पष्टता के लिए उपयोगी है।

समूह सिद्धान्त के विश्लेषण में अगला पग यह है कि प्रत्येक समूह का कोई हित होता है। समूह और हित पृथक् नहीं होते। उसी हित के कारण समूह कोई कार्य करता है, यह आरम्भ से अन्त तक अनुभवमूलक (empirical) है। उसके बाद समूह में सदस्यों की संख्या पर ध्यान जाता

[1] R C Macridis *op cit* p 13

[2] It means a certain portion of the man of a society taken however not as a physical mass cut off from other masses of men but as a mass activity which does not preclude the men who participate in it from participating likewise in many group activities —H Eulau et al *Political Behaviour* pp 14–22

है। साधारण चुनाव मे भाग लेने वालो की सख्या का महत्त्व होता है। परन्तु सख्या के अतिरिक्त हित की तीव्रता (intensity) का बडा महत्त्व है जो समूह को अपने राय मे प्रभावी बनाती है। इस तीव्रता की, हित की भाँति, पर्यवेक्षण द्वारा ही खोज की जा सकती है। अन्त मे सख्या और तीव्रता के अतिरिक्त एक तीसरी बात समूह के कार्यों की तकनीक (technique) है।

सभी समूह सिद्धान्तवादियो ने यह माना है कि सरकार को विभिन्न राजनीतिक समूहो के बीच चलने वाले सघर्ष या मुकाबला करने के लिए कुछ नियमित प्रक्रियाएँ स्थापित करनी होती है, जिनका उद्देश्य समायोजन प्राप्त करना है। सरकार के इस कार्य के दो पहलू उल्लेखनीय है—

(1) समूहो के बीच होने वाले सघर्ष म सरकार मध्यस्थ का कार्य करती है और उसे नियन्त्रित रखने के लिए नियमो व प्रतिबन्धो की व्यवस्था करती है।

(2) बहुधा सरकार ऐसे फोरम की व्यवस्था करती है जिसके भीतर समूहो का सघर्ष कुछ विहित सीमाओ के भीतर रहकर चलता रहे।

राजनीतिज्ञो ने समूह सिद्धान्त की धारणाओ का अन्य उपागमो की धारणाओ की तुलना मे अधिक प्रयोग किया है। उसके लिए ये कारण दिये जा सकते हैं—

(1) इसकी मुख्य आकर्षक बातो म से एक इसकी वर्णनात्मक शक्तिया (descriptive powers) हैं।

(2) समाज के प्रति समूह उपागम म ध्येय और उसकी प्राप्ति के विचार आधारभूत है।

(3) परिवर्तन की समस्याएँ भी इस उपागम का महत्त्वपूर्ण अग है।

परन्तु विगत वर्षों मे यह सिद्धान्त बडे प्रवाद और आलोचना का विषय बना है। इसकी आलोचना मुख्यत इन आधारो पर की जाती है—

(1) इसकी प्रवृत्ति समूहो को मूर्त रूप मे देखने की है और उनके बारे मे इस प्रकार विवेचन करने की भी जैसे वे जीवित प्राणी (organisms) हो।

(2) हित समूह का विचार अन्य समूहो के साथ सघर्ष म समूह हित को अधिकतम महत्त्व प्रदान करता है। इसम बुद्धिसगत व्यक्ति (rational individual) की ओर ध्यान नही दिया जाता।

(3) इस सिद्धान्त की आधिक आलोचना यह है कि इसमे बल समूहो पर दिया जाता है, न कि व्यक्तियो पर जो वास्तविक पात्र हैं।[1]

विश्लेषण के अन्य चार उपागमो—राजनीतिक सस्कृति, राजनीतिक विकास और आधुनिकीकरण, वर्गयुद्ध का सिद्धान्त तथा राजनीतिक सचार—का आगे विवेचन किया गया है।

[1] O R Young *op cit* pp 85-90

V

राजनीतिक पद्धति और विचारधारा
(Political System and Related Concepts)

1 राजनीतिक पद्धति

आजकल पाठ्य-पुस्तको व प्रबन्धो (monographs) मे शासन, राज्य और राष्ट्र के स्थान पर राजनीतिक पद्धति (political system) के प्रयोग का चलन हो गया है। राज्य, शासन और राष्ट्र शब्द कानूनी व सस्थागत अर्थों से सीमित हैं। ये हमारा ध्यान सस्थाओ के उस समूह की ओर दिलाते हैं जो साधारणतया आधुनिक पाश्चात्य समाजो मे पायी जाती हैं। अब शासन के अध्ययन के लिए जिन विश्लेषणात्मक परिप्रेक्ष्यो का प्रयोग किया जाता है उनमे वतमान काल मे बडा परिवतन हुआ है। उस परिवतन का प्रतीक 'राजनीतिक पद्धति' की धारणा का उदय और उसकी प्रधानता है। राजनीतिक पद्धति की धारणा का अब व्यापक रूप मे चलन हो गया है, क्योकि यह हमारा ध्यान समाज के भीतर राजनीतिक गतिविधिया के सम्पूण क्षेत्र की ओर दिलाती हैं, वे गतिविधिया समाज के चाहे किसी भी क्षेत्र मे आती हो।

आलमोण्ट और पोवेल के मतानुसार इसकी अनेक परिभाषाओ मे सामान्य बात इसका समाजो मे प्रयुक्त होने वाले वैध शारीरिक बल (legitimate physical coercion) से सम्बन्ध है। ईस्टन ने उसे मूल्यो का अधिकारपूण नियतन (authoritative allocation of values) कहा है, डहल शक्ति, शासन और सत्ता की बात कहता है। इन सभी परिभाषाओ मे वैध अनुशास्तियाँ (ligitimate sanctions), कानून मनवाने व दण्ड देने की उचित शक्ति निहित है।

पद्धति की धारणा इसलिए आकषक लगी कि राजनीतिक पद्धति, जीवित प्राणी की भाँति अन्तर्निर्भर अगो से मिलकर बनती है, यदि हम पूण सगठन (पद्धति) का अध्ययन करना चाहते हैं तो हमे उसके अगो के बीच जटिल अन्तर्क्रियाओ की गहराई मे जाना होगा। राजनीतिक पद्धति, शासनतन्त्र के द्वारा, बाध्यकारी और वैध निणयो को उत्पन्न करने का काय करती है। राजनीतिक पद्धति के आधारभूत तत्त्व ये हैं (1) शक्ति (2) हित, (3) नीतियाँ, और (4) राजनीतिक सस्कृति।[1] आलमोण्ड के शब्दो मे, 'राजनीतिक पद्धति समाज मे वैध, व्यवस्था बनाये रखने वाली, अथवा परिवतन लाने वाली पद्धति है वैध बल वह सूत्र है जो राजनीतिक पद्धति के निवेशो और निगतो मे घिरा है, और उस पद्धति के रूप मे उसका विशेष गुण, प्रमुखता और सुसगतता प्रदान करती हैं।'[2] वाड और मेक्रीडीज के शब्दो मे 'राजनीतिक पद्धति वह यन्त्र है जिसके द्वारा सावजनिक मामलो के क्षेत्र मे (in the realm of public affair) समस्याओ को समझा और प्रस्तुत किया जाता है तथा निणय किये व प्रशासित किये जाते हैं। वह सरकारी तन्त्र जिसके द्वारा इन समस्याओ और निणयो को कानूनी रूप म समझा, प्रस्तुत किया और प्रशासित किया जाता है सरकार कहलाती है। परन्तु तुलनात्मक राजनीति के विद्यार्थियो के लिए सरकार ही अध्ययन का एकमात्र विषय नही है।'[3]

कहने का तात्पय यह है कि सरकार (शासन) तो अधिक व्यापक धारणा—राजनीतिक पद्धति—का एक अग है। राजनीतिक पद्धति मे सरकार के अतिरिक्त उन सभी अनौपचारिक

[1] G Abcarian and G S Masannat *Contemporary Political System* pp 10 11

[2] The political system is the legitimate order maintaining or transforming system in the society legitimate force is the thread that runs through the inputs and outputs of the political system giving it its special quality and salience and its coherence as a system —Almond

[3] Ward and Macridis *Modern Political Systems Europe* p 8

अथवा गैर-सरकारी कारकों को भी सम्मिलित किया जाता है जो सार्वजनिक मामलों के क्षेत्र मे समस्याओ को समझने व प्रस्तुत करने और निर्णय करने तथा उन्हें प्रशासित करने के यन्त्र को प्रभावित करते हैं, यथा (1) उसकी ऐतिहासिक विरासत और भौगोलिक साधन, उसका सामाजिक व आर्थिक सगठन, उसकी विचारधारायें और मूल्य-पद्धतियाँ तथा उसकी राजनीतिक शैली (political style), और (2) उसके दलीय हित तथा नेतृत्व की सरचना। इस प्रकार राजनीतिक पद्धति म केवल शासनतन्त्र पर ही नही वरन् उन अनेक अनौपचारिक व गैर सरकारी कारकों पर हैं जो राजनीति को प्रभावित करते हैं। आलमोण्ड ने राजनीतिक पद्धति के निवेश कार्यों (input functions) को सरकार के निगत कार्यों (output functions) के बीच अन्तर किया है। इनका विवेचन पहले किया जा चुका है।

राजनीतिक पद्धतियाँ विभिन्न प्रकार की हैं। आलमोण्ड के अनुसार उनका वर्गीकरण यह है—(1) आग्ल अमरीकी पद्धतियाँ, (2) महाद्वीपीय यूरोप की पद्धतिया, (3) पूव औद्योगिक अथवा आंशिक रूप मे औद्योगिक पद्धतियाँ, और (4) सर्वाधिकारवादी पद्धतियाँ। ब्लॉण्डेल के मतानुसार राज्यो (राजनीतिक पद्धतिया) को पाँच बडे सवर्गों म रखा जा सकता है (अ) उदारवादी प्रजातन्त्र (liberal democracies) जिनम बल सावजनिक निणय किये जाने म उदारवाद पर है। (ब) साम्यवादी पद्धतियो म, सामाजिक लाभो की क्षमता को प्राथमिकता दी जाती है और उदारवादी उपायो (साधनो) पर बहुत कम बल दिया जाता है। (स) परम्परागत राज्य मे शासन सामान्यत अल्पतान्त्रिक (या धनिकतन्त्री) होता है और उसका स्वरूप रूढिवादी अथवा अनुदार (conservative) होता है। (द) दूसरे विश्वयुद्ध के बाद बने विकासशील राज्यो म सामाजिक और आर्थिक लाभो की अधिक समता के ध्येयो का पालन करने का प्रयास हो रहा है। (य) एक सत्ताधारी अनुदार (authoritative conservative) पद्धति वह है जिसमे अधिक समता और शासन-कार्यों म जनता के अधिक भाग लेन के प्रयत्नो का विरोध किया जाता है।[1]

2 राजनीतिक विचारधारायें

विचारधारा की परिभाषा—विचारधारा (ideology) मे सिद्धान्त (doctrine) से अधिक अन्तर्ग्रस्त होता है। यह विशिष्ट कार्यों और सासारिक व्यवहारो (particular actions and mundane practices) को अधिक व्यापक अर्थों के समूह से जोडती है, और जो सामाजिक आचरण को अधिक सम्मानपूण और प्रतिष्ठित रूप प्रदान करती है। यह वास्तव मे, एक उदार मत है। दूसरे दृष्टिकोण से विचारधारा भद्दे प्रेरको और वाह्य रूपो (shabby motives and appearances) को ढकने वाला होता है। विचारधारा एक जातिगत (generic) शब्द है जो ऐसे सामान्य विचारो के लिए लागू किया जाता है जो आचरण की विशिष्ट स्थितियो म शक्तिशाली होते हैं। उदाहरण के लिए, कोई भी आदश नही, वरन् राजनीतिक, कोई भी मूल्य नही, वरन वे जो अधिमान्यताओ के दत्त समूह को स्थापित करें (those establishing a given set of preferences), कोई भी विश्वास नही, वरन् वे जो चिन्तन (विचार) की विशिष्ट शैलियो का शासित करते हैं। चूँकि यह काय और आधारभूत विश्वास के बीच सम्बन्ध जोडने वाली कडी है, विचारधारा काय के नैतिक आधार को अधिक स्पष्ट बना देती है। आगे विचारधारा का अथ दशन (philosophy) से नही है। शक्तिशाली और रचनात्मक विचारधारायें व्यक्ति के महत्त्व को बढाने म बडी सहायक हैं। यही कारण है कि क्रान्तिकारियो के चिन्तन मे विचारधारा की भूमिका केन्द्रीय है। उनके लिए विचारधारा को कायरूप देना नये विचारो की नैतिक श्रेष्ठता को दिखाने का एक तरीका है।[2]

[1] J Blondel *Comparing Political Systems* pp 41–43
[2] D E Apter *Politics of Moderni ation*, p 314

'राजनीतिक विचारधारा में हम राज्य और शासन से सम्बन्धित विचार और विश्वास के उन नमूनों को समझते हैं जो एक साथ ही आज्ञापालन और सहमति तथा नियन्त्रण के तन्त्र को गठित करते हैं।' राजनीतिक विचारधारा का सम्बन्ध व्यवहार और विश्वास के उन नमूनों से है जो राजनीतिक पद्धति के निर्णय करने वाले अभिकरणों (decision making agencies of the system) से सम्बन्धित हैं तथा उन ढंग से भी जिनसे कि समाज की शक्ति आकृति (power configuration) की रचना होती है और शक्ति समूहों में सम्बन्ध स्थापित होते हैं।

राजनीतिक विचारधारायें अनेक हैं तथा प्रत्येक के कई-कई रूप हैं। प्रो० लोवेन्स्टीन (Lowenstein) ने राजनीतिक विचारधाराओं के महत्त्वपूर्ण प्रकार इस प्रकार बताये हैं (1) निरंकुशवाद (absolutism), जिसके ये रूप हो सकते हैं—राजतन्त्र, कुछ धार्मिक रंग लिये हुए धर्मतन्त्र (theocracy) और अधिनायकतन्त्र, (2) संविधानवाद (constitutionalism), जो इन संस्थाओं में विभिन्न रूप पाता है—प्रतिनिधिक शासन, संसदीय पद्धति, विधि का शासन (rule of law) और प्रजातन्त्र, (3) व्यक्तिवाद (individualism), जिसके आर्थिक और राजनीतिक दोनों क्षेत्रों में ये रूप हैं—उदारवाद (liberalism) स्वतन्त्र उद्यम, पूँजीवाद और मानववाद (humanism), (4) सामाजिक समूहवाद (social collectivism), जिसके दो रूप हो सकते हैं—प्रजातान्त्रिक या सर्वहारावर्गीय समाजवाद अर्थात् साम्यवाद, (5) राष्ट्रवाद, साम्राज्यवाद, जातिवाद (racism), अन्तर्राष्ट्रवाद और विश्ववाद (universalism), (6) विशिष्ट वर्गीय (elitist) और संगठनात्मक विचारधारायें (organistic ideologies) जैसे अभिजाततन्त्र, सैनिकवाद, प्रबन्धकवाद, निगमवाद और फासीवाद के आधुनिक रूप।

तुलनात्मक शासन के लिए विचारधारा के चार महत्त्वपूर्ण पहलू इस प्रकार हैं पहला, प्रधान राजनीतिक विचारधारा का स्रोत, दूसरा विचारधाराओं का प्रसार, इस पहलू के साथ अनेक समस्याएँ सम्बन्धित हैं, जैसे विचारधारा की स्वीकृति, उसके प्रसार की शैली, किसी पद्धति में विदेशी विचारधाराओं के प्रभाव से क्या संशोधन होता है, तीसरा, सामाजिक नियन्त्रण के साधन रूप में विचारधारा का कार्य, और चौथा, किसी राजनीतिक पद्धति में राजनीतिक सत्ता के संगठन और विचारधारा के बीच सम्बन्ध।[1]

3 राजनीतिक पद्धतियों और विचारधाराओं में सम्बन्ध

यह सम्बन्ध बड़ा व्यापक है और इसके अनेक रूप या पहलू हैं, जिनका हम यहाँ पर संक्षेप में, विवेचन करेंगे। सर्वप्रथम तो हम राजनीतिक पद्धति के अर्थ का ध्यान रखना है, यह शासन की संस्थाओं—संविधान, विधायिका, कार्यपालिका, प्रशासन—के अतिरिक्त उनकी ऐतिहासिक, भौगोलिक पृष्ठभूमि, सामाजिक सांस्कृतिक और आर्थिक आधारों (foundations), समूहों व राजनीतिक दलों जैसे महत्त्वपूर्ण अनौपचारिक अथवा संविधान के बाहर वाले तत्त्वों (extra constitutional elements) और अधिकारपूर्ण निर्णय किये जाने व नीतियाँ निर्धारित होने वाली प्रक्रियाओं आदि से मिलकर बनती है।

दूसरे, राजनीतिक विचारधारायें, जैसा कि पहले बताया गया है अनेक हैं और उनमें से प्रत्येक के कई-कई रूप हैं। यह आवश्यक नहीं है कि एक राजनीतिक पद्धति का एक ही विचारधारा से सम्बन्ध हो, यथार्थ में, एक ही राजनीतिक पद्धति में कई विचारधाराओं या उनके विभिन्न रूपों के प्रभाव को स्पष्ट देखा जा सकता है।

तीसरे, यदि किसी भी राजनीतिक पद्धति के इतिहास का ध्यानपूर्वक अवलोकन करें तो हम देखेंगे कि उसके विकास की विभिन्न मंजिलों में भिन्न भिन्न राजनीतिक विचारधाराओं का प्रभाव पड़ा। इन बातों को ध्यान में रखते हुए हम कह सकते हैं कि राजनीतिक पद्धतियों और

[1] R C Macridis *The Study of Government* pp 50–53

राजनीतिक विचारधाराओ के बीच सम्बन्ध में मोटे रूप मे, निम्नलिखित रूप हो सकते हैं

(1) राजनीतिक पद्धति के आधार रूप मे विचारधारायें।

(2) शासन के सविधान, ध्येयो, नीतियो और कार्यक्रमा पर विचारधाराओ का प्रभाव।

(3) विभिन्न राजनीतिक दल और उनको प्रभावित करने वाली विचारधारायें।

(4) विभिन्न विचारधाराओ वाले हित या दबाव समूह।

4 कुछ उदाहरण

अठारहवी और उन्नीसवी शताब्दियो मे पाश्चात्य प्रजातन्त्रो का सम्बन्ध मुख्यत उदारवाद (liberalism) से था। उदारवाद को अधिक व्यापक विचारधारा—व्यक्तिवाद (individualism) का अग कहा जा सकता है, जिसमे व्यक्ति के अधिकारो, विशेषकर राजनीतिक अधिकारो, पर बल दिया जाता है। आर्थिक क्षेत्र मे व्यक्तिवाद का महत्त्वपूर्ण रूप राज्य द्वारा हस्तक्षेप न किये जाने की नीति (policy of laissez faire) रही। व्यक्तिवादी यह मानते थे कि व्यक्तियो को सभी क्षेत्रो मे अधिक से अधिक स्वतन्त्रता रहे और राज्य उनके कार्यों म कम से कम हस्तक्षेप करें। इसी विचारधारा के परिणामस्वरूप राज्य के काय अति सीमित रहे और राज्य का रूप मुख्यत पुलिस राज्य (police state) जैसा रहा। ऐसी व्यक्तिवादी विचारधारा के प्रमुख प्रतिपादक इग्लैण्ड के जॉन लॉक, एडम स्मिथ, हरबर्ट स्पेसर आदि रहे। आरम्भ मे जे० एस० मिल भी व्यक्तिवाद का प्रबल समथक रहा, परन्तु बाद मे उसके उपयोगितावाद (utilitarianism) ने समाजवाद के क्षेत्र मे प्रवेश किया।

प्रथम विश्व युद्ध के पूव तक अधिकतर राज्यों मे व्यक्तिवाद अथवा उदारवाद का ही चलन रहा। व्यक्तिवाद से पूजीवाद (capitalism) का विकास हुआ और पूजीवाद ने साम्राज्यवाद को जन्म दिया। यूरोप के महान् राष्ट्रो ने विश्व के अनेक प्रदेशो व भागो मे अपने अपने साम्राज्यो को स्थापित किया तथा उनका विस्तार करने के प्रयास किये। उनकी साम्राज्यवादी प्रवृत्तिया (imperialist trends) के कारण सघष उत्पन्न हुए और अन्त मे प्रथम महायुद्ध हुआ। महायुद्ध स पूव ही यूरोप के अनेक देशो मे समाजवादी विचारधारा का, विशेषकर मार्क्सवाद (Marxism) का प्रसार हुआ। महायुद्ध के उपरान्त सोवियत सघ म साम्यवाद के आधार पर नये राज्य की स्थापना हुई, जिसने 1936 मे नया सविधान स्वीकार किया। सोवियत सघ के सविधान को विश्व का प्रथम साम्यवादी सविधान माना जाता है। उसकी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सरचनाएँ (structures) और उनके काय पाश्चात्य प्रजातन्त्री देशो की सस्थाओ और कार्यों से सवथा भिन्न हैं।

महायुद्ध के उपरान्त जमनी और इटली म अत्यधिक मन्दी से उत्पन्न आर्थिक सकटो का मुकाबला करने हेतु हिटलर व मुसोलिनी ने एक नयी विचारधारा को जन्म दिया। इटली म राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक तीनो ही प्रकार की सरचनाओ का आधार फासीवाद (fascism) बना। वहा प्रजातन्त्रात्मक सस्थाओ को दिखावे के लिए कायम रखा गया, किन्तु राज्य को वास्तव म निगमित राज्य (corporative state) बनाया गया। जमनी मे भी हिटलर ने राजसत्ता या नाजी दल का नियन्त्रण कायम करने के बाद प्रजातन्त्रात्मक ढाचे को केवल बाह्य दिखावे के रूप म रखा और वहा पर एक नेता व एक दल का शासन स्थापित किया। नाजी दल ने समाजवाद को 'राष्ट्रीय समाजवाद (national socialism) के रूप मे अपनाया। वास्तव मे, उसकी विचारधारा समाजवादी न थी। इटली और जमनी दोनो ही देशा म एक प्रकार के सर्वाधिकारवादी राज्य (totalitarian states) की स्थापना हुई। उसके अन्तर्गत राज्य न व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन के सभी पहलुओ पर अपना नियन्त्रण लागू किया और व्यक्तियो व समूहो को किसी प्रकार की भी स्वतन्त्रता न रही। इस दृष्टि से उन दोना देशो तथा सोवियत सघ

सर्वाधिकारवाद फला और फूला, परन्तु जहा सोवियत सघ की अथव्यवस्था समाजवादी रही, इटली व जमनी मे अथव्यवस्था उससे सवथा भिन्न रही। इस प्रकार महायुद्ध के बाद जमी विचारधाराएँ उससे पूव की विचारधाराओ से भिन्न रही और उन्होने सम्बन्धित राज्यो के सविधानो और कार्यों को बहुत बडी सीमा तक प्रभावित ही नही किया, वरन् उन राज्यो की शासन पद्धतियो और विचारधाराओ मे घनिष्ट सम्बन्ध रहा।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद अनेक पराधीन देशो म स्वाधीनता के लिए आन्दोलन व सघष चले। इन आन्दोलनो व सघर्षो के नेताओ ने राष्ट्रवाद, प्रजातन्त्र व स्वतन्त्रता जैसे उच्च राजनीतिक आदर्शो से प्रेरणा प्राप्त की। उनके आन्दोलनो व सघर्षो को साम्राज्यवाद विरोधी (anti imperialist) शक्तियो से समथन व प्रोत्साहन भी मिला। भारत, बर्मा, इण्डोनेशिया, घाना, नाइजीरिया, वियतनाम, अल्जीरिया आदि देशो म स्वातन्त्र्य सघष सफल हुए। इन तथा अन्य अनेक राज्यो ने अपने सविधान बनाये। अधिकतर सविधानो के प्रजातन्त्र, समाजवाद और राष्ट्रवाद जैसी विचारधाराओ को कम या अधिक मात्रा मे स्वीकार किया और उन्हे राजनीतिक सस्थाओ व आर्थिक सरचना मे उचित स्थान प्रदान किया। भारत मे इनके अतिरिक्त धम निरपेक्षवाद (secularism) को भी महत्त्वपूण स्थान प्रदान किया है।

चीन, पूर्वी जमनी, रूमानिया, यूगोस्लाविया, उत्तरी वियतनाम आदि देशो मे सोवियत सघ के नमूने पर समाजवादी अथवा साम्यवादी सविधान बने। इन सभी मे राजनीतिक पद्धति और विचारधारा के बीच अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। 1970 मे चिली (Chile) म मतदान द्वारा मार्क्सवादी शासन की स्थापना हुई थी। परन्तु 1973 म वहा प्रति-क्रान्तिकारियो (counter revolutionaries) ने उस सरकार को उखाड फेंका और वहा सैनिक शासन स्थापित हुआ, जो समाजवाद व साम्यवाद को किसी भी रूप म सहन नही करता। पश्चिमी जमनी म, पाश्चात्य शक्तिया क प्रभाव अधीन, 1949 म सासद प्रजातन्त्र की स्थापना हुई थी और वह पद्धति अभी तक सफलतापूवक चल रही है। कई देशो मे प्रजातन्त्र की असफलता के कारण सैनिक शासन स्थापित हुए, यथा घाना, नाइजीरिया और चिली। अन्य कई देशो मे अभी तक अधिनायकशाही चल रही है। वहा के शासन प्रजातन्त्र व स्वतन्त्रता जैसे आदर्शों मे विश्वास नही करते अथवा अपने देशो के लिए उन्हे उपयुक्त नही समझते।

VI

राजनीतिक सस्कृति और सहभागिता
(Political Culture and Participation)

1 राजनीतिक सस्कृति की परिभाषा

राजनीतिक सस्कृति (political culture) वह धारणा है जिसका विकास औपचारिक सस्थागत व्यवस्थाओं (formal institutional arrangements) और यथार्थ व्यवहार (actual behaviour) के बीच सम्बन्ध को समझने म सहायता देने के लिए हुआ। यह राजनीतिज्ञा म 1950 के बाद लोकप्रिय धारणा बनी और तब से इस बारे म बहुत कुछ लिखा गया है। इस धारणा का राजनीतिक विश्लेषणकर्त्ता को सास्कृतिक परिवर्तन के मनोवैज्ञानिक पहलुओं का राजनीतिक विकास के बड़े प्रश्नों से सम्बन्ध जोड़ने म सहायता देने म बडा महत्त्व है।

'राजनीतिक सस्कृति' की ठीक ठीक परिभाषा करना कठिन है। फिर भी राजनीतिक क्षेत्र मे मनुष्यों के व्यवहार के तरीको का वर्णन करने म यह बहुत उपयोगी है। सामान्य रूप मे, इसमे उन विशिष्ट रीति रिवाजो, आदतो, कौशलो और अभिवृत्तियो (attitudes) को सम्मिलित किया जाता है जिन्हे व्यक्ति अपनी राजनीतिक पद्धति के सामान्य अनुभव (shared experience) के रूप मे सीख लेते हैं। पाई के शब्दो म, 'राजनीतिक सस्कृति उन अभिवृत्तियो, विश्वासो और भावनाओं का समूह है जो किसी राजनीतिक प्रक्रिया को व्यवस्था व अर्थ प्रदान करते हैं और जो उन आधारभूत पूर्वधारणाओ (assumptions) व नियमो को प्रदान करते हैं जो राजनीतिक पद्धति मे व्यवहार को शासित करते हैं।[1] इसम राजनीतिक आदर्श और राज्य मे काम कर रह प्रतिमान (norms) दोनो ही आ जाते हैं। इस प्रकार राजनीतिक सस्कृति राजनीति के मनोवैज्ञानिक व आत्मनिष्ठ पहलुओ का योग रूप मे बाह्य रूप (manifestation in aggregate form of the psychological and subjective dimensions of politics) है।

रोज और डोगन न इसकी सरल शब्दो म इस प्रकार व्याख्या की है 'राजनीतिक सस्कृति की धारणा ऐसे मूल्यो, विश्वासो और मनोभावो को सक्षेप म व्यक्त करने का सुविधाजनक तरीका है जो *राजनीतिक जीवन को अर्थ (महत्त्व) प्रदान करते हैं। राजनीतिक सस्कृति का विश्लेषण* करने पर कोई भी राष्ट्रीय समुदाय के प्रति जनता के दृष्टिकोणो को सुविधापूर्वक पहचान सकता है, (*e g*, German volk), विशिष्ट राजनीतिक सस्थाओ और पदो के प्रति (*e g*, the Fifth French Republic), ऐसे पदो को धारण करने वालो के प्रति (*e g*, President de Gaulle), और शासन-पद्धति की उत्पादित नीतियो के प्रति (*e g*, British Welfare State), व्यक्तिगत विश्वासो, मूल्यो (values) और मनोभावो (emotions) से मिलकर किसी देश की राजनीतिक सस्कृति बनती है।'[2] सक्षेप मे, रोज का कथन है 'किसी राष्ट्र की राजनीतिक सस्कृति उसकी जनता की राजनीतिक पद्धति की आधारभूत विशेषताओ के प्रति विशिष्ट अभिवृत्तियां (characteristic attitudes) से मिलकर बनती है।'

इसका आशय इसकी सीमाओ मे रहने वाले समुदाय, शासन-पद्धति के स्वरूप, शासन क्या करेगा और क्या नही करेगा। इस बारे मे जो आशा की जाय उसकी परिभाषा, और उसम भाग लेने वाला तथा सरकार की आज्ञापालन करने वाले व्यक्तियो की भूमिका के प्रति अभिवृत्तियो से है।[3]

[1] Political culture is the set of attitudes beliefs and sentiments that give order and meaning to a political process and that provide the underlying assumptions and rules that govern behaviour is the political system —L W Pye, *Aspects of Political Development* pp 104-05

[2] Rose and Dogan (eds) *European Politics A Reader* p 37

[3] R. Rose (ed) *Studies in British Politics* p 1

राजनीतिक सस्कृति के विभिन्न रूपा (variants) मे हम इन्हे सम्मिलित कर सकते हैं—राजनीतिक सत्ता के प्रति अभिवत्ति (रुख), राजनीतिक नेतृत्व, और वे तरीके जिनके द्वारा राजनीतिक नेता राजनीतिक सत्ता पर नियन्त्रण पाते हैं।

2 राजनीतिक सस्कृति के अन्य पहलू

राजनीतिक सस्कृतियो की माप राजनीतिक काय के प्रति दिग्विन्यास के शब्दो (in terms of orientation to political action) मे की जा सकती है, जिसका हवाला इन बातो से है—राजनीतिक लक्ष्यो, घटनाओ, कार्यो व प्रश्नो का व्यक्ति को ज्ञान, व्यक्ति इन्हे कुछ भावात्मक *महत्त्व देता है या नही, वह उनका किस प्रकार मूल्याकन करता है, और वह उनमे काय करने के* लिए काफी प्रेरणा पाता है या नही। 'इस प्रकार राजनीतिक सस्कृति किसी समाज के भीतर राजनीतिक काय के प्रति दिग्विन्यासो का नमूना है।'[1]

आलमोण्ड ने राजनीतिक पद्धतियो को उनकी सरचनाओ और सस्कृतिया के आधार पर वर्गीकृत किया है। सरचनाओ का विवेचन पहले किया जा चुका है। उसके अनुसार, सस्कृतियो के तीन नमूने हैं—प्रादेशिक, पराधीन और भाग लेने वाली (parochial, subject and participant)। विशुद्ध रूप म प्रादेशिक सस्कृति उन सीधे सादे परम्परागत समाजो मे पायी जाती है, जिनमे विशेषीकरण (specialization) बहुत कम है और जहाँ राजनीतिक काय करने वाले पात्र राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक सभी भूमिकाएँ एक साथ अदा करते हैं। पराधीन सस्कृति उस समाज मे पायी जाती है जहा शासित व्यक्ति मुख्यत अकमण्य (passive) रहते है। और वे राजनीतिक पद्धति को प्रभावित नही करते। भाग लेने वाली सस्कृति मे व्यक्ति समाज का सक्रिय सदस्य होता है, उसके कुछ अधिकार व कत्तव्य होते हैं, जिनकी उसे जानकारी ही नही होती वरन् वह उनका प्रयोग भी करता है।

आजकल किसी भी राजनीतिक पद्धति या समाज म राजनीतिक सस्कृति विशुद्ध रूप म नही पायी जाती, अधिकतर देशा मे उसका रूप मिश्रित है। इस प्रकार सस्कृति के वतमान राज्यो मे अग्रलिखित रूप हो सकते हैं (1) प्रादेशिक पराधीन सस्कृति, (2) पराधीन भाग लेने वाली सस्कृति, (3) प्रादेशिक भाग लेने वाली सस्कृति, और (4) नागरिक सस्कृति (civic culture) जिसमे तीनो प्रकार की विशुद्ध सस्कृतिया की विशेषताएँ मिलती हैं। आग्ल-अमरीकी राजनीतिक पद्धतियो म हम बहुमूल्य वाली (multi valued) सस्कृति पाते हैं, जहाँ बहुसख्या ऐसे मूल्यो म विश्वास करती है, जैसे, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, जनसाधारण का कल्याण, सुरक्षा आदि। ऐसी सस्कृति सामजस्यपूण अथवा एकरस (homogeneous) है, क्योकि समुदाय में ध्ययो तथा उनकी प्राप्ति के उपाया के बारे म सामान्य सहमति है।

परन्तु महाद्वीपीय यूरोप के देशो फ्रास, जमनी और इटली म सस्कृति एकरस न होकर खण्डित (fragmented) है, क्योकि इनके समुदायो के विभिन्न वर्गों ने सास्कृतिक विकास के भिन्न भिन्न नमूने स्थापित किये हैं। अत उनकी सस्कृतिया कहने के बजाय यह अधिक उचित होगा कि हम यह कहे कि उन समाजो म कई प्रकार की उप सस्कृतियाँ (sub-cultures) हैं। ध्यानपूवक पयवेक्षण करने पर यह भी पता लगेगा कि किसी भी समाज मे एक ही प्रकार की सस्कृति (single culture) नही मिलती। यह आसानी से देखा जा सकता है कि सत्ता रखने या प्रयोग करने वाले विशिष्ट जनो (power elites) की सस्कृति जनसाधारण की सस्कृति से भिन्न होती है। इसीलिए राजनीतिक सस्कृति सम्बन्धी अध्ययनो की विशेषता यह है कि उनम बल या तो विशिष्ट वग की सस्कृति पर है अथवा जनसाधारण की सस्कृति पर।

[1] Poltical culture is thus the pattern of orientations to political action within any given society —Davies and Lewis *Modern Political Systems* pp 113–14

स्थायी राजनीतिक पद्धतियों की प्रवृत्ति सापेक्षत सामजस्यपूर्ण संस्कृति की ओर होती है, क्योंकि उनमे राजनीति की उचित सीमाओं व कार्यों के बारे म सामान्य सहमति होती है। ऐसी पद्धतियों मे प्रत्येक पीढी (generation) सामा य अनुभवो स अतीत की परम्पराओं की सामान्य स्मृति की पृष्ठभूमि मे समाजीकृत[1] (socialised) हो जाती है। सक्रमणशील (transitional) समाजों मे संस्कृति का रूप खण्डित होता है और जनता मे राजनीतिक काय के प्रति समान दिग्विन्यास नही होते। ऐस समाजा की संस्कृतियाँ खण्डित ही नही होती वरन् वे जनसाधारण के स्थायी दिग्विन्यासो म गहरी जडें भी नही रखती। उदाहरण के लिए, भारत की राजनीतिक संस्कृति के क्षेत्र म देश की अथव्यवस्था म खेतिहर वग की प्रधानता रही है, किन्तु औद्योगिक विकास के साथ संस्कृति का एक नया रूप विकसित हो रहा है। वैसे भी जनसाधारण और राजनीतिक सत्ता का प्रयोग करने वाले वर्गो की संस्कृतियों मे अन्तर है। साथ ही देश के विभिन्न भागो या प्रदेशो की विभिन्न आधारो पर अपनी-अपनी उप संस्कृतिया हैं। परन्तु देशवासिया के सामने रखे गये नये राजनीतिक आदर्शों—प्रजातन्त्र, समाजवाद, धमनिरपेक्षता व राष्ट्रीय एकीकरण, अखिल भारतीय राजनीतिक दलो (जिनमे राष्ट्रीय काग्रेस सवप्रमुख है), और राजनीतिक नेताओ (विशेषकर प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाधी के चमत्कारिक नेतृत्व) ने देश म एक मिश्रित संस्कृति (composite culture) के विकसित होने म बडा योग दिया है।

राजनीतिक संस्कृति के कई आधार अथवा निर्माणकारी तत्त्व हैं। इनमे सबसे महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक विकास है। ग्रेट ब्रिटेन म राजनीतिक निरन्तरता का बडा महत्त्व है जहाँ प्राचीन मूल्या का आधुनिक अभिवृत्तिया म विलय हो गया है। इतिहास के अतिरिक्त भूगोल भी राजनीतिक संस्कृति के ढालने म एक महत्त्वपूर्ण कारक है। उदाहरण के लिए, सयुक्त राज्य अमरीका के विशाल क्षेत्र ने मूलजातीय विविधताओं के होते हुए भी स्वतन्त्रता व समता के मूल्यो के विकास मे बडा योग दिया। राजनीतिक संस्कृति के निर्धारण म तीसरा महत्त्वपूर्ण कारक सामाजिक आर्थिक सरचना है। किसी भी शहरी और औद्योगिक समाज की सरचना बहुत पेचीदा होती है। उसम शैक्षणिक मानक बडे ऊँचे होते ह और निणय करने वाली प्रक्रिया म जनता व्यापक रूप से भाग लेती है। इनके अतिरिक्त राजनीतिक संस्कृति के दो अन्य आधारभूत तत्त्व हैं—

(1) राज्य की सस्थाओ के प्रति अभिवृत्तिया। जबकि सयुक्त राज्य अमरीका मे 85% जनता अपनी राजनीतिक सस्थाओ के लिए गव की भावना रखती है, पश्चिमी जमनी मे यह केवल 7% है।

(2) यह बात कि नागरिक राज्य की निणय करने वाली प्रक्रिया को कहा तक प्रभावित करते हैं और किस मात्रा मे वे उसमे भाग ले सकते हैं।

राजनीतिक संस्कृति के कुछ चिह्न भी ह यथा, राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रीय गीत। ग्रेट ब्रिटेन जैसे देशा मे राजतन्त्र को भी राष्ट्रीय गव का चिह्न माना जाता है। कुछ राज्या म लौकिक की अपेक्षाकृत धार्मिक चिह्नों का महत्त्व अधिक है। अभिषेक समारोह, राष्ट्रीय छुट्टिया, सन्त विशेष, पौराणिक कथाएँ, आदि भी कुछ राज्यो मे राष्ट्रीय एकता के चिह्न हैं। यहा यह भी उल्लेखनीय है कि राजनीतिक संस्कृति कोई स्थिर वस्तु नही है, वरन् गतिशील व परिवतनशील है। राजनीतिक पद्धति के भीतर उत्पन्न हुए विचार तथा बाह्य देशो से आये विचार संस्कृति के

[1] It is the process whereby men become increasingly rational analytical and empirical in their political action —Almond and Powell *op cit* p 24

समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक संस्कृतियो को बनाये रखा तथा परिवर्तित किया जाता है। इसके द्वारा व्यक्तियो को राजनीतिक संस्कृति मे प्रविष्ट किया जाता है और राजनीतिक संस्कृति के प्रति उनके दिग्विन्यास (orientations) भी राजनीतिक समाजीकरण द्वारा आते हैं। समाजीकरण के साधन या अभिकर्त्ताओं (agents) म य उल्लेखनीय ह—परिवार शिक्षालय विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक धार्मिक व मनोरजन प्रदान करने वाले सघ, क्लब और सचार के साधन—समाचार पत्र, रेडियो टेलीविजन, इत्यादि।

विकास मे योगदान करते हैं। औद्योगीकरण समाज के मूल्यो और अभिवृत्तिया म परिवतन लाने मे एक महत्त्वपूण कारक है। किसी समाज की राजनीतिक सस्कृति का एक वाह्य प्रकटन उसकी राजनीतिक शैली (political style) है। उदाहरण के लिए, यह कहा जा सकता है कि सयुक्त राज्य अमरीका की सस्कृति विभिन्न कारणो से अपेक्षाकृत खुली (open) है, जबकि चीन जैसे अनक देशो की सस्कृतिया प्रतिबन्धित हैं।

3 राजनीतिक सहभागिता

राजनीतिक सहभागिता (Political participation) की धारणा—शासन और राजनीति पर अपना प्रभाव डालने हेतु नागरिको का राज्य के कार्यों म भाग लेना आवश्यक है। सिद्धान्त रूप मे, प्रजातन्त्र मे तो राजनीतिक नेतृत्व की छांट नागरिको के सम्पूण समूह पर निभर करती है। बहुसख्यक नागरिक तो मतदान प्रक्रिया द्वारा भाग लेते हैं और उनमे स अनेक उम्मीदवारो की नामजदगी (nomination) तथा उनके चुनाव अभियान मे सक्रिय भाग लेते हैं। इसके अतिरिक्त नागरिक अपने मत और आलोचना का प्रभाव जन प्रतिनिधियो व सरकारी अधिकारियो पर सचार के साधनो द्वारा भी डालते हैं। यह काय साधारण पत्र लिखकर या समूह बनाकर और उसके मतो को सम्बन्धित अधिकारियो तक पहुँचाकर किया जा सकता है। सक्षेप मे, यही कहा जा सकता है कि किसी भी राजनीतिक पद्धति मे सभी नागरिको का भाग सम अथवा एक समान नही होता। सच तो यह है कि नागरिको द्वारा भाग लेन पर राजनीतिक सस्कृति द्वारा स्थापित प्रतिमानो (norms) का बडा प्रभाव पडता है। इन प्रतिमानो के द्वारा नागरिको के कर्त्तव्या और उनके व्यवहार की सीमाएँ निर्धारित होती ह। जबकि प्रजातान्त्रिक राज्यो के सविधाना म नागरिको के मूल अधिकारो का समावेश अथवा अधिकारा का परिगणन किया जाता है, साम्यवादी राज्यो के सविधानो म उनके अधिकारा क परिगणन के साथ कत्तव्यो को भी सम्मिलित किया जाता है। प्राय सभी राज्यो मे अब नागरिको को मताधिकार प्राप्त है, कुछ म मतदान को अनिवाय भी बनाया गया है।

सहभागिता के साधन व स्तर (Means and levels of participation)—प्रजातन्त्रात्मक राज्यो म नागरिकता के सास्कृतिक प्रतिमानो क अध्ययन से पता चलता है कि उनमे पद्धति के स्वीकार किय जान और मतदान की तुलना मे भाग लेने क सक्रिय रूपो पर कम बल दिया जाता है। राजनीतिक गतिविधिया की अन्तग्रस्तता को उच्च या निम्न श्रेणिया (high or low involvement) मे रखा जा सकता है। इस प्रकार के अन्तर का आधार व्यक्ति की वास्तविक या दिखायी पडन वाली आर्थिक, मानसिक या शारीरिक कीमत या प्रयास है। निम्न श्रेणी की अन्तग्रस्तता के भाग लेने मे इन्हे सम्मिलित किया जा सकता है—कानूना का पालन, नैतिक बने रहना, देश की प्रतिरक्षा मे भाग लेना तथा मतदान मे भाग लेना। उच्च श्रेणी की अन्तग्रस्तता के भाग लेने म य बातें आती है चुनाव अभियाना मे भाग लेना, पत्र लिखना, राजनीतिक प्रदशना म अन्तग्रस्त होना।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, नागरिकता के प्रतिमाना मे नागरिको के कत्तव्या और नागरिको क व्यवहार पर सीमाओ का विहित किया जाना दाना ही निगमित होते हैं। सावजनिक अधिकारिया को प्रभावित करने के लिए कुछ प्रकार के कार्यों को नागरिको की बहुसख्या स्वीकार नही करती, यथा रिश्वत देना अथवा सावजनिक नीति के विरुद्ध हिंसक प्रदशन करना। राजनीतिक सहभागिता के इन दाना आयामा (dimensions) को चार प्रकारा मे रखा जा सकता है। सहभागिता के य चारा रूप प्राय सभी समाजो म पाये जाते हैं। इन चारा प्रकार की सहभागिता क मिश्रण मे किसी भी शासन क स्वरूप का निर्धारण होता है। राजनीतिक सहभागिता क स्वीकारणीय अथवा अस्वीकारणीय उपायो की परिभाषा और राजनीतिक अन्तग्रस्तता का उच्च

अथवा निम्न स्तर देश देश मे भिन्न हैं। इस बात का पता अग्रलिखित तत्वो की मात्रा जानने के लिए आधार के अध्ययन से लग सकता है निष्ठा, हित, सूचना, नागरिक सहभागिता (civic participation) और बुद्धिसगतता (rationality)।

		सहभागिता के साधन (उपाय)	
		स्वीकारणीय	अस्वीकारणीय
सहभागिता का स्तर	उच्च	1	2
	निम्न	3	4

आधुनिक राष्ट्रीय राज्य चाहे प्रजातन्त्रात्मक हो या अधिनायकतन्त्री, उसमे बहुदलीय पद्धति हो या एक दलीय पद्धति, चाहे वह व्यक्तिगत सम्पत्ति की गारण्टी देता हो या धन पर राज्य का नियन्त्रण लागू करता हो, नागरिको के लिए यह आवश्यक बनाता है और उसे प्रोत्साहित भी करता है कि नागरिको का शासन से निकट सम्बन्ध स्थापित हो। सर्वप्रथम, यह चाहता है कि मनुष्य केवल अपने स्थानीय समुदाय, कबीला (tribe) और परिवार को ही न जाने, वरन् वह राष्ट्र (nation) को जाने और अपने को उससे एक माने अर्थात् उससे अलग न समझे। यह आशा की जाती है कि इस प्रकार की नयी जानकारी से नागरिक की निष्ठा (allegiance) मे भी परिवर्तन आयगा। स्थानीय व प्रादेशिक के स्थान पर उसका रूप राष्ट्रीय होगा तथा नागरिक मे केन्द्रीय अधिकारियो के प्रति निष्ठा उत्पन्न होगी। आजकल अच्छे नागरिक को केवल अपने परिवार या स्थानीय नेतृत्व का अनुगामी न होकर अपने सकुचित दृष्टिकोण को राष्ट्रीय बनाना चाहिए। कोई भी आधुनिक सरकार निष्क्रिय नागरिक को महत्त्व नही देती, प्रत्येक सरकार सक्रिय नागरिकता को प्रोत्साहन देती है। अच्छे नागरिक से यह आशा की जाती है कि वह सार्वजनिक मामलो के सचालन की प्रक्रिया मे भाग लेगा। अधिनायकतन्त्री व सर्वाधिकारवादी (totalitarian) पद्धतियो मे भी, जहाँ राज्य की नीति को यथार्थ मे प्रभावित करने के लिए नागरिको की स्वतन्त्रता अति सीमित होती है, राज्य यह दिखाने का प्रयत्न करता है कि वह सामान्य इच्छा को अभिव्यक्त करता है और सभी नागरिको को राजनीतिक कार्यों मे भाग लेने के लिए कहता है, चाहे यह केवल दिखावे के लिए ही हो।

एलेक्स इन्कलेस ने Participant Citizenship in Six Developing Countries' मे लिखा है कि सैद्धान्तिक आधारो पर सम्बन्धित लक्षणो के समूह को भाग लेने वाली नागरिकता कहा जाता है। 'लक्षण समष्टि' (syndrome) मे ये सम्मिलित हैं परम्परागत सत्ता से स्वतन्त्रता अथवा सकारात्मक रूप मे, स्थानीय व प्रादेशिक सीमाओ से पार जाने वाले नेताओं और सगठनो के प्रति निष्ठा तथा उनके साथ एक हो जाना, सार्वजनिक मामलो मे दिलचस्पी जिसे सूचना पाते रहकर और नागरिक कार्यों मे भाग लेते रहकर वैध किया जाय, तथा राजनीतिक व सरकारी प्रक्रियाओ के प्रति अभिमुख होना। जो पाठक 'नागरिक सस्कृति' (Civic Culture) से परिचित हैं वे मानेंगे कि ये लक्षण बहुत कुछ आलमोण्ड और सिडनी वर्बा द्वारा चित्रित लक्षणो से मिलते हैं। ये वे गुण हैं जो प्रजातन्त्रात्मक ही नही वरन् अधिनायकतन्त्री राज्यो के नागरिको मे भी होने चाहिए।

मतदान एक राजनीतिक कार्य है, जिसे सयुक्त राज्य अमरीका व सोवियत सघ दोनो ही राज्यो मे समान रूप से प्रोत्साहित किया जाता है। परन्तु जबकि सयुक्त राज्य अमरीका व भारत जैसे राज्यो मे यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य है, सोवियत सघ मे यह बहुत सीमा तक प्रजातन्त्री

दिखावा है। सच्चे प्रजातन्त्र में व्यक्ति राजनीति में दिलचस्पी रख सकता है, भली प्रकार से सभी जानकारी रख सकता है और वह अपनी सरकार के कार्यों पर निर्णय भी दे सकता—उन्हें अच्छा या बुरा कह सकता है। वह राजनीतिक पद्धति के प्रति उग्र विचार रख सकता है, उसे अस्वीकार कर सकता है और उसके प्रति उदासीन रह सकता है। परन्तु अधिनायकतन्त्री राज्य में वह विरोध-प्रदर्शन अथवा आलोचना नहीं कर सकता। अन्त में, जब सक्रिय नागरिकता को कई प्रभावी निर्धारक मिल जाते हैं तो परिणाम सहभागिता की उच्च मात्रा (high degree) होना है। राजनीति के कई अध्ययनकर्त्ताओं ने इस बारे में चिन्ता व्यक्त की है कि अविकसित देशों में आधुनिक राज्य जैसा कार्य हो सकता है, क्योंकि वहाँ सक्रिय नागरिकता के लिए सांस्कृतिक परम्परा का अभाव है, परन्तु उस कमी को आधुनिक समाज की इन संस्थाओं—स्कूल, फैक्ट्री, समाचार पत्र व रेडियो—द्वारा दूर करने का प्रयास किया जा सकता है।

राजनीतिक सहभागिता के बारे में अध्ययन पूरा करने के लिए आवश्यक है कि 'राजनीतिक उदासीनता' (political apathy) के विभिन्न आयामों पर भी ध्यान दिया जाय। कुछ अमरीकी लेखकों ने 1952 के चुनाव का अध्ययन करके 'राजनीतिक प्रभावोत्पादन' (political efficacy) को नापने के लिए एक सूचकांक (index) की रचना की और उन्होंने बताया कि प्रेरणादायक कारक (motivational factor) और राजनीतिक सहभागिता में निकट सम्बन्ध है। सहभागिता के ये पहलू महत्त्वपूर्ण हैं (1) राजनीतिक दृष्टि से कौन सक्रिय है? (2) कौन लोग भाग नहीं लेते (non participants)? (3) राजनीतिक दिलचस्पी का अभाव अथवा उदासीनता। (4) राजनीतिक प्रभावोत्पादन का भाव।[1]

राजनीतिक सहभागिता के बारे में कई सिद्धान्त हैं जिनका यहाँ पर उल्लेख करना ही काफी होगा। प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्त के अनुसार तो सभी नागरिक सम और स्वतन्त्र हैं तथा उन्हें अपने प्रतिनिधियों की छाँट करने और शासन के कार्यों में सक्रिय भाग लेना चाहिए। प्रतिनिधिक और *प्रत्यक्ष प्रजातन्त्रों का आधार यही है।* इसके विपरीत *'विशिष्ट वर्गों के सिद्धान्त'* (elitist theories) हैं, जिनके अनुसार शासन सत्ता पर केवल उन्हीं व्यक्तियों का अधिकार होना चाहिए जो उसके योग्य हैं, जनसाधारण में इस प्रकार की योग्यता नहीं होती। नाजी व फासीवादी विचारधाराएँ इसी प्रकार की थी। जर्मनी में नाजियों का यह भी विश्वास था कि केवल आर्य जाति के मनुष्य ही शासन करने योग्य थे, इसीलिए उन्होंने यहूदियों पर घोर अत्याचार किये। साम्राज्यों के अधीन उपनिवेशों में भी शासन सत्ता केवल गोरी जातियों के सदस्यों के हाथों में रही। दक्षिणी अफ्रीका व रोडेशिया में इस प्रकार का जातिगत संघर्ष चरम सीमा पर पहुँचा हुआ है। साम्यवादी राज्यों में मताधिकार सभी नागरिकों को प्राप्त है और वे मतदान में भी भाग लेते हैं, किन्तु शासन सत्ता केवल साम्यवादी दल के नेताओं के ही हाथों में है।

1 Eulau et al *Political Behaviour* p 86

VII

राजनीतिक विकास और आधुनिकीकरण

(Political Development and Modernisation)

1 राजनीतिक विकास क्या है ?

राजनीतिक विकास के विभिन्न अर्थ किये गये हैं। लूसियन पाई और सिडनी वर्बा के अनुसार राजनीतिक विकास को निम्नलिखित अर्थों मे समझा जाता है (1) आर्थिक और औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक राजनीतिक वातावरण, (2) सरकार के कार्यों (governmental performances) पर अधिक बल, (3) परम्परागत और आधुनिक के बीच अन्तर, अत इसका सम्बन्ध उपलब्धियो से है, (4) सम्पूर्ण पद्धति की कार्य के लिए क्षमता, एक एकीकृत समाज खण्डित समाज की अपेक्षा अधिक विकसित होता है, (5) एक अर्थ मे विकास राष्ट्र निर्माण है, और (6) इसका अर्थ प्रजातन्त्रात्मक विकास भी हो सकता है, विकास की जितनी अधिक मात्रा होगी, उतनी ही अधिक स्वतन्त्रता की उन्नति होगी।

उन्ही लेखकों के मतानुसार राजनीतिक विकास म मुख्यत ये बातें अन्तग्रस्त हैं (अ) सम्पूर्ण जनसख्या के सम्बन्ध म ऐसा परिवर्तन कि व्यापक दासता के पद स नागरिको की वृद्धिपूर्ण सख्या सरकार के कार्यों म अशदान कर सकें, (ब) शासन और सामान्य पद्धति के सम्बन्ध मे राजनीतिक पद्धति मे यह बात अन्तग्रस्त है कि सार्वजनिक मामलो के प्रबन्ध मे प्रवाद के नियन्त्रण (control of controversy) और जनता की मागो को पूरा करने म राजनीतिक पद्धति की क्षमता मे वृद्धि हो, और (स) राज्य के सगठन के सम्बन्ध म राजनीतिक विकास म ये बाते निहित हैं—सरचना मे अधिक विभेद (greater structural differentiation), कार्यों के बारे मे अधिक विशिष्टता (greater functional specificity) और भाग लेने वाली सस्थाओ व सगठनो मे अधिक एकीकरण (greater integration)।[1]

आलमोण्ड और पोवेल के मतानुसार राजनीतिक विकास के विश्लेषण मे कम से कम निम्नलिखित कारको पर विचार करना जरूरी है (1) इस बात मे कोई सन्देह नही है कि किसी पद्धति का स्थायित्व उन समस्याओ के प्रकारो पर निर्भर करता है जो उसके सामने आती हैं। (2) विभिन्न परिस्थितियो मे जिन साधनो का पद्धति सहारा ले सके। (3) अन्य सामाजिक पद्धतियो म हुई विकास की घटनाएँ राजनीतिक विकास को प्रभावित कर सकती है। (4) राजनीतिक पद्धति का काम करने का नमूना विकास मे सहायक व बाधक दोनो हो सकता है। (5) राजनीतिक पद्धति के सामने आयी चुनौतियो के प्रति राजनीतिक विशिष्ट वर्ग (political elites) की प्रतिक्रिया।

राजनीतिक विकास के स्तर के बारे मे लिखते हुए जिन्होने अन्तसम्बन्धित तीन परिवर्त्यों—भूमिकाओ मे अन्तर, उप पद्धतियो की स्वायत्तता और लौकिकीकरण (role differentiation, sub system autonomy, and secularization)—का विवेचन किया है। अस्तु, आधुनिक राजनीतिक पद्धतियो के वर्गों की तुलना करने मे व इन शक्तिशाली परिवर्त्यों के साथ कार्य के नमूने और क्षमता सम्बन्धित पाते है (find patterns of performance and capability associated with these powerful variables)। तुलना की सरचना विकास के इन तीन परिवर्त्यों के चारो ओर बनाने से, यह सम्भव है कि ऐसी पद्धतियो की तुलना की जा सके जो प्रमुख विशेषताओ के एक समूह के बारे म एक समान हो, जबकि दूसरे म भिन्न हो। तुलनात्मक विश्लेषण के प्रति इस उपागम को अग्रलिखित उदाहरण की रूपरेखा से समझाया जा सकता है

[1] Pye and Verba *Political Culture and Political Development* pp 11-13

- (1) विकास के विभिन्न स्तरो पर प्रजातान्त्रिक पद्धतिया से सम्बन्धित विशेषताओ की तुलना,

(2) विकास के विभिन्न स्तरा पर सत्ताधारी पद्धतियो (authoritarian system) से सम्बन्धित विशेषताओ की तुलना,

(3) सबसे अधिक विकसित प्रजातान्त्रिक व सत्ताधारी रूपो से सम्बन्धित विशेषताओ की तुलना, और

(4) पूर्व सचारित (premobilised) पद्धतिया की विशेषताओ की सचारित पद्धतियो की विशेषताओ स तुलना ।[1]

स क्षेप मे, राजनीतिक विकास का अर्थ एक मजिल स दूसरी मजिल मे आगे बढना, अर्थात् किसी काल म विकास की प्रक्रिया स है। उदाहरण के लिए, अर्थशास्त्री विभिन्न राज्या के विकास की कुल राष्ट्रीय उत्पादन (Gross National Product–GNP) प्रति व्यक्ति आय, निवेशो (investments), और उत्पादन के शब्दो म माप करते हैं। अन्य समाजशास्त्रियो के लिए राजनीतिक विकास का अर्थ है प्रजातन्त्र, राजनीतिक दल, शहरा का विकास, हित समूह, उच्च स्तर की साक्षरता, प्रतिनिधिक शासन, औद्योगीकरण और तकनीकी प्रगति। राजनीतिक विकास का यह भी अर्थ है कि निरन्तर नयी स्थितियो और ऐसी समस्याओ का मजिलो की एक सारणी मे उदय होता रहे, जिनम से प्रत्येक अपनी विशेषताओ और आवश्यकताओ को परिवर्तित (reflect) करे।

एडवर्ड शिल्स के अनुसार राजनीतिक विकास के निर्धारक तत्त्व (determinants) ये हैं (अ) सामाजिक सरचना, (ब) सस्कृति, (स) व्यक्तित्व, और (द) राजनीतिक सरचना। उनम से व्यक्तित्व के बारे मे यहाँ कुछ बताना आवश्यक प्रतीत होता है। व्यक्तित्व का आशय यहाँ एक उदाहरण से समझा जा सकता है, किसी राज्य मे यह कम विकसित हो सकता है, जहाँ व्यक्तियो की व्यक्तिगत प्रतिष्ठा और मूल्य (worth) की भावनायें कमजोर हो। नये राज्यो मे शिल्स के अनुसार राजनीतिक विकास के ये वैकल्पिक मार्ग हो सकते हैं (1) राजनीतिक प्रजातन्त्र, (2) सरक्षणात्मक प्रजातन्त्र (tutelary democracy) जैसी राष्ट्रपति सुकर्ण ने इण्डोनेशिया मे स्थापित की थी, (3) आधुनिकता की ओर जाने वाले अल्पतन्त्र (oligarchy), (4) सर्वाधिकारवादी अल्पतन्त्र, और (5) परम्परागत अल्पतन्त्र। उसका कथन है वर्तमान शताब्दी मे कोई नया राज्य बिना चरित्रवान् और बुद्धिमान विशिष्ट वर्ग (elite) के आधुनिक नही बन सकता। कोई नया राज्य आधुनिक बनकर उदारवादी या प्रजातान्त्रिक नही बन सकता अथवा रह सकता, जब तक कि वहा चरित्रवान्, बुद्धिमान, और उच्च नैतिक गुणो वाला विशिष्ट वर्ग न हो। अपनी अर्थव्यवस्था और प्रशासन स आधुनिक होने के लिए किसी भी राजनीतिक समाज के लिए यह आवश्यक है कि पहले आधुनिक विशिष्ट वर्ग और जनसाधारण के बीच की खाई पाटी जाय। अल्पतन्त्री शासन इस प्रकार की खाई को राजनीतिक प्रजातन्त्रो की अपेक्षा अधिक समय तक कायम रख सकते है।'[3]

2 राजनीतिक विकास के कुछ महत्त्वपूर्ण पहलू

इनका सक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित शीर्षको के अन्तर्गत किया जायगा

प्रजातन्त्र और विकास—*नये राज्यो मे प्रजातन्त्र की सफलता कठिन है, जब तक कि* आर्थिक विकास को प्राथमिकता न देंगे। यहा कहने का तात्पर्य यह है कि बहुलवादी राजनीतिक

[1] Almond and Powell *Comparative Politics* pp 306-10
[2] G Abcarian and G S Masannat *Contemporary Political System* p 289
[3] E Shils *Political Development in the New States* pp 86-87

पद्धति (अर्थात् प्रजातन्त्रात्मक राज्य जहाँ विभिन्न राजनीतिक दल और विचारधाराओ का विकास हो जाता है) मे सम्भावना यह है कि द्रुत आर्थिक विकास की गति धीमी पड जायगी। इस मत के अनुसार अविकसित राज्यो के लिए प्रजातन्त्र एक विलास की वस्तु (luxury) है, जिसे वह तभी अपना सकता है जब वह आर्थिक विकास म काफी प्रगति कर ले। साथ ही इस मत के अनुसार राजनीतिक रूप से जीवित रहने की समस्या को अन्य सभी विचारो के ऊपर प्रधानता मिलनी चाहिए।

सचार और विकास—कम विकसित देशो मे सचार के साधन बहुत कम, पिछडे हुए तथा खण्डित (fragmented) हैं, अत राजनीतिक विकास तभी आगे बढ सकता है जबकि इन साधनो को आधुनिक और एकीकृत (integrated) बनाया जाय। भारत सरकार इस दिशा मे महत्त्वपूर्ण पग उठा रही हैं। समाचार पत्रो, रेडियो और टेलीविजन की सुविधाओ को गाव गाव तक पहुँचाने की व्यवस्था मे प्रगति हो रही है।

राजनीतिक विकास की प्रक्रिया मे सेना की भूमिका—कम औद्योगिक राज्यो मे भी सेनाओ का सगठन कुछ औद्योगिक देशो के समान है। अत उनकी राजनीतिक भूमिकाओ (political roles) के कई पहलू हो सकते है। सक्रमणशील समाजो मे सेना को सरकार के सत्ताधारी अभिकरणो मे अधिक आधुनिक समभा जाता है। अत सेना आधुनिकीकरण का एक महत्त्वपूर्ण अभिकर्त्ता है। नये राज्यो मे सेनाएँ एक प्रकार से नागरिकता की भावना तथा राजनीतिक कार्यों का ठीक मूल्याकन प्रदान करती है। साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय स्थायित्व के क्षेत्र म उनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण है।

राजनीतिक पद्धति पर आर्थिक विकास का प्रभाव—लिपसेट ने आर्थिक तथ्यो व आकडो की सहायता से यह सिद्ध किया है कि आर्थिक विकास और राष्ट्रीय राजनीतिक पद्धति (national political system) के बीच दृढ सम्बन्ध है। उसने राष्ट्रीय राजनीतिक पद्धतियो को दो समूहो मे रखा है—स्थायी व अस्थायी प्रजातन्त्र और लोकप्रिय व विशिष्ट वर्ग पर आधारित अधिनायकतन्त्र। दोनो समूहो मे से उसने अग्रेजी भाषा-भाषी और यूरोपियन क्षेत्रो व लैटिन अमरीकी क्षेत्रो से राष्ट्रो को प्रस्तुत किया है। अग्रेजी भाषा भाषी व यूरोप के स्थायी प्रजातन्त्रो मे प्रति हजार व्यक्तियो के पीछे 205 टेलीफोन हैं (जो धन का सकेत देता है), जबकि यूरोपियन और अग्रेजी भाषा भाषी अस्थायी प्रजातन्त्रो व अधिनायकतन्त्रो मे यह सख्या 58 प्रति हजार व्यक्ति है। इसी प्रकार उसने अनेक सकेतो (indicators) की सहायता से अनेक राज्यो की तुलना करके कुछ निष्कर्ष निकाले हैं।

विभिन्न राज्यो मे राजनीतिक विकास—पाश्चात्य राजनीतिक परम्परा वाले देशो मे सरकार की बढती हुई शक्ति और जनता के शासन कार्यो म वृद्धिपूर्ण भाग के बीच एक प्रकार का समझौता हो गया है। जहा तक साम्यवादी राज्यो का सम्बन्ध है मार्क्सवादियो का ध्येय स्पष्ट है, परन्तु उन्होने भिन्न भिन्न उपाय अपनाये है। जबकि पाश्चात्य देशो को सामन्तवाद से नये युग मे लाने का श्रेय पूजीपति वर्ग (bourgeois) को है, सोवियत सघ मे समाजवाद की स्थापना सर्वहारा वर्ग की क्रान्ति द्वारा हुई। चीन मे माओ की अपील केवल औद्योगिक श्रमिकों तक सीमित नहीं रही, पूजीवादियो को छोडकर उसने सभी का सहयोग पाने का प्रयत्न किया।

विश्व के अन्य राज्यो के बारे मे माओ की नीति पहले यह रही कि साम्यवादी शासनो को छोडकर अन्य सभी प्रकार के शासनो का विरोध किया जाय, परन्तु सोवियत सघ ने राष्ट्रीय प्रजातन्त्रो का समर्थन किया, यह मानते हुए कि उन्हे आर्थिक सहायता और उचित प्रोत्साहन देने से वे राज्य क्रमिक रूप से इस प्रकार परिवर्तित हो जायेंगे कि उनमे प्रधान शक्ति श्रमि किसानो के हाथो मे आ जायेगी। भारत मे विकास के लिए प्रजातन्त्र और समाजवाद के जुले माग को अपनाया गया है, जिसे हम प्रजातन्त्रात्मक समाजवाद कहते हैं। तीसर

राज्यो (Third World States) मे राजनीतिक विकास के मार्ग मे एक बडी बाधा परम्परावाद (traditionalism) की है। फिर भी इन राज्यो मे राजनीतिक विकास हो रहा है, जिसके मुख्य अभिकर्त्ता राजनीतिक नेता, राजनीतिक दल और सेनाये हैं।

3 राजनीतिक आधुनिकीकरण

आधुनिकीकरण (modernization) वह प्रक्रिया है जो प्रधानत ऐसे देशो मे घटती है जो औद्योगिक नही (non industrial) हैं, जहाँ इसका वर्णन कुछ भूमिकाओं के क्रम परिवर्तन (transposition of certain roles)—व्यावसायिक, तकनीकी, प्रशासनिक—और इन भूमिकाओ को समर्थन देने वाली संस्थाओ—अस्पतालो, स्कूलो, विश्वविद्यालयो और अधिकारीतन्त्रो (bureaucracies) के क्रम परिवर्तन के रूप मे किया जा सकता है। एप्टर ने इसे सामान्य विकास और औद्योगीकरण दोनो से ही भिन्न बताया है। यह विकास का एक विशेष रूप या पहलू है। 'राजनीतिक आधुनिकीकरण' मे यह विचार निहित है कि वहाँ पहले से किसी परम्परागत पद्धति का अस्तित्व है, जिसका आधुनिकीकरण होना है। एक अन्य लेखक ने सरल शब्दो मे कहा कि राजनीतिक आधुनिकीकरण एक सुविधाजनक वाक्यांश है जो बताता है कि राजनीतिक संस्थाएं अपने को समाज की बदली हुई और नई दशाओ का मुकाबला करने के लिए ढाल लेती हैं। इसकी परिभाषा इन शब्दो मे की जा सकती है, 'राजनीतिक आधुनिकीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा *समाज की शक्ति का वितरण करने वाली संस्थाएँ अपनी योग्यता को सामाजिक परिवर्तन से* उत्पन्न होने वाली नयी मांगो का मुकाबला करने के लिए बढाती है।'

कार्ल डयूश (Karl Deutsch) ने राजनीतिक आधुनिकीकरण की परिभाषा सहभागिता (participation) या गतिशील बनाने (mobilization) के शब्दो मे की है। उसने सुझाव दिया है कि आधुनिकीकरण बढे हुए विकेन्द्रीकरण के रूप में जनसाधारण की सहभागिता पर निर्भर करता है। शासन-कार्यों मे जनता का भाग (political involvement) शिक्षा के उच्चतर स्तरो, संचार के अन्य माध्यमो के लिए खुला होना (exposure to mass media) और औद्योगीकरण के साथ बढता है। राजनीतिक सहभागिता (political participation) की ये पूर्व दशायें कानून बनाने वाले निकायो पर मांगो का जोर (inputs) बढा सकती हैं, शासन-कार्यों मे भाग लेने की प्रेरणा दे सकती हैं, और राष्ट्रीय स्तर पर नीति की आवश्यकताओं पर जनता का ध्यान आकर्षित कर सकती हैं। राजनीतिक आधुनिकीकरण के श्रेष्ठ उदाहरण तुर्की और जापान है, जहा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ने आधुनिक पद्धति मे अनेक परम्परागत तरीकों को नियमित किया है और नयी संरचनाओ के कार्यों के क्षेत्र को विस्तृत बनाया है, यथा स्कूलो और संघो को। दोनो ही देशो मे शासन करने वाले विशिष्ट वर्गों ने अपने *परम्परागत समाजो को आधुनिक मे परिवर्तित करने मे* बडी सफलता प्राप्त की। इन देशो मे स्वय सरकारो ने औद्योगीकरण की प्रक्रिया का नेतृत्व *किया, सरकार ने निजी उद्योगो के विकास को प्रोत्साहन दिया, जिन्होने भूमिपतियो की आर्थिक* सर्वोपरिता को चुनौती दी। फलत दोनो देशो मे औद्योगीकरण बडी द्रुत गति से आगे बढा।

एडवर्ड शिल्स का मत है कि नये राज्यो मे पायी जाने वाली सर्वव्यापी आकांक्षा पाश्चात्य देशो पर निर्भरता से स्वतन्त्र होने की है, अर्थात् उनका ध्येय आधुनिक बनाना है। उनके सामने आधुनिकता का नमूना (model) पाश्चात्य देशो का है, जिसे उन्होने अपनी भौगोलिक उत्पत्ति और स्थान से पृथक किया है। इन देशो मे आधुनिक बनने की इच्छा ने उनके नेताओ पर बडा दबाव डाला है और उनके विशिष्ट वर्गों की आकांक्षाओ पर भी भार डाला है। आधुनिकीकरण के मार्ग मे अनेक बाधायें खडी हैं, जिसको जीतना आवश्यक है, वे पाश्चात्य ढग के राज्यो की प्राप्ति की दिशा में सारपूर्ण उन्नति कर सकते हैं।[1] परम्परागत समाजो की आधारभूत विशेषतायें ये हैं—

[1] Davies and Lewis *Modern Political Systems* pp 93-95

(1) उनका विकास सीमित औद्योगिकी (technology) मे हुआ, यद्यपि उनमे से कुछ ने कुछ दिशाओ मे उच्च योग्यता प्रदर्शित की। फिर भी वे आविष्कारो और नयी बातो को नियमित रूप से आगे न बढा सके।

(2) विभिन्न कारणो—यथा जनसख्या का दबाव, युद्ध, केन्द्रीय शासन का खण्डित होना—ने उनमे समय समय पर पद्धति को अव्यवस्थित बनाया। इन कारको के पीछे अधिक आधारभूत तथ्य यह था कि ये समाज नयी परिस्थितियो म अपने व्यवहार को ठीक प्रकार से न ढाल सके।

(3) खेती की प्रधान भूमिका के कारण, भूमि पर स्वामित्व और नियत्रण सामाजिक प्रतिष्ठा और राजनीतिक प्रभाव मे निर्णायक कारक बना रहा। इन तथ्यो के बावजूद भी कुछ परम्परागत समाज आधुनिकता की मजिल मे काफी आगे बढे, उन्होने मनुष्यो, सस्थाओ और अभिवृत्तियो को इस प्रकार विकसित किया कि उन्होने आधुनिकता के लिए माग तैयार किया। इन देशो मे अधिक विकसित समाजो के प्रवश ने तीन रूप धारण किये (1) शारीरिक प्रवेश (physical instrusion), कई समाजो मे तो औपनिवेशिक शासन (colonial rule) आया (11) आर्थिक उदाहरण, और (111) कौशल और विचारो का सचार। पाश्चात्य समाजो ने इन्हे कौशल ही नही दिया वरन् प्रजातन्त्रात्मक विचार भी दिये, जिनके कारण कुछ देशो मे किसानो ने भूमि सुधारो के लिए दबाव डाला और किसानो के विप्लव भी हुए। इस प्रकार, अधिक विकसित समाजो से सम्पर्क इन समाजो मे वह प्रमुख शक्ति रही है जिसने परम्परागत समाजो की रचना और मूल्यो को कमजोर बनाया।

परन्तु इन समाजो मे अभी तक कुछ कारक विद्यमान हैं जो आधुनिकता को आगे नही बढने देते। पहला, आधुनिकता की प्रक्रिया की यह आवश्यकता है कि मनुष्यो की आधारभूत अभिवृत्तियो मे परिवतन हो पर तु परम्परा का पीछे की ओर खीचने वाला जोर अभी माग मे बाधा बना है। दूसरे, विदेशी शासन से स्वतन्त्र हुए या परम्परागत शासन को उखाड फेंकने के बाद समाज मे प्रभावी राष्ट्रीय सरकार की रचना होनी चाहिए, परन्तु उसके माग मे निहित स्वार्थों की शक्ति खडी है। तीसरे नियमित आर्थिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि वस्तुओ के उत्पादन और सेवाओ मे आधुनिक विज्ञान और औद्योगिकी का प्रगतिशील प्रयोग किया जाय, परन्तु ऐसा परिवतन तब तक सम्भव नही जब तक उन समाजो के सामाजिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक क्षेत्रो मे पहले या साथ-साथ परिवतन न हो। चौथे, ऐसे समाजो मे विशिष्टजनो के समूह (elite groups) विदेशी सत्ता को निकालने मे तो सयुक्त होकर आगे बढे, परन्तु विदेशी शासन का अन्त हो जाने पर विकास के रूप व तरीका के बारे मे उनमे मत-विभाजन हो गया। इस प्रकार सामाजिक सघष भी उन राज्यो म आधुनिकता के मार्ग मे एक रुकावट बन गया।

सामाजिक परिवतन लाने म दो कारको की भूमिका महत्त्वपूण है—सेना और धमनिरपेक्ष बुद्धिमान वग। इनके अतिरिक्त आधुनिकता का एक महत्त्वपूण साधन (य त्र) राजनीतिक दल है। आधुनिकता की ओर बढ रह समाजो मे तीन प्रकार के राजनीतिक नेतृत्व का उदय होता है

(1) व्यावसायिक और तकनीकी भूमिकाओ के पात्र जो विशिष्ट वर्गों के दलो (elite parties) और व्यावसायिक सघो मे सगठित होत है।

(2) राजनीतिक क्षेत्र म साहसी व्यक्ति जो प्रतिनिधिक अथवा समेकित प्रकार के राजनीतिक दलो (representative or solidarity type parties) का नेतृत्व करते हैं।

(3) सैनिक नागरिक सेवाओ का अधिकारीतन्त्र। परन्तु इनमे से प्रत्येक भिन्न प्रकार की आधुनिकता का प्रतिनिधित्व करता है। इन तीनो प्रकार की भूमिकाओ के पात्रो म बहुधा सघष हो जाता है।

VIII

क्रांति

(Process of Change and Revolution)

1 क्रान्ति की धारणा स्वरूप और इतिहास

'क्रांति' (revolution) शब्द को खगोल विज्ञान (Astronomy) से लिया गया है, आरम्भ मे इसका अथ मानवी घटनाओ की प्रक्रिया का चक्र (cyclical process in human events) लिया गया। राजनीति की आम बोलचाल मे इसका प्रयोग 1789 की फ्रासीसी क्रान्ति के बाद हुआ। अब लेखको मे प्राय एकमत है कि 'क्राति का अथ सरकार के कार्मिक (personnel), सरचना, उसका समथन करने वाली पौराणिक कथा (myth) के आधार और कार्यों मे ऐसी विधियो द्वारा परिवतन से है जिन्ह प्रचलित सावैधानिक प्रतिमाना स स्वीकृत न किया गया हो।' इन विधियो म प्राय सदा ही राजनीतिक विशिष्ट वर्गों (political elites), नागरिको या दोनो के विरुद्ध हिंसा अथवा हिंसा की धमकी अन्तग्रस्त रहती है। बहुसख्यक लेखको का मत है कि क्राति का अथ धन और सामाजिक पद के वितरण म अचानक ही महत्त्वपूण परिवतन है।

क्राति के कुछ अध्ययनकर्त्ताओ ने आधुनिकीकरण की विशेषताओ के अनुसार 'क्राति' शब्द के प्रयोग को सकुचित बनाया है। इस प्रकार वे सच्चे क्रातिकारी आन्दोलना से उन आन्दोलनो को निकाल दते हैं जो प्रथमत प्रेरणा मे धार्मिक थे। हन्नाह अरेन्ट का मत है कि अठारहवी शताब्दी के अन्त मे हुई दो महान् क्रान्तियो के पूव क्राति की धारणा इस विचार से बंधी थी कि क्रान्ति के बाद इतिहास का माग सवथा नये सिरे से आरम्भ होता है। कान्डोर्से (Condorcet) ने कहा है कि 'क्राति' शब्द उन्ही क्रान्तियो के लिए लागू हो सकता है जिनका उद्देश्य स्वतन्त्रता था। अस्तु आधुनिक युग मे क्रान्तियो को समझने के लिए अति महत्त्वपूण विचार स्वतन्त्रता और नय आरम्भ के अनुभव का मेल है। हन्नाह अरेन्ट के अनुसार 'क्रान्तियाँ जिस चीज को सामने लायी वह स्वतन्त्र होने का अनुभव था और यह एक नया अनुभव था। ये दोनो चीजें साथ-साथ एक नया अनुभव जिसने मनुष्य की नयेपन के लिए क्षमता और स्वतन्त्रता के लिए इच्छा को बताया—उस भारी करुणता की जड म थी जिसे हम अमरीकी और फ्रासीसी दोनो क्रान्तियो मे देखते हैं। 'जहा नवीनता की यह करुणता' (pathos of novelty) हो और जहाँ नवीनता स्वतन्त्रता के विचार से सम्बन्धित हो, वही हम क्राति की बात कह सकत हैं। इसका यह अथ हुआ कि क्रान्तियाँ सफल विद्रोह से कुछ अधिक हैं और हम प्रत्येक सैनिक विद्रोह (coup d'etat) को क्राति नही कह सकते।'[1]

परन्तु टॉमस ग्रीन कहता है कि कुछ विद्वान् अरेन्ट और कान्डार्से के इस मत से सहमत प्रतीत नहीं होते कि 'क्रान्ति शब्द को केवल उन्ही आधुनिक आन्दोलनो पर लागू करना चाहिए जिन्होंने मानव स्वतन्त्रता को विस्तृत किया हो।'[2] हम अरेन्ट का मत ठीक प्रतीत होता है, परन्तु यह एक तथ्य है कि इस शब्द का प्रयोग अधिकतर लेखको न वृहत् अथ म किया है जिसम सभी प्रकार के क्रान्तिकारी परिवतन आ जाते हैं, व भी जिन्हें सैनिक विद्रोह (military coups) या राजद्रोह द्वारा लाया जाता है। इस बात पर प्राय सहमति है कि क्रान्तियो का प्रयोजन धन, पद या शक्ति के प्रचलित वितरण म बड़ा परिवतन लाना है, अत क्राति की धारणा म आधारभूत और तीव्र परिवतन (fundamental and accelerated change) का विचार निर्मित है।

[1] H Arendt *On Revolution* pp 21-28
[2] T H Green *Comparative Revolutionary Movements* p 8

शान्तिपूर्ण और सांविधानिक परिवर्तन की व्यवस्था तो संविधान में ही दी रहती है। वास्तव में क्रांति तभी होती है जब संविधान और शासन की पुनरचना की जाती है।

राजनीतिक क्रांति (political revolution) की धारणा क्या है ? चूंकि राजनीति का आधार शासन या शक्ति है, राजनीतिक क्रांति का अर्थ शक्ति का परिवर्तन है। प्रचलित साहित्य में क्रान्ति की दो प्रकार की परिभाषायें मिलती हैं—(1) कानूनी और सांविधानिक, तथा (2) मार्क्सवादी या समाजशास्त्रीय। प्रथम प्रकार की परिभाषाओं में यह विचार निहित है कि 'क्रांति स्थापित शासन या राज्य को उखाड़ फेंकना है, उन व्यक्तियों द्वारा जो पहले शासित थे। अर्थात् नयी व्यवस्था अथवा सरकार के रूप को पहली के स्थान पर बलपूर्वक लाना। एडवर्ड (L P Edwards) ने कहा कि 'क्रांति वह परिवर्तन है जिसके द्वारा वैधता की एक पद्धति (one system of legality) का अंत करके दूसरी पद्धति आरम्भ की जाती है।' एक दूसरे लेखक (George Petice) के अनुसार एक महान् क्रान्ति राज्य का फिर से गठित होना (reconstitution of the state) है। क्रेन ब्रिंटन ने इसकी परिभाषा में कहा है 'किसी भूमिगत एकता (राज्य) का संचालन करने वाले एक समूह के स्थान पर प्रचण्ड और अचानक ही दूसरे समूह को रख देना क्रांति है।'

अब क्रांति के बारे में मार्क्सवादी धारणा दी जाती है। मार्क्स और ऐंजिल्स (Marx and Engels) ने लिखा है कि क्रांति द्वारा आधारभूत परिवर्तन इस प्रकार लाया जाता है एक प्रकार की उत्पादन शैली (mode of production), एक प्रकार की सामाजिक पद्धति वर्ग संघर्ष के परिणामस्वरूप दूसरी का स्थान ले लेती है, जब पूर्वगामी शोषक पद्धति को हटाया जाता है तो संघर्ष विशेष रूप से कटु होता है। पूंजीवाद से समाजवाद में संक्रमण पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध सर्वहारा वर्ग के घोर संघर्ष तथा समाजवादी क्रांति के परिणामस्वरूप ही हो सकता है। परन्तु पूंजीवादी समाज वर्गों के बीच विरोध का विकास इस प्रकार की क्रांति को अवश्यम्भावी बनाता है ? अतः उन्होंने इस विचार को अस्वीकृत किया कि कोई समुदाय पूंजीवाद से समाजवाद में शोषकों को शिक्षित करने व समझाने से अग्रसर हो सकता है। उनके द्वारा प्रतिपादित वैज्ञानिक समाजवाद तो समाजवादी क्रांति का निर्वचन, बृहत् अर्थ में राजनीतिक व आर्थिक पद्धति में ऐसा पूर्ण परिवर्तन है जो पूंजीवाद का सर्वथा नाश करके समाजवाद की रचना करेगा। इसका आरम्भ सर्वहारा वर्ग (proletariat) की उस राजनीतिक क्रांति से होता है जिसके द्वारा पूंजीवाद का अंत होता है और सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व (dictatorship of the proletariat) स्थापित होता है। इस प्रकार क्रांति के बारे में मार्क्सवादी धारणा क्रांति की विशुद्ध भावुक धारणा (romantic concept) से सर्वथा भिन्न है।

2 क्रान्तियों और क्रान्तिकारी पद्धतियों के प्रकार

प्राचीन ग्रीस में एरिस्टॉटल प्रथम महान् लेखक था, जिसने क्रांतियों के बारे में विश्लेषण किया। उसके अनुसार क्रांतियाँ दो प्रकार की हो सकती हैं—(1) वे जिनके परिणामस्वरूप प्रचलित संविधान पूर्णतया बदल जाय और (2) वे जिनके बाद प्रचलित संविधान में कुछ संशोधन या परिवर्तन हो जाय। परन्तु आजकल क्रांतियों को दो समूहों में रखा जा सकता है—दक्षिणपन्थी क्रान्तियाँ (revolutions of the right) और वामपन्थी क्रान्तियाँ (revolutions of the left)।

पहले प्रकार की क्रान्तियों अर्थात् मध्यवर्गीय अथवा पूंजीपति वर्ग द्वारा लायी गयी क्रान्तियों (bourgeois revolutions) का उद्देश्य समाज में समता को मध्यम वर्ग तक विस्तृत बनाना रहा। ऐतिहासिक दृष्टि से इस प्रकार की क्रान्तियाँ राजतान्त्रिक व अभिजाततान्त्रिक संस्थाओं के विरुद्ध हुईं परन्तु उन्होंने उच्च वर्गों को कभी भी यह धमकी नहीं दी कि निम्न वर्गों

का पद उठाया जायगा। क्रेन ब्रिंटन ने ठीक ही कहा है (ब्रिटेन के) प्यूरीटन और अमरीका के क्रान्तिकारी नेता, जहाँ तक उनके सामाजिक वर्ग का सम्बन्ध है, एक समान थे—वैधानिक व्यक्ति थे तथा समाज मे उनका आदर था। फ्रासीसी क्राति के भी अधिकतर नेता मध्य वर्ग के थे और समाज मे उनका पद लगभग वैसा ही था जैसा उनके साधारण समर्थको का था। इसी समूह मे हम अनेक देशो—पाकिस्तान, बर्मा, ईराक, इजिप्ट, इण्डोनेशिया, घाना व चिली मे सैनिक विद्रोहो द्वारा परिवर्तनो को रख सकते हैं। कभी-कभी तो ऐसी सैनिक क्रातिया वास्तव मे क्राति विरोधी अथवा प्रति क्रातिकारी (counter revolutionary) होती हैं, उदाहरण के लिए 1973 मे चिली मे साल्वेडर एलेंडे का कत्ल करने के बाद स्थापित सैनिक शासन।

जहा तक वामपन्थी क्रान्तियो का सम्बन्ध है, उनके क्रातिकारी नेताओ ने सदैव ही समाज के राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक सम्बन्धो मे अधिक व्यापक समता लाने का अनुमोदन किया है। समाजवादी क्रान्तियो मे जारशाही रूस मे 1917 मे हुई क्रान्ति प्रथम थी। उसके बाद इस प्रकार की क्रातियाँ चीन, क्यूबा, वियतनाम आदि देशो मे हुई हैं। चिली मे मतदान द्वारा मार्क्सवादी शासन की 1970 मे स्थापना हुई थी, उसे भी इसी समूह मे रख सकते हैं। परन्तु यह प्रथम और अनोखा उदाहरण था जबकि एक देश मे समाजवादी क्रान्ति शान्तिपूर्ण और सावैधानिक तरीको से आयी।

परन्तु उपर्युक्त दो प्रकार की क्रान्तियो के अतिरिक्त अन्य क्रान्तियाँ भी हुई हैं जिन्हें इनमे से किसी एक वर्ग मे रखना कठिन है। इस प्रकार की क्रान्तियाँ सीरिया, ईराक, इजिप्ट, आदि देशो मे हुई, जिनकी सरकारें इन्हे सामाजिक क्रान्ति (social revolution) कहती हैं। परन्तु प्रथम विश्वयुद्ध के बाद तुर्की मे कमाल अतातुर्क के नेतृत्व मे जो क्रान्ति हुई वह राजनीतिक व सामाजिक दोनो ही थी। ह्यूग सेटोन-वाटसन (Hugh Seton-Watson) ने बीसवी शताब्दी की क्रान्तियो को उन्नीसवी शताब्दी की क्रान्तियो से भिन्न बताया है। उसके अनुसार बीसवी शताब्दी के क्रान्तिकारी आन्दोलनो मे एक समान विशेषता पायी जाती है जो उन्हें उन्नीसवी शताब्दी की क्रान्तियो से अलग करती है। जबकि गत शताब्दी मे क्रान्तिकारी आन्दोलन सास्कृतिक व आर्थिक दृष्टि से अग्रगामी देशो मे हुए, वर्तमान शताब्दी के क्रान्तिकारी आन्दोलनो ने अधिकाशत पिछड़े हुए प्रदेशो व जन-समुदायो को प्रभावित किया है। कृष्ण कुमार के मतानुसार, रूसी क्रान्ति यूरोपीय क्रान्तियो और तीसरे विश्व के राज्यो मे हुई क्रान्तियो के बीच मे आती है। 'जब क्रान्ति का विचार यूरोप से बाहर गया तो शहरो व शहरी वर्गों की भूमिका पृष्ठभूमि मे पड़ गयी। उनका स्थान किसान वर्ग और ग्रामीण क्षेत्रो मे सघर्ष ने ले लिया।'[1] जहाँ तक क्रान्तिकारी पद्धतियो (revolutionary systems) का सम्बन्ध है, क्रान्तियो के उपरान्त शासन पद्धतियाँ मुख्यत दो प्रकार की रहीं (1) प्रजातन्त्रात्मक और (2) अधिनायकतन्त्री। प्रजातन्त्रात्मक पद्धतियो मे हम इग्लैण्ड की ससद पद्धति और सयुक्त राज्य अमरीका की अध्यक्षात्मक अथवा राष्ट्रपतीय (presidential) पद्धति के उदाहरण देना काफी समझते हैं। परन्तु क्रान्तियो के बाद स्थापित अधिनायकतन्त्र चार प्रकार के रहे—(1) इटली मे फासीवादी और जर्मनी मे नाजी वादी शासन, (2) साम्यवादी अधिनायकतन्त्र सोवियत सघ, चीन तथा अन्य साम्यवादी राज्यों मे, इसे इन देशो मे 'जनवादी प्रजातन्त्र (people's democracy) कहा जाता है, (3) दूसरे विश्व युद्ध के दौरान और उसके बाद पाकिस्तान, इण्डोनेशिया, इजिप्ट बर्मा आदि अनेक देशो में सैनिक अधिनायकतन्त्र स्थापित हुए, और (4) परम्परागत (traditional) पद्धति जैसी कमाल अतातुर्क के नेतृत्व मे आरम्भ मे तुर्की मे स्थापित हुई थी।

[1] K. Kumar (ed.) *Revolution* pp 83-90

3 कारण, विधियाँ और निरोध

सवप्रथम, एरिस्टॉटल ने अपने समय की अनेक कुरीतियो का अध्ययन करके कारण बताये

(1) मनुष्यो म सवव्यापी रूप से पायी जाने वाले अधिकारा व समता के लिए भावना जो उनम शासको के प्रति घोर विरोध तथा विद्रोह को जन्म देती है।

(2) शासको की सीमा से बढकर अकड अथवा उनमे लालच की उग्र भावना।

(3) एक या अधिक व्यक्तियो द्वारा राजनीतिक शक्ति पर ऐसा अधिकार जो अन्य व्यक्ति मे यह भय उत्पन्न कर देता है कि वे राजतन्त्र या अल्पतन्त्र स्थापित करना चाहते हैं।

(4) अपराधी व्यक्तियो का प्रयास, जिससे कि उनके अपने अपराध छिपे रहें।

(5) राज्य मे किसी भाग या वग का अनुपात से अधिक बढ जाना (disproportion increase of any part territorial, social, economic or otherwise)।

(6) विभिन्न मूल जातियो के लोगो के बीच गम्भीर विवाद और प्रतिस्पर्धा।

(7) राजवंशो के पारिवारिक झगडे।

(8) प्रतिस्पर्धी वर्गों या राजनीतिक गुटो व दलो के बीच पदो व राजसत्ता के लिए सघ

अधिकतर लेखको ने यह स्वीकार किया है कि समता के लिए इच्छा क्रान्तियो का प्र अथवा सबसे महत्त्वपूर्ण कारण रहा है। एरिस्टाटल द्वारा बताये कारणो की सत्यता पर टिप करते हुए मैक्सी (C C Maxey) ने 'Political Philosophies' मे लिखा है कि यदि विश्व की प्रमुख क्रान्तियो के कारणो की खोज बीन करें तो देखेंगे कि एरिस्टॉटल द्वारा बताये कोई एक या दो कारण उनके पीछे प्रेरणा देने या उन्हे उकसाने वाले रहे हैं। लेनिन का न 'भूमि, शान्ति और रोटी' दबे हुए किसानो, युद्ध से थके सैनिको और भूखे मजदूरो के लिए क्रा मे कूद पडने का आमन्त्रण था। उसने दूसरा नारा यह दिया 'सारी शक्ति सोवियतो को' (power to the Soviets)। यह सामान्य रूप म स्वीकार किया जाता है कि पीस देने व गरीबी, व्यापक दरिद्रता और असन्तोष क्रान्तियो के मुख्य कारण हैं, लाभ, शक्ति व सम्मान इच्छा भी अन्य महत्त्वपूर्ण कारण हैं।

क्रान्तियो के कारणो से सम्बन्धित एक प्रश्न विचारधारा, विचारो और बुद्धिजीवियो क्रान्ति मे भूमिका का है। इस बारे म दो मत नहीं हो सकते कि विचारो और विचारधार न क्रान्तिकारियो को बडी प्रेरणा दी है। उदाहरण के लिए सयुक्त राज्य अमरीका मे जिन विच ने वहाँ के निवासियो को ब्रिटेन के विरुद्ध स्वतन्त्रता का युद्ध करने की प्रेरणा दी उनम ये प्र थे 'बिना प्रतिनिधित्व के कर लगाने का अधिकार नहीं' (No taxation without represe tation), सभी व्यक्तियो के प्राकृतिक व अनपहरणीय अधिकार—जीवन, स्वतन्त्रता व सुख त जनता की सहमति पर आधारित शासन स्वतन्त्रता, समता और भ्रातृत्व के विचारो ने फ्रांसी क्रान्तिकारियो को प्रेरणा दी। इग्लैण्ड मे भी 'गौरवमय क्रान्ति' (Glorious Revolution) स के अधिकारो के लिए हुई। सोवियत सघ, चीन व अनेक साम्यवादी देशो मे क्रान्ति के लिए सब अधिक प्रेरणा समाजवाद और साम्यवाद की विचारधाराओ से प्राप्त हुई। तीसरे विश्व राज्यो मे स्वातन्त्र्य आन्दोलनो तथा क्रान्तियों के पीछे उपनिवेशवाद का अन्त, राष्ट्रीयता, स्वशासन प्रजातन्त्र व समाजवाद आदि विचार अथवा राजनीतिक आदर्श रहे। यहाँ यह कहना ही काफी हो कि विचारो की उत्पत्ति विद्वानो के मन मे होती है और उनके प्रसार म बुद्धजीवि (intellectuals) का विशेष भाग रहता है। अधिकतर क्रान्तियो म नेतृत्व ऐसे ही व्यक्ति के हाथो में रहा।

जहाँ तक क्रान्तियो को लाने वाली विधियो का सम्बन्ध है, उनमे हम इन्हे प्रमुख क

सकते हैं—युद्ध, हिंसापूर्ण सघर्ष, विरोधी प्रदर्शन, प्रेरणादायक नारे और नेताओ की भूमिका। सयुक्त राज्य अमरीका मे क्रान्ति युद्ध के परिणामस्वरूप हुई, इग्लैण्ड मे भी एक प्रकार का गृह युद्ध हुआ, जिसके बाद ससद के समर्थको की विजय हुई। चीन और वियतनाम मे लम्बे समय तक सघर्ष और युद्ध चले। फ्रास मे हिंसात्मक सघर्ष हुआ। प्राय सभी देशो मे जहा वास्तविक क्रान्तियाँ हुई क्रान्तिकारी नारो, विरोधी प्रदर्शनो, हिंसक घटनाओ का क्रान्ति को लाने में कम या अधिक प्रयोग हुआ। भारत तथा अन्य कई देशो को दीर्घकालीन स्वातन्त्र्य सघर्ष के बाद स्वाधीनता प्राप्त हुई। उसे हम क्रान्ति कह सकते हैं, जो सरकार विरोधी आन्दोलनो से आयी। सभी क्रान्तियो के प्रमुख नेताओ ने सफल नेतृत्व, प्रभावी नारे और विचार दिये। लेनिन ने रूस मे, माओ ने चीन मे तथा हो ची मिन्ह ने वियतनाम मे। शान्तिपूर्ण और सावैधानिक तरीके से हुई समाजवादी क्रान्ति का अकेला उदाहरण चिली रहा।

क्रान्तियो को रोकने के उपायो (preventives) पर भी एरिस्टॉटल के विचार प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। उनके द्वारा सुझाये गये उपाय सक्षेप मे इस प्रकार हैं

(1) अच्छे शासनो को कानून के पालन की भावना को बनाये रखने से बढकर दूसरा उपाय नही है।

(2) शासको को परिवर्तन के आरम्भ के विरुद्ध सचेत रहना चाहिए, परन्तु उन्हे जनता को धोखा देने वाले तरीको पर निर्भर नही रहना चाहिए।

(3) सम्मान के मामले मे महत्त्वाकाक्षियो और धन के मामले मे जनसाधारण को कभी भी हानि नही पहुँचानी चाहिए अथवा उनके प्रति ज्यादती नही करनी चाहिए।

(4) यदि शासक वर्ग की सख्या बडी हो तो कई प्रजातान्त्रिक सस्थाएँ उपयोगी हैं, यथा पदो पर रहने की अवधि सीमित हो, जिससे कि समान योग्यता व श्रेणी के लोगो को उन पदो पर आने की सम्भावना रहे।

(5) सविधान का तभी तक परीक्षण होता है जब तक कि उनके नाश करने वालो को या तो दूर रखा जाय या इतना निकट कि उनके भय से शासक सविधान को अपने हाथो मे रखें।

(6) प्रत्येक राज्य का प्रशासन इस प्रकार सचालित किया जाय कि अधिकारी वर्ग अनुचित रूप से धन एकत्रित न कर सके।

उपर्युक्त के अतिरिक्त चार्ल्स मैरियम के अनुसार, राज्यो का अस्तित्व बनाये रखने के लिए अग्रलिखित बातें भी उल्लेखनीय हैं (1) सत्ता की सामाजिक रचना का घनिष्ठ ज्ञान, (2) राजनीतिक इनामो व दण्डो का ठीक प्रकार से वितरण, (3) सत्ता के केन्द्रीकरण से बचना, (4) मध्यम मार्ग का अनुसरण करना, (5) नियोजन व नेतृत्व, और (6) न्याय तथा व्यवस्था के बीच सन्तुलन।[1]

4 क्रान्तियो के मार्ग, कार्य और क्षमता

मार्ग (Cause)—क्रान्ति साधारणतया तैयारी की लम्बी प्रक्रिया और अन्तिम चरण मे विद्रोह का परिणाम होती है। ऐतिहासिक क्रान्तिया तैयारी व सगठन के लम्बे काल के बाद हुई। ऐसे काल मे समुदाय मतभेदो के कारण कई समूहो या वर्गों मे विभाजित हो जाता है। अर्थात् खण्डित हो जाता है और सम्भावित भावी व्यवस्था के बारे मे नये-नये विचार जन्म लेते हैं। विभिन्न समूहो के बीच लम्बे काल तक सत्ता पर अधिकार पाने के लिए जोरदार सघर्ष चलता है और अन्तिम मजिल मे कोई एक शक्तिशाली समूह दरिद्र, सतायी हुई या युद्ध से दुखी जनता पर अपना प्रभाव डालने मे सफल होता है, जिसकी सहायता से क्रान्ति होती है। चीन तथा अन्य

[1] C E Merriam *Systematic Politics* p 249

देशो मे जहा समाजवादी क्रान्तिया हुई है, जनता को बडे लम्बे काल तक सघष करना पडा तथा युद्ध का भी सहारा लेना पडा।

क्रेन ब्रिटन (Crane Brinton) ने 'Anatomy of Revolution' मे इग्लैण्ड, फ्रास, सयुक्त राज्य अमरीका व रूस की क्रान्ति से पूव के शासनो का विशेष अध्ययन करने के बाद इन निष्कर्षों पर पहुँचा (1) ये समाज क्रान्ति से पूव आर्थिक दृष्टि से विकसित थे। ऐसा प्रतीत होता है कि क्रान्तिकारी आन्दोलनो का जन्म निधन व दरिद्र लोगो म नही हुआ। (2) इन समाजो म निश्चित व कटु वग सघर्षो का अस्तित्व था। (3) सरकारी तन्त्र अकुशल था, जो परिवतनशील समय की मागो की आवश्यकताओ के अनुसार अपने को न ढाल सका। (4) शासक वग की एक बडी सख्या मे शासको के प्रति अविश्वास पदा हो गया, अत वे बुद्धिजीवियो, मानवतावादियो अर्थात् क्रान्तिकारियो की ओर हो गये।

उसके अध्ययन के आधार पर क्रान्तियो के माग को सक्षेप मे इस प्रकार रखा जा सकता है—उन घटनाओ का सम्बन्ध जो पहली तीन क्रान्तियो से पूव घटी राज्य के वित्तीय प्रशासन से था, रूस म प्रशासन की विफलता का कारण मुख्यत असफल युद्ध के भार थे। चारो ही क्रान्ति स पूव के समाजो मे सरकारी तन्त्र की अकुशलता व अपर्याप्तता क्रान्ति के प्रारम्भिक काल मे प्रमुख रही। परन्तु प्रत्येक देश मे घटी घटनाएँ एक दूसरे से भिन्न थी। फिर भी जिस समूह का प्रारम्भिक मजिल मे प्राधान्य रहा वह मध्यवर्गीय (moderate) था, परन्तु तीन मे उन्हे शीघ्र ही कत्ल अथवा निष्कासन द्वारा पदा से हटा दिया गया। सत्ता दक्षिणपन्थ से वामपन्थ की ओर चली और अन्त मे वामपन्थियो के हाथो मे आयी। इनमे से किसी भी क्रान्ति मे सभ्यता का नाश नही हुआ। जब सन्तुलन की फिर से स्थापना हो गयी तो क्रान्ति का अन्त हो गया।

काय (Functions)—साधारणतया क्रान्तियो का उद्देश्य प्रचलित स्थिति म तीव्र गति के साथ अग्रलिखित मे आधारभूत परिवतन लाना होता है (1) शासन पद्धति या अधिकारी वग अर्थात् सावैधानिक परिवतन, (2) विदेशी प्रभुता से स्वतन्त्रता—राजनीतिक या आर्थिक या दोनो प्रकार की, (3) आर्थिक पद्धति, (4) सामाजिक सरचना, और (5) लाभ, पद व सम्मान आदि के लिए वैयक्तिक आकाक्षाओ की पूर्ति। क्रान्ति के परिणामस्वरूप प्राप्त सफलता पूण अथवा आशिक हो सकती है। उसी के अनुसार क्रान्ति के कार्यों का वणन किया जा सकता है। इग्लैण्ड म क्रान्ति-कारियो ने स्वतन्त्रता और जनइच्छा के अनुसार शासन के लिए युद्ध किया, उन्हे सफलता मिली और क्रान्ति के कार्य पूण हुए। इसी प्रकार का परिणाम सयुक्त राज्य अमरीका की क्रान्ति का था। फ्रासीसी क्रान्ति के बाद प्रारम्भ मे उसके कार्यों की पूर्ति हुई, परन्तु बाद मे दशाएँ बदली और चाहे काय पूरे न हो सके। जमनी और इटली मे नाजियो और फासीवादियो ने क्रान्ति के बाद उसके उद्देश्यो या कार्यों को कुछ समय तक पूरा किया। परन्तु बाद मे स्थिति पूणतया बदल गयी।

क्षमता (Capacity)—यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक क्रान्ति की क्षमता उसके लक्ष्य और सफलता की मात्रा पर निभर करती है। इन दो बातो के अतिरिक्त क्रान्ति की क्षमता अग्रलिखित तीन बातो पर भी निभर करती है—(1) उन नेताओ के गुणो और क्षमता पर जो क्रान्ति के बाद शासन की बागडोर सम्भालते हैं, (2) उन्हें जनता से किस मात्रा म समथन मिलता है, (3) आन्तरिक साधन व दशाएँ, और (4) अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति। यदि नेताओ म आवश्यक गुण, योग्यता, चरित्र, प्रशासनिक कुशलता व लगन आदि हो और जनता इनका साथ दे तथा देश के भीतर आवश्यक साधन व सहायक दशाएँ हो तो क्रान्ति की क्षमता बहुत अधिक होने की सम्भावना है। यदि अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति भी सहायक हो तो उसकी क्षमता अधिक से अधिक हो सकती है। परन्तु जिस सीमा तक इन आवश्यक दशाओ की कमी होगी, उसी सीमा तक क्रान्ति की क्षमता कम रह जायगी।

IX

मार्क्स और लेनिन के आवश्यक विचार
(Marxist Leninist Framework)

1 मार्क्स व लेनिनवादी विश्लेषण अथवा वर्ग युद्ध का सिद्धात

मार्क्स को वैज्ञानिक समाजवाद (scientific socialism) का सस्थापक माना जाता है। उसने अपने सिद्धान्तो का प्रतिपादन अपने सहयोगी ऐंजिल्स के साथ 'साम्यवादी घोषणापत्र' (Communist Manifesto) मे किया। उसका प्रथम वाक्य है 'अब तक के सभी समाजो का इतिहास वर्ग सघर्षो का इतिहास है।' प्राचीन काल मे स्वतन्त्र व्यक्तियो और दासो, मध्य युग मे धनिको और निर्धनो (patrician and plebian), भू स्वामियो और दास किसानो (serfs) अर्थात् सताने वालों और सताये जाने वालो के बीच सघर्ष चलते रहे और वर्तमान काल मे पूजीपति व श्रमिक के बीच सघर्ष चल रहा है। मार्क्सवाद के आधारभूत सिद्धान्तो का यहाँ पर केवल उल्लेख करना ही काफी होगा जो निम्नलिखित है

(1) द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद,
(2) इतिहास का भौतिकवादी निर्वचन,
(3) अतिरिक्त मूल्य (surplus value) का सिद्धान्त,
(4) वर्ग युद्ध का सिद्धान्त,
(5) पूजी के एकत्रीकरण का नियम,
(6) सर्वहारा वर्ग (proletariat) की अधिनायकशाही, और
(7) राज्य का मुर्झाना (*withering away of the state*)।

मार्क्स ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि *वर्तमान युग मे पूजीपतियों और श्रमिको* के बीच सघर्ष (struggle between the bourgeois and the proletariat) मे अन्तिम विजय सर्वहारा वर्ग की होगी। राजनीतिक सत्ता पर सर्वहारा वर्ग की अधिनायकशाही स्थापित हो जाने के बाद *राज्य क्रमिक रूप से मुर्झा जायेगा* अर्थात् जैसे जैसे साम्यवाद की स्थापना मे प्रगति होगी, वैसे-वैसे राज्य के कार्य कम होते चले जायेंगे। सर्वहारा वर्ग की विजय अधिकतर देशो मे क्रान्ति द्वारा होगी, किन्तु कुछ देशो मे यह महान् परिवर्तन शान्तिपूर्ण तरीके से भी आ सकता है। उसने विश्व के श्रमिको से आह्वान किया कि वे सगठित हो और दासता की जजीरो को तोड दें।

लेनिन ने मार्क्सवाद को रूस मे व्यावहारिक रूप प्रदान किया और उसमे आवश्यक सशोधन किये। लेनिन ने क्रान्ति लाने मे श्रमिको और किसानो के साम्यवादी दल की भूमिका को अत्यधिक महत्त्व प्रदान किया और उसे उसके द्वारा रूस मे क्रान्ति कराने मे सफलता भी मिली। लेनिन ने यह भी कहा कि साम्राज्यवाद पूजीवाद की अन्तिम मजिल है (*Imperialism* is the last stage of capitalism)। उसने यह भी कहा कि पूंजीवाद की जजीर की सबसे कमजोर कडी पर वार कर देना चाहिए, सम्पूर्ण विश्व मे एक साथ क्रान्ति के लिए प्रतीक्षा करना उचित नहीं। उसी विचार को उसने जारकालीन रूस मे व्यावहारिक रूप प्रदान किया और उसे सफलता मिली। लेनिन और उसके उत्तराधिकारी स्टालिन का यह मत था कि पहले एक देश मे ही समाजवाद की स्थापना (socialism in one country) की जाय और उन्होंने ऐसा ही कर दिखाया।

वर्ग-सघर्ष के सिद्धान्त के अनुसार उदारवादी प्रजातन्त्रों (liberal democracies) मे सभी व्यक्तियो को राजनीतिक प्रक्रिया मे सच्चे अर्थ मे भाग लेने का अवसर नही मिलता। इस सिद्धान्त के अनुमोदक ससद सस्थाओ मे विश्वास नहीं करते। मनुष्य के अधिकारो, राज्य की कानूनी पद्धति आदि के बारे मे उनके विचार पाश्चात्य प्रजातन्त्री विचारो से भिन्न हैं। वर्ग-युद्ध का सिद्धान्त

ने राजनीति को वस्तुत एक नया उपागम दिया। इसका मुख्य सम्बन्ध वर्गों के बीच संघर्ष से है न कि मताधिकार, चुनाव, राजनीतिक दल, समूह और सरकार से। मार्क्सवादियों के मतानुसार तो 1914–18 का महायुद्ध भी प्रतिस्पर्धी साम्राज्यवादियों के बीच युद्ध था, जिसमें कड़ा परिश्रम करने वाली सामान्य जनता की विशेष दिलचस्पी न थी। वास्तव में वर्ग युद्ध का सिद्धान्त राजनीतिक से आर्थिक और सामाजिक अधिक है, क्योंकि यह आर्थिक रचना को समाज का आधार मानता है। इस सिद्धान्त की कई आधारों पर आलोचना की गयी है

(1) यह भौतिकवादी है।

(2) इसके अनुसार मानव समाज के इतिहास को केवल एक ही कारक—आर्थिक सम्बन्धों के शब्दों में निर्वचन किया गया है।

(3) यह मानता है कि अन्त में वर्ग विहीन समाज (classless society) की स्थापना हो जायेगी और वर्ग-युद्ध का अन्त हो जायेगा। यह विचार सिद्धान्त के आधारभूत विचार का विरोधी है।

(4) कुछ आलोचकों के अनुसार मजदूर वर्ग की बिगड़ती हुई दशा के बारे में मार्क्स ने जो भविष्यवाणी की थी, वह सत्य सिद्ध नहीं हुई है। सभी प्रकार की आलोचनाओं के बावजूद यह स्वीकार करना उचित होगा कि आज विश्व के लगभग आधे भाग में साम्यवाद के अनुयायी व समर्थक रहते हैं और समाजवाद व साम्यवाद की दिशा में ही अधिकतर राज्य आगे बढ़ रहे हैं। साथ ही यह भी मानना पड़ेगा कि मानव इतिहास व राजनीति के निर्वचन में आर्थिक तत्त्व का बहुत महत्त्व है।

2 अधिकारों के बारे में मार्क्सवादी दृष्टिकोण

अधिकार (right) किसी भी व्यक्ति का समाज द्वारा मान्य न्यायोचित दावा (reasonable claim) है। लास्की (H J Laski) के अनुसार, 'अधिकार सामाजिक जीवन की वे दशाएँ हैं, जिनके बिना कोई मनुष्य अपना पूर्ण विकास नहीं कर सकता।' एन० वाइल्डे कहता है साधारण प्रयोग में अधिकार कुछ कार्य करने की स्वतन्त्रता के लिए न्यायोचित दावा है कोई अधिकार किसी कार्य को करने अथवा हस्तक्षेप को रोकने की यथार्थ शक्ति नहीं है। वरन् यह तो हस्तक्षेप को रोकने अथवा ऐसी शक्ति के प्रयोग में सहायता पाने का दावा है। अत अधिकारों का अर्थ (महत्त्व) सामाजिक सम्बन्धों के क्षेत्र के भीतर है।[1] नागरिक अधिकार व्यक्तियों के लिए संविधान अथवा कानून द्वारा पारिभाषित और रक्षित स्वतन्त्रता का क्षेत्र है।

अधिकार प्राकृतिक कानून अथवा राज्य के कानून—प्रथाओं और संविधियों (customs and statutes)—पर आधारित हो सकते हैं। प्राकृतिक कानून एक प्रकार के अलिखित किन्तु सर्वव्यापी युक्तियुक्तता (universal reason) पर आधारित नियम होते हैं। ऐसे अधिकारों का श्रेष्ठ वर्णन संयुक्त राज्य अमरीका की स्वतन्त्रता की घोषणा (Declaration of Independence) में मिलता है, जिसमें कहा गया है 'हम इन सच्चाइयों को स्वत स्पष्ट (अर्थात् सिद्ध) मानते हैं कि सभी मनुष्य सम हैं, उन्हें उनके सृष्टिकर्त्ता ने कुछ अनपहरणीय अधिकारों के साथ पैदा किया है, इनमें जीवन, स्वतन्त्रता और सुख पाने के लिए प्रयास करना सम्मिलित है। इन्हीं अधिकारों के समर्थन में प्राकृतिक अधिकारों के सिद्धान्त (theory of natural rights) का प्रतिपादन हुआ।

परन्तु आजकल इस सिद्धान्त को युक्तियुक्त नहीं माना जाता। अधिकारों के सम्बन्ध अन्य सिद्धान्त ये हैं

(1) कानूनी अधिकारों का सिद्धान्त, जिसके अनुसार अधिकारों की रचना राज्य

[1] N Wilde *Ethical Basis of the State* pp 115–17

द्वारा होती है।

(2) सामाजिक कल्याण का सिद्धात (Social Welfare Theory) के अनुसार अधिकारो की रचना मनुष्यो के कल्याण हेतु समाज द्वारा होती है।

(3) ऐतिहासिक सिद्धान्त के अनुसार अधिकार ऐतिहासिक विकास का परिणाम है।

(4) आदर्शवादी सिद्धान्त (Idealistic Theory) के अनुसार मनुष्य को अपने व्यक्तित्व के विकास हेतु कुछ अनुकूल बाह्य दशाओ की आवश्यकता है, जिनकी रचना राज्य ही कर सकता है। इनमे से प्रत्येक सिद्धात मे सत्य का कुछ अश है, किन्तु कमी भी है, जिसका हम यहा विवेचन करना आवश्यक नही समझते।

उपर्युक्त सिद्धान्तो के अतिरिक्त अधिकारो के बारे मे मार्क्स द्वारा प्रतिपादित दृष्टिकोण अथवा मार्क्सवादी सिद्धात भी है, जिसका वर्तमान समय म बहुत अधिक महत्त्व है, क्योकि अनेक राज्यो के सविधान मार्क्सवादी सिद्धान्तो के आधार पर बने हैं। इन राज्यो मे सर्वप्रथम सोवियत सघ है, जिसका अनुकरण सभी साम्यवादी राज्यो—चीन, पूर्वी जर्मनी, पोलैण्ड, रूमानिया, यूगोस्लाविया, वियतनाम आदि ने किया है। साथ ही अन्य प्रजातन्त्री राज्यो के सविधानो म मार्क्सवादी विचारधारा को ध्यान म रखते हुए आर्थिक अधिकारो का समावेश किया गया है तथा कुछ राज्यो के सविधानो मे इन बातो को राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तो मे उचित स्थान दिया गया है।

मार्क्सवादियो ने अधिकारो का स्पष्टीकरण आर्थिक पद्धति के शब्दो मे किया है। मार्क्स ने 'राजनीतिक अर्थव्यवस्था की आलोचना' (Critique of Political Economy) की प्रस्तावना मे कहा है 'कानूनी सम्बन्धो तथा राज्य के रूपो को न तो अपने आप मे समझा जा सकता है और न मानव मन की सामान्य उन्नति के द्वारा समझाया जा सकता है, वरन् उनकी जडें तो जीवन की भौतिक दशाओ मे गडी हैं।' पूजीवादी पद्धति जो उत्पादन के साधनो के व्यक्तिगत (निजी) स्वामित्व पर आधारित है, कुछ ही व्यक्तियो को अधिकार मिल पाते हैं अर्थात् जिनके हाथो उत्पादन की शक्तियाँ हैं। सम्पत्ति के स्वामी ही अधिकारो और विशेषाधिकारो (privileges) को प्राप्त करते हैं, सम्पत्तिहीन बहुसंख्या के कोई अधिकार नही हो सकते। समाज की आर्थिक सरचना (economic structure), जो उसके सभी सम्बन्धो का प्रतिनिधित्व करती है, उस वास्तविक आधार को प्रदान करती है, जिस पर ऊपर की कानूनी और राजनीतिक सरचना (legal and political super structure) खडी होती है। इस दृष्टिकोण से देखने पर यह कहा जा सकता है कि किसी भी समय अन्तिम विश्लेषण म, नागरिको के अधिकार प्रचलित कानूनी पद्धति से निर्धारित होते हैं, और कानूनी पद्धति स्वय मे उस समय की अर्थव्यवस्था पर आधारित होती है। दूसरे शब्दो म, राज्य के कानून आर्थिक शक्ति रखने वाला के पक्ष म होते हैं। सामन्तवादी समाज म कानून सामन्तो के पक्ष म थे और आजकल पूजीवादी देशो म पूँजीपति वर्ग के हितो का साधन बने हैं। अत लास्की कहता है कि 'जिस प्रकार से किसी समय व स्थान पर आर्थिक शक्ति वितरित होती है, वह कानूनी व्यवस्था को ढालता है अर्थात् उस समय और स्थान (देश) के कानूनो को उनका रूप प्रदान करता है।'[1]

जैसा कि पहले बताया जा चुका है अब अनेक साम्यवादी राज्यो के सविधानो म मार्क्सवादी दृष्टिकोण के आधार पर अधिकारो का समावेश किया गया है। इन अधिकारो मे व्यक्ति की राजनीतिक स्वतन्त्रताओ (political freedoms) की अपेक्षा उसके आर्थिक अधिकारो (economic rights) पर कहीं अधिक बल दिया गया है, यथा काम पाने का अधिकार, आराम व खाली समय पाने का अधिकार, बीमारी, बुढापा व बेकारी की अवस्था मे राजकीय सहायता पाने का अधिकार आदि। ये अधिकार राज्य की अर्थव्यवस्था म आवश्यक परिवर्तन करके सुनिश्चित

[1] H J Laski *An Introduction to Politics* p 17

वनाये गये हैं अर्थात् जनसाधारण इन अधिकारो का यथार्थ म उपभोग करते हैं। नागरिकों को न्यायिक कार्यवाही हेतु आवश्यक कानूनी सहायता प्राय नि शुल्क प्राप्त होती है। इन देशों के सविधानो म परिगणित अधिकारों के साथ कर्त्तव्यो पर विशेष बल दिया गया है। राज्य के *कानूनो का पालन अनिवार्य सैनिक सेवा तथा सार्वजनिक सम्पत्ति की रक्षा करना नागरिको के* महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य हैं।

परन्तु उपर्युक्त अधिकार योजना मे कई दोष भी हैं, जिन्हे सक्षेप मे इस प्रकार रखा जा सकता है

(1) साम्यवादी राज्यो के सविधानो मे परिगणित अधिकार किसी भी रूप मे नागरिको के मूल अधिकार (fundamental rights) नही है, क्योकि उन्हे न्यायालयो द्वारा नही मनवाया जा सकता। राज्य की सर्वोच्च विधायिका सभी प्रकार के कानून बना सकती है और न्यायालय किसी कानून को अवैध घोषित नही कर सकते।

(2) नागरिको के राज्य के विरुद्ध कोई अधिकार नही हैं, क्योकि उनकी आधारभूत विचारधारा यह है कि राज्य और उसके कानून सर्वसाधारण के लिए हैं। अत व्यक्तियो को राज्य के विरुद्ध स्वतन्त्रताओ की आवश्यकता भी नही है।

(3) इन राज्यो मे राजनीतिक अधिकारो (और स्वतन्त्रताओ) को गौण स्थान दिया गया है। चूंकि इन राज्यों मे एक ही दल—साम्यवादी दल—का शासन है, अत दल व शासन के विरोधियो का यथार्थ म कानून किसी भी प्रकार का रक्षण प्रदान नही करते।

(4) इन राज्यो के सविधानो में सम्पत्ति के अधिकार (rights to property) को नगण्य स्थान प्रदान किया गया है, और ऐसा बहुत सीमा तक उचित ही है। नागरिको को अति सीमित रूप मे वैयक्तिक सम्पत्ति (personal property)—अपने साधारण से मकान, फर्नीचर, दैनिक जीवन के लिए आवश्यक उपभोग की वस्तुओ—का अधिकार है।

वास्तव म अधिकारो के बारे मे मार्क्सवादी दृष्टिकोण का आधार कानून के बारे म मार्क्स की धारणा (concept of law) है। किसी राज्य के कानून मानव व्यवहार के उन नियमो के समूह हैं जिन्हे या तो राज्य कानूनो के रूप म विहित करता है या अन्य नियम जिन पर राज्य अपनी स्वीकृति प्रदान करता है। इस प्रकार कानूनो का कोई दार्शनिक या नतिक आधार नही है। मार्क्स ने अपने लेखो म इस बात पर बल दिया कि कानूनो के किसी समूह (a set of laws) की उत्पत्ति विकास और सार (essence) को उस समाज के आर्थिक और राजनीतिक जीवन से पृथक् रूप मे नही समझा जा सकता। उसे तो केवल आर्थिक और अन्य सामाजिक दशाओ की उपज के रूप में ही समझा जा सकता है। कानूनो से समाज की रचना नही होती वरन् राज्य कानूनो को बनाता है। *साम्पत्तिक सम्बन्धो* (property relations) का अस्तित्व इसलिए नही होता कि वहाँ सम्पत्ति की परिभाषा करने वाले नियम हैं, वरन् ये नियम तो अपनी ऐतिहासिक उत्पत्ति और विकास आर्थिक पद्धति से उत्पन्न सम्बन्धो का प्रतिबिम्ब है। कानून किसी भी समाज की सामाजिक-आर्थिक पद्धति से ऊपर नही उठ सकते। अस्तु, न्याय का विचार युग युग मे परिवर्तित होता रहा है और प्रत्येक युग म ही देश देश म भिन्न रहा है, क्योकि यह सामाजिक-आर्थिक सरचना पर आधारित रहा है।

X

सविधान से बाहर की सस्थाएँ

(Political Institutions of Extra Constitutional Nature)

सविधान तो शासन-पद्धति अथवा शासन की विभिन्न सस्थाओ का आधार होता है। किन्तु किसी भी राज्य की शासन-पद्धति और राजनीति के अध्ययन म सविधान तथा उसकी सस्थाओ क अतिरिक्त अन्य कई सस्थाओ का महत्त्वपूण भाग व भूमिका होती है। उन सस्थाओ मे हम अग्र लिखित को महत्त्वपूण समझते हैं (1) अभिसमय (conventions), (2) विशिष्ट वग (the elite or elite structures), (3) अधिकारी वग (bureaucracy), (4) जनमत, (5) राजनीतिक सचार (6) राजनीतिक दल, और (7) हित समूह।

1 अभिसमय
(Conventions)

यह सवविदित तथ्य है कि यूनाइटेड किंगडम का सविधान मुख्यत अलिखित है। इसी कारण उसके सविधान को बनाने वाले तत्त्वो मे अभिसमूहो (conventions) का विश्व के अन्य सभी सविधानो की तुलना मे सबसे अधिक महत्त्वपूण स्थान है। अभिसमयो के साथ राजनीतिक चलन (usages) तथा प्रथाओ (customs) को भी गिना जा सकता है। परन्तु हम यहाँ पर अभिसमयो क बारे म ही विवेचन करेंगे।

ब्रिटेन के सविधान मे विभिन्न प्रकार की राजनीतिक प्रथाओ, चलनो, अभिसमयो आदि की सख्या अन्य राज्यो की तुलना मे बहुत बडी है और उनका वहाँ की शासन पद्धति म महत्त्व भी बहुत अधिक है। पालियामेण्ट की प्रक्रिया क सम्ब ध म कोई कानून नही है, उसकी प्रक्रिया का मुख्य आधार प्रथाएँ हैं। ऐसी अनेक प्रथाओ और चलनो (usages) के अतिरिक्त ब्रिटिश सविधान मे अनेक अभिसमय (conventions) हैं। ये सभी सविधान मे जीवन और गति का सचार करते हैं। आग और जिक के शब्दो मे, ये कानून की सूखी हड्डियो पर मास लगाते हैं और कानूनी सविधान को चालू रखते है तथा उसे बदलती हुई आवश्यकताओ व राजनीतिक विचारो के अनुसार सशोधित करते रहते हैं।' उन्ही लेखको के अनुसार, अभिसमय उन समझौतो, आदतो या प्रथाओ से मिलकर बने हैं, जो राजनीतिक नैतिकता के नियम मात्र होने पर भी सबसे महत्त्वपूण सावजनिक सत्ताओ मे दिन प्रतिदिन के यथाथ सम्ब धो और गतिविधियो को अधिकाशत विनियमित करत हैं।' फाइनर के शब्दो म, 'अभिसमय राजनीतिक व्यवहार के नियम है जिन्हे सविधियो, न्यायिक निणयो अथवा ससदीय प्रथाओ द्वारा स्थापित नही किया गया है परन्तु जिनकी रचना इनस बाहर हुई है और जो ऐस उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए बने है, जिनको सविधियो आदि म समाविष्ट नही किया गया है, अत वे इनकी पूरक हैं।'

डायसी के अनुसार सभी साविधानिक प्रथाओ की एक सामान्य विशेपता यह है कि ये उस विधि को निर्धारित करने के नियम हैं जिसके अनुसार राजा की विवेकीय शक्तियो (discretionary powers) का प्रयोग किया जाना चाहिए। राजा की ऐसी शक्तियाँ बहुत ही कम रह गयी हैं फिर भी वे शेप हैं, जैसे पालियामेण्ट का सत्र बुलाना, कॉमन सभा को विघटित करना, युद्ध की घोपणा करना, इत्यादि। वास्तव म साविधानिक प्रथाएँ वे साधन हैं जिनके द्वारा राजा के विशेपाधिकारो का प्रयोग जनता की इच्छानुसार किया जाता है। जनता की इच्छा को उसके प्रतिनिधि पालियामेंट मे व्यक्त करते हैं। जैनिंग्स के अनुसार, साविधानिक प्रथाओ की दो विशेपताएँ हैं—पहली, वे प्रथाएँ उस ढग को निर्धारित करती हैं जिसके द्वारा सविधान को व्यवहार मे कार्यान्वित किया

जाता है। दूसरी, इन प्रथाओ के द्वारा सविधान को बदलती हुई सामाजिक आवश्यकताओ और नये विचारो के अनुसार ढाला जाता है। जहाँ तक दूसरी विशेषता का सम्बन्ध है, ऑग और जिंक के शब्दो म इसका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। प्रथम विशेषता के विषय म जनिंग्स लिखता है कि 'सविधान स्वत काय नही करता, इसे मनुष्य सचालित करते हैं। यह राष्ट्रीय सहयोग का एक यन्त्र है और साविधानिक अभिसमय इस प्रकार के सहयोग के लिए परिवर्द्धित नियम हैं' (The constitutional conventions are the rules elaborated for effecting the cooperations)। इस प्रकार के सहयोग का उत्तम उदाहरण सत्तारूढ दल और विरोधी पक्ष द्वारा सहयोगपूवक काय करना है।

साविधानिक कानूनो और अभिसमयो मे अन्तर—दोनो का प्राय समान रूप से पालन किया जाता है और ब्रिटेन की शासन पद्धति दोनो पर ही समान रूप से आधारित है। परन्तु दोनो के बीच महत्त्वपूण अन्तर है, जिसे विशेषज्ञो ने तीन प्रकार से व्यक्त किया है। प्रथम, साविधानिक प्रथा की अपेक्षा साविधानिक विधि को अधिक पवित्र समझा जाता है और उसका पालन भी अपेक्षाकृत उच्चतम कत्तव्य की भावना से किया जाता है। इस कथन मे सत्य का बडा अश है किन्तु इसका यह अथ कदापि नही कि कानून अभिसमयो से अधिक महत्त्वपूण है। अनेक प्रथाओ का महत्त्व कानूनो से कम नही है। उदाहरण के लिए, यह सोचना भी कठिन है कि कोई मन्त्रि-मण्डल कॉमन सभा का विश्वास खोने पर भी त्याग पत्र न दे अथवा दोना सदनो द्वारा पास किये गये विधेयक पर ताज की अनुमति न मिले। दूसरे, साविधानिक कानूनो को न्यायालय भी मानते हैं और उन्ह लागू भी करते है, किन्तु प्रथाओ का न्यायालयो की दृष्टि मे कोई महत्त्वपूण स्थान नही है। तीसरे, साविधानिक कानूना का स्पष्ट रूप से निर्माण किया गया है। दूसरे शब्दो मे, उनम से अधिकाश को पार्लियामेण्ट ने बनाया है अथवा वे न्यायिक निणयो तथा पवित्र समझौतो पर आधारित हैं। इनके विपरीत प्रथाओ का ज म व्यवहार स हुआ है। यह सब कुछ होते हुए भी कुछ लेखको के मतानुसार कानून और प्रथा क बीच अन्तर का आधारभूत महत्त्व नही है।

अभिसमयो का पालन क्यो होता है? यह एक महत्त्वपूण प्रश्न है जिसका विभिन्न प्रकार से उत्तर दिया गया है। यह तो पहले ही बताया जा चुका है कि इनके पीछे कोई कानूनी शक्ति नही है, परन्तु इनके पीछे कोई ऐसी शक्ति अथवा अनुशास्ति (sanction) अवश्य है जो इन्ह मनवाती है। डायसी के मतानुसार, अभिसमयो का कानून के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है, अतएव यदि किसी अभिसमय का पालन नही होता तो साथ म किसी कानून का भी उल्लघन होता है अथवा सम्बन्धित कानून का उद्देश्य पूरा नही होता। उदाहरण के लिए, यह प्रथा है कि पार्लियामेण्ट का प्रतिवष कम स कम एक सत्र होगा। यदि किसी वष पार्लियामेण्ट का सत्र न हो तो वार्षिक सैन्य कानून (Army Act) समाप्त हो जायेगा, क्योकि उस प्रतिवष पास करना पडता है। इसके बिना देश की सशस्त्र सेनाएँ अवैध हो जायेंगी और सरकार का उन पर कोई कानूनी अधिकार न रहेगा। ऐसे ही किसी वष पार्लियामेण्ट का सत्र न होने पर वित्त कानून और विनियोग कानून (Finance and Appropriation Acts) भी समाप्त हो जायेंगे, क्योकि उनकी अवधि भी एक वष होती है। इन कानूनो के बिना सरकार न कर वसूल कर सकेगी और न प्रशासन पर व्यय हो। डायसी के इस मत म सत्य का अश है, किन्तु उसका उत्तर पूणतया सन्तोषजनक नही है। यथाथ मे, ऐसे अनेक अभिसमय हैं जिनके पालन न करने से कानूनो पर प्रभाव नही पडता।

लॉवेल (Lowell) के मतानुसार यह आवश्यक नही कि पार्लियामेण्ट का वष मे सत्र न होने के कारण डायसी द्वारा बताये गये परिणाम अवश्य ही निकलें। पार्लियामेण्ट सर्वोच्च है और यदि वह चाहे तो सैनिक कानून, वित्त कानून व विनियोग कानून की अवधि बढा सकती है। उसका यह मत है कि अभिसमयो का पालन इस कारण से होता है कि उनके पीछे परम्परा और जनमत की शक्ति है। वे इस प्रकार के सम्मान सहिता अथवा खेल के नियम हैं, जिनका पालन

होना ही चाहिए।[1] ग्रॉग और जिंक का मत भी यही है। वे कहते हैं कि राष्ट्र आशा रखता है और उसे यह आशा रखने का अधिकार है कि पार्लियामेण्ट प्रति वर्ष आहूत हो और यदि दूसरा उदाहरण लिया जाय तो जिस मन्त्रिमण्डल का कॉमन सभा में बहुमत न रहे वह त्याग पत्र दे दे या देश से अपील करे। यह सच है कि यदि सुस्थापित और प्रतिष्ठित अभिसमयों का उल्लंघन हो तो देश में विरोध का तूफान उठ खड़ा होगा। अतएव सरकार और विरोधी दल दोनों ही इस बात के लिए उत्सुक रहते हैं कि वे अभिसमयों का पालन करें जिससे उन्हें निर्वाचन के समय शर्म न उठानी पड़े। इस दृष्टि से सांविधानिक प्रथाओं की रक्षा जनता द्वारा होती है।

अभिसमयों के पालन के लिए एक और कारण भी उत्तरदायी है, वह है 'उनकी उपयोगिता'। व्यावहारिक दृष्टि से अनेक अभिसमय अत्यन्त उपयोगी हैं। यदि उनका उल्लंघन किया जाय तो संसदात्मक शासन का ही अन्त हो जायेगा। यदि कोई दुराग्रही राजा मन्त्रिमण्डल के परामर्श को अस्वीकार कर दे तो इसका परिणाम यह होगा कि मन्त्रिमण्डल त्याग पत्र दे देगा। ऐसा करने पर यदि राजा विरोधी दल के नेता को मन्त्रिमण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित करे तो ऐसा मन्त्रिमण्डल चल न सकेगा। राजा के लिए दूसरा विकल्प यह हो सकता है कि वह कॉमन सभा को विघटित कर दे और नये चुनाव कराये। चुनाव इस आधार पर लड़ा जायेगा कि राजा ने अपनी शक्तियों का दुरुपयोग किया है। अतएव निर्वाचक-मण्डल उसके कार्य का समर्थन नहीं करेगा और राजा के समक्ष विषम स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। ऐसे राजा को दलगत राजनीति से ऊपर और निष्पक्ष न समझा जायेगा। उसके कार्य का परिणाम राजतन्त्र का अन्त हो सकता है। इसी प्रकार का कोई भी मन्त्रिमण्डल कॉमन सभा के बहुमत के समर्थन को खोकर सत्तारूढ़ नहीं रह सकता। पार्लियामेण्ट चाहे तो अभिसमयों को समाप्त कर सकती है, किन्तु वह भी उनकी उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए ऐसा कार्य न करेगी। इसलिए अन्तिम विश्लेषण में यह पता लगता है कि सांविधानिक अभिसमयों की वैधता राजनीतिक वास्तविकताओं द्वारा निर्धारित होती है। इस बात का प्रमाण यह है कि यदि किसी महत्त्वपूर्ण अभिसमय का उल्लंघन होता है तो पार्लियामेण्ट उसे कानूनी रूप दे देती है। बहुत समय से यह एक परम्परागत अभिसमय था कि लार्ड सभा कॉमन सभा द्वारा पास किये गये किसी वित्तीय विधेयक को अस्वीकार न करे, परन्तु 1909 में लार्ड सभा ने लायड जार्ज के बजट को अस्वीकार करके इस अभिसमय को भंग किया, फलतः 1911 का पार्लियामेण्ट एक्ट बना, जिसके द्वारा लार्ड सभा की शक्तियाँ अत्यधिक सीमित कर दी गयी।

अभिसमयों के प्रकार—ब्रिटेन के संविधान में अभिसमयों की संख्या बहुत बड़ी है। ग्रीव्ज ने उन्हें तीन प्रकार का बताया है पहला, पार्लियामेण्ट की सर्वोच्चता के सिद्धान्त के प्रकाश में बहुत से अभिसमय साधारण मार्ग दर्शन अथवा सुविधा के नियम हैं जो पार्लियामेण्ट और कार्यपालिका के बीच सामंजस्य उत्पन्न करते हैं। उदाहरण के लिए, केबिनेट अपनी नीति और शासन कार्यों के लिए पार्लियामेण्ट के लिए उत्तरदायी है, जिस दल का कॉमन सभा में बहुमत होता है, उसी के नेता पदारूढ़ होते हैं। इन अभिसमयों का पालन इस कारण से होता है कि उनके उल्लंघन से शासन-संचालन में बड़ी असुविधा होगी। दूसरे, कुछ अभिसमय ऐसे हैं जिनका उद्देश्य एक ओर सरकार और पार्लियामेण्टरी कार्यवाही तथा दूसरी ओर सरकार, जनमत अथवा निर्वाचक मण्डल के निर्णय के बीच सामंजस्य स्थापित करना है। इस प्रकार के अभिसमयों के दो उदाहरण ये हैं—(1) कोई भी सरकार ऐसा कानून, जिसके बारे में घोर प्रवाद (keen controversy) हो तब तक नहीं बनायगी जब तक कि सत्तारूढ़ दल उसके पक्ष में निर्वाचक मण्डल का स्पष्ट आदेश (mandate) न प्राप्त कर ले। (2) यदि कोई मन्त्रिमण्डल कॉमन सभा को विघटित कराके नया

[1] In the main the conventions are observed because they are a code of honour They are as it were the rules of the game —A Lowell *The Government of England* p 12

निर्वाचन कराता है, किन्तु निर्वाचक मण्डल उस मन्त्रिमण्डल का समर्थन नही करता तो ऐसे मन्त्रिमण्डल को दूसरी बार पार्लियामेण्ट को विघटित कराने का अधिकार नही है । तीसरी श्रेणी मे साधारण प्रकार के ऐसे समझौते (understandings) है जिनका उद्देश्य किसी सस्था विशेष की काय प्रणाली को अधिक सुगम बनाना है । इस प्रकार के अभिसमयो के ये उदाहरण हैं—(1) जब लाड सभा अपीलीय न्यायालय के रूप मे बैठता है तो कानूनी लार्डों के अतिरिक्त कोई अन्य लाड उसकी कायवाही मे भाग नही लेता । (2) कॉमन सभा मे विरोधी दल को यह आश्वासन है कि उसे अपने मत की अभिव्यक्ति का पर्याप्त अवसर मिलेगा । एक अन्य आधार पर अभिसमयो को चार समूहो मे रखा जा सकता है

(क) राजा से सम्बन्ध रखने वाले—इस समूह मे प्रमुख ये है—(1) राजा को प्रतिवप पार्लियामेण्ट को आहूत (summon) करना आवश्यक है । (2) पार्लियामेण्ट के दोना सदनो द्वारा पास किये गये विधेयको पर हर राजा को अनुमति (assent) देनी होती है । (3) मन्त्रिमण्डल का निर्माण करने के लिए राजा कॉमन सभा म बहुसख्यक दल के नेता को आमन्त्रित करता है । (4) पार्लियामेण्ट (व्यवहार मे कॉमन सभा) के प्रति उत्तरदायी किसी मन्त्री के परामश पर ही राजा कोई काय करता है, अन्यथा नही । (5) प्रधानमन्त्री के परामश पर ही राजा कॉमन सभा का विघटन करता है ।

(ख) केबिनेट पद्धति से सम्बन्ध रखने वाले—(1) केबिनेट सामूहिक रूप से पार्लियामेण्ट (व्यवहार म कॉमन सभा) के प्रति उत्तरदायी है । (2) कामन सभा का समथन अथवा बहुमत का विश्वास खोने पर मन्त्रिमण्डल को त्याग पत्र देना होता है, वह चाहे तो राजा को कॉमन सभा को विघटित करने का परामश दे सकता है ।

(ग) पार्लियामेण्ट से सम्बन्ध रखने वाले—(1) कॉमन सभा का अध्यक्ष निदलीय होता है अर्थात् दलबन्दी से अलग रहता है । (2) कॉमन सभा किसी वित्तीय विधेयक पर तभी विचार करती है जबकि उसे राजा (अर्थात् केबिनेट) की सिफारिश पर पेश किया जाये । (3) कामन सभा अनुदान की माग (demand for grant) मे कमी कर सकती है और उसे अस्वीकार कर सकती है, किन्तु उसमे वृद्धि नही कर सकती । (4) कानूनी लार्डों के अतिरिक्त अन्य लाड उच्च सदन की न्यायिक कायवाही म भाग नही लेते । (5) यदि कॉमन सभा मे किसी विधेयक या प्रस्ताव पर बराबर मत आयें तो अध्यक्ष अपना निर्णायक मत (casting vote) वतमान स्थिति को बनाये रखने (status quo) के पक्ष मे देता है ।

राष्ट्रमण्डल के सम्बन्ध मे अभिसमय—(1) किसी भी उपनिवेश पद प्राप्त अथवा स्वतन्त्र डोमीनियन के शासन सम्बन्धी मामला मे राजा ब्रिटेन के मन्त्रिमण्डल के परामश के स्थान पर उसी डोमीनियन के मन्त्रिमण्डल की मन्त्रणा के अनुसार काय करता है । (2) पार्लियामेण्ट किसी डोमीनियन की राय के बिना उसके सम्बन्ध मे कोई कानून नही बना सकती ।

ग्रेट ब्रिटेन की भाति अन्य राज्यो मे भी अभिसमयो का विकास हुआ है । सयुक्त राज्य अमरीका का तो सविधान अधिकाशत लिखित है, फिर भी वहा अनेक अभिसमयो का विकास हुआ है । वास्तव मे, सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान के विकास मे सविधिया (statutes), न्यायिक निणयो (judicial decisions) आदि के साथ मिलकर अभिसमयो ने सविधान के विकास मे महत्त्वपूण भाग दिया है । इस सम्बन्ध मे मुनरो ने लिखा है 'व्यक्ति के लिए जैसे आदत है, वैसे ही राज्य के लिए चलन है । राष्ट्र भी मनुष्यो की तरह बहुत से काय एक ही ढग से करने लगते हैं । आदत से ही चलन पड जाता है । इस प्रकार अमरीका म लिखित सविधान के ऊपर पिरामिड के समान राजनीतिक चलनो का एक समूह बन गया है । इसने अमरीकनो को काफी मात्रा मे एक अलिखित सविधान दिया है ।

कुछ महत्त्वपूण उदाहरण ये हैं—(1) सविधान में दलों का कोई उल्लेख नहीं है, फिर भी

संविधान निर्माताओं को यह आशा थी कि दलों का विकास न होगा, किन्तु आजकल अमरीकी संविधान को दलों के महत्वपूर्ण भाग के बिना समझना भी सम्भव नहीं है। अब तो दलीय व्यवस्था को विनियमित करने के लिए कई कानून भी बन गये हैं, उनकी उत्पत्ति और विकास वास्तव में प्रथाओं द्वारा हुए हैं। (2) संविधान में कांग्रेस की समितियों का भी उल्लेख नहीं है परन्तु अब विधि निर्माण कार्य बड़ी सीमा तक उनके द्वारा नियन्त्रित है। (3) संविधान में लिखा है कि प्रतिनिधि सदन अपने अध्यक्ष का चुनाव करेगा, परन्तु प्रथा यह पड़ गयी है कि बहुमत दल का कॉकस (caucus) या सम्मेलन उनकी छाँट करता है और सदन उसका अनुगमन कर देता है। (4) संविधान का उद्देश्य स्पष्टतया यह प्रतीत होता है कि राष्ट्रपति का चुनाव (अप्रत्यक्ष रूप से) राज्यों की विधायिकाओं द्वारा चुने हुए निर्वाचकों (electors) द्वारा हो, किन्तु शीघ्र ही यह प्रथा पड़ गयी कि निर्वाचकों का चुनाव दलीय आधार पर होने लगा और अब वे राष्ट्रपति के चुनाव में दलीय आदेशों के अनुसार मत देते हैं। अतः व्यवहार में राष्ट्रपति का चुनाव एक प्रकार से प्रत्यक्ष रूप में ही होने लगा है। (5) यह प्रथा पड़ गयी थी कि कोई व्यक्ति दो बार से अधिक राष्ट्रपति पद पर न रहे, परन्तु फ्रैंकलिन रूजवेल्ट ने इस प्रथा को तोड़ दिया, जिसके कारण बाद में इस उद्देश्य से संविधान में संशोधन किया गया। (6) प्रतिनिधि सदन के सदस्य उसी निर्वाचन क्षेत्र से खड़े होते हैं जिनकी सूची में उनका नाम होता है (rule of residence)। (7) राष्ट्रपति द्वारा केबिनेट के सदस्यों की छाँट पर सीनेट साधारणतया अपनी स्वीकृति दे देती है। (8) राज्यों में संघीय अधिकारियों की नियुक्ति राष्ट्रपति सीनेट में उस राज्य के अपने दल के प्रतिनिधियों के परामर्श से करता है, इसे ही सीनेटोरियल कर्टसी (senatorial courtesy) कहते हैं। (9) राष्ट्रपति की केबिनेट का विकास भी प्रथा का ही फल है और राष्ट्रपति केबिनेट का निर्माण करना न चाहे तो उसके विरुद्ध कोई कानूनी अथवा सांविधानिक प्रश्न नहीं उठा सकता।[1] (10) कांग्रेस की समितियों के सभापति (बहुमत दल से) ज्येष्ठता के नियम (seniority rule) के अनुसार बनते हैं। यह ज्येष्ठता आयु की नहीं वरन् समिति की सदस्यता (length of continuous service of the committee) की होती है।

2 विशिष्ट वर्ग

(The Elite or Elite Structures)

इलीट (Elite) शब्द का अर्थ चुना हुआ अथवा जनसमुदाय का छँटा हुआ वर्ग है। इसका अभिप्राय यह है कि यद्यपि अधिकतर मनुष्य अपने को सम (equal) मानते हैं, क्योंकि वे नागरिक अधिकार रखते हैं अथवा वे पराधीन देश में अधीन (subject) हैं किन्तु प्रत्येक देश में कुछ व्यक्तियों को शासन व समाज में विशेषाधिकार (privileges) या सामाजिक पद (social status) प्राप्त होता है, उन्हें जनसाधारण की तुलना में उच्च या विशिष्ट वर्ग के सदस्य समझा जाता है। वास्तव में, किसी भी समाज में उसके मूल्यों के अनुसार कई प्रकार के विशिष्ट जन या वर्ग हो सकते हैं। इस प्रकार किसी भी राज्य में राजनीतिक विशिष्ट जन या वर्ग (political elites) के अतिरिक्त धन, ज्ञान व सामाजिक सम्मान प्राप्त विशिष्ट वर्ग होते हैं। साधारण शब्दों में, हम कह सकते हैं कि ईसाई देशों में पादरी वर्ग (priests) और भारत में ब्राह्मण (पुजारी वर्ग) धार्मिक विशिष्ट वर्ग हैं। ऐसे ही धनी व्यक्ति धन के आधार पर विशिष्ट वर्ग हैं।

परन्तु प्रायः प्रत्येक समाज में कुछ विशिष्ट जन सभी मूल्यों की दृष्टि से उच्च स्थान रखते हैं उन्हें हम सामान्य रूप में *'विशिष्ट-जन या वर्ग' (The Elite of the society)* कह

[1] The American Cabinet like the English is a product of custom rather than of law the agency remains to this day so purely a matter of custom that if some President should decide to dispense with it altogether not a constitutional or legal question could be raised concerning his right to do so —F A Ogg *Aspects of American Government* pp 23-25

सकते हैं। प्रजातन्त्रात्मक देशो मे शासन जन प्रतिनिधियो द्वारा सचालित होता है, उनका निर्वाचन अति व्यापक आधार पर जनसाधारण द्वारा किया जाता है। विधायकों तथा स्थानीय निकायो के निर्वाचित प्रतिनिधियो से मिलकर राजनीतिक विशिष्ट वग बनता है। जिन देशो मे प्रजातन्त्रात्मक पद्धति नही है, वहाँ राजनीतिक विशिष्ट वग का आधार काफी सकुचित होता है, वे कुछ उच्च सामाजिक वर्गों, धनिक वग अथवा कुलीन परिवारो से ही निकलते हैं। शासन सत्ता का प्रयोग एक ओर जन प्रतिनिधि करते हैं और दूसरी ओर वे अधिकारी जिन्हे प्रतियोगी परीक्षा (competitive examination) या किसी अन्य प्रकार से छाँटा जाता है। इन्ही अधिकारियो और उनके अधीन बहुसख्यक कमचारियो से मिलकर किसी राज्य का अधिकारी वग (bureaucracy) बनता है।

सभी प्रकार के राजनीतिक सत्ताधारी—जन प्रतिनिधि अथवा राजा व शासको द्वारा विभिन्न पदो पर नियुक्त सत्ताधारी और प्रशासन अधिकारियो से मिलकर राज्य को राजनीतिक विशिष्ट वग (political elites) बनते हैं। सच तो यह है कि 'इलीट' (elite) शब्द का प्रयोग प्रजातन्त्रात्मक देशो मे जनप्रिय नही रहा। नाजी तथा अन्य प्रजातन्त्रात्मक आन्दोलनो के सचालको ने इस शब्द को विशेष रूप से अपनाया और उन्होने इसका सत्ता के लिए सघष मे एक शस्त्र के रूप में प्रयोग किया। उनके अनुसार तो विशिष्ट वग मे वे ही व्यक्ति सम्मिलित किये जा सकते है जिनमे शासन करने की योग्यता हो, अर्थात् जनसाधारण (the masses) इस योग्य नही होते।

किसी भी समाज म ऐसे विशिष्ट जनो या वर्गों का ठीक प्रकार से जान लेना (indentifying the elites) उसकी राजनीतिक पद्धति म राजनीति के यथाथ रूप को समझने के लिए आवश्यक है, परन्तु 'इलीट' की धारणा का प्रयोग बृहत् अथ मे करना चाहिए। राजनीतिक विशिष्ट वग म किसी समय पदो पर आसीन सभी सत्ताधारियो और सरकारी अधिकारियो के अतिरिक्त उन व्यक्तियो को भी सम्मिलित करना चाहिए जो बीते वर्षों मे महत्त्वपूण पदो पर आसीन रहे हो और भावी राजनीतिक नेताओ को भी, क्योकि ये सभी राजनीति को प्रभावित करते हैं। इतना ही नही, विरोधी पक्ष के सक्रिय नेताओ तथा विभिन्न राजनीतिक दलो के नेताओ व हित समूहो के नेताओ को भी विशिष्ट वग म सम्मिलित करना चाहिए। अस्तु, अति बृहत् अथ मे राजनीतिक विशिष्ट वग मे व सभी सम्मिलित हैं जो लगभग एक पीढी के काल मे निणय करने को प्रभावित करते हैं।[1]

विकासशील राष्ट्रो (developing nations) मे उनके नेतृत्व का चरित्र बहुत सीमा तक उनके ध्येयो और आधुनिकीकरण के माग को निर्धारित करता है। पराधीन देशो मे शासक राष्ट्रो के प्रशासक (colonial administrators) देश के परम्परागत नेताओ और आर्थिक विशिष्ट वर्गों से मिलकर शासन करते थे। हाल ही मे स्वतन्त्र हुए राज्यो मे, राष्ट्रीय विशिष्ट वर्गों (nationalist elites) ने किसी चमत्कारिक नेता के नेतत्व मे स्वाधीनता से पूव तथा उपरान्त शासन सत्ता सम्भाली। परन्तु उन राज्यो मे परम्परागत विशिष्ट वग अन्य प्रकार के नताओ के साथ मिलकर फिर राजनीति के क्षेत्र म प्रवेश करने का प्रयास कर रहे है।

परम्परागत विशिष्ट वर्गों की शक्ति इन पर आधारित है—प्रथा, धम, भूमि, परिवार तथा अन्य स्थापित सास्कृतिक नमूने। परन्तु आधुनिक काल म धार्मिक विशिष्ट वग की शक्ति क्षीण हुई है, फिर भी इस्लामी व बौद्ध देशो मे अभी तक उनका प्रभाव बहुत है। सामन्त वग अथवा कुलीन वग (nobility) की शक्ति भी अधिकतर देशो मे कम हुई है। जबकि लैटिन अमरीकी देशो म सैनिक विशिष्ट वर्गों का मेल सामान्यत रूढिवादियो अथवा अनुदारवादियो (conservatives)

[1] 'In other words in the broadest sense a political elite includes those who over a span of time of perhaps a generation can have a marked effect on decision making —Lasswell et al, *The Comparative Study of Elites*

से है, एशिया व अफ्रीका के अधिकतर देशो मे 'सैनिक नेतृत्व उच्च शिक्षा प्राप्त, प्रगतिशील और राष्ट्रवादियो से मिलकर बना है। प्रजातन्त्र और विकेन्द्रीकरण की प्रगति के साथ भारत मे नये ग्रामीण विशिष्ट वर्गों (rural elites) का उदय हुआ है।

3 अधिकारी-तन्त्र अथवा अधिकारी वर्ग (Bureaucracy)

अधिकारी-तन्त्र का अर्थ है 'ब्यूरो' द्वारा शासन। लास्की के शब्दो मे, 'ब्यूरोक्रेसी शब्द को उस शासन पद्धति के लिए लागू किया जाता है जिसका नियन्त्रण पूर्णतया सरकारी अधिकारियो के हाथो मे हो और उनकी शक्ति से साधारण नागरिको की स्वतन्त्रताओ को खतरा हो।' ऐसे शासन की विशेषतायें ये होती हैं—प्रशासन मे नियमो (routine) का पालन, निर्णय करने मे अत्यधिक सकोच। कुछ अति के मामलो मे, अधिकारी वर्ग एक वशानुगत वर्ग बन सकता है, जो शासन को अपने हित मे ढालने का प्रयत्न करता है।' इसी को लाल फीताशाही (red tapism) भी कहते हैं तथा नौकरशाही भी, यदि शासन की नीति निर्धारित करने का कार्य भी अधिकारी वर्ग के हाथ मे हो। पराधीन भारत मे इसी प्रकार की नौकरशाही बहुत समय तक कायम रही।

शासन-पद्धति के रूप मे अधिकारी वर्ग के दो अर्थ हैं—बृहत् अर्थ मे, सरकारी कार्मिक (government personnel) की कोई भी पद्धति और सकुचित अर्थ मे, ऐसी कार्मिक पद्धति जिस पर जन प्रतिनिधियो का प्रभावी नियन्त्रण न हो। आजकल प्रजातान्त्रिक राज्यों मे इसे उत्तरदायी अधिकारी वर्ग (responsible bureaucracy) कहते हैं। परन्तु सकुचित अर्थ मे, अधिकारी वर्ग को अनेक देशो मे ऐतिहासिक कारणो तथा उसके कार्य करने के ढग के कारण बुरी अथवा घृणित दृष्टि से देखा जाता है। मैक्स वेबर (Mex Weber) ने अधिकारी वर्ग के आदर्श नमूने (ideal type bureaucracy) के बारे मे कहा कि कानूनी सत्ता के प्रयोग का विशुद्ध नमूना वह है जिसमे प्रशासन हेतु अधिकारी वर्ग का प्रयोग किया जाता है। सगठन का सर्वोपरि अधिकारी अपना पद चुनाव, कानूनी आधार अथवा वशानुगत आधार पर धारण करता है। उसके अधीन सम्पूर्ण प्रशासनिक अधिकारी व कर्मचारी वर्ग के सदस्य निम्नलिखित आधार पर नियुक्त किये जाते हैं तथा अपना कार्य करते हैं (1) वे वैयक्तिक रूप से स्वतन्त्र होते है और केवल अपने सरकारी दायित्वो के लिए उच्च सत्ताधिकारी के अधीन होते हैं। (2) वे एक स्पष्ट रूप से पारिभाषित पद सोपान (hierarchy of offices) मे सगठित होते हैं। (3) प्रत्येक पद की कानून द्वारा क्षमता पारिभाषित होती है। (4) पदो पर नियुक्ति स्वतन्त्र छाँट द्वारा सविदात्मक सम्बन्ध (contractual relationship) के आधार पर होती है। (5) उन्हे पदो के लिए आवश्यक योग्यताओं के आधार पर छाटा अथवा नियुक्त किया जाता है। (6) उन्हें नियत वेतन, पेन्शन आदि दिये जाते हैं। (7) किसी भी पद पर काम करने वाले व्यक्ति का मुख्य कार्य उस पद के कर्तव्यो से सम्बन्धित होता है। (8) सरकारी सेवा उनके लिए एक आजीवन व्यवसाय (career) होता है। (9) कर्मचारी व अधिकारी कठोर अनुशासन के अधीन होते हैं।

परन्तु अधिकारी-तन्त्र की विभिन्न आधारो पर आलोचना की गयी है, जिनमे से मुख्य ये हैं पहला, प्रजातन्त्रो मे भी मन्त्रियो के उत्तरदायित्व के पीछे सरकारी अधिकारी अति महत्वपूर्ण कार्य करते हैं और व्यापक विवेक (wide discretion) का प्रयोग करते हैं। एक आलोचक के अनुसार उच्चतर नागरिक सेवक 'स्थायी राजनीतिक नेता' (permanent politicians) होते हैं। रैमजे म्यूर कहता है कि दफ्तरशाही मन्त्रियो के उत्तरदायित्व की ओट मे पनपती-फूलती है। शासन मे नागरिक सेवा का स्थायी प्रभाव एक प्रधान तथ्य है। दूसरा, प्रजातन्त्र मे अपने काम करने की विधि के आधार पर अधिकारी वर्ग की आलोचना न्यायोचित है क्योकि उनमे नियमो के पालन के प्रति बड़ा लगाव होता है, जिसका परिणाम लालफीताशाही है। तीसरा, नियमो के

पालन के लिए अत्यधिक लगाव होने के कारण अधिकारियों मे नये प्रयोगो व कार्यों के लिए पहल व साहस की बहुत कमी रहती है। कानून पालन के प्रति गहरी भावना के गुण से उनमे एकरूपता की प्रवृत्ति का विकास होता है, जिसके परिणामस्वरूप उनमे सहानुभूति का अभाव और कठोरता जन्म लेते हैं। अनुत्तरदायी अधिकारी तन्त्र मे अधिकतर अधिकारियो के व्यवहार मे अकड और अधिकारवाद (authoritarianism) आ जाते है। रॉबर्ट मिचेल्स ने लिखा है कि 'अधिकारी तन्त्र व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का कसम खाया हुआ शत्रु है और आन्तरिक नीति के मामलो मे सभी प्रकार के साहसपूर्ण पहल का भी।'[1]

परन्तु अधिकारी वर्ग के पक्ष मे यह कहना उचित है कि प्रत्येक राज्य मे प्रशासन सदा ही नागरिक सेवको के हाथ मे रहा है और आज तो प्रशासन का रूप अति विस्तीर्ण हो गया है। उसके साथ अधिकारी वर्ग का महत्त्व भी बहुत बढा है। अब तो अधिकतर प्रगतिशील राज्यो मे सामाजिक और आर्थिक विकास तथा परिवर्तन का एक अति महत्त्वपूर्ण और आवश्यक साधन अधिकारी वर्ग है। साथ ही, प्रजातन्त्रात्मक राज्यो मे अधिकारी वर्ग पर जनता के निर्वाचित मन्त्रियो का नियन्त्रण रहता है और नीति निर्धारण का कार्य मुख्यत मन्त्रियो का है, अत अधिकारी वर्ग को अनुत्तरदायी नही समझना चाहिए और उनके प्रति पुराने घृणा के विचार व भावो को छोडकर देश के विकास मे उनसे पूरा योग प्राप्त करना चाहिए।

4 जनमत
(Public Opinion)

जनमत क्या है ?

जनमत (Public Opinion) की धारणा—जनमत की धारणा और इसकी शासन मे भूमिका 'राजनीतिक गतिविज्ञान' (political dynamics) के सबसे अधिक प्रवादपूर्ण विषयो मे से एक है। आजकल प्रजातन्त्र पर लिखा गया साहित्य राजनीतिक प्रक्रिया को अधिकाशत जनमत के शब्दो में ही युक्तियुक्त ठहराता है। प्रजातन्त्रात्मक दर्शन के अधिक व्यापक रूप से स्वीकार किये जाने के फलस्वरूप ही जनमत के प्रारम्भिक सिद्धान्त (early theory) की रचना हुई, जिसके परिणामस्वरूप ये निष्कर्ष निकले (1) जनता सार्वजनिक नीति मे दिलचस्पी रखती है, (2) जनता सूचना से अवगत रहती है, (3) जनता सार्वजनिक प्रश्नो पर मनन करके युक्तिसगत निष्कर्षों पर पहुँचती है, (4) इस प्रकार से बने युक्तिसगत मत को सम्पूर्ण समाज मानता है, (5) जनता इस प्रकार से निष्कर्ष पर पहुँच जाने के बाद अपनी इच्छा को मतदान के समय तथा अन्य तरीको से बता देती है, (6) जनता की इच्छा अथवा बहुसख्या की इच्छा को कानूनो मे समाविष्ट किया जाता है, और (7) निरन्तर सतर्कता और आलोचना बुद्धिसगत जनमत को सुनिश्चित बनाये रखेंगे।[2]

जनमत के बारे मे उपर्युक्त परम्परागत धारणा को व्यापक रूप से स्वीकार किया गया था। परन्तु आज के मनोविज्ञान और समाजशास्त्र इस अर्थ मे जनमत को अस्वीकार करते हैं। तथ्य तो यह है कि जनसाधारण के मत के अनुसार शासन के सचालन की वाछनीयता को ही आज चुनौती दी जाती है। अब जनमत के बारे मे भिन्न मत है। लॉवेल कहता है 'समुदाय का मत कभी भी एकमत नही होता, यह विभाजित होता है। किसी मत को तभी जनमत कहा जा सकता है जबकि उसे कम से कम कुल समुदाय की बहुसख्या स्वीकार करती हो, और बहुमत को अल्पमत स्वेच्छा से विश्वास के रूप मे स्वीकार करे, बल-प्रयोग के भय से नही। यदि अल्पसख्या

[1] Robert Michels *Political Parties* p 189
[2] Rodee et al *Introduction to Political Science* p 368

सहमति न दे या उसे अनिच्छा से दे तो उसे जनमत नही कहा जा सकता।'[1]

ब्राइस ने अपने महान् ग्रन्थो 'Modern Democracies' और 'The American Commonwealth' के लिखने से पूव जनमत के निर्माण की प्रक्रियाओ के बारे मे बडी अनुभव मूलक खोजबीन की और वह इस निष्कष पर पहुँचा कि सावजनिक नीति के मामलो मे जनता वास्तव मे बहुत कम दिलचस्पी लेती है। विभिन्न प्रश्नो पर, सामान्य रूप म, अपेक्षाकृत छोटे और हित रखने वाले व्यक्ति समूह अपने मत का निर्धारण करते हैं और वे यह भी प्रयत्न करते हैं कि उनके मत को अधिक व्यापक आधार पर जनता स्वीकार कर ले। वाल्टर लिपमैन (Walt Lipmann) ने अपने दो गहन अध्ययनो 'Public Opinion' और 'Phantom Public' म मत निर्माण प्रक्रिया म मनुष्य और उसके पर्यावरण के बीच सम्बन्ध की ओर ध्यान आकर्षित किया है। उसके अनुसार मनुष्य के राजनीतिक विचार बहुत सीमा तक उस सूचना से निर्मित होते हैं जो कि वह उसे चारो ओर से घेरे हुए जगत से एकत्रित करता है। अधिकतर मामलो मे, आधुनिक जगत की जटिलता के कारण, व्यक्ति को सूचना एकत्रित करने के लिए दूसरी श्रेणी के साधनो (secondary sources) यथा समाचार पत्र व रेडियो आदि पर निर्भर रहना पडता है। परन्तु मानव कमियो और सचार प्रक्रिया म दोषो के कारण ये साधन उसे बाह्य जगत के बारे मे अपूर्ण सूचना देते हैं। इस प्रकार सावजनिक नीति के प्रश्नो पर युक्तियुक्त विचार करना सम्भव नहीं रहता। वास्तविकता के प्रत्यक्ष साधनो से दूर होने के कारण व्यक्ति अपूर्ण सूचना के जगत म रहता है। अपूर्ण सूचना और निर्णयो पर आधारित उसके मत 'उसी के मस्तिष्क से उपजे चित्र' (Th pictures of his head) होते हैं। वह विचारो के नियत नमूनो के ऊपर काय करता है, जिन्हे लिपमैन ने 'स्टीरियोटाइप्स (stereotypes) कहा है और उसकी विचार-प्रक्रिया इन्ही के अनुरूप होती है।

अत प्रश्न उठता है कि जनमत क्या है? सॉल्टो कहता है, 'इस शब्द का प्रयोग उन विचारो के लिए किया जाता है, जिन्हे मनुष्य अपने सामान्य जीवन के बारे म सोचते और चाहते है। राजनीति म जनमत केवल वही नही जिसे मनुष्य सोचते हैं और न ही उनके विचारा का वह भाग जिसे व सावजनिक रूप से व्यक्त करते हैं, वरन यह वह है जिसे वे व्यवहार म प्रभावी बनाना चाहते हैं।'[3] फाइनर कहता है कि अधिकतर परिभाषायें अग्रलिखित म स किसी एक सम्भव अथ को बताती हैं (1) जनमत तथ्य का रिकार्ड है, (2) जनमत विश्वास है और (3) जनमत इच्छा है। राजनीति का जनमत से इच्छा के रूप मे सबसे अधिक सम्बन्ध है।[4] गैटेल के शब्दो म 'जिसे सामान्यत जनमत कहा जाता है, उसकी इस आधार पर आलोचना की गयी है कि वह न तो सावजनिक है और न मत है। प्रचलित मत बहुधा अल्पसख्या अथवा हित रखने वाले वग अथवा उच्च नेताओ का मत होता है। जनसाधारण बहुधा उसके प्रति उदासीन अज्ञानी या गलत ढग स सूचित होत है। इस अर्थ म जनमत वास्तव म सावजनिक नही होता।'[5] इस मत का पहले ही विवेचन किया जा चुका है।

रूचेक (Roucek) कहता है 'जनमत एक प्रकार स सहमति के आधार पर बना मत (consensus) है जो कि किसी समय और स्थान पर प्रधान विरोधी मतो के आधार पर बनता है।' स्वाटज के शब्दो मे यह कहा जा सकता है कि 'जनमत दत्त क्षेत्र मे समस्या विशेष या प्रश्न पर अनेक व्यक्तियो की प्रतिक्रियाओ का निश्चित रूप धारण करना है। यह आवश्यक रूप मे, और सम्भवतया अधिकतर मामलो मे बहुसख्या का मत नही होता, वरन् अधिक सम्भावना यह है कि

[1] A L Lowell *Public Opinion and Popular Government* Chaps I and II
[2] Rodee et al *op cit* pp 370–72
[3] R. H Soltau *Introduction to Political Science* p 197
[4] H Finer *Theory and Practice of Modern Government* p 260
[5] R. G Gettell *Political Science* p 284

यह प्रभावी अथवा सगठित अल्पसख्या का मत होता है।'[1] जनमत मे चार बातें निहित हैं (1) जनता या सदस्यो का एक समूह होता है। (2) समूह के इन सदस्यो के सामने सामान्य हित के कुछ प्रश्न होते हैं, जिनके बारे मे वे एक दूसरे मे विचार विनिमय करते हैं, यद्यपि कई अवसरो पर उनमे मतभेद हो सकते हैं। (3) समूह का कोई एक नता या अधिक नेता होते है, जो दिये हुए समय पर महत्त्वपूण प्रश्नो के बारे मे मत निर्धारण का काय अपने ऊपर ले लेते है और यह काय भी कि वे समूह के अन्य सदस्यो के ध्यान को उस मत की ओर खीचे। (4) समूह के सदस्य उस मत को अगीकार कर लेते है और उस मत के द्वारा आवश्यक कायवाही मे सम्मिलित हो जाते है।

जनमत के कुछ महत्त्वपूण पहलू

जनमत के अध्ययन मे कई पहलू आते है (1) जनमत का माप (measurement), (2) विशिष्ट प्रश्नो के चारो ओर बने अनेक मता के बीच सम्बन्धो की परीक्षा, (3) जनमत की भूमिका, और (4) जनसाधारण पर प्रभाव डालने वाले सचार के साधनो (mass media of communication) के प्रभाव का विश्लेषण। परन्तु हम यहा पर केवल जनमत के माप और महत्त्व के बारे मे सक्षिप्त रूप मे ही कुछ बताना आवश्यक समझते है। सयुक्त राज्य अमरीका मे सावजनिक प्रश्नो पर मतो को जानने, उन्हें मापने तथा उनके आधार पर कुछ भविष्यवाणी करने के लिए तकनीके विकसित हुई है। उनमे सबसे अधिक महत्त्वपूण और उल्लेखनीय डा० जाज गैलप की मतदान के बारे म 'Gallup Poll' तकनीक या विधि है। डा० गैलप ने 1934 मे उस पर प्रयोग आरम्भ किया और अगले ही वप उसे अमरीका के जनमत सस्थान (American Institute of Public Opinion) से सम्बन्धित किया। यह सस्थान अपने द्वारा सचालित मतदान के परिणामो को समाचार-पत्रो को बेच देता है। फ्रास मे इसी प्रकार का सस्थान बना, जो अमरीकी सस्थान से सम्बन्धित हो गया, ब्रिटेन मे भी जनमत सर्वेक्षण का आरम्भ 1938 मे हुआ। परन्तु जमनी व कुछ अन्य देशो मे इस प्रकार से कराये गये मतदानो के परिणामो के प्रकाशन पर कडे प्रतिबन्ध लगाये गये, क्योकि इस पर आधारित परिणामो का वास्तविक मतदान क्रिया पर हानिकारक प्रभाव पडता है। परन्तु जाज गैलप के मतानुसार ये मतदान प्रजातान्त्रिक प्रक्रियाओ मे उपयोगी अशदान करते है। वे राजनीतिक नेताओ को जनमत के बारे मे अधिक से अधिक ठीक माप देते हैं, वे प्रजातन्त्रात्मक प्रक्रिया को अधिक गतिशील बनाते हैं, और वे इस बात का भी सकेत देते हैं कि जनसाधारण अच्छे निणय करते हैं, तदनुसार वे प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त का समथन करते हैं। साथ ही वे किसी भी समय के महत्त्वपूण सावजनिक प्रश्नो पर जनता व सरकार का ध्यान आकर्षित करते हैं।

उपर्युक्त बातो के आधार पर कहा जा सकता है कि जनमत की शासन और राजनीति के सचालन मे बडी महत्त्वपूण भूमिका है। प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्त के अनुसार तो शासन का सचालन ही जनमत के अनुसार होना चाहिए। अनेक प्रगतिशील देशो म तो जनमत के माप को नीति निर्धारण प्रक्रिया का आवश्यक अग बनाया गया है। 1975 म ग्रेट ब्रिटेन म इस प्रश्न पर लोक निणय (referendum) कराया गया कि उसे यूरोप के साझा बाजार (European Economic Community) का सदस्य बने रहना चाहिए अथवा नही। ऐसे ही अनेक देशो म महत्त्वपूण प्रश्नो पर जनमत-सग्रह (plebiscite) कराये जाते हैं। प्रजातन्त्रात्मक राज्यो के अतिरिक्त अन्य राज्यो मे भी जनमत का महत्त्व है, इसी कारण उनकी सरकारें जनसाधारण तक पहुँचने के लिए

[1] Public opinion may be characterized as the crystallization of the many individual reactions in a given area to a particular problem or issue It is not necessarily and probably in most instances is not the view held by the majority Rather it is very likely to be the view of an effective or organised minority —Willis G Swartz *American Governmental Problem* p 67

सचार के साधनो (mass media) का अपनी नीतियो व निणयो का समथन कराने हेतु प्रचार के साधन रूप मे व्यापक रूप से प्रयोग करते हैं। जनमत का महत्त्व तो अब विश्व सगठन भी मानने लगे हैं। इसी कारण प्राय सभी सरकारें जनमत को अपने पक्ष मे बनाये रखन के लिए विभिन्न प्रकार के उचित और अनुचित उपायो का प्रयोग करती हैं।

गतिशील राजनीति के क्षेत्र मे, जनमत का महत्त्व इस बात मे है कि यह सरकार के निणयो को प्रभावित करता है। जनमत चुनाव, नीति सम्बन्धी निणय या विधायिका द्वारा निर्मित कानून मे व्यक्त होता है। जब यह स्वीकार कर लिया जाता है कि राजनीतिक निणयो को जनमत पर आधारित किया जायगा तो जनमत का निर्माण करने व पता लगाने के लिए अनेक औपचारिक व अनौपचारिक अभिकरण सामने आ जाते हैं। जबकि औपचारिक भूमिका मे विधायिका, कार्यपालिका व न्यायपालिका का स्थान है। अनौपचारिक मे राजनीतिक नेताओ दलो व समूहो का बडा महत्त्व है। चार्ल्स मैरियम के मतानुसार जनमत के बारे मे साधारण प्रवृत्तियाँ (general trends) ये हैं (1) सामान्य मामलो म जनमत एक प्रभाव डालने वाली शक्ति है, यह माना जाता है। (2) प्राय सभी प्रकार की शासन पद्धतियाँ जनमत को आधुनिक शासन का आधार मानती है। (3) समूहो के मतो के ऊपर जनमत की मान्यता प्राप्त हो रही है। (4) सचार व प्रचार के विभिन्न साधनो का जनमत को प्रभावित करने हेतु व्यापक रूप से विकास किया जा रहा है।[1]

निष्कर्ष—प्रजातन्त्र में सावजनिक नीति के निर्माण मे लोकमत एक महत्त्वपूर्ण शक्ति है। जनमत का स्तर जितना ऊँचा होगा, उतना ही अधिक प्रजातन्त्र सफल होगा। जनमत के सबसे ऊचे स्तर को प्राप्त करने के लिए कुछ दशायें आवश्यक हैं (1) शिक्षण व्यवसाय के सदस्यो को पूण शैक्षणिक स्वतन्त्रता प्रदान करनी चाहिए। (2) ऐसे ही जनसचार के साधनो (media of mass communication) पर कम से कम प्रतिबन्ध रहने चाहिए। (3) राष्ट्रीय सुरक्षा को कोई हानि न पहुँचे, इस बात को सामने रखते हुए प्रत्येक नागरिक को निजी तथा सावजनिक रूप में स्थानीय प्रादेशिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नो के बार मे अपने मतो को अभिव्यक्त करने की अधिक से अधिक स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए।

जनमत का निर्माण

जनमत निर्माण व अभिव्यक्ति के विभिन्न साधनो मे हम अग्रलिखित को महत्त्वपूण समझते हैं (1) राजनीतिक दल और सघ, (2) सावजनिक सभायें या मच (forum or platform), (3) समाचार-पत्र (press), (4) शिक्षण सस्थायें व सघ, (5) सिनेमा, रेडियो व टैलीविजन, (6) विधायिकायें, और (7) सामाजिक व धार्मिक सघ। ये सभी जनमत के निर्माण मे योग देते हैं तथा उसे अभिव्यक्त भी करते हैं। ये अभिकरण यह काय किस प्रकार करत हैं, उसका विस्तृत विवेचन करन की यहाँ आवश्यकता नहीं है। फिर भी निम्नलिखित बातें जानने योग्य हैं।

प्रत्येक राजनीतिक दल (व सगठन) जनता क सामन सावजनिक सभाओ, पुस्तको, इश्तहारो सचार क अन्य साधनो द्वारा तथ्य, आँकडे और टिप्पणियाँ अथवा आलोचनायें रखते हैं, जिसस कि जनता उसके कायक्रम और दृष्टिकोण क औचित्य को समझ जाय। राजनीतिक दल चुनाव जीतन के लिए भी जनमत को अपने पक्ष मे ढालने का अधिक स अधिक प्रयत्न करता है। सावजनिक सभायें राजनीतिक विचारो की अभिव्यक्ति और प्रचार का बडा अच्छा साधन हैं। उनके द्वारा राजनीतिक दलो के कायक्रम और नेताओ के विचार बहुत बडी जनसंख्या तक पहुँचा जाते हैं। चुनाव के पूव तो सावजनिक सभाओ का प्रयोग जनता का समर्थन पाने के लिए बहुत बड पैमान पर किया जाता है। राजनीतिक सभाओ क अतिरिक्त अनक प्रकार के समूह और सघ

1 C. E Merriam Systematic Politics pp 316-17

भी सार्वजनिक प्रश्नो के ऊपर विचार विनिमय, वाद विवाद व गोष्ठी आदि के लिए सभाओ का प्रयोग करते हैं। कालिजो और विश्वविद्यालयो तथा धार्मिक सगठनो मे भी सावजनिक प्रश्नो पर विभिन्न सैद्धान्तिक परिषदो व सघो मे विचार विनिमय और वाद विवाद होता है। विधायिकाओ की कायवाही भी विशिष्ट प्रकार की सभाओ म की जाती है।

राजनीतिक नेताओ व दलो के विचारो तथा कायक्रमो, उनकी सभाओ की कायवाही आदि को समाचार-पत्रो म प्रकाशित किया जाता है, जिन्हे पाठको की बहुत बडी सख्या पढती है और उनसे कम या अधिक प्रभावित होती है। समाचार-पत्र जनसाधारण तक राजनीतिक सचार के सस्ते और सुलभ साधन हैं। परन्तु सरकार को यह देखना चाहिए कि वे सकुचित व साम्प्रदायिक विचारो का प्रसार न करें, साथ ही यह भी कि उनके दृष्टिकोण व सम्पादकीय लेख और टिप्पणियाँ पाठको को यथासम्भव सच्चे तथ्य और आँकडे तथा स्वस्थ विचार दें। इसी कारण समाचार-पत्रो पर कुछ थोडे से पूँजीपतियो का आधिपत्य बना रहना उचित नही है, किन्तु सरकार को उनकी स्वतन्त्रता मे कम से कम हस्तक्षेप करना चाहिए।

वतमान समय मे प्राय सभी प्रगतिशील राज्यो मे समाचार-पत्रो के व्यापक महत्त्व के साथ-साथ चलचित्र, रेडियो व टेलीविजन जैसे सचार के नये साधनो का महत्त्व बडी तेजी से बढ रहा है। वे मुख्यत मनोरजन का साधन हैं, किन्तु साथ ही साथ सूचना के प्रसारण और विचारो के प्रचार के भी बडे महत्त्वपूर्ण साधन बन गये हैं। सयुक्त राज्य अमरीका मे सचार के इन सभी साधनो को प्राय पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त है और उन पर सरकार का नियन्त्रण नगण्य है। ग्रेट ब्रिटेन मे रेडियो व्यवस्था एक स्वायत्तता प्राप्त निगम (British Broadcasting Corporation) के हाथ म है। भारत मे आकाशवाणी (All India Radio) और दूरदशन (television) व्यवस्था पर अभी तक केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण है, अत आलोचक उन्हे पूणतया स्वतन्त्र और निष्पक्ष साधन नही मानते। परन्तु यथाथ मे समाचार पत्रो, रेडियो व दूरदशन को समुचित मात्रा मे स्वतन्त्रता प्राप्त है। साम्यवादी व अन्य प्रकार के अधिनायकतन्त्री राज्यो मे सचार व प्रचार के प्राय सभी साधनो पर सरकार का कठोर नियन्त्रण रहता है, वहा विरोधी विचारो, आलोचनाओ व टीका टिप्पणियो के लिए समाचार पत्रो या रेडियो प्रसारण मे कोई स्थान नही है। विधायिकाओ की कायवाही प्राय सभी प्रमुख समाचार पत्रो, उनकी अपनी पत्रिकाओं *(journals) व रिपोर्टों मे भी प्रकाशित होती हैं जिन्हे अनेक व्यक्ति पढते हैं और वे विधायको के* मतो तथा विचारो से प्रभावित होते हैं।

पाश्चात्य देशो तथा पिछडे हुए अथवा कम विकसित देशो के जनमत मे बडा अन्तर है। पश्चिम के देशो मे अधिकाश जनता शिक्षित है और उन्हे विभिन्न प्रकार की स्वतन्त्रतायें तथा आर्थिक साधन काफी अच्छी मात्रा मे प्राप्त हैं, अत उन देशो मे जनमत स्वस्थ व प्रबुद्ध (enlightened) होता है। इसके विपरीत कम विकसित देशो मे अज्ञान, शिक्षा की कमी, निधनता व परम्परागत बातो के अधिक प्रवाह के कारण जनमत कुछ थोडे से नेताओ और राजनीतिक दलो का मत होता है, जिसे जनसाधारण स्वीकार कर लेता है। अत इन देशो मे जनमत वास्तव मे जनता का तथा जनहित मे नही होता, यह तो विशिष्टजनो या वर्गों का मत होता है। अत इन देशो मे जनमत निर्माण के साधनो का बडे पैमाने पर विकास होना चाहिए, जनता को अधिक से अधिक शिक्षित बनाया जाना चाहिए और राजनीतिक सचार के साधनो को व्यापक व सुलभ बनाना चाहिए।

एक उदाहरण—सयुक्त राज्य अमरीका मे जनमत निर्माण के अभिकरणो (agencies) और जनमत की वतमान स्थिति का अति सक्षिप्त वणन यहाँ दिया जाता है। उन्नीसवी शताब्दी म, चलचित्र और रेडियो के विकास से पूव समाचार पत्र जनमत के सबसे महत्त्वपूर्ण अभिकरण थे। यद्यपि अभी तक समाचार पत्र जनमत निर्माण का अकेला सबसे महत्त्वपूर्ण साधन है, किन्तु अब

एक औसत दर्जे का अमरीकी नागरिक समाचार पत्र पढने की अपेक्षा रेडियो का सुनने म अधिक समय व्यतीत करता है। देश मे जनमत के गुण (quality) पर समाचार-पत्रो व पत्रिकाओ द्वारा आशिक तथ्यो के प्रकाशित किये जाने तथा उनके विशिष्ट मोड व पक्षपातपूर्ण ढग से प्रकाशित किये जाने स बुरा प्रभाव पडता है। रेडियो के वृद्धिपूर्ण महत्त्व का इस बात स पता चलता है कि रेडियो पर समाचारो और टिप्पणियो के प्रसारणा (broadcasts) के सुनने वालो की सख्या बहुत बडी है। जबकि समाचार पत्रो की अपील प्रथमत उच्चतर शिक्षित व धनी वर्गो तक अधिक है, रेडियो की अपील छोटे स बौद्धिक समुदाय को छोडकर सभी वर्गो के सदस्यो तक है।

जनसाधारण तक सूचना पहुँचाने और उसके मनोरजन हेतु टेलीविजन इस समय सचार माध्यम के चोटी के साधनो म स्थान पा रहा है। इसका महत्त्व बढना स्वाभाविक ही है, क्योंकि इसमे रेडियो और चलचित्र का सुन्दर मेल है। विशेष रूप स राष्ट्रीय सम्मेलनो मे टेलीविजन का सूचना और मनोरजन के साधन रूप म दोहरा महत्त्व है। इसके कार्यक्रमो मे समूह वाद विवाद (panel discussions), क्विज, (quiz) और नगर बैठकें (town meetings) बडी लाभदायक हैं। रेडियो स भी बढकर अमरीका मे चलचित्रो का महत्त्व है। अन्य कम महत्त्वपूर्ण साधनो या माध्यमो (*mass madia*) मे से उल्लेखनीय है—पुस्तकें और पुस्तिकाएँ, कार्टून और कार्टूनो की किताबें, विभिन्न प्रकार के विज्ञापन आदि। जनमत का निर्माण करने वाली प्रमुख सस्थाएँ—परिवार, चर्च और स्कूल—पूर्वोक्त साधनो से प्रभावित होती है और जनमत निर्माण म महत्त्वपूर्ण योग भी देती हैं। विभिन्न कमियो और सीमाओं के बावजूद, सयुक्त राज्य अमरीका म जनमत सापेक्षत ऊँचे गुण का है। जनमत जानने के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्नो पर कराये गये जन मतदान (public polls) जनता के स्वस्थ निर्णयो के प्रतीक हैं।[1]

5 राजनीतिक सचार
(Political Communication)

सचार सिद्धान्त और सिबर्नेटिक्स का उपागम

जैसा कि आजकल अधिकतर राजशास्त्रियो मे प्रवृत्ति है कि वे अन्य शास्त्रो (विज्ञानो) स परिप्रेक्ष्य और कार्य की रूपरेखा (perspective and frame of reference) ग्रहण करते हैं कुछ वर्षो से अनेक विश्लेषणकर्ता विश्लेषण की एक ऐसी उपागम पर कार्य कर रहे हैं जिसका आधार मूल अभिमुख सचार सिद्धान्त और सिबरनेटिक्स (cybernetics)[2] है। ये दोनो ही क्षेत्र वैज्ञानिक विश्लेषण म सापेक्षत द्रुतगति से हो रहे विकास का प्रतिनिधित्व करते हैं। उन्हे दूसरे विश्व-युद्ध से बडी प्रेरणा मिली है। यह बात महत्त्वपूर्ण है कि इस उपागम का ध्यान विशेष रूप से निर्णयो के परिणामो पर नही बरन् निर्णय करने की प्रक्रियाओ (*process of decision making*) पर है। यह उपागम सभी बिन्दुओ पर गतिविज्ञान की समस्याओ पर बल देती है तथा निर्णय करने और सचार के साथ सम सूचना प्रवाह या मार्गो (information flows) के विभिन्न उपायो पर है। अस्तु, सूचना प्रवाह इस उपागम की आधारभूत इकाई है। परन्तु सूचना प्रवाह मे दो तत्त्व हैं—(1) सगत पद्धति के द्वारा सूचना के टुकडो के चलन म उत्पन्न यथार्थ प्रवाह (actual flow), और (2) व विभिन्न सरचनाएँ जो सूचना के इस प्रवाह को शक्ल देती हैं और जिसके होने वाले निर्णयो के लिए महत्त्वपूर्ण परिणाम निकलते हैं।

यह उपागम धारणाओ के समूह के सरल प्रस्तुतीकरण, वर्गीकीय सवर्गों और सगतता के

[1] Willis G Swartz, *American Governmental Problem* pp 69-70

[2] Comparative study of the automatic control system formed by the nervous system and brain and by mechanical electrical communication systems

आधारों (criteria of relevance) बहुत आगे निकल जाती है। ड्यूश (Karl W Deutsch) ने इस विश्लेषण से संगत कई परिकल्पनाओं (hypotheses) को विस्तार प्रदान किया है। उसके द्वारा निर्धारित उपागम ने परिकल्पनाओं को कार्यात्मक बनाने और संख्यागत विश्लेषण में लग जाने की दिशा में बड़ा काम किया है। इसकी प्रवृत्ति सूचना के प्रवाह और विभिन्न संरचनाओं में रूपों को केन्द्रीय बिन्दु बनाने की है, न कि उन दोनों के सार की। उदाहरण के लिए, उसकी उपागम व्यापार की संख्याओं, डाक के प्रवाहों के आकार और कूटनीतिक समझौतों की संख्या में रुचि बढ़ाती है। अन्य उपागमों की तुलना में इस उपागम के परिवर्त्य संख्यात्मक विवेचन के लिए अधिक उपयुक्त हैं। यह उपागम विभिन्न प्रक्रियाओं और गतिशील आन्दोलनों का स्पष्ट रूप में विवेचन करती है। अतः अन्य उपागमों की अपेक्षा परिवर्तन से सम्बन्धित प्रश्नों का यह अधिक अच्छी प्रकार से विवेचन करने योग्य है। इसमें स्व परिवर्तन, नवीनता और विकास का स्पष्ट विवेचन किया जाता है। अपनी क्रिया-विधियों और पर्यावरण के परिवर्तनों के उत्तर में निर्णय करने वाली क्रियाएँ अपने को पूर्णतया परिवर्तित कर लें, ऐसी सम्भावना है, और यह बहुत सी राजनीतिक प्रक्रियाओं के विश्लेषण में एक परिप्रेक्ष्य है।[1]

ड्यूश राज्य और राजनीतिक पद्धतियों को विभिन्न प्रकार के संगठनों के रूप में देखता है। उसका उद्देश्य सिबरनेटिक्स शास्त्र की धारणाओं और विधियों का प्रयोग राजनीतिक पद्धतियों के केवल अस्तित्व बनाये रखने के लिए ही नहीं वरन् विकास के लिए स्पष्टीकरण देना है और उन परिवर्तनों के परिणामों के बारे में भविष्यवाणी करना है जो पद्धतियों की संरचनाओं को प्रभावित करते हैं। उसके मतानुसार, राजनीति का सम्बन्ध ध्येयों की प्राप्ति से है। 'एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण धारणा जिसके लिए ड्यूश का दावा है कि वह उसकी उपागम को सन्तुलन उपागम (equilibrium approach) से भिन्न बनाती है, फीडबैक (feedback) की है। फीडबैक का अर्थ है संचारों का ऐसा जाल (communications network), जो सूचना के निवेश के उत्तर में कार्य को उत्पन्न करता है और जो अपने कार्य के परिणामों को उस सूचना में सम्मिलित करता है जिसके द्वारा यह बाद के व्यवहार को संशोधित करता है। उसका तर्क है कि फीडबैक की धारणा उसमें गतिशीलता के तत्त्वों को प्रविष्ट करती है जो अन्यथा एक स्थिर विश्लेषण रह जाता है।'[2] परन्तु यंग के मतानुसार, इस उपागम की आलोचना बहुधा इसके यांत्रिक (mechanistic) होने के लिए की जाती है तथा इस बात के लिए भी कि इसने मानव व्यवहार के प्रति इंजीनियरिंग दिग्विन्यास को विस्तार प्रदान किया है। सबसे बढ़कर बात यह है कि इसमें राजनीतिक व्यवहार को अधिकांशतः क्रिया के संकेतों के शब्दों में, संकल्पित करने और बाद में उन संकेतों का सूचना के प्रवाह, संचारों या निर्णयों में वर्णन करने की जोरदार प्रवृत्ति है।[3]

हाल के वर्षों में राजनीतिक संचार के अध्ययन में दिलचस्पी बढ़ रही है। राजनीतिक संचार के कार्य का विश्लेषण और उसकी तुलना विभिन्न राजनीतिक पद्धतियों की परीक्षा करने का एक दिलचस्प और उपयोगी उपाय बन गया है। आलमोण्ड और पोवल ने संचार व राजनीति के अग्रलिखित पहलुओं का विवेचन किया है (1) संचार की संरचनाओं के विभिन्न प्रकार, (2) संचार के माध्यमों के विभेद और रचना, और (3) अन्य राजनीतिक कार्य किये जाने के लिए संचार के नमूनों की निहित बातें (implications)।

सच तो यह है कि सभी प्रकार की मानव अन्तक्रिया में संचार अन्तग्रस्त होता है। जनसाधारण के माध्यम (mass media) यथा रेडियो और टेलीविजन आधुनिक समाज में सबसे अधिक विशेषीकृत एवं विभेदमय संरचनाएँ हैं। किन्तु संचार की संरचनाएँ पाँच प्रकार की हैं—

[1] O R. Young *Systems of Political Science* pp 49-58
[2] Davies and Lewis *Models of Political Systems* pp 71-76
[3] O R. Young, *op cit*, pp 59-60

एक औसत दर्जे का अमरीकी नागरिक समाचार पत्र पढने की अपेक्षा रेडियो का सुनने म अधिक समय व्यतीत करता है। देश मे जनमत के गुण (quality) पर समाचार पत्रा व पत्रिकाओ द्वारा आशिक तथ्यो के प्रकाशित किये जाने तथा उनके विशिष्ट मोड व पक्षपातपूर्ण ढग से प्रकाशित किये जाने से बुरा प्रभाव पडता है। रेडियो के वृद्धिपूर्ण महत्त्व का इस बात से पता चलता है कि रेडियो पर समाचारो और टिप्पणियो के प्रसारणा (broadcasts) के सुनने वालो की सख्या बहुत बढी है। जबकि समाचार पत्रा की अपील प्रथमत उच्चतर शिक्षित व धनी वर्गों तक अधिक है, रेडियो की अपील छोटे से बौद्धिक समुदाय को छोडकर सभी वर्गो के सदस्यो तक है।

जनसाधारण तक सूचना पहुँचाने और उसके मनोरजन हेतु टेलीविजन इस समय सचार माध्यम के चोटी के साधनो म स्थान पा रहा है। इसका महत्त्व बढना स्वाभाविक ही है, क्योकि इसमे रेडियो और चलचित्र का सुदर मेल है। विशेष रूप से राष्ट्रीय सम्मेलनो म टेलीविजन का सूचना और मनोरजन के साधन रूप मे दोहरा महत्त्व है। इसके कायक्रमो म समूह वाद विवाद (panel discussions), क्विज, (quiz) और नगर बैठकें (town meetings) बडी लाभदायक हैं। रेडियो से भी बढकर अमरीका मे चलचित्रो का महत्त्व है। अन्य कम महत्त्वपूर्ण साधनो या माध्यमो (mass madia) मे ये उल्लेखनीय हैं—पुस्तकें और पुस्तिकाएँ, कार्टून और कार्टूनो की किताबें, विभिन्न प्रकार के विज्ञापन आदि। जनमत का निर्माण करने वाली प्रमुख सस्थाएँ—परिवार, चच और स्कूल—पूर्वोक्त साधनो से प्रभावित होती हैं और जनमत-निमाण मे महत्त्वपूर्ण योग भी देती हैं। विभिन्न कमियो और सीमाओ के बावजूद, सयुक्त राज्य अमरीका मे जनमत सापेक्षत ऊचे गुण का है। जनमत जानने के लिए महत्त्वपूर्ण प्रश्नो पर कराये गये जन मतदान (public polls) जनता के स्वस्थ निणयो के प्रतीक हैं।[1]

5 राजनीतिक सचार
(Political Communication)

सचार सिद्धान्त और सिबरनेटिक्स का उपागम

जैसा कि आजकल अधिकतर राजशास्त्रियो मे प्रवृत्ति है कि वे अन्य शास्त्रो (विज्ञानो) से परिप्रेक्ष्य और काय की रूपरेखा (perspective and frame of reference) ग्रहण करते हैं, कुछ वर्षो से अनेक विश्लेषणकर्त्ता विश्लेषण की एक ऐसी उपागम पर काय कर रहे हैं जिसका आधार भूत अभिमुख सचार सिद्धान्त और सिबरनेटिक्स (cybernetics)[2] है। ये दोनो ही क्षेत्र वैज्ञानिक विश्लेषण मे सापेक्षत द्रुतगति से हो रहे विकास का प्रतिनिधित्व करते हैं। उन्हे दूसरे विश्व-युद्ध से बडी प्रेरणा मिली है। यह बात महत्त्वपूर्ण है कि इस उपागम का ध्यान विशेष रूप से निणयो के परिणामो पर नही वरन् निणय करने की प्रक्रियाओ (process of decision making) पर है। यह उपागम सभी बिन्दुओ पर गतिविज्ञान की समस्याओ पर बल देती है तथा निणय करने और सचार के साथ लगे सूचना प्रवाह या मार्गों (information flows) के विभिन्न उपायो पर है। अस्तु, सूचना प्रवाह इस उपागम की आधारभूत इकाई है। परन्तु सूचना प्रवाह मे दो तत्त्व हैं—(1) सगत पद्धति के द्वारा सूचना के टुकडो के चलने मे उत्पन्न यथाथ प्रवाह (actual flow), और (2) व विभिन्न सरचनाएँ जो सूचना के इस प्रवाह को शक्ल दती हैं और जिसके होने वाले निणयो के लिए महत्त्वपूर्ण परिणाम निकलते हैं।

यह उपागम धारणाओ के समूह के सरल प्रस्तुतीकरण, वर्गीकीय सवर्गों और सगतता के

[1] Willis G Swartz, *American Governmental Problem* pp 69-70

[2] Comparative study of the automatic control system formed by the nervous system and brain and by mechanical electrical communication systems

आधारो (criteria of relevance) बहुत आगे निकल जाती है। ड्यूश (Karl W Deutsch) ने इस विश्लेषण से सम्मत कई परिकल्पनाओं (hypotheses) का विस्तार प्रदान किया है। उसके द्वारा निर्धारित उपागम ने परिकल्पनाओं का कार्यात्मक बनाने और संख्यात्मक विश्लेषण में लग जाने की दिशा में बड़ा काम किया है। इसकी प्रवृत्ति सूचना के प्रवाह और विभिन्न संरचनाओं के रूपों को केन्द्रीय बिन्दु बनाने की है, न कि उन दोनों के सार को। उदाहरण के लिए, उसकी उपागम व्यापार की संख्याओं, डाक के प्रवाहों के आकार और कूटनीतिक समझौतों की संख्या में रुचि बढ़ाती है। अन्य उपागमों की तुलना में इस उपागम के परिवर्त्य संख्यात्मक विवेचन के लिए अधिक उपयुक्त है। यह उपागम विभिन्न प्रक्रियाओं और गतिशील आन्दोलनों का स्पष्ट रूप में विवेचन करती है। अतः अन्य उपागमों की अपेक्षा परिवर्तन से सम्बन्धित प्रश्नों का यह अधिक अच्छी प्रकार से विवेचन करने योग्य है। इसमें स्व-परिवर्तन, नवीनता और विकास का स्पष्ट विवेचन किया जाता है। अपनी क्रिया-विधियों और पर्यावरण के परिवर्तनों के उत्तर में निर्णय करने वाली क्रियाएँ अपने को पूर्णतया परिवर्तित कर लें, ऐसी सम्भावना है, और यह बहुत सी राजनीतिक प्रक्रियाओं के विश्लेषण में एक परिप्रेक्ष्य है।[1]

ड्यूश राज्य और राजनीतिक पद्धतियों को विभिन्न प्रकार के संगठनों के रूप में देखता है। उसका उद्देश्य सिबरनेटिक्स शास्त्र की धारणाओं और विधियों का प्रयोग राजनीतिक पद्धतियों के केवल अस्तित्व बनाये रखने के लिए ही नहीं वरन् विकास के लिए स्पष्टीकरण देना है और ऐसे परिवर्तनों के परिणामों के बारे में भविष्यवाणी करना है जो पद्धतियों की संरचनाओं को प्रभावित करते हैं। उसके मतानुसार, राजनीति का सम्बन्ध ध्येयों की प्राप्ति से है। 'एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण धारणा जिसके लिए ड्यूश का दावा है कि वह उसकी उपागम को सन्तुलन उपागम (equilibrium approach) से भिन्न बनाती है, फीडबैक (feedback) की है। फीडबैक का अर्थ है संचारों का ऐसा जाल (communications network), जो सूचना के निवेश के उत्तर में कार्य को उत्पन्न करता है और जो अपने कार्य के परिणामों को इस सूचना में सम्मिलित करता है जिसके द्वारा यह बाद में व्यवहार को संशोधित करता है। उसका तर्क है कि फीडबैक की धारणा उसमें गतिशीलता के तत्त्वों को प्रविष्ट करती है जो अन्यथा एक स्थिर विश्लेषण रह जाता है।'[2] परन्तु यंग के मतानुसार, इस उपागम की आलोचना बहुधा इसके यान्त्रिक (mechanistic) होने के लिए की जाती है तथा इस बात के लिए भी कि इसने मानव व्यवहार के प्रति इंजीनियरिंग दृष्टिकोण को विस्तार प्रदान किया है। सबसे बढ़कर बात यह है कि इसमें राजनीतिक व्यवहार को अधिकांशतः क्रिया के संकेतों के शब्दों में, संकल्पित करने और बाद में उन संकेतों को सूचना के प्रवाह, संचारों या निर्णयों में वर्णन करने की जोरदार प्रवृत्ति है।[3]

हाल के वर्षों में राजनीतिक संचार के अध्ययन में दिलचस्पी बढ़ रही है। राजनीतिक संचार के कार्य का विश्लेषण और उसकी तुलना विभिन्न राजनीतिक पद्धतियों की परीक्षा करने का एक दिलचस्प और उपयोगी उपाय बन गया है। आलमोण्ड और पोवेल ने संचार व राजनीति के अग्रलिखित पहलुओं का विवेचन किया है (1) संचार की संरचनाओं के विभिन्न प्रकार, (2) संचार के माध्यमों के विभेद और रचना, और (3) अन्य राजनीतिक कार्य किये जाने के लिए संचार के नमूनों की निहित बातें (implications)।

सच तो यह है कि सभी प्रकार की मानव अन्तर्क्रिया में संचार अन्तर्ग्रस्त होता है। जनसाधारण के माध्यम (mass media) यथा रेडियो और टेलीविजन आधुनिक समाज में सबसे अधिक विशेषीकृत एवं विभेदमय संरचनाएँ हैं। किन्तु संचार की संरचनाएँ पाँच प्रकार की हैं—

[1] O R. Young *Systems of Political Science* pp 49-58
[2] Davies and Lewis *Models of Political Systems* pp 71-76
[3] O R. Young, *op cit*, pp 59-60

(1) अनौपचारिक आमने-सामने का सम्पर्क, (2) परम्परागत सामाजिक सरचनाए, यथा परिवार अथवा धार्मिक समूह सम्बन्ध, (3) राजनीतिक उत्पादन सरचनाएँ, यथा विधायन और अधिकारी वर्ग, (4) राजनीतिक निवेश सरचनाए, जिसमे ट्रेड यूनियनें और समान समूह व राजनीतिक दल सम्मिलित हैं, और (5) जनसाधारण के माध्यम ।[1]

जनसाधारण के माध्यमो (mass media) का विस्तारपूर्ण विवेचन आगे किया गया है, अत अन्य के बारे मे सक्षिप्त विवेचन यहाँ दिया जाता है। अति विकसित आधुनिक समाजो मे भी अनौपचारिक आमने-सामने के सम्पर्क की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। अति विकसित सचार पद्धतियो के साथ सचार के अनौपचारिक मार्ग प्रचलित हैं। उदाहरण के लिए, चुनावो मे व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा प्रचार करने का निर्वाचन-अभियान मे बडा महत्त्व है। परन्तु अब किसी भी राजनीतिक पद्धति मे सूचना के मार्गों के रूप मे औपचारिक सरचनाओं का महत्त्व अधिक है। सरकारी सरचनाएँ, विशेषकर अधिकारी वर्ग राजनीतिक नेताओ (मन्त्रियो आदि)। प्रशासको और जनता के बीच सचार का अति महत्त्वपूर्ण साधन है। निवेश सरचनाएँ यथा राजनीतिक दल और हित समूह भी जनता और सरकार के बीच सचार के बहुत महत्त्वपूर्ण साधन हैं।

जैसी कि आशा की जानी चाहिए, प्रजातन्त्रो मे सूचना के विभिन्न मार्ग अर्थात् सचार की सरचनाएँ बहुत सीमा तक स्वायत्ततापूर्ण होती हैं। इसके विपरीत, अधिनायकतन्त्री राज्यो मे इन सरचनाओ पर सरकार का कठोर नियन्त्रण रहता है। प्रजातन्त्रात्मक समाजो मे राजनीतिक नेता (मन्त्री आदि) सूचना के साधनो या मार्गों (official information flows or channels) के अतिरिक्त अन्य साधनो द्वारा भी सूचना पा सकते हैं, परन्तु अधिनायकतन्त्री राज्यो मे सचार की सरचनाएँ बन्द होती हैं, अत उनमे दोषपूर्ण प्रवृत्तियाँ पैदा हो जाती हैं। सोवियत सघ मे स्टालिन ने गुप्त पुलिस, दल और अधिकारी वर्ग का प्रयोग एक-दूसरे पर रोक लगाने के लिए किया।

सभी समाजो मे और सभी समय राजनीतिक सचार महत्त्वपूर्ण रहा है, परन्तु प्रजातन्त्रात्मक राज्यो मे इसका महत्त्व अन्य राज्यो से बढकर है। ऐसे राज्यो मे समय-समय पर चुनाव होते हैं और चुनावो मे राजनीतिक सचार का महत्त्व बहुत अधिक रहता है। विभिन्न प्रकार के राजनीतिक सचार का, मिरसोकर के अनुसार, तीन प्रकार के मतदाताओ के लिए बडा महत्त्व है (1) जिन्हें दल अथवा उम्मीदवार की छाट करने के बारे मे अभी निर्णय करना है, (2) वे जो राजनीतिक रूप मे अन्तग्रस्त होने की सीमा पर है, और (3) जिन पर विरोधी दबाव पड रहे है। चुनाव अभियान सम्बन्धी साहित्य का प्रकाशन और बाद मे वितरण मतदाताओं को विभिन्न राजनीतिक दलो व उम्मीदवारो के कार्यक्रमो के बारे मे शिक्षित करने का महत्त्वपूर्ण माध्यम है।

यह एक तथ्य है कि सचार के माध्यम से जनता को राजनीतिक चेतना प्रदान करते हैं और उनके द्वारा जनता अपने मतो व हितो का उच्चारण करती है अर्थात् उन्हे अभिव्यक्त करती है। इन सब बातो का उनके मतदान व्यवहार पर प्रभाव पडता है। सचार के माध्यमो को दो समूहो मे रखा जा सकता है—जनसाधारण के माध्यम (mass media) और व्यक्तियो के बीच आपसी माध्यम (inter personal media)। जनसाधारण के माध्यमो मे इन्हें सम्मिलित किया जाता है—समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन, चलचित्र, सार्वजनिक सभाएँ, इश्तहार और हैंडबिल आदि। *दूसरे प्रकार के माध्यमो मे हम इन्हे गिन सकते हैं—सम्बन्धियो, मित्रो व पडोसियो के समूह,* दल के सक्रिय कार्यकर्त्ता, मजदूर सघो के कार्यकर्त्ता, स्थानीय सामाजिक और राजनीतिक नेता तथा उम्मीदवार। शहरी तथा शिक्षित वर्गों मे समाचार पत्रो का अधिक महत्त्व है।

जनसाधारण के सचार साधन

सयुक्त राज्य अमरीका की शासन पद्धति मे सचार का महत्त्व अत्यधिक है। प्रतिदिन

[1] Almond and Powell *Comparative Politics A Developmental Approach* pp 164-67

वाशिंगटन मे लाखो शब्द बोले जाते हैं और सैकडो और हजारो घटनाएँ होती हैं। समाचार पत्र और सचार के अन्य माध्यम उन्हे छाँटने व प्राथमिकताएँ प्रदान करने का परिश्रमशील कार्य करते हैं। वास्तव मे, सचार के साधन सभी सरकारो के लिए आवश्यक हैं—सर्वाधिकारवादी पद्धतियो के लिए भी। परन्तु उनमे अन्तर है। सोवियत सघ मे समाचारो को एक ही रूप मे तैयार व प्रकाशित किया जाता है। साम्यवादी नेताओ के अनुसार समाचारो को सरकार और शासक दल जनता की शिक्षा के लिए एक साधन मानते हैं।[1]

समाचार-पत्र का महत्त्व सचार के साधन तथा जनमत के निर्माण अभिकरण के रूप मे बहुत अधिक है। सयुक्त राज्य अमरीका मे समाचार-पत्रो की सख्या विश्व के अन्य किसी भी राष्ट्र से अधिक है, वहाँ हजारो पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होती हैं। रेडियो और टेलीविजन सचार के दो अन्य महत्त्वपूर्ण साधन हैं। जनता व सरकार के बीच सचार की क्रिया समाचार-पत्रो के अतिरिक्त अन्य प्रकार से चलती रहती है। अमरीका मे रूजवेल्ट प्रथम राष्ट्रपति था जिसने जनता से सीधा सम्पर्क कायम करने के लिए रेडियो का प्रयोग किया। 1964 से टेलीविजन का प्रयोग वृद्धि पर है। सयुक्त राज्य अमरीका, ब्रिटेन व फ्रास मे जनसाधारण के सचार साधनो का प्रयोग मनोरजन के अतिरिक्त जनता को जीवन के बारे मे मार्ग-दर्शन देना भी है। परन्तु समाजवादी व साम्यवादी राज्यो मे, यथा सोवियत सघ, चीन, यूगोस्लाविया आदि मे, जनसाधारण के सचार साधनो का प्रयोग मुख्यत राजनीतिक उद्देश्यो के लिए किया जाता है। भारत और अन्य विकासशील प्रजातन्त्रात्मक देशो की स्थिति कुछ बीच की है। सभी देशो मे रेडियो व टेलीविजन जनता को राजनीतिक प्रश्नो के बारे मे जानकारी देते हैं और उसे उनके बारे मे सोचने, विचार विनिमय करने के लिए प्रोत्साहन भी देते हैं।

जनसाधारण के अमरीकी सचार साधनो के बारे मे स्वार्टस का कथन है 'जन सूचना व मनोरजन के चोटी के माध्यमो मे टेलीविजन ऊपर जा रहा है। इसमे रेडियो व चलचित्र दोनो के लाभ मिले हुए हैं। रेडियो से भी अधिक, चलचित्र जनसाधारण के लिए सचार का वह साधन है जो अमरीकी भावना का प्रतिनिधित्व करता है। एक अमरीकी लेखक ने कहा है कि राष्ट्रपतीय चुनावो की भाँति चलचित्र वे बन्धन है जो सभी अमरीकावासियो को सामान्य अनुभव मे बाधते हैं। कम महत्त्वपूर्ण माध्यमो मे पुस्तकें है, जो मुख्यत शिक्षित अल्पसख्यको के लिए लिखी जाती हैं और उन्ही के द्वारा पढी जाती हैं।'[2] जनसाधारण मे पूरी पुस्तके पढने के लिए आवश्यक दिलचस्पी नही हैं।

6 हित-समूह सैद्धान्तिक विचार
(Interest Groups)

हितो का उच्चारण (Interest articulation)

जिस प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति और समूह राजनीतिक निर्णय करने वालो से माँगें करते हैं, उसे हितो का उच्चारण (interest articulation) कहते है। यह कार्य विभिन्न सरचनाओ द्वारा भिन्न भिन्न तरीको से किया जा सकता है। इसका महत्त्व इसलिए है कि यह समाज और राजनीतिक पद्धति के बीच सीमा बनाता है। विभिन्न प्रकार की सरचनाएँ अनुशासनहीन भीड से लेकर व्यापारियो के सम्मेलन तक हितो के उच्चारण मे लग सकते हैं। जबकि प्रादेशिक और रक्त से सम्बन्धित समूहो (kinship groups) अनौपचारिक और सविरामी मार्गों (intermittent channels) के द्वारा इस कार्य को करते हैं, सघो के आधार पर बने समूह (associational

[1] D Carter *American Politics and Government*, p 173
[2] Willis G Swartz *American Governmental problem*, pp 70-71

groups) हितो का उच्चारण सदैव नियमित और कानूनी मार्गों द्वारा करते हैं। आलमोण्ड व पोवेल के मतानुसार, 'हित समूह का अथ व्यक्तियों के ऐसे समूह से है जो आपस मे किसी सामान्य लाभ अथवा मतलब के बधन से सम्बधित हो और जिन्हे इस बन्धन की कुछ जानकारी भी हो।'

ऐसे समूहो का जो अपने आप बन जाते हैं (anomic groups) सगठन नाम के लिए ही होता है और समूह के नाम से उनकी गतिविधियाँ भी कभी कभी होती हैं। इसी सवग (category) म बिना सघ वाले समूह (non associational groups) यथा, रक्त से सम्बधित, प्रादेशिक, वर्गीय समूहो को भी रखा जा सकता है, जो अपने हितो का उच्चारण कभी-कभी व्यक्तियो, परिवार या धार्मिक मुखिया के द्वारा करते हैं। सस्थागत समूहो का औपचारिक सगठन होता है, जिसमे कुछ कमचारी होते हैं तथा उसके कुछ सोचे हुए राजनीतिक व सामाजिक काय होते हैं। इस प्रकार के समूह एसे सगठनो के भीतर पाये जाते हैं—राजनीतिक दल, विधायिकाएँ, अधिकारी वग (bureaucracies) और धार्मिक सगठन। उनके सगठन के कारण उनका समाज मे महत्त्वपूर्ण स्थान हो सकता है। सघो के आधार पर बने हित समूह की हितो के उच्चारण हेतु विशेषीकृत सरचनाएँ होती है, उनमे हम इन्हे सम्मिलित कर सकते हैं—मजदूर सघ, व्यापारी या व्यवसायी सघ, जातिगत सघ, धार्मिक सघ व नागरिक समूह।

हितो के उच्चारण के ढग भी भिन्न भिन्न हो सकते हैं—पहला, यह खुला हुआ या छुपा हुआ (manifest and latent) हो सकता है। दूसरे, मागो का उच्चारण किसी विशिष्ट रूप (specific form) म किया जा सकता है, यथा ऐसे वाक्यो का प्रयोग 'भ्रष्टाचार के सभी रूपों का विलोपन करो', 'साम्यवाद को मिटा दो'। तीसरे, माँगो का उच्चारण किसी परिणाम को पाने के लिए साधन मात्र (instrumental) हो सकता है या नाराजगी, निराशा अथवा आशा की अभिव्यक्ति (affective)। प्रत्यक्ष रूप मे, उपागम के माग राजनीतिक सचार की सरचनाओ पर निभर करते हैं। जैसे जैसे रेडियो और समाचार पत्रो की सख्या बढती है, वैसे ही हितो के उच्चारण हेतु उनके प्रयोग की शक्ति बढती है। एक दूसरा महत्त्वपूर्ण और इससे सम्बन्धित कारक समाज की राजनीतिक सस्कृति है। उदाहरण के लिए, हिंसा के प्रति जनता की अभिवृत्ति इस बात को प्रभावित करती है कि वह प्रदशनो व हिंसक उपायो का प्रयोग कहा तक करेगी। एक तीसरा कारक समाज म साधनो का वितरण है, यथा मतो को प्रभावित करने के लिए सूचना एकत्रित करना, नियमित कमचारी रखना, लॉबीइंग, इत्यादि। इन सभी कार्यों के लिए धन की आवश्यकता पडती है, जिनके पास ये साधन होंगे वे उनका उसकी मात्रा के अनुसार प्रयोग करेंगे।[1]

हित समूहो की प्रकृति और उनके विभिन्न प्रकार

सरल शब्दो मे, एक हित समूह पारस्परिक स्वाथ साधन के लिए बना व्यक्तियो का समूह होता है। यह एक दबाव समूह (pressure group) का रूप धारण कर लेता है जब यह स्वाथ सिद्धी—अपनी माग मनवाने—के लिए सरकार पर किसी प्रकार से प्रभाव अथवा दबाव डालता है। डेविड ट्रूमैन के अनुसार, 'हित समूह एक ही प्रकार की अभिवृत्ति के व्यक्तियो का समूह (a shared attitude group) होता है जो समाज मे अन्य समूहो पर कुछ दावे रखता है। जब यह अपने दावे सरकार की सस्थाओ द्वारा और सस्थाओ पर रखता है तो यह एक राजनीतिक हित समूह बन जाता है।' एक दूसरे लेखक (V O Key) ने अति सक्षेप मे, दबाव समूहो की परिभाषा इस प्रकार की है, "वे गैर सरकारी (private) सघ हैं जो सावजनिक नीति को प्रभावित करने के लिए बनते है।'[2]

[1] Almond and Powell *Comparative Politics* pp 73–93

[2] Roche and Stedman, *The Dynamics of Government*, p 67.

राजनीतिक दल बनाम हित समूह

राजनीतिक दलो और हित समूहो के बीच स्पष्ट अन्तर किया जाना आवश्यक है। राजनीतिक दल साधारणतया समूहो से अधिक बडा सगठन होता है जो सत्ता पाने के लिए बहु-सख्यक मतदाताओ का समर्थन जीतने का प्रयत्न करता है। परिणामत राजनीतिक दल का कार्यक्रम भी वृहत् होता है। इसके विपरीत, हित समूह के सदस्यो अथवा समर्थको की सख्या छोटी होती है, उसके सदस्यो के कुछ सामान्य हित होते है। 'यद्यपि हित समूहो और राजनीतिक दलो के बीच कुछ समानताएँ हैं उनके बीच आधारभूत अन्तर इस बात म है कि राजनीतिक दल समय-समय पर अपने दावो (claims) का निर्वाचक मण्डल के सामने रखता है और सरकार को चलान के लिए उत्तरदायित्व सम्भालने को इच्छुक रहता है। हित समूह इनम स एक भी कार्य नही करता।' वस्तु, जबकि राजनीतिक दल चुनाव जीतने और सरकार के सचालन म गहरी दिलचस्पी रखता है, हित समूह तो केवल अपने हित के सम्बन्ध म ही सरकारी नीति को प्रभावित करने मे दिलचस्पी रखता है। इन दोनो के बीच एक अन्य बात मे भी अन्तर है। राजनीतिक दल साधारणतया एकीकरण की भूमिका अदा करते हैं, किन्तु दबाव समूह विरोधी हितों के कारण अन्तरो को बढाते हैं।

हित समूहो के विभिन्न प्रकार होते हैं वे स्थायी और अस्थायी हो सकते हैं, आकार म बडे व छोटे हो सकते हैं, शक्तिशाली व कमजोर हो सकते हैं, और अधिक साधनयुक्त अथवा साधनहीन हो सकते हैं। कुछ हित समूह बडे सक्रिय होते हैं, यथा प्रजातन्त्रात्मक राज्यो मे मजदूर सघ, व्यापारी सघ इत्यादि। विभिन्न प्रकार के हित समूहो मे हम इन्ह गिन सकते हैं—धार्मिक सगठन, सामुदायिक सघ, व्यावसायिक सघ, आर्थिक सघ—किसानो के सगठन, मजदूर यूनियनें, मालिको के सघ, वैचारिक समूह—छात्रो व बुद्धिजीवियो के सघ। आर्थिक हित समूह आर्थिक हित साधन के लिए बनते हैं, यथा लाभ कमाना, अधिक मजदूरी पाना, सदस्यो के कल्याण को आगे बढाना, अपने हितो की पूर्ति के लिए आवश्यक कानून बनवाना या हित विरोधी कानूनो का विरोध करना। अनेक समूह अपने वर्ग या सम्प्रदाय के हितो को आगे बढान के लिए बनते हैं। व्यावसायिक समूहो म शिक्षको, डाक्टरो, वकीलो व सरकारी सेवको के सघ विशेष रूप स उल्लेखनीय है। वैचारिक सघ किसी विचारधारा के प्रचार हेतु बनते हैं, यथा भारत म गाधी जी के विचारो का प्रसार करने के लिए सर्वोदय सघ, मद्यनिषेध सघ, खादी या कुटीर उद्योगो के विकास को प्रोत्साहन देने के लिए बने सघ।

हित समूहो का महत्त्व और उनके कार्य करने के तरीके

महत्त्व—आधुनिक समाज को सच ही बहुलवादी (plural) कहा गया है, क्योकि यह बहुत बडी सख्या म समूहो और सघो स मिलकर बना है। अधिकाश व्यक्ति यह ठीक ही सोचते व अनुभव करते हैं कि अपने सामान्य हितो को आगे बढाने के लिए उन्हे समूहो का निर्माण करना चाहिए। यह उक्ति बडी व्यावहारिक है कि सगठन ही शक्ति है। आजकल सरकार या सरकार के नीति निर्धारक व महत्त्वपूर्ण निर्णय करने वाले अगों पर अपने हित मे कानून बनवाने तथा हित विरोधी कानूनो का विरोध करने के लिए हित समूहो का बनाना अति आवश्यक हो गया है। आजकल व्यक्तियो का राज्य से व्यावहारिक सम्बन्ध या सम्पर्क व्यक्तिगत रूप में नही के बराबर रह गया है, अब समूहो व सघो म सगठित व्यक्तियो और राज्य के बीच महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध स्थापित होते जा रहे हैं। चूकि राज्य के कार्यों का विस्तार अति व्यापक हो गया है। इसलिए सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक सभी क्षेत्रों म विभिन्न प्रकार के हित व दबाव समूह बन रहे हैं। 'यदि सरकार की शक्ति को सीमा में रखना है और सरकार को जनता के प्रति उत्तरदायी (respon

sive) बनाना है तो सामाजिक सगठना म मुकाबले की शक्ति (countervailing power) को पैदा करना जरूरी है। राजनीतिक दला के अतिरिक्त बहुत से समूह सरकार को सीमित बनाये रखने मे महत्त्वपूर्ण काय कर सकते हैं। ब्लाण्डल के मतानुसार राजनीतिक पद्धति के लिए समूहो का महत्त्व दो मुख्य कारणा स है—(1) अधिक महत्त्वपूर्ण समूह, खुले रूप म अथवा अन्य प्रकार से राजनीति मे बडे सक्रिय हैं। (2) यह मानना पडेगा कि कम या अधिक मात्रा मे सभी समूह राजनीतिक पद्धति के ताने बाने म गुथे हुए हैं।[1]

उनके काम करने अथवा दबाव डालने के तरीके—ये पाँच प्रकार से अपना काय कर सकते हैं

(1) वे जनमत को प्रभावित करने के लिए अपने सन्देश अथवा कायक्रम को पढने वाला, सुनने वाली व देखने वाली जनता तक सचार के विभिन्न माध्यमो द्वारा पहुँचा सकते हैं।

(2) चुनावा म धन देकर या चुनाव अभियान म अन्य प्रकार से कम या अधिक सक्रिय भाग लेकर वे चुनावो के परिणामो को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं।

(3) वे राजनीतिक दलो व उम्मीदवारो के चुनाव कायक्रमा (platforms) अथवा घोपणा पत्रो मे अपनी बातो के लिए स्थान पाने का प्रयत्न करते हैं।

(4) विधायको से सम्पक स्थापित करके—लॉबीइंग (Lobbying) द्वारा विधि निर्माण क्रिया (legislation) पर अपने पक्ष मे प्रभाव डालने का प्रयत्न करते हैं।

(5) मन्त्रियो, सरकारी अधिकारियो आदि से सम्पक बनाये रखकर कानूनो के क्रियान्वयन अथवा प्रशासन को प्रभावित करते हैं। इनके अतिरिक्त व जनमत को अपने पक्ष मे करने तथा सरकार पर प्रभाव डालने के लिए सन्देश व स्मरण पत्र भेजना, साहित्य को प्रकाशित करना, सावजनिक सभायें व प्रदशन आयोजित करना, धन और अन्य प्रकार के साधनो का प्रयोग करना, चुनाव प्रचार मे भाग लेना विज्ञापन आदि अनेक उचित व अनुचित उपायो का भी प्रयोग करते हैं। चूंकि अनेक राज्यो मे उनकी गतिविधियाँ बहुत बढ गयी है और वे अनुचित तरीको का भी प्रयोग करते हैं। इसलिए विभिन्न सरकारो ने उनके कार्यों, आय साधनो, उनके द्वारा व्यय किये जाने वाले धन आदि पर अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध लगाने हेतु आवश्यक कानून बनाये हैं।

7 राजनीतिक दल सैद्धान्तिक विचार
(Interest Aggregation)

(1) **हितो का समूहीकरण**—'मागो को सामान्य नीति, विकल्पो मे परिवर्तित करने के काय को हितो का समूहीकरण (interest aggregation) कहा गया है।' जब कोई राजनीतिक दल, अपने कायक्रम का निर्धारण करते समय, विभिन्न हित समूहो से मागें प्राप्त करता है तो यह उनसे सौदा करके विरोधी हितो के बीच ऐसा समझौता कराने का प्रयत्न करता है, जिसे वह अपने कायक्रम मे स्थान दे सके। इस प्रकार यह हितो के समूहीकरण का काय करता है। राजनीतिक पद्धति मे इस प्रकार का समूहीकरण कई तरीको से किया जा सकता है, उदाहरण के लिए, स्पष्ट रूप मे सामान्य नीतियो के निर्धारण द्वारा अथवा ऐसे राजनीतिक व्यक्तियो की भर्ती करके जो किसी प्रकार की नीति के प्रति वचनबद्ध हो। वैसे तो हितो का समूहीकरण सभी राजनीतिक पद्धतियो मे होता है, परन्तु अन्य प्रकार की पद्धतियो की तुलना मे यह काय प्रजातन्त्रात्मक पद्धति मे अधिक खुले रूप मे होता है।

आमण्ड और पोवेल के मतानुसार, प्राय वे सभी प्रकार की सरचनाएँ जो हितो का उच्चारण करती हैं, हितो का समूहीकरण कर सकती हैं। आधुनिक राजनीतिक पद्धतियो म बडे सघ और सगठन और सगठित समूहो से अनेक प्रकार की मागें पा सकते है, उसके बाद वे विरोधी

[1] J Blondel *Comparing Political Systems* p 67

हो सकता और दलो के बिना राजनीति नही हो सकती।

राजनीतिक दलो के महत्वपूर्ण कार्यों का उल्लेख संक्षेप मे, इस प्रकार किया जा सकता है—

(1) वे बुद्धिमय जनमत के निर्माण मे योग देते हैं, क्योकि वे नागरिको को चुनावो तथा सरकार की गतिविधियो मे भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

(2) वे किसी दिये हुए समय से महत्वपूर्ण प्रश्नो को परिभाषित करते हैं और सरकार के सामने विभिन्न वैकल्पिक मार्गों का स्पष्ट रूप मे रखते है।

(3) वे अपने कार्यक्रम मतदाताओ के सामने रखते हैं और प्रयास करते हैं कि उनके कार्यक्रम को स्वीकार करने वाले उम्मीदवारो की चुनाव मे जीत हो।

(4) जीतने वाला दल समाज के विभिन्न तत्वो को एक सामान्य मच पर लाने म सफलता पाने के बाद सरकार की बागडोर सम्भालता है।

(5) विरोधी दल विपक्ष मे रहकर सरकार की आलोचना करते हैं और दूसरे विकल्प सरकार व जनता के सामने रखते रहते है।

दलीय पद्धतियाँ

साधारण रूप मे, दलीय पद्धतियाँ, दलो की सख्या के आधार पर तीन प्रकार की हैं एक दलीय, द्वि-दलीय और बहुदलीय। एक दलीय पद्धति वाले राज्यो की सख्या काफी बडी है और यह बात नही है कि ऐसी पद्धति केवल अधिनायकतन्त्री राज्यो मे ही पायी जाती हो। अधिनायकतन्त्री राज्यों मे आजकल के साम्यवादी राज्यो (जैसा अतीत के फासीवादी इटली व नाजीवादी जर्मनी मे था) मे एक ही शासक दल होता है और विरोधी दल को सगठित होने की स्वतन्त्रता नही होती। परन्तु साम्यवादी राज्यो मे एक-दो राज्य ऐसे भी है जिसमे शासक दल के अतिरिक्त कुछ अन्य दलो का भी अस्तित्व है, जैसे आजकल पोलैण्ड और 1954 के बाद कुछ वर्षों तक चीन रहा। इस सम्बन्ध मे यह बात ध्यान देने की है कि अन्य दलो मे से कोई भी शासक दल का विरोधी नही होता, वरन् वे उसी के सम्बन्धित (allied) दल होते हैं, जिन्हे किसी विशेष वर्ग को सगठित करने के लिए थोडी सी स्वतन्त्रता मिली होती है।

एक दलीय पद्धति के बारे म विशेष रूप से उल्लेखनीय बात यह है कि ऐसी पद्धति प्रजातन्त्रात्मक शासन पद्धतियो म भी पायी जाती है। तुर्की मे कमाल अतातुर्क के नेतृत्व मे आयी क्रान्ति के बाद 1923 से 1946 तक एक ही दल (People's Republic Party) रहा, यद्यपि उस देश का सविधान प्रजातन्त्रात्मक था। मैक्सिको एक ऐसा देश है जहा चुनाव मे भाग लेने के लिए कई दलो को स्वतन्त्रता है, किन्तु वहा एक ही दल 'The Institutional Revolutionary Party' की प्रधानता रही है। जनसाधारण के एक ही दल (single mass party) का उदय अफ्रीका व एशिया के कई नये राज्यो मे हुआ है। जहा किसी देश मे राष्ट्रीय आन्दोलन ने स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए एक दल के नेतृत्व मे सघर्ष किया वहा उस काल म वस्तुत सभी समूह जो स्वतन्त्रता चाहते थे, उसी म मिल गय। परन्तु जब स्वाधीनता प्राप्त हो गयी तो उस व्यापक दल म विभिन्न आधारो पर नये सगठन या दल बनाने आरम्भ हुए। ऐसी परिस्थितियो स बचने के लिए और देश म विकास कार्यक्रम की द्रुतगति बनाये रखने के उद्देश्य से कुछ राज्यो ने केवल एक ही दल रखने का निर्णय किया। घाना, कीनिया और टैंगेनिका म ऐसा ही किया गया। 1975 मे शेख मुजीबुरहमान के कत्ल से पूर्व उनके नेतृत्व म बने सविधान मे भी एक ही सरकारी दल की व्यवस्था की गयी थी। इन राज्यो म एक दलीय प्रजातन्त्र को इन आधारो पर न्यायोचित ठहराया गया है पहला विरोधी दल केवल वर्तमान मतभेदो को अधिक तीव्र बनायेंगे, जबकि विभिन्न मतो को वृहत् शासक दल के भीतर ही स्थान दिया जा सकता है और सब प्रकार

के मतभेदो के बाद एक सामान्य और सहमतिपूर्ण कार्यक्रम तैयार किया जा सकता है। दूसरे, जबकि इन देशो मे राष्ट्रीय विकास के लिए आवश्यक कौशल और योग्य व्यक्ति बहुत सीमित संख्या मे हैं, ये देश सासद प्रजातन्त्र के लिए परम्परागत सघर्ष को अनावश्यक और अवाछनीय समझते हैं।

जहाँ तक द्वि दलीय पद्धति का सम्बन्ध है, सासद पद्धति वाले राज्यो मे इसका सबसे अच्छा उदाहरण यूनाइटेड किंगडम है। आस्ट्रेलिया व कनाडा म भी दो ही प्रमुख दल है। परन्तु इन सभी देशो मे तीसरा दल भी है और हाल के बीते वर्षो म यह प्रवृत्ति जमी है कि चुनाव मे विजयी दल को विधायिका मे बहुत कम बहुमत मिला है। या किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत नही मिला। इसके परिणामस्वरूप वहाँ बने मन्त्रिमण्डल कम सुदृढ रहे और वे पूरी अवधि तक स्थायी न रह पाये। सयुक्त राज्य अमरीका मे शासन पद्धति का रूप दूसरा है, तथापि वहाँ भी दो ही प्रमुख दल रहे है। किन्तु अमरीका और अन्य देशो के राजनीतिक दलो के बीच अन्तर की मुख्य बात यह है कि जबकि अन्य देशो म राजनीतिक दल सिद्धान्तो के आधार पर बने हैं, सयुक्त राज्य अमरीका के दोनो दलो के बीच सैद्धान्तिक अन्तर नही हैं। सासद पद्धति की सफलता के लिए दो दलीय पद्धति को आवश्यक समझा जाता है। भारत मे अनेक राजनीतिक नेता और विचारशील व्यक्ति ऐसी ही पद्धति का विकास चाहते हैं, इसी बात को सामने रखकर भारत मे सविधान निर्माताओ ने एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र रखे और आनुपातिक प्रतिनिधिक पद्धति को पसन्द नही किया।

अधिकतर प्रजातन्त्री देशो मे बहु दलीय पद्धति पायी जाती है। फ्रास, स्वीडन व जर्मनी आदि राज्यो मे कई दल है और उनमे से अधिकतर मे किसी न किसी रूप मे आनुपातिक प्रतिनिधिक पद्धति को अपनाया गया है। अनेक दलो के अस्तित्व के परिणामस्वरूप फ्रास मे वर्तमान सविधान, के पूर्व तक कार्यपालिका अस्थायी और कमजोर रहती थी। वहा मन्त्रिमण्डलो का जीवनकाल अति अल्प था। इस गम्भीर दोष को दूर करने के लिए वर्तमान (पाँचवें गणतन्त्र के) सविधान म, जो जनरल डि गाले के मार्ग-दर्शन के अन्तर्गत बना था, कार्यपालिका को बहुत सुदृढ बनाया गया है, और सासद पद्धति के अन्तर्गत राष्ट्रपति को अनेक शक्तिया सौंपी गयी हैं। भारत में भी राजनीतिक दलो की सख्या अभी तक काफी बडी है। परन्तु यह सौभाग्य की बात है कि राष्ट्रीय काग्रेस की सघ व अनेक राज्यो म प्रधानता कायम रही है। साथ ही यह खेद की बात है कि विपक्ष विभाजित व कमजोर रहा है। विभिन्न राजनीतिक दलो ने आपसी मेल और विलय के लिए कुछ प्रयत्न किये, जिनके अभी तक ठोस परिणाम नही निकले हैं।

दूसरा अध्याय

राज्य और शासन

1 राज्य

'राज्य' क्या है ? राजनीतिक सस्थाओ मे सबसे प्रमुख और महत्त्वपूण सस्था राज्य है और उसके बाद दूसरा स्थान शासन (सरकार) का है। अय सभी राजनीतिक सस्थाओ का सम्बघ राज्य अथवा शासन से है । अत हम सबसे पहले इस प्रश्न की परीक्षा करेंगे कि 'राज्य क्या है ? सगठित सामाजिक जीवन के लिए यह अति आवश्यक है कि समाज मे कोई ऐसी सत्ता हो जो सुखी और शान्तिमय जीवन के लिए उपयुक्त व्यवस्था कर सके तथा जिसके रहते हुए सभी व्यक्ति और सघ अपना अपना काय करते रहे और दूसरा को हानि न पहुँच सके । यह काय एक ऐसी बडी और प्रबल सस्था द्वारा ही किया जा सकता है जो सभी पर नियन्त्रण रख सके, ऐसी सस्था केवल 'राज्य' है । सभी सामाजिक सस्थाओ मे राज्य सबसे अधिक व्यापक और शक्तिशाली है। जैसा कि ग्रीक लेखका न बताया है, राज्य स्वाभाविक (natural) और आवश्यक दोना ही है। यह इस अर्थ मे स्वाभाविक है कि इसका उदय मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति (सामाजिकता) का परिणाम है। हम सभी किसी न किसी राज्य के सदस्य रूप मे जन्म लेते हैं। राज्य मनुष्य के पूण विकास के लिए अति आवश्यक है। राज्य का जन्म मानव जीवन के लिए हुआ और यह मनुष्य जीवन को अच्छा बनाने के लिए कायम है। मैकाइवर ने सत्य ही कहा है कि राज्य सामाजिक मनुष्य का साधन है। वास्तव मे, सभ्य जीवन का आधार अथवा पहली शत राज्य है।

राज्य का अग्रेजी रूपान्तर 'स्टेट' (state) है। सवप्रथम, इटली मे पन्द्रहवी शताब्दी के आरम्भ मे 'स्टेट' शब्द का प्रयोग हुआ और उसे राज्य के अथ म मैकियाविली न अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'दि प्रिंस' मे प्रयुक्त किया। इग्लैण्ड म इस शब्द का प्रयोग सबस पहले 1538 मे हुआ। जमनी मे 'स्टेटकन्स्ट' (statskunst) शब्द का प्रयोग सत्तरहवी शताब्दी मे सामान्य रूप से हुआ। तब से राजनीतिक शरीर (boby politic) के लिए विभिन्न यूरोपीय भाषाओ मे राज्य शब्द प्रयुक्त होने लगा, फासीसी भाषा मे पहले 'एस्टेट' (estat) और बाद म 'एटेट' (etat) शब्द प्रयोग मे आया, उसी के पर्यायवाची शब्द जिसका अथ कुछ भिन्न था, ग्रीस और रोम म प्रयुक्त होते थे। प्राचीन ग्रीस म राज्य को पोलिस (Polis) कहते थे, पोलिस राज्य स कुछ अधिक विस्तृत अर्थ म प्रयुक्त होता था। इसका अभिप्राय नगर (राज्य) के घनिष्ट सामुदायिक जीवन से था।

ऐसे ही रोमन शब्द 'सिविटास' (civitas) का अभिप्राय राज्य के केन्द्र रूप म नगर की नागरिकता से था। रोमन भाषा म प्रयुक्त दूसरे शब्द 'रेस पब्लिक' (res publica) का अथ जनता और जन-कल्याण के लिए ध्यान था। हरमन फाइनर ने तक देते हुए बताया है कि ग्रीस और रोम के विचारको द्वारा दिये विचारा मे राज्य शब्द का अस्तित्व न था। ग्रीक कामनवैल्थ का बल सर्वोपरिता व आज्ञापालन की अपेक्षा अधिकारा के उपभोग पर था, जबकि रोमन

नागरिकों ने दासों के शोषण पर आधारित एक प्रकार का राजनीतिक सगठन बनाया हुआ था। आजकल 'राज्य' शब्द का प्रयोग बहुत व्यापक रूप मे किया जाता है। किन्तु बहुधा इसे राष्ट्र, समाज, देश और शासन के पर्यायवाची रूप मे भी प्रयुक्त किया जाता है। सघ राज्यो के सम्बन्ध मे 'राज्य' का प्रयोग विशेष अर्थ मे किया जाता हैं। सघ राज्य और उसकी सघान्तरित इकाइयो को भी राज्य कहा जाता है।

प्राचीन तथा अर्वाचीन अनेक लेखकों ने राज्य शब्द की भिन्न भिन्न परिभाषायें की हैं, उनमे से कोई भी दो एकरूप नहीं हैं। हम यहा पर कुछ परिभाषाओ का उल्लेख कर राज्य की उपयुक्त परिभाषा के विषय मे विचार करेंगे। सर्वप्रथम, अरस्तू के अनुसार, पूर्ण और स्वावलम्बी जीवन के लिए परिवारो और गावो का सघ राज्य है। हॉलण्ड के अनुसार, राज्य 'एक ऐसा बडा समुदाय होता है, जो साधारणतया किसी निश्चित भू भाग पर अधिकार रखता है और जिसमे बहुसख्या अथवा व्यक्तियो के एक बडे वर्ग की इच्छा उनके विरोधियो के विरुद्ध मान्य होती है।'[1] यह परिभाषा अधिक लम्बी है, यद्यपि इसमे राज्य के प्रमुख लक्षणो का स्पष्ट सकेत है।

ब्लशली कहता है 'किसी भूमि विशेष के राजनीतिक रूप से सुसगठित लोगो का ही नाम राज्य है।' वुडरो विलसन लिखता है 'राज्य सबसे उच्च समुदाय है और एक निश्चित प्रदेश मे नियमो के पालन के लिए सगठित किया जाता है।' लास्की के शब्दो मे, 'राज्य एक भूमिगत समाज है, जो शासन और शासितो मे बँटा होता है और अपनी सीमाओ के क्षेत्र म आने वाली अन्य सस्थाओ पर सर्वोपरिता का दावा करता है।' गानर के अनुसार, 'राज्य मनुष्यो का एक सगठन है। वे मनुष्य एक निश्चित भू भाग पर अधिकार रखते हैं, सभी प्रकार के बाहरी नियन्त्रण से स्वतन्त्र होते है, और उनकी एक सगठित सरकार होती है। वे स्वाभाविक रूप से राज्य की आज्ञाओ का पालन करते है।' इस परिभाषा मे राज्य के आवश्यक तत्त्वो को भली प्रकार से सम्मिलित किया गया है।

उपर्युक्त परिभाषाओ के ऊपर विचार करने से पता चलता है कि राज्य इन चार प्रमुख तत्त्वो से मिलकर बना है—(1) जन-समुदाय, (2) निश्चित भू भाग, (3) शासन व्यवस्था अथवा सरकार, और (4) राजसत्ता। मैकइवर के शब्दो मे 'राज्य वह सघ है जो सरकार द्वारा निर्मित कानूनो (जिन्हे लागू करने व मनवाने की शक्ति सरकार को प्राप्त होती है) के अनुसार कार्य करता हुआ किसी विशिष्ट भूमि खण्ड मे रहने वाले समुदाय के भीतर सामाजिक व्यवस्था को बाह्य सर्वव्यापी दशायें बनाये रखता है।'[1] यह परिभाषा राज्य के विभिन्न तत्त्वो का स्पष्ट दिग्दर्शन कराती है।' सक्षेप मे, राज्य एक स्वतन्त्र, सगठित और भूमिगत समाज होता है। मैक्स वेबर (Max Weber) के अनुसार राज्य की परिभाषा इस प्रकार है 'आज हम कहते हैं कि राज्य एक मानव समुदाय है जो किसी दिये हुए भूखण्ड के भीतर भौतिक शक्ति के वैध प्रयोग के एकाधिकार पर (सफलतापूर्वक) दावा करता है। इस बात पर ध्यान दीजिये कि 'भूखण्ड' राज्य के लक्षणो मे से एक है। वर्तमान समय मे, विशिष्ट रूप से भौतिक शक्ति के प्रयोग का अधिकार अन्य सस्थाओ और व्यक्तियो को वही तक मिला होता है जहाँ तक कि राज्य उसकी आज्ञा देता है।'[2] हम विभिन्न परिभाषाओ को निम्नलिखित चार समूहो म रख सकते हैं—

(1) वे परिभाषायें जो राज्य के ऐतिहासिक विकास और उसके ध्येय की ओर सकेत करती हैं। उदाहरण के लिए, अरस्तू ने कई स्थानो पर राज्य की परिभाषा इस प्रकार दी है 'यह

[1] MacIver R M *The Modern State* p 22

[2] See Almond and Coleman *The Politics of the Developing Areas* p 5

परिवारो और ग्रामो का सघ है, जो एक पूण और आत्म निभर अस्तित्व की प्राप्ति के लिए बनता है।' अन्य स्थान पर वह कहता है कि राज्य का ज म जीवन के लिए हुआ और इसका अस्तित्व अच्छे जीवन के लिए है।

(2) कुछ दाशनिको ने राज्य को अपने प्रयोजन की पूर्ति के शब्दो म परिभाषित किया है। हीगल के अनुसार राज्य मूल स्वतन्त्रता का यथाथ रूप (*the actuality of freedom*) है यह स्वत त्रता की पूर्ति (*realization of freedom*) अर्थात् पूण और अ तिम उद्देश्य की प्राप्ति है जिसके लिए इसका अस्तित्व है।

(3) कुछ विचारका ने राज्य को गहन सामाजिक, आर्थिक शब्दावली म पारिभाषित किया है, जसे मावस ने कहा है कि राज्य वग प्रभुत्व का साधन है, अर्थात यह एक वग द्वारा दूसरे वग को दबाय रखने का साधन है।

(4) राज्य की अनेक परिभाषायें उसके आवश्यक तत्त्वो को ध्यान म रखकर की गई हैं, जिनके उदाहरण पहले दिये जा चुके हैं।

जैसा कि ऊपर बताया गया है राज्य चार तत्त्वा से मिलकर बनता है। हॉलण्ड की परिभाषा म इन तत्त्वो का स्पष्ट वणन है (1) जनसख्या, (2) निश्चित भू भाग पर अधिकार, और (3) बहुमत या एक वग के अनुसार शासन। ब्लटश्ली और बर्जेस द्वारा दी गई परिभाषा म प्रथम तीन तत्त्वो को सम्मिलित किया गया है, अर्थात् इन सभी परिभाषाआ म राजसत्ता (sovereignty) के तत्त्व का उल्लेख नही है। परन्तु गानर की परिभाषा म, जिसे हमने सवश्रेष्ठ बताया है चारा तत्त्वा का स्पष्ट वणन है। अ तर्राष्ट्रीय कानून के प्रसिद्ध लेखक फिलीमोर की आगे दी गई परिभाषा मे चारो तत्त्वो का उल्लेख है। वह कहता है कि 'राज्य मनुष्य का वह समुदाय है जो 'किसी निश्चित भू भाग पर स्थायी रूप मे बसा हुआ हो, जो एक सुव्यवस्थित सरकार द्वारा उस भू भाग के अ तगत स्थित मनुष्या पर पूरा नियन्त्रण, अधिकार तथा प्रभुता रखता हो और जिसे ससार के अ य किसी भी समुदाय से युद्ध और शान्ति करने तथा अन्य किसी प्रकार के अ तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार प्राप्त हो।'

अत राज्य का चौथा तत्त्व राजसत्ता है। कुछ विचारको के अनुसार तो यह भी राज्य का आवश्यक तत्त्व है, अथात् इसके अभाव मे कोई प्रदश अन्य तत्त्वो के रहते हुए भी राज्य नही कहला सकता। परन्तु कुछ अ य विचारका के मत मे यह तत्त्व इतना आवश्यक नही है जितने कि दूसरे तत्त्व हैं। उनके मतानुसार राजसत्ता के अभाव म भी राज्य हो सकते हैं। यह बात उदाहरण की सहायता से अधिक स्पष्ट हो जायेगी। प्रथम मत के अनुसार पराधीन भारत को राज्य नहा कहा जा सकता था, परन्तु वह यथाथ मे राष्ट्र सघ का भी सदस्य बना, इस प्रकार उसके राज्य हाने म कोई सन्देह नही था। इजिप्ट और इग्लैण्ड के बीच हुइ सन्धि के अनुसार कुछ समय पूव तक वैदेशिक क्षेत्र तथा कुछ अन्य मामलो मे इजिप्ट को राजसत्ता प्राप्त न थी, फिर भी उसे व्यवहार मे राज्य ही माना जाता था। इनके अतिरिक्त सयुक्त राज्य अमरीका और भारत के इकाई राज्यो को राज्य कहा जाता है, यद्यपि उन्हे अत्यधिक सीमित क्षेत्र म राजसत्ता मिली है। इन उदाहरणा पर विचार करने क बाद भी यह स्वीकार करना पडेगा कि वास्तव म राजसत्ता का होना राज्य के लिए आवश्यक है।

कुछ अन्तर्राष्ट्रीय न्यायविदो ने राज्य के ऊपर वर्णित चारो तत्त्वा के अतिरिक्त एक और तत्त्व भी बताया है। इनके अनुसार प्रत्यक राज्य म दूसरे राज्या के साथ सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता भी होनी चाहिए और उसे ससार के सामने स्वतन्त्र रूप म काय करने की क्षमता रखनी चाहिए। इस मत के समथको के अनुसार किसी राज्य को राज्य मान जाने के लिए यह आवश्यक है कि वह सयुक्त राष्ट्र सघ का सदस्य हो। परन्तु अन्तराष्ट्रीय मान्यता का तत्त्व अभी

तक अन्य चारो तत्वो के बराबर महत्वपूर्ण नही माना जाता है। जहा तक अन्य राज्यो के साथ सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता का प्रश्न है, प्रभुता म राज्य की स्वतन्त्रता का तत्व आ ही जाता है और प्रत्येक स्वतन्त्र राज्य इस प्रकार की क्षमता प्राप्त कर लेता है। सयुक्त राष्ट्र सघ की सदस्यता को आवश्यक तत्व नही स्वीकार किया जा सकता। साम्यवादी चीन बहुत समय तक सयुक्त राष्ट्र सघ का सदस्य न रहा।

मान्यता कानूनी अथवा यथार्थ दो प्रकार की होती है। बहुत समय बाद ही सयुक्त राज्य अमरीका ने स्पेन म फ्राको के शासन और सोवियत सघ के शासन को कानूनी मान्यता दी, यद्यपि वह इन दोनो शासनो को पसन्द नही करता था। जब किसी देश मे क्रान्ति या विद्रोह के फलस्वरूप नई सरकार बनती है, तो साधारणतया उसे नये सिरे से मान्यता पानी होती है। मान्यता प्राप्त होने से ही किसी देश को राज्य का पद नही मिल जाता, यद्यपि उसकी गिनती अवश्य ही कुछ राज्यो की दृष्टि मे राज्य रूप मे होने लगती है। बगला देश को अनेक राज्यो न मान्यता प्रदान कर दी है, किन्तु वह अभी तक सयुक्त राष्ट्र सघ का पूर्णत सदस्य नही बना है।

राज्य का स्वरूप—अरस्तू का कथन है कि राज्य की उत्पत्ति मनुष्य के जीवन की आवश्यकताओ को पूरा करन के लिए हुई, किन्तु राज्य मनुष्यो के जीवन को अच्छा बनाने के लिए कायम है। उसन लिखा है कि यदि प्रत्येक समुदाय का उद्देश्य मनुष्यो की कुछ भलाई करना है, तो राज्य का उद्दश्य, जो सर्वोच्च समुदाय है, मनुष्यो की अधिकतम भलाई करना है। अन्य आदशवादी भी राज्य को एक नैतिक और सबसे ऊँचा समुदाय मानते हैं। कुछ विद्वानो के अनुसार राज्य का आधार शक्ति है। मैकियाविली और ट्रौटस्की इसी मत के समथक रहे है। परन्तु आजकल शक्ति सिद्धान्त अथवा शक्ति को राज्य का उचित आधार नही माना जाता। शक्ति के कारण कोई वस्तु उचित नही ठहराई जा सकती। ग्रीन की अग्रलिखित उक्ति मे गहरा सत्य है, 'राज्य का आधार शक्ति नही बल्कि इच्छा है।' चूकि राज्य को शक्ति पर आधारित माना जाता है, इसी कारण अराजकतावादी राज्य को हर रूप म मिटाना चाहते हैं। साम्यवादी भी अपन आदश समाज का राज्य रहित बनान की बात कहते हैं। इसी से मिलता जुलता यह विचार है कि राज्य किसी वग की शक्ति और प्रभुत्व को कायम रखने का साधन है। काल मार्क्स का भी यही कहना था।

सामाजिक समझौते के समथक राज्य को मनुष्यकृत अथवा कृत्रिम समझत है, जिसका आधार समझौता है और जिसे तोडा भी जा सकता है। परन्तु राज्य की साझेदारी का कम्पनी के समान मानना उचित नही प्रतीत होता। राज्य का होना और रहना मनुष्यो के लिए सभ्य और सामाजिक जीवन की एक आवश्यक शत है। राज्य एक ऐच्छिक नही वरन् अनिवाय समुदाय है जिसका आधार समझौता नही हो सकता। आजकल तो अधिकतर व्यक्ति राज्य को मानव कल्याण का सबसे महत्वपूर्ण साधन मानते हैं और कल्याणकारी राज्य का ध्येय (goal of welfare state) म विश्वास करते हैं। मेकाइवर ने राज्य को सामाजिक मनुष्य का साधन बताया है। अरस्तू ने तो इसे अच्छे जीवन के लिये अति आवश्यक बताया ही है परन्तु राज्य मनुष्यकृत अथवा ऐच्छिक कम्पनी के समान नही है, इसकी सदस्यता अनिवाय है। बहुलवादियो (pluralists) के अनुसार समाज अनक सघो से मिलकर बनता है राज्य भी उनम से एक है। अन्य सघ अथवा समुदाय भी राज्य की भाँति स्वाभाविक और आवश्यक है।

व्यक्तिवादियो के अनुसार राज्य एक आवश्यक बुराई है, अत इसके कायक्रम स कम होन चाहिएँ। अराजकतावादी राज्य को शक्ति पर आधारित सस्था मानते हैं और उसके उन्मूलन म विश्वास करते हैं। उनका ध्येय राज्यविहीन समाज की स्थापना है। परन्तु समाजवादी राज्य को समाज के हित का आवश्यक साधन मानत हैं। कुछ विद्वानो के मतानुसार राज्य एक

व्यवस्था है, इसका सगठन कानूनो के अनुसार मनुष्यो के जीवन को व्यवस्थित करता है। वास्तव मे, यह सच है कि प्रत्येक व्यक्ति किसी राज्य मे रहता है और उसके कानूनो को मानता है। कानूनी दृष्टि से राज्य शक्ति असीमित हैं, परन्तु वास्तव म उस पर कुछ सीमायें हैं। यह राज्य का महत्त्वपूर्ण पहलू है, परन्तु राज्य के उच्चतर उद्देश्य को इसके अनुसार स्वीकार नही किया जा सकता। कुछ लखको ने राज्य को एक सावयव प्राणी बताया है। जिस प्रकार से मनुष्य के शरीर म अनक अग होते हैं, जो विभिन्न प्रकार के काय करते हैं, उसी प्रकार राज्य मे विभिन्न अग होते हैं। हरबट स्पेंसर ने तो राज्य को सावयव प्राणी जैसा ही नही माना वस्तुत उसे एक जीवित प्राणी कहा है। राज्य को प्राणी जैसा कहना तो ठीक है, इस विचार का यह महत्त्व भी है कि राज्य और व्यक्ति एक दूसरे पर पूणतया निभर हैं और एक के बिना दूसरे का अस्तित्व नही हो सकता। परन्तु राज्य को एक सावयव प्राणी नही माना जा सकता।

उपयुक्त के अतिरिक्त राज्य के स्वरूप के विषय मे हम ये बातें कह सकते हैं—(1) दार्शनिक दृष्टि से राज्य न तो एक मनुष्यकृत मशीन है और न एक सावयव प्राणी, किन्तु दोनों का मिश्रण है। (2) धार्मिक दृष्टि से राज्य को चाहे प्राचीन काल मे ईश्वरकृत सस्था समझा जाता था, आजकल तो राज्य को एक मानव सस्था माना जाता है। (3) आर्थिक और नैतिक दृष्टियो से राज्य को एक वग राज्य और पुलिस राज्य कहकर बुरा समझा गया है, वास्तव मे राज्य के स्वरूप मे शक्ति और इच्छा दोना का ही मेल है। (4) कानूनी दृष्टि से, राज्य आज भी सर्वोपरि या प्रभुतापूण है। परन्तु उसे नि सीम नही मान सकते, और राज्य को शक्ति से केवल विभिन्न समुदायो म समन्वय स्थापित करना चाहिए। अन्त म, हम एन० वाइल्डे के इन विचारो से सहमत हैं 'सामाजिक कल्याण का आदश ऐसा समुदाय है जिसके सदस्य स्वतन्त्र व उत्तरदायी हो और जो अपने सुख की प्राप्ति सम्भवतया स्वय ही करें। इस तथ्य से कि इस आदश का उच्चतम विकास प्रशिक्षण और अनुकूल वातावरण द्वारा ही हो सकता है, हमे न भूल जाना चाहिये कि राज्य इनकी पूर्ति मे केवल उन दशाओ की तैयारी करता है जिनके आधार पर व्यक्तियो को अपन नैतिक विकास के लिए प्रयत्न करने चाहियें। इन शर्तों के साथ हम यह साधारण नियम स्वीकार कर सकते हैं कि राज्य अधिकारो का सगठनकर्त्ता और सामाजिक न्याय का सरक्षक है।'

2 शासन (सरकार)

राज्य और शासन—राज्य वह जनसमूह है जो किसी निश्चित भू भाग मे बसा हो, जो सगठित और स्वाधीन हो। प्रत्येक राज्य की अपनी सरकार होती है, सरकार एक प्रकार से शासन चलाने वाल सभी व्यक्तियो का समूह होती है। सरकार शासन का सचालन करती है और राज्य के सभी कार्यों की देख रेख भी करती है। इसी कारण कुछ लेखको ने सरकार को मशीन बताया है (1) सरकार राज्य का एक अग मात्र है, क्योंकि सरकार म सभी नागरिकों को नही गिना जा सकता। (2) राज्य अमूत होता है, एक विचार मात्र है, परन्तु सरकार स्पष्ट रूप से मूर्त होती है। उदाहरण के लिये भारत एक राज्य है जिसम 55 करोड व्यक्ति रहते हैं भारतीय सरकार मे राष्ट्रपति, मन्त्रि-परिषदें, विधानमण्डल, उच्च अधिकारी, मध्य दर्जे क अधिकारी तथा छोटे स छोटे कमचारी ही सम्मिलित किय जा सकते हैं। (3) राजसत्ता राज्य की विशेषता है न कि सरकार की। (4) राज्य स्थायी होता है, जबकि सरकार परिवतनशील होती है, अर्थात् सरकार के बदलने स राज्य नहीं बदल जाता। अन्त म, राज्य की शक्ति मौलिक होती है और सरकार की शक्ति प्राप्त की हुई होती है। जनता सरकार का विरोध कर सकती है किन्तु राज्य का नहा, क्योंकि सरकार बुरी और हटाने योग्य हो सकती है।

सरकार का महत्त्व—किसी भी राज्य का सरकार के बिना अस्तित्व सम्भव नहीं है,

शासन के प्रभाव का अथ व परिणाम अराजकता है। राज्य की सुरक्षा, राज्य मे शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने तथा नागरिको के लिये अच्छे जीवन की आवश्यकताओ की पूर्ति करने की दृष्टि से सरकार का महत्त्व बहुत अधिक है। सरकार का मुख्य काय सामाजिक आवश्यकताओ की पूर्ति करना और अधिकारपूण नियमा (अर्थात् कानूनो) को इस प्रकार बनाना व लागू करना है कि राष्ट्र की एकता व स्वतन्त्रता बनी रहे। सरकार का महत्त्व इस बात से आका जा सकता है कि यह सवव्यापी सस्था है। सभी स्थानो पर और सभी कालो म मनुष्य किसी न किसी सरकार के अधीन रहे हैं। वतमान काल मे सरकार के वृद्धिपूण महत्त्व का कारण उसके कार्यों मे हुई अपूव वृद्धि है।

आधुनिक काल मे भौतिक कल्याण के लिए चाह इतनी बलवती बन गई कि अधिकतर व्यक्तियो ने अपनी स्वतन्त्रता को प्रबन्धक वग (managerial class) के हाथ म सौप देना पसन्द किया। शासन के विशेषज्ञो अथवा तक्नीकियो (technocrats) ने यह आशा दिलाइ कि वे जन-साधारण का जीवन स्तर ऊचा उठा सकेंगे और काम करने के घण्टो मे कमी भी करा सकेंगे। फलत सरकार के कार्यों मे बहुत वृद्धि हुई विशेष रूप से सांस्कृतिक काय, जन कल्याण काय, और अथव्यवस्था के क्षेत्रो मे। अतएव जनसाधारण के नये समाज मे शासन की भूमिका मे बडा परिवतन हुआ है। अपना सन्तुलन बनाये रखने के हित मे राज्य के लिए आवश्यक हो गया है कि वह सामाजिक पद्धति म अपना नियन्त्रण अथवा अपनी प्रधानता को कायम करे। ऐसा करने के लिए नई सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था मे विभिन्न समूहो की विरोधी मागो को समायोजित करना ही काफी नही रहा, वरन् सरकार को सोच समझकर सामाजिक कल्याण की नई दशाओ की रचना करनी पडी है। इस प्रकार सरकार को राज्य के अभिकर्ता (agent) के रूप मे धन के उत्पादन और वितरण के लिए निश्चित रूप मे अधिक उत्तरदायित्व सम्भालना पडा।[1]

सरकार के कार्यों मे वद्धि के लिए उत्तरदायी कारणो को हम सक्षेप मे, इस प्रकार से रख सकते है (1) राज्य के ध्येय के विषय मे राजनीतिक विचारधारा मे महत्त्वपूण अन्तर हुआ है। चारो ओर आर्थिक और सामाजिक समानता की नई चेतना फैली है। अब अहस्तक्षेप की नीति (policy of laissez faire) को त्याग दिया गया है और राज्य जनता के हित मे अनेक प्रकार के काय करने लगा है। (2) प्रत्येक राज्य मे जनसख्या की वृद्धि हो रही है। उससे उत्पन्न कठिन समस्याओ का निराकरण करने के लिए अब प्रगतिशील सरकारें प्राय सभी प्रकार के काय करने लगी है। (3) वतमान युग मे युद्ध का रूप अत्यन्त भयकर हो गया है और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितिया भी ऐसी हो गयी हैं कि आधुनिक सरकारो को अनेक काय करने पड रहे हैं।

सरकार की शाखाएँ—सरकार के कार्यों का परम्परागत विभाजन तीन वर्गों—विधायी कायकारी और न्यायिक मे किया जाता है। उसी के आधार पर अधिकतर सरकारो के तीन प्रमुख अग—विधायिका, कायपालिका व न्यायपालिका होते हैं। परन्तु कुछ विचारको के अनुसार सरकार के कार्यों को दो समूहो—नीति निर्धारण और नीति का कार्यान्वयन—मे रखा जाना सबसे सरल है। यहाँ पर फाइनर का मत भी दिया जाना आवश्यक और उचित प्रतीत होता है। मोटे रूप मे वह सरकार की शक्तियो को दो भागा मे बांटता है—(1) नीति निर्माण, और (2) प्रशासन। परन्तु जब वह इस विभाजन को राजनीतिक गतिविधियो के बारे मे लागू करता है तो उसके

[1] Carter and Herz write Thus government as the agent of the state has been forced more and more to assume positive responsibility for the creation and distribution of wealth In so doing it has almost universally become big government, both in scope and in the numbers of those employed in carrying on its responsibilities —*Government and Politics in the Twentieth Century* p 9

अनुसार नीति निर्धारण शाखा के केन्द्र, निर्वाचक मण्डल, राजनीतिक दल, विधायिका, मन्त्रिमण्डल और राज्य का अध्यक्ष होते है। दूसरी शाखा के केन्द्र मन्त्रिमण्डल, राज्य का अध्यक्ष, नागरिक सेवा और न्यायालय है। इस प्रकार राजनीतिक गतिविधियो के सात मुख्य केन्द्र है, जिनका सहयोग सरकार के किसी भी काय को पूरा करने के लिए आवश्यक है।[1] पूर्वोक्त विभिन्न मता म काफी वास्तविकता है, फिर भी सामा यत व्यवहार मे सरकार की तीन ही प्रमुख शाखाएँ पायी जाती हैं। जिनका सरकार के तीन मुख्य कार्यों से सम्बन्ध है। ये है—कानून व नियम बनाना (rule making), कानूनो व नियमो को लागू करना (rule application), और नियमो का उल्लघन अथवा अतिक्रमण (violation) होन पर न्याय व्यवस्था का होना (rule adjudication)। तीनो ही प्रकार के कार्यों को सरकार की तीन प्रमुख शाखाएँ—विधायिका, कायपालिका और न्यायपालिका करती हैं। इन सभी का विस्तारपूण विवेचन आगे के अध्यायो मे किया गया है। यहा पर हम सरकार की तीनो शक्तियो से सम्बन्धित महत्वपूण शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त का विवेचन करेंगे।

3 शक्ति-पृथक्करण का सिद्धान्त

सोलहवी शताब्दी मे जीन बोदा (Jean Bodin) ने राजा द्वारा न्याय प्रशासन के खतरो को बताया और तर्क दिया कि न्याय करने का काय स्वतन्त्र मजिस्ट्रेटो को सौपा जाना चाहिए। जेम्स हेरिंगटन ने कायपालिका और विधायिका के बीच स्पष्ट पृथक्करण पर जोर दिया। जॉन लॉक ने शासन की शक्तियो को तीन शाखाओ—विधायी, कायपालिका और फेडरेटिव (जिसका अथ कूटनीतिक शक्ति से है) म बाटा। शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त का स्पष्ट प्रतिपादन अठारहवी शताब्दी मे फ्रान्स के प्रसिद्ध लेखक मान्टेस्क्यू ने अपने विख्यात ग्रन्थ (Spirit of the Laws) म किया। उसके अनुसार सिद्धान्त की व्याख्या निम्नलिखित है

'जब विधायिका और कायपालिका की शक्तियाँ एक ही व्यक्ति या व्यक्ति समुदाय (मजिस्ट्रेटो के समुदाय) के हाथ मे केन्द्रित होती हैं, तो किसी भी प्रकार की स्वतन्त्रता नही होती, क्योकि यह भय बना रहता है कि कही राजा या सीनेट (विधायिका) मनमाने कानून पास करके उसको मनमाने ढग से लागू न करने लगे। यदि न्यायाधीश की शक्तियो का विधायिका और *कायपालिका की शक्तियो से पृथक नही किया जाता तो भी स्वतन्त्रता प्राप्त नही हो सकती।* यदि न्यायपालिका और विधायिका की शक्तिया भी मिली रहती हैं तो प्रजा के जीवन और स्वतन्त्रता पर स्वेच्छाचारी नियन्त्रण होगा, क्योकि इस दशा मे न्यायाधीश विधि निर्माता (कानून बनाने वाला) भी होगा। यदि न्यायपालिका और कायपालिका की शक्तिया मिली हुई है, तो न्यायाधीश पूर्ण रूप से आततायी बन सकता है। यदि एक व्यक्ति या व्यक्ति समुदाय कुलीन या साधारण कानून बनाये, उसको लागू करने और फसला करने के तीनो कार्यों को स्वय करने लगे, तो प्रत्येक वस्तु का अन्त हो जायेगा अर्थात् पूणतया स्वेच्छाचारी निरकुश शासन स्थापित होगा और स्वतन्त्रता का स्वप्न मे भी विचार नहीं किया जा सकेगा।

यह सिद्धान्त उस समय की राजनीतिक विचारधारा का महत्त्वपूर्ण अग बना और सयुक्त राज्य अमरीका व फ्रास की क्रान्तियो के पीछे जो राजनीतिक दशन था उसका यह महत्त्वपूण भाग रहा। 1789 मे फ्रास की सविधान निर्मात्री सभा ने यह घोषित किया कि जिस देश म शक्ति पृथक्करण की व्यवस्था नही है उस देश का शासन साविधानिक नही हो सकता। 1765 मे मॉन्टेस्क्यू के मत का समथन प्रसिद्ध अग्रेज विधिशास्त्रवेत्ता ब्लेक्स्टोन ने भी किया। मेडीसन ने

[1] Finer H *Modern Government Theory and Practice* p 109

यह तक दिया कि एक ही हाथो म विधायी, कायपालिका और न्यायिक शक्तियो का केन्द्रित होना अत्याचारी शासन की परिभाषा है।[1] 1780 मे मेसेशस्ट्स राज्य के सविधान मे शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त का समावेश किया गया। बाद मे सयुक्त राज्य अमरीका का अनुकरण मेक्सिको, अर्जेन्टाइना और चिली आदि राज्यो ने किया।

सिद्धान्त का व्यावहारिक रूप—इस सिद्धान्त को पूणतया लागू करने का अथ यह है कि विधायिका, जो एक निश्चित अवधि के लिए चुनी जाये, केवल विधि निर्माण काय करे, काय पालिका, जिसका जनता प्रत्यक्ष निर्वाचन करे या जो सयुक्त राज्य अमरीका की भाँति निर्वाचक मण्डल द्वारा अप्रत्यक्ष ढग से चुनी जाये, केवल कायपालिका सम्बन्धी काय करे और न्यायाधीश, जिनका इसी प्रकार चुनाव हो अथवा जिनकी किसी प्रकार नियुक्ति हो, अपना कार्य विधायिका व कायपालिका से स्वतन्त्र रहकर करें। कुछ प्रमुख राज्यो मे इस सिद्धान्त के क्रियात्मक रूप का सक्षिप्त विवेचन यहा दिया जाता है

सयुक्त राज्य अमरीका—सयुक्त राज्य अमरीका तथा उसके सघान्तरित राज्यो के सविधानो मे इस सिद्धान्त का समावेश है। सयुक्त राज्य अमरीका की विधायिका (काग्रेस) का जनता द्वारा एक निश्चित अवधि के लिए प्रत्यक्ष निर्वाचन होता है और राष्ट्रपति भी एक निश्चित अवधि के लिए परोक्ष रीति से चुना जाता है। राष्ट्रपति और उसके द्वारा नियुक्त विभिन्न विभागा के अध्यक्ष काग्रेस की कायवाही म उपस्थित रहकर भाग नही ले सकते और राष्ट्रपति काग्रेस का निश्चित अवधि से पूव विघटन नही कर सकता। इसी प्रकार न्यायाधीश भी स्वतन्त्र है, उनका कायकाल कायपालिका की इच्छा पर निभर नही करता। परन्तु वहा भी तीनो शाखाओ के बीच कई प्रकार से सम्पक बना हुआ है प्रथम, निरोध और सन्तुलन के सिद्धान्त के अनुसार एक शाखा के कार्यो पर दूसरी शाखा को रोक लगाने की शक्ति प्राप्त है। राष्ट्रपति काग्रेस को अपने सन्देशो द्वारा आवश्यक और वाछनीय कानून बनाने का सुझाव देता है और जब काग्रेस किसी विधेयक को पास कर देती है तो उसे उस पर एक प्रकार की प्रतिपेध या वीटो शक्ति प्राप्त है। विभिन्न विभागीय अध्यक्षो को काग्रेस की समितिया के सामने गवाही देने के लिए बुलाया जाता है और राष्ट्रपति द्वारा उच्च अधिकारियो की नियुक्तियो तथा कायपालिका द्वारा की गई सन्धिया पर सीनेट की सहमति आवश्यक है। राष्ट्रपति पर काग्रेस महाभियोग लगा सकती है। राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो को नियुक्त करता है। न्यायाधीश सरकारी अधिकारिया की अवैध कायवाहियो तथा काग्रेस द्वारा निर्मित अवैध कानूनो पर अपने निणय देते है।

दूसरे, वतमान शताब्दी म सयुक्त राज्य अमरीका मे बहुत से स्वतन्त्र नियामक आयोग (independent regulatory commissions) बने हैं उनके कारण भी शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त सशोधित हुआ है। उदाहरण के लिए फेडरल ट्रेड कमीशन की रचना काग्रेस ने 1914 मे की। इसका उद्देश्य व्यवसाय और व्यापार को विनियमित करता है, जो एक प्रकार का विधायी काय है। परन्तु कमीशन नियमो का उल्लघन करने वालो की जाँच भी करता है, जो एक प्रकार से कायपालिका का काय है और साथ ही यह उनके विरुद्ध मुकदमो की सुनाई करता है, यह न्यायिक काय है।

तीसरे, शासन की विविध शाखाआ के बीच समन्वय बनाये रखने म राजनीतिक दलो का महत्वपूण भाग है। गैटेल के मतानुसार सयुक्त राज्य अमरीका म, जहाँ पर शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त को एक अति तक ले जाया गया है और जा सरकारी काय करने की एकता के लिए खतरे से पूण

[1] The accumulation of all powers legislative executive and judiciary in the same hands, whether of a few or many and whether self-appointed hereditary or elective may justly be pronounced the very definition of tyranny *The Federalist* 1788

है, राजनीतिक दलो का उदय हुआ है, जिनका सगठन शक्तिशाली है और जो शासन के सभी विभागो को एक साथ बाँधने वाले हैं। फाइनर का भी कथन है कि 'सयुक्त राज्य अमरीका म (शासन की) तीनो शक्तियो को दलीय पद्धति ने आवश्यक गति प्रदान की है।'[1]

ग्रेट ब्रिटेन—ससद पद्धति वाले देशो म, जिनमे ग्रेट ब्रिटेन सवप्रमुख है, मन्त्रिमण्डल एक प्रकार से विधायिका की समिति होता है अर्थात् विधायिका और कायपालिका के बीच अत्यधिक निकट सम्पक रहता है। मन्त्री विधायिका की कायवाही मे मुख्य भाग लेते हैं, कानून बनवाते हैं और उन्हे लागू भी कराते हैं। मन्त्रिमण्डल कॉमन सभा का अवधि से पूव विघटन भी करा सकता है और लाड सभा के नये सदस्यो (peers) को भी बनवाता है। दूसरी ओर, विधायिका मन्त्रिमण्डल को हटा सकती है। कायपालिका न्यायाधीशो को नियुक्त करती है और कुछ प्रकार के मुकदमो की सुनवाई भी करती है। इस प्रकार ग्रेट ब्रिटेन मे पृथक्करण के स्थान पर एकीकरण है। कायपालिका कानूनो के अधीन नियम और विनियम (rules and regulations) भी बनाती है। न्यायाधीश सरकारी अधिकारियो के आचरण पर, विधि के नियम के सिद्धान्त के अनुसार, निणय देते हैं। यह सब कुछ होते हुए भी ब्रिटेन म शक्तियो का आशिक पृथक्करण है। विधि निर्माण विधायिका का काय है और विधायिका कायपालिका से पृथक है। कायपालिका की शक्ति ताज और उसके मन्त्रियो मे निहित है, विधायिका इस काय मे अनुचित हस्तक्षेप नही करती। न्यायपालिका के कार्य मे कायपालिका तथा विधायिका भी हस्तक्षेप नही करती। भारत मे भी शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त को ब्रिटेन की भाँति ही लागू किया गया है।

फ्रास—1791 के सविधान के अन्तगत एक सदन वाली एसेम्बली को स्थायी निकाय बनाया गया था, जिसका चुनाव प्रति दो वष बाद होता था और राजा को उसे विघटित करने का अधिकार न था। राजा विधि निर्माण मे भी पहल न कर सकता था, परन्तु उसे विधेयक पर एक प्रकार के प्रतिषेध (suspensive veto) का अधिकार मिला था। एसेम्बली के सदस्य मन्त्रीपद धारण न कर सकते थे। इस प्रकार विधायी और कायकारी शाखाओ को एक-दूसरे से पृथक किया गया था, यद्यपि मन्त्रियो को एसेम्बली मे बोलने और वाद विवाद मे भाग लेने का अधिकार दिया गया था। एसेम्बली और राजा को किसी भी प्रकार के न्यायिक काय न सौंपे गये थे। अत 1791 का सविधान शक्तियो के पृथक्करण सिद्धान्त के अतिवादी रूप पर आधारित था, परन्तु व्यवहार मे वह सविधान सफल न हो सका। अतएव तीसरे और चौथे गणतन्त्रों के सविधानो मे शक्तियो के पृथक्करण सिद्धान्त की परम्परा को त्याग दिया गया, उसके स्थान पर सन्तुलन के सिद्धान्त (theory of balance) को अपनाया गया। पाँचवें गणतन्त्र के सविधान मे भी सन्तुलित ससद शासन (*balanced parliamentary government*) के विचार को कायम रखने का प्रयास किया गया है। परन्तु यह बात सत्य नही प्रतीत होती। केबिनेट को ससद से पृथक किया गया है, यह उसे स्वतन्त्र बनाने का एक साधन है। परन्तु लोक निणय (*referendum*) की व्यवस्था किये जाने तथा ऐसे उपबन्धो को सम्मिलित किये जाने का, जो बजट और सरकारी विधेयको को पास कराने मे बहुत सहायक होगे, परिणाम कायपालिका की

[1] The necessary movement of things in the United States has obliged the three powers to move They cannot but move in concert The indispensable institution has been fouud in the party system Finer H *op cit* p 103

[2] The British Government has rather what can be called fusion of powers Cabinet members the executive are the leaders of Parliament Thus the executive and legislative are the leaders of Parliament *Thus the executive and legislative functions are fused and* together they lay down the rules for the judiciary Dillon et al *Introduction to Political Science* p 37

प्रधानता को कायम करना होगा। आलोचको ने इसे राष्ट्रपतीय और सासद शासन पद्धतिया का मिश्रण बताया है अथवा एक ऐसी पद्धति, जिसका उद्देश्य ससद के महत्त्व को कम करना है।[1]

सोवियत सघ—सोवियत सघ के सविधान म इस सिद्धात का ध्यान नही रखा गया है। वहाँ प्रेसीडियम (Presidium) एक ऐसी अनोखी सस्था है जो तीनो ही प्रकार के काय करती है। स्वय एक सोवियत लेखक विशिस्की का कथन है कि 'ऊपर से नीचे तक सोवियत सामाजिक व्यवस्था एक ही भावना से प्रेरित है, वह यह कि सत्ता एक (अविभाजित) है और वह परिश्रम करने वालो की है। सवसघीय साम्यवादी दल के कायक्रम ने शक्ति पृथक्करण सिद्धात को अस्वीकृत किया है।'[2]

सिद्धात की समालोचना—यह सच है कि एक व्यक्ति या समूह के हाथो मे शासन की सभी या अधिकाश शक्तिया का केंद्रित होना अत्याचारी शासन की ओर ले जाने वाला है। इसी कारण प्राचीन राजा निरकुश होते थे और आजकल अधिनायकशाही मे भी व्यक्तिया की स्व तन्त्रता 'नही' के समान रहती है। सिद्धात रूप म यह उचित ही है कि शासन के तीन मुख्य कार्यों को तीन शाखाओ या अगो को सौपा जाये, जिससे वे अपना-अपना काय सुचारु रूप से कर सकें, किन्तु इसे क्रियात्मक रूप देने मे कठिनाइयाँ हैं और यह व्यवहार मे दोष रहित नही है। सयुक्त राज्य अमरीका तथा ग्रेट ब्रिटेन आदि मे इस सिद्धात के क्रियान्वित रूप को देखने से स्पष्ट है कि इसे कही भी पूणतया लागू नही किया जा सकता। वास्तव म, इस सिद्धात को पूण रूप से लागू करना असम्भव है, क्याकि शासन की विभिन्न शाखाओ को एक दूसरे से भिन्न दिशाआ मे जाने से रोकने वाली व्यवस्था का होना अति आवश्यक है। सयुक्त राज्य अमरीका मे यह काय सविधान के बाहर 'अदृश्य सरकार' अर्थात् राजनीतिक दलो द्वारा किया जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से सयुक्त राज्य अमरीका मे भी इस सिद्धात का इतिहास परिवतनशील रहा है। 1789 से गृह-युद्ध के समय तक काग्रेस, सरकार की सबसे अधिक प्रभावयुक्त शाखा रही। गृह युद्ध से लेकर बीसवी शताब्दी के आरम्भ तक न्यायालयो का महत्त्व बढा हुआ रहा। प्रथम विश्वयुद्ध के आरम्भ से काय पालिका की शक्तियो मे वृद्धि हो रही है और अन्य दोना शाखाओ पर उसकी सर्वोपरिता स्पष्ट दिखाई पडती है।[3]

व्यवहार मे, शासन का पृथक पृथक् भागो मे बाटना कृत्रिम भी है। वास्तव मे, शासन एक पूण वस्तु (an organic whole) है, जिसके विभिन्न अगा के बीच निकट सम्पक रहना आवश्यक है। अतएव शक्ति पृथक्करण का सिद्धात पूणतया मान्य नही हो सकता। शक्ति पृथक्करण के सिद्धात का एक बडा दोष यह है कि इसके कारण शासन के विभिन्न अगो के बीच एक प्रकार की अनुचित स्पर्धा चलती है, एक दूसरे के प्रति सन्देह की भावना पैदा होती है और उनम विवाद के अवसर आते हैं। सयुक्त राज्य अमरीका मे काग्रेस ने प्रशासन पर अपना नियन्त्रण बनाये रखने के लिए अनेक प्रशासनिक अभिकरण और सेवायें कायम की है। इस सिद्धात को मानते हुए यदि कायपालिका का अध्यक्ष एक दल का हो और विधायिका मे बहुमत दूसरे दल का हो तो काय पालिका और विधायिका के बीच शक्ति के लिए एक प्रकार का सघष पैदा होना स्वाभाविक है, जिसके परिणामस्वरूप शासन-काय सुगमतापूवक नही चल सकता। हरमन फाइनर के शब्दो मे

---

[1] but taken together with the introduction of the referendum and of the devices which favoured the passage of the budget and of government legislation it would seem designed to create a degree of executive dominance comparable to that of modern British government rather than to the position of a cabinet in a system of balanced parliamentary government Vile M J C *Constitution and the Separation of Powers* p 260

[2] Vyshinsky A V *The Law of the Soviet State* p 318

[3] Vanderbilt A T *The Doctrine of Separation of Powers* pp 49-55

'शक्ति का पृथक्करण शासन व्यवस्था मे शिथिलता तथा सघर्ष को जन्म देता है।'

गैटेल कहता है कि यदि मान भी लिया जाय कि स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए शक्तियो का विस्तृत पृथक्करण आवश्यक है तो इस सिद्धान्त को व्यवहार मे सफलतापूर्वक लागू नही किया जा सकता। प्रजातन्त्रात्मक राज्य मे उस अग म शक्तियो का केन्द्रीकरण जो जनता का प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व करता हो जन-स्वातन्त्र्य की शक्तियो के स्वतन्त्र और अनुत्तरदायी विभागो मे बाट देने की अपेक्षा अधिक अच्छी प्रकार से सुरक्षा कर सकता है। तथ्य तो यह है कि निरोध और सन्तुलन का परिणाम बहुत सीमा तक यह हो सकता है कि थोडे से लोगो के हाथ मे सारे नियन्त्रण की बागडोर आ जाये।[1] अत मॉन्टेस्क्यू की यह धारणा कि स्वतन्त्रता की रक्षा शक्तियो के पृथक्करण द्वारा हो सकती है, सर्वथा निर्मूल है। स्वतन्त्रता 'शक्ति विभाजन' या 'निरोध और सन्तुलन के सिद्धान्त' पर निर्भर नही करती, वरन् जनता की भावना एव स्वतन्त्रता के प्रति उसके प्रेम पर निर्भर करती है।

अन्त मे, यह सिद्धान्त शासन के विभिन्न भागो की भ्रमात्मक क्षमता पर आधारित है। प्रजातन्त्र म तो विधायी विभाग अन्य दोनो विभागो की अपेक्षा महत्त्वपूर्ण एव शक्तिशाली होता है। लोकतन्त्र के विकास के साथ साथ कार्यपालिका की स्थिति इसके अधीन हो गयी है। आग के अनुसार, कार्यपालिका पर विधायिका का नियन्त्रण उत्तरदायी सरकार की पहली शर्त है, जिसके अभाव मे लोकतन्त्र सफल नही हो सकता। देश के वित्त पर अधिकार होने के कारण भी विधायिका की शक्ति सर्वोपरि हो जाती है, क्योकि उसके हाथ म कोष का नियन्त्रण रहता है। वित्त विभाग प्रत्येक वस्तु का नियन्त्रण करता है। गिलक्राइस्ट कहता है कि 'वित्त पर नियन्त्रण होने से विधायिका कार्यपालिका को मर्यादित करती है तथा उस पर नियन्त्रण करती है, चाहे सैद्धान्तिक रूप से कार्यपालिका कितनी ही स्वतन्त्र क्यो न हो।' इसी प्रकार यद्यपि लोकतन्त्र मे कार्यपालिका की स्वतन्त्रता के बडे गीत गाये जाते है, किन्तु मैकाइवर के शब्दो मे न्यायपालिका स्पष्ट रूप से विधायिका के अधीन होती है।

राजशास्त्र के विद्वानो मे इस प्रश्न पर एक मत नही है कि मॉन्टेस्क्यू ने अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन करते समय तीनो शक्तियो के पूर्ण अथवा सीमित पृथक्करण का अनुमोदन किया। हम अधिकतर लेखको के इस मत से सहमत है कि मॉन्टेस्क्यू तीन विभागो के बीच पूर्ण शक्ति पृथक्करण नही चाहता था। उसके सामने ब्रिटेन का उदाहरण एक आदर्श रूप म था, अस्तु वह सीमित पृथक्करण ही चाहता था। शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त का बहुत महत्त्व है, विशेष रूप स तब जबकि हम इससे यह अर्थ लें कि शासन के तीनो अगो पर नियन्त्रण पृथक पृथक व्यक्ति-समूहो का हो और उनम से किसी एक को भी अन्य दो विभागो के ऊपर नियन्त्रण शक्ति प्राप्त न हो। इस प्रकार का पृथक्करण व्यक्तियो की स्वतन्त्रता का रक्षक और अत्याचारी शासन से बचाने वाला है। न्यूमेन का मत, जो मान्य प्रतीत होता है, अग्रलिखित है अत्यधिक पृथक्करण से तो उत्तरदायित्व नष्ट हो सकता है, कार्य की प्रगति रुक सकती है। सरकार ही नष्ट हो सकती है। सरकार स्वतन्त्र रहनी चाहिए, परन्तु इसम शासन करने की शक्ति अवश्य ही बनी रहनी चाहिए। सफल सावैधानिक और प्रजातन्त्रात्मक सरकार की माँग है कि शक्ति पृथक्करण व सयुक्त शासनतन्त्र की सम्भावना म मेल बना रहे। इस प्रकार शक्ति पृथक्करण सभी प्रजातन्त्रात्मक देशो म एक जीवित शक्ति है, जो असीमित और अत्याचारी शक्ति के प्रयोग पर रोक लगाती है। इसके लिए नेतृत्व का अभाव नही होना चाहिए, क्योकि उसके बिना शीघ्र ही सावैधानिक गतिरोध और अधिनायकशाही पैदा हो जायेंगे।[2]

---

[1] Gettell R G *Political Science* p 215

[2] Neumann R G *European and Comparative Government* p 669

4 निरोध व सन्तुलन का सिद्धान्त

सिद्धान्त की व्याख्या—'निरोध व सन्तुलन' भी कोई सर्वथा नया सिद्धान्त नहीं है। पोलिबियस और सिसरो (*Polibius and Cicero*) ने रोमन गणतन्त्र की अच्छाई का कारण उसके सगठन म निरोध व सन्तुलन के सिद्धान्त की व्यवस्था को बताया है। माण्टेस्क्यू, ब्लैक्स्टोन व फेडरलिस्ट द्वारा प्रतिपादित शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त म ही निरोध व सन्तुलन का सिद्धान्त (Theory of checks and balances) समाविष्ट है। व्यवहार म, प्राय सभी आधुनिक राज्यो म किसी रूप मे निरोध व सन्तुलन के सिद्धान्त की व्यवस्था है। जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियो से बनी विधायिका के कार्यों पर तीन प्रकार स रोक लगायी जाती है। पहले, विधायिका सविधान की सीमाओ के बाहर नही जा सकती। दूसरे, साधारणतया अधिकतर राज्यो म दो सदन वाली विधायिकायें हैं और दोनो सदन एक दूसरे की अनुचित कार्यवाही पर रोक लगाते है। तीसरे, लोक निर्णय द्वारा विधायिका के कार्यों पर निर्वाचक मण्डल स्वय रोक लगा सकता है।

निरोध और सन्तुलन का सिद्धान्त स्वभावत शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त के साथ जुडा है। शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त अपने पूर्ण रूप म न तो सम्भव है और न वाछनीय ही, जैसा कि पूर्वगामी खण्ड मे बताया जा चुका है। जिस प्रकार आँख, कान, हाथ, पैर आदि शारीरिक अगो के कार्य पृथक पृथक हैं, परन्तु शरीर से पूर्णतया पृथक होकर कोई भी अपना कार्य पूरा नही कर सकते। इसी कारण सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान निर्माताओ ने शक्ति पृथक्करण के इस गम्भीर दोष को समझकर ही निरोध और सन्तुलन के सिद्धान्त को उसके साथ जोडा।

इस सिद्धान्त के अनुसार विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के कार्यो पर दृष्टि रखती है तथा उन्हें अपनी सीमा का उल्लघन नही करने देती। इसी प्रकार कार्यपालिका का यह कार्य है कि वह विधायिका और न्यायपालिका की गतिविधियो पर दृष्टि रखे। ऐसे ही न्यायपालिका को यह अधिकार है कि वह विधायिका और कार्यपालिका की मनमानी करने से रोके और एक दूसरे के अधिकार क्षेत्र म अनुचित हस्तक्षेप न होने दे। इस प्रकार शासन के विभिन्न अग एक-दूसरे के अनुचित एव अवाछनीय कार्यो पर नियन्त्रण रखते हैं तथा शासन तन्त्र के सन्तुलन को बनाये रखते हैं। इस सिद्धान्त के कुछ उदाहरण आगे दिये जाते है

सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान ने विधायिका को यह अधिकार दिया है कि वह सघीय सर्वोच्च न्यायालय के अन्तर्गत अन्य न्यायालयो की स्थापना की व्यवस्था कर सकती है तथा सघीय सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो पर नियन्त्रण रखती है। दूसरी ओर कार्यपालिका (राष्ट्रपति) द्वारा की गयी नियुक्तियाँ तथा विदेशो के साथ की गयी सन्धियाँ उस समय तक प्रभावी नही हो पाती जब तक विधायिका का उच्च सदन (सीनेट) उनकी सम्पुष्टि नही कर देता। विधायिका को राष्ट्रपति पर महाभियोग लगाकर उसे पदच्युत कर देने का भी अधिकार प्राप्त है। इसके अतिरिक्त विधायिका आवश्यक बजट पास न करके राष्ट्रपति को प्रशासन के क्षेत्र मे मनमानी करने से रोक सकती है। इस प्रकार विधायिका कार्यपालिका पर नियन्त्रण रखती है। कार्यपालिका अर्थात् राष्ट्रपति को अधिकार है कि वह विधायिका द्वारा पारित विधेयक को अपने प्रतिषेध अधिकार द्वारा कानून न बनने दे और इस प्रकार विधि निर्माण के क्षेत्र मे विधायिका को मनमानी करने से रोक दे। दूसरी ओर, राष्ट्रपति न्यायाधीशो की नियुक्ति के अधिकार तथा क्षमादान अधिकार के प्रयोग द्वारा न्यायपालिका पर भी नियन्त्रण रखता है। इसी प्रकार न्यायपालिका भी विधायिका और कार्यपालिका पर नियन्त्रण रखती है। न्यायपालिका को सविधान ने न्यायिक समीक्षा या पुनरवलोकन का अधिकार प्रदान किया है जिसके द्वारा वह काग्रेस द्वारा पारित

विधेयको को असाविधानिक घोषित कर सकती है, यदि वह विधेयक यायपालिका की दष्टि म सविधान की किसी धारा या प्राविधान का अतिक्रमण करता हो। सयुक्त राज्य अमरीका के सर्वोच्च यायालय ने इस अधिकार का बडे व्यापक रूप मे प्रयोग किया है। इसी प्रकार याय पालिका कायपालिका (राष्ट्रपति) द्वारा उद्घोषित एव प्रख्यापित अध्यादेशा तथा प्रशासनिक नियमो को भी अवैध घोषित करके उस पर निय त्रण रखती है।

उपयुक्त उदाहरणो से निरोध और स तुलन का सिद्धा त स्पष्ट रू प मे समझ म आता है। इसके अनुसार शासन के विभिन्न अग अपने अधिकार-क्षेत्र म स्वत त्रतापूवक काय करते हुए एक दूसरे पर दृष्टि रखते है जिससे कि कोई भी अग अपने क्षेत्र की सीमा का उल्लघन करके मनमानी न करने लगे। एक ओर, एक अग दूसरे अगो पर रोक लगा सकता है, दूसरी ओर वहाँ यह भी व्यवस्था है कि शासन का स तुलन न बिगडे। उदाहरण के लिए, यदि राष्ट्रपति काग्रेस द्वारा पारित किसी विधेयक पर प्रतिषेध का प्रयोग करे और यदि काग्रेस उसे दूसरी बार 2/3 के बहुमत मे पास कर दे तो वह विधेयक कानून का रूप धारण कर सकेगा। इस प्रकार शासन की प्रत्येक शाखा को अ य दोनो शाखाओ के कार्यों पर कुछ रोक लगाने का अधिकार मिला है, पर तु इस सीमा तक कि स तुलन बना रहे और शासन की कोई भी शाखा पागलपन न करे। यह बात ध्यान देने की है कि निरोध और स तुलन के सिद्धा त के लागू होने से शक्ति पृथक्करण सिद्धा त मे सुधार हुआ है। सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान निर्माण के पश्चात् जितन भी सविधानो का निमाण हुआ, लगभग सभी मे यूनाधिक रूप म निरोध और स तुलन के सिद्धा त का पालन किया गया है, विशेषतया उन देशो मे जि होन अमरीका की शासन प्रणाली को अपना आदश बनाया है।

पर तु 'निराध और सन्तुलन' की प्रणाली भी सवथा दोष हीन नही कही जा सकती। इस प्रणाली के ज मगृह अमरीका मे ही जब कायपालिका और विधायिका एक ही राजनीतिक दल के हाथ मे आ जाती है, तो प्रणाली का क्रिया वयन विफल हो जाता है, क्योकि दलीय निष्ठा के आधार पर दोनो मे गठब धन हो जाता है और वे एक दूसरे पर निय त्रण रखने की बात भुला बैठते हैं। जब दोनो अग विरोधी दलो के हाथो म होते हैं तो गतिरोध पैदा होता है। इस सिद्धा त का समावेश सविधान निर्माताओ ने इस उद्देश्य से किया था कि शासन के किसी एक अग को अत्यधिक शक्ति प्राप्त न हो, क्योकि वे असीमित जनत त्र मे विश्वास न रखते थे। इसका फल यह हुआ कि शासन काय चाहे कानून बनाने या उनको लागू करने सम्ब धी हो, कठिन और पेचीदा हा गया। विधायिका और कार्यपालिका द्वारा एक दूसरे पर रोक लगाने के फलस्वरूप शासन काय काफी सुगमता से नही चल सकता था जैसा कि सासद प्रणाली के अ तगत होता है। प्रेसीडे ट विलसन ने 'New Freedom' म इस सिद्धा त का दोष बताते हुए लिखा है 'सरकार एक जीवित चीज है जिसके विभिन्न अग एक दूसरे पर रोक लगाकर जीवित नही रह सकते।'

निरोध और स तुलन के सिद्धा त के बारे म अभी तक वाद विवाद हो रहा है और लेखक व आलोचक किसी एक निश्चित निष्कष पर नही पहुँच सके हैं। इसी कारण आजकल भी सयुक्त राज्य अमरीका मे सविधान की किसी अ य विशेषता के सम्ब ध मे इतना अधिक मतभेद नही है जितना कि निरोध और स तुलन के सिद्धा त के विषय मे है। इस विषय मे हरमन फाइनर लिखता है कि मा टेस्क्यू द्वारा प्रतिपादित शक्ति पृथक्करण सिद्धा त इस अनुभव पर आधारित है कि प्रत्येक ऐसा व्यक्ति जिसे शक्ति सौंपी जाती है उनका दुरुपयोग कर सकता है। इसको रोकने के लिए यह आवश्यक है कि एकाकी शक्ति के ऊपर (दूसरी) शक्ति द्वारा रोक लगा दी जाय, पर तु इस प्रकार कि स तुलन बना रहे। परिस्थितियो ने तीनो ही विभागो को एक दूसरे से मिलकर काय करने पर विवश कर दिया और यह काय राजनीतिक दलो द्वारा सम्भव हुआ।

तीसरा अध्याय

राज्यो (अथवा सरकारो) के विभिन्न रूप

1 वर्गीकरण के अधिकार

अधिकतर लेखको का यह मत है कि राज्यो का वर्गीकरण नही किया जा सकता, क्योकि सब राज्य समान होते हैं। प्रत्येक राज्य के चार तत्त्व होते हैं—भूमि या प्रदेश, जनसख्या, सरकार और राज सत्ता। प्रत्येक राज्य के आवश्यक कर्तव्य भी समान होते हैं। वर्गीकरण उन्ही वस्तुओ का किया जाता है जो एक दूसरे से कुछ रूपो मे समान होती है और कुछ मे भिन्न। किन्तु राज्यो के रूपो मे भिन्नता नही। अत उनका वर्गीकरण नही किया जा सकता। प्रसिद्ध राजशास्त्रवेत्ता विलोबी न लिखा है कि राज्यो का वर्गीकरण नही किया जा सकता क्योकि राज्य का अन्य मानवी समुदायो से अलग करने वाला तत्त्व सर्वोपरि सत्ता है, जो अनिवार्य रूप से सभी राज्यो मे पायी जाती है। अत सर्वोपरि सत्ता के आधार पर राज्यों का वर्गीकरण नही हो सकता। वास्तव मे राज्या का आवश्यक तत्त्व सरकार ही एक ऐसा आधार है जिस पर किया गया राज्यो का वर्गीकरण शास्त्रीय और लाभदायक हो सकता है। अतएव ऐसे वर्गीकरण को राज्यो का वर्गीकरण न मानकर सरकारो का वर्गीकरण ही माना जाता है।[1]

परम्परा के आधार पर राज्यो को जनतन्त्रो (पूर्ण या सीमित), गणतन्त्रा, कुलीनतन्त्रो, प्रजातन्त्रो, धर्मतन्त्रा (theocracies), अत्याचारी शासन (despotisms), सामन्ती राज्य आदि मे वर्गीकृत किया गया है। अपने धन, साधनो, सैनिक शक्ति और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो मे प्रभाव के महत्त्व पर राज्यो को 'महान् शक्तियां' या 'विश्व शक्तियो', 'कम शक्तिशाली राज्य' (lesser powers) और 'छोटे राज्य' (petty states) मे वर्गीकृत किया गया है। राज्यो का अन्य आधारो पर भी वर्गीकरण हुआ है, यथा स्वतन्त्रता की मात्रा के आधार पर 'प्रभुत्वपूर्ण', 'प्रभुत्वहीन', 'रक्षित' (protected)। जिन राज्यो का समुद्री तट बडा है और समुद्री शक्ति भी बडी है उन्हे 'समुद्री' (maritime) शक्तियां कहा जाता है। जो चारा ओर स्थली भागो से घिरा है, उन्हे स्थल से घिरा हुआ (land-locked) कहा जाता है। जिनका क्षेत्र द्वीपा पर है, उन्हे समुद्र से घिरा हुआ (insular) कहा जाता है। साधारणत वर्गीकरण के दो महत्त्वपूर्ण और माने हुए सिद्धान्त हैं—(1) उन लोगो की सख्या, जिनमे राज सत्ता निहित है, और (2) राज्य के सगठन के रूप। राज्यो (अथवा सरकारो) का वर्गीकरण विभिन्न लेखको ने भिन्न भिन्न प्रकार से किया है। सबसे प्राचीन और परम्परागत वर्गीकरण के अनुसार राज्य तीन प्रकार के होते है—राजतन्त्र, कुलीनतन्त्र और जनतन्त्र।

---

[1] But in the last analysis such a classification is nothing more than a classification of governments and not of states Consistency and scientific logic therefore require that such classifications be placed in their proper category and labelled as classification of *governments* and not of *states* Garner J W *Political Science and Government* 71

अरस्तू का वर्गीकरण—अति प्राचीन काल मे ग्रीस के प्रसिद्ध दार्शनिक अरस्तू ने राज्या का वर्गीकरण दो आधारो पर किया था—प्रथम, राज्य की सर्वोपरि सत्ता या शासन शक्ति कितने मनुष्यो के हाथो मे है और द्वितीय, राज्य का उद्देश्य अच्छा है या बुरा। यदि शासन का सचालन लोक-कल्याण के लिए होता है तो वह अच्छा है और यदि शासकगण शासन शक्ति का प्रयोग अपने हितसाधन के लिए ही करता है तो वह शासन बुरा अथवा विकृत है। इस प्रकार राज्य (शासन) की दो दशाएँ होती हैं। साधारण दशा मे शासक प्रजा के हितो का ध्यान रखते हैं परन्तु विकृत दशा मे सरकारे अनेक प्रकार के अत्याचार करती है और शासक अपने ही हितो का ध्यान रखते ह। अत उसके अनुसार राज्यो (या सरकारो) का वर्गीकरण निम्न प्रकार है

शासकों की सख्या	साधारण दशा	विकृत दशा
एक व्यक्ति का शासन	राजतन्त्र या एकतन्त्र (Monarchy)	स्वेच्छाचारी एकतन्त्र (Tyranny)
कुछ व्यक्तियो का शासन	कुलीनतन्त्र (Aristocracy)	वग (धनिक) तन्त्र (Oligarchy)
बहुसख्यक जनता का शासन	बहुतन्त्र (Polity)	प्रजातन्त्र (Democracy)

उपर्युक्त की आलोचना—*उपर्युक्त वर्गीकरण मे प्रजातन्त्र से अभिप्राय भीडतन्त्र से है।* अरस्तू के मतानुसार प्रजातन्त्र भीड अथवा अज्ञानियो का शासन था। जिसे आजकल हम प्रजातन्त्र कहते हैं, उसके लिए अरस्तू ने तो बहुतन्त्र शब्द का प्रयोग किया है। यह वर्गीकरण अन्य प्राचीन विद्वानो के वर्गीकरण से अधिक शास्त्रीय है, क्योकि इसमे केवल शासको की सख्या को वर्गीकरण का आधार नही माना गया है वरन् राज्य के उद्देश्य पर भी काफी जोर दिया गया है। फिर भी उसके वर्गीकरण की कई आधारो पर आलोचना की गयी है। सर्वप्रथम, आजकल राजतन्त्र और कुलीनतन्त्र जैसा भेद नही पाया जाता और इग्लैण्ड जैसे राज्यो मे तीनो ही प्रकार के राज्यो के लक्षणो का सम्मिश्रण पाया जाता है। दूसरे, लीकाक ने बताया है कि इस वर्गीकरण का प्रयोग सावैधानिक या सीमित राजतन्त्र के सम्बन्ध मे नही किया जा सकता। इस वर्गीकरण के विरुद्ध यह बात और कही जाती है कि कोई ऐसा राज्य नही है जहाँ वास्तविक (राजनीतिक) राज सत्ता एक ही व्यक्ति या कुछ व्यक्तियो तक सीमित रही हो। आधुनिक काल मे तो जनता मे ही राज-सत्ता निहित होती है। अतएव राज सत्ता के आधार पर किया गया वर्गीकरण व्यवहार मे मूल्यहीन है। गार्नर कहता है कि अरस्तू का वर्गीकरण सख्या पर आधारित है, आत्मिक स्वरूप पर नही, यह सख्यात्मक है, गुणात्मक नही। सीले ने इस वर्गीकरण की इस आधार पर आलोचना की है कि यह आज के राज्यो पर लागू नही होता। *वास्तव मे, अरस्तू नगर-राज्यो को ही जानता था* जो आज के देशीय राज्यो से अत्यन्त भिन्न थे।

अन्य वर्गीकरण—अरस्तू के बाद अनेक विद्वानो ने राज्यो का वर्गीकरण किया है। इनमे मॉन्टस्क्यू, ब्लन्शली, मेरियट और लीकॉक के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ब्लन्शली ने अरस्तू के वर्गीकरण का मौलिक रूप माना है, पर अपनी ओर से भी उसने शासन का एक और रूप जोड़ा है। चौथे प्रकार का राज्य उसने धर्मतन्त्र बतलाया है, जो विकृत होने पर प्रतिमातन्त्री शासन कहलाता है। परन्तु आजकल राजशास्त्र के पण्डित, धर्म को राजनीति से पृथक करके, शासन के रूपो का विभाजन करते हैं। मॉन्टस्क्यू ने राज्यो के तीन प्रकार बताये—गणतन्त्र, राज

तन्त्र और स्वेच्छाचारी एकतन्त्र। गणतन्त्र में राज सत्ता जनता के मुख्य भाग या पूर्ण जनता में निहित होती है। राजतन्त्र में राजा सर्वोपरि होता है, परन्तु वह निश्चित विधियों और परम्पराओं के अनुसार शासन करता है, जबकि निरंकुश शासक स्वेच्छाचारी होता है। मेरियट का वर्गीकरण बड़ा रोचक है, उसके वर्गीकरण के तीन आधार हैं प्रथम, शासन शक्ति का विभाजन—इस आधार पर राज्य दो प्रकार के होते हैं—एकात्मक और संघात्मक। दूसरा आधार है संविधान का स्वभाव। संविधान दो प्रकार के होते हैं—सुसंशोध्य और दुस्संशोध्य। तीसरा आधार है विधायिका और कार्यपालिका का आपसी सम्बन्ध—इस आधार पर भी राज्य दो प्रकार के होते हैं—संसदात्मक और अध्यक्षात्मक। अतः लीकॉक का वर्गीकरण सर्वश्रेष्ठ कहा जा सकता है। वह आधुनिक राज्यों को दो भागों में बाँटता है—स्वेच्छाचारी एकतन्त्र और जनतन्त्र। उसने जनतन्त्र को भी दो भागों में बाँटा है—(1) सांविधानिक राजतन्त्र, जहाँ राजा नाममात्र के लिए होता है और वास्तविक शक्ति विधायिका के प्रति उत्तरदायी मन्त्रिमण्डल के हाथ में होती है। (2) गणतन्त्र, जहाँ कार्यपालिका का अध्यक्ष एक निश्चित अवधि के लिए जनता द्वारा निर्वाचित व्यक्ति होता है। इसके अतिरिक्त, लीकॉक के अनुसार सांविधानिक राजतन्त्र और गणतन्त्र में से प्रत्येक एकात्मक और संघात्मक रूप धारण कर सकता है।

जनमत के अनुसार राज्यों का वर्गीकरण—सॉल्टो ने, शासनतन्त्र के विभिन्न अंगों का शासन-सत्ता से जो सम्बन्ध हैं, उनके बारे में जनमत के अनुसार राज्यों का वर्गीकरण किया है। जनमत के दृष्टिकोणों से उसने सरकारों को चार प्रकार की बताया है—(क) संसदीय—इस प्रकार की शासन प्रणाली में सरकार को निरन्तर निर्वाचित विधानमण्डल के समर्थन पर निर्भर रहना पड़ता है। इस प्रकार के राज्यों में ग्रेट ब्रिटेन, बेल्जियम, फ्रांस, इटली व भारत आदि हैं। (ख) प्रत्यक्ष—प्रत्यक्ष शासनतन्त्र में विधानमण्डल की भाँति शासनाधिकारियों का भी निर्वाचन किया जाता है। इस व्यवस्था में शासनतन्त्र के अधिकारियों को अपने कार्यकाल के लिए विधानमण्डल के समर्थन पर निर्भर नहीं रहना पड़ता, किन्तु शासनाधिकारी विधानमण्डल की सहमति के बिना अपना कर्त्तव्य पालन समुचित रीति से नहीं कर सकते। उदाहरणस्वरूप अमरीका का नाम लिया जा सकता है। (ग) तानाशाही—यहाँ शासन का अध्यक्ष जनमत के आधार पर एक बार निर्वाचित हो जाता है और उसे विधानमण्डल के समर्थन पर निर्भर नहीं रहना पड़ता जैसे स्पेन, पुर्तगाल आदि। (घ) निरंकुश—शासनतन्त्र में समस्त सत्ता एक अनुत्तरदायी राजा के हाथ में रहती है। राजा सामान्यतः वंशानुगत होता है, जैसे सऊदी अरब में।[1]

कार्टर और हर्ज ने बीसवीं शताब्दी की सरकारों को तीन महत्त्वपूर्ण वर्गों में विभाजित किया है—(1) एक-दलीय अधिनायकतन्त्र, (2) संसदीय प्रजातन्त्र, और (3) राष्ट्रपतीय प्रजातन्त्र। अधिकतर लेखकों का यह विचार मत है कि विकासशील राज्य में नागर-नायरिक प्रजातन्त्र व अधिनायकतन्त्र के बीच में हैं। कार्ल जे० फ्रीड्रिच ने अधिनायकतन्त्र के भी दो भेद किए हैं—प्रथम, सांविधानिक अधिनायकतन्त्र, और द्वितीय, सैनिक शासन। सैनिक शासन प्रायः ही असांविधानिक होता है। हम मैकाइवर के आधार पर शासन के विभिन्न रूपों का विवेचन आगे देते हैं।[2]

[1] Soltau R. H., *An Introduction to Politics* p 117
[2] MacIver R. M., *Web of Government* p 114

सांविधानिक आधार	आर्थिक आधार	सामुदायिक आधार	प्रभुता की सरचना
राजतन्त्र अधिनायकतन्त्र धर्मतन्त्र बहुल अध्यक्षता प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र सीमित राजतन्त्र गणतन्त्र	लोक अर्थव्यवस्था सामन्तवादी पद्धति पूजीवादी शासन समाजवादी शासन सामाजिक पूजीवादी शासन	जन (कबीला) पोलिस (नगर राज्य) देश राष्ट्र बहुराष्ट्रीय (विश्व शासन)	एकात्मक राज्य साम्राज्य सघात्मक राज्य

बॉल ने राजनीतिक पद्धतियो को तीन समूहो मे बांटा है—(1) उदारवादी प्रजातन्त्रात्मक पद्धतिया (liberal democratic systems), (2) सर्वाधिकारवादी पद्धतिया (Totalitarian systems), और (3) स्वेच्छाचारी पद्धतिया (Autocratic systems)। इन पद्धतियो की मुख्य विशेषताओ का विवेचन विभिन्न अध्यायो मे यथास्थान किया जायगा। निम्नांकित चार्ट मे राजनीतिक पद्धतियो और सरकारो के बीच अन्तर को स्पष्ट किया गया है [1]

राजनीतिक पद्धतियाँ	उदारवादी प्रजातन्त्र	सर्वाधिकारवादी	स्वेच्छाचारी
शासन (सरकारें)	सघात्मक एकात्मक | राष्ट्रपतीय-ससदीय	साम्यवादी | फासीवादी	परम्परागत | आधुनिक | सैनिक नागरिक

आलमोण्ड और पोवेल ने राजनीतिक पद्धतियो को सरचनात्मक भेदो (structural differentiation) और सास्कृतिक लौकिकीकरण (cultural secularization) की मात्रा के अनुसार अग्रलिखित तीन वर्गों मे बांटा है—(1) ऐसी पद्धतियाँ जिनमे राजनीतिक सरचनाएँ अविरामी है (*systems with intermittent political structures*) *अर्थात् सरचनात्मक भेद कम से कम* होते हैं और एक ही प्रकार की स्थानीय (प्रादेशिक) सरचनाएँ भिन्न भिन्न प्रकार की हो और जहाँ दास सस्कृति ('subject' culture) पाई जाती हो, और (3) ऐसी पद्धतियाँ भिन्न भिन्न प्रकार की राजनीतिक सरचनाओ (differentiated political infrastructures) जैसे राजनीतिक दलो, हित-समूहो, और जनसाधारण के लिए सचार साधनो का किसी रूप मे भाग लेने वाली सस्कृति (participant political culture) के साथ विकास हो गया हो। प्रत्येक प्रमुख समूह (वर्ग) के भीतर विभिन्न उपवर्ग पाये जाते हैं जो पद्धतियो मे सरचनात्मक भेदो, सरचनात्मक स्वायत्तता, *लौकिकीकरण के अनुसार अनेक प्रकार के भेद (अन्तर) पैदा करते हैं।* इस वर्गीकरण का राजनीतिक विकास और परिवर्तन की समस्या से निकट सम्बन्ध है। इसके प्रमुख वर्गों तथा उपवर्गों को पादटिप्पणी मे उदाहरणो सहित दिया गया है।[2]

---

[1] Ball Alan R *Modern Politics and Government* p 53

[2] I Primitive systems Intermittent Political structures—
(A) Primitive Banda (Bargdama)
(B) Segmentary systems (Nuer)
(C) Pyramidal systems (Ashanti)

अभिजाततन्त्र (aristocracy) का एक विकृत रूप धनिकतन्त्र (oligarchy) होता है। धनिकतन्त्र भी दो प्रकार का हो सकता है—सर्वाधिकारवादी और परम्परागत (totalitarian and traditional) कुछ थोडे से चुने हुए व्यक्तियो के शासन सिद्धान्त (elite theory) की भांति धनिकतन्त्र का सिद्धान्त भी उदारवादी प्रजातन्त्र के मान्य सिद्धान्तो को अस्वीकृत करता है। जबकि थोडे से चुने हुए व्यक्तियो का शासन जनसाधारण की सराहना पर निर्भर करता है। धनिकतन्त्र जनसाधारण की उदासीनता, अज्ञानता और कमजोरी पर निर्भर करता है। सर्वाधिकारवादी धनिकतन्त्र मे शासक वर्ग उच्च मात्रा मे अनुशासित और एक विचार से बधा होता है, जिसका मुख्य साधन दल होता है। इस प्रकार के शासन मे ससदीय सस्थापको को प्रचार और समारोहो के प्रयोजनो से कायम रखा जाता है। सर्वाधिकारवाद के दो मुख्य रूप दक्षिण पथी फासीवाद (मुसोलिनी के अन्तर्गत इटली) और वामपथी (सोवियत सघ) है। परम्परागत धनिकतन्त्र का आधार परम्परागत धार्मिक विश्वासो से सम्बन्धित सुदृढ वशागत सविधान (strong dynastic constitution) होता है। शासको का उदय अकेले रक्त-सम्बन्ध (kinship) अथवा रक्त सम्बन्ध के आधार पर छाँट प्रक्रिया मे भाग लेने वाले व्यक्तियो की छाँट के मेल पर निर्भर करता है। शासको के परामर्शदाताओ और निकट सम्पर्क मे रहने वाले विश्वास पात्रो की छाँट भी रक्त सम्बन्ध या व्यक्तिगत पसन्द से निर्धारित होती है। ये सभी अधिनायकतन्त्र के भिन्न भिन्न रूप है। राजतन्त्र अब, कुछ अपवादो को छोडकर, सावैधानिक राजतन्त्र अर्थात् अधिकाशत प्रजातन्त्र बन गये हैं। इस प्रकार विश्व के बहुसख्यक राज्यो मे प्रजातन्त्र व अधिनायकतन्त्र के विभिन्न रूप पाये जाते हैं। अत हम आगामी पृष्ठो मे प्रजातन्त्र व अधिनायकतन्त्र की विस्तृत व्याख्या करेंगे।

2 प्रजातन्त्र (लोकतन्त्र)

वर्तमान युग को प्रजातन्त्र का युग कहा जाता है। 'प्रजातन्त्र' शब्द का आजकल अत्यधिक प्रयोग होता है और उससे विभिन्न अर्थ लिये जाते है। प्रजातन्त्र का अग्रेजी रूपान्तर 'डेमोक्रेसी' है, 'डमोस' और 'क्रेतिया' दो ग्रीक शब्दो से मिल कर बना है। इसका अर्थ क्रमश 'लोक' और

II Traditional Systems Differentiated Governmental Structures—
- (A) Patrimonial systems (Ouagadougou)
- (B) Centralized Bureaucratic (Tuttor England Ethopia)
- (C) Feudal Political systems (Twelfth century France)

III Modern Systems Differentiated Political Infra structures—
- (A) Secularized City states Limited differentiation (Athens)
- (B) Mobilized Modern Systems High differentiation and secularization
  1 Democratic Systems Subsystem Autonomy and Participant Culture
    - (a) High subsystem autonomy (Britain)
    - (b) Limited subsystem autonomy (Fourth Republic France)
    - (c) Low subsystem autonomy (Mexico)
  2 Authoritarian Systems Subsystem control and subject participant culture
    - (a) Radical Totalitarian (S S R)
    - (b) Conservative Totalitarian (Nazi Germany)
    - (c) Modernizing Authoritarian (Brazil)
- (C) Premobilized Modern Systems Limited differentiation and secularization—
  1 Premobilized Authoritarian (Ghana)
  2 Premobilized Democratic (Nigeria prior to Jan 1966)

Almond and Powell *Comparative Politics* pp 215–17

'शक्ति' से है। अत प्रजातन्त्र शासन वह है जिसम शासन सत्ता जनता मे निहित होती है। इस सत्ता का जनता चाहे स्वय प्रयोग करे या समय समय पर जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियो द्वारा इसका प्रयोग किया जाय। इसमे राज्य की नीति का निर्धारण और महत्त्वपूर्ण प्रश्नो का निर्णय इस आधार पर किया जाता है कि 'जनता की इच्छा सर्वोपरि है।' यह पहले ही बताया जा चुका है कि प्राचीन ग्रीक दार्शनिक डैमोक्रेसी को पालिटी का विकृत रूप मानते थे, और इसे बहुसख्या का शासन समझते थे, उसे आजकल भीड का शासन (mobocracy) कहा जाता है और प्रजातन्त्र को शासन का बहुत ही अच्छा रूप माना जाता है।

आधुनिक पाश्चात्य जगत मे प्रजातन्त्र का सार (निचोड) व्यक्ति की स्वतन्त्रता है। प्रजातन्त्र की परिभाषा कुछ इस प्रकार की जा सकती है—प्रजातन्त्र (सावजनिक) मामलो की वह दशा है, जिसमे समुदाय का प्रत्येक व्यक्ति अपने वैयक्तिक और सावजनिक कार्यो मे अधिकतम स्वतन्त्रता का उपभोग करता है और उसकी स्वतन्त्रता अन्य नागरिको द्वारा इसी प्रकार की स्वतन्त्रता के उपभोग से सगत होती है।[1] प्रजातन्त्र की अनेक परिभाषाएँ की गयी हैं, उनम से कुछ मुख्य निम्नलिखित हैं

वह शासन जिसम प्रत्येक व्यक्ति का भाग रहे। —सीले

शासन का वह रूप जिसमे शासक वग, राष्ट्र की जनता का एक बडा अश हो। —डायसी

प्रजातन्त्र शब्द का प्रयोग हिरोडोटस के समय से ही एक ऐसे शासनतन्त्र के रूप मे होता आया है जिसम सत्ता किसी व्यक्ति या वग विशेष मे सीमित न रहकर सम्पूण प्रजा मे निहित रहती है। —ब्राइस

प्रजातन्त्र शासन का वह स्वरूप है जिसमे शासन शासिता की सामान्य इच्छा के अनुकूल होता है। —चेस्टरटन

जनता का, जनता के लिए तथा जनता द्वारा शासन। —अब्राहम लिंकन

प्रजातन्त्र समझौते द्वारा शासन की वह पद्धति है जो (विभिन्न वर्गों व समूहो) के दावो और हितो मे वाद विवाद द्वारा सामजस्य स्थापित करके सभी के लिए न्याय प्राप्त कराती है। — गिलक्राइस्ट

उपयुक्त परिभाषाओ का विश्लेषण करने पर ये बातें स्पष्ट होती हैं—(1) प्रजातन्त्र म शासन सत्ता जनता म निहित होती है, (2) शासन सत्ता का प्रयोग जनता के हित म किया जाता है, (3) शासन कार्यों म राज्य की सम्पूण वयस्क या बहुसख्यक जनता भाग लेती है। इसके अतिरिक्त दो अन्य बातें ध्यान मे रखने योग्य हैं—(अ) शासन कार्यो मे जनता की रुचि व भाग किसी दल, गुट जाति या वग विशेष के हित साधन के लिए नही वरन् सम्पूण समुदाय के हित साधन के लिए होना चाहिए। (आ) यह ठीक है कि अधिकाश निणय बहुमत द्वारा होते हैं (सवसम्मति की प्राप्ति किसी निणय म ही होती है), किन्तु प्रजातन्त्र मे बहुसख्या अत्याचार नही करती अथात् अल्पसख्या की इच्छा का पूरा पूरा ध्यान रखा जाना आवश्यक है।

कार्टर और हज के मतानुसार प्रजातन्त्रो (वास्तव मे उदारवादी प्रजातन्त्रो) की मुख्य विशेषतायें अग्रलिखित हैं। प्रथम, उनम शासन सस्थाओ की सरचना इस प्रकार होती है कि वे शासन सत्ता पर सीमायें लगाती हैं, जिसम कि व्यक्तियो और समूहो के लिए सरक्षण की व्यवस्था की जा सके। यह काय मुख्यत दो प्रकार से किया जाता है—(1) ऐसे साधनो को अपनाना जो

[1] Perhaps the nearest approach one can make to a definition is that democracy is a condition of affairs in which the individual person in a community enjoys the maximum freedom in his personal and public actions consistent with the enjoying of a similar freedom by his fellow-citizens Wright F J *Democratic Government* p 14

नेताओ (शासन-अधिकारियो) म नियमित रूप से, विहित अवधि पूरी होने पर शातिपूर्ण परिवतन करा सकें। (2) प्रभावी लोकप्रिय शासनिक अगो द्वारा। दूसरे, व्यक्तियो के अधिकारो के लिए आदर (जिससे कि वे अपने मतो को स्वतन्त्र रूप से अभिव्यक्त कर सकें) का होना प्रजातन्त्र को प्रभावी बनाने के लिए अति आवश्यक है। इस आधारभूत अभिवृत्ति को इस कथन म बडे सुन्दर ढग से व्यक्त किया गया है—'मैं तुम्हारे मत को घृणा की दृष्टि स देखता हूँ। परन्तु मैं तुम्हारे उसे अभिव्यक्त करने के अधिकार के लिए मृत्यु तक लडूगा। अत प्रजातन्त्रात्मक राज्य म सहिष्णुता का गुण होना आवश्यक है। तीसरे, अल्पसख्यको के लिए आदर की भावना आवश्यक है। प्रजातन्त्र म निणय वाद विवाद करके और अल्पसख्यको के दृष्टिकोण का समुचित आदर करने के बाद होने चाहिएँ।[1]

प्रजातन्त्र के भेद—साधारणतया प्रजातन्त्र के दो भेद किये जाते हैं—प्रथम, विशुद्ध या प्रत्यक्ष (pure or direct), तथा द्वितीय, प्रतिनिध्यात्मक या अप्रत्यक्ष (representative or indirect)। जब लोग स्वय प्रत्यक्ष रूप से, राज्य का शासन चलायें और सावजनिक विषयो पर अपनी इच्छा प्रकट करें तो प्रथम प्रकार का प्रजातान्त्रिक शासन होता है। सावजनिक इच्छा या जनता का मत सभा या सभाओ म व्यक्त अथवा निश्चित किया जाता है। इस प्रकार का प्रजातन्त्र छोटे राज्यो म ही सफलतापूवक चला है और चल सकता है। प्राचीन ग्रीस के नगर राज्य प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के आदश उदाहरण कहे जा सकते हैं। आधुनिक युग म भी इस प्रकार के शासन के उदाहरण मिलते हैं। स्विटजरलैण्ड के कुछ उपराज्यो मे, जिन्हें केन्टन कहते है आजकल भी प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की प्रणाली प्रचलित है। प्रत्येक केन्टन की सारी वयस्क जनसख्या (स्त्रियो को छोडकर क्योकि उन्हें वहाँ पर मताधिकार प्राप्त नही है) वष म एक दो बार किसी खुले चरागाह मे इकट्ठी होती है और राज्य का बजट व अनेक प्रस्ताव स्वीकार करती है तथा अनेक अधिकारियो की नियुक्ति करती है। भारत के गावो म ग्राम पचायतो की काय प्रणाली भी कुछ इसी नमूने की है। परन्तु आज हम ससार को छोटे छोटे नगर राज्यो म नही वरन् बडे बडे देशीय राज्यो मे बटा पाते हैं। भारत, चीन, सोवियत सघ, सयुक्त राज्य अमरीका आदि बडे बडे राज्यो म जनसख्या करोडो म है और प्रत्येक का क्षेत्रफल भी लाखो वग मील है। इनम प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र शासन प्रणाली सम्भव ही नही है। अत इन देशो म जनता समय समय पर अपने प्रतिनिधियो का चुनाव करती है और ये प्रतिनिधि सामान्य इच्छा के अनुसार राज्य के लिए कानून बनाते है और सभी प्रशासन सम्बन्धी कार्यों की देख रेख करते हैं। ससार के सभी प्रजातन्त्रात्मक राज्यो म आजकल अप्रत्यक्ष अथवा प्रतिनिध्यात्मक प्रजातन्त्र शासन प्रणाली चल रही है। जे० एस० मिल ने प्रतिनिध्यात्मक प्रजातन्त्र की परिभाषा करते हुए लिखा है यह ऐसा शासन है जिसमे सम्पूण जनता या उसका बहुसख्यक भाग शासन सत्ता का अपने नियत काल पर निर्वाचित प्रतिनिधियो द्वारा प्रयोग करता है।'

एक अन्य आधार पर प्रजातन्त्र को दो वर्गों—राजनीतिक और अभिभावकात्मक (political and tutelary) म रखा जा सकता है। राजनीतिक प्रजातन्त्र को कुछ लेखको ने उदारवादी प्रजातन्त्र (liberal democracy) भी कहा है। शिल्स (Shils) के मतानुसार राजनीतिक प्रजातन्त्र वह पद्धति है जिसकी ओर आधुनिक राष्ट्र कम या अधिक मात्रा म बढ रहे हैं। यह एक एसी प्रणाली है जिसम नागरिक प्रतिनिधि सस्थाओ और सार्वजनिक स्वतन्त्रताओ द्वारा शासन करत हैं। इस पद्धति का केन्द्रीय बिन्दु सवव्यापी मताधिकार द्वारा समय समय पर निर्वाचित विधायिका है विधायन की दृष्टि से यह निकाय सर्वोपरि होता है। इसके द्वारा निर्धारित नीतिया

[1] Carter and Herz *Government and Politics in the Twentieth Century* pp 16–17

को उसके प्रति उत्तरदायी कार्यपालिका (मन्त्री व अधिकारी) कार्यान्वित करती है। ऐसी पद्धतियो की एक अति आवश्यक विशेषता राजनीतिक दल है। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि राजनीतिक शक्ति (किसी भी दल या समूह के हाथो मे) अपेक्षाकृत थोडे समय के लिए रहती है। इसकी तीसरी विशेषता स्वतन्त्र न्यायपालिका है। जौहरी के अनुसार उदारवादी प्रजातन्त्र की मुख्य विशेषतायें ये है—(1) जनता का अपने निर्वाचित प्रतिनिधियो के द्वारा शासन, (2) कार्यपालिका को स्थापित आदर्शों के अनुसार काय करना चाहिए, (3) शासन के अधिकार सीमित होते है, और (4) इसमे सामाजिक आर्थिक निरोधो व सन्तुलन की व्यवस्था होती है।[1]

राजनीतिक प्रजातन्त्र की सस्थायें कुछ उपयुक्त परिस्थितियो म ही अयमय ढग से काय कर सकती है, अर्थात् जहा पर जनता सामान्यत राजनीतिक प्रजातन्त्र के आदर्शों और मूल्या म विश्वास करती है और जहां पर जनता का आर्थिक व भौतिक जीवन सुरक्षित होता है। परन्तु आज एसे अनक राज्य है जहा राजनीतिक नेता और काफी व्यक्ति राजनीतिक प्रजातन्त्र क आदर्शो का मानते है, किन्तु उपयुक्त परिस्थितियो व दशाओ के अभाव मे वे राजनीतिक सस्थाओ क रूप को सशोधित कर लेते है, जिससे कि अल्पकाल म ही कुछ वाछित ध्येयो की प्राप्ति हो सक। बहुधा ऐसा करने मे विधायिका की शक्ति को सीमित किया जाता है, राजनीतिक दलो की गति विधियों को प्रतिबन्धित किया जाता है और कायपालिका की शक्ति मे वृद्धि की जाती है। इस प्रकार राजनीतिक प्रजातन्त्र की सस्थागत सरचना कायम रखी जाती है, परन्तु प्रतिनिधि सस्थाओ और जनमत की सस्थाओ की शक्तियो पर सीमायें लगाई जाती हैं। इसमे उच्च वर्गीय नेता शासन का सचालन करते है, इसीलिए इसे अभिभावकात्मक (tutelary) प्रजातन्त्र कहा गया है।[2]

3 प्रजातन्त्र के गुण-दोष

प्रजातन्त्र के गुण—प्रजातन्त्रात्मक शासन प्रणाली के पक्ष और विपक्ष मे विभिन्न लखका ने बहुत से तक दिए है। पहले, हम प्रजातन्त्र के पक्ष मे दिये गये तर्कों का सक्षिप्त विवेचन करेंगे—प्रथम, प्रजातन्त्र म सभी व्यक्तियो को, चाहे वे धनी हो या निर्धन, समान राजनीतिक अधिकार प्राप्त होते हैं। इस शासन प्रणाली मे किसी को यह शिकायत नही हो सकती कि उसकी बात नही सुनी जाती। दूसरे, चूंकि सभी व्यक्ति शासन कार्यों (प्रतिनिधियो के चुनाव आदि) म भाग लेते है, इसलिए सवसाधारण मे शासन सम्बन्धी विषयो के प्रति अधिक रुचि पैदा होती है और उदासीनता दूर होती है। देश म क्या होता है और सरकारी अधिकारी क्या करते है—इन सभी बातो के प्रति वे जागरूक रहते है। फलस्वरूप जनता सरकारी अधिकारियों के सभी कार्यों के बारे में सतर्क रहती है और सतर्कता से ही अधिकारो व स्वतन्त्रता की रक्षा हो सकती है। तीसरे, प्रजातन्त्र का आधार सवसाधारण की रुचि तथा ज्ञान है, इसलिए प्रजातन्त्र म जनता की राजनीतिक शिक्षा बडे पैमाने पर होती है। प्रजातन्त्र म नागरिक को देश की राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक—सभी प्रकार की समस्याओ के बारे म जानना और विचारना पडता है, आवश्यकतानुसार सरकार की नीति की आलोचना करनी पडती है, और अवसर मिलने पर महत्त्वपूर्ण विषयो के सम्बन्ध म निर्णय भी देना होता है। इस प्रकार से नागरिक दिन प्रतिदिन कुछ न कुछ सीखता ही है और अपने देश की विभिन्न समस्याओ के निराकरण म योग दने के लिए तैयार रहता है।

चौथे व्यावहारिक दृष्टि से (अ) प्रजातन्त्र म नागरिक यह समझते हैं कि शासन-काय उनका काम है और इससे उनम यह भाव पैदा होता है कि जिस देश म वे रहते हैं वह उनका देश

[1] Johari J C *Comparative Politics* pp 81-84
[2] Davies and Lewis *Models of Political Systems* pp 100-103

है। इस प्रकार उनमें देश प्रेम और देश भक्ति की भावना सुदृढ़ होती है। (आ) जब नागरिक यह जानते हैं कि कानूनों को बनाने में उनका भी हाथ है, तो वे अपने प्रतिनिधियो द्वारा बनाये गये कानूनों का अधिक अच्छी प्रकार या स्वेच्छा से पालन करते है। फलत प्रजातन्त्र मे विद्रोह और विप्लव होने की कम से कम सम्भावना रहती है। इसके विपरीत शासको और शासितो के बीच अधिक सहयोग बढ़ता है। पाचवें, नैतिक दृष्टि से प्रजातन्त्र मे नागरिको का चरित्र ऊँचा उठता है। प्रत्येक व्यक्ति का दूसरे के बराबर मान होता है। प्रजातन्त्र से नागरिको मे आत्मविश्वास और रचना शक्ति की वृद्धि होती है। ये गुण राजतन्त्र अथवा कुलीनतन्त्र मे साधारण जनता मे उत्पन्न नही हो सकते, क्योंकि उनमे जनता को शासन कार्यों मे भाग लेने का अवसर नही मिलता। छठे, लोकतन्त्र का गुण एक सरकार के रूप मे उसकी योग्यता मे निहित नही है। एक अच्छी सरकार स्वशासन की स्थानापन्न नही हो सकती। लोकतन्त्र लोगो द्वारा उनके कल्याण का शासन है। वह उनमे आत्म शिक्षण के लिए प्रेरणा पैदा करता है। लोकतन्त्र चरित्र को निखारता है और जनता के राजनीतिक विवेक को उन्नत करता है। अन्त मे, प्रजातन्त्र शासन प्रणाली मे सरकार का बदलना सुगम होता है। जब भी वर्तमान सरकार (मन्त्रिमण्डल) सतोषजनक न रहे, चुनाव आने पर उसे बदला जा सकता है।[1]

प्रजातन्त्र के दोष—अब हम प्रजातन्त्र के दोषो का विवेचन करेंगे। वे भी विभिन्न लेखको के अनुसार बहुत से हैं। प्रजातन्त्र पर सबसे बडा अभियोग यह लगाया जाता है कि यह अच्छा शासन स्थापित करने मे सर्वथा असफल रहता है। इसे अज्ञानियो का शासन कहा गया है। जनता के मत पर किया गया निर्णय अन्तिम रूप मे अज्ञान का शासन है। इतिहास बताता है कि थोडे ही व्यक्ति बुद्धिमान होते हैं, बहुसख्या नही होती। जहाँ अज्ञान का शासन होता है, स्वतन्त्रता कम हो जाती है। प्रजातन्त्र बौद्धिक विकास के लिए उपयुक्त नही है, क्योंकि (अ) जनता को वाक्पटु नेता व राजनीतिज्ञ अपने शब्द जाल मे फँसा लेते हैं और आदर्शवाद की धारा मे बहा ले जाते हैं। इन्ही वाक् पटुओ (demagogues) का जनता अन्धानुकरण करती है और लोग जनता की सत्ता प्राप्ति के लिए उपयोग करते हैं। सकुचित दलीय तथा वर्गीय आदि हितो के कारण प्रजातन्त्र मे भ्रष्टाचार, पक्षपात, भाई भतीजावाद आदि अनेक दोष पाये जाते हैं। फलस्वरूप, दलीय सरकार के प्रति वफादारी और वर्ग हित के रहते हुए सुदक्ष शासन (efficient government) स्थापित नही हो सकता। बहुधा दल के अयोग्य और कार्य कुशल व्यक्तियो के मुकाबले मे आगे बढने का अवसर मिलता है। व्यावहारिक दृष्टि से, प्रजातन्त्र मे दलबन्दी के सभी दोष पाये जाते हैं। इसके कारण जनता (अथवा समुदाय) के हितो को दलबन्दी के आधार पर बाँटा जाता है और बहुमत दल के हितो के सामने सामान्य हितो को त्यागा जाता है। इस अर्थ मे प्रजातन्त्र एक दल का, दल द्वारा शासन कहा जाता है।

प्रजातन्त्र की आलोचना इस आधार पर भी की गई है कि इसमे शासन निर्बल व धीमा होता है और शासकगण निर्णयो पर पहुँचने मे बहुत समय लेते है। उदाहरण के लिए, 1914 मे जर्मनी के सम्राट ने बेल्जियम पर आक्रमण करने का निश्चय क्षणो मे कर डाला था, जबकि ब्रिटिश पार्लियामेंट स्थिति पर कई दिना तक वाद विवाद करती रही। अन्त मे, इसमे गुणो की अपेक्षा सख्या पर अधिक बल दिया जाता है। अशिक्षित व अज्ञानी व्यक्ति को योग्य और अनुभवी व्यक्ति

[1] The process of changing ministers and majorities in the elected Assembly provides an alternative method to revolution for meeting social changes —Burns C D *Democracy* p 135

[2] A decision upon the basis of popular vote is ultimately the rule of ignorance History shows that intelligence resides with the few not with the many Where ignorance rules liberty is curtailed Democracies are unfavourable to intellectual progress Leckey

के समान मताधिकार मिला होता है। बहुमत के आधार पर शासन चलता है। कुछ लेखको ने इसे 'क्रूर बहुमत' का शासन (tyranny of the majority) भी कहा है। ब्राइस ने प्रजातन्त्र के अग्रलिखित दोष बताये है (1) शासन व्यवस्था या सविधान को विकृत करने म धन की शक्ति, (2) राजनीति को कमाई का पेशा बनाने की ओर झुकाव, (3) शासन व्यवस्था म अति व्यय, (4) समानता के सिद्धान्त का दुरुपयोग और शासनीय पटुता या योग्यता का उचित मूल्य न आंका जाना, (5) दलबन्दी या दलीय सगठन म अनुचित बल प्राप्ति, और (6) विधान सभाओ के सदस्यो तथा राजनीतिक अधिकारियो द्वारा कानून पास करात समय मता को दृष्टि म रखन और समुचित व्यवस्था के भग को सहन करना।[1]

4 प्रजातन्त्र की सफलता के लिए आवश्यक बाते

विद्वान् लेखको ने कई बाते आवश्यक बताई है, जिनका विवेचन अग्रलिखित है—(1) सव प्रथम, चूकि प्रजातन्त्र शासन प्रणाली म सभी महत्त्वपूण निणयो पर वाद विवाद द्वारा पहुचा जाता है, अत युक्तिया देने व सुनने म स्वभाव की मधुरता (temper of sweet reasonableness) अति आवश्यक गुण है, जिससे कि अपनी बात कहने के साथ साथ दूसरो के दृष्टिकोण को भी समझा जा सक। जहा पर अधिकाश व्यक्तियो म आधारभूत प्रश्नो पर मतभेद होते हैं और जहाँ अधिकाश व्यक्ति बहुमत को मानने के स्थान पर सिर फोडने म अधिक विश्वास रखते हैं, वहाँ ये बातें नही पाई जा सकती। प्रजातन्त्रीय देश के नागरिको म सहनशीलता का गुण विशेष रूप से विकसित होना चाहिए। बहुसख्यको और अल्पसख्यको को अपनी बात मनवाने के लिए यथा सम्भव समझाने बुझाने (persuasion) का ढग अपनाना चाहिए। बहुसख्यक दल को अल्पसख्यक दल का मत आदर से सुनना और समझना चाहिए, साथ ही जब बहुमत से कोई निणय हो जाय, तो उस अल्पमत को सहप स्वीकार करना चाहिए। यदि वह उसे अनुचित और गलत भी समझे तो उसे बदलवाने के लिए सभी शान्तिपूण और सावैधानिक साधनो का प्रयोग करना उचित होगा।

(2) 'यथा राजा तथा प्रजा' एक प्राचीन कहावत है। यह राजतन्त्र के बारे म अक्षरश सत्य है, अर्थात् यदि राजा राम जैसा प्रजापालक होगा तो प्रजा सुखी रहेगी, यदि राजा अत्याचारी होगा तो प्रजा दुखी रहेगी। परन्तु प्रजातन्त्र मे जनता को वैसा शासन मिलता है जिसकी प्रजा अधिकारी होती है। कहन का तात्पय यह है कि प्रजातन्त्र म शासन तभी अच्छा होगा जब सव साधारण जनता शिक्षित हो उसका नतिक स्तर ऊँचा हो और नागरिक अपन दायित्वो व कर्तव्यों को अधिकारो से अधिक महत्त्व दें। अत प्रजातन्त्र की सफलता के लिए अति महत्त्वपूण आवश्यकता शिक्षा की है। अच्छी शिक्षा द्वारा ही नागरिको का चरित्र सुधर सकता है और उनम अपने कत्तव्यो को पूरा करने व अधिकारो का उचित उपभोग करने की भावना जागृत हो सकती है। देश की विभिन्न समस्याओ का ज्ञान नागरिको क शिक्षित होने पर ही ठीक ठीक हो सकता है और तभी वे उनके हल करने मे बुद्धिपूण व सक्रिय योग दे सकते हैं। इसीलिए यह कहा जाता है कि प्रजातन्त्र मे स्वामियो को शिक्षित होना चाहिए। जो मतदाता शिक्षित नही होता वह उम्मीदवार व उसके कायक्रम क बारे मे अच्छी प्रकार स स्वत निणय नही कर सकता। ऐसी दशा म मतदाता व्यावसायिक राजनीतिज्ञो और वाक्पटु नेताओ (demagogues) के भाषणो का शिकार होता है।

(3) आजकल अधिकतर राजनीतिक प्रश्नो का आधार आर्थिक है और किसी भी देश की

[1] Bryce J *Modern Democracies* vol II p 504

अनेक राजनीतिक समस्यायें तब तक हल नही हो सकती जब तक कि सर्वसाधारण की आर्थिक दशा सन्तोषजनक न हो। जिस देश मे आर्थिक विषमताये बहुत होती है और बहुसंख्यक जनता निर्धन होती है वहा प्रजातन्त्र तब तक सफल नही हो सकता जब तक कि सर्वसाधारण की आर्थिक दशा न सुधरे। वास्तव मे निर्धन व्यक्ति अपने राजनीतिक अधिकारो का उचित उपभोग नही कर सकते, उनके मतो को धनी व्यक्ति खरीद सकते है और उन पर अन्य प्रकार से अनुचित दबाव भी डाल सकते है। अत राजनीतिक प्रजातन्त्र को सफल बनाने के लिए आर्थिक प्रजातन्त्र भी होना आवश्यक है। यहा पर एक बात और विचारणीय है। पूजीवादी देशो मे केवल वे ही व्यक्ति सफलतापूर्वक चुनाव लड सकते है जिनके पास काफी धन हो या जिन्हे दल ने खडा किया हो, जिसके साधन खूब हो और जो उन्हे आर्थिक सहायता दे। ऐसी दशाओ मे विभिन्न दलो (और समाचार-पत्रो आदि) पर धनिको का नियन्त्रण रहता है, जिस कारण 'जनता का, जनता के लिए और जनता के द्वारा' शासन अथवा प्रजातन्त्र बहुत कुछ धोखा या दिखावा मात्र रह जाता है।

(4) प्रजातन्त्र के लिए सामाजिक व्यवस्था का आधार प्रजातन्त्रात्मक होना जरूरी है। भारतीय, विशेष रूप से, हिन्दू समाज का आधार प्रजातन्त्र नही है। इसी कारण चुनावो मे जात बिरादरी और ऊँच नीच की भावना का महत्वपूर्ण भाग रहता है। खेद की बात तो यह है कि भारत मे स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से जात बिरादरी की भावना मे वृद्धि हुई है। स्थानीय संस्थाओ के चुनाव तो बहुत सीमा तक इसी आधार पर लडे और जीते जाते है। उनकी कार्य प्रणाली मे भी यह भावना जारी रहती है।

(5) प्रजातन्त्र मे दलो का होना आवश्यक है, परन्तु दलबन्दी का आधार स्वस्थ होना चाहिए। वर्ग और सम्प्रदाय जैसे संकुचित हितो के आधार पर बने दल देश के लिए बडे हानिकारक होते है। साम्प्रदायिक दलबन्दी के विषैले फल भारतवासियो को भोगने पड रहे हैं। आज भी हमारे देश मे विभिन्न जातियो, प्रदेशो और वर्गो के हित साधन के लिए अनेक दल हैं, जिनका अन्त होना चाहिए। दलीय व्यवस्था का आधार विशुद्ध राजनीतिक और आर्थिक कार्यक्रम होना चाहिए और कोई भी दल राष्ट्रीय हितो के विरुद्ध नही बनना चाहिए। इस बात को एक दूसरे दृष्टिकोण से भी देखना है। जहा एक ओर बहुमत प्राप्त दल को अल्पमत अथवा विरोधियो के दृष्टिकोण को पूरी तरह से समझना, उसकी आलोचना का स्वागत करना और अच्छे सुझावो को स्वीकार करना चाहिए, वहा दूसरी ओर विरोधी दलो को सत्तारूढ दल का केवल विरोध के लिए ही विरोध नही करना चाहिए तथा राष्ट्रीय हित मे पूरा पूरा सहयोग भी देना चाहिए। साथ ही विरोधी दल सुदृढ होना चाहिए, जो अवसर मिलने पर शासन भार सम्भाल सके। परन्तु आचार्य विनोबा भावे और श्री जयप्रकाश नारायण आदि सर्वोदय नेता भारत के लिए पश्चिम से आई संसद प्रणाली पर आधारित प्रजातन्त्र को अच्छा नही बताते। वे तो भारत मे दल विहीन लोकतन्त्र की स्थापना चाहते हैं। वर्तमान प्रजातन्त्र के दो बडे दोष—चुनाव व्यवस्था और दलीय आधार हैं। 'हम यह स्वीकार करते हैं कि दल प्रजातन्त्र के आवश्यक साधन है, परन्तु साध्य बन सकते हैं। ऐसा तब होता है जब कि निर्वाचक मण्डल, विधानमण्डल और केबिनेटो को विभिन्न तरीको से दल के अधीन कर लिया जाता है।'[1] दलो की कमियो को काफी बडी मात्रा मे त्यागा जा सकता है। जहाँ तक स्थानीय संस्थाओ का सम्बन्ध है, कम से कम उनमे तो उनके विचार को कार्य रूप दिया जाना उचित होगा।

[1] Parties we should all admit are necessary means of democracy But the means may become the end This is what happens when electorate parliaments and cabinets are all in their different ways subordinated to the exigencies and brought under the control of party —Barker E *Reflections on Government* pp 88-89

(6) प्रजातन्त्र म यह भी आवश्यक है कि राजनीतिक अधिकार सभी वयस्को को बिना किसी भेद भाव के प्रदान किये जायें। साथ ही निर्वाचन की पद्धति एसी होनी चाहिए कि स्वतन्त्र और निष्पक्ष चुनाव हो सकें। यह न हो कि सत्तारूढ दल चुनावो को जीतने के लिए अनुचित लाभ उठा सके। इसी बात का ध्यान रखते हुए भारतीय सविधान के निर्माताओ ने स्वतन्त्र और निष्पक्ष चुनाव कराने के लिए एक निर्वाचन आयाग की स्थापना की है। भारत म गत सारा आम चुनाव यथासम्भव निष्पक्षता और स्वतन्त्रतापूर्वक सम्पन्न हुए।

(7) प्रजातन्त्र की सफलता क लिए यह आवश्यक है कि स्वस्थ और स्वतन्त्र जनमत बनने की पूरी सुविधायें हो, क्योकि प्रजातन्त्र जनमत पर आधारित हाता है। जनता की इच्छा अर्थात् सामान्य इच्छा का पता जनमत द्वारा ही चलता है। जनमत निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि सभी नागरिको और समुदायो को अपने विचार प्रकट करने और उन्ह प्रकाशित करने की समुचित स्वतन्त्रता हो। भाषण व लेखन की स्वतन्त्रता के साथ ही साथ देश म सगठन बनान और सभा करने की भी उचित स्वतन्त्रता होनी चाहिए। जिस देश म ये स्वतन्त्रतायें बहुत सीमित कर दी जाती हैं वहा पर सच्चा प्रजातन्त्र नही पनप सकता।

(8) अन्त मे सफल प्रजातन्त्र के लिए स्थानीय स्वशासन की सुदृढ नीव होनी आवश्यक है। ब्रिटेन और सयुक्त राज्य अमरीका मे एसा होने के कारण ही प्रजातन्त्र शासन प्रणाली बहुत सफल रही है। इसके विपरीत, जिन देशो मे स्थानीय स्वशासन की सस्थाओ का समुचित विकास न हुआ हो, उनमे प्रजातन्त्र को लागू करना एक प्रकार से ऊपर से थोपना है। स्थानीय स्वशासन की सस्थाओ से बहुत बडी सख्या को आवश्यक प्रशिक्षण मिलता है और ऐसे ही व्यक्ति प्रजातन्त्र को सफलतापूर्वक चला सकते हैं। गाधीजी ने तो इस बात पर विशेष बल दिया कि ग्राम पचायतें वास्तविक शक्ति का स्रोत होनी चाहियें। इसलिए भारत के सभी राज्यो म ग्राम पचायतें व अन्य स्थानीय सस्थाओ का विकास किया जा रहा है।

सक्षेप म, गानर के अनुसार प्रजातन्त्र की सफलता के लिए आवश्यक दशायें इस प्रकार हैं—(1) राजनीतिक सूझ बूझ की काफी ऊँची मात्रा और सावजनिक मामलो म स्थायी दिलचस्पी, (2) सावजनिक उत्तरदायित्व की समुचित भावना और बहुमत के निणयो को मानने व कार्यान्वित करने के लिए तत्परता, (3) नतिक शिक्षा के लिए सुविधायें, (4) राजनीतिक मामलो की शिक्षा और स्वशासन की ट्रेनिंग, और (5) उच्च नतिक स्तर।

हमारे विचार म इनके अतिरिक्त राजनीतिक प्रजातन्त्र के साथ सामाजिक और आर्थिक प्रजातन्त्र का होना भी आवश्यक है। जहाँ तक ससदीय लोकतन्त्र का सम्बन्ध है, सर स्टेफड क्रिप्स न अपनी पुस्तक 'ससद का आदर्श स्वरूप (Parliament as it should be) मे लोकतन्त्र के अग्रलिखित तीन विशिष्ट तत्त्व बताये हैं—(1) जनता को अपने प्रतिनिधियो को चुनने की पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। जनता को निश्चित समय पर अपने प्रतिनिधियो के प्रत्यावर्तन (recall) करने का अधिकार होना चाहिए। (2) जनता द्वारा स्पष्ट रूप से यह प्रदर्शित किया जाना चाहिए कि वह कौनसी नीति कार्यान्वित करना चाहती है। (3) प्रतिनिधियो म इतनी योग्यता और सामर्थ्य होनी चाहिए कि व वांछित नीति को अनावश्यक विलम्ब किय बिना, किसी भी स्वार्थ या व्यक्ति विशेष के हस्तक्षेप के सफलतापूर्वक कार्यान्वित कर सकें।

इन गुणो को कार्य रूप दने के लिए ये साधन आवश्यक हैं—(अ) विधि निर्माण म उन्नीसवी सदी वाल मन्दगामी तरीका को समाप्त करना। (आ) लोकसभा द्वारा, जब उसे देश का समर्थन प्राप्त हो, एक साहसपूर्ण नीति का अपनाया जाना और लोकतन्त्रीय दूसरे सदन की धमकी मे न आकर (यहाँ पर उनका अर्थ ब्रिटेन की वशानुगत लार्ड सभा से है) देश के विकास की प्रगति और पद्धति पर प्रभावपूर्ण नियन्त्रण करना। (इ) मन्त्रियो म विधायी तथा प्रशासकीय

कार्यों की देख रेख करने के लिए कार्यात्मक समितियां (functional committees) का संगठन करना।

5 अधिनायकतन्त्र

अधिनायकतन्त्र का उदय साधारणत अचानक अथवा एकदम ही होता है। यह देखा गया है कि जब किसी देश मे प्रजातन्त्र के लिए पृष्ठभूमि तैयार की जा रही होती है, उसी समय अधिनायकतन्त्र के उदय के लिए सहायक दशायें उत्पन्न होती हैं। प्रजातन्त्र के लिए परिपक्वता की प्रक्रिया आवश्यक है, परन्तु उसके शान्तिपूर्ण विकास के लिए विरोध अत्यन्त प्रबल हो सकता है। ऐसे मे सकट उत्पन्न हो जाता है। ऐसी स्थिति मे ही अधिनायकतन्त्र का जन्म होता है। उसी ढग से प्राचीन एथेन्स मे सोलन (Solon) के अन्तगत प्रजातन्त्र की कुछ मात्रा के लागू किये जाने के कुछ ही समय बाद अधिनायकतन्त्र का उदय हुआ था। इसी प्रकार कोरिन्थ, सिराक्यूज और एशिया माइनर के देशों मे शक्तिशाली शासकों ने अत्याचारी शासन स्थापित किया था। उत्तरकालीन रोमन गणतन्त्र म भी समान ढग से अधिनायकशाही का उदय हुआ था।

परन्तु प्राचीन ग्रीस व रोम म जिस प्रकार की अधिनायकशाही का विकास हुआ, वह आधुनिक काल के अधिनायकतन्त्र से भिन्न थी। रोमन अधिनायकतन्त्र एक प्रकार की साविधानिक पद्धति थी, जिसके अन्तगत गम्भीर आपातकाल म सविधान को निलम्बित किया गया। मध्य युग मे परम्परा का शासन पुनर्जीवित हुआ, परम्परा के कमजोर पड जाने पर प्रजातन्त्र का उदय आरम्भ हुआ। इंग्लैण्ड म एक आपात् के दौरान ओलिवर क्रॉमवैल अधिनायक बना। उसी प्रकार जब फ्रास मे परम्परा को तोडा गया तो वहाँ पहले रोबसपीरी अधिनायक बना और उसके बाद नेपोलियन। उन्नीसवी शताब्दी मे अधिकतर राज्यों म प्रजातन्त्र का विस्तार हुआ। परन्तु प्रथम विश्वयुद्ध के बाद इटली, जमनी आदि कई देशों म गम्भीर आर्थिक सकट के काल मे फासिस्ट अधिनायकतन्त्रों का उदय हुआ। विश्वयुद्ध के बाद ही रूस मे क्रान्ति के बाद साम्यवादी अधिनायकतन्त्र की स्थापना हुई। दूसरे विश्वयुद्ध से पूव जापान म सैनिक अधिनायकतन्त्र का विकास हुआ।

आधुनिक काल म अधिनायकतन्त्र ने मुख्यत चार रूप धारण किये—(1) फासीवादी अधिनायकतन्त्र (इटली, जमनी, स्पेन व पुर्तगाल), (2) साम्यवादी अधिनायकतन्त्र (सोवियत सघ, साम्यवादी चीन और पूर्वी यूरोप के अनेक साम्यवादी राज्य), (3) सैनिक अधिनायकतन्त्र (बर्मा, पाकिस्तान, इण्डोनेशिया आदि), और (4) लैटिन अमरीकी राज्यों मे अधिनायकतन्त्र। प्रथम दोनों प्रकार के अधिनायकतन्त्रों के बारे मे मुख्य बातें सर्वाधिकारवादी राज्य की विशेषताओं के प्रसग मे आगे दी गई है। सैनिक अधिनायकशाही के बारे में इतना ही कहना काफी होगा कि प्रजातन्त्र की विफलता और आन्तरिक अव्यवस्था के कारण ऐसे अधिनायकतन्त्रों का जन्म हुआ। उन्ही से मिलता जुलता लैटिन अमरीकी राज्यों का अधिनायकतन्त्र है। इन राज्यों मे अधिनायकों के समथक दल सुसगठित व अनुशासित नही हैं। उनके दलों का आधार सामान्य हित है, जिनकी अपनी कोई विशिष्ट विचारधारा नही है। उन राज्यों मे तो सत्ताधारी अधिनायकों के अनुयायी और पद चाहने वालों के समूह शासन के अध्यक्ष के प्रति वैयक्तिक निष्ठा रखते हैं।

अधिनायकतन्त्र (तानाशाही) की व्याख्या—तानाशाही राजतन्त्र से सवथा भिन्न है, क्योंकि राजतन्त्र वशानुगत होता है। तानाशाह या तो शक्ति के प्रयोग द्वारा शासन सत्ता को पाता है या वह कोई चुना हुआ नेता ही हो सकता है, किन्तु वह सत्ता को अपने हाथों म शक्ति द्वारा ही कायम रख पाता है। अस्तु, तानाशाही शासन का वह रूप है जिसम शासन की सर्वोच्च सत्ता एक व्यक्ति द्वारा मनचाहे ढग से प्रयुक्त की जाती है। इसमे जनता की सहमति उसके साथ या उसके

विरुद्ध भी हो सकती है परन्तु सभी दशाओं म तानशाही शक्ति के द्वारा कायम रहती है। तानाशाह के कायकाल की कोई निश्चित सीमा नही होती। तानाशाह के लिए यह भी आवश्यक नही कि यह राज्य के स्थापित कानूनो के अनुसार शासन करे। वास्तव म, वह तो प्रादेशो (decrees) व अध्यादेशो (ordinances) द्वारा शासन चलाता है और उसकी इच्छा ही कानून होती है। तानाशाह एक सेना और एक दल के शासन म विश्वास करते है। फलस्वरूप या तो वे अन्य सभी समुदायो और दलो पर कडा नियन्त्रण रखते हैं या उनका अन्त कर देते हैं। ऐसे ही नागरिको के भाषण व लेखन सम्बन्धी स्वतन्त्रता के अधिकार अति सीमित कर दिये जाते हैं या उनका अन्त कर दिया जाता है। सक्षेप म, तानाशाह किसी भी प्रकार का विरोध सहन नहीं कर सकते।

आधुनिक अधिनायकशाही राज्यो की मुख्य विशेषतायें अग्रलिखित हैं—(1) विरोध तथा आलोचना के अधिकार को पूणतया अस्वीकार करना, (2) राष्ट्रवादी प्रवृत्तियाँ (nationalistic tendencies), (3) राज्य की पूजा (worship of the State) (4) एकदलीय शासन। ये विशेषतायें फासिस्ट इटली, नाजी जमनी और साम्यवादी सोवियत सघ आदि सभी राज्यो म मिलती हैं। इन राज्यो मे एक दल और एक नेता का शासन रहा है। इनके अतिरिक्त, ये राज्य सर्वाधिकारवादी (totalitarian) रहे हैं, क्योकि इन्होने नागरिको के सम्पूर्ण जीवन को नियन्त्रित व नियमित किया है। फाइनर ने अधिनायकतन्त्र और प्रजातन्त्र के बीच अन्तर को इस प्रकार व्यक्त किया है—अधिनायकतन्त्र इस पूवधारणा पर आधारित है कि कोई एकाधिकारी और ऊपर से थोपा गया दल ही मनुष्यमात्र के राजनीतिक भाग्य के बारे म अन्तिम सच्चाई को जानता है। इस प्रकार का विश्वास निश्चित तीव्र और कट्टर होता है अत वह किसी प्रकार के विरोध को सहन नही करता। परन्तु प्रजातन्त्र तो पूणता के लिए खोज के अनुभववादी स्वरूप को स्वीकार करता है और यह मानता है कि पूणता का कोई अनन्य सिद्धान्त नही है।[1]

अधिनायकतन्त्र एक प्रकार का सर्वाधिकारवादी (totalitarian) शासन होता है। सर्वाधिकारवादी अधिनायकतन्त्र मे शासक समूह द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली शक्ति असीमित और अप्रतिबन्धित होती है तथा शासन का अधिकार क्षेत्र व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक पहलू तक विस्तृत रहता है। इसके विपरीत उदारवादी प्रजातन्त्र म शक्ति का प्रयोग साविधानिक व्यवस्था द्वारा सीमित रहता है। इस प्रकार की सीमायें अभिसमयो द्वारा भी लागू हो सकती हैं, जसा कि ग्रेट ब्रिटेन म है। अत शासन के इन दोनो रूपो के बीच सबसे सरल अन्तर शासन पर सीमाओ के होने या न होने म है। इसके अतिरिक्त साम्यवादी व फासिस्ट अथवा नाजी अधिनायकतन्त्र म नेताओ का यह विश्वास होता है कि उनके समुदाय का अपना विशिष्ट प्रयोजन है जोकि उसके सदस्यो की इच्छाओ और उनके तुरन्त प्रयोजनो से भिन्न होता है। इस प्रकार साम्यवादी नेता इतिहास के भौतिक निवचन को मानते हुए भावी साम्यवादी समाज की कल्पना के प्रकाश म राज्य की नीति को निर्धारित करते हैं। इसी प्रकार राष्ट्रीय समाजवादियो (जमन नाजियो) का विश्व के बारे म एक विशिष्ट मत (weltanschauung) या जिसके प्रकाश म उन्होने इतिहास की धारा को निर्धारित किया। इस दृष्टि स फासीवाद और साम्यवाद म बहुत कम अन्तर है। अत व इस बात से इन्कार करते हैं कि समुदाय अर्थात् राज्य द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली शक्ति

[1] The former (dictatorship) vests upon the pretensions that a monopolistic and imposed party possesses the ultimate truth about the political destiny of humanity That conviction is definite sharp and fanatical and therefore brooks no opposition But democracies admit the pragmatic nature of their search for perfection and recognise that of perfection there is no single exc usive principle Finer H *op cit* p 952

पर कोई सीमा हो ।[1] जबकि साम्यवादी व फासिस्ट अधिनायकतन्त्र राज्य को एक प्रकार से ध्येय मानते हैं, उदारवादी प्रजातन्त्र के सभी समर्थक व्यक्तिवाद अर्थात् व्यक्ति के अधिकारा और स्वत त्रताओ मे विश्वास रखते है ।

अस्तु, अधिनायकत त्र की व्याख्या करते हुए यह आवश्यक प्रतीत होता है कि सर्वाधिकार वाद की भी, सक्षेप म, व्याख्या की जाय । जबकि प्रजातन्त्रो का यह सचेतन प्रयत्न रहता है कि विविधता, खुला वाद विवाद, विचारो और नेताआ मे छाट की स्वत त्रता और भावी कायक्रमो के बारे म खुला मस्तिष्क बने रह, सर्वाधिकारवाद खुले विरोध को कुचल कर तथा ऐसे नेताओ द्वारा जो यह मानते हैं कि वे कभी गलती नही करते, सदैव यह अभियान चलता है कि एकता (एकरूपता) को लागू किया जाय । इन कार्यो के पीछे एक ऐसी विचारधारा रहती है जो शक्तियो के केन्द्रीकरण को न्यायोचित ठहराती है । साम्यवादी सर्वाधिकारवादी सवहारा वग के अधि नायकत्व (dictatorship of the proletariat) मे विश्व स करत है और वे उसे नई सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्था (साम्यवादी समाज) की स्थापना का आवश्यक तथा महत्त्वपूण साधन मानते हैं । साम्यवाद की यह एक आधारभूत विशेपता है कि यह सामाजिक परिवतन को प्रमुख लक्ष्य मानता है और उसकी प्राप्ति के लिए साम्यवादी आधुनिक औद्योगीकृत राज्य के सभी साधनो—औद्योगिकी, शिक्षा, सचार के माध्यमो—का प्रयोग करते है, जिससे कि सामाजिक परिवतन की प्रक्रिया को वेगपूण बनाया जा सके । साम्यवादी अपने विरोधियो का सभी प्रकार से दमन करते हैं ।

फासिस्ट सर्वाधिकारवादी भी साम्यवादियो के समान सर्वाधिकारवादी राज्य, सभी प्रकार के विरोध का दमन आदि म विश्वास करते है । फासिस्ट सवाधिकारवादियो म नाजियो ने फासीवादी विचारधारा को अति तक पहुँचाया । अन्त मे, आधुनिक अधिनायक, चाहे उसकी विचारधारा कोई भी हो, प्राचीन काल के अधिनायको से कही अधिक शक्तिशाली है । एक प्रकार के स्थायी पद का उपभोग करने के अतिरिक्त सामाजिक नियन्त्रण के विभिन्न अत्यधिक प्रभावी साधनो का वे जैसे चाह वैसे ही प्रयोग कर सकते है । अपने विस्तार म आधुनिक अधि नायकत त्र सर्वाधिकारवादी है अधिनायक केवल शासन पर ही नियन्त्रण नही रखते, वरन् अथव्यवस्था, स्कूल, घर, समाचार पत्र, रेडियो सिनेमा, चच तथा नागरिको के मनो व आत्माओ पर भी उनका नियन्त्रण रहता है । अत उनके विरुद्ध विद्रोह करना असम्भव सा है । वे अपन को एक प्रकार से राष्ट्र का बचाने वाला घोषित करते है । इस प्रकार की घोषणा अराजकता, गम्भीर आर्थिक सकट, पूजीवादी घिराव, साम्यवादी खतरे आदि से बचाने के लिए की जा सकती है ।[2]

---

[1] Carter and Herz *op cit* p 217

[2] The totalitarian dictatorships possess the following characteristics (1) An elabo rate ideology consisting of an official body of doctrine covering all vital aspects of man s existence (2) A single mass party typically led by one man the dictator and consisting of a relatively small percentage of the total population (3) A system of terror whe ther physical or psychic effected through party and secret police control (4) A techno logically conditioned near complete monopoly of control in the hands of the party and of the government of all means of effective mass communication such as the press radio and motion pictures (5) A similarly technologically conditioned near complete monopoly of the effective use of all weapons of armed combat (6) A central control and direction of the entive economy through the bureaucratic coordination of form rly independent corpo rate entities typically including most other associations and group activities

(Corl J Friedrich and Zbigniew Brizezinski) Lijphart A (ed) *Politics in Europe* p 27

अधिनायकतन्त्र (तानाशाही) से लाभ और हानियाँ—तानाशाही का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह देश की अव्यवस्थित और बिगड़ी हुई दशा को शीघ्रता से सुधारने में सफल होती है। हिटलर और मुसोलिनी ने अपने देश की गिरी हुई दशा को बड़ी जल्दी सुधारने में सफलता प्राप्त की थी। ऐसे ही तानाशाही के अन्तर्गत सोवियत संघ और चीन ने काफी प्रगति की है। नियोजन भी तानाशाही में अधिक अच्छी प्रकार से किया सकता है। यदि तानाशाह योग्य व कुशल हो और उसे जनता का समर्थन प्राप्त हो तो वह देश को उन्नति के मार्ग पर बड़ी तेजी के साथ चला सकता है। किन्तु विचारने पर यह स्पष्ट हो जायगा कि तानाशाही एक प्रकार का अस्थायी शासन है, जो संकट अथवा अव्यवस्था के काल में अधिक लाभदायक सिद्ध होता है। इसका सबसे बड़ा दोष यह है कि सम्पूर्ण सत्ता एक व्यक्ति के हाथों में रहती है और वह उसका देश के हित या अहित दोनों के लिए ही प्रयोग कर सकता है। यदि तानाशाह चुना हुआ भी हो तो इस बात की कोई गारन्टी न होगी कि सत्ता मिलने पर वह सत्ता के मद में चूर न हो जाय।[1] उसमें जनता के स्वातन्त्र्य अधिकारों पर अनेक प्रतिबन्ध लगते हैं। तानाशाह देश को चाहे जितने गलत मार्ग पर ले जाय, उसकी आलोचना नहीं की जा सकती। साथ ही, तानाशाही अर्थात् शक्ति पर आधारित शासन जनता की इच्छा की तनिक भी परवाह न करे तो विद्रोह के अतिरिक्त उसे बदलने या सुधारने का कोई और साधन नहीं। अन्त में, तानाशाही का एक दोष यह है कि एक सफल और योग्य तानाशाह के बाद ऐसा ही उत्तराधिकारी मिल जाय यह बहुत कठिन है।

विभिन्न कारणों से अविकसित किन्तु हाल ही में स्वतन्त्र हुए देशों में शासन के कर्णधार प्रजातन्त्रात्मक व अधिनायकत्व दोनों ही शासन पद्धतियों की विशेषताओं को मिलाने का प्रयत्न कर रहे हैं। उन्होंने मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया है जिसके अन्तर्गत राज्य अधिकतर महत्त्वपूर्ण उद्योगों का नियन्त्रण तथा विनियमन करता है और निजी उद्यमों को भी चलने देता है। ऐसी सरकारें एक दलीय शासन के पक्ष में हैं, किन्तु वे व्यक्तिगत व सामूहिक विरोध के लिए अवसर प्रदान करती हैं। वे अपने शासन को प्रजातन्त्र का ही परिवर्तित रूप बताते हैं, जैसे इण्डोनेशिया के राष्ट्रपति ने 'मार्गनिर्देशित प्रजातन्त्र' (Guided Democracy), पाकिस्तान के भूतपूर्व राष्ट्रपति ने 'आधारभूत प्रजातन्त्र' (Basic Democracy) आदि वाक्यांशों का प्रयोग किया। इनके शासन एक प्रकार से प्रजातन्त्र व अधिनायकतन्त्र के बीच में हैं।

वास्तव में, तथ्य यह है कि एशिया और अफ्रीका के नई स्वाधीनता प्राप्त देश बहुत ही अल्पकाल में आधुनिकता को प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं। इस कठिन प्रयोजन को प्राप्त करने के लिए उनके नेता बहुधा सर्वाधिकारवादी तकनीकों को अंगीकार करते हैं। परन्तु सर्वाधिकारवाद समाज के उग्रवादी पुनर्गठन की माँग करता है। ऐसा करना सम्भव नहीं है क्योंकि उसका सबसे अधिक प्रभाव भूमिपति किसानों पर पड़ता है, जो कि सभी अविकसित देशों का आधार है। साथ ही यह शक्ति की संरचना को ऐसे समय में कठोर बनाता है जबकि राष्ट्रीय नेता अपनी जनता में यह भाव पैदा करना चाहते हैं कि वह सत्ता के प्रयोग में भाग लेती है। वे राज्य द्वारा निर्देशित सामुदायिक कार्यों के साथ व्यक्तिगत उद्यम को प्रोत्साहन देते हैं। वे एक दलीय शासनों के पक्ष में हैं, किन्तु विशिष्ट कार्यक्रमों व तकनीकों का विरोध करने वाले व्यक्तियों और समूहों को कुचलते नहीं।[2]

6 सोवियत संघ में प्रजातन्त्र है या नहीं ?

सोवियत संघ के शासन के विषय में यह प्रश्न सबसे अधिक महत्त्व का है कि वहाँ पर

---

[1] Rodee et al *Introduction to Political Science* p 40

[2] Carter and Herz *op cit* pp 22-23

अधिनायकतन्त्र है अथवा प्रजातन्त्र। इस प्रश्न के दो उत्तर है, जो एक दूसरे के विरोधी हैं। एक ओर तो सोवियत सघ के नेता और साम्यवाद के समथक सोवियत शासन पद्धति को सच्चा प्रजातन्त्र बताते हैं, दूसरी ओर उसके आलोचक सोवियत सघ मे प्रजातन्त्र के अस्तित्व को स्वीकार नही करते और वहा की शासन पद्धति को अधिनायकतन्त्र मानते है। अत इस प्रश्न का ठीक-ठीक उत्तर देना बडा कठिन है। अतएव दोनो प्रकार के विचारको व लेखको के मतो के आधार पर ही इसका निणय किया जा सकता है। पहले हम उनके मतो और तर्कों का विवेचन करग जो यह मानते है कि सोवियत सघ म प्रजातन्त्र है।

सोवियत सघ मे प्रजातन्त्र है—1926 मे वतमान सविधान के प्रारूप पर बोलते हुए स्टालिन ने कहा था कि नये सविधान के प्रारूप की पाचवी विशेषता उसका तकमय और पूणरूपेण प्रजातन्त्रवाद है, क्योकि उसमे बिना किसी प्रकार के भेद भाव तथा प्रतिबन्ध के नागरिको को समान राजनीतिक अधिकार प्रदान किये गये हैं। वहा पर अधिकतर अधिकारी निर्वाचित होते है और उनको प्रत्यावर्तित करने का भी अधिकार है।[1] सोवियत पद्धति के समथको के अनुसार स्थानीय सोवियतो के प्रतिनिधियो की सख्या म वडी वृद्धि हुई है, अब इनके लगभग साढ़े तीन लाख सदस्य है। इन सोवियतो का काम सुधारने, जनता के साथ उनके सम्पक सुदृढ करने, सोवियत जनतन्त्र का विकास बढाने और सोवियतो के व्यावहारिक काम मे श्रमिक जनो को अधिक विस्तृत रूप से जुटाने के उद्देश्य से यहाँ यह पग उठाया गया है। सोवियत नेताओ के अनुसार विभिन्न स्तरो की सोवियतो को अपने अपने क्षेत्र मे जन कल्याण के विभिन्न कार्यों को करने की शक्तियाँ प्राप्त है। सास्कृतिक सुविधाओ से सम्बन्धित कुछ काय सावजनिक सगठनो को सौंपने की दिशा मे प्रगति की जा रही है। शारीरिक व्यायाम और खेल-कूद की राज्य समिति के काय ऐच्छिक खेल कूद सस्थाओ के सघ न अपने हाथ मे ले लिए ह।

सोवियत सघ मे एक दलीय पद्धति के समथक मानते है कि सोवियत सघ म समाजवादी समाज का निर्माण हो जाने से स्वभावत वग-आधार ही समाप्त हो गया जिस पर दूसरे राजनीतिक दल बन सकते है। सोवियत समाज मे अब कोई शोषक वग नही है। वहा केवल दो मैत्रीपूण वग है—श्रमिक जन और किसान एक सामाजिक समुदाय है और दूसरा श्रमिक बुद्धिजीवी। इन सभी के समान हित है और वे एक ही लक्ष्य की आर बढ रहे हैं। अत यह स्वाभाविक है कि वहा एक ही राजनीतिक दल—साम्यवादी दल—है जो इन हितो की रक्षा करता है और जिसके माग दशन म सोवियत सघ म समाजवाद की स्थापना हो चुकी है। साम्यवादी पद्धति के प्रशसक यह कहते है कि सोवियत सघ मे बेकारी का अन्त हो गया है, सम्पूण जनता को काम पाने का अधिकार, विश्राम का अधिकार और सामाजिक सुरक्षा का अधिकार वास्तव मे प्राप्त हो गये है। सक्षेप म, वहाँ पर सच्चे आर्थिक प्रजातन्त्र की स्थापना हो गयी है। सोवियत सघ मे केवल श्रमजीवियो का समाज है, वहा पर पाश्चात्य राज्यो की तरह पूजीपतियो का शोषण करने वाला वग नही है। समाज मे सभी का स्थान समान है, सभी मे बन्धुत्व की भावना है और चूकि वहाँ शोषण नही है और जीविकोपाजन की परतन्त्रता नही है, इसलिए उस समाज मे ही वास्तविक स्वतन्त्रता, समता व बन्धुत्व की भावना है। आर्थिक विकास की गति मे सोवियत सघ अन्य सभी पूजीवादी देशो मे बढा हुआ है और आर्थिक

[1] It represents the highest form of democracy possible in a classless society This democracy is expressed first of all in the very fact of participation by the working population in State Government in the fact that officials are all elected and can all be replaced and in the extraordinarily simple forms and methods of state government accessible to worker

शक्ति मे उसका ससार क देशो म दूसरा स्थान है। इतनी आश्चयजनक उन्नति कवल 50 वष म हुई और एक अत्यन्त पिछड़े देश म, यह साम्यवादी दल के सफल नेतृत्व का प्रमाण है। सोवियत नेताओ की दृष्टि म दल और जनता एक हैं। साम्यवादी दल की शक्ति जनता के साथ उसके अटूट सम्बन्धो मे निहित है। दल म जनता का नेतृत्व करने और उससे सीखन की क्षमता है।

सिडनी और बीट्रिस वैब न अपने महत्त्वपूण ग्रन्थ म यह दिखान का प्रयत्न किया है कि सोवियत सघ म प्रजातन्त्र है। उसक अनुसार सोवियत सघ सरकार की विशेषता 'बहुरूपी प्रजातन्त्र है। प्रत्यक नागरिक तीन प्रकार स सामाजिक तथा राजनीतिक सगठन म भाग लता है। नागरिक की हैसियत से वह सोवियत सघ की विभिन्न सोवियतो के चुनावा व कार्यों म भाग लता है, उत्पादक की हैसियत से वह श्रमिक के रूप म श्रमिक सघ के कार्यों म भाग लता है, उत्पादन स्वामी के रूप म उत्पादको की सहकारी समितियो और कृषि क्षेत्र म सामूहिक फार्मों म भाग लता है और उपभोक्ता की हैसियत स वह उपभोक्ता सहकारी समितियो म भाग लता है। इनक अतिरिक्त वह साम्यवादी दल का सदस्य होने के नाते साम्यवादी दल के सगठनो के चुनावा तथा कार्यों म भाग लेकर दूसरा का नेतृत्व करता है।[1] इस दृष्टि स सोवियत सघ म बहुरूपी प्रजातन्त्र की स्थापना को स्वीकार किया जा सकता है। किन्तु प्रश्न यह है कि राजनीतिक प्रजातन्त्र का है जैसा कि पश्चिमी देशो म पाया जाता है। इसका उत्तर 'नहीं' म देना पडेगा।

सोवियत सघ मे प्रजातन्त्र नहीं, अधिनायकशाही है—इस मत के पक्ष म अधिकतर पाश्चात्य लेखक हैं, जो विभिन्न तर्कों द्वारा यह सिद्ध करना चाहते हैं कि सोवियत सघ म प्रजातन्त्र नहीं है। प्रथम, हेजार्ड के मतानुसार आज विश्व की सभी जातियो की जबान पर 'प्रजातन्त्र' शब्द चढा है। यद्यपि सोवियत सघ म बाहर के विचारो के प्रवेश पर भी कठोर सीमाएँ लगी हैं, सोवियत नागरिक जानते हैं कि मनुष्य मात्र अच्छे शासक को इस दृष्टि स जाँचते हैं कि राज्य की जनता को अपन नेताओ को चुनने तथा नीति को प्रभावित करन का अवसर मिलता है। इसके अतिरिक्त साम्यवादी दल ने सोवियत राज्य के ढाँचे को इसलिए कायम रखा हुआ है कि वह दल के प्रभाव को दल स बाहर बडे सक्रिय जन समूहो को प्रभावित करता है और इसलिए यह तक भी दिया जा सकता है कि सोवियत सघ म प्रजातन्त्रात्मक सस्थायें हैं।

दूसरे, फाइनर कहता है कि अधिनायकशाही राज्यो म सघ बनाने, सभा करने, सहमति प्रकट करने और शासन की इच्छा निर्माण करने वाले स्वातन्त्र्य को नष्ट किया जाता है। अधिनायकशाही स पीडित व डरे हुए प्रजाजन जीवन म आने वाली नतिक छूट नहीं कर सकते। अधिनायकशाही का आधार यह है कि एकाधिकार प्राप्त दल मनुष्य मात्र के राजनीतिक भाग के बारे म अन्तिम सत्य को मानते है। उसके मतानुसार सोवियत सघ म साम्यवादी दल की अधिनायकशाही है। यह सच है कि सोवियत सघ मे बौद्धिक स्वतन्त्रता नही है। जहाँ तक प्रेस की स्वतन्त्रता का प्रश्न है, इस विषय म अधिक कहने की आवश्यकता नही है। क्रान्ति से पूव जारशाही के अन्तगत बडी रोकथाम के बावजूद भी समाचार पत्रो मे विभिन्न मत प्रकाशित होते थे

[1] The result is a multiform democracy in which Soviets and trade unions co operative societies and voluntary associations provide for the reasonable participation in public affairs of an unprecedented proportion of the adult population

[2] The Soviet state apparatus has been retained by the Communist party probably not only because it facilitates the radiation of party influences throughout larger groups of the active non party masses but also because it makes possible an argument however ineffective from the point of view of the Westerner that democratic institutions exist within the U S S R Hazard John N *The Soviet System of Government* p 46

किन्तु अब सोवियत सघ मे सेन्सरशिप की आवश्यकता नही है, क्योकि वहा पर केवल साम्यवादी पत्र ही प्रकाशित हो सकते हैं। पाठक को प्रवदा या इजवेस्तिया देखने के बाद अ य हजारो समाचार पत्र देखने मे समय खोना होगा, क्योकि वे सभी एक ही बात कहते है।

तीसरे, आइवर जेनिंग्स के मतानुसार जब तक ब्रिटिश पार्लियामेण्ट म विरोधी पक्ष हैं, वहा केबिनेट की अधिनायकशाही कायम नही हो सकती। किसी देश मे प्रजात त्र है या नही, इसकी पहचान विरोधी पक्ष के होने या न होने से होती है। इसी कारण आलोचक यह मानते ह कि सावियत सघ मे प्रजातन्त्र नही है। फ्लोरिंस्की के अनुसार राजनीतिक प्रजातन्त्र का सार इसम है कि जनता को सत्तारूढ दल के विरुद्ध मत रखने और उसे अभिव्यक्त करने का अधिकार हो। आधुनिक प्रजात त्रात्मक पद्धति का जीवनदायिनी तत्त्व सगठित विरोध है। यह सच है कि सोवियत सघ मे एक ही दल है, जिस शक्ति का एकाधिकार प्राप्त है। सोवियत सघ मे एक दलीय पद्धति के अ तगत प्रत्येक मतदाता से एक ही उम्मीदवार के पक्ष मे मतदान करने या उसका नाम काटने की बात पाश्चात्य प्रजात त्री देशो के नागरिको की दृष्टि मे प्रजात त्रात्मक प्रणाली नही है। व अवश्य ही यह तक देंगे कि इस प्रकार से मतदान करने मे निर्वाचक एक रबड की मोहर के समान है, जि ह मत देने की स्वत त्रता प्राप्त नही है। मतदान का आकार ही 97–99% मतदाता द्वारा सत्तारूढ शासक वृ द को एक मत से स्वीकृति देना इस बात का प्रमाण है कि वह सम्पूण क्रिया एक प्रकार का प्रहसन है।[1]

चौथे, शासन पर निय त्रण साम्यवादी दल का रहता है। स्टालिन की अधिनायक शक्तिया का आधार ही उसका दल पर निय त्रण था। स्टालिन के व्यक्तित्व मे तो शासक वग और शासक दल दोनो का ही मेल था। वास्तव म, साम्यवादी दल का इतिहास ही सोवियत सघ का इतिहास है। पहले साम्यवादी दल क्रा ति का अगुआ (spearhead of the revolution) था और अब वह स्थापित व्यवस्था की प्रधान शक्ति है। न्यूमन के अनुसार साम्यवादी दल की प्रमुखता इस बात से स्पष्ट होती है कि वह राज्य और जनता का माग दशक है। सोवियत जीवन के सभी सावजनिक कार्यो और कभी कभी व्यक्तिगत क्षेत्र का भी स्पाक प्लग अथात् बिजली शक्ति प्रदान करने वाला साम्यवादी दल है। साम्यवादी दल के नेताओ ने स्वय यह स्वीकार किया है कि *शासनतन्त्र की चालक शक्ति दल है, यद्यपि सोवियत निकाय और समितियाँ आदि उनके अ य अग हैं।*[3] एक बार स्टालिन ने स्वय कहा था—यह दल खुले रूप म स्वीकार करता है कि वह शासन को सामान्य निर्देश देता है और उसका माग दशन करता है। आँग और जिक के अनुसार सावियत सघ मे सिद्धा त रूप म तो दल और शासन एक दूसरे से अलग हैं और केवल एक दूसर के पूरक है। तथ्यो की दृष्टि से, सभी बातो मे केवल बाह्य रूप को छोडकर दल ही शासन है और रूस मे साम्यवादी अधिनायकशाही है।

अ य लेखको न भी उपर्युक्त मत का समथन किया है। हारपर व टॉमसन ने लिखा है कि सोवियत सघ म वास्तविक नीति निर्धारण करने वाला निकाय दल और शासन का पोलिट-ब्यूरो

---

[1] The very size of the Russian votes that 97 and 99 per cent of all the voters give unanimous approval to the regime in power seems to us a proof that the whole thing is a farce Deranty W *Stalin & Co* p 23

[2] It is the spark plug of all actions of the public and sometimes the private sector of Soviet life Neumann R G *European and Comparative Government* p 533

[3] The Party has been described by its own leaders as the motive power of a highly generated machine the other parts of which are the Soviet assemblies and committees the trade or labour unions and various other types of mass organization Harper Thomson *The Government of the Soviet Union* p 57

है, जिसे अय प्रेसीडियम कहते है । नाम के लिए दल और शासन का पृथक पृथक सगठन है जो ऊपर स लिए नीचे गाव तथा कस्बे तक समानान्तर रूप स फैला है—दोना के अपने समाचार-पत्र है, सम्मेलन व सभाएँ हैं और उनके पृथक कृत्य व सगठन हैं । परन्तु चूँकि दोना म एक ही व्यक्ति समूह सदस्य हैं दोनो एक दूसरे स गुथे हुए हैं विशषकर ऊपर के स्तरा पर । दोना की सदस्यता म इतनी अधिक समानता है कि व्यवहार म यह कहा जा सकता है कि शासन के प्राय सभी उच्च स्तरीय तथा अधिकतर निम्न अधिकारीगण साम्यवादी दल के सदस्य है ।

फाटर आदि के मतानुसार भी सोवियत सघ म शासन करने वाला दल है । कहने को मन्त्रि परिषद् सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी है, किन्तु आज तक सर्वोच्च सोवियत ने किसी मन्त्री को भी अपदस्थ नही किया है । दोनो सदन स्वतन्त्र हैं, किन्तु उनके बीच कभी भी किसी प्रकार का मतभेद उत्पन्न नही होता । वास्तव म, वहाँ पर 'वफादार विरोधी पक्ष' का अस्तित्व ही नही है । विधि निर्माण और प्रशासन दोना म सदैव दल ही यह निणय करता है कि क्या करना है, कब करना है, कैसे करना है और किसके द्वारा ? प्राय सभी लेखक यह मानते है कि सभी राजनीतिक सस्थाएँ दल के नियन्त्रण म हैं । कुछ समय स व्यक्ति की पूजा की निन्दा की गयी है और एक व्यक्ति के स्थान पर सामूहिक नेतृत्व मे विश्वास प्रकट किया गया है । परन्तु स्टालिन के सिद्धान्ता के त्याग स देश के ऊपर साम्यवादी दल के नियन्त्रण म कोई अन्तर नही आया है ।

जहाँ तक प्रशासन का सम्बन्ध है, मन्त्रि परिषद् के सदस्या की नियुक्ति साम्यवादी दल के सत्ताधारी अग—प्रेसीडियम द्वारा की जाती है और वही इन्हे उनके पद से भी हटा भी सकता है, यद्यपि सावैधानिक दृष्टि स जिन दिनो सर्वोच्च सोवियत का सत्र होता है, मन्त्रि-परिषद् उसके प्रति उत्तरदायी रहती है और अन्य समय सर्वोच्च सोवियत की प्रेसीडियम के प्रति । शासन व प्रशासन के सभी महत्त्वपूर्ण पदो पर साम्यवादी नेता व कायकर्त्ता आसीन रहते हैं । सरकारी अधिकारियो व कर्मचारियो मे भी अधिकतर साम्यवादी दल के सदस्य अथवा उसके समथक हैं । इस प्रकार सम्पूण प्रशासनतन्त्र पर दल का प्रभुत्व है । विधि निर्माण क्षेत्र म, सविधान की दृष्टि से, सर्वोच्च कानून बनाने का काय सर्वोच्च सोवियत करती है । कानून बनाने की औपचारिक कायवाही होती है किन्तु यह सच है कि नीति का निर्धारण साम्यवादी दल के सर्वोच्च नेता व अग करते है । यह तथ्य विधायी प्रक्रिया से भी सिद्ध होता है । सोवियत सघ मे सर्वोच्च सोवियत के साधारणतया दो सत्र होते हैं और प्रत्येक सत्र लगभग 8–10 दिन तक चलता है । अत सत्रा का काल अत्यन्त अल्प है । विधेयको पर बहुत कम वाद विवाद होता है, केवल अभिरुचिहीन प्रक्रिया सम्बन्धी कायवाही पूरी की जाती है । व्यवहार म, वहाँ पर सर्वोच्च सोवियत स्वतन्त्र विधायी काय नही करती ।

पाचवें, साम्यवादी दल अपनी गतिविधियो, नेताओ व कायकर्त्ताओ द्वारा सम्पूण शासन व प्रशासन पर नियन्त्रण रखता है । साम्यवादी दल का गुप्तचर विभाग और सेना पर भी नियन्त्रण है । राजनीतिक और आर्थिक सभी प्रकार के कार्यों का सचालन करने वाले मन्त्रालयो व नियन्त्रण अभिकरणो, राजकीय नियोजन आयोग और राजकीय मन्त्रालय पर साम्यवादी दल का ही नियन्त्रण है । गुप्त पुलिस और सेना द्वारा तो साम्यवादी नेता जनता को आतकित और भयभीत रखते है । सभी अधिनायकशाही वाले देशो म ऐसा होता है । सोवियत सघ म तो साम्यवादी दल क्रान्ति के बाद से देश मे समाजवाद और अब साम्यवाद की स्थापना म लगा है, अतएव वह इनके विरोधियो को कुचलने म विश्वास करता है । शासन के अन्य विभागो व अभिकरणो द्वारा साम्यवादी दल सोवियत समाज के प्राय सम्पूण जीवन पर नियन्त्रण रखता है ।

छठे सोवियत सघ म प्रजातन्त्र है या अधिनायकशाही—इस प्रश्न का उत्तर स्वय साम्यवादी

नताओ न ठीक ठीक नही दिया है। साम्यवादी मत के अनुसार सोवियत सघ मे सवहारावग की अधिनायकशाही है और साथ ही साथ वे इसे प्रजातन्त्र भी बताते हैं। स्टालिन ने इसे अधिनायकशाही और पूण प्रजातन्त्र बताया है। इन दोनो बातो म असगति है, यह स्पष्ट है। साथ ही यह बात स्पष्ट है कि साम्यवादी नता 'प्रजातन्त्र' शब्द से कुछ भिन्न अथ लते हैं। वे प्रजातन्त्र को उस रूप म स्वीकार नही करते जिसम कि इस पाश्चात्य विचारक समझते है। साथ मे यह एक महत्त्वपूण प्रश्न है कि यदि साम्यवादी दल और शासन एक दूसरे से पृथक् नही हैं तो फिर साम्यवादी नताओ न ऐसी व्यवस्था क्या की है। इस प्रश्न का उत्तर दो प्रकार से दिया गया है (1) शासन वह महत्त्वपूण साधन है जिसके द्वारा सम्पूण जनता मे दल के प्रभाव को फलाया जा सका है। (2) इसके आधार पर साम्यवादी नताओ के लिए यह तक देना सम्भव हो सका है कि सोवियत सघ म प्रजातन्त्र का अस्तित्व है।

सातवें, बहुलवादी सावैधानिक राज्य मे शासन पर दो मुख्य रोक विधायी और न्यायिक अगो द्वारा लगाई जाती है। सास्कृतिक निकाय, जस चच, विश्वविद्यालय अकादमियाँ और ऐसे ही अन्य केन्द्र, प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप मे निणय करने वाली प्रक्रिया (process of decision making) मे प्रवश करती है, एसी सस्थाओ के रूप म जिनसे आशा की जाती है कि वे अपनी क्षमता के क्षेत्र मे उठाये जाने वाले पगो पर रोक का काय करेंगी अथवा परोक्ष रूप म उस प्रभाव द्वारा जो कि वे जनमत पर डालती हैं। प्रेस और सूचना व सचार क अन्य माध्यमो को ठीक ही चौथा वग (fourth estate) कहा जाता है। शासन की गतिविधियो पर उनके अपन और प्रभावी निरोध (checks) होते है। परन्तु साम्यवादी राज्यों म शक्तियो के पृथक्करण सिद्धान्त को माना नही जाता। विधायी और न्यायिक अगो तथा सस्कृति व सूचना की सस्थाओ के काय को कार्यान्वित करने के कत्तव्य म परिवर्तित किया जाता है। एक आदश एपेरेट अथवा सर्वाधिकारवादी राज्य मे, इन सभी निकायो का काम 'सचार पेटियो' और 'राज्य नियन्त्रण के अभिकरणो का है।[1]

आठवें, कुछ लेखको क मतानुसार सोवियत सघ स्वेच्छाचारी शासन का सबस महत्त्वपूण उदाहरण है। इसम असभ्यकालीन हृदय की कठोरता, पूर्वीय दशा की चाल और पाशविकता और मार्क्सवादी पूणता स जानबूझ कर निकाली निदयता का मेल है। इस शासन पद्धति ने लाखो मनुष्यो का सहार किया है और लाखों को भूख और मौसम की कठोरताओं से मरने के लिए छोड दिया है। यह मत अतिवादी अमरीकी आलाचको का प्रतिनिधित्व करना है।

निष्कष—हमारे विचार मे सोवियत सघ मे बडी मात्रा म आर्थिक और सामाजिक प्रजातन्त्र की स्थापना हुई है। वहाँ पर बेकारी, निधनता व मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का अन्त कर दिया गया है और सवसाधारण जनता को सामाजिक सुरक्षा एव आर्थिक चिन्ताओ से मुक्ति प्रदान की गयी है। आज की कठिन आर्थिक परिस्थितियों में आर्थिक प्रजातन्त्र अथवा समता व स्वतन्त्रता का महत्त्व राजनीतिक प्रजातन्त्र स कम नही हो सकता। इस बात का वहाँ और भी अधिक महत्त्व है, क्योकि जार कालीन रूस मे सवसाधारण जनता की दशा बडी ही दयनीय थी। साथ ही सोवियत सघ मे सभी नागरिको को बिना किसी भेद-भाव के समान अधिकार प्राप्त हुए

[1] In a pluralist constitutional state the two main checks on the government or executive are exercised by the legislative and the judiciary organs In the apparate communist states the principle of the separation of powers is denied The function of the legislative and judicial organs, and of the institutions of culture and information is transformed into a duty of implementation In an ideal Apparate or for that matter totalitarian state t function of all these bodies is that of transmission belts and of agencies of state con Ionescu G *The Politics of the European Communist States* p 166

है । वहाँ स्त्रिया और पुरुषा तथा विभिन्न राष्ट्रीयताओ क सदस्या क बीच किसी प्रकार का भेद भाव नही बरता जाता । इसके अतिरिक्त वहाँ पर सम्पत्ति के आधार पर ऊँचे व नीचे वर्गों का अन्तर समाप्त हो गया है । सोवियत सघ ही एक ऐसा देश है जहाँ श्रमिक जन, किसान और बुद्धिजीविया का समाज है और जिसम श्रमिका व किसाना को सम्मानित पद प्राप्त हुआ है ।

उपयुक्त बाता क अतिरिक्त यह भी सच है कि वतमान सविधान म प्रजातन्त्रात्मक पद्धति का रूप अवश्य ही अपनाया गया है, किन्तु पूव वर्णित विभिन्न तर्कों क आधार पर यह कहना ठीक कि सोवियत सघ म राजनीतिक स्वतन्त्रता का अभाव है, नागरिका को स्वतन्त्र रूप स मतदान का अधिकार नही है और निर्वाचन पद्धति ऐसी है जिसे प्रजातन्त्रात्मक नही कहा जा सकता । सोवियत नेताओ के इस तर्क म सत्य का कुछ अंश है कि वहाँ विभिन्न वर्गों के अन्त के बाद विरोधी दलो क लिए आधार नही रहा है, परन्तु राजनीतिक प्रजातन्त्र को वास्तविक तभी माना जा सकता है जबकि जनता को स्वतन्त्र रूप स अपना मत व्यक्त करन व सगठित होन का अधिकार प्राप्त हो । अतएव वहाँ पर राजनीतिक दृष्टि से प्रजातन्त्र नही है । वास्तव म, साम्यवादी दल का सम्पूर्ण शासन पर प्रभुत्व तथा नियन्त्रण कायम है । अस्तु, इस कथन म अत्युक्ति नही है कि सोवियत सघ म साम्यवादी दल की अधिनायकशाही है जिसे साम्यवादी नेता सर्वहारा वर्ग की अधिनायकशाही कहते है ।

अन्त म, आधुनिक शासन के प्रमुख रूपो म प्रजातन्त्र क दो मुख्य प्रकारो ससद और राष्ट्रपतीय पद्धतियो का विवचन भी सम्मिलित किया जाना चाहिए । इस विषय का विस्तारपूर्ण विवेचन छठे अध्याय म किया गया है, क्योकि ससद और राष्ट्रपतीय शासन पद्धतिया के बीच के अन्तर का मुख्य आधार कार्यपालिका की रचना और उसका विधायिका स सम्बन्ध है । प्रमुख रूपो म एकात्मक व सघात्मक शासन पद्धतिया को भी सम्मिलित करना चाहिए । इन दो प्रकारा का विस्तारपूर्ण विवेचन अध्याय पाँच म किया गया है ।

चौथा अध्याय

सविधानवाद

1 सविधान की व्याख्या

सविधान का अथ व परिभाषाएँ—'सविधान की व्याख्या उसके बारे म दो विरोधी अभि वृत्तियो पर निभर करती है। एक समूह मे व विचारक और लेखक है जो सविधान को राजनीतिक पद्धति के सस्थागत सगठन (institutional organization) म देखते है और दूसरे समूह के लेखक उसे राजनीतिक पद्धति मे शासन सत्ता धारण करन वालो पर प्रतिबन्ध के तन्त्र रूप मे देखते हैं (in terms of a mechanism for the restraint of the power holders)। प्रथम समूह मे सम्मिलित लेखको द्वारा दी गई सविधान की परिभाषायें और उनका विवचन इस प्रकार है। जॉन ऑस्टिन के शब्दा म, 'सविधान वह है जो सर्वोच्च शासन के सगठन को नियत करता है। किसी राज्य का राजनीतिक सविधान उन नियमा का समूह होता है, जिनके द्वारा देश के शासन का सचालन किया जाता है।' य नियम अशत लिखित और अशत अलिखित हा सकते हैं। लीकाक के शब्दा मे 'यह सरकार का स्वरूप है।' डायसी लिखता है कि सविधान उन कानूनो के समूह को कहते हैं जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से राज्य की सर्वोच्च सत्ता के कारण और प्रयोग को निश्चित करते हैं। एक और अच्छी परिभाषा जेलीनेक की है, इसके अनुसार सविधान उन कानूनो का नाम है जिनके द्वारा राजशक्ति को प्रयोग मे लाने वाले प्रधान अगो का रूप निश्चित किया जाता है और जिनके द्वारा ये सब बातें निर्धारित की जाती है कि किन अगो का निमाण किया जाय, उनमे परस्पर क्या सम्ब ध हो, और इनम से प्रत्येक का राज्य के साथ क्या सम्बन्ध हो। स्ट्राग के शब्दा म, 'सविधान उन सिद्धा तो का समूह होता है जिनके अनुसार, सरकार की शक्ति और शासितो के अधिकार, दोनो के बीच सम्ब धा को ठीक रखा जाता है।' ब्राइम के अनुसार, सविधान ऐसे सुस्थापित नियमो का समूह है जो सरकार के सचालन से सम्ब धित हो और उसे निदेशन देते हो।

अन्तिम परिभाषा अधिक विस्तृत है, पर इसम व्यक्ति के अधिकारो का वणन नही है। यद्यपि डायसी की परिभाषा अधिक स्पष्ट नही है फिर भी व्याख्या करने पर उससे ये बाते स्पष्ट है—(अ) नियमानुसार लिखित कानून और प्रचलित प्रथायें सविधान के मुख्य तत्त्व होने हैं, वे सरकार का स्वरूप निर्धारित करते हैं। (आ) व्यक्तियो के अधिकार, सरकार का सगठन व उसकी काय पद्धति तथा राज्य और नागरिक के आपसी सम्बन्धो का उसमे वणन होता है। अब हम सविधान की व्याख्या इस प्रकार कर सकत ह वे आधारभूत सिद्धान्त, जा किसी राज्य के शासन की बनावट और शासन के विभिन्न अगो की शक्तियो, उनके आपसी सम्ब धा व राज्य और नागरिका के पारस्परिक सम्बन्धो को निर्धारित करते है, जो एक या अधिक आलेखो (document) मे वर्णित होते है और जिनम परिवतन की कोई विशेष विधि होती है राज्य का सविधान कहलाते है।

दूसरे समूह के प्रमुख लेखक लोवेन्स्टीन, फ्रीड्रिच और हरमन फाइनर हैं, जो सविधान के बारे मे अपन मतो मे प्रतिबन्ध पर बल देते है। सविधान के बारे मे लोवेन्स्टीन लिखता है 'यह शक्ति प्रक्रिया पर नियन्त्रण के लिए आधारभूत साधन है और इसका प्रयोजन राजनीतिक शक्ति पर सीमा लगाने व नियन्त्रण करने के तरीको का उच्चारण है।' फ्रीड्रिच के अनुसार 'सविधान वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सरकार के कार्यों को प्रभावी ढग से प्रतिबन्धित किया जाता है।' हरमन फाइनर ने लिखा है 'राज्य एक मानव समूह है जिसमे इसके व्यक्तिगत और समूहकृत अगो के बीच एक प्रकार का शक्ति सम्बन्ध होता है। इस शक्ति सम्बन्ध को राजनीतिक सस्थाओ म समाविष्ट किया जाता है। आधारभूत राजनीतिक सस्थाओ की पद्धति सविधान है।' ब्लोन्डेल ने पूव वर्णित विभिन्न पहुँचो को अग्रलिखित त्रि सूत्री परिभाषा मे मिलाने का प्रयत्न किया है प्रथम, सविधान सामान्यत विभिन्न प्रकार के आरोपित आदर्शों (imposed norms) का हवाला देता है। इस अथ म साविधानिक शासन वह है जो विशेष रूप से उदार (liberal) हो और जो सरकार के कार्यो पर प्रतिबन्ध को महत्त्व देता है। दूसरे, सविधान से आशय उस आलेख (document) का होता है, जो उन सरचनाओ की रचना करता है, जिनमे आदश समाविष्ट हो सकते हैं और नही भी हो सकते। तीसरे, सविधान से आशय राज्य के यथाथ सगठन से होता है, अर्थात् सस्थाओ के केवल वणनमात्र से।'[1]

उपर्युक्त परिभाषाओ व व्याख्याओ से यह बात स्पष्ट है कि प्रत्येक राज्य के लिए सविधान का होना अनिवाय है। कुछ लेखको का यह मत रहा है कि ब्रिटेन मे कोई सविधान नही है। फ्रासीसी लेखक डी० टॉकविले ने, जिसे अपने देश के लिखित सविधानो की परम्परा की जानकारी थी, यह मत प्रकट किया कि इग्लैण्ड मे किसी सविधान का अस्तित्व नही है। ऐसे ही एक अमरीकी विद्यार्थी को एक ब्रिटिश पुस्तकालय मे जाने पर यह जानकर कि ब्रिटिश सविधान की कोई प्रति नही बडा आश्चय हुआ। टामस पेन ने स्पष्ट रूप से कहा है कि जहा सविधान को दृश्य रूप मे सामने नही रखा जा सकता, वहा सविधान नही होता। इस भ्रम का कारण यह है कि फ्रासीसी तथा अमरीकी लेखक 'सविधान से केवल लिखित सविधान का ही अथ लेते हैं, जो यथाथ मे बहुत ही सकुचित है। ब्रिटेन मे सविधान है यद्यपि इसे आलेखो के रूप (documentary form) मे नही पाया जाता। ब्राइस ने सत्य ही कहा है कि यद्यपि 'प्राविधिक भाषा मे ब्रिटेन का कोई सविधान नही है, फिर भी ब्रिटिश सविधान इनका सग्रह है—(अ) असख्य पूव दृष्टान्त जो मनुष्यो की स्मृति तथा विभिन्न लेखो मे पाय जाते है, (आ) बुद्धिमान राजनीतिज्ञो व महान् न्यायविदो के अधिकारपूण कथन (इ) प्रथायें चलन और अभिसमय आदि, और (ई) सविधियां जिनके साथ पूव दृष्टान्त, प्रथाये और कानूनी निणय लगे हुए हैं।[2] विल्फ्रेड हरीसन ने लिखा है 'ग्रेट ब्रिटेन का सविधान उतना ही आधारभूत और नियमो का सग्रह है जितने कि सयुक्त राज्य अमरीका, सोवियत सघ व फ्रास के सविधान है। लिखित सविधानो से ब्रिटिश सविधान वास्तव म भिन्न है, किन्तु केवल इतना ही कि इसके लिखित अशो की उनकी भाति विशेष रूप से उत्पत्ति नही हुई और उन्हें किसी विशेष आलेख मे सग्रहित नही किया गया है। यह उनसे वास्तव मे इस अथ म भिन्न है कि यह पूणतया अलिखित और वे पूणतया लिखित हैं।'

[1] Loewenstein writes of a constitution as the basic instrumentality for the control of the power process its purpose as the articulation of devices for the limitation and control of political power and to liberate the power addressees from the absolute control of the rulers and to assign to them their legitimate share in the power process Wolf Philips L *Comparative Constitutions* p 8

[2] it is a composite of charters and statutes of judicial decisions of common law of precedents usages and traditions It is not one document but hundreds of them it is not derived from one source but from several

उपर्युक्त 'सविधान' की परिभाषाओ से दूसरी बात यह स्पष्ट है कि सविधान कम या अधिक मात्रा मे अप्रलिखित बातो को निश्चित करता है—(1) राज्य के शासन का स्वरूप और सगठन, (2) शासन के विभिन्न अगो—कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका की शक्तिया और कार्य, (3) शासन के विभिन्न अगो के आपसी सम्बन्ध, (4) नागरिकों के अधिकार और कर्त्तव्य, (5) शासन और नागरिको के आपसी सम्बन्ध, और (6) सविधान के सशोधन के लिए प्राविधान ।

ब्रिटेन के सविधान मे विभिन्न प्रकार की राजनीतिक प्रथाओ, चलनो, अभिसमयो आदि की सख्या अन्य राज्यो की तुलना मे बहुत बडी है और उनका वहाँ की शासन पद्धति मे महत्त्व भी बहुत अधिक है । पार्लियामट की प्रक्रिया के सम्बन्ध मे कोई कानून नही है, उसकी प्रक्रिया का मुख्य आधार प्रथायें है । इन प्रथाओ के कुछ उदाहरण ये है । विधेयक से कानून बनने के मार्ग मे आने वाली मजिलें (stages), वित्तीय विधि निर्माण के लिए विशेष नियम, कॉमन सभा के अध्यक्ष का पद, सरकारी तथा विरोधी पक्षो के बीच सयुक्त मन्त्रणा द्वारा पार्लियामेंट के समय का विभाजन, इत्यादि । ऐसी अनेक प्रथाओ और चलनो (customs and usages) के अतिरिक्त ब्रिटिश सविधान मे अनेक अभिसमय (conventions) हैं, ये सभी सविधान मे जीवन और गति का सचार करते है । ऑग और जिन्क के शब्दो मे 'ये कानून की सूखी हड्डियो पर मास लगाते है और कानूनी सविधान को चालू रखते हैं तथा उसे बदलती हुई आवश्यकताओ व राजनीतिक विचारो के अनुसार सशोधन करते रहते हैं । अभिसमय उन समझौता, आदतो या प्रथाओ से मिलकर बने है, जो राजनीतिक नैतिकता के नियम मात्र होने पर भी सबसे महत्त्वपूण सावजनिक सत्ताओ के दिन प्रतिदिन के यथार्थ सम्बन्धो और गतिविधियो को अधिकाशत विनियमित करते ह ।'[1]

फाइनर का कथन है 'अभिसमय राजनीतिक व्यवहार के नियम हैं जिन्हे सविधियो, न्यायिक निणयो अथवा ससदीय प्रथाओ द्वारा स्थापित नही किया गया है, परन्तु जिनकी रचना इनसे बाहर हुई है और जो ऐसे उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए बने है जिनको सविधियो आदि मे समाविष्ट नही किया गया है, अत वे इनकी पूरक हैं ।[2] जनिग्स के अनुसार साविधानिक प्रथाओ की दो विशेषतायें हैं—प्रथम, ये प्रथायें उस ढग को निर्धारित करती है जिसके द्वारा सविधान को व्यवहार मे कार्यान्वित किया जाता है । दूसरे, इन प्रथाओ के द्वारा सविधान को बदलती हुई सामाजिक आवश्यकताओ और नये विचारो के अनुसार ढाला जाता है ।

साविधानिक कानूनो और अभिसमयो मे अन्तर—दोनो का प्राय समान रूप से पालन किया जाता है और ब्रिटन की शासन पद्धति दोनो पर ही समान रूप से आधारित है । परन्तु दोनो के बीच महत्त्वपूण अन्तर है, जिसे विशेषज्ञो ने तीन प्रकार से व्यक्त किया है—प्रथम, साविधानिक प्रथा की अपेक्षा साविधानिक विधि को अधिक पवित्र समझा जाता है और उसका पालन भी अपेक्षाकृत उच्चतर कर्त्तव्य की भावना से किया जाता है । इस कथन मे सत्य का बडा अश है किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नही कि कानून अभिसमयो से अधिक महत्त्वपूण है । अनेक प्रथाओ का महत्त्व कानूनों से कम नही है । उदाहरण के लिए यह सोचना भी कठिन है कि कोई मन्त्रि-मण्डल कामन सभा का विश्वास खोने पर त्याग पत्र न दे अथवा दोनो सदनो द्वारा पास किये गये विधेयक पर ताज की अनुमति न मिले । दूसरे, साविधानिक कानूनो को न्यायालय भी मानते हैं और उन्हे लागू भी करते हैं, किन्तु प्रथाओ का न्यायालयो की दृष्टि मे कोई महत्त्वपूण स्थान नही

[1] Ogg and Zink *Modern Foreign Government* p 29
[2] Finer H *Governments of Greater European Powers* p 46

है कि साविधानिक अभिसमया की वैधता राजनीतिक वास्तविकताओ द्वारा निधारित होती है। इस बात का प्रमाण यह है कि यदि किसी महत्त्वपूण अभिसमय का उल्लघन होता है तो पार्लियामेंट उसे कानूनी रूप दे देती है। बहुत समय से यह एक परम्परागत अभिसमय था कि लाड सभा कॉमन सभा द्वारा पास किये गये किसी वित्तीय विधेयक को अस्वीकार न करे, परन्तु 1909 मे लाड सभा ने लॉयड जाज के बजट को अस्वीकार करके इस अभिसमय को भग किया, फलत 1911 का पार्लियामेंट एक्ट बना, जिसके द्वारा लाड सभा की शक्तियाँ अत्यधिक सीमित कर दी गयी।

अभिसमयो के प्रकार—ब्रिटेन के सविधान म अभिसमयो की सख्या बहुत बडी है। ग्रीव्ज ने उन्हे तीन प्रकार का बताया है। प्रथम, पार्लियामेंट की सर्वोपरिता के सिद्धा त के प्रकाश म बहुत से अभिसमय साधारण माग दशन अथवा सुविधा के नियम हैं, जो पार्लियामट और काय पालिका के बीच सामजस्य उत्पन्न करते हैं। उदाहरण के लिए, कैबिनेट अपनी नीति और शासन कार्यो के लिए पार्लियामट के प्रति उत्तरदायी है, जिस दल का कॉमन सभा म बहुमत होता है उसी के नेता पदारूढ होते हैं। इन अभिसमयो का पालन इस कारण से होता है कि उनके उल्लघन से शासन सचालन मे बडी असुविधा होगी। दूसरे, कुछ अभिसमय ऐसे है जिनका उद्देश्य एक ओर सरकार और ससदीय कायवाही तथा दूसरी ओर सरकार, जनमत अथवा निर्वाचक मण्डल के निर्णय के बीच सामजस्य स्थापित करना है। उदाहरण के लिए कोई भी सरकार ऐसा कानून, जिसके बारे मे घोर प्रवाद हो तब तक नही बनायेगी जब तक कि सत्तारूढ दल उसके पक्ष मे निर्वाचक मण्डल का स्पष्ट आदेश (mandate) प्राप्त न कर ले। तीसरी श्रेणी मे साधारण प्रकार के ऐसे समझौते (understandings) है जिनका उद्देश्य किसी सस्था विशेष की काय-प्रणाली को अधिक सुगम बनाना है। इस प्रकार के अभिसमयो के उदाहरण के लिए जब लाड सभा अपीलीय न्यायालय के रूप मे बैठती है तो कानूनी लार्डो के अतिरिक्त कोई अन्य लाड उसकी कायवाही म भाग नही लेता। एक अ य आधार पर अभिसमयो को निम्नलिखित चार समूहो मे रखा जा सकता है—

(क) राजा से सम्बन्ध रखने वाले—इस समूह मे प्रमुख ये है—(1) राजा को प्रतिवष पार्लियामेंट को आहूत करना आवश्यक है। (2) पार्लियामेंट के दोनो सदनो द्वारा पास किये गये विधेयको पर हर राजा को अनुमति (assent) देनी होती है। (3) मन्त्रिमण्डल का निर्माण करने के लिए राजा कॉमन सभा मे बहुसख्यक दल के नेता को आमन्त्रित करता है। (4) पार्लियामेंट (व्यवहार म कॉमन सभा) के प्रति उत्तरदायी किसी मन्त्री के परामश पर ही राजा कोई काय करता है, अन्यथा नही। (5) प्रधानमन्त्री के परामश पर ही राजा कॉमन सभा का विघटन करता है।

(ख) कैबिनेट पद्धति से सम्बन्ध रखने वाले—(1) कैबिनेट सामूहिक रूप से पार्लियामेंट (व्यवहार मे कामन सभा) के प्रति उत्तरदायी है। (2) कॉमन सभा का समर्थन अथवा बहुमत का विश्वास खोने पर मन्त्रिमण्डल को त्याग पत्र देना होता है, वह चाहे तो राजा को कामन सभा को विघटन करने का परामश दे सकता है।

(ग) पार्लियामेंट से सम्बन्ध रखने वाले—(1) कॉमन सभा का अध्यक्ष निदलीय होता है अर्थात् दलबन्दी से अलग रहता है। (2) कॉमन सभा किसी वित्तीय विधेयक पर तभी विचार करती है जबकि उसे राजा (अर्थात कैबिनेट) की सिफारिश पर पश किया जाये। (3) कॉमन सभा अनुदान की माग मे कमी कर सकती है और उसे अस्वीकार कर सकती है किन्तु उसम वृद्धि नही कर सकती। (4) कानूनी लार्डो के अतिरिक्त अन्य लाड उच्च सदन की न्यायिक कायवाही म भाग नही लेते। (5) यदि कॉमन सभा मे किसी विधेयक या प्रस्ताव पर बराबर

मत आयें तो अध्यक्ष अपना निर्णायक मत वतमान स्थिति को बनाये रखने के पक्ष म देता है।

(घ) राष्ट्रमण्डल के सम्बन्ध मे अभिसमय—(1) किसी भी उपनिवेश पद प्राप्त अथवा स्वतन्त्र डोमीनियन के शासन सम्बन्धी मामलो म राजा ब्रिटेन के मन्त्रिमण्डल के परामश के स्थान पर उसी डोमीनियन के मन्त्रिमण्डल की मन्त्रणा के अनुसार काय करता है। (2) पालियामट किसी डोमीनियन की राय के बिना उसके सम्बन्ध म कोई कानून नही बना सकती।

2 सविधानवाद—प्राचीन और अर्वाचीन

साविधानिक शासन का आधार व सार दोनो ही सविधानवाद हैं। 'सभ्य शासन का आधार शक्ति का विभाजन है। सविधानवाद का यही अथ है।'[1] सविधानवाद के राजतन्त्रात्मक व प्रजातन्त्रात्मक दोनो रूप हो सकते है और रहे हैं। जब हम कहते हैं कि भारत या सयुक्त राज्य अमरीका मे प्रजातन्त्र है, तो हमारा अथ इन राज्यो म साविधानिक प्रजातन्त्र से है। इसी प्रकार ब्रिटेन व अधिकतर अन्य राजतन्त्रात्मक राज्यो म साविधानिक राजतन्त्र है। यद्यपि साविधानिक शासन की अरस्तू द्वारा बडी सुन्दर व्याख्या की गई है फिर भी इस कथन मे सत्य का बडा अश है कि सविधानवाद आधुनिक युग की उपलब्धि है। वास्तव मे, यह पेचीदा पद्धति है जो शान्तिपूण परिवतन के लिए व्यवस्था करती है। चूकि सविधान शासन सत्ता को पारिभाषित व सीमित करता है अत यह कहा जा सकता है कि सर्वाधिकारवादी राज्यो मे, सच्चे अथ म, सविधान नही होते। ऐसे ही जहाँ सविधानो को बहुधा बनाया और बिगाडा जाता है, कभी उनम परिवतन किया जाता है या कभी सविधान का उन्मूलन किया जाता है, जैसा कि लैटिन अमरीकी देशो मे सत्ताधारी अपनी आवश्यकतानुसार उलट फेर करते है, वहाँ भी सच्चे सविधानवाद का अभाव रहता है।'[2]

यदि हम इस जटिल धारणा का दो शब्दो मे वणन करें तो इसे 'सीमित शासन' (limited government) कह सकते है। सविधानवाद के अन्तगत सरकार पर दो प्रकार की सीमायें लगाई जाती हैं। शक्ति के प्रयोग को कुछ बातो मे मना किया जाता है और प्रक्रियायें विहित की जाती हैं (power is proscribed and procedures prescribed)। इस प्रकार सविधानवाद के दो पहलू—स्वतन्त्रता-सम्बन्धी और प्रक्रिया सम्बन्धी है। एक ओर, समुदाय के सदस्यो के बारे म कुछ प्रकार के काय करने की सत्ता सरकार को प्रदान नही की जाती। राज्य को व्यक्तिगत गतिविधियो (private activity) के लिए आरक्षित क्षेत्रो मे हस्तक्षेप करने का अधिकार नही दिया जाता। सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान मे प्रथम 10 सशोधनो द्वारा राष्ट्रीय सरकार पर इसी प्रकार के प्रतिबन्ध लगाये गये। दूसरी ओर निदेशक तत्त्व बनाये जाते हैं जो इस बात का निर्धारण करते हैं कि नीति किस प्रकार निर्धारित की जायेगी तथा राज्य के अधिकार क्षेत्र मे उसे किस प्रकार कार्यान्वित किया जायेगा। सक्षेप म, सविधानवाद दो पथक किन्तु आपस मे सम्बन्धित दो प्रकार के सम्बन्धो को शासित करता है। प्रथम, शासन का नागरिक से सम्बन्ध और दूसरा एक सरकारी सत्ता (governmental authority) का दूसरी सत्ताओ से सम्बन्ध।[3] अब हम सविधानवाद के विकास की सक्षिप्त रूपरेखा देंगे।

(1) प्राचीन काल मे सविधानवाद—पाश्चात्य जगत म सवप्रथम प्राचीन ग्रीक कानून प्रदानकर्त्ताओ राजनेताओ और दाशनिको ने सोच समझकर विभिन्न प्रकार की सरकारो म प्रयोग (परीक्षण) किये और शासन व राजनीति की परिवर्तनशील विशेषताओ पर आलोचनात्मक चिन्तन

[1] Friedrich C *Constitutional Government and Democracy* p 5
[2] Carter and Herz *Government and Politics in the Twentieth Century* p 64
[3] Andrews W G *Constitutions and Constitutionalism* p 14

किया। अरस्तू वह प्रथम महान् विचारक व लेखक हुआ, जिसन सावैधानिक अथवा विधि के शासन की परिभाषा दी। उसकी परिभाषा मे सविधानवाद के मुख्य तत्वो—सावजनिक हित, सामान्य कानूनो का शासन, सहमति का आधार—का समावेश किया गया है। ग्रीक इतिहासज्ञ पोलिबियस (Polibius, 204–122 B C) रोमन गणत त्र की सुदृढता और स्थायित्व के लिए उत्तरदायी प्रमुख कारक मिश्रित सविधान को बताया है। उसके मतानुसार रोमन गणतन्त्र मे राजतन्त्रात्मक, अभिजाततन्त्रात्मक और लोकतन्त्रात्मक सस्थाओ का मिश्रण था, जिसे क्रमश रोमन कॉसल, सीनेट और लाकप्रिय एसेम्बलियाँ अभिव्यक्त करती थी। वास्तव मे, मिश्रित सविधान के विचार का जनक प्लेटो था, जिसके 'लॉज' स इस विचार को अरस्तू ने अपने श्रेष्ठ राज्य (polity) मे लागू किया। परन्तु पोलिबियस ने उसे एक नया और महत्त्वपूण रूप प्रदान किया और सिसरो ने भी उसे अपनाया।

सविधानवाद के विकास मे रोम का योगदान—शासन सस्थाओ के बारे मे रोमनो का रुख कुछ रूढिवादी था, वे सस्थाओ म स्थिरता (अथवा स्थायित्व) को अधिक महत्त्व देते थे। कानून और शासन के बारे मे रोमनो ने रूढिवादी रुख के साथ राजनीतिक वास्तविकताओ की अच्छी जानकारी को मिलाया। रोमन विचारको की सबसे महत्त्वपूर्ण देन रोमन कानून (Roman Law) और प्रशासन के सिद्धान्त हैं। रोमन न्यायशास्त्रियो ने व्यक्तिगत सम्ब धो तथा सावजनिक मामलो और दायित्वो के बीच स्पष्ट अन्तर बताया, साथ ही उन्होने लौकिक कानूनो और धार्मिक अधिकारो व कत्तव्यो के बीच भी भेद किया। सक्षेप म, रोमनो ने शासन सत्ता और व्यक्तियो की स्वतन्त्रता के बीच बडा सुन्दर मल स्थापित किया। उनका विश्वास था कि शासक राजसत्ता का प्रयोग करते है, किन्तु राजसत्ता का स्रोत जनता है।

रोमन काल मे रोमन शासन सस्थाओ का विकास तीन मजिलो म हुआ। रोमन राज्य का उदय एक राजतन्त्रात्मक नगर राज्य के रूप मे हुआ। शासन के अग निर्वाचित राजा एक परामश दात्री परिषद् (सीनेट) और एक एसेम्बली थी। 510 ईसवी पूव म गणतन्त्रीय युग का आरम्भ हुआ, राजत्व के नाश के बाद राजा की शक्तियाँ—नागरिक और सनिक दोनो ही—प्रतिवष निर्वाचित होने वाल दो अधिकारियो मे निहित हुयी, जिन्हे का सल कहा जाता था। कालान्तर मे अन्य उच्चवर्गीय (patrician) अधिकारियो ने भी का सलो की शासन सत्ता मे भाग पाया। सवसाधारण की एक एसेम्बली (concilium plebis) सकल्प अगीकृत किया करती थी, जिन्हे इसके सदस्य ब धनकारी मानते थ। उसके निर्देशन के अन्तगत काम करने वाले अधिकारियो को भी एसेम्बली ही चुनती थी। अन्तिम अवस्था म साधारण जनो न भी उच्चवर्गीय अधिकारियो द्वारा भरे जाने वाले पदो पर नियुक्त होने का अधिकार प्राप्त किया। जब दोनो वग मिल गये तो जनसाधारण की एसेम्बली सविधान की एक नियमित विशेषता बन गई।

दोनो वर्गो के बीच सघष का अन्त हो जाने पर रोमन राज्य का विस्तार आरम्भ हुआ। पडोसी लैटिन और इटलियन राज्यो का रोमन राज्यो के अधीन किया गया। उनमे से जिन राज्यो को मित्र राष्ट्र (allies) माना गया उन्हे, व्यवहार मे, स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र मे पूण स्वायत्तता प्रदान की गयी। जहाँ इस नीति को इष्टकर नही समझा गया, स्थानीय राजनीतिक अधिकारियो को रोम से भेजे गय नागरिको अथवा प्रीफेक्ट नाम के एक अधिकारी मे निहित किया गया। इटैलियन प्रायद्वीप से बाहर प्रशासन का साधारण रूप प्रान्तीय था, सर्वोच्च नागरिक व राजनीतिक शक्ति रोम से भेजे गय प्रो का सल मे निहित की गयी। जूलियस सीजर की विजयो के बाद रोम मे सनिक अधिनायक्त न की स्थापना हुई। ऑगस्टस और उसके उत्तराधिकारी एक प्रकार से सर्वोपरि हो गये जनप्रिय एसेम्बलियो का क्रमिक रूप से पतन हो गया। सम्पूर्ण साम्राज्य म नागरिकता एकरूप हो गयी, परन्तु सभी नागरिक सम्राट के अधीन रहे।

साम्राज्य का पतन चौथी और पाँचवी शताब्दियों मे बर्बरो के आक्रमणों के परिणामस्वरूप हुआ।

उपर्युक्त विवेचन से एक निष्कर्ष स्पष्ट निकाला जा सकता है। 'रोमन संविधान' का आरम्भ एकतन्त्रात्मक, अभिजाततन्त्रात्मक और लोकतन्त्रात्मक तत्त्वों के सुन्दर सम्मिश्रण के रूप मे हुआ और उसका अन्त एक अनुत्तरदायी निरकुशतन्त्र के रूप म हुआ। स्ट्राँग के मतानुसार रोमन संविधानवाद के निम्नलिखित स्थायी प्रभाव रहे (1) रोमन विधि का महाद्वीपीय यूरोप के कानूनी इतिहास पर बडा प्रभाव पडा। रोमन साम्राज्य खण्डित होने पर पश्चिम मे आने वाले ट्यूटन आक्रमणकारियो की प्रथाएँ और कानून, रोमन कानूनो मे विलीन हो गये, उनके मेल से ही पश्चिमी महाद्वीपीय यूरोप की कानूनी पद्धतियाँ निकलीं। (2) व्यवस्था और एकता के लिए रोमनो का प्रेम इतना सुदृढ था कि मध्ययुग मे खण्डनकारी शक्तियो के सामने भी लोगो मे राजनीतिक एकता का विचार बना रहा। (3) सम्राट की कानूनी प्रभुता की दोहरी सकल्पना कई शताब्दियो तक जारी रही और वही शासितो व शासन के बीच सम्बन्धो के बारे मे दो विशिष्ट मध्ययुगीन मतो के लिए उत्तरदायी रही। दोहरी सकल्पना इस प्रकार थी—एक ओर तो यह समझा जाता था कि सम्राट की इच्छा (खुशी) ही कानून था और दूसरी ओर यह धारणा थी कि सम्राट की शक्तियाँ अन्तत जनता से प्राप्त थी।[1]

(2) **मध्य युग मे संविधानवाद**—राज्य के बारे मे मध्ययुगीन धारणा, उत्तरकालीन रोमन धारणा और मध्ययुगीन विचारो का आश्चर्यजनक मिश्रण थी। एक ओर रोमन परम्परा ने राजा को पूर्ण (निरकुश) सत्ता प्रदान की और उसकी इच्छा को ही कानूनी सत्ता का स्रोत समझा। दूसरी ओर प्रथागत कानूनो मे दृढ विश्वास व सामन्तवादी समाज मे विकेन्द्रीकृत सत्ता ने राजत्व को सीमित स्वरूप प्रदान किया, जो लोकप्रिय सहमति के विचारो तथा प्रजाजनो के परम्परागत अधिकारो और विशेषाधिकारो से सीमित था। इस प्रकार एक ही कानून राजा को सत्ता देने वाला तथा उसकी सत्ता को सीमित करने वाला रहा। अतएव मध्ययुग के सांविधानिक विचार और व्यवहार एक प्रकार का भ्रमपूर्ण और आत्मविरोधी चित्र प्रस्तुत करते हैं, जो उत्तराधिकारी रोमन राजनीतिक विचारो और मध्ययुग के अधिक मौलिक विकास से उत्पन्न हुए।[2] आन्तरिक विरोधो वाली बात को अग्रलिखित सामाजिक शक्तियो से भी बल मिला—(1) वह दृढ धार्मिक विश्वास तथा आत्मविश्वास जिसने बडे बडे गिरजाघर बनवाये और विधर्मियो के विरुद्ध सघर्ष को प्रेरित किया। (2) कैथोलिक चर्च की एकीकरण करने वाली शक्ति, जिसकी नैतिक और राजनीतिक सत्ता ने सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था को स्वीकृति प्रदान की। भावी सांविधानिक विकास मे अधिक महत्त्वपूर्ण योग स्वामी और अधीन (lord and vassal) के बीच सम्बन्ध के अनुबन्धात्मक स्वरूप का रहा। अन्त मे, मध्ययुग मे अनेक स्वतन्त्र नगरो और नगर गणराज्यो का विकास हुआ, जिसमे भावी विकास की झलक दिखायी पडती है। मध्ययुग की इन विभिन्न वैचारिक प्रवृत्तियो के मेल से कोई एकीकृत राजनीतिक पद्धति न जन्मी, फिर भी, उन्होंने आधुनिक सांविधानिक परम्परा को जडे प्रदान की।

मध्ययुग मे हुए सांविधानिक विकास के तीन महत्त्वपूर्ण पहलू इस प्रकार रहे प्रथम, सर्वव्यापी कानून के विचार को जनरीतियो व प्रथाओ और सन्त टॉमस एक्वीनास जैसे विचारक की विस्तारपूर्ण धर्मशास्त्रीय पद्धति ने भी माना। वास्तव मे, एक्वीनास ने तो सर्वव्यापी कानून के चार भेद दिये—सनातन (eternal), दैवी (divine), प्राकृतिक और मानवी। यह सच है कि मध्ययुग मे प्राकृतिक कानून तथा दैवी कानून को सर्वव्यापी कानूनो के रूप म सभी विचारको ने माना।

[1] Strong C F *Modern Political Constitutions* pp 21-23
[2] Merkl Peter H *Political Continuity and Change* p 174

दूसरा, लोकप्रिय प्रभुता के सिद्धान्त का जन्म मध्ययुग मे नही हुआ था, परन्तु इसे मध्ययुग मे पहले से बढकर महत्त्व प्राप्त हुआ। रोमन कानून म तो लोकप्रियता प्रभुता का विचार स्पष्टत समाविष्ट था। लोकप्रिय प्रभुता के विचार की एक विशेषता यह थी कि जन समुदाय अथवा निगमित निकाय (corporate body) को कुछ अधिकारो व कर्त्तव्य का अधिकारी समझा गया। पैडुआ के मार्सीलियो ने बडे सुन्दर शब्दो मे घोषित किया—'जनता की आवाज ईश्वर की आवाज है।' तीसरा, प्रतिनिधि शासन का प्रारम्भ भी मध्ययुग मे हुआ समझा जाता है। प्राचीन जगत मे मननात्मक सभाएँ थी, जैसे रोमन सीनेट, परन्तु वे सभाएँ उनम भाग लेने वालो के अतिरिक्त अन्य किसी का प्रतिनिधित्व न करती थी। मार्सीलियो ने राजनीतिक समुदायो के अतिरिक्त मध्ययुगीन चच अधिकारियो के लिए भी प्रतिनिधि शासन के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस विचार का साविधानिक शासन के विकास म कितना अधिक महत्त्व रहा, उसके बारे मे कोई भी कथन अतिशयोक्तिपूण नही समझा जायेगा।[1]

स्ट्रॉग के मतानुसार राजाओ और पोपो—उनके समथको व विरोधियो के बीच दीघकाल तक हुए सघष के बाद चले कन्सीलियर आन्दोलन (Concillar Movement) का बडा साविधानिक महत्व है। यद्यपि यह आन्दोलन विफल रहा, फिर भी सविधानवाद के इतिहास म इसका दो प्रकार से महत्त्व है। प्रथम, कौंसिलो के सगठन और प्रक्रिया ने यूरोप मे हो रहे राष्ट्रीय विभाजनो को स्वीकार किया। कॉसेटेन्स की परिषद् मे मतदान राष्ट्रो द्वारा हुआ और पाच बडे राष्ट्रो को मान्यता मिली—इटॅलियन, फ्रासीसी, जमन, अग्रेजी और स्पेनिश। द्वितीय, इस आन्दोलन ने उन विधियो के बारे मे चिन्तन को प्रोत्साहित किया जिनके द्वारा चर्च सगठन म प्रतिनिधित्व पद्धति को अपनाया जाय। इग्लैण्ड स्पेन और फ्रास तीन पाश्चात्य राज्यो मे आधुनिक साविधानिक राज्य के यथाथ अणुआ को देखा जा सकता है।[2]

(3) **आधुनिक युग मे सविधानवाद अर्थात् अर्वाचीन सविधानवाद**—आधुनिक काल मे सविधानवाद के कई पहलुआ का कई राज्यो मे महत्त्वपूण विकास हुआ। अत उनका अति सक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है

पुनर्जागरण काल का राज्य—पन्द्रहवी सदी मे मध्ययुगीन सस्थाओ (पवित्र रोमन साम्राज्य, रोमन चच) आदि के खण्डन के बाद पुनर्जागरण का उदय हुआ, पुनर्जागरण काल म राज्य (The Renaissance State), वास्तव मे, साविधानिक राज्य न बना, उसे प्रजातन्त्रात्मक तो कहा ही नही जा सकता। उसकी मुख्य विशेषता वाह्य प्रभुता थी, जिसे बनाये रखने के लिए सुदृढ केन्द्रीय सत्ता का होना आवश्यक था। अधिकतर शासक (राजा) निरकुश अथवा पूण थे और वे चच अथवा दैवी कानून की सर्वोपरिता को स्वीकार न करते थे। उनका सम्बध केवल राजनीतिक अथवा लौकिक बातो से था, नैतिक बातो से तनिक भी नही। निरकुश राजतन्त्रो मे व्यक्ति के अधिकारो को भी कोई मान्यता प्राप्त न थी। मैकियाविली ने 'प्रिन्स' नामक ग्रन्थ (प्रकाशित 1513) मे ऐसे ही राजतन्त्र का दिग्दशन कराया है। परन्तु सोलहवी शताब्दी मे धम सुधार आन्दोलन फिर चला, जिसने पुनर्जागरण काल के राज्य को दैवी स्वीकृति प्रदान की। यूरोप म सामन्तवाद के पतन के उपरान्त एकीकरण स्थापित करने वाली एक ही शक्ति रही, वह राजा की सत्ता थी। इसी कारण महाद्वीपीय देशो म सविधानवाद का विकास उन्नीसवी शताब्दी तक रुका रहा। केवल इग्लैण्ड ही एक ऐसा देश था जहा राजतन्त्र को निरकुश शासन अथवा बेरोक स्वेच्छाचारिता म विकसित नही होने दिया गया।

[1] *Ibid* pp 175-77
[2] Strong C F *op cit* pp 25-26

इंग्लण्ड मे सविधानवाद—अर्वाचीन सविधानवाद के इतिहास मे इग्लैण्ड मे हुए सांविधानिक विकास का महत्त्व अन्य सभी देशो से बढकर है । यह सत्य है कि ट्यूडर राजा अधिकाशत स्वेच्छाचारी थे । राजा का कार्यपालिका शक्ति का एक मुख्य साधन एक कौंसिल थी, परन्तु उसकी अनियमित अथवा अत्यधिक शक्ति पर पार्लियामेन्ट व न्यायाधिकारियो (Justices of the Peace) की रोक लगी थी । 1642–49 के बीच हुए गृह-युद्ध ने प्रबुद्ध स्वेच्छाचारिता की स्थापना के विकास मे बाधा डाली । कॉमनवैल्थ काल खण्ड के बाद फिर से राजतन्त्र स्थापित हुआ (Restoration), उसके बाद चार्ल्स द्वितीय और जेम्स द्वितीय ने फिर सिर उठाया, परन्तु 1688–89 की क्रान्ति ने स्वेच्छाचारी राजतन्त्र को उखाड फेंका । उस क्रान्ति के परिणामस्वरूप शासन सम्बन्धी मामलो पर नियन्त्रण राजा के हाथों से निकलकर राजा और पार्लियामेन्ट के हाथो म गया । साथ ही इस परिवर्तन को साविधिक आधार प्रदान किया गया । उससे पूर्व इंग्लण्ड म सविधान का कोई साविधिक कानून (statutory law) न था, केवल प्रथाएँ व अभिसमय ही थे । मेग्ना कार्टा वास्तव मे सविधि न था, परन्तु 1628 की पेटीशन ऑफ राइट (Petition of Right) अवश्य ही सविधि बनी जबकि राजा उसके लिए सहमत हो गया, परन्तु उसके प्रावधानो का पालन नही किया गया । कॉमनवैल्थ और प्रोटेक्टोरेट के अन्तर्गत लिखित सविधान बनाये गये, परन्तु उनका भी राजतन्त्र के पुनर्जीवन पर अन्त हो गया ।

1688–89 की क्रान्ति के समय पास की गयी कई सविधियो ने ब्रिटिश राज्य की प्रभुता को पार्लियामेंट के हाथो मे रख दिया । अधिकार पत्र (Bill of Rights) और विद्रोह कानून (Mutiny Act) ने पार्लियामेंट को सेना पर नियन्त्रण प्रदान किया और सेना के लिए प्रति वर्ष व्यय की स्वीकृति के सरल तरीके ने अत्याचारी शासन पर प्रभावी रोक लगा दी । परन्तु फिर भी कार्यकारी शक्ति राजा और उसके मन्त्रियो के हाथो मे बनी रही । अठारहवी शताब्दी म, विशुद्ध अभिसमयो के विकास द्वारा, दलीय व्यवस्था पर आधारित केबिनेट पद्धति (cabinet system) का विकास हुआ । उस शताब्दी के अन्त से पूर्व ही पार्लियामेंट को कार्यपालिका पर भी नियन्त्रण शक्ति प्राप्त हो गयी ।

बीते काल मे ही कानूनो का महत्त्व इस प्रकार बढा कि इग्लैण्ड मे विधि का शासन (Rule of Law) स्थापित हो गया । इस प्रकार अठारहवी शताब्दी के मध्य तक ही इग्लण्ड म साविधानिक शासन स्थापित हो गया था, किन्तु उसे प्रजातन्त्रात्मक राज्य न कहा जा सकता था । *1832, 1867, 1885, 1918 और 1928 म मताधिकार को विस्तृत बनाने वाले कानूनो ने* पार्लियामेंट को सच्चे अर्थ मे प्रजातन्त्रात्मक तथा सम्पूर्ण जनता की प्रतिनिधि बना दिया । ग्रेट ब्रिटेन ही प्रथम देश है जहा साविधानिक राजतन्त्र अथवा सच्चे प्रजातन्त्र की स्थापना हुई । यहां यह बात उल्लेखनीय है कि वहां पर प्रजातन्त्र का विकास क्रमिक रूप से हुआ और उस विकास म साविधानिक चलनो प्रथाओ व अभिसमयो का अति महत्त्वपूर्ण योग रहा ।

अमरीकी और फ्रासीसी क्रान्तियों का प्रभाव—पुनर्जागरण काल म विकसित राजनीतिक अत्याचार और धार्मिक असहिष्णुता की न मिटने वाली भावना ने राज्य की उत्पत्ति के बारे म चिन्तन को प्रोत्साहित किया । उसके परिणामस्वरूप अनुबन्ध का सिद्धान्त (Social Contract Theory) का प्रतिपादन हुआ, जिसने राजा की सत्ता को अनुबन्ध पर आधारित बताया और सीमित किया तथा जनता के अधिकारो पर बल दिया । इस सम्बन्ध म फ्रास निवासी रूसो के ग्रन्थ 'Social Contract' का विशेष महत्त्व है, क्योकि उसने बाद मे बने सविधानो पर बडा प्रभाव डाला । रूसो ने प्रजातन्त्र को सामान्य इच्छा (general will) पर आधारित किया । लॉक ने भी अपने सिद्धान्त के प्रतिपादन द्वारा सीमित शासन अथवा जनता की सहमति से शासन और व्यक्तियो के अनपहरणीय अधिकारो पर विशेष रूप स बल दिया । जबकि रूसो के विचारो न फ्रासीसी

साम्राज्य की स्थापना हुई और फ्रांस में 1875 में तीसरे गणतन्त्र की स्थापना की गयी।

इनमें से प्रत्येक संविधान ने संसदीय संस्थाओं को अंगीकृत किया, जो कि कम या अधिक मात्रा में ब्रिटिश नमूने के संशोधित रूप थे। प्रत्येक संविधान में प्रजातन्त्रात्मक तत्त्व थे, परन्तु वे अभी तक उदारवादी सुधारों की माँगों को पूरा नहीं करते थे। आगामी वर्षों में बाल्कान जातियों में भी राष्ट्रवाद का प्रबल आन्दोलन चला, ये लोग अभी तक तुर्की द्वारा सताये जा रहे थे। 1878 में रूस और तुर्की के बीच युद्ध के परिणामस्वरूप सर्विया और रूमानिया नाम के दो राज्य अस्तित्व में आये। 1908 में तुर्की में सांविधानिक राजतन्त्र की स्थापना हुई और बल्गारिया ने भी तुर्की की आन्तरिक गड़बड़ के परिणामस्वरूप स्वतन्त्रता की घोषणा की। इस प्रकार यूरोप के दक्षिण पूर्वी भाग में भी, पाश्चात्य उदारवाद के प्रभाव में, 1910 से पूर्व ही राजनीतिक संविधानवाद के विभिन्न रूपों को अपनाया गया। 1914 के विश्वयुद्ध से पूर्व रूस के सिवाय अन्य सभी यूरोपीय राज्यों में राष्ट्रीय संविधान का प्रयोग किया गया। विश्वयुद्ध के उपरान्त प्रायः सभी देशों में प्रजातन्त्रात्मक संविधानों का निर्माण हुआ। शान्ति सन्धियों ने फिनलण्ड, एस्टोनिया, पोलण्ड, चेकोस्लोवेकिया आदि कई नये राज्यों की रचना की। प्रत्येक राज्य में प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्तों पर आधारित आलेखीय संविधान लागू हुआ। विश्वयुद्ध के बाद संविधानवाद के विकास में राष्ट्र संघ (league of nations) की स्थापना ने भी योग दिया।

परन्तु पहले और दूसरे विश्वयुद्धों के बीच सांविधानिक शासन के विरुद्ध एक महत्त्वपूर्ण प्रतिक्रिया हुई। रूस ने पाश्चात्य नमूने के राजनीतिक संविधानवाद का खण्डन किया। वास्तव में वहाँ पर एक प्रकार का साम्यवादी अधिनायकतन्त्र स्थापित हुआ। फासिस्ट इटली और नाजी जर्मनी में फासिस्ट अधिनायकशाही की स्थापना हुई। जापान में सैनिक अधिनायकवाद स्थापित हुआ। इन नये अधिनायकतन्त्रों और पाश्चात्य प्रजातन्त्रों के बीच 1939–1945 में दूसरा भीषण विश्वयुद्ध लड़ा गया। यूरोप में जर्मनी व इटली की पराजय के बाद अनेक देशों में फिर से पाश्चात्य नमूने की प्रजातन्त्रात्मक पद्धतियाँ स्थापित हुईं। पूर्वी जर्मनी और पूर्वी यूरोप के प्रायः सभी राज्यों में सोवियत नमूने की साम्यवादी अधिनायकशाही कायम हुई। एशिया के अनेक देशों ने राष्ट्रीय स्वाधीनता प्राप्त की और पाश्चात्य नमूने के प्रजातन्त्रात्मक संविधान अंगीकृत किये। साम्यवादी चीन के प्रभाव में दक्षिण पूर्वी एशिया में साम्यवादी राज्यों की रचना हुई, किन्तु जापान ने संसद प्रणाली को अपनाया। अफ्रीका के नये स्वतन्त्रता प्राप्त राज्यों ने भी प्रजातन्त्र और अधिनायकशाही के विभिन्न रूपों को अपनाया।

दोनों विश्वयुद्धों के बाद राष्ट्रवाद और प्रजातन्त्र को प्रोत्साहन मिला, जिसके परिणामस्वरूप अनेक राष्ट्रीय राज्यों की रचना हुई और उन्होंने कम या अधिक मात्रा में प्रजातन्त्रात्मक संविधान अंगीकृत किये। सोवियत संघ, पूर्वी यूरोप के प्रायः सभी साम्यवादी राज्य और साम्यवादी चीन भी अपने को जनवादी प्रजातन्त्र कहते हैं। स्ट्राँग का यह मत सर्वथा सत्य है कि राजनीतिक प्रजातन्त्र का आधारभूत प्रयोजन सभी राज्यों में एक ही है—यह है सामाजिक शान्ति और उन्नति को प्राप्त करना, व्यक्तिगत अधिकारों का संरक्षण और राष्ट्रीय कल्याण को प्रोत्साहन देना। इस अध्ययन में ही आधुनिक राजनीतिक संविधानों का तुलनात्मक सर्वेक्षण अन्तर्ग्रस्त है, अर्थात् उनके बीच समानताओं और असमानताओं की परीक्षा भी, जो कि आगे के अध्यायों में विधिवत् की जायगी। मकल के मतानुसार आधुनिक सांविधानिक शासन के विकास में अग्रलिखित कारकों ने महत्त्वपूर्ण योग दिया—(1) आधुनिक राज्य (अर्थात् राष्ट्रीय प्रभुत्वपूर्ण राज्य) के विचार ने, (2) आधुनिक विज्ञान ने वैज्ञानिक अभिवृत्ति को प्रोत्साहित किया, उसने राजनीतिक मामलों में दिलचस्पी रखने वाले लोगों में शक्ति और राजनीति की वास्तविकताओं के प्रति वैज्ञानिक अभिवृत्ति को अधिक तीक्ष्ण बनाया, (3) आधुनिक दर्शन—प्रतिनिधि शासन, लोकप्रिय प्रभुता, व्यक्ति की

स्वतन्त्रता, उदारवाद तथा समाजवाद, (4) आधुनिक अर्थव्यवस्था (पूजीवाद) का प्रसार, उसके दोष और साम्यवादी विचारधारा, (5) सवसाधारण मे राजनीतिक चेतना के उदय ने प्रजातन्त्र और व्यक्तिगत अधिकारो के लिए अपूव जागृति पैदा की।[1]

लिखित सविधान राष्ट्रीय सरकारी पद्धतियो मे सविधानवाद के आलेखित मूतरूप (documentary embodiment of constitutionalism) से कम और अधिक दोनो ही है। सविधानवाद, जो न्याय और औचित्य (right) के श्रेष्ठ सिद्धान्तो मे विश्वास से अपनी सत्ता प्राप्त करता है। शासन की उसकी सत्ता पर सीमायें लगाकर तथा उसके काय करने के ढग के लिए नियमित प्रक्रियाये स्थापित करके नियन्त्रित करता है। सविधाना का बहुधा उन्ही सीमाओ के उच्चारण (articulation) के साधनरूप मे प्रयुक्त किया जाता है। परन्तु प्रतिबन्धो का प्रभावीपन अधिकाशत सांविधानिक सहमति की दशा (condition of constitutional consensus) पर निभर करता है, इसके विपरीत यह भी कि सहमति द्वारा सीमायें लगाई जाये, किन्तु उन्हे सविधान मे समाविष्ट न किया जाय। दूसरी ओर कुछ सविधान केवल दिखावे मे ही सविधानवाद को स्पष्ट करते है और प्राय सभी ऐसे काय करते है जिनका सविधानवाद से आवश्यक सम्बन्ध नही होता। अतएव, सांविधानिक शासन की स्थापना और उसके बनाये रखने मे सविधानो की भूमिका को उनके यथाथ भाग से अधिक महत्त्व देना भूल है। श्रेष्ठ सविधान भी सविधानवाद के बाह्यरूप से अधिक नही हैं, वे उसके उत्पादक तो है ही नही।[2]

3 सांविधानिक शासन

जिस किसी राज्य मे निरकुश व पूण राजतन्त्र (अथवा अधिनायकतन्त्र) होता है, वहा पर शासन की सभी शक्तिया एक व्यक्ति के हाथो मे निहित व केन्द्रित होती हैं। वहा के सर्वोपरि सत्ता प्राप्त व्यक्ति की इच्छा ही उस राज्य मे कानून होती है और वहा पर शक्तियो का शासन के विभिन्न अगो म वितरण नही होता है। ऐसे राज्य या शासन को बिना सविधान वाला राज्य कह सकते है। इसके विपरीत सांविधानिक शासन का आधार कोई सविधान होता है और शासन शक्तियो का प्रयोग शासन के उच्च अधिकारी तथा विभिन्न अग सविधान द्वारा वितरित शक्तियो के अनुसार करते है। उदाहरण के लिए, प्राचीन तथा मध्य युग म अधिकतर राज्य ऐसे थे जिनमे कोई सविधान न था, अत उनमे सांविधानिक शासन न था। आजकल भी ऐसे राज्यो के कुछ उदाहरण मिलते हैं—जैसे सऊदी अरब या अरब के कुछ अन्य छोटे छोटे राज्य, जिनमे शासक अपनी इच्छानुसार शासन करते है। परन्तु अब सभी प्रगतिशील राज्यो मे किसी न किसी प्रकार का सविधान मिलता है। अत अब अधिकतर राज्यो मे सांविधानिक शासन पाया जाता है। इग्लैण्ड मे अब भी राजा है, किन्तु उसके अधिकार और शक्तियाँ केवल दिखावटी हैं, इसलिए वहाँ का राजा सांविधानिक शासक कहलाता है। सांविधानिक शासन की एक महत्त्वपूण विशेषता अथवा पहचान यह है कि उसमे किसी व्यक्ति या व्यक्ति समूह का शासन नहीं होता वरन् कानूनो का शासन होता है और सविधान के कानून शासको की शक्तिया पर कम या अधिक रोक लगाते है। इसीलिए स्ट्राग का कथन है कि सविधान शासको की स्वच्छाचारी शक्ति को सीमित करता है और शासितो के अधिकारो का सरक्षण भी।[3]

---

[1] Merkl Peter H *op cit* pp 177-82

[2] Andrews W G *op cit* p 26

[3] Constitutional government means something more than government according to the terms of a constitution It means government according to rule as opposed to government it means government limited by desires and capacities of those who power —Wheare K C, *Modern Constitutions* p 137

अरस्तू के मतानुसार सांविधानिक शासन (constitutional rule or government) में अग्रलिखित तीन तत्त्व होते हैं (1) यह सामान्य अथवा सार्वजनिक हित में शासन होता है। (2) यह कानूनी शासन होता है। (3) यह शासन शासिता की सहमति से होता है। सांविधानिक शासन के तीन मुख्य प्रयोजन हैं (1) स्थायित्व के लिए इच्छा—संविधान निर्माता संविधान का निर्माण करते समय इस बात की इच्छा रखते हैं कि उनका संविधान (अथवा संविधान के अन्तर्गत स्थापित शासन पद्धति) जहाँ तक हो सके दीर्घकाल तक स्थायी रहे। (2) स्वतन्त्रता के लिए इच्छा—वास्तव में, संविधान का उद्देश्य ही राजनीतिक सत्ता को परिभाषित व सीमित करता है। (3) न्याय के लिए इच्छा—यह सांविधानिक शासन का एक महत्त्वपूर्ण प्रयोजन है। इसका अर्थ यह है कि शासनिक प्रक्रियाओं और कानूनी नियमों का निष्पक्ष व उचित रूप में प्रयोग किया जाय। शासन (सरकार) को सांविधानिक बनाने के कुछ तरीके निम्नलिखित हैं—

(1) सांविधानिक शासन की स्थापना के लिए विधि का शासन (rule of law) स्थापित होना अति आवश्यक है, अर्थात् शासन कानूनों के अनुसार होना चाहिए, कानूनों का रूप चाहे प्रथागत हो अथवा सांविधिक और न्यायिक दृष्टान्तों पर आधारित।

(2) वैयक्तिक शासन के स्थान पर संस्थाओं द्वारा शासन का संचालन होना चाहिए। कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका आदि की स्थापना से ही सांविधानिक शासन वास्तविक रूप धारण करता है।

(3) प्रक्रिया सम्बन्धी संरक्षणों का होना बहुत आवश्यक है। सांविधानिक शासन का उद्देश्य शासन सत्ता को सीमित व परिभाषित कर नागरिकों की स्वतन्त्रता को सुरक्षित व सुनिश्चित बनाना है। अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रक्रिया सम्बन्धी संरक्षण होने आवश्यक हैं।

(4) लिखित संविधान को आजकल सांविधानिक शासन स्थापित करने का सबसे अधिक लोकप्रिय साधन समझा जाता है। इसी कारण अब प्रायः सभी राज्यों में लिखित संविधान पाये जाते हैं।

(5) निरोध और सन्तुलन का सिद्धान्त भी एक महत्त्वपूर्ण तरीका है। इस सिद्धान्त का विस्तारपूर्वक विवेचन प्रथम अध्याय में किया जा चुका है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण संयुक्त राज्य अमरीका की शासन पद्धति है। परन्तु अन्य राज्यों में भी इस सिद्धान्त का कम मात्रा में पालन होता है। भारत में संसद द्वारा निर्मित कानून को सर्वोच्च न्यायालय असांविधानिक घोषित कर सकता है। ऐसे ही संसद द्वारा पारित विधेयक को राष्ट्रपति पुनर्विचार के लिए लौटा सकता है, परन्तु यदि संसद उसे दूसरी बार दो तिहाई के बहुमत से पास कर दे तो उस विधेयक पर राष्ट्रपति को अपनी अनुमति देना होती है।

ए० डी० वर्नी (A D Verney) ने अपनी पुस्तक 'Analysis of Political System' में यह दिखाया है कि संस्थागत सिद्धान्तकारों ने शासन की सांविधानिक पद्धतियों के तीन नमूने (models) विकसित किये हैं। इन तीनों को एक ही सामान्य परिभाषा, एक आधारभूत तत्त्व (postulate) और एक उप सिद्धान्त (corollary) से निकाला जा सकता है। प्रथम, परिभाषा सरल शब्दों में वर्णन करती है कि किसी शासन-पद्धति को सांविधानिक समझा जा सकता है यदि निर्वाचक मण्डल शासकों की छाँट में भाग लेता है। दूसरे, आधारभूत, जो लॉक और मान्टेस्क्यू के सिद्धान्तों से निकाला है, बताता है कि सांविधानिक शासन में विधायिका और कार्यपालिका के बीच अन्तर्निहित है, जिसका अर्थ यह नहीं है कि उनमें पृथक्करण हो। अन्त में, उपसिद्धान्त बताता है कि किसी पद्धति को सांविधानिक नहीं समझा जा सकता यदि विधायिका कार्यपालिका से हीन हो। आधारभूत तत्त्व और उप सिद्धान्त के आधार पर शासन की केवल तीन ही सांविधानिक पद्धतियाँ हो सकती हैं, विधायिका कार्यपालिका के सम अथवा उससे बढ़कर (superior) हो सकती है। यदि दूसरी बात सच हो तो कार्यपालिका विधायिका से निकलती है। यदि दूसरी बात सच

हो तो दो सम्भावनायें हो सकती है—या तो विधायिका और कार्यपालिका के बीच आदान प्रदान का शक्ति सम्बन्ध (reciprocal power relationship) है या वे एक दूसरे से पूर्णतया पृथक है। जब कार्यपालिका विधायिका से हीन होती है, तो उस पद्धति को अभिसमय सरकार (convention government) कहते है, जब कार्यपालिका बराबर के और आदान प्रदान वाले सम्बन्ध मे होती है तो उसे सासद (parliamentary) पद्धति कहते हैं, और जब कार्यपालिका विधायिका से पृथक होती है और वे दोनों ही प्रत्यक्ष रूप मे निर्वाचक मण्डल द्वारा बनाई जाती है तो उस पद्धति को राष्ट्रपतीय (presidential) कहते हैं।[1]

वर्तमान काल मे सांविधानिक समस्याएँ—सविधानवाद के विकास की रूपरेखा देने के बाद यह उचित होगा कि वर्तमानकालीन सांविधानिक समस्याओ का उल्लेख भी किया जाय। ये समस्याएँ निम्न प्रकार हैं

(1) सांविधानिक तरीको का प्रधानत जीवन के अराजनीतिक क्षेत्रो मे विस्तार। यह कोई नया सिद्धान्त नही है, जैसा कि कसीलियर आन्दोलन के सांविधानिक महत्त्व से समझा जा सकता है। आजकल राज्यो को आर्थिक क्षेत्र मे बने सांविधानिक निकायो, अर्थव्यवस्था के विनियमन आदि के लिए व्यवस्था करनी होती है। इसके अतिरिक्त राजनीतिक दल, हित समूह मजदूर सघ आदि सगठनो का महत्त्व इतना अधिक और आन्तरिक सगठन इतना बडा हो गया है कि राज्य के सविधान मे उनके विनियमन के लिए प्राविधानो का रखना आवश्यक हो गया है।

(2) वैयक्तिक स्वतन्त्रता की दुविधा (dilemma) दूसरी समस्या है। राज्य का कार्य क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत हो गया है। अब राज्य व्यक्तियो के वैयक्तिक जीवन के अनेक पहलुओ के बारे मे भी कानून व नियम बनाता है। फलत व्यक्ति की स्वतन्त्रता अति सीमित होती जा रही है। राज्य की शक्ति और व्यक्ति की स्वतन्त्रता के बीच सामजस्य और सन्तुलन बनाये रखना वर्तमान कालीन सविधानो की एक महत्त्वपूर्ण समस्या है।

(3) नये राष्ट्रो मे सविधानवाद की कई समस्याएँ है, विशेष रूप से उनमे पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रियाओ को लागू करने की इस स्थिति के लिए ये कारण उत्तरदायी है—(अ) वे देश अभी क्रान्तिकारी सामाजिक उथल पुथल की स्थिति मे हैं अधिकतर देशो मे, जो पहले पराधीन थे, उनके परम्परागत जीवन के नाश, औद्योगीकरण, शहरी क्षेत्रो के विस्तार, युद्धो मे अन्तग्रस्त रहने और स्वतन्त्रता के बाद वेगपूर्ण उन्नति की चाह ने सविधान निर्माण सम्बन्धी अनेक समस्याओ को जन्म दिया है। (आ) वहाँ पाश्चात्य देशो के समान सम्पूर्ण देश मे एकरूप कानूनी परम्परा का अभाव है। उनमे सुसगठित राजनीतिक समूहो का भी अभाव है। परन्तु भौगोलिक या जनजातीय आधार पर अनेक उप विभाजन या स्वशासित इकाइया हैं। इसीलिए भारत, नाइजीरिया आदि देशो ने सघात्मक सविधान बनाये है। (इ) उन देशो मे इस समय फैला हुआ मनोवैज्ञानिक वातावरण भी सविधानवाद के विकास मे बाधक है। उनमे राजनीतिक समस्याओ के प्रति अपरिपक्व रुख पाया जाता है। जबकि जनसाधारण मे राजनीतिक चेतना का अभाव है, जो थोडे से नेता हैं वे असहिष्णुता और हिंसक प्रवृत्ति का परिचय देते हैं। वे अपने विरोधियो को बन्दी बनाते हैं अथवा उनका कत्ल कराते है। ये प्रवृत्तियाँ सविधानवाद के बजाय सर्वाधिकारवाद को प्रोत्साहन देने वाली है। ऐसे देश बहुत ही कम हैं, भारत उनमे से एक है, जहाँ उदारवादी दृष्टिकोण प्रधान है और विरोधी पक्ष को मान्यता दी गयी है।

(4) कुछ पाश्चात्य देशो मे भी राजनीतिक व अन्य उद्देश्यो के बारे मे एकमत का

[1] Blondel J *Comparative Government* p XLIV

अभाव पाया जाता है। इसी कारण उन देशों में भी सांविधानिक विफलताएँ बढ़ रही हैं। फ्रांस के गत 30 वर्षों के सांविधानिक इतिहास के अवलोकन से यह बात स्पष्ट हो जायगी।

यहाँ व्हीयर के आधार पर सांविधानिक शासन के भविष्य के बारे में कुछ विचार देना उपयुक्त होगा। सांविधानिक शासन के विरुद्ध काम करने वाली प्रथम शक्ति युद्ध है। युद्ध के दौरान अथवा उसका खतरा होने की स्थिति में ही सरकार सभी प्रकार की कार्यवाही करने की स्वतन्त्रता के लिए माँग करती है। युद्ध-कालीन अथवा आपातकालीन घोषणा की जाती है जिसके अन्तर्गत साधारण सांविधानिक शासन के स्थान पर अनेक अध्यादेश, व आज्ञप्तियाँ जारी की जाती हैं। नागरिकों के स्वातन्त्र्य अधिकारों को सीमित अथवा निलम्बित कर दिया जाता है। सांविधानिक शासन में निलम्बन हेतु युद्ध तो एक अतिवादी उदाहरण है, गम्भीर संकट या आपात की स्थिति तो आर्थिक संकट, अकाल, प्राकृतिक प्रकोप आदि के फलस्वरूप भी उत्पन्न हो सकती है। संकटकालीन या आपातकालीन शासन का रूप कठिनाई से ही सांविधानिक रहता है।

चूँकि सांविधानिक शासन का अर्थ है सीमित शासन, इसलिए निरंकुशवाद इसका दूसरा बड़ा शत्रु है। जिस मात्रा में शासन सत्ता निरंकुशता की ओर बढ़ती है उसी मात्रा में शासन की सांविधानिकता कम होती है। आज भी अनेक देशों में विभिन्न प्रकार की अधिनायकशाही पायी जाती है। नई स्वतन्त्रता प्राप्त जिन देशों में प्रजातन्त्र को अपनाया गया, उनमें से कई में प्रजातन्त्रात्मक पद्धति विफल होने पर एक या दूसरे प्रकार की अधिनायकशाही स्थापित हुई। बर्मा, पाकिस्तान, इण्डोनेशिया आदि देशों में ऐसा कई बार हो चुका है। लेटिन अमरीकी देशों में तो प्रजातन्त्र अथवा सांविधानिक शासन को लम्बे काल से सैनिक अधिनायकतन्त्र से वास्तविक खतरा उत्पन्न होता रहा है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सांविधानिक शासन के लिए प्रजातन्त्र का होना आवश्यक है, क्योंकि प्रजातन्त्र ही स्वतन्त्रता व समता को सुनिश्चित बनाता है, जो कि सांविधानिक शासन को जन्म देती है। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि सभी सांविधानिक शासन प्रजातन्त्रात्मक हों। ब्रिटेन में प्रजातन्त्र की स्थापना से पूर्व भी सांविधानिक शासन था, जिसमें सत्ता उच्च वर्ग के हाथों में थी। यह सच है कि सांविधानिक शासन और प्रजातन्त्र पर्यायवाची शब्द नहीं हैं।

सांविधानिक शासन के सामने एक बड़ी समस्या सांविधानिक शासन पर आक्रमणों से आती है। ऐसे आक्रमण उन व्यक्तियों और समूहों द्वारा किये जाते हैं जो कि उसे उखाड़ फेंकना चाहते हैं और उसके द्वारा प्रदान की गई स्वतन्त्रताओं का प्रयोग इसी के विरुद्ध अभियान में करते हैं। उदाहरण के लिए साम्यवादी सांविधानिक शासन में विश्वास नहीं करते और वे उसे क्रांति अथवा हिंसक साधनों द्वारा हटाकर साम्यवादी अधिनायकशाही स्थापित करना चाहते हैं। भारत व अन्य अनेक देशों में इस प्रकार के प्रयत्न होते रहे हैं। ऐसे व्यक्तियों व समूहों का दमन करने के लिए सरकार द्वारा उठाये गये पगों को सांविधानिक शासन का विरोधी नहीं कहा जा सकता, यद्यपि वे देखने में प्रजातन्त्र विरोधी तरीके होंगे।[1]

अन्त में, संविधान के बारे में यह कहा जा सकता है कि इसका राज्य से वही सम्बन्ध है जो कि चरित्र का व्यक्ति से—एक आधार, सामंजस्य की अभिव्यक्ति और आचरण की नींव।[2]

---

[1] Yet it must always be maintained that the object before the supporters of constitutional government is to defeat its opponents and it may be that their freedom must be surrendered if constitutional government is to survive —Wheare K C *Modern Constitutions* pp 203-9

[2] A constitution is to a state what character is to an individual a basis an expression of harmony and a foundation for conduct —Pennock and Smith *Political Science An Introduction* pp 243-50

दोनो मे ही अनुशासन की स्वीकृति, अपने पर सीमा और दूसरो के साथ सहयोग अतग्रस्त है। दोनो मे ही कार्यों के लिए उत्तरदायित्व अतग्रस्त है और यह मानना भी कि व्यक्ति और दूसरो के लिए कल्याण का साधन निरन्तर उत्तरदायी व्यवहार है। पैनॉक और स्मिथ के मतानुसार सविधानवाद की मुख्य विशेषताएँ अग्रलिखित है (1) सविधान मे शासन की आवश्यक सस्थाओ की रचना और उनके पारस्परिक सम्बन्ध दिये रहते है। (2) सविधान एक प्रकार का प्रतिबन्ध है, यह विधि का शासन स्थापित करता है। (3) सविधान मे व्यक्तियो के अधिकारो का प्रगणन किया जाता है। (4) सविधान द्वारा शासन के विभिन्न अगो के बीच शक्तियो का विभाजन और वितरण किया जाता है। (5) सविधान विकास का निदेशक होता है। प्रभावी राजनीतिक शक्ति होने और बने रहने के लिए सविधान द्वारा दो उद्देश्यो को अवश्य ही प्राप्त करना चाहिए—प्रथम, उसे राजनीतिक सघप के रूप और सीमाओ को प्रभावी ढग से निश्चित करना चाहिए। साथ ही उसे भावी विकास के लिए व्यावहारिक योजना की व्यवस्था करनी चाहिए। (6) सविधान सत्ता का सगठक होता है, सत्ता के विभाजन व वितरण के साथ सविधान शासन कार्यों को अधिकारपूर्ण बनाने की व्यवस्था को भी सुनिश्चित करता है।

सविधान निर्माण के विभिन्न ढग—आधुनिक राज्यो के सविधानो का निर्माण साधारण तया चार प्रकार से हुआ है—

(1) राजा द्वारा प्रदत्त—आधुनिक राज्यो का विकास मध्यकालीन राजतन्त्रो से हुआ है। एक के बाद दूसरे शासक ने अपनी प्रजा को कुछ अधिकार और शासन मे भाग लेने का अवसर दिया और अपनी शक्तियो के प्रयोग हेतु कुछ सिद्धान्तो को सीमा रूप मे स्वीकार किया। साधारण तया शासको ने यह काय जनता द्वारा क्रान्ति किये जाने के भय से किया और इस प्रकार सीमित राजतन्त्र अथवा प्रजातन्त्र का विकास हुआ। ऐसे सविधान को ऑक्ट्राइड (octroyed) सविधान कहते हैं, क्योकि ऐसे सविधान या अधिकार-पत्र का स्वरूप एक पकार के अनुबन्ध या वायदे जैसा होता है। कुछ वप पूव नेपाल नरेश ने अपनी प्रजा को एक प्रजातान्त्रिक सविधान दिया था, जिसे वतमान नरेश ने एक प्रकार से वापस ले लिया। जापान का सविधान इसी प्रकार बना था।

(2) मननात्मक रचना—फिलाडेल्फिया सम्मेलन ने 1787 मे सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान इसी प्रकार निर्मित किया। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद मध्य यूरोप के कई देशो और वतमान समय मे अनेक नये स्वतन्त्र राज्यो के सविधान इसी प्रकार बने है। एक अथ मे भारत का सविधान भी निर्मित है, किन्तु यह बहुत सीमा तक विकास का फल है।

(3) क्रान्ति के परिणामस्वरूप—फ्रास, रूस और स्पेन के सविधानो का निर्माण आन्तरिक क्रान्ति के बाद ही हुआ था। कभी कभी तो क्रान्ति के बाद बनने वाली अस्थायी सरकार स्वय सविधान बनाती है और उस पर जनता की स्वीकृति लेती है और कभी-कभी यह सविधान निर्माण के लिए किसी विशेष प्रक्रिया का प्रयोग करती है, जैसे सविधान निर्मातृ सभा बुलाना।

(4) विकास द्वारा—ग्रेट ब्रिटेन के सविधान को अधिकाशत विकास का परिणाम कह सकते हैं। भारत का सविधान तथा अनेक देशो के वतमान सविधान बहुत सीमा तक विकसित है। अधिकतर सविधानो का वतमान रूप विकास का परिणाम है।

4 सविधानो का वर्गीकरण

वास्तव मे, सविधानो के उतने ही प्रकार हैं जितने कि शासन सगठनो के। फिर भी अध्ययन की सुविधा के लिए सविधानो का कुछ आधारो पर वर्गीकरण किया गया है। सविधानो के वर्गीकरण के मुख्य आधार यहा दिये जाते हैं। प्रथम, सविधान के सशोधन की विधि—किसी राज्य के सविधान मे वहाँ की सर्वोच्च विधायिका द्वारा उसी साधारण ढग से सशोधन होते हैं, जसेकि

राज्य के अन्य कानूनो का निर्माण होता है। अधिकतर राज्यो मे सशोधन के लिए विशेष प्रक्रिया होती है, जो सविधान मे ही दी हुई होती है। इस आधार पर सविधान सुसशोध्य (flexible) अथवा दुस्सशोध्य (rigid) कहे गये हैं। दूसरे, जिस ढग के अनुसार शासन की शक्तिया का सम्पूर्ण राज्य की सरकार और प्रादेशिक इकाइयो के बीच वितरण किया जाता है, उस आधार पर सविधानो को एकात्मक (unitary) अथवा सघात्मक (federal) म बाँटा जाता है। एकात्मक सविधान मे शासन की सर्वोच्च शक्तियाँ एक केन्द्रीय सरकार म निहित होती हैं। शासन की सुविधा के लिए राज्य प्रशासनिक इकाइयो मे बँटा हो सकता है, परन्तु इन इकाइयो को कई स्वतन्त्र सत्ता व अधिकार नही होते। सघात्मक सविधान मे सविधान द्वारा शक्तियो को सघ सरकार और इकाइयो की सरकारो मे बाँट दिया जाता है। तीसरे, शासन के विभिन्न अगा, विशेष रूप म कार्यपालिका और विधायिका के आपसी सम्बन्ध के आधार पर ससदात्मक सविधान मे कार्यपालिका और विधायिका के बीच सामञ्जस्य रहता है और अध्यक्षात्मक सविधान मे दोनो एक दूसर से पृथक होते हैं। चौथे, कुछ लेखको ने सविधान को राजतन्त्रात्मक और गणतन्त्रात्मक दो अलग समूहो मे बाँटा है। जिस देश मे राज्य का अध्यक्ष राजा होता है चाहे वहाँ जनतन्त्रीय शासन हो जैसाकि इग्लैण्ड म, उसे राजतन्त्रात्मक कह सकते है। इसके विपरीत सयुक्त राज्य अमरीका व भारत आदि देशो मे गणतन्त्रीय सविधान हैं, क्योकि इनमे राज्य के अध्यक्ष निर्वाचित राष्ट्रपति हैं यहाँ पर सविधानो के केवल प्रमुख प्रकारो का विवेचन किया जायेगा—

विकसित और निर्मित—कुछ लेखको ने सविधान का वर्गीकरण इस आधार पर किया है कि कुछ सविधान लम्बे ऐतिहासिक विकास के फल हैं जबकि दूसरो का किसी समय विशेष म निर्माण हुआ है। विकसित सविधान ऐतिहासिक विकास का परिणाम होता है। हेनरी मेन ने विकसित सविधानो को ऐतिहासिक भी कहा है क्योकि ये अनुभव पर आधारित विकास का परिणाम होते हैं। इसके विपरीत जो सविधान दाशनिक सिद्धान्ता के आधार पर बनाये जाते हैं, उन्हे उसने 'अनिगमनिक (a priori) बताया है। इसके स्वरूप को एक उदाहरण की सहायता से भली भाँति समझा जा सकेगा। लगभग सभी लेखक यह स्वीकार करते हैं कि इग्लैण्ड का सविधान विकसित है, क्योकि इसका निर्माण किसी सविधान सभा द्वारा किसी विशेष समय मे नही हुआ। इसके सविधान का विकास कई सदियो मे जाकर पूर्ण हुआ। इसी कारण समय समय पर बने सावैधानिक कानून, स्वीकृत प्रथायें और न्यायालयो के निणय वहा सविधान के अति महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं। इसके विपरीत निर्मित सविधान वह है जिसे कोई विधान सभा, जिसकी रचना विशेषरूप से की गई हो, स्वीकार करती है। आजकल अधिकतर राज्यो के सविधान निर्मित ही हैं।

लिखित और अलिखित—सविधानो के बीच इस प्रकार के भेद वास्तविक नहीं हैं। बहुत म विद्वानो ने इस प्रकार के भेद को भ्रममूलक और अवैज्ञानिक बताया है। इसका कारण यह है कि कोई भी लिखित सविधान पूर्णतया लिखित नही रहता और कालान्तर मे उसमे अलिखित तत्त्वो का समावेश हो जाता है। ऐसे ही कोई भी अलिखित सविधान पूरी तरह से अलिखित नही होता, उसम बहुत से महत्त्वपूर्ण तत्त्व लिखित होते है। उदाहरण के लिए सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान लिखित और इग्लैण्ड का अलिखित माना जाता है। परन्तु अध्ययन करने पर पता चलता है कि सयुक्त राज्य अमरीका के लिखित सविधान का विकास हुआ है बहुत सी प्रथायें और अभिसमय उसके महत्त्वपूर्ण अश बन गये हैं। वहाँ के सविधान म राष्ट्रपति के मन्त्रिमण्डल व दलीय पद्धति का कोई वर्णन नही है। दूसरी ओर, इग्लैण्ड का सविधान कहने को अलिखित है, किन्तु उसके बहुत से महत्त्वपूर्ण अग लिखित है (जैसे *Magna Carta, Bill of Rights, Habeas Corpus Act*)। पार्लियामेंट के सगठन व निर्वाचन सम्बन्धी कानून जिन्हे समय समय पर पार्लियामेंट ने कानून का रूप दिया है भी इसी कोटि म आते है। अत हम इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि लिखित

और अलिखित सविधानो मे गुण की अपेक्षा मात्रा का अतर अधिक होता है।

अलिखित सविधान का प्रमुख गुण उसका लचीलापन होता है। इसमे समय और परिस्थिति के अनुकूल सुगमता से परिवतन हो जाते हैं। इसी कारण ऐसे सविधान के होते हुए क्रान्ति की सम्भावना नही रहती, क्योकि यह सकटपूण परिस्थितिया का सामना सरलतापूवक करने की क्षमता रखता है। दूसरे, अलिखित सविधान मे निर्बाध विकास का पूण अवसर होता है। अत यह समय की भाँति गतिशील और परिवतनशील होता है। ऐसे सविधान का मुख्य दोष अनिश्चितता व अस्पष्टता है, क्योकि इसके महत्त्वपूण अश लिखित नही होते। इसका दूसरा दोष अस्थायीपन है, इसमे सत्तारूढ दल अपने स्वाथ साधन के हेतु अथवा जनमत को अपने पक्ष मे रखने के विचार से चाहे जब आसानी से परिवतन कर लेता है। कुछ लेखको के विचार से ऐसे सविधान के अतगत नागरिको के अधिकारो की रक्षा अपेक्षाकृत बहुत कम होती है। लिखित सविधान का मुख्य गुण उसकी निश्चितता व स्पष्टता होती है। अत नागरिका को सरकार की शक्तियो और अधिकारो का ज्ञान होता है। साथ ही सरकार के विभिन्न अगो मे विरोध और विवाद के अवसर कम आते है। इसका दूसरा गुण यह है कि इसमे नागरिको के अधिकारो का समावेश होने से वे अधिक सुरक्षित रहते हैं, क्योकि शासक मनमानी नही कर सकते। लिखित सविधान दुस्सशोध्य होते है। चूकि लिखित सविधान प्राय दुस्सशोध्य होते हैं, अत इनका सबसे बडा दोष यह होता है कि सविधान मे आवश्यकतानुसार परिवतन आसानी से नही हो पाते।

सुसशोध्य और दुस्सशोध्य—चूकि लिखित और अलिखित सविधानो मे भेद गुण का नही वरन् मात्रा का है, अत इनका अतर कोई महत्त्व नही रखता। इसी कारण ब्राइस ने सविधानो को सुसशोध्य और दुस्सशोध्य दो श्रेणियो मे बाँटा है। विधान से उसका अथ ऐसे सविधान से है जिसमे साधारण कानून बनाने की प्रक्रिया मे सुसशोध्य द्वारा ही परिवतन किया जा सके अर्थात् जिसमे सशोधन करने के लिए किसी विशेष या पेचीदा प्रक्रिया की आवश्यकता न पडे। इसके विपरीत दुस्सशोध्य सविधान वह होता है जिसमे साधरण कानून बनाने की प्रक्रिया से सशोधन न किया जा सके। अधिकतर सविधान लिखित होते हैं, परन्तु यह अनिवाय नही है कि लिखित सविधान दुस्सशोध्य ही हो। लिखित सविधान दोनो ही प्रकार के हो सकते है। विभिन्न देशो के लिखित सविधानो के अध्ययन से पता चलता है कि उनमे लचीलेपन की मात्रा मे अतर होता है। सविधान का लचीलापन उसके सशोधन की विधि पर निभर करता है। सयुक्त राज्य अमरीका मे सशोधन की विधि कम कठोर है। आधुनिक राज्यो की प्रवृत्ति लिखित परन्तु सुपरिवतनीय सविधान की ओर है। अत सक्षेप मे सुसशोध्य और दुस्सशोध्य सविधानो मे अतर का आधार यह है कि सविधान निर्माण एव सशोधन करने और साधारण कानून बनाने की प्रक्रिया एकरूप है या नही।

तथ्य यह है कि सविधान का सरलता से और बहुधा सशोधित होना केवल कानूनी उपबधो पर ही नही निभर करता, वरन् समुदाय मे प्रधान राजनीतिक और सामाजिक समूहो तथा इस बात पर भी कि वे सविधान द्वारा विहित राजनीतिक शक्ति के वितरण और सगठन से किस सीमा तक सन्तुष्ट होते हैं अथवा उसे मान लेते हैं। यदि सविधान उनकी सुविधा के अनुसार है तो वे उसमे अधिक परिवतन करना न चाहेंगे, यदि परिवतन ससद के साधारण कानून द्वारा भी हो सकता है। उनके विरोध के रहते हुए असन्तुष्ट अल्प सख्यको के उसम परिवतन करने के प्रयत्न सफल न होगे। परन्तु दूसरी ओर, यदि उनमे से काफी समूह सविधान म परिवतन चाहते है, तो ऐसा हो जायगा, यदि ऐसा करन मे विशिष्ट कानूनी बाधाओ को पार करना भी अन्तग्रस्त हो। इसका अथ यह नही है कि कानूनी बाधायें महत्त्वहीन होती हैं। अत यह कहना अधिक बुद्धिपूण होगा कि सुसशोध्य और दुस्सशोध्य सविधानो के बीच अतर इस बात पर निभर नही करता कि

उनमे सशोधन के लिए विशिष्ट प्रक्रिया की आवश्यकता होती है या नही वरन् इस बात पर कि व्यवहार मे, विभिन्न प्रकार की परिस्थितियो के परिणामस्वरूप, उनमे सरलता से और बहुधा सशोधन होते है या नही ।[1]

सुसशोध्य सविधान के कई लाभ हैं—(1) यह नई अथवा सकटकालीन परिस्थितियो का सामना सरलतापूर्वक कर सकता है क्योकि इसमे आवश्यकतानुसार परिवतन आसानी से किये जा सकते हैं। (2) यह प्रगतिशील एव विकासशील होता है। यह भी पुराना और समय के विरुद्ध नही होता। (3) इसका क्रमश विकास होता है, इसकी व्यवस्था जीवित और उवर होती है। इस प्रकार इस पर इतिहास की छाप लगी होती है। (4) चूकि इसमे अति सुगमता से परिवतन हो जाते हैं, देश मे विप्लव व क्रान्ति का डर नही रहता।[2] परन्तु इसके गुण ही कमी दोषो का रूप धारण कर सकते हैं। चूकि यह बहुत ही आसानी से बदला जा सकता है, इसमे भावावेश के अन्तगत क्षणिक और अहितकर परिवतन हो सकते हैं। इसके साथ ही ऐसा सविधान कुछ अनिश्चित और अस्पष्ट होता है, क्योकि यह सदैव ही परिवतन की अवस्था मे रहता है। दुस्सशोध्य सविधान मे ये गुण होते हैं—(1) यह अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होता है। इसमे आसानी से परिवतन नही किये जा सकते और यह दलीय हितो तथा जनता के भावावेश का शिकार नही बनता। (2) चूकि यह लिखित होता है इसमे सुनिश्चितता व स्पष्टता के गुण होते हैं। परन्तु इसकी अपरिवतनशीलता व स्थायित्व की कमी बडी हानिकारक सिद्ध हो सकती है, विशेषकर राष्ट्रीय आपातकाल मे जबकि नई परिस्थितियो का सामना करने के हेतु इसमे सशोधन नहीं किया जा सकता। दूसरे चूकि ऐसे सविधान का निर्माण किसी बीते हुए काल मे, उस समय के आदर्शों और सिद्धान्तो के अनुरूप होता है, उसमे बदलते हुए आदर्शों और सिद्धान्तो का समावेश सुगमता से नही हो पाता, अत यह अप्रगतिशील होता है और ऐसे सविधानो के अन्तगत विद्रोह या क्रान्ति का भय बना रहता।

सविधानों के नये वर्गीकरण—लिखित/अलिखित के वर्गीकरण की आलोचनात्मक परीक्षा म ब्राइस ने इस बात पर बल दिया है कि अधिक महत्त्वपूर्ण अन्तर सामान्य कानून और सविधि (common law and stature law) की विशेषताओ के बीच किया जाना चाहिए। उसने यह भी प्रस्तावित किया कि वे सविधान जो आधारभूत कानूनो से बनते हैं (fundamental law superior to ordinary law) और जिनमें साधारण विधायी सत्ता द्वारा परिवतन नही किया जा सकता दुस्सशोध्य कहलाने चाहिए। ऐसे सविधान जिनका निर्माण साधारण कानून बनाने वाली सत्ता करती है, सुसशोध्य कहलाने चाहिएँ। व्हीयर ने भी लिखित/अलिखित वर्गीकरण की उपयोगिता को नही माना है और उसने सुझाव दिया है कि सुसशोध्य/दुस्सशोध्य वर्गीकरण का प्रयोग भी परिवतन के लिए प्रक्रियाओ के बजाय यथार्थ परिवतन का बोध कराने के लिए किया जाना चाहिए। उसने दुस्सशोध्य के उप-वर्गों के रूप मे सर्वोपरि/अधीन (supreme/subordinate) को प्रस्तुत किया है और सघात्मक/एकात्मक (अर्द्ध सघात्मक व सघटक के साथ), पृथक की गई शक्तियाँ/एक मे मिली हुई शक्तियाँ (separated powers/fused powers) और गण

---

[1] It may be wiser perhaps to use the terms flexible and rigid to distinguish constitutions not according to whether or not they require for their amendment a special procedure which is not required for ordinary laws but according to whether they are in practice through the force of a variety of circumstances easily and often altered or not —Wheare K C *op cit* p 17

[2] Flexible constitutions can be stretched or bent so as to meet emergencies without breaking their framework and when emergency has passed they slip back into their old form like a tree whose outer branches have been pulled aside to let a vehicle pass —J Bryce

तन्त्रीय/राजतन्त्रीय वर्गीकरण भी प्रस्तावित किये हैं। परन्तु लोवेन्स्टीन ने ब्राइस व्हीयर पहुँच को सवथा अपर्याप्त बताया है और उसने नये सारपूण वर्गीकरण प्रस्तावित किये हैं—मूल/लिया हुआ (original/derivative), विचारधारा की दृष्टि से कायक्रम वाले/तटस्थ (ideologically programmatic/neutral) और आदर्शात्मक/नाममात्र के (normative/nominal)। एकजिन (Akzin) ने लोवेन्स्टीन वाले वर्गों का प्रयोग करते हुए आदशता और स्थिरता (normativity and stability) तथा नाममात्रता और खण्डनता (nominality and fragility) के बीच सविधानो के जीवन मे सम्बन्ध स्थापित किया है। कोवेक्स (Kovacs) ने परम्परागत वर्गीकरणो की इस आधार पर आलोचना की है कि वे समाजवादी सविधानो पर लागू नही होतें। उसके मतानुसार समाजवादी सविधान मुख्यत दो प्रकार के हैं—सोवियत समाजवादी सविधान और लोकप्रिय प्रजातन्त्रात्मक सविधान।[1]

5 सविधान का सशोधन और विकास

सविधान मे परिवतन का मुख्य साधन उसमे सशोधन हैं। अन्य परिवतन प्रथाओ तथा अभिसमयो के पड जाने से भी होते हैं। सविधान मे परिवतन और विकास की विभिन्न विधिया को सयुक्त राज्य अमरीका के उदाहरण से बहुत अच्छी तरह समझा जा सकता है। सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान जीवित और परिवतनशील व्यवस्था है, इसीलिए तो अमरीकी राष्ट्र गृह-युद्ध और अन्य सकटो का सफलतापूवक सामना कर सका। इस सविधान को कुछ आलोचका न 'नष्ट हुई आशाओ, विगत आदर्शो, प्राचीन भयो तथा प्राचीन काल के आर्थिक और सामाजिक तथ्यो का समूह बताया है परन्तु हम इस आलोचना को सत्य नही मानते। वास्तव म, अमरीकी सविधान का अध्ययन एक स्थित यन्त्र रूप मे नही वरन् एक जीवित व्यवस्था के रूप मे करना चाहिए। सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान के बारे मे राष्ट्रपति वुडरो विलसन ने लिखा है—'अमरीकी सविधान ब्रिटिश सविधान की भाति ही एक जीवित और उवर व्यवस्था है। सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान मे भी विभिन्न विधियो द्वारा आवश्यक परिवतन हुए है। इसके लिखित रूप तथा दुष्परिवतनीय लक्षण ने इसके विकास म कोई विशेष बाधा नही डाली है। सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान का विकास अथवा विस्तार सशोधना, न्यायिक निर्णया व प्रथाओ आदि से हुआ है। यह सविधान स्थिर नही, गतिशील है।' एक अन्य लेखक के अनुसार सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान 'घोडा-बग्घी' आलेख नही है जो आधुनिक विश्व म पूणतया अनुपयुक्त हो। यह एक विस्तृत और सशोधित आलेख है, जो आज की औद्योगिक व शहरी समाज की समस्याओ का सफलतापूवक सामना कर सका है। यह अतीत की जीवनदायिनी वसीयत है आज का जीवित व गतिशील आलेख है।[2] सविधान म विभिन्न विधियो द्वारा आवश्यक परिवतन हुए है, जैसा कि निम्नलिखित विवेचन से स्पष्ट होगा—

प्रथम, सविधियों द्वारा विस्तार (by Legislation Elaboration)—काग्रेस ने सविधान को दो प्रकार से विस्तृत बनाया है—(1) सविधान की कुछ धाराओ मे वर्णित आदेशो को कार्यान्वित करके, और (2) सविधान द्वारा स्पष्ट तथा निहित रूप मे प्रदान की गयी शक्तिया के अनुसार आवश्यक कानून बनाकर। प्रथम श्रेणी मे हम इन बातो को सम्मिलित कर सकते हैं—सर्वोच्च

[1] Wolf Philips L *op cit* pp 27-28

[2] Our Federal Constitution is not a horse and buggy document outmoded in a modernized world It is an expanded greatly modified document able to meet the problems arising in our industrialized society of today It is a vital heritage of the past and a living dynamic document of to day —Bruntz George G *Understanding Our Government* p 237

न्यायालय के अतिरिक्त अन्य संघीय न्यायालयों की रचना, जिसका उत्तरदायित्व संविधान ने कांग्रेस पर छोड़ दिया था, प्रशासनिक विभागों की स्थापना, राष्ट्रपति की अयोग्यता की दशा में उसके उत्तराधिकारी की व्यवस्था आदि। दूसरी श्रेणी में ये बातें सम्मिलित की जा सकती हैं—इतिहास के आरम्भ में ही कांग्रेस ने निर्णय किया कि 'आवश्यक और उचित' अनुच्छेद के अन्तर्गत उसे राज्य के वित्तीय कार्यों की पूर्ति के लिए राष्ट्रीय बैंक को चार्टर करने का अधिकार है। उसके बाद कांग्रेस ने वाणिज्य, कर लगाने तथा कल्याण-सम्बन्धी शक्तियों का खूब प्रयोग किया है। कांग्रेस के कानूनों द्वारा कारखानों में उत्पादन, कृषि, शिक्षा आदि सभी प्रभावित हुए हैं। कांग्रेस ने एकाधिकार को सीमित करने, स्वामी और श्रमिकों के सम्बन्धों को विनियमित करने, कृषि मूल्यों को स्थिर रखने, विद्युत शक्ति के कारखाने स्थापित करने और सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था के सम्बन्ध में अनेक कानून बनाये हैं। इस प्रकार कांग्रेस ने अपनी रचना और कार्यों की दृष्टि से अमरीका के मूल संविधान में बहुत कुछ जोड़ा है।[1] कहीं कहीं तो संविधान के वाक्यांशों को नया अर्थ दिया गया है और इसका परिणाम प्रायः वैसा ही महत्त्वपूर्ण रहा है जैसा कि औपचारिक संशोधनों का होता। संविधान की धारा 2 के खण्ड 2 में केवल यह कहा गया है कि संघीय अधिकारियों की नियुक्ति की शक्ति राष्ट्रपति, न्यायालयों अथवा विभागीय अध्यक्षों में निहित होगी। इस पर भी बहुत वर्ष पूर्व ही कांग्रेस ने नागरिक सेवाओं के बारे में कानून बनाया, जिसमें अन्य बातों के अतिरिक्त 'सिविल सर्विस कमीशन' की रचना की व्यवस्था है।

द्वितीय, न्यायिक निर्वचन द्वारा (by Judicial Interpretation)—प्रत्येक संविधान का इस प्रकार से विकास होता है किन्तु यह बात संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान के विषय में विशेष रूप से सच है, क्योंकि इसका लिखित रूप अति संक्षिप्त है और इसमें ऐसी भाषा का प्रयोग हुआ है जिसका विभिन्न प्रकार से निर्वचन हो सकता है। अब तक संविधान के प्रायः सभी अनुच्छेदों पर न्यायालयों में विचार किया जा चुका है, अतएव संविधान को अच्छी प्रकार से न्यायिक निर्णयों के प्रकाश में ही समझा जा सकता है। एक भूतपूर्व मुख्य न्यायाधिपति ने सुन्दर शब्दों में कहा था—'हम संविधान के अन्तर्गत हैं, परन्तु संविधान वह है जैसा कि न्यायाधीश इसे बताते हैं।' इसका अर्थ कुछ उदाहरणों से स्पष्ट हो जायगा। न्यायालयों ने मत प्रकट किया है कि संविधान की प्रस्तावना कोई शक्तियाँ प्रदान नहीं करती, यह तो केवल उसके उद्देश्य की घोषणा है, आय पर कर प्रत्यक्ष कर होता है, परोक्ष नहीं, प्रथम 10 संशोधन केवल राष्ट्रीय शासन में लागू होते हैं, संविधान न्यायालयों को कांग्रेस के द्वारा बने कानूनों को (संविधान का अतिक्रमण करने पर) अवैध घोषित करने की शक्ति प्रदान करता है, कांग्रेस प्रदत्त शक्तियों को कार्यान्वित करने के लिए बैंक व कार्पोरेशनों की रचना कर सकती है।

वास्तव में, संघीय सरकार कारखानों में उत्पादन, खानें खोदना, विद्युत् शक्ति का उत्पादन करना, कृषि उत्पादन, परिवहन, शिक्षा, सामाजिक कल्याण आदि अनेक कार्य नहीं कर पाती, क्योंकि उसे इन कार्यों के करने की प्रत्यक्ष या स्पष्ट शक्ति प्राप्त नहीं है। इन कार्यों के बारे में कांग्रेस न्यायालयों द्वारा प्रतिपादित अथवा मान्यता प्राप्त निहित शक्तियों के सिद्धान्त (Theory of Implied Powers) के अन्तर्गत ही अनेक कानून बना सकी है। जस्टिस मार्शल ने 1819 में एक मुकदमे (McCulloch vs Maryland) में ऐतिहासिक निर्णय देते हुए कहा था—'सरकार की शक्तियाँ सीमित है और सरकार उन सीमाओं से बाहर नहीं जा सकती। परन्तु हमारे विचार

[1] The Constitution is also what Congress says it is. Simple general phrases may be elaborated by statutes in such a way as to give them unexpected meaning. Where this occurs the effect is often as significant as if amendments were formally enacted.—Ferguson and McHenry *The American System of Government* pp 74-75

म राष्ट्रीय (सघीय) सरकार को प्रदत्त शक्तियो की पूर्ति के लिए उन साधनो के प्रयोग का अधिकार है जो आवश्यक और उचित समझे जाएँ। यदि उद्देश्य उचित और वैध है सविधान द्वारा प्रदत्त शक्तियो के क्षेत्र म आता है तो वे सभी साधन जो इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उचित समझे जाएँ और जिनके प्रयोग पर सविधान मे मनाही न हो, सावैधानिक हैं।'

इस प्रकार निहित शक्ति वह शक्ति है जिसे सविधान मे प्रगणित किसी दूसरी शक्ति से निकाला गया हो। तब स निहित शक्तिया के सिद्धा त का प्रयोग कई बार हुआ है और ऐसा करने म -यायालयो ने सविधान की धाराआ का उदार तथा विस्तत अथ लिया है, जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय सरकार की शक्तियो म महत्त्वपूण विस्तार हुआ है। इस सम्ब-ध म मनरो ने लिखा है कि सयुक्त राज्य अमरीका के सर्वोच्च -यायालय ने सविधान की शब्दावली मे कोई परिवतन करने के अधिकार का दावा नही किया है, यह उसमे कोई नयी बात नही रखता, परन्तु उसकी धाराआ म नये अथ निकालता है। इसी आधार पर जस्टिल हॉम्स ने एक बार कहा था कि -यायाधीश कानून बनाते हैं और उ-ह कानून बनाने पडते है (Jugdes do and must legislate)।

ये इस सिद्धा त के कुछ महत्त्वपूण उदाहरण हैं (1) सविधान से काग्रेस को वदेशिक तथा अ तरराज्यीय वाणिज्य को विनियमित करने की शक्ति मिली है। वाणिज्य (commerce) क्या है ? इस प्रश्न के उत्तर म समय के परिवतनो के अनुसार -यायालयो ने इस शब्द की लगभग 100 व्याख्याएँ की हैं। इनके परिणामस्वरूप ही काग्रेस ने रेल, मोटर, तार व टेलीफोन कम्पनियो हवाई यातायात, जहाजरानी, रेडियो सचार स्टेशनो स्टाक एक्सचेंजो आदि विषयो के बारे म अनेक कानून बनाये हैं और -यायालयो ने उ-हे अवैध नही माना। (2) सविधान म काग्रेस को सनाओ के एकत्रित करने और उ-हे आवश्यक सामग्री देने का प्राविधान है। इसी शक्ति के अ तगत काग्रेस न युद्ध काल व शा तिकाल मे विशाल सैनिक सगठन सम्ब-धी कानून बनाये है और सेनाओ को सामग्री देने के अधिकार म उ-ह रसद व अस्त्र शस्त्र देने की बहत् व्यवस्था की है तथा इस उद्दश्य स कि सना को आवश्यक सामग्री प्राप्त हो सक और नागरिक जनता उसके लिए आवश्यक त्याग करे, इस सम्ब-ध म भी काग्रेस ने कानून बनाये है। (3) सविधान की एक धारा के अनुसार काग्रेस को जन कल्याण हेतु कानून की शक्ति मिली है, जिसके अ तगत राष्ट्रीय सरकार ने बुढापे म प शन व बेकारी की अवस्था म आर्थिक सहायता देने की कानून द्वारा व्यवस्था की है।

तृतीय, कायपालिका के निवचन द्वारा (by Executive Interpretation)—काग्रेस और -यायालयो द्वारा निवचन के साथ साथ कायपालिका ने भी सविधान का निवचन किया है। कई अवसरो पर राष्ट्रपतियो ने सविधान का निवचन किया है और उनके मत माने गये है। लिकन ने इस बात पर जोर दिया कि दक्षिणी राज्य सघ से बाहर कभी न जाएँ। विलसन व फ्रेंकलिन रूजवेल्ट ने जोर के साथ यह मत प्रकट किया कि काग्रेस कार्यांग कमचारियो को पद से हटाये जाने के अधिकार पर प्रतिब-ध नहीं लगा सकती। कई राष्ट्रपतियो न अमरीकियो के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा के लिए काग्रेस की स्वीकृति प्राप्त किये बिना ही सयुक्त राज्य अमरीका व किसी भी राज्य म सशस्त्र सना भेजने को -यायोचित ठहराया। फ्रेंकलिन रूजवेल्ट ने इस मत के मनवाने म सफलता पायी कि सविधान का अथ इतना विस्तृत है कि उसके अ तगत आर्थिक सकट को दूर करने के लिए राज्य आर्थिक क्षेत्र म काफी दूर तक कानूनो द्वारा हस्तक्षेप कर सुधार कर सकता है।

प्रथम विश्व युद्ध म काग्रेस ने राष्ट्रपति विलसन को बहुत सी शक्तियाँ सौंपी, विशेष रूप स आर्थिक क्षेत्र म और राष्ट्रपति ने उन शक्तियो को प्रशासनिक अध्यादेशो द्वारा विभिन्न प्रशासनिक निकायो को सौंपा। विलसन ने काग्रस से विशिष्ट अधिकार प्राप्त किय बिना भी बहुत स प्रशासनिक अभिकरण कायम किये। इसी प्रकार दूसरे विश्व-युद्ध के दौरान इनम स बहु शक्तियो का प्रयोग फ्रेंकलिन रूजवेल्ट ने किया, जिसने अपनी पहल द्वारा ही अनेक अ

स्थापित किये। उसने तो बहुत से निजी कारखानों पर भी सरकारी अधिकार जमाया और उनका संचालन सरकार द्वारा कराया। ऐसा तभी किया गया जब राष्ट्रपति ने यह महसूस किया कि हड़तालों, अकुशल प्रबन्ध और अन्य कारणों से उत्पादन को खतरा था। इसके फलस्वरूप राष्ट्रपतियों द्वारा संविधान के उद्देश्यों में नया अर्थ देखा गया है, जिससे उनकी शक्तियों में वृद्धि हुई है।

चतुर्थ, प्रथाओं द्वारा (by Customs)—अन्य संविधानों की तरह संयुक्त राज्य अमरीका का संविधान भी चलनों, प्रथाओं अथवा अभिसमयों द्वारा विकसित हुआ है। इस सम्बन्ध में मनरो ने लिखा है कि व्यक्ति के लिए जैसे आदत है, वैसे ही राज्य के लिए चलन है। राष्ट्र भी मनुष्यों की तरह बहुत से कार्य एक ही ढंग से करने लगते हैं। आदत में ही चलन पड़ जाता है। इस प्रकार अमरीका में लिखित संविधान के ऊपर पिरामिड के समान राजनीतिक चलनों का एक समूह बन गया है। इसने अमरीकियों को काफी मात्रा में एक 'अलिखित संविधान' दिया है। कुछ महत्त्वपूर्ण उदाहरण ये हैं—(1) संविधान में दलों का कोई उल्लेख नहीं है। वैसे भी संविधान निर्माताओं का यह आशा थी कि दलों का विकास न होगा। किन्तु आजकल अमरीकी संविधान को दलों के महत्त्वपूर्ण भाग के बिना भी समझना सम्भव नहीं है। अब तो दलीय-व्यवस्था का नियमित करने के लिए कानून भी बन गये हैं। उनकी उत्पत्ति और विकास वास्तव में प्रथाओं द्वारा हुए हैं। (2) संविधान में कांग्रेस की समितियों का भी कोई उल्लेख नहीं है, परन्तु अब विधि निर्माण कार्य बड़ी सीमा तक उनके द्वारा नियन्त्रित है। (3) संविधान में लिखा है कि प्रतिनिधि सदन अपने अध्यक्ष का चुनाव करेगा, परन्तु प्रथा यह पड़ गयी है कि बहुमत दल का कॉकस (caucus) या सम्मेलन उसकी छाँट करता है और सदन उसका अनुसमर्थन कर देता है।

(4) संविधान का उद्देश्य स्पष्टतया यह प्रतीत होता है कि राष्ट्रपति का चुनाव (अप्रत्यक्ष रूप से) राज्यों की विधायिकाओं द्वारा चुने हुए निर्वाचकों द्वारा हो। किन्तु शीघ्र ही यह प्रथा पड़ गई कि निर्वाचकों का चुनाव दलीय आधार पर होने लगा और अब वे राष्ट्रपति के चुनाव में दलीय आदेशों के अनुसार मत देते हैं। अतः व्यवहार में राष्ट्रपति का चुनाव एक प्रकार से प्रत्यक्ष रूप में ही होने लगा है। (5) यह प्रथा पड़ गयी थी कि कोई व्यक्ति दो बार से अधिक राष्ट्रपति पद पर न रहे। फ्रेंकलिन रूजवेल्ट ने इस प्रथा को तोड़ दिया जिसके कारण बाद में इस उद्देश्य से संविधान में संशोधन किया गया। (6) प्रतिनिधि सदन के सदस्य उसी निर्वाचन क्षेत्र में खड़े होते हैं, जिसकी सूची में उसका नाम होता है। (7) राष्ट्रपति द्वारा केबिनेट के सदस्यों की छाँट पर सीनेट साधारणतया अपनी स्वीकृति दे देती है। (8) राज्यों में संघीय अधिकारियों की नियुक्ति राष्ट्रपति सीनेट में उस राज्य के अपने दल के प्रतिनिधियों के परामर्श से करता है, इसे ही सीनेटोरियल कर्टसी (senatorial courtsey) कहते हैं। (9) राष्ट्रपति की केबिनेट का विकास भी प्रथा का ही फल है और यदि राष्ट्रपति केबिनेट का निर्माण करना न चाहे तो उसके विरुद्ध कोई कानूनी अथवा सांविधानिक प्रश्न नहीं उठ सकता।[1] (10) कांग्रेस की समितियों में सभापति (बहुमत दल से) ज्येष्ठता के नियम (seniority rule) के अनुसार बनते हैं। ज्येष्ठता आयु की नहीं, वरन् समिति की सदस्यता (length of continuous service) की होती है।

अन्त में, संशोधनों द्वारा (by Amendments)—अब तक अमरीकी संविधान में बहुत से संशोधन हो चुके हैं। अतएव यह उचित होगा कि संशोधन विधि का विवेचन किया जाय। धारा 5 में इसी विधि का वर्णन है। इसके अनुसार संशोधन प्रक्रिया में दो पग अन्तर्ग्रस्त हैं—(1) प्रस्ताव और (2) सम्पुष्टिकरण। संशोधन का प्रस्ताव दो विधियों में से किसी एक के द्वारा रखा जा सकता है। कांग्रेस के दोनों सदनों में 2/3 के बहुमत द्वारा या दो तिहाई राज्यों की विधायिकाओं

---

[1] Ogg F A *Aspects of American Government* pp 23-25

की प्राथना पर सशोधन पश करने के लिए एक सम्मेलन बुलाकर। अभी तक दूसरी पद्धति का प्रयोग नही हुआ है, क्योकि प्रस्ताव पश करने की पहली पद्धति अपेक्षाकृत बहुत सरल है। सशोधनो के प्रस्ताव का सम्पुष्टिकरण राज्यो की कायवाही द्वारा होता है, प्रस्तावित सशोधन की पुष्टि कम से कम तीन चौथाई राज्यो द्वारा होनी आवश्यक है। यह सम्पुष्टि भी दो प्रकार से हो सकती है—(1) या तो प्रस्तावित सशोधन पर 3/4 राज्यो की विधायिकाएँ अपनी स्वीकृति अथवा सहमति दें, या (2) राज्यो म इस उद्दश्य से बुलाय गये सम्मलन उस पर स्वीकृति प्रदान करें। सम्पुष्टिकरण के लिए कौन सी पद्धति अपनायी जाये, यह काग्रेस स्पष्ट कर सकती है। यदि काग्रेस एसा न करे तो राज्य स्वय निणय करेंगे। अब तक केवल इक्कीसवे सशोधन का सम्पुष्टिकरण राज्य-सम्मेलनो द्वारा हुआ है। सम्पुष्टिकरण कितने समय के भीतर हो, इस प्रथा का प्राविधान सविधान मे नही है, पहले यह समझा जाता था कि इसकी काई सीमा नही, किन्तु अठारहवे, बीसवें, इक्कीसवें और बाइसवें सशोधनो के सम्पुष्टिकरण काल की सीमा काग्रेस ने ७ वष रखी थी और उससे पूव ही उनकी पुष्टि हो गयी।[1]

साधारण रूप मे सशोधन प्रक्रिया इस प्रकार है—एक या अधिक सदस्य काग्रेस के किसी भी सदन मे सशोधन का प्रस्ताव रखते है, उस पर साधारण विधायी प्रक्रिया के अनुसार विचार होता है और यदि वह उस सदन मे 2/3 के बहुमत से स्वीकृत हो जाता है तो उस पर दूसरे सदन मे भी विचार होता है और वहाँ भी 2/3 के बहुमत मे स्वीकृत हो जान पर सशोधन प्रस्ताव प्रत्येक राज्य के मुख्य कायपाल (Chief Executive) के पास जाता है, वह उसे सम्पुष्टि के लिए राज्य की विधायिका के पास भेज देता है या सम्मेलन बुलाने की कायवाही की जाती है। 3/4 राज्यो द्वारा सम्पुष्टि हो जान पर सशोधन लागू हो जाता है। इससे स्पष्ट है कि सशोधन के विषय मे राष्ट्रपति का कोई भाग नही है। सविधान म यह बात भी स्पष्ट की गई है कि किसी राज्य को उसकी सहमति के बिना सीनेट मे प्रतिनिधित्व की समता के अधिकार से वचित न किया जा सकेगा।

सशोधन विधि की समालोचना—इस विधि पर आलोचनात्मक दृष्टि से विचार करने पर ये बातें सामने आती हैं—(1) कुछ लखको के अनुसार सशोधन विधि अति धीमी तथा कठिन है। इस बात की पुष्टि इस तथ्य से होती है कि इतने लम्बे काल म अब तक केवल 25 सशोधन हुए हैं और प्रथम 10 सशोधन सामूहिक रूप म एक के बराबर हैं, क्योकि उनमे नागरिको के अधिकारो का वणन है। साथ ही किसी सशोधन की सम्पुष्टि केवल 13 राज्यो के विरोध से रुक सकती है। परन्तु कुछ लेखको ने इस विधि को अधिक सरल बताया है। सविधान मे आवश्यकतानुसार सशोधन हुए हैं और कोई विशेष कठिनाई सामन नही आई है। हम इस मत को उचित मानते हैं कि सशोधन विधि न तो अधिक कठोर है और न अधिक सरल ही है। (2) कुछ विचारको के मतानुसार सशोधन विधि का आधार पूणत प्रजातन्त्रात्मक नही है, क्योकि इसमे (स्विटजरलण्ड की तरह) जनता को प्रस्तावाधिकार तथा सशोधनो की सम्पुष्टि करने के अधिकार

[1]

Methods of Proposal (Either may be used)	Methods of Ratification (States may select either method unless Congress specifies which should be followed)
1 By two thirds vote of both houses of Congress (method used to propose all 22 amendments)	Legislatures in three fourths (36) of the states (method used to ratify first 20 amendments and the twenty second) or conventions in three fourths (36) of the states (method used to ratify one amendment—the twenty first)
2 By constitutional convention called by Congress when petitioned to do so by two thirds (32) of the states (method unused to date)	Legislatures in three fourths (36) of the states , conventions in three fourths (36) of the states

प्राप्त नही हैं। हमारे विचार म इन अधिकारों का होना सयुक्त राज्य अमरीका जसे बड़े राज्य में अनावश्यक तथा व्यावहारिक कठिनाइयो से युक्त होता। (3) सशोधन विधि म प्रयुक्त शब्दावली जैसे 'सदनो के 2/3 सदस्य' दोषपूर्ण हैं, क्योंकि इसम 2/3 उपस्थित सदस्य तथा कुल सख्या क 2/3 सदस्य दोना ही अथ निकलते हैं।

6 विभिन्न राज्यो मे सशोधन विधि

ग्रेट ब्रिटेन—यहाँ पर सविधान म सशोधन की विधि अति सरल है। सशोधन प्रक्रिया और साधारण कानून बनाने की प्रक्रिया म कोई अन्तर नही है। पार्लियामट किसी भी प्रकार का सांविधानिक कानून अन्य कानूनो की भांति साधारण बहुमत से बना सकती है। पार्लियामट द्वारा पारित विधेयक पर ताज की अनुमति बिना किसी रुकावट के मिल जाती है। इसी प्रकार पार्लियामट ने अनेक महत्त्वपूर्ण सविधियाँ निर्मित की हैं, जो यहाँ के सविधान का अग बन गई हैं।

भारत—सविधान म सशोधन क लिए साधारण उपबन्ध यह है कि सशोधन सम्बधी विधेयक ससद के किसी भी सदन में पश किया जा सकता है। यदि ऐसा विधेयक प्रत्येक सदन म कुल सदस्यो की सख्या के बहुमत तथा उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्यो के 2/3 बहुमत से पास हो जाता है तो उसे राष्ट्रपति की अनुमति के लिए भेजा जाता है, जिसके मिलने पर उसके अनुसार सविधान सशोधित हो जाता है। परन्तु यदि ऐसा विधेयक अग्रलिखित विषयो म से किसी के सम्बन्ध म सशोधन करना चाहता है तो उसे राष्ट्रपति की अनुमति के लिए तभी भेजा जायेगा जबकि स्वशासित राज्यो की सूची मे सम्मिलित कम से कम आधे राज्यो के विधानमण्डल उसका अनुसमथन कर दें—(1) राष्ट्रपति के निर्वाचन से सम्बन्धित अनुच्छेद 54 व 55। (2) सघ की कायपालिका शक्तिया सम्बन्धी अनुच्छेद 73। (3) स्वशासित राज्यो की कायपालिका शक्तियां सम्बन्धी अनुच्छेद 162। (4) सघीय क्षेत्रों म उच्च न्यायालयो से सम्बन्धित अनुच्छेद 24। (5) सघीय न्यायपालिका स सम्बन्धित भाग 5 का अध्याय 4। (6) सविधान के भाग 6 का अध्याय 5 जो भाग राज्यो मे उच्च न्यायालय से सम्बन्धित है। (7) सविधान भाग 11 का प्रथम अध्याय जिसमे सघ और राज्यो के विधायी सम्बन्धो का वर्णन है। (8) विधायी सूचियाँ। (9) अनुच्छेद 368 जिसमे सशोधन प्रक्रिया का वणन है।

उपर्युक्त से यह स्पष्ट है कि जिन बातो का सम्बन्ध सघ और राज्यो की शक्तियों व अधिकारो के वितरण से है उनके विषय मे कोई भी सशोधन ससद अकेले (unilaterally) नही कर सकती। उनसे सम्बन्धित सशोधन प्रस्तावो पर कम से कम आधे स्वशासी राज्यो के विधान मण्डलो का अनुसमथन मिलना आवश्यक है। अत हमारे सविधान की सशोधन विधि सघात्मक सविधानो जैसी है। यदि ऐसा न होता तो सघ सरकार राज्यो की शक्तियो मे जब चाहती मनचाहा परिवतन कर सकती थी। परन्तु यह ध्यान देने की बात है कि राज्य शासन के सम्बन्ध मे महत्त्वपूर्ण सशोधन केवल ससद द्वारा पास होने पर ही किये जा सकते हैं अर्थात् राज्यो को अपने सविधान मे सशोधन के अधिकार नही हैं। राज्य की सीमाओ म किये गये परिवतन व अनुसूचित क्षेत्रो के प्रशासन से सम्बन्धित उपबन्धो मे परिवतन ससद साधारण बहुमत से ही कर सकती है। इसके अतिरिक्त आपात्काल म बिना सशोधन किये ही सविधान का स्वरूप एकात्मक हो सकता है। इन सभी बातो से यह निष्कष निकलता है कि भारत का सविधान सघात्मक होने के साथ ऐसा है कि इसमे सुगमतापूवक सशोधन किये जा सकते हैं। अत इसमे दोनो तत्त्वो—कठोरता व लचीलेपन का अनुपम सम्मिश्रण मिलता है। इस प्रकार यह सविधान सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान की भांति अधिक कठोर नही है और न ही ब्रिटेन के सविधान की भांति पूर्णतया लचकदार है, वस्तुत यह इस दृष्टि से दोनो के बीच मे आता है।

स्विट्जरलैण्ड—सविधान मे सशोधन की विधि साधारण कानून बनाने की प्रक्रिया से कठिन है, किन्तु सयुक्त राज्य अमरीका की तुलना म यह काफी सरल है। स्विट्जरलैण्ड के सविधान म दो प्रकार के सशोधन हो सकते हैं—पूण और आशिक, अर्थात् किन्ही 1–2–4 धाराओ मे परिवतन। पूण परिवतन के लिए सशोधन प्रस्ताव का आरम्भ सघीय कौंसिल या सघीय एसेम्बली कर सकती है। दोनो ही दशाओ मे सशोधन के सम्बन्ध मे एसेम्बली मे वैसी ही प्रक्रिया का पालन होता है जैसा कि साधारण कानून के लिए विहित है। परन्तु जब सशोधन प्रस्ताव सघीय एसेम्बली द्वारा पास कर दिया जाता है तो सशाधित सविधान पर अनिवाय रूप से जन निणय प्राप्त किया जाता है। यह तभी लागू होता है जबकि जन निणय मे भाग लेने वाले मतदाताओ की बहुसख्या और कैन्टना की बहुसख्या उसके पक्ष मे मत दे। जन निणय मे कैन्टन के बहुसख्यक मतदाताओ के मत को कैंटन का मत समझा जाता है और अद्ध कैंटन का मत आधा मत माना जाता है। पूण सशोधन के लिए 50,000 मतदाता भी प्रस्तावाधिकार के अनुसार प्रस्ताव रख सकते है। मतदाताओ द्वारा प्रस्ताव अर्थात् याचिका को सघीय एसेम्बली साधारण मतदाताओ के निणय के लिए पेश करती है। यदि मतदाताओ का बहुमत उसे स्वीकार करले तो सघीय एसेम्बली के दोनो सदनो का विघटन और उनका नया चुनाव होता है। नई सघीय एसेम्बली नये सविधान का निर्माण करती है और तब उस पर जन निणय कराया जाता है। सशोधित सविधान मतदाताओ और कैण्टनो के बहुमत से स्वीकृत हो जाने पर ही लागू होता है।

जहा तक आशिक सशोधन का सम्बन्ध है, उसके लिए भी सघीय एसेम्बली, कौन्सिल और 50,000 मतदाताओ को पहल करने का अधिकार है। पहली दोनो दशाओ मे उसे साधारण कानून की तरह पास किया जाता है और बाद मे उस पर जन निणय कराया जाता है। मतदाताओ द्वारा प्रस्ताव को साधारण भाषा म अथवा पूण विधेयक के रूप मे पेश किया जा सकता है। पहली दशा मे प्रस्ताव पर सघीय एसेम्बली विचार करने के बाद उसे स्वीकार या अस्वीकार कर सकती है। यदि वह उसे स्वीकार कर लेती है तो वह उसके अनुसार विधेयक तैयार करती है और उस पर जन निणय कराती है। यदि एसेम्बली उसे अस्वीकार करे तो भी सघीय कौन्सिल इस प्रश्न पर जन निणय कराती है कि उस प्रकार का सशोधन किया जाये अथवा नही। यदि मतदान मे भाग लेने वाले मतदाताओ का बहुमत इस पक्ष म हो कि चाहा सशोधन किया जाये तो सघीय एसेम्बली उसके अनुसार विधेयक तैयार करती है और उस पर जन निणय कराती है। यदि जनता आशिक सशोधन के प्रस्ताव को पूण विधेयक के रूप मे पश करती है तो सघीय एसेम्बली उस पर सीधे जन निर्णय कराती है।

कनाडा—विश्व के स्वतन्त्र राष्ट्रो म कनाडा इस बात मे अनोखा राज्य है कि उसे अपने सविधान के सशोधन की पूण शक्ति प्राप्त नही है। उसके सविधान का आधार ब्रिटिश नाथ अमरीका कानून, 1867 और उसके सशोधन हैं जो ब्रिटिश पार्लियामेट द्वारा निर्मित है। 1949 से पूव उस कानून म कोई भी सशोधन कानूनी औपचारिकता की दृष्टि से केवल ब्रिटिश पार्लियामट ही कर सकती थी, परन्तु बहुत समय से यह प्रथा पड गयी थी कि ब्रिटिश पार्लियामेट उसमे केवल कनाडा की प्रार्थना पर ही सशोधन करती रही और इस प्रकार की प्रायना कनाडा की पार्लियामेट ही करती रही। यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि कनाडा की पार्लियामेट कोई ऐसा सशोधन कराना न चाहेगी जिसका प्रभाव प्रान्तो की शक्तिया पर पडे अथवा जो उस कानून द्वारा अल्पसख्यको को प्रदान की गयी साविधानिक गारन्टी को सीमित या कम करे। ऐसे सशोधन को तो कुछ प्रान्तो की सहमति प्राप्त करके ही कराया जा सकता है।

सविधान के सशोधन के विषय मे एक मान्य मत यह है कि उसमे कई प्रकार के अनुच्छेद हैं और प्रत्यक समूह के लिए सशोधन की विधि पृथक् होनी चाहिए। यहाँ पर हम सविधान के

तीन समूहो के विषय मे कुछ कहेंगे। प्रथम, कुछ अनुच्छेदो का सम्बन्ध केवल सघीय सरकार की रचना व सगठन से है अतएव उनमे सशोधन केवल कनाडा की पालियामेंट के प्रस्ताव पर होना उचित है और उनके लिए प्रान्तो की सहमति की कोई आवश्यकता नही होनी चाहिए। दूसरे, कुछ ऐसे आधारभूत अनुच्छेद है, जिनका सम्बन्ध मूल जाति, भाषा और धर्म आदि के अधिकारो से है अतएव उनमें प्रान्तो की सहमति के बिना सशोधन नही किया जाना चाहिए। तीसरे, उन अनुच्छेदो की सख्या बहुत बडी है, जिनका सम्बन्ध सघ व सभी प्रान्तो से है, परन्तु जो ऐसे आधारभूत नही हैं कि उनमे सशोधन के लिए सभी प्रान्तो की सहमति प्राप्त की जाय।

अब प्रश्न उठता है कि कनाडा के सविधान मे इस समय सशोधन करने की शक्ति किसे प्राप्त है? यदि हम ब्रिटिश नार्थ अमरीका कानून को ध्यानपूर्वक देखें तो हमे पता चलेगा कि उसमे अनेक प्राविधान ऐसे हैं जिनमे परिवर्तन प्रान्तीय विधानमण्डल अथवा कनाडा की पार्लियामेंट कर सकते हैं। सैक्शन 40, 41, 47 130 और 131 का आरम्भ इन शब्दो से होता है 'यदि कनाडा की पार्लियामेंट अन्य व्यवस्था न करे', अत इन धाराओ मे सशोधन पार्लियामेंट ही कर सकती है। इसी प्रकार से सैक्शन 78, 83, 134 और 135 हैं, जो कहते है कि जब तक 'उपयुक्त विधानमण्डल व्यवस्था न करे' अत उनमे प्रान्तीय विधानमण्डलों के कानूनो से ही सशोधन हो सकता है। सैक्शन 92 के शीर्षक (1) के अन्तर्गत प्रान्तीय विधानमण्डलो को लेफ्टिनेन्ट गवर्नर को छोडकर अन्य बातो मे प्रान्तीय सविधान मे सशोधन करने की शक्ति प्राप्त है। इस प्राविधान के अन्तर्गत प्रान्तीय विधानमण्डलो ने विभिन्न सैक्शनो म सशोधन किये हैं और वे आगे भी कर सकते हैं। सैक्शन 91 व 92 के अन्तर्गत दिये गये शीर्षकों के विषय में पार्लियामेंट व प्रान्तीय विधानमण्डल सशोधन कर सकते हैं।

ब्रिटिश नार्थ अमरीका कानून के सैक्शन 129 के अनुसार पहले से चले आ रहे कानूनो (existing laws) मे कनाडा की पार्लियामेंट परिवर्तन कर सकती है और वह उन्हे हटा भी सकती है। ऐसे चले आ रहे जिन कानूनो का सम्बन्ध प्रान्तो से है, उन्हे प्रान्तीय विधानमण्डल हटा सकते हैं और उनमे परिवर्तन भी कर सकते हैं। अब तक ब्रिटिश नॉर्थ अमरीका कानून मे कई सशोधन हो चुके हैं। अत उसका पूरा शीर्षक अब 'ब्रिटिश नॉर्थ अमरीका कानून 1867-1960' होना चाहिए। 1949 मे हुए ब्रिटिश नॉर्थ अमरीका कानून के सशोधन से सैक्शन 91 मे एक नया शीर्षक जुड गया, जिसके अनुसार अब कनाडा की पार्लियामेंट को दोनो सदनो के साधारण बहुमत से, उसमे वर्णित अपवादो को छोडकर 'कनाडा के सविधान' मे सशोधन करने की शक्ति प्राप्त है। अपवाद म ये बातें स्पष्ट रूप से सम्मिलित हैं—प्रान्तीय विधानमण्डलो की शक्तियाँ, स्कूलों के बारे मे अल्पसख्यको के अधिकार, अंग्रेजी व फ्रांसीसी भाषाओ के प्रयोग के सम्बन्ध मे दी गई गारण्टी यह शर्त कि कनाडा की पार्लियामेंट का प्रति वर्ष एक सत्र होगा, और यह प्राविधान कि कॉमन सभा की अवधि पाँच वर्ष से अधिक न होगी। इन विषयो के बारे में अभी तक ब्रिटिश पार्लियामेंट कनाडा के लिए कैसा भी सावैधानिक कानून बना सकती है। सिद्धान्त रूप मे यह शक्ति असीमित है, किन्तु व्यवहार म इसका प्रयोग केवल ऐसे सशोधन कराने के लिए ही हो सकेगा जो कि कनाडा की पार्लियामेंट नहीं कर सकती। अत इस समय कनाडा के लिए सावैधानिक कानून ब्रिटिश पार्लियामेंट, कनाडा की पार्लियामेंट और प्रान्तीय विधानमण्डलों द्वारा बनाये जा सकते हैं।

सोवियत सघ—सोवियत सघ का सविधान इस दृष्टि से अन्य सघात्मक संविधानो से बहुत भिन्न है। वहाँ पर सविधान की सशोधन विधि अत्यधिक सरल है सविधान के अनुच्छेद 146 म कहा गया है—सविधान म कोई भी सशोधन सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत कर सकती है, उसके लिए केवल यह आवश्यक है कि सशोधन प्रस्ताव के पक्ष म दोनो सदनो म 2/3 के बहुमत

से समथन प्राप्त होना चाहिए ।[1] यह विधि देखन म अनमनीय (rigid) है, परन्तु इसमे अनमनीयता नाम की ही है क्योकि सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो मे प्राय सभी सदस्य साम्यवादी होते हैं और वे दल के आदेश के अनुसार ही काय करते हैं । अतएव साम्यवादी दल किसी सशोधन प्रस्ताव को बिना कठिनाई के पास करा सकता है । इस सम्बन्ध मे एक बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है । वह यह है कि सोवियत सघ का सविधान सघात्मक है और उसके अनुसार सघ व सघीय गणराज्यो के बीच शक्तियो का वितरण हुआ है । भारत मे शक्तियो के वितरण से सम्बन्धित सशोधन प्रस्ताव का ससद मे पास होने के बाद कम से कम आधे राज्यो की विधायिकाओ द्वारा भी स्वीकृत होना आवश्यक है । सयुक्त राज्य अमरीका मे सभी सशोधन प्रस्तावो का सम्पुष्टिकरण कम से कम 3/4 राज्या की विधायिकाओ अथवा उनके द्वारा बुलाये गये राज्य सम्मेलनो द्वारा होता है । परन्तु सोवियत सघ मे ऐसी कोई व्यवस्था नही है । सशोधन प्रक्रिया मे गणराज्यो का कोई भाग नही है । इसका अथ यह हुआ कि सघीय सरकार अकले ही शक्तियो के वितरण मे जैसा चाहे सशोधन या परिवतन कर सकती है । इसी कारण यह कहा जाता है कि सोवियत सघ मे सघात्मक सिद्धान्त को सच्चे अथ म लागू नही किया गया है ।

इसके अतिरिक्त सोवियत सघ के सविधान मे प्रेसीडियम भी आज्ञप्ति द्वारा छोटे मोट सशोधन कर सकती है । उदाहरण के लिए, 1946 के बाद प्रेसीडियम ने अपनी एक आज्ञप्ति द्वारा सर्वोच्च सोवियत के सदस्यो की आयु की निम्नतम सीमा अठारह वष के स्थान पर तेईस वष की कर दी । इसी आधार पर अगली बार चुनाव हुए और बाद मे सर्वोच्च सोवियत ने इसी उद्देश्य से एक सशोधन पास कर दिया । 1944 मे सर्वोच्च सोवियत की प्रेसीडियम ने दो आज्ञप्तिया जारी की, जिसके परिणामस्वरूप विदेश सम्बन्ध, जो उस समय तक अन्यत सघ सरकार के अधिकार क्षेत्र मे थे, गणराज्यो को हस्तान्तरित किये गये । परन्तु आज्ञप्ति के अनुसार गणराज्या को शक्ति प्रदान की गई कि वे विदेशी राज्यो से सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं और अन्तर्राष्ट्रीय समझौते भी । दूसरी आज्ञप्ति द्वारा उन्हे पृथक सनिक सगठन सगठित करने की शक्ति दी गयी । तदनुसार उनकी शक्तियो म भी आवश्यक परिवतन किये गये ।

जापान—मेजी सविधान सम्राट द्वारा प्रदत्त था । सविधान म सशोधन तभी किया जा सकता था जबकि इस उद्देश्य से सशोधन-प्रस्ताव डायट के सामने सम्राट के आदेश द्वारा पेश किया जाता था और उसे प्रत्येक सदन मे उपस्थित सदस्यो के 2/3 सदस्यो के बहुमत से पास किया जाता था (इस काय के लिए सदन का बैठक म कुल सदस्यो के 2/3 को उपस्थित होना आवश्यक था) । यथाथ मे 1946 तक कोई सशोधन करने का गम्भीर प्रयत्न नही किया गया । परन्तु अब सविधान के निर्माण और उसम सशोधन करने की शक्ति जनता व उसके प्रतिनिधियो मे निहित है । सविधान सर्वोपरि कानून हैं परन्तु जापान म विधायिका की सर्वोपरिता (legislative supremacy) का सिद्धान्त अपनाया गया है । धारा 96 मे दिया गया सशोधन सम्बन्धी प्राविधान इस प्रकार है—सविधान मे सशोधन के प्रस्ताव का आरम्भ अथवा पहल डायट द्वारा किया जायेगा, जिसके पक्ष मे प्रत्येक सदन के कुछ सदस्या के 2/3 अथवा उससे अधिक सदस्या का मत होना आवश्यक है । उसके बाद सशोधन के प्रस्ताव पर जन निणय कराया जायगा । जन निणय म भाग लेन वाले मतदाताओ की बहुसख्या का मत सशोधन के पक्ष मे होन पर सशोधन स्वीकृत होगा । उसके तुरन्त बाद सम्राट ऐसे सशोधन को जनता के नाम मे सविधान के आवश्यक अग के रूप मे घोषित करेगा ।

[1] In the U S S R. it is the government which overshadows the constitution and monopolises the respect awe and obedience of the citizens —Wheare K C *op cit* p 114

पाचवाँ अध्याय

संघवाद—सिद्धान्त और व्यवहार

1 एकात्मक व सघात्मक शासन

सघटन व सघ (Confederation and Federation)—आजकल पहले प्रकार के राज्य प्राय नही रहे हैं। अब तो प्रवृत्ति सघ राज्यो की स्थापना की ओर है। इन दोनो प्रकार के शासना मे महत्त्वपूर्ण अन्तर है। सघटन के अन्तगत सदस्य राज्या को पूण प्रभुता प्राप्त रहती है, उसमे केन्द्रीय सरकार (सघटन) तो होती है किन्तु केन्द्रीय प्रभुता प्राप्त नही होती, केन्द्रीय सरकार तो केवल विभिन्न राज्यो द्वारा उसे प्रदान की गयी सत्ता व अधिकारो का ही प्रयोग कर सकती है। डेनियल विठ के अनुसार 'सघटन स्वतन्त्र राज्या का अत्यधिक ढीला ढाला सघटन होता है, जिसमे कुछ सामान्य राजनीतिक तन्त्र रहता है। इसकी सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसके द्वारा नये राज्य की रचना नही होती।'[1] इसके विपरीत सघ शासन मे सघीय व सघात्मक राज्यो की सरकारों के बीच शक्तियो का विभाजन होता है और दोना ही प्रकार की सरकारो का जनता से सीधा सम्बन्ध रहता है। कन्फेडरेशन का प्रत्यक सदस्य राज्य अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से स्वतन्त्र व सम्प्रभु रहता है। इसी कारण कन्फेडरेशन को अद्ध सघ कहते हैं, इसके बनने मे नये राज्य की रचना नही होती। सघ राज्य (federation) वास्तव म एक नये राज्य का रूप धारण करता है। सयुक्त राज्य अमरीका के विभिन्न सदस्य राज्या न पहले एक कन्फेडरेशन बनाया था जो सफलतापूवक न चल सका, अत 1787 मे फिलाडेलफिया सम्मेलन ने एक नये सघ राज्य को जन्म दिया। स्विटजरलण्ड के विभिन्न राज्यो के सघ का रूप भी प्रारम्भ मे कन्फेडरेशन जैसा ही था, किन्तु वह अब एक सघ राज्य है। भारत, कनाडा, आस्ट्रेलिया प्रमुख सघ राज्य हैं।

एक आधार पर आधुनिक सविधानो (या शासनो) को एकात्मक व सघात्मक मे बाँटा जा सकता है। इस वर्गीकरण का आधार शासन की शक्तियो का केन्द्र व प्रान्ता के बीच वितरण और सघात्मक स्वरूपो का आधार भूमिगत विभाजन (territorial division) है। आज के बड़े बड़े देशीय राज्या में शासन की सुविधा के लिए इस प्रकार का विभाजन अति आवश्यक और उपयोगी है। इसी कारण प्रत्यक राज्य म केन्द्रीय शासन के साथ साथ प्रादेशिक और स्थानीय प्रशासन की व्यवस्था होती है। स्थानीय प्रशासन या स्वशासन की व्यवस्था तो आजकल सभी राज्यो म मिलती है। अत यहाँ पर भूमिगत विभाजन से हमारा अथ शक्तियो का केन्द्र व प्रान्ता के बीच विभाजन से है।

एकात्मक शासन—इस प्रकार के शासन म शासन की सर्वोच्च शक्तियाँ केन्द्रीय सरकार म

[1] The confederation may be defined as the loosest possible association of independent states having some common political machinery The most-conspicuous characteristic of the confederation is that it does not create a new state —Wit D *Comparative Political Institutions* pp 64-65

निहित होती हैं। केन्द्रीय सरकार इतनी शक्तिशाली होती है कि वह राज्य के प्रादेशिक विभागो का अन्त कर सकती है या उनमे किसी भी प्रकार का परिवतन कर सकती है। प्रान्तीय सरकारो को जो भी शक्तिया प्राप्त होती हैं वे केन्द्रीय सरकार द्वारा दी हुई होती हैं तथा केन्द्रीय सरकार उनकी शक्तियो मे जब चाहे और जैसा चाहे परिवतन कर सकती है। अत प्रान्तीय सरकारें केन्द्रीय सरकार के प्रतिनिधि रूप (agents) होती हैं। इस प्रकार से एकात्मक शासन मे राज्य एक ही रहता है।[1] एकात्मक शासन का सबसे अच्छा उदाहरण ब्रिटेन का शासन है। वहा पर पालियामेन्ट को सभी प्रकार की शक्तिया प्राप्त है, इसी कारण इसे सर्वोपरि कहते है। यह सम्पूण राज्य के लिए किसी भी प्रकार का कानून बना सकती है और इसके बनाये हुए कानूनो को सारे राज्य को मानना आवश्यक है। न्यायालय इन कानूनो को अवैध घोषित नही कर सकते। इस प्रकार ब्रिटेन मे सारी शक्तियाँ पालियामेन्ट म निहित हैं। परन्तु इसका यह अथ कदापि नही कि पालियामेन्ट राज्य के सभी छोटे और बडे कार्यो की देख-रेख स्वय करती है और ऐसा होना सम्भव भी नही है। वास्तव म, प्रशासन की सुविधा के लिए राज्य अनेक स्थानीय क्षेत्रो मे बँटा है और उनमे से प्रत्येक को अपने अपने क्षेत्र म कुछ स्वशासन के अधिकार प्राप्त है और पालियामेन्ट इनके अधिकारो म जब चाहे कोई भी परिवतन कर सकती है।

सघात्मक शासन—जब कुछ स्वतन्त्र राज्य अपने कुछ सामान्य उद्देश्यो की पूर्ति के लिए एक केन्द्रीय शासन सगठित करते है और शेष विषयो मे वे अपनी अपनी स्वायत्तता सुरक्षित रखते है, तो ऐसे राज्यो मे सघात्मक शासन की स्थापना होती है। सघ शासन के निर्माण का दूसरा ढग यह भी है कि वहत् क्षेत्र वाले देश (जैसे कनाडा या भारत), जहाँ पर पहले से एकात्मक शासन रहा हो, अपनी इकाइयो को कुछ स्वायत्तता प्रदान कर दें और शासन की शक्तिया केन्द्रीय सरकार के हाथो मे केन्द्रित न रहे वरन् इसमे शक्तियो को स्पष्ट और निश्चित रूप से केन्द्रीय (अथवा सघीय) शासन तथा प्रान्तो (अथवा उप-राज्यो) के बीच विभाजित कर दिया जाय। यह विभाजन सविधान के द्वारा है, जो लिखित होना चाहिए। अत सघात्मक शासन की प्रथम आधारभूत शत यह है कि एक लिखित सविधान हो, जो दुस्सशोध्य होना चाहिए जिससे कि शक्तियो के विभाजन म कोई परिवतन किसी एक सरकार की इच्छा से न हो पाये।[2] इसकी दूसरी आधारभूत शत शासन की शक्तियो का बटवारा है। इस विभाजन के कारण ही तो इसे दूहरी सरकार कह देते है। सघात्मक शासन की एक तीसरी आधारभूत शत सर्वोच्च न्यायालय का होना भी है। चूकि इसमे शक्तियो का बँटवारा होता है और यह बँटवारा सविधान द्वारा किया जाता है, इसलिए एक दूसरे के अधिकार क्षेत्र म कोई हस्तक्षेप नही होना चाहिए। यदि कभी किसी अधिकार के बारे म यह विवाद उठे कि वह किसके अधिकार क्षेत्र मे है या कभी सविधान की धाराओ के निवचन के बारे मे मतभेद उत्पन्न हो जाय तो ऐसे विवाद का निणय करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय का होना अनिवाय है। ऐसे राज्य मे सघीय सरकार व उप राज्यो की सरकारो का दरजा (status) साविधानिक कानूनो के समक्ष समान होता है और सविधान सर्वोपरि हाता है। कोई भी सरकार सविधान के प्राविधानो के विरुद्ध कैसा भी कानून

---

[1] Where the whole power of government is conferred by the constitution upon a single central organ or organs from which the local governments derive whatever authority or autonomy they may possess and indeed their very existence we have a system of unitary government —Garner J W *Political Science and Government* p 317

[2] Federal government is a system in which the totality of governmental power is divided and distributed by the national constitution or the organic act of parliament creating it between a central government and the government of the individual states or other territorial sub-divisions of which the federation is composed *Ibid* p 318

नही बना सकती। डायसी के अनुसार 'संघ राष्ट्रीय एकता और शक्ति तथा राज्य के अधिकारों म समन्वय स्थापित करने का एक राजनीतिक प्रयत्न या उपाय है।'[1] संक्षेप म, संघात्मक शासन की ये विशेषताएँ होती है—(1) एक लिखित और दुस्संशोध्य संविधान, (2) शासन शक्तियों का विभाजन, और (3) सर्वोच्च न्यायालय। मर्कल के मतानुसार संघात्मक पद्धतियों की य सामान्य विशेषताएँ है—(1) संघान्तरित सदस्यों (इकाइयों) की स्वायत्तता, (2) संघान्तरित सदस्यों की समता, और (3) संविधान के निर्वचन के लिये व्यवस्था।[2]

एकात्मक और संघात्मक सरकारों के बीच अन्तर—फाइनर के शब्दों मे एकात्मक और संघात्मक सरकारो के बीच अन्तर अग्रलिखित है—एकात्मक राज्य वह होता है जिसमे सम्पूर्ण सत्ता और शक्ति एक ही केन्द्र म निहित की जाती हैं, जिसकी इच्छा और अभिकर्त्ता सम्पूर्ण राज्य-क्षेत्र म कानूनी दृष्टि से सर्वशक्तिशाली होते हैं, जबकि संघात्मक राज्य वह है जिसमे सत्ता और शक्ति का एक अंश स्थानीय क्षेत्रों मे निहित होता है और दूसरा अंश केन्द्रीय संस्था म निहित होता है, जिसकी रचना जान बूझकर पूर्वगामी स्वतन्त्र क्षेत्रो के संघ द्वारा की जाती है।[3] दोनों प्रकार के शासन का विवेचन करने के उपरान्त उन दोनो के बीच अन्तर की मुख्य बातो को हम इस प्रकार रख सकते हैं—(1) एकात्मक शासन एक इकाई अथवा एक होता है। संघीय शासन मे सत्ता एक संघ एवं राज्य सरकार को प्राप्त होती है। एकात्मक शासन मे शासन की सर्वोच्च शक्तियाँ केन्द्रीय सरकार को प्राप्त होती हैं, प्रान्तो को इसी मे शक्तियाँ मिली होती हैं। संघात्मक शासन मे शक्तियो का विभाजन संविधान द्वारा किया जाता है और संविधान सर्वोपरि होता है। (2) एकात्मक राज्य म प्रान्त केवल प्रशासनिक इकाइयाँ होते है, जो केन्द्रीय सरकार के अंग प्रत्यंग ही होते है। संघीय राज्य मे उपराज्य (अथवा प्रान्त) अपने अधिकार क्षेत्र मे स्वतन्त्र होते हैं। एकात्मक सरकार प्रान्तो की रचना व शक्तियों मे जब चाहे और जैसा चाहे परिवर्तन कर सकती है। इस प्रकार की शक्ति संघीय सरकार को प्राप्त नहीं होती। संघ राज्य मे संविधान के प्राविधानो के अनुसार ही किसी प्रकार के परिवर्तन किये जा सकते हैं। (3) एकात्मक शासन मे केन्द्रीय सरकार सर्वोपरि होती है, जब कभी कोई विवाद उठता है तो यही उसका निर्णय कर देती है। इसके विपरीत, संघीय शासन में सभी प्रकार के सांविधानिक विवादों का निर्णय सर्वोच्च न्यायालय करता है।

संघात्मक शासन के गुण व दोष—सर्वप्रथम, इसमे राष्ट्रीय शक्ति और स्थानीय स्वतन्त्रता का सुन्दर समन्वय होता है। संघ मे सम्मिलित छोटे-छोटे निर्बल राज्य शक्तिशाली शत्रु राष्ट्रों के आक्रमणो स अपने को सुरक्षित बना लेते हैं और साथ ही प्रादेशिक स्वतन्त्रता का भी उपभोग कर सकते हैं। 'संगठन ही शक्ति है' वाली सर्वविदित उक्ति संघ राज्य के विषय म सर्वथा सत्य है। दूसरे, ऐसे शासन में राष्ट्रीय महत्त्व के विषय संघात्मक सरकार को मिले होते हैं और प्रादेशिक अथवा क्षेत्रीय महत्त्व के विषयो का प्रशासन उप राज्यो के द्वारा किया जाता है। इसम एकता और विभिन्नता का बडा सुन्दर समन्वय होता है। तीसरे, संघ शासन प्रणाली मे प्रान्तीय समस्याओं का निराकरण करने के लिए उसी स्थान के योग्य व्यक्तियो का सहयोग प्राप्त हो जाता है। राज्य की राजधानी म शासन को चलाने वाले राजनीतिज्ञ सुदूरवर्ती प्रादेशिक समस्याओं को भली प्रकार नही समझ सकते। चौथे, इस शासन प्रणाली मे अधिक व्यक्तियो का शासन-कार्यों मे भाग लेने का अवसर मिलता है। अतः सार्वजनिक कार्यों मे भाग लेने की उनकी रुचि को प्रोत्साहन मिलता है

[1] A federal state is nothing but a political contrivance intended to reconcile national unity with the maintenance of state rights Dicey

[2] Merkl Peter H, *Political Continuity and Change* pp 405-08

[3] Finer H, *Theory and Practice of Modern Government* p 166

और स्वशासन के लिए उनका आवश्यक प्रशिक्षण हो जाता है। इस प्रकार नागरिकों की प्रशासन-सम्बन्धी दक्षता बढ़ती है। सत्ता के विकेन्द्रीकरण के लिए स्थानीय शासन से अधिक अच्छी व्यवस्था सघवाद द्वारा की जाती है, क्योंकि यह राष्ट्रीय और प्रादेशिक सरकारों को सत्ता प्रदान करने के लिए सावैधानिक व्यवस्था करता है।[1] सघवाद उदारवाद की महत्त्वपूर्ण प्रत्याभूति (गारण्टी) है। इस विषय मे लार्ड एक्टन का कथन है 'प्रजातन्त्र पर लगे सभी निरोधों मे सघवाद सबसे अधिक प्रभावी और अनुकूल रहा है। सघात्मक पद्धति प्रभुत्व शक्ति को विभाजित कर तथा सरकार को केवल पारिभाषित अधिकार प्रदान कर प्रभुता को सीमित व प्रतिबन्धित करती है। यही अकेली विधि है जो कि केवल बहुसख्या की ही नही वरन् सम्पूर्ण जनता की शक्ति पर रोक लगाती है।'

सघात्मक शासन के प्रमुख दोष अग्रलिखित हैं—(1) विदेश नीति के सचालन मे दुर्बलता—बहुधा उप राज्यों की सरकारें विदेशों के साथ की गयी सन्धियों की शर्तों का पूरा करने मे अनेक प्रकार की अडचनें डालकर सघीय सरकार के मार्ग मे कठिनाइया पैदा कर देती है। (2) आन्तरिक शासन म दुर्बलता—इसमे शासन शक्तियो का विभाजन अनिवार्य है। परिणाम स्वरूप केन्द्र और उप राज्य दोनो ही निर्बल हो जाते है। (3) सघ के भग होने और सघ मे प्रति स्पर्धी गुट बनाने की आशका—राज्यों मे विद्रोह या पृथक्करण की भावना के कारण सघ के भग होने की आशका बनी रहती है, क्योंकि प्रत्येक इकाई राज्य की स्वतन्त्र सरकार होती है, जो अपने स्वार्थसाधन के लिए कभी भी ऐसे प्रयत्न कर सकती है। (4) राज्यो मे प्रशासन एव कानूनो की एकता का अभाव—सघ शासन प्रणाली का एक बडा दोष यह भी है कि उप राज्यो म कानूनो और प्रशासन की एकरूपता नही रहती। बहुधा विभिन्न उप राज्यो मे दण्ड विधान, विवाह और तलाक, श्रम आदि महत्त्वपूर्ण विषयों के सम्बन्ध म परस्पर विरोधी कानून बन जाते है। (5) दूहरे शासन के कारण अपव्यय, विलम्ब तथा अनुत्तरदायित्व—सघात्मक शासन प्रणाली मे दूसरे प्रशासन के कारण शासन-व्यय बहुत बढ जाता है। इसके अतिरिक्त निर्णय और काम करने मे देरी होती है।[3]

2 सयुक्त राज्य अमरीका मे सघात्मक व्यवस्था

सयुक्त राज्य अमरीका मे सघ का निर्माण स्वतन्त्र राज्यों द्वारा हुआ, जिन्होने अपनी प्रभुता का कुछ अश सघात्मक सरकार को सौपा। इसके विपरीत भारत और कनाडा मे एकात्मक सरकार को सघात्मक रूप दिया गया और इकाइयो को स्वाधीन शासन के अधिकार प्रदान किये गये। सयुक्त राज्य अमरीका की सघात्मक (अथवा राष्ट्रीय) सरकार अपने क्षेत्राधिकार म स्वतन्त्र है परन्तु यह शासन सचालन सुगमतापूर्वक तभी कर सकती है जबकि राज्य सरकारें अपने अपने क्षेत्र मे अपने कृत्यो का पालन करें। इस दृष्टि से राष्ट्रीय सरकार राज्यों के अस्तित्व पर निर्भर है। यह बात कुछ उदाहरणों से स्पष्ट हो जायेगी—पहले, सीनेट के सदस्यो का चुनाव राज्यो के मतदाताओं द्वारा होता है और प्रतिनिधि सदन के सदस्यो का चुनाव राज्यो द्वारा निर्मित निर्वाचन

[1] Federalism is a much more effective means of providing deconcentration of authority than local government since it establishes constitutional arrangements allocating power to the regional as well as to the national governments —Carter and Herz *op cit* p 90

[2] Finer H *op cit* p 189

[3] In general federal government is more complex more productive of difficulty and inconvenience and less capable of swift action than unitary government —Stewart M *op cit* p 149

क्षेत्र में होता है। दूसरे, राष्ट्रपति के निर्वाचन में भाग लेने वाले निर्वाचकों का चुनाव भी राज्यों द्वारा कराया जाता है। तीसरे, संविधान में प्रत्येक संशोधन प्रस्ताव की सम्पुष्टि राज्यों के द्वारा की जाती है।

इस समय संयुक्त राज्य अमरीकी संघ में 50 राज्य हैं। संविधान की धारा 4, सैक्शन 3 के अन्तर्गत कांग्रेस को नये राज्यों के प्रवेश के बारे में पूर्ण शक्ति प्राप्त है। जब किसी प्रदेश की जनसंख्या कम से कम 60,000 हो जाय, तो वहाँ की जनता कांग्रेस से उसे नया राज्य बनवाने के लिए प्रार्थना कर सकती है। प्रवेश प्रक्रिया में साधारणतया ये क्रम अन्तर्ग्रस्त हैं—(1) उस प्रदेश का शासन संगठित किया जाता है। (2) प्रदेश संघ में सम्मिलित होने के लिए प्रार्थना-पत्र देता है। (3) कांग्रेस कानून (Enabling Act) बनाती है, जिसमें उस प्रदेश के लिए अपना संविधान बनाने की रूपरेखा दी जाती है। (4) प्रदेश संविधान बनाता है। (5) कांग्रेस प्रदेश के सम्बन्ध में प्रस्ताव पास करती है। कांग्रेस किसी प्रदेश की प्रार्थना स्वीकार करने से पूर्व कुछ शर्तें पूरी करा सकती है। अलास्का और हवाई द्वीप समूह संयुक्त राज्य अमरीका के नये राज्य हैं।

संविधान द्वारा संघ सरकार और राज्य सरकारों की शक्तियाँ विभाजित कर दी गई हैं। शक्तियों का विभाजन इन आधारों पर हुआ है—(1) संघ सरकार को अनेक महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ स्पष्ट रूप से संविधान द्वारा दी गयी हैं। (2) संघ सरकार को कुछ निहित शक्तियाँ (implied powers) भी प्राप्त हैं। (3) कुछ शक्तियाँ ऐसी हैं जो राज्यों के लिए आरक्षित (reserved) हैं। (4) कुछ शक्तियाँ समवर्ती (concurrent) हैं अर्थात् जिनका प्रयोग संघ व राज्य सरकारें कर सकती हैं। (5) कुछ शक्तियों की मनाही संघ सरकार को की गई है। (6) कुछ शक्तियों की मनाही राज्य सरकारों को गयी है। इन आधारों पर संघ सरकारों को प्रदान की गयी अथवा मना की गयी महत्त्वपूर्ण शक्तियों के कुछ उदाहरण दिए जाते हैं।

प्रदान की गयी शक्तियाँ—कर लगाना, ऋण लेना और सिक्के बनाना, डाकखाने और डाक मार्ग स्थापित करना, पेटेंट और कॉपीराइट प्रदान करना, अन्तरराज्यीय और वैदेशिक वाणिज्य विनियमित करना, सेना और नाविक सेना रखना, प्रदेशों और सम्पत्ति का शासन करना, वैदेशिक सम्बन्धों का संचालन करना और नाप व तौल के पैमाने नियत करना। संविधान की धारा 1 और सैक्शन 8 में वर्णित इन शक्तियों के अतिरिक्त कांग्रेस को संविधान द्वारा इन शक्तियों तथा अन्य शक्तियों के संचालन के लिए सभी प्रकार के आवश्यक व उचित कानून बनाने की शक्ति भी मिली है। यही निहित शक्तियों के सिद्धान्त का आधार है, जिसका विवेचन दूसरे अध्याय में किया जा चुका है।

राज्य सरकारों की शक्तियाँ—(क) जो उनके लिए आरक्षित हैं—राज्य के आन्तरिक वाणिज्य को विनियमित करना, स्थानीय शासन स्थापित करना, जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करना और व्यवस्था रखना, चुनावों का संचालन करना, राज्य के शासन व संविधान में परिवर्तन करना, आदि। (ख) राज्यों को जिन शक्तियों की मनाही की गयी है वे ये हैं—सेना न रखना, संधि न करना, व्यक्तियों को कानूनों के समरक्षण से वंचित करना, संघीय संविधान व कानूनों में बाधा डालना, व्यक्तियों को प्रजाति (race), रंग अथवा लिंग के आधार पर मताधिकार से वंचित करना, इत्यादि।

संघ व राज्य सरकारों की समवर्ती शक्तियाँ—कर लगाना, ऋण लेना, बैंक तथा कॉर्पोरेशन को चार्टर देना, कानून बनाना और उन्हें लागू करना, सार्वजनिक प्रयोजनों के लिए सम्पत्ति लेना और सामान्य कल्याण के लिए व्यवस्था करना।

देश का सर्वोपरि कानून—संविधान और उसके अन्तर्गत बनाये गये कानून, संयुक्त राज्य अमरीका की सत्ता के अधीन की गयी या की जाने वाली सन्धियाँ राज्य के सर्वोच्च कानून हैं।

यदि कभी किसी प्रश्न पर सघ व राज्यो के बीच कोई विवाद उठे तो उसका अ तिम निणय न्याय पालिका करती है। सविधान का निवचन तथा अतिक्रमण करने वाले कानूनो को अवैध घोषित करने की शक्तियाँ भी सघात्मक न्यायपालिका को प्राप्त है। इसी कारण न्यायपालिका को सविधान का सरक्षक कहा जाता है।

राज्यो की स्थिति—राज्यो पर मुख्यत प्रतिबन्ध अथवा सीमाएँ इस प्रकार हैं—(1) कोई भी राज्य किसी भी स धि, समझौतो पर आधारित सगठन (alliance) अथवा सघटन (confederation) मे प्रवेश नही कर सकता। इसी धारा से सघ को वैदेशिक सम्ब धो मे अन य नियन्त्रण (exclusive control) प्राप्त हो गया है। उदाहरण के लिए, न्यूयाक राज्य कनाडा के साथ सेन्ट लारेन्स नदी के विषय मे भी कोई समझौता नही कर सकता। (2) राज्य सरकारें सिक्के नही बना सकती। (3) काग्रेस की सहमति के बिना राज्यो को सेना तथा युद्ध के जहाज रखने का अधिकार नही है। इसके अतिरिक्त, कोई राज्य अपने आप युद्ध मे भी प्रवेश नही कर सकता। (4) राज्या को आयात व निर्यात पर कर लगाने के अधिकार नही हैं। (5) सविधान ने मताधिकार के सम्बन्ध म प्राय सम्पूण शक्तियाँ राज्यो को सौंपी थी, परन्तु पन्द्रहवें और उन्नीसवें सशोधनो द्वारा स्थिति बहुत बदल गयी है। प द्रहवाँ सशोधन तो केवल यह कहता है कि राज्य सरकारें मूल जाति, रग अथवा दासता की पूव दशा के आधार पर सयुक्त राज्य के किसी नागरिक को मताधिकार से वचित नही कर सकती अथवा उसके मताधिकार को कम भी नही कर सकती। उन्नीसवें सशोधन ने लिंग के आधार पर मताधिकार के सम्ब ध मे प्रचलित भेदभाव का पूणत अ त कर दिया।

सघ और राज्यों के एक दूसरे के प्रति दायित्व (Obligations)—सरकार के राज्यो के प्रति दायित्व ये हैं—(1) किसी भी राज्य की सीमाओ मे उसकी सहमति के बिना सघ सरकार कोई परिवतन नही कर सकती। (2) सघ सरकार के लिए प्रत्येक राज्य की विदेशी आक्रमण के विरुद्ध रक्षा करनी आवश्यक है। (3) सघ सरकार की ओर से प्रत्येक राज्य को यह प्रत्याभूति (guarantee) है कि वहाँ गणतन्त्रीय शासन बना रहेगा और यदि कभी राज्य को आन्तरिक अव्यवस्था या क्रा ति से खतरा हो तो सघ सरकार उस राज्य की सहायता करेगी। (4) सघ की सीनेट मे प्रत्येक राज्य का सम प्रतिनिधित्व रहेगा। (5) सघ सरकार आ तरिक कर इस प्रकार से लगायेगी कि वे सम्पूण राज्य मे एक रूप हो और किसी राज्य विशेष के विरुद्ध भेद भाव की नीति पर आधारित न हो। जिस प्रकार से सघ सरकार के राज्यो के प्रति अनक दायित्व है—प्रथम, चुनावा के लिए सघ सरकार की कोई पथक् व्यवस्था नही है अत राज्य सरकारें ही सघीय अधिकारिया—काग्रेस, राष्ट्रपति व उप राष्ट्रपति के चुनावा का सचालन करती है। दूसरे, राज्या को सविधान मे सशोधन की प्रक्रिया मे भाग लेना होता है।

वतमान स्थिति यह है कि कानून की दृष्टि से सविधान सर्वोपरि है और अपने अपने क्षेत्र मे सघ व राज्य सरकारें सम्प्रभु है। वास्तव म देखा जाय तो, जैसा स्वतन्त्रता की घोषणा म कहा गया है, सभी सरकारें अपनी शक्तिया शासितो की सहमति से प्राप्त करती है, अत अन्तिम सत्ता अथवा प्रभुता जनता मे निहित है, सरकारें तो केवल उसका प्रयोग करती है। अब यथाथ स्थिति यह है कि प्रभुता का अधिवास कही भी हा, सघीय सरकार की सर्वोपरिता स्थापित हो गयी है। विभिन्न कारणो से सघ सरकार की सत्ता म अप्रत्याशित वद्धि हो गयी है। इन कारणो का सक्षिप्त विवेचन यहाँ दिया जाता है (1) सघ सरकार को सौंपी गयी शक्तियो का प्रयोग सम्पूण राज्य क्षेत्र और नागरिका के ऊपर किया जाता है। स्वभावत उसकी शक्तियो का महत्त्व राष्ट्रीय तथा अ तर्राष्ट्रीय है। वतमान युग मे सभी देशो मे केन्द्रीकरण की दिशा मे वद्धि हुई है और यह बात सयुक्त राज्य अमरीका के सम्बन्ध मे पूणत सत्य है। वैदेशिक सम्बन्धो और अन्तर्राष्ट्रीयता के

मामले के बारे मे काय सौप सकता है जो कि सघ की कायपालिका शक्ति के क्षेत्र म आता हो। ससद द्वारा बनाये गये किसी भी एसे कानून के अतगत जो राज्य सरकार के क्षेत्र से बाहर हो सघ द्वारा राज्य सरकार अथवा उसके अधिकारियो को शक्तियाँ अथवा कत्तव्य सौंपे जा सकते हैं। ऐसे मामलो मे सघ सरकार को उस अतिरिक्त व्यय का भार उठाना होगा जो कि ऐसे कानूनो के प्रशासन मे राज्य सरकार को करना पडेगा। 1935 के भारतीय शासन अधिनियम क अतगत केन्द्र द्वारा प्रा तीय सरकारो को दिय गये निदेशो को पूरा न करने की अवस्था म किसी प्रकार के दण्ड की व्यवस्था न थी। उन निदेशो को गवनर-जनरल के विशेष उत्तरदायित्व द्वारा पूरा करा जा सकता था। परन्तु भारतीय सविधान के अनुच्छेद 365 के अनुसार राष्ट्रपति को यह अधिकार मिला है कि वह उस राज्य मे निदेशो का उचित पालन न किये जाने पर आपात् कालीन उद्घोषणा लागू करके शासन को अपने हाथ मे ले सकता है।

यदि किसी ऐसी नदी के पानी से उपयोग, वितरण या नियन्त्रण के बारे म जो कि एक से अधिक राज्यो की सीमा मे बहती हो, कभी कोई विवाद उठे तो ऐसे विवादो को न्यायिक निणय कराने के लिए ससद कानून बना सकती है। यदि कभी भी राष्ट्रपति को ऐसा प्रतीत हो कि एक अतरराज्य परिषद् (Inter State Council) की स्थापना से सावजनिक हितो की पूर्ति होगी तो वह अग्रलिखित कार्यों को करने के लिए ऐसी परिषद् की स्थापना कर सकता है (1) राज्यो के बीच उत्पन्न होने वाले विवादो की जाँच करना और उनके बारे म सलाह देना, (2) ऐसे विषयो की विवेचना अथवा छानबीन करना जिनम एक स अधिक राज्यो का सामान्य हित हो, (3) ऐसे ही किसी विषय के बारे मे सिफारिश करना या नीति मे अधिक अच्छा समन्वय लाना।

जब कभी ऐसी परिषद् की स्थापना करना उचित समझा जायगा राष्ट्रपति ही उसके सगठन और कत्तव्यो का निर्धारण करेगा। इस प्रकार की अन्तरप्रान्तीय परिषद् क निर्माण की व्यवस्था 1935 के सविधान मे भी थी। सविधान के अन्तगत ससद के कानून द्वारा दो प्रमुख भारतीय सेवायें निर्मित हुई है—भारतीय प्रशासन सेवा (Indian Administrative Service) और भारतीय पुलिस सेवा (Indian Police Service)। इन सेवाओ के सदस्यो की भर्ती और उनकी सवाओ की शर्तों पर पूण नियन्त्रण ससद अर्थात् सघ सरकार का है। इन सेवाओ के अनेक अधिकारी सभी राज्यो मे उच्च पदो पर रहते है और उनके द्वारा सघ सरकार उन राज्यो के प्रशासन पर काफी नियन्त्रण रखती है। सघ सरकार विभिन्न राज्यो को विभिन्न कार्यों या योजनाओ को पूरा करने के लिए आर्थिक सहायता (grant in aid) भी देती है, फलस्वरूप वह इन कार्यों के करने क सम्बन्ध मे उन्हें आवश्यक निदेश व आदेश भी देती रहती है। अन्त म, राज्य पुनगठन के फलस्वरूप विभिन्न राज्यो को कुछ जानल परिषदो (zonal councils) मे रखा गया है।

विधायी सम्बन्ध—विधायी सम्बन्धो को भली प्रकार से समझने के लिए हम सवप्रथम शक्तियो के वितरण को जानना होगा। भारत के सविधान मे सघीय, राज्य और समवर्ती (concurrent) सूचियो की व्यवस्था है। अवशिष्ट शक्तियाँ सघ सरकार को ही प्रदान की गयी हैं। प्रत्येक सूची म सम्मिलित विषय निम्नलिखित हैं

सघीय सूची—सघीय सूची क अन्तगत कुल 97 विषय हैं, जो इस प्रकार हैं—प्रतिरक्षा सेनाएँ, विदेश सम्बन्ध, युद्ध और शान्ति, राष्ट्रीयकरण और नागरिकता, विदेशियो का आना, विदेशो मे जाना, रेलें, जहाजरानी, बन्दरगाह, हवाई माग, डाक, तार, टेलीफोन व बेतार, ससद व राष्ट्रपति के चुनाव, सर्वोच्च न्यायालय का सगठन, सघ के लेखा की जाँच, बैंक, बीमा, पेटेन्ट, कॉपीराइट, नाप व तौल के पैमाने स्थिर करना, खानें और खनिज पदाथ, चलचित्रो पर स्वीकृति

देना, ऐसे उद्योग जिनका सघ द्वारा नियन्त्रण सावजनिक हित मे समझा जाय, औद्योगिक विवाद, राष्ट्रीय पुस्तकालय, राष्ट्रीय अजायबघर व अन्य सस्थायें जिनका व्यय-भार सघ सरकार पर हो, दिल्ली, शान्ति निकेतन, अलीगढ, बनारस व उस्मानिया विश्वविद्यालय, प्राचीन और ऐतिहासिक महत्त्व की इमारतें, खेती की आय छोडकर अन्य आय पर आय कर, आयात व निर्यात कर, तम्बाकू व अफीम आदि पर महसूल, कारपोरेशन कर, सम्पत्ति कर, रेलो व हवाई जहाजो द्वारा ले जाये जाने वाले सामान व यात्रियो पर सीमा शुल्क, समाचार-पत्रो की खरीद और बिक्री पर कर।

राज्य सूची—इस सूची मे सम्मिलित राज्यो के अधिकार क्षेत्र मे आने वाले 68 विषय है, जैसे—सावजनिक व्यवस्था, पुलिस, न्याय का प्रशासन, जेलें, स्थानीय शासन, सावजनिक स्वास्थ्य व सफाई, नशीली वस्तुयें, शिक्षा, पुस्तकालय, अजायबघर, सडकें, पुल व घाट, कृषि-व्यवस्था, सिचाई, जगल जगली जानवरो व चिडियो की रक्षा, मछली, गैस, वे उद्योग जो पहली सूची मे न आये हो, राज्य के भीतर व्यापार व वाणिज्य, वस्तुओ की उत्पत्ति व उनका वितरण, नाटक घर, राज्य लोक सेवा आयोग, जुआ और घुडदौड, सावजनिक निर्माण काय, कृषि-आय पर कर, कृषि भूमि पर सम्पत्ति कर, राज्य मे बनी अथवा उत्पन्न वस्तुओ पर महसूल, बिजली की खपत व बिक्री पर कर, विज्ञापन पर कर, गाडियो, नावो व पशुओ पर कर, व्यापार कर, राज्य मे स्थित सभी न्यायालयो का अधिकार क्षेत्र, स्टाम्प फीस इत्यादि।

समवर्ती सूची—इस सूची मे कुल 47 विषय सम्मिलित है, जो मुख्यतया इस प्रकार है—फौजदारी कानून और प्रक्रिया, राज्य की सुरक्षा से सम्बन्धित कारणो पर निवारक निरोध, सावजनिक व्यवस्था बनाये रखना, जनता के जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओ और सेवाओ को चालू रखना, विवाह और तलाक, ठेके और साझेदारी, दिवाला निकालना, दिवानी प्रक्रिया, पागलपन, जानवरो पर निदयता को रोकना, मजदूर सघ, आर्थिक और सामाजिक नियोजन, सामाजिक सुरक्षा और बीमा, मजदूरो का कल्याण, विस्थापितो की सहायता व पुनर्वास, जीवन सम्बन्धी आँकडे इकट्ठे करना, दान और दान की सस्थाये, कीमत पर नियन्त्रण, कारखाने, बिजली, समाचार पत्र, पुस्तकें और छापेखाने इत्यादि।

विधायी शक्तियों का वितरण—ससद को सम्पूर्ण देश के लिए साधारण काल मे सघ व समवर्ती सूची मे दिये गये सभी विषयो पर कानून बनाने की शक्ति प्राप्त है। आपात्कालीन म ससद सम्पूर्ण देश के लिए तीनो सूचियो के सभी विषयो पर कानून बना सकती है। स्वशासित राज्यो के लिए ससद आपात्काल को छोडकर अर्थात् साधारण काल मे केवल इन विशेष परिस्थितियो मे ही कानून बना सकती है—(1) जबकि राज्य सभा 2/3 के बहुमत से यह प्रस्ताव पास करे कि राष्ट्रीय हित मे ससद को राज्य सूची के अमुक विषय पर कानून बनाना चाहिए। (2) जब एक से अधिक राज्यो के विधानमण्डल प्रस्ताव पास करके ससद से यह प्रार्थना करें कि वह उनके लिए विषय विशेष पर कानून बना द।

यदि समवर्ती सूची के किसी विषय पर राज्य के विधानमण्डल और ससद द्वारा बनाय गय कानून मे विरोध हो तो मान्यता ससद के कानून को मिलेगी। केवल ससद ही अवशिष्ट विषयो पर कानून बनाने की शक्ति रखती है। इसके अतिरिक्त ससद को यह शक्ति प्राप्त है कि वह देश अथवा किसी भाग के लिए कोई ऐसा कानून बनाये जो किसी सन्धि, समझौते या अभिसमय जो कि किसी विदेश या विदेशो के साथ किया गया हो या किसी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन या सघ आदि द्वारा जो निणय किया गया हो उनको काय रूप देने के लिए आवश्यक हो। इस सम्बन्ध म यह भी ध्यान रखना चाहिए कि यदि किसी राज्य म सांविधानिक शासन की विफलता के प। आपातकालीन उद्घोषणा लागू की जाय तो राज्य विधानमण्डल के सभी काय या तो पूरा करती है या वह राष्ट्रपति को अथवा उसके द्वारा नियुक्त किसी अधिकारी को वे

सौंप सकती है। साथ ही कुछ विशेष प्रकार के विधेयकों को राज्य विधानमण्डल द्वारा पास हो जाने पर राज्य का गवर्नर राष्ट्रपति की अनुमति के लिए रोक सकता है तथा कुछ विशेष विधेयक राज्य के विधानमण्डलों में राष्ट्रपति की पूर्व सहमति पर ही पेश किये जा सकते हैं।

श्री के० संतानम के अनुसार कुछ ऐसे विषय हैं जो राज्य सूची में आते हैं, किन्तु जिन पर केन्द्र ने अधिकार कर लिया है। उदाहरण के लिए, अजायबघर राष्ट्रीय मामलों में सम्मिलित है, किन्तु संविधान के प्रारम्भ से ही ये संस्थायें—राष्ट्रीय पुस्तकालय, भारतीय अजायबघर इम्पीरियल वार म्युजियम, विक्टोरिया मेमोरियल और ऐसी ही संस्थायें जिन्हें संघ सरकार सहायता दे और राष्ट्रीय महत्त्व की संस्थायें घोषित करें, संघ सरकार के अधीन हैं और रहेंगी। ऐसे ही शिक्षा और विश्वविद्यालय राज्यीय विषय हैं, किन्तु कई विश्वविद्यालय संघ सरकार के अधीन हैं। इसके अतिरिक्त दो विषय ऐसे हैं जिनके द्वारा संघ सरकार राज्यों पर अधिक नियन्त्रण रख सकेगी—प्रथम, चुनाव, और दूसरा, लेखों की जाँच। अन्य संघीय संविधानों के अन्तर्गत संघीय संस्थाओं के चुनावों को संघ सरकारें विनियमित करती हैं, किन्तु भारत में राज्यों के चुनावों को भी संसद के नियन्त्रण के अधीन रखा गया है। इसी प्रकार राज्यों के लेखों की जाँच-पड़ताल को भी केन्द्रीय विषय बनाया गया है।[1]

वित्तीय सम्बन्ध—भारत के संविधान में वित्तीय प्राविधान न्यूनाधिक 1935 में भारतीय शासन अधिनियम जैसे ही हैं। आय के साधन संघ और राज्यों के बीच वितरित कर दिये गये हैं, किन्तु राज्यों को अपने आय स्रोतों से प्राप्त आय के अतिरिक्त संघ के द्वारा कुछ आरोपित करों की आय में से भी भाग दिया जाता है। संघ की आय के प्रमुख स्रोत ये हैं—आयात निर्यात कर, शराब व अफीम आदि नशीली वस्तुओं को छोड़कर देश में बने तथा खपने वाले पदार्थों जैसे तम्बाकू कर (Excise) महसूल, कारपोरेशन कर (Tax on capital value of companies), कृषि भूमि को छोड़कर अचल सम्पत्ति पर कर, आय कर, रेलों, जहाजों व हवाई जहाजों द्वारा ले जाये जाने वाले माल व यात्रियों पर सीमा कर (Terminal tax), रेलों के किरायों और भाड़ों पर कर, स्टॉक एक्सचेंजों व बाजारों में हुए भावी सौदों पर स्टाम्प शुल्क के अतिरिक्त कर, एक्सचेंज बिलों, चैकों, रुक्कों, लदान बिलों, हुण्डियों, बीमा पालिसियों, हिस्सों के हस्तान्तरण इत्यादि पर स्टाम्प शुल्क, समाचार पत्रों की बिक्री और खरीद तथा उनमें प्रकाशित विज्ञापनों पर कर।

राज्य के मुख्य आय स्रोत ये हैं—भूमि कर, कृषि आय पर कर, नशीली वस्तुओं पर महसूल, बिजली की खपत पर कर, गाड़ियों, पशों, व्यापारों आदि पर कर, मनोरंजन कर, जुए और घुड़दौड़ आदि पर कर, सड़कों व आन्तरिक जल मार्गों पर से जाने वाले माल व यात्रियों पर कर, पशुओं और नावों पर कर, मार्ग कर (tolls), प्रति व्यक्ति कर (capitation taxes)। राज्य सरकारों के पूर्वोक्त पृथक आय स्रोतों के अतिरिक्त कुछ ऐसे कर हैं, जिन्हें संघ सरकार आरोपित और इकट्ठा करती है जिससे कि उनके सम्बन्ध में एकरूपता बनी रहे परन्तु जिनकी पूरी आय राज्यों को दे दी जाती है। साथ ही कुछ ऐसे कर भी है जिन्हें संघ व राज्य सरकार आरोपित तथा इकट्ठा करती है, परन्तु जिनसे होने वाली आय में संघ व राज्य सरकारें दोनों ही भाग पाती हैं।

इस प्रकार के करों का संक्षिप्त वर्णन अग्रलिखित है (1) भारत सरकार संघ सूची में वर्णित दवाइयों और शृङ्गार की वस्तुओं पर स्टाम्प व उत्पादन शुल्क (excise duty) लगाती है,

[1] Lastly there are two items which I would like to call *control items* one is about elections but here elections to the State legislatures also have been put under the control of Parliament Similarly audit even of States has become a central item —Santhanam K *Union State Relations* p 19

पर तु उन्ह इकटठा राज्य सरकार करती है। प्रतिवप इनसे जा आय जिस राज्य द्वारा इकटठा की जाती है वह उसे मिल जाती है। (2) कुछ ऐसे कर तथा महसूल है जिन्ह सघ सरकार आरोपित और इकटठा करती है, परन्तु जिनकी कुल आय ससद के कानून के अ तगत निर्धारित अनुपात के अनुसार विभिन्न सम्बन्धित राज्यो मे बाट दी जाती है। इस श्रेणी मे ये कर व महसूल आते है कृषि भूमि का छोडकर अ य सम्पत्ति कर, उत्तराधिकार कर, अचल सम्पत्ति पर कर (estate duty), रेलो, जहाजा व हवाई जहाजो द्वारा ले जाय जाने वाले माल और यात्रियो पर सीमा कर, रेलो के किरायो और भाडो पर कर, समाचार पत्रो की खरीद और बिक्री तथा उनमे प्रकाशित विज्ञापनो पर कर। (3) कुछ ऐसे कर भी है जिन्हे सघ सरकार आरोपित तथा इकटठा करती है जैसे आय कर, परन्तु जिनकी आय का एक भाग वित्त आयोग की सिफारिशो के आधार पर भारत सरकार विभिन्न राज्यो मे एक निर्धारित प्रतिशत के अनुपात मे बाट देती है। गत वर्षो म आय कर से होने वाली आय का आधा भाग विभिन्न राज्यो मे बाटा जाता था, किन्तु प्रथम वित्त-आयोग ने उसका 55 प्रतिशत राज्यो मे बाटने की सिफारिश की, जिसे भारत सरकार ने स्वीकार कर लिया। (4) वित्त आयोग की सिफारिश के अनुसार दियासलाई, तम्बाकू, वनस्पति पर उत्पादन करो (Union Excise) की कुल आय का 40 प्रतिशत विभिन्न राज्यो मे बाटा जाता है। ये उन करो मे आते है जिन्हे आरोपित और इकटठा भारत सरकार करती है, कि तु उनका जितना भाग सघ सरकार उचित समझे राज्य सरकारा मे ससद के कानून के अनुसार विभाजित कर देती है।

भारत की सचित निधि से असम, बगाल, बिहार और उडीसा अर्थात् पटसन उत्पादन करने वाले राज्यो को निर्धारित ढग के अनुसार पटसन और उसके बने माल पर निर्यात कर के बदले मे अनुदान दिये जाते हैं। ससद यह निर्धारित करती है कि भारत की सचित निधि से उन राज्यो को जि हे आर्थिक सहायता की आवश्यकता हो क्या अनुदान दिय जायें। ऐसे राज्यो को उन विकास योजनाओ की पूर्ति के लिए जिन्हे सघ सरकार ने अनुसूचित कबीलो के कल्याण, उनके प्रशासन स्तर को ऊँचा उठाने आदि के लिए स्वीकार किया हो, सघ सरकार उन योजनाओ पर होने वाले पूरे व्यय अथवा भाग को सम्बन्धित राज्यो को अनुदान रूप मे दे सकती है। य अनुदान मूल व्यय (capital) अथवा प्रतिवप होने वाले व्यय (recurring expenditure) के रूप मे हो सकते है। असम के कबीले वाले प्रदेशो के प्रशासन के लिए भी विशेष अनुदान की व्यवस्था सविधान मे की गयी है। सविधान मे यह भी व्यवस्था है कि ससद मे ऐसे विधेयक, जिनका प्रभाव उन करा पर पडता हो जिनकी आय म राज्या का हित हो, राष्ट्रपति की सिफारिश के उपरान्त ही पेश किये जा सकते हैं। सघ और राज्य सरकारें अपने अपने विधानमण्डलो द्वारा समय समय पर निर्धारित सीमाओ के अधीन अपनी अपनी सचित निधियो की सुरक्षा पर ऋण ल सकती है। सविधान मे यह भी व्यवस्था है कि ससद द्वारा निर्धारित सीमाओ के अधीन सघ सरकार राज्यो को ऋण दे सकती है।

वित्त आयोग (Finance Commission)—सविधान के प्रारम्भ होने के दो वप के भीतर और उसके बाद प्रति पाँच वप मे या उसके पूव ही जैसा राष्ट्रपति उचित समझे वित्त आयोग की नियुक्ति की जाने की व्यवस्था है। वित्त आयोग मे एक सभापति और चार सदस्य होते हैं, जिन्ह राष्ट्रपति नियुक्त करता है—(1) किन करो या महसूलो को सघ और राज्यो के बीच बाँटना है (2) भारत की सचित निधि से विभिन्न राज्यो को दिये जाने वाले अनुदानो के सम्बन्ध मे सिद्धान्तो का निर्धारण, तथा (3) स्वस्थ वित्तीय पद्धति के हित मे राष्ट्रपति द्वारा जो मामले वित्त आयोग को सौंपे जाए। वित्त आयोग की सिफारिशों को राष्ट्रपति अनिवायत एक व्याख्यात्मक ज्ञा के साथ ससद के दोनो सदनो के सामन रखवाता है।

प्रथम वित्त आयोग ने, जो 1951 मे नियुक्त हुआ था, आय कर से प्राप्त होने वाली घनराशि मे राज्यो का भाग 40 के स्थान पर 55 प्रतिशत से बढाकर 60 प्रतिशत कर दिया। अनुच्छेद 275 के अन्तगत सघ द्वारा राज्यो को दी जानने वाली राशि मे भी वृद्धि की सिफारिश दूसरे वित्त आयोग द्वारा की गयी थी। पाँचवे वित्त आयोग की सिफारिश के अनुसार अप्रल 1969 से आरम्भ हुए वष से पाँच वष तक राज्यो को 4,266 करोड रुपये हस्तान्तरित किय जायेंगे, जबकि चौथे वित्त आयोग की सिफारिश के अनुसार यह राशि 2,886 करोड ही रहती। भारत सरकार ने वित्त आयोग की वे सभी सिफारिशें स्वीकार कर ली हैं जिनके अनुसार राज्यो और सघीय क्षेत्रो को सरकार द्वारा आरोपित व एकत्रित करो म पहले से कही अधिक बडा भाग प्राप्त हागा। वित्तीय सम्बन्धो के बारे मे दो बातें उल्लेखनीय हैं। प्रथम, राष्ट्रीय विकास परिषद् (National Development Council) के एक निणय द्वारा राज्यो ने स्वेच्छा से कपडे, चीनी और तम्बाकू पर बिक्री कर लगाने का अधिकार केन्द्र को प्रदान कर दिया है, जिसके बदले म सघ सरकार उन्हे अन्य प्रकार से धन देती है। दूसरे, कर जाच आयोग (Taxation Inquiry Commission) की सिफारिश के अनुसार सविधान मे सशोधन किया गया है और अनुच्छेद 269 के अन्तर्गत अन्तर्राज्य बिक्री कर को भी जोड दिया गया है, अर्थात् इस प्रकार के कर केन्द्र द्वारा लगाये व एकत्रित किय जाते हैं, किन्तु उनसे होने वाली आय राज्यो मे बाट दी जाती है।

सघ और राज्यो के वित्तीय क्षेत्र के पारस्परिक सम्बन्धो के विवेचन से हम इन निष्कर्षो पर पहुँचेगे—पहले, वित्तीय व्यवस्था भारतीय सघ की अन्य व्यवस्थाओ से मेल खाती हैं, अर्थात् इस क्षेत्र मे भी केन्द्रीकरण है। यह पूणत सत्य है कि सघ सरकार की स्थिति वित्तीय दृष्टि से राज्य सरकारो की अपेक्षा कही अधिक सुदृढता व स्थायित्व से पूण है, और ऐसा होना देश के नियोजित विकास के लिए अति आवश्यक है। दूसरे, भारत के सविधान-निर्माताओ ने अन्य सघात्मक सविधानो के दोषो से बचने का प्रयत्न किया है। हमारे सविधान मे उस सिद्धान्त का पालन नही हुआ है जिसके अनुसार सभी प्रत्यक्ष कर राज्यो और अप्रत्यक्ष कर सघ को सौपे जाने चाहिएँ। वास्तव म करो अर्थात् आय स्रोतो का वितरण कुशल प्रशासन व उपयुक्तता पर आधारित है। अत यह व्यावहारिक है। राज्यो को पर्याप्त साधन प्राप्त हो सकें, इसलिए सघ सरकार द्वारा उन्हे अधिक सहायता प्रदान की जाने की व्यवस्था की गयी है।

सघ व राज्यो के पारस्परिक सम्बन्धों पर नियोजन का प्रभाव—यह कहना उचित है कि भारत म वास्तविक नियोजन का प्रारम्भ योजना आयोग की रचना के साथ हुआ। यद्यपि समवर्ती सूची मे सामाजिक और आर्थिक नियोजन का विषय सम्मिलित है, नियोजन के सम्बन्ध म ससद ने कोई कानून नही बनाया है। यथाथ मे नियोजन काय अभी तक कम या अधिक रूप म अनौपचारिक स्तर पर सचालित हो रहा है। यदि कोई राज्य यह कह कि चूकि योजना आयोग साविधानिक सस्था नही है, अतएव वह उसके निणयो का मानने क लिए बाध्य नही है, तो भारत सरकार उसे विवश नही कर सकती। भारत सरकार पचवर्षीय योजनाओ को (राज्यो की सहमति स) स्वीकार करती है और राज्यो को अनेक योजनाओ की पूर्ति के लिए आर्थिक सहायता देती है। इसी कारण राज्य योजना आयोग के निर्देशो को स्वीकार करते हैं।

राज्यो का पूण सहयोग प्राप्त करने के उद्देश्य से योजना आयोग ने एक राष्ट्रीय विकास परिषद् (National Development Council) की स्थापना का विचार दिया। इस परिषद् के अस्तित्व का आधार भी कोई कानून अथवा सविधान नही है। के० सतानम के अनुसार, साविधानिक दृष्टि से, 'राष्ट्रीय विकास परिषद् का स्थान सम्पूण भारतीय सघ की एक सर्वोपरि केबिनट के समान है, यह एक ऐसी केबिनेट है जो भारत सरकार और राज्य सरकारो के लिए

काय करती है ।[1] जहाँ तक योजनाओ को काय रूप देने का प्रश्न है, विभिन्न राज्य उन्हे कार्यान्वित करते हैं, किन्तु सघ सरकार के विभिन्न मन्त्रालय राज्य सरकारो के समानान्तर मन्त्रालयो को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए, प्रारम्भिक शिक्षको के वेतन मे वद्धि के लिए भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय ने महत्त्वपूर्ण पहल की। भारत सरकार के मन्त्रालय समय समय पर सम्मेलन बुलाते हैं और उनके निणयो को कार्यान्वित कराने म महत्त्वपूण योग देते है। इसीलिए के० सतानम का मत है कि नियोजन ने भारत के सघात्मक रूप को समाप्त कर दिया है और हमारे देश का शासन अनेक बातो म एकात्मक पद्धति के समान चल रहा है।[2] यह सच है कि नियोजन ने भारतीय सघ के सघात्मक रूप को बहुत कुछ एकात्मक रूप दे दिया है, किन्तु हमारे विचार मे यह कहना उचित नही है कि राष्ट्रीय विकास परिषद् एक सर्वोपरि केबिनेट है और नियोजन के कारण सघात्मक रूप का अनेक बातो मे प्राय अन्त हो गया है।

सितम्बर 1962 म टी० टी० कृष्णमाचारी ने एक भाषण म 'सघीय केन्द्र बनाम राज्य' विषय पर बोलते हुए कहा था 'जो शक्ति इस समय राष्ट्र ने अपने आन्तरिक प्रबन्ध व बाह्य समद्धि के सम्बन्ध मे प्राप्त की है, वह सघात्मक शासन की शक्ति से उत्पन्न हुई है। इस बडे परिणाम की प्राप्ति मे, इस बात से इनकार नही किया जा सकता कि केन्द्र व राज्यो के पारस्परिक सम्बन्धो म कुछ राजनीतिक असन्तुलन पदा हुआ है। नियोजन आयोग ने तो कुछ सीमा तक केन्द्र से राज्यो को ऋण व अनुदान आदि दने का कठिन काय अपने हाथ मे ले लिया है। योजना आयोग द्वारा राज्यो के परामश स योजना बनाने की प्रक्रिया सघात्मक राज्य म एक विध्यात्मक तत्त्व (positive element) है, अस्तु मेरा मत है कि नियोजन आयोग केन्द्र की उस प्रधान शक्ति को जो वह राष्ट्र के साधनो के अन्तिम नियन्त्रण के रूप म रखता है कुछ कम करने अथवा उसके दोषो को दूर करने म सहायता करता है।'[3] सविधान बनाते समय कोई ऐसा स्पष्ट विचार न था कि नियोजन का सघात्मक सरचना पर प्रभाव पडेगा। भविष्य के बारे म यह भी निश्चित न था कि नियोजन आयोग वित्तीय आयोग 'का स्थान ले लेगा, जिसका अधिकार क्षेत्र सघीय वित्त के केवल आयोजना से पृथक पहलुओ तक ही रह जायेगा। फिर भी, समय ने यह दिखा दिया है कि प्रधान दल (काग्रेस) की राजनीतिक स्थिति के साथ साथ नियोजन एकता स्थापित करने म एक बडी शक्ति रहा है।[4]

अब हम यह देखना है कि भारत के सविधान म सघात्मक लक्षण कहा तक विद्यमान है।

---

[1] The position of the National Development Council has come to approximate to that of a super Cabinet of the entire India federation a Cabinet functioning for the Government of India and Governments of all the states *Ibid* p 44

[2] Planning has superseded the federation and our country is functioning almost like a unitary system in many respects *Ibid* p 55

[3] I maintain therefore that the Planning Commission helps to mitigate and soften the undoubtedly dominant power that the Centre reporfed in as ultimate controller that distributes the resources of the nation Reported in *Indian Express* Sep 9 1962

[4] Yet time has shown that along with the dominant party political situation planning has been a strong unifying force within Indian federalism —Austin G *The Indian Constitution* p 236

Also see A political party plays the role of an extra constitutional agency in the running of a federal system Through a formal federal system in all respects the very system is reduced to a unitarian model when political parties run the machinery of general and regional governments without federalising their own character The case of Congress Party in India affords a shining case in this regard —Johari J C *Comparative Politics* p 163

प्रथम वित्त आयोग ने, जो 1951 म नियुक्त हुआ था, आय कर से प्राप्त होने वाली धनराशि मे राज्यो का भाग 40 के स्थान पर 55 प्रतिशत से बढाकर 60 प्रतिशत कर दिया। अनुच्छेद 275 के अन्तगत सघ द्वारा राज्यो को दी जानने वाली राशि म भी वृद्धि की सिफारिश दूसर वित्त आयाग द्वारा की गयी थी। पाँचवे वित्त आयोग की सिफारिश के अनुसार अप्रल 1969 से आरम्भ हुए वष से पाँच वष तक राज्या को 4,266 करोड रुपये हस्तान्तरित किये जायेंगे, जबकि चौथे वित्त आयोग की सिफारिश के अनुसार यह राशि 2,886 करोड ही रहती। भारत सरकार ने वित्त आयोग की वे सभी सिफारिशें स्वीकार कर ली हैं जिनके अनुसार राज्यों और सघीय क्षेत्रो को सरकार द्वारा आरोपित व एकत्रित करो मे पहले से कही अधिक बडा भाग प्राप्त होगा। वित्तीय सम्बन्धो के बारे मे दो बातें उल्लेखनीय हैं। प्रथम, राष्ट्रीय विकास परिषद् (National Development Council) के एक निणय द्वारा राज्यो ने स्वेच्छा से कपडे, चीनी और तम्बाकू पर बिक्री कर लगाने का अधिकार केन्द्र को प्रदान कर दिया है, जिसके बदले मे सघ सरकार उन्हे अन्य प्रकार से धन देती है। दूसरे, कर जाँच आयोग (Taxation Inquiry Commission) की सिफारिश के अनुसार सविधान में सशोधन किया गया है और अनुच्छेद 269 के अन्तर्गत अन्तर्राज्य बिक्री कर को भी जोड दिया गया है, अर्थात् इस प्रकार के कर केन्द्र द्वारा लगाये व एकत्रित किये जाते हैं, किन्तु उनसे होने वाली आय राज्यो मे बाँट दी जाती है।

सघ और राज्यो के वित्तीय क्षेत्र के पारस्परिक सम्बन्धों के विवेचन से हम इन निष्कर्षों पर पहुँचेंगे —पहले, वित्तीय व्यवस्था भारतीय सघ की अन्य व्यवस्थाओ से मेल खाती हैं, अर्थात् इस क्षेत्र मे भी केन्द्रीकरण है। यह पूणत सत्य है कि सघ सरकार की स्थिति वित्तीय दृष्टि से राज्य सरकारो की अपेक्षा कही अधिक सुदृढता व स्थायित्व मे पूण है, और ऐसा होना देश के नियोजित विकास के लिए अति आवश्यक है। दूसरे, भारत के सविधान निर्माताओ ने अन्य सघात्मक सविधानो के दोषो से बचने का प्रयत्न किया है। हमारे सविधान मे उस सिद्धान्त का पालन नही हुआ है जिसके अनुसार सभी प्रत्यक्ष कर राज्यो और अप्रत्यक्ष कर सघ को सौंपे जाने चाहिएँ। वास्तव म करो अर्थात् आय स्रोतो का वितरण कुशल प्रशासन व उपयुक्तता पर आधारित है। अत यह व्यावहारिक है। राज्यो को पर्याप्त साधन प्राप्त हो सकें, इसलिए सघ सरकार द्वारा उन्हे अधिक सहायता प्रदान की जाने की व्यवस्था की गयी है।

सघ व राज्यो के पारस्परिक सम्बन्धो पर नियोजन का प्रभाव—यह कहना उचित है कि भारत म वास्तविक नियोजन का प्रारम्भ योजना आयोग की रचना के साथ हुआ। यद्यपि समवर्ती सूची म सामाजिक और आर्थिक नियोजन का विषय सम्मिलित है, नियोजन के सम्बन्ध म ससद ने कोई कानून नही बनाया है। यथाथ म नियोजन काय अभी तक कम या अधिक रूप मे अनौपचारिक स्तर पर सचालित हो रहा है। यदि कोई राज्य यह कहे कि चूकि योजना आयोग सावैधानिक सस्था नही है, अतएव वह उसके निणयो को मानने के लिए बाध्य नही है, तो भारत सरकार उसे विवश नही कर सकती। भारत सरकार पचवर्षीय योजनाओ को (राज्यो की सहमति से) स्वीकार करती है और राज्यो को अनेक योजनाओ की पूर्ति के लिए आर्थिक सहायता देती है। इसी कारण राज्य योजना आयोग के निर्देशो को स्वीकार करते हैं।

राज्यो का पूण सहयोग प्राप्त करने के उद्देश्य से योजना आयोग ने एक राष्ट्रीय विकास परिषद् (National Development Council) की स्थापना का विचार दिया। इस परिषद् के अस्तित्व का आधार भी कोई कानून अथवा सविधान नही है। के० सतानम के अनुसार, सावैधानिक दृष्टि से, 'राष्ट्रीय विकास परिषद् का स्थान सम्पूण भारतीय सघ की एक सर्वोपरि केबिनेट के समान है, यह एक ऐसी केबिनेट है जो भारत सरकार और राज्य सरकारो के लिए

काय करती है ।[1] जहाँ तक योजनाओं को काय रूप देने का प्रश्न है, विभिन्न राज्य उन्हे कार्यान्वित करते हैं, किन्तु सघ सरकार के विभिन्न मन्त्रालय राज्य सरकारो के समानान्तर मन्त्रालयो को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करते हैं । उदाहरण के लिए, प्रारम्भिक शिक्षकों के वेतन मे वृद्धि के लिए भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय ने महत्त्वपूर्ण पहल की । भारत सरकार के मन्त्रालय समय समय पर सम्मेलन बुलाते हैं और उनके निणयो को कार्यान्वित कराने म महत्त्वपूण योग देते हैं । इसीलिए के० सतानम का मत है कि नियोजन ने भारत के सघात्मक रूप को समाप्त कर दिया है और हमारे देश का शासन अनेक बातो मे एकात्मक पद्धति के समान चल रहा है ।[2] यह सच है कि नियोजन ने भारतीय सघ के सघात्मक रूप को बहुत कुछ एकात्मक रूप दे दिया है, किन्तु हमारे विचार मे यह कहना उचित नही है कि राष्ट्रीय विकास परिषद् एक सर्वोपरि केबिनेट है और नियोजन के कारण सघात्मक रूप का अनेक बातो मे प्राय अन्त हो गया है ।

सितम्बर 1962 म टी० टी० कृष्णमाचारी ने एक भाषण मे 'सघीय केन्द्र बनाम राज्य' विषय पर बोलते हुए कहा था 'जो शक्ति इस समय राष्ट्र ने अपने आन्तरिक प्रबन्ध व बाह्य समृद्धि के सम्बन्ध मे प्राप्त की है, वह सघात्मक शासन की शक्ति से उत्पन्न हुई है । इस बडे परिणाम की प्राप्ति म, इस बात से इनकार नही किया जा सकता कि केन्द्र व राज्यो के पारस्परिक सम्बन्धो मे, कुछ राजनीतिक असन्तुलन पैदा हुआ है । नियोजन आयोग ने तो कुछ सीमा तक केन्द्र से राज्यो को ऋण व अनुदान आदि देने का कठिन काय अपने हाथ मे ले लिया है । योजना आयोग द्वारा राज्यो के परामश से योजना बनाने की प्रक्रिया सघात्मक राज्य मे एक विध्यात्मक तत्त्व (positive element) है, अस्तु मेरा मत है कि नियोजन आयोग केन्द्र की उस प्रधान शक्ति को जो वह राष्ट्र के साधनो के अन्तिम नियन्त्रण के रूप मे रखता है कुछ कम करने अथवा उसके दोषो को दूर करने मे सहायता करता है ।'[3] सविधान बनाते समय कोई ऐसा स्पष्ट विचार न था कि नियोजन का सघात्मक सरचना पर प्रभाव पडेगा । भविष्य के बारे म यह भी निश्चित न था कि नियोजन आयोग वित्तीय आयोग का स्थान ले लेगा, जिसका अधिकार क्षेत्र सघीय वित्त के केवल आयोजना से पृथक पहलुओ तक ही रह जायेगा । फिर भी, समय ने यह दिखा दिया है कि प्रधान दल (काग्रेस) की राजनीतिक स्थिति के साथ साथ नियोजन एकता स्थापित करन मे एक बडी शक्ति रहा है ।[4]

अब हमे यह देखना है कि भारत के सविधान मे सघात्मक लक्षण कहा तक विद्यमान है ।

---

[1] The position of the National Development Council has come to approximate to that of a super Cabinet of the entire India federation a Cabinet functioning for the Government of India and Governments of all the states *Ibid* p 44

[2] Planning has superseded the federation and our country is functioning almost like a unitary system in many respects *Ibid* p 55

[3] 'I maintain therefore that the Planning Commission helps to mitigate and soften the undoubtedly dominant power that the Centre reporfed in as ultimate controller that distributes the resources of the nation Reported in *Indian Express* Sep 9 1962

[4] 'Yet time has shown that along with the dominant party political situation planning has been a strong unifying force within Indian federalism —Austin G *The Indian Constitution* p 236

Also see A political party plays the role of an extra constitutional agency in the running of a federal system Through a formal federal system in all respects the very system is reduced to a unitarian model when political parties run the machinery of general and regional governments without federalising their own character The case of Congress Party in India affords a shining case in this regard —Johari J C *Comparative Politics*, p 163

भिन्न मत व्यक्त किये हैं, जिनमे से कुछ का उल्लेख यहाँ किया जाता है। जी० एन० जोशी के मतानुसार, 'सघ वस्तुत एक सघात्मक राज्य नही वरन् अद्ध सघात्मक (quasi federal) राज्य है, जिसमे कई अति सारपूण तत्त्व एकात्मकता के है। यद्यपि यह स्वरूप मे सघात्मक है, यह अ य सघात्मक सविधानो के विपरीत समय और परिस्थितियो की आवश्यकताओ के अनुसार एकात्मक और सघात्मक दोना ही है।'[1] प्रो० व्हीयर के अनुसार सघात्मक राज्य की न्यूनतम आवश्यकता यह है कि क्रमश सघ और प्रादशिक सरकारो के अबाध निय त्रण मे कुछ विषय, वह चाहे एक ही हो, अवश्य होने चाहियें। चूकि भारत का सविधान इस शत को पूणतया पूरा नही करता अत वह इसे पूरी तौर से सघात्मक स्वीकार करने को तैयार नही है। कई महत्त्वपूण सघात्मक विशेषताय होने के कारण वह इसे अद्ध सघात्मक बताता है। सिद्धा तो को अलग करके वास्तव मे जिन प्रश्ना का निणय होना चाहिए, ये हैं—क्या राष्ट्रीय और प्रा तीय सरकारों का आपसी सम्ब घ प्रमुख और प्रतिनिधि (principal and delegate) जैसा है ? जिन शक्तिया का वे अपने क्षेत्रो मे प्रयोग करती हैं, उनका वास्तविक और ठीक ठीक स्वरूप क्या है ? यदि हम भारत के सविधान पर इा वातो को ध्यान मे रखकर विचार करें तो हमे उसे सघात्मक मानना पडेगा, क्याकि राष्ट्रीय और राज्य सरकारो के बीच के सम्ब ध प्रमुख और प्रतिनिधि जैसे नही है। दोनो को अपना अपना पद और उनकी शक्तिया सविधान से प्राप्त हुई है। एलेक्जे ड्रोविच के अनुसार, यद्यपि सघ की रचना ऊपर से की गयी है, राज्य वास्तविक ससदात्मक शासन के अधिकारो का उपभोग करत हैं। विकास कार्यों के प्रभाव से के द्र के प्रति राज्यो की स्थिति सुदृढ हुई है, विशेषकर भाषायी समुदायो के दबाव मे भारत के सघात्मक नक्शे को फिर से खीचा गया है। अतएव भारत को अद्ध सघात्मक राज्यो के वग म रखना यायोचित नही है।'[2]

आगे प्रश्न यह उठता है कि क्या अति सुदृढ के द्र भारत के हित मे है। अधिकतर विचारक और लेखक इस बात से सहमत हैं कि सुदृढ के द्र की व्यवस्था भारत के हित मे है। आ तरिक और अ तर्राष्ट्रीय परिस्थितियो पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि भारत की एकता अखण्ड रहनी चाहिए। एकता बनाये रखने के लिए सुदृढ के द्र और सविधान के अनेक एकात्मक लक्षणा का होना अति आवश्यक व उपयोगी सिद्ध होगा। भारत का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब भी के द्रीय सत्ता कमजोर पडी भारत राजनीतिक दृष्टि से खण्डों मे बँटा। कुछ समय से राष्ट्र विरोधी तत्त्व—प्रा तीयता, साम्प्रदायिकता आदि इतने प्रवल रहे हैं कि उ ह राष्ट्र हित मे शक्तिशाली के द्र द्वारा निय त्रण मे रखा जाना आवश्यक है। वास्तव मे जनसघ और हि दू महासभा आदि तो अब भी इस बात पर बल देते है कि भारत म एकात्मक शासन होना चाहिए। देश के पुनर्निर्माण, आर्थिक विकास तथा नागरिको के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए भी पाठक सुदढ के द्रीय निय त्रण की आवश्यकता को स्वीकार करेंगे। स्व० डा० अम्बेदकर न 25 नवम्बर 1949 को सविधान सभा मे कहा था 'यह मानना पडेगा कि के द्र को ऐसी शक्ति प्राप्त है कि वह राज्यो की इच्छा के विरुद्ध कार्य करा सके, पर तु ऐसी शक्तियाँ सविधान की साधारण विशेषतायें नही हैं। उनका प्रयोग केवल आपात्काल तक सीमित रहेगा।'

[1] Joshi G N *The Constitution of India* p 34

[2] India is a case *sui generis* Though the federation was created from above the local States enjoy the rights of real parliamentary government whatever the distribution of powers between them and the centre The impact of developments on the federal balance is such that it tends to strengthen the position of local States *vis a vis the centre* the more so as the pressure of linguistic communities called for redrawing the federal map of India It hardly justifies the classification of India as a quasi federation Alexandrowicz C H *Constitutional Development in India* pp 159–170

विभिन्न लेखकों ने यह स्वीकार किया है कि भारत के संविधान में ये संघात्मक लक्षण मिलते हैं— (1) संघ सरकार तथा राज्यों को स्वतन्त्र कानूनी पद और व्यक्तित्व प्राप्त है। प्रत्येक को अपने अपने क्षेत्र में विधायी व कार्यपालिका शक्तियाँ प्राप्त हैं। संविधान में शक्तियों का वितरण तीन सूचियों के अन्तर्गत किया गया है। समवर्ती सूची की व्यवस्था आस्ट्रेलिया के संविधान से ली गयी है। (2) दोनों ही सरकारों का सम्बन्ध सीधे नागरिकों से है और नागरिकों की निष्ठा दोहरी है यद्यपि हमारे देश में नागरिकता दोहरी नहीं वरन् इकहरी है। (3) संविधान द्वारा एक सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना हुई है। (4) संविधान में संशोधन की प्रक्रिया अपरिवर्तनशील है, क्योंकि कोई भी एक सरकार मनचाहा संशोधन, जिसका कि शक्तियों के वितरण पर प्रभाव पड़ता हो नहीं कर सकती। इन लक्षणों के कारण यह स्वीकार किया गया है कि भारत के संविधान में संघात्मक संविधान की मुख्य विशेषतायें मिलती हैं। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि संविधान स्वरूप और भावना दोनों में ही संघात्मक है। परन्तु यह आभास है कि केन्द्र अत्यधिक सुदृढ़ है।

यह बात किस सीमा तक सत्य है यह देखने के लिए हम संविधान के एकात्मक लक्षणों पर विचार करना होगा। अप्रलिखित बातों के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि भारत का संविधान संघात्मक संविधानों से न्यूनाधिक भिन्न है (1) संविधान में केवल इकहरी नागरिकता की व्यवस्था है, जबकि संयुक्त राज्य अमरीका में दोहरी नागरिकता है। (2) इसमें संयुक्त राज्य अमरीका की भाँति न्यायालय तथा अन्य प्रशासनिक अभिकरण दोहरे न होकर संघ और राज्यों के लिए एक दूसरे से गुथे हुए हैं, यथा न्यायालय, निर्वाचन आयोग, अखिल भारतीय सेवायें, नियन्त्रक व महालेखा परीक्षक का विभाग इत्यादि। (3) आपातकाल की उद्घोषणा के फलस्वरूप संविधान का स्वरूप एकात्मक ही हो जायेगा। (4) साधारण काल में भी संसद राज्य-सूची के विषयों पर विशेष प्रक्रिया द्वारा कानून बना सकती है।

(5) अनुच्छेद 253 के अन्तर्गत संसद को यह शक्ति प्राप्त है कि वह अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों व समझौतों को कार्यरूप में परिणत करने के लिए राज्य-सूची के विषयों पर भी कानून बना सकती है। (6) भारत के संविधान में ही संघ और राज्यों के संविधानों की व्यवस्था है इसके विपरीत संयुक्त राज्य अमरीका व स्विट्जरलैण्ड के इकाई राज्यों के संविधान अलग अलग हैं। (7) राज्यों के गवर्नरों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है और उन्हें साधारणतया आपात काल में संघीय कार्यपालिका के निदेशों व आदेशों का पालन करना होता है। (8) अन्य संघात्मक राज्यों—संयुक्त राज्य अमरीका व स्विट्जरलैण्ड—में विभिन्न इकाइयों को संघीय विधानमण्डल के दूसरे सदन में समान प्रतिनिधित्व प्राप्त है, किन्तु भारत के संविधान में उनके प्रतिनिधित्व के आधार भिन्न हैं। (9) विभिन्न राज्यों की सीमाओं में अनुच्छेद 2 व 3 के अन्तर्गत (राज्यों की इच्छा जानने के उपरान्त) संसद के कानून द्वारा परिवर्तन किये जा सकते हैं। अनुच्छेद 169 के अनुसार संसद किसी राज्य में विधान परिषद् की रचना अथवा उसका अन्त कर सकती है। (10) कार्यपालिका क्षेत्र में स्पष्ट बताया गया है कि प्रत्येक राज्य की कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग इस प्रकार से किया जायेगा कि संघीय कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग में कोई बाधा न पड़े। (11) वित्तीय क्षेत्र में कई प्रकार के कर और महसूल संघ सरकार द्वारा लगाये व वसूल किये जाते हैं, जिनकी आय का पूरा या अंश राज्य सरकारों को संसद के कानून के अनुसार दिया जाता है। वित्त आयोग इस सम्बन्ध में सिफारिश करता है और आयोग की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा ही की जाती है। (12) विधायी क्षेत्र में अनुच्छेद 200 और 201 के अनुसार कुछ विशिष्ट प्रकार के विधेयकों को गवर्नर द्वारा राष्ट्रपति की अनुमति के लिए रोका जाना आवश्यक है।

उपर्युक्त विशेषताओं के कारण विभिन्न लेखकों ने भारत के संविधान के बारे में भिन्न

भिन्न मत व्यक्त किये है, जिनमे से कुछ का उल्लेख यहाँ किया जाता है। जी० एन० जोशी के मतानुसार, 'सघ वस्तुत एक सघात्मक राज्य नही वरन् अर्द्ध सघात्मक (quasi federal) राज्य है जिसमे कई अति सारपूर्ण तत्त्व एकात्मकता के है। यद्यपि यह स्वरूप मे सघात्मक है, यह अन्य सघात्मक सविधानो के विपरीत समय और परिस्थितियो की आवश्यकताओ के अनुसार एकात्मक और सघात्मक दोनो ही है।'[1] प्रो० व्हीयर के अनुसार सघात्मक राज्य की न्यूनतम आवश्यकता यह है कि क्रमश सघ और प्रादेशिक सरकारो के अबाध नियन्त्रण मे कुछ विषय, वह चाहे एक ही हो, अवश्य होने चाहियें। चूकि भारत का सविधान इस शर्त को पूर्णतया पूरा नही करता अत वह इसे पूरी तौर से सघात्मक स्वीकार करने को तैयार नही है। कई महत्त्वपूर्ण सघात्मक विशेषतायें होने के कारण वह इसे अर्द्ध सघात्मक बताता है। सिद्धान्तो को अलग करके वास्तव मे जिन प्रश्नो का निर्णय होना चाहिए, ये है—क्या राष्ट्रीय और प्रान्तीय सरकारों का आपसी सम्बन्ध प्रमुख और प्रतिनिधि (principal and delegate) जैसा है ? जिन शक्तियो का वे अपने क्षेत्रो मे प्रयोग करती हैं, उनका वास्तविक और ठीक-ठीक स्वरूप क्या है ? यदि हम भारत के सविधान पर इन बातो को ध्यान मे रखकर विचार करें तो हमे उसे सघात्मक मानना पडेगा, क्योकि राष्ट्रीय और राज्य सरकारो के बीच के सम्बन्ध प्रमुख और प्रतिनिधि जैसे नहीं हैं। दोनो को अपना अपना पद और उनकी शक्तियां सविधान से प्राप्त हुई हैं। एलेक्जेण्ड्रोविच के अनुसार, यद्यपि सघ की रचना ऊपर से की गयी है, राज्य वास्तविक ससदात्मक शासन के अधिकारो का उपभोग करते हैं। विकास कार्यों के प्रभाव से केन्द्र के प्रति राज्यो की स्थिति सुदृढ हुई है, विशेषकर भाषायी समुदायो के दबाव मे भारत के सघात्मक नक्शे को फिर से खीचा गया है। अतएव भारत को अर्द्ध सघात्मक राज्यो के वर्ग मे रखना न्यायोचित नही है।[2]

आगे प्रश्न यह उठता है कि क्या अति सुदृढ केन्द्र भारत के हित मे है। अधिकतर विचारक और लेखक इस बात से सहमत है कि सुदृढ केन्द्र की व्यवस्था भारत के हित मे है। आन्तरिक और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियो पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि भारत की एकता अखण्ड रहनी चाहिए। एकता बनाये रखने के लिए सुदृढ केन्द्र और सविधान के अनेक एकात्मक लक्षणो का होना अति आवश्यक व उपयोगी सिद्ध होगा। भारत का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब भी केन्द्रीय सत्ता कमजोर पडी भारत राजनीतिक दृष्टि से खण्डों मे बँटा। कुछ समय से राष्ट्र विरोधी तत्त्व—प्रान्तीयता, साम्प्रदायिकता आदि इतने प्रबल रहे हैं कि उन्हे राष्ट्र हित मे शक्तिशाली केन्द्र द्वारा नियन्त्रण मे रखा जाना आवश्यक है। वास्तव मे जनसघ और हिन्दू महासभा आदि तो अब भी इस बात पर बल देते है कि भारत मे एकात्मक शासन होना चाहिए। देश के पुनर्निमाण, आर्थिक विकास तथा नागरिको के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए भी पाठक सुदढ केन्द्रीय नियन्त्रण की आवश्यकता को स्वीकार करेंगे। स्व० डा० अम्बेदकर ने 25 नवम्बर 1949 को सविधान सभा मे कहा था 'यह मानना पडेगा कि केन्द्र को ऐसी शक्ति प्राप्त है कि वह राज्यो की इच्छा के विरुद्ध कार्य करा सके, परन्तु ऐसी शक्तियाँ सविधान की साधारण विशेषतायें नही हैं। उनका प्रयोग केवल आपातकाल तक सीमित रहेगा।'

---

[1] Joshi G N *The Constitution of India* p 34

[2] India is a case *sui generis* Though the federation was created from above the local States enjoy the rights of real parliamentary government whatever the distribution of powers between them and the centre The impact of developments on the federal balance is such that it tends to strengthen the position of local States *vis-a vis* the centre the more so as the pressure of linguistic communities called for redrawing the federal map of India It hardly justifies the classification of India as a quasi federation Alexandrowicz C H *Constitutional Development in India* pp 159–170

उन्होंने यह भी कहा 'कभी संकट काल में संघ व राज्यों के दावों में मतभेद पैदा हो सकता है। ऐसे समय में नागरिक की निष्ठा अंतिम रूप से संघ के प्रति बनी रहनी चाहिए और उसका संघ और राज्य के बीच विभाजित होना उचित नहीं। सब बाह्य आडम्बर को हटाकर मूल प्रश्न यह उठता है कि नागरिक की अवशिष्ट निष्ठा पर किसका अधिकार है। इस बात में अधिकांश व्यक्तियों को कोई सन्देह नहीं हो सकता कि आपातकाल में नागरिकों की अवशिष्ट निष्ठा संघान्तरित राज्यों के प्रति न होकर केन्द्र के प्रति होनी चाहिए।'

4 सोवियत संघ में संघात्मक शासन का रूप

रूस के साम्यवादी नेताओं ने राष्ट्रीयताओं की समस्या का हल संघवाद अर्थात् विभिन्न राष्ट्रों के संघ की स्थापना में पाया। सिद्धान्त रूप में साम्यवादी संघात्मक शासन में विश्वास नहीं करते। साम्यवादी सिद्धान्तों के अनुसार समाजवाद और साम्यवाद की स्थापना के लिए पहले एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार अथवा सर्वहारा वर्ग की अधिनायकशाही आवश्यक है और वर्ग विहीन समाज की स्थापना के बाद राज्य को समाप्ति की दिशा में बढ़ना है। मार्क्स के सहयोगी एंजेल्स (Engels) ने स्पष्ट लिखा है कि 'सर्वहारा वर्ग तो केवल एक और अविभाज्य गणराज्य के रूप का ही प्रयोग कर सकता है' परन्तु लेनिन ने रूस की वास्तविकताओं को समझा और आरम्भ में ही राष्ट्रों के स्वभाग्य निर्णय के सिद्धान्त को अपनाया। इस धारणा के अन्तर्गत उसने रूसी साम्राज्य में सम्मिलित राज्यों के पृथक होने के अधिकार को भी माना। परन्तु विभिन्न राष्ट्र स्वभाग्य निर्णय के अधिकार का प्रयोग सोवियत नीति के अनुसार अर्थात् साम्यवाद की स्थापना के लिए ही कर सकते थे। कहने का तात्पर्य यह है कि सोवियत नेताओं की दृष्टि में राष्ट्रों के स्वभाग्य निर्णय के सिद्धान्त पर आधारित संघवाद साम्यवाद के नीचे है, अर्थात् संघवाद का अंतिम ध्येय भी साम्यवाद की स्थापना में सहायक होना है।

लेनिन और स्टालिन संघ को एकात्मक राज्य की अपेक्षा कमजोर शासन प्रणाली मानते थे, फिर भी राष्ट्रों की समस्या को हल करने के उद्देश्य से उन्होंने संघवाद का सिद्धान्त अपनाया। स्टालिन यह समझता था कि यदि कमजोर राष्ट्रीय समूहों को स्वभाग्य निर्णय के सिद्धान्त के अनुसार अलग होने दिया गया होता तो यह सम्भव था कि उन्हें कोई दूसरा साम्राज्य अपने अधीन कर लेता। इसलिए उसने साम्यवादी दल की ओर से यह तर्क रखा कि प्रत्येक राष्ट्र को स्वभाग्य निर्णय का अधिकार है, किन्तु यदि ऐसा करने वाले राष्ट्र प्रगति अर्थात् साम्यवाद की ओर पग न रखेंगे तो साम्यवादी दल इस बात के लिए तैयार न होगा कि उन्हें इस अधिकार के प्रयोग का अवसर दिया जाये और वे पूंजीवादी शत्रुओं के साथ मिल जायें। इसी कारण साम्यवादी लेखक सोवियत संघ को 'रूप में राष्ट्रीय परन्तु सार में समाजवादी' बताते हैं।

संघ के अन्तर्गत संघीय गणराज्य तथा अन्य उप विभाग—संविधान की धारा 13 में सोवियत समाजवादी गणराज्यों के संघ' (U S S R) को संघात्मक राज्य बताया गया है, जो सम समाजवादी गणराज्यों की ऐच्छिक एकता पर आधारित है। इसमें इस समय 16 गणराज्य सम्मिलित हैं, जिनके नाम ये हैं—रूस, यूक्रेन, बाइलोरूस (श्वेत रूस), उजबेक, कजक, जार्जिया, अजरबेजान, लिथुनिया, मोल्दावी, लेटविया, किरगिज, तदजिहक, अर्मीनिया, तुर्कमन, इस्टोनिया और करेलो फिनिश। इन्हें संघीय गणराज्य (union republics) कहा जाता है। संविधान की दृष्टि से ये एक-दूसरे के सम हैं, यद्यपि आकार व जनसंख्या तथा अन्य बातों में इनके बीच विभिन्नताएँ हैं। इनमें सबसे बड़ा रूस है, जो सोवियत संघ के कुल क्षेत्रफल के लगभग 3/4 भाग में फैला हुआ है और जिसमें कुल जनसंख्या का 3/5 भाग रहता है।

संघीय गणराज्यों में उप विभाग हैं, जिनके प्रकार और संख्या यहाँ दिये जाते हैं—टेरीटरी 6,

प्रदेश 124, स्वाधीन गणराज्य (autonomous republics) 15 स्वाधीन प्रदेश 9 और राष्ट्रीय क्षेत्र (national areas) 10। सोवियत सघ का सीधा सम्बन्ध सघीय गणराज्यो से है, अन्य सभी निम्न स्तरीय इकाइयो की रचना सघीय गणराज्यो द्वारा की गयी है, परन्तु इन्हे भी सोवियत के द्वितीय सदन मे (Soviet of Nationalities) मे प्रतिनिधित्व प्राप्त है। इसी कारण सोवियत सघ को सघो का सघ (federation of federations) कहते है। उदाहरण के लिए अकेले रूसी सघ (R S F S R) मे 5 टेरीटरी, 27 प्रदेश, 17 स्वाधीन गणराज्य और 6 स्वाधीन प्रदेश सम्मिलित है। सम्पूर्ण सोवियत सघ मे 16 सघीय गणराज्यो के अतिरिक्त 61 टेरीटरी, 22 प्रदेश, 9 स्वाधीन गणराज्य, स्वाधीन प्रदेश तथा कई राष्ट्रीय जिले हैं।

शक्तियो का विभाजन—प्रत्येक सघीय गणराज्य का अपना सविधान है। परन्तु इसमे कोई ऐसी बात नही हो सकती जिसका सघीय सविधान से विरोध हो। धारा 18 के अनुसार किसी भी सघीय गणराज्य की सीमाओ मे उसकी सहमति के बिना कोई परिवर्तन नही हो सकता और उन्हे सोवियत सघ से स्वतन्त्रतापूर्वक अलग होने का अधिकार है। सिद्धान्त रूप मे सोवियत सघ की शक्तियाँ स्पष्ट और प्रगणित हैं, जबकि शेष शक्तियाँ गणराज्यो के लिए आरक्षित है। धारा 14 के अन्तर्गत सोवियत सघ की शक्तियो को 4 समूहो मे रखा जा सकता है—पहला सोवियत सघ का अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो मे प्रतिनिधित्व, अन्य राज्यो से सन्धियाँ करना और उनका सम्पुष्टिकरण, युद्ध और शान्ति से सम्बन्धित मामले, प्रतिरक्षा का सगठन और सशस्त्र सेनाओ का निदेशन और राज्य की सुरक्षा का रक्षण। अन्तिम शक्ति के अन्तर्गत सर्वोच्च सोवियत की प्रेसीडियम को सम्पूर्ण सघीय क्षेत्र अथवा किसी प्रदेश मे सघ की सुरक्षा के हित मे सैनिक कानून लागू करने का अधिकार भी प्राप्त है।

दूसरे समूह मे समाजवादी आर्थिक व्यवस्था से सम्बन्धित शक्तियाँ सम्मिलित है। सघीय शासन के मन्त्रालय दो प्रकार के हैं—अखिल सघीय (All-Union) जो केन्द्रीकृत है और सघ गणराज्यीय (Union Republic) जिनका सम्बन्ध उन विषयो से है जो साधारण रूप मे सघीय गणराज्यो के अधीन है। सोवियत सघ राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की इन शाखाओ मे अविभाज्य निदशन की शक्ति रखता है—सचार के साधन, जल परिवहन, भारी और प्रतिरक्षा उद्योग मशीन-निर्माण और खाद्य रसद। तीसरे समूह मे सामाजिक, सास्कृतिक क्षेत्र से सम्बन्धित मामले सम्मिलित हैं तथा शिक्षा, स्वास्थ्य रक्षा और श्रम। पहले दो के बारे मे सघ सरकार को आधारभूत सिद्धान्तो के निर्धारण का अधिकार है (right to establish basic principles) और श्रम के विषय मे 'विधि निर्माण के आधार स्थापित करने (to establish bases of legislation) का अधिकार है। चौथे समूह मे सघ और सघीय गणराज्यो के बीच पारस्परिक सम्बन्धो के क्षेत्र मे सघ की सर्वोपरिता सम्बन्धी सामान्य सिद्धान्त आते है। उदाहरण के लिए सोवियत सघ मे नये गणराज्यो का प्रवेश, सघीय सविधान के पालन पर नियन्त्रण, यह देखना कि सघीय गणराज्यो के सविधान सघीय सविधान के विरुद्ध न हो, सघीय गणराज्यो के बीच सीमा परिवर्तनो का अनुसमर्थन और सघीय राज्यो के भीतर टेरीटरियो, प्रदेशो, स्वाधीन गणराज्यो आदि की रचना का अनुसमर्थन।

सघीय गणराज्यो की शक्तियाँ—अपने सविधान के अनुसार प्रत्येक गणराज्य को ये शक्तियाँ प्राप्त है—यह राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की योजना और गणराज्य के बजट को निश्चित करता है (affirms), यह सोवियत सघ के कानूनो के अनुरूप राज्यीय व स्थानीय करो और अन्य आय स्रोतो को स्थापित करता है, यह बीमे और बचतो का प्रबन्ध करता है भूमि का प्रयोग प्राकृतिक खनिजो, वनो और जल-साधनो का प्रयोग किस क्रम से हो, यह निर्धारित करता है। इन विषयो मे वह सघ सरकार द्वारा स्थापित आधारभूत सिद्धान्तो से मार्ग दर्शन ग्रहण करता है।

के अधीन उद्यमों (enterprises) की दशाओं और प्रशासन को नियन्त्रित करता है और उनका अधीक्षण भी, और यह मार्गों के निर्माण को पूरा करता है तथा स्थानीय परिवहन और संचार का निदेशन करता है। इसके अतिरिक्त संघीय गणराज्य अपने अधीन सांस्कृतिक, शैक्षणिक और वैज्ञानिक संगठनों व संस्थाओं का भी निदेशन करते हैं। उन्हीं के हाथों में सामाजिक बीमे व शारीरिक व्यायाम और खेल आदि का निदेशन है। अन्त में, संघीय गणराज्य अपने अधीन उप विभागों की सीमाओं आदि को निश्चित करते हैं। धारा 15 के अनुसार सोवियत संघ गणराज्यों के अधिकारों की रक्षा करता है। सोवियत संघ में इकहरी नागरिकता है। संघीय गणराज्य का प्रत्येक नागरिक सोवियत संघ का नागरिक होता है।

सोवियत संघ का सच्चा स्वरूप—प्राय सभी विदेशी लेखक यह मानते हैं कि सोवियत संघ सच्चाई में संघात्मक राज्य नहीं है। वास्तव में प्राय सभी महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ राष्ट्रीय सरकार में निहित हैं। सच तो यह है कि सोवियत संघ में कई अनोखी विशेषताएँ हैं जिनका संक्षिप्त विवेचन यहाँ दिया जाता है। एक ओर तो सोवियत संघ का संविधान संघ का संघात्मक शासन की दिशा में विश्व के अन्य संघीय राज्यों से आगे बढ़ गया है, जैसा कि इन बातों से स्पष्ट है—पहला संघीय गणराज्यों को स्वतन्त्रतापूर्वक संघ से अलग होने का अधिकार है। अभी तक इस अधिकार का प्रयोग नहीं हुआ है। आलोचकों की दृष्टि में ऐसा कभी हो भी न सकेगा, क्योंकि यह अधिकार केवल दिखाने के लिए है। कुछ भी हो, अन्य संघात्मक संविधानों में इस प्रकार का प्राविधान भी नहीं है। दूसरे, 1944 में स्वीकृत संशोधन द्वारा संघीय गणराज्यों को महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ प्रदान की गयीं—(1) धारा 18 के अन्तर्गत संघीय गणराज्यों को विदेशी राज्यों से सीधा सम्बन्ध स्थापित करने, उनके साथ कूटनीतिक व वाणिज्य दूतों का विनिमय करने और उनसे सन्धियाँ करने के अधिकार मिले हैं। (2) धारा 18ब के अन्तर्गत संघीय गणराज्यों को अपनी सशस्त्र सेनाओं पर नियन्त्रण का अधिकार है। इन्हीं संशोधनों के परिणामस्वरूप यूक्रेन और बाइलोरूस को संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता प्राप्त हुई। यह स्पष्ट है कि इस प्रकार के अधिकार अन्य किसी संघ राज्य में संघान्तरित इकाइयों को प्राप्त नहीं हैं।

दूसरी ओर सोवियत संघ के संविधान में कई ऐसी बातें हैं अथवा आवश्यक बातों का अभाव है जिनके कारण इसे आलोचक सच्चा संघ नहीं मानते। सोवियत संघ के संविधान में संघात्मक संविधान की सर्वमान्य दो बातों का स्पष्ट अभाव है—पहला सोवियत संघ में न्याय पालिका का संविधान का संरक्षक नहीं बनाया गया है, अर्थात् उसे संघ गणराज्यों के कानूनों पर न्यायिक पुनरवलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं है। साथ ही सोवियत संघ के सर्वोच्च न्यायालय को संविधान की धाराओं के निर्वचन की शक्ति भी प्राप्त नहीं है। दूसरे, संविधान में केवल संघीय सर्वोच्च सोवियत ही अकेले किसी भी प्रकार का संशोधन कर सकती है, अर्थात् संघ व गणराज्यों के बीच शक्तियों के विभाजन से सम्बन्धित कोई भी संशोधन बिना गणराज्य की सहमति अथवा जन निर्णय से किया जा सकता है। इन दोनों आवश्यक बातों के अभाव के कारण सोवियत संघ संघात्मक संविधान के मान्य प्रतिमानों से गिरा हुआ है अथवा सच्चे अर्थ में संघात्मक नहीं है। इन बातों के अतिरिक्त आलोचकों की दृष्टि में, सोवियत संघ में प्राय सम्पूर्ण महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ राष्ट्रीय सरकार में निहित हैं। अधिक से अधिक संघीय गणराज्यों को सांस्कृतिक क्षेत्र में स्वायत्तता प्राप्त है।

उपर्युक्त मत के पक्ष में अग्रलिखित तर्क दिए जाते हैं—(1) सोवियत संघ में सर्वहारा वर्ग की अधिनायकशाही है, जिसका अर्थ, व्यवहार में, साम्यवादी दल की अधिनायकशाही से है। यह सच है कि साम्यवादी दल की स्थिति ऐसी है कि कोई भी क्षेत्र उसके प्रभाव से बाहर नहीं है। विभिन्न राष्ट्रों को अपनी भाषा व संस्कृति के विकास के लिए स्वाधीनता प्राप्त है, किन्तु उनकी

वह सीमित राष्ट्रीय स्वाधीनता कभी भी राजनीतिक क्षेत्र मे अभि यक्त नही हो सकती ।[1] इस बात को इस प्रकार आसानी स समझा जा सकेगा। सोवियत सघ मे भारत व सयुक्त राज्य अमरीका आदि सघात्मक राज्यो की भाति यह सम्भव नही है कि किसी भी गणराज्य मे साम्यवादी दल के अतिरिक्त किसी विरोधी दल का शासन स्थापित हो सके। वहा के शासन की दष्टि मे सघवाद साम्यवाद के ऊपर नही है। (2) सघ सरकार को सम्पूण राज्य क्षेत्र के लिए आर्थिक योजनाएँ बनाने की शक्ति प्राप्त है और सोवियत सघ मे नियोजन सम्पूण जीवन तक विस्तृत है, अत गणराज्या के प्राय समी महत्त्वपूण काय नियोजन के अ तगत आ जात है।

(3) यदि दो सघीय राज्यो अथवा सघ व गणराज्यो के बीच शक्तिया व अधिकार क्षेत्र के सम्ब ध मे कोई विवाद उठे तो उसका निणय सघ सरकार करती है। यह पहले ही बताया जा चुका है कि वहा सर्वोच्च यायालय को आवश्यक शक्तिया प्राप्त नही है। (4) सघ सरकार का उन विषयो—जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, श्रम आदि—के बारे मे भी, जि हे गणराज्यो को सौपा हुआ है, आधारभूत सिद्धा त निर्धारित करने की शक्ति प्राप्त है। (5) अ य अनेक बातो म सघ सरकार गणराज्यो की सरकारो के माग दशन हेतु सामा य सिद्धा त निर्धारित करती है। सघ की सर्वोच्च सोवियत की प्रेसीडियम को गणराज्य की मन्त्रि परिषदो के निणयो को रद्द करने की शक्ति प्राप्त है। प्रेसीडियम इस शक्ति का प्रयोग धारा 49 फ के अ तगत तब करती है जबकि वे सोवियत कानूनो के विरुद्ध हो। (6) सोवियत सघ मे इन सभी बातो तथा प्रोक्यूरेटर जनरल की स्थिति के कारण, जिसे सम्पूण राज्य क्षेत्र मे सोवियत के कठोर क्रियात्मक रूप की देख-रेख के अधिकार प्राप्त हैं वतमान प्रवृत्ति के द्रीकरण की ओर है।[2]

इस विषय म हम कुछ मा य लेखका के मत दते है। मक्स बेलॉफ के अनुसार, 'सोवियत सविधान की दूसरी विशेषता नाम मात्र का सघात्मक तत्त्व है जो पुराने रूसी सघ मे विद्यमान था और जो आज भी सोवियत सघ तथा सघीय राज्यो के बीच सम्ब ध स्थापित करता है।' वास्तव मे वह क्रा तिकारी काल की अस्थायी परिस्थितिया से उत्पन्न हुआ। इसका उदय मार्क्स व लेनिन के सिद्धा तो से नही हुआ, जिनका स्वरूप के द्रीकृत और सघ विरोधी है। व्यवहार मे सोवियत सघवाद इतना सीमित है कि सोवियत सघ को सघात्मक शासन के उदाहरण रूप म पहचानना कठिन है।[3] व्हीयर ने इसे अद्ध सघ बताया है और उसके अनुसार, 'सोवियत सघ को किसी भी दशा मे सघात्मक शासन नही माना जा सकता।' ऑग के अनुसार, 'सघात्मक रूप के बावजूद भी सोवियत सघ म सत्ता का जितना अधिक के द्रीकरण है उसके बराबर चाह ससार के अ य किसी राज्य म हो, कि तु उससे बढ कर तो कही कठिनाई से ही होगा। तथ्य यह है कि सोवियत पद्धति अ तम अर्थ मे सघात्मक नही है।'[4]

अ त मे, सोवियत शासन के सगठन का आधार लोकत न्त्रात्मक के द्रीकरण (Democratic

---

[1] National autonomy has in no way been allowed to find expression in the field of politics which remains the exclusive domain of the Communist Party of the Soviet Union and its subordinate agencies Benkema et al *Contemporary Foreign Government* p 352

[2] Moreover a study of the developments of that area since the Bolshevik Revolution shows conclusively that the trend runs unmistakably in the direction of greater centralism Neumann R G, *op cit* p 569

[3] It is the product of the temporary exigencies of the revolutionary period It does not spring from Marxist Leninist theory which is centralist and anti federal in character Soviet federalism is in practice so limited as to be scarcely recognizable as an example of the federal species —Brierley J L (ed) *Law and Government in Principle and Practice* p 284

[4] Inspite of the forms of federalism centralism of authority in the USSR is possibly equalled but hardly excelled anywhere else in the world In point of fact the system is not federal in any ultimate sense Ogg F A *European Goverrment and Politics* p 837

centralism) का सिद्धान्त है। सोवियत के कृत्यों का सगठन लोकतन्त्रात्मक केन्द्रीकरण सिद्धान्त के अनुसार है। सरल भाषा म इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक स्तर की सोवियत को अपने अधिकार क्षेत्र के विभिन्न कृत्यों को करने के लोकतन्त्रात्मक अधिकार हैं। किन्तु प्रत्येक स्तर की सोवियत पर उच्चतर सोवियत का नियन्त्रण है, यह केन्द्रीकरण सिद्धान्त के अनुसार है। वास्तव मे, यह विभिन्न क्षेत्रों म प्रशासन व प्रबन्ध का मार्गदर्शक सिद्धान्त है। एक सोवियत लेखक के अनुसार इस सिद्धान्त के द्वारा राज्य के हितों और विभिन्न प्रदेशों के हितों के बीच सन्तुलित व्यवस्था है। समाजवादी केन्द्रीकरण नई सामाजिक व्यवस्था के प्रजातन्त्रात्मक स्वरूप की अभिव्यक्ति है।[1] विशिस्की के अनुसार यह केन्द्रीकरण (bureaucratic centralisation) से भिन्न है। वह कहता है कि इसमे विभिन्न इकाइयों की जनता मे स्वाधीनता व स्थानीय स्वय सेवा (अर्थात् प्रजातन्त्र) का भाव जागृत होता है, क्योंकि इसमे विभिन्न प्रदेशों की विशेषताओं और परिस्थितियों का ध्यान रखा जाता है। साथ ही केन्द्रीकरण का सिद्धान्त राज्य के सभी भागों की सामान्य चेतन इच्छा (common conscious will) और हितों को एक राष्ट्र के रूप मे मिलाता है, क्योंकि इसमें आधारभूत नीति के महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर एकरूपता प्राप्त होती है।

परन्तु आलोचकों के मतानुसार व्यवहार मे प्रजातन्त्र कम है और केन्द्रीकरण पर अधिक बल है। फेन्साड का मत है कि प्रजातन्त्रात्मक केन्द्रीकरण मे केन्द्रीकरण को प्रधानता दी जाती है। ऑग और जिक कहते हैं—'यह विश्वास करना कठिन है कि प्रजातन्त्रात्मक केन्द्रवाद म उतना प्रजातन्त्र हो सकता है जितना कि केन्द्रवाद। फिर भी जितने तथ्य उपलब्ध हैं उनके आधार पर यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पूर्ण रूप से स्थानीय प्रबन्ध के मामलो मे किसी सीमा तक स्वतन्त्रता अवश्य रहती है।'[2] सोवियत सघ म आर्थिक नियोजन पर पूर्ण अधिकार सघ सरकार का है, अतएव आर्थिक व्यवस्था मे केन्द्रीकरण होना स्वाभाविक है। इस विषय म मौलिक नीति का निर्धारण और नियोजन सघ सरकार द्वारा किया जाता है। अतएव राज्यों को जो कुछ भी स्वायत्तता अथवा पहल की शक्तियां प्राप्त है उनका क्रियात्मक रूप सघ द्वारा निर्धारित नीति के अनुरूप होना आवश्यक है। विदेशी लेखक भी यह मानते हैं कि सास्कृतिक, शिक्षा व भाषा आदि के क्षेत्र में प्रादेशिक विभागों की सरकारों को काफी मात्रा मे स्वाधीनता प्राप्त है अर्थात् प्रजातन्त्र पाया जाता है। विशिस्की क अनुसार, सोवियत पद्धति और ससद् पद्धति मे मौलिक अन्तर यह है कि 'सोवियत शासन पद्धति म समस्त श्रमिक वर्ग का सार्वजनिक भाग (mass participation) रहता है।'

5 स्विट्जरलैण्ड मे सघात्मक व्यवस्था

स्विटजरलैण्ड मे राष्ट्रीयता और सघात्मक सविधान का विकास साथ साथ हुआ है। 1848 मे ही स्विटजरलैण्ड ने सघात्मक सविधान स्वीकार कर लिया था, यद्यपि इसका नाम अभी तक 'स्विस कन्फेडरेशन' चल रहा है। हॉगुल ने लिखा है—'सघवाद को स्विटजरलैण्ड म छद्मवेष म प्रविष्ट कराया गया। ऐसे कई सघीय कानूनों का केन्टनों द्वारा लागू किये जाने की व्यवस्था और केन्टनो के अधिकारों की बात को बार बार कहने के द्वारा किया गया, परन्तु यह तथ्य छिपाया

[1] *Democratic Centralism* is the balanced adjustment of the interests of the State and those of the different regions forming that State Socialist centralism is an expression of truly democratic nature of the new social order It is a centralism exercised by people's rule in the interests of the working masses a centralism which is in full harmony with the growing initiative and activity of the masses Kovalevsky D I *Soviet Democracy—A Creative Force* pp 38-39

[2] It is difficult to believe that democratic centralism embodies as much of democracy as of centralism However the available evidence leads a student to conclude that there is a certain amount of freedom in routine affairs of a strictly local character Ogg and Zink *Modern Foreign Governments* p 850

नही जा सकता था कि 1848 के सविधान ने स्विट्जरलैण्ड मे सुदृढ सघीय राज्य स्थापित किया, जिसके द्वारा सघ सरकार को कुछ ऐसी शक्तिया सौपी गयी जैसी कि सयुक्त राज्य अमरीका मे भी सघ सरकार को प्राप्त न थी। सघ सरकार को केन्टनो की सरकार (शासन) मे हस्तक्षेप की शक्तियाँ दी गयी और अमरीका की भाँति उसे सीमा म रखने के लिए सर्वोच्च न्यायालय को स्थापित न किया गया।'[1]

1874 और बाद के परिवतनो से सघ की शक्तियो मे वद्धि हुई है। इस सम्बन्ध मे कई बातें विचारणीय है। पहली, स्विट्जरलैण्ड का सविधान सघात्मक होने के कारण लिखित और दुष्परिवतनीय है। इसे स्विटजरलैण्ड का आधारभूत कानून (fundamental law) माना जाता है, किन्तु यह सविधान उस अथ मे सर्वोच्च कानून नही है जिसमे कि सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान है। इसका कारण यह है कि स्विटजरलैण्ड म न्यायिक सर्वोपरिता के सिद्धान्त को स्वीकार नही किया गया है। वहा के सर्वोच्च न्यायालय को सघीय विधायिका द्वारा पास किये गये कानूनो को यदि वे सविधान का अतिक्रमण भी करें, अवैध घोषित करने की शक्ति अथवा न्यायिक पुनरवलोकन की शक्ति प्राप्त नही है। इस शक्ति का केवल केन्टनो के कानूना के विरुद्ध ही प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार सघीय ट्रिब्यूनल को सविधान का निवक्ता और सरक्षक नही कह सकत।

दूसरे, अन्य सघीय सविधानो की तरह स्विट्जरलैण्ड म भी सविधान द्वारा शक्तियो का वितरण किया गया है। ब्राइस के अनुसार सघ और केन्टनो की सरकारो के बीच शक्तियो का *वितरण अमरीकी और आस्ट्रेलियन सघो के समान है। सघ सरकार को स्वतन्त्र केन्टनो से अनेक* शक्तियाँ प्राप्त हुई हैं। इन शक्तियो मे मुख्य सघ सरकार की अनन्य शक्तिया है, जिनका सक्षिप्त वणन यहा दिया जाता है। सघीय सरकार को वैदेशिक सम्बन्धो पर नियन्त्रण प्राप्त है, किन्तु सघ सरकार की स्वीकृति से केन्टन आपस मे तथा पडोसी राज्यो से सीमा व पुलिस आदि के बारे म समझौते कर सकते है। सघीय सरकार ही युद्ध की घोषणा कर सकती है, शान्ति-सन्धि कर सकती है और वही राष्ट्रीय सेना का प्रबन्ध करती है। कोई भी केन्टन सघ की आज्ञा बिना 300 सनिको से अधिक की सेना नही रख सकता। एक दो रेल मार्गों को छोडकर सभी रेल मार्गों का स्वामित्व तथा सचालन सघीय सरकार के हाथो मे है। सघीय सरकार सभी सघीय सम्पत्ति का *प्रशासन करती है, डाक और तार, कॉपीराइट, मुद्रा और राष्ट्रीय वित्त, बैंक और आयात व* निर्यात महसूल आदि भी सघीय सरकार के अधीन है। सघ सरकार का ही जल शक्ति पर नियन्त्रण है और उसे शराब व बारूद के उत्पादन पर एकाधिकार प्राप्त है। सघ सरकार को वाणिज्य पर कानून बनाने की शक्ति प्राप्त है और उसने पूण नागरिक सहिता का निर्माण किया है। सघ सरकार ही सविधान का अथ लगाती है।

उपर्युक्त अनन्य शक्तियो के अतिरिक्त सघ सरकार को कुछ समवर्ती शक्तियाँ भी प्राप्त हैं अर्थात् सघ सरकार कुछ शक्तिया का प्रयोग केन्टनो की सरकारा के साथ साथ करती है। इस क्षेत्र म ये विषय सम्मिलित हैं—औद्योगिक दशाएँ, बीमा, राज माग आदि की देख रेख, और समाचार-पत्रो व शिक्षा का विनियमन। जब सघ सरकार ऐसे विषया के बारे मे कानून बनाती है तो उसके कानूनो को केन्टनो के कानूनो के ऊपर मान्यता मिलती है। भारत के सविधान म इन शक्तियों की सूची काफी बडी है। सविधान की धारा 42 के अनुसार सघ सरकार की आय के स्रोत य है—(1) डाक, तार, टेलीफोन आदि सघीय सम्पत्ति, (2) रेलवे, (3) सघीय आयात और निर्यात महसूल, (4) बारूद के एकाधिकारी उत्पादन, (5) सैनिक सेना स मुक्त व्यक्तियो पर केन्टना

[1] Hawgood John A *Constitution Since 1787* p 186.

लगाया कि उसके परिणामस्वरूप राज्यो को आय कर के क्षेत्र से अलग होना पडा। परन्तु संघ सरकार ने उन्हे इस बात पर कि वे आय कर न लगायेंगे उनको कर से होने वाली आय के आधार पर आय कर मे से भाग देने का वचन दिया। राज्यो ने कॉमनवैल्थ के कार्य के विरुद्ध उच्च न्यायालय म कानूनी कार्यवाही की, परन्तु उन्हे सफलता न मिली। इस प्रकार कॉमनवैल्थ ही एकमात्र आय कर लगाने वाली सत्ता रह गयी और फलत सम्पूर्ण आस्ट्रेलिया मे एकरूप आय कर लागू हुआ। इस परिवतन का एक महत्त्वपूर्ण परिणाम यह निकला कि राज्य वित्तीय दृष्टि से कामनवैल्थ सरकार के अधीन हो गये। यह मामला अभी तक एक जीवित प्रश्न बना हुआ है। प्रतिवर्ष कॉमनवैल्थ सरकार और राज्य सरकारो के बीच आय कर से होने वाली आय मे अपने अपने भाग के लिए संघर्ष होता है।

सहयोग—व्हीयर का मत है कि कनाडा व संयुक्त राज्य अमरीका की तुलना म आस्ट्रेलिया मे मुख्य-मन्त्रियो के सम्मेलनो और ऋण परिषद् आदि जैसे अभिकरणो द्वारा बहुत अधिक सहयोग की प्राप्ति हो सकी है। कनाडा मे डोमिनियन व प्रान्तो के मुख्य मन्त्रियो के कभी कभी सम्मेलन हुए हैं, किन्तु नियत अवधि के बाद नही। संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान द्वारा किसी राज्य की अन्य राज्यो के साथ काग्रेस की सहमति के बिना किसी प्रकार का समझौता (इकरार) करने की मनाई की गयी है परन्तु आस्ट्रेलिया म सहयोग संघीय पद्धति का एक अति आवश्यक साधन है।

निकोलस के अनुसार सहयोग के अग्रलिखित रूप रहे हैं (1) कॉमनवैल्थ संसद द्वारा बनाये गये कानून उनमे वर्णित अवधि तक लागू रहते हैं और वे उन विषयो के बारे मे जिनके बारे मे वे बनते हैं, कॉमनवैल्थ व राज्यो के सम्बन्धो को पारिभाषित करते है। (2) कामनवल्थ व राज्यो के बीच वित्तीय सम्बन्धों को स्थायी बनाने मे ऋण परिषद् ने बडा योग दिया है। (3) राज्यो के बीच तथा राज्या व कॉमनवैल्थ के बीच समझौते हो सकते हैं। (4) ऐसे सम्मेलन या बोर्ड जिनमे कॉमनवैल्थ व राज्यो के मन्त्री व विभागो के अध्यक्ष प्रतिनिधि रूप मे भाग लते हैं यथा कृषि की राष्ट्रीय परिषद्, दूध से बनी वस्तुओ के निर्यात की नियन्त्रण बोड। (5) पूरक कानून द्वारा सहयोग। (6) कॉमनवैल्थ वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान सगठन तथा कॉमनवैल्थ शिक्षा विभाग जैसे सगठनो की स्थापना द्वारा। (7) सामान्य निर्वाचक सूची तथा आय कर सम्बन्धी फार्मों क सम्बन्ध मे समझौत।[1]

निष्कर्ष—संविधान म दिये गये विभिन्न प्रावधानो तथा अन्य प्रावधानो के परिणाम स्वरूप संघ सरकार की शक्तियो मे बहुत वृद्धि हुई है, ये है (1) संघीय संसद कॉमनवल्थ और राज्य की सामुद्रिक व सैनिक प्रतिरक्षा के लिए कानून बना सकती है। (2) संघीय संसद एस औद्योगिक विवादो को, जिनके सम्बन्ध एक राज्य की सीमा से आगे तक हो, मेल मिलाप तथा पच निर्णय द्वारा हल करने के लिए कानून बना सकती है। (3) न्यायिक पुनरवलोकन ने संघ सरकार के कार्य क्षेत्र को कई बातो मे विस्तृत कर दिया है। युद्ध काल मे प्रतिरक्षा को बडा व्यापक अर्थ दिया गया है। (4) संघ सरकार को 1926 मे हुए उस सांविधानिक संशोधन से वृद्धि पूर्ण शक्ति प्राप्त हुई जिसने संघ सरकार को राज्यो के साथ उनके ऋणो के सम्बन्ध म समझौता करने की शक्ति प्रदान की। (5) कॉमनवैल्थ की स्थापना से भी संघ सरकार की शक्ति बढी। (6) संघ सरकार द्वारा आय कर विभाग अपने हाथो म लेने तथा राज्या को अनुदान देने की पद्धति स संघ सरकार की शक्ति बहुत बढी। इस प्रकार संविधान का सन्तुलन स्थायी रूप म संघ सरकार के पक्ष मे ढलना है और उसका परिणाम संघ सरकार की वृद्धिपूर्ण सुदृढता है।[2]

---

[1] Nicholas H S *The Australian Constitution* pp 37-39

[2] Thus the balance of the Constitution has been permanently tilted towards the Federal side and the net effect is of growing Federal strength Miller J D B *Australian Government and Politics* pp 147-58

7 कनाडा मे सघात्मक व्यवस्था

(1) विधायी सम्ब ध—कनाडा के शासन की प्रमुख विशेषता यह है कि उसका सविधान सघात्मक है, फलत सघ और प्रा तो के बीच शक्तियो का वितरण सविधान द्वारा किया गया है। वितरण का आधार यह है कि व्यापक राष्ट्रीय हित के विषयो को सघ सरकार को सौपा गया और स्थानीय तथा प्रा तीय महत्व के विषय प्रा तो को सौंपे गये हैं। पर तु यथाथ वितरण कुछ पेचीदा है, जिसका वणन यहाँ पर सक्षेप म दिया जाता है। सघ सरकार को प्रदान की गयी शक्तियो को .ब्रिटिश नॉथ अमरीका कानून म सैक्शन 91 म दिया गया है। इस समूह म 29 विषय सम्मिलित है, जिसके बारे मे सघीय पालियामट को विधि निर्माण की अन य (exclusive) शक्ति प्राप्त है। सैक्शन 92 म कहा गया है कि प्रत्येक प्रा तीय विधानमण्डल अग्रलिखित विषयो के बारे मे अन य कानून बना सकता है—(1) प्रा त के सविधान का समय समय पर सशोधन, कि तु लफ्टिने ट-गवनर का पद छोड़कर, (2) प्रा तीय प्रयोजनो के लिए प्रत्यक्ष कर, (3) प्रा तीय साख पर ऋण लेना, (4) प्रा तीय सेवायें, (5) प्रा त की सावजनिक भूमि तथा उस पर उगने वाली लकडी व जगलो का प्रब ध तथा बिक्री, (6) जेलो व सुधार गृहो का प्रब ध, (7) अस्पताल व दान सस्थायें, (8) म्युनिसिपल सस्थायें (9) दूकान व सराय आदि के लाइसे स, (10) स्थानीय निर्माण काय, (11) प्रा तीय उद्देश्यो के लिए कम्पनियो का निगमन, (12) प्रा तो म विवाह की रस्म, (13) प्रा त मे सम्पत्ति व नागरिक अधिकार, (14) न्याय प्रशासन, (15) कानून पालन हेतु दण्ड व जुर्माने, और (16) स्थानीय अथवा व्यक्तिगत स्वरूप के अ य सभी मामले।

सैक्शन 93 के अनुसार प्रा तीय विधानमण्डल अग्रलिखित प्राविधानो के अधीन शिक्षा क सम्ब ध मे अ य कानून बना सकते हैं—(1) ऐसे कानून का कोई प्राविधान सघ के समय स स्थापित किसी वग के साम्प्रदायिक अथवा धार्मिक स्कूलो के अधिकारो पर कोई बुरा प्रभाव न डालेगा। (2) यदि किसी प्रान्त म पृथक स्कूलो का अस्तित्व है, तो किसी भी प्रा तीय कानून अथवा अधिकारी के उन स्कूलो के सम्ब ध म दिये गये निणय के विरुद्ध अपील सपरिषद् गवनर-जनरल के समक्ष की जायगी। सक्शन 94 के अनुसार ओ टेरियो, नोवास्कोशिया और न्यूब्र जविक के लिए सम्पत्ति व नागरिक अधिकारो तथा यायालयो म प्रक्रिया के सम्ब ध म एकरूपता के उद्देश्य से कनाडा की पालियामेट कानून बना सकती है। (3) कनाडा की पालियामट वृद्धावस्था की पे शना के सम्ब ध म कोई भी कानून बना सकती है, कि तु कोई भी ऐसा कानून उस विषय पर बन किसी प्रा तीय कानून पर प्रभाव नही डालेगा। (4) सैक्शन 95 के अनुसार प्रत्येक प्रा त का विधानमण्डल प्रा त म कृषि और आप्रवासन के विषय मे कानून बना सकता है और कनाडा की पालियामट भी सम्पूण कनाडा या किसी प्रा त के लिए इन विषयो पर कानून बना सकती है कि तु इन विषयो पर बना कोई भी प्रा तीय कानून उसी प्रा त म तब तक और वही तक लागू रहगा, जब तक और जहाँ तक वह सघीय पालियामेट के कानून से असगत न हो।

विभिन सूचियो मे किया गया कोई भी शक्तियो का वितरण पूण नही हो सकता, अतएव सघीय सविधान म अवशिष्ट शक्ति के विषय मे प्राविधान होना चाहिए। ब्रिटिश नॉथ अमरीका कानून, 1867 ने कनाडा की पालियामे ट को 'शान्ति, व्यवस्था और कनाडा के शासन क सम्ब ध मे साधारण रूप से कानून बनाने की शक्ति प्रदान की है। यह एक प्रकार से उन सभी विषयो के बारे मे साधारण रूप से प्रयोग की जा सकती है, जि हे प्रा तो को न सौंपा गया हो। इसी प्रकार सैक्शन 92 म भी निहित है कि 'प्रा तीय विधानमण्डल को प्रा त के सभी स्थानीय तथा व्यक्तिगत स्वरूप वाल मामलो के बारे म साधारणतया कानून बनाने की शक्ति प्राप्त है।' सघीय व प्रा तीय विधानमण्डलो को सविधान से अलग अलग विधायी शक्तियाँ मिली हैं अर्थात् प्रा ती

सरकारो की शक्तियाँ सघ से प्राप्त नही है। सघीय व प्रा तीय सरकारें अपनी अपनी शक्तियों का प्रयोग अपने अपने अधिकार म करती हैं।

(2) वित्तीय सम्ब ध—ब्रिटिश नॉथ अमरीका कानून द्वारा सघ व प्रा तीय सरकारों की पृथक सचित निधियाँ हैं। सभी भूमि, खानें, खनिज-पदार्थ और रायलीटी की आय जो कि सघ निर्माण क समय प्रा ता की थी प्रा तो की ही रहेगी। किसी भी प्रा त की पैदावार, उत्पादन और कारखाना म बनी सभी वस्तुयें सघ बनने के समय से अ य प्रा तो मे भी स्वत त्रतापूर्वक जा सकती हैं। किसी भी ऐसी भूमि या सम्पत्ति पर कर नही लगेगा जो कि कनाडा या किसी प्रा त की हो।

(3) यायिक सम्ब ध—कनाडा के सघ मे यायालयो का एक ही समूह है। विभिन्न स्तरो के यायालय एक प्रकार का पिरामिड बनाते हैं। इस बात म कनाडा की यायपालिका भारत की यायपालिका से मिलती है और सयुक्त राज्य अमरीका की यायपालिका से भिन्न है।

प्रा तीय सविधान—ब्रिटिश नाथ अमरीका कानून के अध्याय पाँच म प्रा तीय सविधाना के विषय मे कई सैक्शन दिये गय हैं। सैक्शन 58 के अनुसार प्रत्येक प्रा त का लेफ्टिने ट गवनर सपरिषद् गवनर जनरल द्वारा नियुक्त किया जाता है। सैक्शन 60 के अनुसार लेफ्टिने ट-गवनर के वेतन पालियामे ट द्वारा निर्धारित होते हैं और वही उनके दिये जाने के लिए व्यवस्था करती है। आवश्यकता पडने पर सैक्शन 67 के अनुसार, सपरिषद् गवनर जनरल किसी लेफ्टिने ट गवनर की अनुपस्थिति, बीमारी या अयोग्यता के दौरान उसके कार्यों के सचालन हेतु प्रशासक नियुक्त कर सकता है। लेफ्टिने ट गवनर चाहे तो प्रा तीय विधानमण्डल द्वारा पास किये गये किसी विधेयक को गवनर जनरल की स्वीकृति क लिए रोके रख सकता है और जिन कानूनो पर लेफ्टिने ट गवनर की अनुमति प्राप्त हो गयी हो उ हे भी एक वष के भीतर गवनर-जनरल अस्वीकृत कर सकता है। परन्तु 1882 से यह मान लिया गया है कि प्रा तीय विधानमण्डल द्वारा पारित किसी विधेयक को गवनर जनरल की स्वीकृति के लिए रोका जाना म त्रिमण्डल के उत्तरदायित्व के विरुद्ध है। अतएव अब किसी विधेयक को तब तक नही रोका जाता जब तक कि सघ के म त्री ऐसी आज्ञा न दें। तदनुसार प्रा तीय कानूनो पर सघ की प्रतिषेध शक्ति इस समय उ ह अस्वीकार करने तक ही सीमित है। प्रा तीय सविधाना के प्राविधानो मे पालियामे ट भी कुछ सशोधन कर सकती है, पर तु प्रा तीय सविधान सम्ब धी अनेक विषयो पर प्रा तीय विधानमण्डल ही कानून बना सकते हैं।

8 पश्चिमी जर्मनी मे सघ

यद्यपि जमनी मे सघवाद का इतिहास बहुत पुराना है कि तु हम वतमान व्यवस्था पर आने से पूव अति सक्षप मे वमर गणत त्र और नाजी जमनी मे सघवाद के बारे मे कुछ कहेंगे। प्रथम विश्वयुद्ध ने केवल प्रशिया की शक्ति को ही नही वरन् उन सभी राज्यो क शासक वशो को भी नष्ट किया जो कि जमन साम्राज्य के सघ मे सम्मिलित थे। चूकि अब प्रशिया का भय नहीं रह गया था, इस बात का प्रयत्न किया गया कि जमनी मे एकात्मक राज्य की रचना की जाय। परन्तु बहुत विचार के बाद एक नये सघ की स्थापना का निणय किया गया, एक ऐसे सघ का जिसमे सघीय सत्ता बहुत सुदृढ हो और राष्ट्रपति निर्वाचित हो तथा राष्ट्रपति पद के लिए प्रत्येक नागरिक योग्य हो। सघ की स्थापना के साथ प्रदेशो का कुछ पुनगठन हुआ और प्रत्येक नय राज्य (landes) को प्रजात त्रात्मक सविधान बनाने के लिए बाध्य किया गया।

इस प्रकार बने गणत त्र (Weimar Republic) के सविधान मे सघीय सरकार की शक्तियो को प्रगणित किया गया, पर तु दो सूचियो मे से एक सूची मे तो केवल वे शक्तियाँ सम्मिलित की गयी जो केवल सघ सरकार के हाथो मे रही। दूसरी सूची मे वे शक्तियाँ सम्मिलित की गयी जिनम सघ सरकार के साथ राज्य सरकारें भी भागीदार रही। सक्षेप म, वैमर गणत त्र

के अन्तगत सघवाद की तीनो आवश्यक बातें विद्यमान थी—(1) सविधान की सर्वोपरिता, (2) शक्तियो का वितरण, और (3) मत भेद की अवस्था मे साविधानिक प्राविधाना का निवचन करने के लिए एक उच्च न्यायालय। परन्तु फिर भी जमन सविधान की दो अनोखी विशेषतायें थी पहला, शक्तियो का विभाजन तीन सूचियो मे किया गया था—सघीय विषयो की सूची, समवर्ती विषयो की सूची और अवशिष्ट विषयो की सूची। दूसरी विधानमण्डल (Reichstag) के दूसरे सदन मे (Reichsrat) मे, जिसे राज्यो का प्रतिनिधि बनाया गया था, सभी राज्यो के प्रतिनिधि बराबर न होकर राज्यो की सख्या के अनुपात मे थे।[1] इनके अतिरिक्त, समवर्ती शक्तियो को दो वर्गो—स्वतन्त्र और शर्तमय म—रखा गया था। पहले वग मे सम्मिलित विषयो के बारे म सघीय विधानमण्डल स्वत त्रतापूवक कानून बना सकता था, परन्तु दूसरे वग मे सम्मिलित विषयो के बारे मे विधानमण्डल की विधायी शक्ति सीमित थी। इस सम्ब ध म धारा 9 मे विहित किया गया था 'जहा कही सामाजिक कल्याण के प्रोत्साहन तथा सावजनिक व्यवस्था व सुरक्षा बनाये रखने के लिए विधानमण्डल एकरूप विनिमय जारी करना आवश्यक समझे।'

उपयुक्त शक्तियो के अतिरिक्त सघीय विधानमण्डल को सविधान से यह शक्ति भी मिली थी कि वह प्राकृतिक साधनो और आर्थिक उद्यमो के बारे म राज्य द्वारा समाजीकरण हेतु निर्मित कानूनो पर विशेष प्रतिषेध शक्ति का प्रयोग कर सके। वास्तव मे सघीय विधानमण्डल को सभी बातो मे विधि निर्माण का अधिकार दिया गया था, विशेषरूप से राज्य के आधारभूत कार्यों मे आर्थिक और सास्कृतिक दृष्टियो स, अपनी प्रतिनिधिक व प्रशासनिक सस्थाओ मे, शैक्षिक पद्धति के आधारो मे, सामा य नागरिक अधिकारो के मामले मे, जमनी एक था अथवा एक होने के माग पर काफी अग्रसर हो गया था। इस सघीय व्यवस्था को नष्ट कर हिटलर ने एक नये प्रकार का (नाजी) सघवाद कायम किया। 1933 के चुनावो के बाद नाजियो का आठ राज्यो पर (जो प्रधानत उत्तरी जमनी मे स्थित थे) निय त्रण स्थापित हो गया था, अ य छ राज्यो की सरकारो को उन्होने त्यागपत्र देने के लिए विवश किया। 31 माच 1933 को उ होने प्रथम सम वय कानून (first co ordination act) पास किया, जिसका उद्देश्य राज्यो का रीच (Reich) के साथ एकीकरण था। उसके अन्तगत रीच आयुक्त नियुक्त किये थे जिनका काय राज्यो म हिटलर की नीतियो को लागू करना था। राज्यो की केबिनेटो को विधायी सत्ता धारण करने की शक्ति प्रदान की गयी थी। एक राज्य के विधानमण्डल को छोडकर सभी राज्यो के विधानमण्डलो को विघटित करके चार वष की अवधि के लिए पुनगठित किया गया। 7 अप्रल 1933 को रीच सरकार ने दूसरा सम वय कानून बनाया, जिसके अनुसार रीच आयुक्तो को गवनर कहा गया और उन्ह स्थायी सत्ता प्रदान की गयी। राज्यो के गवनरो की नियुक्ति चासलर की नामजदगी पर रीच के राष्ट्रपति द्वारा की गयी और उन्ह राज्यो की सरकारो को नियुक्त व अपदस्थ करने, विधानमण्डलो को विघटित करने, नये चुनावो के लिए आदेश जारी करने, राज्य कानून बनाने और उन्ह प्रकाशित करने की शक्तिया प्रदान की गयी। इनके अतिरिक्त राज्य की केबिनेट के प्रस्ताव पर गवनर उच्चतर अधिकारियो व न्यायाधीशो को नियुक्त और अपदस्थ कर सकता था तथा क्षमादान शक्ति का प्रयोग कर सकता था।

30 जनवरी 1934 के कानून (The Law for the Reconstruction of the Reich) के अ तगत अग्रलिखित आज्ञप्तिया जारी की गयी—(1) राज्यो मे लोकप्रिय प्रतिनिधित्व का उन्मूलन किया गया और 1935 म राज्य विधानमण्डलो का उन्मूलन किया गया। (2) राज्यो के प्रभुत्व पूण अधिकारो को रीच को हस्तान्तरित किया गया। (3) राज्यो के मन्त्रिमण्डलो को रीच के

[1] Strong C F *op cit* p 126

मन्त्रिमण्डल के अधीन रखा गया। (4) राज्यों के गवर्नरों को, जो अब तक हिटलर के अधीन थे, आन्तरिक मामलों में मन्त्री के अधीन रखा गया। (5) रीच की केबिनट राज्यों के लिए नये सांविधानिक अधिकार स्थापित कर सकती थी। 30 जनवरी 1935 को एक नये कानून (Act relating to the Reich Governors) द्वारा राज्यों के बचे हुए व्यक्तित्व का अन्त कर दिया गया। इसके आगे, नाजी सरकार ने राष्ट्र-व्यापी कानूनों के क्षेत्र को विस्तृत किया, और जनवरी 1937 के नागरिक सेवा कानून (Civil Service Act) ने राष्ट्र, राज्यों और म्युनिसिपलिटियों तक के नागरिक सेवकों को केन्द्र द्वारा विनियमित करने के अधिकार सौंपे। नाजियों द्वारा लागू किये गये इन सभी सुधारों का प्रयोजन रीच और राज्यों के बीच सभी प्रकार के द्वैतवाद का अंत करना था। परन्तु विभिन्न राज्यों के प्रशासनों का कभी भी विलोपन नहीं किया गया।[1]

वर्तमान संघीय व्यवस्था—वर्तमान संविधान के आधारभूत कानून (Basic Law) ने जर्मनी में एक अजीब प्रकार के संघवाद को जन्म दिया है। स्विट्जरलैण्ड में विकसित संघवाद का नमूना, जिसे बाद में जर्मनी और आस्ट्रिया ने अंगीकृत किया था और जिसे अब आधारभूत कानून द्वारा पुनर्जीवित किया गया है, पुराने संघवाद से बहुत भिन्न है। वहाँ के नागरिक दो सरकारों (संघीय व राज्यीय) के अधीन हैं, परन्तु वे एक दूसरे में कहीं अधिक मिश्रित हैं। अधिकतर बातों में संघीय प्राधिकरणों की स्थिति स्पष्टतः उच्चतर है। संघ सरकार को स्पष्ट रूप में वर्णित शक्तियाँ बहुत बड़ी हैं और अधिकतर महत्त्वपूर्ण विषयों में राज्यों के प्रशासन (land administration) संघीय कानूनों को कार्यान्वित करने वाले हैं, जिनका संघ सरकार प्रशासनिक निर्देशों द्वारा मार्ग दर्शन करती है और जो संघीय परिवीक्षण के अन्तर्गत है। संघ सरकार को अनन्य विधायन (exclusive legislation) की सारमय शक्तियाँ दी गयी हैं और राज्य सरकारें तभी कानून बना सकती हैं जबकि संघीय कानून उन्हें विशिष्ट रूप से अधिकार प्रदान करे। समवर्ती विधायन के क्षेत्र में राज्य सरकारें केवल उसी सीमा तक कानून बना सकती हैं जहाँ तक कि संघ सरकार अपनी शक्तियों का प्रयोग न करे। इस प्रकार विधायन के क्षेत्र में संघ सरकार की स्पष्ट प्रधानता है, जबकि राज्य सरकारों के हाथों में प्रशासनिक कार्यों और सरकारी सेवकों का अधिकांश भाग कायम है।[2]

संघ और राज्यों के बीच शक्तियों के विभाजन में संघ सरकार को सभी महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त हैं। धारा 73 में संघ सरकार को अनन्य शक्तियाँ दी गयी हैं, जिनमें ये सम्मिलित हैं—वैदेशिक मामले, प्रतिरक्षा, संघीय नागरिकता, आवागमन और आन्तरिक व्यापार की स्वतन्त्रता, मुद्रा, रेलें, डाक, तार और संघीय सेवकों की कानूनी स्थिति। समवर्ती सूची में प्रगणित संघ सरकार की शक्तियों में इन्हें सम्मिलित किया जा सकता है—दीवानी और फौजदारी, कानून और प्रक्रिया, संगठनों व सभाओं का विनियमन, शरणार्थी, सार्वजनिक कल्याण, युद्ध से हुई क्षतियाँ, आर्थिक शक्ति के दुरुपयोगों को रोकना, कृषि, गृह निर्माण, स्वास्थ्य, जहाजरानी और परिवहन के साधन।

संघ सरकार राज्यों में सांविधानिक व्यवस्था की गारंटी देती है। अधिकतर बातों में संघीय कानून राज्यों के कानूनों के ऊपर प्रभावी होते हैं। राज्य सरकारें संघीय कानूनों को कार्यान्वित करती हैं। वे अपने प्रशासन का स्वयं संगठन करती हैं और सरकारी अधिकारियों की नियुक्ति करती हैं परन्तु संघ सरकार सामान्य प्रशासनिक विनियम जारी कर सकती है। आधारभूत कानून द्वारा ही संघ सरकार और राज्यों के बीच वित्तीय साधनों का वितरण किया

[1] Finer H *op cit* p 212

[2] Ward and Macridis *Modern Political Systems—Europe* p 339

गया है। वित्तीय नीति के निर्धारण मे, सघीय नियन्त्रण—प्रत्यक्ष और परोक्ष—निर्णायक हैं। सघीय विधानमण्डल (Bundestag) मे आधे सदस्य (247) एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रो से चुने जाते है और शेष आधे सदस्यो का चुनाव, प्रत्येक राज्य म उम्मीदवारो की दलीय सूचियो से आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार किया जाता है।

9 नाइजीरिया, युगोस्लेविया और मलयेशिया मे सघात्मक व्यवस्था

(1) नाइजीरिया—स्वतन्त्र नाइजीरिया के नेताओ व सविधान निर्माताओ के सामने, भारत की भाति, देश के विभिन्न भागो के निवासियो की भिन्न भिन्न सस्कृतियो व भाषाओ की समस्या आई। इनके अतिरिक्त वहाँ के निवासियो मे अन्य सामाजिक व आर्थिक विविधतायें भी हैं। इस समस्या का एक ही हल था जिसे उन्होने अपनाया। सविधान निर्माताओ ने सम्पूर्ण देश की एकता बनाये रखने तथा विभिन्न भागो व प्रदेशो की विविधताओ के लिए समुचित व्यवस्था करने के उद्देश्य से सघात्मक सविधान बनाया। उन्होने आस्ट्रेलिया के नमूने पर सघीय सत्ता पर कठोर सीमायें लगायी जिससे सघ सरकार प्रदेशो की शक्तियो मे हस्तक्षेप न कर सके। फिर भी सघ सरकार को बहुत ही व्यापक शक्तिया सौंपी गयी हैं जैसा कि आगे के विवेचन से स्पष्ट होगा। वर्तमान सविधान मे भी पूर्वगामी (1958 के) सविधान मे अल्पसख्यको के हितार्थ समाविष्ट कुछ सरक्षणो को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है, जिनमे ये दो उल्लेखनीय है—

सघ और प्रदेशो के बीच शक्तियो का वितरण दो सूचियो—अनन्य और समवर्ती—के द्वारा किया गया है। सघ सरकार को दोनो सूचियो मे प्रगणित सभी विषयो पर कानून बनाने की शक्ति मिली है। समवर्ती सूची मे सम्मिलित विषयो तथा इन दोनो सूचियो से बचे विषयो पर प्रदेश सरकारें कानून बना सकती हैं। समवर्ती सूची मे सम्मिलित किसी विषय पर दोनो ही सरकारें कानून बना सकती हैं, परन्तु यदि दोनो सरकारो द्वारा बनाये कानूनो मे अन्तर अथवा असगति हो तो सघ सरकार द्वारा निर्मित कानून लागू होगा और प्रदेश सरकार का कानून प्रभावित न रहगा। सघ सरकार की शक्तियाँ काफी विस्तृत और अति महत्त्वपूर्ण है जैसा कि निम्नलिखित बातो से स्पष्ट होगा।

सघ सरकार को पूर्ववर्णित दो विधायी सूचियो म प्रगणित विषयो के अतिरिक्त कुछ विशिष्ट शक्तिया भी प्रदान की गई हैं। यह न्यायालय स्थापित कर सकती है, न्यासो (trusts) को प्रशासित करने के लिए प्राधिकरण को स्थापित तथा विनियमित कर सकती है, और प्रदेशो म सिनेमा फिल्मो को सेंसर कर सकती है। सघीय ससद किसी भी नये प्रदेश के लिए उसकी रचना के बाद साधारणतया छ माह के लिए कानून बना सकती है। सघ सरकार की शक्ति का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत यह है कि ससद अपनी क्षमता से बाहर वाले प्रयोजनो के लिए भी अनुदान दे सकती है। चूंकि सघ सरकार की वित्तीय अवस्था प्रदेशो की अपेक्षा बहुत अच्छी है, अत अनुदानो व ऋणो के द्वारा सघ सरकार अपनी शक्ति मे वृद्धि कर सकती है। यहा यह उल्लेखनीय है कि ऐसी ही शक्ति के प्रयोग द्वारा सयुक्त राज्य अमरीका म सघ सरकार की शक्ति मे बडी वृद्धि हुई है। परन्तु सघ सरकार की विशेष शक्तियो मे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तो वे हैं जिनका सम्बन्ध सघ के परिवीक्षण और आपात्काल से है।

नाइजीरिया का सविधान किसी भी प्रदेश को सघ से अलग होने का अधिकार तो प्रदान करता ही नही, अपितु प्रदेश सरकारो को आदेश देता है कि वे अपनी कार्यपालिका शक्तियो का प्रयोग इस प्रकार न करें कि जिससे सघ की कार्यपालिका शक्ति को खतरा पहुँचे या उसम बाधा पडे अथवा सघ सरकार की स्थिरता को खतरा पैदा हो। इस प्रावधान को प्रभावी बनाने के लिए सघीय विधानमण्डल अपराधी प्रदेश को ऐसा करने से रोकने के लिए आवश्यक कार्यवाही

कर सकती है । यदि पार्लियामेन्ट के दोनों सदन दो तिहाई के बहुमत से यह प्रस्ताव प
कि अमुक प्रदेश ऐसी मनाही का उल्लघन कर रहा है तो पार्लियामेन्ट उस प्रदेश क ि
से बाहर भी कानून बना सकती है ।

आपात्काल के सम्बन्ध मे सघीय पार्लियामेन्ट की शक्ति सबसे अधिक मह
आपात्काल मे पार्लियामेन्ट शान्ति, व्यवस्था और सुशासन को बनाये रखन अथवा प्र
प्रयोजन से सम्पूर्ण नाइजीरिया के लिए कानून बना सकती है । सक्षेप म, आपात्काल
विषय पर नाइजीरिया की विधायी शक्ति का प्रयोग पार्लियामेन्ट द्वारा किया जा
ऐसा करने के लिए पार्लियामेन्ट को केवल यह दिखलाना आवश्यक है कि इस शर्त
करते हुए बनाया गया कानून 'शान्ति, व्यवस्था और सुशासन का बनाये रखने त
के लिए आवश्यक या इष्टकर है ।'[1] पार्लियामेन्ट को एक और महत्त्वपूर्ण शक्ति
अन्तर्राष्ट्रीय सधियो, समझौतो या ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय सगठनो के निणयो का जिनका ि
सदस्य हो, लागू अथवा कार्यान्वित करने के लिए विधायी सूचियो का ध्यान न रखने
बना सकती है ।

(2) युगोस्लेविया—युगोस्लेविया का सघ भारत की भाँति कई उपराष्ट्रो
है । उसके विभिन्न उपराष्ट्रो व जातियो के बीच अनेक प्रकार की विविधतायें हैं ।
आवश्यक और पूर्णतया न्यायोचित था कि ऐसे देश का सविधान सघात्मक हो ।
सघ छ गणतन्त्रो से मिलकर बना है, जिनके अपने सविधान हैं । इस दृष्टि से
सघात्मक सविधान भारत के सविधान की अपेक्षा सयुक्त राज्य अमरीका के स
मिलता है, क्योकि भारत के सविधान मे तो सघान्तरित राज्यो का सविधान
युगोस्लेविया के सघ मे छ गणतन्त्रो के अतिरिक्त भी दो स्वायत्तता प्राप्त प्रा
के गणतन्त्र के ही भीतर हैं । सभी गणतन्त्र (मॉटीनीग्रो को छोडकर) और दोना
प्रान्त, जिलो व कम्यूनो में विभाजित है । प्रत्येक गणतन्त्र मे एक एसेम्बला
प्रभुता का प्रतिनिधित्व करती है और गणतन्त्र मे शासन का सर्वोच्च निका
अधिकारो और कर्त्तव्यो का सघीय सविधान, गणतन्त्रीय सविधान व सघीय का
तथा उनके ढाँचे के भीतर पालन करती हैं । सघीय एसेम्बली की भाति गण
भी पाँच चेम्बर हैं, जिनके नाम ये हैं—गणतन्त्रीय चेम्बर, आर्थिक चेम्बर,
चेम्बर, सावजनिक स्वास्थ्य व सामाजिक कल्याण चेम्बर और सगठनात्मक
गणतन्त्र की एसेम्बली म सघीय के स्थान पर गणतन्त्रीय चेम्बर है किन्तु
राष्ट्रो के चेम्बर जैसा कोई अग नही है और अन्य चेम्बरो के नाम वही हैं जा
विभिन्न चेम्बरो के हैं । प्रत्येक गणतन्त्रीय एसेम्बली एक कार्यपालिका
कार्यकारिणी परिषद् का चुनाव करती है । साधारण नियम यह है कि गण
के ही अग हैं जो कि सघीय शासन मे हैं । स्वायत्तशासी प्रान्तो मे भी ए
एसेम्बली है, जो प्रान्तीय कार्यकारिणी परिषद् का चुनाव करती है ।

गणतन्त्रीय प्राधिकरण (Republic Authorities) के अधिका
महत्त्वपूर्ण कार्यों मे ये सम्मिलित हैं—यह देखना कि गणतन्त्र की
इस प्रकार से नियोजित हो कि वह देश की योजना मे समायोजित हो जायें
सामाजिक कल्याण के क्षेत्रो मे समुदाय के सामान्य हित के प्रश्नो का

[1] It suffices for Parliament to show that a law made in pursuar
necessary or expedient for the purpose of maintaining or securing p
government during the period of emergency

समुदायो म काम करने वाली जनता और उत्पादको के स्वशासन के अधिकारो की रक्षा और उनके कार्यान्वित रूप पर ध्यान रखना, नागरिको व राष्ट्रीय अल्पसख्यको की स्वतन्त्रताओ और प्रजातान्त्रिक अधिकारो का सरक्षण करना, कानूनी पद्धति के एकरूप ढग से परिचालन का सुनिश्चित करना, सत्ता के अगो के परिचालन की देख रेख करना और जन समितियो के कार्यों को समन्वित करना, सार्वजनिक व्यवस्था को सुनिश्चित बनाये रखना, और सघीय कानूनो तथा विनियमो द्वारा व्यवस्थित कर्त्तव्यो का पालन करना, आदि।

गणतन्त्रो मे प्राधिकरणो का सगठन—गणतन्त्रो म सत्ता के अगो का सगठन उन्ही सिद्धान्तो पर आधारित है, जिन पर कि सघीय प्राधिकरणो का। जनता द्वारा निर्वाचित गणतन्त्रीय एसेम्बली (Republican Assembly) सबसे ऊँचा प्रतिनिधिक निकाय और गणतन्त्रीय सत्ता का सर्वोच्च अग है। एसेम्बली प्रत्यक्षत अथवा अपनी कार्यकारिणी परिषद् के द्वारा गणतन्त्रीय सत्ता के अधीन सभी अधिकारो का उपभोग तथा कर्त्तव्यो का पालन करती है। ऐसा करने मे एसेम्बली गणतन्त्र के सविधान के साथ सघीय सविधान और कानूनो के विरुद्ध कोई कार्य नही कर सकती। एसेम्बली का चुनाव चार वर्ष की अवधि के लिए होता है। यह अधोलिखित मामलो के लिए उत्तरदायी है—गणतन्त्रीय सविधान मे सशोधन तथा गणतन्त्र मे लागू होने वाले कानूनो का निर्माण गणतन्त्र की सामाजिक योजना को अगीकार करना, गणतन्त्रीय कार्यकारिणी परिषद् के सदस्यों का चुनाव और उन्हे उनके पदो से वापस बुलाना सर्वोच्च न्यायालय और अन्य महत्त्वपूर्ण निकायो के सदस्यो व अन्य अधिकारियो का चुनाव और उनका वापस बुलाना, आधारभूत राजनीतिक निर्णय करना जिससे कि कार्यकारिणी परिषद् के कार्य का सामान्य दिग्स्थापन किया जा सके। गणतन्त्रीय एसेम्बली की सरचना, सगठन, कार्य करने की विधि और उसका शासन म महत्त्वपूर्ण भाग उन्ही सिद्धान्तो पर आधारित है जिन पर कि सघीय एसेम्बली के सगठन आदि आधारित हैं। गणतन्त्रीय एसेम्बली के सदस्य अपने अपने निर्वाचन क्षेत्र की जन-समितियो के पदेन सदस्य (ex officio members) हैं। साधारणतया गणतन्त्रीय एसेम्बली की समितियाँ और आयोग भी वही हैं जो कि सघीय एसेम्बली के है, महत्त्वपूर्ण अन्तर की बात यह है कि उसकी वैदेशिक मामलो के लिए समिति नही होती, परन्तु इसका जनसमितियो के लिए एक स्थायी आयोग होता है।

गणतन्त्रीय कार्यकारिणी परिषद (Republican Executive Council)—यह एसेम्बली का एकमात्र प्रत्यक्ष कार्यकारी निकाय है। एसेम्बली इसे ये कार्य सौंपती है—गणतन्त्र का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार, कानूनो को लागू करना, गणतन्त्र के प्रशासनिक अगो और जन समितियो तथा स्वशासन की सस्थाओ के कार्यों की वैधता का परिवीक्षण और अन्य ऐसे मामलो का परिवीक्षण जिनका स्वरूप कार्यकारी हो और जो गणतन्त्र की सक्षमता के भीतर आते हो। कार्यकारिणी परिषद् को एसेम्बली गणतन्त्रीय चेम्बर के सदस्यो मे से चुनती है। परिषद् का एक प्रधान होता है, जिसे परिषद् के बाहर अथवा उसके ऊपर कोई सत्ता प्राप्त नही है सिवाय इसके कि वह असहमति की दशा मे परिषद् के निर्णयो का अस्थायी रूप से कार्यान्वित होना रोक दे, परन्तु ऐसे मामलो पर अन्तिम निर्णय एसेम्बली करती है। यह किसी भी ऐसे निर्णय को रद्द कर सकती है जिसे वह अवैध समझे। जन-समितियाँ परिषद् के ऐसे निर्णयो का इस आधार पर विरोध कर सकती है कि वे उनके स्वशासन के अधिकार का अतिक्रमण करते हैं। ऐसे विवादो मे अन्तिम निर्णय गणतन्त्रीय एसेम्बली का होता है। गणतन्त्रीय प्रशासन की सरचना सघीय प्रशासन की सरचना सघीय प्रशासन के ही अनुरूप हैं। इसके प्रशासन के आधारभूत अंग ये हैं—वित्त, गृह व्यापार, आन्तरिक मामले और न्याय के राजकीय सचिवालय। इनके बाद आते हैं—कार्यकारिणी

कर सकती है। यदि पार्लियामेंट के दोनों सदन दो तिहाई के बहुमत से यह प्रस्ताव पास कर दें कि अमुक प्रदेश ऐसी मनाही का उल्लंघन कर रहा है तो पार्लियामेंट उस प्रदेश के लिए सूचियों से बाहर भी कानून बना सकती है।

आपात्काल के सम्बन्ध मे संघीय पार्लियामेंट की शक्ति सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। आपात्काल में पार्लियामेंट शान्ति, व्यवस्था और सुशासन को बनाये रखने अथवा प्राप्त करने के प्रयोजन से सम्पूर्ण नाइजीरिया के लिए कानून बना सकती है। संक्षेप में, आपात्काल में किसी भी विषय पर नाइजीरिया की विधायी शक्ति का प्रयोग पार्लियामेंट द्वारा किया जा सकता है। ऐसा करने के लिए पार्लियामेंट को केवल यह दिखलाना आवश्यक है कि इस शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाया गया कानून 'शान्ति, व्यवस्था और सुशासन को बनाये रखने तथा प्राप्त करने के लिए आवश्यक या इष्टकर है।'[1] पार्लियामेंट को एक और महत्त्वपूर्ण शक्ति मिली है। यह अन्तर्राष्ट्रीय संधियों, समझौतों या ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के निर्णयों को जिनका कि नाइजीरिया सदस्य हो, लागू अथवा कार्यान्वित करने के लिए विधायी सूचियों का ध्यान न रखते हुए भी कानून बना सकती है।

(2) **युगोस्लेविया**—युगोस्लेविया का संघ भारत की भाँति कई उपराष्ट्रों से मिलकर बना है। उसके विभिन्न उपराष्ट्रों व जातियों के बीच अनेक प्रकार की विविधतायें हैं। अतएव यह सर्वथा आवश्यक और पूर्णतया न्यायोचित था कि ऐसे देश का संविधान संघात्मक हो। युगोस्लविया का संघ छः गणतन्त्रों से मिलकर बना है, जिनके अपने संविधान हैं। इस दृष्टि से युगोस्लविया का संघात्मक संविधान भारत के संविधान की अपेक्षा संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान से अधिक मिलता है, क्योंकि भारत के संविधान में तो संघान्तरित राज्यों का संविधान भी दिया गया है। युगोस्लेविया के संघ में छः गणतन्त्रों के अतिरिक्त भी दो स्वायत्तता प्राप्त प्रान्त हैं, जो सर्बिया के गणतन्त्र के ही भीतर हैं। सभी गणतन्त्र (मॉन्टीनीग्रो को छोड़कर) और दोनों स्वायत्तता प्राप्त प्रान्त, जिलों व कम्यूनों मे विभाजित है। प्रत्येक गणतन्त्र मे एक एसेम्बली है, जो जनता की प्रभुता का प्रतिनिधित्व करती है और गणतन्त्र मे शासन का सर्वोच्च निकाय है। यह अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों का संघीय संविधान, गणतन्त्रीय संविधान व संघीय कानूनों के आधार पर तथा उनके ढाँचे के भीतर पालन करती हैं। संघीय एसेम्बली की भाँति गणतन्त्रीय एसेम्बली के भी पाँच चेम्बर हैं, जिनके नाम ये है—गणतन्त्रीय चेम्बर, आर्थिक चेम्बर, शैक्षिक सांस्कृतिक चेम्बर, सार्वजनिक स्वास्थ्य व सामाजिक कल्याण चेम्बर और संगठनात्मक राजनीतिक चेम्बर। गणतन्त्र की एसेम्बली मे संघीय के स्थान पर गणतन्त्रीय चेम्बर है, किन्तु उसके अनुरूप उपराष्ट्रों के चेम्बर जैसा कोई अंग नहीं है और अन्य चेम्बरों के नाम वही है जो संघीय एसेम्बली के विभिन्न चेम्बरों के हैं। प्रत्येक गणतन्त्रीय एसेम्बली एक कार्यपालिका अर्थात् गणतन्त्रीय कार्यकारिणी परिषद् का चुनाव करती है। साधारण नियम यह है कि गणतन्त्र मे भी शासन के वे ही अंग है जो कि संघीय शासन मे हैं। स्वायत्तशासी प्रान्तों मे भी शासन का सर्वोच्च अंग एसेम्बली है, जो प्रान्तीय कार्यकारिणी परिषद् का चुनाव करती है।

गणतन्त्रीय प्राधिकरणों (Republic Authorities) के अधिकार व कर्त्तव्य—उनके महत्त्वपूर्ण कार्यों में ये सम्मिलित हैं—यह देखना कि गणतन्त्र की अर्थव्यवस्था का विकास इस प्रकार से नियोजित हो कि वह देश की योजना में समायोजित हो जायें, शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक कल्याण के क्षेत्रों मे समुदाय के सामान्य हित के प्रश्नों का विनियमन; स्थानीय

[1] It suffices for Parliament to show that a law made in pursuance of this power is necessary or expedient for the purpose of maintaining or securing peace order and good government during the period of emergency

समुदायो मे काम करने वाली जनता और उत्पादको के स्वशासन के अधिकारो की रक्षा और उनके कार्यान्वित रूप पर ध्यान रखना, नागरिको व राष्ट्रीय अल्पसख्यको की स्वतन्त्रताओ और प्रजातान्त्रिक अधिकारो का सरक्षण करना, कानूनी पद्धति के एकरूप ढग से परिचालन को सुनिश्चित करना, सत्ता के अगो के परिचालन की देख रेख करना और जन समितियो के कार्यों को समन्वित करना, सावजनिक व्यवस्था को सुनिश्चित बनाये रखना, और सघीय कानूनो तथा विनियमो द्वारा व्यवस्थित कर्तव्यो का पालन करना, आदि।

गणतन्त्रो मे प्राधिकरणो का सगठन—गणतन्त्रो मे सत्ता के अगो का सगठन उन्ही सिद्धान्तो पर आधारित है, जिन पर कि सघीय प्राधिकरणो का। जनता द्वारा निर्वाचित गणतन्त्रीय एसेम्बली (Republican Assembly) सबसे ऊँचा प्रतिनिधिक निकाय और गणतन्त्रीय सत्ता का सर्वोच्च अग है। एसेम्बली प्रत्यक्षत अथवा अपनी कार्यकारिणी परिषद् के द्वारा गणतन्त्रीय सत्ता के अधीन सभी अधिकारो का उपभोग तथा कर्तव्यो का पालन करती है। ऐसा करने मे एसेम्बली गणतन्त्र के सविधान के साथ सघीय सविधान और कानूनो के विरुद्ध कोई काय नही कर सकती। एसेम्बली का चुनाव चार वर्ष की अवधि के लिए होता है। यह अग्रलिखित मामलो के लिए उत्तरदायी है—गणतन्त्रीय सविधान मे सशोधन तथा गणतन्त्र मे लागू होने वाले कानूनो का निर्माण, गणतन्त्र की सामाजिक योजना को अगीकार करना, गणतन्त्रीय कार्यकारिणी परिषद् के सदस्यो का चुनाव और उन्हे उनके पदो से वापस बुलाना सर्वोच्च न्यायालय और अन्य महत्त्वपूर्ण निकायो के सदस्यो व अन्य अधिकारियो का चुनाव और उनको वापस बुलाना, आधारभूत राजनीतिक निर्णय करना जिससे कि कार्यकारिणी परिषद् के कार्य का सामान्य दिक्स्थापन किया जा सके। गणतन्त्रीय एसेम्बली की सरचना, सगठन, कार्य करने की विधि और उसका शासन मे महत्त्वपूर्ण भाग उन्ही सिद्धान्तो पर आधारित है जिन पर कि सघीय एसेम्बली के सगठन आदि आधारित हैं। गणतन्त्रीय एसेम्बली के सदस्य अपने अपने निर्वाचन क्षेत्र की जन-समितियो के पदेन सदस्य (ex officio members) हैं। साधारणतया गणतन्त्रीय एसेम्बली की समितियाँ और आयोग भी वही हैं जो कि सघीय एसेम्बली के हैं, महत्त्वपूर्ण अन्तर की बात यह है कि उसकी वैदेशिक मामलो के लिए समिति नही होती, परन्तु इसका जनसमितियों के लिए एक स्थायी आयोग होता है।

गणतन्त्रीय कार्यकारिणी परिषद् (Republican Executive Council)—यह एसेम्बली का एकमात्र प्रत्यक्ष कार्यकारी निकाय है। एसेम्बली इसे ये काय सौंपती है—गणतन्त्र का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार, कानूनो को लागू करना, गणतन्त्र के प्रशासनिक अगो और जन समितियो तथा स्वशासन की सस्थाओ के कार्यों की वैधता का परिवीक्षण और अन्य ऐसे मामलो का परिवीक्षण जिनका स्वरूप कार्यकारी हो और जो गणतन्त्र की सक्षमता के भीतर आते हो। कार्यकारिणी परिषद् को एसेम्बली गणतन्त्रीय चेम्बर के सदस्यो मे से चुनती है। परिषद् का एक प्रधान होता है, जिसे परिषद् के बाहर अथवा उसके ऊपर कोई सत्ता प्राप्त नही है सिवाय इसके कि वह असहमति की दशा मे परिषद् के निर्णयो का अस्थायी रूप से कार्यान्वित होना रोक दे, परन्तु ऐसे मामलो पर अन्तिम निर्णय एसेम्बली करती है। यह किसी भी ऐसे निर्णय को रद्द कर सकती है जिसे वह अवैध समझे। जन समितियाँ परिषद् के ऐसे निर्णयो का इस आधार पर विरोध कर सकती है कि वे उनके स्वशासन के अधिकार का अतिक्रमण करते हैं। ऐसे विवादो मे अन्तिम निर्णय गणतन्त्रीय एसेम्बली का होता है। गणतन्त्रीय प्रशासन की सरचना सघीय प्रशासन की सरचना सघीय प्रशासन के ही अनुरूप हैं। इसके प्रशासन के आधारभूत अंग ये हैं—वित्त, गृह व्यापार, आन्तरिक मामले और न्याय के राजकीय सचिवालय। इनके बाद आते हैं—कार्यकारिणी परिषद् का राजकीय सचिवालय, प्रशासनिक सस्थाएँ और अन्य स्वतन्त्र प्रशासनिक अग।

गणतन्त्रों के लिये अधिक स्वायत्तता—फरवरी 1967 म फेडरल एसेम्बली व फेडरल चेम्बर ने निणय किया कि सविधान का सशोधन किया जाये और आवश्यक प्रस्तावो को तयार करने के लिए एक आयोग भी निर्मित किया । अब तक किय गये सभी प्रस्तावा का उद्देश्य सघ और गणत त्रो के बीच वतमान सम्बन्ध का इस प्रकार स परिवर्तित करना है कि युगोस्लविया व विभिन्न उपराष्ट्रा के प्रतिनिधियो को सामान्य नीति पर अधिक प्रभाव डालन का अवसर मिल। ऐसा करने के लिए सोची जा रही एक विधि यह है कि उपराष्ट्रों के चेम्बर की स्थिति और सक्षमता मे परिवतन किया जाये । इस समय फेडरल एसेम्बली के ५ चम्बर हैं, जिनम फेडरल चेम्बर का भाग सबसे महत्त्वपूण है, क्योकि यह अकेला कानून बना सकता है ।

फेडरल चेम्बर का महत्त्वपूण अग उपराष्ट्रा का चेम्बर (Chamber of Council of Nationalities) है, जो गणतन्त्रो व स्वशासी प्रान्तो के 70 प्रतिनिधियो से मिलकर बना है। उपराष्ट्रो के चेम्बर के 70 सदस्यो को सघीय कायकारिणी परिषद् का सदस्य समझा जाता है और वे इसके कार्य म समता के आधार पर भाग लेते हैं । चूकि सघीय एसेम्बली म इस चेम्बर का विशेष स्थान है, अत इसका अधिवेशन तब अवश्य ही होता है जबकि फेडरल चेम्बर क एजेन्डा पर सविधान मे सशोधन या परिवतन का प्रस्ताव हो । एक प्रस्तावित परिवतन के द्वारा सघ व गणतन्त्रो के बीच विधायी कार्यों के क्षेत्र म वतमान सम्बन्ध मे परिवतन हो जायगा। भविष्य मे सघ मुख्यत आधारभूत कानून ही पास करेगा, जो कि युगोस्लेविया की सामाजिक आर्थिक और सामाजिक राजनीतिक पद्धति की एकता को सुनिश्चित बनायेंगे । नियम रूप म सघ अब सामान्य कानून प्रस्थापित नही करेगा, जो कि देश के सम्पूण राज्य-क्षेत्र के लिए बँध होने हैं, वरन् केवल आधारभूत कानून ही पास करेगा, जो कि गणतन्त्रो के स्वतन्त्र विधायी काय के लिए कानूनी ढांचे (legal framework) की रचना करते हैं ।

सविधान मे सशोधन के लिए वतमान मांगो का बडा बल समता पर है, जो उपराष्ट्रों क चेम्बर को देश की सामान्य नीति के निर्माण मे अधिक प्रत्यक्ष प्रभाव दिलान के द्वारा सम्भव हो सकेगा। अब तक किये गय प्रस्तावो के अन्तगत, उपराष्ट्रा का चेम्बर विकास योजनाओ और सभी आधारभूत व सामान्य कानूनो के पास करने मे भाग ले सकेगा, साथ ही यह उन सभी प्रश्नो पर निणय करने मे भाग लेगा जो कि इस समय फेडरल चेम्बर की सक्षमता के भीतर हैं। तथ्य तो यह है कि ऐसा करने से कोई एक या अधिक उपराष्ट्र जिनकी (फेडरल चेम्बर म) बहुसख्या है भविष्य म अपनी इच्छा को छोटे उपराष्ट्रो पर नही थोप सकेग । ऐसा सम्भव हो सकेगा, क्योकि फेडरल चेम्बर, जिसम कि एक या दो बडे उपराष्ट्रो का प्रतिनिधित्व उनक मतदाताओ की बडी सख्या के अनुपात मे है, भविष्य मे सारपूण निणय केवल उपराष्ट्रो के चेम्बर की सहमति स ही कर सकेगा, जिसमे कि सभी गणतन्त्रो को सम प्रतिनिधित्व प्राप्त है ।

(3) मलयेशिया—मलाया सघ का सविधान स्वतन्त्रता के दिन, 31 अगस्त 1957 को, प्रभावी हुआ । इसके अन्तगत एक सघात्मक सरकार स्थापित की गई, जिसके प्रमुख अग एक राजा (monarch) शासको का सम्मेलन (Conference of Rulers), एक केबिनेट, दो सदन वाली पालियामेन्ट, न्यायपालिका और चार लोक सेवा आयोग है। राजा, जो राज्य का सर्वोपरि अध्यक्ष है पाँच वष की अवधि के लिए मलाया के नौ शासको द्वारा मजलिस म चुना जाता है। सघीय पालियामेन्ट के प्रथम सदन (Dewan Ra-ayat or House of Representatives) म 104 सदस्य हैं जो एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र से चुने जाते हैं। दूसरे सदन (Dewan Negara or Senate) मे कुल 38 सदस्य हैं, जिनमे से 22 राज्य विधानमण्डलो द्वारा चुने जाते हैं और 16 को सघ का अध्यक्ष नियुक्त करता है। न्यायपालिका इकहरी है अर्थात् सर्वोच्च न्यायालय तथा अधीन न्यायालयों से मिलकर बनी है अधीन न्यायालयो की स्थापना पालियामेन्ट द्वारा की गई

है। सर्वोच्च न्यायालय को ऐसे विवादो पर भी अधिकार क्षेत्र प्राप्त है जो कि राज्यो के बीच अथवा किसी राज्य और सघ के बीच उठे। यह किसी अधीन न्यायालय मे चल रहे मुकदमे से सम्बन्धित किसी पक्ष के प्रार्थना पत्र पर सविधान का निवचन भी कर सकता है।

ग्यारह सधान्तरित राज्यो के बारे म मलायन सविधान उनके सविधान की गारटी देता है और उनकी सरकारो की सरचना भी विहित करता है। सविधान म सघीय व राज्य सरकारो की विधायी व कार्यपालिका शक्तियो की सूचियाँ भी दी गई है। सविधान द्वारा अधिकतर मूल्य उत्तरदायित्व (और शक्तियाँ) सघ सरकार को सौंपे गये है। सघ सरकार की प्रधानता का उन धाराओ द्वारा और आश्वस्त किया गया है जो सघीय कानूनो को (ऐसी स्थिति मे जबकि राज्य कानून सघीय कानून स असगत हो) राज्य कानूनो के ऊपर प्रभावी होने का अधिकार देती है। केन्द्रीय सरकार को राष्ट्रीय आर्थिक विकास योजनाओ को कार्यान्वित करने की शक्ति भी मिली है, चाहे राज्यो की शक्तियाँ उसके विरुद्ध भी हो। मलाया के सविधान द्वारा मूलभूत स्वतन्त्रताओ की गारटी दी गई है। सविधान का सशोधन किसी भी ऐसे कानून द्वारा किया जा सकता है जो कि पार्लियामेन्ट के दोनो सदनो मे कुल सख्या के दो तिहाई के बहुमत से पास किया गया हो।

मलयेशिन सविधान—1963 मे उत्तरी बोर्नियो और सारावक को मलाया सघ मे सम्मिलित करने के लिए एक समिति (Inter governmental Committee) ने साविधानिक व्यवस्था के बारे मे अपनी रिपोर्ट दी। उसने सिफारिश की कि 1957 के मलाया सविधान को इस प्रकार से सशोधित किया जाय कि जिससे नये राज्यो की इच्छाओ और विशेष परिस्थितियो को उसमे समुचित स्थान दिया जा सके तथा सारावक व उत्तरी बोर्नियो के पृथक सविधान बने। सक्षेप मे, समिति ने सिफारिश की कि इस्लाम को सरकारी धर्म के रूप म कायम रखा जाय और धार्मिक स्वतन्त्रता की प्रत्याभूतियो को भी बनाये रखा जाय। उत्तरी बोर्नियो और सारावक की अपनी अपनी राज्य सरकारें हो, जिन्हे मलाया के राज्यो से अधिक स्वायत्तता प्रदान की जाय। सघ व राज्यो के बीच शक्तियो के वितरण के बारे म नई सूचियाँ तैयार की जाएँ। उनके अन्तर्गत बोर्नियो को अन्य सभी राज्यो से अधिक शक्तियाँ प्रदान की गयी। वित्तीय सिफारिशो के अनुसार भी बोर्नियो राज्यो को उनके अपने साधनो पर अधिक नियन्त्रण प्राप्त हुआ। साथ ही उन्हे सघ सरकार से पर्याप्त वित्तीय सहायता भी मिली। नये सघीय विधानमण्डल मे प्रत्येक बोर्नियो राज्य को दो निर्वाचित सीनेटर और दोनो राज्यो को ६ अतिरिक्त नियुक्त सीनेटरो के लिए स्थान प्राप्त हुए। सघीय प्रतिनिधि सदन की सदस्य सख्या 104 से बढाकर 159 कर दी गई। बोर्नियो के प्रतिनिधियो को राज्य विधानमण्डलो द्वारा चुने जाने की व्यवस्था की गई। बोर्नियो राज्य को सिंगापुर, मलाया तथा मलयेशिया से बाहर से आने वाले आप्रवासियो (immigrants) पर भी नियन्त्रण की शक्ति प्राप्त हुई।

छठा अध्याय

कार्यपालिका—सैद्धान्तिक पहलू

1 कायपालिका का महत्त्व और काय

'कायपालिका' शब्द का प्रयोग बहुधा भिन्न-भिन्न अर्थों मे किया जाता है। कभी कभी केवल राज्याध्यक्ष (मुख्यमन्त्री अथवा सयुक्त राज्य अमरीका मे राष्ट्रपति) के लिए, मन्त्रिमण्डल के लिए, और कभी कभी नागरिक और सैनिक सावजनिक सेवको के सम्पूण समूह के लिए। हम इस अध्याय तथा पुस्तक मे कायपालिका शब्द का प्रयोग शासन के अध्यक्ष, उसके मन्त्रियो सहित, जो साधारणत 'केबिनेट' कहलाते हैं, क लिए करेंगे। दूसरे शब्दो मे, राज्य मे वह निकाय, जिसे सविधान कानूनों को कार्यान्वित करने की सत्ता देता है, कायपालिका कहलाती है। अत 'काय पालिका' शब्द का अथ उन अधिकारियो के समूह से है जिनका मुख्य काय राज्य के कानूनों को लागू करना अथवा शासन की नीति व कायक्रम का क्रियान्वित करना होता है।

कायपालिका के महत्त्व के कई कारण हैं—यह कानूनो का निर्माण कराती है और उन्हे लागू करती है। कायपालिका केवल कानून और व्यवस्था को ही स्थिर नही रखती, वरन् वह तो लोक कल्याण के सभी कार्यों और योजनाओ को सचालित करती है। शासन की सफलता अथवा जनता का हित बहुत कुछ कायपालिका के सदस्या के गुणा पर निभर करता है। यदि वे अपने कार्यां मे दक्ष, तत्पर, ईमानदार, उत्साही और सूझ बूझ से पूण हैं, तो प्रशासन उत्तम होगा। वास्तव मे, साधारण नागरिकों का सम्पक तो मुख्यत सरकारी कमचारियो से ही रहता है। इस लिए जनता राज्य के विषय मे अपना मत उनके कार्यों के आधार पर ही बनाती है।

प्रजातान्त्रिक शासन की वतमान प्रवृत्तियो म सबसे महत्त्वपूण कायपालिका की शक्तियो और उसके दायित्वो मे वद्धि है। प्राय सभी राज्यो मे कायपालिका का स्थान शासन और राज नीति मे केन्द्रीय हो गया है। आधुनिक प्रजातान्त्रिक राज्य मे मुख्य कायपाल (Chief Executive) केवल कानूनो के लागू करने और सामान्य प्रशासन के लिए ही उत्तरदायी नही है, वरन् वह मुख्य विधायक भी बनता जा रहा है। उससे आशा की जाती है कि वह ससद (विधानमण्डल) के लिए वधायी नेतृत्व की व्यवस्था भी करे, और इस रूप म आन्तरिक, वित्तीय तथा विदेश नीति के निर्धारण हेतु आवश्यक सुझाव दे। यह प्रवृत्ति विशेष रूप से इसलिए उल्लेखनीय है कि एक समय था जबकि अमरीकी और फ्रांसीसी क्रान्तियो के बाद कायपालिका शक्ति को भय और सन्देह की दृष्टि स देखा जाता था। यह बात स्वाभाविक ही थी कि जिन लोगा ने अपने को हाल मे ही अत्या चारी और स्वेच्छाचारी राजतन्त्रात्मक शासन से मुक्त किया था, वे कायपालिका शक्ति को खतरे से पूण समझते थे और उसके काय क्षेत्र को सीमित तथा उसकी शक्तिया को प्रतिबन्धित करना चाहते थे।[1]

---

[1] As freedom has been won by resistance to arbitrary monarchs the executive power was long deemed dangerous to freedom watched with suspicion and hemm d in by legal

सयुक्त राज्य अमरीका मे इस अभिवृत्ति को इस बात मे देखा जा सकता है कि राज्यो के गवनरो की शक्तियाँ अत्यधिक सीमित थी और उनकी अवधि बहुत छोटी थी । साथ ही राष्ट्रपति की शक्तियो पर अनेक साविधानिक निरोध लगाये गये थे । परन्तु अब कायपालिका के प्रति पुराने दृष्टिकोण म परिवतन के लिए उत्तरदायी कारण निम्नलिखित हैं—

(1) प्रतिनिधि एसेम्बलियो के प्रति प्रारम्भ म जो जोश था उसमे कमी आ गई है और साथ ही विगत डेढ शताब्दियो मे लोकप्रिय आधार पर निर्वाचित तथा नियन्त्रित कायपालिकाओ के अनुभव से पूवगामी भय और स देह काफी दूर हो गये है ।

(2) प्रजातान्त्रिक सरकारो की समस्याओ और उनके कार्यों मे वेग के साथ हुई वद्धि ने और तुर त सरकारी कायवाही के लिए आवश्यकता ने (आन्तरिक और विदेश नीति दोनो ही क्षेत्रो मे) ऐसा आवश्यक बना दिया है कि विधानमण्डल अपनी बहुत सी विधायी सत्ता काय पालिका को सौंप दे । इसी कारण से प्रदत्त विधि निर्माण (delegated legislation) का प्रयोग बढता जा रहा है ।

(3) विधानमण्डल के दो सत्रो के बीच लम्बे विरामकाल, विधानमण्डल की इस बारे म अयोग्यता कि वह सभी आपातकालो अथवा कठिन परिस्थितियो के लिए पहले से ही तथा विस्तार-पूवक व्यवस्था कर सके, और किसी भी विधेयक पर विधानमण्डल म होने वाली देरी, पक्षपातपूण व उग्र वाद विवाद आदि बातो ने नीति के मामलो मे भी कायपालिका शाखा को व्यापक शक्तियाँ प्रदान किये जाने को न्यायोचित ठहरा दिया है ।

(4) सयुक्त राज्य अमरीका मे विशेषत राष्ट्रपति की शक्तियो मे इस कारण से विस्तार हुआ है कि वहा निवासी यह अनुभव करते हैं कि वह सम्पूण राष्ट्र के निर्वाचित प्रतिनिधि है, जबकि काग्रेस के सदस्य (सीनेट व प्रतिनिधि) वर्गीय अथवा विशेष हितो का प्रतिनिधित्व करते है ।[1]

(5) ब्रिटेन-जैसे ससद पद्धति वाले राज्यो मे, जहा दलीय पद्धति का विकास हो गया है अथवा शासक दल को भारी बहुमत का समयन प्राप्त होता है, वहाँ कठोर दलीय अनुशासन तथा अन्य सहकारी कारणो से केबिनट की शक्तियो म बडी वृद्धि हुई है ।

(6) फ्रास मे पाचवे गणतन्त्र के सविधान का ध्यानपूवक अध्ययन करने से एक बात स्पष्ट होगी कि वहा कायपालिका, विशेष रूप से राष्ट्रपति को, ऐसी शक्तिया सौंपी गई हैं जो कि अमरीका के राष्ट्रपति को प्राप्त है । सविधान म इस महत्त्वपूण परिवतन का कारण यह है कि वहाँ अतीत मे कायपालिका अति क्षीण व अस्थिर होती थी ।

अन्त मे, यद्यपि आधुनिक शासन म विधायी]काय का बडा महत्त्व है, फिर भी प्रवत्ति यह है कि विधायिका कायपालिका की तुलना म कम महत्त्वपूण होती जा रही है । यह भी सच है कि विधायिका का कायपालिका पर नियन्त्रण रहता है परन्तु प्रजातन्त्र के विकास ने इस विरोधाभास को जन्म दिया है कि जनता द्वारा निवाचित विधायिका जितने अधिक कानून बनाती है उन कानूनो को कार्यान्वित कराने मे कायपालिका की अनियन्त्रित शक्ति उतनी ही बढ जाती है ।[2]

कायपालिका के मुख्य कार्यों का विवेचन निम्नलिखित शीषको के अन्तगत किया जायेगा—

(1) विधायी—कायपालिका के उच्च अधिकारियो, मन्त्रियो अथवा विभागीय अध्यक्षो का

restraints but when the power of the people has been established by long usage these suspicions vanish —Bryce J *Modern Democracies* Vol I p 358

[1] Rodee et al *Introduction to Political Science* pp 122–23

[2] Thus the growth of democracy has produced in modern constitutional states this paradox—that the greater the volume of legislation passed by the legislature elected by the people whose needs require it the greater the area of uncontrolled executive power in the prosecution of laws so made —Strong C F *op cit* p 233

कानून निर्माण कार्यों मे कुछ प्रत्यक्ष या परोक्ष भाग अवश्य ही रहता है। संसदात्मक शासन-पद्धति मे तो सभी महत्त्वपूर्ण विधेयक, प्रस्ताव व बजट आदि कार्यपालिका (मन्त्रिमण्डल) द्वारा ही पास किये जाते है। संयुक्त राज्य अमरीका म भी, जहा अध्यक्षात्मक पद्धति है, राष्ट्रपति अनेक विधेयको के लिए सिफारिश करता है तथा सन्देश भेजता है। कार्यपालिका का अध्यक्ष (जो राज्य का भी अध्यक्ष होता है) विधायिका के सत्र बुला है, उनका अन्त करता है और आवश्यकता पडने पर विधायिका या उसके लोकप्रिय सदन को विघटित भी करता है। वह विधायिका मे भाषण दे सकता है और विधायिका को सन्देश भेज सकता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि विधायिका द्वारा पास किये गये विधेयको पर वह अपनी अनुमति देता है या नही देता अथवा उन्हें पुनर्विचार के हेतु वापस लौटा देता है। उसका दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य यह भी है कि आवश्यकता पडने पर वह स्थायी कानून अथवा अध्यादेश जारी कर सकता है। लगभग सभी राज्यो म विधायिका द्वारा पास किये गये कानूनो के अन्तर्गत अनेक प्रकार के नियम कार्यपालिका द्वारा ही बनाये जाते है।

(2) प्रशासनिक—इसके अन्तर्गत कार्यपालिका के उच्च अधिकारी शासन के विभागो के अध्यक्ष होते है और अपने अपने विभाग के कार्यों की पूरी देख रेख करते हैं। संसदात्मक प्रणाली म मन्त्रियों को अपने अपने विभाग के बारे में प्रश्नो के उत्तर म मांगी गई सूची देनी पडती है और आलोचना का जवाब भी देना पड़ता है। कार्यपालिका के अध्यक्ष अथवा उच्च अधिकारियों को बहुत से अधिकारियो की नियुक्ति व उन्हे पद से हटाने के अधिकार प्राप्त होते है। संयुक्त राज्य अमरीका व भारत के राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति करते हैं, वे उच्च सैन्य अधिकारियो विदेशो मे भेजे जाने वाले राजदूतो और अनेक आयोगो की नियुक्तियाँ भी करते हैं।

(3) प्रतिरक्षा सम्बन्धी—यह ऊपर ही बताया गया है कि सर्वोच्च सेनापति, जल, थल व नभ तीनो ही प्रकार की प्रतिरक्षा सेवाओं से सेनापतियो आदि की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा ही की जाती है। तीनो प्रकार की सेनाओं से सम्बन्धित सर्वोच्च कमान के विषय मे कार्यपालिका ही नीति निर्धारण करती है और निर्देश देती है।

(4) विदेश सम्बन्धी—विदेशों स किस प्रकार का सम्बन्ध रखा जाय, किन देशो म अपने राजदूत व प्रतिनिधि भेजे जायें और किन्ह विदेशो म राजदूत या प्रतिनिधि बनाकर भेजा जाये, ये सभी महत्त्वपूर्ण कार्य कार्यपालिकाएँ ही करती हैं। युद्ध की घोषणा करना आदि भी कार्यपालिकाओ के कार्य हैं।

(5) न्यायिक—मुख्य रूप से इसके अन्तर्गत राज्य के अध्यक्ष को गम्भीर अपराधो के लिए दण्डित व्यक्तियों को क्षमा दान देना अथवा दण्ड को स्थगित करना या कम करना आते हैं। अधिकतर राज्यो मे न्यायाधीशो की नियुक्तियाँ भी कार्यपालिकाओ द्वारा होती हैं। कुछ राज्यो मे कार्यपालिकाओ को नागरिको और सरकारी कर्मचारियो के बीच होने वाले झगडों मे निर्णय देने के अधिकार हैं। कार्यपालिका को राजनीतिक बन्दियो अथवा क्रान्तिकारी आन्दोलनों आदि म भाग लेने वाले व्यक्तियो को क्षमा-दान (amnesty) का विशेष अधिकार होता है।

(6) अन्य—कार्यपालिका के अध्यक्ष को नागरिको को विशेष सेवा करने अथवा योग्यता प्राप्त करने पर उपाधियाँ देने का अधिकार भी होता है। स्वतन्त्रता से पूर्व ब्रिटिश सम्राट भारतीय प्रजाजनो को साम्राज्य की सेवा के लिए उपाधियाँ दिया करते थे। भारत के संविधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति 'भारत रत्न', 'पद्मविभूषण' आदि अनेक पदक व पारितोषिक प्रदान करता है।

2 कार्यपालिकाओं के विभिन्न प्रकार

वास्तविक या नाममात्र की—नाममात्र या ध्वजमात्र कायपालिका से तात्पय उस व्यक्ति से होता है जो सैद्धांतिक रूप मे (नाम के लिए) तो राज्य का प्रमुख होता है और जिसके नाम से प्रशासन का प्रत्यक काम किया जाता है, पर तु यथाय मे वह अपनी शक्तियो और अधिकारो का प्रयोग स्वय यही करता अर्थात् कायपालिका सम्बन्धी सभी शक्तिया मन्त्रिमण्डल के हाथ मे रहती हैं और मंत्रिमण्डल सामूहिक रूप से या मंत्रिगण वैयक्तिक रूप से उन शक्तियो का वास्तविक प्रयोग करते है। इसी कारण मंत्रिगण को वास्तविक कायपालिका कहा जाता है। दोनो प्रकार की कायपालिका के उदाहरण सभी ससदात्मक (अथवा मन्त्रिमण्डलात्मक) शासन पद्धति वाले राज्य है। ब्रिटेन मे राजा या रानी (Crown) नाम के लिए ही कायपालिका का प्रमुख है, ऐसे ही पूव सविधान क अ तगत फ्रास म राष्ट्रपति था। इन देशा के मन्त्रिमण्डल वास्तविक काय-पालिकायें है। नाममात्र की कायपालिका की नियुक्ति दा प्रकार से हो सकती है। ब्रिटेन म राजा वशानुगत राज्य का प्रमुख है फ्रास व भारत तथा अ य देशो में अप्रत्यक्ष रूप से चुने गये राष्ट्रपति राज्य के प्रमुख ह। मंत्रिमण्डलात्मक शासन-पद्धति मे वास्तविक व नाममात्र की कायपालिका का होना आवश्यक है। सयुक्त राज्य अमरीका मे राष्ट्रपति कायपालिका का वास्तविक अध्यक्ष है, वहा पर इस बात का भेद नही है।

एकल या बहुल कायपालिका—एकल कायपालिका मे प्रशासन की सब शक्तिया एक ही व्यक्ति या ऐसे व्यक्ति समूह के हाथो मे रहती है जो एक मत के आधार पर काय करता है। सयुक्त राज्य अमरीका मे राष्ट्रपति कायपालिका का प्रमुख व्यक्ति है, अपने द्वारा नियुक्त मन्त्रियो की सलाह को वह माने या न माने यह उसकी इच्छा पर निभर करता है। अत वहाँ एकल काय पालिका है। ब्रिटेन, भारत आदि जैसे मंत्रिमण्डलात्मक कायपालिका वाले देशो मे मंत्रिमण्डलो म कितने ही सदस्य हो सकते है, किन्तु चूकि मन्त्रिमण्डल के सभी निणय और काय एकमत के सिद्धान्त के अनुसार किये जाते है, अत ऐसी कायपालिका को भी एकल ही कहते हैं। मंत्रिमण्डल के सामूहिक उत्तरदायित्व का यही महत्वपूण अभिप्राय है। मन्त्री लोग सभी बातो म एकमत रहते है, वे एक साथ ही तैरते या डूबते है, इसके विपरीत स्विटजरलैण्ड मे बहुमत या बहुल कायपालिका है। वहा की कायपालिका (Federal Council) मे सात सदस्य होते हैं, जिनमे से *प्रत्येक को सम शक्ति एव अधिकार प्राप्त ह। इस कायपालिका का एक सदस्य सभापति रहता है,* परन्तु उसे कोई विशेष शक्ति या अधिकार नही मिले है।

स्विटजरलैण्ड मे कायपालिका की विशेषता यह है कि इसमे मंत्रिमण्डलात्मक व अध्यक्षात्मक दोनो ही प्रकार की कायपालिकाओ के लक्षणो का मेल है। यह अग्रलिखित बाता मे मन्त्रिमण्डल के समान है (1) एक अथ मे यह व्यवस्थापिका (विधायिका) की समिति है, जिसके सदस्यो को व्यवस्थापिका ही चुनती है। (2) प्रत्येक सदस्य एक प्रशासनिक विभाग का अध्यक्ष होता है। (3) इसके सदस्य व्यवस्थापिका के दोनो सदनो की कायवाही म भाग ले सकते हैं, कि तु मत उसी सदन मे दे सकते हैं, जिसके वे सदस्य होते हैं। (4) व्यवस्थापिका के सदस्य इनसे प्रशासन के विषय म प्रश्न पूछ सकते है। (5) परिषद् के सदस्य व्यवस्थापिका के निय त्रण म रहते हैं और उसकी इच्छानुसार काय करते है। (6) परिषद् के सदस्य बजट और विधेयक आदि पेश करते हैं।

परन्तु अग्रलिखित बातो मे यह परिषद केबिनेट से भिन्न है। (अ) यह बहुसख्यक दल या दलो का प्रतिनिधित्व नही करती, (ब) इसके सदस्य किसी सामा य राजनीतिक कायक्रम से बधे नही होते, (स) इनके विरुद्ध अविश्वास व नि दा आदि के प्रस्ताव पेश नही किये जाते और बहुमत विरुद्ध होने पर भी उ ह पदत्याग नही करना पडता, और (द) परिषद् के सदस्य व्यवस्थापिका

का विघटन नही करा सकते । इसमे अध्यक्षात्मक कार्यपालिका का सबसे महत्त्वपूर्ण गुण स्थायित्व (stability) है, क्योंकि इसमे अन्य मन्त्रिमण्डलो की भाँति बहुधा उलट फेर नही होते । जबकि एकल कार्यपालिका का एक स्पष्ट गुण यह है कि इसमे कार्यपालिका की सफलता के लिए दो बातें—प्रयोजन की एकता व निर्णय की शीघ्रता विद्यमान है, बहुल कार्यपालिका मे शक्तियाँ और उत्तरदायित्व बँटे रहते हैं । परन्तु इसका बडा गुण इस बात मे है कि यह इस सिद्धान्त पर आधारित है 'परामर्शदाताओ की एकता मे ही बुद्धिमत्ता का निवास होता है ।' इसके अन्तर्गत नागरिक अधिकार भी अधिक सुरक्षित रहते है । स्विट्जरलैण्ड मे बहुल कार्यपालिका बडी सफल सिद्ध हुई है यद्यपि इसका अन्य देशो मे अनुकरण नही हुआ । ऐसी कार्यपालिका को सामूहिक या या बोर्ड जैसी (collegial or corporate) भी कहते हैं ।

युरुग्वे (Uruguay), दक्षिण अमरीका मे, कार्यपालिका शक्ति नौ सदस्या की नेशनल कौंसिल मे निहित है, जिनमे से छ बहुसख्यक दल के और तीन अल्पसख्यक दल के सदस्य होते हैं। सभी सदस्यो की नियुक्ति विधानमण्डल की सयुक्त बैठक मे चार वर्ष की अवधि के लिए की जाती है । कौंसिल का प्रधान पद नम्बरवार कौंसिल मे बहुसख्यक दल के सदस्यो को प्राप्त होता है। स्विटजरलैण्ड व युरुग्वे दोना ही राज्या मे समारोह सम्बन्धी औपचारिक कार्य सामूहिक कार्य पालिका का वह सदस्य करता है जो कि उस समय प्रधान हो, यद्यपि नीति निदेशन का कार्य सम्पूर्ण निकाय द्वारा किया जाता है । सोवियत सघ मे प्रेसीडियम (Presidium) को भी स्टालिन ने, जो कि वर्तमान सविधान का निर्माता था, राज्य का 'सामूहिक प्रधान' (the Collegial President) बताया था । सर्वोच्च सोवियत के विश्राम काल म यह निकाय राज्याध्यक्ष के कार्य भी करता है । प्रेसीडियम के सभापति का वैसा ही स्थान है जैसा कि स्विटजरलैण्ड मे फैडरल कौंसिल के सभापति का है । इस प्रकार यह बहुल कार्यपालिका का एक और उदाहरण है ।

राजनीतिक और स्थायी—राजनीतिक कार्यपालिका का तात्पर्य कार्यपालिका के उन निर्वाचित अधिकारिया से है, जैसे भारत, ब्रिटेन आदि देशो म मन्त्रिमण्डल के सदस्य । ये अधिकारी एक निश्चित अवधि के लिए निर्वाचका द्वारा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप स चुने जाते हैं और अपने पदा पर तभी तक रहते हैं जब तक कि इनकी अवधि समाप्त नही होती अथवा उन्हे हटा नही दिया जाता । वास्तव मे उनके पद राजनीतिक हैं । यदि ये फिर से निर्वाचित होकर आ जायँ और इन्हे मन्त्रिमण्डल मे ले लिया जाय तो ये कुछ वर्षों तक और अपने पदों पर रह सकते हैं। इनके अतिरिक्त प्रशासन म बडी सख्या मे अधिकारी स्थायी रूप से सरकारी नौकर होते हैं । सरकारी सेवा उनका पेशा ही है । राजनीतिक कार्यपालिका राज्य की नीति का निर्धारण करती है, उसे कार्यरूप देने के लिए अनेक कानूना को विधायिका की स्वीकृति स बनवाती है । यह अपने सभी कार्यों और नीति के लिए विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है । स्थायी अधिकारिया को नीति अथवा कानून नहीं बनाने होते हैं, वे तो उन्हे लागू करते हैं । मन्त्री लोग उनके कार्यों की देख रेख करते हैं । जबकि मन्त्री बदलते रहते हैं, स्थायी अधिकारी सरकारी पदा पर कायम रहते हैं। उनको इसी कारण मन्त्रियो द्वारा निर्धारित नीति का वफादारी के साथ पालन करना उचित है क्योंकि मन्त्री किसी भी राजनीतिक दल के हो सकते हैं और सरकारी अधिकारियो को राजनीति से अलग रहना पडता है ।

ससदात्मक और अससदात्मक—स्ट्रांग ने इस प्रकार के भेद पर बल दिया है । अससदात्मक कार्यपालिका को कभी कभी नियत अवधि वाली कार्यपालिका (Fixed Executive) भी कहा है क्योंकि उसे विधानमण्डल की कार्यवाही द्वारा अपदस्थ नहीं [illegible] जा सकता । इस प्रकार की नियत कार्यपालिका उन राज्यो म पायी जाती है जहाँ [illegible] वास्तव म कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करता हो जैसा कि [illegible] 018) म था । इसका

दूसरा नमूना समकालीन साम्यवादी राज्य में देखा जा सकता है, जहाँ कि कार्यपालिका वास्तव में संसदात्मक नहीं है, किन्तु देखने में ऐसी लगती है। वहाँ पर कार्यपालिका के दो मुख्य अंग हैं—मन्त्रि-परिषद् और प्रेसीडियम। परन्तु ये दोनों भी साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति से मिलकर ही कार्य करते हैं। यह वास्तव में सांविधानिक अथवा प्रजातन्त्रात्मक कार्यपालिका नहीं है। नियत अवधि वाली कार्यपालिका, जो प्रजातन्त्रात्मक भी हो, केवल संयुक्त राज्य अमरीका (अथवा उस पद्धति वाले राज्यों) में पायी जाती है। ऐसी कार्यपालिका का चौथा नमूना स्विट्जरलैण्ड संघीय कार्यपालिका है।[1]

मन्त्रिमण्डलात्मक व अध्यक्षात्मक कार्यपालिकाएँ—आजकल अधिकतर प्रजातान्त्रिक राज्यों में संसदात्मक व अध्यक्षात्मक (राष्ट्रपतीय) शासन पद्धतियाँ हैं। इन पद्धतियों में अन्तर का मुख्य आधार कार्यपालिकाओं का निर्माण, संगठन व उनके कार्य हैं। प्राय सभी संसदात्मक पद्धति वाले देशों में मन्त्रिमण्डलात्मक कार्यपालिका होती है, जिसे मन्त्रिमण्डल (Cabinet or Ministry) या मन्त्रि-परिषद् (Council of Ministers) कहते हैं। अध्यक्षात्मक शासन-पद्धति में कार्यपालिका का प्रमुख राज्य का अध्यक्ष राष्ट्रपति होता है, अतः यह शासन पद्धति अध्यक्षात्मक कहलाती है। मन्त्रिमण्डलात्मक कार्यपालिका संसदात्मक शासन-पद्धति का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण अंग है। मन्त्रिमण्डलात्मक कार्यपालिका का विकास सर्वप्रथम ग्रेट ब्रिटेन में हुआ। 'कैबिनेट' शब्द की उत्पत्ति राजा चार्ल्स द्वितीय की इस प्रथा से हुई कि वह अपने परामर्शदाताओं को गुप्त परामर्श देने के लिए एक छोटे कमरे या कैबिनेट में बुलाया करता था। प्रथम आधुनिक कैबिनेट विलियम तृतीय की थी। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक इस प्रकार की शासन प्रणाली के प्रमुख सिद्धान्तों की स्थापना हो चुकी थी। 1918 में ग्रेट ब्रिटेन की सरकार द्वारा नियुक्त 'शासनतन्त्र पर समिति' (Committee on the Machinery of Government) ने मन्त्रिमण्डल के ये मुख्य कार्य बताये—(1) उस नीति का अन्तिम रूप से निर्धारण जो संसद के सामने प्रस्तुत की जाती है, (2) संसद द्वारा निर्धारित नीति के अनुसार राष्ट्रीय कार्यपालिका पर नियन्त्रण और राज्य के विभिन्न विभागों की कार्यवाहियों को परिसीमित करना तथा उनमें निरन्तर समन्वय रखना।

मुख्य कार्यपाल के रूप में संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति, पश्चिमी जर्मनी के चान्सलर भारत के प्रधानमन्त्री आदि के लिए यह आवश्यक है कि वे जनता और विरोधी पक्ष के सामने आन्तरिक विरोधों से हीन अर्थात् समुचित नीतियों का चित्र प्रस्तुत करें। समय समय पर अपने सन्देशों या वक्तव्यों द्वारा वे कार्यपालिका की नीतियों को घोषित करते हैं। विभिन्न विभागों की नीतियों को समुचित रूप देने में कैबिनेट की समितियों का कार्य बड़ा महत्त्वपूर्ण है। कार्यपालिका शक्तियों में समन्वय कायम करने में बजट सम्बन्धी शक्तियों के केन्द्रीकरण का भाग महत्त्वपूर्ण रहा है।[2] मन्त्रिमण्डलात्मक और अध्यक्षात्मक कार्यपालिकाओं के बीच अन्तर का मुख्य आधार विधायिका और कार्यपालिका के बीच सम्बन्ध है। मन्त्रिमण्डलात्मक पद्धति के अन्तर्गत शासन की दोनों शाखायें एक ही व्यक्ति समूह के नियन्त्रण में समन्वित रहती हैं। अध्यक्षात्मक पद्धति शक्ति-पृथक्करण सिद्धान्त पर आधारित है जिसके अनुसार कार्यपालिका और विधायिका स्वतन्त्र शाखायें हैं, किन्तु वे एक दूसरे पर कुछ रोक लगाने की शक्ति रखते हैं।[3]

---

[1] *Ibid* p 264

[2] Such coordination generally occurs in three ways (1) the political coordination by the chief executive leader (2) coordination of departmental policies by cabinet committees and (3) coordination of the executive powers by the centralization of budgetary powers —Merkl Peter H., *Political Continuity and Change* p 280

[3] The main difference between these two systems stems from the nature of the relationship between the legislative and the executive branch Under the cabinet system both these branches are unified and coordinated under the control of a single set of persons

अध्यक्षात्मक कायपालिका—इस प्रकार की कायपालिका का विकास सयुक्त राज्य अमरीका मे हुआ और यह वहाँ के सघान्तरित राज्यो के अतिरिक्त दक्षिणी अमरीका के कई राज्य म भी पायी जाती है। अध्यक्षात्मक कायपालिका का शासन मे भाग मुख्यत सावैधानिक उपब धो और यथाथ शक्तियो के प्रयोग से निर्धारित होता है। राष्ट्रपति एक निश्चित अवधि के लिए चुना जाता है, और उसे अथवा उसकी केबिनेट के सदस्यो को विधानमण्डल (Congress) मे उसकी नीति या प्रस्ताव स्वीकार न होने पर भी त्यागपत्र नही देना पडता। इसलिए इस कायपालिका की एक महत्त्वपूण विशेषता 'स्थायित्व' है। राष्ट्रपति कायपालिका का प्रमुख होता है। उसकी केबिनेट के सदस्य उसी के द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। राष्ट्रपति उन्हें पद से अलग भी कर सकता है। वह केबिनेट से सभी प्रकार की सहायता व परामश लेता है, किन्तु वह केबिनेट के बहुमत या सवसम्मत निणय को भी अस्वीकार कर सकता है। राष्ट्रपति की केबिनट के सदस्य उसके सहयोगी नही वरन् अधीन अधिकारी होते हैं। राष्ट्रपति तथा केबिनेट के सदस्य काग्रेस की कायवाही म भाग नही ले सकते, क्योकि वे उसके सदस्य नही होते। केबिनेट का प्रत्येक सदस्य किसी एक बड प्रशासनिक विभाग का अध्यक्ष होता है। वह म त्री न कहलाकर 'सेक्रेट्री' कहलाता है और उसकी सहायता के लिए राष्ट्रपति एक या अधिक सहायक सेक्रेट्री भी नियुक्त करता है।

3 ससदात्मक व अध्यक्षात्मक शासन पद्धतियाँ

ससदात्मक (अथवा सासद) शासन पद्धति—इसे ही मन्त्रिमण्डलात्मक शासन प्रणाली भी कहते हैं। इस प्रणाली की विशेषताएँ ये हैं। प्रथम, राज्य का प्रमुख, चाहे वह वशानुगत राजा हो अथवा निर्वाचित राष्ट्रपति, नाम मात्र की शक्तियाँ रखता है। शासन की वास्तविक शक्तियो का प्रयोग निर्वाचित मन्त्रियो द्वारा किया जाता है। मन्त्रियो से मिलकर केबिनेट बनती है। मन्त्रीगण राज्य की विधायिका के सदस्य होते हैं और वे बहुमत प्राप्त दल म से छाँटे जाते हैं। दूसरे, मन्त्रिमण्डल अपनी नीति और कार्यो के लिए विधायिका के प्रति उत्तरदायी होता है। ये म त्री अपने पदो पर तभी तक रहते है जब तक कि विधायिका के सदस्यो का बहुमत उनका समर्थन करे। जब कभी विधायिका उनमे प्रस्ताव द्वारा अविश्वास प्रकट करती है या मन्त्रिमण्डल द्वारा प्रस्तुत किसी महत्त्वपूण विधेयक को पास होने से रोक देती है तभी मन्त्रिमण्डल को पद त्याग करना पडता है। ऐसी स्थिति मे या तो विरोधी दल का नेता, यदि बहुमत उसे प्राप्त हो जाय, शासन भार सम्भालता है या विधायिका को विघटित कर दिया जाता है और नये चुनाव कराय जाते है। नये चुनाव पूण होने पर बहुमत दल के नेता को राज्य का अध्यक्ष प्रधानमन्त्री नियुक्त करता है और उसके परामश से अन्य मन्त्रियो की नियुक्ति भी करता है। प्रधानमन्त्री के परामश से ही मन्त्रियो मे विभागो का वितरण किया जाना है। इस प्रकार मन्त्रिमण्डल कानूनी दृष्टि से सीधे विधानमण्डल अथवा लोकप्रिय सदन के प्रति और दूर से निर्वाचक मण्डल के प्रति उत्तरदायी होता है।[1] साधारणतया प्रत्येक मन्त्री एक या अधिक प्रशासनिक विभागो का अध्यक्ष होता है। तीसरे, मन्त्रिमण्डल सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त के अनुसार काय करता है। यदि किसी

The presidential system embodies the theory of Separation of Powers with the two depart ments substantially independent of each other yet possessing certain checks over the powers of the other —Patel S R *World Constitutional Law and Practice* p 125

[1] Cabinet government is that system in which the real executive—the cabinet or ministry is immediately and legally responsible to the legislature or one branch (usually the more popular chamber) for its political policies and acts and mediately or ultimately respon sible to the electorate, while the titular or nominal executive—the chief of state—occupies a position of irresponsibility' —Garner J W *Political Science and Government* p 296

मन्त्री द्वारा प्रस्तुत कोई भी प्रस्ताव या विधेयक बहुमत का समर्थन न पा सकने के कारण गिर जाता है, तो केवल उस मन्त्री को ही नहीं वरन् सारे मन्त्रिमण्डल को पद त्याग करना होता है। इसीलिए यह कहा जाता है कि सभी मन्त्री एक साथ तैरते अथवा डूबते हैं।

चौथे, मन्त्रिमण्डल के सदस्यों की कोई संख्या निश्चित नहीं होती। आवश्यकतानुसार वह विभागों के घटने बढ़ने के साथ घटाई या बढ़ाई जा सकती है। मन्त्रिमण्डल का कार्य काल भी निश्चित नहीं होता, क्योंकि विश्वास खोने पर मन्त्रिमण्डल को विधायिका की अवधि समाप्त होने से पूर्व ही पद त्याग करना पड़ सकता है। साथ ही यदि वही राजनीतिक दल नये चुनावों में फिर से जीत कर आता है तो नवनिर्मित मन्त्रिमण्डल में अधिकतर पुराने मन्त्री ही रहते हैं। पाँचवें, प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल का अध्यक्ष होता है, वह मन्त्रिमण्डल की बैठकों में सभापति रहता है। वह मन्त्रिमण्डल व सरकार का नेता होता है। उसके पद त्याग का अर्थ सभी मन्त्रियों द्वारा पद-त्याग होता है। वह जब चाहे किसी मन्त्री से त्यागपत्र की माँग कर सकता है और किसी अन्य सदस्य को नया मन्त्री नियुक्त करा सकता है। इन सब बातों के होते हुए भी अन्य मन्त्री प्रधानमन्त्री के सहयोगी होते हैं और उनका दर्जा उससे कुछ कम होता है। छठे, मन्त्रिमण्डल के निर्णय बहुमत से होते हैं और जब कोई निर्णय मन्त्रिमण्डल में हो जाता है तो कोई भी मन्त्री बाद में उसका किसी भी प्रकार से विरोध नहीं करता। यह सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का ही परिणाम है। सातवें, विधायिका को कानून बनाने, कार्यपालिका पर नियन्त्रण रखने और बजट का स्वीकार करने के सभी अधिकार प्राप्त होते हैं। अन्त में, केबिनेट संसद पद्धति के अन्तर्गत केबिनेट का पद विधायिका पर निर्भरता का होता है, जो केबिनेट के नेतृत्व को मानने से इनकार कर उसे पदच्युत कर सकती है। विधायिका के प्रसाद पर केबिनेट का पद से हटाया जाना केबिनेट संसद शासन की एक विशेषता है। स्ट्राँग का कथन है 'इस प्रकार की कार्यपालिका पद्धति का सार, अन्तिम विश्लेषण में, यह है कि यह संसद की एक समिति होती है, प्रजातन्त्र के विकास के साथ इसकी प्रवृत्ति (ब्रिटेन में) कॉमन सभा की समिति बन जाने की है।'[1]

संसदात्मक पद्धति का सबसे उत्तम उदाहरण ब्रिटेन है। इस पद्धति की उत्पत्ति और विकास ब्रिटेन में ही हुआ और फिर इसका अनुकरण संसार के अनेक देशों ने किया। संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि ब्रिटेन का राजा (अथवा ताज) नाममात्र का अध्यक्ष है, यद्यपि सिद्धान्त रूप में सारी शक्तियाँ उसकी है, परन्तु व्यावहारिक वास्तविकता यही है कि कार्यपालिका की सम्पूर्ण शक्तियाँ मन्त्रिमण्डल (केबिनेट) के हाथों में है। मन्त्रिमण्डल का प्रमुख प्रधानमन्त्री होता है। मन्त्रिमण्डल वहाँ की पार्लियामेंट के प्रति उत्तरदायी होता है। मन्त्रिमण्डल का यह उत्तरदायित्व सामूहिक है। ब्रिटेन संसदात्मक शासन पद्धति का आदर्श नमूना है और इसमें ऊपर वर्णित संसदात्मक पद्धति की सभी विशेषतायें मिलती हैं। ब्रिटेन के नमूने पर भारत, आस्ट्रेलिया, कनाडा, दक्षिणी अफ्रीका तथा अन्य देशों में इस पद्धति को अपनाया गया है।

संसदात्मक शासन-पद्धति की सफलता के लिए ये बातें जरूरी समझी जाती हैं—प्रथम, संसद अथवा प्रतिनिधि सभा को सम्पूर्ण शक्तियाँ प्राप्त होनी चाहियें और मन्त्रिमण्डल को उसके प्रति उत्तरदायी रहना चाहिए। दूसरा, संसदात्मक पद्धति के विकास के लिए दलों का होना आवश्यक है। बहुमत दल मन्त्रिमण्डल बनाता है और शासन का संचालन करता है। उसकी नीति व कार्यवाहियों की उचित आलोचना करने के लिए सुदृढ़ विरोधी दल होना चाहिए। ब्रिटेन की द्विदलीय पद्धति को बहुदलीय पद्धति से अधिक अच्छा समझा जाता है। तीसरा, जनता को काफी राजनीतिक शिक्षा मिलनी आवश्यक है जिससे मतदाता अपने मत का सदुपयोग कर सकें।

---

[1] Schulz E. B *Essentials of Government* p 255

चौथे, जनमत निर्माण की समुचित स्वत ञता भी आवश्यक है ।

अध्यक्षात्मक (राष्ट्रपतीय) शासन पद्धति—इस प्रकार की शासन प्रणाली म सवप्रथम, कायपालिका विधायिका से अलग होती है और वह विधायिका के प्रति उत्तरदायी भी नही होती। कायपालिका का अध्यक्ष और परामशदाता विधायिका की कायवाही म भाग नही ले सकते। इसकी दूसरी विशेपता यह है कि विधायिका एक निश्चित काल के लिए जनता द्वारा चुनी जाती है और साथ ही कायपालिका का अध्यक्ष भी एक निश्चित अवधि के लिए अप्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुना जाता है। निर्वाचित अध्यक्ष का कायकाल व्यवस्थापिका की इच्छा पर निभर नही होता। सिद्धा त और व्यवहार म एक का दूसरे पर निय त्रण नही होता यद्यपि एक को दूसरे पर रोक के कुछ अधिकार प्राप्त होते है। दोनो ही अग एक दूसरे से स्वत त्र होते हैं। इसकी तीसरी विशेपता यह है कि अध्यक्ष प्रशासन कार्यों को सुविधापूवक सुचारुता से चलाने के हतु अपने कुछ परामशदाता नियुक्त करता है। इन परामशदाताओ को सामूहिक रूप से अध्यक्ष का मन्त्रिमण्डल (केबिनेट) कह देते हैं, वास्तव मे यह मन्त्रिमण्डल के समान नही होता। परामशदाताओ की नियुक्ति, उनका अपने पदो पर रहना आदि बातें अध्यक्ष की इच्छा पर निभर करती हैं। वे अध्यक्ष को जो भी परामश देते हैं उसे मानना अथवा न मानना अध्यक्ष की अपनी इच्छा या विवेक पर निभर करता है। चौथे, परामशदाता, जैसे पहले कहा जा चुका है, सर्वोच्च कायपालिका के अग तो हाते है, किन्तु विधायिका के सदस्य नही होते और न ही उसकी कायवाही मे भाग ले सकते है। पाचवे, राष्ट्रपति को केवल महाभियोग के द्वारा ही विधायिका निश्चित अवधि से पूव पद से हटा सकती है।[1]

इस शासन पद्धति की विशेपताएँ अधिक अच्छी प्रकार से समझने के लिए हम सयुक्त राज्य अमरीका के उदाहरण को जानना होगा। वहाँ पर कायपालिका विधायिका के प्रति उत्तरदायी नही है। दोनो को ही अपनी शक्तियाँ और अधिकार सविधान से प्राप्त होते है। क्योकि वे प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा निर्वाचित है, इसलिए यदि हम कहे कि उन्ह अपने अधिकार व शक्तिया जनता से प्राप्त होते हैं, तो अधिक उपयुक्त होगा। सयुक्त राज्य अमरीका मे कायपालिका का अध्यक्ष राष्ट्रपति (President) होता है। राष्ट्रपति राज्य का केवल नाममात्र का अध्यक्ष नही, वरन् कायपालिका का वास्तविक अध्यक्ष होता है। उसका निर्वाचन प्रत्यक्ष ढग से 4 वप की अवधि के लिए होता है। राष्ट्रपति स्वय ही अपने परामशदाताओ (मन्त्रियो) को नियुक्त करता है, वे उसी के प्रति उत्तरदायी होते है। राष्ट्रपति स्वय और उसके म त्री विधायिका के सदस्य नही होते और उन्ह विधायिका उनके पदो से हटा भी नही सकती है। विधायिका उसी प्रकार से निर्वाचित होती है जैसे किसी ससदात्मक पद्धति वाले देश म ससद। इस पद्धति का आधारभूत सिद्धा त मा टेस्क्यू द्वारा प्रतिपादित शक्तियो का विभाजन है। इसके अनुसार विधायिका और कायपालिका एक दूसरे से स्वत त्र तथा पृथक बनाये गये है।

ससदात्मक शासन पद्धति के गुण—सक्षेप मे, इस पद्धति के प्रमुख गुण अग्रलिखित हैं—प्रथम, मन्त्रिमण्डल विधायिका मे बहुमत प्राप्त दल की एक समिति के रूप मे होता है। इसका अथ यह हुआ कि कायपालिका और विधायिका मे आपसी मतभेदा और विवादा की सम्भावना कम स

[1] The chief characteristics of the presidential type of government are (1) The President is both nominal and political head of state (2) The President is elected not by the legislative but directly by the total electorate The president is not part of the legislature and be cannot he removed from office by the legislature except through rare legal impeachments (3) The President cannot dissolve the legislature and call a general election Usually the president and the legislature are elected for fixed terms —Ball A R *Modern Politics and Government* p 42

कम रहती है और सभी कानून दोनों के सहयोग से बनते हैं। दूसरे, यद्यपि इस स्थिति मे न्याय पालिका स्वतन्त्र होती है, फिर भी शासन के तीनों प्रधान अगो मे पृथक्करण नही होता और मन्त्रिमण्डल विधायिका के प्रति उत्तरदायी रहता है। अत शासन म सदैव ही उत्तरदायित्व अविभाजित है। तीसरे, विधायिका मे विरोधी दल के अस्तित्व के कारण मन्त्रिमण्डल के सदस्य अपने कर्त्तव्यों के पालन म अधिक सतर्क रहते है, अन्यथा विरोधी दल उन्हे जनता की आखो मे गिरा देंगे। इस सबका परिणाम अच्छे और उपयोगी कानूनो का निर्माण होता है। चौथे, विधायिका मे विरोधी दल के अस्तित्व का एक लाभ यह भी होता है कि यदि मन्त्रिमण्डल किसी प्रश्न पर हार जाये तो शीघ्र ही विरोधी दल के सदस्यों का मन्त्रिमण्डल बन सकता है।

गैटेल के मतानुसार ससदात्मक शासन के अग्रलिखित गुण है—

(1) यह ऐसे राज्य के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है जहा प्रजातन्त्र की स्थापना हो गई हो, किन्तु वशानुगत राजा का पद शेष हो। इसका सबसे अच्छा उदाहरण ब्रिटेन है। (2) कार्यपालिका व विधायिका के बीच सामजस्यपूर्ण सहयोग रहता है। (3) प्रशासनिक विभागो के अध्यक्षो की विधायिका मे उपस्थिति और उनके नेतृत्व मे कानूनो के प्रारूपो का तैयार किया जाना विधायिका, प्रशासन और जनता सभी के लिए लाभकारी है। (4) इसमे प्रशासन जनता के प्रतिनिधियो और उनके द्वारा जनता के प्रति उत्तरदायी रहता है।

ससदात्मक पद्धति के दोष—(1) दलीय व्यवस्था के, जिसके ऊपर यह पद्धति आधारित है, कई दोष है, जो इस प्रकार के शासन मे विशेष रूप से प्रकट होते है। इसम दलो का आपसी मतभेद, ईर्ष्या और दलीय हितो को राष्ट्रीय हितो के ऊपर महत्त्व देना आदि बुराईया पाई जाती है। (2) कभी कभी विरोधी दल वाले कुछ उपयोगी प्रस्तावो और विधेयको का भी इस कारण विरोध करते हैं कि वे सत्तारूढ दल द्वारा पेश किय गये है तथा इस प्रकार बहुमत दल विरोधी दल के अच्छे सुझावो को कार्यान्वित नही होने देता। ऐसे विरोध के कारण राष्ट्रीय विधि निर्माण मे समय व्यय जाता है और बाधाएँ उत्पन्न होती है। (3) यदि विधायिका मे कई दल हो और किसी भी दल को पूर्ण बहुमत प्राप्त न हो, तो मन्त्रिमण्डल अस्थायी रहता है। इस अस्थायीपन के कारण प्रशासन के कार्यों मे शिथिलता आती है। वर्तमान सविधान से पूर्व फ्रास के मन्त्रिमण्डलो मे बहुधा परिवर्तन होते रहते थे।

अध्यक्षात्मक शासन के गुण—इस पद्धति के मुख्य गुण अग्रलिखित है—प्रथम, इसमे कार्यपालिका महत्त्वपूर्ण प्रश्नो पर स्वतन्त्र दृष्टिकोण अपना सकती है क्योकि वह विधायिका से स्वतन्त्र होती है। वैसे भी इस पद्धति मे कार्यपालिका के हाथो मे बडी शक्तिया व दायित्व केन्द्रीभूत रहते हैं, अतएव युद्ध अथवा राष्ट्रीय सकटो मे ऐसी कार्यपालिका विशेष रूप से उपयोगी रहती है। दूसरे, क्योकि कार्यपालिका का अध्यक्ष और उसके परामर्शदाता विधायिका के प्रति उत्तरदायी नही होते तथा उन्हे व्यवस्थापिका उनके पदो से हटाने मे असमर्थ होती है, इसीलिए कार्यपालिका अधिक स्थायी रहती है। उस पर जनमत के क्षणिक परिवर्तनो का कोई विशेष प्रभाव नही पडता। अस्तु, कार्यपालिका की नीति मे जल्दी जल्दी परिवर्तन नही होते। इसमे प्रशासन भी अधिक स्थायी रहता है, क्योकि इसमे मन्त्रिमण्डलो की उलट फेर कम होती है और प्रशासनिक नीति का शक्तिमय सचालन होता है। इस प्रकार की कार्यपालिका काफी शीघ्रता से महत्त्वपूर्ण निर्णय ले सकती है, क्योकि शक्ति कार्यपालिका के हाथो म केन्द्रीभूत होती है। इसे विधायिका से मन्त्रणा करने मे समय नही खोना पडता। तीसरे, ससदात्मक पद्धति मे प्रधानमन्त्री बहुमत दल का नेता होता है और इस कारण वह इस दल का प्रमुख ही रहता है, जबकि अध्यक्षात्मक पद्धति म राष्ट्रपति वास्तविक अर्थ मे राज्य का प्रमुख होता है। इसी कारण उसका अपेक्षाकृत अधिक सम्मान होता है। इस पद्धति मे प्रशासन अधिक कुशल होता है क्योकि कार्यपालिका योग्य और एस

व्यक्तियों की छाँट करने में स्वतन्त्र होती है जोकि नीतियों को प्रभावी ढंग से कार्यान्वित कर सकें। उच्च पदों पर नियुक्त किये जाने वाले व्यक्ति की छाँट दल के सदस्यों तक सीमित नहीं रहती है। चौथे, इस पद्धति के अन्तर्गत विधायिका में दलीय भावना का प्रभुत्व कुछ कम रहता है, क्योंकि सदस्य विभिन्न प्रश्नों पर स्वतन्त्र रूप से मतदान कर सकते हैं।

अध्यक्षात्मक पद्धति के मुख्य दोष इस प्रकार हैं—(1) कार्यपालिका और विधायिका के बीच पृथक्करण के कारण शासन का उत्तरदायित्व बँट जाता है, जिसके फलस्वरूप शासन में सुगमता की कमी रहती है और व्यवस्थापन एवं प्रशासन-कार्यों में बाधाएँ आती हैं।[1] (2) इसमें मन्त्री विधायिका की कार्यवाही में भाग नहीं ले सकते, इस कारण व्यवस्थापन की उपयोगिता में कमी पैदा होती है। (3) कभी कभी राष्ट्रपति स्वेच्छानुसार कार्य करके राष्ट्र को संकट की स्थिति में डाल सकता है। इसका एक दोष कठोरता (rigidity) है। उदाहरण के लिए, युद्ध अथवा आपात्काल के दौरान संसद शासन-प्रणाली में निर्वाचन स्थगित किये जा सकते हैं, परन्तु अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली में नियम कठोर होते हैं, जिनके कारण चुनावों का समय पर होना आवश्यक है। वास्तव में, अध्यक्षात्मक पद्धति की शक्ति और कमजोरी बहुत बड़ी सीमा तक शक्ति विभाजन सिद्धान्त के गुण और दोषों पर निर्भर करती है, जिस पर यह मुख्यतः आधारित है।

4 कार्यपालिका का अध्यक्ष

आधुनिक राज्यों के कार्यपालिका अध्यक्षों के विवेचन में तीन प्रश्न महत्त्वपूर्ण हैं, उनकी नियुक्ति या चुनाव की विधियाँ, उनका कार्यकाल और उनकी यथार्थ शक्तियाँ।

नियुक्ति अथवा चुनाव की विधियाँ—वर्तमान समय में कार्यपालिका अध्यक्षों का चुनाव अथवा नियुक्ति चार विधियों से होती है जिनका संक्षिप्त विवेचन यहाँ दिया जाता है। प्रथम, कुछ राज्यों में कार्यपालिका का अध्यक्ष वंशानुगत होता है। यह तरीका अधिकतर राजतन्त्रों में प्रचलित है। ब्रिटेन, अफगानिस्तान, नेपाल आदि देशों में, जहाँ कि राजा का पद अभी तक कायम है, राजा की नियुक्ति वंशानुगत आधार पर होती है अर्थात् राजा का बेटा या बेटी गद्दी पर बैठती है। यद्यपि इस विधि का प्रयोग अब नाममात्र का रह गया है, फिर भी इसे ऐसे देशों के लिए उपयुक्त समझा जाता है जो पिछड़े हुए हैं। अपने स्थायित्व के कारण यह शासनाध्यक्ष के दायित्व और सम्मान को बढ़ाने वाला है। इसका सबसे गम्भीर दोष यह है कि आजकल वंशानुगत शासक के विचार को उतना ही अमान्य समझा जाता है जितना कि वंशानुगत गणितज्ञ या कवि के विचार को दूसरे कुछ राज्यों में कार्यपालिका के अध्यक्ष नामजद होते हैं। भारत के स्वतन्त्र होने से पूर्व कार्यपालिका का अध्यक्ष, जिसे गवर्नर जनरल व वाइसराय कहते थे, ब्रिटिश ताज द्वारा नामजद हुआ करता था। आजकल भी कनाडा व आस्ट्रेलिया आदि उपनिवेशों में कार्यपालिका के अध्यक्ष गवर्नर जनरल हैं जिनकी नामजदगी ब्रिटेन के राजा द्वारा की जाती है। भारतीय संघ के राज्यों में गवर्नर ऐसे ही अध्यक्ष हैं, क्योंकि उन्हें राष्ट्रपति नियुक्त करता है। संसदात्मक पद्धति वाले संघान्तरित राज्यों में कार्यपालिका का अध्यक्ष अब साधारणतया नामजद होता है, यदि राज्य संघात्मक है।

[1] When legislature and executive are of different parties there is constant danger of deadlock When the executive and the legislature are at odds each can shift the responsibility to the other and nothing can be accomplished until a new election which may be some time distant brings relief Each department is jealous of the other and frequent conflicts as to the scope of their respective powers are likely to arise —Gettell R G *Political Science* p 223

तीसरे, कुछ राज्यो मे कायपालिका के अध्यक्ष का निर्वाचको द्वारा प्रत्यक्ष चुनाव होता है। प्रकार के उदाहरण दक्षिणी अमरीका के कुछ राज्यो, जैसे पीरू मे पाये जाते हैं। इसी विधि प्रयोग सयुक्त राज्य अमरीका मे सघान्तरित राज्यो के गवनरो के निर्वाचन के लिए होता है। ाव मे वहाँ का राष्ट्रपति भी एक अथ म जनता द्वारा निर्वाचित (plebiscitary executive) ः है। इस विधि का गुण यह है कि यह पद्धति लोकप्रिय और प्रजातान्त्रिक शासन के आधुनिक ारो के अनुरूप है। यह जनसाधारण मे सावजनिक मामलो के प्रति अधिक व्यापक दिलचस्पी करने वाली है तथा उन्हे राजनीतिक शिक्षा देने का एक अच्छा साधन भी है। अत यह ाविक ही है कि ऐसी कायपालिका मे जनता का अधिक विश्वास होगा। परन्तु इस विधि मे दोष है। प्रथम, साधारणतया जनसाधारण को विभिन्न उम्मीदवारो की सापेक्ष योग्यताओ सक्षम निर्णायक नही माना जा सकता। दूसरे, इस प्रकार के चुनाव से जनसाधारण मे ऐसा नीतिक तनाव और उत्तेजना पैदा हो सकते हैं जिनके परिणामस्वरूप असाधारण अथवा हिंसक दोलन चलाये जायें। तीसरे, चुनाव के दौरान उत्पन्न हुई दलीय भावना से राष्ट्रीय एकता को डत करने की सम्भावना बढ सकती है। चौथे, चूँकि ऐसा चुनाव निश्चित अवधि के बाद हुआ ा, अतएव चुनाव अभियान के सचालको के प्रति राजनीतिक पक्षपात बढ़ेगा।

चौथे, कायपालिका के अध्यक्ष की नियुक्ति का अन्तिम और सबसे अधिक प्रचलित ढग ्यक्ष निर्वाचन है। सयुक्त राज्य अमरीका के मताधिकार प्राप्त नागरिक प्रथम एक निर्वाचक ल का चुनाव करते हैं। यह निर्वाचकमण्डल राष्ट्रपति का चुनाव करता है। भारत मे राष्ट्रपति निर्वाचन ससद और राज्यो की विधान सभाओ के सभी निर्वाचित सदस्य करते है। अर्जेन्टाइना ः फिनलैण्ड म इसी विधि का प्रयोग होता है। इस विधि के अनुसार साधारण मतदाता ाचिको को चुनते हैं और निर्वाचकमण्डल अध्यक्ष को चुनता है।

निष्कष—आजकल वशानुगत कायपालिका अध्यक्ष के चलन का अन्त हो रहा है। नामजद ्यक्ष भी केवल डोमिनियनो मे ही पाये जाते हैं। अत निर्वाचित अध्यक्ष को अधिक अच्छा झा जाता है। निर्वाचित अध्यक्षो मे भी अप्रत्यक्ष ढग से निर्वाचित अध्यक्ष का प्रचलन अधिक इसका मुख्य कारण यही है कि मन्त्रिमण्डलात्मक पद्धति वाले देशो मे मन्त्रिमण्डल वास्तविक ापालिका होती है और अध्यक्ष नाममात्र को कायपालिका का अध्यक्ष होता है। अत उसका ाचिन कराने म कोई महत्त्व नही है। परन्तु विधायिका द्वारा निर्वाचन का एक गम्भीर दोष है कि यह शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त का अतिक्रमण करता है। वैसे भी ऐसी कायपालिका का ्यक्ष निवाचन करने वाली विधायिका के हाथो मे खेलेगा अथवा बहुसख्यक दल के प्रति पक्षपात-रुख अपनायेगा।

कायपालिका के अध्यक्ष की अवधि—वशानुगत अध्यक्ष तो अपने पद पर जीवनपयन्त ा है। अन्य प्रकार के अध्यक्षो की अवधि सीमित होती है। विभिन्न राज्यो मे यह विधि एक से लेकर सात वष तक पाई जाती है। सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति की अवधि चार है, भारत के राष्ट्रपति की पाँच वष है और 1939 से पूव फ्रास का राष्ट्रपति सात वष के ः चुना जाता था। स्विट्जरलैण्ड म सघीय परिषद् का सभापति प्रतिवष बदलता है। इन ्हरणो से यह निष्कष निकाला जा सकता है कि यह अवधि न तो बहुत कम और न बहुत क ही होनी चाहिए। बहुत कम अवधि का दोष यह है कि जब अध्यक्ष अपने काय को भली ार समझ पाता है या उसको अनुभव प्राप्त होता है तभी उसे पद त्याग करना पडता है। अत के अनुभव का राज्य को कोई लाभ नही हो पाता। इसके विपरीत, यदि अवधि अधिक लम्बी ो है तो यह सम्भावना हो सकती है कि अध्यक्ष तानाशाह बनने का प्रयत्न करे। अस्तु अवधि ः या पाच वष होनी चाहिए जिसमे दोनो प्रकार के दोष उत्पन्न नही हो सकते। कुछ राज्यो मे

अपना उत्तर देने व बचाव प्रस्तुत करने के लिए सदैव तैयार रहना पड़ता है।

केबिनेट पद्धति की स्वस्थता अर्थात् अच्छा अथवा बुरे होने के स्रोत दलीय पद्धति में हैं, क्योंकि दल ही शासन और पार्लियामेन्ट, शासन और जनता तथा शासन और विरोधी पक्ष के बीच सम्बन्ध स्थापित करते हैं। संसदात्मक पद्धति वाले राज्यों की कार्यपालिकाओं की परीक्षा करने के बाद पाठक इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि ब्रिटिश पद्धति सबसे अच्छी है, क्योंकि वहाँ पर मन्त्रिमण्डल स्थायी होते हैं और विरोधी पक्ष भी सुदृढ़ रहता है। साथ ही, वहाँ पर इस पद्धति को सफल और उत्तम बनाने के लिए अनेक अच्छी प्रथाएँ व चलन पड़ गये हैं। अन्य राज्यों में केबिनेट का अस्थायीपन, अधिनायकतन्त्र स्थापित होने का भय, स्वस्थ प्रथाओं व अभिसमयों का अभाव पाये जाते हैं, यह बात भारत, जापान, फ्रांस आदि राज्यों की शासन पद्धतियों के सिद्धांतों और व्यवहार से भली प्रकार स्पष्ट होगी।

दूसरे विश्व-युद्ध के बाद स्वाधीनता प्राप्त देशों में से अनेक ने संसदात्मक पद्धति को अपनाया, किन्तु उनमें से अधिकतर में वह सफल न हो सकी। बर्मा, पाकिस्तान, इन्डोनेशिया में उसके स्थान पर दूसरी पद्धति व अधिनायकतन्त्र को लागू किया गया। भारत में वह पद्धति 1967 से पूर्व तक सफलतापूर्वक चली। केन्द्र व राज्यों में एक ही दल का प्राधान्य रहा, इसी कारण विरोधी पक्ष का व्यवहार मुख्यतः अनुत्तरदायित्वपूर्ण रहा। 1967 के निर्वाचनों के बाद कांग्रेस की पराजय, उसके बाद कांग्रेस में हुई फूट और दल-बदल की राजनीति ने इस पद्धति के विरुद्ध व्यापक असन्तोष व आलोचना को जन्म दिया है। अनेक विचारकों ने मत व्यक्त किया कि इसके स्थान पर अध्यक्षात्मक पद्धति को अपनाना कदाचित् अधिक इष्टकर होगा। उसमें कार्यपालिका की अवधि नियत होने का गुण विशेष रूप से आकर्षक प्रतीत हुआ। परन्तु गत 2-3 वर्षों में भारत की स्थिति फिर 1967 से पूर्व जैसी हो गई है।

सातवा अध्याय

सांसद पद्धति वाले राज्यो मे कार्यपालिकाएँ

1 ब्रिटेन (यू० के०) मे ताज और प्रिवी परिषद्

राजा की उपाधि और उत्तराधिकार—1953 के शाही उपाधि कानून (Royal Titles Act) के अनुसार वर्तमान रानी की उपाधि इस प्रकार है—'एलिजाबेथ द्वितीय, ईश्वर की अनुकम्पा से युनाइटेड किंगडम व अन्य प्रदेशो की रानी, राष्ट्रमण्डल की अध्यक्ष, धार्मिक विश्वास की रक्षक।' राजत्व का केन्द्रीय स्थान युनाइटेड किंगडम मे है, उत्तर आयरलैण्ड मे रानी के प्रतिनिधि रूप मे गवनर रहता है। अन्य स्वतन्त्र उपनिवेशो म उसके प्रतिनिधि गवनर जनरल कहलाते है जिनकी नियुक्ति ताज द्वारा उनके मन्त्रिमण्डलो के परामश से की जाती है। युनाइटड किंगडम के पराधीन प्रदेशो मे साधारणतया रानी के प्रतिनिधि गवनर अथवा प्रशासक आदि कहलाते है। ताज के उत्तराधिकार का 1701 के सेटिलमेंट कानून से विनियमित किया जाता है। ताज के उत्तराधिकार के सम्बन्ध मे यह नियम है 'सम्प्रभु (Sovereign) के पुत्र, ज्येष्ठता के क्रमानुसार गद्दी के अधिकारी होते है, यदि पुत्र न हो तो उसी क्रमानुसार यह अधिकार पुत्रियो को मिलता है।'

सिविल लिस्ट—अब प्रत्येक नये राजा अथवा रानी के गद्दी पर बैठने के बाद पार्लियामेंट वार्षिक 'सिविल लिस्ट' अनुदान की राशि निर्धारित कर देती है। एडवड और जाज पष्ठम् को आय कर से मुक्त 4,10,000 पौण्ड वार्षिक का अनुदान स्वीकृत किया गया था। 1952 के सिविल लिस्ट कानून (Civil List Act) ने सम्प्रभु की सिविल लिस्ट के लिए 4 75,000 पौण्ड वार्षिक की व्यवस्था की, जिसका वितरण इस प्रकार होता है—रानी की प्रिवी पस 60,000 पौण्ड, राजघराने के अधिकारियो का वेतन 1,85,000 पौण्ड राजघराने का व्यय 1,21,000 पौण्ड शाही दान और विशेष सवायें 13,000 पौण्ड और पूरक व्यवस्था 95,000 पौण्ड। इसी सिविल लिस्ट कानून द्वारा रानी के पति (Duke of Edinburgh) को 40,000 पौण्ड वार्षिक दिया जाता है। राज परिवार के कुछ अन्य सदस्यो को 1910 और 1937 के सिविल लिस्ट कानूनो के अनुसार धनराशि मिलती है। शाही जहाज, ब्रिटेनिया (Royal Yacht Britannia) और रानी के लिए प्रयोग किये जाने वाले हवाई जहाज आदि पर होने वाला व्यय प्रतिरक्षा अनुमानो (Defence Estimates) पर भारित है।

राजा और ताज मे अन्तर—उन्नीसवी शताब्दी के प्रसिद्ध प्रधानमन्त्री ग्लैडस्टन न एक बार कहा था कि ब्रिटिश सविधान की भाषा मे कई सूक्ष्म भेद हैं, परन्तु कोई भेद इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना राजा और ताज मे है। राजा और ताज के बीच अन्तर की मुख्य बातो का सक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है

(1) सम्प्रभु अथवा राजा या रानी एक व्यक्ति है और ताज एक सस्था है। सम्प्रभु वह

व्यक्ति है जिसे कि ताज सांविधानिक रूप में पहनाया जाता है जबकि ताज (जोकि सम्प्रभु और सरकार दोनों का प्रतिनिधित्व करता है) सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति का चिह्न है। ताज रानी में निहित है, किन्तु उसके कार्य पार्लियामेंट के प्रति उत्तरदायी मन्त्री करते हैं। रानी शासन की प्रतीक है शासन नहीं करती।

(2) आरम्भ में सभी शक्तियाँ और अधिकार राजा में निहित थे, किन्तु क्रमिक रूप से उनमें कमी होती चली गयी। वास्तव में उसके सभी अधिकारों और शक्तियों का एक राजा नाम की संस्था को हस्तांतरण हो गया है। आग के शब्दों में ताज वह संस्था है जो अब उन परमाधिकारों और शक्तियों का प्रयोग करती है, जिनका प्रयोग कभी राजा स्वयं करता था।[1] राजत्व को जब सांविधानिक अध्यक्ष के रूप में प्रयुक्त किया जाता है तब वह ताज कहलाता है।

(3) राजा का जन्म होता है, वह मरता है और वह गद्दी पर बैठता है तथा गद्दी का त्याग करता है, परन्तु ताज इन सब बातों से दूर एक संस्था है इसका आशय यही है कि व्यक्ति के रूप में राजा मरता है? किन्तु संस्थागत राजा का अस्तित्व बना रहता है। यह विचार इस उक्ति में अभिव्यक्त है—'राजा मृत है, राजा (अर्थात् ताज) चिरजीवी हो।'

(4) राजा एक शरीरधारी व्यक्ति होता है, ताज एक अमूर्त विचार अथवा अदृश्य सत्ता है। मनरो ने ताज को एक कृत्रिम तथा कानूनी व्यक्ति बताया है। राजा ताज नाम की संस्था का शारीरिक रूप है, चूँकि अब सम्पूर्ण शक्तियों का प्रयोग ताज करता है किन्तु यह सब कुछ मन्त्रियों के परामर्श अथवा जनता की इच्छानुसार होता है, अतएव ताज को 'शासितों की सहमति' अथवा 'जनता की इच्छा' भी कह सकते हैं।

(5) राजा एक वंशानुगत और सांविधानिक प्रमुख है, उसकी शक्तियों का प्रायः अन्त हो गया है। शासन संचालन का लगभग सारा कार्य ताज द्वारा होता है। राजा के हाथों से निकलकर शक्तियाँ ताज में निहित हो गयी हैं। 'ताज' शब्द शासन की समस्त शक्तियों का प्रतीक तथा कार्यपालिका का पर्यायवाची है।[2] शासन के सभी कार्य ताज के नाम से किये जाते हैं। ताज की सभी शक्तियों का प्रयोग उत्तरदायी मन्त्रियों के द्वारा किया जाता है।

ताज की शक्तियाँ—ताज की शक्तियों के प्रमुख स्रोत हैं—परमाधिकार और संविधियाँ (prerogatives and statutes)। पार्लियामेंट प्रति वर्ष अनेक संविधियों का निर्माण करती है जिनके द्वारा ताज को शासन सम्बन्धी कार्यों में विभिन्न प्रकार की शक्तियाँ अथवा अधिकार मिलते हैं। प्रश्न यह उठता है कि परमाधिकार क्या हैं? मौलिक रूप में जो शक्तियाँ राजा में निहित थीं उन्हें ताज के परमाधिकार समझा गया था। उन शक्तियों को पार्लियामेंट की कार्यवाही द्वारा राजा को प्रदान नहीं किया गया था। आज भी ताज के कुछ अधिकार परमाधिकार का जीवित रूप है, परन्तु ताज की अधिकांश शक्तियाँ पार्लियामेंट द्वारा दी गयी हैं। ताज के कुछ परमाधिकारों का बहुत समय से प्रयोग न होने के कारण लोप हो गया है। संक्षेप में, परमाधिकार उन शक्तियों का द्योतक है, जिन्हें पार्लियामेंट ने प्रदान नहीं किया।

कीथ के शब्दों में परमाधिकार वे (शक्तियाँ) हैं जो शासन को स्थिर रखने, आन्तरिक अव्यवस्था से राज्य की रक्षा करने और अन्य राज्यों के साथ सम्बन्धों के संचालन के लिए आवश्यक है।[3] वास्तव में ये ताज के वे उच्च अधिकार हैं, जिनका केवल ताज ही अन्य सभी

---

[1] *It is the institution to which substantially all prerogatives and powers once belonging to the king in person have gradually been transferred* —Ogg F A *English Government and Politics* pp 83-84

[2] The term *Crown* represents the sum total of governmental powers and is synonymous with the Executive —Wade and Philips *Constitutional Law* p 123

[3] Prerogatives are the sum total of those (powers) which are essential for the mainte

व्यक्तियो के ऊपर उपभोग करता है और जिनका आधार सामान्य कानून अथवा प्रथायें है न कि पालियामेन्ट द्वारा निर्मित कानून। य अधिकार पहले राजा को उसकी राजसी प्रतिष्ठा अथवा श्रेष्ठता के कारण प्राप्त थे। मोटे रूप मे इन परमाधिकारो को दो समूहो मे रखा जा सकता है—(अ) व्यक्तिगत और (ब) राजनीतिक। पहले समूहो मे इन्हें सम्मिलित किया जाता है—(1) राजा कभी भूल नही करता। (2) राजा पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि है। दूसरे समूह मे सम्मिलित परमाधिकारो का क्षेत्र शासन व धम के प्राय सम्पूण क्षेत्र तक विस्तृत है। इस श्रेणी मे उल्लखनीय परमाधिकार ये है—(1) पालियामेन्ट का आहूत करना, (2) कामन सभा का विघटित तथा पालियामेन्ट का सत्रावसान (prorogue) करना, (3) पीयर (Peer) बनाना, (4) मन्त्रियो और न्यायाधीशो को नियुक्त करना, (5) युद्ध की घोषणा तथा सधि करना, (6) क्षमादान करना, (7) राजकीय चाटरो द्वारा कारपोरेशन स्थापित करना इत्यादि।

कुछ लेखको ने ताज की विभिन्न शक्तियो को तीन समूहो म बाँटा है—(1) आन्तरिक शासन के क्षेत्र मे, (2) वैदेशिक सम्बन्धो के क्षेत्र म, और (3) राष्ट्र मण्डलीय देशा व पराधीन उपनिवशो आदि के क्षेत्र में। पहले समूह मे सम्मिलित शक्तियो का, (अ) कायपालिका का नागरिक प्रशासन, (ब) विधायी, (स) सैनिक, (द) न्यायिक, (य) धम सम्बन्धी, और (र) अन्य शक्तियो मे विभाजित कर सकते है। इन विभिन्न प्रकार की शक्तियो का सक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है—

कायपालिका व नागरिक प्रशासन के क्षेत्र में शक्तियाँ—(1) ताज कायपालिका का सर्वोच्च अधिकारी है और सभी कानूनो का पालन कराता है। सभी महत्त्वपूण आदश उसी के नाम से जारी किय जाते है (2) प्रधानमन्त्री और उसके परामश से अन्य मन्त्रियो की नियुक्ति भी ताज द्वारा की जाती है (3) सम्पूण नागरिक प्रशासन की देख रेख तथा कानूना को लागू करन का भार ताज पर है, (4) सभी उच्चतर श्रेणियो के कायपालिका तथा प्रशासन अधिकारियो व आयोगा आदि के सदस्यो की नियुक्ति ताज द्वारा होती है, (5) कुछ अपवादो के साथ ताज को प्रशासनिक अधिकारियो को निलम्बित (suspend) और सेवा स अलग करने का अधिकार भी है, (6) शासन का प्रमुख होने के नाते ताज पालियामेन्ट के सम्बन्ध म भी बहुत से प्रशासनिक काय करता है। इनमे य मुख्य है—(अ) पालियामेन्ट को आहूत (summon) करना, (ब) पालियामेन्ट का सत्रावसान करना, (स) कॉमन सभा का विघटन करना (द) पालियामेन्ट म भाषण देना अथवा सन्देश भेजना, (य) कॉमन सभा का निर्वाचन कराना, और (र) लार्ड सभा मे पीयर बनाना इत्यादि।

विधि निर्माण के सम्बन्ध मे शक्तियाँ—ताज कायपालिका शक्तियो का ही रखवाला नही है वरन् वह विधि निर्माण काय मे भी भाग लेता है। वास्तव मे, ताज विधानमण्डल का एक आवश्यक अग है, क्योकि सावैधानिक दृष्टि स ब्रिटेन मे कानूना का निर्माण 'ताज और पालियामेन्ट' (King in Parliament) द्वारा होता है। पालियामेन्ट द्वारा पारित प्रत्यक विधेयक (Bill) ताज की अनुमति मिल जाने पर ही कानून बनता है, सरकारी व्यय के लिए अनुदान की मागें ताज की सिफारिश पर ही कॉमन सभा म पश की जाती है। प्रतिवष ताज द्वारा अनेक सपरिषद् आदश भी जारी किये जाते है। ये आदश पालियामेन्ट द्वारा निर्मित किसी कानून के अधीन जारी होते हैं और उनमे सम्बन्धित कानून के अन्तगत नियम आदि दिये होते हैं। पालियामेन्ट के प्रत्यक सत्र के आरम्भ मे राजा अथवा रानी का भाषण (Speech from the Throne) होता है। इस भाषण की भाषा का रूप कुछ इस प्रकार होता है—'मेरे मन्त्री ऐसा करने का विचार करते हैं और उनके

य प्रस्ताव है।' पार्लियामेन्ट के दोनों सदनों म कृपामय भाषण के उत्तर म भेजे जाने वाले सम्बोधन पर वाद विवाद होता है।

सशस्त्र सेनाओं के सम्बन्ध मे शक्तियाँ—राजा (अथवा रानी), स्थल सेना, नौ सेना तथा वायु सेना का सेनापति भी है। सशस्त्र सेना के तीनों विभागों के उच्च अधिकारियों की नियुक्ति ताज द्वारा की जाती है।

न्यायपालिका के सम्बन्ध मे—ताज न्याय का स्रोत (Fountain of Justice) है और इग्लैण्ड म सभी न्यायालय ताज के न्यायालय हैं। ताज न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है और पार्लियामेन्ट की सिफारिश पर ताज उन्हें पद से अलग भी कर सकता है। उसे क्षमादान व अवि लम्बन (reprieve) देने आदि के अधिकार भी प्राप्त हैं।

धर्म सम्बन्धी शक्तियाँ—ताज इग्लैण्ड के स्थापित चर्च का प्रमुख है। वह लाट-पादरी (Archbishop) और अन्य उच्च व महत्वपूर्ण चर्च अधिकारियों को नियुक्त करता है। ताज ही धार्मिक सम्मेलनों को आहूत करता है और उनके अधिनियमों पर स्वीकृति भी देता है। ताज स्कॉटलैण्ड के चर्च का भी प्रमुख है। इसी कारण उसे 'धर्म का रक्षक' भी कहते हैं।

अन्य शक्तियाँ—ताज उपाधियों का भी निर्झर अथवा स्रोत है। यह ब्रिटिश नागरिकों को उनकी प्रतिष्ठित सेवाओं के लिए विभिन्न प्रकार की उपाधियाँ देता है। उपाधि वितरण वर्ष म दो बार होता है—नव वर्ष के प्रारम्भ पर तथा सम्प्रभु के जन्म दिन पर।

वैदेशिक सम्बन्धों के क्षेत्र मे—ताज युद्ध की घोषणा व अन्य देशों से सन्धियाँ करता है। ताज ही अन्य राज्यों म ब्रिटेन के राजदूतों उच्च आयुक्तों और अन्य उच्च श्रेणी के प्रतिनिधियों को नियुक्त करता है। ताज विदेशों से सम्बन्धों का सचालन भी करता है। अन्य राज्यों के राजदूत अपने प्रमाण-पत्र भी ताज के सामने प्रस्तुत करते हैं।

राष्ट्रमण्डल के देशों तथा ब्रिटेन के अधीन अन्य प्रदेशों के सम्बन्ध म—इस समय राष्ट्र मण्डल मे दो प्रकार के राज्य सम्मिलित हैं—पहला, गणराज्य और स्वतन्त्र उपनिवेश। पहली श्रेणी म भारत व पाकिस्तान आदि आते हैं और दूसरी श्रेणी म आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड व कनाडा आदि प्रमुख हैं। गणराज्य तो राजा अथवा रानी को केवल राष्ट्रमण्डल का प्रमुख मानते हैं। इस रूप म उसके कोई अधिकार नहीं हैं। स्वतन्त्र उपनिवेश अभी तक ब्रिटेन के राजा (या रानी) के प्रति निष्ठा (allegiance) रखते हैं। इन देशों में राजा (या रानी) का प्रतिनिधि गवर्नर जनरल होता है, जिसकी नियुक्ति ताज द्वारा सम्बन्धित राज्य के मन्त्रिमण्डल के परामर्श पर की जाती है। सभी राष्ट्रमण्डलीय देशों में ब्रिटेन के उच्चायुक्त (High Commissioners) रहते हैं जिनकी नियुक्ति ताज द्वारा होती है। अन्य पराधीन देशों व प्रदेशों मे ताज द्वारा नियुक्त गवर्नर अथवा प्रशासक रहते हैं। ताज को इनके सम्बन्ध मे कुछ विधायी शक्तियाँ प्राप्त हैं और न्यायिक अधिकार भी।

ऊपर वर्णित शक्तियाँ और अधिकार सांविधानिक दृष्टि से ताज म निहित हैं, किन्तु यथार्थ मे इन सभी का प्रयोग प्रधानमन्त्री तथा अन्य उच्च अधिकारियों द्वारा किया जाता है। वास्तव मे, ताज की शक्तियों के रखने वाले मन्त्री है न कि राजा (अथवा रानी)। मन्त्रियों का नियन्त्रण इस सीमा तक विस्तृत है कि राजा के कुछ व्यक्तिगत सेवकों को छोड़कर अन्य सभी अधिकारियों की नियुक्ति अथवा चुनाव मन्त्रियों के हाथों म है। यही कारण है कि पार्लियामेन्ट सहप। ताज को शक्तियाँ प्रदान करती चली जाती है,[1] इन शक्तियों का प्रयोग राजा (या रानी) नहीं वरन् उत्तर दायी म त्री करते है। सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि ताज जो कुछ भी करता है, चाहे परमा धिकारों का प्रयोग हो या पार्लियामेन्ट के कानूनों द्वारा दी गई शक्तियों का प्रयोग, वह ब्रिटिश जनता के कार्यपालिका प्रतिनिधि के रूप म करता है और ये सभी कार्य पार्लियामेन्ट के नियन्त्रण मे हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि आजकल ताज की शक्तियाँ अतीत के किसी समय से भी

बढ़कर हैं और बढ़ती चली जा रही हैं। ऑग और जिंक के शब्दों में, 'यह ब्रिटिश संविधान की आत्म-विरोधी उक्ति प्रतीत होती है कि प्रजातन्त्र के विकास के साथ साथ ताज की शक्तियों में विस्तार हुआ है', यद्यपि यह बात काफी तर्कपूर्ण है, यदि सच्ची स्थिति को समझ लिया जाये। अब ताज राज्य के जहाज की चालक शक्ति नहीं है, पर यह वह मस्तूल है जिस पर पाल बँधा है, अस्तु यह केवल उपयोगी ही नहीं है, वरन् जहाज का आवश्यक अंग है।

राजा कोई भूल नहीं करता—ब्रिटिश संविधान की यह एक बड़ी महत्वपूर्ण उक्ति है। इसके दो रूप हैं कानूनी और राजनीतिक। कानूनी रूप में राजा अपने कार्यों के लिए कानून से ऊपर है अर्थात् वह कानूनी दृष्टि से पूर्णतया अनुत्तरदायी है। राजा के विरुद्ध दीवानी अथवा फौजदारी किसी भी प्रकार की कार्यवाही न्यायालयों में नहीं हो सकती। डायसी ने कहा है कि यदि राजा प्रधानमन्त्री को भी गोली मार दे तो कोई ऐसी कानूनी कार्यवाही नहीं जो उसके विरुद्ध की जा सके। यह सिद्धान्त राजनीतिक क्षेत्र में भी लागू होता है। यदि राजा कोई राजनीतिक भूल करे या किसी प्रकार के अपराध का परामर्श दे तो भी उसके विरुद्ध कुछ नहीं किया जा सकता और *उस भूल के लिए सम्बन्धित विभाग का मन्त्री उत्तरदायी ठहराया जायगा।* इसका यह भी आशय है कि यदि राजा स्वयं कोई भूल नहीं कर सकता तो वह अन्य किसी को भी भूल करने के लिए अधिकृत नहीं कर सकता।

राजा राज्य करता है, शासन नहीं करता (The King reigns, but does not govern)—सत्तरहवीं शताब्दी में राजा राज्य भी करता था और शासन भी, परन्तु प्रजातन्त्र के विकास के परिणामस्वरूप राजा केवल सांविधानिक अथवा नाम-मात्र का शासन प्रमुख रह गया है। उसकी सभी वास्तविक शक्तियों का 'ताज' नाम की अमूर्त अथवा काल्पनिक संस्था को हस्तान्तरण हो गया है। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है अब ताज में शासन की अनेक शक्तियाँ निहित हैं। वास्तव में उन शक्तियों में प्रजातन्त्र के साथ-साथ विस्तार हुआ है। किन्तु ताज की किसी शक्ति का प्रयोग राजा (या रानी) व्यक्तिगत रूप में नहीं करता। ताज की सभी शक्तियों का प्रयोग उत्तरदायी मन्त्रियों द्वारा किया जाता है। अस्तु, यह सच है कि राजा के हाथों में शासन की कोई शक्तियाँ नहीं हैं, अर्थात् राजा शासन नहीं करता। परन्तु राजा राज्य और शासन का प्रमुख है, सारे काम उसके नाम से होते हैं सरकार और सेना आदि सब राजा की हैं और राजा अथवा रानी को राजाओं जैसा सम्मान व प्रतिष्ठा भी प्राप्त है। अतः यह कहना सत्य है कि राजा राज्य करता है अर्थात् नाममात्र का राजा है। सम्पूर्ण शक्तियों का प्रतीक अब भी राजा है, किन्तु उनका सार उनके हाथों से निकल गया है। साधारणतया राजा वही काम करता है जो कि उत्तरदायी मन्त्री उसे करने को कहते हैं।[1]

राजा की वास्तविक शक्तियाँ और प्रभाव—उपर्युक्त विवेचन के बाद यह स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि क्या राजा की कोई वास्तविक शक्तियाँ हैं? साथ ही यह भी कि शासन में उसका प्रभाव क्या है? सच तो है कि अब राजा के हाथों में कोई वास्तविक शक्ति शेष नहीं रही है, क्योंकि उसे प्रायः कोई काम करने का अधिकार ही नहीं है। उसकी सारी शक्तियाँ 'ताज' को हस्तान्तरित हो गई हैं और उनका प्रयोग मन्त्रियों के परामर्श के अनुसार होता है। वर्तमान स्थिति इस प्रकार है - 'रानी (अथवा राजा) राज्य की प्रतीक है, कानून में, वह कार्यपालिका की प्रमुख है, विधि निर्माण प्रक्रिया का आवश्यक अंग है (integral part of the legislation) है, न्यायपालिका की भी प्रमुख है, ताज की सभी सशस्त्र सेनाओं की सेनापति है और इंग्लैण्ड के स्थापित

[1] In general the king's job is simply to do what his responsible ministers him do —Carter et al *Major Foreign Powers* p 125

चच की लौकिक प्रमुख है। व्यवहार मे, एक लम्बी विकासवादी प्रक्रिया के परिणामस्वरूप, जिसके दौरान राजत्व की पूण शक्तियाँ क्रमिक रूप स कम हुई है, रानी अब कवल अपन मन्त्रियो क परामश के अनुसार ही काय करती है, वह राज्य करती है शासन नही करती। रानी के नाम स सयुक्त राज्य का शासन रानी की सरकार द्वारा किया जाता है, इसी कारण कुछ लखको न ब्रिटेन को पैतृक राष्ट्रपति के अधीन एक गणतन्त्र बताया है और कोई-कोई राजा को स्वर्णिम शून्य अथवा रबड की मोहर कहता है।'

परन्तु आज भी शासन के कुछ महत्त्वपूण काय हैं जिन्हे राजा या रानी करते हैं, यथा एक मन्त्रिमण्डल के त्याग पत्र दन पर नये प्रधानमन्त्री की नियुक्ति तथा कॉमन सभा का विघटन। कुछ लेखको की राय म इन कार्यों के करने की शक्ति अथवा परमाधिकार राजा म निहित है। साधारण परिस्थितियो म इनका प्रयोग भी मन्त्रियो के परामश से होता है और राजा के लिए जहाँ तक प्रधानमन्त्री की नियुक्ति का प्रश्न है, विवेक के प्रयोग का अवसर नही आता, किन्तु कभी ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो सकती है कि राजा अपनी विवेकीय शक्तियो का प्रयोग कर सके। जब कभी कामन सभा म किसी एक दल का स्पष्ट बहुमत न हो तो राजा किसे प्रधानमन्त्री नियुक्त करेगा ? ऐसे अवसर पर तथा मन्त्रिमण्डल के त्यागपत्र दन पर साधारणतया राजा पूर्वगामी प्रधानमन्त्री से उसके उत्तराधिकारी के विषय म परामश लेता है। ऐसा भी हुआ है कि राजा ने इस प्रकार का परामश नही लिया। 1923 मे जाज पचम ने बोनर लॉ को उसके उत्तराधिकारी के नाम की सिफारिश के लिए आमन्त्रित नही किया। वास्तव मे, राजा के लिए ऐसा करना आवश्यक भी नही है। अतएव जब कभी किसी दल का स्पष्ट बहुमत न हो तो राजा को अपने विवेक अथवा व्यक्तिगत निणय के प्रयोग का अवसर मिलता है। 1931 म मैकडोनल्ड ने त्याग पत्र दे दिया, राजा ने मैकडोनल्ड के परामश के अनुसार दल के नेता बाल्डविन और उदार दल के कायवाहक नेता सर हबट सैम्युएल से मन्त्रणा की। सर हबट सैम्युएल ने राजा को यह परामश दिया कि मैकडोनल्ड को ही मिली जुली या बडे व्यक्तियो की सरकार के अध्यक्ष के रूप म प्रधानमन्त्री पद पर जारी रहने के लिए आमन्त्रित किया जाये। बाल्डविन ने इस परामश का विरोध किया, मैकडोनल्ड ने आरम्भ मे प्रधानमन्त्री बन रहने के लिए कुछ मना किया, किन्तु बाद म अपनी सहमति दे दी।

1957 म स्वेज नहर के प्रश्न पर ब्रिटिश सरकार ने मिस्र के विरुद्ध असफल सनिक कायवाही की थी, जिसके परिणामस्वरूप तत्कालीन प्रधानमन्त्री ईडन को त्याग पत्र दना पडा। उस समय अनुदार दल का ही बहुमत था, किन्तु उसन किसी को अपना नेता न चुना था। नेतृत्व क लिए राजा के सामने दो नेताओ—आर० ए० बटलर और हेरोल्ड मेकमिलन के बीच मे छाँट करने का अवसर था। रानी ने दो बुजुग राजनीतिज्ञो—चर्चिल और सेलिसबरी—स मन्त्रणा की और मेकमिलन को नया मन्त्रिमण्डल बनान के लिए आमन्त्रित किया। मजदूर दल के नेताओ ने मेकमिलन की नियुक्ति के लिये रानी को अधिक दोष नही दिया, परन्तु इस बात की आलोचना की कि अनुदार दल को अपने नेता का चुनाव करना चाहिए था, जिसे रानी प्रधानमन्त्री बनाती। ऐसा न होने पर रानी को अनुदार दल की आन्तरिक राजनीति म फँसना पडा। सावैधानिक दृष्टि से यह एक बडी गम्भीर बात थी, यदि अनुदार दल मेकमिलन को अपना नेता बनाने को तैयार न होता तो रानी के लिए बडा सकट पैदा हो जाता।

सरकार को पदच्युत करने और पार्लियामेन्ट (कॉमन सभा) के विघटन के सम्बन्ध म जेनिग्स का मत है कि यदि राजा को ऐसा विश्वास हो जाये कि शासक दल को बहुमत का समथन नही रहा है, तो पहले उसे इस विषय म पूण जानकारी करनी चाहिए और यदि उसका विश्वास सच है तो वह मन्त्रिमण्डल से त्याग-पत्र देने या कॉमन सभा का विघटन करन पर जोर

रता है। परन्तु यदि मन्त्रिमण्डल राजा की बात न माने तो राजा मन्त्रिमण्डल को अपदस्थ
सकता है। हमारी राय म राजा को ऐसा पग उठाने से पूर्व पूरी तरह से भावी परिणामो के
म सोच लेना चाहिए। यदि कॉमन सभा का विघटन किया जाये और वही दल बहुमत म
जाय तो राजा की स्थिति सकटमय हो जायेगी। अत जेनिंग्स का यह मत है कि या तो
। अपने मन्त्रियो को इस बात के लिए तैयार कर ले कि वे उस कामन सभा के विघटन का
रश दें या मन्त्रिमण्डल त्याग-पत्र दे दे। दूसरे शब्दो म, राजा 'कॉमन सभा' के विघटन
न्धी अपने परमाधिकार का प्रयोग बिना परामर्श के नही कर सकता। मान लीजिये, किसी
र सत्तारूढ दल को बहुमत का समर्थन न रहे और विरोधी दल नया मन्त्रिमण्डल बनाने की
ति म हो। ऐसे समय म राजा प्रधानमन्त्री से त्याग पत्र देने के लिए कहे और वह त्याग पत्र
न के बजाय राजा को यह परामर्श दे कि कॉमन सभा का विघटन कर दिया जाय तो क्या
। उसके परामर्श को मानने से इनकार कर सकता है ? व्यवहार म 1784 के बाद से अब
कोई ऐसा उदाहरण नही है कि राजा ने ऐसा परामर्श न माना हो। अतएव लेखको का यह
है कि इस विषय मे राजा अपने विवेक का प्रयोग नही कर सकता। 1918 से यह सिद्धान्त
पित हो गया है कि प्रधानमन्त्री के परामर्श पर ही कॉमन सभा का विघटन हो सकता है।
। परामर्श देते समय प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल से मन्त्रणा करता है। किन्तु 1954 मे चर्चिल ने
त्रमण्डल से मन्त्रणा किये बिना ही कामन सभा के विघटन का परामर्श दिया।

शासन-कार्यों मे (राजा अथवा रानी) का प्रभाव—इस सम्बन्ध म वाल्टर बजहॉट का
विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उसने अपने ग्रन्थ 'अंग्रेजी संविधान' म लिखा है—'राजा
overeign) को हमारे जैसे सांविधानिक राजतन्त्र म तीन अधिकार प्राप्त हैं—(1) मन्त्रणा देने
अधिकार, (2) उत्साहित करने का अधिकार, और (3) चेतावनी देने का अधिकार, तथा किसी
बुद्धिमान व चतुर राजा के लिए अन्य अधिकारो की आवश्यकता नही है।' राजा (प्रभु) के
ाव के बारे म जेनिंग्स का कथन है योग्य राजा शासन की नीति के निर्माण म काफी प्रभाव
सकता है। वह प्रधानमन्त्री से निकट सम्पर्क रखता है और कैबिनेट की कार्यवाही का पढता
उसे सूचना पाने के बाह्य स्रोत भी उपलब्ध हो सकते है। वह सरकार के कार्यों व प्रस्तावो
आलोचना कर सकता है। राजा के सुझाव और आलोचना किसी भी मन्त्री के सुझाव और
लोचना से अधिक प्रभावी होते हैं। सिंहासन पर बैठने वाले की शान और राजनीति से अलगाव
कारण उसकी सम्मतियो का मूल्य बहुत बढ जाता है। अत हम कह सकते है कि ब्रिटिश
जनीति मे राजा शून्य (non entity) के समान नही है। उसकी शक्तियो का स्थान प्रभाव ने
लिया है।[1]

राजत्व क्यों कायम है ?—आज के प्रजातान्त्रिक युग म यह प्रश्न बडा ही महत्त्वपूर्ण है।
छ आलोचको के मतानुसार अतीत की इस संस्था को बनाये रखना वास्तविक दशाओ के विरुद्ध
तथा एक प्रकार का पाखण्ड है अर्थात अंग्रेज लोग एक बात कहते है, परन्तु कार्य उसके विपरीत
रते है। दूसरे शब्दो म, ब्रिटिश जाति प्रजातन्त्र की बडी समर्थक बनती है, परन्तु राजत्व को
नाये हुए है। हमारे मत मे ऐसी बात नही है, वरन् राजत्व का व्यवहार में बडा महत्त्व है।
ाकर के अनुसार इस प्रश्न का उत्तर तीन प्रकार से दिया जा सकता है पहले, यह बड
ावहारिक महत्त्व की बात है कि ब्रिटेन के मन्त्री राजा के मन्त्री हैं और उनके पद के साथ
ाजा के नाम का मान जुडा है। इससे मन्त्रियो का पद कहीं ऊँचा और अधिकारपूर्ण हो जाता है,
याकि वे केवल किसी एक दल अथवा पार्लियामेन्ट का ही प्रतिनिधित्व नही करते, वरन् राज्य के

[1] Patel S R, *World Constitutional Law and Practice* p 48

प्रतीक और आकर्षण केन्द्र के मन्त्री हैं। दूसरे, राजा नियमित रूप से शासन के बारे में जानकारी पाता रहता है और मन्त्री उससे सदैव मन्त्रणा करते हैं। प्रधानमन्त्री निरन्तर राजा से सम्पर्क रखता है और उसे पार्लियामेन्ट की कार्यवाही तथा केबिनट की कार्यवाहियों से अवगत कराता रहता है। इस प्रकार राजा लम्बे अनुभव का केन्द्र होता है। मन्त्री लोग आते हैं और चले जाते हैं, परन्तु राजा काफी लम्बे समय तक गद्दी पर रहता है। तीसरे, प्रत्येक देश मे विभिन्न शक्तियों के बीच सन्तुलन बनाये रखने के लिए कोई व्यवस्था रहती है। ब्रिटेन मे भी ऐसा है। इस उद्देश्य की प्राप्ति राजत्व के द्वारा होती है। उसके अस्तित्व से सरकार और विरोधी पक्ष दोनों को ही एक एक प्रकार की प्रतिष्ठा और आवरण मिलते है। विरोधी दल 'राजा का विरोधी पक्ष' कहलाता है और सरकार तो राजा की सरकार होती ही है। इससे स्पष्ट है कि राजा की ओढनी बड़ी विस्तृत है, जो सरकार और विपक्षी दल दोनों को ही ढक लेती है।

बेजहॉट के अनुसार राजत्व का उपयोग और महत्त्व दो रूपों मे है—प्रतिष्ठा और कार्य (dignified capacity and business capacity)। पहले रूप मे (1) साधारण जनता के लिए शासन सुबोध बन गया है, (2) साधारण जनता के लिए शासन अभिरुचिपूर्ण भी है, (3) यह शासन की धार्मिक परम्परा से सुदृढ बनता है, (4) राजत्व का सामाजिक क्षेत्र में महत्त्व, (5) राजत्व का नैतिक क्षेत्र मे महत्त्व, और (6) राजत्व के अस्तित्व से बड़े परिवर्तन भी छिपे रहते हैं एव उसके कारण देश क्रान्ति के बुरे परिणामो से बचा रहा है। दूसरे रूप में (अ) मन्त्रिमण्डल बनाने मे, विशेष रूप से कई नेताओ मे से एक का प्रधानमन्त्री पद के लिए चुनाव, (आ) मन्त्रिमण्डल के रहते हुए उसे मन्त्रणा देने, उत्साहित करने व चेतावनी देने मे, और (इ) मन्त्रिमण्डल के भग होने पर।

1878 के बाद से ब्रिटन मे राजतन्त्र के विरुद्ध कोई गम्भीर गणतन्त्रीय भावना नही फैली है। इस काल मे मजदूर दल का उदय और विकास हुआ, किन्तु राजत्व के विरुद्ध कोई आवाज नही उठी और न ही कोई आन्दोलन चला। वास्तव मे, इस काल मे राजत्व की लोकप्रियता में वृद्धि हुई है। मजदूर दल के नेता हर्बर्ट मौरिसन के मतानुसार ससार के अन्य किसी भी देश में राजत्व हमारे देश से अधिक सुरक्षित और सम्मानित नही है। लास्की ने भी लिखा है 'राजा के आचरण की प्रशसा तीव्रता की इस सीमा पर पहुच गयी है कि इसकी तुलना हम सत्तरहवीं शताब्दी के उस धार्मिक हर्षोन्माद ही से कर सकते हैं, जब मनुष्य राजा के दैवी अधिकारों में विश्वास करता था महायुद्ध के बाद से राजाओ को दी गयी श्रद्धाजलियाँ, गत 60 वर्षों में सिंहासनारूढ़ होने वाले राजाओ की अपेक्षा अर्ध-देवताओ के लिए अधिक उपयुक्त होगी।' जेनिंग्स कहता है कि हम सरकार की निन्दा कर सकते हैं, लेकिन राजा की प्रशसा ही करेंगे। गत 20–30 वर्षों में प्रशासन मे पार्लियामेन्ट का महत्त्व काफी कम हुआ है, किन्तु इस काल में राजत्व की स्थिति पहले से अधिक सुदृढ बनी है। राजत्व सांविधानिक स्थायित्व के प्रतीक रूप में ही नहीं वरन् ब्रिटेन मे उदय हो रही नई वास्तविकता के केन्द्रीय बिन्दु के रूप मे सुदृढ हुआ है। राजाओं ने परिवर्तनो को कभी भी रोकने का प्रयत्न नहीं किया। इसके विपरीत उन्होंने परिवर्तन होने में सहायता दी है और वे स्वय भी बदले हैं। यही उनके दीर्घकाल तक जीवित रहने का कारण है, क्योंकि वे समय के साथ चले हैं।[1] अब हम सक्षेप मे उन अन्य कारणों का विवेचन करेंगे जिनके

---

[1] It does not prevent change. On the contrary it has helped and fostered change and it has changed itself in the process. This is the cause of its long survival It has survived because it has changed and because it has moved with the movement of time.' —Barker E., *British Constitutional Monarchy* p 1

परिणामस्वरूप ब्रिटेन में राजत्व अभी तक जीवित है—

(1) संसदात्मक शासन पद्धति वाली कार्यपालिका में दो प्रमुखों का होना आवश्यक है— एक नामधारी अथवा सांविधानिक और दूसरा वास्तविक। ब्रिटेन में ताज पहले प्रकार का है और प्रधानमन्त्री दूसरे प्रकार का। इसी आधार पर बेजहाट ने ताज को शासन का प्रतिष्ठित और मन्त्रिमण्डल को कार्यकुशल अंग बताया है। परन्तु यह कहा जायगा कि राजा के स्थान पर निर्वाचित राष्ट्रपति सांविधानिक प्रमुख का कार्य कर सकता है और अन्य देशों में ऐसा ही है। सांविधानिक दृष्टि से यह सत्य है कि राजा का स्थान राष्ट्रपति ले सकता है। परन्तु यहाँ यह बात विचारणीय है कि ब्रिटेन के लिए राष्ट्रपति की अपेक्षा ताज क्या अधिक उपयुक्त है। राजत्व के पक्ष में सबसे बड़ा तर्क यह दिया जाता है कि राजा पैतृक होता है, उसका पद अत्यन्त प्रतिष्ठित है और उसे अपने कार्यकाल में राष्ट्रपति की अपेक्षा शासन कार्यों का बड़ा अनुभव रहता है। इससे भी बढ़कर बात यह है कि राजा दलगत राजनीति से अलग और ऊपर होता है और सभी प्रजाजन उसे निष्पक्ष समझते हैं। निर्वाचित राष्ट्रपति में ये गुण नहीं पाये जा सकते, क्योंकि इस पद पर निर्वाचित होने से पूर्व उसका किसी राजनीतिक दल विशेष से घनिष्ठ सम्बन्ध रहना आवश्यक है। मोरिसन कहता है कि राज्य के प्रमुख पद पर किसी पुराने राजनीतिक नेता के बैठने पर वह चमक दमक बहुत सीमा तक खो जायगी जिसका ब्रिटिश राजत्व ने हमें आदी बना दिया है और जिसके कारण सम्पूर्ण प्रजातन्त्र सुगमता से चलता रहेगा।

(2) राजत्व राष्ट्रीय एकता और स्थिरता का प्रतीक है—राजा राज्य का शारीरिक रूप है और राजत्व साधारण जनता के लिए शासन की एक सुबोध पद्धति है। ब्रिटिश जनता में राजनीतिक तथा अन्य भेद हैं, दो प्रमुख दलों में से एक सत्तारूढ़ रहता है और दूसरा विरोधी पक्ष में, परन्तु सारी जनता अपने को राजा के प्रजाजन कहलाने में और सरकारी एवं विरोधी दल क्रमश 'राजा की सरकार' व 'राजा का विपक्षी दल' कहलाने में गौरव का अनुभव करते हैं। इस दृष्टि से राजत्व राष्ट्रीय एकता का प्रतीक व उसको बनाये रखने वाला है। साथ ही जैसा ऊपर बताया जा चुका है राजत्व शासन व राष्ट्र की स्थिरता का चिह्न है। उसके रहते हुए अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन शान्तिपूर्ण ढंग से हो गये हैं। मन्त्री आते हैं और चले जाते हैं, किन्तु राजत्व कायम रहता है। राजत्व के रहते हुए जनता कानूनों का पालन अधिक अच्छी प्रकार से करती है। कोई भी दल सत्तारूढ़ हो, उसे राजा की सरकार होने के नाते जनता से स्वभावतः आज्ञापालन का विश्वास रखना उचित है।

(3) राजत्व साम्राज्य को एकता के सूत्र में बाँधने वाली कड़ी और राष्ट्रमण्डल के स्वतन्त्र व ऐच्छिक संघ का चिह्न है—यह एक निर्विवाद सत्य है कि साम्राज्य के विभिन्न अंगों में एकता राजत्व के कारण स्थिर रही है। बीते युग में डोमीनियनों और पराधीन उपनिवेशों ने सदा ही ब्रिटिश राजत्व के प्रति अपनी वफादारी का प्रदर्शन किया है और उसे बनाये भी रखा है। अब भी ब्रिटिश साम्राज्य काफी विस्तृत है जिसके विभिन्न अंग और स्वतन्त्र उपनिवेश राजत्व के प्रति अभी तक वफादार हैं। यदि कभी ब्रिटेन निवासी ताज के स्थान पर निर्वाचित राष्ट्रपति रखने को तैयार हो जाते तो यह स्वाभाविक था कि साम्राज्य व राष्ट्रमण्डल के अनेक सदस्य अब तक ब्रिटेन से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लेते। दक्षिण अफ्रीका के जनरल स्मट्स ने एक बार सत्य ही कहा था, 'तुम ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल को एक गणतन्त्र नहीं बना सकते। क्योंकि यदि ऐसा हो जाये तो कनाडा आस्ट्रेलिया या दक्षिणी अफ्रीका के लिए ब्रिटिश जनता द्वारा निर्वाचित राष्ट्रपति के प्रति वही श्रद्धा भक्ति रखना जो राजा के प्रति रखते हैं, सम्भव नहीं होगा।' आज भी ब्रिटिश राजा या रानी राष्ट्रमण्डल में सम्मिलित राज्यों के स्वतन्त्र और ऐच्छिक संघ का प्रमुख है और कनाडा आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड आदि स्वतन्त्र उपनिवेश उसे अपने राज्य का

मानते है । समय समय पर ब्रिटिश राजा या रानी राष्ट्रमण्डल के विभिन्न राज्यो व प्रदेशो की सैर को जाते हैं और वहाँ उनका अपूर्व स्वागत होता है ।

(4) राजा ब्रिटिश समाज का प्रमुख है और राजा का दरबार सामाजिक जीवन का केन्द्र है—सामाजिक व्यवहार और पहनावे इत्यादि म राजघराना ब्रिटिश समाज के लिए अनुकरणीय है । जिस किसी परोपकारी या दान संस्था के साथ राजा या रानी का नाम जुड जाता है, उसके काय म बडी प्रगति होती है । यदि किसी सामाजिक या राष्ट्रीय काय के समथन में राजा या रानी की अपील निकल जाती है तो उसका व्यापक प्रभाव पडता है ।

(5) राजा इंगलण्ड के स्थापित चच का भी प्रमुख है—जिसके कारण राजत्व के साथ देवत्व का अश जुडा है । इस कारण राजा का स्थान वहाँ के समाज म और भी सुदृढ बन गया है । नये विचारो क व्यापक प्रभाव क बावजूद भी अभी तक अनेक ब्रिटिश जन राजा म देवत्व का रूप देखते हैं और इस कारण स भी राज्य के कानूनो का पालन करते हैं । अतएव यह कहना उचित होगा कि राजत्व ब्रिटिश शासन को धम की शक्ति से भी सुदृढ बनाता है ।

(6) मनोवैज्ञानिक दृष्टि स राजत्व का बडा महत्त्व है । यह सच है कि राजत्व व्यवहार म बडा उपयोगी और मूल्यवान सिद्ध हुआ है, किन्तु यह बात भी सत्य है कि राजत्व का मनोवैज्ञानिक दृष्टि मे बडा महत्त्व है । शासन और राजनीति मे तक और बुद्धि के साथ-साथ भावो और भावनाओ का बहुत महत्त्व है और राजत्व मनुष्य के भावो को बहुत प्रभावित करता है । बाकर कहता है कि यदि राजा केवल एकमात्र चिह्न और आकर्षण केन्द्र होता, तब भी वह शासन म एक अत्यधिक मूल्यवान काय पूरा करता । हम भूल जाते है कि राजनीति की दुनिया म भावो और भावनाओ का बडा महत्त्व है । राजा के महल म रहते हुए ब्रिटिश प्रजाजन शान्ति से सोते हैं ।

(7) ब्रिटिश जाति अपनी रूढिवादिता (Conservatism) के लिए विख्यात है । ब्रिटिश लोग किसी भी पुरानी संस्था को उखाड फेंकने मे विश्वास नही करते । वे समय की बदलती हुई परिस्थितियो तथा नये विचारो के अनुकूल उसम आवश्यक परिवतन करते रहते हैं । ब्रिटिश संविधान का विकास इस तथ्य का सबसे सुन्दर प्रमाण है । ब्रिटिश जाति का रूढिवादी दृष्टिकोण भी राजत्व को बनाये रखने म बडा सहायक रहा है । अंग्रेज अपनी क्रान्तियो मे भी रूढिवादी रहे है ।

(8) ऐसी लाभकारी संस्था पर, जैसी कि राजत्व है, कोई विशेष व्यय नही होता । राष्ट्रीय बजट के एक प्रतिशत का केवल बीसवाँ भाग राजत्व पर व्यय होता है । इससे कुछ ही कम निर्वाचित राष्ट्रपति पर भी व्यय करना पडेगा । इस दृष्टि मे भी राजत्व के विरुद्ध कोई आवाज कभी नही उठी है ।

अन्त मे, राजत्व के उन्मूलन से ब्रिटेन मे प्रजातन्त्र उससे अधिक जनतन्त्रात्मक नही होगा जितना कि आज है, क्योकि जनता का शासन की सभी शाखाओ पर पूर्ण नियन्त्रण है । इसके अतिरिक्त राजत्व के उन्मूलन मे अन्य परिवतन भी आवश्यक होगे, जिनका राजनीति से कोई सम्बन्ध नही है । इसके बिना इंग्लैण्ड का चच बिना ध्वजमात्र प्रमुख के रह जायेगा, इसके परिणाम स्वरूप सामाजिक प्राथमिकताओ को फिर से निर्धारण करना पडेगा और ब्रिटिश शासन की सम्पूर्ण सरकारी नामावली बदलनी पडेगी । अतएव राजत्व अनेक दृष्टियो से आवश्यक और उपयोगी है ।

प्रिवी परिषद—प्रिवी परिषद् का ब्रिटिश शासन की विभिन्न संस्थाओ मे ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान है । इसी परिषद् से केबिनेट की उत्पत्ति और विकास हुआ है । परिषद् के ऐतिहासिक विकास का अब महत्त्व नही है । इसके सदस्यो की संख्या निश्चित नही है । इस

समय इसके सदस्यो की सख्या 300 से ऊपर है। केबिनट के सभी सदस्य इस परिषद् के सदस्य होते है। केन्टरबरी और यार्क के लाटपादरी और लन्दन का पादरी भी इसके सदस्य होते है। इसके सदस्यो मे व लार्ड, जो ब्रिटेन या साम्राज्य के अन्य देशो मे उच्च पदो पर रह रहे हो तथा साम्राज्य के देशो के वे व्यक्ति जिन्होने सरकारी नौकरी, कला, साहित्य, विज्ञान या कानून आदि के क्षेत्र मे विशेष योग्यता दिखायी हो, भी सम्मिलित रहते हैं। सभी प्रकार के सदस्यो की नियुक्ति ताज द्वारा की जाती है और यह सदस्यता जीवन भर के लिए होती है। इसके सदस्यो का महा माननीय कह कर सम्बोधित किया जाता है।

प्रिवी परिषद के कार्य—आजकल इसके मुख्य कृत्यो मे इन्हे सम्मिलित किया जाता है—(1) नये मन्त्रिमण्डल के सदस्यो को शपथ दिलाना, (2) विश्वविद्यालयो, म्युनिसिपल कारपोरेशन और अन्य सस्थाओ को चार्टर देना, (3) शैरिफ (Sheriff) नामक अधिकारियो की नियुक्ति करना, (4) ताज के सम्मुख विभिन्न प्रकार के सपरिषद् आदेश (Orders in Council) उसकी स्वीकृति के लिए रखना, (5) ताज शाही उद्घोषणाओ का सम्बन्ध कामन सभा के विघटन अथवा पार्लियामेट के आहूत करने से होता है। इन उद्घोषणाओ की वैधता पार्लियामेट द्वारा निर्मित कानूनो के ही समान होती है।

सपरिषद आदेश—ये दो प्रकार के होते है जिनमे सावैधानिक सिद्धान्त का आधारभूत अन्तर है। एक श्रेणी मे तो वे आदेश सम्मिलित है जिन्हे शाही परमाधिकार के आधार पर जारी किया जाता है, जैसे वे आदेश जो उपनिवेशो के गवर्नरो को दिये जाते है और जिनमे शाही निर्देश दिये हुए होते है। दूसरी श्रेणी मे वे आदेश आते हैं जिन्हे पार्लियामेट के कानूनो के अन्तर्गत जारी किया जाता है, और जो एक प्रकार से अधीनस्थ विधियो मे सम्मिलित किये जाते है। प्रिवी परिषद् की उन बैठको मे जिनमे आदेश बनाये जाते है जो भी परिषद् के सदस्य उपस्थित होते हैं वे उनकी आधारभूत नीति के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नही होते। यह उत्तरदायित्व उन मन्त्रियो का होता है जिनके विभाग मे आदेशो का निर्माण होता है। कुछ आदेश अनिवार्यत लन्दन गजट मे प्रकाशित किये जाते है, जो कि सरकार द्वारा बनाया अधिकृत पत्र है।

एक दूसरे आधार पर भी इन आदेशो को दो समूहो मे रखा जा सकता है। पहले समूह मे वे आदेश आते है जिनके प्रयोग के लिए पार्लियामेट की स्वीकृति की आवश्यकता हो और दूसरे समूह मे वे आदेश रखे जाते है जिनके प्रयोग के लिए पार्लियामेट की स्वीकृति आवश्यक नही होती। पार्लियामेट के कानूनो के अधीन जो आदेश निकलते है, उन पर पार्लियामेट की स्वीकृति ली जाती है। दूसरे समूह के आदेशो का प्राय इन मामलो से सम्बन्ध होता है—(अ) राजकीय उद्घोषणाएँ, (ब) पार्लियामेट को आहूत करने, कामन सभा का विघटन करने और नया चुनाव करने के सम्बन्ध मे, (स) युद्ध के दौरान समय समय पर निकाले गये आदेश, (द) उपनिवेशो और पराधीन देशो के शासन के सम्बन्ध मे, म्युनिसिपलिटियो और स्थानीय स्वशासन की अन्य सस्थाओ को चार्टर देना, (य) स्थायी कर्मचारियो के विषय मे।

प्रिवी परिषद की बैठकें—इसकी बैठको मे साधारणतया पाँच से सात सदस्य भाग लेते है और उनके लिए गणपूर्ति केवल तीन सदस्यो की उपस्थिति है। नये राजा (अथवा रानी) के राज्याभिषेक के अवसर पर सभी सदस्यो को आमन्त्रित किया जाता है और उनकी काफी बडी सख्या उपस्थित रहती है। जब राजा या रानी की मृत्यु होती है अथवा वह अपना विवाह करने के इरादे की घोषणा करता है (या करती है) तब भी पूर्ण परिषद् की बैठक बुलायी जाती है। अन्य अवसरो पर केवल उन सदस्यो को ही बुलाया जाता है जो अधिक क्रियाशील होते हैं इसकी बैठकें परिषद का क्लर्क बुलाता है और साधारणतया उन पर राजा सभापतित्व करता है। परिषद् की बैठकें बकिंघम महल मे होती हैं, मन्त्रिमण्डल का एक सदस्य 'लार्ड प्रेसीडेन्ट आफ दी कौन्सिल

इन बैठकों मे आवश्यक रूप से उपस्थित रहना है ।

प्रिवी परिषद की समितियाँ—परिषद् की कई समितियाँ है जिनकी बैठकें पूण परिषद् की बैठकों से इस बात मे भिन्न होती है कि उनमे राजा (या रानी) सावधानिक रूप से भाग नही ले सकता । इन समितियो के कृत्य परामशदात्री हैं, इनमे से कुछ के नाम ये हैं—चिकित्साशास्त्र, उद्योग, कृषि आदि विषयो के बारे मे अनुसधान कार्यों के लिए समितियाँ । प्रिवी परिषद् की सबसे महत्त्वपूण समिति 'न्यायिक समिति' है, जो राष्ट्रमण्डल तथा साम्राज्यधीन देशो में उठने वाले कानूनी प्रश्नो पर अपील का अन्तिम न्यायालय है । इसके अपीलीय अधिकार क्षेत्र का आधार सामान्य कानून का यह मानना है कि राजा के सभी प्रजाजनो को सपरिषद् आदश के विरुद्ध राजा के सामने अपील करने का अधिकार है ।

2 ब्रिटेन मे केबिनेट

'केबिनेट' क्या है ?—यह लेख के अनुसार केबिनेट ब्रिटिश शासन पद्धति का प्राण तत्व है । यह शासन-सत्ता का केन्द्रीय अग है, जो अब कामन सभा पर भी नियन्त्रण रखता है और प्रशासन का सचालन करता है । बाह्य रूप म केबिनेट राजा के परामशदाताओ का एक समूह है, व्यवहार मे यह विशेष प्रकार का समूह है । राजा को प्रधानमन्त्री के चुनाव मे स्वतन्त्रता नही है और प्रधानमन्त्री अपने सहयोगियो को नियुक्त करता है । लास्की के शब्दो मे 'केबिनेट आवश्यक रूप म उस दल या मिले-जुले दलो की समिति है, जो कॉमन सभा मे बहुमत का समथन पाते हैं ।'[1] जेनिंग्स लिखता है केबिनेट के सदस्य राजा के वे विश्वासप्राप्त सेवक है जो प्रिवी परिषद् म सदस्य होते है । सार मे, केबिनेट राष्ट्रीय नीति का निदेशन करने वाला निकाय है ।

लॉवेल के अनुसार केबिनेट ब्रिटेन की शासन व्यवस्था मे 'चक्रो के भीतर चक्र' (wheel within wheels) है । यदि पार्लियामेंट को शासन का प्रमुख चक्र माने तो उसका (मुख्यत कॉमन सभा का) बहुमत दल जिससे केबिनेट के सदस्यो को चुना जाता है उस चक्र के भीतर का चक्र हुआ और मन्त्रिमण्डल इस चक्र के भीतर चक्र है, क्योकि इसमे बहुमत दल के प्रमुख नेताओ अथवा सदस्यों को लिया जाता है । मनरो के शब्दो मे इसकी सक्षिप्त परिभाषा इस प्रकार है—'यह ताज के परामशदाताओ का ऐसा निकाय है, जिन्हे प्रधानमन्त्री ताज के नाम से कामन सभा के बहुमत की स्वीकृति से चुनता है ।'

केबिनेट पद्धति के मुख्य लक्षण अथवा विशेषतायें—विभिन्न लेखकों ने इस पद्धति की भिन्न भिन्न विशेषताओ पर बल दिया है (1) राजनीतिक विचारो और कायक्रम मे एकता अथवा एकरसता—केबिनट के सदस्य साधारणतया एक ही दल अथवा मिले जुले दलो से चुने जाते हैं, उनके राजनीतिक विचार एक समान होते हैं और वे एक ही कार्यक्रम को स्वीकार करते हैं । (2) मन्त्रियो का उत्तरदायित्व—केबिनेट के सभी सदस्य सयुक्त अथवा सामूहिक रूप से पार्लियामेंट (व्यवहार मे) कॉमन सभा के प्रति उत्तरदायी होते हैं । लाड सेलिसबरी के अनुसार सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का अभिप्राय यह है कि 'केबिनेट में जो कुछ भी होता है, उसका प्रत्येक सदस्य जो त्याग पत्र नही देता, उसके निर्णय के लिए पूणतया उत्तरदायी होता है और उस निणय से हट नहीं सकता । उसे बाद मे यह कहने का अधिकार नही है कि एक बात मे वह समझौते से सहमत हो गया जबकि दूसरी बात मे उसने सहयोगियों न उससे अपनी बात मनवा ली । इसी कारण सभी मन्त्री एक-साथ तैरते व डूबते हैं । मन्त्रियों के उत्तरदायित्व के दो पहलू और हैं—(अ) ब्रिटेन मे मन्त्री सावधानिक रूप से ताज के प्रति भी उत्तरदायी होते हैं, किन्तु अब यह एक

[1] Laski H J *Parliamentary Government in England* p 221

कानूनी कल्पना मात्र है। (ब) प्रत्येक मन्त्री अपने विभाग के कार्यों के लिए भी पार्लियामेंट के प्रति उत्तरदायी होता है। कभी कोई म त्री अपने व्यक्तिगत निणय या विवेक म ऐसी भूल कर बैठता है जिसके लिए पार्लियामट उसकी तीव्र आलोचना करती है और केबिनेट उसके लिए अपने को उत्तरदायी नही समझती। एसी स्थिति मे उस मन्त्री को त्याग पत्र देना पड जाता है। (3) केबिनेट सामान्य कायक्रम को लागू करती है—मन्त्रिमण्डल के सभी सदस्य एक ही कायक्रम को अपनाते और लागू करते है। इसी कारण शासन के सभी विभागो के कार्यो म समन्वय रहता है। (4) गोपनीयता—केबिनेट की बैठको की कायवाही और सिद्धान्त वास्तव म गुप्त रखे जाते है। केबिनेट एक प्रकार की गुप्त समिति है अर्थात् इसके सदस्यो मे यदि मतभेद भी होते हैं तो उन्ह जनता के सामन नही लाया जाता, केवल केबिनेट के निणय ही प्रकाशित होने है। (5) एकमत कायपालिका—इसी कारण से केबिनेट को एकमत वाली कायपालिका माना जाता है। (6) प्रधानमन्त्री का नेतृत्व—प्रधानमन्त्री केबिनेट का प्रमुख होता है। वही अपने सहयोगियो का चुनाव और केबिनेट की बैठको का सभापतित्व करता है। इसी कारण इसकी बैठको मे राजा भाग नही लेता।

केबिनेट के महत्त्व को विभिन्न लेखको ने भिन्न भिन्न प्रकार से व्यक्त किया है। यहा पर उनके मतो का उल्लेख करना उपयुक्त प्रतीत होता है। बेजहॉट के अनुसार यह वह यन्त्र है जो शासन के विधायक अग को कायपालिका से जोडता है। लॉविल ने इसे राजनीतिक महराब की आधारशिला (Keystone of the political arch) बताया है। जॉन मेरियट के शब्दो मे 'यह वह धूल है जिसके चारो ओर राजनीतिक तन्त्र घूमता है।' डायसी लिखता है—'जबकि राज्य का प्रत्येक काय ताज के नाम म किया जाता है, इग्लण्ड मे कायपालिका की वास्तविक अध्यक्ष केबिनट है।' सिडनी लो के अनुसार 'केबिनेट उत्तरदायी कायपालिका है जिसके हाथ मे प्रशासन का पूण नियन्त्रण और राष्ट्रीय कार्यो का सामान्य निदेशन है।' रेम्जे म्यूर न उसे राज्य के जहाज का स्टीयरिंग व्हील बताया है। ग्लेडस्टन के शब्दा मे 'आधुनिक काल के राजनीतिक ससार मे केबिनेट सम्भवत सबसे अधिक आश्चयजनक रचना है, अपनी प्रतिष्ठा के लिए नही वरन् अपनी चतुराई, लचक और शक्ति की बहुमुखी विभिन्नता के लिए।' हम जैनिंग्स के अग्रलिखित मत से पूणतया सहमत हैं—'केबिनेट ब्रिटिश सांविधानिक पद्धति का अन्तर्भाग है यह सर्वोच्च निदेशक निकाय है। यह विभिन्न कार्यों मे समन्वय स्थापित करती है और ब्रिटिश शासन पद्धति को एकता प्रदान करती है।'[1] इन मता और उद्धरणो के आधार पर तथा ब्रिटिश शासन पद्धति मे केबिनेट के वास्तविक भाग को देखते हुए यह कहना उचित होगा कि केबिनेट ब्रिटिश शासन पद्धति की वास्तविक काय पालिका है, जिसके हाथ मे प्राय सम्पूण कायपालिका शक्ति है, जो विधि निर्माण काय मे भी अत्यधिक महत्त्वपूण भाग लेती है और जो सक्षेप मे ताज के नाम म शासन की सभी शक्तियो का प्रयोग करती है।

मन्त्रिमण्डल और मन्त्रिपरिषद की रचना मे अन्तर—साधारणतया मन्त्रि परिषद् (Ministry) और मन्त्रिमण्डल (Cabinet) को समानाथक शब्द माना जाता है किन्तु दोनो के सगठन, कृत्यो व शक्तियो मे पर्याप्त भिन्नता है। मन्त्रि परिषद् एक बहुत सस्था है जिसमे छोट-बडे सभी म त्री रहते हैं। मन्त्री परिषद् के सदस्यो की सख्या 60–70 या इनसे भी अधिक हो सकती है, प्रधानमन्त्री उसम आवश्यकतानुसार परिवतन करता है। इन सदस्यो के विभिन्न स्तर होते हैं जैसे—विभागरहित मन्त्रिमण्डल के मन्त्री (Cabinet Ministers without portfolio) यथा लाड प्रिवीसील, पे मास्टर जनरल, लाड चान्सलर आदि जो मन्त्रिमण्डल के सदस्य तो होते हैं किन्तु

[1] Jennings I *Cabinet Government* p I

कार्यपालिका है। मन्त्रिमण्डल के मन्त्रियों तथा अन्य मन्त्रियों का प्रमुख काम पार्लियामेंट द्वारा स्वीकृत नीति और कार्यक्रम अर्थात् कानूनों को क्रियात्मक रूप देना है, क्योंकि विधि निर्माण (legislation) सिद्धान्त रूप में तो पार्लियामेंट का ही मुख्य कृत्य है, यद्यपि उसमें अब अति महत्त्वपूर्ण भाग मन्त्रिमण्डल का रहता है। राष्ट्रीय कार्यपालिका के रूप में मन्त्रिमण्डल सम्पूर्ण शासन का ताज के नाम में संचालन करती है। देश में प्रशासन पर नियन्त्रण, निर्देशन व अधीक्षण के अधिकार व शक्तियाँ मन्त्रिमण्डल में ही निहित हैं। शासन अथवा प्रशासन को सुचारु रूप में चलाने के हेतु मन्त्रिमण्डल आवश्यक निर्णय करता है, निर्देश व आदेश निकालता है और आवश्यकतानुसार नई सेवाएँ, अभिकरण, आयोग व विशेष पदों की रचना करता है। समय-समय पर प्रशासन के विभागों अथवा शासनतन्त्र का पुनर्गठन भी मन्त्रिमण्डल के निर्णय द्वारा किया जाता है। शासन के उच्च पदाधिकारियों की नियुक्ति आदि पर भी मन्त्रिमण्डल में विचार अथवा निर्णय किया जाता है। संक्षेप में, युद्ध व शान्ति के काल में शासन का सुगमता और कुशलता से संचालन का उत्तरदायित्व मन्त्रिमण्डल पर ही है।

वित्तीय क्षेत्र में मन्त्रिमण्डल के कार्य—राष्ट्र की आय और व्यय का निर्धारण अर्थात् बजट बनाना और उसे पार्लियामेंट से स्वीकृत कराना भी मन्त्रिमण्डल का एक महत्त्वपूर्ण कृत्य है। वास्तव में बजट को तैयार करने का भार प्रधानतः वित्त मन्त्री पर रहता है, परन्तु आय के साधनों और व्यय की मुख्य योजनाओं पर मन्त्रिमण्डल में ही विचार होता है। बजट प्रस्तावों पर अन्तिम स्वीकृति मन्त्रिमण्डल की होती है।

प्रशासन कार्यों में समन्वय स्थापित करना—शासन का कार्य विभिन्न प्रशासनीय विभागों में बँटा है, किन्तु ऐसे अनेक कार्य होते हैं जिन्हें किसी एक विभाग के अधीन रखा जाता है, यद्यपि यथार्थ में उनका दो या अधिक विभागों से सम्बन्ध रहता है। उदाहरण के लिए दूसरे विश्व-युद्ध के दौरान ब्रिटिश सेनाओं का नार्वे में उतारा जाना और डन्कर्क से हटाना ऐसे कार्य थे जिनको सफलतापूर्वक करने के लिए नौ सेना, युद्ध कार्यालय, नभ मन्त्रालय के बीच घनिष्ठ सहयोग की आवश्यकता थी। इन कार्यों को पूरा करने हेतु वित्त विभाग से व्यय, समुद्री जहाजों और परिवहन के मन्त्रालयों से परिवहन की सुविधाएँ भी आवश्यक थीं। विभिन्न विभागों के बीच सहयोग बढ़ाने तथा उनके कार्यों को एक निर्दिष्ट दिशा में संचालित करने के लिए समन्वय की बड़ी आवश्यकता है और मन्त्रिमण्डल इस महत्त्वपूर्ण कृत्य को पूरा करता है।

मन्त्रिमण्डल और ताज—इनके सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण पहलू का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। उससे पूर्व यह भी बताया जा चुका है कि प्रधानमन्त्री और अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति ताज द्वारा की जाती है और ताज चाहे तो उन्हें अपदस्थ भी कर सकता है अथवा उनसे त्याग पत्र माँग सकता है, परन्तु साधारण परिस्थितियों में ताज को इन कार्यों के करने की स्वतन्त्रता नहीं होती। कुछ विशेष अथवा असाधारण परिस्थितियों में ही ताज इन शक्तियों का अपने विवेक के अनुसार प्रयोग कर सकता है। वास्तव में ऐसे अवसरों पर भी वह बुजुर्ग राजनीतिज्ञों (elder statesmen) से मन्त्रणा करता है। अब तो यथार्थ स्थिति यह है कि ताज की प्रायः सभी शक्तियों का प्रयोग मन्त्रिमण्डल या अन्य मन्त्री करते हैं। ताज और मन्त्रिमण्डल तथा अन्य मन्त्रियों के बीच सम्बन्ध जोड़ने वाली कड़ी प्रधानमन्त्री है। प्रधानमन्त्री शासन की गतिविधियों और मन्त्रिमण्डल के निर्णयों व प्रस्तावों से ताज को अवगत रखता है और ताज प्रधानमन्त्री से इन विषयों में सभी प्रकार की सूचना पाने का अधिकार रखता है। अब, संक्षेप में, स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है : जबकि अतीत में मन्त्री राजा को परामर्श देते थे और निर्णय राजा द्वारा किये जाते थे, आजकल परामर्श राजा या रानी देते हैं और निर्णय मन्त्रिमण्डल करता है।

मन्त्रिमण्डल और पार्लियामेंट—मन्त्रि-परिपद् के सभी सदस्य पार्लियामट के सदस्य होते है और मन्त्रिमण्डल अथवा मन्त्र परिपद् पार्लियामट (व्यवहार मे कॉमन सभा) के प्रति उत्तरदायी होता है। यद्यपि मन्त्रिमण्डल कायपालिका है और पार्लियामेंट का मुख्य कार्य विधि निर्माण तथा शासन की नीति का निर्धारण है, किन्तु यथार्थ म दोनो ही कार्यों मे पहल मन्त्रिमण्डल के हाथा म आ गयी है। अब स्थिति यह है कि जब तक मन्त्रिमण्डल को कामन सभा के बहुमत का समर्थन मिलता रहता है यह किसी भी प्रकार का कानून पास कराने म सफल होती है। शासन के विभिन्न विभागो के लिए व्यय और आय के प्रस्ताव पार्लियामेंट (अब कॉमन सभा) स्वीकार करती है। परन्तु इन प्रस्तावो का निर्धारण अथवा बजट का निर्माण मन्त्रिमण्डल करता है। इस सम्बन्ध मे यह प्रथा पड गयी है कि वित्तीय प्रस्ताव केवल मन्त्री ही पेश कर सकते है और कॉमन सभा किसी वाट (व्यय के लिए माँगी गयी धनराशि) को अस्वीकृत या कम कर सकती है, किन्तु उसम वृद्धि नही कर सकती। वास्तव मे, जब तक मन्त्रिमण्डल को बहुमत का समर्थन प्राप्त रहता है, मन्त्रिमण्डल ही इन सब प्रस्तावा को कॉमन सभा मे प्रस्तुत करने की स्वीकृति देता है और उन्हें जिस रूप म चाहता है पास करा सकता है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि वास्तविक शक्तियाँ मन्त्रिमण्डल के हाथो म केन्द्रीभूत हो गयी हैं। पार्लियामट तो केवल सरकारी नीति की खुलकर आलोचना ही कर सकती है। एक समय था जबकि कॉमन सभा की स्थिति, मन्त्रि परिपद् क मुकाबले म, अधिक सुदृढ थी। बेजहॉट ने अपने ग्रन्थ मे, जो 1867 म प्रकाशित हुआ था, कॉमन सभा को राजनीतिक शक्ति व प्रभाव का केन्द्र और राजनीतिक मत का निर्माण करने वाला बताया है, परन्तु अब स्थिति यह है कि मन्त्रिमण्डल विधायी क्षेत्र म भी शक्ति का केन्द्र है और पार्लियामेंट तो केवल इसके निर्णयो पर अपनी स्वीकृति की मोहर लगाती है अर्थात् उन्हे कानूनी रूप प्रदान करती है। जनिंग्स के मतानुसार सरकार (मन्त्रि परिपद्) का काम शासन करना है और कामन सभा का उसकी आलोचना करना है।

मन्त्रिमण्डल के नियन्त्रण का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। विदेश तथा परराष्ट्र सम्बन्धा के क्षेत्र मे मन्त्रिमण्डल सभी प्रकार के महत्त्वपूर्ण निर्णय करता हैं, कभी कभी तो निर्णय और उसके अनुसार कार्यवाही के आदेश पहले ही जारी हो जाते है और बाद म उन पर पार्लियामेंट मे विचार किया जाता है। इन अवसरो पर उनकी खूब आलोचना होती है, किन्तु साधारणतया बहुमत सरकारी निर्णयो का अनुसमर्थन ही करता है। उदाहरण के लिए युद्ध की घोषणा, सन्धि करना और सेनाओ को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने के सम्बन्ध मे मन्त्रिमण्डल ही निर्देश अथवा आदेश देता है। जैसा कि बताया जा चुका है, विधि निर्माण के क्षेत्र मे भी अब प्रवृत्ति यह है कि अधिक से अधिक निर्णय मन्त्रिमण्डल करता है और कॉमन सभा केवल उनका अनुसमर्थन करती है।

परन्तु मन्त्रिमण्डल के क्षेत्र से अग्रलिखित मामले बाहर रहते है—(1) वार्षिक बजट विवरण इसम नये करो से सम्बन्धित प्रस्ताव सम्मिलित रहते हैं और अब चलन यह पड गया है कि बजट के प्रस्तुत किये जाने से कुछ समय पूर्व ही बजट को मौखिक रूप म मन्त्रिमण्डल के सामने खोला जाता है। (2) दया के प्रयोग सम्बन्धी प्रश्न साधारणतया मन्त्रिमण्डल के सामने नही रखे जाते। (3) यही बात उन फौजदारी अभियोग चलाने के बारे मे लागू होती है, जो कि राज्य की ओर से चलाये जाते हैं जिन पर एटार्नी जनरल का नियन्त्रण रहता है। (4) साधारण तथा नियुक्तियो के प्रश्न भी मन्त्रिमण्डल के सामने नही रखे जाते। (5) जहाँ तक उपाधियाँ प्रदान करने का सम्बन्ध है, यह स्वाभाविक ही है कि मन्त्रिमण्डल उन्हे साधारणतया प्रधानमन्त्री के ऊपर छोड देता है।

हैरीसन तथा अन्य लेखको का यह मत है कि यदि किसी मन्त्रिमण्डल को कामन सभा म

सुदृढ बहुमत का समर्थन प्राप्त हो तो उसकी शक्तियो पर भी कोई कानूनी सीमा नही ।[1] इसी कारण कुछ लेखको ने यह मत व्यक्त किया है कि ब्रिटेन मे मन्त्रिमण्डल की अधिनायकशाही कायम होती जा रही है । रेम्जे म्यूर ने 'ब्रिटन का शासन कैसे होता है' नामक पुस्तक म मन्त्रिमण्डल की विभिन्न शक्तियो का वर्णन करते हुए उसे सर्वशक्तिशाली बताया है । वह कहता है कि इसकी स्थिति, जब भी वह बहुमत का समर्थन पाता है, अधिनायकशाही की है । हाँ वह जनता के सामने जनत त्र के गीत ही गाता है । यह अधिनायकशाही दो पीढी पूर्व से कही अधिक पूर्ण है ।[2] इस विषय मे काटर और सहयोगी लेखको ने भी लिखा है कि व अमरीकी, जो मन्त्रिमण्डल पद्धति को कार्यरूप मे देखते हैं, कभी कभी इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ग्रेट ब्रिटेन तथ्यत मन्त्रिमण्डल तानाशाही के अधीन है ।

अब यह प्रश्न उठता है कि मन्त्रिमण्डल इतना अधिक शक्तिशाली किन कारणो से हो गया है ? विभिन्न लेखको के आधार पर ये कारण, सक्षेप म, इस प्रकार हैं—(1) मन्त्रिमण्डल कॉमन सभा के प्रति उत्तरदायी है और वह लोकप्रिय सदन है । मन्त्रिमण्डल के सदस्य बहुमत दल से लिए जाते हैं, जिसे गत निर्वाचन मे निर्वाचको का भारी समर्थन मिला होता है । (2) समाजवादी विचारधारा के प्रभाव मे जनता सरकार से अनेक माँगें करने लगी है । ब्रिटेन की सरकार ने सामाजिक कल्याण को राज्य का ध्येय अपनाया हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप शासन के कार्य क्षेत्र मे बडा विस्तार हुआ है और उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए नियोजन का सहारा भी लिया गया है । अस्तु, मन्त्रिमण्डल की शक्तिया मे बहुत विस्तार हुआ है । (3) मन्त्रिमण्डल व मन्त्रि-परिषद् सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त के अनुसार कार्य करते हैं । सभी मन्त्रिया के बीच सहयोग और सद्भावना रहती है । उनका कार्य करने का ढग एक खेल की टीम जैसा है । (4) मन्त्रिमण्डल अथवा मन्त्रियो की शक्तियो मे अधीनस्थ विधि निर्माण के बढने से भी वद्धि हुई है । (5) विभिन्न प्रशासकीय विभागो मे प्रशासनीय न्याय की व्यवस्था का विकास हो रहा है । 1963 के सडक यातायात कानूनो के अन्तर्गत यातायात मन्त्री को किराये की मोटरगाडियो के लायसेंसो की अस्वीकृति की अपीलें सुनने का अधिकार है । इसी प्रकार स्वास्थ्य मन्त्री को 1936 के कानून के अन्तर्गत पेंशन सम्बन्धी अपीलें सुनने का अधिकार है । (6) मन्त्रिमण्डल कॉमन सभा का विघटन करा सकता है । ऐसा कराने का परिणाम नये चुनाव और सदस्यो के लिए चुनाव का व्यय और अन्य परेशानियाँ होती हैं । वास्तव मे नये चुनाव बहुमत दल के सदस्यो म अनुशासन बनाये रखने मे बडा सहायक कारण है । इसके अतिरिक्त मन्त्रिमण्डल बहुत सीमा तक पार्लियामेंट की कार्यप्रणाली व उसके कार्यक्रम पर भी नियन्त्रण रखता है । फलत मन्त्रिमण्डल का कॉमन सभा पर प्रभुत्व रहता है ।

उपर्युक्त बातो के होते हुए भी मन्त्रिमण्डल को अधिनायक कहना उचित नही है । इसकी शक्तियो पर वास्तविक सीमाएँ लगी है । शासन की कार्यवाही खुले रूप मे चलती है । पार्लियामेंट के दोनो सदनो और समाचार पत्रो म मन्त्रिमण्डल की नीति व कार्यक्रम की व्यापक आलोचना की जाती है । कॉमन सभा मे इसके विरुद्ध निन्दा का प्रस्ताव, अविश्वास का प्रस्ताव तथा कार्य स्थगन प्रस्ताव पेश किये जा सकते है और बहुमत विरुद्ध होने पर मन्त्रिमण्डल को त्याग पत्र देना पडता है । पार्लियामेंट की बैठको मे मन्त्रियो से प्रशासन सम्बन्धी कार्यों व भूलो के बारे म प्रति

---

[1] If a Cabinet has a stable House of Commons majority there are no formal limits to its powers Harrison W *The Government of Britain* p 6

[2] Its position whenever it commands a majority is a dictatorship only qualified by publicity The dictatorship is far more absolute than it was two generations ago —Muir R *How Britain is Governed* pp 67-68

दिन अनेक प्रश्न पूछे जात हैं। सबसे अधिक महत्त्वपूण बात यह है कि ब्रिटेन मे विपक्षी दल अत्यन्त सुदृढ रहता है और उसके महत्त्व को सभी स्वीकार करते है। इन बातो के रहते हुए मन्त्रिमण्डल अधिनायकशाही का रूप धारण नही कर सकता।

वास्तव मे, मन्त्रिमण्डल को जनमत और व्यापक विरोध का आधार बनाना पडता है। इसी आधार पर ब्रिटेन मे सच्चा प्रजातन्त्र है, और मन्त्रिमण्डल की अधिनायकशाही की बात मान्य नही। पालियामेट मे विरोधी पक्ष का काय बहुत ही महत्त्वपूण है। मन्त्रिपरिषद् शासन का सचालन करती है और प्रशासकतन्त्र का नियन्त्रण भी, किन्तु विरोधी पक्ष पर यह उत्तरदायित्व है कि वह इस बात पर बल देता रहे कि जो कुछ भी सरकार करती है, वह जनता के सामने आता रहे और यह भी कि शासन की नीति के पक्ष तथा विपक्ष मे सभी तर्कों की सुनवाई होगी। इस बात का भी ध्यान रहना चाहिए कि ब्रिटेन म चुनाव स्वतन्त्र रूप से होते हैं और नागरिको को अपने विचारो की अभिव्यक्ति के लिए स्वतन्त्रता प्राप्त है। इन दशाओ मे मन्त्रिमण्डल कभी भी अधिनायक नही बन सकता। यह सत्य है कि मन्त्रिमण्डल की ब्रिटिश शासन मे केन्द्रीय स्थिति है और इसकी शक्तियाँ भी विस्तृत है। लास्की के मतानुसार अब भी मन्त्रिमण्डल को अपनी नीति के लिए पालियामेट का समथन प्राप्त करना पडता है। वस्तुत उसके कायक्रम और नीति का भाग्य कॉमन सभा के बहुमत के समथन और वफादारी पर निभर है।[1]

मन्त्रिमण्डल की काय प्रणाली—मन्त्रिमण्डल की कायवाही गुप्त रखी जाती है। इसके सदस्यो को 'गोपनीयता की शपथ' लेनी होती है। इसके अतिरिक्त सरकारी गुप्त कायवाहियो के कानून (Official Secrets Act) के अन्तगत मन्त्रिमण्डलीय तथा राज्य के अन्य गुप्त पत्रो (secret papers) को प्रकाशित करना दण्डनीय है। जब कभी कोई मन्त्री किसी प्रश्न पर मतभेद होने के कारण त्याग-पत्र देता है और अपने त्याग पत्र के कारणो पर कोई वक्तव्य देना चाहता है तो उसे प्रधानमन्त्री के द्वारा ताज से किसी भी ऐसी बात के लिए, जिसमे मन्त्रिमण्डल का वाद विवाद अन्तग्रस्त है, आज्ञा लेनी पडती है। शान्तिकाल मे मन्त्रिमण्डल की प्रति सप्ताह एक या दो बैठकें होती हैं जो कई घण्टे तक चलती है। जिन दिनो पालियामेट का सत्र नही होता इन बैठको के बीच का समय अपेक्षाकृत बढ जाता है। यदि कोई ऐसा मामला उठे, जिस पर अविलम्ब विचार किया जाना आवश्यक हो, तो प्रधानमन्त्री इसकी बैठक कभी भी बुला सकता है। मन्त्रिमण्डल की बैठको मे शासन के नीति सम्बन्धी महत्त्वपूण प्रश्नो पर निणय किये जाते हैं और मन्त्रिमण्डल ऐसे सभी मामलो पर भी निणय करता है, जिनके विषय मे नीचे के स्तरो पर निणय नही किये जाते। शासन की नीति निर्धारण करने के पूव किसी प्रश्न या मामले के बारे म जाच कराने के लिए मन्त्रिमण्डल शाही आयोग भी नियुक्त करता है। मन्त्रिमण्डल अपना बहुत-सा काय समितियो के द्वारा करता है। मन्त्रिमण्डल की बैठको मे उन मन्त्रियो को भी आमन्त्रित किया जाता है, जिनके विभागो से सम्बन्धित मामलो पर मन्त्रिमण्डल मे विचार होता है। मन्त्रिमण्डल की कायवाही का विस्तृत रिकार्ड नही रखा जाता। जो आलेख इसके सम्मुख आते हैं केवल उनका तथा विभिन्न तर्कों व निष्कर्षों का सार रिकार्ड किया जाता है। इस काय का उत्तरदायित्व मन्त्रिमण्डल के सचिवालय पर है।

मन्त्रिमण्डल की समितियाँ और सचिवालय—मन्त्रिमण्डल साधारणतया दो प्रकार की समितियो का प्रयोग करता है—स्थायी (standing) या तदथ (ad hoc)। मन्त्रिमण्डल किसी भी महत्त्वपूण प्रश्न पर निर्णय करने से पूव उसे किसी समिति के विचाराथ और रिपोट देने के

[1] The cabinet seeks to get its own way That does not mean however that it can impose its will upon the Members of the house of commons clumsily in an arbitrary fashion It must be persuasive —Merrison H *British Parliamentary Democracy* p 65

लिए सुपुर्द कर देता है। इस समय मुख्य समितियाँ ये हैं—(1) प्रतिरक्षा समिति—उसका सभापति प्रधानमन्त्री होता है। वास्तव में यह प्रथम विश्वयुद्ध काल में बनी साम्राज्य प्रतिरक्षा समिति की उत्तराधिकारी है। (2) नागरिक प्रतिरक्षा समिति—इस समिति का सभापति गृह मन्त्री होता है। (3) आर्थिक नीति समिति—प्रधानमन्त्री स्वयं इसका प्रधान होता है और यह समिति आर्थिक नियोजन कार्य की देख रेख करती है। (4) उत्पादन समिति—यह दूसरी समिति आर्थिक समिति है। अन्य समितियों में ये मुख्य रही है—दो विधि निर्माण समितियाँ, नागरिक उड्डयन समिति और नागरिक सेवा समिति, इत्यादि। मन्त्रिमण्डल सचिवालय की स्थापना प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान हुई थी और अब यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग के रूप में विकसित हो गया है।

सचिवालय के मुख्य कार्य अग्रलिखित है (1) मन्त्रिमण्डल और इसकी समितियों को उनकी कार्यवाही सम्बन्धी स्मरण पत्र तथा अन्य पत्रों को घुमाना, (2) प्रधानमन्त्री के निर्देशानुसार मन्त्रिमण्डल की बैठकों के लिए कार्य सूची तैयार करना, (3) मन्त्रिमण्डल तथा इनकी समितियों की बैठकें बुलाने की सूचना देना, (4) मन्त्रिमण्डल और इसकी समितियों के निर्णयों को नेम्यबद्ध करना, उन्हें घुमाना और समितियों की रिपोर्ट तैयार करना तथा मन्त्रिमण्डल के विशेष निर्देशों, मन्त्रिमण्डल के पत्रों और निर्णयों को सम्भाल कर रखना।

प्रधानमन्त्री के कार्य और शक्तियाँ—यहाँ पर हम प्रधानमन्त्री की मन्त्रिमण्डल, मन्त्रि परिषद् व शासन आदि में क्या स्थिति है, इसका विवेचन करेंगे। प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल व मन्त्रि परिषद् का प्रधान व प्रमुख होता है। सभी मन्त्रियों की नियुक्ति उसकी सिफ़ारिश पर की जाती है। उसे अपने सहयोगी छाँटने में काफी स्वतन्त्रता रहती है। अपनी मन्त्रि परिषद् के निर्माण में प्रधानमन्त्री की जितनी स्वेच्छाचारी शक्ति रहती है, उतनी शक्ति का कोई अधिनायक भी उपभोग नहीं करता।[1] यद्यपि इस कार्य को करने में उसे अनेक बातों का ध्यान रखना पड़ता इसका यह कार्य बड़ा कठिन है, क्योंकि उसे अपने दल की बहुत बड़ी संख्या में से कुछ ऐसे सदस्यों को छाँटना पड़ता है जिन्हें एक सूत्र में बाँधा जा सके। उसका यह कार्य विभिन्न प्रकार के टुकड़ों को एक मूर्ति की शक्ल देना है। मन्त्रिमण्डल की बैठकों का वह सभापतित्व करता है। प्रधानमन्त्री के त्यागपत्र का अर्थ सम्पूर्ण मन्त्रि परिषद् का त्याग पत्र है और वह किसी भी मन्त्री को उसकी भूल या मतभेद के कारण अपदस्थ भी कर सकता है। मन्त्रियों में कार्य का वितरण भी प्रधानमन्त्री ही करता है। मन्त्रियों और उनके विभागों में समय समय पर प्रधानमन्त्री उलट फेर करता है। जहाँ तक मन्त्रि-परिषद् के निर्माण का सम्बन्ध है, वही इसकी रचना करता है। मन्त्रिमण्डल और ताज को जोड़ने वाली कड़ी अथवा उन दोनों के बीच संचार का साधन भी प्रधानमन्त्री होता है। शासन के बहुत से मामलों में वही ताज को परामर्श देता है।

प्रधानमन्त्री अपने दल का नेता होता है और साथ ही कॉमन सभा की बैठकों में सदन का नेता (Leader of the House) भी। वह सरकार की नीति के सम्बन्ध में समय समय पर पार्लियामेंट के भीतर या बाहर महत्त्वपूर्ण घोषणाएँ भी करता है। शासन के अनेक उच्च पदों पर उसके ही परामर्श से नियुक्तियाँ की जाती है। वह सम्पूर्ण प्रशासन की देख रेख करता है और उसके कार्यों में समन्वय स्थापित करता है। प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल सचिवालय पर नियन्त्रण रखता है। इसके अतिरिक्त प्रधानमन्त्री साम्राज्य सम्मेलनों और राष्ट्रमण्डलीय देशों के प्रधान मन्त्रियों के सम्मेलनों का सभापति होता है। संक्षेप में, जिस प्रकार राजा (या रानी) राज्य का

[1] *No dictator indeed enjoys such a measure of autocratic power as is enjoyed by the British Prime Minister in the process of making up his cabinet* —Amery L S *Thoughts on the Constitution* pp 23-24

प्रतीक होता है, प्रधानमन्त्री उसी प्रकार शासन का प्रतीक होता है।[1] प्रधानमन्त्री की शक्तिया और उसके अधिकारो का हम सक्षेप मे इस प्रकार वणन कर सकते है प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल का निर्माण करता है और मन्त्रिमण्डल मे सामजस्य बनाये रखने के लिए किसी भी मन्त्री को उसके पद से हटा सकता है। वह मन्त्रिमण्डल की बैठको का सभापतित्व करता है और सचिवालय के द्वारा मन्त्रिमण्डल के निणयो को कार्यान्वित कराने के लिए परिवीक्षण करता है। वही प्रतिरक्षा समिति की बठको मे सभापति रहता है। विदेश कार्यालय के कार्यों से उसका अवश्य ही सम्बन्ध रहता है और अन्य विभागो म भी प्रमुख प्रश्नो को उसके ध्यान मे लाया जाता है, जिससे कि वह यह निणय कर सके कि क्या उन्ह मन्त्रिमण्डल के सामने रखवाया जाये। जहाँ कही विभागो के बीच मतभेद उत्पन्न हो जाते है, वही उन्ह तय कराता है अथवा वे मन्त्रिमण्डल के सामने जाते हैं। नीति सम्बन्धी प्रश्ना पर वह सम्बन्धित मन्त्रियो से विचार विमश करता है और सभी प्रकार की महत्त्वपूण नियुक्तियाँ उसकी सिफारिश पर की जाती हैं। उपाधिया के लिए वही राजा (अथवा रानी) के सम्मुख सूची प्रस्तुत करता है।

सभी मन्त्रिमण्डल सम्बन्धी मामलो मे वही राजा (या रानी) और विभागीय मन्त्रियो के बीच सचार का साधन है। अतीत मे साधारणतया वही कॉमन सभा म सदन का नेता रहा है। उससे आशा की जाती है कि वह ऐसे प्रश्नो का उत्तर दे जो किसी एक विभाग के क्षेत्र मे नही आते। महत्त्वपूण प्रश्ना पर हो रहे वाद विवाद मे वह अवश्य ही भाग लेता है। दल के नेता के रूप मे उसे दल मे अनुशासन बनाये रखना होता है और अनेक काय करने पडते हैं। प्रतिनिधि-मण्डलो को भेंट करने का अवसर देकर, दलीय सम्मेलनो मे तथा अन्य अवसरा पर सावजनिक भाषण देकर, वह जनमत का माग-दशन करता है। वह डोमिनियना से मन्त्रिमण्डल स्तर के मामला पर सम्बन्धो का सचालन करता है। अन्त म, विभागो के अध्यक्ष किसी भी अविलम्ब आपात् की दशा मे प्रधानमन्त्री के पास परामश के लिए पहुँचते है, विशेपकर ऐसे मामलो मे जिनके बारे मे मन्त्रिमण्डल की स्वीकृति आवश्यक हो, किन्तु देरी होने की आशका से मन्त्रिमण्डल का निणय कराना सम्भव न हो।

प्रधानमन्त्री के पद का महत्त्व—ब्रिटिश शासन पद्धति मे प्रधानमन्त्री का स्थान सबसे महत्त्वपूण है। जोन मोर्ले के शब्दो मे 'प्रधानमन्त्री केबिनेट के महराब की आधारशिला है।' रेम्जे म्यूर कहता है कि यदि केबिनेट शासनतन्त्र का चालन चक्र है तो प्रधानमन्त्री उसका परिचालक है। एमरी के अनुसार, प्रधानमन्त्री वास्तव मे शासन के जहाज का कप्तान और कणधार दोनो है। कुछ लेखको के मतानुसार, सभी मन्त्रियो मे उसका स्थान प्रथम है। जनिग्स के अनुसार, प्रधानमन्त्री के पद का यह वर्णन पर्याप्त नही है। वास्तव मे प्रधानमन्त्री सूय के समान है जिसके चारो ओर अन्य ग्रह घूमते है। ग्रीव्ज के अनुसार 'प्रधानमन्त्री देश मे सबसे शक्तिशाली व्यक्ति होता है। उसे कभी-कभी और अकारण ही नही, अधिनायक के समान बताया जाता है। उसकी शक्तियाँ स्वेच्छाचारी शासक से बहुत मिलती जुलती है।' यह सत्य है कि प्रधानमन्त्री की शक्तियाँ बहुत ही विस्तृत हैं, किन्तु प्रधानमन्त्री को किसी भी रूप मे अधिनायक कहना एक अतिशयोक्ति

[1] He personifies the Government of the day as the Queen personifies the State —Stewart M *The British Approach to Politics* p 47

[1] In Lord May s words The Prime Minister is the keystone of the cabinet arch The keystone keeps the arch together and yet depends for its position on the arch However Jennings finds it more appropriate to call him the keystone of the constitution He is by far the most powerful man in the whole country He is the vertebrate column of the government he is its soul captain or pilot He is the main spring of all constitutional authority —Patel S R *op cit*, p 56

जिनक सक्षिप्त वणन करना यहाँ आवश्यक है। वह ससद के सत्रों को आहूत करता है और उसी के द्वारा ससद का सत्रावसान भी होता है। वह किसी भी समय लोकसभा का विघटन कर सकता है। ससद के सत्रारम्भ मे राष्ट्रपति दोनो सदनो की सयुक्त बैठक मे अभिभाषण (address) देता है। यह अभिभाषण ब्रिटेन म ताज के भाषण (speech from the throne) के ही समान होता है। इसमे सरकार की नीति का वणन होता है। अन्य अवसर पर दोना या किसी भी सदन को सन्देश भेजने के अतिरिक्त वह उनकी बैठको मे भी भाषण दे सकता है। किसी विधेयक पर दोनो सदनो के बीच मतभेद उत्पन्न होने की अवस्था मे वह उनकी सयुक्त बैठक भी बुला सकता है। राष्ट्रपति राज्यसभा के 12 सदस्यो तथा लोकसभा के कुछ सदस्यो को भी नामजद करता है।

सविधान मे स्पष्ट लिखा है कि राष्ट्पति सघीय विधायिका का एक आवश्यक अग है, यद्यपि वह ससद के किसी भी सदन का सदस्य नही होता। इस दृष्टि से उसकी स्थिति ब्रिटेन के ताज के सदृश ही है। जहाँ तक उसकी इस क्षेत्र मे वास्तविक शक्ति का सम्बन्ध है, अग्रलिखित विषयो से सम्बन्धित विधेयक बिना उसकी सिफारिश के ससद म पश नही किये जा सकते— (1) कोई भी विधेयक जिसका सम्बन्ध राज्यो की सीमाओं मे परिवतन करने से हो, (2) धन विधेयक, जिन विधेयको मे व्यय अन्तग्रस्त हो और ऐसे कर सम्बन्धी विधेयक जिनका प्रभाव राज्य के हितो पर पडता हो। दूसरे, कोई भी विधेयक ससद द्वारा पास किये जाने पर अधिनियम तभी बनता है जबकि उस पर राष्ट्रपति की अनुमति मिल जाती है। धन विधेयक को छोडकर अन्य सभी विधेयको को अपनी सिफारिशो के साथ ससद को पुनर्विचार के लिए लौटा सकता है, परन्तु यदि विधेयक ससद द्वारा दूसरी बार सशोधन रहित अथवा सहित पास कर दिया जाता है तो राष्ट्रपति को उस पर अनिवाय रूप से अनुमति देनी पडेगी। इस प्रकार उसकी प्रतिषेध शक्ति (veto) अन्तिम नही है। वह तो केवल किसी विधेयक के पास होने मे देरी का कारण बन सकता है।

तीसरे, राष्ट्रपति को ससद के विराम काल मे अध्यादेश जारी करने की महत्त्वपूण शक्ति प्राप्त है। ऐसी आशा की जाती है कि वह अध्यादेश केवल मन्त्रि परिषद् के परामश से ही उन परिस्थितियो का मुकाबला करने के लिए जारी करेगा, जिनमे कि तुरन्त कायवाही आवश्यक समझी जाय। ससद का सत्र आरम्भ होने पर प्रत्येक अध्यादेश ससद के सामने रखा जाता है। ऐसा न होने पर वह सत्रारम्भ की तिथि से छ सप्ताह बाद प्रभावी न रहेगा, किन्तु यदि ससद के दोनो सदन उसे अस्वीकार करने सम्बन्धी प्रस्ताव इस अवधि के पूव ही पास कर दें तो अध्यादेश तभी से प्रभावी न रहेगा। अध्यादेश केवल उन्ही विषयो के सम्बन्ध मे जारी किये जा सकते हैं जिन पर ससद कानून बना सकती है। इसके अतिरिक्त अण्डमान और निकोबार द्वीप समूहो के प्रशासन के सम्बन्ध मे राष्ट्रपति को विनियम (regulations) जारी करने की शक्ति भी प्राप्त है। ये विनियम ससद द्वारा पास किये गये कानूनो के समान ही लागू होगे।

चौथे, राष्ट्रपति को राज्यों स सम्बन्धित विधि निर्माण काय म भी कुछ महत्त्वपूण शक्तियाँ प्राप्त हैं। राज्यो के विधानमण्डलो मे कुछ प्रकार के विधेयक उसकी पूव स्वीकृति के पश्चात् ही पेश किये जा सकते हैं यथा कोई भी ऐसे विधेयक जिनका उद्देश्य व्यापार, वाणिज्य अथवा अन्तरराज्य सम्बन्धो पर प्रतिबन्ध लगाना हो। साथ ही राज्यो के विधानमण्डलो द्वारा पास किये गये कुछ प्रकार के विधेयको को गवनरो द्वारा राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त करने के लिए रोक रखना अनिवाय है, जैसे वे विधेयक जो समवर्ती सूची में वर्णित विषयो से सम्बन्धित हो और सघीय कानून के विरुद्ध हो, राज्य द्वारा सम्पत्ति को बाध्य रूप से अर्जित करने सम्बन्धी विधेयक तथा कुछ विशेष प्रकार के कर लगाने वाले विधेयक।

वित्तीय शक्तियां—राष्ट्रपति को कुछ वित्त सम्बन्धी शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। यह पहले ही बताया जा चुका है कि कोई भी धन-विधेयक ससद के सामने केवल उसकी सिफारिश पर ही पेश किया जा सकता है। उसे आकस्मिक निधि पर भी नियन्त्रण प्राप्त है, क्योकि किसी भी ऐसे व्यय के लिए जिसके सम्बन्ध मे ससद की पूव स्वीकृति प्राप्त न हो, वह इस निधि से धनराशि निकालने का अधिकार दे सकता है जिस पर कि बाद मे ससद की स्वीकृति प्राप्त की जानी आवश्यक है। इसके अतिरिक्त वित्त आयोग की सिफारिशो के आधार पर आय कर से होने वाली आय मे विभिन्न राज्यो के भाग को वही निर्धारित करता है और ऐसे ही पटसन के निर्यात कर की आय मे से कुछ राज्यो के बदले मे क्या धनराशि मिलनी चाहिए यह भी वह निर्धारित करता है। समय समय पर वित्त आयोग की नियुक्ति करना भी राष्ट्रपति का ही कृत्य है। अन्त मे, राष्ट्रपति ही भूतपूव राजाओ को दी जाने वाली धनराशि मे विभिन्न राज्यो को कितना योगदान करना है यह भी निर्धारित करता है।

राष्ट्रपति की आपातकालीन शक्तियाँ—भारत के सविधान मे आकस्मिक परिस्थितियो अर्थात् आपातो का निवारण करने के लिए राष्ट्रपति को विस्तृत शक्तियाँ प्रदान की गयी है—सविधान मे तीन प्रकार के आपातो का अनुमान किया गया है जो इन परिस्थितियो से उत्पन्न हो सकते हैं—(1) युद्ध या बाहरी आक्रमण अथवा आन्तरिक अशान्ति या उसका खतरा होने पर, (2) राज्यो मे सावैधानिक तन्त्र विफल होने पर, और (3) आर्थिक या वित्तीय सकट आने पर। तीनो ही प्रकार के आपात् उत्पन्न होने की अवस्था मे आपात् की उद्घोषणा राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। *प्रथम प्रकार के आपात् की उद्घोषणा राष्ट्रपति द्वारा तब की जाती है जबकि वह यह* समझे कि युद्ध, बाहरी आक्रमण या आन्तरिक अशान्ति के कारण गम्भीर आपात् से भारत की सुरक्षा को खतरा है। ऐसी उद्घोषणा राष्ट्रपति द्वारा वास्तविक घटना होने से पूव भी जारी की जा सकती है। बाद मे दूसरी उद्घोषणा द्वारा आपात् की उद्घोषणा का अन्त किया जा सकता है। ऐसी उद्घोषणा को ससद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाना चाहिए। यदि ससद द्वारा यह स्वीकृत न हुई तो उसका दो माह की अवधि पूरी होने पर अन्त हो जायेगा। किन्तु ऐसा भी सम्भव है कि जिस समय यह उद्घोषणा जारी की जाये, उसके पूव ही लोकसभा विघटित हो चुकी हो या दो माह की अवधि मे उसका विघटन हो जाये। ऐसी अवस्था म उस पर राज्यसभा की स्वीकृति प्राप्त की जायेगी और नयी लोकसभा के निर्मित होने पर उसकी प्रथम बैठक के 30 दिन के भीतर या तो उस उद्घोषणा पर लोकसभा की स्वीकृति मिल जानी चाहिए अन्यथा उस अवधि के बाद उद्घोषणा का अन्त हो जायेगा।

इस प्रकार की उद्घोषणा के परिणाम अग्रलिखित होगे (1) ससद को सम्पूण भारत अथवा उसके किसी भी क्षेत्र के लिए सभी विषयो पर कानून बनाने की शक्ति मिल जायेगी और यदि राज्य मे कोई कानून इनके विरोधी हुए तो राज्य के कानून विरोध की सीमा तक अमान्य होग। (2) सघ की कायपालिका को यह शक्ति मिल जायेगी कि वह राज्यो की कायपालिका को यह निर्देश दे सके कि वे अपनी कायपालिका शक्ति का प्रयोग किस प्रकार करेंगे। (3) राष्ट्रपति आदेश द्वारा यह निर्देश दे सकता है कि सघ और राज्यो के बीच आय वितरण सम्बन्धी सभी या कोई भी उपबन्ध चालू वित्तीय वष मे उसके निदेशानुसार सशोधित रहेगे, परन्तु ऐसा आदेश यथा शीघ्र ससद के दोनो सदनो के सामने रखा जायेगा। (4) सविधान की धारा 19 मे वर्णित व्यक्तियो की स्वतन्त्रतायें राज्य को कोई ऐसा कानून बनाने अथवा उनके विरोध म कोई काय पालिका कायवाही करने से नही रोक सकेंगी अर्थात् विचार प्रकट करने, भाषण देने, शान्तिपूवक सभा करने, सघ बनाने, देश मे अबाध रूप से आने-जाने की स्वतन्त्रतायें एक प्रकार से प्रतिबन्धित अथवा स्थगित हो जायेंगी। (5) राष्ट्रपति आदेश द्वारा भी यह उद्घोषणा जारी कर सकता है

कि आपात् काल में अथवा नियत अवधि में नागरिकों का न्यायालयों द्वारा मूल अधिकारों की प्राप्ति व रक्षा सम्बन्धी अधिकार निलम्बित (suspended) रहेगा।

अनुच्छेद 365 के अनुसार यदि किसी राज्य का गवर्नर राष्ट्रपति के पास इस आशय की रिपोर्ट भेजे या अन्य स्रोत से राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाये कि उस राज्य मे ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गयी है कि उसका शासन संविधान की धाराओं के अनुसार चलना सम्भव नहीं है तो राष्ट्रपति उस राज्य के सम्बन्ध में आपात् काल की घोषणा जारी करने पर (1) कार्यपालिका में कोई भी अधिकार स्वयं धारण कर सकता है, (2) राज्य के विधानमण्डल की शक्तियाँ संसद को हस्तान्तरित कर सकता है, किन्तु संसद को यह शक्ति मिली है कि वह उन विधायी शक्तियों को चाहे तो राष्ट्रपति को सौंप दे या उसे यह भी अधिकार दे दे कि वह उन्हें किसी अन्य अधिकारी को जिसे वह उपयुक्त समझे दे दे, तथा (3) राज्य के उच्च न्यायालय की शक्तियों को छोड़कर अन्य कार्यवाही भी कर सकता है। दूसरी उद्घोषणा द्वारा इस प्रकार की उद्घोषणा का अन्त अथवा उसमें कोई भी परिवर्तन किया जा सकता है। इस प्रकार की उद्घोषणा की अवधि दो माह है, किन्तु संसद के दोनों सदनों की स्वीकृति मिलने पर यह अवधि छः माह हो सकती है और बार बार स्वीकृति मिल जाने पर ऐसी उद्घोषणा की अवधि अधिक से अधिक तीन वर्ष हो सकती है।

वित्तीय आपात—जब कभी राष्ट्रपति यह समझे कि ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गयी है जिससे भारत के वित्तीय स्थायित्व और साख को खतरा है तो वह ऐसे आपात् की उद्घोषणा कर सकता है। इसका परिणाम यह होगा कि संघीय कार्यपालिका राज्यों को जैसे उचित समझे वित्त सम्बन्धी निर्देश दे सकती है—(अ) सर्वोच्च व उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों सहित सभी सरकारी पदाधिकारियों व कर्मचारियों के वेतनों व भत्तों में कमी करने का निर्देश, और (आ) यह निर्देश कि राज्यों के विधानमण्डलों द्वारा पास किये गये सभी धन अथवा वित्तीय विधेयक राष्ट्रपति द्वारा विचार के हेतु उसके पास भेजे जायेंगे।

राष्ट्रपति की वास्तविक स्थिति—जहाँ तक राष्ट्रपति के संविधान में वर्णित शक्तियों का सम्बन्ध है उनकी सूची बहुत बड़ी है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि वह उन सभी शक्तियों का प्रयोग कर सके तो वह विश्व में सबसे शक्तिशाली राज्य का प्रमुख बन जाये। परन्तु जहाँ तक वास्तविकता का सम्बन्ध है उसे अपने कार्यों को करने में मन्त्रि-परिषद् का परामर्श लेना चाहिए, क्योंकि वह संसदात्मक पद्धति वाले राज्य का अध्यक्ष है। किन्तु यह भी सच है कि वह संविधान द्वारा मन्त्रियों के परामर्श को मानने के लिए बाध्य नहीं। अतएव यदि वह चाहे तो नाममात्र के अध्यक्ष से अवश्य ही अधिक शक्तिशाली बन सकता है। यथार्थ में उसकी स्थिति बहुत सीमा तक ब्रिटेन के राजा तथा चौथे फ्रांसीसी गणतन्त्र के राष्ट्रपति के सदृश है, क्योंकि यदि वह कभी मन्त्रियों के परामर्श के विरुद्ध कार्य करने का निर्णय करेगा तो उसके और मन्त्रियों के बीच इतना तीव्र विरोध बढ़ सकता है कि लोकसभा में बहुमत के समर्थन से उसके ऊपर महाभियोग की कार्यवाही सफलतापूर्वक की जा सके। परन्तु इसका अर्थ यह कभी भी नहीं हो सकता कि राष्ट्रपति केवल नाममात्र का ही अध्यक्ष है। बेजहॉट के शब्दों में ब्रिटेन के राजा के समान, उसे ये तीन अधिकार तो प्राप्त हैं ही—सूचना पाने का अधिकार, चेतावनी देने का अधिकार और प्रोत्साहन देने का अधिकार। इन अधिकारों के प्रयोग द्वारा बुद्धिमान राष्ट्रपति शासन पर अपना प्रभाव अवश्य ही डाल सकता है।

राष्ट्रपति की शक्तियों के बारे में विभिन्न विधिशास्त्रियों के दो मत हैं जिनकी विवेचना किया जाना आवश्यक है। एक ओर तो वे लेखक हैं जो यह मानते हैं कि राष्ट्रपति को यद्यपि स्पष्ट शब्दों में मन्त्रियों का परामर्श मानने के लिए संविधान बाधित नहीं करता फिर भी संविधान

मे प्रयुक्त वाक्याशो से यह स्पष्ट है कि उसे ऐसा करना ही होगा । पालडे के अनुसार यह बात ध्यान मे रखनी चाहिए कि उसे अपनी शक्तियो का प्रयोग सविधान के अनुसार (In accordance with the Constitution) करना है। इन शब्दा मे प्रयुक्त होने का अथ यही है कि वह साविधानिक शासक रहेगा । इसी प्रकार सन्तानम ने भी धारा 61 (1) के इस प्राविधान पर विशेष बल दिया है—प्रधानमन्त्री की अध्यक्षता मे एक मन्त्र परिषद् होगी, जो राष्ट्रपति को उसके कार्यों के करने मे सहायता व परामर्श (aid and advice) देगी । यह एक स्पष्ट आदेश है और ये शब्द अत्यन्त व्यापक अथ मे समने जाने चाहियें । डा० अम्बेडकर के अनुसार 'राष्टपति का स्थान वही है जो अग्रेजी सविधान मे ताज का है । वह राज्य का अध्यक्ष है न कि कायपालिका का। वह राष्ट्र का प्रतिनिधि है शासक नही । प्रशासन मे उसका स्थान एक चिन्ह रूप (ceremonial device) या मोहर के समान है जिसके द्वारा राष्ट्र के निणयो को जाना जाता है । सविधान सभा मे पहले राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद न भी ऐसा ही मत व्यक्त किया था 'राष्ट्रपति के लिए हमने न्यूनाधिक ब्रिटिश राजा जसा स्थान अपनाया है उसका स्थान साविधानिक राष्ट्रपति का है ।'

दूसरी ओर अनेक लेखक यह मानते हैं कि हमारा राष्ट्रपति ब्रिटेन के राजा और चौथे फ्रासीसी गणतन्त्र के अन्तगत राष्ट्रपति से अवश्य ही कुछ बातो मे अधिक शक्तिशाली है । इस मत मे सत्य का अधिक अश है, जैसा कि अग्रलिखित बातो से स्पष्ट होगा । ब्रिटेन मे यह अभिसमय पड गयी है कि राजा अथवा रानी के प्रत्येक आदेश पर किसी मन्त्री के प्रतिहस्ताक्षर होने आवश्यक हैं । ऐसा ही बन्धन फ्रास, आयरलैण्ड, जापान व बर्मा क सविधानों मे भी है । परन्तु भारत के सविधान मे ऐसा कोई उपब ध नही है । ऊपर वर्णित पहले मत के समथको के अनुसार यह बात अभिसमय के विकास पर छोड दी गयी है । जबकि भारत का सविधान पूणतया लिखित है और उसमे कम महत्त्वपूर्ण बातो को भी सम्मिलित किया गया है, यह बात समझ मे नही आती कि सविधान निर्माताओ ने इतनी महत्त्वपूण बात को अलिखित क्यो छाड दिया ? तथ्य तो यह है कि सविधान निर्माता राष्ट्रपति को एक रबड की मोहर मात्र नही बनाना चाहते थे । यह स्पष्ट है कि भारत के राष्ट्रपति का स्थान पूरी तरह से ब्रिटेन के राजा के समान नही है । उसे कुछ ऐसी शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं जो कि ससदात्मक पद्धति वाले सविधान मे राज्य के प्रमुख को प्राप्त नही होती । भारत के राष्ट्रपति को अधिकार है कि वह ससद को अपना सन्देश भेज सके । सन्देश भेजने का व्यवहार मे इसके अतिरिक्त क्या अथ हो सकता है कि वह किसी प्रश्न अथवा विधेयक विशेष पर मन्त्रि परिषद् से भिन्न मत रखता है । ऐसे ही उसे यह शक्ति प्राप्त है कि वह ससद द्वारा पास किये गये विधेयको को (धन विधेयको को छोडकर) अपने स दश के साथ ससद को पुनर्विचार के लिए लौटा दे अथवा उस पर अनुमति न दे । इसका भी व्यवहार मे यही अथ होगा कि वह मन्त्रि परिषद् से भिन्न मत रखता है, क्योकि ससद मे कोई भी विधेयक बिना मन्त्रि परिषद् के समथन के पास नही हो सकता ।

इन शक्तियो के प्रयोग द्वारा कोई भी प्रभावशाली व्यक्तित्व वाला राष्ट्रपति बडा शक्तिशाली बन सकता है, यद्यपि साधारण व्यक्ति ऐसा न करके प्रशासन मे ससदात्मक पद्धति से सम्बन्धित अभिसमयो के विकास मे अति सहायक होगा । इसी कारण कुछ लेखको का कहना है कि यदि राष्ट्रपति की स्थिति फ्रास के राष्ट्रपति के समान ही रखनी थी तो इस उद्देश्य से सविधान मे स्पष्ट रूप से उपयुक्त प्राविधान देने मे कोई हानि न होती । इस प्रकार कानूनी मत (Juristic view) के समर्थक कहते हैं कि धारा ६१ मे यह नही लिखा है कि राष्ट्रपति को मन्त्रि परिषद् का परामश मानना ही पडेगा । भारत मे जहाँ बहुसख्या अशिक्षितो की है और जहाँ अभिसमयो के विकास म थोडा समय लगेगा अच्छा यही होता कि यह बात अभिसमय के विकास के लिए न छोडी जाती,

क्योंकि यह सम्भव है कि राष्ट्रपति पद पर कभी कोई ऐसा सर्वमान्य राजनीतिक नेता आसीन हो जाय जिसे सर्वसाधारण का विश्वास प्राप्त हो और यह शक्ति के मद मे आकर अपनी शक्तियों का प्रयोग कर बैठे, मंत्रिपरिषद् को भी भंग कर दे और कुछ माह के लिए स्वेच्छाचारी शासन की स्थापना कर दे।

यदि राष्ट्रपति कभी मन्त्रिपरिषद् के परामर्श को न माने तो मन्त्रि-परिषद् के लिए दो विकल्प हो सकते हैं। पहला, यदि राष्ट्रपति ने संविधान का कहीं अतिक्रमण किया है तो उसके विरुद्ध महाभियोग की कार्यवाही की जा सकती है, किन्तु इसके लिए 2/3 का बहुमत आवश्यक है जो सुगमता से मन्त्रिपरिषद् को प्राप्त न हो सकेगा, विशेष रूप से ऐसी परिस्थितियों में जबकि विरोधी पक्ष सत्तारूढ़ दल का समर्थन न करें और सत्तारूढ़ दल का बहुमत बहुत अधिक न हो। दूसरे, मन्त्रिपरिषद् पद त्याग करके गतिरोध उत्पन्न कर सकता है। ऐसी परिस्थिति मे राष्ट्रपति दूसरी मन्त्रिपरिषद् नियुक्त कर सकता है और छः माह की अवधि तक वह उन मन्त्रियों द्वारा शासन कार्य चला सकता है चाहे उन्हें बहुमत का समर्थन भी प्राप्त न हो। इस बीच में यदि नये चुनाव हो तो यह आवश्यक नही कि पद त्याग करने वाला दल ही अगली बार बहुमत प्राप्त करे। यह भी सम्भव है कि राष्ट्रपति ने मंत्रिपरिषद् का परामर्श ऐसे विषय में न माना हो जिस पर सत्तारूढ दल को बहुसंख्यक जनता का समर्थन न मिल सके।

डा० अम्बेडकर की राय मे तो राष्ट्रपति के कोई विवेकीय कार्य (discretionary function) नही है, उसके तो ब्रिटिश राजा की तरह कुछ परम अधिकार (prerogatives) हैं, यथा प्रधानमन्त्री की नियुक्ति और लोकसभा का विघटन। परन्तु अधिकतर लेखक इन्हें विवेकीय कार्य ही कहते हैं और मानते हैं कि ये संविधान के उचित संचालन पर बड़ा प्रभाव डाल सकते हैं। ऐसे अवसरों पर जबकि राष्ट्रपति बहुत सोच समझकर इन कार्यों को मन्त्रिपरिषद् के परामर्श के विरुद्ध करेगा हमें उसके व्यक्तित्व और उच्च सम्मान का भी ध्यान रखना चाहिए। संविधान के यथार्थ संचालन मे वैयक्तिक बातों का बड़ा प्रभाव रहता है। 1960 के नवम्बर माह मे तत्कालीन राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने इण्डियन लॉ इंस्टीट्यूट की आधारशिला रखते हुए इंस्टीट्यूट से चाहा कि वह राष्ट्रपति की शक्तियों और कार्यों का अध्ययन करे और जांच करे कि वे किन बातों मे ब्रिटिश प्रभु की शक्तियों व कार्यों से भिन्न हैं। राष्ट्रपति के पूर्वोक्त भाषण के कुछ ही दिन बाद तत्कालीन प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू ने एक पत्रकार सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहा था कि भारत का राष्ट्रपति ब्रिटिश संविधान मे राजा के समान है—राजनीतिक व सांविधानिक दोनों ही दृष्टियों से, किन्तु बिना दरबारी वातावरण के। राष्ट्रपति की शक्तियों के सम्बन्ध में डा० अम्बेडकर व जवाहरलाल नेहरू के अधिकारपूर्ण मत संविधान की भावना का स्पष्ट संकेत करते हैं।[1] आरम्भ मे डा० राजेन्द्र प्रसाद का भी ऐसा ही मत था, किन्तु ग्यारह वर्ष के व्यावहारिक अनुभव के बाद राष्ट्रपति द्वारा ऊपर की गई मांग ने भारतीय कार्यपालिका के आधारभूत स्वरूप के प्रश्न को फिर से विचार और जांच करने का महत्त्वपूर्ण विषय बना दिया है।

जहाँ तक राष्ट्रपति की आपात्कालीन शक्तियों का सम्बन्ध है वे बहुत ही विस्तृत हैं और समान देशों मे इतनी शक्तियों का प्रयोग कार्यपालिकाओं को करने के अधिकार नहीं मिले हैं। ब्रिटेन मे नागरिकों के अधिकारों को निलम्बित अथवा समाप्त करने का अधिकार संसद को प्राप्त

---

[1] Though the President is the first citizen of the State he is not the first man in the political and administrative life of the State The Prime Minister is the real centre of gravity and the eyes of the nation are always riveted on him He guides the nation and pilots the political life of the country Describing the powers of the President Nehru said We have not given our President any real power but we have his position one of great authority and dignity —Patel S R *op cit* p 256

है । सयुक्त राज्य अमरीका की काग्रेस केवल ब दी प्रत्यक्षीकरण (Writ of Habeas Corpus) का अधिकार ही निलम्बित कर सकती हैं । इस प्रकार उन दोनो देशो मे मूल अधिकार को निलम्बित करने की शक्ति कार्यपालिकाओ को प्राप्त नही है जबकि भारत मे ऐसा है । यह सच है कि जब राष्ट्रपति आदेश जारी करेगा कि मूल अधिकारो के सरक्षण के लिए यायालय मे प्राथना नही की जा सकती तो ऐसा आदेश ससद की स्वीकृति के लिए पेश किया जायेगा । फिर भी यह मानना पडेगा कि भारतीय कायपालिका को ऊपर वर्णित देशो से अधिक अधिकार प्राप्त हैं । अमर नदी ने लिखा है—'कभी ऐसी परिस्थिति आ सकती है जब राष्ट्रपति इन अधिकारो का प्रयोग मन्त्रि परिषद् से बिना पूछे अपने निणय के अनुसार भी कर सकता है, और जब हम ध्यान मे लाते हैं कि युद्ध अथवा आक्रमण की वास्तविक घटना के समय (अर्थात् केवल उसके खतरे पर) राष्ट्रपति आपात् की घोषणा कर सकता है तो ऐसा लगता है कि वास्तविक गणत त्र मे राष्ट्रपति को इतने निरकुश अधिकार नही मिलने चाहिएँ । इस बात की कल्पना सहज ही की जा सकती है कि साधारण समय मे नागरिको को जो स्वत त्रता प्राप्त रहती है यदि वह सकट काल मे भी रहे तो कुछ समाजद्रोही व्यक्ति उसका लाभ उठाकर राज्य तथा नागरिको की स्वत त्रता दोनो का नाश कर देंगे ।'

फिर भी यह बात स्पष्ट है कि आकस्मिक सकट का निवारण करने के लिए के द्रीय काय पालिका को जो अधिकार दिये गये हैं वे एक तलवार की तरह हैं जिससे नागरिको की स्वत त्रता की रक्षा भी हो सकती है और उसका नाश भी हो सकता है । इसलिए इस तलवार का उपयोग बहुत सावधानी के साथ करना चाहिए । जहाँ तक राज्यो मे साविधानिक शासन की विफलता के कारण आपात्कालीन घोषणा लागू करने का सम्ब ध है राष्ट्रपति अर्थात् सघीय कायपालिका को बहुत ही विस्तृत अधिकार प्राप्त हैं । किसी राज्य मे ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई है इस प्रकार की रिपोट वहाँ के राज्यपाल से पाये बिना ही राष्ट्रपति दूसरे स्रोतो से प्राप्त सूचना के आधार पर, यदि उसका समाधान हो जाये कि वहाँ पर साविधानिक शासन चलना कठिन हो गया है तो वह ऐसी उद्घोषणा करके वहाँ का शासन स्वय धारण कर सकता है । अनुच्छेद 365 के अ तगत तो सघीय कायपालिका को राष्ट्रपति उसे भी साविधानिक शासन की असफलता मानकर वहाँ आपात् कालीन घोषणा लागू कर सकता है । पहले और दूसरे प्रकार की आपात्कालीन उद्घोषणाएँ लागू होने के उपरा त राज्यो के शासन पर जो प्रभाव पडते हैं उनमे एक महत्त्वपूण अ तर है । अनुच्छेद 359 के अनुसार जबकि पहले प्रकार की उद्घोषणा के फलस्वरूप सघीय अधिकारियो को राज्य के शासन पर अधिक विस्तृत निय त्रण के अधिकार मिलते है, दूसरी उद्घोषणा के परिणामस्वरूप राज्य के शासन को भग करके सम्पूण शक्तियाँ सघ सरकार अपने हाथ मे ले सकती है । यह व्यवस्था सघीय प्रणाली मे मेल नही खाती ।

राष्ट्रपति की शक्तियो के उपयुक्त विवेचन से हम इन निष्कर्षों पर पहुँचते हैं—पहला, भारत का राष्ट्रपति केवल नाम मात्र का कायपालिका अध्यक्ष नही है, उसे कुछ ऐसी शक्तियाँ प्राप्त है जो ससदात्मक पद्धति वाले देशो मे अध्यक्ष को नही मिली होती । कभी ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो सकती हैं, जबकि राष्ट्रपति अपनी शक्तियो का प्रयोग म त्रियो के परामश के विरुद्ध भी कर सकता है । उदाहरण के लिए राष्ट्रपति वतमान परिषद् अथवा प्रधानम त्री के इस परामश के विरुद्ध भी कि लोक सभा को विघटित कर दिया जाय, काय कर सकता है । वह कह सकता है कि विघटन से मन्त्रि-परिषद् को लाभ पहुँच सकता है, पर तु ऐसा करना राष्ट्र के श्रेष्ठ हितों के विरुद्ध है अतएव वह दूसरी मन्त्रि-परिषद् बना सकता है । दूसरे यद्यपि भारत के राष्ट्रपति को कुछ शक्तिया सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति जसी प्राप्त हैं फिर भी वह उससे बहुत ही कम शक्तिशाली रहेगा । अत भारत का राष्ट्रपति ब्रिटेन के राजा से कुछ अधिक शक्तिशाली है यद्यपि

ही भाग ले सकते हैं। इन मन्त्रिया म से किसी को भी मन्त्रिमण्डल की उन बैठको म आमन्त्रित किया जाता है, जबकि उसके विभाग से सम्बन्धित प्रश्न मन्त्रिमण्डल के विचाराधीन आते हैं। इस दृष्टि से उनकी तुलना ब्रिटेन के राज्य मन्त्रियो (Ministers of State) से की जा सकती है उप मन्त्री जैसा कि उनके नाम से ही व्यक्त है, किसी ज्येष्ठ (senior) मन्त्री के अधीन किसी भी एक विभाग के अध्यक्ष होते हैं और वे उस मन्त्री की सहायता करते हैं। इन पदा पर रहकर उन्हें मन्त्री-पद के कार्यों का अनुभव होता है और एक प्रकार का प्रशिक्षण मिलता है, जिसके उपरान्त वे ज्येष्ठ मन्त्री बन सकते हैं। उदाहरण के लिए, शिक्षा और प्राकृतिक साधन दो विभाग एक ज्येष्ठ मन्त्री के अधीन थे तथा प्रत्येक के लिए एक उप मन्त्री था। बहुधा मन्त्रि-परिषद् म कुछ संसदीय सचिव (Parliamentary Secretaries) अर्थात् चौथी श्रेणी के मन्त्री भी होते हैं। वे मन्त्रियो के साथ लगे होते है और उन्ह वे संसद काय मे सहायता देते है अर्थात् वे अपने विभाग क सम्बन्ध मे पूछे गये प्रश्नो का उत्तर देते हैं तथा अपने विभाग की ओर से संसद के वाद विवाद म भी भाग लेते हैं। वे भी इस प्रकार के प्रशिक्षण द्वारा उच्चतर श्रेणी के भावी मन्त्री बन सकते हैं। इससे मन्त्रिमण्डल और मन्त्रि समुदाय का अन्तर प्रकट है अर्थात् रचना व संख्या की दृष्टि स मन्त्रि-समुदाय अथवा मन्त्रि परिषद् अधिक बडा होता है, किन्तु कार्यों की दृष्टि से केवल मन्त्रि मण्डल के ही सदस्यो को सामूहिक रूप से मनन अर्थात् नीति आदि निर्धारण क अधिकार प्राप्त है।

प्रधानमन्त्री का स्थान—वास्तव मे मन्त्रिमण्डलात्मक शासन-पद्धति का आधार बहुमत प्राप्त दल होता है जो इसे सामान्य नीति और कायक्रम म एकरसता प्रदान करता है, किन्तु एक सूत्र म बाधने का काय प्रधानमन्त्री की महत्त्वपूर्ण स्थिति द्वारा ही पूण होता है। हम प्रधानमन्त्री के पद के महत्त्व का वणन इस प्रचलित वाक्यांशो द्वारा कर सकते हैं, 'प्रधानमन्त्री अपने सहयोगियों मे प्रथम' होता है। जोन मोर्ले के शब्दा मे उसे 'मन्त्रिमण्डल के महराब की आधारशिला' कह सकते हैं, क्योंकि मन्त्रिमण्डल और सम्पूर्ण मन्त्रि समुदाय मे उसका स्थान सबस अधिक महत्त्वपूर्ण है। उसे एक लेखक के शब्दो मे 'सितारो के बीच चाँद' भी कह सकते हैं। परन्तु जनिंग्स न उसे अपने ग्रन्थ 'केबिनेट गवनमेंट' मे इससे भी बढकर स्थान प्रदान किया है 'वह केवल समान व्यक्तियो मे प्रथम नही है जैसा कि हरकोट ने कहा है, वह सितारो के बीच चाँद भी नही है, वह तो एक सूय है जिसके चारो ओर ग्रह घूमते है। कोई भी आम चुनाव साधारणतया प्रधानमन्त्री का चुनाव होता है। अनिश्चित मतदाता, जो चुनाव का निणय करते हैं न किसी दल और न किसी नीति का समथन करते है, वे तो एक नेता का समथन करते हैं।' इस कथन मे सत्य का बडा अंश है और भारत मे हुए गत चारो आम निर्वाचन इसकी सत्यता के प्रमाण हैं।

वही मन्त्रियो को चुनने तथा विभाग वितरण का काम करता है। उसके पद-त्याग करने पर सम्पूण मन्त्रि समुदाय का पद त्याग होता है। वह कभी भी किसी मन्त्री के पद-त्याग की माँग करता है। वह मन्त्रिमण्डल की बैठको का सभापतित्व करता है। वह अपने अधीन विभागो के साथ साथ सभी विभागो के कार्यों की देख रेख करता है और मन्त्रियो के बीच विरोध व मतभेदों को दूर करने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार वह सभी विभागो के कार्यों म समन्वय लाता है। अपने सहयोगियो के सम्बन्ध म प्रधानमन्त्री की यथाथ मे क्या स्थिति होगी, यह बात निःसन्देह बहुत सीमा तक उसके व्यक्तित्व पर निभर करेगी। इन कारणो से उसका स्थान अन्य मन्त्रिया से अवश्य ही बडा रहता है—(1) मन्त्रिमण्डल का सभापति होने (2) लोकसभा का नेता होने, (3) बहुमत दल का नेता होने, (4) राज्यपाल आदि उच्च अधिकारियो की नियुक्ति म परामश का अधिकार रखने, (5) मन्त्रिमण्डल और राष्ट्रपति के बीच संचार का साधन होने, और (6) लोकसभा का विघटन कराने का परामश आदि देने। ब्रिटिश ताज इस सम्बन्ध म प्रधानमन्त्री

के परामश को स्वीकार करता है। इसी कारण डायसी का यह कहना सत्य है कि विघटन कराने का अधिकार प्रधानमन्त्री की एक महत्त्वपूर्ण शक्ति है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारत मे प्रधानमन्त्री का स्थान उतना ही महत्त्वपूण है जितना कि ब्रिटेन मे।

जहाँ तक विभागो के आन्तरिक प्रशासन का सम्बन्ध है, प्रत्येक मन्त्री को अपने विभाग से सम्बन्धित मामलो मे निणय करने का अधिकार है। किन्तु यदि कोई मन्त्री ऐसा निणय करे जिसका प्रधानमन्त्री समथन न करे और मन्त्री भी अपने निणय पर अडा रहे तो उसे त्याग पत्र देना पड सकता है। यदि कोई मन्त्री कभी अविवेकपूण काय कर बैठे तो उसे अवसरो पर प्रधान मन्त्री क्षुब्ध सदन को शान्त कर सकता है। वास्तव में वह बहुमत दल व मन्त्रि समुदाय का प्रमुख वक्ता होता है। उसके सभी वक्तव्य बडे ही अधिकारपूण होते है। उपर्युक्त के अतिरिक्त प्रधान-मन्त्री को कुछ विशेष अधिकार भी प्राप्त हैं। सभी विभागो के सचिव तथा अन्य स्वतन्त्र अभि-करणो के अध्यक्षों की नियुक्ति या तो वह स्वय करता है या उन्हे उसकी सहमति से नियुक्त किया जाता है। राज्यपालो, उप राज्यपालो, चीफ कमिश्नरो, राजदूतो, अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनो के लिए प्रतिनिधियों आदि की नियुक्ति भी उसकी स्वीकृति से की जाती है। यदि सघ सरकार के किसी विभाग और राज्य सरकार के बीच मे उठने वाले प्रश्नो पर कोई मतभेद हो तो सम्बन्धित मन्त्री का कत्तव्य होगा कि उस विषय म प्रधानमन्त्री का सूचित रखे। अन्त मे, प्रधानमन्त्री को सरकारी कार्यों के अतिरिक्त सरकारी व सावजनिक समारोहो का उद्घाटन करना या उनमे भाग लेना होता है। उसे प्रतिदिन मन्त्रियो, सरकारी अधिकारिया और अनक गैर सरकारी व्यक्तियो से भेंट करनी होती है। इन सब कारणा स उनके ऊपर कार्यों व दायित्वों का भार सबसे अधिक रहता है। मन्त्रियो को भी अपन विभागीय कार्यों के अतिरिक्त अनेक सरकारी व सावजनिक कार्यों मे भाग लेना होता है। प्रधानमन्त्री तथा अन्य मन्त्री समय समय पर देश के विभिन्न भागो तथा विदेशों का दौरा करते हैं।

मन्त्रिमण्डल का कार्य सचालन—साधारणतया मन्त्रिमण्डल की सप्ताह मे एक बैठक होती है, परन्तु आवश्यकतानुसार अधिक बैठकें भी होती हैं। मन्त्रिमण्डल की बैठको मे अधिकतर निणय सवसम्मति अथवा बहुमत से किये जाते हैं। किसी भी मन्त्री को निणय होने के बाद उसके विरोध का अधिकार नही होता। यदि कोई मन्त्री निणय को स्वीकार नही करता तो त्याग-पत्र देना होता है। मन्त्रिमण्डल महत्त्वपूर्ण विषयो के सम्बन्ध मे सदस्यो की समितियाँ भी बना देता है, जिनकी रिपोट पर निणय किया जाता है। मन्त्रिमण्डल के सामूहिक रूप में मुख्य काय अग्रलिखित हैं—(1) महत्त्वपूण प्रश्नो पर नीति का निर्धारण करना और उसे कार्यान्वित करने के हेतु विधेयकों को स्वीकार करना, (2) विदश नीति निर्धारित करना तथा सन्धियाँ करना। प्रत्येक मन्त्री वैयक्तिक दृष्टि से एक या अधिक विभागा का अध्यक्ष होता है। उसे सहायता करने के लिए अन्य मन्त्री होते है। सक्षेप मे, मन्त्रिमण्डल राष्ट्र की सर्वोच्च कायपालिका है, जो ससद द्वारा स्वीकृत नीति तथा विभिन्न कानूनो के अनुसार सघ के सम्पूण प्रशासन पर नियन्त्रण रखती है।

मन्त्रिमण्डल की समितियाँ—जैसा कि अनेक पाठकों को ज्ञात है सघीय मन्त्रिमण्डल अपने कार्यों को अधिक अच्छे ढग से सचालित करने के हेतु समितिया का प्रयोग करता है। इन समितियों के सदस्या का केवल मन्त्रि परिषद् के सदस्यों म से ही चुना जाता है। इनका सम्बन्ध उच्च नीति सम्बन्धी प्रश्नो के निर्धारण से होता है। इस प्रकार की समितियाँ आर्थिक, ससदीय व कानूनी, पुनसस्थापन, भारी उद्योग, प्रतिरक्षा, विदेश सम्बन्ध व उच्च नियुक्तिया आदि मामलो के क्षेत्र मे पहले से ही थी। इनके अतिरिक्त तीसरे आम चुनावो के उपरान्त इन तीन उच्च शक्ति प्राप्त समितियो का निर्माण प्रधानमन्त्री ने किया—(1) वैज्ञानिक मामलों स सम्बन्धित समिति यह समिति भारत सरकार के वैज्ञानिक मामला के, जिनम विदेशा से टकनीकल सहय

सम्मिलित हैं, सम्ब ध मे नीति निर्धारित करेगी । यह विदेशी वैज्ञानिक सस्थाओ का सहयोग भी प्राप्त करेगी और देश मे स्थित वैज्ञानिक सस्थाओं के काय मे सम वय लायेगी । इस समिति के महत्त्व का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि जवाहरलाल नेहरु स्वय इसके सम्य रह । (2) मानव शक्ति समिति—यह समिति पचवर्षीय योजना की पूर्ति के हेतु टेक्नीकल तथा अ य प्रचार के कुशल काय करने वालो के अभाव को दूर करने सम्ब धी प्रश्ना पर विचार व निणय करेगी । (3) सूचना और प्रसारण विभाग के राष्ट्रीय महत्त्व को ध्यान म रखकर भी एक समिति बनायी गयी है । पर तु समितिया मे सबसे अधिक महत्त्व आर्थिक मामला से सम्बंधित समिति का है, जिसमे राष्ट्रीय महत्त्व के सभी मामलों पर विचार किया जाता है । ये समितियाँ अपने देश मे आने वाले सभी महत्वपूण मामलो पर विचार करती हैं, कि तु उन पर अ तिम निणय म त्रिमण्डल के ही होते हैं ।

म त्रिमण्डल का सचिवालय—म त्रिमण्डल का अपना पृथक सचिवालय है । ब्रिटिश म त्रिमण्डल के सचिवालय की भाति यह अग्रलिखित काय करता है—(1) प्रधानमन्त्री के निदेशानुसार म त्रिमण्डल की बैठको के लिए काय सूची (agenda) तैयार करना, (2) म त्रिमण्डल की कायवाहियो के लिए आवश्यक स्मति पत्रो व अ य आलेखो को म त्रियो मे घुमाना, (3) म त्रि मण्डल और उसकी समितियो की बैठका के आहूत करने की सूचना देना, (4) म त्रिमण्डल और उसकी समितिया के निणयो का रिकाड रखना और उ हें सम्ब धित अधिकारियो म घुमाना तथा समितियो की रिपोट तैयार करना, और (5) म त्रिमण्डल के आदेशा के अधीन म त्रिमण्डल के पत्रो और निणयो का रिकाड रखना ।

5 जापान मे कायपालिका

सम्राट पूवगामी सविधान मे सम्राट का स्थान—सम्राट साम्राज्य का अध्यक्ष था, जिसमे प्रभुता के सभी अधिकार के द्रीभूत थे, किन्तु जिनका वह सविधान के अनुसार प्रयोग करता था । आइटो के अनुसार राज्य की सभी विधायी व कायपालिका शक्तियाँ उसके हाथो म केन्द्रीभूत थी । देश के राजनीतिक जीवन के सभी सूत्र उसके निय त्रण मे इस प्रकार थे जसे कि शरीर के सभी अगो पर मस्तिष्क का निय त्रण रहता है । विधायी शक्तिया पर अ तिम निय त्रण सम्राट का था और डायट का क्त्तव्य तो सम्राट को परामर्श व सहमति देना था । कानूनी दृष्टि से प्रभुता सम्राट मे निहित थी, परन्तु किटसावा के मतानुसार यथाथ मे सम्राट स्वेच्छाचारी शासक न था अर्थात् वह शासन का सांविधानिक अध्यक्ष था । एक अ य लेखक के अनुसार सम्राट जापान का राजा था, शासक नही जैसा कि ब्रिटेन म है । यनागा के अनुसार यद्यपि 1889 के सविधान के अ तगत सम्राट को पूण शक्ति प्राप्त थी, उसने उसका अपने पहल से कभी भी प्रयोग नहीं किया । उसने सदा ही म त्रियो के परामर्श से काय किया । अतएव शासन की भूला के लिए म त्री ही उत्तरदायी थे । यह कहा जा सकता था कि जापान का सम्राट ब्रिटिश राजा से भी अधिक राज करता था, किन्तु शासक नही था ।[1]

किटसावा यह भी कहता है कि जापान की परम्पराओ के अनुसार सम्राट की शासन में नैतिक शक्ति ब्रिटिश राजा से कही अधिक थी, परन्तु शासन केबिनट करती थी और केबिनेट का अध्यक्ष प्रधानम त्री हाता था । 1889 के सविधान के अ तगत सम्राट की शक्तियाँ पाँच प्रकार की

[1] While the Constitution of 1889 gave him absolute power, not once did he exercise that power on his own initiative Even more than the British monarch it can be said that the Japanese Emperor *reigns* but does not *rule* —Yanaga C. *Japanese People and Politics* p 137

थी—(1) सम्राट के परिवार के सम्बन्ध मे, (2) स्थल व जल सेनाओ के कमान म, (3) उपाधियाँ देने की, (4) धार्मिक तथा अन्य समारोहो (rituals) के सम्बन्ध मे, और (5) शासन के सम्बन्ध मे। अन्तिम समूह म उसकी मुख्य शक्तियाँ इस प्रकार थी—सम्राट ही डायट का सत्र आहूत करता था, उसका उद्घाटन करता था और प्रतिनिधि सदन को विघटित भी करता था। उसे विधि निर्माण मे पहल करने और विधेयको पर स्वीकृति देने की शक्तियाँ प्राप्त थी। वह अध्यादेश जारी कर सकता था। कार्यपालिका क्षेत्र म वह शासन के सगठन व शाखाओ का निर्धारण करता था, अधिकारियो के वेतन नियत करता था और अनेक उच्च अधिकारियो की नियुक्ति भी करता था सेना के सगठन, युद्ध की घोषणा करने, शान्ति सन्धि तथा अन्य प्रकार की सन्धियाँ करने की शक्तियाँ भी सम्राट को प्राप्त थी। सभी न्यायालय सम्राट के नाम म न्याय करते थे। शासन के क्षेत्र मे वर्णित शक्तियो के अतिरिक्त जापान के सामाजिक जीवन मे सम्राट का स्थान बडा प्रभाव शाली और सर्वोच्च था। वास्तव मे समाज और राजनीति मे बडा गहरा सम्बन्ध था और उसमे सम्राट का स्थान कितना महत्त्वपूर्ण था यह इन दो बातो स पता चलता है। प्रथम, पल हार्बर की घटना से पूर्व जापानी स्कूलो म पढाये जाने वाले आचारशास्त्र (Ethics) का आधार सम्राट की सत्ता और उसके प्रति निष्ठा थी, दूसरे, उस समय तक प्रत्येक शिक्षालय के भवन मे सम्राट का चित्र केन्द्रीय स्थान पर लगा होता था।

वर्तमान सविधान के अन्तर्गत सम्राट का स्थान—विश्वयुद्ध के पूर्व वाले सविधान के अन्तर्गत सम्राट 'पवित्र और अनतिक्रमणीय' था और वह समस्त कानूनी सत्ता एव राजनीतिक शक्ति का स्रोत था, परन्तु अब उसकी स्थिति पूर्णतया बदल गयी है। वर्तमान सविधान के अनुसार सम्राट 'राज्य और जनता की एकता का चिन्ह है। उसका स्थान जनता की इच्छा पर आधारित है और प्रभुता जनता म निहित है।'[1] अब उसको परामर्श देने वाली पूर्वगामी सस्थाओ—ज्युशिन और प्रिवी कौंसिल—का अन्त हो गया है। सावैधानिक दृष्टि से अब सम्राट का शासन मे भाग ब्रिटिश राजा के समान रह गया है। कुलीनतन्त्री शासन का अन्त हो गया है और सम्राट को प्रभावित करने वाले अन्य आन्तरिक अगो का कानून द्वारा अन्त कर दिया गया है।[2] धारा 3 के अनुसार सम्राट के राज्य सम्बन्धी सभी कार्यों के लिए केबिनट का परामर्श और स्वीकृति आवश्यक है और उनके लिए केबिनेट ही उत्तरदायी है। धारा 4 मे कहा गया है कि 'सम्राट राज्य के मामलो म केवल व काय करेगा जिनकी सविधान मे व्यवस्था की गई है और शासन के सम्बन्ध मे उसकी कोई शक्तियाँ न होगी।' धारा 7 मे राज्य के मामलो से सम्बन्धित निम्नलिखित कार्य दिये गये है, जिन्हे सम्राट जनता के नाम मे करता है—

सविधान के सशोधनो, कानूनो, केबिनेट के आदेशो और सन्धियो की उद्घोषणा करना, डायट का सत्र बुलाना, प्रतिनिधि सदन का विघटन, डायट के सदस्यो के आम निर्वाचन की उद्घोषणा करना, राज्य के मन्त्रियो और कानून द्वारा व्यवस्थित अन्य अधिकारियो की नियुक्ति तथा पदच्युति को प्रमाणित करना (attestation), राजदूतो व मन्त्रियो की शक्तियो व प्रमाण पत्रो को प्रमाणित करना, साधारण और विशेष क्षमादान दण्ड को कम करने, प्राण दण्ड को कुछ समय के लिए स्थगित करने और अधिकारो को फिर से प्रदान करने को प्रमाणित करना, सम्मान

---

[1] *Art I* says The Emperor shall be the symbol of the State and of the unity of the people deriving his position from the will of the people with whom resides sovereign power

[2] Constitutionally the post War Emperor assumed a role similar to that of the British Crown The aristocracy was leveled The other powerful unseen of influence around the Throne were legally abolished —Linebarger et al *Far F ment and Politics* p 0

सूचक उपाधिया देना, पुष्टीकरण आलेखा और कानूनो द्वारा व्यवस्थित अन्य कूटनीतिक मामलो को प्रमाणित करना, विदेशी राजदूतो और मन्त्रियो का स्वागत करना तथा शिष्टाचारिक कार्यों को करना।

उपर्युक्त कार्यों की सूची पर ध्यानपूर्वक विचार करने से यह स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि सम्राट के कार्य प्रधानत औपचारिक है, जिन्हे वह राज्य के अध्यक्ष रूप मे करता है। धारा 3 मे स्पष्ट कहा गया है कि उसके कार्य राज्य विषयक मामलो से सम्बन्धित हैं और उन्हे भी वह केबिनेट के परामर्श व सहमति से ही कर सकता है। शासन के सम्बन्ध मे अब उसे कोई शक्ति अथवा कार्य करने का अधिकार प्राप्त नही है। उसकी शक्ति, व्यवहार मे, नही के बराबर है। यनागा के मतानुसार 'जबकि ब्रिटिश राजा (अथवा रानी) को यह अधिकार प्राप्त है कि प्रधान मन्त्री उससे मन्त्रणा ले, वह कुछ कार्य करने के लिए मन्त्रियो को उत्साहित करे तथा कुछ कार्य न करने की चेतावनी दे, जापान के सम्राट को ऐसा कोई अधिकार प्राप्त नही है।[1] जापान में अब स्थिति यह है कि सम्राट किसी दलीय नेता को केबिनेट निर्माण के लिए आमन्त्रित नही करता, वहाँ तो प्रधानमन्त्री की नियुक्ति डायट द्वारा की जाती है और सम्राट तो केवल उसकी नियुक्ति की रस्म पूर्ण करता है। ऐसा माना जाता है कि ब्रिटिश ताज को कॉमन सभा के विघटन के लिए दिए गये परामर्श को अस्वीकार करने का परमाधिकार (prerogative) प्राप्त है, परन्तु जापान का सम्राट डायट का विघटन करने से मना नही कर सकता। सम्राट राजनीतिक प्रश्नो पर सार्वजनिक रूप से अपना मत प्रकट नही कर सकता और न ही महत्त्वपूर्ण निर्णयो के करने में अपने प्रभाव का प्रयोग कर सकता है।

परन्तु सम्राट को शासन की गतिविधियो के बारे मे केबिनेट के मन्त्रियो से सूचना पाने की व्यवस्था है। यद्यपि शासन के क्षेत्र मे सम्राट का प्रभाव महत्त्वहीन है, फिर भी उसका नैतिक प्रभाव काफी है और वह केवल नाममात्र का ध्वजधारी अध्यक्ष ही नही है। जबकि पुराने संविधान मे सम्राट के घराने से सम्बन्धित मामलो तथा वित्त पर पहले शासन का कोई नियन्त्रण न था, अब वे डायट के अधिकार क्षेत्र मे आ गये है। सम्राट के घराने की वित्तीय आवश्यकताओ की पूर्ति डायट की स्वीकृति के अधीन विनियोग कानून द्वारा होती है। धारा 8 के अनुसार सम्राट के घराने को डायट की स्वीकृति के बिना कोई सम्पत्ति न दी जा सकती है और न उससे ली जा सकती है। अब जापान की शासन-पद्धति मे सम्राट की भूमिका चिन्ह जैसी है, उसके हाथ मे कोई ऐसे विशिष्ट राजनीतिक अथवा कार्यकारी कार्य नही हैं, जिनका महत्त्व कर्मकाण्ड या समारोह से अधिक हो। परन्तु वार्ड के मतानुसार इससे यह निष्कर्ष निकालना गम्भीर भूल होगी कि जापान की राजनीतिक पद्धति मे उसकी भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण नही है। किसी भी राष्ट्र को शक्तिशाली, वफादारी उत्पन्न करने वाले चिन्हो की आवश्यकता होती है जिसके बारे मे राष्ट्रीय एकता को ढाला जाता है। एशिया और अफ्रीका के अनेक राज्यो के सामने ऐसे राष्ट्रीय और भावना उत्पन्न करने वाले बिन्दुओ का अभाव सबसे बडी समस्या है। जापान के लिए, ऐसे केन्द्र बिन्दु की व्यवस्था साम्राज्यीय परिवार द्वारा की गई है। यह जनता और उनकी संस्कृति की एकता, दो हजार वर्ष के जापानीपन की प्रतीक है।[2]

यनागा के मतानुसार सम्राट की नामनिक शक्तियो के लोप से उसकी प्रतिष्ठा मे कोई

---

[1] Under the new constitution then the Emperor quite clearly *reigns* but does not *rule* —Ike N *Japanese Politics* p 67

[2] A nation needs powerful loyalty begetting symbols about which to forget its national unity For Japan such a focus is provided preminently by the Imperial Family It symbolized two thousand years of *Japaneseness* of the unity of the peoples and their culture —Macridis and Ward *Modern Political Systems—Asia* p 91

कमी नही हुई है। जहाँ तक सम्राट के प्रति जनता के रुख का सम्बन्ध है आज भी कम से कम चिन्ह रूप मे सम्राट ही राज्य है। इस सम्बन्ध मे एक दूसरे लेखक नोबुटाका आइक का मत उल्लेखनीय है—सम्राट की सांविधानिक स्थिति मे परिवर्तन से दो महत्त्वपूर्ण परिणाम निकले हैं। प्रथम, सम्राट की संस्था के बारे मे बहुत सी बातो को पहले व्यक्त करना बुरा समझा जाता था, अब उसके व्यक्तित्व और उस संस्था के विषय मे वाद विवाद करना, यहाँ तक कि आलोचनात्मक ढग से ऐसा करना सम्भव हो गया है। ऐसा करने पर जनता निन्दा नही करती और ऐसा करने वालो को बन्दी नही बनाया जाता। दूसरे, सम्राट को मानव बनाने के प्रयत्न हुए हैं। पहले उसे दैवी समझा जाता था और उसका स्थान इतना ऊँचा था कि उसके प्रजाजन, जब कभी वह कही से निकलता था, अपना सिर झुका लेते थे और उसके शरीर की ओर देखते तक नही थे। युद्ध के बाद सम्राट ने सार्वजनिक स्थानो पर आना जाना शुरू कर दिया और वह फार्मों, फक्ट्रियो, स्कूलो, सिनेमाघरो तथा खेल के मैदानो मे जाने लगा है। समाचार पत्र और पत्रिकाएँ अब उसके जीवन और रहन सहन के बारे मे कहानियाँ और वर्णन प्रकाशित करने लगे हैं।[1]

अन्त मे, एक अन्य लेखक के अनुसार नये सामाजिक जीवन की एक विशेष बात से सम्राट की शक्ति को बडा खतरा हो सकता है। वह बात यह है कि स्त्रियो को कानूनी शक्ति मिल गयी है, जो स्त्री वर्ग के पुराने पद मे इतना महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है जितना कि संयुक्त राज्य अमरीका के 1863 की दास प्रथा के अन्त की घोषणा थी। अब तक जापान का सम्राट सामाजिक जीवन की पिरामिड की शक्तिशाली चोटी का पत्थर था। उसके पद के लौकिक बनाये जाने से तो केवल उस पत्थर की चमक मे अन्तर पडा, परन्तु स्त्रियो की कानूनी मुक्ति ने तो कदाचित् उस पिरामिड के धरातल को ही हिला दिया है।

वर्तमान संविधान के अन्तर्गत केबिनेट

वर्तमान केबिनेट का स्वरूप—संविधान के पाँचवें अध्याय मे केबिनेट सम्बन्धी उपबन्ध दिये गये हैं। धारा 66 मे स्पष्ट रूप से बताया गया है कि केबिनेट का अध्यक्ष प्रधानमन्त्री होगा और उसके साथ कानून द्वारा की गई व्यवस्था के अनुसार राज्य के अन्य मन्त्री होगे। कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग मे केबिनेट सामूहिक रूप से डायट के प्रति उत्तरदायी होगी। धारा 68 मे कहा गया है कि यदि प्रतिनिधि सदन अविश्वास का प्रस्ताव पास करे अथवा विश्वास के प्रस्ताव को अस्वीकृत करे तो सम्पूर्ण केबिनेट को त्याग पत्र देना पडेगा, यदि दस दिन के भीतर प्रतिनिधि सदन का विघटन न किया जाये। केबिनेट की बनावट और उसका डायट के निम्न सदन के प्रति सामूहिक उत्तरदायित्व तथा अविश्वास प्रस्ताव की दशा मे उसका त्याग पत्र देना अथवा प्रतिनिधि सदन का विघटन आदि बातें स्पष्ट रूप से यह सकेत करती हैं कि अब जापान मे केबिनेट वास्तव मे केबिनेट पद्धति के अनुसार है। यनागा कहता है—1947 के संविधान के अन्तर्गत जापान की सरकार कायरूप मे चाहे भावना मे उतनी न सही, ब्रिटिश सरकार से बहुत मिलती है। यह स्पष्ट है कि केबिनेट प्रशासन तथा विधि निर्माण के शासन का केन्द्रीय निदेशक, साधन अथवा अंग है। डायट द्वारा निर्धारित नीति के अनुसार यह राष्ट्रीय कार्यपालिका पर सर्वोच्च नियन्त्रण रखती है। कम से कम सांविधानिक रचना मे जापान मे उत्तरदायी शासन की व्यवस्था हुई है।[2]

केबिनेट का आकार और उसकी रचना—संविधान मे केबिनेट के आकार—मन्त्रियो की

[1] As a result of the shift in the Emperor s constitutional position at least two important changes have occured First a considered portion of the taboos which shrouded the imperial institution have been removed Second concerted attempts have been made to humanize the Emperor —Kahin G M (ed) *Major Governments of Asia* p 187

[2] Yanaga C *op cit* p 146

सख्या और श्रेणियो—के बारे मे विस्तारपूर्वक नही दिया गया है। उसम तो केवल यह कहा गया है कि केबिनेट का अध्यक्ष प्रधानमन्त्री होगा और उसमे कानून द्वारा की गई व्यवस्था के अनुसार राज्य के मन्त्री होगे। कई वर्षों से केबिनेट मे प्रधानमन्त्री के अतिरिक्त अन्य सोलह मन्त्री रहे हैं। उनमे ग्यारह मन्त्री विभिन्न मन्त्रालयो के अध्यक्ष है और उन्ह मन्त्रालयो के नाम से जाना जाता है। पाच मन्त्री बिना विभागा के है, उन्हें साधारणतया राज्य का मन्त्री कहा जाता है। इन पाँच मन्त्रियो मे से एक उप प्रीमियर होता है। सविधान की धारा 66 मे कहा गया है कि प्रधानमन्त्री और अन्य सभी मन्त्री असैनिक होने आवश्यक हैं। 1957 मे ग्यारह केबिनेट मन्त्रिया के अधीन ये मन्त्रालय थे—वैदेशिक मामले, न्याय, वित्त, शिक्षा, जन कल्याण, कृषि और वन, वाणिज्य और उद्योग, परिवहन, डाक सचार, श्रम और निर्माण, मार्च 1965 मे केबिनेट की रचना इस प्रकार थी—प्रधानमन्त्री, अग्रलिखित विभागो के केबिनेट मन्त्री—न्याय, वैदेशिक मामले, वित्त, शिक्षा व अणु शक्ति आदि, स्वास्थ्य व कल्याण, कृषि और वन, व्यापार और उद्योग, परिवहन, डाक सेवाएँ, श्रम, निर्माण, गृह-मामले, तथा राज्य मन्त्री—प्रशासनिक प्रबन्ध, ओलम्पिक खेल, प्रतिरक्षा अभिकरण, आर्थिक नियोजन, मुख्य केबिनेट सचिव।

प्रधानमन्त्री का नाम, डायट के सदस्यो मे से, डायट के प्रस्ताव द्वारा तय किया जाता है। यह काय अन्य सभी कार्यों से पूर्व किया जाता है। यदि इस प्रश्न पर डायट के दोनो सदनो के बीच मतभेद रहे और दोनो सदनो की सयुक्त समिति के प्रयत्नो मे भी सहमति प्राप्त न हो सके, अथवा प्रतिनिधि सदन द्वारा नाम तय कर लेने पर भी विश्रामकाल को छोडकर दस दिन के भीतर कौसिलर सदन नाम तय करने मे विफल रहे, तो प्रतिनिधि सदन का निणय ही डायट का निर्णय समझा जायेगा। डायट द्वारा प्रधानमन्त्री का नाम तय हो जाने पर उसकी औपचारिक नियुक्ति सम्राट द्वारा की जाती है। प्रधानमन्त्री अन्य मन्त्रियो को नियुक्त करता है। धारा 68 के अनुसार यह आवश्यक है कि चुने गये मन्त्रियो की बहुसख्या डायट की सदस्य हो। व्यवहार म, अब मन्त्रिमण्डल के सभी सदस्य डायट के सदस्यो मे से चुने जाते हैं। 1953 मे योशिदा द्वारा निर्मित पाँचवी सरकार म तेरह सदस्य प्रतिनिधि सदन और चार कौसिलर सदन से लिए गय थे। प्रधान मन्त्री को, जब वह चाहे, मन्त्रियो को उनके पद से हटाने का भी अधिकार है।

मन्त्रिमण्डल के काय—धारा 65 म कहा गया है कि कायपालिका शक्ति मन्त्रिमण्डल म निहित है। जापान का मन्त्रिमण्डल, ब्रिटेन मे मन्त्रिमण्डल की तरह, सम्राट के परामर्शदाताओं का निकाय नही है। इसे सविधान से वास्तविक कायपालिका शक्ति प्राप्त है; व्यवहार म, ब्रिटेन मे भी ऐसा ही है। मन्त्रिमण्डल के कायपालिका कार्यों म सवप्रमुख सभी महत्वपूर्ण राजनीतिक निणय करना है। अन्य देशो के मन्त्रिमण्डलो की तरह यह भी नीति के निर्धारण म पहल करती है। नीति-सम्बन्धी सभी महत्वपूर्ण निणय मन्त्रिमण्डल मे होते हैं। मन्त्रिमण्डल के निणयो का समथन सभी मन्त्रियो को करना होता है, क्योकि मन्त्रिमण्डल के प्रत्येक निणय के लिए सभी मन्त्री उत्तरदायी होते हैं। यदि कोई मन्त्री किसी निणय को स्वीकार न करे तो उसे त्याग पत्र देना पडेगा। नीति निर्धारण करने के साथ-साथ मन्त्रिमण्डल को प्राय सभी महत्वपूर्ण विषयो को आरम्भ और उनकी विस्तार की बातो पर निणय भी करना पडता है।

सविधान की धारा 73 म कहा गया है कि अन्य साधारण प्रशासनिक कार्यों के अतिरिक्त मन्त्रिमण्डल को ये काय करने होग—(1) कानूनों को वफादारी क साथ प्रशासित करना, राज्य के मामलो का सचालन करना। (2) वैदेशिक मामलो का प्रबन्ध करना। (3) सधियाँ करना, जिन पर यह पहले या परिस्थितियो के अनुसार बाद म डायट की स्वीकृति प्राप्त करेगी। (4) कानून द्वारा स्थापित मानको के अनुसार नागरिक सेवाओं का प्रशासन करना। (5) बजट तैयार करना और उसे डायट के सम्मुख पेश करना। (6) सविधान और कानूनो का कायान्वन देने क हेतु

मन्त्रिमण्डल आदेश निर्मित करना। (7) साधारण तथा विशेष क्षमादान, दण्ड को कम करना, मृत्यु दण्ड को कुछ समय के लिए स्थगित करना तथा अधिकारों को फिर से प्रदान करना, आदि प्रश्नों पर निर्णय करना।

उपर्युक्त के अतिरिक्त, धारा 72 में कहा गया है कि मन्त्रिमण्डल के प्रतिनिधि रूप में प्रधान मन्त्री डायट के सामने विधेयक, साधारण राष्ट्रीय मामलों और वैदेशिक मामलों के बारे में रिपोर्ट पेश करेगा और विभिन्न प्रशासनिक शाखाओं के ऊपर नियन्त्रण देख रेख के अधिकारों का प्रयोग करेगा। व्यवहार में मन्त्रिमण्डल का मुख्य कार्य विधायी है, क्योंकि प्राय उन सभी विधेयकों को जो डायट में पास होते है, मन्त्री ही प्रस्तुत करते है। मन्त्रिमण्डल के इन कार्यों से स्पष्ट है कि वर्तमान मन्त्रिमण्डल पुराने संविधान के अन्तर्गत मन्त्रिमण्डल से बहुत भिन्न है अर्थात् अब मन्त्रिमण्डल वास्तव मे मन्त्रिमण्डल है। पहले विधान के अन्तर्गत मन्त्रिमण्डल कुछ सीमा तक डायट म स्वतन्त्र रहकर भी कार्य कर सकता था, परन्तु वर्तमान मन्त्रिमण्डल का डायट से निकट सम्बन्ध स्थापित हो गया है। इस सम्बन्ध मे एक बात और उल्लेखनीय है कि वर्तमान संविधान के अन्तर्गत पूर्वकालीन कार्यपालिका के अन्य अंगों का, जो मन्त्रिमण्डल की शक्तियों पर विभिन्न प्रकार से रोक लगाते थे, अन्त हो गया है। अब सम्राट को परामर्श देने के लिए जेनरो, प्रिवी कौंसिल अथवा लार्ड प्रिवी आदि नही रह हैं, अतएव अब मन्त्रिमण्डल और प्रधानमन्त्री की स्थिति पहले की अपेक्षा अधिक स्पष्ट और सुदृढ बन गई है। युद्ध से पूर्व मन्त्रिमण्डल सम्राट की इच्छा के निर्माताओं और सेना आदि के प्रति सदैव ही उत्तरदायी रहती थी और डायट के प्रति कभी-कभी। अब इस स्थिति मे महान् परिवर्तन हो गया है। जिंक के अनुसार जापान के शासन मे मन्त्रिमण्डल की भूमिका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।[1]

मन्त्रिमण्डल का संगठन और उसकी कार्य प्रणाली—सरकार का केन्द्रीय कार्यालय प्रधानमन्त्री का कार्यालय है। उसका मुख्य संचालक मन्त्रिमण्डल सचिवालय का निदेशक है। मन्त्रिमण्डल सचिवालय ही मन्त्रिमण्डल के साधारण मामलों का प्रबन्ध करता है। यह मन्त्रिमण्डल की बैठकों के लिए कार्य सूची तैयार करता है, यह कार्यालय अन्य आलेख तैयार करता है और अन्य मामलों का प्रबन्ध करता है। मन्त्रिमण्डल सचिवालय के निदेशक के नीचे दो उप निदेशक होते हैं। सचिवालय के अतिरिक्त विधि निर्माण ब्यूरो भी है। उसका निदेशक प्रधानमन्त्री व मन्त्रिमण्डल को विधि निर्माण के सम्बन्ध मे कानूनी परामर्श देता है। प्रधानमन्त्री के कार्यालय का कार्य विभिन्न ब्यूरो द्वारा किया जाता है, जिसमे से मुख्य ये है—विधि निर्माण, सांख्यिकी (Statistics), पेंशन आदि। इसके अतिरिक्त बहुत-से बोर्ड और कमीशन उसके सहायक अंग है, जो नियोजन व नीति निर्धारण आदि के बारे म परामर्श देते है।

मन्त्रिमण्डल की बैठकों मे नीति-सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर निर्णय होते है। साधारणतया मन्त्रिमण्डल की सप्ताह मे दो बार मंगलवार और शुक्रवार को बैठकें होती है। प्रधानमन्त्री बैठक का सभापतित्व करता है, उसकी अनुपस्थिति मे उप प्रधानमन्त्री सभापति का आसन ग्रहण करता है। मन्त्रिमण्डल की बैठकों के लिए कोई गणपूर्ति (quorum) नियत नही है। यदि मन्त्रिमण्डल के निर्णय बहुमत से होते है, तो भी जो सदस्य उनसे सम्बन्धित बैठक मे उपस्थित नहीं रहते उनसे उन पर बाद म हस्ताक्षर कराये जा सकते है। मन्त्रिमण्डल की बैठकों मे सभी वाद विवाद व कार्यवाही गुप्त रहते हैं और उन्हें प्रकाशित नही किया जाता। मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को कार्यवाही प्रकट न करने की चेतावनी रहती है। यनागा के अनुसार मन्त्रिमण्डल के कार्य

[1] All in all the Cabinet plays a most important role in the new government of Japan —Zink H *Modern Governments* p 733

दो प्रकार से होते हैं—मन्त्रिमण्डल निर्णय और आपसी समझौते (Cabinet dicisions and Cabinet understandings)। संविधान व कानूनों के अनुसार आवश्यक मामलों तथा अन्य महत्वपूर्ण प्रश्नो पर मन्त्रिमण्डल निर्णय करता है। अन्य मामलों के सम्बन्ध में मन्त्रिमण्डल के सदस्यों में आपसी समझौते होते हैं। मन्त्रियों के अधीन उप मन्त्री भी होते हैं, जो स्थायी सरकारी अधिकारी होते हैं। इन उप मन्त्रियों की भी बैठकें होती हैं, जिनका महत्व बढ़ रहा है। बहुत से साधारण और कम महत्व के मामलों पर इनकी बैठकों में ही निर्णय कर लिए जाते हैं। ये मन्त्रिमण्डल के निर्णयों को कार्य रूप देने सम्बन्धी विस्तार की बातों तथा प्रशासनिक प्रक्रिया पर विचार करते हैं। परन्तु उप मन्त्रियों की बैठकों में हुए निर्णयों के लागू होने से पूर्व उन पर मन्त्रिमण्डल की स्वीकृति आवश्यक है। ब्रिटेन व भारत की भाँति मन्त्रिमण्डल समितियों का प्रयोग करता है। इस समय दो प्रमुख समितियाँ ये हैं—मन्त्रीय परिषद् और राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद्। इनके सहायक अंग मन्त्रिमण्डल सचिवालय और लेजिस्लेटिव ब्यूरो हैं।

प्रधानमन्त्री—प्रधानमन्त्री का नाम डायट के प्रस्ताव द्वारा तय होता है और उसकी नियुक्ति औपचारिक रूप से सम्राट द्वारा होती है। प्रधानमन्त्री के लिए कुछ कानूनी तथा अन्य योग्यताएं आवश्यक हैं। संविधान द्वारा प्रधानमन्त्री के लिए दो योग्यताएँ विहित की गई हैं, जो इस प्रकार हैं—पहले, प्रधानमन्त्री डायट का सदस्य होना चाहिए। दूसरे, वह असैनिक होना चाहिए। अन्य योग्यताओं में सबसे महत्वपूर्ण यह है कि वह डायट के निम्न सदन में बहुमत दल अथवा मिले जुले दलों का नेता ही हो सकता है, क्योंकि उसका नाम डायट तय करती है और उसके द्वारा निर्मित मन्त्रिमण्डल, डायट (व्यवहार में प्रतिनिधि सदन) के प्रति उत्तरदायी होनी चाहिए। प्रतिनिधि सदन में अविश्वास का प्रस्ताव पास होने पर या तो मन्त्रिमण्डल को त्याग-पत्र देना पड़ता है या प्रतिनिधि सदन का विघटन होता है। प्रधानमन्त्री में राजनीतिक नेता के गुण, राजनीतिक सूझ बूझ, प्रभावशाली व्यक्तित्व और लोकप्रियता आदि आवश्यक गुण भी प्रचुर मात्रा में होने चाहिएँ, जिनके अभाव में प्रधानमन्त्री का सफल होना कठिन होगा।

प्रधानमन्त्री की शक्तियों का प्रथम स्रोत संविधान है जिसके अनुसार वह मन्त्रिमण्डल का अध्यक्ष होता है। उसकी नियुक्ति डायट के प्रस्ताव द्वारा होती है। वही अन्य मन्त्रियों को नियुक्त करता है। वही मन्त्रियों में से एक को उप प्रधानमन्त्री नियुक्त करता है। उसे यह शक्ति भी प्राप्त है कि वह मन्त्रिमण्डल में जब चाहे उलट-फेर अथवा परिवर्तन (reshuffle) कर सके। यदि वह स्वयं त्याग-पत्र दे दे तो सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल अपदस्थ हो जाता है। प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल की बैठकों का सभापति रहता है। धारा 72 के अनुसार प्रधानमन्त्री, मन्त्रिमण्डल के प्रतिनिधि के रूप में डायट के सम्मुख विधेयक और आन्तरिक मामलों तथा वैदेशिक सम्बन्धों के विषयों में रिपोर्ट रखता है। वह शासन की विभिन्न शाखाओं पर नियन्त्रण व देख रेख के अधिकारों का भी प्रयोग करता है। धारा 75 के अनुसार, राज्य के मन्त्रियों के विरुद्ध बिना प्रधानमन्त्री की सहमति के कोई कानूनी कार्यवाही नहीं की जा सकती। प्रधानमन्त्री को वर्तमान संविधान के लागू होने से पूर्व इनमें से बहुत सी शक्तियाँ प्राप्त न थी।

प्रधानमन्त्री की शक्ति का दूसरा स्रोत डायट है। वह डायट के बहुसंख्यक दल का नेता होता है। बहुमत के समर्थन से प्रधानमन्त्री के नेतृत्व में मन्त्रिमण्डल शासन की आन्तरिक व बाह्य नीति निर्धारित करता है। डायट में उनका स्थान सबसे महत्वपूर्ण नेता के समान है। वह साधारणतया प्रतिनिधि सदन का ही सदस्य होता है, अतएव वह लोकप्रिय सदन का नेता होता है। वही बहुसंख्यक दल का नेता होता है। बहुसंख्यक दल का नेता होने के नाते दल और दलीय संगठन उसका समर्थन करते हैं। वह मन्त्रिमण्डल व दल का सबसे महत्वपूर्ण प्रवक्ता (spokes man) होता है। प्रधानमन्त्री को बहुत बड़े जनमत का समर्थन भी मिलना स्वाभाविक है। जब

तक वह प्रधानमन्त्री रहता है वह सभी महत्त्वपूण मामला म देश का नतृत्व करता है। राजनीतिक नता के रूप म उसके कार्यों का बडा महत्त्व है। उसे मन्त्रियो के बीच सामजस्य (harmony) रखने का महत्त्वपूण काय करना होता है, जिससे कि सभी मन्त्री एक टीम की भाति काय कर सकें। यदि मन्त्रिमण्डल के सभी मन्त्री उसी दल के होते हैं तो उसका यह काय कुछ सुगम रहता है। मिले जुले मन्त्रिमण्डल मे विभिन्न दलो से लिये गये मन्त्रिया के बीच सामजस्य बनाये रखना कठिन काय है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वतमान सविधान म प्रधानमन्त्री के महत्त्वपूण स्थान को पूरी तरह से मान्यता प्राप्त हुई है। प्रधानमन्त्री हान के नाते वह शासन का अध्यक्ष होता है और कायपालिका का वास्तविक प्रमुख भी। उसे सम्पूण प्रशासन पर नियन्त्रण व देख-रेख के अधिकार प्राप्त हैं और प्रधानमन्त्री का कार्यालय अथवा मन्त्रिमण्डल सचिवालय भी उसी के अधीन होता है। अतएव प्रधानमन्त्री मुख्य प्रशासक होता है। ये दोनो तो उसकी साविधानिक अथवा कानूनी शक्तियो के पक्ष हैं। इनके अतिरिक्त देश का सबसे शक्तिशाली राजनीतिक नेता होने के नाते उसकी स्थिति ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री जैसी है। डायट मे बहुमत दल और जनता का निर्वाचित प्रतिनिधि होने के नाते उसे राष्ट्र का सर्वोच्च राजनीतिक नेतृत्व प्राप्त होता है, जिसके लिए वह प्रत्यक्ष रूप मे डायट के प्रति और अप्रत्यक्ष रूप मे सम्पूण राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी होता है। अब जापान मे प्रधानमन्त्री का स्थान बहुत सीमा तक ब्रिटिश प्रधानमन्त्री जैसा हो गया है।

6 कनाडा मे कार्यपालिका

ताज—ब्रिटिश ताज औपचारिक कायपालिका है अथवा हम उसे 'सम्मानित कायपालिका' कह सकते हैं। ताज के कनाडा के सम्बन्ध मे वे ही काय है जो कि रानी के ब्रिटेन के शासन के सम्बन्ध म हैं परन्तु उन कार्यों को कनाडा के शासन मे गवनर जनरल उत्तरदायी शासन के स्थापित सिद्धान्तो के अनुसार करता है। व्यवहार मे शासन के कायपालिका कृत्यो को केबिनेट करती है। राज्य के नामधारी अध्यक्ष के अतिरिक्त रानी राष्ट्रमण्डल की अध्यक्ष है और इस रूप म वह सदस्य राज्या के सघ का चिन्ह है। 1953 तक रानी की उपाधि सम्पूण राष्ट्रमण्डल मे एक समान थी। साविधानिक विकास ने उस उपाधि को परिवर्तित स्थिति के अनुकूल न पाया, अतएव दिसम्बर 1952 म राष्ट्रमण्डलीय देशो के प्रधानमन्त्रियो ने प्रत्येक देश के लिए उपाधि को अपनी पार्लियामट म स्वीकार कराया और उसे 29 मई 1953 की शाही घोषणा द्वारा स्थापित किया गया। कनाडा के सम्बन्ध मे रानी की उपाधि इस प्रकार है—'एलिजाबेथ द्वितीय, ईश्वर की अनुकम्पा से ग्रेट ब्रिटेन, कनाडा व अन्य राज्यो की रानी, राष्ट्रमण्डल की अध्यक्ष और धम की रक्षक।'

गवनर जनरल—ब्रिटिश नॉथ अमरीका कानून मे एक गवनर जनरल के लिए प्राविधान है जो रानी के नाम से शासन चलाता है। वह राज्य का अध्यक्ष है। वह अब ब्रिटिश शासन का प्रतिनिधित्व नही करता, वरन् वह तो रानी का वैयक्तिक प्रतिनिधि है। कनाडा के प्रधानमन्त्री के परामश से उसकी नियुक्ति रानी द्वारा की जाती है। परम्परा के अनुसार वह अपने पद पर पाँच वष तक रहता है। 1926 के साम्राज्यीय सम्मेलन के अनुसार कनाडा के शासन म उसका वही स्थान है जो कि रानी का ग्रेट ब्रिटेन के शासन मे है। जहा तक वह रानी का प्रतिनिधित्व करता है वह एकता और शासन की निरन्तरता का चिन्ह तथा कनाडा मे रानी का मूत रूप है। वास्तव म, कनाडा के शासन की सबसे महत्त्वपूण विशेषता कायपालिका का दोहरा स्वरूप है। रानी के प्रतिनिधि रूप मे गवनर जनरल राज्य का सरकारी अध्यक्ष है, किन्तु क्रियाशील तथा शक्तिशाली अध्यक्ष प्रधानमन्त्री है। शासन के प्राय सभी काय रानी अथवा गवनर-जनरल के नाम से किये जाते हैं जबकि तथ्य यह है कि सभी काय प्रधानमन्त्री तथा अन्य मन्त्री

है। सभी प्रकार की शान व प्रतिष्ठा एक कार्यपालिका को प्राप्त है जबकि दूसरी को समय समय पर जनता के विश्वास और विरोधी पक्ष की आलोचना से सन्तुष्ट रहना पड़ता है।

शक्तियाँ—गवर्नर-जनरल की शक्तियों और उसके कार्यों के सम्बन्ध में दो मुख्य विचार हैं। प्रथम, परमाधिकार सम्बन्धी सभी मामलों और ऐसे मामलों के क्षेत्र में, जिनका सम्बन्ध साम्राज्य हितों से हो, यद्यपि गवर्नर-जनरल को अपने मन्त्रियों के परामर्श मानना आवश्यक नहीं है। दूसरा, अन्य सभी मामलों में आशा की जाती है कि वह मन्त्रियों के परामर्श के अनुसार कार्य करेगा। उदाहरण के लिए, कनाडा की पार्लियामेंट प्रतिवर्ष एकत्रित होनी जरूरी है, उसकी बैठक का समय नियत करने में गवर्नर-जनरल को अपने मन्त्रियों के परामर्श पर चलना चाहिए। परन्तु चूंकि पार्लियामेंट का सत्रावसान और विघटन परमाधिकार शक्ति का प्रयोग है, गवर्नर जनरल उनके सम्बन्ध में मन्त्रियों का परामर्श मानने के लिए बाध्य नहीं है। गवर्नर जनरल की शक्तियों और उसके कार्यों का विवेचन निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

उसके प्रशासन सम्बन्धी कार्य साम्राज्यीय कानूनों, उपनिवेशों के कानूनों और लेटर्स पेटेन्ट व आदर्शों द्वारा विनियमित हैं। साराश में कहा जा सकता है कि वह रानी के नाम में और उसकी ओर से सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करता है। ब्रिटिश नॉर्थ अमरीका कानून के सैक्शन ग्यारह के अनुसार गवर्नर जनरल प्रिवी कौंसिल के सदस्यों को छांटता है और वे उसे कनाडा के शासन में सहायता व परामर्श देते हैं, इसी परिषद् के सदस्यों से मिलकर मन्त्रिमण्डल बनता है। इस परिषद् के सदस्यों को उत्तरदायी शासन के सुस्थापित सिद्धान्तों के अनुसार बहुमत दल से छांटा जाता है और प्रधानमन्त्री ही अपने सहयोगियों को नामजद करता है। गवर्नर जनरल को परिषद् के सदस्यों को सदस्यता से भी हटाने की शक्ति प्राप्त है, परन्तु व्यवहार में मन्त्रिमण्डल तभी पदत्याग करता है जबकि वह विधानमण्डल के सदस्यों का विश्वास खो देता है। प्रिवी परिषद् के सदस्यों को पद से निवृत्ति के बाद भी जीवन भर 'सम्मानित' की उपाधि धारण करने का अधिकार है और जो सदस्य मन्त्रिमण्डल के सदस्य नहीं रहते वे प्रिवी परिषद् के सदस्य बने रहते हैं।

ब्रिटिश नॉर्थ अमरीका कानून के सैक्शन 15 के अनुसार कनाडा की सशस्त्र सेनाओं की सर्वोच्च कमान रानी में निहित है, अतएव गवर्नर जनरल सेनाओं का सर्वोच्च सेनापति नहीं है, परन्तु शान्तिकाल में वही यह निर्धारित करता है कि सेनाओं को किस उद्देश्य से किस काम में लगाया जाय। गवर्नर जनरल ही कनाडा के सर्वोच्च न्यायालय, जिला व काउन्टी न्यायालयों के न्यायाधीशों का नियुक्त करता है। ये न्यायाधीश सदाचरण काल तक अपने पदों पर रहते हैं, परन्तु गवर्नर जनरल उन्हें सीनेट व प्रतिनिधि सदन के सम्बोधन पर पद से हटा सकता है। गवर्नर जनरल रानी के कानूनी परामर्शदाता को भी नियुक्त कर सकता है। प्रान्तों के लेफ्टिनेन्ट-गवर्नरों को भी सपरिषद् गवर्नर-जनरल नियुक्त करता है। गवर्नर जनरल किसी भी प्रान्त के विधान मण्डल द्वारा पारित कानून को उसके पास होने की तिथि से एक वर्ष के भीतर अस्वीकृत भी कर सकता है, किन्तु इस शक्ति का प्रयोग वह केवल मन्त्रियों के परामर्श से ही कर सकता है।

उसकी विभिन्न शक्तियों को संक्षेप में इस प्रकार रखा जा सकता है—(1) वह सीनेट के सदस्यों को छांटता है और रिक्त स्थानों को भरता है। (2) वह सीनेट के अध्यक्ष को नियुक्त करता है और उसे उसके पद से हटा भी सकता है। (3) वह कॉमन सभा को आहूत करता है। (4) वह कॉमन सभा से कर लगाने और विनियोग सम्बन्धी प्रस्तावों की सिफारिश करता है। (5) ताज की ओर से वही विधेयकों पर अनुमति (assent) देता है। इस सम्बन्ध में ब्रिटिश नॉर्थ अमरीका कानून के सैक्शन 55 के अनुसार स्थिति यह है—'जब पार्लियामेंट द्वारा पारित कोई विधेयक उसके पास अनुमति के लिए आता है तो उस पर रानी के नाम में अनुमति दे सकता है, अथवा अनुमति देने से मना कर सकता है अथवा वह उस विधेयक को रानी के प्रसाद की अभिव्यक्ति

के लिए रोक सकता है। परन्तु गवनर जनरल को किसी विधेयक पर अनुमति देने से पूव यह समाधान कर लेना चाहिए कि विधेयक ऐसे विषय के बारे म है जिस पर उपनिवेश का विधान मण्डल कानून बनाने की शक्ति रखता है।

गवनर जनरल का यह कत्तव्य है कि वह विधानमण्डल के विभिन दलो के प्रति निष्पक्षता का व्यवहार करे। सभी स्थानीय मामलो म विधानमण्डल के द्वारा व्यक्त जन निणय को गवनर जनरल को स्वीकार करना चाहिए और उस निणय के अनुसार जो मन्त्रिमण्डल काय करे उसके परामश के अनुसार गवनर जनरल को काय करना चाहिए। परन्तु ऐसे सभी मामलो मे जिनम साम्राज्यीय हित अथवा ताज के परमाधिकार अन्तग्रस्त हो, गवनर जनरल को याद रखना चाहिए कि वह ताज का प्रतिनिधि है और यद्यपि उससे आशा की जाती है कि वह अपने मन्त्रियो की सम्मति का उचित ध्यान करेगा, फिर भी अन्तिम निणय उसे अपने व्यक्तिगत निणय तथा उत्तरदायित्व के आधार पर करना चाहिए। कुछ विशेष परिस्थितियो मे वह उपनिवश के राज्य मन्त्री से भी मन्त्रणा कर सकता है।

गवनर-जनरल की स्थिति—गवनर जनरल अपने आचरण और नीति के लिए डोमीनियन पार्लियामेट के प्रति उत्तरदायी नही है, इस प्रकार का सभी उत्तरदायित्व मन्त्रियो का है, क्योकि उनके परामश के अनुसार ही वह काय करता है। किन्तु गवनर जनरल ताज के प्रति उत्तरदायी है और उसका उत्तरदायित्व साम्राज्यीय पार्लियामेट के प्रति भी है। सक्षेप मे, गवनर जनरल को केवल ऐसे ही काय सौपे गये हैं जो औपचारिक हैं। इस सम्बन्ध मे ये टिप्पणियाँ महत्त्वपूण हैं। अपने व्यक्तिगत रूप म, वह प्रभाव को डालने की आशा नही कर सकता जो कि ब्रिटेन मे राजा (या रानी) डाल सकता है। उसका कायकाल छोटा होता है और यदि वह कनाडा निवासी न हो तो उसका कनाडा सम्बन्धी मामलो का ज्ञान भी सीमित रहता है। सबसे महत्त्वपूण बात यह है कि उसकी नियुक्ति राजा (या रानी) द्वारा कनाडा के केबिनेट के परामश पर की जाती है और उसके परामश पर राजा उसे उसके पद से भी हटा सकता है। जबकि केबिनट उसे अपनी नीति के सम्बन्ध मे परामश देती रहती है, यह सम्भावना कम है कि वह उसकी मन्त्रणा से प्रभावित होगी। वह केबिनट के विरुद्ध नही खडा हो सकता। अब चूकि गवनर जनरल बहुधा कनाडा निवासी होने लगे हैं, उसके लिए यह खतरे से पूण होगा कि वह शासन कार्यों मे हस्तक्षेप करे, क्योकि वह सम्भवतया घरेलू दलीय विवादो से अपने को पूणतया अलग नही कर सकता। परन्तु ऐसा सम्भव है कि कनाडा मे तीन या अधिक राजनीतिक दल रहे और गवनर जनरल को महत्त्वपूर्ण भाग लेना पडे। चूकि उनकी नियुक्ति थोडे काल के लिए दलीय आधार पर की जाती है और वे आनुवशिक राजा नही है, उनके द्वारा ऐसे कार्यों को सन्तोषपूवक किये जाने की कम आशा है। वे कनाडा की जनता के नाम से उस प्रकार बोलने का दावा नही कर सकते जिस प्रकार कि ब्रिटेन म राजा कर सकता है।[1] इस विषय मे डासन कहता है—

जबकि गवनर जनरल की कनाडा के शासन मे वास्तविक शक्तिया (aggressive vitality) लुप्त हो गयी है, उसे फिर भी मूल्यवान कत्तव्यो का पालन करना पडता है। वह सामाजिक और समारोह सम्बन्धी बहुत से कार्यों का भार प्रधानमन्त्री के कन्धो से स्वय ले लेता है, वह कभी-कभी सयुक्त राज्य अमरीका से कूटनीतिक सम्बन्धो मे उपयोगी सिद्ध होता है और वह राज्यो के मामलो मे केबिनेट को पक्षपात रहित या सहायतापूर्ण परामश दे सकता है। उसके सबसे महत्त्वपूण कार्यों मे से एक प्रधानमन्त्री की नियुक्ति करना है। अधिक अवसरो पर तो प्रधानमन्त्री का स्थान सरकार की पराजय के परिणामस्वरूप रिक्त होता है, ऐसे अवसरा पर उसके उत्तराधिकारी को तलाश

[1] Corry and Hodgetts *Democratic Government and Politics* p 155

करना केवल एक सरल और सीधा कार्य होगा अर्थात् विरोधी पक्ष के नेता को प्रधानमन्त्री बनने के लिए आमन्त्रित करना। यदि उसका पद इस कारण से खाली हो सके कि वह बहुमत दल का नेता नहीं रहा है, तब भी उत्तराधिकारी का प्रश्न उत्पन्न न होगा यदि बहुमत दल को अपने नेता को चुनने का समय मिल जाये। परन्तु प्रधानमन्त्री का पद अन्य कारणों से भी खाली हो सकता है, जिनका पहले से अनुमान भी न हो और जिनमें यह सच्ची अनिश्चितता हो कि कौन प्रधानमन्त्री बनेगा। ऐसे कठिन अवसरों पर गवर्नर जनरल को ऐसे व्यक्ति को मन्त्रिमण्डल बनाने के लिए आमन्त्रित करना पड़ेगा जो इस कार्य के योग्य हो और जिसे कॉमन सभा में बहुमत का समर्थन प्राप्त हो जाय।[1]

प्रिवी परिषद (The Privy Council)—ब्रिटिश नॉर्थ अमरीका कानून के सक्शन ग्यारह में कहा गया है 'कनाडा की सरकार को सहायता व परामर्श देने के लिए एक परिषद् होगी, जो कनाडा के लिए रानी की प्रिवी परिषद् कहलायेगी', जिसके सदस्यों को गवर्नर जनरल छाँटता है और शपथ दिलाता है। यह परिषद् लगभग 70 सदस्यों से मिलकर बनी है, जिन्हें प्रधानमन्त्री के परामर्श पर छाँटा जाता है और जो आजीवन सदस्य होते हैं उनके लिए कानून द्वारा कोई योग्यता विहित नहीं है सिवाय इसके कि उन्हें एक विशेष प्रकार की शपथ लेनी होती है। उन्हें कोई वेतन नहीं मिलता है, किन्तु उनके नाम के पहले 'सम्मानित' शब्द जुड़ता है। व्यवहार में परिषद् के सभी सदस्यों की नियुक्ति इस कारण से की गयी कि वे मन्त्री नियुक्त किये जा सकें। जब वे मन्त्रिपद से अलग होते हैं वे प्रिवी परिषद् के सदस्य बने रहते हैं, परन्तु उन्हें बैठकों में भाग लेने के लिए नहीं बुलाया जाता। इस प्रकार परिषद् में पुराने अथवा वर्तमान मन्त्री सदस्य रहते हैं। यह परिषद् निकाय रूप में कोई कार्य नहीं करती, कनाडा के शासन के बारे में इसके उत्तरदायित्वों को केबिनेट के मन्त्री ही निभाते हैं। इसके सभी कार्य इसकी 'समिति' करती है, जिसमें केबिनेट के सभी मन्त्री रहते हैं। यह औपचारिक कार्यपालिका है, जिसे सपरिषद् गवर्नर जनरल कहा जाता है।

केबिनेट—यह केन्द्रीय कार्यपालिका का दूसरा पहलू है। यह प्रिवी परिषद् की एक समिति है, जो पार्लियामेन्ट के प्रति उत्तरदायी है। ब्रिटिश नॉर्थ अमरीका कानून में इसका कहीं भी स्पष्ट उल्लेख नहीं है, वास्तव में इसका अस्तित्व कानून के बाहर है, किन्तु उसके विरुद्ध नहीं। अभिसमय के अनुसार मन्त्रिमण्डल के सदस्य कॉमन सभा या सीनेट के सदस्य होते हैं। जब यह स्पष्ट हो जाता है कि केबिनेट ने बहुमत का विश्वास खो दिया है तो यह त्याग पत्र दे देती है। इसके सदस्यों को प्रधानमन्त्री छाँटता है और उनमें से प्रत्येक एक या अधिक विभागों का मन्त्री रहता है। बहुधा प्रिवी परिषद् और केबिनेट को एक ही अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है। क्लोकी के अनुसार, प्रशासन के प्रयोजनों के लिए परिषद् का क्रियाशील भाग 'समिति' है अर्थात् परामर्शदाताओं का वह समूह जिसके परामर्श पर ताज की शक्तियों का प्रयोग किया जाता है। कानूनी दृष्टि से समिति ही केबिनेट है।[2]

केबिनेट का निर्माण—केबिनेट के सदस्यों की संख्या और उनकी नियुक्ति प्रधानमन्त्री की इच्छा पर निर्भर करती है, किन्तु छाँट करते समय उसे कई बातें ध्यान में रखनी पड़ती हैं। प्रत्येक प्रान्त यह समझता है कि केबिनेट में उसका अपना प्रतिनिधि रहना चाहिए, बड़े प्रान्त स्वभावतः अधिक प्रतिनिधियों की माँग करते हैं। साधारणतया प्रत्येक प्रान्त का एक एक प्रतिनिधि और क्यूबेक व आन्टेरियो जैसे बड़े प्रान्तों के चार चार प्रतिनिधि मन्त्रिमण्डल में लिये जाते हैं। मन्त्रि

[1] Dawson R M *Democratic Government in Canada* p 38
[2] Clokie Hugh McD *Canadian Government and Politics* pp 165-66

मण्डल के निर्माण मे वर्गीय, मूल जातीय, धार्मिक तथा अन्य प्रकार की महत्त्वपूर्ण विविधताओ का ध्यान रखना पडता है। चूकि केबिनेट का स्वरूप सघीय रहता है, अतएव प्रधानमन्त्री द्वारा अपने सहयोगियो के चुनाव मे दो कठिनाइया आती हैं—पहली, कभी कभी प्रत्येक प्रान्त के प्रतिनिधियों मे से केबिनेट की सदस्यता के योग्य सदस्य छाटने मे कठिनाई होती है। दूसरी, चूकि प्रधानमन्त्री का विभिन्न समूहो को केबिनट मे प्रतिनिधित्व देना होता है, अतएव कभी कभी वह योग्य व अनुभवी सदस्यो को भी केबिनेट मे नही ले सकता।

प्रत्येक मन्त्री को अपने पद की शपथ लेनी होती है। मन्त्रियो का उत्तरदायित्व तीन प्रकार का है—(1) गवनर जनरल के प्रति प्रिवी परिषद् के सदस्य रूप मे ताज को परामश देने मे, (2) प्रधानमन्त्री के प्रति और एक-दूसरे के प्रति मन्त्रिमण्डल की सुदृढता बनाये रखने के लिए, और (3) कॉमन सभा के प्रति सामूहिक रूप से तथा अपने-अपने विभाग के अध्यक्ष रूप मे व्यक्तिगत रूप से। केबिनेट की रचना, इग्लण्ड की भाँति अभिसमयो पर आधारित है (is based on conventions)। इसके मुख्य सिद्धान्त ये है—मन्त्रिमण्डल के सदस्य कामन सभा में बहुमत प्राप्त राजनीतिक दल के सदस्य हो, वे पार्लियामेन्ट के भी सदस्य हो, यद्यपि बाहर के सदस्यो के लिए कोई कानूनी रोक नही है। दूसरे विश्वयुद्ध पूव कनाडा मे ससदीय सचिव नियुक्त नही होते थे, किन्तु 1943 में उनकी आवश्यकता का अनुभव हुआ और तभी से ससदीय सहायक नियुक्त किये जाने लगे। अगस्त 1962 के उनकी सख्या 16 थी। वे न तो मन्त्रिमण्डल के सदस्य होते हैं और न प्रिवी परिषद् के। उनका मुख्य कतव्य मन्त्रियो को ससदीय कार्यों मे सहायता देना है। वे अपने पदो पर तभी तक रहते है जब तक कि केबिनेट। इस प्रकार हम कह सकते है कि कनाडा मे भी ब्रिटेन व भारत की भाँति केबिनेट और पूर्ण मन्त्रिमण्डल जैसा अन्तर है।

केबिनेट शासन का प्रमुख अग अथवा शासन तन्त्र की मुख्य कमानी है। रानी और उसका प्रतिनिधि गवनर जनरल नाम की कायपालिका है, क्रियाशील और वास्तविक कायपालिका अथवा सरकार तो प्रधानमन्त्री और केबिनेट ही हैं। गवनर-जनरल की नियुक्ति केबिनेट के परामश पर होती है और उसे सभी राजनीतिक मामलो म केबिनेट के परामश के अनुसार काय करना पडता है।

प्रधानमन्त्री—वह केबिनेट का अध्यक्ष है और महत्त्व तथा शक्तियो मे वह अपने सहयोगियो से बहुत बढा हुआ है। उसकी नियुक्ति औपचारिक रूप से गवर्नर जनरल द्वारा की जाती है, परन्तु यथाथ मे बहुमत दल का नेता प्रधानमन्त्री बनता है। अन्य सभी मन्त्रियो का चुनाव प्रधानमन्त्री द्वारा किया जाता है और वह जब चाहे मन्त्रिमण्डल मे उलट फेरकर सकता है। मन्त्रियो मे विभागो का वितरण भी प्रधानमन्त्री ही करता है। वह केबिनेट की बैठको म सभापति रहता है। उसकी इच्छाओ का सभी विशेष रूप से ध्यान रखते है और साधारणतया उसको अपने दल का समथन भी मिलता है। परन्तु उसके सहयोगी मन्त्रिपद मे सम होते है, वे उसके अधीन नही। यदि मन्त्रियो म विरोध या विद्रोह की भावना जाग जाय तो वे प्रधानमन्त्री के विरुद्ध अपनी बात मनवा सकते है। अतएव सफल प्रधानमन्त्री को जानना चाहिए कि उसे कब आदेश देना है, कब समझा बुझा कर काम लेना है और कब अपने सहयोगियो की बात माननी है। मन्त्रियो के ऊपर प्रधानमन्त्री की शक्ति बडी है, किन्तु उसकी मात्रा इस बात पर निभर करती है कि उस पद पर कौन व्यक्ति बैठा है। प्रधानमन्त्री सरकार का प्रमुख वक्ता भी है, वह सरकार की ओर से पार्लियामेन्ट तथा उसके बाहर महत्त्वपूण घोषणाएँ करता है और समय समय पर वक्तव्य देता है। वह स्वय भी किसी विभाग का अध्यक्ष होता है किन्तु मन्त्रिमण्डल का अध्यक्ष होने के नाते सभी विभागो की देख रेख करता है तथा उनके कार्यों मे समन्वय स्थापित करता है। प्रधानमन्त्री बहुमत दल का नेता भी होता है और प्रधानमन्त्री तथा बहुमत दल के कारण उसका पद राष्ट्र मे सबसे महत्त्वपूण व शक्तिशाली है। कनाडा के प्रधानमन्त्री की स्थिति बहुत सीमा तक वैसी ही है जैसी कि ब्रिटेन

व भारत म उनके प्रधानमन्त्रियो की ।[1]

7 आस्ट्रेलिया मे कार्यपालिका

ताज—सविधान अधिनियम की प्रस्तावना म कहा गया है कि यही यूनाइटेड किंगडम के ताज के अन्तगत रखा हुई है । इस प्रकार रानी एलिजाबेथ द्वितीय आस्ट्रेलिया की भी रानी है और (ब्रिटिश) राष्ट्रमण्डल के सदस्यों के मध्य का निरूद है । आस्ट्रेलिया म रानी का प्रतिनिधि गवनर जनरल है और सघान्तरित राज्यो म गवनर रानी के प्रतिनिधि हैं । जब 1954 म रानी एलिजाबेथ स्वय आस्ट्रेलिया यात्रा पर गयी थीं, तो उन्होंने राज्यो की ससदो का उद्घाटन करके तथा कार्यकारिणी परिषद् और प्रीवि परिषद् की बैठको का सभापतित्व करके स्वय पालन किया। कुछ भी हो, रानी तो राज्य का ध्वजधारी अध्यक्ष है और वह कोई भी वास्तविक शक्तियों का प्रयोग नही करती । ताज के काय तो केवल नाम क है, जैसे गवनर-जनरल की नियुक्ति, जिस विषय म उसे कामनवैल्थ व सघान्तरित राज्यो के उपयुक्त अधिकारी परामश देते हैं ।

गवनर जनरल—सविधान के सैक्शन 2 मे लिखा है कि गवनर-जनरल कामनवैल्थ में रानी का प्रतिनिधि रहेगा और रानी क प्रसादकाल मे किन्तु सविधान के अधीन रहकर उन शक्तियो व कार्यों का प्रयोग करेगा जो कि रानी उसे सौंप । उसकी नियुक्ति ताज द्वारा की जाती है और उसके प्रसादपयन्त ही वह अपन पद पर रहता है, किन्तु उसकी पदावधि पाँच या छ वष होती है । 1924 से पूव गवर्नर जनरल की नियुक्ति यूनाइटेड किंगडम के मन्त्रियो के परामश पर जो इस विषय मे डोमीनियन के मन्त्रियो स मन्त्रणा करत थे, की जाती थी, अत वह राजा (रानी) व यूनाइटेड किंगडम के मन्त्रियो का डोमीनियन मे प्रतिनिधि होता था । 1926 की बालफर रिपोट न यह स्वीकार किया कि भविष्य म वह केवल राजा का ही प्रतिनिधि रहे । 1926 के साम्राज्य सम्मेलन मे डामीनियनों के गवनर जनरलो के भाग को पारिभाषित करते हुए कहा गया था कि 'डोमीनियन मे गवनर जनरल राजा का प्रतिनिधि है जिसकी स्थिति डोमीनियन के प्रशासन मे सभी आवश्यक बातो मे ग्रेट ब्रिटेन के राजा के समान है और वह ग्रेट ब्रिटेन म राजा की सरकार या उसके किसी विभाग का प्रतिनिधि अथवा अभिकर्त्ता नही है ।' उसी वष के साम्राज्य सम्मेलन ने यह भी सिफारिश की कि भविष्य म डोमीनियन सरकार व यूनाइटेड किंगडम की सरकार के बीच सीधा सचार स्थापित हो और पत्र-व्यवहार गवनर-जनरल के माध्यम द्वारा हो। 1930 के साम्राज्य सम्मेलन म यह स्वीकार किया गया कि गवनर जनरल की नियुक्ति सम्बन्धित डोमीनियन के मन्त्रियो के परामश से ही की जायेगी । उस वष के सम्मेलन की रिपोर्ट म कहा गया है—(अ) गवनर जनरल की नियुक्ति मे राजा, जिसका वह डोमीनियन म प्रतिनिधि होता है और सम्बन्धित डोमीनियन ही अभिरुचि अथवा हित रखते हैं (आ) डोमीनियन के सम्बन्ध म भी यही सावैधानिक प्रथा लागू होगी कि वह वहाँ के उत्तरदायी मन्त्रियो के परामश पर काय करे और जो मन्त्री उसे परामश दें तथा उसके लिए उत्तरदायी हो व डोमीनियन मे राजा के मन्त्री समझे जायेंगे ।

उसकी शक्तियो व कार्यों का पता तीन आलेखो से लगाया जा सकता है—(1) लटर्स

[1] The constitutional powers and position of the Canadian Prime Minister are a close replica of his prototype in England It could not be otherwise for Canada has borrowed its political institutions from the mother country The Prime Minister as in England is the leader of the government He is central to the formation of the Ministry central to its life and central to its death He is like the Prime Minister of England a Sun around which planets revolve the hub of the governmental machinery —Patel S R *op cit*, pp 320-31.

पेटेन्ट, (2) रॉयल सील मेन्युअल के अ तगत हिदायते, और (3) गवनर जनरल का कमीशन। 1914 के पूव तो ऐसे तीन अवसर आये जबकि गवनर जनरल ने प्रतिनिधि सदन के विघटन के सम्ब ध मे मन्त्रियो के परामश को नहा माना, परन्तु तब से तो गवनर जनरल सभी मामले मे मन्त्रियो के परामश पर काय करता आया है। जब 1929 व 1931 मे ऐसे अवसर आये तो गवनर जनरल न ब्रिटिश प्रथा का पालन किया, जिसके अनुसार राजा कॉमन सभा का विघटन मन्त्रियो के परामश से ही करता है। किन्तु मन्त्री भी बहुत सोच समझकर ही विघटन की माँग करते हैं।

कॉमनवैल्थ की कायपालिका शक्ति रानी मे निहित है और उसका प्रयोग गवनर जनरल ही उसके प्रतिनिधि रूप मे कर सकता है, कायपालिका शक्ति कॉमनवैल्थ के सविधान व कानूनो को कार्यान्वित करने व उन्हे कायम रखने तक विस्तृत है। सैक्शन 62 मे गवनर-जनरल को परामश देने के लिए एक 'सघीय कार्यकारिणी परिषद्' (Federal Executive Council) की व्यवस्था है, अतएव जहा कही सपरिषद् गवनर-जनरल का उल्लेख आय वहाँ उसी परिषद् से आश्रय होगा। ससद द्वारा कोई भी विधेयक पास हो जाने के बाद गवनर जनरल की अनुमति मिल जाने पर ही अधिनियम बन सकता है। सैक्शन 58, 59 और 60 के अन्तगत गवनर जनरल किसी विधेयक को रानी की स्वीकृति के लिए रोक रख सकता है। सैक्शन 74 के अ तगत उसे किसी भी ऐसे प्रस्तावित कानून को रोक रखना अनिवाय है जो प्रिवी परिषद् म विशेष अपील करने के अधिकार को सीमित करने वाला हो। परन्तु अब यह प्रथा पड गयी है कि विधेयको को रोक रखने की विवेकीय शक्ति का प्रयोग केवल डोमीनियन मे गवनर जनरल की शक्तियो के विषय मे मान्य सावैधानिक प्रथा अर्थात् मन्त्रियो के परामर्शानुसार ही किया जा सकता है।[1]

गवनर जनरल (व गवनरो) को एक परमाधिकार भी प्राप्त है, उदाहरण के लिए, सावि धानिक दृष्टि से गवनर जनरल कामनवैल्थ कानूनो के विरुद्ध किये गय अपराधो को क्षमा कर सकता है और युद्ध सम्बन्धी परमाधिकारा का भी प्रयोग कर सकता है। सैक्शन 68 के अनुसार कॉमनवैल्थ की नाविक तथा सनिक शक्तियो की मुख्य कमान रानी के प्रतिनिधि रूप मे गवनर जनरल मे निहित है। सैक्शन 70 के अ तगत गवनरा की कुछ शक्तियाँ गवनर-जनरल म निहित थी। उन मामलो के बारे मे, जो सविधान के अन्तगत कामनवैल्थ की कायपालिका सरकार के हाथो मे आये, वे सभी शक्तियाँ और काय जो कॉमनवैल्थ की स्थापना के समय उपनिवेशों के गवनर मे निहित थे और जिनका प्रयाग वह कायकारिणी परिषद् के परामश से करता था अथवा उपनिवेश के किसी प्राधि कारी मे निहित थी, गवनर-जनरल या सपरिषद् गवर्नर जनरल मे निहित हो गयी।

सघीय कायकारिणी परिषद और मन्त्रिमण्डल—यह तो पहले ही बताया जा चुका है कि कॉमनवैल्थ के सविधान की एक मुख्य विशेषता सासद पद्धति अथवा उत्तरदायी शासन है। कोई भी व्यक्ति मन्त्रिपद पर तीन माह से अधिक काल तक नही रह सकता यदि वह इस बीच म सीनेट या प्रतिनिधि-सदन का सदस्य न बने। 1927 मे सविधान के विषय मे बैठाये गय शाही आयोग (Royal Commission) की रिपोट म कहा गया है कि कॉमनवल्थ पालियामेट के इतिहास मे आरम्भ से लेकर उस समय तक उत्तरदायी शासन का अस्तित्व रहा है और गवनर-जनरल ने अपने मन्त्रियो के परामश पर ही काय किया है। फिर भी आस्ट्रेलिया के सविधान के सम्बन्ध म एक महत्त्वपूण बात कायकारिणी परिषद् और मन्त्रिमण्डल के बीच अन्तर है। सैक्शन 62 के अनुसार कॉमनवैल्थ की कायपालिका शक्ति गवनर-जनरल म निहित है, जिसे सघीय कायकारिणी परिषद्

---

[1] Crisp L. F *The Parliamentary Government of the Commonwealth of Australi* p 234

परामर्श देती है। इसकी बैठकों मे गवर्नर-जनरल सभापति रहता है और इसके सदस्य उसके प्रसाद पर्यन्त अपने पदो पर आसीन रहते हैं। सैक्शन 64 के अनुसार गवनर-जनरल कामनवल्थ के उन शासनिक विभागो का प्रशासन करने के लिए, जिन्हे सपरिषद् गवनर-जनरल स्थापित करे, अधिकारी नियुक्त कर सकता है। ऐसे अधिकारी अर्थात् राज्य के मन्त्री भी गवनर-जनरल के प्रसाद पर्यन्त पदो पर रहते है, परन्तु यथार्थ (व्यवहार) मे इसका अर्थ यह है कि वे अपने पदो पर तब तक रहते हैं जब तक उन्हे प्रतिनिधि सदन के सदस्यो के बहुमत का विश्वास व समर्थन प्राप्त रहे। इस प्रकार सैक्शन 62, 63 और 64 उत्तरदायी शासन की संस्था को कानूनी सत्ता प्रदान करते हैं।

सभी राज्य मन्त्री कार्यकारिणी परिषद् के पदेन सदस्य होते हैं। इनकी बठकों में जहाँ आवश्यक हो कैबिनेट के निर्णयो को कानूनी रूप प्रदान किया जाता है, नियुक्तियाँ की जाती हैं त्याग पत्र स्वीकार किये जाते हैं, उद्घोषणाएँ जारी की जाती हैं और विनियम आदि निर्मित होते हैं। परन्तु राज्य की नीति का निर्धारण राज्य मन्त्री, मन्त्रिमण्डल की बैठकों में करते हैं, जिनका सभापति प्रधानमन्त्री रहता है। मन्त्रियो का यह समूह, जिसे कैबिनेट कहते हैं, शासन के कानूनी-तन्त्र का अंग नही है, इसकी बैठकें एक प्रकार से प्राइवेट और मननात्मक होती हैं और उनमें लिये गये निर्णयो का कोई कानूनी प्रभाव नही होता। जनवरी 1956 मे मन्त्रिमण्डल की रचना युनाइटेड किंगडम मे प्रचलित पद्धति के अनुकूल बनायी गयी। इसमे अब एक कैबिनेट होती है जिसके सदस्य सब मन्त्री नही होते अर्थात् अनेक मन्त्री कैबिनेट से बाहर रहते हैं, जिन्हे कैबिनेट की बैठकों में आमन्त्रित किया जा सकता है, जब भी उनके विभागो से सम्बन्धित मामलो पर कैबिनेट की बैठकों मे विचार हो। इस प्रकार युनाइटेड किंगडम व भारत की भाँति आस्ट्रेलिया मे भी अब मन्त्रि समुदाय व मन्त्रिमण्डल के बीच अन्तर उत्पन्न हो गया है।

सैक्शन 65 के अनुसार राज्य के मन्त्रियो की संख्या सात से अधिक नही हो सकती थी जब तक कि पार्लियामेंट अन्य व्यवस्था न करती। परन्तु जैसे जैसे कॉमनवैल्थ के हितो और प्रशासन का क्षेत्र विस्तृत हुआ, राज्य के मन्त्रियो की संख्या 7 से बढकर 28 तक पहुँच गयी। कनाडा और आस्ट्रेलिया मे कैबिनेट की रचना करते समय प्रदेशो के प्रतिनिधित्व का ध्यान रखना पड़ता है। आस्ट्रेलिया में समान अभिसमय पड गये हैं, यद्यपि वे जातीय तथा भाषायी भेदो से कम अधिक पेचीदा नही बने हैं। परन्तु मन्त्रि समुदाय मे अधिक स्थानो के लिए न्यू साउथवेल्स और विक्टोरिया के बीच प्रतिद्वन्द्विता रहती है और यह देखना आवश्यक समझा जाता है कि मन्त्रि समुदाय मे सभी राज्यो का प्रतिनिधित्व रहे। यह स्पष्ट है कि दल या कैबिनेट में इस प्रकार की संघात्मक अथवा प्रादेशिक रचना से एक प्रकार की कमजोरी व निर्णय न कर सकना स्वाभाविक है और यह भी सम्भावना रहती है कि कैबिनेट के लिए श्रेष्ठ व्यक्तियों को न छाँटा जा सके। यह एक मननात्मक निकाय है जो नीति के सभी महत्त्वपूर्ण मामलो को निर्धारित करती है। प्रत्येक मन्त्री किसी एक विभाग का राजनीतिक अध्यक्ष होता है। मिलर के शब्दों में, "इन आवश्यक बातो मे आस्ट्रेलियन पार्लियामेंट मे कैबिनेट का औपचारिक भाग प्राय वैसा है जैसा कि वैस्टमिनिस्टर में अर्थात् युनाइटेड किंगडम की पार्लियामेंट मे, यह वर्तमान समय की सरकार होती है।

प्रधानमन्त्री—आस्ट्रेलिया में प्रधानमन्त्री की स्थिति बहुत सीमा तक वैसी ही है जैसी कि ब्रिटेन, कनाडा व भारत में प्रधानमन्त्रियों की होती है। वह बहुमत दल व सरकार का नेता होता है। उसे सरलता से मन्त्रिमण्डल व मन्त्रि समुदाय की धुरी कह सकते हैं। संविधान अधिनियम मे मन्त्रिमण्डल और प्रधानमन्त्री का कोई उल्लेख नहीं है, अत उसके पद को कानूनी मान्यता प्राप्त नहीं है।

8 श्रीलका मे कायपालिका

राजा अथवा रानी—1946 के श्रीलका (सविधान) परिषद् आदेश के सैक्शन 45 के अनुसार, कायपालिका शक्ति राजा (अथवा रानी) मे निहित है, और उसकी ओर से उसका प्रयोग गवनर जनरल उस परिषद् आदेश व अन्य कानूनो के अनुसार कर सकता है। क्योकि अभी तक श्रीलका का पद एक डोमिनियन का है, अत उसका ब्रिटिश राजा (रानी) से सम्ब ध बना हुआ है, यद्यपि उसका रूप बदल गया है, रानी राज्य की अध्यक्ष है और श्रीलका का शासन ताज के नाम मे चलता है। मन्त्री और सावजनिक सेवक ताज के सेवक है और कानूनी प्रक्रिया भी ताज के नाम से होती है। रानी एलिजाबेथ द्वितीय ब्रिटेन व श्रीलका की रानी है। रानी के गद्दी पर पदारूढ होने की फरवरी 1952 मे पृथक उद्घोषणा द्वारा मान्यता प्रदान की गई थी, जिस पर श्रीलका के गवनर जनरल व मन्त्रियो के हस्ताक्षर थे। उद्घोषणा को श्रीलका के पार्लियामेंट भवन की सीढियो से आठ फरवरी को अग्रेजी, सिंहली व तमिल मे पढ़ा गया था। रानी की उपाधि इस प्रकार है—एलिजाबेथ द्वितीय, श्रीलका और अन्य राज्यो व प्रदेशो की रानी, राष्ट्र मण्डल की अध्यक्ष। इससे स्पष्ट है कि श्रीलका के राजनीतिक नेताओ और जनता ने सावैधानिक राजतन्त्र को स्वीकार किया है और वे रानी के प्रति निष्ठा रखत हैं। फिर भी, इसका श्रीलका की स्वतन्त्रता पर कोई कुप्रभाव नही पडता, क्योकि रानी और गवनर जनरल अपनी शक्तियो का प्रयोग डोमीनियन मन्त्रिमण्डल के परामश के अनुसार ही करते है।

गवनर जनरल—उपनिवेश पद की प्राप्ति से पूव, श्रीलका म ताज का प्रतिनिधि गवनर कहलाता था। वतमान सविधान मे उसका स्थान गवनर जनरल ने ले लिया है। गवनर जनरल की नियुक्ति रानी द्वारा पाँच वष के लिए होती है। उसकी नियुक्ति कमीशन द्वारा शाही मोहर के अन्तगत होती है। परन्तु अब गवनर-जनरल की नियुक्ति श्रीलका सरकार के परामश से की जाती है, जिसका व्यवहार म अथ श्रीलका के प्रधानमन्त्री की मन्त्रणा से है। उसे प्रतिवष 8,000 पौण्ड वेतन मिलता है, जो कर से मुक्त है। इसके अतिरिक्त, उसे बिना किराय का राज निवास मिलता है। गवनर जनरल का वेतन और भत्ते आदि श्रीलका की सचित निधि पर भारित है। गवनर जनरल को अपने पद की शपथ लेनी होती है और साथ मे निष्ठा की शपथ भी, यह शपथ मुख्य न्यायाधिपति या उसकी अनुपस्थिति मे अन्य न्यायाधीश एव मन्त्रिमण्डल के सदस्यो के सामने ली जाती है।

बीमारी या थोडे समय की अनुपस्थिति की दशा म गवनर जनरल को सावजनिक मोहर के अन्तगत उप गवनर जनरल नियुक्त करने का अधिकार है, जो गवनर जनरल के निर्देशानुसार उसके कार्यों को करेगा। उप गवनर जनरल की नियुक्ति से गवनर जनरल की शक्ति और अधिकारो मे कोई कमी न आयेगी, सिवाय जबकि रानी ऐसा करना उचित समझें। 1947 के लेटस पेटे ट मे गवनर जनरल की द्वीप से अनुपस्थिति अथवा अक्षमता की अवस्था मे स्थान को भरने की भी व्यवस्था है। रानी चाहे तो किसी अन्य व्यक्ति को उसके स्थान पर नियुक्त कर सकती है परन्तु यदि कोई अन्य व्यक्ति नियुक्त न किया जाये तो सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति, रानी के प्रसाद काल म, श्रीलका का शासन चलायेगा। इस प्रकार से नियुक्त अधिकारी को वेतन रूप मे 6 000 पौण्ड प्रतिवष मिलेगा। गवनर-जनरल राज्य का सावैधानिक अध्यक्ष है, अतएव उसकी सभी शक्तियाँ औपचारिक हैं। फिर भी इन शक्तियो का विवेचन निम्नलिखित शीपका के अन्तगत किया जा सकता है—

कायकारी—उसे कुछ महत्त्वपूण प्रशासनिक काय करने पडते है। अनेक महत्त्वपूण नियुक्तियाँ उसी के द्वारा की जाती है। वह प्रधानमन्त्री को नियुक्त करता है और उसक प९। से अन्य मन्त्रियो की भी नियुक्ति करता है। प्रधानमन्त्री व अन्य मन्त्री अपने पदो पर

प्रसाद पय त आसीन रहते हैं, परन्तु व्यवहार मे इसका अथ यह है कि वे अपने पदो पर तब तक पदारूढ रहते हैं जब तक कि उन्हे प्रतिनिधि सदन मे बहुमत का समथन प्राप्त रहे अथवा जब तक प्रधानमन्त्री त्याग पत्र न दे या मन्त्रिमण्डल मे उलट फेर न करे। ससदीय शासन पद्धति म गवनर जनरल को प्रधानमन्त्री का चुनाव करने का अधिकार 'नही' के समान है, क्योंकि बहुसख्यक दल का नेता ही प्रधानमन्त्री बनता है। गवनर जनरल ही लोक-सेवा आयोग के सभापति और सदस्य तथा परिसीमन आयोग के सदस्यो को नियुक्त कर सकता है। वह युद्ध की घोषणा और सन्धियाँ कर सकता है। परन्तु इन शक्तियो के प्रयोग मे उसे श्रीलका के प्रधानमन्त्री के परामश को मानना होता है, जैसे कि अन्य डोमीनियनो मे भी स्थापित प्रथा है।

विधायी—सक्षेप मे, उसकी शक्तियाँ व उसके काय इस क्षेत्र म इस प्रकार हैं—(1) उसे पालियामेट को आहूत करने और उसका सत्रावसान (Prorogue) करने तथा प्रतिनिधि सदन का विघटन करने की शक्ति प्राप्त है। विघटन करने की शक्ति का प्रयोग प्रधानमन्त्री के परामश के अनुसार किया जाता है। (2) वह सीनेट के पन्द्रह सदस्यो को नामजद करता है, नामजद सदस्य ऐसे व्यक्ति होने चाहिएँ जिन्होने प्रतिष्ठित सेवा की हो या जिन्ह व्यावसायिक, औद्योगिक जीवन कृषि या वाणिज्य मे उच्च स्थान प्राप्त हो। वह प्रतिनिधि-सदन के भी छ सदस्यो को नामजद कर सकता है जिन्हे ऐसे हितो को, जिनका प्रतिनिधित्व न हुआ हो या जिनका अपर्याप्त प्रतिनिधित्व हुआ हो प्रतिनिधित्व देने के लिए नामजद किया जाता है। (3) पालियामट के दोनों सदनो द्वारा पास किया गया प्रत्येक विधेयक गवनर जनरल के पास भेजा जाता है, जो उस पर रानी के नाम म अनुमति दे सकता है अथवा अनुमति देने से इनकार कर सकता है। (4) नई पालियामेट के उद्घाटन अथवा पालियामेट के प्रथम सत्र पर गवर्नर-जनरल, ताज की ओर से, गद्दी से भाषण (Speech from the Throne) पढता है। उनमे श्रीलका सरकार के विधायी कायक्रम की रूपरेखा दी होती है और उसे मन्त्रिमण्डल ही तैयार करता है।

न्यायिक—गवनर-जनरल सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति और अन्य न्यायाधीशों को नियुक्त करता है। वही न्यायिक सेवा आयोग के सदस्यो को भी नियुक्त करता है। रानी के प्रतिनिधि रूप मे, परन्तु श्रीलका सरकार के परामश पर वह अभियुक्तो को क्षमादान भी करता है।

उसकी स्थिति—श्रीलका के शासन म उसका स्थान रानी के बाद ही आता है। उसका पद सबमे अधिक सम्मान का है। परन्तु चूकि वह सावैधानिक अध्यक्ष है, उसकी शक्तियाँ नाममात्र की हैं। श्रीलका सरकार से रानी को भेजे जाने वाले और रानी से श्रीलका सरकार को आने वाले सभी पत्र उसके द्वारा जाते और आते हैं। 'यद्यपि गवनर जनरल की शक्ति बहुत कम है, उसे कुछ प्रभाव डालने का अवसर प्राप्त है। उसे अधिकार है कि उसे राज्य से सम्बन्धित सभी मामलो की सूचना मिलती रहे। उन मामलो के बारे मे वह मन्त्रियो को अपना मत अथवा दृष्टिकोण बता सकता है, यद्यपि अन्त मे उसे मन्त्रियो के निणय को ही सहमति देनी होती है। गवनर जनरल कितना प्रभाव डाल सकेगा, उसकी मात्रा बहुत सीमा तक उस पद पर आसीन व्यक्ति के व्यक्तित्व पर निभर करेगी। उसके मुख्य काय वास्तव मे अ राजनीतिक क्षेत्र मे हैं। उससे आशा की जाती है कि वह राष्ट्र से चिन्ह रूप मे, राजनीतिक दलो के सघष से ऊपर, काय करेगा।'[1]

वतमान सविधान के सबसे अधिक महत्त्वपूण प्राविधानो का सम्बन्ध मन्त्रिमण्डलात्मक शासन के जारी करने से है। पूवगामी सविधान म मन्त्रिमण्डल और कायपालिका समितियो की व्यवस्था एक अनोखी विशेषता थी। सैक्शन 46 (1) मे कहा गया है कि मन्त्रियों की एक

---

[1] Weerawardana I D S and M I *Ceylon and her citizens* p 121

केबिनेट होगी, जिस पर द्वीप के शासन की सामा य नीति के निदेशन व निय त्रण का भार रहेगा और जो सामूहिक रूप से पालियामेंट के प्रति उत्तरदायी होगी। केबिनेट निर्माण के सम्ब ध मे अ य प्राविधान उपर्युक्त सैक्शन के उपभाग दो और चार म दिये गय है। पहले मे कहा गया है कि म त्रियो मे से एक, जो केबिनेट का अध्यक्ष होगा, प्रधानम त्री कहलायेगा, अ य म त्रियो मे से एक यायम त्री और दूसरा वित्त म त्री कहलायेगा। बाद वाला उपभाग कहता है—प्रधानम त्री प्रतिरक्षा व परराष्ट्र मामलो के विभागो का म त्री रहगा और उन विभागो के प्रशासन को अ य मामलो के प्रशासन के साथ, जिन्ह वह अपने अधीन रखना चाहे, चलायेगा। प्रधानम त्री से अलग प्रत्येक म त्री उस विषय (विभाग) क प्रशासन और कार्यों का भार सम्भालेगा जो कि उसे प्रधानम त्री सौंपे।

म त्रिमण्डल के सम्ब ध मे अ य प्राविधान सैक्शन 47, 48 व 50 मे दिये गये है। सैक्शन 47 के अ तर्गत गवनर जनरल ससदीय सचिवो की नियुक्ति कर सकता है, जो म त्रियो को उनके पालियामेंट तथा विभागीय कार्यों मे सहायता देत हैं, पर तु ससदीय सचिवो की सख्या किसी भी समय म त्रियो की सख्या से अधिक नही हो सकती। सैक्शन 49 के अनुसार कम से कम दो म त्री सीनेट के सदस्य होने आवश्यक हैं, उनमे से एक याय म त्री रहेगा। यदि पूवगामी सैक्शन के अनुसार ससदीय सचिव नियुक्त किये जायें तो उनमे दो स अधिक सीनेट के सदस्य नही हो सकते। सैक्शन 49 (1) के अनुसार—प्रत्येक म त्री और ससदीय सचिव रानी के प्रसाद पय त ही अपने पद पर आसीन रहेगा, परन्तु कोई भी म त्री अथवा ससदीय सचिव गवनर जनरल को सम्बोधित अपने हाथ से लिखे त्यागपत्र द्वारा पद त्याग कर सकता है। सैक्शन 49 (2) के अनुसार किसी भी ऐसे म त्री या ससदीय सचिव को जो लगातार चार माह तक ससद के किसी सदन का सदस्य न रहे, उस अवधि के अ त होने पर अपने पद से त्यागपत्र देना पडेगा। सैक्शन 49 (3) कहता है—जब कभी कोई म त्री या ससदीय सचिव, किसी भी कारण से, अपने कोई भी काय करने म असमथ हो, तो गवनर-जनरल उसके स्थान पर दूसरे व्यक्ति को नियुक्त कर सकता है। इस प्राविधान पर टीका करते हुए सर आइवर जैनिंग्स ने लिखा है 'यद्यपि सविधान मे स्पष्ट रूप से कायवाहक प्रधानम त्री की नियुक्ति का कोई उल्लेख नही है और ऐसी नियुक्ति साधारणतया होती भी नही सैक्शन 49 (3) से स्पष्ट है कि ऐसी नियुक्ति की जा सकती है। आगे, यह भी सम्भव है कि किसी म त्री को अपने काय भार के अतिरिक्त उप प्रधानम त्री भी बनाया जाय और तब प्रधानम त्री यह निश्चय करेगा कि उसे उस रूप मे क्या विषय अथवा काय सौंपे जायें।'[1]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि सविधान मे म त्रिमण्डल निर्माण के सम्ब ध म विस्तृत प्राविधान दिये गये हैं। भारत के सविधान मे इस प्रयोजन के केवल दो छोटे अनुच्छेद है और ब्रिटेन के सविधान मे प्राय ये सभी बातें प्रथाओ द्वारा विनियमित है। सविधान ने म त्रियो की सख्या नियत नही की है, अत म त्रिमण्डल का आकार प्रधानम त्री की पस द तथा विभिन्न दलो की स्थिति के अनुसार घट बढ सकता है। 1947 मे डी० एस० सेनानायके की अध्यक्षता म निर्मित प्रथम म त्रिमण्डल मे तेरह म त्री और नौ ससदीय सचिव थे। 1952 मे हुए आम चुनाव के बाद पुनगठित म त्रिमण्डल मे भी चौदह म त्री और आठ ससदीय सचिव थे। जुलाई 1960 म श्रीमती सिरीमावो भण्डारनायके के नेतत्व म बने म त्रिमण्डल मे भी चौदह म त्री रहे। श्रीलका मे उप म त्री अथवा राज्य म त्री नही हैं।

म त्रिमण्डल की साधारणतया प्रति सप्ताह बैठक होती है। उसकी बैठको पर प्रधानम त्री सभापति रहता है और उनम निणय एकमत अथवा बहुमत से होते है म त्रिमण्डल के कार्यों म

[1] Jennings I *The Constitution of Ceylon* p 219

सहायता देने के लिए एक उसका सचिव (Secretary to the Cabinet) होता है। उसकी नियुक्ति गवनर जनरल द्वारा की जाती है और उसी पर मन्त्रिमण्डल के कार्यालय का भार रहता है। सचिव के काय, उन निदेशा के अनुसार जोकि उसे प्रधानमन्त्री दे, ये हैं—मन्त्रिमण्डल की बैठकें बुलाना, बैठकों के लिए काय सूची तैयार करना, उनकी कायवाही का रेकाड रखना, और मन्त्रिमण्डल के निणयो को सम्बन्धित व्यक्तियो अथवा अधिकारियो तक पहुँचाना। मन्त्रिमण्डल समितियो का भी प्रयोग करता है, क्योंकि मन्त्रिमण्डल के सामने तो नीति सम्बन्धी महत्वपूर्ण मामले आते है और वह उन पर निणय लेता है। जब कभी कुछ मामलो मे छानबीन की आवश्यकता होती है, तो वह काम समितियो को सौप दिया जाता है। उनकी रिपोट पर मन्त्रिमण्डल विचार करने के बाद निणयो पर पहुँचता है।

प्रधानमन्त्री—प्रधानमन्त्री के पद की रचना स्वय सविधान द्वारा की गयी है। सविधान 46 (2) मे कहा गया है कि मन्त्रिमण्डल का अध्यक्ष प्रधानमन्त्री कहलायेगा। उसी सविधान के अनुसार उसे उन मामलो के अतिरिक्त जिन्हे वह अपने हाथो मे रखना चाहे, प्रतिरक्षा व परराष्ट्र का भार भी सम्भालना आवश्यक है। प्रधानमन्त्री की नियुक्ति गवनर जनरल करता है, परन्तु उसे वास्तविक छाँट करने अथवा अपने विवेक के प्रयोग का अवसर 'नही' समान है। गवनर जनरल को प्रतिनिधि सदन मे बहुसख्यक दल के नेता को मन्त्रिमण्डल का निर्माण करने के लिए आमन्त्रित करना पडता है। प्रधानमन्त्री पार्लियामेंट के किसी भी सदन का सदस्य हो सकता है। श्रीलका की वतमान प्रधानमन्त्री, श्रीमती सिरीमावो भण्डारनायके न, जो पूवगामी प्रधानमन्त्री की विधवा हैं, 1960 के आम चुनाव मे किसी निर्वाचन क्षेत्र से आम चुनाव नही लडा था, परन्तु उन्होने श्रीलका स्वतन्त्र दल (Sri Lanka Freedom Party) के लिए निर्वाचन अभियान का नेतृत्व किया और वही पार्टी चुनाव म विजयी रही। चुनाव के बाद श्रीमती भण्डारनायके को नेता चुना गया और तदनुसार उन्हे प्रधानमन्त्री बनाया गया। जिससे कि वह अपने पद पर आसीन रह सकती, उन्हे सीनेट का सदस्य नामजद किया गया।

प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल अर्थात् शासन का अध्यक्ष है। अन्य सभी मन्त्री उसके परामश से गवनर जनरल द्वारा नियुक्त किये जाते है। व्यवहार म, वही अन्य मन्त्रियो की छाँट करता है उनकी सख्या नियत करता है और उनम विभागो का वितरण करता है। वह मन्त्रिमण्डल से किसी भी मन्त्री को हटा सकता है अथवा मन्त्रिमण्डल मे जब चाहे उलट फेर कर सकता है। अन्य मामलो के अतिरिक्त उस पर प्रतिरक्षा व परराष्ट्र मामलो का भार है। वही मन्त्रिमण्डल की बैठको म सभापति रहता है और वही मन्त्रिमण्डल व गवनर जनरल के बीच सचार का एक मात्र साधन है। प्रधानमन्त्री ही सदन के नेता, सीनेट के नेता, मुख्य सचेतक (Chief Whip) को जो मन्त्री होते है, नियुक्त करता है। मन्त्रिमण्डल के प्रमुख के नाते उसका एक अत्यधिक महत्त्वपूण काय सम्पूण प्रशासन की सामान्य देख रेख करना और विभिन्न विभागो के कार्यों के बीच समन्वय स्थापित करना है। प्रधानमन्त्री बहुमत दल का नेता होता है और इस रूप म उसके अनुयायियो की सख्या देश मे काफी बडी होती है। सरकार का नेता होने के नाते वह नीति सम्बन्धी अनेक महत्त्वपूण वक्तव्य देता है। इस प्रकार वह सदन के भीतर तथा बाहर सरकार व दल दोनो का ही प्रमुख प्रवक्ता है। प्रधानमन्त्री को अनेक उच्च पदो पर नियुक्ति की शक्ति भी प्राप्त है। व्यवहार मे, सभी महत्त्वपूण पदा पर नियुक्ति उसी के द्वारा की जाती है जसे उच्च आयुक्ता, राजदूता, लोक सेवा आयोग के सभापति व सदस्या आदि की।

9 पश्चिम जमनी मे कार्यपालिका

राष्ट्रपति—आन्तरिक और अन्तर्राष्ट्रीय मामला म राष्ट्रपति सघात्मक गणतन्त्र (Federal

Republic) का औपचारिक अध्यक्ष है। उसका निर्वाचन पांच वष की अवधि के लिए होता है और उसका केवल लगातार दूसरी अवधि के लिए ही एक बार और पुनर्निर्वाचन हो सकता है। उसका निर्वाचन एव विशेष सघीय सम्मेलन द्वारा किया जाता है, जो सघीय विधानमण्डल के लोकप्रिय सदन (Bundestag) के सदस्यो तथा उनके बराबर सख्या मे आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर चुने गये राज्य विधानमण्डलो के सदस्यो से मिलकर बनता है। 1960 के बाद वाले वर्षों म कुल सदस्यो की सख्या लगभग 1000 थी। निर्वाचन परिणाम सदस्यो के पूण बहुमत से निर्णित होता है। यदि दो बार मतदान होने पर भी किसी उम्मीदवार को पूण बहुमत प्राप्त नही होता, तो तीसरी बार मतदान मे सबसे अधिक मत प्राप्त करने वाला उम्मीदवार निर्वाचित हो जाता है। राष्ट्रपति की अक्षमता की दशा म अथवा अवधि के पूव पद रिक्त होने पर उसके कत्त०्या का सम्पादन विधानमण्डल के दूसरे सदन (Bundesrat) के प्रधान द्वारा किया जाता है।

राष्ट्रपति के सभी आदेश और आज्ञप्तियाँ तभी वैध होते है जब उन पर चान्सलर या सक्षम सघीय मन्त्री द्वारा प्रति हस्ताक्षर कर दिये गये हो। आधारभूत कानून (Basic law) अर्थात् सविधान ने इस बारे मे केवल तीन अपवादो के लिए व्यवस्था की है—(1) चान्सलर की नियुक्ति तथा उसका पद से हटाया जाना, (2) यदि लोकप्रिय सदन चान्सलर का बहुमत से निर्वाचन करने म विफल रहे तो उसका विघटन करना, और (3) चान्सलर या किसी सघीय मन्त्री को यह आदेश दिया जाना कि जब तक उसके उत्तराधिकारी की नियुक्ति हो वह अपने पद के कार्यों को करता रहे।

उपर्युक्त प्राविधानो के होते हुए भी राष्ट्रपति की आरक्षित शक्तिया महत्त्वपूण है। यदि लोकप्रिय सदन समय के भीतर एकत्रित न हो, तो उसे ही यह घोषणा करने का निणय करना पडता है (चान्सलर के प्रति हस्ताक्षर से) कि प्रतिरक्षा का मामला उठ खडा हुआ है और इस प्रकार वह युद्ध की घोषणा कर सकता है। उसे ही यह निणय करना पडता है कि चान्सलर पद के लिए किसी उम्मीदवार के नाम को लोकप्रिय सदन के समक्ष प्रस्तावित किया जाय और यह भी कि क्या वह लाकप्रिय सदन को विघटित करे, यदि वह किसी चान्सलर का बहुमत से निर्वाचन न कर सके। ऐसे ही उसे यह भी निणय करना पडता है कि क्या सघीय सरकार की प्राथना पर विधायी आपात् की स्थिति घोषित करके लोकप्रिय सदन को विघटित किया जाय, यदि उसने चान्सलर को विश्वास का मत देने से मना कर दिया हो और उसके स्थान पर दूसरे को नियुक्त भी न कर पाया हो, *अथवा क्या उसे अल्पमत द्वारा समर्थित चान्सलर का ही समथन करना* चाहिए।

राष्ट्रपति के विरुद्ध उसके द्वारा किये गये कार्यो के लिए आधारभूत कानून का जान बूझकर अतिक्रमण करने के आधारो पर साविधानिक न्यायालय के सामने महाभियोग की कायवाही की जा सकती है। महाभियोग की कायवाही के लिए प्रस्ताव पर विचार किये जाने के लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक सदन के कम से कम एक चौथाई सदस्य उसके पक्ष मे हो, ऐसे प्रस्ताव के पास होने के लिए उसके पक्ष मे प्रत्येक सदन के 2/3 सदस्यो का मत होना आवश्यक है। महाभियोग की कायवाही पूण हो जाने पर साविधानिक न्यायालय राष्ट्रपति को अपने कत्तव्या का पालन न करने का आदेश दे सकता है, यदि न्यायालय उसे अपराधी पाये तो वह उसे उसके पद स पूणतया वचित कर सकता है।

चान्सलर और मन्त्री—सघात्मक गणतन्त्र मे चान्सलर का पद सबसे अधिक महत्त्वपूण है। व्यवहार मे, वही सघीय केबिनेट के सभी मन्त्रियो को नियुक्त व अपदस्थ करता है, चूंकि राष्ट्रपति के लिए उसके प्रस्ताव ब धनकारी हैं और इस सम्बन्ध मे राष्ट्रपति की शक्तियाँ औपचारिक हैं। चान्सलर को ही सावजनिक नीति की मागदशन रेखाएँ निर्धारित करने की शक्ति व उत्तरदायित्व

करना चाहिए, परन्तु सविधान ने उस मामले मे गवनर-जनरल को काफी व्यापक विवेक का अधिकार प्रदान किया है । गवनर-जनरल चाहे तो विघटन के लिए प्रधानमन्त्री की सिफारिश को न माने यदि वह यह सोचे कि ऐसा करना सघ के हित मे न होगा । यदि प्रतिनिधि सदन द्वारा प्रधानमन्त्री मे अविश्वास का प्रस्ताव पास हो जाने पर भी प्रधानमन्त्री तीन दिन के भीतर त्याग पत्र न दे, तो गवनर-जनरल पार्लियामेट को विघटित कर सकता है । ऐसे ही, यदि उचित समय के भीतर प्रधानमन्त्री का पद न भरा जा सके तो गवनर-जनरल पार्लियामेट के विघटन का आदेश दे सकता है । गवनर जनरल का एक अन्य महत्त्वपूण काय रानी के नाम मे दया के परमाधिकार का प्रयोग करना है । अन्त मे, कोई भी विधेयक गवनर जनरल की अनुमति के बिना कानून नही बन सकता, सविधान मे कोई ऐसा प्राविधान नही है जिसके अनुसार उसे विधेयक को रानी के प्रसाद के लिए रोक रखना आवश्यक हो ।

11 इजराइल मे कायपालिका

राज्य के राष्ट्रपति का चुनाव ससद (Knasset) द्वारा पाँच वष की अवधि के लिए किया जाता है । उसका केवल एक दूसरी अवधि के लिए ही पुनर्निर्वाचन हो सकता है । विदेशी राजदूतों व मन्त्रियो के प्रमाण पत्रो का वही स्वीकार करता है, पुष्टिकरण हो जाने के बाद सन्धियो पर हस्ताक्षर करता है, औपचारिक रूप मे इजराइल के राजदूतो, मन्त्रियो, न्यायाधीशो और राज्य नियन्त्रक (State Comptroller) को नियुक्त करता है, और ऐसे कानूनो जो छोडकर जिनका सम्बन्ध राष्ट्रपति की शक्तियो से हो, सभी अन्य कानूनो पर भी हस्ताक्षर करता है । उसे क्षमा दान अथवा दण्ड को कम करने का परमाधिकार भी प्राप्त है । जब कभी नई सरकार (मन्त्रि मण्डल) का निर्माण होता है, वह राजनीतिक दलो के प्रतिनिधियो से मन्त्रणा करके ससद के किसी सदस्य को मन्त्रिमण्डल बनाने का काय सौपता है ।

कायपालिका का अधिक महत्त्वपूण और शक्तिशाली अग केबिनेट है, जिसका अध्यक्ष प्रधानमन्त्री होता है । केबिनेट सामूहिक रूप मे ससद के प्रति उत्तरदायी है । वास्तव मे, वह पद ही तब धारण करती है जबकि उसे ससद से विश्वास का मत प्राप्त हो जाता है । केबिनेट तब तक पदासीन रहती है जब तक कि नई केबिनेट न बन जाये । मन्त्री साधारणतया ससद के सदस्य ही होते हैं, परन्तु ऐसे व्यक्तियो को भी केबिनेट मे लिया जा सकता है जो कि सदस्य न हो । जून 1967 को बनी केबिनेट मे प्रधानमन्त्री सहित 21 मन्त्री थे और 6 उप मन्त्री भी थे ।

आठवाँ अध्याय

अन्य राज्यों मे कार्यपालिकाएँ

1 सयुक्त राज्य अमरीका मे राष्ट्रपति

अमरीका मे राष्ट्रपति पद की फाइनर के मतानुसार, छ विशेषताएँ अग्रलिखित हैं—(1) यह निर्मित कार्यपालिका है, परन्तु इसका विकास हुआ है। (2) यह इकहरी कार्यपालिका है, सामूहिक नही। (3) इसका चुनाव जनप्रिय आधार पर होता है, व्यवहार मे, प्रत्यक्ष रूप मे। (4) यह कार्यपालिका से अधिक है। (5) यह काग्रेस से पृथक है। (6) इसमे केवल छोटे-मोटे परिवर्तन हो सकते है, इसे सुधारा नही जा सकता।[1]

निर्वाचन, कार्यकाल आदि—राष्ट्रपति का अब एक प्रकार से परोक्ष रूप मे जनता द्वारा चार वर्ष की अवधि के लिए निर्वाचन होता है। चूँकि उसका कार्यकाल नियत है, अत यदि किसी भी कारण से राष्ट्रपति का पद खाली हो जाये तो उसकी शेष अवधि के लिए उप राष्ट्रपति राष्ट्रपति बन जाता है। परन्तु यदि राष्ट्रपति का पद ऐसे समय पर रिक्त हो जबकि उप-राष्ट्रपति का पद भी रिक्त हो, तो इस बारे मे बने कानून के अनुसार राष्ट्रपति पद का उत्तराधिकारी इस क्रम के अनुसार होगा—सेक्रेटरी आफ स्टेट (अर्थात् विदेशमन्त्री), सेक्रेटरी आफ ट्रेजरी (वित्त-मन्त्री), सेक्रेटरी आफ वार (युद्ध मन्त्री), एटार्नी जनरल इत्यादि। परन्तु इनमे से कोई भी ऐसा व्यक्ति राष्ट्रपति न बन सकेगा जो सयुक्त राज्य अमरीका का जन्मजात नागरिक न हो। अभी तक उप-राष्ट्रपति से आगे उत्तराधिकारी की आवश्यकता नही पडी है। राष्ट्रपति को देशद्रोह, भ्रष्टाचार या अन्य गम्भीर अपराधो व दुराचरण के आधार पर केवल महाभियोग के द्वारा पद से हटाया जा सकता है, परन्तु अभी तक किसी राष्ट्रपति को पदच्युत नही किया गया। महाभियोग की शक्ति प्रतिनिधि सदन मे निहित है, जिसका प्रयोग बहुमत से किया जा सकता है। महाभियोग लगने पर उसकी सुनवाई न्यायालय के रूप मे सीनेट करती है और सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति उस समय अध्यक्ष रहता है। दण्ड देने के लिए $\frac{2}{3}$ का बहुमत पक्ष मे होना चाहिए।

राष्ट्रपति की शक्तियाँ—सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति के तीन महत्त्वपूर्ण स्थान हैं—(1) वह राजनीतिक नेता—दल का नेता, काग्रेस का नेता तथा देश का नेता होता है (2) वह राष्ट्र का एक प्रमुख अथवा राज्य का अध्यक्ष तथा [illegible] राष्ट्र की एकता का प्रतीक [illegible] और (3) सघीय शासन के क्षेत्र मे वह मुख्य कार्यपाल (Chief Executive) तथा [illegible] है। उसके कर्त्तव्यो के कानूनी दृष्टि से दो प्रमुख [illegible] हैं—सांविधानिक तथा [illegible] प्रथम श्रेणी मे उसके मुख्य कर्त्तव्य राज्य के प्रमुख, [illegible] [illegible] के क्षेत्र मे प्रमुख कूटनीतिज्ञ, सेनापति तथा [illegible] कानूनों के [illegible]

[1] Finer H Theory and Practice of Modern Government [illegible]

रूप मे।[1] द्वितीय श्रेणी मे ये कर्त्तव्य सम्मिलित किये जा सकते हैं—वह दल का नेता तथा राष्ट्रीय नेता होता है। उसके कर्त्तव्य चाहे कितने ही व्यापक हैं और अन्य क्षेत्रों में अति महत्वपूर्ण भी हैं, किन्तु संविधान की दृष्टि मे वह प्रधानतः मुख्य कार्यपाल ही है।[2] यहाँ हम राष्ट्रपति के राज्य के प्रमुख, मुख्य कार्यपालिका, सेनापति तथा प्रशासन के अध्यक्ष रूप मे विभिन्न कार्यों और उसकी शक्तियों का संक्षिप्त विवेचन करेंगे।

संयुक्त राज्य अमरीका मे राष्ट्रपति राज्य का अध्यक्ष होता है। वह देशवासियों और शेष संसार के लिए संयुक्त राज्य शासन की शक्तियों व ज्ञान का प्रतीक है। राज्य का प्रमुख होने के नाते राष्ट्रपति और उसकी पत्नी को अनेक समारोहों मे भाग लेना होता है। राष्ट्रपति से आशा की जाती है कि वह अनेक सामाजिक अवसरो पर उपस्थित रहे, अनेक प्रकार के समारोहों, प्रदर्शनों आदि का उद्घाटन करे। इन कार्यों के करने तथा जनता को मिलने का अवसर देने में उसका बहुत सा समय व्यतीत होता है, परन्तु इनसे उसे अपने कठिन और दायित्वपूर्ण कार्यों से कुछ मनोरंजन के अवसर मिल जाते हैं। मुख्य कार्यपाल होने के नाते राष्ट्रपति के कार्यों को हम अध्ययन की सुविधा के लिए निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत रख सकते हैं—

कानून का परिपालन—संविधान के अनुसार राष्ट्रपति के लिए यह आवश्यक है कि वह यह देखे कि कानूनों का ठीक से पालन होता है। कानून बनाने का कार्य कांग्रेस का है और कानूनों के अन्तर्गत संधियाँ भी आती हैं। यदि आवश्यकता पड़े तो राष्ट्रपति कानूनों व संधियों के उचित पालन के लिए सैनिक शक्ति का भी प्रयोग कर सकता है। इस कार्य में एटार्नी-जनरल से विशेष सहायता मिलती है। राष्ट्रपति कानूनों का उचित पालन न करने पर किसी व्यक्ति और राज्य के विरुद्ध न्यायिक कार्यवाही करने का भी आदेश इस अधिकारी को दे सकता है।

नियुक्ति और पदच्युति की शक्तियाँ—संविधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति की नियुक्ति-सम्बन्धी शक्तियाँ दो प्रकार की होती हैं—(1) वे नियुक्तियाँ, जो राष्ट्रपति द्वारा सीनेट की सहमति से की जाती हैं, और (2) वे नियुक्तियाँ, जो राष्ट्रपति स्वयं कर सकता है। राष्ट्रपति की केबिनेट के सदस्य, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश, राजदूत, संघीय सरकार के अन्य अनेक उच्च अधिकारियों की नियुक्तियाँ प्रथम श्रेणी में आती हैं। इनसे नीचे के स्तरों के अन्य अधिकारियों की नियुक्तियाँ, जिनके लिए उसे कांग्रेस ने अधिकार दिया हो, राष्ट्रपति स्वयं करता है। साधारणतया नीचे की श्रेणियों के अधिकारियों की नियुक्तियाँ विभागीय अध्यक्ष व न्यायालयों द्वारा की जाती हैं। अब संघीय सरकार की स्थायी सेवाओं में भरती करने का दायित्व सेवा आयोग पर है। उच्च अधिकारियों की नियुक्ति के लिए नाम राष्ट्रपति चुनता है और उन पर सीनेट का अनुसमर्थन होता है। प्रथानुसार केबिनेट के सदस्यों के लिए सीनेट राष्ट्रपति द्वारा सुझाये गए नामों को स्वीकार कर लेती है। उनका अनुसमर्थन न होना साधारण नियम नहीं, अपवाद है। परन्तु सर्वोच्च न्यायालय के लिए प्रस्तुत न्यायाधीशों के नामों में से अब तक लगभग 20 प्रतिशत का सीनेट ने अनुसमर्थन नहीं किया और राजदूतों आदि के लिए जिन नामों की सिफारिश राष्ट्रपति करता है, सीनेट उनमें से बहुत सों को अस्वीकार कर देती है। इस प्रकार सीनेट द्वारा अनुसमर्थन राष्ट्रपति की नियुक्ति सम्बन्धी शक्ति पर एक महत्वपूर्ण सीमा है।

[1] The range of the President's functions is enormous. He is ceremonial head of the state. He is a vital source of legislative suggestion. He is the final source of all executive decision. He is the authoritative exponent of the nation's foreign policy. —Laski, H. J. *The American Presidency*, p. 37.

[2] Whatever else he may be—guide and co-worker in legislation, party leader, general custodian of national interests—the president is first of all chief executive. —Ogg and Ray. *Introduction to American Government*, p. 246.

राष्ट्रपति द्वारा विभिन्न राज्यो मे अनेक सघीय अधिकारियो की नियुक्ति की जाती है। इनके सम्ब ध मे एक प्रथा यह पड गई है कि राष्ट्रपति उनकी नियुक्ति के लिए नाम तय करने से पूर्व उस राज्य से अपने दल के सीनेटरो से परामश कर लेता है। यदि राष्ट्रपति ऐसा नही करता, तो सीनेटर अपने साथियो से उन नामो को अस्वीकार करने के लिए कह सकते है। जिस राज्य मे सघीय अधिकारी नियुक्त होते है, यदि उनके सीनेटर राष्ट्रपति के दल के सदस्य नही होते तो राष्ट्रपति राज्य के दलीय सगठन के सभापति से ऐसा परामश करता है। राष्ट्रपति को अब बहुत से सघीय अधिकारियो को उनके पद से हटाने की शक्ति भी प्राप्त है कि तु तीन श्रेणियो के अधिकारियो को वह पदच्युत नही कर सकता—पहले, सघीय यायालयो के यायाधीश जि ह केवल महाभियोग की कायवाही द्वारा ही पदच्युत किया जा सकता है। दूसरे, काग्रेस द्वारा स्थापित बोर्डो के सदस्य, जि हे केवल काग्रेस द्वारा निर्धारित दशाओ के अनुसार ही उनके पदो से हटाया जा सकता है, और तीसरे, वे अधिकारी तथा कमचारी जिनकी नियुक्ति सिविल सर्विस नियमो के अधीन की जाती है।

क्षमादान आदि की शक्तियाँ—राष्ट्रपति को क्षमादान, दण्ड दिये जाने को स्थगित रखने और अनेक अपराधियो को सामा य क्षमादान की शक्तिया प्राप्त है। क्षमादान आशिक अथवा पूण हो सकता है अर्थात् इसके साथ शर्तें लगाई जा सकती है या यह बिना शत होता है। राष्ट्रपति की क्षमादान शक्ति पर एक सीमा यह है कि वह महाभियोग की कायवाही द्वारा दण्डित व्यक्तियो को क्षमादान नही कर सकता। क्षमादान के साथ राष्ट्रपति को दण्ड दिये जाने को स्थगित करने (reprieve) तथा सामा य क्षमादान की शक्तियाँ भी प्राप्त है। इन सभी शक्तियो का प्रयाग राष्ट्रपति याय विभाग की सिफारिशो के आधार पर कर सकता है।

प्रशासन का निदेशन—जब राष्ट्रपति कायपालिका का मुख्य होने के नाते प्रशासन का भी अध्यक्ष अथवा प्रमुख सचालक है। प्रशासन के सभी विभागो के ऊपर उसे देख-रेख व निदेशन के अधिकार प्राप्त है। इन उद्देश्यो की पूर्ति के लिये वह आदेश व निदेश जारी करता है और विनियम तथा नियम भी बनाता है।

सेनापति अथवा सशस्त्र सेनाओं का प्रमुख—सविधान के अनुसार राष्ट्रपति सेना, नाविक सेना और विभिन्न राज्या के सैनिक सगठनो का (जबकि उन्हें सयुक्त राज्य की सेवा के लिए बुलाया जाय) सेनापति है। इस प्राविधान के अनुसार सेना पर नागरिक अधिकारी का निय त्रण है और राष्ट्रपति को सेनापति की शक्तिया प्राप्त हैं। परन्तु इस क्षेत्र म उसकी शक्तियो पर काग्रेस की शक्तियो की सीमा लगी है। केवल काग्रेस ही युद्ध की घोषणा कर सकती है और वही सनाओ के लिए आवश्यक धन स्वीकार करती है। युद्धकाल मे देश की सुरक्षा व प्रतिरक्षा का अ तिम उत्तरदायित्व राष्ट्रपति पर ही है। गत विश्व युद्धो के दौरान राष्ट्रपति की शक्तिया मे विशेष रूप से वद्धि हुई। चूकि वतमान काल मे कभी भी युद्ध का खतरा पैदा हो सकता है अतएव सशस्त्र सनाओ को हर समय तैयारी की स्थिति मे रखा जाता है। मुख्य सेनापति के रूप मे राष्ट्रपति को युद्ध के सचालन के सम्ब ध म महत्त्वपूण निणय करने होते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि काग्रेस द्वारा युद्ध की घोषणा किये जाने के पूव ही राष्ट्रपति ऐसी सनिक कायवाही आरम्भ कर सकता है कि काग्रेस के सामने युद्ध की घोषणा करने के अतिरिक्त कोई और विकल्प ही न रहे।[1] आवश्यकता पडने पर राष्ट्रपति देश म भी सैनिक कानून लागू कर सकता है और आपातिक

[1] The President may bring on a war by taking actions that are within his power and thus create a war situation Often in fact the President is obliged to decide questions of war or peace without waiting for Congress. —Coyle D C. *The United States Political System* pp 48–49

अव्यवस्था आदि को दबाने के लिए सेना प्रयोग करने के लिए आदेश दे सकता है। युद्ध काल में राष्ट्रपति की शक्तियों में बहुत वृद्धि हो जाती है, परन्तु फिर भी उसे तानाशाह (Dictator) नहीं कह सकते, यद्यपि वह एक ऐसा अधिकारी बन जाता है जिसकी शक्तियां बहुत विस्तृत और अपरिभाषित हो जाती है।

वैदेशिक मामलों का संचालन—शासन व राज्य का अध्यक्ष होने के नाते संयुक्त राज्य के विदेशों से सम्बन्धों के संचालन का उत्तरदायित्व उसी पर है। इस कार्य को वह राज्य विभाग (Department of State) तथा उसके अध्यक्ष (Secretary of State), सहायक सक्रेटरियों की सहायता से चलाता है। राष्ट्रपति के कूटनीतिक कर्त्तव्यों में ये मुख्य हैं—विदेशों में राजदूत भेजना और विदेशी राजदूतों के प्रमाण पत्रों को स्वीकार करना, विदेशों से सन्धियों के सम्बन्ध में वार्ता चलाना, नये शासनों अथवा राज्यों को मान्यता प्रदान करना अमरीकी हितों की रक्षा करना तथा अमरीकी व्यापार को प्रोत्साहन देना। संयुक्त राज्य अमरीका के शासन में वही एक अधिकारी है जो विदेशी सरकारों से सरकारी पत्र व्यवहार कर सकता है। विदेशों से सन्धियाँ करने में तीन चरण अन्तर्ग्रस्त होते हैं—(1) सन्धि के लिए वार्ता राष्ट्रपति द्वारा की जाती है, यह कार्य दोनों देशों के प्रतिनिधि आपसी वार्ता से करते है। (2) सन्धि की शर्तें तय हो जाने पर सन्धि सीनेट की स्वीकृति के लिए सीनेट मे रखी जाती है। सन्धि पर सीनेट की स्वीकृति 2/3 के बहुमत से प्राप्त की जानी आवश्यक है। अतः राष्ट्रपति और सरकारी अधिकारी वार्ता के दौरान सीनेट से आवश्यक परामर्श करते है। (3) सन्धि की सम्पुष्टि हो जाने पर उसे लागू किया जाता है। सन्धियों के अतिरिक्त राष्ट्रपति अन्य देशों से कुछ कार्यकारी समझौते (executive agreements) कर लेता है, जो एक प्रकार से सन्धि का-सा ही कार्य करते हैं और जिनका लाभ यह है कि उन पर सीनेट की स्वीकृति पाना आवश्यक नहीं है। कार्यपालिका का मुख्य अधिकारी और मुख्य सेनापति होने के नाते वैदेशिक मामलों में राष्ट्रपति का स्थान बहुत ऊँचा है और उसकी शक्तियाँ नाजुक, पूर्ण और अनन्य है। राष्ट्रपति ही संयुक्त राज्य अमरीका की विदेश नीति को उस मात्रा में निर्धारित व अभिव्यक्त करता है जितना कि कोई समान तुलनात्मक सत्ताधिकारी नहीं कर सकता।

राष्ट्रपति की शक्ति विधायी क्षेत्र में—पृथक्करण सिद्धान्त के अन्तर्गत यह कहना कि मुख्य कार्यपालिका की विधायी शक्तियाँ होती हैं कुछ आश्चर्यजनक लगता है, परन्तु संविधान के अनुसार राष्ट्रपति का विधायी क्षेत्र में कुछ महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ मिली हैं। संविधान द्वारा ही काँग्रेस के सत्र की तिथि नियत की गयी है, अतः राष्ट्रपति उसका नियमित सत्र तो बुला नहीं सकता परन्तु उद्घोषणा द्वारा राष्ट्रपति काँग्रेस को विशेष सत्र के लिए आहूत कर सकता है। इस उद्घोषणा में राष्ट्रपति सत्र के प्रयोजन और उन विषयों का भी उल्लेख करता है जिन पर काँग्रेस को विशेष सत्र में विचार करना हो, परन्तु सत्र होने पर काँग्रेस उनके अतिरिक्त अन्य किसी मामले पर भी विचार कर सकती है। राष्ट्रपति को काँग्रेस के सत्र को केवल उसी दशा में स्थगित (adjourn) करने का अधिकार है, जबकि दोनों सदनों की सहमति से इस विषय में निर्णय न हो सके।

संविधान में यह उपबन्ध है कि राष्ट्रपति समय समय पर काँग्रेस को संयुक्त राज्य की स्थिति के विषय में सूचित करता रहे और उसके द्वारा विचार के लिए ऐसे विधायी प्रस्तावों की सिफारिश करता रहे जिन्हें वह आवश्यक और उपयोगी समझे। इसी आधार पर राष्ट्रपति काँग्रेस को सन्देश (messages) भेजता है और उनके द्वारा वह काँग्रेस को संघ की स्थिति (State of the Union) के विषय में सूचना देता रहता है, इस प्रकार के सन्देश वह प्रतिवर्ष काँग्रेस का सत्र प्रारम्भ होने पर भेजता है, जिनमें वह देश की स्थिति, उसके सामने आने वाली प्रमुख समस्याओं

और उनके निराकरण के लिए अपने सुझाव आदि देता है। इन वार्षिक सन्देशों के अतिरिक्त सत्र के दौरान में वह समय-समय पर और भी सन्देश भेजता है। इन सन्देशों में वह विधायी प्रस्ताव सुझाता है और इन सुझावों का कांग्रेस मान करती है। प्रतिवर्ष कांग्रेस उसके प्रस्तावों के आधार पर अनेक कानून बनाती है।

संविधान में यह भी उपबन्ध है कि प्रत्येक विधेयक जिसे प्रतिनिधि सदन और सीनेट ने पास कर दिया हो, राष्ट्रपति के सम्मुख पेश किया जायगा। राष्ट्रपति को विधेयकों के सम्बन्ध में दो प्रकार की प्रतिषेध शक्ति प्राप्त है। पहले, जबकि कांग्रेस का सत्र चल रहा हो, वह विधेयक प्रस्तुत किये जाने के दस दिन के भीतर (रविवार को छोड़कर) उसे उचित समझे तो अपने सुझाव अथवा आक्षेपों सहित उस सदन के पास लौटा सकता है, जिसमें वह आरम्भ हुआ हो। यदि कांग्रेस के दोनों सदन उसे दूसरी बार 2/3 के बहुमत से पास कर दें तो इस प्रकार से लौटाया गया विधेयक कानून बन जाता है इस प्रकार उसकी यह प्रतिषेध शक्ति अन्तिम नहीं होती। इस प्रकार से आया हुआ विधेयक, यदि राष्ट्रपति उसे दस दिन के भीतर नहीं लौटाता, उसके हस्ताक्षर बिना भी कानून बन जायेगा। दूसरी, जब कांग्रेस द्वारा पास किये गये विधेयक राष्ट्रपति के पास भेजे जायें और उसके दस दिन के भीतर ही कांग्रेस का सत्र स्थगित हो जाये, तो इन विधेयकों में से राष्ट्रपति जिन पर हस्ताक्षर न करे वे कानून न बन सकेंगे, इसे 'पाकिट वीटो' कहते है, जो एक प्रकार से पूर्ण होती है अर्थात् उन पर कांग्रेस को फिर से विचार करने का अवसर नहीं मिल पाता।

इस प्रकार सन्देशों में सुझाव देकर राष्ट्रपति विधि निर्माण में पहल करता है और अन्त में भी विधेयक कानून बनने से पूर्व राष्ट्रपति के पास हस्ताक्षर के लिए आते है। आजकल राष्ट्रपति ही अधिकतर विधेयकों के लिये कांग्रेस को सुझाव देता है। इसलिए बहुत से लेखक उसे मुख्य कार्यपाल होने के साथ-साथ मुख्य विधायक भी कहते है।[1] यदि राष्ट्रपति किन्हीं विधेयकों के विरोध में होता है तो वह पहले ही बता देता है कि वह उनके विरुद्ध अपनी प्रतिषेध की शक्ति का प्रयोग करेगा। अतएव कांग्रेस पर उसके मत का प्रभाव पड़ता है और कांग्रेस ऐसे विधेयकों को पास नहीं करती। राष्ट्रपति के दल के सदस्य, जो कांग्रेस के भी सदस्य होते है, साधारणतया राष्ट्रपति का समर्थन करते हैं। इस प्रकार वह कांग्रेस को विधि निर्माण कार्य में काफी सीमा तक प्रभावित करता है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति के हाथ में नियुक्तियाँ करने और कार्यपालिका आदेश जारी करने की शक्तियां भी है, जिनके द्वारा वह कांग्रेस तथा विधि निर्माण को प्रभावित करता है। राष्ट्रपति को अनेक संघीय अधिकारियों को नियुक्त करने की शक्ति प्राप्त है। इन अधिकारियों की नियुक्ति करते समय राष्ट्रपति सीनेटरों द्वारा और प्रतिनिधियों को उनके बारे में अपनी बात कहने का अवसर दे देता है। यह स्वाभाविक बात है कि कांग्रेस के सदस्य उन व्यक्तियों के लिये सिफारिश करते है, जिन्होंने उनके निर्वाचन में सहायता दी हो और जिनसे सहायता मिलती रहने की आशा हो। कांग्रेस के सदस्यों की सिफारिश राष्ट्रपति मान सकता है और उससे यह आश्वासन ले सकता है कि वे विधेयक विशेष पास करने में राष्ट्रपति के सुझावों का समर्थन करेंगे।

राष्ट्रपति को केवल कानून बनवाने में कांग्रेस को प्रभावित करने की ही शक्तियां प्राप्त नहीं हैं, वरन् वह कार्यपालिका आदेशों द्वारा कानूनों के अन्तर्गत नियम तथा विनियम भी बनाता अथवा बनवाता है और उन्हें लागू करता है। राष्ट्रपति और प्रशासनिक विभागों के अध्यक्ष नियम

[1] The President is the chief legislator The Constitution puts the President at the beginning and end of the legislative process —Potter Allen M *American Government and Politics* p 197

तथा विनियम का निर्माण करते है। आजकल विधायिकाओ के पास इतना समय नहीं होता कि प्रत्येक विधेयक बनाते समय व उसकी सभी बातो पर विस्तार से विचार करें। कानून के अन्तर्गत नियम और विनियम बनाने का काय यंग भी तकनीकी होता है, जिसे सरकारी अधिकारी अधिक कुशलता से कर सकते हैं। ऐसे कार्यपालिका आदेश का सम्बन्ध शासन के सभी क्षेत्रो म प्रशासन की व्याख्या से होता है, उदाहरण के लिए डाक सेवा, बाहर से आकर बसने वाले व्यक्तियों की सेवा, आयात निर्यात महसूल इकट्ठा करना, आन्तरिक आय इत्यादि। इन नियमो और विनियमों का उद्देश्य कानूनों की पूर्ति अथवा व्याख्या करना होता है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति और प्रशासन विभागो के अध्यक्ष प्रशासनिक अधिकारियो के आचरण सम्बन्धी अनेक नियम और विनियम बनाते हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर राष्ट्रपति का विधि निर्माण मे बहुत ही महत्त्वपूर्ण भाग रहता है। कुछ लेखको ने इसी कारण उसे मुख्य विधायक बताया है। चूँकि कोई भी विधेयक कानून बनने से पूर्व उसके हस्ताक्षर के लिए भेजा जाता है और वह उसके सम्बन्ध म ऊपर वर्णित दो प्रकार के प्रतिषेधो मे से किसी एक का प्रयोग कर सकता है, अतएव मनरो के अनुसार राष्ट्रपति पद एक प्रकार से तीसरा विधायी सदन बन गया है, यद्यपि प्रतिषेध शक्ति का उद्देश्य कार्यपालिका को अपने बचाव हेतु एक प्रकार का अस्त्र प्रदान करना था।[1] राष्ट्रपति की प्रतिषेध शक्ति का एक बड़ा दोष यह है कि यह सम्पूर्ण विधेयक पर लागू होती है, उसकी किसी धारा या मद पर नही। इसका अर्थ यह है कि राष्ट्रपति सम्पूर्ण विधेयक स्वीकार करे या उसे अस्वीकार करे।

राष्ट्रपति की केबिनेट—राष्ट्रपति के निर्वाचन के शीघ्र बाद ही राष्ट्रपति अपनी केबिनेट के सदस्यो को चुनता है। सदस्यो के चुनाव म साधारणतया राष्ट्रपति इन बातो का ध्यान रखता है—(1) किसी एक-दो व्यक्तियो ने राष्ट्रपति के निर्वाचन म इसी आधार पर सक्रिय साथ दिया हो कि उन्हे केबिनेट मे लिया जायगा, अथवा हो सकता है कि किसी प्रतिद्वंद्वी ने दल के नाम निदेशन सम्मेलन मे अपने नाम को राष्ट्रपति के पक्ष म इसी आश्वासन पर वापस लिया हो कि उसे केबिनेट मे स्थान दिया जायेगा। (2) अपने चुनाव द्वारा राष्ट्रपति यह भी प्रयत्न करता है कि वह दल के प्रमुख विभागो को केबिनट मे प्रतिनिधित्व दे, जिससे दल की एकता बनी रहे। (3) राष्ट्रपति के अपने ऐसे मित्र हो सकते हैं जिन्हे वह केबिनेट की सदस्यता का मान देना चाहे। (4) सदस्यो के चुनाव मे देश के भौगोलिक प्रदेशो के प्रतिनिधित्व पर भी ध्यान दिया जाता है। (5) विभिन्न प्रमुख वर्गों अथवा हितो को भी प्रतिनिधित्व देने का ध्यान रखा जाता है। (6) चुने जाने वाले सदस्यो के विशेष ज्ञान व अनुभव का भी ध्यान रहता है। (7) राष्ट्रपति के सामने मुख्य ध्यान इस बात का रहता है और रहना चाहिए कि उसकी केबिनेट के सदस्य ऐसे हों जो सामजस्य के साथ काय कर सकें, क्योकि केबिनेट को एक प्रकार से राष्ट्रपति का परिवार कहा जाता है।

जब ब्रिटेन का प्रधानमन्त्री अपनी केबिनेट के सदस्यो म केवल पहला होता है संयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति केबिनेट निर्माण तथा उसकी काय प्रणाली मे एक प्रकार से स्थिति का पूर्ण स्वामी होता है। संयुक्त राज्य अमरीका मे राष्ट्रपति को अपनी केबिनेट के सदस्यो को चुनने मे प्राय पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है और उसकी स्थिति प्रधानमन्त्री कितना ही प्रभावशाली क्यो न हो, दल के मुख्य नेताओ को नही भुला सकता और उनकी छाँट दल के बाहर वाले व्यक्तियों से नही हो सकती, किन्तु सयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति दल के बन्धनो से ही बाहर नही आ

[1] Munro W B *The Government of the United States* p 178

सकता, वह तो ऐसे व्यक्तियो को भी केबिनेट मे सम्मिलित कर सकता है जिनका राजनीति से विशेष सम्बन्ध न रहा हो। परन्तु राष्ट्रपति की अपने सदस्यो के चुनाव मे यह स्वतन्त्रता केबिनेट के अपेक्षाकृत कम महत्त्व की सूचक है। यह सच है कि राष्ट्रपति को केबिनेट के सदस्यो के चुनाव मे बहुत अधिक स्वतन्त्रता रहती है, किन्तु उस पर विभिन्न प्रकार के दबाव पडते हैं जिनका कि उन्हे ध्यान रखना ही पडता है। यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि राष्ट्रपति जिन नामो को छाटता है उन पर सीनेट का अनुसमर्थन आवश्यक है। साधारणतया सीनेट उसके चुनाव को स्वीकार कर लेती है। साधारण रूप मे केबिनेट के सभी सदस्यो का पद समान है, फिर भी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट को अन्य सहयोगियो की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

राष्ट्रपति और केबिनेट—केबिनेट के सदस्यो के काय तीन प्रकार के हैं—पहला, वे राष्ट्रपति के परामशदाता हैं और राष्ट्रपति को प्रशासन कार्यों के सम्बन्ध मे आवश्यक परामश व सहायता देते हैं। दूसरे, वे अपने-अपने विभागो के अध्यक्ष होते हैं। उनका यह उत्तरदायित्व है कि वे अपने विभागो मे होने वाले सभी प्रशासनिक कार्यों की देख-रेख करे, नीति निर्धारित करें, इत्यादि। तीसरे, उनका यह भी उत्तरदायित्व है कि वे अपने अपने विभाग के लिए आवश्यक विधायी प्रस्तावो का सुझाव दें और उनका प्रारूप भी तैयार करायें। अब प्रथा यह पड गई है कि राष्ट्रपति केबिनेट की नियमित रूप से प्रति सप्ताह एक मीटिंग बुलाता है, यद्यपि सकट काल मे इनकी मीटिंग और भी जल्दी जल्दी होती है। राष्ट्रपति ट्रूमेन ने यह प्रथा डाली कि केबिनेट की मीटिंग शुक्रवार को दोपहर बाद एक बजे हुआ करे, यह प्रथा अब भी जारी है। केबिनेट की बैठक म किन विषयो पर विचार होगा तथा उसमे क्या काय होगा ? इसे निर्धारित करना राष्ट्रपति का काय है। केबिनेट के सभी विचार, वाद विवाद और मतदान आदि अनौपचारिक होते है, यद्यपि अब प्राय सभी महत्त्वपूण और अन्य मामलो पर केबिनेट मे विचार होता है। राष्ट्रपति ट्रूमेन ने साप्ताहिक बैठको को अधिक उपयोगी बनाने की दृष्टि से एजेन्डा पहले प्रसारित करने की प्रथा डाली। राष्ट्रपति आइजनहॉवर ने इस प्रथा को जारी रखने के साथ साथ केबिनेट सचिवालय भी स्थापित किया। अब केबिनेट के सदस्य जिन विषयो पर विचार कराना चाहे, वे उन्हे काय सूची मे सम्मिलित कराने के लिए केबिनेट के सेक्रेटरी के पास भेज सकते हैं। बैठक की कायवाही तथा उन्ही प्रश्नो पर हुए मतदान का कोई रेकाड नही रखा जाता। केबिनेट की कायवाही व निणय के बारे मे केवल राष्ट्रपति ही जनता अथवा पत्रकारो को कोई सूचना दे सकता है।

वास्तव मे केबिनेट के सदस्य राष्ट्रपति के परामशदाता हैं, यद्यपि वे कांग्रेस को अपभिन सूचना देते हैं, उसकी समितियो के सामने गवाही देते हैं, सावजनिक भाषण देते हैं और अपने अपने विभाग की नीति म पहल भी करते हैं। राष्ट्रपति जब चाहे उनसे परामश लेता है और जैसा चाहे निणय स्वय करता है, अर्थात् वह उनके परामश को मानने के लिए बाध्य नही है। कहा जाता है कि एक बार राष्ट्रपति लिकन ने किसी प्रश्न पर केबिनेट के तत्कालीन सातों सदस्यों का मत जाना और उन सभी ने 'न' मत प्रकट किया, किन्तु फिर भी राष्ट्रपति ने उस पर 'हाँ' मे अपना निणय दिया। राष्ट्रपति और केबिनेट का सम्बन्ध ब्रिटिश प्रधानमन्त्री और उसकी केबिनेट से सवथा भिन्न है। जबकि राष्ट्रपति की केबिनेट केवल परामर्शदाताओं का निकाय है, प्रधानमन्त्री की केबिनेट के सदस्य उसके सहयोगी होते हैं और केबिनेट [illegible] लिए उत्तरदायी होती है, सयुक्त राज्य अमरीका म [illegible] राष्ट्रपति पर [illegible] है।[1]

[1] 'The Cabinet is a body of advisers to the President, [illegible] is not a Co[illegible] with whom he has to work and upon whose [illegible] he depends [illegible] cabinet responsibility does not exis[illegible] —Laski, H. J., [illegible]

अमरीकी केबिनेट ब्रिटिश केबिनेट की भांति 'सरकार' नही है, और जैसे राष्ट्रपति इस बात मे स्वतन्त्र है कि वह किसी मामले को केबिनेट के सामने विचार हेतु रखे या न रखे, उसी प्रकार वह उसके ऊपर अन्तिम निर्णय लेने म स्वतन्त्र है।[1] अमरीकी केबिनेट और ब्रिटिश केबिनेट के बीच अग्रलिखित बातो पर अन्तर है (1) अमरीकी केबिनेट के सदस्य राष्ट्रपति के सहयोगी नहीं होते, उसके अधीन रहते हैं। (2) अमरीकी केबिनेट के सदस्य, राष्ट्रपति की भांति, विधायिका के सदस्य नही होते, और (3) दोनो देशो की केबिनट के बीच आकार और रचना का भी अन्तर है।[2]

केबिनेट के निर्णय भी परामर्श से अधिक कुछ नही होते। ऐसा कहा जाता है कि राष्ट्रपति एंड्रयू जेक्सन की 'अन्तरग केबिनेट' (kitchen Cabinet) साधारण केबिनेट से अधिक प्रभावशाली थी अर्थात् राष्ट्रपति उसके परामर्श को महत्त्व देता था। केबिनेट को राष्ट्रपति की परछाई मे अपनी अवधि पूरी करनी होती है, यदि कोई सदस्य मतभेद होन पर त्याग-पत्र भी दे तो उसका राष्ट्रपति पर कोई प्रभाव नही पडता। राष्ट्रपति किसी भी सदस्य को जब चाहे हटा सकता है। अधिकतर केबिनेट के सदस्यो के लिए तो राजनीतिक नेतृत्व उनके जीवन म एक अन्तर्काल होता है, अर्थात् अपनी अवधि पूर्ण होने पर वे अपने जीवन-कार्य म लग जाते हैं। परन्तु यहाँ यह भ्रम नही होना चाहिए कि केबिनेट के सदस्यो का परामर्श प्रभावी नही होता। साधारणतया राष्ट्रपति उनके परामर्श को स्वीकार करता है। विभागीय कार्यों के बारे मे उनका उत्तरदायित्व वास्तविक है।

राष्ट्रपति की शक्तियों के स्रोत—उसकी शक्तियो के विभिन्न स्रोत हैं, किन्तु उनमें अभी तक सांविधानिक उपबन्ध सबसे प्रमुख है। संविधान की दूसरी धारा मे लिखा है—'संयुक्त राज्य की कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति मे निहित होगी, राष्ट्रपति सेना और नाविक सेना का सेनापति होगा, वह राजदूतो, न्यायाधीशो तथा अन्य उच्च संघीय अधिकारियो की नामजदगी करेगा और उन्हे सीनेट के परामर्श व सहमति से नियुक्त करेगा, वह लिखित रूप मे कार्यपालिका विभागों के मुख्य अधिकारियो की सम्मति माँग सकता है, वह राजदूतो और सार्वजनिक उच्च अधिकारियों (public ministers) को मिलने का अवसर देता है, और वह समय समय पर देश की स्थिति के बारे म कांग्रेस को सूचना देता है।' इन सभी उपबन्धो की व्याख्या यथास्थान की जा चुकी है।

राष्ट्रपति की शक्तियो का दूसरा महत्त्वपूर्ण स्रोत कांग्रेस द्वारा निर्मित कानून हैं, जिनके अन्तर्गत राष्ट्रपति की शक्तियाँ काफी विस्तृत हुई हैं। वास्तव मे कांग्रेस द्वारा निर्मित सभी कानूनों को लागू करने का उत्तरदायित्व राष्ट्रपति पर है और प्रत्येक कानून किसी न किसी रूप मे उसके अधिकारो व कार्य क्षेत्र मे वृद्धि करता है। प्रत्येक कानून के अन्तर्गत उसे साधारणतया कुछ अधिकारियो की नियुक्ति करनी होती है, वह कानून की रूपरेखा के अन्तर्गत अनेक नियम और विनियम बनाता अथवा बनवाता है और अनेक आदेश जारी करता है। आपात्काल तथा युद्ध काल मे इस प्रकार से राष्ट्रपति की शक्तियो मे वृद्धि हुई है। राष्ट्रपति की शक्तियो मे वृद्धि का तीसरा महत्त्वपूर्ण स्रोत संघीय न्यायालयो के निर्णय हैं। उदाहरण के लिए संविधान ने राष्ट्रपति को क्षमादान की शक्ति प्रदान की है, परन्तु संविधान म यह स्पष्ट नही है कि वह अपराधियों को दण्ड दिये जाने से पूर्व भी क्षमा कर सकता है या नही। सर्वोच्च न्यायालय ने एक निर्णय म उसके इस अधिकार को वैध माना है। ऐसे ही संविधान मे कहा गया है कि वह अनेक अधिकारियो को सीनेट के परामर्श और सहमति से नियुक्त करेगा, यह स्पष्ट न था कि उनको पद से हटाये जाने

[1] The American Cabinet is not a *government* as is the British and just as the President is free to submit or not to submit any given matter for consideration so is he free to make any final disposition of it that he chooses —Bailey Sydney D *Aspects of American Government* p 30

[2] Stewart M *Modern Forms of Government* pp 96–97

के लिए सीनेट की सहमति आवश्यक है या नही। अब यह निणय हो गया है कि राष्ट्रपति बिना परामश और सहमति के उन्हे पदच्युत कर सकता है।

अन्त मे, उसकी शक्तियो का चौथा स्रोत चलन और प्रथाएँ है। वह अब दल का नेता होता है, उसके परामश स राष्ट्रीय समिति का सभापति नियुक्त किया जाता है और दल की सभी कायवाहियो मे उसके परामश को बहुत महत्त्व दिया जाता है। अब राष्ट्रपति अपने दल का ही नही वरन् सम्पूण राष्ट्र का नेता होता है। निर्वाचन के बाद से राष्ट्रपति को दलीय दृष्टि से नही देखा जाता है। सम्पूण राष्ट्र उससे नेतृत्व की आशा करता है और उसके कार्यो मे सभी का समथन रहता है। राष्ट्रपति का नेतृत्व राष्ट्र के लिए बहुत ही आवश्यक है, वही एक ऐसा लोकप्रिय आधार पर निर्वाचित अधिकारी है जिससे राष्ट्र शाति तथा युद्धकाल मे और सावजनिक जीवन के सभी क्षेत्रो मे नेतृत्व प्राप्त करता है। राष्टपति राष्ट्रीय एकता का प्रतीक और उसका व्यक्तिगत रूप है। राष्ट्रपति किसी एक वग और हित का प्रतिनिधि नही होता, वह सभी वर्गो और राष्ट्रीय हिता मे सामजस्य पैदा करता है। अपने वक्तव्यो, प्रेस सम्मेलनो, रेडियो तथा टेलीविजन पर ब्रॉडकास्ट किये गये भाषणा द्वारा राष्ट्रपति जनता से सीधा सम्पक बनाये रखता है और जनमत का समथन प्राप्त करता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि राष्ट्रपति का पद अमरीकियो के लिए सबसे ऊँचा है और ससार मे सबसे शक्तिशाली पद है। राष्ट्रपति पद सयुक्त राज्य अमरीका की विश्व के लिए सबसे महान् देन है। इसमे कोई सन्देह नही कि अब राष्ट्रपति की शक्तिया इतनी विस्तृत हो गयी है कि वह ऑग के शब्दो मे ससार का सबसे महान शासक हो गया है। यहा तक उल्लेखनीय है कि जबकि ब्रिटेन का राजा केवल राज्य करता है और कुछ समय पूव तक फ्रास का राष्ट्रपति न राज्य करता था और न शासन ही, सयुक्त राज्य का राष्ट्रपति राज्य और शासन दोनो करता है। यह सच है कि वह ब्रिटेन के राजा की तरह राज्य का प्रतीक होता है और सभी समारोहो पर सर्वाधिक महत्त्वपूण स्थान पाता है। वह सयुक्त राज्य अमरीका मे प्रथम नागरिक होता है, उसका राजकीय निवास अर्थात् व्हाइट हाउस शान म ब्रिटेन के बकिंघम महल से कम नही है। अपने सवसम्मानित स्थान के कारण और शक्तियो के आधार पर राष्ट्रपति पद मे राजा और प्रधानमन्त्री का मेल है वेजहॉट द्वारा वर्णित ब्रिटिश शासन के दोनो अग—प्रतिष्ठित और कायकुशल राष्ट्रपति के पद म मिलते है।

सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति के विषय मे लास्की का अग्रलिखित कथन अत्यन्त अथमय है जिसकी व्याख्या करना आवश्यक प्रतीत होता है। सयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति एक राजा से कम व अधिक दोना है, साथ ही वह एक प्रधानमन्त्री से भी कम और अधिक दोना ही है।[1] ऊपर यह बताया गया है कि सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति का पद सबसे अधिक सम्मानित है और राष्ट्रपति राजा की तरह राज्य का प्रमुख होता है, परन्तु वह जनता द्वारा निर्वाचित अधिकारी है, जो चार या आठ वष तक अपने पद पर रहता है। चुनाव से पूव और बाद मे वह एक राजनीतिक दल का ही नेता रहता है अतएव अमरीकी समाज मे उसका स्थान सर्वोच्च होते हुए भी राजा के समान नही है। इस दृष्टि से वह राजा से कम होता है, परन्तु उसकी शक्तियाँ राजा से कही अधिक और वास्तविक है। यदि हम उसकी तुलना प्रधानमन्त्री से करें तो वह इन बाता म प्रधानमन्त्री से अधिक है—राष्ट्रपति राज्य का प्रतीक, मुख्य कायपाल, मुख्य प्रशासक व मुख्य सनापति होता है और उसकी केबिनेट के सदस्य उसके सहयोगी नही वरन्

[1] The President of the United States is both more and less than king he is also both more and less than a Prime Minister —Laski H J *op cit* p 23

अमरीकी केबिनेट ब्रिटिश केबिनेट की भांति 'सरकार' नही है, और जैसे राष्ट्रपति इस बात मे स्वतन्त्र है कि वह किसी मामले को केबिनेट के सामने विचार हेतु रखे या न रखे, उसी प्रकार वह उसके ऊपर अंतिम निणय लेने मे स्वतन्त्र है।[1] अमरीकी केबिनेट और ब्रिटिश केबिनेट के बीच अग्रलिखित बातो पर अन्तर है (1) अमरीकी केबिनेट के सदस्य राष्ट्रपति के सहयोगी नहा होते, उसके अधीन रहते हैं। (2) अमरीकी केबिनेट के सदस्य, राष्ट्रपति की भांति, विधायिका के सदस्य नही होते, और (3) दोनो देशो की केबिनेट के बीच आकार और रचना का भी अन्तर है।[2]

केबिनेट के निणय भी परामश से अधिक कुछ नही होते। ऐसा कहा जाता है कि राष्ट्रपति एन्ड्रयू जेक्सन की 'अन्तरग केबिनेट' (kitchen Cabinet) साधारण केबिनेट से अधिक प्रभावशाली थी अर्थात् राष्ट्रपति उसके परामश को महत्त्व देता था। केबिनेट को राष्ट्रपति की परछाइ मे अपनी अवधि पूरी करनी होती है, यदि कोई सदस्य मतभेद होने पर त्याग-पत्र भी दे तो उसका राष्ट्रपति पर कोई प्रभाव नही पडता। राष्ट्रपति किसी भी सदस्य को जब चाहे हटा सकता है। अधिकतर केबिनेट के सदस्यो के लिए तो राजनीतिक नेतृत्व उनके जीवन मे एक अन्तर्काल होता है, अर्थात् अपनी अवधि पूण होने पर वे अपने जीवन-काय मे लग जाते हैं। परन्तु यहा यह भ्रम नही होना चाहिए कि केबिनेट के सदस्यो का परामश प्रभावी नही होता। साधारणतया राष्ट्रपति उनके परामश को स्वीकार करता है। विभागीय कार्यों के बारे मे उनका उत्तरदायित्व वास्तविक है।

राष्ट्रपति की शक्तियों के स्रोत—उसकी शक्तियो के विभिन्न स्रोत हैं, किन्तु उनमे अभी तक सांविधानिक उपबन्ध सबसे प्रमुख हैं। सविधान की दूसरी धारा मे लिखा है—'सयुक्त राज्य की कायपालिका शक्ति राष्ट्रपति मे निहित होगी, राष्ट्रपति सेना और नाविक सेना का सेनापति होगा, वह राजदूतो, न्यायाधीशो तथा अन्य उच्च सघीय अधिकारियो की नामजदगी करेगा और उन्हे सीनेट के परामर्श व सहमति से नियुक्त करेगा, वह लिखित रूप मे कायपालिका विभागो के मुख्य अधिकारियो की सम्मति मांग सकता है, वह राजदूतो और सावजनिक उच्च अधिकारियों (public ministers) को मिलने का अवसर देता है, और वह समय समय पर देश की स्थिति के बारे मे काग्रेस को सूचना देता है।' इन सभी उपबन्धो की व्याख्या यथास्थान की जा चुकी है।

राष्ट्रपति की शक्तियो का दूसरा महत्त्वपूण स्रोत काग्रेस द्वारा निर्मित कानून हैं, जिनके अन्तगत राष्ट्रपति की शक्तियाँ काफी विस्तृत हुई हैं। वास्तव म काग्रेस द्वारा निर्मित सभी कानूनों को लागू करने का उत्तरदायित्व राष्ट्रपति पर है और प्रत्येक कानून किसी न किसी रूप म उसके अधिकारो व काय क्षेत्र म वृद्धि करता है। प्रत्येक कानून के अन्तगत उसे साधारणतया कुछ अधिकारिया की नियुक्ति करनी होती है, वह कानून की रूपरेखा के अन्तगत अनेक नियम और विनियम बनाता अथवा बनवाता है और अनेक आदेश जारी करता है। आपातकाल तथा युद्ध काल मे इस प्रकार से राष्ट्रपति की शक्तियो म वद्धि हुई है। राष्ट्रपति की शक्तिया मे वद्धि का तीसरा महत्त्वपूण स्रोत सघीय न्यायालयो के निणय हैं। उदाहरण के लिए सविधान ने राष्ट्रपति को क्षमादान की शक्ति प्रदान की है, परन्तु सविधान मे यह स्पष्ट नही है कि वह अपराधियो को दण्ड दिये जाने से पूव भी क्षमा कर सकता है या नही। सर्वोच्च न्यायालय ने एक निणय में उसके इस अधिकार को वैध माना है। ऐसे ही सविधान मे कहा गया है कि वह अनेक अधिकारियो को सीनेट के परामश और सहमति से नियुक्त करेगा, यह स्पष्ट न था कि उनको पद से हटाये जाने

[1] The American Cabinet is not a *government* as is the British and just as the President is free to submit or not to submit any given matter for consideration so is he free to make any final disposition of it that he chooses —Bailey Sydney D *Aspects of American Government* p 30

[2] Stewart M *Modern Forms of Government*, pp 96-97

के लिए सीनेट की सहमति आवश्यक है या नही। अब यह निणय हो गया है कि राष्ट्रपति बिना परामश और सहमति के उन्हे पदच्युत कर सकता है।

अन्त मे, उसकी शक्तियो का चौथा स्रोत चलन और प्रथाएँ है। वह अब दल का नेता होता है, उसके परामश से राष्ट्रीय समिति का सभापति नियुक्त किया जाता है और दल की सभी कायवाहियो मे उसके परामश को बहुत महत्त्व दिया जाता है। अब राष्टपति अपने दल का ही नही वरन् सम्पूण राष्ट्र का नेता होता है। निर्वाचन के बाद से राष्ट्रपति को दलीय दृष्टि से नही देखा जाता है। सम्पूण राष्ट्र उससे नेतृत्व की आशा करता है और उसके कार्यों मे सभी का समयन रहता है। राष्ट्रपति का नेतृत्व राष्ट्र के लिए बहुत ही आवश्यक है, वही एक ऐसा लोक प्रिय आधार पर निर्वाचित अधिकारी है जिससे राष्ट्र शान्ति तथा युद्धकाल मे और सावजनिक जीवन के सभी क्षेत्रो मे नेतृत्व प्राप्त करता है। राष्ट्रपति राष्ट्रीय एकता का प्रतीक और उसका व्यक्तिगत रूप है। राष्ट्रपति किसी एक वग और हित का प्रतिनिधि नही होता, वह सभी वर्गों और राष्ट्रीय हितो मे सामजस्य पैदा करता है। अपने वक्तव्यो, प्रेस सम्मेलनो, रेडियो तथा टेलीविजन पर ब्रॉडकास्ट किये गये भाषणो द्वारा राष्ट्रपति जनता से सीधा सम्पक बनाये रखता है और जनमत का समथन प्राप्त करता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि राष्ट्रपति का पद अमरीकियो के लिए सबसे ऊँचा है और ससार मे सबसे शक्तिशाली पद है। राष्ट्रपति पद सयुक्त राज्य अमरीका की विश्व के लिए सबसे महान् देन है। इसमे कोई सन्देह नही कि अब राष्ट्रपति की शक्तिया इतनी विस्तृत हो गयी है कि वह ऑग के शब्दो मे ससार का सबसे महान शासक हो गया है। यहाँ तक उल्लेखनीय है कि जबकि ब्रिटेन का राजा केवल राज्य करता है और कुछ समय पूव तक फ्रास का राष्ट्रपति न राज्य करता था और न शासन ही, सयुक्त राज्य का राष्ट्रपति राज्य और शासन दोनो करता है। यह सच है कि वह ब्रिटेन के राजा की तरह राज्य का प्रतीक होता है और सभी समारोहो पर सर्वाधिक महत्त्वपूण स्थान पाता है। वह सयुक्त राज्य अमरीका मे प्रथम नागरिक होता है उसका राजकीय निवास अर्थात् व्हाइट हाउस शान मे ब्रिटेन के बकिंघम महल से कम नही है। अपने सवसम्मानित स्थान के कारण और शक्तियो के आधार पर राष्ट्रपति पद मे राजा और प्रधानमन्त्री का मेल है बेजहॉट द्वारा वर्णित ब्रिटिश शासन के दोनो अग—प्रतिष्ठित और कायकुशल राष्ट्रपति के पद मे मिलते हैं।

सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति के विषय मे लास्की का अग्रलिखित कथन अत्यन्त अथमय है जिसकी व्याख्या करना आवश्यक प्रतीत होता है। सयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति एक राजा से कम व अधिक दोनो है, साथ ही वह एक प्रधानमन्त्री से भी कम और अधिक दोनो ही है।[1] ऊपर यह बताया गया है कि सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति का पद सबसे अधिक सम्मानित है और राष्ट्रपति राजा की तरह राज्य का प्रमुख होता है, परन्तु वह जनता द्वारा निर्वाचित अधिकारी है, जो चार या आठ वष तक अपने पद पर रहता है। चुनाव से पूव और बाद मे वह एक राजनीतिक दल का ही नेता रहता है, अतएव अमरीकी समाज मे उसका स्थान सर्वोच्च होते हुए भी राजा के समान नही है। इस दृष्टि से वह राजा से कम होता है, परन्तु उसकी शक्तियाँ राजा से कही अधिक और वास्तविक हैं। यदि हम उसकी तुलना प्रधानमन्त्री से करें तो वह इन बातो मे प्रधानमन्त्री से अधिक है—राष्ट्रपति राज्य का प्रतीक, मुख्य कायपाल, मुख्य प्रशासक व मुख्य सेनापति होता है और उसकी केबिनेट के सदस्य उसके सहयोगी नही वरन

[1] The President of the United States is both more and less than king he is also both more and less than a Prime Minister —Laski H J *op cit* p 23

सहायक व परामशदाता होते हैं, जब कि अ य म त्री प्रधानमन्त्री के सहयोगी होते हैं और उनके निणय सवसम्मति अथवा बहुमत से होते हैं, पर तु कुछ बातो मे राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री से कम होता है—राष्ट्रपति का काग्रेस मे विरोध हो सकता है, काग्रेस उसके सुझाये हुए विधायी प्रस्तावों और व्यय के लिए मागे गये धन को अस्वीकार कर सकती है। इसके विपरीत जब तक प्रधानमन्त्री को बहुमत का समथन प्राप्त रहता है उसकी शक्तियाँ अधिनायक के समान होती हैं। सयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति किसी भी समय काग्रेस का प्रधानमन्त्री की तरह स्वामी नही हो सकता। वह नीति मे पहल कर सकता है, पर तु नीति का निय त्रण नही कर सकता। उसकी स्थिति एक अज्ञात समुद्र पर नाविक के समान है, जिसे अपने भाग्य के विषय मे कभी निश्चितता नही होती।

सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति की शक्तिया अत्यधिक विस्तृत और वास्तविक हैं। इस विषय म मनरो ने लिखा है कि अब तक लोकतन्त्र मे किसी भी व्यक्ति ने इतनी अधिक सत्ता का प्रयोग नही किया जितना कि अमरीकी राष्ट्रपति करता है। सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति का प्रभाव विश्वव्यापी है। वुडरो विलसन, फ्रेंकलिन रूजवेल्ट, आइजनहोवर और लिण्डन जॉनसन के शासन-काल इस बात की पुष्टि करते हैं। अमरीकी राष्ट्रपति का काय क्षेत्र सयुक्त राज्य अमरीका की सीमाओ तक परिमित नही है। आज सयुक्त राज्य विश्व के सबसे शक्तिशाली दो राष्ट्रो मे से एक है। ये दोनो ही विश्व राजनीति और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र व सघ मे अपना प्रभाव डालते हैं। सयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति इस दृष्टि से विश्व के सर्वाधिक शक्तिशाली अधिकारियो और प्रभावशाली राजनीतिज्ञो मे सबसे ऊपर है। पर तु पाठको को यह नहा भूलना चाहिए कि सयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति जनता द्वारा निर्वाचित अधिकारी है। वह कभी अधिनायक (Dictator) नहीं बन सकता, वह एक व्यक्ति के स्वेच्छाचारी शासन का प्रतीक नहीं है। उसे शक्तियाँ जनता के प्रत्यक्ष आदेश से प्राप्त होती है और उस पर सावैधानिक सीमायें भी है। इस दृष्टि से वह अपने कार्यो के लिए जनता के प्रति उत्तरदायी होता है। वह जनता का नेता होता है, किन्तु साथ ही जनता का सेवक भी। उसकी शक्तियो पर काग्रेस विशेष रूप से सीनेट और सघीय न्यायालय वास्तविक प्रतिबन्ध लगाते हैं, अतएव वह कभी भी अधिनायक नही बन सकता। 'युद्ध काल म अमरीका का राष्ट्रपति एक सावैधानिक अधिनायक के समान हो जाता है। वह सभी सशस्त्र सेनाओ का निर्देशन करता है, वह राज्यो के सैनिक सगठनो को सघीय सेवा मे प्रयाग कर सकता है, और वह विजित प्रदेश पर शासन करता है जब तक कि काग्रेस उसके लिए कानून द्वारा नागरिक शासन की व्यवस्था न करे।'[1]

2 फ्रान्स के पाँचवे गणतन्त्र मे कायपालिका

ससदात्मक अथवा अध्यक्षात्मक ?—फ्रा स के पाँचवे गणत त्र के सविधान मे ससदात्मक पद्धति को अपनाया गया है। इसके अन्तगत फ्रा स म दो सदन वाली पार्लियामेण्ट स्थापित की गयी है और मन्त्रिमण्डल काफी मात्रा म उसके प्रति उत्तरदायी है। किन्तु प्रधानमन्त्री का चुनाव राष्ट्रपति करता है और राष्ट्रपति को अनेक साधारण व असाधारण शक्तियाँ प्राप्त हैं। इस दृष्टि से फ्रा स का वतमान राष्ट्रपति नाममात्र का राज्याध्यक्ष नहीं है। वह कई बातो म सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति के समान है। म त्री नियुक्त होने पर सदस्यों को पार्लियामेण्ट की सदस्यता त्यागना आवश्यक है इस प्रकार कायपालिका को विधायिका से अलग रखने का प्रयत्न किया गया

[1] In time of war the President resembles a *constitutional dictator* He directs the armed forces in the air on land and on sea he calls the state militias into Federal service he governs conquered territory until Congress provides by law for its civil government. —Ferguson and McHenry *Elements of American Government* p 183

है। डॉरोथी पिकिल्स के मतानुसार सविधान म दो विरोधी सिद्धान्तो को मिलाने का प्रयत्न किया गया है। प्रथम सिद्धान्त गणतन्त्रीय ससदात्मक शासन का है और दूसरा अध्यक्षात्मक शासन का। राज्य और शासन के अध्यक्ष अलग अलग हैं। शासन का निर्देशक प्रधानमन्त्री है जो अपन सहयोगी मन्त्रियो को नियुक्त करने तथा पदच्युत करने का अधिकार रखता है और जो पालियामेन्ट (व्यवहार मे नेशनल एसेम्बली) के प्रति उत्तरदायी है। परन्तु इस पद्धति के विरुद्ध भी कुछ बातें हैं—कार्यपालिका विधि निर्माण के लिए उत्तरदायी है और जब तक कि नेशनल एसेम्बली उसे पराजित करने की सीमा तक न जाय, कार्यपालिका (शासन) पालियामेन्ट की आलोचना पर ध्यान न दे, ऐसा हो सकता है। राष्ट्रपति को इतनी अधिक शक्तियाँ दी गयी हैं कि शासन पर उसका नेतृत्व स्थापित हुआ है। ब्रोगन ने स्पष्ट रूप म कहा है—'यह न तो अमरीकी ढग का अध्यक्षात्मक सविधान है और न अग्रेजी ढग का ससदात्मक सविधान ही, यह तो दोनो का मेल है।' एरन का मत है कि 'शासन वस्तु स्थिति की अपेक्षा कानूनी दृष्टि से ससदात्मक रहेगा।'

राष्टपति पद वतमान सविधान के अन्तगत—जनरल डि गॉले न बहुत समय से 'राष्ट्रपति शासन' (Presidential Government) के पक्ष मे अपन विचार व्यक्त किये थे। ऐसी सरकार मे, जिसका नमूना सयुक्त राज्य अमरीका मे है, राज्य का अध्यक्ष विधायिका से पृथक् होता है। अतएव वतमान सविधान मे किये गये मुख्य परिवतनो का सम्बन्ध राष्ट्रपति के स्थान से है और सविधान की सामान्य प्रवृत्ति राष्ट्रपति की प्रतिष्ठा व शक्तियो को बढाने की ओर है। उसका चुनाव एक बडी सख्या वाले निर्वाचक मण्डल द्वारा होता है, जिसमे ससद के सभी सदस्य स्थानीय प्राधिकरणो के बहुत से प्रतिनिधि और कुछ समुद्रपारीय समुदाय के प्रतिनिधि सम्मिलित रहते हैं। वह सभी मन्त्रियो को नियुक्त करता है, जो मन्त्री बनने पर ससद की सदस्यता से अलग हो जाते हैं तो सरकार या ससद यह प्रस्ताव रख सकती है कि उन पर जन निणय कराया जाय और राष्ट्रपति स्वय यह निणय करता है कि ऐसा होगा या नही। वह अपने निणय द्वारा ही प्रधानमन्त्री तथा ससद के दोनो सदनो के प्रधानो स मन्त्रणा करने के बाद, नेशनल एसेम्बली को विघटित कर सकता है, यद्यपि वष म एक बार से अधिक ऐसा नही किया जा सकता। वह ससद को सन्देश भी भेज सकता है। इन बातो स स्पष्ट होता है कि वतमान सविधान के अन्तगत राष्टपति के पद का महत्त्व पूव की अपेक्षा कई गुना बढ गया है। फ्रास के राष्ट्रपति का पद शासन काय मे प्रधानमन्त्री से अधिक महत्त्वपूण है। राष्ट्रपति राज्य का वास्तविक अध्यक्ष राष्ट्र का प्रतीक, शासन का प्रमुख और राष्ट्रीय पच (arbitre national) है। सविधान से राष्ट्रपति को विभिन्न प्रकार की शक्तियाँ मिली हैं, जो नाममात्र की नही, वास्तविक है।

राष्ट्रपति के काय और उसकी शक्तियाँ—राष्ट्रपति की कुछ शक्तिया अपनी हैं और कुछ शक्तियाँ ऐसी है जिनका वह प्रधानमन्त्री के साथ प्रयोग करता है। धारा 19 मे इस अन्तर को स्पष्ट किया गया है कि कौन से काय राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर से कर सकता है और किन कार्यो के करने मे प्रधानमन्त्री के प्रति हस्ताक्षर आवश्यक है। राष्ट्रपति की अनन्य शक्तियो मे ये प्रमुख हैं—प्रधानमन्त्री का चुनाव करना, नेशनल एसम्बली का विघटन करना, सरकार अथवा पालियामेन्ट द्वारा माँगे किये जान पर लोक निणय का प्रतिषेध करना। पालियामेन्ट के दोनो सदनो को सावजनिक सन्देश भेजना सावैधानिक परिषद् के तीन सदस्यो को नियुक्त करना, सावैधानिक परिषद् से किसी विधेयक अथवा अन्तर्राष्ट्रीय समझौते पर उसकी सावैधानिकता पर निणय देने के लिए प्राथना करना और धारा 16 के अन्तगत आपात्कालीन शक्तिया धारण करना। इनके अतिरिक्त राष्ट्रपति के अन्य कार्यों पर प्रधानमन्त्री तथा सम्बन्धित मन्त्रियो के प्रति हस्ताक्षर होने आवश्यक है। इस समूह मे राष्ट्रपति के वे सभी काय आते है जिन्हे वह राज्य के अध्यक्ष रूप मे करता है। इस रूप मे उसके कार्यों को इन तीन शीषको के अन्तगत रखा जा

सकता है—सभापतित्व करने और मन्त्रणा देने का अधिकार, प्रधानमन्त्री की स्वीकृति के काम करने का अधिकार, आनेखा को वंघ करने का अधिकार। राष्ट्रपति की विभिन्न शक्तियों का सक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित शीर्षको के अन्तगत करना उपयुक्त प्रतीत होता है।

प्रधानमन्त्री का चुनाव करना—प्रधानमन्त्री को राष्ट्रपति छाँटता और नियुक्त करता है। अब ऐसी कोई व्यवस्था नही है कि पालियामेन्ट प्रधानमन्त्री को अधिकार सौंपे, यद्यपि सविधान की धारा 49 मे कहा गया है कि प्रधानमन्त्री मन्त्रि परिषद् द्वारा विचार किए जाने के बाद सरकार के कायक्रम अथवा सामान्य नीति के विषय मे नेशनल एसेम्बली के प्रति सरकार के उत्तरदायित्व की शपथ ले सकता है। प्रधानमन्त्री की नियुक्ति मन्त्रिमण्डल सामूहिक रूप से नेशनल एसेम्बली के प्रति उत्तरदायी रहेगा। इस प्रकार राष्ट्रपति को यह स्वतन्त्रता नही है कि वह जिसे चाहे प्रधानमन्त्री नियुक्त करे, परन्तु जब तक फ्रांस म अनेक राजनीतिक दल रहेंगे और उसमे अनुशासन की कमी रहेगी राष्ट्रपति को प्रधानमन्त्री को चुनने म बहुत सीमा तक विवेक तथा व्यक्तिगत निणय के प्रयोग का अवसर मिलेगा। यदि जनमत उसका समथन करे तो वह नेशनल एसेम्बली को विघटन की धमकी द सकता है जिससे कि वह अपनी पसन्द के उम्मीदवार को उन पर थोप सके।

विघटन की शक्ति—वतमान सविधान द्वारा राष्ट्रपति को नेशनल एसेम्बली के विघटन की शक्ति मिली है। अब राष्ट्रपति केवल अपनी शक्ति से ही विघटन कर सकता है, जबकि 1875 के सविधान के अन्तगत उसके आदेश पर किसी मन्त्री के प्रति हस्ताक्षर होने आवश्यक थ। दूसरे, इस समय सीनेट की सहमति आवश्यक नही है। अब केवल दो प्रतिबन्ध लगे हैं—(1) एक बार विघटन किये जाने पर एक साल के भीतर नेशनल एसेम्बली का दूसरी बार विघटन नही किया जा सकता। (2) धारा 16 के अन्तगत आपातकाल म विघटन नही किया जा सकता। विघटन के अधिकार का प्रयोग अब दो उद्देश्यों से किया जा सकता है—पहला, एसेम्बली और मन्त्रिमण्डल के बीच उत्पन्न हुए विवाद का अन्त करने के लिए और दूसरे, अपने और एसेम्बली का समथन प्राप्त प्रधानमन्त्री के बीच उत्पन्न हुए विवाद का अन्त करने के लिए।

सविधान के सम्बन्ध मे शक्तियाँ—राष्ट्रपति साविधानिक परिषद् के सदस्यों म से तीन को नियुक्त करता है, इन्हीं तीनो मे से एक सभापति होता है, जिसे सम मतों के आने पर निर्णायक मत देने का अधिकार प्राप्त है। किसी विधेयक या अन्तर्राष्ट्रीय समझौते की पुष्टि होने से पूर्व साविधानिक परिषद् से राष्ट्रपति उनकी साविधानिकता के सम्बन्ध म निर्णय देने की प्राथना कर सकता है। सविधान की धारा 5 मे कहा गया है कि गणतन्त्र का राष्ट्रपति यह देखेगा कि सविधान का आदर होता है। वह अपने पच निणय की शक्ति का प्रयोग कर शासन अधिकारियों द्वारा नियमित कत्तव्य पालन और राज्य की निरन्तरता को सुरक्षित रखेगा। वह राष्ट्रीय स्वतन्त्रता, राज्य भूमि की अखण्डता और समुदाय सम्बन्धी समझौतों व सन्धियों की प्रत्याभूति देने वाला होगा। इस आधार पर कुछ लेखकों ने उसे राष्ट्रीय सविधान के सम्बन्ध मे पच बताया है। इस रूप मे राष्ट्रपति के काय पूव स्थिति की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। पिकिल्स ने लिखा है कि डि गॉले अपने इस काय के क्षेत्र मे राष्ट्रपति की उन शक्तियों को भी सम्मिलित करता है जिनका राष्ट्र से अपील करने या अपील न करने देने के अधिकार के रूप म वणन किया जा सकता है। धारा 18 के अनुसार राष्ट्रपति को अधिकार है कि वह अपने आदेशों को दोनों सदनों मे पढ़े जाने का आदेश दे। प्रधानमन्त्री अथवा पालियामेन्ट द्वारा प्राथना किये जाने पर वह किसी सरकारी विधेयक पर लोक निणय कराने की प्राथना को अस्वीकार कर दे (धारा 11)। परन्तु लेखक के अनुसार इनमे से कोई भी अधिकार ऐसा नही है जो राष्ट्रपति को शासन की प्रक्रिया म प्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप करने का अधिकार देता हो।

पार्लियामेन्ट को भेजे जाने वाले सन्देशों के सम्बन्ध में राष्ट्रपति का अधिकार भी सर्वथा नया नहीं है। परन्तु अब राष्ट्रपति द्वारा पार्लियामेन्ट को सम्बोधित सन्देशों पर किसी मन्त्री के प्रति हस्ताक्षर की आवश्यकता नहीं है। जब राष्ट्रपति धारा 16 के अन्तर्गत आपातकालीन शक्तियों को धारण करेगा तो उसे राष्ट्र को इस सम्बन्ध में अपने निश्चयों की सूचना देने का अधिकार होगा। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि साधारण काल में राष्ट्रपति प्रधान मन्त्री की स्वीकृति के बिना सीधे राष्ट्र को सम्बोधन नहीं कर सकता।

अन्य साधारण शक्तियाँ—राष्ट्रपति को प्रधानमन्त्री के अतिरिक्त कई उच्च पदों पर स्वयं अथवा प्रधानमन्त्री के परामर्श से नियुक्ति का अधिकार है। राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री के अतिरिक्त उसके सहयोगी मन्त्रियों की भी नियुक्ति करता है। वह राज्य के उच्च नागरिक व सैनिक पदों पर नियुक्तियाँ करता है। धारा 64 के अनुसार राष्ट्रपति न्यायिक अधिकारियों की स्वतन्त्रता की प्रत्याभूति देगा। धारा 52 के अनुसार राष्ट्रपति सन्धियों के सम्बन्ध में वार्ता करता है और उनकी सम्पुष्टि भी करता है। ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों के सम्बन्ध में जिनकी सम्पुष्टि आवश्यक नहीं है, राष्ट्रपति को उनके सम्बन्ध में की गई वार्ता से सूचित रखा जाता है। अब सन्धियों के सम्बन्ध में वार्ता राष्ट्रपति द्वारा की जाती है, जबकि पूर्वगामी संविधान के अन्तर्गत उसे ऐसी वार्ता से सूचित रखा जाता था। विदेशों में नियुक्त किये जाने वाले राजदूतों को राष्ट्रपति प्रमाणपत्र देता है और विदेशी राजदूतों के प्रमाणपत्र उसी के नाम में आते हैं।

आपातकालीन शक्तियाँ—धारा 16 के अन्तर्गत राष्ट्रपति को महत्त्वपूर्ण आपातकालीन शक्तियाँ प्राप्त हैं। इस धारा में लिखा है—'जब गणतन्त्र की संस्थाओं, राष्ट्र की स्वतन्त्रता, उसकी भूमि की अखण्डता अथवा उसके द्वारा किये गये अन्तर्राष्ट्रीय वायदों (commitments) की पूर्ति को गम्भीर और तुरन्त खतरा हो और जबकि संविधान के अनुसार स्थापित सार्वजनिक अधिकारियों का नियमित कार्य सम्पादन रुक जाये, इन परिस्थितियों में राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री व दोनों सदनों के सभापतियों और सांविधानिक परिषद् से मन्त्रणा कर आवश्यक पग उठायेगा। वह सन्देश द्वारा राष्ट्र को उनके विषय में सूचित करेगा। इन पगों के सम्बन्ध में सांविधानिक परिषद् से मन्त्रणा की जायेगी। पार्लियामेन्ट को एकत्रित होने का अधिकार रहेगा। आपात् कालीन शक्तियों के प्रयोग काल में नेशनल एसेम्बली का विघटन न किया जायेगा।'

उपर्युक्त धारा के अनुसार राष्ट्रपति को जब वह चाहे आपातकाल की घोषणा करने का अधिकार है। यदि वह साधारण काल में ऐसा करेगा तो वह संविधान की भावना के विरुद्ध कार्य होगा। आपातकालीन घोषणा के पूर्व राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री, पार्लियामेन्ट के दोनों सदनों के सभापतियों व सांविधानिक परिषद् से मन्त्रणा करेगा चाहे वह उनके परामर्श को स्वीकार न करें, आपातकाल में राष्ट्रपति परिस्थितियों द्वारा दी गयी चुनौती का मुकाबला करने के लिए सभी प्रकार की आवश्यक कार्यपालिका, विधायी तथा सांविधानिक शक्तियाँ धारण कर सकता है। आपातकाल में नेशनल एसेम्बली की बैठकें जारी रहेंगी और उसका विघटन नहीं हो सकेगा, परन्तु राष्ट्रपति उसकी शक्तियों को सीमित कर सकता है। आपातकाल के दौरान राष्ट्रपति पर एक कानूनी रोक यह रहेगी कि सांविधानिक परिषद् उसे पद के कार्य करने के लिए अक्षम अथवा अयोग्य घोषित कर दे अथवा सीनेट व नेशनल एसेम्बली द्वारा उस पर गम्भीर राजद्रोह या विश्वासघात (high treason) का अभियोग लगाया जाये और उच्च न्यायालय उसकी सुनवाई करे। इससे भी बढ़कर राष्ट्रपति पर जनमत की रोक रहेगी।

राज्य के अध्यक्ष रूप में शक्तियाँ—(1) राष्ट्रपति को मन्त्रिपरिषद्, राष्ट्रीय प्रतिरक्षा की समिति, न्यायपालिका की सर्वोच्च परिषद् और समुदाय की कार्यकारिणी परिषद् की बैठकों का सभापतित्व करने का अधिकार है। इसमें मन्त्रिपरिषद् की बैठकों पर सभापतित्व का अधिकार

सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। यहाँ पर कैबिनेट की परिषद् और मन्त्रिपरिषद् के बीच अन्तर को स्पष्ट करना उचित होगा। पहले की बैठकें प्रधानमन्त्री के सभापतित्व में होती हैं और दूसरी बैठकों में राष्ट्रपति सभापति रहता है। संविधान के अनुसार कुछ मामलों पर निर्णय मन्त्रिपरिषद् करती है। उदाहरण के लिए, राजदूतों की नियुक्ति और अध्यादेश। मन्त्रिपरिषद् की बैठकें साधारणतः प्रति सप्ताह होती हैं और उनमें महत्त्वपूर्ण निर्णय किये जाते हैं। इस प्रकार राष्ट्रपति का शासन के मामलों में ब्रिटेन के राजा या रानी से कहीं अधिक महत्त्व है। उसे केवल सूचना पाने और परामर्श देने के ही अधिकार प्राप्त नहीं हैं, वह शासन के निर्णयों को प्रभावित भी कर सकता है। (2) राष्ट्रपति को क्षमादान, सन्धियों के लिए वार्ता और न्यायपालिका की उच्च परिषद् के सदस्यों को नामजद करने के अधिकार प्राप्त हैं। परन्तु इन अधिकारों के प्रयोग में किये गये कार्यों व आदेशों पर प्रधानमन्त्री तथा सम्बन्धित मन्त्रियों के प्रति हस्ताक्षर होते हैं। (3) कानूनों, अध्यादेशों, सन्धियों और कुछ प्रकार की आज्ञप्तियों को वैध बनाने के लिए राष्ट्रपति के हस्ताक्षर आवश्यक हैं। पार्लियामेन्ट द्वारा पारित कानूनों पर सरकार द्वारा प्रस्तुत किये जाने पर पन्द्रह दिन के भीतर हस्ताक्षर करता है। ऐसा सोचा जा सकता है कि राष्ट्रपति इस शक्ति (power to validate) का प्रयोग प्रतिषेध (veto) के रूप में करे तो क्या हो। संविधान उसे ऐसा करने से रोक नहीं सकता, किन्तु ऐसा कार्य संविधान की भावना के विरुद्ध होगा।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि संविधान द्वारा राष्ट्रपति के पद और शक्तियों पर विशेष बल दिया गया है। 'वह यह देखता है कि संविधान का मान होता है, वह अपनी पंचरूप शक्तियों के द्वारा सार्वजनिक शक्तियों के नियमित प्रयोग और राज्य की निरन्तरता के लिए उचित व्यवस्था करता है और वह राष्ट्रीय स्वतन्त्रता का प्रत्याभू (guarantor) है' (धारा 5), 'वह प्रधानमन्त्री व अन्य मन्त्रियों को नियुक्त करता है और उन्हें उनके पदों से भी हटा सकता है' (धारा 8)। 'वह प्रधानमन्त्री और एसेम्बलियों के प्रधानों से मन्त्रणा करके नेशनल एसेम्बली को विघटित कर सकता है' (धारा 12)। 'जब गणतन्त्र की संस्थाएँ, राष्ट्र की स्वतन्त्रता, राज्य-क्षेत्र की अखण्डता (integrity of the territory) अथवा इसके अन्तर्राष्ट्रीय वायदों (commitments) की पूर्ति के लिये तुरन्त और गम्भीर खतरा उत्पन्न हो और जब सांविधानिक सार्वजनिक शक्तियों के नियमित कार्यान्वयन में रुकावट पैदा हो तो गणतन्त्र का राष्ट्रपति परिस्थितियों की आवश्यकतानुसार प्रधानमन्त्री, एसेम्बलियों के प्रधानों और सांविधानिक परिषद् से मन्त्रणा करने के बाद पग उठा सकता है' (धारा 16)। अस्तु, यह कथन सच है 'यदि 1946 के संविधान का केन्द्रीय अंग संसद थी तो वर्तमान संविधान में यह स्थान गणतन्त्र के राष्ट्रपति को मिला है। वह राष्ट्रीय स्वतन्त्रता, राज्य क्षेत्र की अखण्डता और समुदाय के समझौतों व सन्धियों के प्रति आदर का प्रत्याभू है। इस प्रकार वह राष्ट्रीय एकता का प्रतीक, कार्यपालिका का सर्वोच्च अध्यक्ष और देश की विभिन्न शक्तियों के बीच है आपात्काल में सभी शक्तियाँ उसमें निहित रहेंगी।'[1]

सरकार का निर्माण—प्रधानमन्त्री का चुनाव अथवा नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। प्रधानमन्त्री अपनी सरकार के सदस्यों अर्थात् अन्य मन्त्रियों को चुनता है और उनकी नियुक्ति

[1] Under the new constitution the President possesses for greater powers than the President under the Third or Fourth Republic He has wide authority in foreign affairs and greatly increased powers in regard to the appointment of the government and the dissolution of Parliament He is at once the head of the Republic and of the Union The new constitution confers on the President temporary constitutional dictatorship at least in theory The President if he asserts himself can overshadow the ministers Parliament and the Constitutional Council —Patel S R *op cit* p 410

राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। मन्त्रियो की सरया के विषय म कोई साविधानिक अथवा कानूनी ब धन नही है। उनकी सख्या परिस्थितियो के अनुसार कम या अधिक हो सकती है। ऐसी ही व्यवस्था अन्य ससदीय पद्धति वाले देशो म है। फ्रास म साधारणतया मन्त्रियो की दो श्रेणिया होती हैं। एक श्रेणी मे राज्य मन्त्री (Ministers of State) और बिना विभाग के मन्त्री (Ministers without portfolio) रखे जा सकते ह और दूसरी म वे मन्त्री जिन्हे विभिन्न विभागो का अध्यक्ष बनाया जाता है। 1959 म कुछ परामश देने वाले मन्त्री नियुक्त किये गये थे, वे बिना विभाग के मन्त्री थे। वे केबिनट या मन्त्रि परिषद् की बैठको मे साधारणतया भाग नही लेते थे, परन्तु उन्ह आमन्त्रित किया जा सकता था। मन्त्रियो के नीचे बहुत से अवर सचिव भी नियुक्त किये जाते है। उनकी सरया भी परिवर्तनशील है। यदि मन्त्रियो की सख्या कम होती है तो अवर सचिव की सरया बढ जाती है।

वतमान सविधान के अन्तगत अधिकतर मन्त्रियो को पार्लियामेन्ट के बाहर से लिया गया और पार्लियामेन्ट के जिन सदस्यो को मन्त्री बनाया जाता है, उन्हे धारा 23 के अनुसार पार्लियामेन्ट की सदस्यता त्यागनी पडती है। सविधान की धारा 23 के अनुसार सरकार अथवा मन्त्रिमण्डल के किसी भी सदस्य के लिए यह आवश्यक है कि वह पार्लियामेन्ट का सदस्य न रह सकेगा। वह राष्ट्रीय स्तर पर किसी व्यवसाय, व्यापार या मजदूर सघ मे कोई पद धारण न करेगा और न वह किसी सावजनिक पद पर रह सकेगा अथवा व्यावसायिक काय कर सकेगा। प्रत्येक मन्त्री कुछ परामशदाता नियुक्त करता है, जो मिलकर उस मन्त्रालय मे मन्त्री की व्यक्तिगत केबिनट बनाते है। ऐसे परामशदाताओ को नागरिक सेवको मे से लिया जाता है। सविधान म यह स्पष्ट रूप से नही कहा गया कि मन्त्रिमण्डल सामूहिक रूप से पार्लियामेन्ट (व्यवहार मे लोकप्रिय सदन) के प्रति उत्तरदायी होगा। परन्तु धारा 49 मे कहा गया है 'मन्त्रि परिषद्' द्वारा मनन किये जाने के बाद, सरकार के कायक्रम अथवा सामान्य नीति की घोषणा के विषय मे प्रधानमन्त्री नेशनल एसेम्बली के प्रति सरकार के उत्तरदायित्व का विश्वास दिला सकता है। नेशनल एसेम्बली सरकार के उत्तरदायित्व पर निन्दा प्रस्ताव के मत द्वारा प्रश्न उठा सकती है।'

निन्दा प्रस्ताव की वैधता के लिए यह आवश्यक है कि उस पर नेशनल एसेम्बली के $\frac{1}{10}$ सदस्यो के हस्ताक्षर हो। मत विभाजन उसके पेश किये जाने के 48 घण्टे बाद ही हो सकता है। उसके पास होने के लिए कुछ सदस्यो का बहुमत उसके पक्ष मे होना आवश्यक है। इस धारा मे ऐसा कही नही कहा गया है कि नव निर्मित मन्त्रिमण्डल एसेम्बली का विश्वास अथवा उसकी स्वीकृति प्राप्त करेगा। परन्तु धारा 50 मे कहा गया है कि 'जब नेशनल एसेम्बली निन्दा प्रस्ताव पास कर दे अथवा जब वह कायक्रम या उसकी सामान्य नीति की घोषणा को अस्वीकार कर दे, प्रधानमन्त्री को सरकार का त्याग पत्र राष्ट्रपति के सम्मुख पेश करना होगा।' इस विषय म व्हीयर का मत है यद्यपि फ्रास के वतमान सविधान मे यह व्यवस्था है कि मन्त्री नेशनल एसेम्बली के प्रति उत्तरदायी रहेगे और उन्ह एसेम्बली अपदस्थ भी कर सकती है, उसम यह एक स्पष्ट प्राविधान है कि प्रधानमन्त्री और अन्य कोई मन्त्री ससद के किसी सदन का सदस्य नही हो सकता, इस प्रकार यह दो पद्धतियो का अजीब मिश्रण है।[1]

सरकार की शक्तियाँ—धारायें 20–21 पढने से पता चलता है कि सविधान ने सरकार की शक्तियाँ या तो विशेष रूप से प्रधानमन्त्री अथवा साधारण रूप म सरकार (मन्त्रिमण्डल) को प्रदान की है। धारा 20 के अनुसार 'सरकार राष्ट्र की नीति का निधारण व निर्देशन करेगी। सरकार के आधीन प्रशासन और सशस्त्र सेनायें रहगी। धारा 21 के अनुसार प्रधानमन्त्री के मुख्य कृत्य य

[1] Wheare K C *Modern Constitutions* p 40

है वह सरकार के कार्यों का निर्देशन करेगा, वह राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिए उत्तरदायी होगा, वह यह देखेगा कि कानूनों को उचित ढंग से कार्यान्वित किया जाता है, वह बहुत से नागरिक व सैनिक पदों पर नियुक्तियाँ करता है, और वह अपनी शक्तियों में से कुछ को मन्त्रियों को सौंप सकता है। यदि कभी अवसर पड़े तो वह राष्ट्रपति के स्थान पर परिषदों और समितियों का सभापतित्व करेगा। किसी विशेष काम सूची के लिए यदि राष्ट्रपति उसे ऐसा अधिकार दे तो कभी-कभी प्रधानमन्त्री राष्ट्रपति के स्थान पर मन्त्रि परिषद् का भी सभापतित्व कर सकता है।

सरकार को सुदृढ़ बनाने वाले सांविधानिक प्राविधान—जैसा कि गत पृष्ठों में बताया गया है, वर्तमान संविधान के निर्माताओं का सर्वप्रमुख उद्देश्य यह रहा है कि सरकार इतनी शक्तिशाली हो कि वह शासन कर सके, क्योंकि पूर्वगामी संविधानों के अन्तर्गत कार्यपालिका का अशक्त होना फ्रांस की शासन पद्धति का सबसे अधिक गम्भीर दोष रहा है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक ओर तो राष्ट्रपति को अनेक साधारण व आपात्कालीन शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं, उनमें से सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण उसकी वे शक्तियाँ हैं जिनके अनुसार उसे संविधान का आदर कराने का दायित्व सौंपा गया है। दूसरी ओर मन्त्रिमण्डल को सुदृढ़ व शक्तिशाली बनाने के लिए वह प्राविधान है जिसके अनुसार पार्लियामेन्ट के सदस्यों को मन्त्रिमण्डल का सदस्य बनने पर पार्लियामेन्ट की सदस्यता को एक माह के भीतर त्यागना आवश्यक है। वर्तमान संविधान के अन्तर्गत पार्लियामेन्ट की सदस्यता त्यागने से इस प्रकार की अनुचित कार्यवाही में अवश्य ही कुछ कमी होगी। अध्यक्षात्मक शासन में तो मन्त्री विधायिका के सदस्य नहीं होते, किन्तु मन्त्रियों को संसद की सदस्यता त्यागने के लिए विवश करने वाला प्राविधान संसद पद्धति वाले देशों के लिए एक अभूतपूर्व व्यवस्था है।[1]

वर्तमान संविधान में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री को नियुक्त करेगा और प्रधानमन्त्री के प्रस्ताव पर वह अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति करेगा तथा कार्यपालिका संसद के प्रति उत्तरदायी रहेगी। इन बातों से तो यही निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान संविधान में पहले की भाँति संसदात्मक कार्यपालिका है। परन्तु इसमें अब कई परिवर्तन हो गये हैं, जिनके परिणामस्वरूप वर्तमान कार्यपालिका पूर्वकालीन कार्यपालिका से भिन्न है। पहला, अब राष्ट्रपति का चुनाव केवल संसद द्वारा नहीं होता वरन् एक निर्वाचक मण्डल द्वारा जिसमें अन्य निर्वाचकों की संख्या बहुत बड़ी है। दूसरे यद्यपि कैबिनेट को संसद के प्रति उत्तरदायी बनाया गया है, किन्तु मन्त्री किसी भी सदन के सदस्य नहीं रहते, अतः वे दलों के अनुशासन और निर्वाचकों के दबाव से मुक्त हो गये हैं। तीसरे, राष्ट्रपति कार्यपालिका का सक्रिय अध्यक्ष है, जिसे विधायिका पर नियन्त्रण की व्यापक शक्तियाँ प्राप्त हैं, जिसमें संसद के विघटन का अधिकार भी सम्मिलित है। चौथे, संविधान ने राष्ट्रपति को आपात्काल में, यदि गणतन्त्र की संस्थाओं, राष्ट्र की स्वतन्त्रता, राज्य-क्षेत्र की अखण्डता या अन्तर्राष्ट्रीय दायित्वों को कार्यान्वित करने का खतरा हो', कड़े पग उठाने की शक्ति प्रदान की है। इन दशाओं के अन्तर्गत नये सरकारी संगठन को अर्द्ध राष्ट्रपतीय शासन पद्धति कहना उचित होगा।[2] यह सच है कि वर्तमान शासन पद्धति के अन्तर्गत राष्ट्रपति तीसरे और चौथे गणतन्त्रों के अन्तर्गत राष्ट्रपति से कहीं अधिक शक्तिशाली है, परन्तु यह ध्यान देने की बात है कि

[1] This is not new for a Presidential Government such as America's but it is almost without precedent in a Parliamentary Government because normally the essence of Parliamentary Government is that a member of Parliament may become a minister —Aron R *France—the New Republic* p 26

[2] Under these conditions the new governmental organisation could perhaps be more properly described as a semi presidential system based on at least a partial separation of powers. —Strong C F *Modern Political Constitutions* 1966 p 250

राष्ट्रपति शासन का अध्यक्ष नही है, वह केवल राज्य का अध्यक्ष है। राष्ट्रपति की विभिन्न शक्तियाँ उसे शासन का अध्यक्ष नही बनाती, परन्तु उसकी स्थिति ऐसी है कि वह शासन को प्रभावित कर सकता है और कुछ सीमा तक नेशनल एसेम्बली पर भी दबाव डाल सकता है, क्योकि पार्लियामेन्ट द्वारा पारित विधेयक पर लोक निर्णय तथा एसेम्बली को विघटन की धमकी दे सकता है।

कार्यपालिका पूर्व की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है, किन्तु कार्यपालिका की शक्तियाँ राष्ट्रपति और प्रधानमन्त्री तथा मन्त्रिमण्डल के बीच बँटी हैं। अब राष्ट्रपति और प्रधानमन्त्री व उसके मन्त्रिमण्डल की स्थिति पार्लियामेन्ट के मुकाबले मे अधिक सुदृढ है, परन्तु मन्त्रिमण्डल और पार्लियामेन्ट के रहते हुए राष्ट्रपति की अधिनायकशाही का प्रश्न नही उठ सकता, यद्यपि कुछ राजनीतिक कार्यों के लिए राष्ट्रपति किसी के प्रति उत्तरदायी नही है। राष्ट्रपति को जो आपात्-कालीन शक्तियां प्रदान की गयी है, उनका प्रयोग साधारण काल मे करना उचित होगा। वे तो ऐसी शक्तियां हैं जिनका प्रयोग तब किया जाये जबकि कोई और विकल्प ही न रह जाये। आपात् काल की घोषणा राष्ट्रपति कर सकता है, परन्तु ऐसा करने से पूर्व उसके लिए प्रधानमन्त्री पार्लियामेन्ट के दोनो सदनो के सभापतियो और सांविधानिक परिषद् से मन्त्रणा करना आवश्यक है। राष्ट्रपति की शक्तियो को देखते हुए यह मानना उचित होगा कि वर्तमान शासन पद्धति मे प्रधान मन्त्री का पद उतना निर्णायक नही हो सकता जितना कि ब्रिटेन जैसे सांविधानिक अध्यक्ष वाले राज्यो मे प्रधानमन्त्री का स्थान है। उसका पद भारत के प्रधानमन्त्री से भी बहुत कम महत्त्वपूर्ण है, क्योकि फ्रास मे राष्ट्रपति की शक्तियाँ भारत के राष्ट्रपति से अधिक और वास्तविक है।

कुछ समालोचको का मत है कि वर्तमान सविधान कुछ समय तक कार्यरूप मे परिणित होने पर क्रमश साधारण ससदात्मक पद्धति का रूप धारण कर लेगा और राष्ट्रपति केवल एक सर्वोच्च परामर्शदाता एव पंच रह जायेगा। डॉरोथी पिकिल्स का मत है कि राष्ट्रपति के परम्परागत कार्य बहुत सीमा तक वैसे ही है जैसे कि पूर्वगामी सविधानो के अन्तर्गत थे और वे अधिकांशत सैद्धान्तिक है। राष्ट्रपति पद के विषय मे कोई भी बात निश्चित रूप से नही कही जा सकती, क्योकि एक ओर पहले राष्ट्रपति डि गॉले का व्यक्तित्व रहा और दूसरी ओर वे असाधारण परिस्थितियाँ जिनमे उसकी असाधारण शक्तियो का प्रयोग आवश्यक दीखता था। यह सच है कि जनरल डि गॉले ने गत कुछ वर्षों मे फ्रास के शासन मे सक्रिय और वैयक्तिक भाग लिया जिसकी कि साधारण परिस्थितियो मे किसी अन्य राष्ट्रपति से आशा नही की जा सकती। इसी कारण यह समझा जाता है कि पाँचवें गणतन्त्र मे वास्तविक शक्ति का स्रोत राष्ट्रपति है न कि प्रधानमन्त्री।

1958 मे सविधान लागू हुआ और 1962 मे राष्ट्रपति डि गॉले के पहले अवधि के काल मे ही एक गम्भीर सकट उत्पन्न हुआ। राष्ट्रपति की वृद्धावस्था तथा उसके जीवन पर आक्रमणो ने उसे यह सोचने पर विवश किया कि भविष्य मे क्या होगा जबकि वह देश का कर्णधार न रहेगा। जब अक्टूबर 1962 मे नेशनल एसेम्बली का अधिवेशन होने को था, राष्ट्रपति ने सविधान मे एक सशोधन का प्रस्ताव रखने की घोषणा की, जिसका उद्देश्य यह था कि भविष्य मे राष्ट्रपति का चुनाव निर्वाचक मण्डल के स्थान पर सर्वव्यापक मताधिकार द्वारा किया जाय। इस परिवर्तन पर स्वीकृति प्राप्त करने के लिए उसने यह प्रस्ताव रखा कि उस पर 28 अक्टूबर को बिना ससद मे रखे ही, लोक निर्णय करा लिया जाय। राष्ट्रपति के इस प्रस्ताव से रुष्ट होकर नेशनल एसेम्बली ने सरकार के विरुद्ध निन्दा का प्रस्ताव पास कर दिया। उसके बाद राष्ट्रपति ने एसेम्बली को विघटित कर दिया और बाद मे हुए आम चुनाव मे डि गॉले के समर्थको को सभी विरोधी दलो के विरुद्ध पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ। इस बीच मे निश्चित दिन जन निर्णय भी हुआ जिसका परिणाम राष्ट्रपति के प्रस्ताव के पक्ष मे ही रहा। अतएव सविधान की धाराएँ 6 व 7 मे ... [illegible]

करने के लिए एक सरकारी विधेयक तैयार किया गया। इस प्रकार डि गौल ने संसदात्मक कार्यपालिका को जनमतीय राष्ट्रपतित्व (plebiscitary presidency) में परिवर्तित करने के प्रयास को प्राप्त किया। संशोधित निर्वाचन प्रक्रिया के अन्तर्गत राष्ट्रपति पद के लिए पहला चुनाव दिसम्बर 1965 में हुआ जिसमें डि गॉल को दूसरी बार सात वर्ष की अवधि के लिए राष्ट्रपति चुना गया, यद्यपि राष्ट्रपति का चुनाव दूसरी बार मतदान के बाद हुआ। परन्तु 1968 में हुई नयी क्रांति के परिणामस्वरूप डि गॉल को त्याग-पत्र देना पड़ा।

3 स्विट्जरलण्ड में कार्यपालिका

स्विटजरलैण्ड में बहुल कार्यपालिका है, जिसकी विशेषताओं का विवेचन अध्याय पाँच में दिया जा चुका है। अतएव यहाँ पर उसकी रचना और शक्तियों के सम्बन्ध में विस्तार की बातें ही दी जा रही हैं।

फेडरल कौंसिल की रचना—इसमें सात सदस्य होते हैं जिन्हें फेडरल एसेम्बली दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में निर्वाचित करती है इनमें से प्रत्येक अग्रलिखित विभागों में से किसी एक का कार्य भारी होता है—वैदेशिक मामले, आन्तरिक मामले, न्याय और पुलिस, प्रतिरक्षा, वित्त, सार्वजनिक अर्थव्यवस्था (अर्थात् उद्योग, कृषि और सामाजिक बीमा) तथा डाक व रेल। इनका कार्य-काल चार वर्ष होता है, यदि इनकी अवधि पूर्ण होने से पूर्व ही नेशनल कौंसिल का विघटन न हो जाय। संविधान के अनुसार फेडरल एसेम्बली के सदस्य कौंसिल के सदस्य नहीं बन सकते, परन्तु व्यवहार में यदि एसेम्बली का कोई सदस्य कौंसिल के लिए चुन लिया जाता है तो वह एसेम्बली की सदस्यता से त्याग पत्र दे देता है। सदस्यों का साधारणतया पुनर्निर्वाचन हो जाता है फलतः कोई व्यक्ति एक बार उसका सदस्य चुन जाने पर प्रायः तब तक फिर से निर्वाचित हो जाता है जब तक कि वह चाहे। 1948 से 1957 तक केवल सोलह व्यक्ति फेडरल कौंसिल के सदस्य चुने गये। सदस्यों के निर्वाचन के बारे में दो अग्रलिखित प्रथाओं का पालन हुआ है पहला, तीन महत्वपूर्ण केन्टनों—बर्न, ज्यूरिच और वॉद के एक एक प्रतिनिधि सदा ही फेडरल कौंसिल में सदस्य चुने जाते हैं। दूसरा, जर्मन भाषी केन्टनों से पाँच से अधिक सदस्य नहीं लिए जाते। रेपड के मतानुसार इन प्रथाओं ने फेडरल कौंसिल में प्रादेशिक प्रतिनिधित्व से सम्बन्धित स्थायी तथा अस्थायी सदस्यों की पेचीदा और कठिन समस्या का अच्छा हल निकाला है।

फेडरल कौंसिल के सदस्य संघ अथवा केन्टनों की सरकार के अधीन अथवा निजी प्रकार का अन्य कोई पद धारण नहीं कर सकते और न ही अन्य व्यवसाय कर सकते हैं। फेडरल कौंसिल के सदस्यों को एसेम्बली के दोनों सदनों में स्थान प्राप्त है और उन्हें उनकी कार्यवाही में भाग लेने का अधिकार है, चूंकि वे उनके सदस्य नहीं होते, इसलिए उन्हें किसी भी प्रश्न पर मतदान में भाग लेने का अधिकार प्राप्त नहीं है। इस समय प्रत्येक सदस्य को 48,000 फ्रैंक वार्षिक वेतन मिलता है। यह पहले की अपेक्षा अधिक है किन्तु देश के आर्थिक स्तर को देखते हुए ऊँचा नहीं है। इसी कारण फेडरल कौंसिल के सदस्य बहुत शान से नहीं रहते और न ही वे अधिक व्यय करते हैं। ऐसा कहा जाता है कि जब एक सदस्य से यह पूछा गया कि वह तीसरी श्रेणी में क्यों यात्रा करता था तो उसने उत्तर दिया कि चूंकि वहाँ चौथी श्रेणी नहीं है।

फेडरल कौंसिल के प्रधान और उप प्रधान—फेडरल एसेम्बली प्रति वर्ष फेडरल कौंसिल के सदस्यों में से एक को सभापति और दूसरे को उप सभापति नियुक्त करता है। कौंसिल का सभापति ही स्विस संघ का प्रधान होता है। संविधान में स्पष्ट रूप से इस बात की मनाही की गयी है कि प्रधान या उप प्रधान का पुनर्निर्वाचन हो, परन्तु चलन के अनुसार उप प्रधान अगले वर्ष

प्रधान चुन लिया जाता है। इस प्रकार दोनो पदो पर कोई सदस्य स्थायी रूप से नही रहते। यद्यपि सघ के प्रधान अथवा राष्ट्रपति पद की विशेष प्रतिष्ठा है, फिर भी प्रधान को केवल कुछ औपचारिक विशेषाधिकार ही प्राप्त हैं। उनमे से मुख्य ये है—(1) वह राज्य के भीतर तथा वैदेशिक सम्बन्धो मे राज्य का ध्वजधारी (titular) अध्यक्ष होता है। (2) वह फेडरल कौंसिल की बैठक मे सभापति रहता है। (3) उसे फेडरल कौंसिल की बैठक मे आवश्यकता पडने पर निर्णायक मत देने की शक्ति प्राप्त है। इनके अतिरिक्त उसकी कोई महत्त्वपूर्ण सावैधानिक शक्तियाँ नही हैं। वह अन्य राज्यो के अध्यक्षो की तरह न तो अधिकारियो को नियुक्त करता है, न उसे विधेयको पर प्रतिषेध का अधिकार है और न ही वह कूटनीतिक वार्ता चलाता है। उसकी वास्तविक शक्तिया तो केवल फेडरल कौंसिल के सदस्य के रूप मे एक विभाग का अध्यक्ष होने के नाते हैं। प्रधान को वष मे केवल 3,000 फ्रैंक अधिक मिलते है, जिनसे वह अतिथियो आदि का सत्कार कर सकता है। उप प्रधान कौंसिल की बैठको का तब सभापतित्व करता है जबकि प्रधान उपस्थित न हो।

फेडरल कौंसिल की शक्तियाँ और उसके काय—इसकी शक्तियाँ, जैसा कि होना चाहिए कायपालिका और प्रशासन सम्बन्धी है, किन्तु इसे कुछ शक्तियाँ विधायी व न्यायिक क्षेत्रो म भी प्राप्त हैं। स्विस सघ की सर्वोच्च कायपालिका सत्ता होने के नाते फेडरल कौंसिल वैदेशिक सम्बन्धो का सचालन करती है, कानूनो को लागू करती है, सेना का नियन्त्रण करती है और उन सभी सघीय अधिकारियो को नियुक्त करती है, जिनकी नियुक्ति सविधान के अनुसार फेडरल एसेम्बली द्वारा नही की जाती। फेडरल कौंसिल ही प्रति वष सघ सरकार का बजट तैयार करती है और यही बजट वित्त विभाग के अध्यक्ष कौंसिलर द्वारा बाद मे एसेम्बली के दोनो सदनो के सामने पेश किया जाता है। वही कौंसिलर सदनो म उसे समझाता है और उसके पक्ष म तक देता है। बजट पास हो जाने पर फेडरल कौंसिल उसके अनुसार आय एकत्रित कराने और व्यय की देख रेख करने के लिए उत्तरदायी है। कौंसिल प्रति वष सदनो के सामने विदेशी तथा आन्तरिक मामलो के बारे मे भी रिपोट पश करती है और इस रिपोट पर दोनो सदन ध्यानपूवक विचार करते हैं।

सदनो के सामने आने वाले विधेयक कौंसिल ही तैयार करती है। एसेम्बली के सदस्य तो केवल 'पोस्ट्यूलेट' या 'मोशन' ही पेश करते हैं, जिसके अनुसार विधेयक तयार करना कौंसिल का महत्त्वपूण काय है। वास्तव मे विधेयको के प्रारूप कानूनी विशेषज्ञो द्वारा बनाये जाते हैं। फेडरल एसेम्बली द्वारा पास किया गया कोई भी विधेयक ऐसा नही होता जिस पर कौंसिल ने पहले विचार न किया हो। परन्तु इसका यह अथ कदापि नही कि फेडरल कौंसिल के सदस्यो को विधि निर्माण पर कोई प्रतिषेध जैसी शक्ति प्राप्त है क्योकि कभी कभी तो उन्हे एसेम्बली के सदस्यो की प्राथना पर ऐसे विधेयक भी तैयार करने होते है जिन्हे कौंसिल स्वय स्वीकार न करती हो और वे कभी कभी पास भी हो जाते हैं। फेडरल कौंसिल विधि निर्माण मे सक्रिय भाग लेती है, परन्तु यदि उसका परामश न माना जाये तो वह बुरा नही मानती। कौंसिल के सदस्य अपने अभिमान की परवाह नही करते और विधायिका के निणय अथवा इच्छा का पालन करते हैं।[1] जैसा किसी ने कहा है, स्विट्जरलैण्ड की फेडरल कौंसिल तो कानूनी परामशदाता के समान है, जिसका परामश लिया जाता है, परन्तु यदि वह परामश माना न जाये तो उसे अपना पद त्यागने की आवश्यकता नही है। इनके अतिरिक्त, फेडरल कौंसिल को फेडरल कानूनो को लागू करने के लिए बहुत से विनियम बनाने पडते हैं।

फेडरल कौंसिल की कुछ न्यायिक शक्तियाँ भी हैं। पहले तो फेडरल कौंसिल हा

[1] They pocket their pride and obey the will of the legislative bodies with as much grace as they can muster —Munro W B *Governments of Europe* p 783

साविधानिक कानूना से सम्बन्धित प्रश्ना के बारे मे उठने वाले विवादो अथवा प्रवादों का निर्णय किया करती थी, किन्तु काफी वर्ष पूर्व यह कार्य सघीय न्यायालय के अधिकार क्षेत्र म आ गया। पहले फेडरल कौंसिल सघ के मुख्य प्रशासनिक न्यायालय का भी काय करती थी, किन्तु इस क्षेत्र मे अब इसका अधिकार क्षेत्र बहुत सीमित रह गया है। 1914 के साविधानिक सशोधन द्वारा प्रशासनिक न्याय के लिए एक सघीय न्यायालय की रचना की व्यवस्था की गयी थी। बाद म ऐसा न्यायालय तो स्थापित नही किया गया, पर तु यह अधिकार क्षेत्र भी नियमित ,सघीय न्यायालय को सौंप दिया गया। वही अब सावजनिक अधिकारियो के विरुद्ध व्यक्तियो द्वारा की जाने वाली शिकायतो पर निणय करता है।

इस समय कौसिल के न्यायिक काय सक्षेप मे अग्रलिखित हैं—(1) केन्टना द्वारा आपस म किये गये समझौता अथवा केन्टनो और पडौसी राज्य के बीच किये गये समझौता की यह इस दृष्टि से परीक्षा करती है कि वे सविधान के विरुद्ध तो नही है। (2) कौसिल सघीय प्रशासनिक विभागो के विरुद्ध व्यक्तियो द्वारा की जाने वाली अपीलें तथा सघीय रेलवे प्रशासन के विरुद्ध की जाने वाली अपीलो को भी सुनती है। (3) अग्रलिखित बातो के बारे मे के टनो के निणयो के विरुद्ध भी इसे अपीलीय अधिकार-क्षेत्र प्राप्त है—(अ) प्रारम्भिक स्कूला मे धार्मिक आधारो पर होने वाले भेद भाव, (आ) के टनो के चुनाव, (इ) व्यापार पेटेंट आदि के सम्बन्ध मे उठने वाले मतभेद, आदि।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सघीय कौसिल की शक्तिया बहुत विस्तत हैं, परन्तु जसा ब्राइस ने कहा है, कानूनी दृष्टि से कौंसिल फेडरल एसेम्बली की सेवक है, यद्यपि व्यवहार म यह लगभग उतना ही प्रभाव डालती है जितना कि ब्रिटिश केबिनेट। यह एसेम्बली का नेतत्व भी करती है और उसके निणयो का पालन भी। यह साधन होने के साथ साथ एसेम्बली का मार्ग दशक भी है और बहुधा विधेयको का सुझाव दती है और उसके प्रारूप भी तैयार करती है। न्यूमेन के मतानुसार साविधानिक सिद्धात यह है कि फेडरल कौसिल एसेम्बली का अभिकर्ता है वह भी अधीन अभिकर्त्ता। एसेम्बली के सदस्य विधायिका के सदस्य नही होते और उन्हें विधायिका को विघटित कराने की शक्ति भी प्राप्त नही है किन्तु व्यवहार मे कौसिल एसेम्बली से पूणतया स्वतन्त्र है। विधायिका कौसिल की बात को गिरा सक्ती है, किन्तु कौसिल को त्याग पत्र नहीं देना पडता।[1] कौंसिल एसेम्बली के अधीन है, इस विषय मे कोई मतभेद नही है किन्तु इसका यह अर्थ नही है कि कौसिल सावजनिक मामलो पर कोई प्रभाव नहीं रखती। एसेम्बली अधिकतर विधेयका के लिए पहल करने का अधिकार कौसिल को देती है और कौसिल ही शासन का सचालन करती है, ये बातें कौसिल को सावजनिक नीति की दशा निर्धारित करने के अवसर देती है। कौसिल के प्रभाव को बढाने वाला एक कारण उसके सदस्यो का लम्बा कायकाल भी है।

वास्तव मे, स्विटजरलैण्ड मे इस समस्या ने एक विशेष रूप पाया है, जिसका कारण स्विस राजनीति मे विद्यमान विभिन्न दलो मे मिल जुलकर काय करने की भावना है। कायपालिका का निर्वाचन विधायिका द्वारा होता है और वह विधायिका मे विद्यमान विभिन्न मतो का प्रतिनिधित्व करती है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि स्विटजरलण्ड उस वतमान विश्व व्यापी प्रवृति से बचा नही रह सकता जिसके अनुसार सभी राज्या म कायपालिका की शक्तियाँ सुदृढ हो रही हैं। इस सम्बन्ध मे एक उल्लेखनीय बात यह है कि 1939 मे राष्ट्रीय प्रतिरक्षा कानून के अन्तगत फेडरल एसेम्बली न कौंसिल को देश की प्रतिरक्षा, स्वतन्त्रता और तटस्थता की रक्षा के लिए सभी आवश्यक पग उठाने की शक्ति प्रदान की थी। उसके अधीन कभी कभी कौसिल न अध्यादेश

[1] Neumann R. G *European and Comparative Government* pp 718–19

जारी करके व्यक्तियो के निजी अधिकारो को भी विनियमित किया। इस सम्बन्ध मे स्टीवाट ने भी लिखा है 'सविधान मे कोई ऐसा स्पष्ट प्राविधान नही है, जो आपात्काल मे कायपालिका को विशेष शक्तियाँ प्रदान करता हो। किन्तु फिर भी, फेडरल कौसिल का यह कर्त्तव्य है कि वह देश की स्वत त्रता व तटस्थता की रक्षा करे और सशस्त्र सेनाओ पर निय त्रण रखे। जब कभी आवश्यक हुआ है इसने इस कत्तव्य पालन के लिए अपनी शक्तियो को खीचकर बढाया है। प्रथम और द्वितीय विश्व युद्ध के आरम्भ होने पर एसेम्बली ने अविलम्ब आज्ञप्ति पास कर कौंसिल को प्राय असीमित स य व आर्थिक शक्तिया प्रदान की।'[1]

4 सोवियत सघ मे कायपालिका

मन्त्रि परिषद की रचना—1946 से सोवियत सघ की कायपालिका के सदस्य, जो जनता के कमिसार (People's Commissars) कहलाते थ, मन्त्री कहलाने लगे। तभी से पाश्चात्य राज्यो की तरह म त्रिया को सामूहिक रूप मे मन्त्रि-परिषद् कहा जाने लगा। सम्पूण परिषद् मे एक सभापति अथवा प्रधानमन्त्री, 2 प्रथम उप सभापति, 4 उप सभापति, अनेक विभागीय म त्री तथा समितियो व आयोगो के अध्यक्ष होते हैं, जिनकी सख्या 30 के लगभग होती है। इसके अतिरिक्त 16 सघीय गणराज्यो के प्रधानमन्त्री उसके पदेन सदस्य (ex officio) और 11 अय मन्त्री होते हैं, जो नियोजन आयोग (Gosplan) अधिकारी होते है। इस प्रकार कुल म त्रियो की सख्या लगभग 65 होती है, जिनमे 16 पदेन होते हैं। प्रधानम त्री, दोनो प्रथम उप सभापतिया (उप प्रधानमन्त्रियो), और चारो उप-सभापतियो से मिलकर एक प्रकार की आन्तरिक परिषद् बनती है, जो सम्पूण परिषद् का माग दशन करती है। इन साता मन्त्रियो मे से केवल एक के पास विभागीय कार्यो का उत्तरदायित्व है। शेष किसी विभाग के अध्यक्ष नही हैं। विभागीय म त्रयो मे दो प्रकार के मन्त्री होते है—प्रथम, अखिल सघीय मन्त्री (All Unions Ministers) अर्थात् ऐसे विभागो अथवा म त्रालयो के म त्री जो केवल सघ सरकार के ही अधीन है (गणराज्यो मे नही)। इन विभागो म मुख्य ये हैं—हवाई जहाज उद्योग, प्रतिरक्षा उद्योग, समुद्री बेडा, विदेशी व्यापार, रेडियो इजीनियरिंग उद्योग, परिवहन, मशीन उद्याग, पैट्रोल उद्योग, सचार साधनो का उद्योग, कृषि मशीन उद्योग, रसायन उद्योग, बिजली उद्योग, कायला उद्योग आदि। दूसरे, सघीय गणतन्त्रीय मन्त्री (Union Republic Ministers) अर्थात् उन विभागो के मन्त्री जो सघ तथा गणराज्यो दोनो ही सरकारो के अधीन होते हैं। इनम कुछ मुख्य विभागा के नाम इस प्रकार है—आन्तरिक मामले, उच्चतर शिक्षा, राज्य सुरक्षा, सावजनिक स्वास्थ्य, न्याय, हल्का उद्योग, कृषि, राज्य फाम, व्यापार, वित्त इत्यादि। इस प्रकार के मन्त्री भारत सरकार के भी होते हैं। जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, श्रम आदि विभागो के मन्त्री।

म त्र परिषद् मे सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान सभापति अथवा प्रधानमन्त्री का होता है। उसका पद शक्तिशाली व अत्यधिक शानदार हाता है। उसकी सिफारिश पर ही अ य म त्रिया को मन्त्रि परिषद् मे लिया जाता है और उ हे अपदस्थ भी किया जाता है। दो प्रथम उप सभापतियो (अथवा उप प्रधानम त्रियो) म से एक वदेनिक मामलो और दूसरा आ तरिक मामला से सम्ब ध रखते ह। अय उप सभापतियो का सम्बन्ध भी विभागो म समन्वय स्थापित करने से है। मन्त्रि परिषद् के प्रमुख 9 म न्त्रयो से मिलकर उसकी प्रेसीडियम बनती है, जो एक प्रकार से ब्रिटन की केबिनेट से मिलती है। प्रेसीडियम के सदस्य दल की प्रेसीडियम के भी प्रमुख सदस्य होते हैं। वास्तव मे, इन्ही के द्वारा दल म त्रि परिषद् को अपनी नीति व निणयो से प्रभावित करता है

[1] Stewart M *Modern Forms of Government* p 139

सविधान मे ही प्राविधान है, जसे नियोजन समिति और राज्यीय निय न्त्रण समिति, जिनके सगठन का विवेचन अ य अध्यायों मे किया गया है। अ य निकायो की स्थापना म त्रि परिषद् ने आव श्यकतानुसार समय समय पर की है। आर्थिक परिषद् के कत्तव्य इस प्रकार है—(अ) राष्ट्रीय अथव्यवस्था सम्ब धी वार्षिक और त्रैमासिक योजनाआ पर विचार करना, (आ) योजनाओ का अनुमसथन, (इ) आर्थिक योजनाओ के पूर्ति सम्ब धी मामले। अ त मे यह तो ऊपर बताया जा चुका है कि प्रत्यक सघीय गणराज्य की म त्रि परिषद् का सभापति सघीय म त्रि परिषद् का पदेन सदस्य होता है। इस प्रकार सघीय सरकार की नीति के निर्माण मे गणराज्यो के प्रतिनिधि भाग लेत है। साथ ही यह व्यवस्था भी है कि प्रत्येक अखिल सघीय मन्त्रालय का एक प्रतिनिधि प्रत्येक सघीय गणराज्य मे रहे, जो 1936 के सविधान के अनुसार गणराज्य की म त्रि परिषद् के सदस्य होते है। सघीय गणराज्यीय म त्रालयो के प्रतिरूप म त्रालय और म त्री गणराज्यो म होते ही है। इस प्रकार सघ सरकार व गणराज्यो की सरकारो के बीच सामजस्य व उनके कार्यों मे सम वय स्थापित होता है।

प्रेसीडियम—यह एक अनोखी सस्था है, जो शासन की तीनो ही शाखाओ के काय करती है, कि तु उसका मुख्य भाग कायपालिका के क्षेत्र मे ही है। वह एक प्रकार की सामूहिक काय-पालिका है। अत उसका विवेचन यही करना उपयुक्त होगा। स्टेलिन तथा अ य लेखको ने इसे सोवियत सघ का सामूहिक प्रधान (Collegial President) बताया है। वास्तव मे, यह सर्वोच्च सोवियत की एक स्थायी समिति है, जैसा कि इसकी रचना और कार्यो से स्पष्ट होगा, कि तु यह बात भी पूणतया सत्य नही है, क्योकि इसके सभी सदस्य सर्वोच्च सोवियत के सदस्य नही हाते। प्रेसीडियम के सदस्या का चुनाव सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो की सयुक्त बैठक मे नई सर्वोच्च सोवियत के प्रथम सत्र के अ त म होता है। प्रेसीडियम मे एक सभापति, सोलह उप-सभापति, एक सेक्रेटरी और प द्रह अ य सदस्य हैं अर्थात् इसके कुल सदस्यो की सख्या इस समय तैंतीस है। प्रथा यह है कि सोलह उप सभापति सोलह सघीय गणराज्यो की प्रेसीडियम के सभापति होते हैं। प्रेसीडियम स्वय एक सामूहिक प्रधान है। परन्तु प्रेसीडियम का सभापति ही सोवियत सघ का प्रधान कहलाता है। उसे अ य राज्यो के अध्यक्षो की तरह कोई विशेषाधिकार प्राप्त नही है। उसके विशेष काय अग्रलिखित है—(1) उसके हस्ताक्षर से सर्वोच्च सोवियत के कानून प्रकाशित होते है। (2) वह प्रेसीडियम की बैठका मे सभापति रहता है। (3) वह अ य कानूनो व आदेशो आदि पर हस्ताक्षर करता है। (4) विदेशी राज्यो के दूतो के प्रमाण पत्र वही स्वीकार करता है। (5) प्रेसीडियम के निणयो की कार्यान्विति पर देख रेख करता है।

विशिस्की के मतानुसार प्रेसीडियम का निर्माण सोवियत सघ के बहु राष्ट्रीय राज्य के सिद्धा त के अनुरूप है। इसके उप सभापति विभिन्न सघीय गणराज्यो के प्रतिनिधि हैं। प्रेसीडियम की रचना स यह भी स्पष्ट है कि सोवियत सघ मे सभी राष्ट्रा (सघीय गणराज्यो मे रहने वाले निवासियो) का पद सम है। पर तु इसकी विशेषता इसका सोवियत सघ के सर्वोच्च सत्ता के अग मे प्रमुख स्थान है। यह अपने सभी कार्यों के लिए सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी है। इसकी शक्तियो और कार्यो को इस प्रकार दर्शाया जा सकता है—सर्वोच्च सोवियत के सत्रा के बीच म अर्थात् वष के लगभग ग्यारह माह म सर्वोच्च सोवियत की सभी सावधानिक शक्तियाँ प्रेसीडियम म निहित रहती है। इसके सभी कार्यों पर सर्वोच्च सोवियत की अगले सत्र म स्वीकृति ली जाती है, किन्तु यह स्वीकृति सदा ही मिल जाती है। इस प्रकार राजनीतिक दृष्टि से प्रेसीडियम का सर्वोच्च सोवियत से अधिक है। व्यवहार मे इसकी वास्तविक सत्ता का कारण यह है कि साम्य-वादी दल इसे ही शासन का अधिक प्रभावी अग बनाना चाहता है। सोवियत सविधान के अनुसार सर्वोच्च सोवियत के सत्रो के बीच मे सघ की म त्रि-परिषद् इसी के प्रति उत्तरदायी रहती है।

अर्थात् ये मन्त्री मुख्यत दल की इच्छा के अनुसार सरकार को चलाते है। साथ ही इन मन्त्रियो के द्वारा दल को सरकार के विस्तृत और पूर्ण कार्यक्रम का पता रहता है।[1]

मन्त्रि परिषद के कार्य और शक्तियाँ—सम्पूर्ण मन्त्रि परिषद् की साधारणतया प्रति सप्ताह एक बैठक होती है। इस प्रकार सभी मन्त्री नीति निर्धारण अथवा मननात्मक कार्य में भाग लेते हैं। अत सामूहिक रूप मे मन्त्रि परिषद् कार्यपालिका सम्बन्धी नीतियों पर विचार तथा वाद विवाद और निर्णय करती है। मन्त्रि परिषद् के सदस्य अर्थात् मन्त्री विभिन्न विभागों के अध्यक्ष होते हैं। अतएव प्रजातन्त्री राज्यो की केबिनेटो की तरह सोवियत संघ मे भी मन्त्रि-परिषद् के दो प्रकार के कार्य है—सामूहिक रूप मे और व्यक्तिगत मन्त्रियो के विभागो के अध्यक्ष रूप में। संविधान की धारा 64 मे मन्त्रि-परिषद् को 'राज्य सत्ता का सर्वोच्च कार्यपालिका और प्रशासनिक अंग' बताया गया है। संविधान के अनुसार मन्त्रि-परिषद् सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी है और जिन दिनो सर्वोच्च सोवियत का सत्र नही होता यह प्रेसीडियम के प्रति उत्तरदायी होती है। मन्त्रि परिषद् के मुख्य कार्य अग्रलिखित हैं—(1) राज्य के कानूनो को कार्यान्वित करना, (2) अखिल-संघीय तथा संघीय गणतन्त्रीय मन्त्रालयो के कार्यो मे समन्वय कायम रखना, (3) राष्ट्रीय योजना का प्रशासन, (4) संघ के बजट व आर्थिक नीति का प्रशासन, (5) सार्वजनिक व्यवस्था और सुरक्षा बनाये रखना, (6) वैदेशिक सम्बन्धो का संचालन, और (7) सशस्त्र सेनाओं का सम्बन्ध। इनके अतिरिक्त मन्त्रि परिषद् व्यक्तिगत मन्त्रियो द्वारा जारी किये गये आदेशो को रद्द कर सकती है, यदि ऐसा करना उचित समझे।

मन्त्रि परिषद् कानूनो के आधार पर आज्ञप्तियां व आदेश (decrees and orders) जारी करती है और यह देखती है कि उन्हें ठीक प्रकार से कार्यान्वित किया जाता है। मन्त्रि परिषद् के निदेशो और आदेशो का सम्पूर्ण राज्य क्षेत्र मे पालन होना जरूरी है, परन्तु ये निदेश और आदेश प्रेसीडियम की आज्ञप्तियो के विरुद्ध नही हो सकते। निदेशो का सम्बन्ध सामान्य व्यवहार के नियमो से है और आदेशो का विशेष मामला से।[2]

मन्त्रि परिषद् के अन्तर्गत आयोग और समितियाँ—मन्त्रि परिषद् के साथ बहुत-सी समितियाँ और आयोग लगे हुए हैं। उनमें से कुछ प्रमुख ये है—राज्यीय नियोजन समिति, राज्यीय बैंक का बोर्ड, कला समिति, राज्यीय नियन्त्रण समिति, आर्थिक परिषद् इत्यादि। इन निकायों के अध्यक्ष मन्त्रि परिषद् की बैठको मे नियमित रूप से भाग लेते हैं, क्योंकि वे भी उनके सदस्य हैं। 1946 से शिक्षा समिति का सभापति भी मन्त्रि परिषद् का सदस्य बन गया है। इसके अतिरिक्त कुछ समितियाँ इन विषयो के बारे मे हैं—नाप और तोल, भूगर्भ सम्बन्धी मामले, ब्राडकास्टिंग, स्टेलिन पारितोषिक। इनमे से अधिकतर का सम्बन्ध अखिल संघीय मामलो से है, किन्तु कुछ का ऐसे मामलो से भी है जो अधिकांशत गणराज्यो के अधिकार-क्षेत्र मे आते हैं, जैसे शारीरिक व्यायाम और खेल। ये समितियां साधारणतया अपने से सम्बन्धित विभागो से कार्यों की देख रेख करती हैं, इनके कार्य प्रशासनिक नहीं हैं।

उपर्युक्त निकायों—कमीशनो, बोर्ड व कमेटियो—में से कुछ की रचना के लिए तो

[1] The body of nine the Presidium of the Council of Ministers is the closest analogy in Russia to the cabinet in Britain or France The Presidium of the Council of Ministers is the funnel through which the party Presidium exerts its will for more specific formulation and execution —Finer II *op cit* pp 626 27

[2] Directives are acts establishing rules of generalization and understood to be constantly operative until they shall have been abrogated or have lost their force Orders are acts operative on a single occasion and regulating separate and definitive cases —Vyshinsky A V *The Law of the Soviet State* p 375

सविधान मे ही प्राविधान है, जैसे नियोजन समिति और राज्यीय नियन्त्रण समिति जिनके सगठन का विवेचन अ य अध्याया म किया गया है। अ य निकायो की स्थापना मं त्र परिपद् ने आवश्यक्तानुसार समय समय पर की है। आर्थिक परिपद् क कत्तव्य इस प्रकार है—(अ) राष्ट्रीय अथव्यवस्था सम्ब धी वार्पिक और त्रमासिक योजनाओ पर विचार करना, (आ) योजनाओ का अनुसमथन, (इ) आर्थिक योजनाओ के पूर्ति सम्ब धी मामले। अ त म यह तो ऊपर बताया जा चुका है कि प्रत्यक सघीय गणराज्य की मं त्र परिपद् का सभापति सघीय मं त्र परिपद् का पदेन-सदस्य होता है। इस प्रकार सघीय सरकार की नीति के निर्माण मे गणराज्या के प्रतिनिधि भाग लेते है। साथ ही यह व्यवस्था भी है कि प्रत्येक अखिल सघीय म त्रालय का एक प्रतिनिधि प्रत्येक सघीय गणराज्य म रहे, जो 1936 के सविधान के अनुसार गणराज्य की मं त्र परिपद् के सदस्य होते है। सघीय गणराज्यीय म त्रालयो क प्रतिरूप म त्रालय और म त्री गणराज्या म होते ही है। इस प्रकार सघ सरकार व गणराज्यो की सरकारो के बीच सामजस्य व उनके कार्यों म सम वय स्थापित होता है।

प्रेसीडियम—यह एक अनोखी सस्था है जो शासन की तीना ही शाखाओ के काय करती है, कि तु उसका मुरय भाग कायपालिका के क्षेत्र म ही है। वह एक प्रकार की सामूहिक कार्यपालिका है। अत उसका विवेचन वही करना उपयुक्त होगा। स्टेलिन तथा अ य लेखको ने इसे सोवियत सघ का सामूहिक प्रधान (Collegial President) बताया है। वास्तव म, यह सर्वोच्च सोवियत की एक स्थायी समिति है, जैसा कि इसकी रचना और कार्यों से स्पष्ट होगा, किन्तु यह बात भी पूणतया सत्य नही है, क्योकि इसके सभी सदस्य सर्वोच्च सोवियत के सदस्य नही हाते। प्रेसीडियम के सदस्या का चुनाव सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदना की सयुक्त बैठक मे नई सर्वोच्च सोवियत के प्रथम सत्र के अ त म होता है। प्रेसीडियम म एक सभापति, सोलह उप-सभापति एक सेक्रेटरी और प द्रह अ य सदस्य हैं अर्थात् इसके कुल सदस्यो की सख्या इस समय तैंतीस है। प्रथा यह है कि सोलह उप सभापति सोलह सघीय गणराज्यो की प्रेसीडियम क सभापति होत हैं। प्रेसीडियम स्वय एक सामूहिक प्रधान है। परन्तु प्रेसीडियम का सभापति ही सोवियत सघ का प्रधान कहलाता है। उसे अ य राज्यो के अध्यक्षो की तरह कोई विशेपाधिकार प्राप्त नही है। उसक विशेप काय अग्रलिखित है—(1) उसके हस्ताक्षर से सर्वोच्च सोवियत के कानून प्रकाशित होते है। (2) वह प्रेसीडियम की बैठका म सभापति रहता है। (3) वह अ य कानूनो व आदेशो आदि पर हस्ताक्षर करता है। (4) विदेशी राज्यो क दूता के प्रमाण पत्र वही स्वीकार करता है। (5) प्रेसीडियम क निणया की कार्यान्विति पर देख रेख करता है।

विशिस्की के मतानुसार प्रेसीडियम का निर्माण सोवियत सघ के बहु राष्ट्रीय राज्य के सिद्धा त के अनुरूप है। इसके उप सभापति विभिन्न सघीय गणराज्या के प्रतिनिधि हैं। प्रेसीडियम की रचना से यह भी स्पष्ट है कि सोवियत सघ मे सभी राष्ट्रा (सघीय गणराज्या मे रहने वाले निवासियो) का पद सम है। पर तु इसकी विशेपता इसका सोवियत सघ क सर्वोच्च सत्ता के अगा म प्रमुख स्थान है। यह अपने सभी कार्यों के लिए सर्वोच्च सावियत के प्रति उत्तरदायी है। इसकी शक्तिया और कार्यों को इस प्रकार दर्शाया जा सकता है—सर्वोच्च सोवियत क सत्रा के बीच म अर्थात् वप के लगभग ग्यारह माह म सर्वोच्च सावियत की सभी सावैधानिक शक्तियाँ प्रेसीडियम म निहित रहती है। इसके सभी कार्यों पर सर्वोच्च सोवियत के अगल सत्र म स्वीकृति ली जाती है किन्तु यह स्वीकृति सदा ही मिल जाती है। इस प्रकार राजनीतिक दृष्टि से प्रेसीडियम का सर्वोच्च सोवियत स अधिक है। व्यवहार म इसकी वास्तविक सत्ता का कारण यह है कि साम्यवादी दल इसे ही शासन का अधिक प्रभावी अग बनाना चाहता है। सोवियत सविधान क अनुसार सर्वोच्च सोवियत के सत्रा क बीच म सघ की मं त्र परिपद् इसी क प्रति उत्तरदायी रहती है।

इस सिद्धान्त के अन्तर्गत प्रेसीडियम मन्त्रि परिषद् के निर्णयों को, यदि वे कानून के विरुद्ध हों, रद्द कर सकती है। प्रेसीडियम संघीय गणराज्यों की मन्त्रि परिषद् के निर्णयों को भी इसी प्रकार रद्द कर सकती है, यदि वे भी सोवियत कानूनों के विरुद्ध हों। प्रेसीडियम की शक्तियाँ केवल विधायी ही नहीं, कार्यकारी भी हैं। विदेशी सरकारों के दूत और प्रतिनिधि प्रेसीडियम के सभापति से सरकारी रूप में भेंट करने आते हैं, विदेशी राज्यों से शिष्टाचारिक सन्देश भी उसी के पास आते हैं और वह उनका उत्तर देता है। सभी सरकारी आज्ञप्तियों पर, जो प्रेसीडियम की स्वीकृति के लिए पेश की जाती है, वही हस्ताक्षर करता है। ये सभी कार्य सभापति प्रेसीडियम के नाम से करता है। इस प्रकार प्रेसीडियम सोवियत शासन का औपचारिक व सामूहिक अध्यक्ष है। इस दृष्टि से उसका स्थान ब्रिटिश राजा अथवा रानी के समान है।[1]

इस क्षेत्र में प्रेसीडियम के अन्य अधिकार अग्रलिखित हैं (1) यह सर्वोच्च सोवियत के चुनावों के लिए आदेश निकालती है, उसके सत्र आहूत करती है और इसे सर्वोच्च सोवियत का विघटन करने की शक्ति भी प्राप्त है। (2) सर्वोच्च सोवियत के सत्रों के बीच में उसे युद्ध की घोषणा करने का अधिकार है। यह सेनाओं को पूर्ण अथवा आंशिक रूप से युद्ध के लिए गतिमान कर सकती है। (3) यह सशस्त्र सेनाओं के सर्वोच्च कमाण्डरों को हटा व नियुक्त कर सकती है। (4) यह सोवियत सरकार के विदेशों में राजदूत नियुक्त करती है और उन्हें वापस भी बुला सकती है। (5) वैदेशिक मामलों के क्षेत्र में यह महत्त्वपूर्ण समझौतों का पुष्टीकरण भी करती है। सोवियत सरकार की ओर से संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर का पुष्टीकरण प्रेसीडियम ने ही किया था।

सोवियत संघ का सर्वोच्च न्यायिक निकाय प्रेसीडियम ही है। सर्वोच्च सोवियत द्वारा बने कानूनों की सांविधानिकता पर सर्वोच्च न्यायालय को निर्णय देने के अधिकार प्राप्त नहीं हैं वह ऐसे मामलों को प्रेसीडियम के सामने लाये जाने की सिफारिश करती है। संविधान का निर्वचन यथार्थ में प्रेसीडियम ही करती है। इसके अतिरिक्त प्रेसीडियम को क्षमा दान का भी अधिकार प्राप्त है। अन्य कार्यों में ये मुख्य हैं—(1) यह सोवियत नागरिकों को सम्मानसूचक उपाधियाँ और पदक आदि प्रदान करती हैं। (2) सोवियत संघ की नागरिकता पाने व छिन जाने आदि प्रश्नों का निर्णय करती है। (3) अपने पहल अथवा किसी संघीय गणराज्य की माँग पर यह किसी प्रश्न पर जन निर्णय (referendum) करा सकती है। (4) यह कानूनों के आधार पर आज्ञप्तियाँ जारी करती है। परन्तु जिन आज्ञप्तियों का स्वरूप विधायी होता है उन पर आगामी सत्र में सर्वोच्च सोवियत की स्वीकृति मिलना आवश्यक है।[2] इसके अतिरिक्त मन्त्रियों की नियुक्ति व उनके अपदस्थ करने सम्बन्धी आज्ञप्तियों पर सर्वोच्च सोवियत की स्वीकृति पाना आवश्यक है।

प्रेसीडियम की सत्ता सर्वोच्च सोवियत की अवधि के अन्त अथवा उसके विघटन के बाद तक कायम रहती है। वास्तव में, यह तब कार्य करती है जब तक कि नई सर्वोच्च सोवियत का चुनाव न हो जाये और उसका सत्र न हो। सर्वोच्च सोवियत पहले ही सत्र में प्रेसीडियम का चुनाव करती है। इसकी शक्तियों में ये बहुत महत्त्वपूर्ण हैं—(1) मन्त्रि परिषद् और गणतन्त्रीय सरकारों

[1] The Soviet Presidium is however considered the formal collective head of government of the Soviet Union In this respect it holds a position which is similar in many ways to that of the British reigning monarch —Beukema et al *Contemporary Foreign Governments* p 331

[2] The Presidium issues decrees which like the laws of the Supreme Soviet have equal force in all Soviet Republics But the decrees of the Presidium must be based on the *all union laws in operation and must come within their purview* This distinguishes a decree from law —Karpinsky V *The Social and State Structure of the U S S R* p 119

के निणयो को रद्द कर सकती है । यह बहुत से उच्च अधिकारियो व सेनापतियो को नियुक्त करती है । (2) यह युद्ध की घोषणा और कूटनीतिक सम्बन्धो का प्रशासन भी कर सकती है । (3) मन्त्रिपरिषद् इसके प्रति उत्तरदायी है और यह उसके बनाय गये कानूनो को अवैध घोषित नही कर सकती अर्थात् प्रेसीडियम को सर्वोच्च सावियत द्वारा पास किये गये कानूनो पर प्रतिषेध की शक्ति नही है। सक्षेप मे, प्रेसीडियम को शासन के प्राय सभी क्षेत्रो मे महत्त्वपूण शक्तियाँ प्राप्त है और यह लगभग निरन्तर काय करती रहती है । इस विषय मे फाइनर ने लिखा है—

'इस प्रकार विधि निर्माण की वास्तविक शक्ति प्रेसीडियम के हाथो मे है । इसके आगे, यह कानूनो का निवचन करती है । इसे अधिकारियो को नियुक्त करने और उन्ह पदो से हटाने की शक्ति प्राप्त है । इनमे मन्त्र परिषद् के सदस्य भी आते हैं, जिन्ह प्रेसीडियम सर्वोच्च सोवियत के सत्रो के मध्यकाल मे अपदस्थ कर सकती है । इस प्रकार, मन्त्रियो की छाट और उन्हे अपदस्थ करने के बारे मे औपचारिक पुष्टीकरण के सिवाय, केबिनेट का निर्माण और उसका पूण नियन्त्रण प्रेसीडियम मे निहित है ।'[1]

अन्तिम विचार—सविधान म कहा गया है कि मन्त्र-परिषद् सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी है । व्यवहार मे मन्त्र परिषद् ब्रिटेन मे केबिनेट जैसी नही है, और न यह सामूहिक रूप से सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी ही है । यद्यपि मन्त्र-परिषद् के सभापति का प्रधानमन्त्री कहा जाता है । वह ब्रिटेन या भारत के प्रधानमन्त्री के समान नही है । मन्त्रि परिषद् को सर्वोच्च सोवियत को विघटित करने का भी अधिकार नही है । मन्त्रियो की नियुक्ति साम्यवादी दल की प्रेसीडियम द्वारा की जाती है और वही मन्त्रियो को अपदस्थ करती है । औपचारिक रूप से मन्त्रियो की नियुक्ति आदि सर्वोच्च सोवियत द्वारा की जाती है । आज तक किसी भी मन्त्र परिषद् अथवा मन्त्री को सर्वोच्च सोवियत के विरुद्ध मत अथवा आलोचना व निन्दा के कारण पद त्याग नही करना पडा है । इस आलोचना म बहुत सत्याश है कि सोवियत सघ मे मन्त्रि परिषद् अन्य ससदीय राज्यो के समान ससद के प्रति उत्तरदायी नही है । अन्य लेखक भी यह नही मानते कि मन्त्रि परिषद्, वास्तव मे, सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी है । उसके अनुसार यह एक सावधानिक भाषा की काल्पनिक रचना है और औपचारिकता की बात है । सरकार की नीति तो साम्यवादी दल निर्धारित करता है, सम्भवतया यह तो साम्यवादी दल के निणयो का अनुसमर्थन करती है । वैसे भी मन्त्र परिषद् तो इस काम के लिए बहुत ही बडा और भारी भरकम निकाय है । सक्षेप मे, यह कहा जा सकता है कि सोवियत सरकार का बाह्य रूप तो मन्त्रिमण्डलात्मक पद्धति जैसा है परन्तु यथाथ म वास्तविकता यह नही है । स्कॉट के मतानुसार तो मन्त्रि परिषदें जार की मन्त्रि समिति की तरह सामूहिक रूप मे, साम्यवादी दल की नीति के अनुसार आज्ञप्तिया आदि जारी करती है ।[3] अन्त म प्रेसीडियम की रचना, पाश्चात्य लेखको के अनुसार, इस बात का प्रतीक है कि साम्यवादी दल किस प्रकार से सोवियत शासन पर नियन्त्रण करता है, यह काय दल के प्रभावशाली नताओ को शासन के कई पदो पर रखकर किया जाता है । यह सच है कि दल के प्रमुख नेता सर्वोच्च सोवियत, मन्त्रि परिषद् व प्रेसीडियम के महत्त्वपूण सदस्य होते है ।

---

[1] Finer H *op cit* p 667

[2] the Council of Ministers is not responsible to the Supreme Council in the sense in which Cabinets of Great Britain and France are responsible to their Parliaments —Ogg and Zink *Modern Foreign Governments* p 366

[3] Apart from the acts of their several members Councils of Ministers at all levels are like the Tsars Committee of ministers empowered to issue decrees and dispositions in their corporate capacities —Scott Dereck J R *Russian Political Institutions* p 120

5 चीन के जनवादी गणतन्त्र मे कार्यपालिका

चेयरमन—राज्य का अध्यक्ष (Head of State) गणतन्त्र का चेयरमैन होता है। गणतन्त्र के चेयरमैन का चुनाव राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस द्वारा किया जाता है। चीन का कोई भी ऐसा नागरिक, जिसे मताधिकार और चुनाव के लिए खडे होने का अधिकार प्राप्त हो और जिसकी आयु कम से कम 35 वर्ष हो, इस पद के लिए उम्मीदवार बन सकता है। गणतन्त्र के चेयरमैन की अवधि चार वर्ष है। कुछ लेखको का मत है कि चीन मे गणतन्त्र के चेयरमन की शक्तियाँ महत्त्वपूर्ण हैं। चेयरमैन का पद सोवियत सघ की प्रेसीडियम के चेयरमैन की तरह केवल ध्वजमात्र नही है। चीन मे प्रीमियर और उसकी केबिनेट गणतन्त्र के चेयरमैन से कम शक्तिशाली हैं, क्योकि वे कुछ सीमा तक राज्य के अध्यक्ष (चेयरमैन) की छाया मे आ जाते हैं।

गणतन्त्र के चेयरमैन के कार्यों व उसकी शक्तियो का सक्षिप्त वर्णन अग्रलिखित है—धारा 40 के अनुसार जनवादी लोकतान्त्रिक चीन का चेयरमैन राष्ट्रीय काग्रेस या उसकी स्थायी समिति के निर्णयो के अनुसार कानूनो और आदेशो को जारी करता है, प्रधानमन्त्री, उप प्रधानमन्त्री मन्त्रियो, समितियो के अध्यक्षो और मन्त्रिमण्डल के सचिवालय के प्रधान को नियुक्त करता है या हटाता है। राष्ट्रीय रक्षा समिति के उपाध्यक्षो और सदस्यो को नियुक्त करता है या हटाता है। राज्य की उपाधियाँ तथा पदक और सम्मानसूचक उपाधियाँ प्रदान करता है, सर्वसाधारण क्षमा दान और माफी के आदेशो की घोषणा करता है, मार्शल लॉ की घोषणा करता है, युद्ध की स्थिति की घोषणा करता है और आम भर्ती के लिए आदेश देता है। धारा 41 के अनुसार विदेशी राज्यो के साथ जनवादी लोकतान्त्रिक चीन के सम्बन्धो के विषय मे जनवादी लोकतान्त्रिक चीन का चेयरमैन उसका प्रतिनिधित्व करता है। वह विदेशी दूतो से भेंट करता है। राष्ट्रीय काग्रेस के स्थायी समिति के निर्णयो के अनुसार वह विदेशी राज्यो के लिए विशेष अधिकार प्राप्त प्रतिनिधि नियुक्त करता है या उन्हे वापस बुलाता है और विदेशी राज्यो के साथ हुई सन्धियो को स्वीकार करता है। धारा 42 के अनुसार, देश की सैनिक शक्तियो की कमान जनवादी लोकतान्त्रिक चीन के अध्यक्ष के हाथ मे रहती है और वह राष्ट्रीय रक्षा समिति का अध्यक्ष होता है।

वाइस चेयरमन—जनवादी लोकतान्त्रिक चीन का वाइस चेयरमैन, चेयरमैन के काम में उसकी सहायता करता है। चेयरमैन के कार्यों और अधिकारो में से उन कार्यों को वाइस चेयरमैन कर सकता है और उन अधिकारों का उपयोग कर सकता है जिन्हे चेयरमैन उसके हाथो मे सौंपे। जनवादी लोकतान्त्रिक चीन के चेयरमैन के चुनाव और उसके कार्यकाल को निर्धारित करने वाली शासन विधान की धारा 39 की बातें जनवादी लोकतान्त्रिक चीन मे वाइस चेयरमन के चुनाव और कार्यकाल पर लागू होती हैं। जनवादी लोकतान्त्रिक चीन मे चेयरमन और वाइस चेयरमैन उस समय तक अपने कार्य करते हैं और अपने अधिकारो का उपयोग करते हैं जब तक आने वाली राष्ट्रीय काग्रेस द्वारा चुने गये नये चेयरमैन और वाइस चेयरमैन कार्य भार नहीं सम्भाल लेते। जनवादी लोकतान्त्रिक चीन का चेयरमैन अगर अस्वस्थता के कारण एक लम्बे काल के लिए काम करने योग्य न रहे तो अध्यक्ष के नाम पर उसके कार्यों को वाइस-चेयरमैन करेगा और उसके अधिकारो का उपयोग करेगा। यदि जनवादी लोकतान्त्रिक चीन मे चेयरमैन का पद रिक्त हो जाय तो चेयरमैन के पद पर वाइस चेयरमन आसीन होगा।

चीन मे जनवादी गणतन्त्र के चेयरमैन का पद अनोखा है। उसकी सोवियत सघ के राष्ट्रपति से तुलना नहीं की जा सकती, क्योकि सोवियत सघ मे राष्ट्रपति का कोई स्वतन्त्र सांविधानिक पद नही है और न ही उसे कोई शक्तियाँ प्राप्त हैं। वास्तव मे सोवियत सघ मे मंत्र के

राष्ट्रपति के लिए कोई पृथक् से व्यवस्था नही है। वहाँ तो सर्वोच्च सोवियत की प्रेसीडियम के प्रधान को ही सोवियत राज्य का प्रधान कहते हैं। परन्तु चीन गणत त्र के सविधान की धारा 39 मे जनवादी गणत त्र के चेयरमैन के लिए व्यवस्था स्पष्ट रूप मे की गयी है और उसके अनुसार उसकी अवधि चार वष है तथा उसके निर्वाचन एव अहताओ के विषय मे भी आवश्यक बातें दी गयी है। उसे कुछ विशिष्ट शक्तिया तथा काय भी सौपे गये है, जिनमे से कुछ को वह बिना राष्ट्रीय जन काग्रेस की सहायता व सहयोग स कर सकता है। धारा 42 ने उसम सशस्त्र सेनाओ की कमान निहित की है और उसे राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् का चेयरमैन भी बनाया है। धारा 43 ने उसे शक्ति प्रदान की है कि वह जब आवश्यक समझे 'सर्वोच्च राज्य सम्मेलन' को आहूत कर सकता है। गणतन्त्र का चेयरमैन महत्त्वपूण मामलो पर सर्वोच्च राज्य सम्मेलन के मता को राष्ट्रीय जन काग्रेस, उसकी स्थायी समिति, राज्य परिषद् और अन्य सम्बन्धित निकायो के सामने उनके विचाराथ तथा निणय के हेतु रख सकता है। सक्षेप म, चीनी गणत त्र के चेयरमैन को समानान्तर सोवियत सविधान मे कोई पद नही है। उसके समान पदाधिकारी सयुक्त राज्य अमरीका या फास मे भी नही है। उसका पद सोवियत सघ की प्रेसीडियम के प्रधान से कुछ ही बातो मे मिलता है। वह कौसिल या समिति का मुख्य सदस्य नही है जैसा कि सोवियत सघ मे प्रेसीडियम का प्रधान उसका मुख्य प्रवक्ता होता है।

चीनी सविधान के अनुसार, गणतन्त्र के चेयरमैन के सीधे नियन्त्रण और देख रेख के अधीन दो नीति निर्मातृ अग है, जिनके द्वारा वह राजनीतिक और सैनिक मामलो पर विशेष प्रभाव डाल सकता है। ये दो अग सर्वोच्च राज्य सम्मेलन और राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् हैं। *सविधान की धारा 43 के अनुसार सर्वोच्च राज्य सम्मेलन एक प्रकार का तदथ निकाय है।* इसमे जनवादी गणतन्त्र से चेयरमैन, वाइस-चेयरमैन, राष्ट्रीय जन काग्रेस की स्थायी समिति का सभापति, प्रधानमन्त्री अथवा राज्य परिषद् का सभापति और कोई दो ऐसे व्यक्ति सदस्य होते हैं जिन्हे गणतन्त्र का चेयरमैन उसकी सदस्यता के लिए आमन्त्रित करे। जब भी आवश्यकता पडती है सर्वोच्च राज्य सम्मेलन को गणतन्त्र का चेयरमैन बुलाता है और वही उसकी बैठको का सभापतित्व करता है। 1958 तक इसके चार बडे सत्र बुलाये गये थे। प्रथम सत्र जनवरी 1956 मे हुआ था, जिसम माओत्से तुग द्वारा प्रतिपादित समाजवाद के ध्येय की प्राप्ति से सम्बन्धित *कायक्रम स्वीकृत किया गया था। दूसरा सत्र मई 1956 मे हुआ जिसमे व्यक्तिगत नेतृत्व का अन्त* करने (de Stalinization) के प्रश्न पर विचार किया गया था। चौथा सत्र अक्तूबर 1957 मे हुआ था, जिसमें सुधार अभियान और कृषि की स्थिति पर विचार हुआ था।

राज्य के महत्त्वपूण मामला से सम्बन्धित प्रश्नो पर सम्मेलन के निणयो को गणतन्त्र का चेयरमैन, राष्ट्रीय जन काग्रेस, उसकी स्थायी समिति अथवा मन्त्रिमण्डल के सम्मुख विचार और निणय के लिए रखता है। इस प्रकार सर्वोच्च राज्य सम्मेलन गणतन्त्र के चेयरमैन के लिए प्रथमत एक वैयक्तिक फोरम—विचारो की अभिव्यक्ति का सावजनिक प्लेटफाम—है।[1] जहाँ तक सर्वोच्च राज्य सम्मेलन की रचना का सम्बन्ध है, इसम गणतन्त्र का वाइस चेयरमन, राष्ट्रीय जन-काग्रेस की स्थायी समिति का चेयरमैन, राज्य-परिषद् का प्रीमियर और अन्य उच्च अधिकारी भाग लेते हैं। इनके अतिरिक्त व्यवहार मे, इस सम्मेलन मे गणतन्त्र का चेयरमैन जो साम्यवादी दल का भी प्रमुख है, सम्मिलित रहता है।

सैनिक मामलो के क्षेत्र मे, धारा 42 के अन्तगत, चेयरमैन सशस्त्र सेनाओ का सेनापति

[1] The Supreme State Conference serves primarily as a personal *forum* at which the Chairman can put his own views directly before the public —Kahim G M (ed) *Major Governments of Asia* p 82.

है और वह राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् का पदेन सभापति भी है। वतमान शासन पद्धति म प्रतिरक्षा म त्रालय, जो राज्य परिषद् का अग है, देखने मे सशस्त्र सेनाओ के ऊपर एकीकृत कमान के कृत्यो का प्रयोग करता है। परन्तु सैनिक मामलो के लिए बनी प्रतिरक्षा परिषद् और उसके सभापति क स्थान और महत्त्व को ध्यान म रखना आवश्यक है। जहाँ तक परिषद् की रचना का सम्बन्ध है, उसका सभापति गणतन्त्र का उप सभापति होता है। और उसके प द्रह उप-सभापति है जिनमे गणतन्त्र का उप सभापति प्रमुख है। उनके अतिरिक्त इसम 81 साधारण सदस्य हैं, और इस प्रकार कुल सदस्यो की सख्या 97 है। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् की सदस्यता क ऊपर ध्यानपूवक विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि यह चीन के सर्वोच्च सनिक अधिकारियो का निकाय है, जो सैनिक गतिविधियो के लिए 'ब्रेन ट्रस्ट' की तरह काम करता है।

यह परिषद् राज्य परिषद् से अलग है और ऐसा प्रतीत होता है कि इसका प्रतिरक्षा मन्त्रालय पर कोई प्रत्यक्ष नियन्त्रण नही है। इसका काय मुख्यत प्रतिरक्षा सम्बन्धी मामलों मे नीति निर्धारण और नियोजन का है। देश के चोटी के सैनिक नता इसके सदस्य हैं, अतएव सैनिक मामलो के क्षेत्र म इसका महत्त्व अवश्य ही बडा होना चाहिए। पूवगामी सनिक परिषद् (Military Council) एक अत्यधिक शक्तिशाली निकाय था, जो यथाथ मे सशस्त्र सेनाओं पर निय त्रण रखता था और सैनिक उच्च कमान सीधे उसके अधीन था। इनमे से एक भी बात राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् के बारे मे सच नही है। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् की बैठकें बहुत कम होती है। जहाँ तक सशस्त्र सेनाओ पर नियन्त्रण का सम्ब ध है उसमे चीन की सेना का जनरल स्टॉफ (General Staff of the People's Liberation Army) और प्रतिरक्षा मन्त्रालय भाग लेते हैं।

राज्य परिषद्—जनवादी लोकतान्त्रिक चीन अर्थात् केन्द्रीय जनवादी सरकार की राज्य परिषद् (The State Council) राज्य शक्ति के सर्वोच्च अग की कायपालिका (कायकारिणी समिति) है, यह राज्य का सर्वोच्च प्रशासनिक अग है।[1] राज्य परिषद्, जिस साधारण भाषा में चीन का मन्त्रिमण्डल कहा जा सकता है इन व्यक्तियो से मिलकर बनती है—प्रधानमन्त्री, उप प्रधानम त्री, मन्त्रिगण, आयोगो के अध्यक्ष और सचिवालय का प्रधान। सविधान मे मन्त्रिमण्डल के सगठन के सम्बन्ध मे विस्तार की बातें नही दी गयी है। धारा 48 के अन्त मे कहा गया है कि राज्य परिषद् के सगठन का निर्धारण कानून द्वारा होगा। 1966 म राज्य परिषद् के सदस्य इस प्रकार थे—प्रधानमन्त्री (Premier), 16 उप प्रधानमन्त्री (जिनमे के 8 मन्त्री थे), 38 अन्य मन्त्री या आयोगो के चेयरमैन (जिनका दर्जा मन्त्रियो के समान था) और सेक्रेटरी जनरल। मन्त्रिमण्डल के कार्यों का सचालन प्रधानमन्त्री करता है और वही उसकी बैठको मे सभापतित्व करता है। प्रधान मन्त्री के कार्य म उप प्रधानमन्त्री उसकी सहायता करते हैं। सविधान की धारा 51 के अनुसार मन्त्री और आयोगो के अध्यक्ष (Heads of the Commissions) अपने अपने विभागों क कार्यों का सचालन करते है। अपने अपने विभागो के अधिकार क्षेत्र की सीमाओ के भीतर और कानूनों व आज्ञप्तियो तथा मन्त्रिमण्डल के निणयो व आदेशो के अनुसार, वे आदेश और निदेश जारी कर सकते हैं। धारा 52 के अनुसार मन्त्रिमण्डल राष्ट्रीय जन काग्रेस के प्रति और जब उसका सत्र न हो रहा हो, तब उसकी स्थायी समिति के प्रति उत्तरदायी रहता है और उनके आगे रिपोर्ट पेश करता है।

धारा 49 के अनुसार मन्त्रिमण्डल अग्रलिखित काय करता है और उनसे सम्बन्धित

---

[1] The State Council of the People s Republic of China that is the Central People s Government is the executive of the highest organ of State power, it is the highest administrative organ of the State —Tang Peter S H *Communist China Today* pp 184-85

अधिकारो का प्रयोग करता है—

(1) कानूनो और आज्ञप्तियो के अनुसार यह विभिन्न विभागो के प्रशासनिक कार्यों को निर्धारित करता है, उनके निणयो और आदेशो की घोषणा करता है और उनके काय पालन की देखभाल करता है। (2) कानून सम्बन्धी विधेयको को राष्ट्रीय काग्रेस या उसकी स्थायी समिति के सामने पेश करता है। (3) विभिन्न विभागो, के कार्यो मे समन्वय स्थापित करता है। (4) मन्त्रियो अथवा समितियो के अध्यक्षो द्वारा जारी किये गये अनुपयुक्त निणयो और आदेशो मे सशोधन करता है या उनको रदद् करता है। (5) स्थानीय समितियो के अनुपयुक्त निणयो और आदेशो मे सशोधन करता है या उनको रदद् करता है। (6) राष्ट्रीय आर्थिक योजनाओं और बजट को लागू करता है। (7) विदेशी और घरेलू व्यापार पर नियन्त्रण रखता है। (8) सास्कृतिक, शिक्षा सम्बन्धी और सावजनिक स्वास्थ्य के कार्यों का सचालन करता है। (9) राष्ट्रीयताओ से सम्बन्धित कार्यों का सचालन करता है। (10) विदेशो मे रहने वाले चीनियो से सम्बन्धित कार्यो का सचालन करता है। (11) राज्य के हितो की रक्षा करता है सावजनिक व्यवस्था कायम रखता है और नागरिको के अधिकारो की रक्षा करता है। (12) वैदेशिक सम्बन्धो का सचालन करता है। (13) सशस्त्र शक्तियो के निर्माण का सचालन करता है। (14) स्वशासित जिलो, तहसीलो और म्युनिसिपैलिटियो के पद और सीमाओ को स्वीकार करता है। (15) कानून द्वारा निर्धारित प्रणाली के अनुसार प्रबन्धक अधिकारियो को नियुक्त करता है या हटाता है। (16) ऐसे अन्य कार्यों को भी करता है और अधिकारा का उपयोग करता है जिन्हे राष्ट्रीय काग्रेस या उसकी स्थायी समिति ने उसके हाथो म सौप दिया हो।

चूंकि राज्य-परिषद् राष्ट्रीय जन काग्रेस का कायकारी अग है, अत वह यह उसके नियन्त्रण व परिवीक्षण के अधीन है। इसके काय और शक्तिया, जिनका प्रगणन ऊपर किया जा चुका है विभिन्न प्रकार की हैं। प्रथम, यह प्रशासनिक पगो को निर्धारित करती है, आदेशो व निणयो को जारी करती है और इस बात को देखती है कि उनका सविधान, कानून व आज्ञप्तियो के अनुसार पालन होता है। यह राष्ट्रीय जन-काग्रेस या उसकी स्थायी समिति के सामने विधेयक भी प्रस्तुत करती है। दूसरे, यह विभिन्न मन्त्रालयो, आयोगो और स्थानीय प्रशासनिक अगो के कार्यों का समन्वय तथा नेतत्व करती है। इस दृष्टि से यह उनके द्वारा जारी किये गये अनुचित आदेशो को दोहरा अथवा रदद् कर सकती है। तीसरे, यह अनेक प्रकार के महत्त्वपूण काय करती है, यथा, राष्ट्रीय आर्थिक योजनाओ को कार्यान्वित करना, राजकीय बजट के प्राविधानो को लागू करना, सास्कृतिक, शक्षिक व सावजनिक स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यों का निदेशन करना, परराष्ट्रीय मामलो का सचालन करना, आदि। अन्त मे, यह प्रशासनिक अधिकारियो को नियुक्त करती है तथा उनको पदो से हटाती है।

राज्य-परिषद् अर्थात् मन्त्रिमण्डल के सम्बन्ध मे बनाये गये आधारभूत कानून (Organic Law) मे प्रधानमन्त्री के अन्तगत एक छोटी आन्तरिक केबिनेट की व्यवस्था है। इस कानून की धारा 4 के अनुसार परिषद् की स्थायी बैठक, जिसमे प्रधानमन्त्री, उप प्रधानमन्त्री और सेक्रेटरी जनरल सम्मिलित रहते हैं और सम्पूण मन्त्रिमण्डल अथवा सवशक्तिशाली सत्र जिसमे सभी मन्त्री और आयोगो के सदस्य सम्मिलित रहते है, के बीच अन्तर है। सम्पूण मन्त्रिमण्डल के निणयो व आदेशो को जारी करने सम्बन्धी सत्ता स्थायी बैठक अर्थात् आन्तरिक केबिनेट तक विस्तृत है। प्रधानमन्त्री के नीचे सात केन्द्रीय कार्यालय हैं जिनका काय मन्त्रालयो व आयोगो के कार्यों का परिवीक्षण करना तथा उनके कार्यों का समन्वय करना है।

प्रधानमन्त्री का पद—काग्रेस द्वारा प्रधानमन्त्री के चुनाव के ढग से ही स्पष्ट है कि उसका पद अधिक महत्त्वपूण नही है। काग्रेस प्रधानमन्त्री का चुनाव चेयरमन की सिफारिश पर करती

है और वह राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् का पदेन सभापति भी है। वतमान शासन-पद्धति म प्रतिरक्षा मन्त्रालय, जो राज्य परिषद् का अग है, देखने मे सशस्त्र सेनाआ के ऊपर एकीकृत कमान के कृत्यो का प्रयोग करता है। परन्तु सनिक मामलो के लिए बनी प्रतिरक्षा परिषद् और उसके सभापति के स्थान और महत्त्व को ध्यान म रखना आवश्यक है। जहाँ तक परिषद् की रचना का सम्बन्ध है, उसका सभापति गणतन्त्र का उप-सभापति होता है। और उसके प द्रह उप सभापति हैं जिनम गणतन्त्र का उप सभापति प्रमुख है। उनके अतिरिक्त इसम 81 साधारण सदस्य हैं, और इस प्रकार कुल सदस्यो की सख्या 97 है। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् की सदस्यता के ऊपर ध्यानपूवक विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि यह चीन के सर्वोच्च सैनिक अधिकारियो का निकाय है जो सैनिक गतिविधिया के लिए 'ब्रेन ट्रस्ट' की तरह काम करता है।

यह परिषद् राज्य परिषद् से अलग है और ऐसा प्रतीत होता है कि इसका प्रतिरक्षा मन्त्रालय पर कोई प्रत्यक्ष नियन्त्रण नही है। इसका काय मुख्यत प्रतिरक्षा सम्बन्धी मामलो मे नीति निर्धारण और नियोजन का है। दश के चोटी के सनिक नेता इसक सदस्य हैं, अतएव सैनिक मामलो के क्षेत्र मे इसका महत्त्व अवश्य ही बडा होना चाहिए। पूवगामी सैनिक परिषद् (Military Council) एक अत्यधिक शक्तिशाली निकाय था, जो यथाथ म सशस्त्र सेनाआ पर नियन्त्रण रखता था और सनिक उच्च कमान सीधे उसके अधीन था। इनमे से एक भी बात राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् के बारे मे सच नही है। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् की बैठकें बहुत कम होती है। जहाँ तक सशस्त्र सेनाओ पर नियन्त्रण का सम्ब ध है उसमे चीन की सेना का जनरल स्टॉफ (General Staff of the People's Liberation Army) और प्रतिरक्षा मन्त्रालय भाग लेते हैं।

राज्य परिषद्—जनवादी लोकतान्त्रिक चीन अर्थात् केन्द्रीय जनवादी सरकार की राज्य परिषद् (The State Council) राज्य शक्ति के सर्वोच्च अग की कायपालिका (कायकारिणी समिति) है, यह राज्य का सर्वोच्च प्रशासनिक अग है।[1] राज्य परिषद्, जिसे साधारण भाषा मे चीन का मन्त्रिमण्डल कहा जा सकता है इन व्यक्तियो से मिलकर बनती है—प्रधानमन्त्री, उप प्रधानम त्री, मन्त्रिगण, आयोगो के अध्यक्ष और सचिवालय का प्रधान। सविधान म मन्त्रिमण्डल के सगठन के सम्बन्ध मे विस्तार की बातें नही दी गयी हैं। धारा 48 के अ त म कहा गया है कि राज्य परिषद् के सगठन का निर्धारण कानून द्वारा होगा। 1966 मे राज्य परिषद् के सदस्य इस प्रकार थे—प्रधानमन्त्री (Premier), 16 उप प्रधानमन्त्री (जिनमे के 8 मन्त्री थे), 38 अन्य मन्त्री या आयोगो के चेयरमैन (जिनका दर्जा मन्त्रियो के समान था) और सेक्रेटरी-जनरल। मन्त्रिमण्डल के कार्यों का सचालन प्रधानमन्त्री करता है और वही उसकी बैठको मे सभापतित्व करता है। प्रधान मन्त्री के काय मे उप प्रधानमन्त्री उसकी सहायता करते है। सविधान की धारा 51 के अनुसार मन्त्री और आयोगो के अध्यक्ष (Heads of the Commissions) अपने अपने विभागो के कार्यो का सचालन करते हैं। अपने अपने विभागा के अधिकार क्षेत्र की सीमाओ के भीतर और कानूनो व आज्ञप्तियो तथा मन्त्रिमण्डल के निणया व आदेशो के अनुसार, वे आदेश और निदेश जारी कर सकते है। धारा 52 के अनुसार मन्त्रिमण्डल राष्ट्रीय जन काग्रस के प्रति और जब उसका सत्र न हो रहा हो, तब उसकी स्थायी समिति के प्रति उत्तरदायी रहता है और उनके आगे रिपोट पेश करता है।

धारा 49 के अनुसार मन्त्रिमण्डल अग्रलिखित काय करता है और उनसे सम्बन्धित

[1] The State Council of the People s Republic of China that is the Central People s Government is the executive of the highest organ of State power it is the highest adminis trative organ of the State —Tang Peter S H *Communist China Today* pp 184–85

अधिकारो का प्रयोग करता है—

(1) कानूनो और आज्ञप्तिया के अनुसार यह विभिन्न विभागो के प्रशासनिक कार्यों को निर्धारित करता है, उनके निणयो और आदेशो की घोषणा करता है और उनके काय-पालन की देखभाल करता है। (2) कानून सम्बन्धी विधेयका को राष्ट्रीय काग्रेस या उसकी स्थायी समिति के सामने पश करता है। (3) विभिन्न विभागो के कार्यों मे सम वय स्थापित करता है। (4) मन्त्रियो अथवा समितियो के अध्यक्षा द्वारा जारी किये गये अनुपयुक्त निणया और आदेशो मे सशोधन करता है या उनको रद्द करता है। (5) स्थानीय समितिया के अनुपयुक्त निणया और आदशा म सशोधन करता है या उनको रद्द करता है। (6) राष्ट्रीय आर्थिक योजनाओ और बजट को लागू करता है। (7) विदेशी और घरलू व्यापार पर नियन्त्रण रखता है। (8) सास्कृतिक, शिक्षा सम्ब धी और सावजनिक स्वास्थ्य के कार्यों का सचालन करता है। (9) राष्ट्रीयताओ से सम्बन्धित कार्यों का सचालन करता है। (10) विदशा मे रहने वाले चीनियो से सम्बन्धित कार्यों का सचालन करता है। (11) राज्य के हितो की रक्षा करता है सावजनिक व्यवस्था कायम रखता है और नागरिको के अधिकारा की रक्षा करता है। (12) वैदशिक सम्ब धो का सचालन करता है। (13) सशस्त्र शक्तियो के निर्माण का सचालन करता है। (14) स्वशासित जिलो, तहसीला और म्युनिसिपलिटिया के पद और सीमाआ को स्वीकार करता है। (15) कानून द्वारा निर्धारित प्रणाली के अनुसार प्रब धक अधिकारियो को नियुक्त करता है या हटाता है। (16) ऐसे अन्य कार्यों को भी करता है और अधिकारो का उपयोग करता है जिन्ह राष्ट्रीय काग्रेस या उसकी स्थायी समिति ने उसके हाथा म सौंप दिया हो।

चूंकि राज्य-परिषद् राष्ट्रीय जन काग्रेस का कायकारी अग है, अत वह यह उसके निय त्रण व परिवीक्षण के अधीन है। इसके काय और शक्तियाँ, जिनका प्रगणन ऊपर किया जा चुका है, विभिन्न प्रकार की हैं। प्रथम, यह प्रशासनिक पगा को निर्धारित करती है, आदेशो व निणयो को जारी करती है और इस बात को देखती है कि उनका सविधान, कानून व आज्ञप्तिया के अनुसार पालन होता है। यह राष्ट्रीय जन काग्रेस या उसकी स्थायी समिति के सामने विधेयक भी प्रस्तुत करती है। दूसरे, यह विभिन्न म त्रालयो, आयोगा और स्थानीय प्रशासनिक अगो के कार्यों का सम वय तथा नेतत्व करती है। इस दृष्टि से यह उनके द्वारा जारी किये गये अनुचित आदेशो को दोहरा अथवा रद्द कर सकती है। तीसरे, यह अनेक प्रकार के महत्त्वपूण काय करती है, यथा राष्ट्रीय आर्थिक योजनाओ को कार्यान्वित करना, राजकीय बजट के प्राविधानो को लागू करना, सास्कृतिक, शक्षिक व सावजनिक स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यों का निदशन करना, परराष्ट्रीय मामलो का सचालन करना, आदि। अ त मे, यह प्रशासनिक अधिकारियो को नियुक्त करती है तथा उनको पदा से हटाती है।

राज्य परिषद् अर्थात् मन्त्रिमण्डल के सम्बन्ध मे बनाये गये आधारभूत कानून (Organic Law) मे प्रधानमन्त्री के अन्तगत एक छोटी आन्तरिक केबिनेट की व्यवस्था है। इस कानून की धारा 4 के अनुसार परिषद् की स्थायी बैठक, जिसमे प्रधानमन्त्री, उप प्रधानमन्त्री और सेक्रेटरी जनरल सम्मिलित रहते है और सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल अथवा सवशक्तिशाली सत्र जिसमे सभी मन्त्री और आयोगो क सदस्य सम्मिलित रहते है के बीच अन्तर है। सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल के निणयो व आदेशो को जारी करने सम्बन्धी सत्ता स्थायी बैठक अर्थात् आन्तरिक केबिनेट तक विस्तृत है। प्रधानमन्त्री के नीचे सात केन्द्रीय कार्यालय हैं जिनका काय मन्त्रालयो व आयागो के कार्यों का परिवीक्षण करना तथा उनके कार्यों का समन्वय करना है।

प्रधानमन्त्री का पद—काग्रेस द्वारा प्रधानम त्री के चुनाव के ढग से ही स्पष्ट है कि उसका पद अधिक महत्त्वपूण नही है। काग्रेस प्रधानमन्त्री का चुनाव चेयरमन की सिफारिश पर करती

है और वह राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् का पदेन सभापति भी है। वर्तमान शासन पद्धति मे प्रतिरक्षा मन्त्रालय, जो राज्य परिषद् का अग है, देखने म सशस्त्र सेनाओ के ऊपर एकीकृत कमान के कृत्यो का प्रयोग करता है। परन्तु सैनिक मामलो के लिए बनी प्रतिरक्षा परिषद् और उसके सभापति के स्थान और महत्त्व को ध्यान मे रखना आवश्यक है। जहाँ तक परिषद् की रचना का सम्बन्ध है, उसका सभापति गणतन्त्र का उप सभापति होता है। और उसके प द्रह उप सभापति हैं जिनमे गणतन्त्र का उप सभापति प्रमुख है। उनके अतिरिक्त इसमे 81 साधारण सदस्य हैं, और इस प्रकार कुल सदस्यो की सख्या 97 है। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् की सदस्यता के ऊपर ध्यानपूर्वक विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि यह चीन के सर्वोच्च सैनिक अधिकारियो का निकाय है, जो सैनिक गतिविधियो के लिए 'ब्रेन ट्रस्ट' की तरह काम करता है।

यह परिषद् राज्य परिषद् से अलग है और ऐसा प्रतीत होता है कि इसका प्रतिरक्षा मन्त्रालय पर कोई प्रत्यक्ष नियन्त्रण नही है। इसका कार्य मुख्यत प्रतिरक्षा सम्बन्धी मामलो मे नीति निर्धारण और नियोजन का है। देश के चोटी के सैनिक नेता इसके सदस्य हैं अतएव सैनिक मामला के क्षेत्र मे इसका महत्त्व अवश्य ही बडा होना चाहिए। पूर्वगामी सैनिक परिषद् (Military Council) एक अत्यधिक शक्तिशाली निकाय था, जो यथार्थ मे सशस्त्र सेनाओ पर नियन्त्रण रखता था और सैनिक उच्च कमान सीधे उसके अधीन था। इनमे से एक भी बात राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् के बारे मे सच नही है। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद् की बैठकें बहुत कम होती है। जहाँ तक सशस्त्र सेनाओ पर नियन्त्रण का सम्बन्ध है उसम चीन की सेना का जनरल स्टॉफ (General Staff of the People s Liberation Army) और प्रतिरक्षा मन्त्रालय भाग लेते हैं।

राज्य परिषद्—जनवादी लोकतान्त्रिक चीन अर्थात् केन्द्रीय जनवादी सरकार की राज्य परिषद् (The State Council) राज्य शक्ति के सर्वोच्च अग की कार्यपालिका (कार्यकारिणी समिति) है, यह राज्य का सर्वोच्च प्रशासनिक अग है।[1] राज्य परिषद्, जिसे साधारण भाषा मे चीन का मन्त्रिमण्डल कहा जा सकता है इन व्यक्तियों से मिलकर बनती है—प्रधानमन्त्री, उप प्रधानमन्त्री, मन्त्रिगण, आयोगो के अध्यक्ष और सचिवालय का प्रधान। सविधान मे मन्त्रिमण्डल के सगठन के सम्बन्ध मे विस्तार की बातें नही दी गयी हैं। धारा 48 के अन्त मे कहा गया है कि राज्य परिषद् के सगठन का निर्धारण कानून द्वारा होगा। 1966 मे राज्य परिषद् के सदस्य इस प्रकार थे—प्रधानमन्त्री (Premier), 16 उप प्रधानमन्त्री (जिनमे के 8 मन्त्री थे), 38 अन्य मन्त्री या आयोगो के चेयरमैन (जिनका दर्जा मन्त्रियो के समान था) और सेक्रेटरी जनरल। मन्त्रिमण्डल के कार्यों का सचालन प्रधानमन्त्री करता है और वही उसकी बैठको म सभापतित्व करता है। प्रधान मन्त्री के कार्य म उप प्रधानमन्त्री उसकी सहायता करते है। सविधान की धारा 51 के अनुसार मन्त्री और आयोगो के अध्यक्ष (Heads of the Commissions) अपने अपने विभागो के कार्यों का सचालन करते हैं। अपने अपने विभागो के अधिकार क्षेत्र की सीमाओ के भीतर और कानूनो व आज्ञप्तियो तथा मन्त्रिमण्डल के निर्णयो व आदेशो के अनुसार, वे आदेश और निदेश जारी कर सकते हैं। धारा 52 के अनुसार मन्त्रिमण्डल राष्ट्रीय जन काग्रेस के प्रति और जब उसका सत्र न हो रहा हो, तब उसकी स्थायी समिति के प्रति उत्तरदायी रहता है और उनके आगे रिपोर्ट पेश करता है।

धारा 49 के अनुसार मन्त्रिमण्डल अग्रलिखित कार्य करता है और उनसे सम्बन्धित

[1] The State Council of the People s Republic of China that is the Central People s Government is the executive of the highest organ of State power it is the highest administrative organ of the State —Tang Peter S H *Communist China Today* pp 184–85

अधिकारा का प्रयोग करता है—

(1) कानूना और आज्ञप्तिया के अनुसार यह विभिन्न विभागो के प्रशासनिक कार्यों को निर्धारित करता है, उनके निणयो और आदेशो की घोषणा करता है और उनके काय-पालन की देखभाल करता है। (2) कानून सम्बन्धी विधेयको को राष्ट्रीय काग्रेस या उसकी स्थायी समिति के सामने पेश करता है। (3) विभिन्न विभागो, के कार्यों मे समन्वय स्थापित करता है। (4) मन्त्रियो अथवा समितियो के अध्यक्षा द्वारा जारी किये गये अनुपयुक्त निणया और आदेशा मे सशोधन करता है या उनको रदद् करता है। (5) स्थानीय समितियो के अनुपयुक्त निणयो और आदेशो मे सशोधन करता है या उनको रदद् करता है। (6) राष्ट्रीय आर्थिक योजनाओ और बजट को लागू करता है। (7) विदेशी और घरेलू व्यापार पर नियन्त्रण रखता है। (8) सास्कृतिक, शिक्षा सम्बन्धी और सावजनिक स्वास्थ्य के कार्यों का सचालन करता है। (9) राष्ट्रीयताओ से सम्बन्धित कार्यों का सचालन करता है। (10) विदेशा म रहने वाले चीनियो से सम्बन्धित कार्यों का सचालन करता है। (11) राज्य के हितो की रक्षा करता है, सावजनिक व्यवस्था कायम रखता है और नागरिको के अधिकारो की रक्षा करता है। (12) वैदेशिक सम्बन्धो का सचालन करता है। (13) सशस्त्र शक्तियो के निर्माण का सचालन करता है। (14) स्वशासित जिलो, तहसीला और म्युनिसिपैलिटियो के पद और सीमाआ का स्वीकार करता है। (15) कानून द्वारा निर्धारित प्रणाली के अनुसार प्रबन्धक अधिकारिया को नियुक्त करता है या हटाता है। (16) ऐसे अन्य कार्यों को भी करता है और अधिकारा का उपयोग करता है जिन्ह राष्ट्रीय काग्रेस या उसकी स्थायी समिति ने उसके हाथो मे सौंप दिया हो।

चूकि राज्य-परिषद् राष्ट्रीय जन काग्रेस का कायकारी अग है, अत वह यह उसके नियन्त्रण व परिवीक्षण के अधीन है। इसके काय और शक्तियाँ, जिनका प्रगणन ऊपर किया जा चुका है, विभिन्न प्रकार की हैं। प्रथम, यह प्रशासनिक पगा को निर्धारित करती है, आदेशो व निणया को जारी करती है और इस बात को देखती है कि उनका सविधान, कानून व आज्ञप्तियो के अनुसार पालन होता है। यह राष्ट्रीय जन काग्रेस या उसकी स्थायी समिति के सामने विधेयक भी प्रस्तुत करती है। दूसरे, यह विभिन्न मन्त्रालयो, आयोगो और स्थानीय प्रशासनिक अगा के कार्यों का समन्वय तथा नेतत्व करती है। इस दृष्टि से यह उनके द्वारा जारी किये गये अनुचित आदेशो को दोहरा अथवा रदद् कर सकती है। तीसरे, यह अनेक प्रकार के महत्त्वपूण काय करती है, यथा, राष्ट्रीय आर्थिक योजनाआ को कार्यान्वित करना, राजकीय बजट के प्राविधानो को लागू करना, सास्कृतिक, शक्षिक व सावजनिक स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यों का निदेशन करना, परराष्ट्रीय मामलों का सचालन करना, आदि। अन्त म, यह प्रशासनिक अधिकारियो को नियुक्त करती है तथा उनको पदो से हटाती है।

राज्य परिषद् अर्थात् मन्त्रिमण्डल के सम्बन्ध मे बनाये गये आधारभूत कानून (Organic Law) मे प्रधानमन्त्री के अन्तगत एक छोटी आन्तरिक केबिनट की व्यवस्था है। इस कानून की धारा 4 के अनुसार परिषद् की स्थायी बैठक, जिसमे प्रधानमन्त्री, उप प्रधानमन्त्री और सेक्रेटरी जनरल सम्मिलित रहते हैं और सम्पूण मन्त्रिमण्डल अथवा सवशक्तिशाली सत्र जिसमे सभी मन्त्री और आयोगो के सदस्य सम्मिलित रहते है, के बीच अन्तर है। सम्पूण मन्त्रिमण्डल के निणयो व आदेशो को जारी करने सम्बन्धी सत्ता स्थायी बैठक अर्थात् आन्तरिक केबिनेट तक विस्तृत है। प्रधानमन्त्री के नीचे सात केन्द्रीय कार्यालय हैं जिनका काय मन्त्रालयो व आयोगो के कार्यों का परिवीक्षण करना तथा उनके कार्यों का समन्वय करना है।

प्रधानमन्त्री का पद—काग्रेस द्वारा प्रधानमन्त्री के चुनाव के ढग से ही स्पष्ट है कि उसका पद अधिक महत्त्वपूण नही है। काग्रेस प्रधानमन्त्री का चुनाव चेयरमैन की सिफारिश पर करती

है। इस प्रकार चीन मे प्रधानमन्त्री की छाँट काग्रेस व चेयरमैन द्वारा की जाती है, जबकि सासद प्रणाली वाले देशा मे प्रधानमन्त्री केवल विधायिका द्वारा ही छाँटा जाता है। इससे स्पष्ट है कि चीन मे गणत त्र के चेयरमैन का पद प्रधानमन्त्री के पद से अधिक महत्वपूर्ण है। जिस प्रकार से राज्य-परिषद् के सदस्या को उनके पद से हटाया जा सकता है, उससे यह भी स्पष्ट है कि प्रधानमन्त्री के पद को कम महत्त्व दिया जाता है। राष्ट्रीय जन कांग्रेस की स्थायी समिति किसी भी वाइस प्रीमियर, म त्री अथवा आयोग के अध्यक्ष को उसके पद से अलग कर सकती है जबकि राष्ट्रीय काग्रेस का सत्र न हो रहा हो। सासद प्रणाली वाले देशो मे केबिनेट के किसी भी सदस्य को तब तक नही हटाया जा सकता जब तक कि केबिनेट के अन्य सदस्य प्रधानमन्त्री के नेतृत्व मे अपने पदो पर आसीन रहते हैं अर्थात् सभी मन्त्री एक ही साथ पदत्याग करते हैं। परन्तु धारा 31 के अनुसार चीन मे राज्य परिषद् के किसी भी सदस्य को स्थायी समिति प्रधानमन्त्री स परामश किये बिना ही उसके पद से हटा सकती है। अन्त मे, जबकि सासद प्रणाली वाले देशों मे प्रधानमन्त्री शासक दल का प्रमुख नेता होता है, चीन मे, सोवियत सघ की तरह, दल के प्रमुख नेता का स्थान प्रधानमन्त्री के पद से अधिक महत्त्वपूर्ण है।

6 युगोस्लाविया मे कार्यपालिका

राष्ट्रपति का निर्वाचन आदि—उसका चुनाव चार वर्ष की अवधि के लिए होता है। कोई व्यक्ति राष्ट्रपति पद पर लगातार दो बार चुना जा सकता है, परन्तु राष्ट्रपति जोसफ ब्रोज टीटो की अवधि पर कोई सीमा नही लगी है। 1964 म टीटो को चौथी अवधि के लिए राष्ट्रपति चुना गया था। सविधान के अनुसार फेडरल एसेम्बली को राष्ट्रपति का निर्वाचन राष्ट्रपति की अवधि पूर्ण होने से एक माह पूर्व करना चाहिए। राष्ट्रपति पद के लिए कम से कम तीस प्रतिनिधि किसी व्यक्ति के नाम को फेडरल एसेम्बली म प्रस्तुत कर सकते हैं। इस प्रकार की नामजदगी या तो वे अपने आप (अपनी इच्छा से) अथवा सोशलिस्ट एलाये स के फेडरल बोर्ड के प्रस्ताव के अनुसार कर सकते हैं। वह उम्मीदवार राष्ट्रपति चुना जाता है जिसे सघीय एसेम्बली के सभी प्रतिनिधियो के मतो की बहुसख्या प्राप्त होती है। निर्वाचित होने के बाद राष्ट्रपति फेडरल एसेम्बली के सामने अपने पद की शपथ लेता है। सविधान की धाराएँ 220–223 म उप राष्ट्रपति के पद के लिए व्यवस्था थी, किन्तु सविधान के पाचवे सशोधन द्वारा जो अप्रल 1967 मे पास हुआ उप राष्ट्रपति के पद का अन्त कर दिया गया है। सशोधन के अनुसार यदि राष्ट्रपति अनुपस्थित रहे या दीर्घ समय तक अपने पद सम्बन्धी कार्य करने म अक्षम हो तो उसके कार्यों को सघीय एसेम्बली का प्रधान करेगा।

राष्ट्रपति के कार्य और उसकी शक्तियाँ—राष्ट्रपति देश के भीतर तथा विदेशो मे समाजवादी सघात्मक राज्य का प्रतिनिधित्व करता है और सविधान द्वारा निर्धारित अन्य राजनीतिक कार्य पूरे करता है। वह देश की सशस्त्र सेनाओ का भी मुख्य सेनापति होता है। वही फेडरल एसेम्बली के किसी सदस्य का नाम एसेम्बली के सम्मुख प्रस्तावित करता है कि उसे सघीय कार्यकारिणी परिषद् का प्रधान बनाया जाय और वह प्रधान परिषद् के सदस्यो के चुनाव का प्रस्ताव रखता है। सघीय राष्ट्रपति कार्यकारिणी परिषद् के अधिवेशन बुला सकता है और कुछ विषय उसके एजेण्डा पर रख सकता है। जिन अधिवशनो मे वह उपस्थित रहता है, वही उनका सभापतित्व करता है। उसके अन्य कार्य अग्रलिखित हैं—(1) सघीय कानूना को आज्ञप्तियो द्वारा प्रख्यापित करता है, (2) सघीय कार्यकारिणी परिषद् के निर्णयो को प्रख्यापित करता है (3) युगोस्लाविया के राजदूतो और मन्त्रियो को नियुक्त करता है और आवश्यकता होने पर उन्हे वापिस बुलाता है तथा विदेशो के राजनयिक प्रतिनिधियो के प्रमाणपत्र स्वीकार

करता है, (4) सम्मान सूचक पदक आदि प्रदान करता है, (5) क्षमादान करता है, (6) युद्ध की स्थिति की घोषणा करता है, (7) अपन अधिकार क्षेत्र म काय किये जाने के लिए आवश्यक अधिकारी व कमचारी नियुक्त करता है, और (8) सविधान द्वारा निर्धारित अ"य अधिकारो व कत्तव्यो का प्रयोग करता है।

युद्ध की स्थिति के दौरान अथवा युद्ध से उत्पन्न तुर"त खतरे की स्थिति मे, सघीय कायकारिणी परिषद् के प्रस्ताव पर, उसे ऐसी आज्ञप्तिया पास करने की शक्ति प्राप्त है जो कानूनी शक्ति रखें, कि तु एसे मामला पर जो कि सघीय एसेम्बली के अधिकार क्षेत्र म आते हो। साथ ही उसे इन आज्ञप्तियो को एसेम्बली का अधिवेशन होने पर यथाशीघ्र ही एसेम्बली की स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना आवश्यक है। नागरिको के अधिकारा व स्वत"त्रताओ से सम्ब धित सविधान के प्राविधानो को युद्ध की स्थिति म आपात्काल के दौरान के लिए असाधारण मामलो मे, यदि देश की प्रतिरक्षा के हित मे ऐसा करना आवश्यक हो, राष्ट्रपति अपनी आज्ञप्ति द्वारा निलम्बित कर सकता है। सघीय कायकारिणी परिषद् द्वारा पास की गयी किसी आज्ञप्ति और सामा य राजनीतिक महत्त्व के अ य विनियम को राष्ट्रपति प्रत्यापित किये जाने से रोकने का अधिकार रखता है। राष्ट्रपति को अपने पद से सम्ब धित उ मुक्ति प्राप्त है, पर"तु सविधान व सघीय कानून के अनुसार वह सघीय एसेम्बली क प्रति उत्तरदायी है। राष्ट्रपति सघ की परिषद् को राज्य की नीति तथा राजनीतिक कायपालिका और प्रशासनिक अगो के काय पर विचार करने के लिए बुलाता है। सघ की परिषद् के सदस्यो का चुनाव फेडरल चेम्बर द्वारा राष्ट्रपति के प्रस्ताव पर सामाजिक राजनीतिक व अ"य सगठनो के अधिकारियो मे से किया जाता है।

सघीय कायकारिणी परिषद—फेडरल एसेम्बली का यह वह अग है जिसे राजनीतिक कायकारी शक्तिया सौंपी गयी हैं। यह सघ की नीति के कार्यान्वित किये जाने के लिए उत्तरदायी है, सघ की नीति के आधार सघीय एसेम्बली द्वारा निधारित किये जाते हैं। सघीय कायकारिणी परिषद् मे एक प्रधान और निश्चित सख्या मे सदस्य होते है। उसके प्रधान का प्रस्ताव राष्ट्रपति रखता है, जो सघीय एसेम्बली का ही सदस्य होता है। प्रधान के प्रस्ताव पर अ"य सदस्या को फेडरल चेम्बर चुनता है। ये सभी सदस्य सघीय एसेम्बली के सदस्य होते है, पर"तु उनके चुनाव मे यह ध्यान रखा जाता है कि उनमे सभी उप राष्ट्रा का उचित प्रतिनिधित्व रहे। इनके अतिरिक्त गणत"त्रो की कायकारिणी परिषदो के प्रधान, सघीय सेक्रेटरी ऑफ स्टेट, सघीय सचिव, और सघीय कायकारिणी परिषद् का सचिव तथा अ"य सघीय अधिकारी, जिनके नाम सघीय एसेम्बली तय करे, अपनी नामजदगी के समय अपने पद के कारण सघीय कार्यकारिणी परिषद् के सदस्य रहगे। फेडरल चेम्बर किसी प्रतिनिधि को कार्यकारिणी परिषद् का प्रधान या सदस्य केवल असाधारण मामलो मे ही लगातार दूसरी अवधि के लिए बना सकता है। सघीय कायकारिणी के प्रधान को यह अधिकार है कि वह फेडरल चेम्बर के सामने फेडरल सघीय परिषद् के सदस्या को उनके पद से हटाने का प्रस्ताव रखे और उनके स्थान पर नये सदस्या का चुनाव करवा सके। सघीय कायकारिणी परिषद् के प्रधान के पद से हटाये जाने अथवा परिषद् के बहुसख्यक सदस्या के त्यागपत्र का परिणाम सम्पूण परिषद् का त्यागपत्र होगा।

सघीय कायकारिणी परिषद् अग्रलिखित काय करती है—(1) फेडरल एसेम्बली के सामन आ"तरिक और वैदेशिक नीति प्रस्तावित करती है, (2) एसेम्बली मे विधेयक तथा अ"य कानूनी मसौदे प्रस्तुत करती है, (3) सामाजिक योजना का मसौदा (draft) तैयार करती है, (4) सघीय कानून को लागू करन के लिए आज्ञप्तियाँ, निणय और निदश पास करती है, (5) आन्तरिक सगठन म सामा"य सिद्धा"त और सघीय प्रशासनिक अगो के काय निर्धारित करती है, (6) सघीय प्रशासनिक अगो को कायम करती है, (7) सघीय प्रशासनिक अगो के विनियमो को रद्द करती है

यदि वे संघीय कानून, आज्ञप्ति अथवा संघीय कार्यकारिणी परिषद् के अन्य विनियमों (regulations) के विरुद्ध होते हैं, (8) अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों की सम्पुष्ट करती है जिनकी सम्पुष्टि फेडरल एसेम्बली के अधिकार क्षेत्र के भीतर नहीं है, (9) फेडरल चेम्बर के सामने सर्वोच्च न्यायालय सर्वोच्च आर्थिक न्यायालय के प्रधान और अन्य न्यायाधीशों के चुनाव और पदों से हटाने का प्रस्ताव रखती है तथा संघीय सार्वजनिक अभियोजक (Federal Public Prosecutor) और कानून द्वारा नाम निर्देशित अन्य संघीय अधिकारियों की नामजदगी व उनके पदों से हटाये जाने के प्रस्ताव भी रखती है, (10) परिषद् और संघीय प्रशासनिक अंगों के अधिकारियों को नियुक्त करती है (11) संघ की कुछ निधियों का प्रबन्ध करती है, और (12) संघ के अधिकार में आने वाले अन्य मामलों पर आवश्यक कार्यवाही करती है जिनकी संघीय कानून द्वारा व्यवस्था की गयी है।

कार्यकारिणी परिषद् अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाले मामलों पर अपनी बैठक में निर्णय करती है। परिषद् के सभी सदस्य सामान्य मामलों तथा सिद्धान्त के मामलों, और प्रशासनिक अंगों के लिए सामान्य महत्त्व के मामलों पर विचार करते हैं। परिषद् के अधिकार क्षेत्र में आने वाले अन्य मामलों पर परिषद् नाम निर्देशित सदस्य तथा फेडरल सेक्रेटरी आफ स्टेट द्वारा विचार किया जाता है। संघीय कार्यकारिणी परिषद् का संगठन और यह बात कि अपने क्षेत्र में आने वाले मामलों पर यह किस प्रकार निर्णय करेगी कानून द्वारा निर्धारित होते हैं। संघीय कार्यकारिणी परिषद् संघीय प्रशासनिक अंगों के कार्यों का समन्वय करने के लिए तथा दो या अधिक अंगों के लिए सामान्य महत्त्व के मामलों पर विचार करने के लिए समितियां और अन्य निकाय कायम कर सकती हैं। संघीय कार्यकारिणी परिषद् में संघीय सचिव (federal secretaries) और अन्य अधिकारियों को नामजद किया जा सकता है, जो स्वतन्त्र रूप से अपने कार्य करते हैं।

प्रधान—परिषद् का प्रतिनिधित्व करता है और वही परिषद् द्वारा निर्धारित नीति के कार्यान्वित किये जाने तथा उनके निर्णयों के लागू किये जाने पर ध्यान रखता है। प्रधान अपनी पहल पर अथवा राष्ट्रपति के प्रस्ताव पर अथवा परिषद् के कम से कम पांच सदस्यों के प्रस्ताव पर परिषद् की बैठक बुला सकता है। परिषद् की सामान्य नीति को कार्यान्वित करने के लिए परिषद् का प्रधान संघीय प्रशासनिक अंगों के कार्यों में समन्वय स्थापित करता है। परिषद् अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाले मामलों पर आवश्यक और उचित कार्यवाही संविधान व कानून के अनुसार और उनकी सीमाओं के भीतर ही कर सकती है। अपने कार्यों के लिए परिषद् फेडरल एसम्बली के प्रति उत्तरदायी है। एसम्बली परिषद् के किसी भी निर्णय अथवा विनियम को रद्द कर सकती है यदि वह संविधान या कानून के विरुद्ध हो। संघीय कार्यकारिणी परिषद् अपने कार्य के बारे में संघीय एसेम्बली को सूचित करती है। परिषद् एसेम्बली के सक्षम चेम्बर के सामने किसी विधेयक या अन्य निर्णय पर वाद विवाद प्रस्थापित करने का प्रस्ताव रख सकती है, अथवा एसम्बली के समक्ष चेम्बर व अपने सदस्यों का किसी मामले पर वाद विवाद करने के लिए संयुक्त आयोग बनाने का प्रस्ताव रख सकती है अथवा एसेम्बली के समक्ष चेम्बर का अधिवेशन बुला सकती है जिसमें कि परिषद् अपनी स्थिति को बतायेगी। यदि एसेम्बली कोई ऐसा विधेयक या निर्णय पास कर दे जो कि कार्यकारिणी परिषद् की स्थिति के विरुद्ध हो, तो परिषद् उसके सामने अपना सामूहिक त्यागपत्र दे सकती है यदि परिषद् यह समझे कि वह कानून या अन्य कार्य को लागू न कर सकेगी। यदि संघीय कार्यकारिणी परिषद् त्यागपत्र दे दे, तो भी वह तब तक अपने पदों पर रहेगी जब तक कि नई परिषद् का निर्वाचन हो।

अप्रैल 1967 में पास किये गये दूसरे संशोधन में संघीय कार्यकारिणी परिषद् की रचना व उसके कार्यों के सम्बन्ध में ये बातें सम्मिलित हैं—(1) संघीय कार्यकारिणी परिषद् के सदस्य।

से सम्बन्धित सविधान के प्राविधान उनके कार्यों के कारण अवैध हो जायेंगे । राज्य सचिव काय कारिणी परिषद् के काय मे उसके सदस्यो के अधिकारो व दायित्वो के साथ भाग लेगे । जिन सघीय सचिवो या अन्य अधिकारियो का फेडरल एसेम्बली इस प्रकार से नाम निर्देशित करे और जो फेडरल कायकारिणी परिषद् के काय मे लगे हो उन मामला के बारे मे जो उनकी सक्षमता से सम्बन्धित हो, वे ही अधिकार प्राप्त करेंगे जो कि परिषद् के सदस्य के हैं और परिषद् द्वारा अधिकार दिये जाने पर वे परिषद् का भी प्रतिनिधित्व कर सकेंगे, (2) राज्य सचिवो (state secretaries), सघीय सचिवो, सघीय एटॉर्नी जनरल और अन्य सघीय अधिकारियो तथा सरकारी अगा के सदस्यो को नामजद करने अथवा पद से हटाने का प्रस्ताव, निर्वाचन और नामाकन के आयोग द्वारा सघीय कायकारिणी परिषद् का मत प्राप्त करने के बाद सघीय एसेम्बली के सामने प्रस्तुत किया जायेगा । सघीय कायकारिणी परिषद् इनमे से किसी भी अधिकारी या सरकारी अगो के सदस्य को पद से हटाने के लिए कायवाही करने म पहल कर सकती है ।

युगोस्लाविया मे राष्ट्रपति का पद बडे महत्त्व का है । राष्ट्रपति को व्यापक शक्तियाँ प्राप्त है । राष्ट्रपति राज्य का अध्यक्ष होने के साथ साथ कायपालिका का भी प्रमुख है । वह राज्य का प्रतिनिधित्व करता है । वही अनेक उच्च अधिकारियो की नियुक्ति करता है । उसी के प्रस्ताव पर सघीय कायकारिणी के प्रधान को, जिसे हम एक प्रकार से मुख्य मन्त्री कह सकते है, चुना जाता है । राष्ट्रपति के विभिन्न कार्यों और उसकी शक्तियो के पूर्वोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वह केवल नाममात्र का अध्यक्ष नही है, वरन् उसे अनेक वास्तविक शक्तिया प्राप्त हैं । परन्तु उसे अधिनायक नही कह सकते, क्याकि उसकी शक्तियो पर अनेक सावैधानिक सीमाएँ हैं । काय पालिका और विधानमण्डल को अपने-अपन क्षेत्र मे काफी विस्तृत और वास्तविक शक्तियाँ प्राप्त हैं । राष्ट्रपति, कितना ही प्रभावशाली नेता होने पर भी, अधिनायक नही बन सकता । सघीय कायकारिणी परिषद् ही मुख्य कायपालिका है । उसके गठन और शक्तियो के विवेचन से ऐसा प्रतीत होता है कि वह एक प्रकार की मन्त्रि परिषद् है, जो सघीय एसेम्बली के प्रति उत्तरदायी है । यह कायपालिका होने के नाते एसेम्बली द्वारा निर्धारित नीति को कार्यान्वित करती है और उसके निणयो को लागू करती है। वह मन्त्रि परिषद् की भाँति विधेयको को पेश करती है और सामाजिक याजना को तैयार करती है । परिषद् ही सघीय प्रशासन के विभिन्न अगो के कार्यो मे समन्वय स्थापित करती है । सघीय कायकारिणी परिषद् के सदस्यो म विभागो का वितरण वसे ही होता है जैसे कि मन्त्र परिषद् के सदस्यो म होता है ।

नवाँ अध्याय

विधायिका—सैद्धान्तिक पहलू

1 विधायिकाओं का उदय और महत्त्व

विधायिकाओं का उदय—अब तो प्राय सभी राज्या म विधायिकायें है, कि तु उनकी रचना, शक्तियो और महत्व म बडे अ तर हैं। यह कहना कठिन है कि प्रतिनिधिक सभाओ का विचार सवप्रथम कहाँ ज मा। प्राचीन जगत म लोग इस विचार से अज्ञात थ, यद्यपि प्राचीन ग्रीस व भारत म जनप्रिय स भायें थी तथा रोमन ट्रिब्यून भी एक अथ मे प्रतिनिधि थे। मध्ययुग म उनकी सख्या काफी बडी थी। उनका उदय इग्लैण्ड, स्पेन, फ्रास और अ य कई क्षेत्रो मे हुआ। इस कथन मे सत्य का काफी अश है कि इगलण्ड की पालियामे ट 'ससदो की जननी' (Mother of Parliaments) है, क्योकि उसने आधुनिक प्रजाता त्रिक जगत म विधायिकाओ और उनकी प्रक्रियाओ क विकास हतु एक आदश नमून का काम किया है।

ब्रिटिश पालियामे ट के इतिहास का विस्तारपूवक देना बडा कठिन काय है, फिर भी उसके विकास की सक्षिप्त रूपरेखा देना आवश्यक प्रतीत होता है। 1215 के मेग्ना कार्टा (Magna Carta) का प्रजाता त्रिक सिद्धा त से कोई सम्ब ध नहीं है, क्योकि वह तो राज्य के उच्च वशीय व्यक्तियो के इस सफल प्रयत्न का परिणाम था कि वे राजा की शक्ति पर कुछ सीमायें लगाना चाहत थे। प्रकार, प्रारम्भिक पालियामे टो का मुख्यत परिस्थितियो के दबाव के अ तर्गत आहूत किया गया था यथा जब राजा मध्ययुगीन परम्परा से अधिक कर लगाना चाहता था, तो उसने राज्य क कुलीनो की सहमति पान का साधन खोजा और पालियामे ट ने वह काय किया। प्रारम्भिक पालियामे टो से यही आशा की जाती थी कि वे राजा की बात सुनें और सहमति प्रदान करें। पर तु सहमति प्रदान करन के अधिकार मे मना करने का अधिकार भी निहित था। यदि एक ओर राजा उ हे विघटित कर सकता था तो दूसरी ओर उसे उनकी माँग माननी पडती थी। उदाहरण के लिए, 1407 मे हेनरी चतुथ ने यह वायदा किया कि धन के अनुदानो पर पहले कामन सभा म विचार किया जायगा, उसी शपथ ने इस आधुनिक सिद्धा त की नींव डाली कि वित्तीय मामलो म निचला सदन सर्वोपरि है।

क्रमिक रूप से पालियामे ट ने विधि निर्माण करने का अधिकार प्राप्त किया, जो कि मध्ययुगीन धारणा म सवथा भि न था। पालियामे ट के विकास म कई बार प्रतिगामी पग उठे और विकास की गति अनियमित सी रही। टयूडर राजाओ की निरकुशता ने प्रतिनिधित्व के सिद्धा त को पीछे हटाया और स्टुअट राजाओ न तो उससे भी अधिक शक्ति प्राप्त करनी चाही। फिर भी जब ब्रिटेन की जनता न उन आधारो की खोज की जिन पर कि स्टुअट राजाओ के दावा का विरोध किया जा सकता था तो उ होन वे बातें अपनी ही परम्पराओ स पा ली जिनकी उ हे आवश्यकता थी यथा विधायी सर्वोपरिता की धारणा और लोकप्रिय शासन के बीज।

सत्तरहवी शताब्दी ब्रिटेन मे सीमित राजत न्त्र और निरकुश कायकारी शासन के बीच विभाजन रेखा का काय करती है। 1642 की क्रान्ति ने राजतन्त्र को उखाड फेंका और चार्ल्स प्रथम के शिरच्छेद की ओर ले गई। उसने आधारभूत राजनीतिक प्रश्नो पर वाद विवाद के लिए उपयुक्त वातावरण पदा करने की प्रेरणा भी दी। मिल्टन की वाक्पटुता, हॉब्स की कटु आलोचना, हैरिंगटन की आर्थिक सूत्र लेविलर आन्दोलनो की पुस्तिकाओ (Levellier tracts) मे समाविष्ट मानवता, डिगर आन्दोलन (Digger movement) का विशिष्ट गुण और जॉन लाक के विचारो की स्पष्टता उस काल के अग है, जो कि आधुनिक राजनीतिक चिन्तन के सबसे महान् काला मे से एक है। इनके विचार आधुनिक प्रजातन्त्र के विकास मे कितने महत्त्वपूण रहे, इस बात को बताने की आवश्यकता नही है।[1]

आधुनिक विधायी सिद्धान्त के विकास मे ब्रिटिश जाति का योगदान अन्य बातो मे भी उल्लेखनीय है। पार्लियामेन्ट को सत्ता का हस्तान्तरण लगभग तीन शताब्दियो मे जाकर पूरा हुआ। उसके बाद लार्ड सभा की शक्ति को काटा गया, जो काय 1911 मे आरम्भ होकर 1950 तक पूरा हुआ। शक्ति के केन्द्र अर्थात् कॉमन सभा पर जनसाधारण का नियन्त्रण मताधिकार को विस्तृत करके स्थापित किया, यह काय 1832 मे आरम्भ होकर 1928 मे जाकर पूण हुआ। केबिनेट का आरम्भ अठारहवी शताब्दी म हुआ, किन्तु उसके विकास ने अगली शताब्दी मे जाकर आधुनिक रूप पाया। राजनीतिक दलो का उदय और क्रमिक रूप से उन्होने भी आधुनिक रूप पाया।

विधायिकाओं की भूमिका—आजकल प्रजातन्त्र का युग है और प्राय सभी प्रजातन्त्री राज्यो म जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियो की एक सभा होती है, जिसका प्रधान काय कानून बनाना होता है। इस सभा को विधायिका और विधानमण्डल कहते हैं। विधायिका अथवा विधानमण्डल के एक या दो सदन होते हैं। चूकि शासन का आधार कानून होता है, अत विधायिका का राज्य के सगठन व सस्थाओ मे चूल जैसा स्थान होता है। प्रजातन्त्री राज्यो मे विधायिका कायपालिका के ऊपर भी नियन्त्रण रखती है। सरकार के तीन अगो मे विधायिका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसका सबसे प्रमुख काय उन विभिन्न प्रकार के कानूनो को बनाना है, जो नागरिक के अधिकाश जीवन को विनियमित करते हैं। इसके द्वारा निर्मित कानूनो पर ही समुदाय का कल्याण निभर करता है। यदि इसके बनाये हुए कानून लोकहित म हैं तो सम्पूण समुदाय को लाभ पहुँचेगा, किन्तु यदि वे किसी एक वग के हित मे बनाये जाते है तो उनका परिणाम असमानता और अन्याय होगा। इस प्रकार विधायिका मुख्यत एक मननात्मक सस्था होती है। सभी आधुनिक राज्यो की विधायिकायें एक समान काय नही करती फिर भी उनके कार्यों मे काफी समानता होती है। सभी विधायिकायें कानून बनाती हैं, राज्यो की आय और व्यय पर नियन्त्रण रखती हैं और अन्य सावजनिक महत्त्व के विषयो पर विचार करती हैं। लगभग सभी राज्यो मे उनका सविधान के सशोधन की प्रक्रिया मे भी भाग रहता है। जिन राज्यो मे ससदात्मक पद्धति होती है वहाँ विधायिकायें कायपालिका पर भी नियन्त्रण रखती हैं। कुछ राज्यो की विधायिकाओ को कायपालिका के अध्यक्ष के निर्वाचन मे भाग लेन का अधिकार है। साथ ही कुछ राज्यो की विधायिकायें कायपालिका सम्बन्धी कार्यों मे भाग लेती हैं। अन्त मे, कुछ राज्यो की विधायिकायें न्यायिक काय भी करती हैं।[2]

---

[1] Meehan et al *The Dynamics of Modern Government* pp 150–52

[2] Some writers divide the various functions of a legislature into two broad groups (a) Legislative and (b) non legislative In the latter group they include (i) securing information (ii) formal expression of opinion (iii) checking the executive branch (iv)

विधायी (कानून बनाना)—जैसा कि नाम से स्पष्ट है, प्रत्यक विधायिका व्यवस्थापन काय अर्थात् कानून बनाने का काय करती है। वास्तव म सभी राज्यो म विधायिकाओ का विधायी काय सबसे अधिक महत्त्वपूण है। इस शक्ति के अन्तगत विधायिकायें आवश्यकतानुसार नये कानून बनाती ह, पुराने कानूनो को समाप्त अथवा उनम संशोधन करती है, जिसस कि राज्य के कानूनो (विधियो) और बदली हुई सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक दशाओ म सामंजस्य बना रहे। कानूनो के स्रोतो का वणन करते हुए यह पहले ही बताया जा चुका है कि आजकल प्राय सभी देशो म अधिकतर ही क्या वरन् सभी कानून विधायिकाओ द्वारा बनाये जात हैं जो सविधि कहलात है। आजकल अधिकतर विचारक मिल के इस विचार से सहमत नही है कि विधायिका स्वय कानून बनान की योग्यता नही रखती, यह तो केवल इस काय को करा सकती है। कानून बनाना तो विधायिकाओ का प्रमुख काय है, किन्तु विधेयको के प्रारूप राज्य के कानूनी अधिकारियो द्वारा तैयार किये जाते हैं। विधि निर्माण काय म विधायिका समितियो का व्यापक प्रयोग करती है जिनके सदस्यो को उन कानूनो से सम्बंधित विषयो के बारे म विशेष जानकारी हो जाती है। साधारणतया विधायिका द्वारा निर्मित कानून म मोटी बातें दी जाती हैं, उनके अन्तगत नियम व उपनियम प्रशासनिक अधिकारी बनाते है। इस प्रकार के विधि-निर्माण को अधीन या सौंपा हुआ विधि निर्माण कहते है।

वित्तीय—प्रत्येक राज्य मे विधायिका का दूसरा महत्त्वपूण काय आय और व्यय पर नियन्त्रण रखना है। यही विभिन्न प्रकार के कर लगान और विभिन्न स्रोतो से होने वाली आय को राज्य द्वारा की जाने वाली विभिन्न सेवाओ पर व्यय करन की स्वीकृति देती है। दूसरे शब्दो मे, विधायिकायें बजट पास करती है। इस प्रकार विधायिकाओ को राज्य के कोष पर नियन्त्रण के अधिकार होते है। वे बजट पास करने के साथ साथ सरकारी विभागो की आय और व्यय पर नियन्त्रण रखती है और उनकी जाच पड़ताल (audit) की रिपोट विधायिकाओ के सामने पेश की जाती है। वास्तविकता तो यह है कि संसदात्मक पद्धति वाले देशो मे इस शक्ति द्वारा ही विधायिकायें विभिन्न विभागो के कार्यों की आलोचना करती हैं और उन पर एक प्रकार से अपने नियन्त्रण को लागू करती हैं। इसी शक्ति को व्यय हेतु धन स्वीकार करने की शक्ति (power of the purse) कहते हैं।

कायपालिका पर नियन्त्रण—प्रजातन्त्रात्मक राज्यो की एक प्रमुख विशेषता यह है कि जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियो से बनी विधायिका कायपालिका पर नियन्त्रण रखे। वास्तव म सरकार के दिन प्रतिदिन के कार्यों पर नियन्त्रण की समस्या समकालीन शासन की मूलभूत समस्या है। संसदात्मक पद्धति वाल राज्यो मे तो मन्त्रिमण्डल विधायिका के प्रति उत्तरदायी होता है, अन्य प्रकार के राज्यो मे भी कायपालिका पर किसी न किसी रूप मे विधायिका का नियन्त्रण रहता है। संयुक्त राज्य अमरीका मे कांग्रेस कानून पास करती है, कायपालिका द्वारा निर्धारित नीतियो व कायक्रमो पर स्वीकृति प्रदान करती है, सभी प्रकार के सरकारी व्यय को स्वीकार करती है और प्रशासन शाखा के संगठन को भी निर्धारित करती है। स्विटजरलैण्ड म कायपालिका की नियुक्ति ही विधायिका द्वारा की जाती है।

व्हीयर के मतानुसार संसदात्मक पद्धति वाले राज्यो म तो सरकार अर्थात् मन्त्रिमण्डल का निर्माण ही लोकप्रिय सदन द्वारा किया जाता है। मन्त्रिमण्डल मे वे ही व्यक्ति लिए जाते है जो विधानमण्डल के सदस्य हो और जो उस दल या दलो के भी सदस्य हो जिस या जिन्हे निर्वाचक

---

sharing in specified executive decisions (v) determining their own membership (vi) electoral responsibility and (vii) making or revising constitution etc —Dillon et al *Introduction to Political Science* pp 143-51

मण्डल का बहुमत प्राप्त हुआ हो। जापान में तो प्रधानमन्त्री का नाम डायट (वहाँ के लोकप्रिय सदन) के प्रस्ताव पर तय किया जाता है। ससदात्मक पद्धति वाले राज्यों मे कार्यपालिका पर विधायिका के नियन्त्रण का प्रयोग कई प्रकार से किया जाता है। इसके मुख्य तरीके ये है—प्रश्न पूछना, प्रस्ताव (सकल्प) पास करना, अविश्वास अथवा निन्दा के प्रस्ताव पास करना, काम रोको प्रस्ताव पास करना छानबीन समितियाँ नियुक्त करना, आलोचना करना इत्यादि। व्हीयर का यह कथन सर्वथा सत्य है कि विधायिका ही कार्यपालिका को ठीक प्रकार से व्यवहार करने के लिए बाध्य करती है। इस कार्य में विरोधी पक्ष और उसके नेता का बड़ा महत्त्वपूर्ण भाग रहता है।[1] अध्यक्षात्मक पद्धति वाले राज्यों में भी कार्यपालिका को अपनी नीतियों व कार्यक्रमों को विधायिका द्वारा स्वीकृत कराना आवश्यक है। उन्हें कार्यान्वित करने के लिए धन की स्वीकृति भी विधायिका ही प्रदान करती है। दोनों ही प्रकार के राज्यों में विधायिका प्रशासन शाखा के कार्यों में छानबीन करने के लिए समितियाँ (investing committees) नियुक्त कर सकती हैं।[2]

प्रशासनिक कार्य—मिल के मतानुसार तो विधायिका प्रशासनिक कार्यों के लिए बहुत कम योग्यता रखती हैं, किन्तु प्राय सभी राज्यों में वे ऐसे अनेक कार्य करती हैं। वे प्रशासनिक विभागों के सगठन के विषय में कानून बनाती हैं विभिन्न विभागों के कार्यों की आलोचना करती है और उनके लिए आवश्यक व्यय की स्वीकृति देती हैं। ससदात्मक पद्धति के अन्तर्गत कार्यपालिका (मन्त्रिमण्डल) और विधायिका के बीच अति निकट सम्पर्क रहता है, कार्यपालिका विधायिका के प्रति ही उत्तरदायी होती है। ऐसे शासन में कार्यपालिका द्वारा तैयार की गयी नीति को विधायिका ही स्वीकार करती है, उसके सदस्य मन्त्रियों से उनके विभागीय कार्यों के बारे में प्रश्न पूछते है और वे जब चाहें बहुमत द्वारा उन्हें त्यागपत्र देने को विवश कर सकते है। किन्तु अध्यक्षात्मक शासन पद्धति मे कार्यपालिका विधायिका से स्वतन्त्र होती है अर्थात् विधायिका का कार्यपालिका पर नियन्त्रण नहीं होता। परन्तु वहाँ भी विधायिका सरकारी विभागों के सगठन के बारे में कानून बनाती है। उनके कार्यों में जाँच करने के लिए समितियाँ नियुक्त करती हैं। कुछ राज्यों मे विधायिकायें अन्य प्रकार के कार्यकारी कार्य भी करती है। उदाहरण के लिए, सयुक्त राज्य अमरीका में सीनेट (काग्रेस का उच्च सदन) राष्ट्रपति द्वारा की हुई नियुक्तियों का अनुसमर्थन करती है। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के बारे में सीनेट की राष्ट्रपति को 'परामर्श देने और सहमति देने' (to advice and consult) की शक्ति के प्रयोग द्वारा सीनेट कार्यपालिका की नीति को प्रभावित कर सकती है। फिलीपाइन्स (Philippines) मे, राष्ट्रपति की केबिनेट की रचना पर सिद्धान्त रूप मे विधायिका के दोनों सदनों (Senate and House of Representatives) के प्रति उत्तरदायी आयोग की स्वीकृति आवश्यक है, यद्यपि राष्ट्रपति का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप में होता है।

सविधान मे सशोधन—लगभग सभी राज्यों मे विधायिकाओं को अपने अपने राज्यों के सविधान मे सशोधन करने के कुछ अथवा पूर्ण अधिकार प्राप्त होते हैं। ब्रिटेन की पार्लियामेंट तो साधारण कानून की ही तरह से कैसा भी सविधान सम्बन्धी कानून बना सकती है। अन्य देशों में सविधान मे सशोधन सम्बन्धी प्रस्तावों को विधायिकायें ही पारित करती हैं, किन्तु उनके पास करने के लिए सामान्यतया विशेष बहुमत की आवश्यकता होती है। कुछ राज्यों में उनके द्वारा

---

[1] Wheare K C *Legislatures* Chapters 4 and 5

[2] Assemblies conduct investigations into government policies, and these have to serve as a brake on the government motor These investigations may be carried out by committees of the Assembly the House of Commons Select Committee on Public Accounts provides an example consisting of fifteen members and chaired by a leading member of the opposition —Ball, A R *Modern Politics and Government* p 149

फलस्वरूप दूसरा सदन विधेयक पर विचार करते समय जनमत का पूरा ध्यान रख सकता है। इस प्रकार से बनाये गय कानून अधिक सन्तुलित व जनमत के अनुकूल होते हैं।

(4) **अशुद्धियो को दूर करता है**—*इसम विधेयको पर अधिक अच्छी प्रकार स विचार* किया जा सकता है और प्रथम सदन द्वारा पारित विधेयको म यदि कुछ त्रुटिया रह गयी हो तो उ हे दूर कर सकता है। साथ ही, यह प्रथम सदन के भार को भी कम करता है। बहुत से ऐस विधेयक, जिसके बार म गम्भीर मतभेद न हो आरम्भ म दूसरे सदन म पास किये जा सकते है और बाद म प्रथम सदन उनको शीघ्रता से पास कर देता है।

(5) **विशेष हितो को प्रतिनिधित्व देता है**—दूसरे सदन मे विभि न प्रकार के विशेष हितो का प्रतिनिधित्व सुविधापूवक किया जा सकता है। इसम नामजदगी द्वारा योग्य और अनुभवी व्यक्तिया की सेवाएँ राष्ट्रीय हित म प्राप्त की जा सकती है। अत जो योग्य और अनुभवी व्यक्ति चुनाव के झझट मे पडना पस द नही करते, उ हे आसानी स उच्च सदन म नामजद सदस्य बनाया जाता है।

(6) **सघीय राज्यों मे उप राज्यो का प्रतिनिधित्व करता है**—साधारणतया सघ राज्यो म प्रथम सदन मे प्रतिनिधित्व का आधार राज्य की जनसख्या होती है जो विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रा म बँटी रहती है। सघीय राज्यो मे आवश्यकता इस बात की होती है कि राज्य की इकाइयो (अथवा उप राज्यो) का राज्य की व्यवस्थापिका मे, जहा तक हो सके समानता के आधार पर प्रतिनिधित्व हो। यह काय दूसरे सदन के होने पर सुविधापूवक किया जा सकता है।

(7) जसा कि मरियट नामक लेखक ने कहा है, इतिहास के अध्ययन स पता चलता है कि विभिन्न राज्यो क अनुभव दूसरे सदन के पक्ष मे हैं, इसका प्रमाण यह है कि जिन देशा मे दो सदन वाले विधान मण्डल बनाये गये, उन सभी म यह व्यवस्था अभी तक स्थिर है और उसको देखा देखी अ य राज्यो ने भी इस व्यवस्था को अपनाया है।

दूसरे सदन के विपक्ष मे तक—(1) प्रसिद्ध फ्रा सीसी लेखक अबसिये ने कहा है, 'जनता की इच्छा ही कानून है।' एक समय म किसी विषय पर जनता की दो इच्छाएँ नही हो सकती, अत जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व करने वाला एक ही सदन होना चाहिए। दूसरा सदन यदि प्रथम का विरोध करता है तो दुष्ट है और यदि अनुमोदन करता है तो बेकार है। पर तु इस विकल्प का फाइनर ने इस प्रकार से उत्तर दिया है—यदि दोनो सदन किसी विषय पर सहमत हो तो जनसाधारण का कानून के न्याय और बुद्धिमत्ता म विश्वास और भी दृढ होगा, कि तु यदि उनम मतभेद है, तो ऐसे समय म जनता का उस विषय के प्रति अपने दृष्टिकोण पर फिर स विचार करना चाहिए। (2) दूसरा सदन होने पर कानूनो के बनने म देरी लगती है और व्यय भी अधिक होता है। (3) दूसरे सदन की बनावट किस प्रकार हो ? इस प्रश्न का उत्तर विभिन्न प्रकार से दिया गया है अर्थात् दूसरे सदन के समथको म इसकी बनावट के विषय म एकमत नही है। आधुनिक लेखको का मत है कि दूसरा सदन हो तो प्रथम से प्रतियोगिता न करे, और इस *प्रकार स सगठित किया जाय कि इसम योग्य व अनुभवी सदस्य आ सकें। इन दानो बाता को* व्यवहार म मिश्रित करना अत्य त कठिन है। (4) गटेल के मतानुसार एक सदन वाली विधायिका के पक्ष म यह तक दिया जाता है—ऐसी विधायिका का सगठन सरल और सीधा होता है और यह निर्वाचको के प्रतिनिधित्व का सीधा और अधिकारपूण साधन है। (5) लास्की कहता है कि दूसरा सदन व्यथ है, क्योकि जब कोई विधेयक प्रथम सदन म पास होता है ता उसके तीन वाचन होते हैं, उसकी प्रत्यक धारा पर विचार करत समय पक्ष विपक्ष म सभी तर्कों पर पूरा ध्यान दिया जाता है। साथ ही विधेयक की धाराओ और उन पर होन वाला वाद विवाद समाचार-पत्रो म प्रकाशित होता है और देश भर म उनकी विवचना व आलोचना की जाती है

का कम या अधिक हाथ रहता है। ब्रिटन और अधिकतर राष्ट्रमण्डलीय देशो मे तो केवल काय पालिका को ही युद्ध घोषित करने की शक्ति प्राप्त है। पर तु सयुक्त राज्य अमरीका म सविधान के अ तगत, केवल काग्रेस (विधायिका) को ही युद्ध घोषणा करने की शक्ति प्राप्त है। फ्रा स के पाचवें गणत त्र का सविधान भी कहता है कि ससद ही युद्ध की घोषणा कर सकती है। अधिकतर यूरोपीय देशा मे यही नियम है। सयुक्त राज्य अमरीका मे स धियो के सम्पुष्टीकरण के लिए भी सीनेट के 2/3 का समथन आवश्यक है। इसके अतिरिक्त वदेशिक मामलो के सचालन मे भी सीनेट का महत्त्वपूर्ण भाग रहता है।

2 विधायिका की रचना

विभिन्न प्रजात त्रात्मक राज्यो की विधायिकाओ के अध्ययन से पता चलता है कि विधायिका की रचना क दो तरीके हैं। यह एक सदन वाली अथवा दो सदन वाली होती है। वास्तव म, विधायिका की रचना के सम्ब ध म सबसे महत्त्वपूण प्रश्न ही यह है कि विधायिका एक सदन वाली हो अथवा दो सदन वाली। आधुनिक राज्यो मे दोनो ही प्रकार के अनेक उदाहरण मिलते हैं। इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए यह आवश्यक है कि दोनो ही प्रकार की विधायिकाओ के गुण और दोषा पर विचार किया जाय। द्विसदनात्मक (Bicameral) विधायिका के पक्ष म निम्नलिखित तक दिये जाते है—

(1) उच्च अथवा दूसरा सदन उतावलेपन को रोकता है—यह कहा जाता है कि निर्वाचित विधायिका के अधिकाश सदस्य जनमत के अनुकूल क्षणिक भावावेश मे अथवा प्रभाव शाली वक्ताओ के प्रभाव मे आकर किसी प्रस्ताव या विधेयक के ऊपर पूरी तरह से विचार किय बिना ही पक्ष या विपक्ष म मत दे देते है। ऐसी जल्दी मे पास किये जाने वाले विधेयका पर उच्च सदन एक प्रकार की उपयोगी रोक लगाता है।[1]

(2) स्वेच्छाचारिता को रोकता है—जब विधायिका मे एक ही सदन होता है, तो उसका बहुमत चाहे तो स्वेच्छाचारी कानून बना सकता है। द्वि सदनीय प्रणाली के अ तगत व्यक्तिगत स्वत त्रता की रक्षा यवस्थापिका की स्वेच्छाचारिता के विरुद्ध अधिक अच्छे ढग से हो सकती है। यदि व्यवस्थापिका मे एक ही सदन होता है तो सारी शक्ति उसी के हाथो म केन्द्रीभूत हो जाती है और वह जस चाहे कानून बना सकती है। लॅकी का कथन है—'एकल, सवशक्तिशाली, प्रजात त्रात्मक सदन से अधिक बुरा शासन और कोई नही हो सकता, अनियन्त्रित शक्ति के पाने पर सम्भावना यही रहेगी कि वह किसी व्यक्ति की भाति स्वेच्छाचारी बन जायेगा तथा वह बहुत कम उत्तरदायित्व की भावना और बहुत कम वास्तविक मनन के साथ काम करेगा। किन्तु दो सदनो के होने पर एक सदन दूसरे सदन की स्वेच्छाचारिता पर रोक लगाता है, फलस्वरूप इसम व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा की सम्भावना अधिक बढ जाती है।'

(3) कानून पास होने मे देरी करता है—दो सदन होने पर कानून के पास होने म देरी लगती है। व्यवस्थापिका के प्रथम सदन द्वारा पास किये गये किसी विधेयक पर कुछ समय बाद दूसरा सदन विचार करता है, इस बीच म उस विधेयक के विषय म विचारवान नागरिक भी सोचते हैं और उसके पक्ष या विपक्ष म एक प्रबल जनमत का निर्माण हो सकता है।[2]

[1] The second chamber has been looked upon as a check on hasty legislation a brake upon impetuous democracy a ballast in political life a Philipsober entertaining appeals from Philip drunk —Beni Prasad

[2] By interposing delay between the introduction and the final adoption of a measure the second house compels time for further reflection and deliberation —Gettell R ~ *Political Science*, p 313

सभा तथा राज्यो की विधान परिषदा म राष्ट्रपति व गवर्नरा को क्रमश कुछ सदस्या को नामजद करन का अधिकार है। पर तु इस सिद्धा त को भी प्रजातन्त्र विरोधी समझा जाता है इसी कारण इसका प्रयोग कम होता जा रहा है। (3) कुछ राज्या म विशेषकर उच्च सदन के सदस्य विभिन्न उप राज्या या इकाइयो का प्रतिनिधित्व करते ह। सयुक्त राज्य अमरीका, स्विटजरलैण्ड, सोवियत सघ और भारत म ऐसा ही है, पर तु पहल तीन म प्रत्यक उप राज्य का समान प्रतिनिधित्व है—अर्थात् प्रत्यक उप राज्य स दा दो या अधिक प्रतिनिधि चुनकर आते ह, भारत म एसा नही है। य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित हात है।

आजकल सिजविक द्वारा बताये गये ढग को सबसे उत्तम समझा जाता है। उसके अनुसार उच्च सदन का एक भाग नामजद सदस्या का और दूसरा अप्रत्यक्ष रूप स निर्वाचित सदस्या का होना चाहिए। इस सदन के सदस्या की सख्या जहाँ तक हो कम ही रहनी चाहिए। 250 से अधिक सख्या अच्छी नही समझी जाती, ब्रिटेन और सोवियत सघ को छोडकर अ य राज्या म इसकी सदस्य सख्या इस सीमा स कम ही है। भारत की राज्य सभा म अधिक से अधिक 250 सदस्य हो सकते ह और किसी भी उप राज्या को विधान परिषद् म 108 स अधिक सख्या नही है। उच्च सदन के सदस्या म पहले उच्च वश या वर्गीय हिता जैसे—उद्योगपतियो, व्यापारियो, श्रमिको और जमीदारो का प्रतिनिधित्व अधिक होता था। भारत क सविधान द्वारा इनम शिक्षको, स्नातको और विभिन्न क्षेत्रो म विख्यात व्यक्तियो का प्रतिनिधित्व रखा गया है। उच्च सदन के सदस्या के लिए निर्धारित योग्यताओ म निम्नतम आयु की सीमा निचले सदन क सदस्यो से ऊँची होती है। इन सदस्यो की अवधि भी अधिक होती है। भारत म प्रत्यक सदस्य छ वष के लिए निर्वाचित होता है। ये सदन स्थायी है, इनके 1/3 सदस्य प्रति दो वष म अपने स्थान खाली कर देते है, पर तु उ ही सदस्यो को फिर से निर्वाचित किया जा सकता है। अन्य राज्यो म भी इनकी अवधि छ या नौ वष रखी जाती है और एक तिहाई सदस्य प्रति दो या तीन वष म अपने स्थान रिक्त करते है। पूरे सदन का एकदम पुनर्निर्वाचन नही होता। इसका लाभ यह है कि यह सरकार की नीति मे आकस्मिक परिवतना को रोकती है, पर तु साथ ही साथ नये विचारो के प्रवेश पर प्रतिब ध नही लगाती।

निचले सदन की रचना—इस सदन का जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचन होना चाहिए। अधिकतर राज्यो म वयस्क मताधिकार प्रदान किया जा चुका है। मताधिकार पर किसी भी प्रकार की सीमाएँ लगाना आजकल अप्रजातन्त्रात्मक समझा जाता है। सदन की सदस्या सख्या कितनी हो, यह प्रश्न विचारणीय है। इसकी सदस्य सख्या इतनी अधिक न हो कि यह अपना मननात्मक काय प्रभावशाली ढग स न कर सके, पर तु इसम राज्य के सभी प्रदेशो अथवा जन समूहो का उचित प्रतिनिधित्व भी हो। अत इसकी सदस्य सख्या निश्चित करते समय राज्य के क्षेत्रफल, जनसख्या आदि का पूरा ध्यान रखना चाहिए। इसके लिए 500 सदस्यो की अधिकतम सीमा अधिकतर लेखक ठीक मानत है। सदस्यो के निर्वाचन के विभिन्न देशो मे भिन्न भिन्न तरीके हैं, पर तु अधिकतर राज्यो मे भूमिगत निर्वाचन क्षेत्र और वे भी एक सदस्य वाले अधिक पस द किय गय हैं। कुछ देशा मे आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति की व्यवस्था है, जिसके लिए बहु सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रा का होना आवश्यक है। इस सदन की अवधि इतनी कम न हो कि सदस्यगण चुने जाने के उपरा त जब इसको आवश्यक काय विधि से परिचित हो, उसके कुछ समय बाद ही फिर उन्ह नये निर्वाचन की चिन्ता सताने लगे। सयुक्त राज्य अमरीका मे काग्रेस के निचल सदन की अवधि केवल दो वष है। फलत वहाँ सदस्यो को जैसे ही अपने काय को भली प्रकार समझन योग्य होते हैं नय चुनाव की तैयारी म लग जाना होता है। इसके विपरीत इसकी अवधि इतनी लम्बी भी न हो कि सदस्यगण कुछ समय बाद जनमत का ठीक प्रकार से प्रतिनिधित्व

विधयक पर विचार करने वाली समिति इन सब पर पूरी तरह से ध्यान देती है।

निष्कर्ष—आधुनिक प्रवृत्ति यह है कि जिन राज्यो मे उच्च सदना की व्यवस्था है वहा पर उनकी शक्तियो को कम किया जा रहा है। इस प्रक्रिया का सबस सुदर उदाहरण ब्रिटेन है, जहाँ पर कि लाड सभा की शक्तियाँ घटते घटते केवल नाममात्र की रह गयी है। भारत म भी राज्य सभा व राज्या की विधान परिषदो की शक्तिया अत्यधिक सीमित व जनप्रिय सदन की शक्तियो से बहुत कम रखी गयी है, क्योकि कई देशा के अनुभव से पता चलता है कि दो सदन वाली व्यवस्था के कारण बहुधा गतिरोध व अनावश्यक विरोध पदा हो जाया करते हैं और अनावश्यक देरी होती है। सघात्मक राज्य म सघीय विधानमण्डल म तो दो सदन होने आवश्यक ही समझे जात है, कि तु इकाई राज्यो की विधायिकाए सामा यतया एक सदन वाली होती है। ऐसी ही व्यवस्था कनाडा के प्रा तो, स्विट्जरलैण्ड के केन्टनो और आस्ट्रेलिया व भारत के अधिकतर इकाई राज्या म पायी जाती है। अ त म हम यही कहगे कि सघीय व विशाल क्षेत्रो वाले राज्यो म दो सदन वाले विधानमण्डल अधिक उपयुक्त है, किन्तु उच्च सदना की शक्तियाँ काफी सीमित होनी चाहिय। छोटे छोटे राज्यो व सघो के इकाई राज्यो म एक सदन वाली विधायिकाये पयाप्त समझी जानी चाहिये। द्वितीय सदनो की कमिया को दखते हुए रॉबटसन ने कहा है—'दूसरे सदनो क लिए कोई वैध सद्धातिक तक नही है, सिवाय सयुक्त राज्य अमरीका और स्विटजरलण्ड जसे सघो के, और दूसरे सदन, जबकि व केवल देरी करने के ही साधन नही होते, मतभेदा और सघर्षों के स्थायी स्रोत है। कि तु देरी के लिए अ य किसी तरीक द्वारा व्यवस्था की जा सकती है।' ली स्मिथ का सुझाव है कि दूसरे सदन का प्रथम द्वारा चुनाव कराया जा सकता है और उसकी रचना मोटे रूप म प्रथम के ही अनुरूप हो सकती है।[1]

इस प्रकार सत्तारूढ दल की इच्छा प्रभावी रह सकेगी, और चूकि दूसरे सदन की अवधि का उसके बनाने वाले सदन के साथ अ त हो जायेगा, तो उनके बीच कोई खतरा न रहेगा। इसका एकमात्र काय देरी करना तथा दोहराना होगा, और इसके लाभ का पता इस बात स चलेगा—जबकि यह जल्दबाजी और भूलो को रोक सकगा, यह किसी विधेयक को नष्ट न कर सकेगा। इस सम्ब ध म स्ट्राग अग्रलिखित निष्कर्षों पर पहुचा है—(1) वतमान राज्यो म से बहुत ही कम ऐसे हैं जा एक सदन वाले विधानमण्डल से सन्तुष्ट हो, (2) दूसरे सदना का चुनाव जनप्रिय नियन्त्रण स जितना अधिक बाहर होगा, उतना ही अधिक वह राजनीति की वास्तविकताओ से अलग हो जायगा और इस प्रकार जीवन शक्ति को खो देगा, (3) यदि उपयुक्त बात मान ली जाय तो इस प्रकार की चेतावनी है कि दूसर सदन को नष्ट न होने दिया जाय, और (4) वास्तविक शक्तिया वाले दूसरे सदन का होना सघात्मक पद्धति के सफल सचालन के लिए आवश्यक है।[2]

दूसरे सदन की रचना—कुछ राज्यो म दूसरा सदन वशानुगत आधार पर बनाया जाता है। इसका सबस प्रसिद्ध उदाहरण ब्रिटेन की लाड सभा है, जिसम अधिकाश सदस्य वशानुगत आधार पर बटते हैं और शेष का विभिन्न पीयस (उच्च वश क उपाधिकारी व्यक्ति) निर्वाचन करते हैं। पर तु अब इस आधार को प्रजात त्रवाद के सिद्धा त का विरोधी माना जाता है। (2) कुछ राज्यो के उच्च सदना म राज्या के अध्यक्षो द्वारा नामजद व्यक्ति ही रहते है। कनाडा की सीनेट म सभी सदस्य वहाँ क गवनर जनरल द्वारा नामजद किये जात है। अ य अधिकतर राज्या म सब तो नही कि तु कुछ सदस्य बहुधा राज्य के अध्यक्ष द्वारा नामजद होते है। भारतीय राज्य

[1] Lee Smith H B *Second Chambers in Theory and Practice* p 249
[2] Strong C F *Modern Political Constitutions* pp 219–20

इस पार्लियामेन्ट द्वारा पास किये गये कानूनों में बहुत कम ऐसे होते हैं, जो अधीन अधिकारियों को कानून अर्थात् विनियम व नियम बनाने का अधिकार न देते हों। 1932 में प्रकाशित एक ब्रिटिश समिति की रिपोर्ट (The Report of the Donoughmore Committee) में इस विधायन की पद्धति को अग्रलिखित आधारों पर न्यायोचित ठहराया गया—(1) पार्लियामेन्ट के अधिनियमों में विस्तार की बातों को निकाल देने से पार्लियामेन्ट के समय पर कम दबाव रहता है, (2) पार्लियामेन्ट सिद्धान्त की मोटी बातों या तकनीकी मामलों में प्रवेश किये बिना ही पारित कर सकती है, (3) ऐसी परिस्थितियों का मुकाबला करने के लिए कार्यपालिका, पार्लियामेन्ट से अतिरिक्त या संशोधन विधायन के लिए प्रार्थना किये बिना ही अचानक उत्पन्न होने वाले मामलों पर निर्णय ले सकती है, (4) परिस्थितियों में तेजी से होने वाले परिवर्तनों के बारे में भी कार्यपालिका निर्णय कर सकती है, (5) अनुभव के प्रकाश में पाये गये आवश्यक परिवर्तन सुगमता से किये जा सकते हैं, और (6) आपात्काल में राज्य तीव्र गति के साथ पग उठा सकता है।[1]

इस प्रकार के विधि निर्माण के विभिन्न प्रकार (Kinds of Delegated Legislation)—मोटे रूप से इन कानूनों को चार समूहों में बांटा जा सकता है—(1) सपरिषद् आदेश (Orders-in Council) (2) सांविधिक विनियम व नियम (Statutory Instruments), जिन्हें मंत्री अथवा सरकारी विभाग बनाते हैं, (3) सांविधिक विनियम व नियम जिन्हें अ-सरकारी संस्थाएं बनाती हैं, और (4) विशेष प्रकार के अधीन विधि निर्माण (special types of subordinate legislation)। सांविधिक विनियम, नियम अथवा आदेश वे हैं जिन्हें मन्त्री तथा विभागीय अधिकारी 1946 के कानून (Statutory Instruments Act) के अनुसार और अ-सरकारी निकाय सम्बन्धित कानूनों के अन्तर्गत बनाते हैं। अधीन विधायन में विशेष प्रकार के आदेशों व कानूनों के अन्तर्गत बनायी गयी योजनाएँ, अस्थायी आदेश, विशेष प्रक्रिया आदेश आदि आते हैं। इस पद्धति के मुख्य लाभ इस प्रकार हैं —(1) इसके द्वारा पार्लियामेन्ट का बहुत समय बचता है, है, क्योंकि इस विस्तार की बातों के ऊपर विचार नहीं करना पड़ता। (2) इससे नमनीयता बढ़ती है, क्योंकि प्रशासन सम्बन्धी विस्तार की बातों को परिस्थितियों के अनुसार (कानून की सीमाओं का उल्लंघन न करते हुए) ढाला जा सकता है अर्थात् विनियमों व नियमों में समय के अनुसार परिवर्तन किये जा सकते हैं। (3) आपात्कालीन परिस्थितियों का मुकाबला करने में यह बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुई है, क्योंकि यह वह साधन है जिसके द्वारा विधायिका अपनी कानून निर्माण सम्बन्धी प्रक्रिया को अत्यधिक कम करके कार्यपालिका को तुरन्त आवश्यक कार्यवाही करने की शक्ति सौंप सकती है। (4) यह पार्लियामेन्ट की नीति को प्रभावी बनाने के लिए शीघ्रगामी, सुविधाजनक व सही साधन है, जिससे कि इस प्रकार से पार्लियामेन्ट द्वारा दी गयी विधायी शक्तियों का दुरुपयोग न हो अथवा संसदीय शासन कमजोर न पड़े, ऐसी शक्तियाँ साधारणतया सपरिषद् ताज (Crown in Council), उसके मन्त्रियों व उनके अधीन विभागों तथा अधिकारियों को दी जाती हैं, जिनके लिए मन्त्रिमण्डल पार्लियामेन्ट के प्रति उत्तरदायी रहता है।

ये कानून, जो ऐसी शक्तियाँ प्रदान करते हैं, उनके प्रयोग की निश्चित सीमायें निर्धारित कर देते हैं और अधिक महत्त्वपूर्ण मामलों में पार्लियामेन्ट को उनके अन्तर्गत जारी किये गये विनियमों तथा नियमों पर अनुसमर्थन (confirmation of statutory instruments) की शक्ति प्राप्त रही। इस प्रकार के विधि निर्माण की देख रेख के लिए पार्लियामेन्ट की एक प्रवर समिति (Select Committee on Statutory Instruments) भी होती है, जो प्रत्येक सत्र में ऐसी शक्तियों के असाधारण प्रयोग पर पार्लियामेन्ट को रिपोर्ट देती है। पूर्व वर्णित कारणों के परिणामस्वरूप,

[1] *Report* of the Committee on Ministers Powers 1932

न कर सकें। इन कारणो से इसकी अवधि चार या पाँच वर्ष होनी चाहिए। निचला सदन ही लोकप्रिय सदन होता है, अर्थात् यही जनता की इच्छा का प्रतिनिधि होता है।

3 विधायिका के सदनो की तुलनात्मक शक्तिया

दोनो सदनों की शक्तियो की तुलना—वर्तमान प्रवृत्ति यह है कि दो सदन वाले विधान मण्डल मे निचले अथवा लोकप्रिय सदन को व्यापक और वास्तविक शक्तियाँ प्राप्त हो। इसी कारण अधिकतर देशो म ऊपर वाले सदनो की शक्तिया निचले सदनो की तुलना म बहुत कम और परिमित होती है। ग्रेट ब्रिटेन म 1911 के पार्लियामेन्टरी अधिनियम द्वारा लार्ड सभा की शक्तियाँ अत्यधिक सीमित कर दी गयी। जहाँ तक धन विधेयकों का सम्बन्ध है उनके बारे म तो लार्ड सभा की शक्तियाँ नही के समान है। अन्य विधेयकों के बारे म भी वह केवल उनके पास होने म कुछ देरी करा सकता है तथा उनको दोहराता है, अतएव लार्ड सभा की शक्तियाँ वास्तविक नही है।

सोवियत सघ व सयुक्त राज्य अमरीका म दोनो सदनो की शक्तियाँ लगभग समान हैं। अमरीका की सीनेट को तो विश्व का सबसे अधिक शक्तिशाली उच्च सदन कहा जाता है। इसकी शक्तियो और उनके स्रोतो का विस्तारपूर्वक विवेचन अध्याय दस म उपयुक्त स्थान पर किया गया है। आस्ट्रेलिया की सीनेट म धन विधेयको को न तो आरम्भ किया जा सकता है और न ही उन्हे सशोधित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अन्य बातो म दोनो सदनो की शक्तियाँ बराबर है। यदि किसी विधेयक पर दोनो सदनो के बीच मतभेद पैदा हो जाय और कोई भी दूसरे सदन की बात मानने को तैयार न हो, तो प्रधानमन्त्री गवर्नर जनरल को यह परामर्श दे सकता है कि विधानमण्डल को विघटित कर दिया जाय। यदि नये चुनाव के बाद भी जिसमे कि उस विधेयक का मामला निर्वाचन सम्बन्धी प्रश्नो मे प्रमुख रहेगा, दोनो सदनो के बीच मतभेद बना रहे तो उस प्रश्न का निर्णय दोनो सदनो की सयुक्त बैठक म बहुमत से किया जा सकेगा।

फ्रास के पाँचवें गणतन्त्र के अन्तर्गत दूसरे सदन का नाम फिर से सीनेट रखा गया है। पूर्वगामी सविधान के अन्तर्गत 'गणतन्त्र की परिषद्' (Council of the Republic) की अपेक्षा सीनेट अधिक शक्तिशाली है, क्योकि विधि निर्माण के लिए दोनो सदनो की सहमति आवश्यक है। पश्चिमी जर्मनी म द्वितीय सदन का नाम बन्देसरत (Bundesrat) है, यह स्वायत्तता प्राप्त राजनीतिक विभागो (Lands) के प्रतिनिधियो से मिलकर बना है। यह विधायी प्रक्रिया म दो प्रकार से भाग लेता है। आधारभूत कानून (Basic Law) मे प्रगणित कुछ प्रकार के कानूनों पर तो इसकी स्वीकृति पानी आवश्यक है, दूसरे प्रकार के मामलो म दूसरे सदन को केवल अस्थायी प्रतिषेध (Suspensive veto) की शक्ति मिली है, जिसका लोकप्रिय सदन के साधारण बहुमत से अन्त किया जा सकता है। जब दोनो सदन असहमत रहें, तो सयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट व प्रतिनिधि सदन की सयुक्त समितियो की भाँति उसे भी सयुक्त समिति द्वारा दूर किया जा सकता है।

4 प्रदत्त (सौंपा हुआ) विधायन

आधुनिक विधायिकायें इस प्रकार का विधि निर्माण वृद्धिपूर्ण मात्रा म करने लगी है। ब्रिटेन म इस प्रकार के कानून बनाने का अधिकार पार्लियामेन्ट सैकड़ो वर्षो से प्रदान करती आयी है किन्तु जब से राज्य ने सामाजिक सेवाओ और आर्थिक कार्यों के करने का उत्तरदायित्व ग्रहण किया तब से इस प्रकार के विधि निर्माण म बहुत वृद्धि हुई है। गत 70 वर्षों म सरकार के कार्य क्षेत्र म निरन्तर वृद्धि होती रही है, फलत पार्लियामेन्ट के समय पर कार्यों का भार बहुत बढ़ गया है। अब इस प्रकार की विधि निर्माण पद्धति को व्यापक रूप से स्वीकार कर लिया गया है और

को ही विधि निर्माण का अधिकार है। यह इस अधिकार को (अन्य किसी को) नहीं सौंप सकता।' परन्तु 1958 के पाँचवें गणतंत्र के संविधान की धारा 37 कहती है कि उन मामलों को जिन्हें कानूनों द्वारा विनियमित न किया जाय, नियम निर्माण वाले स्वरूप का समझा जाय और ऐसे मामलों का आदेश (आज्ञप्ति) द्वारा संशोधित किया जा सकता है, यदि आदेश को कौंसिल ऑफ स्टेट से मन्त्रणा के बाद जारी किया गया है। परन्तु ऐसा तभी हो सकता है जबकि सांविधानिक परिषद् (Constitutional Council) यह घोषित करदे कि सम्बन्धित मामले नियम निर्माण के क्षेत्र में आते हैं। धारा 38 में कहा गया है कि सरकार, अपने कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के प्रयोजन से सीमित काल के लिए पार्लियामेन्ट से अधिकार प्राप्त कर सकती है कि वह नियम निर्माण स्वरूप के अध्यादेश जारी कर सकती है। इन अध्यादेशों को मन्त्रि-परिषद् बनाती है और वे प्रभावी नहीं रहते, यदि उनकी पुष्टि करने वाला विधेयक सम्बन्धित कानून (Enabling Act) में दी गयी समय सीमा के भीतर पार्लियामेन्ट के समक्ष नहीं रखा जाता।

आलोचना—इस प्रकार के बनाये गये कानूनों की कई आधारों पर आलोचना की गयी है। नये अत्याचारी शासन (New Despotism) के लेखक ने अपनी पुस्तक में सरकारी अधिकारियों की बढ़ती हुई शक्तियों की कटु आलोचना की है। आलोचना के अन्य आधार अनेक में ये हैं—(1) कभी कभी इस प्रकार के विधि निर्माण का सम्बन्ध सिद्धान्त के मामलों से होता है, जो पार्लियामेन्ट के नियन्त्रण से बचता है। (2) कभी कभी ऐसे विनियमों का प्रभाव बीती बातों पर भी पड़ता है (retrospective in effect), जो कानून के शासन की पद्धति के विरुद्ध है। (3) ऐसे विधि निर्माण पर अदालतों का नियन्त्रण केवल यहीं तक रहता है कि वे कानून के प्रयोजनों की सीमाओं का उल्लंघन न करें। (4) यद्यपि इनके प्रकाशन के लिए काफी नियम हैं किन्तु सदा पूर्ण रूप से प्रकाशन नहीं हो पाता। (5) व्यवहार में संसदीय नियन्त्रण के तरीके उतने सन्तोष-जनक सिद्ध नहीं हुए हैं जितने कि होने चाहिए थे।

5 प्रजातान्त्रिक और अधिनायकतन्त्रीय विधानमण्डल

दोनों प्रकार के विधानमण्डलों के बीच आधारभूत बातों में अन्तर होता है। यद्यपि ऊपरी बातों में अधिनायकतन्त्रीय विधानमण्डल भी प्रजातन्त्रीय जैसा ही दिखाई पड़ सकता है। इससे पूर्व कि हम दोनों के बीच अन्तर की मुख्य बातों का विश्लेषण करें, यह उचित प्रतीत होता है कि प्रजातन्त्र और प्रजातन्त्रात्मक विधानमण्डल के बारे में कुछ बताया जाये। प्रजातन्त्रात्मक शासन वास्तव में जनता की सहमति पर आधारित शासन होता है। उसमें जनता को अपने प्रतिनिधियों का निर्वाचन स्वतन्त्रता पूर्वक करने का अधिकार व समुचित अवसर मिलना जरूरी है। इस प्रकार से निर्वाचित प्रतिनिधियों को सरकार पर नियन्त्रण रखने की शक्ति भी प्राप्त होनी चाहिए। सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों को जनता द्वारा स्वतन्त्रतापूर्वक अभिव्यक्त इच्छा के अनुसार निर्धारित करना चाहिए। सच्चे प्रजातान्त्रिक विधानमण्डल में ये विशेषताएँ पाई जानी आवश्यक हैं—(1) स्वतन्त्र चुनाव, (2) शासन (सरकार) पर विधायिका का नियन्त्रण, (3) विरोधी पक्ष को सगठित होने तथा सरकार की आलोचना करने की स्वतन्त्रता, और (4) प्रक्रिया सम्बन्धी स्वतन्त्रता। डेनियल विट के शब्दों में—प्रजातान्त्रिक विधानमण्डल प्रतिनिधित्व करते हैं कानून बनाते हैं, कार्यपालिका का परीक्षण करते हैं, जनता को शिक्षित करते हैं और राजनीतिक नेतृत्व के लिए प्रशिक्षण भूमि का काम करते हैं। उनके कार्य केवल विधि निर्माण से कहीं अधिक हैं जैसा कि विधानमण्डल शीर्षक में निहित है। इसके अतिरिक्त, वे सभी कार्यों में, विधि निर्माण सहित, सरकार के अन्य अंगों को भी भागीदार बनाते हैं।[1]

[1] Wit, D *Comparative Political Institutions* p 360

प्रशासन के अनेक क्षेत्रों—कृषि, उद्योग, निधन सहायता, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा आदि—में नियम, विनियम और आदेश सामान्य कानूनों के अन्तर्गत सम्बन्धित विभागों के उच्च अधिकारियों द्वारा बनाये जाते हैं। इस प्रकार विधायिका का महत्त्व कुछ कम हो गया है और कार्यपालिका का महत्त्व बढ़ गया है। परन्तु प्रदत्त विधि निर्माण के सम्बन्ध में यह ध्यान अवश्य ही रखा जाना चाहिए कि जिन बातों के बारे में कार्यपालिका को कार्य सौंपा जाय वे शक्तियाँ विधायी सिद्धान्त की न हों।[1] विधायिका को यह भी देखना चाहिए कि प्रदत्त विधि निर्माण का कार्य किसी एक व्यक्ति को न सौंपकर किसी बोर्ड या कमीशन को सौंपा जाना चाहिए। साथ ही इस कार्य के ऊपर विधायिका द्वारा देख रेख तथा रोक की व्यवस्था भी की जानी चाहिए।

भारत में इस प्रकार के विधि निर्माण को अधीन विधि निर्माण (sub ordinate legislation) नाम दिया गया है और संसद ने पन्द्रह सदस्यों की एक समिति बनायी है जिसका कार्य इस प्रकार से बनाये गये नियमों और विनियमों की यह परीक्षा करना है कि वे संसद द्वारा सौंपी गयी सत्ता के अनुसार ही है। ब्रिटेन में यह समिति प्रतिवर्ष लगभग 1000 नियमों, विनियमों (Statutory Instruments) की परीक्षा करती है, और सदन के ध्यान को केवल लगभग एक प्रतिशत पर खींचती है। यह विशेष सत्रीय रिपोर्ट भी प्रकाशित करती है, जो राजनीतिक मामलों के विद्यार्थियों के लिए बहुत दिलचस्पी की होती है। 1946 के एक कानून (The Statutory Instruments Act) ने ऐसे नियमों और विनियमों के प्रकाशन के सम्बन्ध में एक प्रक्रिया विहित की, जिसके अनुसार उन्हें 40 दिन के भीतर रद्द किया जा सकता है। उन पर संसदीय नियन्त्रण की मात्रा के आधार पर उन्हें अग्रलिखित वर्गों में रखा जा सकता है —(1) इतने कम महत्त्व वाले विनियम जिन पर पार्लियामेण्ट का नियन्त्रण आवश्यक नहीं है। (2) वे जिन्हें रद्द किया जा सकता है, यदि पार्लियामेण्ट का कोई भी सदन उनके पार्लियामेण्ट के समक्ष रखे जाने के 40 दिन के भीतर यह प्रस्ताव पास करे कि उन्हें रद्द करने के लिए रानी की सेवा में सम्बोधन प्रस्तुत किया जाय। यह एक प्रकार का नकारात्मक नियन्त्रण है। (3) वे जिनके लागू होने या एक विहित काल सीमा से आगे जारी रहने के लिए पार्लियामेण्ट के दोनों सदनों का प्रस्ताव आवश्यक है। यह नियन्त्रण का सबसे अधिक प्रभावी तरीका है, क्योंकि पार्लियामेण्ट को इस हेतु एक सकारात्मक पग उठाना पड़ता है।

संयुक्त राज्य अमरीका में विधायी शक्तियों का सौंपा जाना—संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान ने विधायी शक्ति कांग्रेस (और राज्यों के विधानमण्डलों) को दी है। वहाँ का संविधान शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त पर आधारित है, परन्तु राष्ट्रपति के कार्यालय (President's office) और कार्यपालिका के अनेक अधिकारियों के बहुत से कर्त्तव्यों को विधायी शक्ति के सौंपे बिना करना कठिन है। फिर भी न्यायालय, शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त को मानते हुए, प्रदत्त विधायन के सिद्धान्त को मानने में हिचक दिखाते रहे हैं और कार्यकारी निकायों द्वारा ऐसी शक्तियों के प्रयोग को 'अर्द्ध विधायी' (quasi legislative) नाम दिया गया है। अपने कार्यों के करने में सार्वजनिक अधिकारियों को यह ध्यान रखना पड़ता है कि उन्हें न्यायालय अवैध अथवा असांविधानिक घोषित न कर दें। अतएव इस क्षेत्र में उनका व्यवहार यथासम्भव ठीक और वैध होना आवश्यक है।

फ्रांस में प्रदत्त विधायन—चौथे गणतन्त्र के संविधान में, 7 दिसम्बर 1954 के सांविधानिक कानून द्वारा संशोधित हो जाने के बाद, तेरहवीं धारा में कहा गया था केवल नेशनल एसम्बली

[1] In the present phase of the constitution the centre of gravity has shifted to the Executive and the role of Parliament has proportionately diminished but care should be taken that what is left to the executive is not matter of substantive legislative principle —Charlesworth J C *Governmental Administration* pp 64–66

दिखाया गया है कि (1) यूनाइटिड किंगडम में केबिनेट की अधिनायकशाही नहीं है, क्योंकि पार्लियामेंट का उस पर अब भी नियन्त्रण है, (2) सोवियत संघ में प्रजातन्त्र नहीं है, और (3) साम्यवादी चीन में भी राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस प्रजातन्त्रात्मक निकाय नहीं है।

ब्रिटिश केबिनेट को अधिनायक कहना उचित नहीं है। इसकी शक्तियों पर वास्तविक सीमाएँ लगी हैं। शासन की कार्यवाही खुले रूप में चलती है। पार्लियामेंट के दोनों सदनों और समाचार पत्रों में केबिनेट की नीति व कार्यक्रम की व्यापक आलोचना की जाती है। कॉमन सभा में इसके विरुद्ध निन्दा का प्रस्ताव, अविश्वास प्रस्ताव तथा कार्य स्थगन प्रस्ताव पेश किये जा सकते हैं और बहुमत विरुद्ध होने पर केबिनेट को त्याग पत्र देना पड़ता है। पार्लियामेंट की बैठकों में मन्त्रियों के प्रशासन सम्बन्धी कार्यों व भूलों के बारे में प्रतिदिन अनेक प्रश्न पूछे जाते हैं। सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ब्रिटेन में विपक्षी दल अत्यन्त सुदृढ़ रहता है और उसके महत्त्व को सभी स्वीकार करते हैं। इन बातों के रहते हुए केबिनेट अधिनायकशाही का रूप धारण नहीं कर सकती। 1934 में रेम्जे मेक्डोनल्ड की राष्ट्रीय सरकार को बहुत बड़े बहुमत का समर्थन प्राप्त था फिर भी बेकारी सहायता विनियमों (Unemployment Assistance Regulations) के प्रश्न पर उसे झुकना पड़ा था। 1935 में ब्रिटन के विदेश मन्त्री सर समुअल होर ने अबीसीनिया के प्रश्न पर फ्रांस के प्रधानमन्त्री से वार्ता की, जिसकी सूचना फ्रांस और ब्रिटन के समाचार पत्रों में प्रकाशित हो गई। उन प्रस्तावों के प्रति दलव्यापी विरोध का प्रदर्शन हुआ, फलतः ब्रिटिश केबिनेट को वे प्रस्ताव अस्वीकार करने पड़े और विदेश मन्त्री को त्याग-पत्र देना पड़ा। 1957 में स्वेज नहर के प्रश्न पर तत्कालीन प्रधानमन्त्री ईडन को त्याग पत्र देना पड़ा और उसी दल का नया मन्त्रिमण्डल प्रधानमन्त्री हेरोल्ड मैकमिलन के नेतृत्व में बना। वास्तव में केबिनेट को जनमत और व्यापक विरोध का आदर करना पड़ता है। इसी आधार पर ब्रिटेन में सच्चा प्रजातन्त्र है और केबिनेट की अधिनायकशाही की बात मात्र भ्रम है। पार्लियामेंट में विरोधी पक्ष का कार्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। यह सत्य है कि केबिनेट की ब्रिटिश शासन में केन्द्रीय स्थिति है और इसकी शक्तियाँ भी विस्तृत हैं। परन्तु अब भी केबिनेट को अपनी नीति के लिए पार्लियामेन्ट का समर्थन प्राप्त करना पड़ता है, वस्तुतः उसके कार्यक्रम और नीति का भाग्य कॉमन सभा के बहुमत के समर्थन और वफादारी पर ही निर्भर है।

इस विषय में न्यूमेन ने लिखा है 'प्रजातन्त्रीय राज्य में, जैसा कि ब्रिटन है, नेतृत्व एक पक्षीय मामला नहीं, परन्तु वह केवल तभी कायम रह सकता है जबकि नेता और उसके अनुयायियों में विश्वास की काफी मात्रा हो। केबिनेट अवश्य ही पार्लियामेंट का नेतृत्व करती है, किन्तु यह तभी तक सफलतापूर्वक कार्य कर सकती है जब तक इसे केबिनेट पद्धति की आधारभूत आवश्यक एकता का ध्यान रहे। केबिनेट संसदीय विरोध को जबरन नहीं दबा सकती वरन् उसे सहमति प्राप्त करने का प्रयत्न करना आवश्यक है। ऐसी सहमति शायद ही कभी एकमत हो, विशेष रूप से विरोधी पक्ष के साथ। परन्तु सरकार यह जान कर कि कॉमन सभा से सहयोग आवश्यक है, सदा ही उसे पाने का प्रयत्न करती है, उस समय भी जबकि उसके साथ बहुमत हो। अतएव यह पार्लियामेंट के विभिन्न मतों का ध्यान रखती है और विधि निर्माण में विरोधी पक्ष के मतों को भी स्थान मिलता है। पार्लियामेंट केबिनेट पर रोक लगाने तथा उसके सन्तुलन का तन्त्र नहीं है वरन् नीति के चुने तथा विस्तृत वाद विवाद का फोरम है—ऐसा फोरम जिसका मन्त्रिगण अवश्य ही ध्यान रखते हैं।'[1]

सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत को वहाँ की संसद कहा गया है और उसके कार्यों व शक्तियों की सूची काफी बड़ी है, किन्तु वास्तव में वह अन्य राज्यों की राष्ट्रीय विधायिकाओं की

[1] Neumann R G *European and Comparative Government* p 40

उपर्युक्त दृष्टिकोण से विचार करने पर हम यह कह सकते है कि ग्रेट ब्रिटेन, भारत, कनाडा, आस्ट्रेलिया, जापान, फ्रांस, श्रीलंका आदि राज्यो के विधानमण्डल प्रजातन्त्रात्मक हैं। परन्तु फासिस्ट इटली व नाजी जर्मनी म विधानमण्डल स्वतन्त्र न थे और सोवियत सघ, साम्यवादी चीन व अन्य साम्यवादी राज्यो तथा स्पेन व पुर्तगाल आदि राज्या मे विधानमण्डल प्रजातान्त्रिक नही वरन् अधिनायकतन्त्री है। फासिस्ट इटली व नाजी जर्मनी म चुनाव स्वतन्त्र नही थे और विरोधी दलो का अन्त कर दिया गया था। उनके विधानमण्डल कार्यपालिका पर नियन्त्रण का प्रयोग करने के बजाय स्वय कार्यपालिका द्वारा नियन्त्रित थे। वास्तव म, फासिस्टो व नाजियो का प्रजातन्त्र म विश्वास ही न था, उनकी शासन पद्धतियाँ तो निसन्देह अधिनायकतन्त्रीय थी। फाइनर के मतानुसार नाजी सरकार के अन्तर्गत विधायिका (Reichstag) विशुद्ध रूप मे कोरा दिखावा (a pure facade) था और एसम्बली, जिसके सदस्यो को *हिटलरी पद सोपान ने ध्यान-पूर्वक चुना था*, ऐसे व्यक्तियो का समूह था जो सरकारी निदेशानुसार सरकार की सराहना करता था। उसके सत्र केवल (Fuhrer) या उसका प्रधान गोयरिंग ही बुला सकता था। *1933* के कानून (Enabling Act) के लागू हो जाने पर कानूनो को कार्यपालिका ने ही विधानमण्डल म उनके ऊपर वाद विवाद हुए बिना निर्मित किया।[1]

आजकल साम्यवादी राज्यो मे दूसरे प्रकार के अधिनायकतन्त्री विधानमण्डल हैं। उन देशो म चुनाव स्वतन्त्र नही वरन् साम्यवादी दल की सरकार द्वारा सचालित व नियन्त्रित होते ह। साथ ही इन राज्या म विधानमण्डल के भीतर या बाहर कोई विरोधी दल है। इन राज्यो म *विधायिकाओ की शक्तिया दखन मे तो बडी विस्तीर्ण हैं किन्तु व्यवहार म वे शक्तिहीन हैं।* उन पर कार्यपालिका का पूर्ण नियन्त्रण है, वे कार्यपालिका के विरुद्ध अविश्वास व निन्दा के प्रस्ताव पास नही कर सकते और न ही उसकी आलोचना कर सकते हैं। वे तो केवल सरकार द्वारा प्रस्तुत विधेयको, प्रस्तावो व रिपोर्टों को साधारण विचार के बाद स्वीकार कर लेने वाले विधान मण्डल है।

इन विधानमण्डलो की कार्यप्रणाली तथा विधायी प्रक्रिया भी कार्यपालिका से स्वतन्त्र नही है। फाइनर के मतानुसार सोवियत सघ म सर्वोच्च सोवियत का प्रभावीपन दो शक्तिशाली कारणो से सीमित है—प्रथम, निर्वाचनो पर साम्यवादी दल का नियन्त्रण है, दूसरे, सर्वोच्च सोवियत अपने सदस्या म से एक निकाय—प्रेसीडियम का चुनाव करती है, जो कि सोवियत सघ के शासन का उसके विराम काल म सचालन करती है और सर्वोच्च सोवियत के वर्ष मे कुल दो सत्र होते है, जो लगभग 20 दिन तक चलते है। जिस प्रकार से सोवियत सघ मे प्रेसीडियम है उसी प्रकार साम्यवादी चीन म स्थायी समिति है, जबकि सभी प्रजातान्त्रिक देशो मे प्रक्रिया की स्वतन्त्रता का सिद्धान्त पाया जाता है और वे विधानमण्डलो की अपनी कार्य प्रणाली व कार्यों पर (सांविधानिक प्राविधानो के भीतर रहते हुए) इस प्रकार की स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं। ऐसा विधानमण्डल अपनी कार्य प्रणाली और प्रक्रिया नियमो का निर्धारण करता है। इस बारे मे निर्णायक बात यह है—क्या सर्वोच्च सोवियत अपनी इच्छा से कार्य कर सकती है? इसका उत्तर 'नही' है, क्योकि इसे तो *सविधान के अनुसार प्रेसीडियम ही वर्ष मे दो बार आहूत करता है।* सोवियत सघ म शासन साम्यवादी दल और प्रशासन करते हैं, जबकि सोवियतें केवल 'हा' कहती है, उनमे कोई विरोधी मत नही देता और न ही कोई सदस्य अनुपस्थित रहता है।[2] इस अध्याय के अग्रलिखित पृष्ठो म इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए तीन उदाहरण दिये गये है ... यत्र

---

[1] Finer H *op cit* p 541
[2] *Ibid* p 542.

सर्वोच्च सोवियत के सदस्य मतदाताओ म सोवियत सरकार के प्रतिनिधि होते है, व मतदाताओ के प्रतिनिधि नहीं होते। सदस्यो और उनके द्वारा मतदाताओ म कुछ इस प्रकार की भावना पैदा होती है कि वे शासन म भाग लेते हैं।[1] वरनन वी० एस्पेटुरियन के शब्दो म सर्वोच्च सोवियत एक ऐसी सस्था है जो औपचारिक रूप मे प्रजात त्र और वैधता का चि ह है। यह दल की इच्छा को कानूनो म परिवर्तन करती है जिसके बारे म कहा जाता है कि जनसाधारण क प्रतिनिधियो ने बनाये हैं। सर्वोच्च सोवियत सर्वोच्च राज्य शक्ति की अभिरक्षक है, न कि सोवियत समाज म सर्वोच्च शक्ति की। यद्यपि यह उच्चतम कानूनी अग है, सोवियत शक्ति और वैधता का वास्तविक स्रोत साम्यवादी दल है। अतएव सर्वोच्च सोवियत ऐसी सस्था है जिसका प्रयोजन जनसाधारण म यह विचार पदा करना है कि वे शासन म भाग लेत है।[2] अ य लेखको के अनुसार सर्वोच्च सोवियत की बैठको का प्रयोजन सदस्यो को प्रेरणा देना उ है तथा उसके निर्वाचको को शिक्षित करना है। पर तु आग और जिक का मत है कि चाहे सर्वोच्च सोवियत पाश्चात्य दृष्टि मे सच्चा मननात्मक निकाय न हो, फिर भी यह नही मानना चाहिये कि यह सावजनिक मामलो पर उचित मात्रा म प्रभाव नही डालती।[3] हमारे विचार मे यह मत बहुत ठीक और सन्तुलित है।

चीन मे राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस की शक्तियाँ, सावधानिक दष्टि से, विस्तृत हैं, कि तु नीति निर्धारण सम्ब धी मुख्य शक्ति तो साम्यवादी दल की राजनीतिक ब्यूरो के हाथा मे है। यद्यपि सवि धान म इसे विधायी शक्ति का प्रयोग करने वाला एकमात्र अग कहा गया है, यथाथ म, इसकी विधायी शक्तियो म महत्त्वपूर्ण भाग इसकी स्थायी समिति का है, जो सोवियत सघ की प्रेसीडियम के समान है। राष्ट्रीय जन काग्रेस यथाथ म क्या काय करती है, इसका अनुमान उसके आगे वर्णित दो अधिवेशनो म किये गये कार्यों की सूची से लगाया जा सकता है। प्रथम जन काग्रेस न 1957 के चौथे अधिवेशन (सत्र) मे अग्रलिखित निणय किये (1) सरकारी प्रतिवेदन की स्वीकृति, (2) अ तिम वक्तव्य और राज्यीय बजट को अगीकृत किया, (3) सर्वोच्च जन यायालय और सर्वोच्च जन प्रोक्यूरेटोरेट के कार्यों क प्रतिवेदना पर स्वीकृति, (4) दूसरी राष्ट्रीय जन काग्रेस के लिए प्रतिनिधियो के चुनाव सम्ब धी प्रश्न पर निणय, (5) क्वांग्सी चॉग उपराष्ट्रीय स्वायत्त प्रदेश की स्थापना पर निणय, (6) निगसिया हुई स्वायत्त प्रदश की स्थापना पर निणय, (7) सर्वोच्च जन यायालय द्वारा मत्यु दण्ड देन के सम्ब ध म एक संकल्प अगीकृत किया।

1959 म दूसरी राष्ट्रीय जन काग्रस ने अपने प्रथम सत्र म य निणय किय—(1) सरकारी कार्यों के प्रतिवेदन को अगीकृत किया, (2) अ तिम वक्तव्य और राजकीय बजट पर स्वीकृति दी, (3) 1959 के लिए राष्ट्रीय योजना पर स्वीकृति दी, (4) तिब्बत क प्रश्न पर एक सकल्प अगीकृत किया, (5) याय म त्रालय व परिवीक्षण म त्रालय के उ मूलन का निर्णय किया, और (6) सरकारी नताओ का चुनाव किया। यदि हम राष्ट्रीय जन काग्रेस की रचना अर्थात् उसके प्रतिनिधियो की चुनाव पद्धति पर भी विचार करें तो यह स्पष्ट होगा कि चीन म प्रजात त्र केवल एक धोखा मात्र है। प्रथम राष्ट्रीय जन काग्रेस के 1226 प्रतिनिधियो के, नामा की प्रथम स्थानीय काग्रेसा द्वारा नामजदगी हुई और बाद म प्रा तो, स्वायत्त प्रदेशो, के द्रीय सत्ता के अधीन म्युनिसिपलिटिया, सशस्त्र सनाओ आदि द्वारा उनका चुनाव हुआ। पर तु शासन के निर्वाचन कानून द्वारा उम्मीदवारा की नामजदगी चीनी साम्यवादी दल, प्रजातान्त्रिक दला और अ य जन सगठनो द्वारा सयुक्त रूप स आपस म परामश द्वारा होती है, कि तु यथाथ म चीनी साम्यवादी दल द्वारा। इसके

1 Munro and Ayearst *The Governments of Europe* p 664
2 Macridis and Ward *Modern Political Systems—Europe* p 512
3 Ogg and Zink *op cit* p 860

तरह नही है। उसके वर्ष म केवल दो अल्पकालीन सत्र होते है, वह कानून भी कम बनाती है और जो भी बनाती है उनका आरम्भ सरकार करती है। सर्वोच्च सोवियत म विधेयको पर बहुत ही कम वाद विवाद होता है, व साधारणतया सवसम्मति स स्वीकार कर लिये जाते ह। सोवियत सविधान और लेखक उसे 'राज्य-सत्ता का सर्वोच्च अग' बताते है, परन्तु ऐसा नही है, क्योकि उसके अनुसार सर्वोच्च सोवियत नीति का निर्धारण नही करती। अन्य पाश्चात्य लेखकों के मतानुसार सर्वोच्च सोवियत का विधि निर्माण म भाग महत्त्वहीन है। फाइनर के अनुसार सर्वोच्च सोवियत की विधायी शक्तियो म दो कारणो से अस्पष्टता है—(अ) इस विधि निर्माण के अतिरिक्त अन्य शक्तियाँ प्राप्त हैं। (ब) सविधान ने अन्य अगो को भी विधायी शक्तियाँ प्रदान की है। प्रेसीडियम आज्ञप्तियाँ बना सकती है और मन्त्रिपरिषद् कानूनो के आधार पर और उनकी पूर्ति के लिए निणय कर सकती है तथा आदेश निकाल सकती है, जिन्हे तुरन्त लागू किया जाने लगा है और बाद म सर्वोच्च सोवियत से उनका पुष्टिकरण कराया जाता है। कहने का तात्पय यह है कि सर्वोच्च सोवियत वास्तव म पाश्चात्य राज्यो के समान विधायिका नही है। फाइनर ने लिखा है कि प्रजातन्त्रो मे ससदो का एक महत्त्वपूण लाभ सदन म मन्त्रियो और विरोधी पक्ष के नेताओ के मतो की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति और उनका प्रकाशन है। परन्तु सोवियत सघ म सर्वोच्च सोवियत मे शायद ही कभी वाद विवाद होता है, कानून बिना वाद विवाद के ही बनाये जाते हैं, केवल कुछ कानून बनाये जाते है और उन्हे उचित रूप मे कभी भी प्रकाशित नही किया जाता।

जूलियन टाउस्टर के मतानुसार भी अभी तक सर्वोच्च सोवियत ने इस प्रकार काय किया है कि यह मुख्यत पुष्टिकरण व प्रचार करने वाला निकाय है। इसका मुख्य प्रयोजन, ऐसा प्रतीत होता है, समय समय पर जब आवश्यक हो, सरकारी नीति पर प्रतिनिधि सभा के रूप म अपनी स्वीकृति देना है।[1] हारपर और टॉमसन लिखते हैं कि सर्वोच्च सोवियत की दो विशेषतायें है—(1) प्रतिनिधि जो रिपोट पश करते हैं, उसम वास्तविक मननात्मक काय नही होता, (2) व्यवहार मे, सर्वोच्च सोवियत मे सभी प्रश्नो के पक्ष म मतदान सवसम्मति से होता है। यह इस तथ्य की अभिव्यक्ति है कि सम्पूण सोवियत विधि निर्माण दलीय नीति के अनुसार होता है। यद्यपि सोवियत पद्धति म ससदीय रूप पर बहुत बल दिया गया, फिर भी सोवियत पद्धति परिचित पाश्चात्य प्रजातन्त्रो से बहुत भिन्न है। फाइनर ने लिखा है 'प्रजातन्त्रात्मक पद्धतियो म विधायिका का कायपालिका पर प्रभुत्व होता है, सोवियत सघ म व्यवहार म सावैधानिक दृष्टि से भी प्रसीडियमो का सोवियतो पर प्रभुत्व है।' दूसरे शब्दो मे, देश पर दल और प्रशासन द्वारा शासन होता है, जब कि सोवियतें केवल 'हाँ' कहती है और विरोधी मत प्रकट करने वाला तथा अनुपस्थित रहने वाला कोई भी सदस्य नही होता है।

मनरो और सहयोगी लेखक का मत है कि सोवियत शासन बिना सर्वोच्च सोवियत के भी सुचारु रूप स चलाया जा सकता है। यदि ऐसा है तो सर्वोच्च सोवियत का अस्तित्व क्यो है? इसके कई कारण है—प्रथम, यह सोवियत नागरिको की साधारण सभा है जो सत्र क [illegible] अपने क्षेत्रो म शासन की सफलताओ और उनकी भावी योजनाओ के लिए जाता [illegible]।

---

[1] 'The Supreme Soviet has so far operated as a ratifying and propaga[illegible] body. Its chief purpose appears to be periodically or as occasion demands to lend the [illegible] of a representative assembly to government policy —Towster, J, [illegible] Power i[illegible] U S S R, p 263

[2] The trend towards greater formalism has been a substantial [illegible] changes that have occurred there still remains a world of [illegible] State System and its Western counterparts —Harper [illegible] the Soviet Union p 137

के विभागो व म त्रालयो के अतिरिक्त अनेक 'अर्द्ध-विधायी' अभिकरणा, बोर्डों व आयोगो को भी सौंपी जाने लगी है। इस विषय का विवेचन चौथे सँवदान म पहल ही किया चुका है। हाल के बीते वर्षों मे विधानमण्डलो की शक्ति और उत्तरदायित्व म प्रस्तावाधिकार और जन निणय के उदय से भी कमी आयी है। य दोना तरीके, विधायी प्रक्रिया म निर्वाचकमण्डल को भाग दिलाकर, इस आधुनिक प्रयत्न का प्रतिनिधित्व करते है कि प्रत्यक्ष प्रजात त्र के कुछ लाभा को फिर से प्राप्त किया जाय।

ससदात्मक राज्या मे, जहाँ पर द्वि दलीय पद्धति का विकास हुआ, जैसे युनाइटिड किंगडम मे वहाँ मुख्यत कठोर दलीय अनुशासन के फलस्वरूप कार्यपालिका (कबिनट) की स्थिति बहुत बलशाली हो गई है। इसी कारण कुछ लेखको न यह मत प्रकट किया है कि युनाइटिड किंगडम म केबिनेट की अधिनायकशाही स्थापित हाती जा रही है और पार्लियामट अब केवल उसके निणयो पर अपनी स्वीकृति की मोहर लगाने वाला निकाय रह गयी है। उससे यह निष्कष अवश्य ही निकलता है कि केबिनेट की शक्तियो म बहुत वृद्धि हुई है और अब वह पार्लियामट पर काफी मात्रा मे निय त्रण रखने लगी है, जबकि सिद्धा त म पार्लियामेंट सर्वोपरि है। जब तक भारत म कांग्रेस दल का सुदृढ बहुमत बना रहा, मन्त्रिमण्डल ने पार्लियामट क महत्त्व को अवश्य ही घटाये रखा, कि तु 1967 के बाद स स्थिति बदल गयी है। इसक विपरीत कई ससदात्मक पद्धति वाले राज्यो मे, जहाँ द्वि-दलीय पद्धति का विकास नही हो पाया, बहुदलाय पद्धति ने कायपालिका को क्षीण तथा अस्थिर बनाया। पर तु इसका परिणाम यह हुआ कि फ्रास क पाँचवें गणत त्र के सविधान म एसेम्बली (पार्लियामट) के शासन का अ त कर कायपालिका को अति सुदृढ और शक्तिशाली बनाया गया है। अब वहाँ पर पार्लियामेंट की शक्तियो व काय प्रणाली पर अनेक सीमाएँ व प्रति ब ध लग गये है। यहा पर यह कहना भी अनुचित न होगा कि विगत कुछ वर्षों म भारत मे काय पालिका क क्षीण हो जाने के कारण ही अ क विचारका व लेखको ने यह सुझाव दिया है कि ससदात्मक कायपालिका के स्थान पर अध्यक्षात्मक कायपालिका को अपनाया जाय।

यदि हम सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान का ध्यानपूवक अध्ययन करें और उसके प्रकाश मे आजकल कायपालिका और विधायिका की वतमान स्थिति का विश्लेषण करें, तो उनके बाद भी हम इस निष्कष पर पहुचेंगे कि वहाँ भी कायपालिका की शक्तिया म वृद्धि हुई है जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्रपति मुख्य कायपाल के साथ विधायक (chief legislator) भी बन गया है। इतना ही नही, वहाँ बजट पद्धति का विकास इस प्रकार हुआ है कि बजट-निर्माण पर कायपालिका अर्थात् राष्ट्रपति और बजट ब्यूरो (Bureau of the Budget) का निय त्रण स्थापित हो गया है। यहाँ यह उल्लेख करना भी अनुचित न होगा कि ससदात्मक पद्धति वाले राज्यो म बजट पर मन्त्रिमण्डल का निय त्रण स्थापित हो गया है। यद्यपि प्रजात त्रा म विधायिकाओ का विधि-निर्माण म महत्त्व कुछ कम हो गया है, फिर भी अन्य क्षेत्रा म उनकी सत्ता का सार कायम है। वे सविधान के सशोधन म के द्रीय भाग रखती है। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक दशाओ की छानबीन और उससे उत्पन्न होन वाले प्रश्नो पर निणय करने तथा विभिन्न प्रकार की समस्याओ के निराकरण हेतु हुए वाद विवाद म भी उनका भाग अति महत्त्वपूण है। अभी तक विधायिकाएँ विधायी कायवाही का के द्र हैं, यद्यपि उनकी आवाज पहले जसी निय त्रक नही रही है। आज भी विधायिका जनमत के मच का काम करती है तथा सरकार और शासितो क बीच अति महत्त्वपूण सम्पक स्थापित करने वाला साधन है। जनमत क लिए यह नेतृत्व की व्यवस्था करती है और ऐस सगठन की भी जिसके द्वारा जनमत का राजनीतिक महत्त्व बढ जाता है।

कार्ल जे० फ्रीड्रिच के मतानुसार आधुनिक सरकारा की बहुत आश्चयकारी विशेषता यह है कि कायपालिका के प्रति पुराने अविश्वास का स्थान उसके नेतृत्व म नया विश्वास है। इसका

अतिरिक्त चूंकि नामजद किये गये व्यक्तियों की संख्या उतनी ही होती है जितने कि प्रतिनिधि चुने जाते है, अत जिसकी नामजदगी हो जाती है वही चुना जाता है और चुनाव म कोई संघर्ष नही होता।

ऐसे ही यदि हम राष्ट्रीय जन कांग्रेस के कार्यों तथा उसके काय करने की प्रक्रिया पर ध्यान दे, तो यही निष्कर्ष निकलेगा कि चीन म प्रजातन्त्र कोरा दिखावा है। विभिन्न सत्रा मे प्रतिनिधियो ने सरकारी प्रतिवेदनो, नीतियो और संकल्पो आदि के विरुद्ध जिनके बारे म निणय चीनी साम्यवादी दल द्वारा कर लिये जाते हैं, न तो कुछ कहा और न मत ही दिया, सभी प्रतिनिधियो ने हाथ उठाकर उन्हे स्वीकार कर लिया। इसका अथ यह हुआ कि जनवादी प्रजातन्त्र एक साधन मात्र है जिसका प्रयोग चीनी साम्यवादी दल अपने अधिनायकत्व को बनाये रखने के लिए करता हैं। यह तथ्य कि 1957 के सत्र मे कुछ प्रतिनिधिया को दक्षिणपंथी कहा गया और उनके विरुद्ध कायवाही की गयी, यह सिद्ध करता है कि 'जन-प्रतिनिधि' सत्य रूप मे जनता का प्रतिनिधित्व नही करते और वे *किसी वास्तविक प्रतिष्ठा व शक्ति का भी उपभाग नही करते।* अन्त मे, राष्ट्रीय जन कांग्रेस की सदस्यता का बहुत बडा आकार, उसम साम्यवादी दल का प्राधान्य, राष्ट्रीय जन कांग्रेस की स्थायी समिति के बीच सामान्य दलीय आधार के कारण सामंजस्य राष्ट्रीय जन कांग्रेस के सत्रा का बहुत कम और अति अल्प समय के लिए होना आदि बाता ने राष्ट्रीय जन कांग्रेस को संविधान का केवल एक औपचारिक अंग बना दिया है और उसकी यथार्थ सत्ता का प्रयाग स्थायी समिति करती है।

6 विधानमण्डलो का पतन और उनके सुधार के लिए सुझाव

विधानमण्डलो का पतन—यदि विभिन्न राज्या के विधानमण्डलो की वतमान शताब्दी म स्थिति और काय प्रणाली का ध्यानपूवक सर्वेक्षण किया जाय तो यह बात स्पष्ट दिखाई पडेगी कि कई महत्त्वपूण बाता मे विधानमण्डला का पतन हुआ है[1], विशेष रूप से उनकी कायपालिका से सम्बन्धित शक्तिया के बारे म, यद्यपि इसके कुछ अपवाद भी मिलेंगे। इस काल मे राजनीतिक संस्थाओं के विकास की एक महत्त्वपूण विशेषता कायपालिका की शक्तिया मे बडी वद्धि रही है जिसके लिए कई बाते उत्तरदायी है—विश्व युद्धो का होना, आर्थिक संकटो का आना, समूहवादी अथवा समाजवादी या कल्याणकारी नीतियो का अंगीकार किया जाना, और अन्तर्राष्ट्रीय तनाव का लगातार बने रहना। आजकल सरकारें ऐसे अनेक काय करने लगी हैं, जो वे पहले नही किया करती थी, *वैसे तो विधानमण्डल भी आज अतीत की अपेक्षा अधिक विषयो के बारे मे और कही बनी* संख्या मे कानून बनाते है। एक प्रकार से उनकी शक्तियो का क्षेत्र भी विस्तृत हुआ है, परन्तु कायपालिका के सम्बन्ध म उनकी शक्तिया अवश्य ही कम हुई है।

एक क्षेत्र मे तो ऐसा लगता है कि कायपालिका ने विधानमण्डल के कार्यों का एक भाग अपने अधिकार मे ले लिया है। हमारा अभिप्राय प्रदत्त विधायन (delegated legislation) म हुई वृद्धि से है।[2] यद्यपि अधिकतर राज्यो मे सभी प्रकार के कानून बनाने की शक्ति विधानमण्डला म कायम है। किन्तु व्यवहार म यह सच है कि अधिकतर कानूना के अन्तगत कायपालिका नियमो और विनियमा के रूप म कानून अथवा उपविधियाँ बनाती हैं। इस प्रकार की शक्ति कायपालिका

[1] For a variety of reasons the weight of government in this century has shifted from the legislature to the executive and this development cannot fail to affect the image of parliament in the eyes of the public Even as a forum for the executive leadership s pronouncements on important issues parliament has declined —Carter and Herz *Government and Politics in the Twentieth Century* pp 140-41.

[2] Wheare K C *op cit* pp 221-22

करे तो यह निश्चित रूप स कहा जा सकता है कि उसम सुधार की आवश्यकता है। विशेष रूप से अग्रलिखित बातें एसी हैं, जि ह कम या अधिक मात्रा म ब्रिटेन (और अ य समान पद्धति वाल राज्यों म) अपनाया जा सकता है—काग्रेस के सदस्या को सूचना पान क लिए प्राप्त अधिक सुविधायें, सदन और समिति म सदस्या को अपना योग दन के लिए अधिक अवसर, समितियो क सदस्या के लिए विशेष ज्ञान पान के अवसर आदि। 1959 म नियुक्त एक प्रवर समिति न कॉमन सभा की कायप्रणाली को अधिक सुगम और शीघ्रगामी बनाने क लिए यह महत्त्वपूण सिफारिश की कि विस्तार की बाता स सम्ब धित काय को स्थायी समितियो को सौंपा जाय, जिसक कि साधारण वाद विवाद क लिए सदन को अधिक समय मिल सक।

कुछ लेखका का मत है कि विधेयक के तीन वाचन वाला नियम बहुत पुराना हो चुका है, उनम से एक वाचन म विधेयक के प्रत्यक खण्ड व उपखण्ड का पढ़ा जाना आवश्यक है। ऐस *नियम का होना उस समय आवश्यक था जबकि सदस्यो को विधेयक की छपी हुई प्रतियाँ नहीं* मिल पाती थी या कुछ सदस्य क-पढ़े होत थे, पर तु आजकल जबकि प्रत्यक सदस्य को विधेयक पर विचार आरम्भ होन से पूव ही उसकी छपी हुई प्रति उपलब्ध हो जाती है तो विधेयक के सदन मे पढ़े जाने पर व्यथ ही समय खोया जाता है। इसलिए उस प्रकार के नियम का ब्रिटिन कॉमन सभा, अमरीका के सघा तरित राज्यो और सघीय विधानमण्डल (काग्रेस) म पूणतया अ त कर दिया गया है। अनेक विधायिकाओ म मतदान की विधियाँ भी बहुत पुरानी हो गयी हैं और वे बहुत समय लेती हैं, विशेष रूप स नाम लेकर मत रेकाड करने की विधि (roll call vote)। सयुक्त राज्य अमरीका की कुछ विधायिकाओ न मतदान के लिए बिजली की मशीनें लगवा ली हैं, विधायक को अपन डस्क पर लगे बटन को दबाना होता है, जिसका परिणाम बिजली स चालित स्कोर बोड पर आ जाता है।

अविलम्ब कायवाही वाले विधेयको पर भी लम्बी देरी होन के कारण ग्रेट ब्रिटन, सयुक्त राज्य अमरीका आदि राज्या म विभिन्न प्रस्ताव सामन आये है, जिनके द्वारा विधायी सगठन व प्रक्रिया का आधुनिकीकरण किया जा सके। 1946 म सयुक्त राज्य अमरीका की काग्रेस द्वारा पारित विधायी पुनगठन अधिनियम उसी दिशा म एक प्रयत्न था। अभी तक ग्रेट ब्रिटेन म इस प्रकार का कोई कानून नही बना है यद्यपि इस प्रकार की आवश्यकता काफी अनुभव की गई है। विधानमण्डला की कायप्रणाली को सुचारु बनान के लिए प्रक्रिया बहुत सोच समझकर बनायी जानी चाहिए। वे ऐस हो कि सभी वर्गो व दला के प्रतिनिधियों को बोलन का समुचित अवसर मिले। कि तु उ ह भाषण की इतनी अधिक स्वत त्रता भी न हो कि व उपयोगी विधेयको के पास होने म भी अनुचित बाधा डालने और देरी करने के अवसर प्रदान करें। विधानमण्डल की काय प्रणाली के बारे के स्वस्थ चलना और अभिसमयो को भी प्रोत्साहन देना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, *अध्यक्ष अपना काय पूण निष्पक्षता के साथ करें और विरोधी पक्ष क नेता को उचित* महत्त्व प्रदान किया जाय। सक्षेप म, विधायी सगठन और प्रक्रिया ऐसी हो कि विधानमण्डल सकट व आपात्काल के दौरान शीघ्रता स निणय कर सके।

अ त म, विधानमण्डला की कायप्रणाली को सफल बनाने मे राजनीतिक दलो का महत्त्व पूण भाग रहता है। अतएव दलीय पद्धति स्वस्थ होनी अति आवश्यक है। बहुमत प्राप्त अर्थात् शासक दल को विरोधी दला के मता का उचित ध्यान रखना चाहिए और दल बदल जसी अनुचित *प्रथाओ का प्रयोग नही करना चाहिए। विरोधी दलो का भी आलोचना उत्तरदायित्व की भावना* और रचनात्मक दृष्टि से करनी चाहिए। साथ ही राजनीतिक दलो को हिंसापूण व आतकवादी कायवाहियो का किसी भी दशा मे सहारा नही लेना चाहिए।

कारण यह है कि विधायी प्रक्रिया मे दबाव और नेतृत्व का भाग बडा महत्त्वपूर्ण है। राज्य के कार्यों म व्यापक विस्तार ने सरकार के कायकारी अग का महत्त्व बहुत बढा दिया है। प्रधानमन्त्री अथवा राष्ट्रपति के हाथो मे शासन के नेतृत्व ने, जो कि दलीय पद्धति और पदा पर नियुक्ति के अधिकार (patronage) द्वारा अपने दल के सदस्या को नियन्त्रित करता है, विधायको को प्राप्त स्वायत्तता को छीन लिया है। आधुनिक राजनीति के ढग ने, जो कि बहुसख्यक विधायको को एक मशीन जैसे अनुशासन म रखता है कायपालिका की रचनात्मक शक्ति और विधायिका के समता पर आधारित मध्यम-वग के बीच बडा अन्तर स्थापित कर दिया है।[1]

प्रजातन्त्रात्मक विधानमण्डलो के सुधार हेतु सुझाव—उनकी रचना व काय प्रणाली मे मुख्य दोषा को दूर करने के लिए फाइनर द्वारा अग्रलिखित बाते प्रकाश मे लायी गई हैं—(1) श्रेणी-समाजवाद के सिद्धान्त, (2) निर्वाचन पद्धति के स्वरूप के ऊपर विचार, (3) प्रत्यक्ष विधि निर्माण की समस्या, और (4) अनिवाय मतदान की समस्या। श्रेणी समाजवाद दो विचार-धाराओ से उत्पन्न हुआ है—समाजवादी और प्रजातन्त्रवादी। इस सिद्धान्त का राजनीतिक तन्त्र प्रतिनिधिक शासन की कमियो के चारो ओर घूमता है। इस सिद्धान्त के प्रतिपादको का यह विश्वास है कि प्रतिनिधि शासन के सिद्धान्त म बडी भूल यह है कि इसके अनुसार एक व्यक्ति दूसरे का प्रतिनिधित्व कर सकता है। वास्तव म, साधारण प्रतिनिधित्व असम्भव है। अत भूमिगत प्रतिनिधित्व की पद्धति भी ठीक नही है। उनके मतानुसार भूमिगत के स्थान पर विभिन्न कार्यों का प्रतिनिधित्व (functional representation) होना चाहिए, परन्तु इस प्रकार के प्रतिनिधित्व का परिणाम विभिन्न हितो को प्रोत्साहन देना होगा और इस आधार पर बने विधानमण्डल मे विभिन्न हिता के ही प्रतिनिधि पहुचेगे, वे राष्ट्रीय एकता और हिता का उचित ध्यान न रख सकेगे। हमारे विचार म अधिक अच्छा यह है कि जहाँ दो सदन वाला विधानमण्डल हो वहा प्रथम (लोकप्रिय) सदन की रचना का प्रधान आधार भूमिगत निर्वाचन ही रहे, परन्तु दूसरे सदन मे जहा तक हो सके विभिन्न हितो को प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाय।

उपर्युक्त के सम्बन्ध म यह भी उल्लेखनीय है कि कुछ राज्य म विधानमण्डल के अतिरिक्त आर्थिक परिषदें (economic councils) स्थापित की गयी है। वैमर जमनी और फ्रास मे इस प्रकार की परिषदो की रचना की गयी। युगोस्लाविया के वतमान सविधान के अन्तगत सघीय *विधानमण्डल को ही पाँच सदन वाला बनाया गया है।* ये सदन राष्ट्र के *विभिन्न कार्यात्मक* समूहो का प्रतिनिधित्व करते हैं। यदि प्रजातान्त्रिक विधायिकाओ का अन्त नही होना है तो उनकी काय प्रणाली को ऐसा बनाया जाय कि विधि निर्माण और महत्त्वपूण निणय करने म अनुचित देरी न हो। इस उद्देश्य को ध्यान मे रखकर विधायी प्रक्रिया को सरल और कारगर बनाना बहुत आवश्यक है। व्राइट ने सत्य ही कहा है—'यदि विधि-निर्माण (प्रजातान्त्रिक विधायी प्रक्रिया) का अन्त नही होना है, तो यह उतना शीघ्रगामी और कुशल होना चाहिए जितना कि होना सम्भव हो—पार्लियामेंट की कायवाही के लिए, सरकार की इच्छा लागू कराने के साधन रूप म नही।'[2]

यदि हम ब्रिटिश पार्लियामेंट के विधायी तन्त्र की सयुक्त राज्य अमरीका के तन्त्र से तुलना

[1] The pattern of modern politics keeping the large body of legislators confined in adult mechanical discipline has established a surprising degree of contrast between the creative *force* of the leader (executive) and the equalitarian mediocrity of the *mass majority* (legis lature) —See Johari J C *Comparative Politics* p 130

[2] If there is to be no end to law making it should at least be as expeditious and efficient as possible—as the business of Parliament not as the means of enforcing the will of the Government —Wright, F I *Democratic Government* p 128

ब्रिटेन एक हुए तो आयरिश पीयरो की सख्या भी बहुत बडी थी। यूनियन की शर्तों के अनुसार यह व्यवस्था की गयी थी कि सभी पीयर मिलकर अपने 28 प्रतिनिधि लार्ड सभा के लिए चुनेंगे, परन्तु यह चुनाव जीवन भर के लिए होता है, अर्थात् जिस किसी को इस कार्य के लिए चुना जाता है वह जीवन पर्यन्त लार्ड सभा का सदस्य रहता है और जब किसी ऐसे पीयर की मृत्यु होती है, तभी उसके स्थान पर नये पीयर को चुन लिया जाता है। इस दृष्टि से यह व्यवस्था स्काटलण्ड की व्यवस्था से भिन्न है। 1921 में स्वतन्त्र आयरिश राज्य की स्थापना हुई। आयरलण्ड के पीयरो के लार्ड सभा में प्रतिनिधित्व में कोई परिवर्तन नहीं किया गया, किन्तु 1922 से इन पीयरो से रिक्त स्थानो को भरा नहीं गया है और ऐसा माना जाता है कि आगे ये स्थान रिक्त ही रहेंगे। इस प्रकार लार्ड सभा में आयरिश पीयरो के प्रतिनिधित्व का क्रमिक अन्त हो जायेगा, 1950 तक इनकी सख्या केवल सात रह गयी थी।

लार्ड सभा के कार्य और शक्तियाँ—1911 के पार्लियामेंट एक्ट से लार्ड सभा की शक्तियो में महत्त्वपूर्ण कमी हुई, यद्यपि लार्ड सभा के कृत्य अब भी पूर्व की भाँति कई प्रकार के हैं। पहले हम लार्ड सभा के कार्यों और शक्तियों का 1911 के पूर्व की स्थिति के अनुसार विवेचन करेंगे और उसके बाद उन परिस्थितियो का जिसके परिणामस्वरूप 1911 का एक्ट बना, साथ ही उसके प्राविधानो का भी सक्षिप्त वर्णन करेंगे। 1911 के एक्ट से पूर्व लार्ड सभा की शक्तियाँ दूसरे सदन के बराबर मानी जाती थी, क्योंकि कोई भी विधेयक दोनो सदनो में पास हुए बिना अधिनियम नहीं बन सकता था। लार्ड सभा किसी भी विधेयक में सशोधन कर सकती थी तथा विधेयक को अस्वीकृत भी कर सकती थी। इस शक्ति का प्रयोग गत शताब्दियों में 1831 के प्रथम सुधार विधेयक और 1893 के दूसरे आयरिश होम रूल विधेयक को स्वीकार करके किया गया था। यद्यपि लार्ड सभा को तकनीकी दृष्टि से धन विधेयक को भी अस्वीकृत करने की शक्ति प्राप्त थी, किन्तु यह शक्ति बहुत समय से प्रयुक्त न होने के कारण लुप्त हो चुकी थी, किन्तु लार्ड सभा के सदस्य इस शक्ति के लोप को स्वीकार नहीं करते थे।

न्यायिक क्षेत्र में लार्ड सभा को दो विशेष शक्तियाँ प्राप्त हैं। प्रथम, यह कुछ प्रकार की दीवानी व फौजदारी अपीलें सुनने के लिए सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय है, परन्तु यह कार्य सदन के बहुत ही थोड़े सदस्यो अर्थात् कानूनी लार्डों द्वारा किया जाता है। दूसरे इसे कॉमन सभा द्वारा लाये गये महाभियोग के मामलो की सुनवाई और उसके निर्णय करने की शक्ति प्राप्त है। लार्ड सभा का यह प्राचीन और महत्त्वपूर्ण परमाधिकार रहा है। मन्त्रियो के उत्तरदायित्व के सिद्धान्त के विकास से पूर्व इस कार्य का बड़ा महत्त्व था, क्योंकि यही एक साधन था जिसके द्वारा राजा के परामर्शदाताओ को उत्तरदायी ठहराया जा सकता था।

राजनीतिक क्षेत्र में लार्ड सभा की शक्ति कॉमन सभा के समान तो न थी अर्थात् मन्त्रि मण्डल केवल कॉमन सभा के प्रति ही उत्तरदायी माना जाता था, किन्तु यदि किसी विधेयक पर दोनो सदनो के बीच मतभेद होता था तो उसे दूर करने के लिए ये तीन उपाय थे—(1) दोनो सदनो की सयुक्त समिति नियुक्त की जा सकती थी जो विधेयक के ऊपर समझौते का मार्ग निकाल सकती थी, (2) कॉमन सभा का विघटन करके उस प्रश्न पर निर्वाचक मण्डल के निर्णय को प्राप्त किया जा सकता था, और (3) यदि लार्ड सभा इस निर्णय को भी मानने को तैयार न होती तो राजा प्रधानमन्त्री के परामर्श पर लार्ड सभा को सूचित कर सकता था कि यदि उन्होंने कॉमन सभा द्वारा पारित विधेयक को स्वीकार न किया तो वह नये पीयर बनायेगा जिससे कि लार्ड सभा में विधेयक का समर्थन बहुमत द्वारा किया जा सके। कभी कभी तो इस प्रकार की धमकी से काम चल जाता था। गतिरोध उत्पन्न होने के खतरे से बचने के लिए लार्ड सभा की शक्तियो पर बहुत से औपचारिक व अनौपचारिक प्रतिबन्धो का विकास हुआ था। प्रथम, यह

दसवा अध्याय

सांसद पद्धति वाले राज्यो मे विधायिकाएँ

1 ब्रिटेन मे पार्लियामेन्ट

(1) लाड सभा—ब्रिटिश पार्लियामट के दो सदन हैं, ऊपर वाला सदन 'लाड सभा' है और निचला अर्थात् लोकप्रिय सदन 'कॉमन सभा' है। अब से लगभग 125 वर्ष पूर्व तक 'कॉमन सभा' का महत्त्व लाड सभा की अपेक्षाकृत कम था, किन्तु आज लाड सभा केवल द्वितीय सदन ही नही है, वरन् इसका महत्त्व भी दूसरे स्थान पर है। मजदूर दल की नीति तो बहुत समय तक इसका अत करने की ही रही और यदि ब्रिटेन मे नई सांविधानिक पद्धति का निर्माण किया जाये तो वर्तमान लाड सभा का उसमे कोई स्थान न होगा। वास्तव म, लाड सभा एक ऐतिहासिक सस्था है, जिसे ससार का सबसे पुराना विधि निर्माण करने वाला निकाय कहा गया है।

लाड सभा की रचना—इसम छ श्रेणिया के सदस्य सम्मिलित है—(1) राजवश के युवराज, (2) पैतृक पीयर, (3) स्काटलैण्ड के प्रतिनिधि पीयर, (4) आयरलैण्ड के प्रतिनिधि पीयर, (5) अपील के लाड अथवा कानूनी लाड, और (6) आध्यात्मिक लाड। प्रथम श्रेणी मे ही राज परिवार के व पुरुष सदस्य आते हैं जो वयस्क हो और जिनका राज परिवार स बहुत ही निकट का सम्ब ध होता है। किसी भी पार्लियामेट मे इनकी सख्या दो तीन से अधिक नही रही है और सदन की बठको मे इनकी उपस्थिति 'नही' के समान रहती है तथा वे इसकी कायवाही मे कोई सक्रिय भाग नही लेते। लाड सभा के सदस्यो मे पैतृक पीयरो का समूह सबसे बडा है। वास्तव म इनकी सख्या कुल सदस्यो की सख्या का लगभग 9/10 भाग है। पीयर का सबसे बडा पुत्र और पुत्र न होन पर पुत्री पीयर की उपाधि पाती है और उत्तराधिकारी को यह उपाधि लेनी होती है। यह तो सम्भव है कि जब किसी नये व्यक्ति को पीयर की उपाधि दी जाय वह उसे अस्वीकार कर दे, किन्तु जिस व्यक्ति को पैतृक आधार पर यह उपाधि प्राप्त होती है उसे यह धारण करनी पडती है। इस उपाधि के धारण करने वाले को कुछ विशेषाधिकार (privileges) प्राप्त होते है—कोई एक उपाधि और लाड सभा मे स्थान। पैतृक पीयरो म पाँच प्रकार के उपाधिधारी सम्मिलित हैं—ड्यूक मारक्विस, अल, वाईकाउ ट और बरन।

सभी पीयर लाड सभा के सदस्य नही होते है। इसके विपरीत कुछ ऐसे व्यक्तियो को भी लाड सभा की सदस्यता प्रदान की जाती है जो पीयर नही होते। 1707 म इग्लण्ड और स्कॉटलैण्ड की यूनियन स पूर्व सभी अग्रेज पीयर लाड सभा के सदस्य होते थे और सभी स्काटिश पीयर वहाँ के उच्च सदन के सदस्य होते थे। यूनियन की शर्तों के अनुसार इग्लैण्ड के सभी पीयरो के लिए लाड सभा की सदस्यता जारी रही, किन्तु स्काटलैण्ड के पीयरो को प्रत्यक पार्लियामेंट मे भाग लेने के लिए सोलह पीयरो का निर्वाचन करने का अधिकार मिला। स्कॉटलण्ड के पीयरो की इस समय सख्या 50 से कम है। इसी प्रकार जब 1800 म आयरलैण्ड और ग्रेट

ब्रिटेन एक हुए तो आयरिश पीयरो की सख्या भी बहुत बडी थी । यूनियन की शर्तों के अनुसार यह व्यवस्था की गयी थी कि सभी पीयर मिलकर अपने 28 प्रतिनिधि लाड सभा के लिए चुनेंगे, परन्तु यह चुनाव जीवन भर के लिए होता है, अर्थात् जिस किसी को इस काय के लिए चुना जाता है वह जीवन पयन्त लाड सभा का सदस्य रहता है और जब किसी ऐसे पीयर की मृत्यु होती है तभी उसके स्थान पर नये पीयर को चुन लिया जाता है । इस दृष्टि से यह व्यवस्था स्काटलण्ड की व्यवस्था से भिन्न है । 1921 म स्वतन्त्र आयरिश राज्य की स्थापना हुई । आयरलण्ड के पीयरो के लाड सभा म प्रतिनिधित्व म कोई परिवतन नही किया गया, किन्तु 1922 से इन पीयरो से रिक्त स्थानो को भरा नहीं गया है और ऐसा माना जाता है कि आगे ये स्थान रिक्त ही रहेंगे । इस प्रकार लाड सभा म आयरिश पीयरो के प्रतिनिधित्व का क्रमिक अन्त हो जायगा, 1950 तक इनकी सख्या केवल सात रह गयी थी ।

लाड सभा के काय और शक्तियाँ—1911 के पालियामट एक्ट से लाड सभा की शक्तियो म महत्त्वपूर्ण कमी हुई, यद्यपि लाड सभा के कृत्य अब भी पूव की भाँति कई प्रकार के है । पहले हम लाड सभा के कार्यों और शक्तियो का 1911 के पूव की स्थिति के अनुसार विवेचन करेंगे और उसके बाद उन परिस्थितियो का जिसके परिणामस्वरूप 1911 का एक्ट बना साथ ही उसके प्राविधानो का भी सक्षिप्त वणन करेंगे । 1911 के एक्ट से पूव लाड सभा की शक्तियाँ दूसरे सदन के बराबर मानी जाती थी, क्योकि कोई भी विधेयक दोनो सदनो म पास हुए बिना अधिनियम नही बन सकता था । लाड सभा किसी भी विधेयक म सशोधन कर सकती थी तथा विधेयक को अस्वीकृत भी कर सकती थी । इस शक्ति का प्रयोग गत शताब्दियो म 1831 के प्रथम सुधार विधेयक और 1893 के दूसरे आयरिश होम रूल विधेयक को स्वीकार करके किया गया था । यद्यपि लाड सभा को तकनीकी दृष्टि से धन विधेयक को भी अस्वीकृत करने की शक्ति प्राप्त थी, किन्तु यह शक्ति बहुत समय से प्रयुक्त न होने के कारण लुप्त हो चुकी थी, किन्तु लाड सभा के सदस्य इस शक्ति के लोप को स्वीकार नही करते थे ।

न्यायिक क्षेत्र म लाड सभा को दो विशेष शक्तियाँ प्राप्त हैं । प्रथम यह कुछ प्रकार की दीवानी व फौजदारी अपीलें सुनने के लिए सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय है, परन्तु यह कार्य सदन के बहुत ही थोड़े सदस्यो अर्थात् कानूनी लार्डों द्वारा किया जाता है । दूसरे, इसे कामन सभा द्वारा लाये गये महाभियोग के मामलो की सुनवाई और उसके निणय करने की शक्ति प्राप्त है । लाड सभा का यह प्राचीन और महत्त्वपूर्ण परमाधिकार रहा है । मन्त्रियो के उत्तरदायित्व के सिद्धान्त के विकास से पूव इस काय का बडा महत्त्व था, क्योकि यही एक साधन था जिसके द्वारा राजा के परामशदाताओ को उत्तरदायी ठहराया जा सकता था ।

राजनीतिक क्षेत्र मे लाड सभा की शक्ति कॉमन सभा के समान तो न थी अर्थात् मन्त्रिमण्डल केवल कॉमन सभा के प्रति ही उत्तरदायी माना जाता था, किन्तु यदि किसी विधेयक पर दोनो सदनो के बीच मतभेद होता था तो उसे दूर करने के लिए ये तीन उपाय थे—(1) दोनो सदनो की सयुक्त समिति नियुक्त की जा सकती थी जो विधेयक के ऊपर समझौते का माग निकाल सकती थी, (2) कामन सभा का विघटन करके उस प्रश्न पर निर्वाचक मण्डल के निणय को प्राप्त किया जा सकता था, और (3) यदि लाड सभा इस निणय को भी मानने को तयार न होती तो राजा प्रधानमन्त्री के परामर्श पर लाड सभा को सूचित कर सकता था कि यदि उन्होने कॉमन सभा द्वारा पारित विधेयक को स्वीकार न किया तो वह नये पीयर बनायेगा जिससे कि लाड सभा म विधेयक का समथन बहुमत द्वारा किया जा सके । कभी कभी तो इस प्रकार की धमकी से काम चल जाता था । गतिरोध उत्पन्न होने के खतरे से बचने के लिए लाड सभा की शक्तियो पर बहुत से औपचारिक व अनौपचारिक प्रतिबन्धो का विकास हुआ था । प्रथम, यह

समझा जाता था कि यदि किसी प्रश्न पर लाड सभा मे मंत्रिमण्डल की पराजय भी हो जाय तो त्याग-पत्र देना आवश्यक न था। दूसरे, बहुत समय से यह भी समझा जाता था कि लाड सभा किसी भी वित्तीय विधेयक को कॉमन सभा की इच्छा के विरुद्ध सशोधित अथवा अस्वीकृत न कर सकती थी।

1911 मे दोना सदनो के बीच लॉयड जाज के बजट पर तीव्र मतभेद पैदा हुआ, जिसके परिणामस्वरूप 1911 का पालियामेट एक्ट बना। उस वप के वित्तीय विधेयक अर्थात् बजट म तत्कालीन वित्त म त्री लायड जाज ने कुछ नये करो के प्रस्ताव रखे थे, उनम कुछ कर भूमि पर थे। चूकि इन करो का बड़े भूमिपतियो पर बुरा प्रभाव पडने को था, अतएव लाड सभा न उस विधेयक को अन्य विधेयको की भाँति ही अस्वीकृत कर दिया। कॉमन सभा ने लाड सभा के इस कार्य पर नाराजगी प्रकट करने के हेतु एक प्रस्ताव मे लाड सभा के काय को सविधान का उल्लघन और कॉमन सभा के विशेषाधिकार पर आघात बताया। इस पर भी लाड सभा ने अपना रुख नही बदला, फलत प्रधानमन्त्री ने नये चुनाव कराने का निणय किया। तदनुसार चुनाव हुये और चुनाव अभियान म यह एक महत्त्वपूण प्रश्न रहा कि लाड सभा की शक्तिया कम की जायें। उदार दल, जिसका मन्त्रिमण्डल था, चुनावो म विजयी हुआ और मन्त्रिमण्डल ने वित्त विधेयक को फिर से कामन सभा म पास कराकर दूसरी बार ऊपर वाले सदन म भेजा। इस बार उच्च सदन ने जनता के निणय को स्वीकार किया और वित्त विधेयक पर अपनी सहमति प्रदान की। परन्तु उदार दल ने फिर भी निश्चय किया कि दोना सदनो के पारस्परिक सम्बन्धो को इस प्रकार स्पष्ट किया जाये कि फिर ऐसा अवसर न आये।

1911 का पालियामेट एक्ट—उपयुक्त उद्देश्य की पूर्ति के हेतु मंत्रिमण्डल ने एक विधेयक कॉमन सभा म पास कराया। इस विधेयक मे लाड सभा की शक्तियो पर महत्त्वपूण सीमाएँ लगाने क प्रस्ताव थे। मन्त्रिमण्डल ने लाड सभा को यह धमकी दी कि उस प्रश्न पर फिर से चुनाव कराये जायेंगे यदि लाड सभा ने विधेयक को स्वीकार न किया। लाड सभा ने धमकी की परवाह न की और फिर से चुनाव हुआ। इस बार भी जनता ने कॉमन सभा के निणय अर्थात् मंत्रिमण्डल की नीति का समथन किया। इस बार भी लाड सभा विरोध करने पर अडी थी, परन्तु सदन की इस धमकी से कॉमन सभा की बात स्वीकार करनी पडी कि यदि लाड सभा न मानी तो विधयक का पास कराने के लिए आवश्यक सख्या मे नये पीयर बनाने पडेंगे। अन्त म लाड सभा ने कॉमन सभा द्वारा पारित विधयक को पास कर दिया। इसके मुख्य प्राविधान ये है (1) कामन सभा द्वारा पारित धन विधेयक कॉमन सभा म पास होने की तारीख से एक माह के बाद कानून बन जायेंगे, चाहे लाड सभा उन्हे स्वीकार न करे। (2) इसम धन विधेयक की परिभाषा दी गयी है और यह भी व्यवस्था है कि जब कभी इस बात पर मतभेद उठे कि कोई विधेयक इस परिभाषा के अनुसार धन विधेयक है या नही तो कॉमन सभा का अध्यक्ष इस प्रश्न पर अंतिम निणय देगा। (3) कोई भी अन्य सावजनिक विधेयक, जिसे कॉमन सभा ने एक के बाद दूसरे और तीसरे, तीन लगातार सत्रो म इस प्रकार से पास किया हो कि इसके प्रथम और तीसरी बार पास किये जाने के बीच म दो वप की अवधि बीत चुकी हो तो वह ताज की अनुमति मिल जाने पर कानून बन जायेगा, चाहे लाड सभा ने इसे स्वीकार न किया हो। आगे से पालियामेट की अवधि अधिक से अधिक पांच वप होगी, परन्तु पालियामेट, यदि दोनो ही सदन सहमत हो और उस पर शाही अनुमति भी मिल जाए तो आपात्काल म अपने अस्तित्व को आगे बढा सकती है। दोनो ही विश्व-युद्धो के दौरान ऐसा हुआ, क्योकि ऐसे आपात्काल म चुनाव नही कराये जा सकते थे।

1949 का कानून*—*1947 म लाड सभा की शक्तियो को और अधिक प्रतिबंधित करने

के लिए एक विधेयक कामन सभा म पश किया गया, जिस लाड सभा न स्वीकार न किया। अतएव वह विधेयक दो वष बीतने पर 1949 म कानून बना। इस कानून क अन्तगत कोई विधेयक कानून बन जायगा, चाह लाड सभा उसका विरोध कर, यदि कॉमन सभा उस विधयक को लगातार दो सत्रो (1911 के एक्ट म दिय गय प्राविधान क अनुसार तीन के स्थान पर दो) म पास कर दे तथा पहली बार पास हुए वाचन की तारीख और दूसरी बार पास किय जान की तारीख क बीच दो के स्थान पर एक वष का समय बीत जाय। वर्णित कानूनों क निर्माण स लाड सभा की वास्तविक शक्तिया का अन्त हो गया है। यह विचार कि दोना सदनो की शक्तियाँ बराबर हैं, एक कल्पना मात्र है। लाड सभा अब भी द्वितीय सदन है, कि तु शक्तिया की दृष्टि से भी इसका स्थान दूसरा अथवा गौण (secondary) है। अब भी लाड सभा कुछ उपयोगी काय करती है, कि तु अब यह अपने पुराने रूप की (जब इसे वास्तविक शक्तियाँ प्राप्त थी) छाया मात्र है।

लाड सभा के वतमान कार्यों का सक्षिप्त वणन इस प्रकार है—*प्रथम*, यह अभी तक उच्चतम अपीलीय यायालय है, परन्तु अपीला की सुनवाई के अतिरिक्त अब महाभियोग की सुनवाई की प्रथा का प्राय अन्त ही हो गया है। दूसरे, इनके मननात्मक और आलोचनात्मक काय महत्त्वपूण हैं। (अ) इसकी *प्राइवट बिल समितियाँ, कॉमन सभा का इस प्रकार के विधेयको क* ऊपर विचार किये जाने म जो समय व्यय होता है उस बचाने और तदनुसार कामन सभा का काय भार हल्का करने म बडा योग देती हैं। (आ) लाड सभा अस्थायी आदेशा सम्बन्धी विधेयको तथा विशेष आदेशो के ऊपर विचार करके भी कॉमन सभा की सहायता करती है। (इ) लाड सभा मे ऐस विधेयको को आरम्भ किया जाता है, जिन पर कोई विशेष मतभेद अथवा प्रवाद नही होता। ऐस विधेयको पर लाड सभा म विचार और वाद विवाद हो जाने पर कॉमन सभा को उन पर बहुत कम समय लगाना पडता है।

1958 का कानून—1949 का पार्लियामेंट अधिनियम तो एक प्रकार से नकारात्मक अधिक था और सुधार करने वाला कम। एक अधिक सकारात्मक पग 1957 म उठाया गया जब कि पीयरो को उपस्थित होने के लिए भत्ता दिया जाना आरम्भ हुआ, जिससे कि ऐस पीयर भी उपस्थित हो सकें जिनक अपने साधन नही है। अगले ही वष सदन के स्थायी नियमो मे यह व्यवस्था की गई कि जो सदस्य उपस्थित न होना चाहे उन्ह सम्पूण या आशिक सत्र के लिए अनुपस्थित रहने की आज्ञा दे दी जाय। परन्तु 1911 के कानून क प्राक्कथन को कार्यान्वित करने की दिशा म प्रथम पग 1958 के पीयरेज कानून द्वारा उठाया गया, जिसने पुरुषा और स्त्रिया को आजीवन पीयर बनाने के लिए व्यवस्था की (यह काय प्रधानमन्त्री की सिफारिश पर किया जाता है, किन्तु वह इस बारे म विरोधी पक्ष के नेता स म त्रणा करता है)। 1964 तक 58 *आजीवन पीयर बनाय जा चुके थे। 1963 के पीयरेज कानून ने अपने अधिकार से बनने वाले* पीयरो को यह अधिकार प्रदान किया कि वे चाहे तो अपन अधिकार को जीवन भर के लिए त्याग सकते है और कॉमन सभा की सदस्यता के लिए खडे हो सकते है।

लाड सदन की कायप्रणाली म भी कई दोष हैं। इसमे सदस्या की सख्या इतनी अधिक है कि यदि उनम से अधिकतर इसकी कायवाही म भाग लेने लगें तो इसका काय सचालन सुगम न रहे। कि तु इतनी बडी सख्या होते हुए भी व्यवहार म अधिकतर सदस्य इसकी बठको मे अनुपस्थित रहते है। लाड सभा मे लगभग 730 सदस्य हैं जिनमे से औसतन 650 प्रतिदिन अनुपस्थित रहते है। उपस्थित होने वाले सदस्यो म से बहुत ही कम वाद विवाद म भाग लेते है। वास्तव म अब स्थिति यह है कि इसकी कायवाही म सक्रिय भाग लेने वाले या तो वतमान अथवा पुराने म त्री होते है या वे सदस्य जो अपने आर्थिक हितो का सरक्षण करन म विशेष दिलचस्पी रखते हैं।

समझा जाता था कि यदि किसी प्रश्न पर लाड सभा म मन्त्रिमण्डल की पराजय भी हो जाये तो त्याग-पत्र देना आवश्यक न था। दूसरे, बहुत समय स यह भी समझा जाता था कि लाड सभा किसी भी वित्तीय विधेयक को कॉमन सभा की इच्छा के विरुद्ध सशोधित अथवा अस्वीकृत न कर सकती थी।

1911 म दोना सदना के बीच लॉयड जाज के बजट पर तीव्र मतभेद पैदा हुआ, जिसके परिणामस्वरूप 1911 का पालियामट एक्ट बना। उस वप के वित्तीय विधयक अर्थात् बजट म तत्कालीन वित्त मन्त्री लॉयड जाज ने कुछ नये करो के प्रस्ताव रखे थे, उनम कुछ कर भूमि पर थे। चूंकि इन करो का बडे भूमिपतियो पर बुरा प्रभाव पडने को था, अतएव लाड सभा ने उस विधेयक को अन्य विधेयका की भाति ही अस्वीकृत कर दिया। कामन सभा ने लाड सभा के इस कार्य पर नाराजगी प्रकट करन के हेतु एक प्रस्ताव म लाड सभा क काय को सविधान का उल्लघन और कॉमन सभा के विशेषाधिकार पर आघात बताया। इस पर भी लाड सभा ने अपना रुख नही बदला, फलत प्रधानमन्त्री ने नये चुनाव कराने का निणय किया। तदनुसार चुनाव हुय और चुनाव अभियान मे यह एक महत्त्वपूण प्रश्न रहा कि लाड सभा की शक्तिया कम की जायें। उदार दल, जिसका मन्त्रिमण्डल था, चुनावो म विजयी हुआ और मन्त्रिमण्डल न वित्त विधेयक को फिर स कॉमन सभा म पास कराकर दूसरी बार ऊपर वाल सदन म भेजा। इस बार उच्च सदन ने जनता के निणय को स्वीकार किया और वित्त विधयक पर अपनी सहमति प्रदान की। परन्तु उदार दल ने फिर भी निश्चय किया कि दोनो सदना क पारस्परिक सम्बन्धो को इस प्रकार स्पष्ट किया जाये कि फिर ऐसा अवसर न आये।

1911 का पालियामेट एक्ट—उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति के हेतु मन्त्रिमण्डल ने एक विधेयक कॉमन सभा म पास कराया। इस विधेयक म लाड सभा की शक्तिया पर महत्त्वपूण सीमाएँ लगान क प्रस्ताव थे। मन्त्रिमण्डल ने लाड सभा को यह धमकी दी कि उस प्रश्न पर फिर से चुनाव कराये जायेंगे यदि लाड सभा ने विधेयक को स्वीकार न किया। लाड सभा ने धमकी की परवाह न की और फिर से चुनाव हुआ। इस बार भी जनता न कॉमन सभा क निणय अर्थात् मन्त्रिमण्डल की नीति का समथन किया। इस बार भी लाड सभा विरोध करन पर अडी थी, परन्तु सदन को इस धमकी से कॉमन सभा की बात स्वीकार करनी पडी कि यदि लाड सभा न मानी तो विधेयक को पास कराने के लिए आवश्यक सख्या म नय पीयर बनाने पडेगे। अन्त म लाड सभा ने कॉमन सभा द्वारा पारित विधेयक का पास कर दिया। इसके मुख्य प्राविधान य है (1) कॉमन सभा द्वारा पारित धन विधेयक कॉमन सभा मे पास होन की तारीख से एक माह के बाद कानून बन जायेगे, चाहे लाड सभा उन्हे स्वीकार न कर। (2) इसम धन विधेयक की परिभाषा दी गयी है और यह भी व्यवस्था है कि जब कभी इस बात पर मतभेद उठे कि कोई विधेयक इस परिभाषा के अनुसार धन विधेयक है या नही तो कामन सभा का अध्यक्ष इस प्रश्न पर अन्तिम निणय देगा। (3) कोई भी अन्य सावजनिक विधेयक, जिसे कामन सभा न एक के बाद दूसरे और तीसरे, तीन लगातार सत्रो म इस प्रकार से पास किया हो कि इसके प्रथम और तीसरी बार पास किये जाने के बीच म दो वप की अवधि बीत चुकी हो तो वह ताज की अनुमति मिल जाने पर कानून बन जायेगा, चाहे लाड सभा न इसे स्वीकार न किया हो। आगे से पालियामेट की अवधि अधिक से अधिक पाँच वप होगी, परन्तु पालियामट, यदि दोना ही सदन सहमत हो और उस पर शाही अनुमति भी मिल जाए तो आपात्काल म अपन अस्तित्व को आगे बढा सकती है। दोनो ही विश्व-युद्धो के दौरान ऐसा हुआ क्योकि ऐसे आपात्काल म चुनाव नही कराये जा सकते थे।

1949 का कानून—1947 म लाड सभा की शक्तिया का और अधिक प्रतिबन्धित करने

विभिन्न समूहो द्वारा निर्वाचन विधि का जोरदार समर्थन किया, किन्तु इसम भी कई दोष स्वीकार किये गये।

सम्मेलन द्वारा प्रस्तावित योजना म बाद की दो विधियो का मिश्रण था—पहले, आयरिश पीयरो के प्रतिनिधियो को छोडकर, सदन की सदस्यता आधे से कम की जानी थी, जो 327 रखी गयी थी। इनम से लगभग 3/4 अर्थात् 246 का गुप्त मतदान द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार कॉमन सभा के सदस्यो द्वारा चुनाव होता, जिन्हे तरह प्रादेशिक समूहो म बाँटा जाता। इन सदस्यो मे से 1/3 से अधिक सदस्यो का चुनाव एक ही कॉमन सभा द्वारा न होना और लार्ड सभा के सदस्यो के लिए कोई विशेष अर्हताय न रहती। दूसरे, शेष 81 सदस्यो को पार्लियामेट की सयुक्त स्थायी समिति द्वारा पीयरो म से छाँटा जाता। तीसरे, शक्तियो के विषय म सम्मेलन की सिफारिश यह थी—दूसरे सदन की शक्तियाँ कॉमन सभा के बराबर न होती, न ही वह कॉमन सभा का प्रतिद्वन्द्वी बन सकता था और विशेषकर इस मन्त्रिमण्डल के बनाने व बिगाडने तथा धन विधेयको पर मतदान की शक्तियाँ प्राप्त न होती। 1922 म लॉयड जार्ज की सरकार ने लार्ड सभा म पाँच प्रस्ताव रखे, जिनमे उपयुक्त योजना की कई बातें सम्मिलित थीं। इन प्रस्तावो मे अग्रलिखित बातें दी गयी थी—(1) लार्ड सभा के लगभग 350 सदस्य हो, (2) राज घराने के पीयरो, आध्यात्मिक लार्डो और कानूनी लार्डो को पदेन सदस्य (ex officio) रूप म जारी रखा जाये, (3) कुछ सदस्यो का चुनाव हो और कुछ को कानून द्वारा निर्धारित अवधि के लिए नियुक्त किया जाये, (4) कोई विधेयक धन विधेयक है या नही इसका निर्णय करने की शक्ति कॉमन सभा के अध्यक्ष से लेकर दोनो सदनो की एक सयुक्त स्थायी समिति को सौंपी जाये, और (5) ऐसे सभी विधेयको को जिनका उद्देश्य लार्ड सभा की रचना व शक्तियो म परिवर्तन करना हो, पार्लियामेट एक्ट के प्राविधानो से अलग रखा जाये जिनके अनुसार कोई भी विधेयक पार्लियामेट की अवधि मे ही दूसरे सदन की सहमति के बिना पास कराया जा सकता है।

1924 मे बाल्डविन मन्त्रिमण्डल ने लार्ड सभा के सुधार का निश्चय किया, किन्तु कुछ ही दिन बाद मजदूर दलीय मन्त्रिमण्डल सत्तारूढ हुआ, जिसने इस कठिन समस्या को सुलझाने का प्रयास नही किया। 1931 म मैकडोनल्ड के नेतृत्व म बने राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डल के सामने अन्य महत्त्वपूर्ण प्रश्न रहे और उसके बाद बने कई मन्त्रिमण्डलो ने भी इस प्रश्न को नही उठाया। दूसरे विश्व युद्ध के उपरान्त मेजर एटली के नेतृत्व म मजदूर दल की सरकार बनी, जिसने राष्ट्रीयकरण और सामाजिक कल्याण सम्बन्धी बहुत से विधेयको को पास कराने का कार्यक्रम अपनाया। इन वर्षों म यह भय बना रहा कि सत्तारूढ दल और लार्ड सभा म सघर्ष होगा, किन्तु लार्ड सभा ने आम चुनाव के निर्णय को ध्यान म रखकर सरकार के प्रस्तावो मे अधिक रुकावटें नही डाली। कुछ विधेयको मे लार्ड सभा ने ऐसे सशोधन किये जिन्हे मन्त्रिमण्डल ने देरी से बचने के उद्देश्य से स्वीकार कर लिया। फलत दोनो सदनो के बीच कोई गम्भीर मतभेद न उठा, फिर भी 1947 म सत्तारूढ दल ने यह घोषणा की कि लार्ड सभा के देरी करने के अधिकार की अवधि घटा दी जाये। यह प्रस्ताव कॉमन सभा में दूसरे वाचन के चरण को पार कर चुका था। इसी बीच म लार्ड सलिसबरी की अध्यक्षता मे अनुदार दल ने भी लार्ड सभा के सुधार हेतु एक समिति नियुक्त की। इस समस्या के ऊपर विचार करने के लिए तीनो दलो के नेताओ का सम्मेलन हुआ, उसमे लार्ड सभा की रचना के प्रश्न पर काफी सहमति रही, किन्तु शक्तियो के बारे म वह किसी निर्णय पर न पहुँच सका। सम्मेलन ने अग्रलिखित सिद्धान्तो का प्रस्ताव रखा—(1) दूसरा सदन कॉमन सभा का प्रतिद्वन्द्वी न होकर उसका पूरक रहे, (2) सशोधित सविधान मे यह व्यवस्था की जाय कि लार्ड सभा मे किसी एक दल का स्थायी बहुमत न रहे, (3) आनुवंशिक आधार पर आधारित सदन म उपस्थित होने और मत देने के अधिकार को सदस्यता के लिए योग्य न समझा जाये,

लाड सभा की आलोचना बहुत समय पूव से हुई है। गत शताब्दी के पूर्वाद्ध मे 1832 के सुधार कानून के पूव ही जान स्टुअट मिल ने लाड सभा को एक परेशान करने वाला कण्टक बताया। इसम कोई स देह की बात नही कि उसने उस समय के उदारवादियो के मत को अभि व्यक्त किया। लाड सभा की दूसरी सदन के रूप मे आवश्यकता को कुछ लेखक स्वीकार नही करत। इस विषय म ग्रीव्ज ने लिखा है कि इसके उत्तर म तीन बाते कही जा सकती है—पहली, अब व्यवहार मे कामन सभा स्वय विधि निर्माण काय के लिए एक दूसरा सदन है, केबिनेट और प्रशासन पहला सदन है, जो कि विधेयको को प्राय उनका अ तिम रूप ही देते हैं। दूसरे, शासन काय म समय का बडा महत्त्व है और ससदीय पद्धति मे बहुधा वैसे ही किसी प्रश्न या प्रस्ताव पर विचार करने म बहुत समय लगता है। लाड सभा विशेष रूप स एक दल (आजकल मजदूर दल) द्वारा प्रस्तुत प्रस्तावो को पारित कराने म देरी लगाती है। तीसरे, विधेयको को दोहराने वाले विधेयको का प्रारूप बनान वाले और कानून के विशेषज्ञो की एक समिति लाड सभा जैसे बडे सदन से अधिक प्रभावी सिद्ध होगी। लाड सभा की सबस अधिक तीव्र आलोचना तथा नि दा इस आधार पर की गयी है कि यह आज के प्रजात त्री युग म अतीत की एक बहुत ही अलोकत त्री सस्था है। ऑग ने इसे एक राजनीतिक रूप म समय के विरुद्ध सस्था बताया है और लास्की ने लिखा है कि यह समय के विरुद्ध एक ऐसी सस्था है जिसका पक्ष नही लिया जा सकता।[1]

लाड सभा के सुधार हेतु रखे गये प्रस्ताव—1911 के पार्लियामे ट एक्ट के विकल्प रूप मे ले सडाउन योजना थी, जिसमे ये प्रस्ताव सम्मिलित थे—लार्ड सभा के सदस्यो की कुल सख्या 325 हो और वे इस प्रकार चुने या नामजद किये जायें—(1) 100 सदस्यो का चुनाव पीयरो द्वारा किया जाये, (2) 100 सदस्या को ताज पियरो अथवा अ य व्यक्तियो म से नियुक्त करे, (3) 120 सदस्यो का चुनाव कॉमन सभा के सदस्य विभिन्न प्रादेशिक समूहो म बैठकर करे, और (4) समस्त पादरी पाच पादरियो को नियुक्त करे। इस योजना को उदारवादी दल ने स्वीकार न किया और उ होने पार्लियामे ट एक्ट का निर्माण किया।

1917 मे लाड ब्राइस के सभापतित्व म 30 सदस्यो का एक सम्मेलन आयोजित हुआ, इन सदस्यो मे सभी मतो के प्रतिनिधि सम्मिलित थे। सम्मेलन ने दूसरे सदन की रचना और शक्तियो के प्रश्न पर गम्भीर विचार किया और इसकी रिपोट 1918 मे प्रकाशित हुई। रिपोट म इस प्रश्न की कठिनाइया पर बल दिया गया और द्वितीय सदन की रचना के लिए विभिन्न विधियो पर विचार किया गया। म त्रियो के परामश से ताज द्वारा सदस्या की नामजदगी की विधि को सम्मेलन ने इन आधारो पर अस्वीकृत कर दिया कि इस विधि के अ तगत इस बात की कोई प्रत्याभूति नही कि जिन सदस्यो को नामजद किया जायेगा वे योग्य ही होगे तथा इस प्रकार की नामजदगी अधिकाशत दल के लिए की गयी सेवाओ का फल होगी। साधारण निर्वाचको द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचन विधि को इस कारण से अस्वीकृत किया गया कि इस प्रकार से चुना गया दूसरा सदन पहल ही सदन की नकल होगा और उसका प्रतिद्व द्वी भी। स्थानीय सस्थाओ द्वारा चुनाव की विधि के पक्ष मे कई बातें होते हुए भी इस कारण से स्वीकार नही किया गया कि इसके परिणामस्वरूप स्थानीय सस्थाओ के निर्वाचनो मे भी दलीय राजनीति का प्रवेश हो जायगा, जो उस समय तक निर्दलीय आधार पर होते थे। सम्मेलन ने दूसरे सदन के सदस्यो का कॉमन सभा के सदस्यो—या तो सभी का सम्पूण सदन द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के अनुसार या उसके

[1] as the second of political democracy it is by almost universal consent are ind fensible anachronism —Laski H J *Parliamentary Government in England* p 111

दिया जाता। इसके अधिक्तर सदस्य ऐसे व्यक्ति होते हैं जिन्हे सदन की सदस्यता की इच्छा नही होती। इसके सदस्यो की सख्या बहुत बडी है, कि तु इसकी कायवाही म भाग लेने वाले सदस्यो की तुलना म यह कहना कठिन होगा कि कामन सभा के सदस्य उनसे बुद्धिमत्ता, उच्च चरित्र और सावजनिक भावना मे बढकर होते हैं। इसमे उद्योगा, कृषि, वित्त, विज्ञान, साहित्य और धम सभी का प्रतिनिधित्व है। लाड सभा के अनेक सक्रिय सदस्य कॉमन सभा के अनुभवी सदस्य हाते है। चूकि यह जीवित है और राष्टीय जीवन के तान बाने म इतनी गहराई से बुना हुआ है, अतएव सबसे बुद्धिपूण माग तो यही होगा कि इसका अन्त न करके इसकी 1948 की रिपोट के आधार पर पुनरचना की जाये। लाड सभा के अधिकतर सक्रिय सदस्या को बडा अनुभव होता है, जो विशेष विपया पर विचार तथा वाद विवाद मे महत्त्वपूण योगदान करते है।

इस रूप मे लाड सभा पहले सदन की पूरक है और यह तथ्य कि इसम अनुदारदलीय सदस्यो की प्रधानता है, अधिक अथमय नही है, क्योकि इसमे हुए वाद विवाद से म त्रिमण्डल को कोई खतरा नही पहुँचता। लास्की ने भी लिखा है, 'यदि जनत त्रीय राज्य म दूसरा सदन रखना हो, तो लाड सभा, जबकि अनुदारदलीय सरकार हो, विश्व म सबसे अच्छा दूसरा सदन है। उसम विचार करने का स्तर ऊँचा होता है। वह अस्थायी भावनाओ की लहरा की ओर ध्यान नही देता जिससे निर्वाचको का धोखा दिया जा सकता है। उसके पास उन सभी प्रकार के विपयो पर विचार करने के लिए समय होता है जिनके लिए काफी समय की आवश्यकता होती है और भार से दबी कॉमन सभा उन पर कठिनाई से विचार कर सकती है। वह वास्तविक विवाद वाली समस्याएँ केवल उस समय उपस्थित करता है जब प्रगतिशील दल की सरकार होती है।'[1]

अन्त मे, लाड सभा का सुधार किन सिद्धान्तो के अनुसार किया जाये ? इस सम्बन्ध म ब्राइस रिपोट के अतिरिक्त निम्नलिखित सुझाव विचारणीय हैं—*1948 के त्रिदलीय नेताओ के* सम्मेलन द्वारा इसके पुनगठन हेतु ये सिद्धान्त स्वीकृत हुए थे—(1) दूसरा सदन पहल सदन का पूरक हो, प्रतिद्व द्वी नही। (2) दूसरे सदन की रचना इस प्रकार स हो कि जहाँ तक व्यावहारिक हो सके, इसम किसी एक स्थायी दल का बहुमत न रहे। (3) इसकी सदस्यता के लिए पतृक अधिकार ही काफी न हो। (4) इसके सदस्या को पार्लियामेन्ट के लाड (Lords of Parliament) कहा जाये। (5) स्त्रियो को भी इसकी सदस्यता प्रदान की जाये। (6) राज-वशजो, आध्यात्मिक *और कानूनी लार्डों को भी इसमे सम्मिलित किया जाये। (7) जिससे कि साधारण आय वाले* व्यक्तियो को भी इसकी सदस्यता मिल सके, इसके सदस्यो को पारिश्रमिक दिया जाये। (8) ऐस पीयरो को जो दूसरे सदन के सदस्य न हा कॉमन सभा के चुनावा म मतदान व खडे होने का अधिकार दिया जाय। (9) इसके सदस्यो को निर्योग्यताओ के आधार पर अलग किय जाने की व्यवस्था हो।

(2) **कॉमन सभा**—यह निचला या लोकप्रिय सदन है। इसम वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित जन प्रतिनिधि सदस्य होते हैं। वतमान कॉमन सभा की सदस्य सख्या 630 है। इसका साधारण कायकाल पाँच वर्ष है। विभिन्न वर्षों म कामन सभा की रचना म देश के विभिन्न भागो का प्रतिनिधित्व रहा है। 1956 म कॉमन सभा म 625 सदस्य थ जिनम इग्लैण्ड, वेल्स, स्काटलण्ड, उत्तर आयरलण्ड के क्रमश 506, 36, 71, 12 प्रतिनिधि थे।

ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के महत्त्वपूण कार्यों का सक्षिप्त विवेचन अग्रलिखित है—पहला, यह सरकार अर्थात् म त्रिमण्डल को कायम रखती है और बहुमत प्राप्त दल का अपना म त्रिमण्डल बनाने का अवसर देती है। कॉमन सभा का मुख्य काय ही मन्त्रिमण्डलो को बनाना, उनका समथन

---

[1] Laski H J *op cit* p 114

(4) सदस्यो को 'पार्लियामेंट का लार्ड' कहा जाय और उन्हे वयक्तिक तथा प्रतिष्ठामय कार्य व सावजनिक सेवा के आधार पर नियुक्त किया जाय, तथा (5) स्त्रियो को भी पुरुषो की भाँति 'पार्लियामेंट का लार्ड' नियुक्त किया जाना चाहिए।

कॉमन सभा द्वारा पास किये गये विधेयक को लार्ड सभा ने अस्वीकृत कर दिया, परन्तु 1949 म मजदूर दलीय सरकार का विधेयक पास हो गया।

क्या दूसरा सदन आवश्यक है ? अधिकतर लेखक दूसरे सदन को आवश्यक बताते हैं। अधिकतर राज्यो म अब द्विसदनीय विधायिकायें हैं और दूसरे सदन की आवश्यकता तथा उपयोगिता पर अधिक वाद विवाद नही होता है। एकात्मक राज्य म दूसरा सदन इसलिए आवश्यक समझा जाता है कि वह दूसरे सदन द्वारा शीघ्रता से पारित किये गये विधेयको पर रोक लगाने अथवा उसके पास होने म देरी लगाने का साधन होता है।[1] अत उसकी रचना और शक्तियाँ अवश्य ही विचारणीय प्रश्न है। *जनिंग्स ने 'दूसरे सदन की आवश्यकता' शीर्षक के अन्तगत लिखा है—'इस* तक का कि लार्ड सभा मे अनुदार दल का स्थायी बहुमत न हो, यह अर्थ नही कि लार्ड सभा ही नही होनी चाहिए। यह प्रश्न कि ऐसा सदन वाछनीय है या नही इस बात पर निभर करेगा कि लार्ड सभा के क्या कार्य हैं अथवा होने चाहियें।'[2] ब्राइस रिपोर्ट म इसकी आवश्यकता को स्वीकार *किया गया है और यह भी बताया गया है कि इसके काय क्या होने चाहियें ? अन्य सभी योजनाओ* म तथा विभिन्न दलो द्वारा इसके सुधार की बात कही गयी है, किन्तु इसके उन्मूलन पर बल नही दिया गया है। हम जनिंग्स के इस मत से पूणतया सहमत है—गत 50 वष से इस बात पर काफी सहमति है कि लार्ड सभा का होना वाछनीय है, जिसम सावजनिक महत्त्व के प्रश्नो पर (किन्तु राजनीतिक प्रवादो पर नहीं) वाद विवाद हो सके, जहाँ प्रशासन के ससदीय नियन्त्रण सम्बन्धी ऐसे पहलुओ पर ध्यान दिया जा सके जो तकनीकी अधिक हो और विवादग्रस्त कम।

रेम्जे म्यूर ने भी दूसरे सदन की आवश्यकता को दो आधारो पर न्यायोचित बताया है। पहले, यह एसे काय के विरुद्ध सरक्षण रूप म आवश्यक है जिस पर पहला सदन कम विचार करे, जो सम्भवत क्रान्तिकारी हो और जिस पर राष्ट्र का मत न जाना गया हो तथा जो राष्ट्र की वास्तविक इच्छा के विरुद्ध हो। दूसरे, विधि निर्माण तथा अन्य कार्यों की मात्रा इतनी अधिक है कि अकेला पहला सदन उसे नही कर सकता। अतएव दूसरा सदन पहले सदन के पूरक रूप मे आवश्यक है और बडी त्रुटियो को सुधारने के लिए भी जो कि अनुचित जल्दबाजी और अपर्याप्त वाद विवाद स उत्पन्न हो सकती है।[3] ऑग और जिन्क लिखते है—'वास्तव म, ब्रिटेन मे कोई ऐसा सरक्षण न होने के आधार पर जैसा कि दुष्परिवर्तनीय सविधान का होता है या जैसा कि लोक निणय की प्रक्रिया का स्विटजरलैण्ड मे है, यह तक दिया जाता है कि ब्रिटेन को अन्य बहुत से राज्यो से भी *अधिक दूसरे सदन की आवश्यकता है*, जिसे दोहराने और मनन करने की पूरी शक्तियाँ प्राप्त हो।'[4]

दूसरा सदन क्यो कायम है ? इस प्रश्न के उत्तर म इसकी *आवश्यकता के अतिरिक्त* दो बातें और कही जाती है पहली, हैरिसन के अनुसार ब्रिटेन म द्वितीय सदन कायम है, क्योकि वह सदा ही रहा है अर्थात् ब्रिटिश जाति की रूढिवादिता के कारण इसका उन्मूलन सम्भव नही है। दूसरे, लार्ड सभा जैसी भी रही है यह काफी उपयोगी सिद्ध हुई है। लार्ड सभा का काय अधिकाशत बहुत ही अनुभवी व योग्य व्यक्तियो द्वारा सचालित होता है और इसके सदस्यो को कोई वेतन नही

---

[1] Bailey Sydney D *British Parliamentary Democracy* p 33
[2] Jennings I *English Institutions* p 98
[3] Muir R *How Britain is Governed* p 193
[4] Ogg and Zink *Modern Foreign Governments* p 211

की नीति का स्पष्टीकरण करते हैं और सरकार के पक्ष म बहुमत का समथन पाने के प्रयत्न करते हैं। वास्तव म सरकारी नीति और कायक्रम की आलोचना के लिए यह मुख्य अवसर प्रदान करती है। पार्लियामे ट के सदस्य सरकारी कार्यां की खुलकर आलोचना कर सकते हैं तथा निर्वाचको की शिकायतो को भी खोलकर रख सकते है। पाँचवे, पार्लियामेन्ट के अ य काय भी हैं, जिनका सक्षिप्त विवेचन देना आवश्यक प्रतीत होता है।

(1) याचिकायें पेश करना—आजकल इसका प्रयोग 'नही' के समान होता है अतएव इसका महत्त्व सबसे कम है। याचिकाएँ बहुत ही कम पेश की जाती हैं और उनके पेश करने पर साधारणतया कोई वाद विवाद नही होता। उनकी जाच करने के लिए एक समिति होती है।

(2) प्रश्न—प्रश्न पूछने का अत्यधिक महत्त्व है। सदस्य सभी सरकारी कार्यों के बारे मे प्रश्न पूछने का नोटिस दे सकते है। यदि वे उनका सदन मे मौखिक उत्तर चाहते है तो वे उन पर च द्र वि दु (asterisk) लगाते हैं। कोई भी सदस्य एक दिन म तीन से अधिक प्रश्न नही पूछ सकता। ऐसे प्रश्न जिनका उत्तर उस समय न दिया जा सके, पार्लियामे ट के वाद विवाद की सरकारी रिपोर्टो मे छपे रूप म दिया जाता है। जब किसी प्रश्न का मौखिक उत्तर दे दिया जाता है तो उस पर पूरक प्रश्न पूछे जा सकते हैं जिसका पहले स कोई नोटिस नही देना होता और उ ह कोई भी सदस्य पूछ सकता है। साधारणतया प्रश्न पूछन का उद्देश्य विभिन प्रकार की सूचना प्राप्त करना है और इसके लिए प्रश्न पूछने स कोई और अधिक अच्छा अथवा प्रभावी उपाय नही है। पर तु बहुत से प्रश्न जनता की शिकायतो की अभिव्यक्ति करने तथा व्यक्तियो को परेशान करने के उद्देश्यो से भी पूछे जाते है। म त्रिगण कुछ प्रश्नो का उत्तर यह कह कर नही देते कि उनम विषय मे गोपनीयता आवश्यक है अथवा चल रही वार्ता पर अनुचित प्रभाव पडेगा। अध्यक्ष अपने विवेक म कुछ विशिष्ट प्रकार के प्रश्न पूछन की आज्ञा देने से मना कर सकता है जैसे सम्प्रभु अथवा मित्र-राष्ट्रो के सम्ब ध म पूछे गय अशिष्ट प्रश्न।

(3) प्रस्ताव—पार्लियामेन्टरी प्रक्रिया म इनका बडा महत्त्व है, क्योकि सदन म किसी प्रस्ताव के पेश होने पर ही वाद विवाद हो सकता है और इनके द्वारा उसे समाप्त भी कराया जा सकता है। सदन के नियमो मे दिया हुआ है कि प्रस्ताव कब और किन विषयो पर पेश किये जा सकते हैं। कुछ प्रस्तावो का सम्ब ध तो विधेयको पर विचार करते समय उनके लिए विहित प्रक्रिया के अ तगत विभिन्न चरणो से होता है। इनके अतिरिक्त विरोधी पक्ष नि दा का प्रस्ताव, अविश्वास का प्रस्ताव अथवा काम-रोको प्रस्ताव पेश कर सकता है, जिन पर खुलकर वाद विवाद होता है और यदि व बहुमत द्वारा पास हो जाएँ तो म त्रिमण्डल को त्यागपत्र देना पडे। वाद विवाद के अ य अवसरो म राजगद्दी से भाषण (Speech from the throne) प्रमुख है जिस पर लगभग एक सप्ताह तक सदन म वाद विवाद चलता है। वित्तीय प्रस्तावो पर सम्पूण सदन की समितियो म काफी दिन तक वाद विवाद होता है और अ य विधेयको पर समिति की रिपोट पेश होने पर दूसरे वाचन के दौरान विस्तृत वाद विवाद होता है।

(4) वाद विवाद—पार्लियामेन्ट (विशेष रूप से कॉमन सभा) म हुए वाद विवाद जनता की राजनीतिक शिक्षा के बहुत ही महत्त्वपूण साधन हैं। पार्लियामेन्ट की कायवाही की रिपोट सभी समाचार-पत्रो म प्रकाशित होती हैं और वे अधिकाश जनता को आकर्षित करती हैं। चाह उनके पढन वालो की सख्या कम ही हो, किन्तु देश की बहुत बडी जनसख्या उनके बारे म जानकारी पाने की इच्छुक रहती है। कामन सभा का दूसरा महत्त्वपूण काय राजनीतिक नेताओ का चयन करना है। यह राजनीतिक ख्याति व ऊँचा नाम पाने का प्रमुख माग है। सदन म ही ख्यातियाँ खोई जाती हैं तथा प्राप्त की जाती हैं। सदन मे दिया गया पहला भाषण ही, यदि वह बहुत ही उच्च कोटि का हो, म त्री पद पाने क माग का प्रथम पग होता है। प्राय सभी केबिनेट

करना और पदच्युत करना है। सिद्धा त रूप म म त्रिमण्डल कामन सभा के प्रति उत्तरदायी होता है अर्थात् सदस्या के बहुमत का समथन खो जाने पर म त्रिमण्डल को या तो त्यागपत्र देना पडता है अथवा वह पार्लियामे ट का विघटन करा सकता है। सत्तारूढ मन्त्रिमण्डल को सदव ही यह ध्यान रहता है कि विरोधी दल आवश्यकता पडने पर अपना म त्रिमण्डल बना सकता है।[1] हेरिसन के मतानुसार कॉमन सभा का आवश्यक काय यह हे कि केबिनेट को, जो दिन प्रतिदिन के कार्यों म सवशक्तिशाली होती है, देश के जनमत से सम्बन्धित बनाये रखे, क्योकि ब्रिटेन मे जनमत कही अधिक शक्तिशाली है जो केबिनेट का बनाता और भग करता है। कॉमन सभा के कार्यों द्वारा जनता को यह पता रहता है कि केबिनेट क्या कर रही है और केबिनेट यह जान पाती है कि जनता उसके बारे मे क्या सोचती है। पार्लियामे ट शासन और शासितो के बीच होने वाली क्रिया प्रतिक्रिया का के द्र बि दु है, जिसके द्वारा वे एक दूसरे को प्रभावित करते है।

दूसरे, पार्लियामे ट का मुख्य काय विधि निर्माण का है। सभी प्रकार के कानून पार्लियामे ट म पास होते है और इसके द्वारा पारित सभी विधेयको पर ताज की अनुमति मिल जाती है। नये कानूना को बनाना, पुराने कानूनो म सशोधन करना तथा अधीनस्थ अथवा प्रदत्त विधि निर्माण पार्लियामे ट के महत्त्वपूण काय है। इस क्षेत्र म पार्लियामे ट और केबिनेट का वास्तविक भाग क्या है, इस प्रश्न का विवेचन चौथे विभाग म किया जायगा। यहा यह बताना आवश्यक प्रतीत हाता है कि कानूनी दृष्टि से पार्लियामे ट सर्वोच्च है अर्थात् यह किसी भी प्रकार का कानून बना सकती है। इसके बनाये कानूनो को न्यायालय अवैध घोषित नही कर सकते जैसा कि सयुक्त राज्य अमरीका या भारत म है। एक अ य दृष्टि से भी पार्लियामे ट विधि निर्माण काय म सम्प्रभु (sovereign) है, ब्रिटेन का सविधान अलिखित तथा एकात्मक है, अर्थात् पार्लियामेन्ट जब चाहे और जैसा चाहे साधारण कानून बनाने की प्रक्रिया द्वारा ही सावैधानिक कानून बना सकती है। ब्रिटेन म सविधान सर्वोपरि नही है, सर्वोपरिता पार्लियामे ट को ही प्राप्त है।

सर एडवड कोक के अनुसार पार्लियामे ट की शक्ति तथा अधिकार क्षेत्र इतना सर्वोपरि तथा पूण है कि उसकी सीमाये नही बाधी जा सकती। ब्लेकस्टोन लिखता है 'पार्लियामे ट को धार्मिक या लौकिक, नागरिक, सैनिक, समुद्री अथवा फौजदारी आदि सब तरह के विषया पर कानून बनाने, उनकी पुष्टि करने, उ हे बढाने तथा व्याख्या करने की सर्वोच्च तथा अनियन्त्रित सत्ता प्राप्त है।' ऑग और जिंक के अनुसार पार्लियामे ट को सामा य कानून क किसी भी नियम को सशोधित करन या समाप्त करन, न्यायालय के किसी भी निणय को अतिक्रा त करन और किसी भी परम्परागत अभिसमय को अवध बनान का अधिकार है। सच तो यह है कि यद्यपि पार्लियामे ट अनक व्यावहारिक प्रतिबन्धा, नतिक रुकावटा जनमत, अन्तर्राष्ट्रीय कानून और अ तर्राष्ट्रीय समझौतो के अ तगत काय करती है—फिर भी यह कानूनी दृष्टि स अप्रतिबन्धित है और इसके काई अथवा सभी काय अ य किसी के द्वारा सशोधित नही हो सकते, वही उनमे सशोधन कर सकती है। सक्षेप म, क्विनटिन हाग के शब्दा म पार्लियामे ट कोई भी काय कर सकती है और कोई एसा परिणाम प्राप्त कर सकती है जिसे मनुष्य निर्मित कानूना द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।[2] तीसरे, पार्लियामे ट का राष्ट्र की आय तथा व्यय पर निय त्रण है। सभी आय-कर सम्ब धी प्रस्ताव तथा व्यय की मदें इसी क द्वारा स्वीकृत की जाती हैं। इस विषय का विस्तृत विवेचन अ य अध्याय म किया जायेगा। चौथे, पार्लियामे ट राष्ट्र का मुख्य मचस्थान है जहाँ पर मन्त्री केबिनेट

[1] But the chief task of the House of Commons is to maintain a government... It involves the necessity for providing an alternative government. —Greaves H R G, *The British Constitution* pp 44 and 45

[2] Hogg Q *The Purposes of Parliament* p 5.

का अन्त कर दिया गया और सभी निर्वाचन-क्षेत्रों को एक सदस्य वाला बनाया गया अर्थात् अब आरक्षित स्थानो के लिए एक सदस्य वाले ही निर्वाचन क्षेत्र हैं। दसवें सशोधन अधिनियम, 1961 के अनुसार दादरा व नगर हवली का प्रशासन राष्ट्रपति के अधीन किया गया, बारहवें सशोधन अधिनियम से गोआ, डामन व डयू को भारतीय सघ म एकीकृत कर आठवाँ सघीय क्षेत्र बनाया गया। राज्यो के पुनगठन क समय बने सविधान के सातवें सशोधन अधिनियम के अन्तगत लोक-सभा की रचना इस प्रकार होगी—(1) विभिन्न राज्या स भूमिगत निर्वाचन-क्षेत्रा द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियो की सख्या 500 से अधिक न होगी, (2) सघीय क्षेत्रा के प्रतिनिधिया की सख्या 30 से अधिक न होगी और उनके चुनाव की पद्धति ससद के कानून द्वारा विहित की जायगी। वतमान (चौथे आम चुनाव के बाद बनी) लोकसभा म कुल सदस्या की सख्या 521 है, जिसम से विभिन्न राज्यो व सघीय क्षेत्रो द्वारा निर्वाचित सदस्या की सख्या 518 तथा राष्ट्रपति द्वारा नामजद सदस्यो की सख्या तीन है। नामजद सदस्या म आग्ल भारतीय समुदाय तथा असम के जनजाति क्षेत्रो के प्रतिनिधियो की सख्याक्रमश दो और एक है। लोकसभा के सदस्या का चुनाव प्रत्यक्ष रीति द्वारा और वयस्क मताधिकार के आधार पर होता है। भारत जैस विशाल देश म यह सच्चे जनतन्त्र की स्थापना की ओर उठाया गया एक अत्यन्त ही साहसपूण पग था जो सफल सिद्ध हुआ है।

ससद के सदनो की अवधि—राज्य सभा एक स्थायी सदन है। इसके लगभग $\frac{1}{3}$ सदस्य प्रति दूसरे वप अपने स्थान खाली करते है। इसी प्रकार की व्यवस्था सयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट के लिए है और अन्य कई देशा म भी उच्च सदन स्थायी होता है अथवा सदस्यो की अवधि निम्न सदन के सदस्यो से लम्बी होती है। साधारणत लोकसभा की अवधि ब्रिटन की कॉमन सभा की भाँति पाच वप होगी और इसकी गणना लोकसभा की प्रथम बठक की तिथि से की जायेगी। किन्तु आपात्कालीन उद्घोषणा क दौरान लोकसभा की अवधि को ससद के प्रस्ताव द्वारा एक बार मे एक वप के लिए बढाया जा सकता है और आवश्यकतानुसार इसकी पुनरावत्ति की जा सकती है। परन्तु उद्घोषणा के समाप्त होन के उपरान्त यह अवधि छ माह से अधिक नही बढाई जा सकती। ब्रिटेन म कॉमन सभा को अपनी अवधि म कानून द्वारा कोई भी परिवतन करने का अधिकार है। वहाँ पर व्यवहार म सत्तारूढ मन्त्रिमण्डल ही यह निश्चय करता है कि *कॉमन सभा का विघटन कब किया जाये, क्योंकि उसके उपरान्त शीघ्र ही नये चुनाव किये जाते हैं। ऐसा निश्चय मन्त्रिमण्डल अपने दलगत हित म चुनाव के लिए सुअवसर पाने अथवा विरोधी दल व जनमत के जोर दिये जाने पर ही करता है।*

सदस्यो की अहतायें—ससद के लिए उम्मीदवारो को (1) भारत का नागरिक होना आवश्यक है, (2) लोकसभा और राज्य सभा के लिए उम्मीदवारा की आयु क्रमश 25 और 30 वप होनी चाहिए, (3) उम्मीदवारो म वे सब योग्यतायें भी होनी चाहियें जो ससद उनके लिए कानून द्वारा निर्धारित करे। कोई भी व्यक्ति ससद के दोनो सदना अथवा ससद के किसी सदन व राज्य विधानमण्डल का एक साथ सदस्य नही रह सकता। उपर्युक्त अहताओ के होते हुए उम्मीदवारो म इनम से कोई अनहता न होनी चाहिए—(1) मन्त्री पद तथा ससद के किसी कानून द्वारा मुक्त (जिनमे अब अन्य श्रेणिया के मन्त्रियो क पद भी मुक्त हो गय हैं) पदो को छोडकर भारत अथवा किसी राज्य सरकार के अधीन लाभ के पद पर आसीन होना, (2) किसी भी अधिकारपूण न्यायालय द्वारा पागल घोषित किया जाना, (3) दिवालिया (insolvent) होना, (4) ससद के द्वारा बनाये गये किसी कानून के अन्तगत अयोग्य ठहराया जाना, जैस चुनाव के सम्बन्ध म भ्रष्टाचार व अवैध कायवाहियो के लिए दोषी होने पर होता है। वास्तव म, ससद द्वारा पारित किये गये जन प्रतिनिधित्व अधिनियम के अन्तगत उम्मीदवारो के लिए कोई विशेष योग्यता विहित

म-त्री ऐसे व्यक्ति होते है जि-हे ससदीय जीवन का काफी अनुभव प्राप्त होता है। इस विषय मे -यूमेन ने सच ही कहा है कि सयुक्त राज्य अमरीका मे राजनीतिक नेतृत्व पाने के लिए अनेक मार्ग है, परन्तु ब्रिटेन म एक ही है अर्थात् कॉमन सभा के द्वारा।' पार्लियामे-ट और केबिनट के सम्ब-ध का विवेचन अध्याय छ म किया जा चुका है।

2 भारत मे सघीय ससद

भारत के सविधान मे लिखा है 'सघ के लिए एक ससद होगी जो राष्ट्रपति और दो सदनो को मिलाकर बनेगी, जिनके नाम क्रमश राज्य सभा और लोकसभा (Council of State and House of the People) होगे।' अब दोनो सदनो के नाम हि-दी मे ही राज्य सभा व लोकसभा स्वीकृत हो गय है। राष्ट्रपति ससद के किसी भी सदन का सदस्य नही होता, किन्तु वह उनका वसे ही अनिवाय अग है जैसे ब्रिटेन मे ताज (Crown) होता है।

राज्य सभा की रचना—सविधान के अनुसार इसम अधिक से अधिक 250 सदस्य हो सकते है, जिनमे से 12 सदस्य, जि-हे कि साहित्य, विज्ञान कला, सामाजिक सेवा आदि म विशेष ज्ञान अथवा व्यावहारिक अनुभव प्राप्त हो, राष्ट्रपति द्वारा नामजद किये जाते है, शेष सदस्यो को चुना जाता है। प्रथम राज्य सभा मे कुल सदस्यो की सख्या 205 निर्वाचित और 12 नामजद थी। 1956 मे राज्यो का पुनर्गठन होने के बाद सविधान के सातवें सशोधन अधिनियम के अनुसार राज्य सभा के कुल सदस्यो की सख्या 220 हो गई थी और वतमान राज्य सभा म 12 नामजद सदस्यो के अतिरिक्त अ-य सदस्यो की कुल सख्या 226 है। निर्वाचित प्रतिनिधिया का चुनाव विभिन्न राज्यो की विधान सभायें अप्रत्यक्ष प्रणाली से करती हैं। सघीय क्षेत्रा के प्रतिनिधि क्षेत्रीय परिषदा द्वारा चुने जाते है। राज्य सभा के प्रतिनिधिया का चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल सक्रमणीय मत द्वारा होता है। राज्य सभा के सदस्यो का कायकाल छ वष है और प्रति दो वष बाद उसके 1/3 सदस्या का निर्वाचन होता है। अतएव राज्य सभा एक स्थायी सदन है। इससे एक बात स्पष्ट है कि विभिन्न राज्या को राज्य सभा म समान प्रतिनिधित्व प्राप्त नही है। हमारे सविधान निमाताओ ने प्रतिनिधित्व का आधार क्षेत्र, जनसख्या और सामा-य महत्त्व को माना है।

लोकसभा की रचना—मौलिक सविधान म लोकसभा की रचना के सम्ब-ध मे य बातें दी हुई हैं—(1) कुल सदस्य सख्या 500 से अधिक नही हो सकती, (2) विभिन्न राज्यो के प्रतिनिधिया का अनुपात गत जनगणना के आधार पर एकरूप होना चाहिए, (3) सघीय क्षेत्रा से प्रतिनिधित्व के लिए ससद कानून बना सकती है, और (4) यदि राष्ट्रपति यह समझे कि आग्ल भारतीय समुदाय का लोकसभा म पर्याप्त प्रतिनिधित्व नही हुआ है तो वह उनके दो प्रतिनिधिया को नामजद कर सकता है। निर्वाचन के हेतु विभिन्न राज्या को अनेक भूमिगत निर्वाचन क्षेत्रा म बाँटा जाता है। इस सम्ब-ध म भारत का सविधान कहता है कि 'निर्वाचन क्षेत्रा का परिसीमन इस प्रकार किया जाये कि प्रति $7\frac{1}{2}$ लाख जनसख्या के लिए कम स कम एक तथा प्रति पाँच लाख जनसख्या के लिए अधिक से अधिक एक सदस्य चुना जाये।'

लोकसभा की रचना-सम्ब-धी हुए सशोधन और वतमान लोकसभा की रचना—सविधान के दूसरे सशोधन अधिनियम, 1952 के द्वारा अनुच्छेद 81 क खण्ड (1) (ब) म यह परिवतन हुआ है—जनसख्या के प्रति 7,50 000 के लिए एक सदस्य से कम नही शब्दा को हटा दिया गया है। सविधान के आठवें सशोधन अधिनियम, 1959 से अनुच्छेद 334 को सशोधित किया गया है और अनुसूचित वर्गों, जनजातिया तथा आग्ल भारतीया क लिए आरक्षित स्थाना की व्यवस्था आगामी दस वर्षो क लिए बढा दी गयी। इस सशोधन के बाद ही दो सदस्य वाले निर्वाचन

अथवा प्रस्तुत विधेयक पारित नही होता अथवा लोकसभा मंत्रिमण्डल के विरुद्ध निन्दा का प्रस्ताव (vote of censure) पास कर देती है, या लोकसभा मंत्रियो द्वारा पश की गई अनुदानो की मांगो म से किसी को अस्वीकार कर दती है या कोई काम रोको प्रस्ताव (adjournment motion) पास कर देती है तो मंत्रिमण्डल को त्यागपत्र देना पडता है। सदनो की प्रत्यक बठक के आरम्भ म सामान्यत पहला घण्टा प्रश्नो के उत्तर दन म व्यतीत होता है। प्रश्नो के द्वारा सदस्य मंत्रियो के कार्यो की कडी जांच व आलोचना करत हैं। इन विभिन्न उपायो द्वारा मन्त्रिमण्डल की खुली आलोचना होती है और सच्ची अथवा कल्पित विफलता को भी सदनो म खोलकर रखा जाता है।

अन्य काय—ससद को सविधान म सशोधन करने की महत्त्वपूर्ण शक्ति प्राप्त है। यह राष्ट्रपति पर महाभियोग की कार्यवाही चला सकती है तथा कुछ विशेष सीमाओ के अधीन सर्वोच्च और उच्च न्यायालयो के न्यायाधीशो को पदच्युत करने क लिए राष्ट्रपति को सम्बोधन पेश कर सकती है। ससद के दोनो सदन सयुक्त बठक म उप राष्ट्रपति का निर्वाचन करते हैं और उसे बहुमत द्वारा पास किये गये प्रस्तावो के आधार पर पदच्युत भी कर सकत हैं। ससद के सभी निर्वाचित सदस्य राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए निर्वाचक मण्डल (Electoral College) के सदस्य भी होते हैं।

लोकसभा और राज्य सभा की शक्तियो मे अन्तर—इस अन्तर को समझने से पूव हम धन व वित्त विधेयको (Money and Financial Bills) तथा अन्य विधेयको के बीच अन्तर को जानना चाहिए। कोई भी विधेयक धन विधेयक होता है, यदि उसम अग्रलिखित मे से एक भी बात पायी जाय (1) कोई नया कर लगाना, कोई कर खत्म करना, किसी भी कर म परिवतन करना अथवा उसका विनियमन करना। (2) ऋण लेना। (3) सचित निधि व आकस्मिक निधि की देख-रेख तथा उसमे से धन निकालना या उसम धन जमा कराना। (4) भारत की सचित निधि म से धन का विनियोग (appropriation) कराना। (5) किसी व्यय को सचित निधि पर भारित व्यय घोषित करना तथा ऐसे व्यय की राशि को बढाना, इत्यादि। यदि किसी विधेयक के सम्बन्ध म मतभेद पदा हो जाय कि वह धन विधेयक है या नही तो इस सम्बन्ध म लोकसभा के अध्यक्ष का निणय अन्तिम होगा। विनियोग विधेयक (Appropriation Act) तथा वित्तीय विधेयक (कर सम्बन्धी विधेयक) वित्तीय विधेयको की श्रेणी म आते हैं।

सभी ऐसे विधेयको का आरम्भ लोकसभा म ही हो सकता है। लोकसभा को ही अनुदानो की मागो पर मतदान करने अर्थात् स्वीकृति देने का अधिकार प्राप्त है। वित्तीय मामलो मे राज्य सभा की शक्तियाँ अति सीमित हैं, जिनकी विस्तृत विवेचना अन्य अध्याय म की गई है। धन और वित्तीय विधेयको को छोडकर कोई भी अन्य विधेयक ससद के किसी भी सदन म आरम्भ हो सकता है। यदि कोई ऐसा विधेयक जिसे एक सदन ने पास कर दिया हो और दूसरे सदन के पास भेजा गया हो, (अ) दूसरे सदन द्वारा अस्वीकृत कर दिया जाता है या (आ) दोनो सदन उस विधेयक म किये जाने वाले सशोधन के बारे म अन्तिम रूप से सहमत न हो सकें या (इ) दूसरे सदन को विधेयक मिले छ माह से अधिक बीत गये हो और विधेयक पास न हुआ हो, तो उनके मतभेद को दूर करने के हेतु राष्ट्रपति दोनो सदनो की सयुक्त बैठक बुला सकता है। छ माह का समय गिनते समय चार या उससे अधिक दिन तक लगातार सदनो के स्थगित होने या सत्रावसान होने के काल को उसम नही गिना जायगा। सयुक्त बैठक म भी विधेयक बहुमत द्वारा पास होता है, अतएव यह कहा जा सकता है कि उसम जनप्रिय सदन के सदस्यो की इच्छानुसार निणय होगा, क्योकि उसम उनकी सख्या दूसरे सदन के सदस्यो से लगभग दो गुनी होती है। ऐसा विधेयक दोनो सदनो द्वारा एक ही रूप मे पारित होने पर राष्ट्रपति की अनुमति के लिए भेजा जाता है।

नही की गई है, केवल कुछ निर्योग्यताओ को उसमे बताया गया है ।

जन प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 मे दी गयी कुछ निर्योग्यताये इस प्रकार है—(1) भारतीय दण्ड विधान की धारा 171 (ई) और (एफ) के अन्तगत किये गये अपराधो के लिए कारागार दण्ड प्राप्त व्यक्ति पर छ वष के लिए निर्योग्यता लागू होती है । (2) चुनाव सम्बन्धी भ्रष्टाचार के अपराध मे दण्डित व्यक्ति पर छ वष के लिए निर्योग्यता लागू होती है । ऐस व्यक्तियो को चुनाव मे ऐजेन्ट भी नही बनाया जा सकता । परन्तु ऐसी निर्योग्यताओ को लिखित कारण के आधार पर निर्वाचन आयोग हटा सकता है । भ्रष्ट प्रथाओ (corrupt practices) मे ये अपराध सम्मिलित है—(अ) किसी भी उम्मीदवार अथवा उसके समथक द्वारा किसी मतदाता अथवा दूसरे उम्मीदवार को घूस दना, (आ) स्वतन्त्र मतदान म हस्तक्षेप के लिए अनुचित प्रभाव (undue influence) डालना, (इ) मूल जाति, जाति, सम्प्रदाय, धम आदि के नाम पर मत मागने के लिए अपील करना अथवा धार्मिक चिह्नो का प्रयोग करना, (ई) अन्य उम्मीदवारो के विषय म झूठी बातो को प्रकाशित करना, (उ) मतदान केन्द्र तक या वहाँ से मतदाताओ को वापस ले जाने के लिए सवारी का प्रबन्ध करना, (ऊ) चुनाव पर नियत राशि से अधिक व्यय करना, और (ए) सरकारी अधिकारियो या कमचारियो से सहायता पाना ।

ससद के काय और शक्तियाँ—ससद के कार्यो और शक्तियो का विवेचन निम्नलिखित शीषको के अन्तगत किया जा रहा है—

विधायी शक्तिया—ससद को उन सभी विषयो पर कानून बनाने की शक्ति प्राप्त है जिनका प्रगणन सघ और समवर्ती (concurrent) सूचियो मे किया गया है तथा अवशिष्ट विषयो पर भी । राज्यो के लिए राज्य सूची मे दिये गय विषयो पर भी ससद आपात्कालीन उद्घोषणाओ के दौरान कानून बना सकती है । इसके अतिरिक्त दो अन्य विशेष प्रक्रियाओ द्वारा भी ऐसा किया जा सकता है । पहले, जब कभी दो या अधिक राज्यो के विधानमण्डल सकल्प पारित करके ससद से किसी विषय विशेष के बारे मे कानून बनाने की प्राथना करे । दूसरे, जब कभी राज्य सभा 2/3 के बहुमत स यह सकल्प पारित करे कि राष्ट्रीय हित मे ससद को कोई कानून बनाना चाहिए । इस सम्बन्ध मे एक विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि हमारी ससद ब्रिटेन की ससद की भाति प्रभुतापूर्ण नही है । इसका कारण स्पष्ट है । भारत का सविधान सघात्मक है और उसके द्वारा सघ व राज्यो क विधानमण्डलो के बीच शक्तियो का विभाजन हुआ है । इसका यह अथ हुआ कि भारत का सविधान सर्वोपरि है और यदि कभी ससद कोई ऐसा कानून बना दे जो सविधान का अतिक्रमण करने वाला हो तो सर्वोच्च न्यायालय उस पुनरवलोकन की कायवाही द्वारा अवैध घोषित कर सकता है । इस दृष्टि स भारत की ससद सयुक्त राज्य अमरीका की काग्रेस से मिलती है ।

राष्ट्रीय वित्त पर नियन्त्रण—ससद का दूसरा मुख्य काय सघीय वित्त पर पूण नियन्त्रण रखना है । सभी कर सम्बन्धी प्रस्ताव तथा अनुदानो की माँगें ससद (लोकसभा) द्वारा स्वीकृत होने पर प्रभावी होती है, क्योकि सविधान क अनुसार विधि के अधिकार के सिवाय न तो कर लगाया जायगा और न इकटठा किया जायगा तथा सघ की सचित निधि स कोई धन विधि के अनुकूल तथा सविधान मे दिये गये प्रयोजनो और रीति से अन्यथा विनियुक्त नही किया जायगा । ससद ही अनुमान और सावजनिक लेखा समिति को नियुक्त करती है तथा नियन्त्रण व महालेखा परीक्षक की रिपोट पर भी विचार कर उचित कायवाही करती है ।

कायपालिका पर नियन्त्रण—सविधान के अनुसार सघीय कायपालिका अर्थात् मन्त्रिमण्डल ससद (व्यवहार मे लोकसभा) के प्रति उत्तरदायी होता है लोकसभा क बहुमत का विश्वास गा देने पर मन्त्रिमण्डल पदासीन नही रह सकता । यदि लोकसभा म मन्त्रिमण्डल द्वारा समर्थित

की समितियो ने ऐसे मामलो की जाँच व छानबीन की है—सरकार म भ्रष्टाचार और सरकारी अभिकरणो के काय ।

इस परिच्छेद तथा पूवगामी परिच्छेद म वर्णित डायट के विभिन्न कार्यों और उनके सम्बन्ध म डायट की शक्तियो पर विचार करने पर हम कह सकते हैं कि डायट की शक्तियाँ विस्तृत और वास्तविक है । सक्षेप म, अब सम्राट नही वरन् डायट प्रधानमन्त्री को चुनती है । डायट सम्पूण केबिनेट या किसी मन्त्री को उसके विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर, त्यागपत्र देने के लिए विवश कर सकती है । वतमान डायट को राष्ट्रीय वित्त पर नियन्त्रण शक्ति प्राप्त है, क्योकि केबिनेट द्वारा प्रस्तुत बजट पर डायट की स्वीकृति आवश्यक है ।[1] डायट वदेशिक मामलो पर भी नियन्त्रण रखती है, क्योकि उसे केबिनेट द्वारा अन्य राज्यो स की गयी सन्धियो पर सम्पुष्टीकरण की शक्ति प्राप्त है । डायट के सदस्य मन्त्रियो से प्रश्न पूछ सकते हैं और डायट कायपालिका के कार्यों म जाँच व छानबीन करा सकती है । डायट को न्यायाधीशो के विरुद्ध महाभियोग की कायवाही सुनने की शक्ति भी प्राप्त है । डायट की सबस महत्त्वपूण और विस्तृत शक्ति सभी प्रकार के आवश्यक कानून बनाने की है । वाड ने डायट के महत्त्व के बारे म लिखा है—वतमान सविधान ने प्रभुता को जनता म निहित किया है और डायट को जनता की प्रभुता का सर्वोच्च अग तथा कानून का एकमात्र स्रोत बनाया है, जापानी राज्य की कानूनी एव शक्ति सरचना के लिए ये परिवतन आधारभूत हैं । इस प्रकार शासन सम्राट केन्द्रित होने के स्थान पर ससद-केन्द्रित हो गया है और जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि अत्यधिक शक्तिशाली हो गये हैं ।[2]

जापान म विधायिका-कायपालिका सम्बन्ध बहुत ही घनिष्ठ हैं, क्योकि वहाँ ससदीय उप-मन्त्रियो (Parliamentary Vice Ministers) का व्यापक प्रयोग होता है । प्रत्येक सदन स प्रत्येक मन्त्रालय के लिए एक उप मन्त्री नियुक्त किया जाता है । नये सविधान से पूव उप मन्त्रियो के सम्बन्ध म यह व्यवस्था थी कि प्रत्येक मन्त्रालय म ससद स केवल एक मन्त्री नियुक्त किया जाता था और दूसरा उप मन्त्री नागरिक सेवाओ से लिया जाता था। नये सविधान स पूव नीति का निर्धारण डायट म न होकर, उच्च सैन्य कमान, सयुक्त सनिक अभिकरणो, प्रिवी कौंसिल और सेवा मन्त्रालयो म होता था परन्तु अब ससद के सदस्यो को वे शक्तियाँ वास्तव म प्राप्त हो गयी है, जो उन्हे पहले नाममात्र को प्राप्त थी । अब वे प्रजातन्त्र को सफल बना सकते है, यदि उनमे चरित्र हो और वे बुद्धिमानी से काम करें ।

सिद्धान्त रूप म तो डायट राज्य शक्ति का सर्वोच्च अग है, परन्तु व्यवहार म उसकी स्थिति भिन्न है । केबिनेट प्रतिनिधि सदन का विघटन कर सकती है, बजट पर केबिनेट को प्राय पूण अधिकार प्राप्त है, केबिनेट को सन्धि करने म प्रशासकीय नेतृत्व भी प्राप्त है, सर्वोच्च न्यायालय डायट द्वारा पारित विधेयको पर न्यायिक पुनरवलोकन की शक्ति रखता है केबिनेट को प्रश्रय (patronage) शक्ति भी प्राप्त है । ऐसी दशाओ म डायट को राज्य शक्ति का सर्वोच्च अग नही माना जा सकता । यह तो यथाथ म वाद विवाद का अखाडा मात्र है और यह एक अथ म कायपालिका के समथन हेतु सुविधा प्रदान करती है ।[3] थ्योडोर मक्नेली के मतानुसार जब स (1955) जापान मे बहुदलीय पद्धति का स्थान द्वि दलीय पद्धति ने लिया है, तब से डायट के प्रति केबिनेट

[1] Ike N *Japanese Politics* pp 68-69

[2] The government has thus been transformed from an Emperor centred to a parliament centred mechanism and the elected representatives of the people have become vastly more powerful Macridis and Ward *Modern Political Systems—Asia* p 92

[3] Instead of becoming the highest organ of State power it has become a cockpit for debate and nothing more than the supporting facility for the executive Linebarger et al *Far Eastern Governments and Politics—China and Japan* p 532

3 जापान मे डायट

वतमान सविधान के अन्तगत डायट की रचना—वतमान सविधान के अन्तगत भी दो सदन वाली विधायिका—डायट की व्यवस्था है। परन्तु जबकि निम्न सदन का नाम पुराना ही है उच्च सदन का नाम कौसिलर सदन (House of Councillors) हो गया है। वास्तव मे, नाम म परिवतन के साथ उच्च सदन की रचना व शक्तियो म महत्वपूण अन्तर हो गया है। सविधान-निर्माताओ ने डायट को शासन का सबसे महत्त्वपूण अग बनाया है। सविधान की धारा 41 मे कहा गया है कि 'डायट राज्य की शक्ति का सर्वोच्च तथा राज्य की एकमात्र विधि निर्माण करने वाली अग होगी।' धारा 43 के अनुसार जब दोनो सदनो के सदस्य निर्वाचित है जो जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं। दोनो सदनो के सदस्यो की सख्या कानून द्वारा नियत की गयी है। प्रतिनिधि सदन मे 467 सदस्य हैं, जो 118 चुनाव जिलो से चुने जाते है और प्रत्येक चुनाव जिले के 3 से 5 तक प्रतिनिधि है, यद्यपि प्रत्येक मतदाता को केवल एक ही मत देने का अधिकार है। चुनाव हेतु प्रत्येक प्रीफेक्चर (प्रा त) एक स लेकर चार तक जिलो मे बँटा है, परन्तु टोकियो के प्रीफेक्चर मे सात चुनाव जिले है। तुलना की दृष्टि से यहा यह बताना उचित होगा कि सयुक्त राज्य अमरीका, ब्रिटेन व भारत के निम्न सदना के कुल सदस्यो की सख्या क्रमश 435, 625 और 504 है। कौसिलर सदन आकार म, जैसा कि होना चाहिए, छोटा है। उसके कुल सदस्यो की सख्या 250 है जो भारत की राज्य सभा के लगभग बराबर है।

कौसिलर सदन के 150 सदस्यो का चुनाव भूमिगत आधार पर प्रीफेक्चरो मे होता है और प्रत्येक प्रीफेक्चर को दो से आठ तक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। शेष 100 प्रतिनिधि सम्पूण राष्ट्र द्वारा चुन जाते है। जापान मे सयुक्त राज्य अमरीका की भाति पदासीन मन्त्रिमण्डल निर्वाचन क्षेत्रा के निर्माण म समय समय पर ऐसे परिवतन करने का प्रयत्न करते है कि जिनसे उनके समथको को आगामी चुनावो मे अधिक स्थान मिल जाये। इस प्रकार के प्रयत्न कानूनो मे परिवतन करके तथा दोनो सदनो के लिए चुनाव क्षेत्रो के सम्बन्ध मे किय जाते है। अस्तु, जापान मे भी एक प्रकार से जेरीमडरिंग की प्रथा है। थ्योडोर मेक्नेली के मतानुसार चुनाव के ठीक पहले अथवा वाद म बहुमत दल (अथवा मिला-जुला दल) चुनाव पद्धति के नियमो मे अपने हित को आगे बढाने के लिए परिवतन करते है। 1956 मे तत्कालीन प्रधानमन्त्री ने एक विधेयक पेश किया जिसका उद्देश्य छोटे निर्वाचन क्षेत्र बनाना था। उसका मत था कि मध्यम आकार वाले निर्वाचन क्षेत्रो की व्यवस्था द्वि-दलीय पद्धति के विकास को रोकती है, परन्तु विरोधी पक्ष न मन्त्रिमण्डल पर यह आरोप लगाया कि उसका वास्तविक इरादा समाजवादी शक्ति को कम करना था, चूकि समाजवादी तत्त्व बडे निर्वाचन-क्षेत्रो के पक्ष मे थे। इसी प्रकार की प्रवृत्ति उच्च सदन के सम्बन्ध म भी पायी जाती है। जबकि अनुदारवादी राष्ट्रीय निर्वाचन क्षेत्रा का उन्मूलन चाहते हैं, समाजवादी सभी स्थानो के लिए राष्ट्रीय निर्वाचन क्षेत्रा के पक्ष मे है। प्रतिनिधि सदन के सदस्यो का चुनाव चार वप की अवधि के लिए होता है, परन्तु उसकी अवधि समाप्त होने से पूव विघटन हो सकता है। ऐसा होने पर सदन के लिए चुनाव पहले ही होगे। कौसिलर सदन के सदस्यो का कायकाल छ वप है। उसके आधे सदस्या का चुनाव प्रति तीन वप पश्चात् होता है, अतएव यह एक स्थायी सदन है। सयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट व भारत की राज्य सभा के सदस्या का कायकाल भी छ वप है। परन्तु सयुक्त राज्य अमरीका व भारत म प्रति दो वप बाद 1/3 सदस्यो का चुनाव होता है।

डायट के काय और उसकी शक्तियाँ—डायट के सबसे महत्त्वपूण काय तो विधि निर्माण और बजट स्वीकार करना है। दोना के सम्बन्ध म आवश्यक प्रक्रिया अन्य अध्याय म दी गई है।

करता था, सीनेट म सभी रिक्त स्थानो को भरता था। 1948 के राष्ट्रमण्डल निर्वाचन कानून और सीनेट चुनाव कानून के अन्तगत सीनट के स्थाना को एक प्रकार के आनुपातिक प्रतिनिधित्व स भरा जाता है, और बीच म लम्बे काल के लिए खाली हुए स्थान का उस उम्मीदवार की नियुक्ति करके भरा जाता है जो गत चुनाव म हारे हुए उम्मीदवारा म सबस अधिक मत पाने वाला रहा हो। आस्ट्रेलिया की सीनेट की एक प्रमुख विशेषता यह है कि यह अन्य सघीय राज्यो के द्वितीय सदनो की अपेक्षा अधिक लोकतन्त्रात्मक है। इसक निर्वाचन म प्रत्यक वयस्क नागरिक को भाग लेने का अधिकार है और कोई भी ऐसा व्यक्ति, जो प्रतिनिधि सदन का सदस्य बनने योग्य हो, सीनेट के निर्वाचन म खडा हो सकता।

प्रतिनिधि सदन—सघीय सविधान के अनुसार प्रतिनिधि सदन क सदस्यो की सख्या जहाँ तक सम्भव हो सके सीनेट के सदस्या स दुगुनी होनी चाहिए। 1948 मे सदन के सदस्यो की सख्या 121 नियत हुई थी, जो कि 1954 म बढाकर 122 कर दी गई और उसम उत्तरी क्षेत्र व आस्ट्रेलिया के राजधानी क्षेत्र के वे सदस्य सम्मिलित नही थे जिन्ह कि मतदान का अधिकार नही है। 1922 स सदन म उत्तरी क्षेत्र का एक प्रतिनिधि रहा है और 1949 से राजधानी क्षत्र का भी एक प्रतिनिधि रहा है। इन क्षेत्रा के सदस्य वाद विवाद म भाग ल सकते हैं। परन्तु सिवाय उन कानूना या प्रस्ताव आदि क, जिनका सम्बन्ध क्रमश उनके क्षेत्रो से हो, उन्हे अन्य विधेयको या प्रस्तावा पर मतदान का अधिकार नही है। सदन म विभिन्न राज्यो का प्रतिनिधित्व उनकी सख्या के अनुपात म है। प्रतिनिधि सदन की अवधि तीन वष है, जो चुनाव के बाद प्रथम बैठक से गिनी जाती है, परन्तु गवनर-जनरल अवधि स पूव भी सदन का विघटन कर सकता है।

सविधान के सवशा 41 व राष्ट्रमण्डल निर्वाचन कानून 1918–19 द्वारा राष्ट्रमण्डल क मताधिकार को विहित किया गया है। सीनेट व सदन का प्रत्यक सदस्य ब्रिटिश नागरिक होना चाहिए। वह वयस्क हो और उसम निर्वाचक की सभी अहतायें हा तथा वह तीन वय से आस्ट्रेलिया म निवासी हो। दोना सदना के लिए मताधिकार एक ही है और उसका आधार सवव्यापी वयस्क मताधिकार है। 1925 म अनिवाय मतदान पद्धति लागू की गई। चुनाव एक-सदस्यी निर्वाचन-क्षेत्र मे होते हैं और मतदान म सरल पसन्द की पद्धति प्रयुक्त होती है। प्रत्यक राज्य का निर्वाचन क्षेत्रो म विभाजित किया जाता है और प्रत्येक क्षेत्र (विभाग) से, एक सदस्य चुना जाता है। राज्या को विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रा म विभाजन का काय तीन आयुक्तो द्वारा किया जाता है।

ससद की शक्तियाँ—आस्ट्रेलिया की ससद प्रभुत्वपूण विधायिका नही है, यह एक सघात्मक सविधान से बँधी है, जिसे ब्रिटिश पार्लियामेंट न बनाया और जो स्पष्ट रूप म इसकी शक्तियो को प्रगणित करता है तथा उनके प्रयोग के लिए प्रक्रियाआ और दशाआ को भी विहित करता है। इस प्रकार से प्रगणित शक्तियाँ राज्य विधायिकाओ म निहित हैं। राष्ट्रमण्डल व राज्या की ससदो के ऊपर सघीय उच्च न्यायालय है और कुछ मामलो मे अपीलें प्रिवी परिषद् की न्यायिक समिति मे भी जा सकती हैं, यथा शक्तियो के अधिवास और विस्तार के, सम्बन्ध म उठने वाले विवाद जिनका वह पच निणय करेगी। यदि राज्य का कोई कानून राष्ट्रमण्डल के कानून स असगत हो तो बाद का ही कानून माना जायेगा। राष्ट्रमण्डल की ससद को देश की शान्ति, व्यवस्था और सुशासन के लिए प्रगणित विषयो के बारे मे कानून बनान की शक्ति प्राप्त है।

इन विषयो म से मुख्य ये हैं—(1) व्यापार और वाणिज्य, अन्य देशा के साथ तथा विभिन्न राज्यो के बीच, (2) कर लगाना, किन्तु इस प्रकार से कि विभिन्न राज्यो या उनके भागा के बीच किसी प्रकार का भेदभाव न हो, (3) वस्तुओ के उत्पादन व निर्यात पर अधिदान (bounties), (4) ऋण लेना, (5) डाक, तार व टेलीफोन तथा अन्य समान सवाएँ, (6) नाविक तथा सैनिक प्रतिरक्षा, (7) आस्ट्रेलिया के समुद्री भाग मे मछली उद्योग, (8) मुद्रा और

की अधीनता लुप्त होना आरम्भ हो गयी। अब कठोर दलीय अनुशासन के कारण बहुसख्यक दल अपने ही मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास नही होने देता।[1] इस प्रकार जापान मे ब्रिटेन की भाँति केबिनेट का प्रभुत्व डायट पर स्थापित होने लगा है।

4 ग्रास्ट्रेलिया मे राष्ट्रमण्डलीय पार्लियामेन्ट

राष्ट्रमण्डल की ससद (पार्लियामट) के तीन ग्रग हैं—रानी, जिसका प्रतिनिधित्व गवनर-जनरल करता है, सीनेट और प्रतिनिधि-सदन। कोई भी विधेयक ससद क दोना सदना म पारित हो जाने पर गवनर-जनरल की अनुमति के लिए भेजा जाता है। अनुमति मिल जाने पर ही वह अधिनियम बनता है, कुछ विधेयको को वह रानी की अनुमति के लिए रोक रखने की विवकीय शक्ति रखता है। गवनर जनरल की अनुमति का अथ भी रानी की ही अनुमति से है, क्योकि वह उसका प्रतिनिधि है।

सीनेट—सीनेट के सदस्यो का चुनाव छ वप की अवधि के लिए होता है, जिनमे से आधे प्रति तीन वप मे पद स निवत्त होते हैं। परन्तु यदि सीनेट व प्रतिनिधि सदन के बीच मत भेद काफी लम्बे समय तक चले तो सीनेट व प्रतिनिधि-सदन दोनो को ही विघटित किया जा सकता है और ऐसी परिस्थिति म पूणतया नई सीनेट का चुनाव होगा। सीनेट के सदस्यो का पुर्ननिर्वाचन हो सकता है। 1919 तक सीनेट के सदस्यो की कुल सख्या 36 थी, परन्तु 1949 के आम चुनाव के समय से उसके सदस्या की सख्या 60 हो गयी है और अब प्रत्यक सघान्तरित राज्य से 10 प्रतिनिधि सीनेट मे आते हैं। सीनेट के चुनावो म सम्पूण राज्य से मिलकर एक निर्वाचक मण्डल बनता है। सीनेट म रिक्त स्थाना को खाली होने के एक वप के भीतर चुनाव द्वारा भरा जाता है। जब कभी सीनेट के सदस्यों की सख्या बढ या घट जाती है, तो ससद उसके स्थानो को भरने या उनके खाली होने के लिए आवश्यकतानुसार व्यवस्था करती है, जिसस चक्रगति की नियमितता न बिगडे। सीनेट के सदस्यो के चुनाव सम्बन्धी अन्य सावैधानिक उपबन्ध, सक्षेप म, अग्रलिखित हैं—(1) सदस्यो का चुनाव प्रत्यक्ष विधि द्वारा होना चाहिए। (2) उनका चुनाव इस प्रकार से हो कि प्रत्येक राज्य एक पूण इकाई के रूप मे मतदान करे, सिवाय क्विसलण्ड के जिसमे कि राज्य की ससद राज्य को विभिन्न निर्वाचन-क्षेत्रो म विभाजित कर सकती है, जब तक कि राष्ट्रमण्डल की ससद कोई दूसरी व्यवस्था न करे। (3) राष्ट्रमण्डल के मौलिक राज्यो का प्रतिनिधित्व सम रहे और किसी राज्य के सीनेट मे सदस्यो की सख्या छ से कम न हो। राज्यो का सीनेट मे प्रतिनिधित्व सम बनाये रखने के उद्देश्य से यह नियम बनाया गया है कि सीनेट का प्रधान अपना मननात्मक (deliberative) मत डाल सकता है, किन्तु निर्णायक मत नही डाल सकता।

सीनेट के लिए निर्वाचका की अहतायें वे ही है जो प्रतिनिधि सदन के लिए है। जब कभी सीनेट म कोई स्थान अवधि से पूव रिक्त हो जाता है तो उस राज्य की ससद जिसके प्रतिनिधि का स्थान रिक्त होता है, उसे भरती है, ऐसा करते समय उसकी ससद के दोनो सदन मिलकर मतदान करते हैं। इस प्रकार नियुक्त सीनेट का सदस्य अपने पद पर सीनट या प्रतिनिधि सदन के आगामी निर्वाचन तक रहता है, जबकि उत्तराधिकारी चुना जाता है। राष्ट्रमण्डल की ससद को अधिकार प्राप्त है कि वह सीनेट के सदस्यो के चुने जाने की विधि विहित करे, परन्तु यह विधि सभी राज्यो के लिए एकरूप होनी चाहिए। 1946 से पूव सीनेट के लिए मतदान विधि पसन्द पद्धति (preferential system) थी, जिसके अन्तगत वह दल जो राज्य मे बहुमत प्राप्त

[1] McNelly T *Contemporary Government of Japan* p 113

विधेयक या प्रस्ताव पर आक्रमण कर सकता है, उसके काय मे बाधा डाल सकता है और रियायत पाने के लिए दरी लगा सकता है। राष्ट्रमण्डलीय के इतिहास मे जब कभी भी सीनेट किसी धन विधेयक को सशोधन करने के विषय म सदन से की गई अपनी प्राथनाओ पर अड गई और सदन द्वारा उनके पहली बार अस्वीकृत होने पर भी उसने उन्हे दोहराया है, तो प्रतिनिधि सदन ने, इस प्रकार के हठ की साविधानिकता को न मानते हुए भी तत्कालीन अन्तग्रस्त प्रश्न को मान लिया है। 1908–09 तक द्वि दलीय पद्धति के विकास ने सविधान मे समाविष्ट इस आशा को भग कर दिया है कि सीनेट नाममात्र का राज्यो का सदन रहे।'[1]

5 कनाडा मे पार्लियामेन्ट

पार्लियामेंट की रचना—कनाडा के सघ की विधायी सत्ता पार्लियामट म निहित है, जिसके अग रानी, सीनेट और कॉमन सभा हैं। सघ के निर्माण के समय सीनेट के सदस्यो की सख्या 72 थी, जो नये प्रान्तो के जुडने के बाद अब 102 हो गई है। सीनटरो का विभिन्न प्रान्तो के विधानमण्डलो द्वारा चुनाव नही होता। उनकी नियुक्ति सपरिषद् गवनर जनरल द्वारा की जाती है और वे आजीवन सदस्य रहते हैं। क्यूबेक को छोडकर गवनर-जनरल प्रत्येक प्रान्त के प्रतिनिधि रूप म उसके निवासियो की नियुक्ति करता है। क्यूबेक ऐसा प्रान्त है जिसे सीनेट मे प्रतिनिधित्व के लिए एक इकाई नही माना जाता, प्रत्यक सीनटर उसके एक उप विभाग के लिए नियुक्त किया जाता है। परन्तु यहा पर यह बता देना उचित होगा कि यद्यपि सीनेटरो की नियुक्ति प्रान्तो का प्रतिनिधित्व करने के हेतु होती है किन्तु वे प्रान्तीय सरकार अथवा निर्वाचकमण्डल के प्रवक्ता के रूप मे काय नही करते। इस दृष्टि से वे अन्य सघीय राज्यो के सीनेटरो से भिन्न है।

सीनेटरो के लिए अग्रलिखित योग्यताएँ विहित है (1) उसकी आयु 30 वष होनी चाहिए। (2) वह या तो (अ) वहाँ का जन्मजात नागरिक हो, (आ) या देशीकृत नागरिक हो। (3) उसकी वास्तविक तथा वैयक्तिक सम्पत्ति ऋण और देनदारी काटकर 4,000 डालर से अधिक हो। (4) वह उस प्रान्त का निवासी हो जिसके लिए उसकी नियुक्ति की जाय। सीनेटर स्त्री या पुरुष कोई भी हो सकता है। अपना स्थान ग्रहण करने से पूव एक शपथ लेनी होती है। वह अपने पद पर आजीवन रह सकता है, किन्तु यदि वह चाहे तो गवनर जनरल को सम्बोधित त्यागपत्र द्वारा अपना पद छोड सकता है। उसका पद अग्रलिखित दशाओ म भी खाली हो सकता है—(अ) यदि वह पार्लियामेंट के लगातार दो सत्रो म अनुपस्थित रहे, (आ) यदि वह किसी विदेश के प्रति निष्ठा की शपथ खाये, (इ) यदि वह दिवालिया हो जाय, (ई) यदि उसे गम्भीर आरोप के लिए दण्डित किया जाय, और (उ) यदि सम्पत्ति अथवा निवास के आधार पर उसकी योग्यता का अन्त हो जाय।

1867 के ब्रिटिश नॉथ अमरीका कानून के अनुसार उसमे 181 सदस्य थे। कानून म यह भी व्यवस्था थी कि 1871 की जनगणना और प्रति दस वष बाद होने वाली जनगणना के बाद कानून के अन्तगत विहित नियमो के अनुसार चारो प्रमुख प्रान्तो के प्रतिनिधित्व म आवश्यक परिवतन किये जायें। न्यूफाउण्डलण्ड के सघ म प्रविष्ट होने पर उसके लिए सात प्रतिनिधि रखे गये। 1952 म बने कानून से पार्लियामट ने विभिन्न प्रान्तो के प्रतिनिधित्व म परिवतन किया। अब उसके सदस्यो की कुल सख्या 265 है, जो विभिन्न प्रान्तो म इस प्रकार विभाजित है आन्टरियो 85, क्यूबेक 74, नोवास्कोशिया 12, न्यूब्रन्जविक 10, मेनीटोवा 14, ब्रि० कोलम्बिया 21, प्रिंस एडवड द्वीप 4, सस्केचवान 17, अल्बर्टा 17, न्यूफाउण्डलण्ड 7, यूकिन प्रदेश 1, नॉथ

[1] Crisp L F, *The Parliamentary Government of the Commonwealth of Australia* pp 187-88

सिक्के बनाना, (9) स्टेट बैंक से अतिरिक्त बैंकिंग, (10) राजकीय बीमे से अतिरिक्त बीमा व्यवस्था, (11) नाप और तोल, (12) बाह्य मामले, (13) बुढ़ापे व रोग से अयोग्यता की पेंशन तथा अन्य सामाजिक सेवायें, (14) रेलो का निर्माण तथा किसी भी राज्य मे राज्य की सहमति से उनका विस्तार, (15) ऐसे मामले जिनके विषय मे संविधान ने व्यवस्था की है, जब तक कि संसद कोई अन्य व्यवस्था न करे, (16) राज्यो की संसदो द्वारा संघीय संसद को भेजे गये मामले, आदि। इनके अतिरिक्त संघीय संसद को अग्रलिखित मामलो के बारे मे कानून बनाने की अनन्य शक्ति प्राप्त है—(अ) राष्ट्रमण्डलीय सरकार की राजधानी और अन्य स्थान, जिन्हे राष्ट्रमण्डल ने सार्वजनिक प्रयोजन के लिए अर्जित किया हो, (आ) किसी भी सार्वजनिक सेवा के विभाग से सम्बन्धित मामले, यदि उस सार्वजनिक सेवा का नियन्त्रण संविधान द्वारा राष्ट्रमण्डलीय सरकार को हस्तान्तरित किया गया हो, और (इ) अन्य मामले, जिन्हे संविधान ने संघीय संसद की अनन्य शक्ति के भीतर घोषित किया हो। संविधान के अधीन रहते हुए, संघीय संसद प्रतिनिधि सदन के सदस्यो की सख्या को घटाने व बढ़ाने वाले कानून भी बना सकती है।

दोनो सदनो की शक्तियो मे तुलना—ऐसे विधेयक जिनका उद्देश्य कर लगाना हो या धन का किसी सार्वजनिक सेवा के लिए विनियोग हो, केवल प्रतिनिधि सदन मे ही आरम्भ हो सकते हैं, परन्तु सीनेट उन्हे अस्वीकार कर सकती है, उनमे संशोधन नही कर सकती है, यद्यपि यह उन्हे प्रतिनिधि सदन के द्वारा विचार हेतु सुझावो सहित वापिस कर सकती है और करती भी है। यदि प्रतिनिधि सदन ठीक समझे, तो वह उसमे कोई भी परिवर्तन कर सकता है। यदि सदन किसी प्रस्तावित कानून को पारित कर देता है और सीनेट उसे अस्वीकार कर देती है या ऐसे संशोधनो के बिना पास नही करती जिससे प्रतिनिधि सदन सहमत न हो और यदि तीन माह के अवकाश के बाद, प्रतिनिधि सदन उसी या अगले सत्र मे, प्रस्तावित कानून को उन संशोधनो के साथ या बिना, फिर से पास कर देता है जो कि सीनेट द्वारा किये गये हो या सुझाये गये हो या जिनसे वह सहमत हो और सीनेट उसे अस्वीकार करती है या पास नही करती या ऐसे संशोधनो के साथ पास करती है जिनसे प्रतिनिधि सदन सहमत न हो, तो गवर्नर जनरल व सदन दोनो को एक साथ विघटित कर सकता है। यदि ऐसे विघटन के बाद सदन प्रस्तावित कानून को उन संशोधनो के साथ या बिना, जो कि सीनेट द्वारा किये गये हो, या सुझाये गये हो या जिनसे सीनेट सहमति प्रकट कर चुकी हो और सीनेट उसे अस्वीकार कर दे या पास न करे या ऐसे संशोधनो के साथ पास करे, जिनसे सदन सहमत न हो, तो गवर्नर जनरल दोनो सदनो की संयुक्त बैठक बुला सकता है। उस बैठक मे उपस्थित सदस्य उस विधेयक के उस रूप पर जिसे कि सदन ने अन्तिम बार प्रस्तावित किया हो, विचार करेंगे और मतदान करेंगे। यदि प्रस्तावित कानून पूर्ण बहुमत द्वारा पास हो जाये तो उसे संसद द्वारा पास समझा जायगा।

सीनेट संघान्तरित राज्यो की प्रभुता की द्योतक नही है। ब्राइस का कथन है—'सीनेट से जो आशा की जाती थी वह पूरी नही हुई। उसने संघान्तरित राज्यो के हितो की रक्षा नही की है, क्योकि उन हितो के बारे मे कोई प्रश्न ही नही उठा , न सीनेट ज्ञानी व्यक्तियो का ही सदन रहा, क्योकि कुशल राजनीतिज्ञ प्रतिनिधि सदन मे चले जाते है जहाँ संघर्ष के बाद मन्त्रि पद मिलता है। वैदेशिक नीति या उच्च पदाधिकारियो की नियुक्ति पर नियन्त्रण जैसा कोई विशेष कार्य का अधिकार प्राप्त न होने के कारण, जिनसे संयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट को कुछ शक्ति प्राप्त है, आस्ट्रेलिया की सीनेट प्रतिनिधि सदन की एक निम्न श्रेणी की प्रतिलिपि-मात्र है।[1] इस विषय मे क्रिप्स ने लिखा है—सीनेट का बहुमत ऐसी स्थिति मे है कि वह सरकार के प्रत्येक

[1] Bryce J *Modern Democracies* Vol II p 204

श्रीलका पर पडे, और (व) सविधान आदेश वापस लेने, उसम कोई प्राविधान जोडने, उसे निलम्वित अथवा सशोधित करने की शक्ति का स्वत न्त्रता परिषद् आदेश के लागू होने पर अन्त हो गया। इसके आगे, 1946 के सविधान परिषद् आदेश म सशोधन करने वाला कोई भी विधेयक शाही अनुमति के लिए तब तक नही भेजा जा सकता जब तक कि उसे प्रतिनिधि सदन की कुल सदस्य सख्या 2/3 ने पास न किया हो। इन सामा य सीमाओ तथा विधायी व वित्तीय प्रक्रिया सम्ब धी अ य सीमाओ के अधीन श्रीलका की पार्लियामे ट सभी प्रकार के कानून बना सकती है।[1]

वित्तीय—श्रीलका की पार्लियामे ट का राष्ट्रीय निधि पर निय त्रण है, परन्तु यह निय त्रण मुख्यत प्रतिनिधि सदन द्वारा ही प्रयुक्त होता है। वतमान वित्तीय पद्धति का आधार (Consolid ated Fund) है। सविधान आदश के सक्शन 66 मे लिखा है (1) द्वीप की सभी निधियाँ, जि हे कानून द्वारा किसी विशेप प्रयोजन के लिए निर्धारित न किया हो, मिलकर एक सचित निधि बनायेंगी जिसम सभी करो, महसूलो तथा अ य स्रोतो से होने वाली आय एकत्रित होगी। (2) सावजनिक ऋण पर सूद, ऋण चुकाने के लिए रखा धन (Sinking Fund payments), सचित निधि का धन इकटठा करने और उसका प्रब ध करने सम्ब धी व्यय तथा ऐसा व्यय जो पार्लियामे ट निर्धारित करे सचित निधि पर भारित होगे। अ य विभिन्न सक्शना के अ तगत अग्रलिखित सेवाओ पर व्यय भी सचित निधि पर भारित है—(1) गवनर जनरल या शासन करने वाले अधिकारी (Officer Administering the Government) का वेतन, (2) सर्वोच्च यायालय के यायधीशा का वेतन, (3) लोक सेवा आयोग के सदस्यो का वेतन (4) महालेखा परीक्षक का वेतन, और (5) कुछ श्रेणियो के सरकारी सेवको को दी जाने वाली पेंशनें व अनुग्रहधन (gratuities)।

सचित निधि म कोई भी धनराशि वित्त म त्री के हस्ताक्षर से जारी किय गये वार ट के द्वारा ही निकाली जा सकती है। पर तु ऐसा वार ट तब तक जारी नही किया जा सकता जब तक उस उद्देश्य के लिए चालू वित्तीय वप म प्रतिनिधि सदन के सकल्प (resolution) द्वारा उस हेतु व्यय की स्वीकृति न ली गई हो अथवा वह व्यय सचित निधि पर भारित न हो। जब कभी गवर्नर जनरल पार्लियामे ट को उस वप के विनियोग विधेयक (Appropriation Bill) पर शाही अनुमति मिलन से पूव विघटित कर दे, तो वह सचित निधि स नये प्रतिनिधि सदन को आहूत की जाने वाली तारीख से तीन माह बाद तक के लिए व्यय हेतु धन निकालने का अधिकार दे सकता है। सक्षेप म, कर लगाने तथा व्यय सम्ब धी सभी प्रस्तावो पर पार्लियामे ट की स्वीकृति आवश्यक है। सैक्शन 68 के अ तगत अविलम्ब व अदृश्य व्यय के व्यवस्था करने क उद्देश्य से पार्लियामे ट 'आकस्मिक निधि' की रचना कर सकती है।

प्रशासनिक—इस क्षेत्र म सबसे महत्वपूण शक्ति कायपालिका पर निय त्रण की है। सविधान न म त्रिमण्डल को पार्लियामे ट के प्रति उत्तरदायी बनाया है। कोई भी म त्रिमण्डल प्रतिनिधि सदन के बहुमत के समथन बिना नही चल सकता। यदि सदन म त्रिमण्डल के विरुद्ध अविश्वास अथवा नि दा का प्रस्ताव (vote of censure) पास कर दे तो म त्रिमण्डल को त्याग पत्र देना पडेगा। म त्रिमण्डल को तब भी त्याग-पत्र देना पडता है जबकि उसके द्वारा पेश किया गया विधेयक पारित न हो या ऐसा विधेयक अथवा प्रस्ताव पारित हो जाय जिसका म त्रि

1 It should be observed that the Ceylon Independence Act confers the same powers and has the same significance as the relevant portions of the Statute of West Minister and the Indian Independence Act 1947 inspite of minor differences in phraseology between the three Acts. —Namasivayam S *The Legislatures of Ceylon* pp 149-50

वेस्ट प्रदेश का मेके जी जिला 1।

पार्लियामेंट की शक्तिया और उसके काय—साधारण रूप मे पार्लियामेंट की विधायी शक्तियो को ब्रिटिश नॉथ अमरीका कानून, 1867 के सक्शन 9 म परिभाषित किया गया है। पार्लियामेंट एसे सभी विषयो पर, जि ह अ य रूप से प्रा तीय विधानमण्डलो को न सौंपा गया हो, शा ति-व्यवस्था और कनाडा के अच्छे शासन के लिए कानून बना सकती है। पार्लियामेंट की अनन्य विधायी शक्तिया मे इन विषयो को स्पष्ट रूप से सम्मिलित किया गया है—कनाडा के सविधान मे सशोधन, उन विषयो को छोडकर जो प्रा तीय विधानमण्डलो के अधिकार क्षेत्र म आते हैं, जो ये है सावजनिक ऋण और सम्पत्ति, व्यापार और वाणिज्य का विनिमय, बेकारी का बीमा, कर लगाना, ऋण लेना, डाक सेवा, जनगणना और आँकडे, सावजनिक अधिकारिया के वेतन व भत्ते आदि नियत करना और उसके लिए व्यवस्था करना, ब किंग, नाप और तोल, कानूनी मुद्रा, पटेण्ट और कापीराइट, इण्डियन और उनके लिए आरक्षित भूमि, देशीकरण और विदेशी, विवाह और तलाक, फौजदारी कानून और न्यायालय। इनके अतिरिक्त सेक्शन 95 के अ तगत पार्लियामेंट कृषि और आप्रवास के लिए भी कानून बना सकती है। वास्तव मे ये विषय सघ व प्रा तो के समवर्ती अधिकार क्षेत्र म आते है, परन्तु यदि प्रा तीय और सघीय कानून म विरोध हो तो सघीय कानून ही लागू होता है।

16 दिसम्बर 1949 को ब्रिटिश पार्लियामट ने कनाडा की पार्लियामेंट का सविधान म सशोधन का अधिकार दे दिया कि तु अग्रलिखित अपवादो के अधीन (1) वे मामले जो 1867 के कानून स अन य रूप म प्रा तीय विधानमण्डलो को सोपे गये ह, (2) किसी प्रा तीय विधानमण्डल को 1867 के कानून अथवा अ य किसी सावैधानिक कानून द्वारा प्रदान किये गये अधिकार या विशेषाधिकार, (3) स्कूलो के बारे मे किसी भी वग के व्यक्तियो को प्रदान किये गये अधिकार और विशेषाधिकार, (4) अग्रेजी व फ्रासीसी भाषाओ का प्रयोग, और (5) पार्लियामट का वष मे कम से कम एक सत्र होगा और कामन सभा की अवधि पाँच वष रहेगी, किन्तु युद्ध अथवा उसके भय आक्रमण या विद्रोह की स्थिति मे पार्लियामट अपनी अवधि जारी रख सकेगी यदि इस तरह के प्रस्ताव को सदन के 2/3 सदस्य अपनी सहमति प्रकट करें। इस वणन से पार्लियामेंट की ये शक्तिया स्पष्ट हो जाती है—(अ) अनेक विषया पर विधि निर्माण, (आ) वजट तयार करना, कर व महसूल आदि लगाना तथा सरकारी विभागो के लिए व्यय की स्वीकृति दना, (इ) म न्त्रिमण्डल पर निय त्रण, तथा (ई) सविधान का सशोधन।

कामन सभा व सीनेट की सापेक्ष शक्तियाँ—कनाडा की सीनेट सयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट की भाँति प्रा तो का प्रतिनिधित्व नही करती। केबिनेट म सीनेट स बहुत ही कम म त्री लिए जाते है। यद्यपि ब्रिटिश नॉथ अमरीका कानून ने सीनेट का कॉमन सभा के बराबर ही शक्ति प्रदान की है फिर भी यथाथ म यह किसी विधेयक के पास होने म केवल दरी कर सकती है। साधारणतया यह अपनी प्रतिषेध शक्ति का प्रयोग नही करती। अ य समान सविधान वाले राज्या के द्वितीय सदना के विपरीत कनाडा की सीनेट को धन विधेयका म भी सशोधन करन की शक्ति प्राप्त है। पर तु लाड सभा की भाँति सीनेट का सबसे अधिक उपयोगी काय कॉमन सभा से पारित होकर आये विधेयका को दोहराना व सशोधित करना है। इसकी स्थायी तथा विशेष समितियाँ छानबीन का मूल्यवान काय भी करती हैं। धन विधेयका के सम्ब ध मे प्राविधान यह है कि वे कामन सभा म ही आरम्भ हो सकते हैं, कि तु इसस सीनेट की शक्ति पर कोई प्रभाव नही पडता, क्योकि गवनर जनरल के पास भेजे जान से पूव विधेयक दोनो ही सदना म पारित होना चाहिए। इस प्रकार प्राय सभी विधेयको के बारे म दोनो सदना की शक्तियाँ बराबर हैं। सविधान म दोना के बीच उत्पन्न मतभेद को दूर करने सम्ब धी कोई प्राविधान नही है। एस अवसर आय हैं जब

ग्यारहवाँ अध्याय

अन्य राज्यो मे विधायिकाएँ

1 सयुक्त राज्य अमरीका मे काग्रेस

सयुक्त राज्य अमरीका की विधायिका दो सदन वाली है। निचला आगार प्रतिनिधि सदन (House of Representatives) कहलाता है और ऊपर वाला आगार सीनेट (Senate) कहलाता है। प्रतिनिधि-सदन की रचना का आधार जनसख्या है, जबकि सीनेट विभिन्न सघा तरित राज्यो का प्रतिनिधित्व करती है। काग्रेस की रचना के विषय मे सविधान मे य उपब ध दिये गय है— मौलिक सविधान म कहा गया है कि प्रतिनिधि सदन के सदस्यो का चुनाव विभिन्न राज्या की जनता द्वारा किया जायेगा।' सविधान का सत्तरहवाँ सशोधन, जा 1913 मे पारित हुआ, यही व्यवस्था करता है कि सीनेट के सदस्या का चुनाव भी जनता द्वारा हो, जबकि मौलिक सविधान मे उनका चुनाव राज्यो की विधायिकाओ द्वारा की जाने की व्यवस्था थी। सविधान मे यह भी उपब ध है कि सीनेट के 1/3 सदस्य प्रति दो वष बाद से निवृत्त हो। इस उपब ध के अ तगत एसी व्यवस्था की गयी है कि छ वष के प्रति दो वष बाद होन वाल तीन चुनावो म से दो म एक एक सीनटर का चुनाव हो। प्रतिनिधि सदन के बारे म यह उपब ध भी दिया गया है कि प्रति निधियो की कुल सख्या को विभिन्न राज्यो म जनसख्या के आधार पर बाटा जाय। सविधान मे प्रतिनिधि सदन के सदस्यो की कुल सख्या भी नियत नही की है, किन्तु 1910 से यह सख्या 435 चली आ रही है। चुनावो की व्यवस्था के बारे म सबसे महत्त्वपूण उपब ध धारा 1 सक्शन 4 म इस प्रकार है प्रतिनिधियो और सीनटरो के चुनाव के समय, स्थान और विधि प्रत्यक राज्य म उसकी विधायिका द्वारा विहित किये जायेंगे, पर तु काग्रेस इस सम्ब ध म बने विनियमो को कानून द्वारा बदल सकती है अथवा उनके सम्ब ध म विनियम बना सकती है। इसी के आधार पर चुनावो का सचालन राज्यो द्वारा किया जाता है। अ त म, सविधान की धारा 1 के सक्शन 5 म लिखा है 'प्रत्यक सदन चुनावो, उनके परिणामो और अपन सदस्यो की योग्यता का निणय करेगा।'

सीनेट की रचना—प्रत्येक राज्य स सीनट म दो सदस्य चुनकर आत हैं, चाह राज्य की जनसख्या कितनी भी हो। इस समय कुल सीनटर 100 हैं। फलत नवादा और न्यूयाक के दो दो प्रतिनिधि सीनेट म है, यद्यपि उनकी जनसख्या क्रमश 1 लाख 60 हजार और 1 करोड 50 लाख है। इसी आधार पर कुछ लखको के मतानुसार सीनेट म सम प्रतिनिधित्व नही है, क्योकि प्रतिनिधित्व का आधार भौगोलिक इकाई न होकर जनसख्या होनी चाहिए। परन्तु यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि यह उपब ध छोटे राज्यो को आश्वासन रूप म रखा गया था, वस भी जनसख्या क आधार पर प्रतिनिधि सदन के सदस्य चुन जाते हैं। सीनटरो की अहताओ के विषय म सविधान म कहा गया है कि उनकी आयु 30 वष म कम नही होनी चाहिए। सीनटर

मण्डल ने विरोध किया हो। परन्तु ऐसी स्थिति उत्पन्न होने की दशा मे प्रधानमन्त्री गवनर-जनरल को प्रतिनिधि सदन विघटित करने का परामश दे सकता है। मन्त्रिमण्डल और प्रशासन पर प्रतिनिधि सदन दिन प्रतिदिन के नियन्त्रण का अय देशो मे प्रचलित सामाय तरीको द्वारा प्रयोग करता है यथा प्रश्नोत्तर, काम रोको प्रस्ताव, मन्त्रियो के वेतन मे कटौती का प्रस्ताव आदि।

अय—अपने सभापतियो का चुनाव करन के अतिरिक्त प्रतिनिधि सदन सीनेट के 15 सदस्यो का चुनाव करता है। प्रतिनिधि-सदन ही सविधान म 2/3 के बहुमत से सशोधन कर सकता है।

दोनो सदनों की सापेक्ष शक्तियां—प्रतिनिधि सदन की शक्तियां दूसरे सदन से अधिक है, क्योकि वह लोकप्रिय सदन है। धन विधेयको को छोडकर अय कोई विधेयक किसी भी सदन म आरम्भ हो सकता है, परन्तु धन विधेयक केवल प्रतिनिधि सदन म ही पेश किया जा सकता है। कोई भी विधेयक तब तक पास नही समझा जाता जब कि वह एक ही रूप मे दानो सदनो द्वारा पास न किया गया हो। यदि कोई ऐसा विधेयक, जो धन विधेयक न हो, प्रतिनिधि सदन के दो लगातार सत्रो (उसी पार्लियामेन्ट अथवा चालू और बाद की पार्लियामेन्ट) मे पारित हो गया हो और (अ) प्रथम सत्र के अन्त से एक माह पूव सीनेट म भेज दिये जाने पर सीनेट द्वारा उस सत्र मे पारित न किया गया हो, और (ब) दूसरे सत्र मे सीनेट म भेजे जाने पर उसके भेजने की तिथि से एक माह अथवा उस सत्र के आरम्भ से छ माह के भीतर (जो भी बाद म हो) सीनेट द्वारा पास न किया जाय, तो वह विधेयक बावजूद इसके कि सीनेट ने उसे पास नही किया, गवनर जनरल के पास अनुमति के लिए भेजा जायेगा और शाही अनुमति मिलने पर पार्लियामेन्ट के कानून के रूप मे ही प्रभावी होगा।

धन विधेयको के सम्बन्ध मे सैक्शन 33 म कहा गया है (1) यदि कोई धन विधेयक प्रतिनिधि-सदन म पारित हो जाने पर सत्र के अन्त होने से कम से कम एक माह पूव सीनेट उसे भेजने की तिथि से एक माह के भीतर पारित न करे तो वह विधेयक बावजूद इसके कि सीनेट ने उसे पारित नही किया, सीनेट द्वारा किये गये सशोधनो सहित अथवा रहित जिन्हे सदन ने स्वीकार कर लिया हो, गवनर जनरल के पास भेजा जायगा और उस पर शाही अनुमति मिल जाने पर वह पार्लियामेन्ट के कानून के रूप मे प्रभावी होगा। (2) प्रत्येक धन विधेयक पर सीनेट मे भेजे जाने से पूव ही सदन के अध्यक्ष का प्रमाण पत्र आवश्यक है कि वह धन विधेयक है। अपना प्रमाण पत्र देने मे पूव अध्यक्ष एटॉर्नी जनरल से मन्त्रणा करेगा।

उपर्युक्त प्राविधानो स ही स्पष्ट है कि प्रतिनिधि सदन की शक्तियाँ धन तथा अन्य विधेयको के सम्बन्ध म सीनेट से अधिक है। यहाँ पर यह भी कहना उचित होगा कि मन्त्रिमण्डल यथाथ मे प्रतिनिधि सदन के ही प्रति उत्तरदायी है। इसके अतिरिक्त सविधान म सशोधन करने की शक्ति केवल प्रतिनिधि सदन को ही प्राप्त है। अन्त म, प्रतिनिधि सदन 15 सीनेटरो का भी चुनाव करता है और अधिकतर मन्त्री भी प्रतिनिधि सदन के सदस्य होते हैं। लोकसदन की सर्वोपरिता ब्रिटेन व भारत मे प्रचलित प्रथा के अनुसार ही है। यह उचित ही है कि सीनेट की शक्तियाँ सीमित रह, जिससे कि वह लोकसदन की प्रतिद्वन्द्वी न बने। सीनेट की रचना का प्रयोजन (अ) विधायी प्रस्तावो को दोहराना, (ब) जल्दबाजी मे पास हुए विधेयको पर रोक लगाना और (स) कानूनो के पास होने मे कुछ देरी लगाना है।

हैं—(1) बैंक और अन्य कार्पोरेशन स्थापित करना, जो कर लगाने, ऋण लेने और वाणिज्य करने की शक्तियां म निहित हैं। (2) मार्गों, स्कूलो और स्वास्थ्य व बीम आदि पर व्यय करना, जो डाक माग स्थापित करने तथा सामान्य कल्याण के लिए व्यवस्था करने की शक्तियो मे निहित हैं। (3) कृषि म सहायता देना तथा उस विनियमित करना, जो कर लगान, वाणिज्य को विनियमित करने तथा सामान्य कल्याण के लिए व्यय करने की शक्तिया मे निहित है। (4) सैनिक और नाविक शिक्षालय खोलना, जो सेना व नाविक सेना के रखने की शक्तियो म निहित हैं।

समवर्ती शक्तियां वे शक्तियां हैं जिनका प्रयोग कांग्रेस और राज्यो की विधायिकाएं साथ-साथ करती है। इनम प्रमुख ये हैं—कर लगाना, ऋण लेना, बैंको तथा अन्य कार्पोरेशनो को चार्टर देना, न्यायालय स्थापित करना, कानून बनाना और लागू करना (अपने अपने क्षेत्र म), सावजनिक प्रयोजनो के लिए सम्पत्ति लेना, सामान्य कल्याण के लिए व्यय की व्यवस्था करना। इन शक्तिया के प्रगणन के साथ साथ यहाँ यह भी बताना आवश्यक है कि कांग्रेस को अग्रलिखित शक्तियो के प्रयोग की मनाही की गयी है—(1) निर्यात पर कर लगाना, (2) राज्यो की जनसख्या के अनुपात के अतिरिक्त प्रत्यक्ष कर लगाना, (3) एकरूपता के आधार के अतिरिक्त अप्रत्यक्ष कर लगाना, (4) अधिकार पत्र म दी गई प्रतिभूतियो को कम करना, (5) वाणिज्य के क्षेत्र स एक राज्य को दूसरे के ऊपर कोई विशेष सुविधा (preference) देना, (6) सम्बंधित राज्यो की सहमति के बिना राज्यो की सीमाओ मे परिवतन करना, (7) नय राज्यो को मौलिक राज्यो के समान पद देना, (8) दासता की आज्ञा देना, और (9) उपाधियां (titles of nobility) प्रदान करना।

यहाँ यह भी स्मरणीय है कि सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान सघात्मक है, अतएव सविधान द्वारा कांग्रेस और राज्यो की विधायिकाओ के बीच शक्तिया का वितरण किया गया है। दूसरे अर्थों म, कांग्रेस और राज्य की विधायिकाएँ केवल अपन अपने क्षेत्र म सर्वोपरि हैं। वास्तव म, सविधान की सर्वोपरिता है, जिसकी रक्षा सघीय न्यायालयो द्वारा की जाती है।[1] दूसरे शब्दो म, अमरीकी कांग्रेस की स्थिति भारतीय ससद जैसी है और यह ब्रिटिश पार्लियामट से भिन्न है। ऊपर वर्णित शक्तियो के आधार पर कांग्रेस सघ सरकार की नीति निर्धारित करती है। कांग्रेस को सयुक्त राज्य अमरीका के सघीय शासन के सुचारु सचालन के हेतु कर लगाने व ऋण देन की शक्तियां प्राप्त हैं। कांग्रेस ही प्रशासन को कर लगान का अधिकार देती है और सभी प्रकार के प्रशासन व्यय की स्वीकृति देता है। कांग्रेस राज्यो को विभिन्न कार्यों के लिए अनुदान रूप मे सहायता देती है तथा सयुक्त राज्य अमरीका के मित्र देशो व अविकसित देशो के विकास म आर्थिक सहायता के लिए अनुदान व ऋण स्वीकार करती है। सघ शासन की आय तथा व्यय की स्वीकृति के लिए कांग्रेस प्रतिवर्ष बजट स्वीकार करती है। बजट प्रक्रिया का वर्णन इस विषय से सम्बंधित अध्याय मे दिया गया है। वित्तीय शक्तियों द्वारा ही कांग्रेस राष्ट्रीय कोष पर अपना नियत्रण रखती है।

कांग्रेस को राष्ट्रपति तथा सघीय न्यायालय के न्यायाधीशो के विरुद्ध महाभियोग की कार्यवाही करने तथा उन्ह उसके परिणामस्वरूप पद स हटाने की शक्ति प्राप्त है। महाभियोग की कार्यवाही प्रतिनिधि सदन द्वारा आरम्भ की जाती है और सीनेट उसकी सुनवाई करके निर्णय करती है। जब महाभियोग की कार्यवाही राष्ट्रपति के विरुद्ध की जाती है और उसकी सुनवाई

[1] Congress is not only shut off from many fields of action, but the powers that are left can only be exercised in many cases under a constitution that leaves the last word to the Supreme Court Brogan D W, *The American Political System*, p 138

जिस राज्य के लिए चुना जाये उसी का निवासी होना चाहिए और कम से कम नौ वष की अवधि से सयुक्त राज्य का नागरिक होना चाहिए। इनके अतिरिक्त सीनेट ने ऐसा नियम बनाया है कि यदि कोई सीनेटर एक नियत सीमा से अधिक धन चुनाव म खच करता है तो सीनेट उसे अपना स्थान ग्रहण करने से वचित कर देगी। 1913 के सत्तरहवें सशोधन के अतगत सीनेटर उन्ही मतदाताओ द्वारा चुने जाते हैं जो राज्य विधायिका के बडी सख्या वाले सदन को चुनते है। इस प्रकार के *सीनेटरो का प्रत्यक्ष चुनाव होता है और उसका आधार लोकप्रिय है। सीनेटरो का* कायकाल 6 वष है, परन्तु सीनेटर बहुधा फिर स दूसरी तीसरी वार चुने जाते है। साधारणतया सीनेटर 12, 18 या 24 वष तक सीनेट के सदस्य रहते है। 1/3 सदस्या का चुनाव प्रति दो वष म होता है, इस प्रकार सीनेट एक स्थायी सदन है।

प्रतिनिधि सदन की रचना—सदन के सदस्या की कुल सख्या 435 है। प्रत्यक राज्य के प्रतिनिधियो की सख्या राज्य की जनसख्या के अनुपात मे है। प्रति 10 वष बाद होने वाली जनगणना क आधार पर कुल सख्या को विभिन्न राज्या मे बाँट दिया जाता है। इसक निर्वाचन क्षेत्रो का निर्माण राज्यो की विधायिकाए करती है और ऐसा करते समय प्रभुत्वशाली दल यह प्रयत्न करता है कि निर्वाचन क्षेत्र इस प्रकार बनाये जाएँ कि उस दल के अधिक से अधिक सदस्य चुने जा सक। इस अवाछनीय प्रथा को जेरीमेडरिंग (Gerrymandering) कहते है क्योकि इसका आरम्भ करने वाला जैरी नाम का गवनर था। इसके अनुसार निर्वाचन क्षेत्रो की सीमाए इस प्रकार निर्धारित की जाती है कि बहुमत दल के समथको को अधिक से अधिक निर्वाचन क्षेत्रो मे रखा जाय जिसस उन्हे भावी चुनावा म अधिक स्थान प्राप्त हो सके। इसके विपरीत विरोधी दल के समथको को कुछ थोडे से निर्वाचन-क्षेत्रा म केन्द्रीभूत कर दिया जाता है। बीयड के अनुसार इस प्रथा के परिणामस्वरूप विचित्र राजनीतिक भूगोल की रचना होती है। उदाहरण के लिए, जूते क फीते जसा निर्वाचन क्षेत्र जो एक दक्षिणी राज्य क लम्बे प्रदेश म फैला हुआ था और काठी के थैले (saddle bag) जैसा निर्वाचन क्षेत्र जो इलिनोइस राज्य म था इस प्रथा के कारण प्रतिनिधि सदन निर्वाचन के समय व्यक्त मतो का सही रूप म प्रतिनिधित्व नही कर पाता।

प्रतिनिधि म अग्रलिखित अहतायें होनी आवश्यक हैं (1) वह सयुक्त राज्य का कम से कम सात वष की अवधि का नागरिक हो, (2) कम से कम उसकी आयु 25 वष हो, और (3) उसी राज्य का रहन वाला हो जिसके द्वारा वह चुना जाय। इनके अतिरिक्त वह सघ सरकार का सनिक अथवा नागरिक अधिकारी नही होना चाहिए। प्राय सभी राज्यो ने यह नियम भी बनाया है कि राज्य सरकार के अधिकारी भी सघीय सरकार म कोई उत्तरदायी स्थान न ग्रहण करे। प्रत्येक सदन दो वष के लिए चुना जाता है। यह काय काल इतना कम है कि इस व्यवस्था की व्यापक आलोचना की गयी है। एक वष म तो सदस्य को सदन के काय और कायवाही का कुछ ज्ञान व अनुभव हो पाता है और अगले ही वष उसे नये चुनाव की तयारी करनी पड जाती है।

काग्रेस की शक्तिया और उसके काय—काग्रेस की शक्तिया और उसके कार्यो को एक आधार पर हम दो समूहो मे रख सकते हैं—प्रथम, विधायी और अन्य। सविधान ने काग्रेस को ये शक्तियाँ स्पष्ट रूप से प्रदान की हैं—कर लगाना, ऋण लेना और सिक्के बनाना, डाकखाने और डाक माग स्थापित करना, पेटे ट और कापीराइट देना, अन्तर्राज्यिक और वैदेशिक वाणिज्य को विनियमित करना, अधीन सघीय न्यायालय स्थापित करना स्थल-सना व जल सना रखना, प्रदशा और सम्पत्ति का शासन करना, नाप और तोल आदि के स्तर नियत करना, वदशिक सम्बन्धो का सचालन और युद्ध की घोषणा आदि। स्पष्ट रूप स प्रदान की गयी शक्तिया क अतिरिक्त काग्रेस को बहुत सी निहित शक्तियाँ भी प्राप्त हो गयी हैं जिनम से मुख्य अग्रलिखित

आगारो म सबस शक्तिशाली सदन कहलाता है।

सीनेट क शक्तिशाली होन क प्रमुख कारणा का सक्षिप्त विवचन इस प्रकार है—(1) सीनट एक स्थायी सदन है वास्तव म राष्ट्रपति, उसकी केबिनट और प्रतिनिधि सदन आदि सभी का कायकाल नियत है, सीनट एक ही स्थायी निकाय है। इसके 1/3 सदस्य प्रति दो वप म पद स निवत होते है। इस कारण से सीनट को विशेप प्रतिष्ठा प्राप्त हो गई है। (2) इसके सदस्यों का कायकाल छ वप है, जबकि प्रतिनिधि सदन के सदस्य दो वप के लिए चुने जात हैं। सीनट क अधिकतर सदस्य दो तीन अवधियो तक रहते हैं। अतएव उनका सावजनिक जीवन और शासन क क्षेत्रो म बडा सम्मानित स्थान रहता है। व राजनीति म विशप रूप से योग्य और अनुभवी भी होते हैं। (3) सीनट का आकार बहुत छोटा है, इसका प्रत्यक सदस्य सख्या की दृष्टि स प्रति निधि की अपक्षा चार गुनी जनता का प्रतिनिधि होता है और उसका भी चुनाव प्रत्यक्ष रूप स होता है। इसी कारण सीनेट के सदस्य साधारणतया दो-तीन समितियो क सदस्य रहत हैं जबकि सदन का सदस्य एक ही समिति मे रहता है। सम्मलन तथा सयुक्त समितियो म भी सीनेटर के मत का मान सदन के सदस्या की अपेक्षा अधिक होता है। (4) सीनेट मे भाषण की पूण स्वतन्त्रता है और बहुमत के प्रभुत्व के स्थान पर सीनट म अल्पमत की अभिव्यक्ति के लिए व्यापक अवसर रहता है। यह सब कुछ इसलिए सम्भव है कि सीनेट का आकार बहुत छोटा है, यह एक प्रकार से क्लब जैसा है जहाँ कायवाही का सचालन दलीय आधार पर नही होता। (5) सीनटर अपने को राज्य का दूत समझते थे और उन्ह ऐसा समझा भी जाता था। उनका अधिक लम्बा काय काल और यह तथ्य कि सीनेट एक स्थायी सदन है, आदि बाता ने भी उसका महत्त्व बढान मे योग दिया है। इसके अतिरिक्त प्रत्यक्ष चुनाव की व्यवस्था हो जान से यह दोप भी दूर हो गया है कि सीनेट प्रजातन्त्रात्मक सदन नही है।

रचना के अतिरिक्त सीनट की शक्तियाँ यथाथ मे भी प्रतिनिधि सदन स अधिक महत्त्वपूण हैं। ब्रिटेन, भारत तथा अन्य देशो मे उच्च सदन की शक्तियां लोकप्रिय सदन की तुलना म बहुत ही सीमित हैं, किन्तु सयुक्त राज्य अमरीका म सीनेट की शक्तियाँ सावैधानिक दृष्टि से प्रतिनिधि सदन के बराबर, परन्तु व्यवहार म अधिक विस्तृत और वास्तविक है। प्रथम, सीनेट ही एक ऐसा द्वितीय सदन है जिसे वित्तीय क्षेत्र मे भी प्रतिनिधि सदन के प्राय बराबर शक्तियाँ प्राप्त हैं। यह वित्तीय विधेयको म सभी प्रकार क सशोधन कर सकती है। द्वितीय, यह सघ के उच्च अधिकारियो की नियुक्ति मे महत्त्वपूण भाग लेती है। इसी कारण इसका कायपालिका और प्रशासन के क्षेत्र म सदन की अपेक्षा कही अधिक प्रभाव है। तृतीय यह सन्धियो की स्वीकृति म भी महत्त्वपूण भाग लेती हैं, जिस कारण से इसका वैदेशिक मामलो के क्षेत्र म भी व्यापक प्रभाव रहता है। इसकी शक्तियो और प्रभाव का वणन एक लखक ने इस प्रकार किया है—कायपालिका म राजनीतिक शक्तिया के धारण करन वालो और विधायिका की एक शाखा क बीच म एक प्रकार की विभिन्न साझेदारी है, सीनेट नियुक्तियो के सम्बन्ध मे किसी क नाम का सुझाव तो नही दे सकती, किन्तु राष्ट्रपति द्वारा नामजद व्यक्ति के नाम को अस्वीकार कर सकती है। दूसर, लखक के अनुसार 'कुछ ऐसी बातें है जिन्ह राष्ट्रपति और सीनेट प्रतिनिधि सदन की सम्मति के बिना कर सकते है, किन्तु वे बाते अपक्षाकृत बहुत कम हैं जिन्ह राष्ट्रपति और प्रतिनिधि सदन बिना सीनेट की सम्मति के कर सकते है।' अतएव सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रीय शासन म सीनेट का स्थान केन्द्रीय तथा प्रमुख है। सीनट एक ओर प्रतिनिधि सदन की प्रजातन्त्रात्मक स्वच्छन्दता और दूसरी ओर राष्ट्रपति की राजात्मक आकाक्षाओ पर रोक लगाती है।

जबकि सयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट ससार के द्वितीय सदनो म सबस अधिक शक्ति शाली है, वहा का प्रतिनिधि सदन अन्य देशा के लोकप्रिय सदनो की अपेक्षा बहुत निबल है।

सीनेट करती है, उस समय सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति उसका अध्यक्ष रहता है। जिसके विरुद्ध महाभियोग की कार्यवाही की जाती है, उस अधिकारी को उपस्थित होने और अपने बचाव मे गवाही पेश करने का अधिकार है। किसी अधिकारी को दण्डित करने के लिए सीनेट म निणय 2/3 के बहुमत से होना आवश्यक है। अब तक बारह महाभियोग के मुकदमे चले है, जिनम नौ न्यायाधीशो के विरुद्ध थे, और उनमे स चार को दण्ड दिया गया। सविधान मे यह व्यवस्था है कि राष्ट्रपति पद के किसी भी उम्मीदवार को निर्वाचकों का बहुमत प्राप्त न हो तो प्रतिनिधि सदन सबसे अधिक मत पाने वाले तीन उम्मीदवारो म से किसी एक को राष्ट्रपति चुनेगा। अब तक ऐसे दो अवसर आये हैं। राष्ट्रपति का चुनाव करते समय प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधियो का केवल एक मत होता है। इसी प्रकार यदि उप राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारा मे से किसी को भी निर्वाचका के मता का बहुमत प्राप्त न हो तो सीनेट सबसे अधिक मत पाने वाले दो उम्मीदवारो मे स एक को उप राष्ट्रपति चुनेगी। सविधान मे सशोधन का प्रस्ताव काग्रेस के दोनो सदनो मे 2/3 के बहुमत से पास होना चाहिए। प्रस्तावित सशोधनो की सम्पुष्टि 3/4 राज्यो की विधायिकाओ अथवा उनके सम्मेलनो द्वारा होनी आवश्यक है। इस प्रकार काग्रेस को सविधान म सशोधन प्रस्ताव रखने का अधिकार प्राप्त है, उसकी सम्पुष्टि काग्रेस स्वय नहीं कर सकती।

सयुक्त राज्य अमरीका के प्रशासन के सभी प्रमुख प्रशासनिक विभागो की रचना समय-समय पर काग्रेस ने ही की। इनके अतिरिक्त काग्रेस न अनेक स्वतन्त्र रेगुलेटरी आयोगा (Independent Regulatory Commissions) और अन्य अभिकरणो (agencies) की स्थापना भी की है। इनम से प्रमुख अन्तर्राज्यिक वाणिज्य आयोग (Inter State Commission) और सिविल सर्विस आयोग है। काग्रेस ऐसे आयोगो व अभिकरणो की रचना के सम्बन्ध मे आवश्यक कानून बनाती है और उनके कार्यों की देख-रेख आदि के लिए उचित व्यवस्था करती है। काग्रेस ने ही 1921 के बजट और लेखा कानून (Budget and Accounting Act) द्वारा ब्यूरो ऑफ दी बजट की रचना की और राष्ट्रपति को सघीय शासन का एकीकृत बजट बनवाने का अधिकार दिया। इसी प्रकार काग्रेस न कानूनो द्वारा नागरिक सेवाओ मे लूट की व्यवस्था (spoils system) का अन्त करने, योग्यता के आधार पर भर्ती करने, सेवाओ मे वर्गीकरण व उनके वतन आदि के सम्बन्ध मे समय समय पर आवश्यक कानून बनाये है। इनके अतिरिक्त काग्रेस को प्रशासन के कार्यों मे छानबीन (investigation) कराने की महत्त्वपूर्ण शक्ति प्राप्त है। वास्तव म कानून बनाना और छानबीन कराना काग्रेस की शक्तियो के प्रयोग के प्रमुख विधायी साधन (legislative tools) है। काग्रेस द्वारा छानबीन की प्रथा काफी पुरानी है और यह काग्रेस की विभिन्न कार्यवाहियो मे सार्वजनिक ध्यान व अभिरुचि को व्यापक रूप से खीचने वाली है।

सीनेट और सदन की शक्तियो की तुलना—साधारण रूप मे काग्रेस के दोनो सदनो की शक्तियाँ सम हैं, कुछ बातो मे सीनेट को विशेष शक्तियाँ अथवा अधिकार प्राप्त हैं और एक दो बातो मे प्रतिनिधि सदन को विशेष अधिकार हैं। कोई भी विधेयक तभी कानून का रूप धारण करता है जब वह दोनो सदनो मे एक ही रूप मे पास हो जाता है। वित्तीय क्षेत्र मे भी दोनो सदनो की वास्तविक शक्तिया बराबर है, यद्यपि वित्तीय विधेयको को आरम्भ प्रतिनिधि सदन म ही किया जाता है। सदन ही महाभियोग की कार्यवाही आरम्भ करता है। सीनेट की दो विशेष शक्तियाँ ये है—(1) अनेक उच्च सघीय अधिकारियो की नियुक्तिया राष्ट्रपति द्वारा की जाती है, किन्तु उसके द्वारा सुझाये गये नामो पर सीनेट का अनुसमर्थन आवश्यक है। (2) विदेशो के साथ सन्धियो मे पहल राष्ट्रपति और विदेश विभाग करते है, किन्तु वे सीनेट के परामर्श और सहमति से ही स्वीकार की जाती है। अपनी शक्तियो तथा रचना के कारण सीनेट ससार के सभी उच्च

का सहयोग पाने का प्रयत्न करता है। इसी से लॉग रोलिंग (log rolling) नाम की प्रथा उत्पन्न हुई है। यह दोषपूर्ण प्रथा भी उन पुराने दिनों की याद दिलाती है, जबकि संयुक्त राज्य में आकर बसने वाले निवासी अपने अपने मकान बनाने के लिए लकडी काटते थे और एक दूसरे के सहयोग से भारी लट्ठों को ऊपर उठाते थे। अतएव इस प्रथा का अर्थ है अपने लाभ के लिए मिलकर काम करना। यह आवश्यक और उचित ही है कि जब कोई प्रतिनिधि अपने क्षेत्र के लिए कोई धनराशि स्वीकृत करना चाहता है अथवा अपने निर्वाचकों के हित में कोई विधेयक पास करना चाहता है तो उसे दूसरे सदस्यों की सहायता लेनी पडती है। एक लेखक के अनुसार दलीय नियन्त्रण के अभाव में संयुक्त राज्य अमरीका में कानून लॉग रोलिंग द्वारा पास होते हैं।[1] कांग्रेस द्वारा विधि निर्माण पर विभिन्न दबाव समूहों (pressure groups) और लॉबियों का बहुत प्रभाव पडता है। देश में अनेक आर्थिक तथा वर्गीय हितों के प्रभावशाली संगठन हैं, जो कांग्रेस पर अपने अपने हित साधन से बहुत प्रभाव डालते रहते हैं। अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए ये संगठन वाशिंगटन में अपने कार्यालय रखते हैं और उनके प्रतिनिधि कांग्रेस के सदस्यों को प्रभावित करते रहते हैं। ऐसा लॉबीइंग की प्रथा द्वारा किया जाता है। इस आधार पर भी कुछ आलोचकों ने कांग्रेस की कार्य प्रणाली को दोषयुक्त बताया है।[2]

प्रत्येक कांग्रेस अपनी दो वर्ष की अवधि में लगभग 1,000 कानून बनाती है। उदाहरण के के लिए, 82वीं कांग्रेस ने 1951–52 में 1,617 कानून पास किये, इनमें 100 से ऊपर निजी कानून थे। इससे स्पष्ट है कि कांग्रेस द्वारा पास किये गये कानूनों की संख्या बहुत अधिक है। परन्तु दोनों सदनों द्वारा पास किये गये कानूनों में बहुत बडी संख्या ऐसे कानूनों की होती है जिनका सम्बन्ध अत्यन्त महत्त्वहीन विषयों से होता है, जिन्हें प्रशासन विभाग तथा अभिकरण सौंपे हुए विधि निर्माण के रूप में अधिक अच्छी प्रकार से विनियमों व नियमों द्वारा निर्मित कर सकते हैं। इसी प्रकार निजी दावों पर न्यायालयों द्वारा निर्णयों की व्यवस्था की जा सकती है। इन महत्त्वहीन कानूनों के पास करने में कांग्रेस का बहुत सा समय बेकार जाता है। कुछ लेखकों के मतानुसार कांग्रेस में कानून बनाने की प्रक्रिया बहुत ही पेचीदा और कठिन (complex and difficult) है साधारणतया विधेयक को समाप्त करना उसे कानूनी रूप देने से अधिक सरल है। महत्त्वपूर्ण विषय पर भी कांग्रेस में कार्यवाही करना काफी संघर्षमय होता है। ऐसे विषय पर भी—जिनके सम्बन्ध में राष्ट्रपति संदेश भेजे, जिनका कांग्रेस में बहुमत समर्थन करे और जिनके पक्ष में जनमत भी हो—कानून पास कराने में 1 या ½ वर्ष लग जाना साधारण बात है। कानून में देरी लगाने का कारण विधि निर्माण प्रक्रिया का पेचीदा व कठिन होना है।

शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त के दो परिणाम स्पष्ट हैं—(1) कांग्रेस और कार्यपालिका के बीच सम्बन्ध सामंजस्यपूर्ण नहीं रहते, वास्तव में दोनों ही शाखाएँ अपनी अपनी शक्तियों में वृद्धि करने करने के लिए प्रयत्नशील रहती हैं और कभी कभी उनके बीच अनुचित प्रतिस्पर्धा, गम्भीर मतभेद और संघर्ष भी होते हैं (2) कांग्रेस में प्रभावशाली नेतृत्व की कमी को सभी ने अनुभव किया है। मेक्स बेलाफ के मतानुसार अन्य राज्यों की विधायिकाओं की भाँति अमरीकी कांग्रेस में राजनीति के वास्तविक नाटक का दृश्य बहुत कम देखने को मिलता है। जहाँ तक ध्यान के केन्द्र का सम्बन्ध है कांग्रेस राष्ट्रपति से प्रतियोगिता नहीं कर सकती। विधायी शक्ति में साझीदार की हैसियत से

[1] In the absence of party control laws are passed by log rolling that is by temporary alliances among small groups of Congressmen —Potter Allen M *American Government and Politics* p 167

[2] A related accusation is made to the effect that Congress is under the control of pressure groups and defers somewhat willingly to their beckon call —Ferguson and McHenry *The American System of Government* p 264

प्रतिनिधि सदन की ऐसी स्थिति के लिए ये कारण उत्तरदायी हैं—(1) सीनेट का प्रतिनिधि सदन के बराबर ही नही, व्यवहार म अधिक शक्तियाँ प्राप्त है और रचना, आकार तथा काय प्रणाली की दृष्टियो से उसका स्थान अत्यधिक महत्त्वपूर्ण और प्रभावशाली है। इसी कारण प्रतिनिधि सदन सीनेट की तुलना मे कम शक्तिशाली है। (2) प्रतिनिधि सदन की अवधि केवल दो वष है, जबकि सीनेट एक स्थायी सदन है। प्रतिनिधि सदन के सदस्य पहले वष म कुछ ज्ञान व अनुभव प्राप्त करते है, किन्तु दूसरे वष उ ह फिर से अगले चुनाव की चिन्ता और तयारी घेर लेती है। सीनेटरो की तुलना मे सदन क बहुसख्यक सदस्य योग्यता व अनुभव म कम होते हैं। इसके अतिरिक्त सीनेट के दो ही सदस्य एक सम्पूण राज्य का प्रतिनिधित्व करत हैं। (3) प्रतिनिधि सदन साविधानिक दृष्टि स तो लोकप्रिय सदन है, किन्तु व्यवहार म वह विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रो के प्रतिनिधियो का समूह है। य प्रतिनिधि राष्ट्रीय हितो के स्थान पर स्थानीय हितो को अधिक महत्त्व देते है। स्थानीय नियम (locality rule) के कारण इनका दृष्टिकोण बहुत ही सकीण रहता है। (4) प्रतिनिधि सदन म हुए वाद विवाद का महत्त्व सीनेट की अपेक्षा कम रहता है समाचार पत्रो म भी प्रतिनिधियो के भाषणो का महत्त्वपूण स्थान नही मिल पाता, क्योकि एक तो उनकी सख्या बहुत अधिक, दूसरे, उनके भाषणो का प्रयोजन मुख्यत अपने निर्वाचको को सन्तुष्ट करना होता है।

उपर्युक्त कारणो से प्रतिनिधि सदन सीनेट की अपेक्षा कम शक्तिशाली है। सीनेट की अपेक्षा प्रतिनिधि सदन की काय प्रणाली प्रतिबन्धित है। अन्य दशो के लोकप्रिय सदनो की तुलना म इस उनक समान कुछ महत्त्वपूण शक्तियाँ प्राप्त नही हैं—प्रथम, इसका कायपालिका पर नियन्त्रण नही है। ब्रिटेन व भारत की तरह सयुक्त राज्य अमरीका की केबिनेट प्रतिनिधि सदन के प्रति उत्तरदायी नही है। दूसरे, प्रतिनिधि सदन को ब्रिटेन और भारत की ससदो के लोकप्रिय सदनो की तरह वित्त पर नियन्त्रण की अनन्य शक्ति प्राप्त नही है। तीसरे, विधायी क्षेत्र म भी इसे कोई विशेष शक्ति नही मिली है, जबकि ब्रिटिश कामन सभा को लार्ड सभा की तुलना म और भारतीय लोकसभा को राज्य सभा की तुलना म विधायी शक्तियाँ अधिक महत्त्वपूण हैं।

कांग्रेस की काय प्रणाली म आलोचको ने कई दोष बताये हैं, जिनका सक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है—इसकी कायवाही म स्थानीय अथवा वर्गीय हितो को अनुचित महत्त्व प्राप्त है, सीनेट व प्रतिनिधि सदन के सदस्यो के लिए निवास सम्बन्धी अहता (residence qualification) आवश्यक है। प्रतिनिधि सदन के सदस्य विशेष रूप से अपने अपने निर्वाचन क्षेत्रो के स्थानीय अथवा वर्गीय हितो को बहुत अधिक महत्त्व दत है। बक के शब्दो मे ये वास्तविक प्रतिनिधि की भाति काय नही करते वरन् अपने निर्वाचको के डेलीगेट की तरह होते हैं। विधेयको को पेश करने और उन पर विचार करन म उनका दृष्टिकोण राष्ट्रीय नही होता। इसी कारण कांग्रेस म पोर्कबेरल कानून और लॉग रोलिंग जसे दोष प्रचलित हैं। सदस्यो को प्रति दो वष म चुनाव लडने पडते हैं, अतएव व अपने निर्वाचको को सन्तुष्ट रखने का प्रयत्न करते रहते है। सदस्यगण मिलकर ऐसे प्रयत्न करत हैं कि राष्ट्रीय धन की बडी से बडी धनराशि उनके निर्वाचन क्षेत्र मे व्यय के लिए स्वीकार की जाये। ऐसे विधेयको को पास कराने का उद्देश्य मुख्यत राजनीतिक प्रयोजन होते हैं, जिन्हे इस प्रथा के विरोधी पोर्कबेरल कानून (Porkbarrel legislation) कहते हैं। पोर्क बेरल कानून उस पुराने समय की याद दिलाता है जबकि स्वामी अपने दासो म किसी दिन पोर्क (सुअर के गोश्त) स भरे ढोल बाँटता था। प्रत्येक प्रतिनिधि अपने अपने निर्वाचन क्षेत्र को अधिक से अधिक लाभ पहुँचाने का प्रयत्न करता है अर्थात् सभी प्रतिनिधि राष्ट्रीय आय को अपने स्थानीय हितो के लिए बाँटने का प्रयत्न करते हैं और राष्ट्रीय हितो का उचित ध्यान नही रखते।

उपर्युक्त उद्देश्य की प्राप्ति कोई भी प्रतिनिधि अकेले नही कर सकता, वह अन्य प्रतिनिधियो

सम्बध म ही राष्ट्रपति को परामर्श देना तथा काग्रेस के सम्मुख कार्यपालिका के दृष्टिकोण को रखना हो । इन प्रस्तावो का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि इनमे गहरे सावैधानिक प्रश्न अन्तग्रस्त हैं । यदि इनको किसी रूप म भी स्वीकार किया जाय तो उसका परिणाम यह होगा कि राष्ट्रपति ऐसे सदस्यो को केबिनेट म रखे जो काग्रेस म प्रभावशाली सिद्ध हो । परन्तु वे जितनी अधिक काग्रेस म सफलता पायेंगे उतना ही अधिक वे राष्ट्रपति के प्रति स्वतन्त्र होने का प्रयत्न करेंगे । इस प्रकार उनका और राष्ट्रपति का पारस्परिक सम्बध बदल जाएगा । इनके अतिरिक्त राष्ट्रपति अपनी केबिनेट के सदस्यो को बदलने म बडी कठिनाई अनुभव करेगा । इसी कारण राष्ट्रपति और उसकी कबिनेट म एक ओर तथा कार्यपालिका एव विधायिका क आपसी सम्बन्धो म दूसरी ओर वर्तमान शासन प्रणाली के अन्तर्गत महत्त्वपूर्ण परिवर्तन सम्भव नही हैं ।

अस्तु, कुछ लेखको ने यह सुझाव दिया है कि सयुक्त राज्य अमरीका म भी ब्रिटेन जसी सासद प्रणाली अपनाली जाय । ऐसा करने के लिए सविधान म आधारभूत सशोधन करने पडेंगे, जो कार्य अत्यन्त कठिन होगा । इस सुझाव के विरोधी वर्तमान शासन-पद्धति को ही सयुक्त राज्य के लिए अधिक उपयुक्त मानते हैं । उनके मतानुसार जैसे सासद पद्धति ब्रिटेन की प्रमुख विशेषता और देन है ऐसे ही शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त पर आधारित अध्यक्षात्मक कार्यपालिका सयुक्त राज्य की अनोखी देन है, जिसम परिवर्तन करने की आवश्यकता नही है । इसम कोई सन्देह नही है कि यद्यपि वर्तमान शासन पद्धति म ऊपर वर्णित कुछ दोष हैं, फिर भी यह सफल रही है । अन्त म, एक अमरीकी लेखक का यह कथन उल्लेखनीय है सयुक्त राज्य अमरीका की काग्रेस प्रतिनिधि शासन के लिए विश्व म सर्वश्रेष्ठ आशा है । उसके भवनो म किये गये निर्णय केवल अपने राष्ट्र को ही नही वरन् सम्पूर्ण स्वतन्त्र ससार को भी खण्डित करने की सम्भावना रखते हैं । ये निर्णय प्रजातन्त्र को जीवित रखने के लिए जारी सघर्ष म अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अस्त्र हैं ।'

2 फ्रास मे पार्लियामेन्ट

फ्रास म भी अन्य देशो की तरह दो सदन वाली पार्लियामेंट है । चौथे गणतन्त्र के सविधान के अनुसार पहले और दूसरे सदनो के नाम 'नेशनल एसेम्बली' और 'कौंसिल आफ दी रिपब्लिक' थे । वर्तमान सविधान के अनुसार पहले अथवा लोकप्रिय सदन का नाम अब भी नेशनल एसम्बली' ही है, किन्तु दूसरे सदन का नाम अब 'सीनेट' है । तीसरे गणतन्त्र के सविधान के अन्तर्गत भी दूसरे सदन का नाम सीनेट ही था । सविधान के अनुसार व्यवस्था यह है कि नेशनल एसम्बली का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से हो और सीनेट का अप्रत्यक्ष रूप से, परन्तु दोनो ही सदनो के लिए मतदान सर्वव्यापी सम और गुप्त है । निचले सदन का उद्देश्य सर्वसाधारण जनता का प्रतिनिधित्व करना है और सीनेट स्थानीय समुदायो तथा फ्रास से बाहर रहने वाले फ्रासीसियो का प्रतिनिधित्व करती है । तीसरे और चौथे गणतन्त्र के सविधानो के अन्तर्गत पुराने उपनिवेशो का पार्लियामेंट के दोनो सदनो म प्रतिनिधित्व था, परन्तु अब ऐसा नही है, केवल समुद्र पार प्रदेशो (Territories) अथवा डिपार्टमेंटो (Departments) का पद प्राप्त क्षेत्रो को ही पार्लियामेंट म प्रतिनिधित्व का अधिकार है । नेशनल एसम्बली के कुल सदस्यो की सख्या 552 है, जिनका चुनाव पाँच वर्ष की अवधि के लिए होता है । फ्रास (Metropolitan France) और अन्य प्रदेशो के प्रतिनिधियो की सख्या इस प्रकार है—फ्रास 465, अल्जीरिया 67, सहारा 4, समुद्रपार डिपार्टमेंट 10, समुद्रपार प्रदेश 6 । सीनेट के कुल सदस्यो की सख्या 307 है । सीनेट म विभिन्न प्रदेशो का प्रतिनिधित्व इस प्रकार है—फ्रास 225, अल्जीरिया 32, सहारा 2, समुद्रपार डिपार्टमेंट 7, समुद्रपार प्रदेश 5 और विदेशो म रहने वाले फ्रासीसियो के 6 प्रतिनिधि ।

पार्लियामेंट के कार्य और उसकी शक्तियाँ—नेशनल एसेम्बली के कार्यों और उनसे

काग्रेस की सावैधानिक भूमिका और राजनीतिक नेतृत्व के साधन रूप म काग्रेस की राजनीतिक भूमिका के बीच एक स्पष्ट सघष है। प्रथम के लिए राष्ट्रपति का सहयोग आवश्यक है और दूसरे के कारण कायपालिका के प्रति प्रतिद्वन्द्विता की प्रवृत्ति पैदा होती है।

1946 के विधायिका पुनगठन कानून (Legislative Reorganisation Act) के अ तगत काग्रेस की काय-प्रणाली म ये सुधार किये गये—(1) स्थायी समितियो की सख्या कम की गयी, कि तु उनका आकार छोटा ही बना रहा, (2) काग्रेस के कार्यों म सहायता देने के लिए प्राविधिक स्टाफ (technical staffs) बढाय गये, सदस्यो के वतन म वद्धि की गयी, और काग्रेस से छोटे दावो पर निणय करने का काम लकर उसका काय भार हल्का किया गया, पर तु 1946 के कानून द्वारा किये गये सुधार अपर्याप्त सिद्ध हुए। अभी तक समितियो के सभापतियो की नियुक्ति ज्येष्ठता क नियम के अनुसार होती है और सीनेट म वाद विवाद की समाप्ति के लिए वतमान व्यवस्था व्यवहार मे प्रभावी नही रही है। कॉयल के अनुसार वे सुधार होने चाहिएँ जि हे बिना कठिनाई के लागू किया जा सकता है—प्रथम, दोनो सदनो मे मतगणना के लिए बिजली की मतदान मशीनें लग जाने स सदनो का बहुत सा मूल्यवान समय बचेगा दूसरे, कोलम्बिया जिले को गह शासन दिया जाय, जिससे काग्रेस उसक सम्ब ध म काय भार से छूटे, और तीसरे प्रतिनिधियो को अपना काय करने की अधिक स्वत त्रता और समय मिले।[1]

प्रभावी नेतृत्व और दलीय अनुशासन की ढील के कारण ही काग्रेस की काय प्रणाली दोष पूण व धीमी है और इसम पोकबेरल तथा लॉबीइग जैसे दोष पाये जाते है। यह सच है कि काग्रेस म राजनीतिक दल अ य देशा की तुलना म बहुत ही कम महत्त्वपूण भाग लते है, यद्यपि वे काग्रेस सगठन का आधार है।[2] सयुक्त राज्य अमरीकी राजशास्त्र सघ ने राजनीतिक दला के अध्ययन हेतु एक समिति नियुक्त थी, जिसने यह सुझाव दिया कि दोनो सदनो म दोनो दलो को 'नेतृत्व की समितियो' की रचना करनी चाहिए और सदन की कायवाही शक्तियाँ इन समितिया को सौप देनी चाहिए। ये ही अ य समितियो के सदस्यो को नियुक्त करे, समितियो के सभापतियो की नियुक्ति ज्येष्ठता के नियम के स्थान पर इन समितियो द्वारा की जानी चाहिए और सदन की कायवाही निर्धारित करने का काय बहुमत दल की समिति को सौपा जाय। ऐसे परिवतनो से सदस्या पर दलीय अनुशासन और सदनो पर दलीय निय त्रण बढगा और सदनो के काय म अधिक कुशलता आयेगी।

अब तक कायपालिका और विधायिका एक दूसरे से पृथक हैं और उनके आपसी सम्ब धो म शक्तियो के लिए प्रतिस्पर्धा, काय म दरी, गतिरोध, क्षीण समझौते तथा विभाजित उत्तरदायित्व की प्रवृत्ति स्पष्ट है।[3] इस दोष को दूर करने के लिए, सविधान म कोई महत्त्वपूण सशोधन किये बिना ही, एक सुझाव यह है कि राष्ट्रपति की कबिनेट क सदस्यो को काग्रेस की कायवाही म भाग लेन के सीमित अधिकार दिये जाये, जसे सप्ताह म एक दो वार वे सदस्यो द्वारा पूछे गये प्रश्ना के उत्तर दे सके और महत्त्वपूण विधेयको को प्रस्तुत कर उनके पक्ष म भाषण द सकें। य प्रस्ताव पेडेलटन के नाम से सम्ब धित हैं। इसी सम्ब ध म एक प्रस्ताव यह है कि राष्ट्रपति की केबिनेट म बारह अ य सदस्य काग्रेस के सदस्यो म से लिए जायें, जिनका काय केवल विधि निर्माण के

[1] Coyle D C *The United States Political System* pp 71–72

[2] Political parties are the basis for the organization of Congress. They play a much less important role in Congress policies —Griffith Ernest S *Congress Its Contemporary Role*, p 24

[3] the executive and legislative branches still tending to occupy two islands of separate and jealous power with resulting delays deadlocks weak compromises and divided responsibility —Bailey Sydney D *Aspects of American Government* p 31

स्वरूप विनियात्मक होगा (matters other than those that fall within the domain of law shall be of a regulatory character)। उन विषयों के सम्बन्ध में जो भी कानून (legislative texts) हैं, उनमें राज्य परिषद् (Council of State) की मन्त्रणा के बाद आज्ञप्तियों द्वारा संशोधन किया जा सकता है। परन्तु उन कानूनों में जो संविधान लागू होने के बाद बने या बनेंगे, आज्ञप्तियों द्वारा तभी संशोधन किया जा सकता है जबकि सांविधानिक परिषद् यह कह दे कि उनका स्वरूप विनियामक है। धारा 38 के अनुसार सरकार अपने कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए कानून के क्षेत्र में आने वाले विषयों के बारे में सीमित अवधि के लिए अध्यादेश द्वारा कार्य कर सकती है और उस पर पार्लियामेंट के अधिकार की मांग कर सकती है।

अन्य देशों की पार्लियामेंट की तरह फ्रांस की पार्लियामेंट की विधायी शक्तियाँ परिमित हैं। ब्रिटिश पार्लियामेंट किसी भी विषय में कानून बना सकती है और भारत की पार्लियामेंट संघ व समवर्ती सूचियों में दिये गये सभी विषयों के बारे में कानून बना सकती है। पाँचवें गणतन्त्र के संविधान की यह एक विशेषता है कि उसने विधायी क्षेत्र, जिसके बारे में पार्लियामेंट कानून बना सकती है और विनियात्मक क्षेत्र, जिसके बारे में कार्यपालिका विनियम द्वारा कार्य करा सकती है, के बीच अन्तर किया है। लापोन्स के मतानुसार इस प्रकार के पृथक्करण से उसके लागू करने और उसका निर्वाचन करने की अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गई हैं। डॉरोथी पिक्लिस का यह मत सच है कि विधायी क्षेत्र में सम्मिलित किए गए विषयों की सूची का विस्तार पार्लियामेंट द्वारा की जाने वाली कार्यवाही के लिए काफी बड़ा है, परन्तु इसके परिणामस्वरूप विधायिका तथा कार्यपालिका के क्षेत्रों के बीच साधारण रूप में तथा दूसरे क्षेत्र में आने वाले सामान्य सिद्धान्तों, जिनका निर्धारण पार्लियामेंट करेगी और उनको विस्तारपूर्वक लागू करने में, जो कार्यपालिका करेगी, तक के लिए काफी क्षेत्र रहेगा, अर्थात् इन विषयों पर अनेक विवाद खड़े हो सकेंगे।[1]

परन्तु पार्लियामेन्ट द्वारा की जाने वाली कार्यवाहियों पर प्रतिबन्धों को दो आधारों पर न्यायोचित ठहराया गया है—प्रथम, इनके द्वारा सरकार पर एसेम्बली के अत्यधिक नियन्त्रण को रोका जा सकेगा। चौथे गणतन्त्र के दौरान एसेम्बली का एक बहुमत नहीं रहा, अर्थात् अधिकतर प्रश्नों पर इसका मत विभाजित रहा, फलतः सरकार को पग पग पर जीवित रहने के लिए उससे संघर्ष करना पड़ा और बहुधा इसी कारण सरकार कुछ न कर सकी। दूसरा, आज के युग में जब कि सरकारें जीवन में सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में सभी प्रकार का हस्तक्षेप करने लगी है, कुछ मात्रा में प्रदत्त विधि निर्माण आवश्यक है और बहुत समय से फ्रांस की पार्लियामेन्ट इस प्रवृत्ति के विकास में बाधा डालती रही है। वर्तमान संविधान द्वारा पार्लियामेन्ट की प्रभुता पर एक सीमा और लगी है। अब तक व्यवहार में, पार्लियामेन्ट ही अपने कार्यों की सांविधानिकता की निर्णायक रही है। चौथे गणतन्त्र में जब किसी विषय पर दोनों सदन एकमत होते थे, तो उसकी सांविधानिकता को चुनौती देने के लिए कोई व्यवस्था न थी। परन्तु वर्तमान संविधान में यह कार्य सांविधानिक परिषद् को सौंपा गया है। इसके अतिरिक्त अब पार्लियामेन्ट विवादग्रस्त चुनावों का निर्णय स्वयं नहीं कर सकती, क्योंकि यह कार्य भी सांविधानिक परिषद् को दिया गया है। अतएव यह भी पार्लियामेन्ट की प्रभुता पर एक सीमा है। इन दोनों ही सीमाओं का लगना सैद्धान्तिक दृष्टि से उचित प्रतीत होता है।

सीनेट के निर्वाचित सम्बन्धी कार्य भी नेशनल एसेम्बली के समान हैं। उसका सभापति सांविधानिक परिषद् के तीन सदस्यों को चुनता है, वह उच्च न्यायालय के आधे न्यायाधीशों और समुदाय की सीनेट के आधे सदस्यों का चुनाव करती है। परन्तु सीनेट की विधायी शक्तियाँ सीमित

[1] Pickles D., *The Fifth French Republic* pp 105-06

सम्बन्धित उसकी शक्तियो को तीन मुख्य समूहो म रखा जा सकता है—(1) निर्वाचन-सम्बन्धी, (2) विधायी, और (3) नियन्त्रण-सम्बन्धी। प्रथम समूह म उसके ये कृत्य सम्मिलित हैं—(अ) यह अपने सदस्यो मे से समुदाय की सीनेट (Senate of the Community) के आधे फ्रासीसी प्रतिनिधियो को चुनती है, (आ) उच्च न्यायालय के आधे न्यायाधीशो को चुनती है, और (इ) यूरोपीय एसम्वलियो म आधे फ्रासीसी प्रतिनिधियो का चुनाव करती है। यह पहले ही बताया जा चुका है कि एसम्वली का प्रधान सांविधानिक परिषद् के तीन सदस्यो को चुनता है। इस प्रकार एसेम्वली को कई सांविधानिक अगो के सदस्यो का आंशिक चुनाव करने का भी अधिकार है परन्तु पूर्व की भाँति अब एसेम्वली प्रधानमन्त्री का चुनाव नही करती।

संविधान की धाराएँ 34, 35, 36, 47 और 53 विधायी क्षेत्र की परिभाषा करती हैं। धारा 53 के अनुसार शान्ति और वाणिज्य की सन्धियाँ, अन्तर्राष्ट्रीय सगठनो स सम्बन्धित सन्धियाँ या समझौते, ऐसी सन्धियाँ जिनमे राज्य का वित्त अन्तग्रस्त हो, कानून का संशोधन करने वाली सन्धियाँ और ऐसी सन्धियाँ जिनका परिणाम प्रदेश का छोडना, विलय या जुडना हो, बिना पालियामेंट के अधिकार दिये हुए सम्पुष्ट अथवा स्वीकृत नही हो सकती। धारा 47 के अन्तर्गत पालियामेंट को बजट पास करने का अधिकार है जिसका वर्णन ऊपर किया जा चुका है। यहाँ पर यह स्पष्ट करना काफी होगा कि पालियामेंट के इस अधिकार पर दो महत्त्वपूर्ण सीमायें लगी हैं—(1) पालियामेंट के सदस्य बजट म केवल इन उद्देश्यो से संशोधन प्रस्ताव रख सकते हैं—व्यय म कमी करना, आय म वृद्धि करना, सार्वजनिक व्यय पर नियन्त्रण को सुरक्षित करना, (2) यदि पालियामेंट बजट को पेश किये गये दिन स 70 दिन के भीतर पास न करे तो उसे अध्यादेश के द्वारा जारी किया जा सकता है। धाराएँ 34, 35 और 36 उन मामलो की परिभाषा देती हैं जो सन्धियो के अतिरिक्त विधायी क्षेत्र म आते हैं। धारा 34 दो प्रकार के कानूनो म अन्तर स्पष्ट करती है—वे कानून जो नियम निर्धारित करते हो, और वे कानून जो मूलभूत सिद्धान्त निर्धारित करते हो।

पहले समूह म अग्रलिखित आठ प्रकार के विषयो स सम्बन्धित कानून आते हैं (1) *नागरिक अधिकार, सार्वजनिक स्वतन्त्रताएँ*, (2) *राष्ट्रीयता, विवाह कानून, उत्तराधिकार आदि*, (3) अपराधो और विभिन्न प्रकार के कदाचारो की परिभाषा, दण्ड का निर्माण, फौजदारी *प्रक्रिया*, (4) *सभी प्रकार के करो से सम्बन्धित*, (5) *स्थानीय निकायो और पालियामेंट के लिए* निर्वाचन पद्धति, (6) सार्वजनिक नियमो की रचना, (7) नागरिक सेवको और सेना के सदस्यो को प्रदान की गई मूल गारंटियाँ, और (8) उद्योगो का राष्ट्रीयकरण, इत्यादि। दूसरे समूह म वे कानून आते है जो केवल मूलभूत सिद्धान्त निर्धारित करते हैं और उनके आधार पर कार्यपालिका को नियम बनाने का अधिकार देते हैं। ऐसे कानूनो म ये पाँच शीर्षक सम्मिलित हैं—(1) राष्ट्रीय प्रतिरक्षा का सगठन, (2) शिक्षा, (3) सम्पत्ति के अधिकार और सम्पत्ति व्यवस्था, (4) श्रमिक, उनके सगठन व सामाजिक सुरक्षा, और (5) स्थानीय निकायो (local collectivities) का स्वतन्त्र प्रशासन, उनके कृत्य और साधन।

धारा 34 म दी गई अन्य जानने योग्य बातें ये हैं—वित्तीय कानून राज्य के मापनो और दायित्वो का निर्धारण करते हैं। राष्ट्रीय नियोजन स सम्बन्धित कानून राज्य के सामाजिक व आर्थिक काय के उद्देश्यो का निर्धारण करते है। इस धारा म दिए गए उपबन्धो को आंगिक कानून द्वारा विस्तृत तथा विकसित किया जा सकता है। इस सम्बन्ध म धाराएँ 35 और 36 म दी गयी ये बातें भी उल्लेखनीय हैं—युद्ध की घोषणा का अधिकार पालियामेंट देगी। *आंगिक कानून की आज्ञप्ति मन्त्रि परिषद् की बैठक म जारी की जायगी। संविधान की धारा 37 म कहा* गया है कि विधायी क्षेत्र म सम्मिलित (ऊपर वर्णित) मामलो के अतिरिक्त अन्य सभी मामलो का

कायक्रम के विषय म अपन मत रख सक्ते हैं तथा सरकार की आलोचना कर सक्ते हैं। दूसरे, जब विधेयक समिति म जाता है तो समिति के सदस्य उसके सम्ब ध म जानकारी व स्पष्टीकरण प्राप्त करने के लिए सरकारी अधिकारियो व म त्रया को भी बुला सक्त हैं। समितिया म सभी ससदीय समूहा के सदस्य रहते हैं। यह बात स्थायी व तदय अथवा विशेष दोना ही प्रकार की समितियो के बारे म लागू होती है। इसके अतिरिक्त पार्लियामट छानबीन समितियाँ भी नियुक्त कर सकती है। तीसरे, पार्लियामट के सदस्य लिखित अथवा मौखिक प्रश्ना द्वारा म त्रया स सूचना प्राप्त कर सक्त हैं। सामा य नीति के सम्ब ध म प्रश्न प्रधानम त्री स पूछे जाते हैं। लिखित प्रश्न सरकारी जनरल म छपत हैं और म त्रयो को उनका उत्तर एक माह के भीतर देना होता है। ये उत्तर भी जनरल म छप जाते हैं। मौखिक प्रश्नो के साथ वाद विवाद हो सक्ता है और नहीं भी। म त्री उनका उत्तर प्रति सप्ताह एक नियत दिन देते हैं। बिना वाद विवाद के प्रश्न प्रधान द्वारा बोले जाते हैं और पूछन वाला सदस्य म त्री के उत्तर के बाद उस पर पाँच मिनट तक बोल सक्ता है। म त्री चाह तो उसका भी उत्तर दे सकता है।

सरकार का पार्लियामेट पर निय त्रण—यह बात फिर से दोहराना अनुचित न होगा कि वतमान सविधान का मुख्य प्रयोजन कायपालिका को अधिक शक्तिशाली और स्थायी बनाना रहा है। इस प्रयोजन से सविधान म दो प्रकार के उपब धा को व्यवस्था है—पहले, व उपब ध जिनके द्वारा पार्लियामेट की कायवाहियो के क्षेत्र को सीमित किया गया है, जिसस कि सरकार और एसेम्बली के बीच सघष के लिए कम से कम प्रश्न उठें अथवा आयें। दूसरे, उन दशाओ को सोच-समझकर परिभाषित व सीमित किया गया है जिनम कि सरकार को पराजित किया जा सक्ता है। इन बातो का विवेचन इसी अध्याय मे यथास्थान किया जा चुका है। पर तु यह बात नही भूलनी चाहिए कि इन उपब धो के द्वारा सरकार को अधिक शक्तिशाली व स्थायी बनाने का प्रयत्न किया गया है, जिनके होते हुए भी सरकार का पार्लियामट के प्रति उत्तरदायित्व कायम है। कायपालिका को अधिक शक्तिशाली और स्थायी बनाने के उद्देश्य स कायपालिका के दोनों अगा—राष्ट्रपति और म त्र परिषद्—को बहुत स अधिकार व शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं। राष्ट्रपति केवल नाममात्र का कायपालिका अध्यक्ष अथवा राज्य का अध्यक्ष नहीं है। वह एक प्रकार का राष्ट्रीय पच है, जिसे प्रधानम त्री का चुनाव करने और आपात्काल मे असाधारण शक्तियो के प्रयोग के अधिकार प्राप्त हैं। वह एसम्बली का विघटन भी कर सक्ता है। म त्र-परिषद् के सदस्य पार्लियामट के सदस्य नही रहते, यद्यपि वे उसकी कायवाही म भाग ले सकते है। सरकार को पार्लियामट क असाधारण सत्र बुलाने व उसकी कायवाही पर निय त्रण के अधिकार प्राप्त है। सरकार अनेक विषयो के बारे म विनिमय बना सकती है और सीमित अवधि के लिए अध्यादेश भी जारी कर सक्ती है। सरकार को बजट तथा वित्तीय क्षेत्र म विस्तृत शक्तियाँ प्राप्त हैं। वतमान सविधान के अ तगत पार्लियामट वित्तीय प्रक्रिया के दौरान देरी करने वाली चालो को नही चल सकती, क्योकि यदि पार्लियामट नियत अवधि के भीतर बजट को पास नही करती तो सरकार उसके उपब धो को आज्ञाप्तियो द्वारा लागू कर सकती है।

डारोथी पिकिल्स के अनुसार कायपालिका को एसेम्बली के विरुद्ध तीन अस्त्र प्राप्त है। उनमे से पहला यह है म त्रि परिषद् के सदस्य पार्लियामट के सदस्य नही रह सकते (incompatibility rule)। दूसरा, एसेम्बली का विघटन है जो राष्ट्रपति द्वारा किया जा सक्ता है। तीसरा जन निणय जो तीन प्रकार के विषयो के बारे मे कराया जा सक्ता है—सावजनिक अधिकारियो के सगठन, समुदाय के साथ समझौते की स्वीकृति और सस्थाओ क काय सचालन को प्रभावित करने वाली स धि की पुष्टि का अधिकार देना। जन निणय कराने के लिए पहल प्रधान म त्री करता है और उसकी प्राथना पर जन निणय कराने का आदेश राष्ट्रपति जारी करता है।

हैं। सीनेटर पार्लियामेन्ट के असाधारण सत्र नहीं बुलवा सकते। बजट और वित्तीय कानून पहले एसम्बली में ही जाते हैं और सीनेट को बजट के अध्ययन व उस पर मतदान करने के लिए पन्द्रह दिन से अधिक नहीं मिलते। इनसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ऐसे कानूनों के बारे में जिन्हें निचला सदन पास करना चाहे, परन्तु जिन पर सीनेट ने एक प्रकार का प्रतिषेध लगा दिया हो, सरकार एसेम्बली को ही अन्तिम निर्णय का अधिकार दे सकती है। इसका अर्थ यह हुआ कि जब एसेम्बली और सीनेट के बीच मतभेद पैदा हो तो सीनेट को झुकना पड़ता है, परन्तु ऐसा तभी सम्भव है जबकि सरकार नेशनल एसेम्बली के निर्णय के पक्ष में हो अन्यथा दोनों सदनों की शक्ति बराबर रहेगी। काफी मात्रा में सीनेट का पद और उसके अधिकार वैसे ही हैं जैसे कि वे तीसरे गणतन्त्र में थे। सीनेट के प्रधान का दर्जा राज्य में तीसरे स्थान पर है, अर्थात् उसका स्थान राष्ट्रपति और प्रधानमन्त्री के बाद ही आता है। सीनेट को एसम्बली द्वारा पारित विधेयकों पर एक प्रकार के प्रतिषेध का अधिकार है। सभी विधेयकों पर अन्तिम निर्णय का अधिकार एसेम्बली को अब नहीं है और अब सीनेट को विघटन की धमकी भी नहीं दी जा सकती। वर्तमान स्थिति यह है कि कोई भी विधेयक तब पास होता है जबकि उसे दोनों सदन एक ही रूप में स्वीकार कर लें। ऐसा न होने पर यदि उस प्रस्ताव पर गणतन्त्र का राष्ट्रपति जन निर्णय न कराये, अन्तिम निर्णय दोनों सदनों की काग्रेस करती है, जिसके लिए उसका 3/5 बहुमत आवश्यक है। सीनेट की शक्तियाँ बढ़ जाने पर भी उसे वे शक्तियाँ प्राप्त नहीं हैं जो कि तीसरे गणतन्त्र में सीनेट को प्राप्त थी। उसे अब किसी प्रकार से गिराने का अधिकार नहीं है।[1]

पार्लियामेंट का मन्त्रि परिषद पर नियन्त्रण—संविधान की धारा 49 में कहा गया है कि 'प्रधानमन्त्री, मन्त्रि परिषद् द्वारा मनन के बाद, सरकार के कार्यक्रम अथवा सामान्य नीति की घोषणा के बारे में नेशनल एसेम्बली के प्रति सरकार के उत्तरदायित्व की शपथ ले सकता है। नेशनल एसेम्बली सरकार के उत्तरदायित्व के प्रश्न पर निन्दा का प्रस्ताव रख सकती है। ऐसा प्रस्ताव केवल तभी पेश हो सकता है जबकि उस पर कम से कम एसेम्बली के $\frac{1}{10}$ सदस्य हस्ताक्षर करें। प्रस्ताव पर मतदान उसके पेश करने के केवल 48 घण्टे बाद हो सकता है और प्रस्ताव एसेम्बली के कुल सदस्यों के बहुमत से ही पास हो सकता है। यदि ऐसा प्रस्ताव अस्वीकृत हो जाये तो उस पर हस्ताक्षर करने वाले सदस्य उसी सत्र के दौरान केवल विशेष दशाओं को छोड़ कर दूसरा निन्दा का प्रस्ताव नहीं ला सकते। धारा 50 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जब नेशनल एसम्बली निन्दा का प्रस्ताव पास कर दे अथवा जब वह सरकार के कार्यक्रम या सामान्य नीति की घोषणा को अस्वीकृत कर दे तो प्रधानमन्त्री को सरकार का त्याग-पत्र राष्ट्रपति के सम्मुख पेश करना पड़ेगा। इससे स्पष्ट है कि मन्त्रि-परिषद् पार्लियामेन्ट, व्यवहार में नेशनल एसेम्बली, के प्रति उत्तरदायी है, किन्तु जैसा कि इससे पूर्व बताया जा चुका है, प्रधानमन्त्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है और उसकी नियुक्ति पर नेशनल एसम्बली की स्वीकृति किसी रूप में भी आवश्यक नहीं है। नेशनल एसेम्बली धारा 49 और 50 के अनुसार दो प्रकार से मन्त्रि-परिषद् को पद त्याग करने के लिए बाध्य कर सकती है। निन्दा के प्रस्ताव द्वारा विधि पचीदा है, किन्तु सरकार के कार्यक्रम अथवा उसकी सामान्य नीति की अस्वीकृति सरल विधि है।

पार्लियामेंट सरकार पर अन्य तीन प्रकार से नियन्त्रण कर सकती है अथवा कार्यपालिका पर देख रेख के अधिकारों का प्रयोग कर सकती है। पहले, पार्लियामेंट के सत्रों के दौरान विभिन्न विधेयकों पर होने वाले वाद विवाद के द्वारा पार्लियामेंट के सदस्य सरकार की नीति व उनके

[1] Even so the new Senate by no means enjoys the power of its Third Republican namesake It can overthrow no governments —Williams and Harrison, *De Gaulle's Republic* p 45

अमरीका से कई बातों में भिन्न है। संयुक्त राज्य अमरीका (और भारत) में दूसरे सदन के सदस्यों की निर्वाचन प्रणाली और उनका कार्य-काल संघीय संविधान तथा कानून द्वारा विनियमित हैं।

संविधान की धारा 92 के अनुसार प्रत्येक कौंसिल (सदन) की बैठक अलग होती है, परन्तु फेडरल कौंसिल और फेडरल ट्रिब्यूनल के सदस्यों, चांसलर व सेनापति के चुनाव हेतु तथा संघीय सत्ताधारियों के बीच अधिकार क्षेत्र सम्बन्धी विवादों पर निर्णय करने के लिए दोनों सदनों की संयुक्त बैठक होती है। संयुक्त बैठक का सभापति नेशनल कौंसिल का प्रधान रहता है और उसमें भी निर्णय बहुमत से होता है। दोनों ही सदनों और उनके सदस्यों को विधि निर्माण में पहल (initiative) का अधिकार है। फेडरल एसेम्बली के दोनों सदनों की शक्तियाँ पूर्णतया बराबर हैं। अंतर केवल यह है कि जब दोनों सदनों की संयुक्त बैठक होती है तो, वे बड़े सदन के भवन में एकत्रित होते हैं और नेशनल कौंसिल का सभापति संयुक्त बैठक का सभापतित्व करता है। कोई भी कानून अथवा प्रस्ताव तब तक पास नहीं होता, जब तक कि दोनों सदन उसे स्वीकार न कर लें। दोनों सदनों में से किसी एक को दूसरे पर किसी भी बात में प्राथमिकता प्राप्त नहीं है, बजट सम्बन्धी मामलों में भी दोनों की शक्तियाँ पूर्णत सम हैं।

प्रत्येक सत्र के आरम्भ में दोनों सदनों के सभापति सहमति के आधार पर कार्य विभाजन कर लेते हैं। उदाहरण के लिए, प्रथानुसार जब साधारण बजट पर नेशनल कौंसिल में वाद विवाद होता है तो कौंसिल ऑफ स्टेट में संघीय रेलों के बजट पर वाद विवाद होता है। यदि किसी विचाराधीन विषय पर दोनों सदनों के बीच मतभेद उत्पन्न हो जाय, तो उस प्रश्न को दोनों सदनों के बराबर सदस्यों की पंच समिति के सुपुर्द कर दिया जाता है। यदि फिर भी कोई सहमति-पूर्ण समझौता नहीं हो पाता तो उस प्रश्न को समाप्त कर दिया जाता है। गतिरोध बहुत ही कम होते हैं और जब कभी भी मतभेद उत्पन्न हुआ है दोनों सदनों को मान्य समझौता सम्भव हुआ। ऐसे अवसर आये हैं जब कौंसिल आफ स्टेट ने नेशनल कौंसिल की बात मान ली है और उससे बढ़कर राष्ट्रीयता का परिचय दिया है। वास्तव में अधिकतर राज्यों के दूसरे सदनों से कौंसिल ऑफ स्टेट एक बात में भिन्न है। यह उनकी तरह प्रथम सदन से अनुदारवादी नहीं है। कोई भी उसे प्रतिक्रिया का गढ़ या उन्नति के पहियों पर ब्रेक नहीं कह सकता।[1]

फेडरल एसेम्बली की शक्तियाँ—धारा 71 के अनुसार फेडरल एसेम्बली, जनता और केन्टनों के अधिकारों के अधीन, संघ की सर्वोच्च सत्ता का प्रयोग करती है। दोनों सदनों को उन सभी विषयों पर मननात्मक और विधायी शक्तियाँ प्राप्त हैं जो संघ के अधिकार क्षेत्र में आते हैं और जिन्हें विशेष रूप से अन्य किसी संघीय प्राधिकारी (Federal Authority) को नहीं सौंपा गया है। इन विषयों में ये सम्मिलित हैं—संघीय अधिकारियों के चुनाव, वेतन और कार्य काल से सम्बन्धित मामले, संघीय संस्थाओं का संगठन, विदेशी राज्यों से समझौते और सन्धियाँ, देश की प्रतिरक्षा, संघीय संविधान को लागू करना, संघीय सेना, रेलें, आय और व्यय आदि। इस प्रकार संघीय एसेम्बली का मुख्य कृत संघीय विषयों पर कानून बनाना, प्रशासन के बारे में रिपोर्ट लेना व उसकी आलोचना करना और सांविधानिक प्रश्नों का निर्णय करना है। रैपड के अनुसार फेडरल एसेम्बली सभी संघीय कानूनों और अध्यादेशों को पास करती है, इसमें वे कानून भी सम्मिलित हैं जिनका सम्बन्ध वार्षिक बजट और लेखों से हो। इसके अतिरिक्त फेडरल एसेम्बली सभी सन्धियों और सांविधानिक संशोधनों पर भी मतदान करती है। अतएव उसकी विधायी

[1] Unlike most upper chambers moreover it has not acquired a reputation for being more conservative than the other chamber No one ever speaks of the Swiss Council of State as a citadel of reaction or a brake upon the wheels of progress —Munro and Ayearst *The Governments of Europe* pp 740–41

माइकेल स्टीवार्ट ने लिखा है—ससद के सत्र छोटे होते है, इसकी शक्तियो पर विनियमो और अध्यादेशो के प्रतिबन्ध लगे हैं। गैर सरकारी सदस्य वित्तीय प्रस्ताव पेश नही कर सकता। इसके अतिरिक्त निन्दा प्रस्ताव पर मतदान की प्रक्रिया ऐसी है कि वे सदस्य जो सरकार का विरोध करते हैं, प्रकाश म आ जाते है। ये सब बातें सरकार के विरुद्ध अनुत्तरदायित्वपूण और गुप्त बातो को रोकने क लिए अपनायी गयी है। हो सकता है कि ससदात्मक सरकार को उतना अधिक सुधारा न गया हो जितना कि उसे नष्ट करने का यत्न हुआ हो।[1]

3 स्विट्जरलण्ड मे फेडरल एसेम्बली

फेडरल एसेम्बली सघ सरकार की विधायिका है और इसके दो सदन है—नेशनल कौंसिल जनता का प्रतिनिधित्व करती है और कौंसिल ऑफ स्टेट केन्टनो का। 1951 के सशोधन के अनुसार नेशनल कौंसिल के कुल सदस्यो की सख्या 196 है और साधारणतया एक सदस्य 22 हजार से लेकर 24 हजार तक जनसख्या का प्रतिनिधित्व करता है। प्रतिनिधियो का चुनाव पुरुष मताधिकार के आधार पर होता है। मतदाता अपने प्रतिनिधियो को प्रत्यक्ष रीति से गुप्त मतदान द्वारा चुनते है। प्रत्यक पुरुष स्विस नागरिक, जिसकी आयु कम स कम बीस वष हो और जिसे केन्टन के मताधिकार से वचित न किया गया हो, नेशनल कौंसिल के चुनाव मे भाग ले सकता है। प्रत्येक केन्टन और अर्द्ध केन्टन एक निर्वाचन जिला होता है। केन्टनो को 24,000 जनसख्या के पीछे एक प्रतिनिधि के हिसाब से स्थान मिल है, किन्तु जिनकी सख्या इससे भी कम है, उन्हें एक एक स्थान मिला है। चुनावो के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व (proportional representation) पद्धति का प्रयोग होता है। जिन केन्टनो को केवल एक स्थान प्राप्त है वहा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति का पालन नहीं किया जा सकता। शेष केन्टनो मे सूची पद्धति के अनुसार चुनाव होता है। नेशनल कौंसिल की सदस्यता के लिए कोई विशेष अहता आवश्यक नहीं है, उम्मीदवार मतदाता होना चाहिए। परन्तु सविधान के अनुसार चच पादरी अथवा चच अधिकारी उसकी सदस्यता क लिए नही खडे हो सकते। कौन्सिल आफ स्टेट की सदस्यता के लिए विभिन्न केन्टनो के अपने अपने कानून है, इन्ही के अनुसार चच पादरियो और केन्टन अधिकारियो को कही सदस्य बनने का अधिकार है या कही सदस्य बनने की मनाही है। कोई एक व्यक्ति एक समय म दोनो सदनो का सदस्य नही रह सकता, यद्यपि कौसिल ऑफ स्टेट के सदस्य केन्टनो की सरकार मे पदाधिकारी हो सकते है।

कौंसिल आफ स्टेट—प्रत्येक केन्टन दो और प्रत्येक अद्ध केन्टन एक प्रतिनिधि भेजता है। अद्ध केन्टन वह होता है जिस दूसरे सदन म एक प्रतिनिधि भेजने तथा सघीय सविधान के सशोधन पर हुए जन निणयो म केवल आधा मत प्राप्त होता है। केवल तीन केन्टन दो दो अद्ध केन्टनो म विभाजित है। विभिन्न केन्टनो मे प्रतिनिधियो का चुनाव भिन्न भिन्न प्रकार से होता हैं। कुछ केन्टनो मे इन प्रतिनिधियो का चुनाव उनकी बडी कौंसिल (Legislatures) करती हैं अर्थात् चुनाव अप्रत्यक्ष ढग से होता है। अन्य केन्टनो म ये प्रतिनिधि मतदाताओ द्वारा चुने जाते हैं और लेन्डसजमीडे वाल केन्टनो मे प्रतिनिधियो का चुनाव लेन्ड्सजमीडें करती हैं। कौन व्यक्ति प्रतिनिधि बन सकते हैं, इस बारे म भी केन्टनो के अपने-अपने कानून है। इसके अतिरिक्त सदस्यो का कार्यकाल भी केन्टनो के कानूनो द्वारा विनियमित होता है। अधिकतर केन्टनो मे प्रतिनिधियो का कार्यकाल चार वष है, कुछ दूसरो म तीन वष और कुछ मे केवल एक ही वष है। इन बातो से यह स्पष्ट है कि स्विटजरलण्ड मे कौंसिल आफ स्टेट के सदस्यो की निर्वाचन प्रणाली सयुक्त राज्य

[1] Stewart M *Modern Forms of Government* p 169

राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस (जिसके सत्र बहुत कम होते हैं) के स्थायी निकाय के रूप में स्थायी समिति को विधायी, कार्यपालिका, न्यायिक तथा प्रशासनिक मामलों में काफी शक्तियाँ प्राप्त हैं। यह कानून जैसी शक्तिशाली आज्ञप्तियाँ (decrees) जारी कर सकती है कानूनों का निर्वचन कर सकती है और मन्त्रिमण्डल तथा स्थानीय जन परिषदों के निर्णयों को, यदि वे संविधान अथवा कानूनों के विरुद्ध हों, राष्ट्रीय काग्रेस अवैध घोषित कर सकती है।[1]

धारा 31 के अनुसार राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस की स्थायी समिति अग्रलिखित कार्य करती है और अधिकारों का उपयोग करती है —(1) राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस के लिए प्रतिनिधियों का चुनाव करती है, (2) राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस के अधिवेशनों को बुलाती है, (3) कानूनों की व्याख्या करती है, (4) आज्ञप्तियाँ (decrees) जारी करती है, (5) मन्त्रिमण्डल, सर्वोच्च जन न्यायालय और सर्वोच्च जन प्रोक्यूरेटर के कार्यालय के कामों की देख भाल करती है, (6) मन्त्रिमण्डल के निर्णय और आदेश जब शासन विधान, कानूनों या आज्ञप्तियों के विरुद्ध होते हैं तो उनको रद्द करती है, (7) प्रान्तों, स्वशासित क्षेत्रों या सीधे केन्द्रीय सत्ता के अधीन म्युनिसिपलिटी की राजकीय समितियों के अनुचित निर्णयों में संशोधन करती है या उनको रद्द करती है, (8) जब राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस की बैठक न हो रही हो तब उपाध्यक्ष, मन्त्री, समिति के अध्यक्ष या मन्त्रिमण्डल के सचिवालय के प्रधान की नियुक्ति या पदच्युति के बारे में निर्णय करती है, (9) सर्वोच्च जन न्यायालय के उपाध्यक्ष, जजों और न्यायिक समिति के सदस्यों को नियुक्त करती है या हटाती है (10) उप प्रधान, प्रोक्यूरेटरों के कार्यालय की समिति के सदस्यों को नियुक्त करती है या हटाती है, (11) विदेशी राज्यों के लिए विशेष अधिकार प्राप्त प्रतिनिधियों की नियुक्ति या वापसी के बारे में निर्णय करती है, (12) विदेशी राज्यों के साथ सन्धियों को स्वीकार करने या अस्वीकार करने के बारे में निर्णय करती है, (13) सैनिक, राजनीतिक और अन्य विशेष उपाधियों तथा पदों की व्यवस्था करती है, (14) राज्य की उपाधियों तथा पदकों और सम्मान सूचक उपाधियों की व्यवस्था करती है और उनका प्रदान करने का निर्णय करती है, (15) क्षमादान का निर्णय करती है (16) जब राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस की बैठक न हो रही हो तब राज्य पर सैनिक आक्रमण होने की दशा में या जब आक्रमण के विरुद्ध पारस्परिक रक्षा से सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों की शर्तों को पूरा करने की आवश्यकता होने पर लड़ाई की स्थिति की घोषणा करने का निर्णय करती है, (17) पूर्ण या आंशिक सैनिक भर्ती का निर्णय करती है, (18) समस्त देश में या कुछ क्षेत्रों में सैनिक कानून लागू करने का निर्णय करती है, तथा (19) ऐसे अन्य कार्यों को करती है और अधिकारों का उपयोग करती है जिन्हें राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस उसके हाथों में सौंप दे।

स्थायी समिति, जैसा कि इसका नाम है, राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस की स्थायी समिति है। इसके कार्य विधायी, कार्यकारी, न्यायिक और प्रशासनिक सभी प्रकार के हैं। इसी कारण इसका अस्तित्व शक्तियों के पृथक्करण सिद्धान्त का स्पष्ट अतिक्रमण करता है। यह साधारण रूप में सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत के प्रेसीडियम के सदृश है, परन्तु स्थायी समिति की औपचारिक शक्तियाँ प्रेसीडियम जैसी नहीं हैं। जबकि प्रेसीडियम का अध्यक्ष राज्य का भी अध्यक्ष होता है, चीन में इस पद के कार्य को जनवादी गणतन्त्र का सभापति करता है, जिसके लिए यह आवश्यक नहीं कि वह स्थायी समिति का सभापति हो, आजकल भी ऐसा नहीं है। सोवियत संघ को प्रेसीडियम की सशस्त्र सेनाओं के उच्च कमान की नियुक्ति और उन्हें अपदस्थ करने की शक्ति भी प्राप्त है। यह शक्ति स्पष्ट रूप से स्थायी समिति को प्रदान नहीं की गयी है, यद्यपि व्यवहार में उसने इस शक्ति का प्रयोग किया है। स्थायी समिति के पद और शक्तियाँ में गणतन्त्र के चेयरमन

[1] Tang Peter S H *Communist China To day* p 180

सशोधन पर दृष्टि डाले तो पता
शक्तिया असाधारण रूप से पूण है ।[1] हो गया है, यहाँ तक कि स्विटजर
इस विषय मे घोष न लिखा है—'यदि सावधानिक्र्लैवा राज्य ने स्थान ले लिया है ।'
लगेगा कि समय बीतन क साथ सघीय काय क्षेत्र वहुत विस्तृ सरकार की शक्तिया सयुक्त राज्य
लण्ड म एक पुलिस राज्य का उच्च केन्द्रीकृत सामाजिक रके कायपालिका और प्रशासनिक क्षेत्र
विधायी क्षेत्र म ब्रुक्स कहता है, स्विटजरलैण्ड को, सघीय कौसिल के सदस्या, फेडरल ट्रिब्यूनल
अमरीका की सरकार से अधिक व्यापक है ।' फेडरल एसेम्बलीक्ष और युद्ध की दशा अथवा युद्ध के
म भी कुछ महत्त्वपूण काय हैं । इनम से मुख्य ये है—फेडरल । करना, सामूहिक क्षमादान घोषित
के यायाधीशो, नागरिक सवा के चा सलर अथवा स्थायी अध्यनो के सविधानो की प्रत्याभूति देना,
खतरे म सर्वोच्च सनापति का निर्वाचन करना, युद्ध की घोषणब्यूनल की देख रेख करना, फेडरल
करना, सघीय कानूना के विरुद्ध अपराधो को क्षमा करना, के ट्नीय हैं—यह जनता की याचिकाओ
सघीय सेना का अ त करना और नागरिक सेवा एव सघीय टिफेडरल कौसिल के निणय के विरुद्ध
एसम्बली की कुछ यायिक शक्तिया भी है, उनम स ये उल्लेखन्न सम्ब धी विवादो म निणय देती
पर निणय करती है कुछ प्रकार के प्रशासनिक विवादा म यह है ।
अपीलें सुनती है और सघीय अधिकारियो के बीच अधिकार कौसिल द्वारा प्रस्तुत वार्षिक रिपोट पर
है । इसके अतिरिक्त यह यायिक कार्यों की दख रेख भी करती पर वाद विवाद करना है । उसके
विधि निर्माण क अतिरिक्त एसेम्बली प्रति वप फेडरल कतिवप फेडरल कौसिल सावजनिक
भी विचार करती है, जिसका अथ एक प्रकार से राष्ट्रीय नीति क सदन की एक वित्त समिति होती
आधार पर ही फेडरल कौसिल अपना कायक्रम बनाती है । प्रसदनों के सामने अपनी रिपोट पश
व्यय और करा के सम्ब ध म वजट प्रस्ताव भी रखती है । प्रत्येशोधन सहित या रहित सदन उसी
है, दोनो समितियो के प्रतिनिधि वजट की परीक्षा करते है और । वित्तीय समितिया ब्रिटेन व भारत
करते है । उसके बाद वजट पर वाद विवाद होता है और उस स स्वीकृत मदो पर ही व्यय किया
प्रकार स्वीकार करते है जस कि किसी कानून या आज्ञाप्ति को
की लोक लेखा समिति की भांति यह भी देखती है कि धन
गया है ।

है । सविधान म कहा गया है—

4 सोवियत सघ मे सर्वोच्च सोवियत

। है ।' सोवियत सघ की सम्पूण
सिद्धा तत सोवियत सघ क शासन का रूप ससदीय सोवियत—और उसके अभिकरणा
'सोवियत सघ म राज्य सत्ता का सर्वोच्च अग सर्वोच्च सोवियतपद्—को नियुक्त करती है और
शक्तियाँ सावधानिक दृष्टि से सर्वोच्च विधायी निकाय—सर्वोच्च) प्रेसीडियम को भी चुनती है ।
म निहित है । वही सोवियत सघ की कायपालिका—मन्त्रि परिषसद कह सकते हैं, दो सदन वाली
मन्त्रि परिषद् उसी क प्रति उत्तरदायी है । सर्वोच्च सोवियत a) कहते है जिसके सदस्य सम्पूण
सर्वोच्च सोवियत, जिसे सोवियत सघ की पार्लियाम ट अथवा 3,000 व्यक्तियो के पीछे एक प्रति-
है । प्रथम सदन को सघ की सोवियत (Soviet of the Unionत' (Soviet of Nationalities)
राज्य क्षेत्र मे भूमिगत निर्वाचन क्षेत्रा स चुन जात हैं । प्रति 3,0Cय जिलो के प्रतिनिधि आते है,
निधि चुना जाता है । दूसरे सदन मे जिस 'राष्ट्रीयताओ की सावि1 । दानो सदना का चुनाव प्रति
कहते हैं विभिन्न सघीय गणराज्या, स्वाधीन प्रदशा और राष्ट्
जिनकी सख्या क्रमश इस प्रकार होती है—25, 11, 5 और 2

p 66

[1] Reppard W E *The Government of Swit erland* p 6
[2] Ghosh R G *The Government of the Swiss Republic*

केवल फेडरल चेम्बर के ही सदस्य अप्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुने जाते हैं, अन्य चेम्बरों के सदस्य अप्रत्यक्ष ढंग से सामुदायिक एसेम्बलियों द्वारा चुने जाते हैं। जब संघीय कानून द्वारा निर्धारित निर्वाचक मण्डल की बहुसंख्या किसी प्रतिनिधि के प्रत्यावर्तन का निर्णय करे तो उस प्रतिनिधि को वापिस बुलाया जा सकता है। नये प्रतिनिधियों के लिए चुनाव उनकी अवधि पूर्ण होने से पन्द्रह दिन पूर्व किये जाते हैं। एसेम्बली का प्रधान ही प्रतिनिधियों के चुनावों को करवाता है, यदि एसेम्बली के किसी चेम्बर को विघटित कर दिया जाता है, तो उसके लिए चुनाव विघटन के दिन से पन्द्रह दिन के भीतर किये जाते हैं। इस प्रकार से नये निर्वाचित चेम्बर की अवधि तब तक रहेगी जब तक कि विघटित चेम्बर की अवधि रहती है। विशेष परिस्थितियों में एसेम्बली संघीय प्रतिनिधियों की अवधि को उन परिस्थितियों के अन्त होने तक बढ़ा सकती है और उन परिस्थितियों के समाप्त होने पर शीघ्र नये चुनाव होंगे।

फेडरल एसेम्बली का अधिकार क्षेत्र और उसकी शक्तियाँ—जैसा कि स्वाभाविक ही है फेडरल एसेम्बली का अधिकार क्षेत्र संघ के अधिकार-क्षेत्र तक विस्तृत है। संघ का अधिकार क्षेत्र इस प्रकार है। संघ के अनन्य अधिकार क्षेत्र (exclusive jurisdiction) में ये बातें आती हैं—(1) युगोस्लाविया की स्वतन्त्रता और भूमिगत अखण्डता की रक्षा, (2) सांविधानिक व्यवस्था अथवा राज्य की सुरक्षा, (3) युगोस्लाविया की नागरिकता, (4) संघ का संगठन तथा उन कार्यों व मामलों को कार्यान्वित करना जिसके लिए संविधान के अनुसार केवल संघ ही सक्षम है। विधायी क्षेत्र (legislative field) में संघ के अधिकार क्षेत्र में अग्रलिखित विषय और उनमें सम्बन्धित कानून सम्मिलित हैं—(अ) सामाजिक स्वामित्व, स्वामित्व के अधिकार, साख और बैंकिंग, नाप और तोल, नागरिकता, मताधिकार, सार्वजनिक सुरक्षा, शस्त्र और विस्फोटक पदार्थ (Explosives), न्यायिक प्रक्रिया के बारे में सम्पूर्ण कानून और वे सम्बन्ध जिन्हें कानूनों द्वारा विनियमित करना हो, (आ) आर्थिक संगठन व्यवसायिक मामलों आय करों, राजस्व (revenues), बजट और निधियाँ, प्राकृतिक साधनों का उपयोग, सामाजिक नियन्त्रण, समाचार पत्र और सूचना के अन्य माध्यम, सामाजिक सुरक्षा, विवाह, कानूनी व्यवसाय आदि के बारे में आधारभूत कानून, और (5) सामान्य कानून (general law)।

उपरोक्त के अतिरिक्त संविधान की धारा 162 के अन्तर्गत संघ के अधिकार क्षेत्र में अग्रलिखित बातें भी सम्मिलित हैं—(क) संघीय कानूनों और संघीय एसेम्बली के अन्य कार्यों के लिए नीति का निर्धारण, उनके लागू किये जाने व कार्यान्वित पर तथा संघ के अधिकारों व कर्त्तव्यों के ढाँचे के भीतर अन्य राजनीतिक कार्यकारी व प्रशासनिक मामलों पर भी ध्यान देना इन विनियमों और अन्य कार्यों की प्रत्यक्ष कार्यान्विति में प्रशासनिक अधिकार क्षेत्र में, जबकि ऐसा संघीय कानून के अनुसार सम्पूर्ण देश से सम्बन्धित मामलों के लिए किया गया हो, अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों को कार्यान्वित कराना, (ख) संघीय कानूनों को एक रूप ढंग से लागू करने की व्यवस्था और न्यायिक क्षेत्र में एक रूप दण्डात्मक नीति, (ग) आंकड़े और सम्पूर्ण देश से सम्बन्धित मामलों का परिवीक्षण (supervision), (घ) संघ के अधिकारों की प्राप्ति व उसके कर्त्तव्यों के पालन के लिये आवश्यक अन्य पग व उपाय, (च) सामाजिक लेखा सेवा का संगठन और उसके कार्य का परिवीक्षण, (छ) अन्य मामले जो संविधान द्वारा निर्धारित किये जायें।

संघीय एसेम्बली—संघ के अधिकारों व कर्त्तव्यों के ढाँचे के भीतर शक्ति का सर्वोच्च और सामाजिक स्वशासन का अंग है। परन्तु संघीय एसेम्बली अपने अधिकारों व कर्त्तव्यों का पालन संविधान व कानूनों के आधार पर तथा उनके अनुसार ही कर सकती है। चूंकि एसेम्बली ही संघ के अधिकारों व कर्त्तव्यों को धारण करने वाली आधारभूत संस्था है अतः यह प्रत्यक्ष तथा अनन्य रूप में अग्रलिखित कार्य कर सकती है (1) संविधान में परिवर्तन का निर्णय, (2) संघीय

और सर्वोच्च राज्य सम्मेलन भी भाग लेते हैं सोवियत संघ में सर्वोच्च राज्य सम्मेलन जैसी कोई संस्था नहीं है। फिर भी टंग का यह मत ठीक है कि स्थायी समिति, सोवियत संघ की प्रेसीडियम की तरह, एक छोटा और प्रत्र घनीय समूह है, जो राज्य के कार्यों को वैध रूप और सत्ता प्रदान करना है यद्यपि उन कार्यों के बारे में यथार्थ निर्णय दल की उच्च परिषदा द्वारा किये जाते हैं। यह हम पहले ही बता चुके हैं कि राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस एक बहुत बड़े आकार वाली विधायिका है, जिसमें वास्तविक विधायी कार्य और नीति का निर्धारण नहीं हो सकता। यथार्थ में ये कार्य दल की राजनीतिक ब्यूरो करती है, किन्तु उसके निर्णयों को कानूनी रूप स्थायी समिति देती है।

चीन की स्थायी समिति सोवियत संघ की प्रेसीडियम से भी कुछ अग्रलिखित बातों में आगे है (1) जबकि सोवियत संविधान के अनुसार मंत्रि परिषद् के सभापति (प्रधानमंत्री) की सिफारिश पर और बाद में सर्वोच्च सोवियत के अनुसमर्थन के अधीन प्रेसीडियम के मन्त्रियों को पद से अलग करने तथा नियुक्त करने की शक्ति प्राप्त है स्थायी समिति द्वारा इन कार्यों को करने के लिए प्रधानमंत्री की सिफारिश तथा बाद में राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के अनुसमर्थन की आवश्यकता नहीं है। (2) राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की उप राष्ट्रपति समिति तथा विधेयक समिति स्थायी समिति के निदेशन पर अधीन रहती है, जबकि राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का सत्र नहीं हो रहा होता सोवियत प्रसीडियम को ऐसी कोई शक्ति प्राप्त नहीं है। (3) राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस संविधान में प्रगणित अन्य शक्तियों और कार्यों को स्थायी समिति को सौंप सकती है। इस जैसा प्राविधान सोवियत संविधान में नहीं है। (4) जब राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का सत्र नहीं हो रहा होता, स्थायी समिति विशिष्ट प्रश्नों की छानबीन करने के लिए आयोगों की नियुक्ति कर सकती है, परन्तु इस प्रकार की शक्ति सोवियत संघ की प्रेसीडियम को नहीं सौंपी गयी है। अस्तु 'यद्यपि यह अपने जनक निकाय के प्रति उत्तरदायी है और उनमें रिपोर्ट प्रस्तुत करती है, किन्तु स्थायी समिति राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की स्वामी बन सकती है और उनका प्रयोग रबड़ की एक मुहर के समान कर सकती है तथा अपने निर्णयों व नीतियों का अनुमोदन करा सकती है।'

6 युगोस्लाविया में फेडरल एसेम्बली

संघीय विधानमण्डल का नाम 'फेडरल एसेम्बली' (Federal Assembly) है जो पाँच आगारों से मिलकर बनती है। इसके कुल सदस्य 670 है। इसके पाँच आगारों के नाम ये हैं— (1) संघीय चेम्बर, (2) आर्थिक चेम्बर, (3) शैक्षिक सांस्कृतिक चेम्बर, (4) सार्वजनिक स्वास्थ्य और सामाजिक कल्याण का चेम्बर, और (5) संगठनात्मक राजनीतिक चेम्बर। प्रत्येक चेम्बर में 120 सदस्य है, परन्तु संघीय चेम्बर का एक अंग और है जिसे राष्ट्रीयताओं अथवा उप राष्ट्रों का चेम्बर कहते हैं। उप राष्ट्रों के चेम्बर में 70 प्रतिनिधि हैं—प्रत्येक गणराज्य के 10 (6 गणराज्यों के 6 × 10 = 60) और 5—5 दो स्वायत्तता प्राप्त प्रान्तों के। ये प्रतिनिधि उनकी एसेम्बलियों द्वारा चुने जाते हैं। इस प्रकार पाँच चेम्बरों के सदस्यों अथवा प्रतिनिधियों की संख्या 120 × 5 = 600 है और उप राष्ट्रों के चेम्बर सहित संघीय एसेम्बली के कुल सदस्यों की संख्या 600 + 70 = 670 है।

प्रत्येक नागरिक, जिसे मताधिकार प्राप्त है फेडरल चेम्बर का निर्वाचन द्वारा सदस्य बन सकता है किन्तु अन्य चेम्बरों के केवल वे ही नागरिक सदस्य बन सकते हैं जो कि उनमें से प्रत्येक के अलग अलग क्षेत्र में आने वाले कार्यों में लगे हैं। उदाहरण के लिये, ऐसे नागरिक हो जो सामाजिक कल्याण और सार्वजनिक स्वास्थ्य की संस्थाओं या इस क्षेत्र के श्रमिक संघों के अधिकारी हों सामाजिक कल्याण और सार्वजनिक स्वास्थ्य के चेम्बर के सदस्य बन सकते हैं।

बारहवाँ अध्याय

विभिन्न राज्यो मे विधायी संगठन और प्रक्रियाएँ

1 विधायी सगठन और प्रक्रिया

विभिन्न राज्यो के विधानमण्डलो की रचना और शक्तिया का तुलनात्मक अध्ययन करने के साथ उनके सगठन और विधायी तथा वित्तीय प्रक्रियाओ का अध्ययन भी आवश्यक है। बजट और वित्तीय प्रक्रिया का विवेचन तो अगले अध्याय मे किया है, अत इस अध्याय म विधायिकाओ के सगठन और विधायी प्रक्रियाओ का तुलनात्मक अध्ययन दिया जा रहा है। विधायिका के सगठन के कई पहलू हैं, उनमे से मुख्य का अति सक्षिप्त उल्लेख यहाँ किया जायेगा और इसी अध्याय के शेष सवशनो मे विभिन्न राज्यो की विधायिकाओ के सगठन का उनकी विधायी प्रक्रियाओ के पूव ही वणन किया गया है।

सत्र व बठकें—साधारणतया विधानमण्डल के सत्र (sessions) दो प्रकार के होते हैं—साधारण या नियमित और विशेष या असाधारण। प्रत्येक विधायिका का वर्ष म कम से कम एक साधारण या नियमित सत्र होता है और अनेक राज्या म दो सत्र होते हैं। भारत के सविधान मे प्राविधान है कि एक सत्र के अन्तिम दिन और दूसरे के पहल दिन के बीच छ माह से अधिक का समय नही बीतना चाहिए। भारत, सयुक्त राज्य अमरीका व अन्य प्रजातान्त्रिक राज्यो मे विधायिकाओ के सत्र काफी दीघ काल तक चलते हैं, परन्तु सोवियत सघ व चीन मे दोनो सत्र मिलाकर लगभग बीस दिन तक चलते हैं। सयुक्त राज्य अमरीका म कांग्रेस का नियमित सत्र एक नियत दिन स आरम्भ होता है, अन्य राज्यो मे विधायिका को आहूत करने के लिए सदस्यो को सूचना दी जाती है। विशेष या असाधारण सत्र अधिकतर राज्या मे कायपालिका अध्यक्ष द्वारा बुलाये जाते हैं, सयुक्त राज्य अमरीका व फ्रान्स मे ऐसा ही है। विभिन्न राज्यो मे सदनो की बैठको के लिए भिन्न भिन्न दिन अथवा समय नियत है, उनमे स्थायी आदेशो द्वारा ही परिवतन किया जा सकता है। बैठको मे भी कोई एक या दो दिन प्रति सप्ताह गैर-सरकारी कायवाही के लिए आरक्षित रहते हैं।

सदस्यो व सदनो का विशेषाधिकार (Privileges)—सभी प्रजातान्त्रिक राज्यो मे सदस्यो को मासिक वेतन, दैनिक व आने जाने का भत्ता और अन्य सुविधाए प्राप्त होती हैं। सदस्यो को सदनो मे भाषण की स्वतन्त्रता, सत्र के दौरान बन्दी बनाये जाने के विरुद्ध रक्षा आदि विशेषाधिकार प्राप्त हैं। यद्यपि आजकल वाद विवाद की स्वतन्त्रता को आवश्यक समझा जाता है, किन्तु इसकी प्राप्ति ब्रिटेन म भी दीघकालीन प्रवाद के बाद हुई। 1689 के बिल ऑफ राइट्स म स्पष्ट शब्दो मे कहा गया है—'भाषण और वाद विवाद की स्वतन्त्रता अथवा पार्लियामेंट मे कायवाही की स्वतन्त्रता के विरुद्ध किसी भी न्यायालय म अथवा पार्लियामेंट के बाहर कोई कायवाही नही की जायेगी।' सदस्यो के विशेषाधिकारो के अतिरिक्त सदनो के अपने विशेषाधिकार

कानून को पास करना, (3) सामाजिक योजनाओ, सघीय बजट और सघ के वार्षिक वित्तीय विवरण को अगीकार करना, (4) राजनीतिक मामलो पर निणय करना और आन्तरिक तथा वदेशिक नीति का निर्धारण, (5) गणराज्य के राष्ट्रपति व उप राष्ट्रपति का निर्वाचन, (6) सघीय कायकारिणी परिषद् (Federal Executive Council) के प्रधान व सदस्यो को चुनना और उन्हे पद से हटाना, (7) सघ के राजनीतिक कार्यकारी (executive) और प्रशासनिक अगो के कार्यों पर राजनीतिक परिवीक्षण करना, (8) युगोस्लाविया के समाजवादी सघात्मक गणराज्य की सीमाओ म परिवतनो का निणय करना, (9) युद्ध और शान्ति के प्रश्नो पर निणय करना, अन्तर्राष्ट्रीय समझौता की सम्पुष्टि करना, (10) सघीय कानूनो के लागू किये जाने और न्याय पालिका की साधारण समस्याओ के बारे म सघीय न्यायालयो व सघ के सावजनिक अभियोजको की रिपोर्टों पर वाद विवाद करना, स्वायत्तता प्राप्त तथा सघ के अन्य अगो की रिपोर्टो पर वाद विवाद करना, (11) सविधान द्वारा निर्धारित अन्य मामलो के बारे म आवश्यक कायवाही करना। फेडरल एसेम्वली घोषणायें और सक्ल्प पास कर सकती है और राजकीय अगो व स्वायत्तता प्राप्त सगठनो से, सामान्य महत्त्व के मामलो पर अपना मत देते हुए, सिफारिशे कर सकती है।

युगोस्लाविया के सघीय विधानमण्डल के वारे म सवप्रमुख विशेषता, जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है, यह है कि यह अपनी रचना और कायप्रणाली दानो म ही अन्य सभी देशो के विधानमण्डलो से, जिनके बारे म पाठको ने पढा है भिन्न है। यह कथन अत्युक्तिपूण न होगा कि यह एक सवथा नया और अनोखा विधानमण्डल है। यह कहने को पाँच चेम्बरो से मिलकर बना है, वास्तव म इसमे छ चेम्बर हैं। अत यह सर्वविदित एक या दो सदन वाला विधानमण्डल नही है। इसी कारण इसके चेम्बरो के ऊपर वाले या नीचे वाले, अथवा प्रथम व द्वितीय सदन नही कह सकते। उप राष्ट्रो के चेम्बर का स्थान एक दृष्टि से बडा ही महत्त्वपूण है, यद्यपि इसका स्वतन्त्र अस्तित्व भी नही है। यह तो यथाथ म फेडरल चेम्बर का ही एक अग है, परन्तु सविधान मे कोई भी परिवतन इसकी सहमति से ही किया जा सकता है। चूँकि यह विभिन्न गणतन्त्रो व स्वायत्तता प्राप्त प्रान्तो के प्रतिनिधियो से सघातरित इकाइयो की समता के आधार पर निर्मित है, अत सविधान म परिवतन आदि के बारे मे इसका भाग अत्यन्त महत्त्वपूण होने के साथ साथ अन्य सघात्मक सविधानो म दूसरे सदन के समान है। युगोस्लाविया का सविधान भी सघात्मक है, अत उसमे कोई भी परिवतन उप-राष्ट्रो अथवा सघातरित गणतन्त्रो के प्रतिनिधियो की सहमति के विना नही हो सकता। यह उपब ध सविधान के सघात्मक रूप को बनाये रखने के लिए अति आवश्यक और सवथा न्यायोचित है।

बारहवा अध्याय

विभिन्न राज्यों मे विधायी संगठन और प्रक्रियाएँ

1 विधायी सगठन और प्रक्रिया

विभिन्न राज्या के विधानमण्डलो की रचना और शक्तियो का तुलनात्मक अध्ययन कर के साथ उनके सगठन और विधायी तथा वित्तीय प्रक्रियाओ का अध्ययन भी आवश्यक है। बजट और वित्तीय प्रक्रिया का विवेचन तो अगले अध्याय मे किया है, अत इस अध्याय मे विधायिकाओ के सगठन और विधायी प्रक्रियाओ का तुलनात्मक अध्ययन दिया जा रहा है। विधायिका के सगठन के कई पहलू है, उनमे से मुख्य का अति सक्षिप्त उल्लेख यहाँ किया जायेगा और इसी अध्याय के शेष सवशनो मे विभिन्न राज्यो की विधायिकाओ के सगठन का उनकी विधायी प्रक्रियाओ के पूव ही वणन किया गया है।

सत्र व बठकें—साधारणतया विधानमण्डल के सत्र (sessions) दो प्रकार के होते हैं—साधारण या नियमित और विशेष या असाधारण। प्रत्येक विधायिका का वर्ष मे कम से कम एक साधारण या नियमित सत्र होता है और अनेक राज्यो म दो सत्र होत हैं। भारत के सविधान मे प्राविधान है कि एक सत्र के अतिम दिन और दूसरे के पहले दिन के बीच छ माह से अधिक का समय नही बीतना चाहिए। भारत, सयुक्त राज्य अमरीका व अ य प्रजातान्त्रिक राज्यो म विधायिकाओ के सत्र काफी दीघ काल तक चलते हैं, परन्तु सोवियत सघ व चीन मे दोना सत्र मिलाकर लगभग बीस दिन तक चलते हैं। सयुक्त राज्य अमरीका म काग्रेस का नियमित सत्र एक नियत दिन से आरम्भ होता है, अ य राज्यो मे विधायिका को आहूत करने के लिए सदस्यो को सूचना दी जाती है। विशेष या असाधारण सत्र अधिकतर राज्या म कायपालिका अध्यक्ष द्वारा बुलाये जाते है, सयुक्त राज्य अमरीका व फ्रास मे ऐसा ही है। विभिन्न राज्या म सदना की बैठको के लिए भिन्न भिन्न दिन अथवा समय नियत है, उनम स्थायी आदेशो द्वारा ही परिवतन किया जा सकता है। बैठको मे भी कोई एक या दो दिन प्रति सप्ताह गैर सरकारी कायवाही के लिए आरक्षित रहते हैं।

सदस्यों व सदनो का विशेषाधिकार (Privileges)—सभी प्रजातान्त्रिक राज्या मे सदस्यो को मासिक वतन, दनिक व आन जाने का भत्ता और अ य सुविधाएँ प्राप्त होती हैं। सदस्या को सदनो म भाषण की स्वतन्त्रता, सत्र के दौरान बन्दी बनाय जाने के विरुद्ध रक्षा आदि विशेषाधिकार प्राप्त हैं। यद्यपि आजकल वाद विवाद की स्वतन्त्रता को आवश्यक समझा जाता है, किन्तु इसकी प्राप्ति ब्रिटन म भी दीघकालीन प्रवाद के बाद हुई। 1689 के बिल आफ राइट्स म स्पष्ट शब्दा म कहा गया है—'भाषण और वाद विवाद की स्वतन्त्रता अथवा पालियामट म कायवाही की स्वतन्त्रता के विरुद्ध किसी भी न्यायालय म अथवा पालियामेंट के बाहर कोई कायवाही नही की जायगी।' सदस्यो के विशेषाधिकारो के अतिरिक्त सदना क अपने विशेषाधिकार

भी होते हैं, जो व्यक्ति (सदस्य या बाहर के) उनका उल्लंघन करते हैं सदन उन्हें दण्ड दे सकते हैं, जिसमें बन्दीपन का दण्ड भी सम्मिलित है।

अधिकारीगण व कर्मचारीवृन्द—प्रत्येक लोकप्रिय सदन का एक अध्यक्ष और उपाध्यक्ष होता है, जिन्हें स्पीकर व डिप्टी स्पीकर कहते हैं। दूसरे सदन के सभापतियों के लिए कहीं कहीं चेयरमैन शब्द का प्रयोग होता है। कुछ विधायिकाओं में निर्वाचित अथवा पदेन अध्यक्ष व सभापति के अतिरिक्त सभापतियों की एक नामिका (Panel of Chairmen) भी होती है, भारत में ऐसी ही व्यवस्था है। जब कभी अध्यक्ष या उपाध्यक्ष अनुपस्थित होते हैं तो उनका स्थान उस नामिका के सदस्य क्रम से लेते हैं। जबकि लोकप्रिय सदन के अध्यक्ष सभी राज्यों में निर्वाचित होते हैं, दूसरे सदन के सभापति कहीं-कहीं पदेन होते हैं, जैसा कि संयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट और भारत की राज्य सभा के लिए व्यवस्था है। इस समूह में सदन का नेता विरोधी दल का नेता, संयुक्त राज्य अमरीका में बहुसंख्यक दल का नेता सदन का क्लर्क, सेक्रेटरी (सचिव, उप सचिव), चपलेन, दलीय सचेतक (whip) आदि भी सम्मिलित हैं। कुछ विधायिकाओं में कोई समिति या ब्यूरो होती है, फ्रांस के प्रत्येक सदन की एक ब्यूरो होती है, जर्मनी में ब्यूरो के स्थान पर ज्येष्ठ सदस्यों की कौंसिल (Council of Elders) होती है। प्रजातान्त्रिक विधायिकाओं की यह विशेषता है कि उनके कर्मचारीवृन्द व सहायक संगठनों पर कार्यपालिका का नियन्त्रण नहीं होता, वे विधायिका अधिकारियों के ही अधीन होते हैं। कुछ राज्यों की विधायिकाओं में दलीय संगठनों के अधिकारी या उनके विशिष्ट संगठन भी होते हैं। संयुक्त राज्य अमरीका में कॉकस व कान्फ्रेंस ऐसे ही संगठन हैं। अन्य राज्यों में प्रत्येक दल का नेता व उपनेता आदि होते हैं।

सदनों के आन्तरिक संगठन का एक महत्त्वपूर्ण पहलू उनके भवन, और भवन में सरकारी तथा विरोधी पक्ष के बैठने का ढंग (physical setting of legislatures) भी है। जिस प्रकार कि बैठने की व्यवस्था का पढ़ाई के कमरे पर प्रभाव पड़ता है, उसी प्रकार सदन में भी सीटों की व्यवस्था का अपना महत्त्व है। ब्रिटिश कॉमन सभा ने अनेक संसदों के लिए इस प्रकार की व्यवस्था करने में नमूने या आदर्श का काम किया है, क्योंकि उस व्यवस्था की एक विशेष प्रकार के वाद विवाद और विचार विमर्श में उपयोगिता है। 'विधायिका के भवन और उसमें बैठने की व्यवस्था से उसमें विधि निर्माण सम्बन्धी नाटक का बहुत काफी पता लग सकता है।'[1] यह बड़ी ही रोचक बात है कि ब्रिटिश कामन सभा के सदन में केवल 346 सदस्यों के लिए बैठने का स्थान है, जबकि उसके कुल सदस्यों की संख्या 630 है। जिन सदस्यों को बैठने को सीट नहीं मिल पाती वे या तो खड़े रहते हैं या गैलरियों में बैठ जाते हैं। इस प्रकार प्रधानमन्त्री चर्चिल ने कहा था यदि सदन इतना बड़ा हो जाय कि सभी सदस्य इसमें बैठ सकें तो 9/10 वाद विवाद प्रायः खाली या आधे खाली सदन के उदास वातावरण में हुआ करेगी। बातचीत के ढंग के लिए जिससे कि हमारा अधिकांश कार्य किया जाता है काफी थोड़े स्थान की आवश्यकता है, और कुछ महत्त्वपूर्ण अवसरों पर भीड़ का होना अविलम्बता की भावना आवश्यक होती है, यह भावना कि बड़े मामलों पर निर्णय किया जा रहा है। *कॉमन सभा का सदन चौकोर है और उसमें होने वाली* व्यवस्था को निम्न चार्ट द्वारा स्पष्ट किया गया है—

इसके विपरीत फ्रांस की नेशनल एसेम्बली के भवन और उसमें बैठने की व्यवस्था सर्वथा भिन्न है। यह देखने में अर्द्ध चक्र थ्येटर है, जिसमें बेंचों के स्तर ऊपर उठते चले गये हैं। सामने की प्रमुख बेंच पर कैबिनेट के सदस्य और समितियों के वे प्रतिनिधि बैठते हैं जो विधेयकों को

[1] The physical setting of a legislature can tell us a great deal about the enacting of the legislative drama Merkl Peter H *Political Continuity and Change* p 243

वाद विवाद के लिए प्रस्तुत करते हैं। वे सभी अध्यक्ष के सामने बैंठते है, जिसका उठा हुआ स्थान अर्द्ध चक्र के बीच मे है और जिसके दोनो ओर सचिव बैंठते हैं। उसमे ब्रिटिश कॉमन सभा की भांति सरकारी पक्ष और विरोधी पक्ष आमने सामने नही बैंठते, वरन् विभिन्न दल अतिवादी वामप थी से लेकर अतिवादी दक्षिण प थी तक क्रम से बैंठते हैं। इसका चाट नीचे दिया गया है।
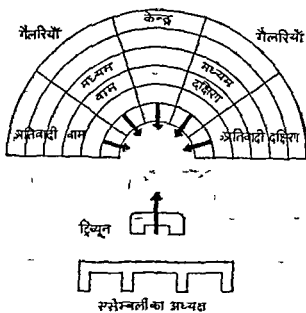
विधायी संगठन और प्रक्रिया का एक अति महत्वपूर्ण पहलू समितियों का प्रयाग है। एक ओर समितियाँ विधायिका के आन्तरिक संगठन का आवश्यक अग हैं, दूसरी ओर विधायी प्रक्रिया

भी होते हैं, जो व्यक्ति (सदस्य या बाहर के) उनका उल्लघन करते है सदन उन्हे दण्ड दे सकते हैं, जिसम बन्दीगृह का दण्ड भी सम्मिलित है।

अधिकारीगण व कर्मचारीवर्ग—प्रत्येक लोकप्रिय सदन का एक अध्यक्ष और उपाध्यक्ष होता है, जिन्हे स्पीकर व डिप्टी स्पीकर कहते हैं। दूसरे सदन के सभापतियो के लिए कहीं कहीं चेयरमन शब्द का प्रयोग होता है। कुछ विधायिकाओ म निर्वाचित अथवा पदेन अध्यक्ष व सभापति क अतिरिक्त सभापतियो की एक नामिका (Panel of Chairmen) भी होती है, भारत म एसी ही व्यवस्था है। जब कभी अध्यक्ष या उपाध्यक्ष अनुपस्थित होते हैं तो उनका स्थान उस नामिका के सदस्य क्रम से लेते हैं। जबकि लोकप्रिय सदन क अध्यक्ष सभी राज्यो म निर्वाचित होते हैं, दूसरे सदन के सभापति कहीं-कहीं पदेन होते हैं, जैसा कि सयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट और भारत की राज्य सभा के लिए व्यवस्था है। इस समूह म सदन का नेता विरोधी दल का नेता, सयुक्त राज्य अमरीका म बहुसख्यक दल का नेता सदन का क्लार्क, सेक्रेटरी (सचिव, उप सचिव), चपलैन, दलीय सचेतक (whip) आदि भी सम्मिलित हैं। कुछ विधायिकाओ म कोई समिति या ब्यूरो होती है, फ्रास के प्रत्येक सदन की एक ब्यूरो होती है, जर्मनी म ब्यूरो के स्थान पर ज्येष्ठ सदस्यो की कौंसिल (Council of Elders) होती है। प्रजातान्त्रिक विधायिकाओ की यह विशेषता है कि उनके कर्मचारीवृन्द व सहायक सगठनो पर कार्यपालिका का नियन्त्रण नहीं होता, व विधायिका अधिकारियो के ही अधीन होते हैं। कुछ राज्यो की विधायिकाओ म दलीय सगठनो के अधिकारी या उनके विशिष्ट सगठन भी होते हैं। सयुक्त राज्य अमरीका म कॉकस व कान्फ्रेंस एसे ही सगठन हैं। अन्य राज्यो म प्रत्येक दल का नेता व उपनेता आदि होते हैं।

सदनो के आन्तरिक सगठन का एक महत्त्वपूर्ण पहलू उनके भवन, और भवन म सरकारी तथा विरोधी पक्ष के बैठने का ढग (physical setting of legislatures) भी है। जिस प्रकार कि बैठने की व्यवस्था का पढ़ाई के कमरे पर प्रभाव पडता है, उसी प्रकार सदन म भी सीटो की व्यवस्था का अपना महत्त्व है। ब्रिटिश कॉमन सभा ने अनेक ससदो के लिए इस प्रकार की व्यवस्था करने म नमूने या आदर्श का काम किया है, क्योकि उस व्यवस्था की एक विशेष प्रकार के वाद विवाद और विचार विमर्श म उपयोगिता है। 'विधायिका के भवन और उसम बैठने की व्यवस्था से उसम विधि निर्माण सम्बन्धी नाटक का बहुत काफी पता लग सकता है।'[1] यह बडी ही रोचक बात है कि ब्रिटिश कामन सभा क सदन म केवल 346 सदस्यो के लिए बैठने का स्थान है, जबकि उसके कुल सदस्यो की सख्या 630 है। जिन सदस्यो को बैठने को सीट नहीं मिल पाती व या तो खडे रहते है या गैलरियो म बैठ जाते है। इस प्रकार प्रधानमन्त्री चर्चिल ने कहा था यदि सदन इतना बडा हो जाय कि सभी सदस्य इसम बैठ सके तो 9/10 वाद विवाद प्राय खाली या आधे खाली सदन के उदास वातावरण म हुआ करेगी। बातचीत के ढग के लिए जिससे कि हमारा अधिकाश कार्य किया जाता है काफी थोडे स्थान की आवश्यकता है, और कुछ महत्त्वपूर्ण अवसरो पर भीड का होना अविलम्बता की भावना आवश्यक होती है, यह भावना कि बडे मामलो पर निर्णय किया जा रहा है। कॉमन सभा का सदन चौकोर है और उसम होने वाली व्यवस्था को निम्न चार्ट द्वारा स्पष्ट किया गया है—

इसके विपरीत फ्रास की नेशनल एसेम्बली के भवन और उसमे बैठने की व्यवस्था सर्वथा भिन्न है। यह देखने म अर्द्ध चक्र थ्येटर है, जिसम बेंचो के स्तर ऊपर उठते चले गये है। सामने की प्रमुख बेंच पर केबिनेट के सदस्य और समितियो के वे प्रतिनिधि बैठते है जो विधेयको को

[1] The physical setting of a legislature can tell us a great deal about the enacting of the legislative drama Merkl Peter H *Political Continuity and Change*, p 243

2 ग्रेट ब्रिटेन का विधायी सगठन और प्रक्रिया

लार्ड सभा का सगठन—लाड सभा के प्राय सभी अधिकारी नियुक्त किये जाते हैं, उनका चुनाव नही होता। सबसे प्रमुख अधिकारी इसका सभापति लाड चासलर होता है। लाड सभा के अय अधिकारी, जि ह सरकार ही नियुक्त करती है, ये हैं—रेकाड रखने के लिए सार्जेण्ट एट-आम्स और जेटलमेन अशर आफ दी ब्लेक रॉड (Gentleman Usher of the Black Rod), एक शान वाला अधिकारी, जिसका कॉमन सभा के सदस्या को, जब सदन म उनकी उपस्थिति आवश्यक हो, बुलाना तथा समारोह के अवसरो पर कुछ अय काय करना है। सदन प्रत्यक सत्र के आरम्भ होने पर एक अधिकारी का निर्वाचन भी करता है, जिसे समितिया का लाड-सभापति कहा जाता है और जो पूण सदन की समिति, प्राइवट विधेयकों की समितियो तथा ऐसी समितियो का सभापति रहता है, जिनके लिए कोई दूसरी व्यवस्था नही की जाती।

लाड सभा वेस्टमिंस्टर स्थित अपने भवन म एकत्रित होती है। यह एक बडाही प्रभावोत्पादक भवन है जिसे ससार का सबसे सुदर विधायी भवन कहा जाता है। यहाँ पर अवकाश और विलास का वातावरण रहता है। लाड सभा और कॉमन सभा के सत्र साथ-साथ होते हैं। लाड सभा की बैठकें साधारणतया मगल, बुध और बृहस्पतिवार को होती हैं, कभी कभी इसकी बैठके सोमवार को भी हो जाती है। इसकी बठकें साधारणतया 1–2 घण्ट चलती हैं और उनम भी उपस्थिति बहुत कम रहती है। इसकी बठका के लिए गणपूर्ति (quorum) केवल तीन सदस्या की उपस्थिति है, किन्तु किसी विधेयक को पास करने के लिए कम से कम 30 सदस्य अवश्य ही रहने चाहियें। इसकी बैठको म बहुत कम प्रश्न पूछे जाते हैं और कुछ अवसरो को छोडकर जबकि इनम दिलचस्प तथा ऊँचे स्तर का वाद विवाद होता है साधारणतया इसकी कायवाही अभिरुचिपूण नही होती।

लाड सभा की समितियाँ—इसकी समिति पद्धति बहुत कुछ कॉमन सभा की पद्धति के ही समान हैं। लाड सभा सम्पूर्ण सदन की समिति के अतिरिक्त सत्र व प्रवर समितिया का बडा प्रयोग करती है और इसकी एक स्थायी समिति भी होती है, जो कॉमन सभा से आये विधेयको की भाषा दोहराती है। इसका भी निर्माण प्रत्येक सत्र के प्रारम्भ मे ही होता है। सत्र समितियो म ये मुख्य हैं—(1) विशेषाधिकार समिति, (2) अपील समिति, (3) स्थायी आदेश समिति, (4) चयन समिति (Committee of Selection), (5) लाड सभा द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं की समिति इत्यादि। प्रवर समितियो के सदस्यो के नाम सदन ही तय करता है और साधारणतया वे अपने अध्यक्ष स्वय नियुक्त करने की शक्ति पाता है।

सदन की कायवाही के नियम आदि—लार्ड सभा के बहुत से स्थायी आदेश (standing orders) हैं, किन्तु वाद विवाद को नियमित करने के लिए केवल दो ही है। प्रथम, एक सदस्य किसी भी प्रस्ताव पर एक बार से अधिक नहीं बोल सकता, केवल प्रस्तावक को उत्तर देने का अधिकार और है। दूसरा, वाद विवाद विचारणीय प्रश्न से सम्बधित होना चाहिए। सभापति को वाद विवाद के सम्बन्ध म नियन्त्रण के अधिकार प्राप्त नही हैं, उसका मुख्य काय तो प्रस्तावो पर मतदान कराना तथा उनके परिणाम की घोषणा करना है। वह वाद विवाद म अपने स्थान से (from his seat as a peer) भाग भी ले सकता है। ऐसा होन पर भी लाड सभा म कभी अनुशासनहीनता अथवा अव्यवस्था नहीं होती। लाड सभा ही ससार का ऐसा सदन है जहा सदस्यगण ही सामूहिक रूप से सदन की कायवाही चलाते हैं और इस काय को भली प्रकार करते हैं। लार्ड सभा के सदस्य सभापति को सम्बोधित न करके अय लार्डों को 'माई लाडस' सम्बोधित करते हैं।

म समिति स्टेज का स्थान बहुत महत्त्वपूण है । प्रजातान्त्रिक विधायिकाओ मे समितियो की सख्या काफी बडी होती है । वास्तव म, विधि-निर्माण का अधिक महत्त्वपूर्ण अश समितियो म ही पूण होता है । उनके निर्माण और काय करने मे दो सिद्धान्तो को लागू किया जाता है—विशेषीकरण का सिद्धान्त तथा श्रम विभाजन का सिद्धान्त । उनके प्रयोग से विधायिकाओ का बहुत सा मूल्य वान समय बच जाता है । सोवियत सघ व चीन आदि साम्यवादी राज्यो की विधायिकाओ म समितियो की सख्या कम है और उनका महत्त्व भी प्रजातान्त्रिक राज्या की तुलना मे बहुत कम है । साधारणतया समितियाँ दो प्रकार की होती हैं—स्थायी (standing) और तदथ या प्रवर (ad hoc or select), जिन्ह विशेष प्रकार की समितियाँ भी कह सकते है । विभिन्न राज्या की समिति पद्धतियो का विवेचन आगे के सैक्शनो म यथास्थान किया गया है ।

विधायी प्रक्रिया—ससदीय प्रक्रिया के नियमो को प्रजातन्त्र के व्यवहार मे बडा महत्त्व है । प्रजातान्त्रिक विधायिका की एक विशेषता यह है कि वह अपनी प्रक्रिया के निर्धारण म स्वतन्त्र हो । प्रक्रिया सम्बन्धी स्वतन्त्रता के अनुसार ससद, साविधानिक कार्यों और प्राविधानो के भीतर रहते हुए, अपनी कायवाही या काय प्रणाली पर पूण नियन्त्रण का प्रयोग करती है । विधायिका मे होने वाले वाद विवाद और निणयो म प्रक्रिया नियमो का भाग बहुत ही महत्त्वपूण रहता है । प्रजातन्त्र का आधार बहुसख्या (बहुमत) का शासन है, परन्तु सच्चे प्रजातन्त्र म अल्प सख्या के मत का उचित ध्यान रखा जाना अति आवश्यक है । इस उक्ति मे सत्य का बडा अश है कि 'ससदीय प्रक्रिया का मुख्य प्रयोजन अल्पमत की रक्षा करना है बहुमत तो स्वय अपनी रक्षा कर ही सकता है ।'[1]

परन्तु यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि विधायी प्रक्रिया ससदीय प्रक्रिया का एक अग है । ससदीय प्रक्रिया मे वित्तीय प्रक्रिया भी सम्मिलित है जिसका विस्तारपूण विवेचन आगामी अध्याय मे किया गया है । किसी भी विधायिका की विधायी प्रक्रिया उसकी सरचना (structure) साविधानिक स्थिति और कार्यों पर निभर करती है । यदि विधायिका दो सदन वाली है तो दोना सदना की शक्तिया सम या भिन्न हो सकती है, विशेष रूप से वित्तीय क्षेत्र मे दूसरे सदन की शक्तियाँ सीमित होती हैं । दोनो सदनो के बीच सम्बन्धो को विनियमित करने तथा उनके बीच मतभेद या गतिरोध उत्पन्न हो जाने पर उसे दूर करने के लिए नियमो का होना आवश्यक है । विधेयक के तीन वाचन, प्रश्न प्रस्ताव (resolutions), सकल्प, याचिका और अन्य कार्यों के बारे म विधायिका के अनेक नियम होते है । किसी किसी विधायिका म तो उनकी सख्या बहुत बडी होती है, उन्हे कुछ राज्यो मे स्थायी आदेश (standing orders) कहते है और दूसरो मे केवल प्रक्रिया नियम (rules of procedure) । विधेयक भी—सावजनिक, व्यक्तिगत या निजी होते है और उनके बारे मे प्रक्रिया नियम भी भिन्न भिन्न होते है । वाद विवाद को सीमित रखने के लिए प्रत्येक विधायिका में उस अन्त करने की विधियाँ (methods of closure) भी अलग अलग हैं ।

उपरोक्त के अतिरिक्त प्रक्रिया मे कई समस्याएँ अन्तग्रस्त हैं (1) दोना सदनो म किसी विधेयक पर साथ साथ विचार किया जाना अथवा एक क बाद दूसरे म, (2) सरकारी काय और गैर-सरकारी कार्यों के बीच प्राथमिकता, (3) धन विधेयकों को आरम्भ करना, (4) समितियो का भाग, (5) विभिन्न मजिलें जिनम से होकर कोई विधेयक अधिनियम बनने से पूर्व गुजरता है, (6) प्रदत्त अथवा अधीनस्थ विधि निर्माण, (7) वाद विवाद का अन्त करने की विधियाँ, और (8) मतदान की विधियाँ आदि ।

---

[1] As has been said so frequently the chief purpose of parliamentary procedure is to protect the rights of the minority The majority can usually take care of itself' Jones, *Parliamentary Procedure at a Glance* p

है और वेस्टमिस्टर महल मे निवास स्थान भी। पद से निवृत्ति के बाद उसे 4,000 पौंड वार्षिक पेन्शन दी जाती है और पीयर बना दिया जाता है।

उसके कार्यों का महत्त्व बहुत अधिक है। वह अल्पसख्यक दलो की रक्षा करता है, क्योकि वाद विवाद की समाप्ति पर उसकी स्वीकृति आवश्यक है। अध्यक्ष अपने कर्त्तव्यो के पालन म निष्पक्ष रहता है। 1945 म डगलस क्लिफ्टन ब्राउन ने कहा था—अध्यक्ष रूप म म न सरकार का आदमी हूँ और न विरोधी दल का, मैं कॉमन सभा का आदमी हूँ और मेरा विश्वास है कि म पीछे की बेंचो पर बैठने वाले सदस्यो का आदमी हूँ। चूंकि अब कार्यपालिका अधिकाधिक शक्तिशाली होती जा रही है, अध्यक्ष ने सदन के अधिकारो की रक्षा का महत्त्वपूर्ण प्रयत्न किया है। वह सदस्यो को अनुचित शब्दो के प्रयोग से रोकता है तथा उन्हे उसके लिए दण्ड भी दे सकता है।

अध्यक्ष के मुख्य कार्य अग्रलिखित हैं—(1) वाद विवाद की देख-रेख करना, व्यवस्था बनाये रखना, अनुचित रूप से देरी उत्पन्न करने वाले प्रस्तावो पर आने न देना और सदन के नियमो के सम्बन्ध मे उत्पन्न हुए विवादो पर, निर्णय देना। (2) सदस्यो को बोलने की आज्ञा देना (Catching the Speaker's eye) और यह देखना कि उसके भाषण विचारणीय विषय से सम्बद्ध (relevant) और नियमो के अनुसार है। अल्पसख्यक दल के सदस्यो को अपनी बात कहने का उचित अवसर देना। (3) धन विधेयक का निर्णय करना। (4) ऐसे सदस्यो की पनल (Panel) नियुक्त करना, जिनम से स्थायी समितियो के सभापति छाँटे जाते हैं। (5) अमुक विधेयक किस समिति के विचारार्थ भेजा जायेगा, यह निर्णय करना। (6) जब कभी आवश्यकता पड जाये निर्णायक मत देना। (7) यह निर्णय करना कि 'अविलम्ब सार्वजनिक महत्त्व' का प्रस्ताव उचित है या नही। (8) बाहरी व्यक्तियो के सम्बन्ध म सदन के प्रतिनिधि रूप मे कार्य करना तथा सदन की ओर से राजा के सम्मुख बोलना। (9) सदस्यो को निलम्बित करना तथा अन्य प्रकार से दण्ड देना। (10) यह देखना कि मतदान कार्य ठीक प्रकार से होता है और मतदान का फल घोषित करना।

ब्रिटिश कामन सभा का अध्यक्ष निर्वाचन के उपरान्त दल से सभी प्रकार का सम्बन्ध विच्छेद कर देता है। सदन की कार्यवाही के सचालन मे वह पूर्ण निष्पक्षता बरतता है और सभी कार्य समस्त सदस्यो के हित का ध्यान रखते हुए करता है। प्रक्रिया सम्बन्धी प्रश्नो तथा विवादो पर उसके निर्णयो को स्वत स्वीकार कर लिया जाता है, क्योकि मित्रो को आमन्त्रण देते समय या सदस्यो को सदन मे बोलने का अवसर देते समय या 'व्यवस्था' सम्बन्धी नियम भग के प्रश्न पर अपना निर्णय देते समय वह न्यायाधीश की निष्पक्षता से कार्य करता है। उससे यह आशा की जाती है कि वह इतना निष्पक्ष रहे जितना कि कोई व्यक्ति हो सकता है। साधारणतया इस पद पर निर्वाचित होने वाला सदस्य असाधारण राजनीतिक महत्त्व का व्यक्ति नही होता, परन्तु वह ऐसा व्यक्ति होता है जिसने राजनीतिक आकाक्षाएँ त्याग दी हो और जो दलीय राजनीति व प्रवादो से अलग रहना चाहता हो। यहा तक कि वह अपने पुनर्निर्वाचन के लिए भी चुनाव अभियान सगठित नही करता। ब्रिटिश अध्यक्ष के विपरीत सयुक्त राज्य अमरीका के प्रतिनिधि सदन का अध्यक्ष दलीय व्यक्ति होता है।

सदन के अधिकारी—1942 तक प्रधानमन्त्री ही (यदि वह पियर होने के कारण लार्ड सभा का सदस्य न होता था) साधारणतया कॉमन सभा का नेता होता था, परन्तु 1942 की फरवरी के बाद मि० चर्चिल और उसके बाद उसके उत्तराधिकारी मेजर एटली ने इस प्रथा को तोड दिया अर्थात् वे स्वय सदन के नेता न रहे। केबिनेट के अधीन रहते हुए सदन के नेता का सदन के कार्य व सरकारी कार्यक्रम के बारे म सर्वोच्च उत्तरदायित्व होता है। उसका यह एक

कॉमन सभा का सगठन—पार्लियामट के सदस्य अपने कत्तव्या का अच्छी तरह से पालन कर सके, इस उद्देश्य से कॉमन सभा ने अतीत म कुछ विशेपाधिकारा (Privileges) का दावा किया और उसे वे विशेपाधिकार प्राप्त हुए। लगभग सोलहवी शताब्दी के मध्य से यह प्रथा चली आ रही है कि सभा का अध्यक्ष प्रत्येक पार्लियामेंट की ओर से उनके प्राचीन विशेपाधिकार, विशेप रूप से वन्दी न बनाये जाने की स्वतत्रता व भापण की स्वतत्रता आदि का दावा करता है और लाड चासलर, राजा अथवा रानी की ओर से उन सबकी स्वीकृति का अनुसमथन करता है। सदस्यो के मुख्य विशेपाधिकार इस प्रकार है (1) कॉमन सभा को (व्यक्तिगत सदस्यो को नही) राजा या रानी के पास पहुँच की स्वतत्रता है। (2) वन्दी बनाये जान से स्वत त्रता। इसका उद्देश्य न्याय की साधारण प्रक्रियाओ को निरथक बनाना नही है। आजकल यह माना जाता है कि दीवानी कायवाही के सम्बन्ध मे पार्लियामट के सदस्य की गिरफ्तारी विशेपाधिकार का उल्लघन नही है। भापण की स्वतत्रता—इस विशपाधिकार का बडा ऐतिहासिक महत्त्व है, जिसके मनवाने के लिए बहुत से सदस्या को कष्ट सहना पडा और कुछ को जान भी देनी पडी।

इनके अतिरिक्त कॉमन सभा के सदस्या को 1957 म वार्पिक वेतन व भत्ते के रूप म क्रमश 1,000 व 750 पौड मिलते थे, परन्तु 1964 से उन्हे 3,250 पौंड वार्पिक मिलने लगे हैं, किन्तु उनकी यह आय कर स मुक्त नही है। यह वेतन तथा भत्ता उनके काय के ऊपर नही मिलता अर्थात् सदस्य निर्वाचित होन पर भी वे इसके अधिकारी हो जाते हैं, चाहे वे कॉमन सभा की बैठको म भी उपस्थित न हो, क्योकि ब्रिटेन मे कोई ऐसी कानूनी व्यवस्था नही जो निर्वाचित सदस्य को कॉमन सभा की बैठको मे भाग लेने के लिए बाध्य करे, किन्तु ऐसे सदस्या को अगली बार न तो कोई दल खडा करेगा और न ही उसे मतदाता चुनेंगे।

कामन सभा का अध्यक्ष—कॉमन सभा के अध्यक्ष का पद बहुत ही प्रतिष्ठित, सम्मानित व शक्तिशाली है। अध्यक्ष को सदन का प्रवक्ता होने क नाते 'स्पीकर' की उपाधि मिली थी, परन्तु अब स्पीकर का सदन मे बोलन का काय 'नही' के समान रह गया है। उसका पद अत्यधिक प्रतिष्ठा का है। कॉमन सभा के सभी सदस्य उसका सभापतित्व करने वाल देवता के रूप म आदर करते हैं। डिजरायली के शब्दा मे 'उसकी पोशाक की खडखडाहट ही गडबड को शान्त करने के लिए पर्याप्त होती थी। पार्लियामेन्ट के बाहर समारोह के सभी अवसरा के लिए अध्यक्ष ही कॉमन सभा होता है।'[1] सदन के लिए यह एक महत्त्वपूण विजय थी, जब उस अपना अध्यक्ष चुनने का अधिकार मिला। अभी तक सदन द्वारा निर्वाचित अध्यक्ष के नाम पर ताज की अनुमति ली जाती है, यद्यपि ताज की अनुमति केवल औपचारिक बात रह गई है। अध्यक्ष का चुनाव प्रत्येक नई पार्लियामेन्ट के कार्यारम्भ पर होता है और वह अपने पद पर तब तक रहता है जब तक कि पार्लियामन्ट विघटित हो। चूकि ब्रिटिश अध्यक्ष निष्पक्ष होता है, इसलिए यहाँ यह प्रथा पड गई है कि जब तक पूवगामी सदन का अध्यक्ष सदन का सदस्य रहता है (और उसका चुनाव निर्विरोध होता है) तो उसी का फिर से निर्वाचन हा जाता है। सदन द्वारा चुनाव केवल एक औपचारिक कायवाही होती है, वास्तव मे अध्यक्ष का चुनाव, जब कभी स्थान रिक्त होता है, प्रधानमन्त्री और अन्य नेता सहमति से करते है, किन्तु वे इस बात का ध्यान रखते है कि उसका चुनाव सदस्यो की बहुसख्या को स्वीकार होगा। 1950 म मजदूर दल ने पूवगामी अध्यक्ष के विरुद्ध अपना अधिकृत उम्मीदवार तो नही खडा किया, किन्तु एक स्वत त्र मजदूर दलीय उम्मीदवार ने उसका चुनाव मे विरोध किया जो बुरी तरह से पराजित हुआ। अध्यक्ष को 5,000 पौड वार्पिक मिलता

[1] *Outside the Parliament Mr Speaker is for ceremonial purposes the House of Commons inside the House his word is law His rising is a signal for members on the floor to sit*' Jennings I, *English Institutions* p 89

भी मध्यकाल स चला आ रहा है। अध्यक्ष क दाहिनी ओर सरकारी सदस्यो की बेंच (Treasury Benches) हैं और सामने विरोधी पक्ष की। सदन म किसी भी वक्ता के भाषण की सराहना इन शब्दो के प्रयोग से की जाती है—सुनिय सुनिय। अध्यक्ष के निर्वाचन स पूव कॉमन सभा के सदस्यो को एकत्रित होन पर लाड सभा का एक दूत, जो हाथ म एक काला डण्डा लिए रहता है (Gentleman Usher of the Black Rod), उन्ह बुलाकर लाड सभा म सदन म लाता है, वहाँ पर लाड कमिश्नर उन्ह निदश दत हैं कि व अध्यक्ष का चुनाव करें। सदस्यगण फिर अपन सदन म लौटकर आते है और अध्यक्ष का चुनाव करत हैं। उसके बाद काल डण्डे वाला दूत उन्ह फिर एक बार राजा (या रानी) का भाषण (Speech from the Throne) सुनने क लिए लाड सभा के भवन म बुलाकर लाता है। भाषण म कहा जाता है कि उसकी सरकार के प्रस्ताव आदि क्या हैं। यह सभी जानते हैं कि यह भाषण केबिनट द्वारा तयार किया जाता है, फिर भी कॉमन सभा क सदस्य अपने भवन म लौटकर आते हैं और राजा के भाषण के लिए धन्यवाद प्रस्ताव पर बडी गम्भीरतापूवक वाद विवाद करते हैं। सदन की कायवाही म पूण शिष्टाचार का पालन होता है।

सदन के सत्र, बैठकें और दनिक कायक्रम आदि—प्रति वष कॉमन सभा का कम से कम एक सत्र (session) होना आवश्यक है, क्योकि दो सत्रो क बीच 12 माह स अधिक नही बीतने चाहिएँ। साधारणतया एक सत्र 5–7 माह तक चलता है। वार्षिक सत्र बहुधा नवम्बर के शुरू म आरम्भ होता है और जून या जुलाई तक चलता है, किन्तु क्रिसमस के पूव से लेकर जनवरी के अन्त तक सदन स्थगित रहता है। केबिनट क परामश पर ताज पालियामेन्ट का सत्रावसान करता है—सत्रावसान पर सभी प्रस्ताव तथा लम्बित काय (Pending Business) का अन्त हो जाता है और आगामी सत्र म उन्ह नये सिरे स पेश किया जाता है। पाँच वष बाद या उसके पूव ही (यदि सदन की अवधि बढाई न जाये) केबिनेट के परामश से उसका विघटन किया जाता है।

सदन मे प्रक्रिया सम्बन्धी नियम (Standing Orders)—वाद विवाद पालियामेन्ट के कार्यो मे सवप्रमुख कृत्य है। लाड सभा के सदस्य अपने सहयोगी लार्डों को और कॉमन सभा के सभी सदस्य अध्यक्ष को सम्बोधित करके भाषण देते हैं। सदस्य बोलते समय किसी अन्य सदस्य का नाम नही लेते वरन् आवश्यकतानुसार कहते है 'अमुक निर्वाचन क्षेत्र क लिए आदरणीय सदस्य'। भाषण विचाराथ विषय से ही सम्बन्धित होने जरूरी है। अपमानसूचक तथा दूसरो को बुरे लगने वाले वाक्याश का प्रयोग निषिद्ध है। यदि कोई सदस्य नियमो का उल्लघन करता है, तो अन्य सदस्य तुरन्त ही 'व्यवस्था व्यवस्था' की आवाज लगाते हैं और अध्यक्ष बोलने वाल सदस्य से नियम पालन कराता है। यदि सदस्य अध्यक्ष का कहना न मान तो अध्यक्ष उसका नाम लेता है और सदन का नेता यह प्रस्ताव पश करता है कि उस सदस्य को सदन की सेवा से निलम्बित कर दिया जाय। सदन म प्रस्ताव स्वीकृत हो जाने पर सदस्य को सदन छोडना पडता है।

सदन म भाषणो पर समय सीमा नही है, परन्तु सदन का रुख लम्बे भाषणो के विरुद्ध है। यदि सदन मे उपस्थित सदस्यो की सख्या गणपूर्ति से कम होती है, तो गिनती करान के लिए माग की जा सकती है और सख्या 40 से कम होने पर सदन की कायवाही समाप्त हो जाती है। सदन मे बैठने के स्थान के बगल म मतदान क स्थान (division lobbies) है। जब किसी प्रश्न पर वाद विवाद समाप्त हो जाता है तो अध्यक्ष प्रश्न को रखता है और प्रश्न के पक्ष मे सदस्य 'हाँ' या 'ना' कहलाता है, तब वह घोषित करता है कि प्रश्न का निणय किस पक्ष म हुआ, परन्तु यदि कभी विशेष रूप से विरोधी दल के सदस्य माँग करें तो मतगणना की जाती है अर्थात् सदस्यगण घण्टी बजन पर 'हाँ' तथा 'ना' वाली लाबी म जाते है और उनकी गिनती की जाती है।

वाद विवाद की समाप्ति के रूप (Forms of Closure)—इनके तीन रूप है—

विशेष उत्तरदायित्व है कि वह प्रक्रिया सम्ब धी कठिनाइयो, विशेषाधिकार के मामला, आ तरिक मामलो और समारोहो क अवसरो पर सदन का माग दशन करे। विरोधी पक्ष क नता (Leader of Opposition) के महत्त्व का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि उसे सचित निधि से 3,000 पौड वार्षिक वेतन दिया जाता है। विरोधी पक्ष का नेता सम्भावित प्रधानम त्री होता है। वह सदन का ऐसा सदस्य होता है जो विरोधी पक्ष मे अधिक सख्या वाल दल का नेता होता है। यदि इस सम्ब ध म कोई मतभेद उठे तो उसका अ तिम निणय कामन सभा का अध्यक्ष ही कर सकता है।

कॉमन सभा के वैतनिक अधिकारियो म एक सदन का क्लक होता है और उसके दो सहायक होते है। ये अधिकारी सदन की कायवाही का रिकाड रखते है। सदन मे आवश्यकता पडन पर पुलिस काय करने के लिए एक सशस्त्र सार्जेन्ट (Sergeant at arms) और उसके अधीन अधिकारी चपलेन (Chaplain) होता है जो समारोहा पर धार्मिक कृत्य कराता है। क्लक और सार्जेन्ट की नियुक्ति प्रधानम त्री की नामजदगी पर जीवन भर के लिए राजा द्वारा की जाती है पर तु चैपलेन को अध्यक्ष ही नियुक्त करता है। सदन का क्लक और दो सहायक सदन के महत्त्व पूण अधिकारी है और वे निष्पक्ष हाते है, इसलिए उनकी स्थिति सदन म स्वत त्र अधिकारिया की होती है। उसके सहायको की नियुक्ति कानून के अनुसार होती है। अध्यक्ष के निर्देशानुसार वे सदन का कायक्रम (order paper) तैयार करत है और सदन मे हुए मतदानो एव कायवाही क रिकाड रखत हैं। व्यवस्था और प्रक्रिया के विषय म सदन क सदस्यो को और आवश्यकता पडने पर वे अध्यक्ष को भी परामश व सहायता दते है। इनके अतिरिक्त मार्गोपाय समिति (Committee of Ways and Means) के सभापति व उप सभापति होते है जि हे अब सामा यतया समितियो के सभापति व उप सभापति कहा जाता है। इनका चुनाव भी सदन द्वारा अध्यक्ष की भाति पार्लियामे ट की अवधि के लिए होता है। समितिया का सभापति (उसकी अनुपस्थिति म उप सभापति) सदन की कायवाही का सभापतित्व करता है, जबकि सदन सम्पूण सदन की समिति के रूप मे बैठता है और अ य अवसरो पर भी जबकि अध्यक्ष उनस इस हेतु प्राथना करे।

सासद पद्धति का प्रभावी होना बहुत सीमा तक दलीय सचेतको (Party-whips) पर निभर करता है, जो अपन अपने दल के सदस्यो म अनुशासन बनाये रखते है। प्रत्येक दल के सचेतको का यह कत्तव्य है कि वह दल के सदस्यो से सम्पक बनाये रखें, उ ह सूचित करत रह कि सदन के विचाराथ क्या प्रश्न आने वाले है तथा कब मतदान होना है और यह दखना भी कि सदस्यगण मतदान के समय उपस्थित रह। वे अपने अपने दल के सदस्यो का उनकी उपस्थिति के सम्ब ध मे आवश्यक आदेश दत है—विचारणीय प्रश्नो के महत्त्व के अनुसार उन पर एक दो या तीन रेखाएँ अकित हाती है। तीन रखाओ वाल आदश (whip) का अथ यह होता है कि सदस्य का अवश्य ही सदन म उपस्थित होना है। वे वाद विवाद के भाषणो को सगठित करते है और अध्यक्ष का सूचित करत है कि कि हे बोलने के लिए कहा जाय। दोनो दलो के सचेतक मिलकर सदन की कायवाही के सम्ब ध म योजना बनाते हैं। सत्तारूढ दल का मुख्य सचेतक ट्रेजरी का ससदीय सचिव होता है और उसे सरकारी वेतन मिलता है। अ य दल के सचेतका का कोई वेतन नही मिलता। वह प्रधानम त्री के निकट सम्पक म रहता है और उसे परामश दता रहता है कि कि ह पदोन्नति व सम्मानित पद मिलन चाहिएँ। उस प्रधानम त्री का बाजू आख व कान कहा जाता है।

सदन की काय प्रणाली—सदन की दनिक बैठक का काय स्पीकर के जलूस के आने के बाद प्राथना से आरम्भ होता है। प्राथना के बाद दरबान चिल्लाकर कहता है कि न स्थान ग्रहण कर लिया है। मेज पर अध्यक्ष की मस (Mace) रखी जाती है। मस

में ही विचार किया जाता है, यद्यपि उसका नाम बदल जाता है । जब इसमें अनुमानों (Estimates) पर विचार होता है तो इसे कमेटी आफ सप्लाई (Committee of Supply) कहते हैं । विनियोग कर व धन निकालने के लिए प्रस्तावों पर विचार करते समय यह मार्गोपाय समिति (Committee of Ways and Means) कहलाती है ।

(2) स्थायी समितियाँ (Standing Committees)—1945 से पूर्व उनकी संख्या पाँच तक सीमित थी किन्तु अब कोई प्रतिबंध नहीं है, यद्यपि किसी भी समय इनकी संख्या छः से नहीं बढ़ी है । इन समितियों के नाम वर्णाक्षर पर अ, ब, स, द, ई, (A, B, C, D E) हैं । प्रत्येक समिति में लगभग 20 स्थायी सदस्य होते हैं और प्रत्येक विधेयक पर विचार करने के समय लगभग 25–30 अस्थायी सदस्यों को जोड़ लिया जाता है । प्रत्येक समिति में सदस्य विभिन्न दलों के सदन में अनुपात के अनुसार रहते हैं, यद्यपि सदस्यों के चयन सदस्यों की व्यक्तिगत अभिरुचियों योग्यताओं और भौगोलिक प्रतिनिधित्व का भी ध्यान रखा जाता है । सदस्यों की नामजदगी 'चयन समिति' (Committee of Selection) द्वारा की जाती है । स्थायी समितियों के सभापतियों को लगभग एक दर्जन सदस्यों के पैनल (जिसे अध्यक्ष नियुक्त करता है) में से लिया जाता है । सभापति की नियुक्ति एक विधेयक के ऊपर विचार करने के लिए होती है और वह कार्य समाप्त होने पर हट जाता है । इन समितियों के कार्य क्षेत्र विशेष रूप से विभाजित नहीं हैं, अर्थात् वे किसी विषय विशेष से सम्बन्धित नहीं होती, वरन् वे किसी भी विधेयक पर विचार कर सकती हैं । दूसरे वाचन के बाद सभी विधेयकों को छोड़कर जिन्हें सम्पूर्ण सदन की समिति को सौंपा जाय, इन समितियों को भेजे जाते हैं । अध्यक्ष यह निर्णय करता है कि कौन-सा विधेयक किस समिति को भेजा जाय और उसका सभापति भी वही छाँटता है । समितियों की बैठक साधारणतया दोपहर से पूर्व होती है । समिति प्रत्येक विधेयक की विस्तारपूर्वक परीक्षा करती है, अर्थात् उसकी प्रत्येक धारा पर विचार करती है और संशोधन पर भी वाद विवाद करती है ।

(3) प्रवर समितियाँ (Select Committees)—इन समितियों का आकार छोटा होता है, क्योंकि इनके सदस्यों की अधिकतम संख्या 15 होती है । इन समितियों का सम्बन्ध साधारणतया किसी समस्या विशेष की छानबीन करना होता है । प्रवर समिति व्यक्तियों को गवाही देने के लिये बुला सकती है और आवश्यक पत्रों व रेकार्डों को भी मंगा सकती है, परन्तु इसे किसी प्रकार के निर्देश देने की शक्ति नहीं होती । *सौंपे गये विषय की छानबीन और परीक्षा करके यह अपनी* रिपोर्ट सदन को देती है जो इसकी सिफारिशों को स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है । प्रवर समिति स्थायी समिति की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्र होती है, क्योंकि इसके सदस्य अधिक प्रभावशाली होते हैं और दलीय सचेतकों को उनके कार्यों में हस्तक्षेप करने का अवसर कम मिलता है । समिति का सभापति सदस्यों द्वारा चुना जाता है ।

(4) अन्य समितियाँ—बहुत सी प्रवर समितियाँ, जिन्हें उप समितियाँ (Sessional Committees) भी कहते हैं । प्रतिवर्ष सत्र के आरम्भ होने पर नियुक्त की जाती हैं, इन समितियों में ये उल्लेखनीय हैं—विशेषाधिकार समिति, चयन समिति, सार्वजनिक लेखा समिति, अनुमान समिति स्थायी आदेश समिति, व्यक्तिगत विधेयकों की समितियाँ । व्यक्तिगत विधेयक दो प्रकार के होते हैं—(1) वे, जिनका विरोध होता है और (2) वे, जिनका विरोध नहीं होता । इन दोनों प्रकार के विधेयकों के लिये 4–5 सदस्यों की अलग-अलग समितियाँ होती हैं । पहले प्रकार के विधेयकों की समिति में सभापति को निर्णायक मत का अधिकार होता है । कभी कभी समय बचाने के उद्देश्य से दोनों सदनों की संयुक्त समिति किसी विषय विशेष की छानबीन करके रिपोर्ट देने के लिए बैठा दी जाती है । इसका सभापति साधारणतया कोई पीयर होता है और उसकी रिपोर्ट दोनों सदनों में पेश की जाती है ।

(1) साधारण समाप्ति (Simple Closure)—सदन की बैठको (तथा स्थायी समितियो व पूर्ण सदन की समिति) म वाद विवाद का अ त करने के उद्देश्य से कोई भी सदस्य यह प्रस्ताव रख सकता है कि 'प्रश्न पर अब मत ले लिया जाये'। यदि ऐसे प्रस्ताव को कम से कम 100 सदस्यो का (स्थायी समिति की बठक म केवल 29 सदस्यो का) समथन प्राप्त हो और अध्यक्ष अथवा सभापति को समाधान हो जाये कि प्रस्ताव ऐसा नही है जिससे सदन के नियमो का दुरुपयोग होगा अथवा अल्पसख्यक मत के अधिकारा म हस्तक्षेप होगा, तो उस स्वीकार कर लिया जायेगा, जिसके उपरान्त विचाराधीन प्रश्न पर वाद विवाद समाप्त हो जायेगा और उस पर मतदान द्वारा निणय कर लिया जायेगा। ऐसा प्रस्ताव तब भी पास हो सकता है जब कोई सदस्य भाषण समाप्त न कर पाया हो।

(2) गिलोटिन अथवा खण्डों द्वारा समाप्ति (The Guillotine or Closure by Compartment)—पहले प्रकार की समाप्ति तो केवल उन्ही प्रश्नो पर लागू हो सकती है जब कि विचाराधीन प्रश्न एक ही हो। परन्तु यह ऐसे विधेयको के सम्ब ध म अप्रभावी सिद्ध हुई है, जो बडे पेचीदा तथा अत्यधिक विवादग्रस्त धाराओ से युक्त हो। ऐसे विधेयको पर वाद विवाद को निश्चित समय तक समाप्त करने के लिए सरकार (अथवा अन्य सदस्यो) के प्रस्ताव पर बहुमत के समथन से यह निणय किया जा सकता है कि विधेयक की धाराएँ इतने स उतने तक तथा सम्पूर्ण विधेयक पर अथवा उसके विभिन्न चरणो पर नियत समय पर मतदान कराया जाये। ऐसे नियत समय पर विधेयक के विभिन्न खण्डो अथवा धाराओ के समूहो पर वाद विवाद समाप्त हो जाता है और सम्बधित धाराएँ, यदि बहुमत उनके पक्ष म होता है, विधेयक का अग बन जाता है। इस प्रकार समय की काफी बचत हो जाती है पर तु इसके परिणामस्वरूप विधेयक के महत्त्वपूर्ण पहलुओ पर पर्याप्त वाद विवाद न होने की सम्भावना रहती है।

(3) कगारू समाप्ति (Kangaroo Closure)—इसके अ तगत अध्यक्ष अथवा समिति के सभापति को यह अधिकार मिल जाता है कि यदि किसी प्रस्ताव अथवा विधेयक की धारा पर कई सशोधन प्रस्ताव आये हो तो उनम कुछ महत्त्वपूर्ण सशोधनो को वाद विवाद के लिए छाट लें और अन्य को छोड दें। निष्पक्ष अध्यक्ष अथवा सभापति के होते हुए यह विधि समय की बचत के लिए बहुत अच्छी है। इसका पृथक से तथा गिलोटिन के साथ साथ भी प्रयोग किया जा सकता है।

समिति पद्धति—प्राय सभी देशो म विधायिकाओ ने समिति पद्धति को उपयोगी पाकर अपना लिया है, क्योकि विधेयको पर विस्तृत वाद विवाद समितियो म हो जाता है, जिसके फलस्वरूप सदन का बहुत सा समय बच जाता है और विचाराधीन प्रश्नो पर विचार भी अधिक अच्छे प्रकार स हो जाता है। ब्रिटेन म मुख्यत निम्न प्रकार की समितियो का प्रयोग होता है जिनका सक्षिप्त विवेचन निम्न प्रकार है—

(1) सम्पूर्ण सदन की समिति (Committee of the Whole House)—इनम सम्पूर्ण सदन समिति क रूप म बैठता है अध्यक्ष का स्थान समिति का सभापति ल लेता है और वह अध्यक्ष की कुर्सी पर न बैठकर क्लक की मेज के पास बठता है। इसकी बठक सदन म ही होती है। इसम वाद विवाद के नियमो के पालन म कुछ ढील दी जाती है—एक ही प्रश्न पर यदि कोई सदस्य चाहे एक स अधिक बार बोल सकता है प्रस्तावो पर अनुमोदक की आवश्यकता नही पडती। जब समिति विधेयक (अथवा प्रस्ताव) क सभी खण्डो पर विचार कर लेती है तो यह प्रस्ताव किया जाता है कि समिति काय समाप्त कर रिपोट दे। अध्यक्ष फिर अपना स्थान ग्रहण कर लेता है और समिति का सभापति सदन क सामने रिपोट पेश करता है। अत्यधिक महत्त्वपूर्ण अथवा ऐसे विधेयक इस समिति के विचार हेतु भेजे जाते हैं जिन पर अविलम्ब निणय आव- हो अथवा जो गम्भीर प्रवाद का विषय हो। सभी वित्तीय प्रस्तावो पर भी सम्पूर्ण सदन की

अतएव वे किसी मन्त्री द्वारा पेश किये जाते है। सावजनिक विधेयक का राज्य की आय अथवा व्यय पर क्या प्रभाव पडेगा इस सम्बन्ध मे एक स्मृति पत्र वितरित किया जाता है और इसके ऊपर एक रिपोट तैयार की जाती है, जो केबिनेट के सामने रखी जाती है। केबिनेट विधेयक पर अन्तिम स्वीकृति देती है और यह भी निणय करती है कि विधेयक कौन से सदन मे और किस तारीख को पेश किया जायेगा। तब ट्रेजरी के अधीन ससदीय परामशदाता के कार्यालय द्वारा विधेयक का प्रारूप तैयार किया जाता है। विधेयक को पेश किये जाने के लिए नियत दिन के कायक्रम की सूचि (Order of the Day) मे सम्मिलित किया जाता है। नियत दिन समय आने पर विधेयक के शीपक को सदन का क्लक जोर से पढकर सुनाता है। सदन के क्लक द्वारा शीपक को पढे जाने पर विधेयक पर प्रथम वाचन (first reading) की कायवाही पूण हो जाती है। इस समय विधेयक पर न तो कोई वाद विवाद होता है और न कोई मतदान ही। विधेयक को छपवाकर सदस्यो मे बाटा जाता है और उस पर पार्लियामेट के बाहर चर्चा तथा वाद विवाद होने लगता है।

दूसरे वाचन के लिए नियत दिन विधेयक को पेश करने वाला मन्त्री प्रस्ताव रखता है कि विधेयक का दूसरा वाचन हो। दूसरे वाचन म जिन विधेयको पर वाद विवाद किया जाता है वे अधिकाशत सरकारी विधेयक होते है, क्योकि सरकारी पक्ष के समथन बिना कोई विधेयक इस वाचन को पार नही कर सकता। पेश करने वाला मन्त्री विधेयक की धाराओ का स्पष्टीकरण करता है और उसके आधारभूत सिद्धान्तो के पक्ष मे तक देता है। इस प्रकार विधेयक पर वाद-विवाद आरम्भ होता है। इस समय होने वाला वाद विवाद अत्यधिक महत्त्वपूण होता है और नियमो के अनुसार सदन के अनेक सदस्य भाग लेते है। सदस्यो के बोलने के बाद विरोधी पक्ष का कोई नेता उस विधेयक के विरुद्ध पेश किये गये तर्कों को साराश म रखता है और अन्त मे मन्त्री आलोचनाओ का उत्तर देता है। यदि किसी विधेयक का अत्यधिक विरोध होता है तो सरकार कभी कभी एस विधेयक को वापिस ले लेती है, किन्तु साधारणतया बहुसख्यक सदस्यो के समथन से विधेयक पर मतदान का फल सरकार के पक्ष मे होता है। यदि किसी विधेयक पर सरकारी पक्ष की हार हो जाय तो मन्त्रिमण्डल को त्याग पत्र देना पडेगा, क्योकि मतदान का फल मन्त्रिमण्डल म सदन के अविश्वास का सूचक माना जाता है।

दूसरे वाचन के बाद विधेयक किसी स्थायी समिति की रिपोट के लिए भेजा जाता है या प्रवर समिति नियुक्त कर दी जाती है। अति महत्त्वपूण विधेयको पर सम्पूण सदन की समिति म भी विचार किया जा सकता है। कमेटी स्टेज म अर्थात् जब समिति म विचार होता है, तो उसके प्रत्यक अनुच्छेद की परीक्षा की जाती है और उनसे सम्बन्धित सभी सशोधन पर भी विचार किया जाता है। समिति म विचार होने के बाद विधेयक समिति की रिपोट के साथ फिर स सदन क सामने लाया जाता है। रिपोट स्टेज पर सदन समिति द्वारा किये गये सशोधनो पर विचार कर उन्हे स्वीकार अथवा अस्वीकार करता है। सदन के लिए विधेयक म किसी प्रकार का सशोधन करने का यह अन्तिम अवसर होता है।

विधेयक पर तीसरा वाचन रिपोट स्टेज क शीघ्र बाद ही हो सकता है, जिसके लिए पेश करने वाला मन्त्री प्रस्ताव रखता है कि विधेयक पर तीसरा वाचन किया जाय। इस अवसर पर भी वाद विवाद हो सकता है, परन्तु केवल भाषा सम्बन्धी अथवा जबानी सशोधन ही पेश किये जा सकते हैं। इस समय यदि वाद विवाद होता भी है तो बहुत ही प्रतिबन्धित होता है। एक सदन म तीसरा वाचन हो जाने पर विधेयक दूसरे सदन म जाता है, जहाँ पर इसी प्रकार विधेयक पर विचार किया जाता है। जब दोनो सदनो द्वारा विधेयक पास कर दिया जाता है तो उस ताज की अनुमति क लिए भेजा जाता है।

समिति-पद्धति पर कुछ विचार—स्थायी समितियो की बैठके बहुधा एक ही समय म हो जाती हैं और सदन की कायवाही क समय म भी यदि सदन के विचाराधीन कोई महत्त्वपूण प्रश्न न हो। इस प्रकार य बहुत सा कार्य कम समय म कर लेती हैं। सयुक्त राज्य अमरीका की समितियो की तुलना म कामन सभा की समितियो का सम्बन्ध कि ही विषय विशेष—जैसे वित्त, श्रम अथवा वदेशिक मामलो से नही होता।[1] यद्यपि प्रत्येक विधेयक पर विचार करने के लिए 25–30 अस्थाई रूप स जोडे गये सदस्यो के चयन म इस बात का कुछ ध्यान रखा जाता है। जाग और जिंक के अनुसार इन समितियो के सगठन म इस प्रकार के सुधार होने चाहिए—पहला, विशिष्ट विषयो पर विचार करने क लिए जोडे गय सदस्यो की सख्या 25–30 से घटाकर 10 कर दनी चाहिए, जिससे इनम अधिक अच्छी प्रकार से मननात्मक काय किया जा सके। दूसरे, समितियो के सदस्यो मे विशेषज्ञो की छाँट और उन्हे सरकारी सेवको व अन्य व्यक्तियो मे अधिक जानकारी युक्त परामश मिलने के साधनो द्वारा समितियो को अधिक विशेष ज्ञान प्राप्त कराना चाहिए। तीसरे, अस्थायी समितियो की सख्या बढाकर 10–12 कर देनी चाहिए और वे इस प्रकार से बनाई जायें कि प्रत्यक समिति का प्रशासन क एक या अधिक विभागो से सम्बन्ध रहे।

विभिन्न प्रकार के विधेयक—मोटे रूप म सभी विधेयको को एक महत्त्वपूण आधार पर सावजनिक तथा व्यक्तिगत विधेयको की श्रेणी म रखा जा सकता है। सावजनिक विधेयक तीन प्रकार के हो सकते है—(1) धन विधेयक, (2) सरकारी विधेयक और (3) गर सरकारी सदस्यो द्वारा पश किय गय विधेयक। ब्रिटिश पार्लियामट सावजनिक और व्यक्तिगत विधेयक मे बहुत समय से अन्तर मानती है। सार्वजनिक विधेयक वह होता है जिसका प्रभाव सवसाधारण हित पर पडता हो और जो या तो सम्पूण जनता अथवा उसके बडे भाग से सम्बन्ध रखता है। इसके विपरीत व्यक्तिगत विधेयक (Private Bill) वह होता है जिसका सम्बन्ध किसी स्थानीय क्षेत्र, निगम या म्युनिसिपलिटी अथवा किसी हित विशेष स होता है। 1911 के पालियामट एक्ट के अन्तगत, धन विधेयक (Money Bill) वह होता है जिसका सम्बन्ध केवल कर, ऋण चुकाने, सावजनिक लखा तथा ऋण लने आदि से होता है। धन विधेयक पर कामन सभा के अध्यक्ष का प्रमाण पत्र भी होता है। धन विधेयक कामन सभा म ही आरम्भ होते है, लाड सभा उनम न सशोधन कर सकती है और न उनके पारित होने म देरी ही। जब सावजनिक विधेयको को मन्त्र मण्डल के सदस्य पश करते है तो उन्हे सरकारी विधेयक कहते है। सभी धन विधेयक इसी श्रेणी म आते है। परन्तु इनके अतिरिक्त अन्य सावजनिक विधेयको को गर सरकारी सदस्य (अर्थात् जो मन्त्री अथवा सरकार का अग नहीं है) भी पेश कर सकते है। ऐसे सावजनिक विधेयको को गर सरकारी सदस्यो के विधेयक कहत है। सभी धन विधेयक, सरकारी विधेयक तथा गर सरकारी सदस्यो के विधेयक सावजनिक विधेयक होते है। व्यक्तिगत विधेयको का सम्बन्ध किन विषयो स होता है यह ऊपर बताया जा चुका है।

सावजनिक सरकारी विधेयको के सम्बन्ध में—इन विधेयको को लाने के लिए प्रेरणा किसी भी स्रोत से मिल सकती है। प्रत्येक विधेयक पालियामट के सदस्य द्वारा ही पेश किया जाता है। चूंकि इस श्रेणी म आने वाले विधेयको म बहुत बडी सख्या सरकारी विधेयको की होती है,

[1] The British Parliament does not use specialized committees as is the practice in the United States Congress and many of the legislatures of the continent of Europe British parliamentary committees do not conduct legislative investigations Royal Commissions whose members are appointed by the Crown are set up to inquire into matters of import ance which may or may not have legislative implications —Bailey Sdyney D, *British Parliamentary Democracy* pp 82–83

शीघ्र सम्भव हो सदन ही करता है । उप सभापति का पद खाली हो जाता है यदि (अ) उसकी सभा की सदस्यता की अवधि समाप्त हो जाय, (आ) वह स्वय त्यागपत्र द्वारा पद-त्याग कर दे, तथा (इ) सभा के तत्कालीन सदस्यो के बहुमत से पास किये गये प्रस्ताव द्वारा उसे पदच्युत किया जाय । पर तु ऐसा प्रस्ताव पेश होने से पहले चौदह दिन की पूव सूचना देनी आवश्यक है । जब कभी सभापति व उप सभापति दोना के ही पद खाली हो जायें तो उस समय राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त सभा का कोई भी सदस्य सभापति का पद ग्रहण करेगा । पर तु यदि किसी बठक मे सभापति व उप सभापति दोनो ही अनुपस्थित हो तो कोई ऐसा व्यक्ति जो ससद की प्रक्रिया द्वारा निश्चित किया गया हो, सभापति के रूप म काय करता है ।

लोकसभा—एकत्रित होने क बाद यथाशीघ्र अपने दो सदस्यो को अध्यक्ष (Speaker) और उपाध्यक्ष पदो क लिए चुनता है । उनके पद त्याग व पदच्युति के सम्ब ध मे वही नियम है जो कि राज्य सभा के उप-सभापति के बारे म । पर तु एक विशेषता यह है कि पुरानी लोकसभा के विघटन के बाद और नयी लोकसभा की पहली बैठक के ठीक पहले तक वह अपने पद को खाली नही करेगा । साथ ही जब अध्यक्ष को उसके पद से हटाने के प्रस्ताव पर विचार किया जा रहा हो तो उसे उस कायवाही मे भाग लेने, बोलने या मत देने का अधिकार नही है । जब कभी दोना ही अध्यक्ष पद खाली हो जाये तो सदन का कोई भी ऐसा सदस्य अध्यक्ष पद पर काय करेगा, जिसे राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाय । सभापति नामिका (Panel of Chairman) का सदस्य क्रमानुसार पद पर बैठेगा । लोकसभा द्वारा 1956 म स्वीकृत प्रक्रिया नियम (1) के अनुसार यथास्थिति लोकसभा के प्रारम्भ पर या समय समय पर अध्यक्ष सदस्यो म स अधिक स अधिक छ सभापतियो की एक नामिका को नाम निदशित करेगा जिनम से कोई एक अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष की अनुपस्थिति म, उनके कहने पर सभा म पीठासीन होता है । ऐसा उचित ही है, क्योकि अध्यक्ष या उपाध्यक्ष सदैव ही और सभी बठका म अधिकाश समय के लिए उपस्थित नही रह सकते ।

अध्यक्ष के काय और उसकी शक्तियाँ—उसके काय व उसकी शक्तियाँ सामा यत वही हैं जो अ य देशा मे सभा पदाधिकारी की होती हैं । ब्रिटेन की कामन सभा क अध्यक्ष की भाँति लोकसभा क अध्यक्ष को सविधान स एक विशेष शक्ति मिली है । आवश्यकता पडने पर वह यह निणय करता है कि विधेयक विशेष धन विधेयक है या नही । ब्रिटेन की लोकसभा के अध्यक्ष पद के सम्ब ध म सवस अधिक महत्त्वपूण परम्परा उसकी निष्पक्षता (impartiality) है । इस पद पर चुने जान के बाद अध्यक्ष राजनीति से पूणतया अलग हो जाता है । इसी कारण वहाँ के अध्यक्ष का अधिक आदर प्राप्त है और वह नाम ही 'गौरव और निष्पक्षता' का पर्यायवाची बन गया है । हरमन फाइनर क अनुसार इसके सवथा विपरीत सयुक्त राज्य अमरीका के प्रतिनिधि सदन का अध्यक्ष निष्पक्ष नहा होता । आजकल भी वह बहुमत दल के नेताओ म स एक होता है । वह वाद विवाद म भाग लेता है वह मतदान करता है और उसके स्थान के लिए चुनाव सघष होता है, वह बहुमत दल का माना हुआ प्रतिनिधि होता है, और बहुधा वह दलीय म त्रणाओ म भाग लेता है ।'

भारत म अध्यक्ष की स्थिति ब्रिटेन और सयुक्त राज्य अमरीका के अध्य क्ष क बुद्ध बीच म है । भारत म अभी तक यही परम्परा पडी है कि अध्यक्ष सम्भावना क अ दर पूणतया निष्पक्ष रहे, जहाँ तक हो सके दल के विचार विनिमयो और निश्चयो स अलग रहे, कि तु वह अपने दल स अध्यक्ष बनने पर भी सम्ब ध विच्छेद नहीं करता । फिर भी चुनाव क बाद लोकसभा का अध्यक्ष दल की बठको म भाग नही लेता और न ही वह पुस्तकालय अथवा लॉबी म सदस्यो स मिलता है । उपाध्यक्ष अपने दल की राजनीति म भाग लेता है किन्तु दोनो ही सक्रिय दलगत

गर सरकारी सदस्यो के विधेयको के सम्ब ध मे विधायी प्रक्रिया—इनके पश किये जाने के लिए दो तरीके है—(1) प्रत्यक सत्र के पूव ऐस विधेयक पेश करने वाले सदस्या के लिए बैलट होता है *अर्थात् बैलट द्वारा उनमे छाट होती है। बैलट म सफल हुआ सदस्य अपना विधेयक या* दल द्वारा सुझाया हुआ विधेयक पेश कर सकता है। (2) दस मिनट वाले नियम के अ तगत सप्ताह मे सावजनिक कार्यो के लिए नियत दो दिन 3–45 बजे साय अ य काय आरम्भ होने से पूव पश करन वाला सदस्य अपने विधेयक के पक्ष मे दम मिनट तक बोल सकता है, जिसका कोई दूसरा सदस्य विरोध कर सकता है और उसे भी दस मिनट मिलते हैं। हो सकता है कि सदन बिना मतदान के ही सहमति प्रकट कर दे, इस प्रकार विधेयक का पहला वाचन पूण हो जाता है। ऐसा तभी सम्भव होता है जबकि विधेयक का विरोध न हो या उसे सरकार ल ले। पहला तरीका अधिक महत्त्वपूण है, पर तु अत्य त कठिन भी, क्योकि शुक्रवार का सदन म गणपूर्ति (Quorum) पूरी करना भी बडा कठिन काय है। इसके अतिरिक्त पेश करने वाले सदस्य को विधेयक के पक्ष मे बहुमत पाने और उसे समिति स्टेज से सफलतापूवक निकलवाने के भी कठिन काय करने होत हैं। इसी कारण ऐसे बहुमत ही कम विधेयक दूसरे वाचन तक पहुँच पाते है। पर तु इन कठिनाइयो के होते हुए भी कभी कभी ऐसे विधेयक पास होते ही है।

व्यक्तिगत विधयक के सम्बन्ध मे प्रक्रिया—इनम से अधिकतर विधेयक स्थानीय निकायो व निगमो द्वारा प्रस्तावित किए जाते है। कुछ व्यक्तिगत विधेयक जिनका स बन्ध देशीकरण व तलाक आदि से होता है, लाड सभा मे पेश किये जात है। व्यक्तिगत विधेयकों के सम्बन्ध म प्रक्रिया इस प्रकार है—प्रस्तावको की ओर से पार्लियामेट के सामने एक याचिका पेश की जानी चाहिए। याचिका की परीक्षा किये जाने से पूव विधेयक से प्रभावित होने वाल व्यक्तियो को उसके बारे म सूचित किया जाता है और उन्हे एतराज करने का अवसर दिया जाता है। प्रत्येक पार्लियामेट याचिकाओ की परीक्षा के लिए 'याचिकाओ के परीक्षक' नियुक्त करती है और प्रस्तावक उनके सामने विधेयक के पक्ष म सामग्री रखते है। यदि परीक्षको का समाधान हो जाता है तो वे दोनो सदनो क सामने रिपोट रखते है और तब यह निणय होता है कि विधेयक कौन स सदन म पश किया जायगा।

विधेयक का पहला वाचन कवल एक औपचारिक काय होता है, विधेयक को सदन की मेज पर रख दिया जाता है। विधेयक पर दूसरा वाचन, यदि इसका विरोध न हो, व्यक्तिगत काय के दौरान लिया जाता है अर्थात् इस पर 7–30 बजे साय वाद विवाद होता है। इस पर कमेटी स्टेज सबस महत्त्वपूण होती है। यदि विधेयक का विरोध होता है तो इस चार सदस्या की व्यक्तिगत विधेयक समिति (Private Bills Committee) म भेजा जाता है। यह समिति विधेयक के पक्ष और विपक्ष म पेश किये जान वाले तर्कों को सुनती है और इस विधयक को अस्वीकृत तथा सशाधित करने का अधिकार है। यदि विधेयक का विरोध नही होता तो इस निर्विरोध विधेयक समिति (Unopposed Bill Committee) जिसम पाँच सदस्य होत हैं, को भेजा जाता है। समितियाँ अपनी रिपोट सदन क सामन रखती ह और सदन साधारणतया उन्ह बिना नानुकर किय ही स्वीकार कर लेता है। यद्यपि उस इन विधेयको को अस्वीकृत व सशोधित करन का अन्य विधेयको की तरह पूण अधिकार है। जब सदन समिति की रिपोट को स्वीकार कर लता है तब उस पर आगे उसी प्रकार से कायवाही होती है जस सावजनिक विधेयक पर।

3 भारत मे विधायी सगठन और प्रक्रिया

राज्य सभा—राज्य सभा क काय-सचालन क लिए एक सभापति और एक उप-सभापति होता है। भारत का उप राष्ट्रपति इसका पदेन सभापति होता है। उप-सभापति का चुनाव **दिसना**

अनुसार 'यथास्थिति' लोकसभा के प्रारम्भ पर या समय समय पर अध्यक्ष एक विशेषाधिकार समिति को नाम निदेशित करता है, जिसमे पन्द्रह से अधिक सदस्य नही हो सकते। इस समिति का मुख्य काय यह है कि वह अपने सामने आये प्रश्नो पर विचार करके यह निणय करे कि उनमे से किसी भी मामले मे सदन के विशेषाधिकारा का अतिक्रमण हुआ है अथवा नही। अपने निणय की रिपोट और क्या कायवाही की जाये इस आशय की सिफारिशें यह समिति सदन को पश करती है। आवश्यकता पडने पर सदन विशेष या तदथ समिति (Special or ad hoc Committee) भी किसी सदस्य के आचरण की जाच करने के लिए नियुक्त कर सकता है और सदन को उसकी सिफारिश पर उस सदस्य क विरुद्ध कायवाही का भी अधिकार है।

ससद के सत्र व उसकी बठकें—ससद के वप म कम स कम दो सत्र होने आवश्यक हैं, क्योकि ससद के बीच सत्र की अन्तिम बैठक और आगामी सत्र की पहली बैठक के बीच छ माह स अधिक का अन्तर नही होना चाहिए। राष्ट्रपति जहाँ और जिस समय उचित समझे ससद अथवा उसके एक सदन को आहूत कर सकता है। दोनो सदन अपनी बठकें जब चाहे स्थगित कर सकते हैं, और अगली बठक की तिथि निश्चित कर सकते है। परन्तु ससद का सत्रावसान (prorogation) सदैव सत्र के अन्त मे केवल राष्ट्रपति के आदेश से ही होता है। राष्ट्रपति ही ससद अर्थात् लोकसभा का विघटन कर सकता है। प्रत्येक नये सदस्य को सदन म स्थान ग्रहण करने स पूव सविधान के प्रति निष्ठा की शपथ लेनी होती है। सभी प्रश्ना पर, उनको छोडकर जिनके विषय म सविधान म अन्य व्यवस्था है, ससद के दोनो सदनो अथवा उनकी सयुक्त बैठक म अध्यक्ष के अतिरिक्त उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यो के बहुमत से निश्चय होता है। किसी प्रश्न के पक्ष और विपक्ष म समान मतदान की अवस्था मे अध्यक्ष अपना निर्णायक मत देता है। दोनो सदना की कायवाही के सचालन के लिए यह आवश्यक है कि उसकी बठक म कुल सदस्यो की सख्या का 1/10 उपस्थिति हो। यदि बैठक के दौरान गणपूर्ति न हो तो अध्यक्ष बैठक का स्थगित अथवा निलम्बित कर सकता है। साधारणतया ससद का काय हिन्दी या अग्रेजी म किया जा सकता है परन्तु यदि कोई सदस्य इन दोना भाषाओ मे अपने विचार व्यक्त न कर सके तो सदन का अध्यक्ष उस अपनी मातृभाषा म बोलन की अनुमति द सकता है।

राष्ट्रपति का विशेष अभिभाषण—निर्वाचन के पश्चात सत्र की पहली बठक मे तथा वप के पहले सत्र की पहली बठक म राष्ट्रपति दोना सदना की सयुक्त बैठक को सम्बोधित करता है। परन्तु अनुच्छेद 87 (1) के अन्तगत मूल प्राविधान जिसमे अब सशोधन हो चुका है, इस प्रकार था प्रत्येक सत्र के आरम्भ पर राष्ट्रपति दोनो सदना की सयुक्त बठक म सम्बोधन करेगा और ससद को उसम आहूत किये जाने का कारण बतायेगा। इस अभिभाषण की रचना मन्त्रिमण्डल के द्वारा की जाती है और इसमे उसकी नीति का ही वणन होता है। प्रत्येक सदन की प्रक्रिया के नियमा म ऐस अभिभाषण पर सबस पहल वाद विवाद करने की व्यवस्था की जानी आवश्यक है। वाद विवाद मन्त्रिमण्डल की ओर से किसी सदस्य के इस प्रस्ताव पर, कि राष्ट्रपति को भाषण के लिए धन्यवाद दिया जाय, होता है। विरोधी दल के प्रतिनिधि उस पर सशोधन पश कर सकते हैं और उसकी आलोचना भी करते हैं। मन्त्रिमण्डल के समथक उसका उत्तर देते हैं। साधारणतया यह प्रस्ताव पास हो जाता है। यदि कभी यह पास न हो तो इसका अर्थ यह होगा कि सदन को मन्त्रिमण्डल म विश्वास नही है। यह प्रक्रिया ब्रिटेन म प्रचलित ताज के भाषण (Speech from the Throne) के ही अनुरूप है। राष्ट्रपति को यह भी अधिकार है कि वह जब उचित समझे सदनो की सयुक्त अथवा अलग-अलग बैठको म भाषण द सकता है और सदस्या का इस प्रयोजन क लिए उपस्थित होने का आदेश भी दे सकता है। राष्ट्रपति ससद को अपन सन्देश भी भेज सकता है। जब कभी इस प्रकार का सन्देश ससद को प्राप्त होगा तो जहाँ तक सम्भव होगा

राजनीति से दूर रहते है । यही परम्परा राज्यो म चल रही है । उत्तर प्रदेश की विधान सभा के अध्यक्ष स्वर्गीय पुरुषोत्तमदास टण्डन ने उस समय अपन पद के सम्ब ध मे अपना मत इन शब्दा म व्यक्त किया था, 'म कॉमन सभा के आचारो म विश्वास नही करता । मै फ्रास, सयुक्त राज्य और उन अ य राज्यो के आचारो म विश्वास करता हूँ जो अध्यक्ष को राजनीति म भाग लेन की अनुमति देते है । यदि वह ऐसा नही करता तो आप एक तीसरी कोटि के व्यक्ति या एक काम चलाऊ व्यक्ति अथवा एक यायकर्त्ता को पा सक्ते है, कि तु एक प्रभावशाली राजनीतिज्ञ को नही ।' यदि स्वर्गीय पुरुषोत्तमदास टण्डन और स्वर्गीय मावलकर जैस महान् पुरुष ऐसा करने मे सफल भी हो सके तो भी यह बात अ य साधारण व्यक्तियो के बारे मे सच नही हो सक्ती । इसके अतिरिक्त विरोधी दल वाला को ऐसे अध्यक्षा की पूण निष्पक्षता म विश्वास होना कठिन है ।

1951 म भारतीय विधानमण्डलो म अध्यक्षा के एक सम्मेलन म यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया था कि ब्रिटेन की भाति उनका निर्वाचन निर्विरोध हो । पर तु परिस्थितियो के अनुसार यह अनिवाय रूप से न हो सका । इस प्रश्न को स्वय मावलकर ने काग्रेस कायसमिति के विचाराथ रखा, जिसने अप्रल 1954 म यह प्रस्ताव पास किया—'कायसमिति ने श्री जी० वी० मावलकर के इस आशय के पत्र पर कि अध्यक्ष पदो का चुनाव निर्विरोध हो ऐसी परम्परा डाली जाय, विचार किया और अनुभव किया कि वर्तमान मे इस प्रश्न म अ य दलो के अ तग्रस्त होन क कारण यह परम्परा डालना सम्भव नही ।' हमे आशा यही करनी चाहिए कि ऐसी परम्पराएँ पडे । जब तक ऐसा हो अध्यक्षो को डा० राधाकृष्णन् की इस उक्ति का अक्षरश पालन करना चाहिए 'म किसी दल का नही हूँ अर्थात् मै सभी दला का हूँ । मेरा प्रयास ससदीय जनत त्र की उच्च परम्पराओ का निर्वाह करना और प्रत्यक दल के प्रति याय और निष्पक्षता बरतना होगा जिसमे किसी के प्रति दुर्भाव न हो और सभी के प्रति सद्भाव रह ।'

ससद व सदस्यों के विशपाधिकार इत्यादि—प्रत्यक सदस्य को ससद द्वारा बनाये गये कानूनो के अनुसार वेतन व भत्ता मिलता है । आजकल दोनो सदनो के प्रत्येक सदस्य का वेतन 500 रुपये प्रति मास है और प्रत्येक बठक के लिए जिसम वह उपस्थित रहता है 41 रुपय दनिक भत्ता मिलता है । हाल ही म उनके वेतन और भत्तो मे वृद्धि हुई है। इसके अतिरिक्त सदस्या को रेलवे का फ्री पास मिलता है, जिससे वे देश के किसी भी भाग म जा सकते है । ससद के सदस्यो को सविधान के उपब धो और प्रक्रिया सम्ब धी नियमा व स्थायी आदेशा के अधीन भाषण की स्वत त्रता का महत्त्वपूण विशेषाधिकार प्राप्त है । इसका अथ यह है कि ससद के सदन अथवा उसकी समिति म कोई भी सदस्य जो कुछ उचित समझे कह सकता है । इस प्रकार अपना मत देने के लिए उसके विरुद्ध काई यायिक कायवाही नही की जा सकती, परन्तु यह सम्भव है कि यदि उनमे से कुछ बातें सदन के बाहर दोहरायी जाये तो उनके विरुद्ध कानूनी कायवाही की जा सके । ससद को प्रसारण (publicity) का विशेपाधिकार प्राप्त है । इसके अनुसार ससद का प्रत्येक सदन अपने तथा अपनी समितिया के वाद विवाद और कायवाहियो को प्रकाशित कर सक्ता है । इसके कारण सदन या किसी सदस्य क विरुद्ध कोई कानूनी कायवाही नही की जा सकती । साथ ही सदन की विशप अनुज्ञा (authority) से अ य व्यक्तियो को भी प्रकाशन का अधिकार मिल सकता है । सदस्यो के अ य अधिकार व है जो सविधान के प्रारम्भ पर ब्रिटिश कामन सभा के सदस्यो को प्राप्त थे ।

लोकसभा की प्रक्रिया के नियम 244 के अनुसार 'कोई भी सदस्य अध्यक्ष की सहमति स कोई ऐसा प्रश्न उठा सकता है जिसम या तो किसी सदस्य या सदन के या उसकी किसी के विशेपाधिकार का भग अ तग्रस्त हो ।' अनुमति प्राप्त विशेपाधिकार प्रश्न पर सदन स्वय कर सक्ता हैं अथवा उसे विशेपाधिकार समिति को सौप सक्ता है । प्रक्रिया नियम ?

इसकी रिपोट भी सदन क विचाराथ रखी जाती है।

लोक लेखा समिति (Committee on Public Accounts)—इसम कुल 22 सदस्य होते हैं—15 लोकसभा और 7 राज्य सभा के। यह प्रतिवप ससद के प्रथम सत्र क आरम्भ म नियुक्त की जाती है। लोकसभा की प्रक्रिया नियम 241 (1) के अनुसार यह समिति भारत सरकार के व्यय क लिए लोकसभा द्वारा अनुदत्त राशियो का विनियोग दिखाने वाले लेखा, भारत सरकार के वार्षिक वित्त लेखा और लोकसभा क सामने रखे गये ऐसे अन्य लेखा की जाँच करती है। छानबीन करते समय इसे इन बातो के विषय म समाधान (satisfaction) करना होता है कि—(क) लेखो म व्यय के रूप म दिखाया गया धन उस सेवा प्रयोजना के लिए विधिवत् उपलब्ध और लगाये जाने योग्य था जिसम वह लगाया गया है या भारित किया गया है, (ख) व्यय उस प्राधिकार के अनुसार है जिसक वह अधीन है, (ग) प्रत्येक पुनर्विनियोग सक्षम अधिकारी द्वारा निर्मित नियमो क अन्तगत इस सम्बन्ध म किये गये उपबन्धो क अनुसार किया गया है (घ) राज निगमो, व्यापार तथा निर्माण योजनाओ और परियोजनाओ की आय तथा व्यय दिखाने वाले लेखा विवरणो की तथा सन्तुलन पत्रो (balance sheets) अर्थात् लाभ हानि के लेखा के ऐसे विवरणो की जाँच करें। नियन्त्रक व महालेखा परीक्षक के प्रतिवेदन पर ससद की समिति द्वारा इस प्रकार की जाँच किया जाना कार्यपालिका के ऊपर एक रोक का काम करता है। इसकी रिपोट म राष्ट्रीय व्यय म हुई अनियमितताओ का उल्लेख होता है यद्यपि उनम सुधार नही हो पाता, क्योकि ये सब बातें हो चुकने के बाद होती है, फिर भी यह एक बडा उपयोगी काय है, क्योकि इन सब बातो से सरकारी विभागों को एक प्रकार की चेतावनी मिल जाती है, जिसके फलस्वरूप वे भविष्य मे सुधार का प्रयत्न कर सकते हैं। इसकी रिपोट सदन के सामने विचाराथ आती है और इस प्रकार सावजनिक लेखो सम्बन्धी कमियाँ सबके सामने आती हैं।

नियम समिति—सभा की प्रक्रिया और काय-सचालन के विषयो पर विचार करने और इन नियमो मे ऐसे सशोधनो तथा वृद्धियो की सिफारिश करने के लिए जो आवश्यक समझी जायें, एक नियम समिति होती है। इसम सभापति सहित पन्द्रह सदस्य होते हैं जिन्हे लोकसभा का अध्यक्ष नामजद करता है और वह स्वय इसका पदेन सभापति होता है। इस प्रकार की समिति सयुक्त राज्य अमरीका मे भी होती है।

काय मन्त्रणा समिति—लोकसभा के प्रारम्भ पर या समय समय पर अध्यक्ष इस समिति को नियुक्त करता है। इसके सदस्यो की सख्या पन्द्रह से अधिक नही हो सकती और वह स्वय ही इसका भी सभापति होता है। इसके मुख्य कृत्य ये है—(अ) ऐसे सरकारी विधेयको के प्रक्रम या प्रक्रमो तथा अन्य सरकारी कार्यों पर विचार क लिए समय के बँटवारे की सिफारिश करे जिन्हे अध्यक्ष सदन नेता के परामश से समिति को सौंपे जाने का निदेश दे, (आ) इसे प्रस्थापित समय-सूची म दर्शाने की शक्ति है कि विधेयक क विभिन्न प्रक्रम तथा अन्य सरकारी काय किस किस समय पूरे होगे, (इ) यह ऐसे अन्य कृत्य भी करती है जो अध्यक्ष द्वारा समय समय पर इसे सौंपे जाये।

गर सरकारी सदस्यो के विधेयको तथा सकल्पो सम्बन्धी समिति—इसमे पन्द्रह सदस्य से अधिक नही होते। इसके सदस्यो को अध्यक्ष नामजद करता है और वे एक वर्ष तक पद धारण करते है। इसका सभापति अध्यक्ष द्वारा समिति के सदस्यो म से ही नामजद होता है। इसके मुख्य कृत्य ये है—(अ) गैर सरकारी सदस्यो के सब विधेयको की उनके पुनःस्थापित किये जाने के बाद तथा सभा मे उन पर विचार किये जाने से पूर्व जाँच करना और उन्हे उनके स्वरूप अविलम्बनीयता तथा महत्त्व के अनुसार दो वर्गों 'क', 'ख' म रखना, (आ) यह सिफारिश करना कि गैर-सरकारी

शीघ्र ही ससद उस स देश पर अथवा स देश द्वारा जिस विषय की ओर सकेत किया गया हो उस विषय पर विचार करेगी ।

काय सचालन—प्रत्येक सदन म सदस्यो की उपस्थित का एक रजिस्टर रहता है, जिसमे सदस्य गण अपना स्थान ग्रहण करने से पूव हस्ताक्षर करते हैं । पहला घण्टा प्रश्नोत्तर को दिया जाता है । उसके बाद सदन के लिए नियत काय सूचि के विभिन्न विषयो को क्रमवार विचार के लिए लेता है । इनका क्रम साधारणतया यह रहता है—काम रोको प्रस्ताव, सकल्प, अविश्वास का प्रस्ताव, वाद विवाद के लिए अ य प्रस्ताव, विधायी तथा वित्तीय काय । अ य कार्यों मे समय समय पर म त्रिया द्वारा नीति सम्ब धी वक्तव्य देना तथा सदन की मेज पर पत्रो और आलेखो को रखना सम्मिलित हैं । काम रोको प्रस्ताव, सकल्प और प्रश्नो के सम्ब ध म आवश्यक विवेचन आगे के पृष्ठो मे दिया गया है । अतएव यहा पर वाद विवाद ब द करने की विधियो के विषय मे कुछ बताना उचित होगा । किसी भी विचाराधीन विषय पर चल रहे वाद विवाद का अ त कराने के लिए प्रस्ताव (closure motion) पश किया जा सकता है । ऐसा प्रस्ताव कोई भी सदस्य पेश कर सकता है और यदि सदन उसे स्वीकार कर ले तो वाद विवाद का अ त हो जाता है और उस विषय पर मतदान करा लिया जाता है । कभी कभी किसी विषय पर वाद-विवाद के लिए समय की सीमा पहले से निर्धारित कर दी जाती है । अतएव जब विचाराधीन विषय पर हो रहे वाद विवाद के लिए नियत समय समाप्ति पर होता है तो चाहे उस विषय के कुछ या अधिक पहलुओ पर वाद विवाद हो पाया हो, नियत समय पर उस प्रस्ताव पर सदन मतदान करता है । इसे (guillotine) कहते हैं । इस समय लोकसभा की कायवाही सचालित करने के लिए 389 नियम हैं । इनके अतिरिक्त अध्यक्ष द्वारा दिये गये 123 निर्देश भी हैं । ये सब मिलाकर ससदीय प्रक्रिया की आधार शिला कहला सकते है । पर तु इनके अतिरिक्त बहुत म रूलिग, दृष्टा त (precedents) और अभिसमय (conventions) भी हैं ।

ससद की समितियाँ

याचिका समिति (Committee on Petitions)—*लोकसभा की प्रक्रिया के नियमो के* अनुसार सदन जनता द्वारा प्रेषित याचिकाओ पर भी विचार करती है । ये—(अ) लोकसभा के सामने लम्बित (Pending) कार्य अथवा (आ) सामा य हित के किसी विषय से सम्ब धित हो सकती है, कि तु सामा य हित का विषय ऐसा नही होना चाहिए जिसका सम्ब ध राज्य विधान मण्डल से हो । प्रत्येक याचिका सदन को सम्बोधित की जानी चाहिए, पर तु उसे कोई भी सदस्य पश करता है या सचिव सदन को प्रतिवेदित करता है । इन पर विचार करने के हेतु एक याचिका समिति की भी व्यवस्था है । यह समिति प्रत्येक ऐसी याचिका की जाच करेगी जो इसे सौंपी जाय । समिति इस सम्ब ध मे अपनी रिपोट सदन को देगी जिसमे याचिका के विषय सम्ब धी तथ्य, उस पर हस्ताक्षर करने वालो की सख्या और यह भी बताया जायगा कि वह नियमो के अनुसार है या नही तथा उसे प्रसारित (circulate) किया गया है या नही ।

प्राक्कलन समिति—इस समिति मे लोकसभा के 25 सदस्य होते हैं । इसकी नियुक्ति भी *प्रति वष पहले सत्र के प्रारम्भ मे की जाती है । इस समिति के कृत्य ये हैं*—(क) *प्राक्कलनो म* सम्ब धित नीति से सगत क्या मितव्ययिताएँ, सघटन म सुधार, काय-पटुता या प्रशासनिक सुधार किये जा सकते हैं—इस सम्ब ध के प्रतिवेदन करना । (ख) प्रशासन म काय पटुता और मितव्ययिता लाने के लिए वैकल्पिक नीतियो का सुझाव देना । (ग) प्राक्कलनो म अन्तर्निहित नीति की सीमा मे रहते हुए धन ठीक ढग से लगाया गया है या नही, इसकी जाँच करना । (घ) प्राक्कलन किस रूप म ससद मे उपस्थित किय जायेंगे इसका सुझाव देना । इसका काय भी बडा महत्त्वपूर्ण है और

बिना कोई भी सदस्य सिवाय प्रस्तावक के जिसे उत्तर देने का अधिकार होता है, किसी प्रस्ताव पर एक बार से अधिक नहीं बोलेगा। (6) जब अध्यक्ष खड़ा होता है—(अ) उसकी बात का सभी सदस्यों को शांति के साथ सुनना चाहिए। (आ) प्रत्येक सदस्य को जो बोल रहा हो या बोलने के लिए खड़ा हो, अध्यक्ष के खड़े होते ही तुरंत बैठ जाना चाहिए। (इ) कोई भी सदस्य अध्यक्ष के बोलते समय अपना स्थान नहीं छोड़ेगा।

प्रश्न (Questions)—संसद की कार्यवाही में प्रश्नों का बड़ा महत्त्व है। दोनों सदनों की प्रत्येक बैठक के आरम्भ में एक घण्टा प्रश्नोत्तर के लिए नियत है। सभी मन्त्रालयों (विभागों) के सम्बन्ध में प्रश्न पूछे जाते हैं, परन्तु सभी प्रश्नोत्तरों की सुविधा के हेतु तीन समूहों में बाँट दिया गया है। प्रत्येक समूह में आने वाले विभाग में से सम्बन्धित बातों के विषय में प्रश्न उसके लिए नियत दिनों में ही पूछे जाते हैं। प्रश्न के लिए निश्चित पूर्व सूचना दी जानी आवश्यक है, जिससे कि उसका उत्तर तैयार किया जा सके। प्रश्नों के उत्तर सम्बन्धित विभागीय अधिकारी तैयार करते हैं, किन्तु वे मन्त्रियों द्वारा ही दिये जाते हैं। प्रश्नों के बाद पूरक प्रश्न भी पूछे जा सकते हैं। परन्तु मन्त्री सभी प्रश्नों का उत्तर दें, उन पर कोई ऐसा बन्धन नहीं होता। बहुत से प्रश्नों के उत्तर लिखित रूप में भी दिये जाते हैं विशेष रूप से जबकि उनकी संख्या इतनी अधिक होती है कि प्रश्नोत्तर कार्य एक घण्टे में समाप्त नहीं होता। इन लिखित उत्तरों को उस दिन की कार्यवाही के छपे पत्रों में सम्मिलित कर दिया जाता है। लोकसभा की प्रक्रिया के नियम 74 के अनुसार अध्यक्ष आधा घण्टा ऐसे पर्याप्त लोक महत्त्व के विषय पर चर्चा उठाने के लिए नियत कर सकता है जो हाल ही में किसी प्रश्न का विषय रह चुका हो।

संकल्प (Resolution)—संकल्प गैर सरकारी सदस्यों द्वारा पेश किये जाते हैं। उनको पेश करने से पूर्व पन्द्रह दिन की सूचना दी जाती है और वे निश्चित क्रम के अनुसार ही पेश किये जा सकते हैं। लोकसभा की प्रक्रिया के नियम 190 के अनुसार संकल्प राय की घोषणा अथवा सिफारिश के रूप में हो सकेगा या ऐसे रूप में हो सकेगा जिससे कि सरकार के किसी काम अथवा नीति का सभा द्वारा अनुमोदन या अननुमोदन अभिलिखित किया जाये या कोई सन्देश दिया जाये या किसी कार्यवाही के लिए अनुरोध या प्रार्थना की जाये या किसी विषय अथवा स्थिति पर सरकार द्वारा पुनर्विचार के लिए ध्यान आकर्षित किया जाये या किसी अन्य रूप में, जो अध्यक्ष उचित समझे। संकल्प के पेश होने पर अन्य सदस्य संशोधन पेश कर सकते हैं। प्रत्येक संकल्प का स्वीकार अथवा अस्वीकार होना सरकारी रुख के ऊपर निर्भर करता है। संकल्प पारित हो जाने पर भी सरकार उसे मानने के लिए बाध्य नहीं होती।

काम रोको प्रस्ताव (Adjournment motions)—ऐसे प्रस्ताव का सम्बन्ध किसी भी सार्वजनिक महत्त्व के मामले अथवा हाल में घटी सार्वजनिक महत्त्व की घटना या स्थिति पर विचार करना होता है। यदि किसी ऐसे प्रस्ताव का सम्बन्ध किसी निश्चित, आवश्यक तथा सार्वजनिक महत्त्व के मामले से नहीं होता तो अध्यक्ष उसे अनियमित ठहरा कर पेश होने से रोक देता है। इसके अतिरिक्त यदि प्रस्ताव में उठाया गया मामला संघ सरकार के क्षेत्र से सम्बन्धित नहीं होता अर्थात् किसी राज्य सरकार के क्षेत्र से सम्बन्ध रखता है अथवा ऐसे मामले से सम्बन्धित होता है जो न्यायालय के विचाराधीन हो तो भी उन्हें पेश करने की आज्ञा नहीं दी जाती। ऐसे प्रस्तावों पर सदन प्रश्नोत्तर काल के उपरान्त ही विचार करता है। प्रस्ताव के विषय पर सरकार तथा विरोधी दल के सदस्य अपने अपने विचार रखते हैं। वास्तव में उन प्रस्तावों का उद्देश्य सरकार के प्रशासन की आलोचना करना होता है, यदि ऐसा प्रस्ताव पारित हो जाय तो मन्त्रि परिषद् को त्याग पत्र दे देना चाहिए।

गोपनीय बैठक—सदन के नेता द्वारा प्रार्थना की जाने पर अध्यक्ष कोई दिन या उसका

विधेयको के प्रत्येक विधेयक के प्रक्रम या प्रक्रमो पर चर्चा के लिए कितना समय बाटा जाना चाहिए, (इ) गैर सरकारी सदस्यो के सकल्पो और सहायक विषयो की चर्चा के लिए समय सीमा की सिफारिश करना।

सरकारी आश्वासनो सम्बन्धी समिति (Assurances Committee)—मन्त्रियो द्वारा समय समय पर सभा के अन्दर दिये गये आश्वासनो, प्रतिज्ञाओ, वचनो आदि की छानबीन करने के लिए और इन बाता पर प्रतिवदन दने के लिए यह समिति है—(क) ऐसे आश्वासनो, प्रतिज्ञाओ, वचनो आदि का कहाँ तक परिपालन किया गया है, तथा (ख) जहा परिपालन किया गया है तो ऐसा परिपालन उस प्रयोजन के लिए आवश्यक न्यूनतम समय के भीतर हुआ है या नही। इस समिति मे भी पन्द्रह से भी अधिक सदस्य नही हो सकते। इन सदस्या को अध्यक्ष एक वप की अवधि के लिए नामजद करता है।

समिति व्यवस्था पर कुछ विचार—ऊपर वर्णित अनेक समितिया (प्रवर समितियो को छोडकर) एक वप की अवधि के लिए ब्रिटेन की सत्र-कालीन समितिया के समान है। एक विशेष विचारणीय बात यह है कि यद्यपि भारत ने पश्चिमी देशो की ससदात्मक पद्धति को अपनाया है, किन्तु लोकसभा ने उन देशो की भाति स्थायी समितिया की व्यवस्था नही की है, जबकि ब्रिटेन मे छ, सयुक्त राज्य अमरीका म उन्नीस, और फ्रास मे अठारह स्थायी समितियाँ है। लोकसभा ने ऐसी समितियो के प्रयोग को आवश्यक नही समझा है। लोकसभा की समितियो की शक्तिया बहुत ही कम हैं। इस दृष्टि स लोकसभा की समितिया ब्रिटेन की समितियो से अधिक मिलती जुलती है।

प्रक्रिया सम्बन्धी अन्य कुछ उल्लेखनीय बातें—सविधान के उपबन्धो के अधीन प्रत्येक सदन को अपनी प्रक्रिया और काय सचालन के विषय मे नियम बनाने की पूण स्वतन्त्रता है। दोनो सदना की सयुक्त बैठक तथा उनके बीच सचार के हेतु राष्ट्रपति राज्य सभा के सभापति व लोकसभा के अध्यक्ष के परामश स नियम बनाने का अधिकार रखता है। सयुक्त बठक का सभापति लोकसभा का अध्यक्ष होता है, उसकी अनुपस्थिति म राष्ट्रपति द्वारा बनाये नियमो क अनुसार जिस व्यक्ति को अधिकार प्राप्त हो वह सभापतित्व करता है। वित्तीय कार्यवाही समय के भीतर पूरी हो जाये, इस सम्बन्ध म नियम तथा ससद के दोनो सदनो की प्रक्रिया व काय सचालन के नियमन का अधिकार राष्ट्रपति को है और इस सम्बन्ध मे बनाया गया कोई भी नियम, यदि वह सामान्य प्रक्रिया के नियमो के भी विरुद्ध हो, कायम रहगा। सामान्य प्रक्रिया के कुछ उल्लेखनीय नियम अग्रलिखित है—(1) जबकि सदन की बैठक हो रही हो सदन मे उपस्थित सदस्या के बारे म ये नियम है—(अ) प्रत्येक सदस्य सदन मे भीतर आते व सदन से बाहर जाते समय शिष्ट व्यवहार रखेगा, (आ) अनियमित ढग से सदन मे एक ओर से दूसरी ओर नही जायेगा, (इ) सदन के काय से सम्बधित कागजो को छाडकर अन्य पुस्तक, समाचार पत्र, आदि न पढेगा, (ई) शाति रखेगा, (उ) दूसरे सदस्यो के बोलते समय शोर तथा बेढगे तरीके से उनके भाषण म रुकावट न डालेगा।

(2) बोलने के सम्बन्ध म नियम—जब कोई सदस्य बोलने के लिए खडा होता है तो अध्यक्ष उसका नाम लेकर पुकारेगा। यदि एक साथ एक से अधिक सदस्य बोलने के लिए खडे हो तो जिस सदस्य का नाम पहले लिया जाय वह बोलेगा। (3) सम्बोधित करने का ढग [illegible] सदस्य अपने स्थान से ही अपन विचार प्रगट करेगा, खडा होकर बोलेगा और [illegible] को सम्बोधित करके भाषण देगा, परन्तु बीमारी अथवा कमजोरी की दशा मे अध्यक्ष किसी को बैठे [illegible] की आज्ञा दे सकता है। (4) प्रश्न अध्यक्ष क द्वारा पूछे जा सकते हैं। (5) [illegible] आदि—(अ) जब प्रस्ताव का प्रस्तावक बोल चुके तो अन्य सदस्य [illegible]

विधेयक के सशोधित रूप की एक एक धारा पर विस्तारपूवक विचार होता है। इस समय विचाराधीन अनुच्छेद या उसके खण्ड पर सदस्य अपने सशोधन पेश करत हैं। पहल सशोधना पर वाद विवाद होता है और उन पर मत लिया जाता है तब सशोधित अनुच्छेद पर मत लिया जाता है।

ततीय वाचन—अन्त म, उस विधेयक को किसी निश्चित दिन सदन के विचाराथ लाया जाता है। यह वाचन मुख्यत औपचारिक ही होता है, क्योंकि इस चरण पर विधेयक म कोई महत्त्वपूण परिवतन नहीं किया जा सकता। कवल विधेयक क अस्पष्ट शब्दा को अधिक स्पष्ट तथा उसम अन्य भाषा सम्बन्धी सुधार किय जा सकते हैं। इस चरण पर सदन का मत फिर स लिया जाता है। इसक उपरान्त सदन का अध्यक्ष उसे यह प्रमाणित करके कि यह पारित हो गया है दूसरे सदन को भेज दता है। उसम भी सामान्यत वही प्रक्रिया उस विधेयक के सम्बन्ध म लागू की जाती है। इस प्रकार दोनो सदनो म पास होन पर उस राष्ट्रपति की अनुमति क लिए भेजा जाता है। सदनो के बीच मतभेद होने की अवस्था म तथा राष्ट्रपति की अनुमति न मिलने पर क्या होता है, ये बातें पहल ही बतायी जा चुकी हैं।

4 आस्ट्रेलिया मे विधायी सगठन और प्रक्रिया

अध्यक्ष और प्रधान—प्रत्येक नव निर्वाचित प्रतिनिधि सदन किसी भी प्रकार का अन्य काय करने से पूव, किसी सदस्य को अपना अध्यक्ष चुनता है और जब कभी भी अध्यक्ष का पद खाली होता है, सदन नया अध्यक्ष चुनता है। अध्यक्ष अपने पद स उसी समय हट जाता है जबकि वह सदन का सदस्य न रहे। उसे सदन क मत द्वारा भी उसके पद स हटाया जा सकता है अथवा वह गवनर जनरल को सम्बोधित पत्र द्वारा अपने पद से त्यागपत्र द सकता है अथवा सदन की सदस्यता से त्यागपत्र दे सकता है। अध्यक्ष के निर्वाचन से पूव और उसकी अनुपस्थिति म प्रतिनिधि सदन किसी भी सदस्य को सभापति का काय करने क लिए चुन सकता है। आस्ट्रेलिया म साधारणतया अध्यक्ष सरकार के परिवतन के साथ बदल जाता है और उसका निर्वाचन भी निर्विरोध नहीं होता। जबकि ब्रिटिश कामन सभा का अध्यक्ष केवल निर्णायक मत ही देता है आस्ट्रेलिया मे कुछ अध्यक्षो ने सदन के मत विभाजन म भी भाग लिया है। प्रतिनिधि सदन की भांति सीनेट भी कोई अन्य काय करने से पूव, किसी एक सदस्य को अपना प्रधान चुनती है, और जब कभी भी प्रधान का पद रिक्त होता है, सीनेट नया अध्यक्ष चुनती है। वह अपने पद से तभी हट जाता है जबकि वह सीनेट की सदस्यता स अलग हो। उसे उसके पद से सीनेट मतदान द्वारा हटा सकती है अथवा वह अपने पद या सदस्यता स गवनर जनरल को सम्बोधित त्यागपत्र देकर हट जाता है। प्रधान के निर्वाचन से पूव या उसकी अनुपस्थिति म सीनेट किसी भी सदस्य को प्रधान के कत्तव्यो के पालन हेतु चुन सकती है।

प्रक्रिया नियम—प्रत्येक सदन अग्रलिखित बातो के विषय म प्रक्रिया नियम (Standing Orders) बना सकता है—(1) वह विधि जिसके द्वारा इसकी शक्तियो विशेषाधिकारो और उन्मुक्तियो का प्रयोग किया जाय और उन्हें मनवाया जाय, तथा (2) काय के सचालन और कायवाही, पृथक रूप मे या दूसरे सदन क साथ मिलकर। राष्ट्रमण्डल की ससद द्वारा अगीकृत स्थायी नियम ब्रिटिश पालियामेन्ट के नमूने पर हैं। उनम प्रश्न काल, स्थगन प्रस्ताव बजट व्यय के अनुमान (प्राक्कलन), कर सम्बन्धी प्रस्ताव, वाद विवाद, कायवाही का बन्द किया जाना, गणपूर्ति और मतदान इत्यादि। विधेयक पर प्रत्येक सदन म तीन वाचन होते है। इस विषय म मिलर का कथन है—आस्ट्रेलिया म ससदीय प्रक्रिया मुख्यत वसी ही है जसा कि ब्रिटिश कामन सभा मे। अरिकन की पुस्तक उनके लिए वसे ही धम पुस्तक है जस कि ब्रिटिश कामन सभा के

भाग सभा की गोपनीय बैठक के लिए नियत कर सकता है। जब ऐसी बैठक होती है तो बाहरी व्यक्ति को सभा-भवन, सभा कक्ष या दीर्घाओ मे रहने की अनुज्ञा नही होती।

सदस्यो का बाहर चला जाना तथा निलम्बन—अध्यक्ष किसी सदस्य को, जिसका व्यवहार उसकी राय मे घोर अव्यवस्थापूर्ण हो, तत्काल सभा भवन से बाहर चले जाने का निर्देश दे सकता है और ऐसे सदस्य को तुरन्त बाहर जाना होता है। यदि अध्यक्ष आवश्यक समझे तो वह उस सदस्य का नाम ले सकता है, जो अध्यक्ष पीठ के प्राधिकार की उपेक्षा करे या जो हठपूर्वक और जान-बूझकर सभा के काय मे बाधा डालकर सभा के नियमो का दुरुपयोग करे। यदि किसी सदस्य का इस प्रकार नाम लिया जाय तो वह तुरन्त प्रश्न रखेगा कि उस सदस्य को सत्र के अवशिष्ट काल तक सभा की सेवा से निलम्बित किया जाय। परन्तु सभा किसी भी समय, प्रस्ताव किये जाने पर, सकल्प कर सकती है कि ऐसा निलम्बन समाप्त किया जाय। कोई सदस्य अध्यक्ष की सम्मति से प्रस्ताव कर सकता है कि सभा के समक्ष किसी प्रस्ताव विशेष पर किसी नियम का लागू होना निलम्बित कर दिया जाये और यदि प्रस्ताव स्वीकृत हो जाये तो वह प्रासगिक नियम उस समय के लिए निलम्बित कर दिया जायगा।

ससद की प्रक्रिया

विधायी प्रक्रिया के विभिन्न चरण और तीन वाचन विधेयक का पुरस्थापन—कुछ विषयो से सम्बन्धित विधेयक राष्ट्रपति की पूर्व सहमति के बाद ही पेश किये जा सकते है यथा राज्यो की सीमाओ मे परिवर्तन करने वाले विधेयक। साधारणतया किसी विधेयक को पेश करने की आज्ञा प्राप्त करने के लिए एक माह की सूचना देनी चाहिए। यदि कोई सदस्य किसी विधेयक को पेश करना चाहता है तो उसे सदन की आज्ञा लेनी होती है। आज्ञा मिलने पर विधेयक पेश करने वाला सदस्य, यदि विधेयक महत्त्वपूर्ण हुआ, तो उसकी मुख्य बातो के सम्बन्ध मे एक भाषण भी दे सकता है। इसी चरण पर कोई विरोधी सदस्य भी अपने कुछ विचार व्यक्त कर सकता है। यही विधेयक का पहला वाचन कहलाता है और इसके बाद उसे सरकारी गजट मे प्रकाशित किया जाता है। परन्तु जब कभी अध्यक्ष किसी विधेयक को पेश करने की आज्ञा प्राप्त करने के पूर्व ही प्रकाशित करने की आज्ञा दे दे तो उस प्रकार के प्रस्ताव की आवश्यकता नही रह जाती।

द्वितीय वाचन—इसके बाद एक निश्चित दिन विधेयक का दूसरा वाचन आरम्भ होता है। उस दिन विधेयक का प्रस्तावक इन तीन मे से कोई भी एक प्रस्ताव रखता है—(1) विधेयक प्रवर समिति को विचाराथ सौप दिया जाये, (2) उस पर जनमत जानने के लिए उसे प्रसारित किया जाये, (3) उस पर तत्काल ही विचार किया जाय। साधारणतया अति आवश्यक सरकारी अथवा विवाद रहित विधेयको को छोडकर अन्य विधेयको पर तत्काल विचार नही किया जाता। समाज सुधार सम्बन्धी विधेयक बहुधा जनमत जानने के लिए प्रसारित किये जाते है, किन्तु अधिकतर विधेयको पर विचार करने के हेतु प्रवर समितियाँ बना दी जाती हैं। इनमे से कोई सा भी प्रस्ताव पास होने पर सदन मे विधेयक के मूल सिद्धान्तो पर वाद विवाद होता है। इस समय विस्तार की बातो पर विवाद नही होता और न ही कोई सशोधन पेश किया जाता है। इसके उपरान्त विधेयक तीसरे चरण मे आता है, जिसे समिति-स्टेज कहते हैं। प्रवर समिति मे विधेयक का प्रस्तावक तथा कुछ अन्य सदस्य होते है। कभी कभी जनमत के लिए प्रसारित किये जाने के उपरान्त भी विधेयको को प्रवर समितियो को सौपा जाता है। प्रवर समिति विधेयक की प्रत्येक धारा पर अत्यन्त सूक्ष्म रूप से विचार करती है और आवश्यकतानुसार उसमे सशोधन करती है। इसके उपरान्त निश्चित दिन विधेयक का प्रस्तावक सदन के सामने प्रवर समिति रिपोर्ट पर विचार किये जाने का प्रस्ताव पेश करता है। उसके स्वीकार हो जाने पर सदन

5 कनाडा मे विधायी सगठन और प्रक्रिया

कॉमन सभा का सगठन—कॉमन सभा का अध्यक्ष प्रमुख अधिकारी है, अन्य अधिकारी य है—समितियों का सभापति, जो कि उपाध्यक्ष भी रहता है और समितियो का उप सभापति। आम चुनाव के बाद सदन की पहली बैठक म अध्यक्ष का चुनाव होता है। परन्तु प्रत्येक सदन म यदि अध्यक्ष अग्रेजी भाषा भाषी है तो उपाध्यक्ष फ्रेंच भाषा भाषी होता है, किन्तु दोनो के लिए दोनो ही भाषाओ का साधारण ज्ञान आवश्यक है। कामन सभा का अध्यक्ष सदन द्वारा चुना जाता है किन्तु चुने जाने के बाद सदस्यो सहित वह सीनेट के सदन म जाता है और गवर्नर जनरल को सूचित करता है कि वह चुना गया है, यद्यपि इग्लैण्ड की भाँति उसके चुनाव पर गवनर-जनरल की स्वीकृति आवश्यक नही है। अध्यक्ष के कर्त्तव्यो का सदन के स्थायी आदेशो प्रथाओ व अग्रेजी दृष्टान्तो द्वारा विहित किया गया है। अध्यक्ष के अतिरिक्त सदन समितियो के सभापति और उप सभापति का भी चुनाव करता है। सदन का क्लर्क कमीशन द्वारा नियुक्त किया जाता है। वही सदस्यो को निष्ठा की शपथ दिलाता है और उसका पद उप मन्त्री के समान होता है। सदन के सभी पत्रो और रेकार्डों को सुरक्षित रखना उसका मुख्य कार्य है। सहायक क्लर्क प्रतिदिन की कार्यवाही सम्बन्धी आदेश पढता है और सदन म पढे जाने वाले अन्य पत्र, आलेख तथा समितियो की रिपोर्ट भी वही पढता है। दूसरे, सहायक क्लर्क का यह कार्य है कि सभी आवश्यक विधेयक, प्रस्ताव और अन्य आलेख आदि सदन की मेज पर रखे जाएँ तथा सदस्यो को भी उपलब्ध हो। सदन का प्रशासनिक सगठन कई शाखाओ मे है, जिनके नाम इस प्रकार हैं—समिति और व्यक्तिगत विधि निर्माण कानून, जनरल, रिपोर्टिंग, सार्जेन्ट, रेफेरेन्स, ससदीय पत्र।

समितियाँ—सदन के स्थायी आदेशो म अग्रलिखित समितियो के लिए व्यवस्था है—विशेषाधिकार और चुनाव, रले, नहर और तार विविध व्यक्तिगत विधेयक बकिंग और वाणिज्य, समुद्र व मछली, कृषि स्थायी आदेश, खनिज, वन और जल, औद्योगिक सम्बन्ध, वाद विवाद और पर राष्ट्र मामले। कुछ विषयो पर दोनो सदनो की सयुक्त स्थायी समितियाँ भी हैं, यथा मुद्रण, ससदीय पुस्तकालय। इनके अतिरिक्त प्रत्येक सत्र म विशेष समितियाँ नियुक्त की जाती हैं उनम म कोई कोई सयुक्त भी होती है। प्रति वर्ष सरकारी रेलो व जहाजरानी के विषय मे एक समिति नियुक्त की जाती है। हाल ही म अनुमान समिति नियुक्त होने लगी है।

सीनेट का सगठन—सीनेट का अध्यक्ष गवनर जनरल द्वारा नियुक्त किया जाता है। सीनेट का क्लर्क दूसरा मुख्य अधिकारी होता है। सहायक क्लर्क भी होता है। कानूनी क्लर्क और ससदीय परामर्शदाता, सीनेट, सीनेट समितियो और सीनेटरो का विधि निर्माण सम्बन्धी सभी मामलो म परामर्श देते हैं। जेन्टलमन अशर आफ दी ब्लैक राड (Gentlemen Usher of the Black Rod) सीनेट मे रानी के प्रतिनिधि का वयक्तिक सेवक होता है। वह पार्लियामेंट के उद्घाटन सम्बन्धी विस्तार की बातो का देख रेख, अध्यक्ष और सदस्यो को गद्दी मे भाषण सुनने के लिए बुलाने, शाही अनुमति अथवा सत्रावसान के सन्देश आदि देने के लिए उत्तरदायी है। सीनेट का प्रशासनिक सगठन भी कई शाखाओ म बँटा है यथा समिति, वाद विवाद और रिपोर्टिंग जनरल इत्यादि।

सदन की प्रक्रियायें व प्रथायें—साधारण रूप म कॉमन सभा की प्रक्रियायें और प्रथायें ब्रिटिश कामन सभा की प्रक्रियाओ व प्रथाओ से मिलती है, परन्तु कुछ बातो म अन्तर है। अध्यक्ष और क्लर्क विग (wig) नही पहनते, अनुमानो (estimates) पर विचार करने के दिन नियत नही किये जाते, कनाडा म न गिलोटीन है और न कगारू। मत विभाजन की पद्धति भी भिन्न है। जब मत विभाजन होता है तो घण्टी बजती है और सदस्यो को सदन म प्रवेश के लिए लगभग 10

लिए, परन्तु कुछ बाता म महत्त्वपूर्ण अन्तर भी है। इन अन्तरो का कारण यह है कि आस्ट्रेलिया की ससद का प्रत्येक सदन कामन सभा से आकार म छोटा है। ससद का स्वरूप अधिक प्रादेशिक या स्थानीय है (अर्थात् राष्ट्रीय कम) और वे प्रशासन पर अधिक ध्यान देती है। आस्ट्रेलिया की ससद मे अध्यक्ष दलगत नीति स पृथक नही रहता। आस्ट्रेलिया की ससद मे कमेटी स्टेज सम्पूर्ण सदन की समिति मे पूरी होती है, *सम्पूर्ण सदन की समिति मे अध्यक्ष का स्थान समिति का* सभापति ग्रहण करता है।

समितिया—लोक लेखा समिति अधिनियम, 1913 के 1920 म सशोधन द्वारा ससद मे एक 10 सदस्यो की स्थायी समिति के लिए व्यवस्था की गयी थी, जिसमे 7 प्रतिनिधि सदन और 3 सीनेट के सदस्य हो। राष्ट्रमण्डलीय ससद के दानो सदनो की स्थायी समितियाँ—पृथक् या सयुक्त बहुत ही कम है और जो हैं भी उनमे से अधिकतर समितिया का सम्बन्ध पुस्तकालय, मुद्रण और स्थायी नियमो आदि से है। 1951 म, सघीय ससद ने एक वैदेशिक मामलो की समिति स्थापित की थी, जिसमे 19 सदस्य होते हैं। यह केवल उन्ही मामलो पर विचार करती है जिन्हे मन्त्री इसे सौपता है। इन स्थायी और विशेष समितियो के अतिरिक्त कभी कभी प्रवर समितिया भी नियुक्त की जाती है, जिन्हे किसी विशेष मामले अथवा राजनीतिक प्रश्न की छानबीन करने के लिए नियुक्त किया जाता है। आस्ट्रेलिया की ससद मे ब्रिटिश कॉमन सभा की 5 स्थायी समितियो के समान कोई समितिया नही है। राष्ट्रमण्डल की ससद मे सभी विधेयक सम्पूर्ण सदन की समिति मे से उसी प्रकार गुजरते है जसे कि ब्रिटेन म धन विधेयको क सम्बन्ध मे परम्परा है।

विधि निर्माण—गैर सरकारी सदस्यो को विधेयक पेश करने का अधिकार है, परन्तु अब तक सभी धन विधेयका और अधिकतर साधारण विधेयको को सरकार की ओर से ही पश किया गया है, यद्यपि सरकारी और व्यक्तिगत सदस्य के विधेयको के बीच अन्तर है साथ ही साधारण और वित्तीय विधेयका के बीच भी अन्तर है। ऐसे प्रस्तावित कानून जिनका उद्देश्य धन या आय का विनियोग या कर लगाना हो सीनेट मे प्रारम्भ नही हो सकते। सीनेट ऐसे प्रस्तावित कानूनो मे सशोधन नही कर सकती, जिनका उद्देश्य कर लगाना या सरकार की साधारण सेवाआ के लिए धन विनियोग कराना तथा जनता पर प्रस्तावित भार म वृद्धि करना हो। परन्तु जिन प्रस्तावित कानूनो मे सीनेट सशोधन नही कर सकती वह उन्ह प्रतिनिधि सदन को किसी भी स्टेज पर लौटा सकती है।

ब्रिटेन और भारत की भाति आस्ट्रेलिया की ससद मे भी कोई विनियोग विधेयक या सकल्प ताज की सिफारिश पर ही पेश किये जा सकते हैं। साथ ही, प्रतिनिधि सदन प्रस्तावित विनियोग की धनराशि मे वृद्धि नही कर सकता। सरकार को विभिन्न करो या स्रोता से होने वाली आय एक ही निधि मे रखी जाती है जिसे सचित निधि कहते है। उसमे से सरकारी सेवाआ पर व्यय के लिए धनराशि केवल तभी निकाली जा सकती है जबकि उसके लिए कानून द्वारा विनियोग हो गया हो। वित्तीय वष प्रथम जुलाई से 30 जून तक चलता है। बजट अथवा अनुमान प्रतिनिधि सदन मे अगस्त या सितम्बर म पेश किये जाते है। प्रथम जुलाई से लेकर उस समय तक का व्यय जब तक कि बजट और विनियोग अधिनियम पास हो एक विशेष विधेयक (Supply Bill) के पास होने से किया जाता है। बजट कोपाध्यक्ष, (एक प्रकार से वित्त मन्त्री) द्वारा पेश किया जाता है, जो बजट भाषण पढता है और लेखो, अनुमाना से सम्बन्धित पत्र भी प्रस्तुत करता है। बजट और अनुमानो के ऊपर सम्पूर्ण सदन की समिति म विचार होता है। आवश्यकता पडने पर अकस्मात् व्यय की स्वीकृति के लिए बजट पास हो जाने के बाद पूरक बजट और विनियोग अधिनियम भी पास किये जा सकते हैं।

एकत्रित होते है । पहले ही दिन प्रत्येक सदन को, यदि स्थान रिक्त हो अपने अध्यक्ष व उपाध्यक्ष का चुनाव करना होता है । जब तक इस प्रकार चुनाव न हो जायें, सक्रेटरी जनरल अध्यक्ष का काय करता है । प्रत्यक सत्र क आरम्भ म डायट का उद्घाटन समारोह होता है । इस अवसर पर प्रतिनिधि सदन का अध्यक्ष (Speaker) डायट का सभापति रहता है, उसकी अनुपस्थिति म कौसिलर सदन का अध्यक्ष सभापति होता है । इस अवसर पर सम्राट स्वय उपस्थित होकर अपना छोटा सा सन्देश पढ़ता है ।

डायट क अधिकारी—प्रत्येक सदन के ये मुख्य अधिकारी होते हैं—अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, अस्थायी अध्यक्ष, स्थायी समितियो क सभापति (Chairmen) और सक्रटरी जनरल । प्रत्यक सदन क अध्यक्ष और उपाध्यक्ष का कायकाल उनकी सदस्यता की अवधि के साथ समाप्त होता है । प्रतिनिधि सदन के अध्यक्ष को 'स्पीकर' कहते हैं । यदि किसी सदन का अध्यक्ष अस्थायी रूप से अनुपस्थित रहे अथवा किसी कारण पद रिक्त हो तो उपाध्यक्ष उसके स्थान पर काय करता है । यदि किसी कारण से अध्यक्ष और उपाध्यक्ष दोना ही अपने कार्यों को करने म असमर्थ हो, तो ऐसी अवस्था म सदन क अस्थायी अध्यक्ष का चुनाव होता है, तब सदन का सक्रटरी जनरल बैठक का सभापति रहता है । प्रत्यक सदन अपने अध्यक्ष को अस्थायी अध्यक्ष नामजद करने का अधिकार भी दे सकता है । साधारणतया सदन का अध्यक्ष बहुमत दल का सदस्य होता है, परन्तु जब सरकार के साथ स्पष्ट बहुमत नही होता तो अध्यक्ष और उपाध्यक्ष दोना ही अन्य दलो से लिये जा सकते हैं ।

अन्य अधिकारी—प्रत्येक सदन म स्थायी समितियो के सभापतियो का चुनाव सम्बन्धित समितियो के सदस्यो द्वारा किया जाता है । प्रत्यक सदन का एक सक्रेटरी जनरल अन्य सेक्रेटरी और अधीन अधिकारी होते है । प्रत्येक सदन का सक्रटरी जनरल सदन द्वारा चुना जाता है, परन्तु सदन का सदस्य इस पद पर निर्वाचित नही हो सकता । सक्रेटरी तथा अन्य अधिकारी सक्रटरी जनरल द्वारा नियुक्त किये जाते है और वही उन्हे पदच्युत भी कर सकता है, किन्तु इन सभी कार्यों पर सदन क अध्यक्ष तथा सदन की प्रबन्ध समिति की सहमति आवश्यक है । सदन के अध्यक्ष के निदेशन अधीन सक्रेटरी जनरल सदन क मामलो का प्रशासन करता है और सरकारी आलखो पर हस्ताक्षर करता है । साधारणतया जापान म अध्यक्ष बहुमत दल का ही सदस्य होता है और उसक लिए यह भी आवश्यक नही कि चुने जान पर वह अपने दल से त्यागपत्र दे । अध्यक्ष स यही आशा की जाती है कि वह अपना काय पूण निष्पक्षता से करे, परन्तु वह अपने दल क हितो को आगे बढाने म सहायक होता है । थ्योडोर मेक्नेली के मतानुसार जापान म स्पीकर निष्पक्ष नही रह सकता क्योकि वह प्रक्रिया के सम्बन्ध म पक्षपातपूर्ण निणय देता है, फलत विरोधी पक्ष के लिए वह अस्वीकाय (persona non grata) होता है ।[1] इन कारणो से, यनागा के मतानुसार, उसका पद सयुक्त राज्य अमरीका के प्रतिनिधि सदन क अध्यक्ष से अधिक मिलता जुलता है ।

स्थायी समितियाँ—पूवगामी सविधान के अन्तगत प्रत्येक सदन की केवल पाँच स्थायी समितियाँ थी, अतएव अधिकतर काय सदन म किया जाता था और सदन सम्पूर्ण सदन की समिति के रूप म बैठता था । वतमान सविधान के अन्तगत 'डायट सम्बन्धी कानूनो के अनुसार' प्रत्येक सदन के लिए 15 स्थायी समितियो की व्यवस्था है । दोना सदनो की समितियो के नाम एक स है और उनका सम्बन्ध विधि निर्माण के प्राय सभी पहलुओ से है । 15 स्थायी समितियो का सम्बन्ध इन विषयो से है—(1) केबिनेट, (2) स्थानीय प्रशासन (3) न्यायिक मामले, (4) वदेशिक मामले, (5) वित्त, (6) शिक्षा, (7) सामाजिक व श्रम सम्बन्धी मामले, (8) कृषि, वन और

[1] T McNelly *op cit* pp 103-04

मिनट का समय दिया जाता है। अध्यक्ष के कहने पर सदस्य अपने स्थानो पर खडे हो जाते है, उनके नाम बोले जाते है और सहायक क्लक छपी सूची पर उनका मत रिकाड करता है। जब प्रस्ताव के पक्ष वाले मत दे चुकते है तो उसके बाद विपक्ष म मत लिये जाते हैं। क्लक दोना भापाओ मे मत विभाजन का फल घोपित करता है और अध्यक्ष प्रस्ताव के पास होने या गिरने की घोपणा करता है। सदन मे वित्तीय कायवाही ब्रिटिश कॉमन सभा की भाति ही होती है, किन्तु व्यय की उतनी कठोर परीक्षा नही की जाती जितनी कि ब्रिटिश कामन सभा म हाती है। पार्लियामट की समितियाँ भी ब्रिटिश पार्लियामट की समितियो की भाति काय करती है।

ब्रिटिश नॉथ अमरीका कानून म पार्लियामेंट को आहूत करन के विषय मे केवल यह प्राविधान है कि गवनर जनरल रानी के नाम मे कॉमन सभा को आहूत कर सकता है। जब नय सदन का चुनाव पूण हो जाता है तो नियत दिन सदस्य अपने भवन म एकत्रित होते है और नियत समय पर शपथ लेते है उसके बाद सदन अपने अध्यक्ष का चुनाव करता है। चुनाव के बाद सदस्य सीनट भवन मे जाते हैं और वहाँ गवनर-जनरल के भापण को सुनते है। भापण के बाद वे अपने सदन म आते है। अध्यक्ष यह घोपणा करता है कि सदन को गवनर जनरल न साधारण विशेपाधिकार प्रदान कर दिय है, ब्रिटिश कॉमन सभा की प्रथा के अनुसार कनाडा की कामन सभा मे भी किसी विधेयक का औपचारिक पहला वाचन किया जाता है। उसके बाद दूसरा वाचन, समिति म विचार, रिपाट, तीसरा वाचन और अतिम रूप म पारित होगा। दोनो सदना के स्थायी आदेशो के अनुसार तीनो वाचन अलग अलग दिन म होत है, किन्तु अविलम्ब कायवाही वाले विधेयको के विषय म अपवाद हो सकता है।

समितियाँ—कनाडा की पार्लियामेंट ने चार प्रकार की समितिया स्थापित की है—(1) सम्पूण सदन की समिति, (2) विशेप या प्रवर समिति, (3) स्थायी समिति और (4) सयुक्त समिति। ब्रिटेन की भाति धन विधेयको पर सम्पूण सदन की समिति म विचार होता है, जि ह समिति म ही सकल्प रूप म पश किया जाता है। कुछ विधेयको पर विचार करने के लिए विशेप समितियाँ नियुक्त की जाती है, कॉमन सभा की विशेप समितियो म सदस्यो की सख्या पर 15 की सीमा है। कामन सभा प्रत्येक सत्र म 17 स्थायी समितिया नियुक्त करती ह जिनमे से तीन सयुक्त समितिया है। उसकी सदस्य सख्या 12 और 60 के बीच म रहती है। इन समितिया मे विभिन दला का प्रतिनिधित्व उनकी सदन मे सख्या के अनुपात म होता है। सभापति सदा ही बहुमत दल का सदस्य रहता है। सयुक्त समितिया दोनो सदन मिलकर बनाते है।

6 जापान मे विधायी सगठन और प्रक्रिया

डायट का उदघाटन और सत्र आदि—सम्राट के आदेश द्वारा डायट के सत्र की तारीख घोपित की जाती है। साधारण सत्र प्रति वप साधारणतया दिसम्बर माह मे बुलाया जाता है और यह 150 दिन तक चलता है। साधारण सत्र के साथ साथ विशेप सत्र भी बुलाया जा सकता है। जिस तारीख से दोनो सदनो के सदस्यो का कायकाल आरम्भ होगा उसके तीस दिन क भीतर डायट का विशेप सत्र बुलाया जायेगा। इसके अतिरिक्त किसी भी सदन के कम से कम 1/4 सदस्यो के लिखित प्राथना-पत्र को सदन का अध्यक्ष केबिनेट के पास भेजकर—असाधारण सत्र की माग कर सकता है और सरकार के लिए एसा सत्र बुलाना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त आपातकालीन मामलो पर विचार करने के लिए भी सरकार असाधारण सत्र बुलाती है। कौसिलर सदन का असाधारण सत्र बुलाने के लिए प्रधानमन्त्री को सदन के अध्यक्ष से प्राथना करनी पडती है, जिसमे एकत्रित होने की तारीख और उन मामलो या विधेयको का सकेत भी होता है जिन पर विचार होना हो। सम्राट के आदेश मे दी गयी तारीख पर डायट के सदस्य अपने-अपने सदन

और विशेष हितो की डायट म एक प्रकार स शाखाओ अथवा चौकियो का रूप धारण कर लती हैं। समितियो के सभापति अपने अनेक रत और कृत्यो म सरकारी अधिकारियो जैस बन जात हैं और बहुधा ये अपने अपने विभाग क जोरदार समर्थक व प्रतिनिधियो की तरह काय करत हैं।[1]

ऊपर वर्णित स्थायी तथा विशेष समितियो क अतिरिक्त दो अन्य समिति, का सक्षिप्त वर्णन यहाँ देना आवश्यक प्रतीत होता है। पहला सम्मेलन समिति, जिसका निर्माण तब होता है जब किसी विधेयक, बजट सधि या प्रधानमन्त्री के नाम तय करने पर दोनो सदनो क बीच गहरा मतभेद अथवा सघर्ष पैदा हो जाय। इस समिति म दोनो सदनो क 10–10 सदस्य लिये जाते हैं जो एक सभापति चुनते हैं। ऐसी समिति का मुख्य काय उत्पन्न हुए मतभेद अथवा सघर्ष का दूर करना होता है। दूसरी, सयुक्त विधायी समिति है, जिसम प्रतिनिधि सदन व कौंसिलर सदन क क्रमश 10 और 8 सदस्य लिये जाते हैं। इस समिति का प्रबन्ध दोनो सदनो को इन बातो के विषय म परामर्श देना है—(1) राष्ट्रीय नीति मामलो को डायट क विचाराधीन लाना जिनने समस्यायें उत्पन्न हो सकती हो, (2) विधि निर्माण के लिये नये प्रस्तावो और विघटित केबिन आदेश व कानूनो और (3) डायट स सम्बन्धित कानूनो व नियमो का दोहराया जाना।

डायट का सचिवालय तथा लायब्रेरी आदि—प्रत्येक सदन का सचिवालय है, जिसका कर्त्तव्य उसके सभी कार्यों का प्रबन्ध करना है। सचिवालय सदन क अध्यक्ष निर्देशन के अधीन है। मुख्य सेक्रेटरी जो सदस्यो से बाहर का व्यक्ति होता है, सचिवालय का इन्चार्ज है और सरकारी आलेखो व पत्रो पर हस्ताक्षर करता है। डायट के सदस्यो को उनके कार्यों व खोज आदि म सहायता देने के लिये एक डायट पुस्तकालय की स्थापना की गयी है। इसके अतिरिक्त सदस्यो को विधेयको के प्रारूप आदि तयार करने म सहायता देने के लिए प्रत्येक सदन के लिए एक विधायी ब्यूरो भी स्थापित किया गया है।

विधायी प्रक्रिया—आरम्भ म ही यह बता देना उचित होगा कि जापान की डायट म वित्तीय प्रक्रिया साधारण प्रक्रिया स भिन्न नही है केवल एक दो बातो म साधारण व बजट विधेयक (Budget bills) के बारे म अन्तर है। विधायी प्रक्रिया को सक्षेप म अग्रलिखित शीर्षको क अन्तर्गत सुगमता से रखा जा सकता है। विधेयको की उत्पत्ति कई स्रोतो से हो सकती है—(1) कोई भी सदस्य विधेयक पेश कर सकता है, (2) विभिन्न समितियाँ तथा केबिनेट विधेयको के प्रस्ताव म पहल कर सकती है। अधिकतर विधेयक, जिनके प्रस्ताव सम्बन्धित सरकारी विभाग या अभिकरण रखते है केबिनेट म स्वीकृत होने पर डायट म आते है अर्थात् सरकार द्वारा पेश किये जाते है। विधेयको के प्रारूप तैयार कराने म विधायी ब्यूरो आवश्यक सहायता देती है। नियमो के अनुसार कोई भी सदस्य विधेयक पेश कर सकता है, यदि प्रतिनिधि सदन व कौंसिलर सदन क क्रमश 20 या अधिक और 10 या अधिक सदस्य उसका समर्थन करे जो पेश करने वाला सदस्य लिखित रूप म प्राप्त करता है। यदि विधेयक का सम्बन्ध बजट से हो तो पेश करने वाले सदस्य को प्रतिनिधि सदन व कौंसिलर सदन म क्रमश 50 और 20 या अधिक सदस्य का समर्थन प्राप्त करना आवश्यक है। यदि कोई सदस्य ऐसा प्रस्ताव पेश करना चाहे जिसका सम्बन्ध सदन के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, मन्त्रियो म विश्वास या अविश्वास से हो तो सदस्य अपने प्रस्ताव के प्रारूप म उस विषय से सम्बन्धित कारणो को भी देगा और उस पर कम से कम 59 समर्थको के हस्ताक्षर होने आवश्यक हैं।

जब कोई भी विधेयक पेश हो जाता है, तो अध्यक्ष उसे सभी सदस्यो मे वितरित कराने के साथ-साथ उपयुक्त समिति को भी उस पर रिपोर्ट देने के लिए सुपुर्द कर देता है। यदि यह निश्चय

---

[1] Yanaga C *Japanese People and Politics* p 184

मछली, (9) वाणिज्य और उद्योग, (10) परिवहन, (11) सचार, (12) निर्माण, (13) ऑडिट, (14) सदन का प्रबन्ध और (15) अनुशासन।[1] यनागा के अनुसार सितम्बर 1953 मे प्रत्येक सदन की 22 स्थायी समितियाँ थी। स्थायी समितियो के सदस्यो की नियुक्ति प्रत्येक सदन द्वारा सत्र के आरम्भ म होती है और सदस्य उन समितियो म अपनी सदस्यता की अवधि तक रहते हैं। नियमा के अनुसार प्रत्येक सदस्य कम से कम किसी एक समिति का सदस्य अवश्य रहता है और कोई भी सदस्य तीन समितियो से अधिक का सदस्य नही हो सकता।

विशेष समितियाँ—स्थायी समितिया के अतिरिक्त प्रत्यक सदन विशेष समितियाँ भी नियुक्त कर सकता है। विशेष रूप से ऐसे मामलो पर विचार करने के लिए जो किसी स्थायी समितियो के सदस्य भी सदन द्वारा नियुक्त किय जाते है और वे तब तक सदस्य रहते है जब तक विशेष समिति का काय समाप्त न हो। समिति के सदस्यो को विभिन्न दलो से उनकी सख्या के अनुपात म लिया जाता है। समितियो के सभापतियो का चुनाव राजनीति के दलीय पक्षपात के आधार पर किया जाता है। वहाँ पर सयुक्त राज्य अमरीका की भाति ज्येष्ठता की पद्धति (seniority system) को नही अपनाया गया है।

समितियो के काय—स्थायी और विशेष समितिया उन मामलो की परीक्षा करती हैं, जो उससे सुपुर्द किये जाते है अपना काय साधारणतया डायट के सत्र के दौरान करती है। जब डायट का सत्र न हो रहा हो, ये समितिया उन्ह सदन द्वारा विशेष रूप से सौप हुए मामलो पर विचार करती है। किसी भी समिति मे तब तक कोई काय नही किया जा सकता जब तक कि कम से कम उसके आध सदस्य बैठक मे उपस्थित न हो। समिति म सभी प्रश्नो पर बहुमत स निणय होते है और किसी प्रश्न पर दोनो पक्ष म बराबर मत आने पर सभापति को निर्णायक मत देने का अधिकार है। समितियो को अपने अधिकार क्षेत्र मे आने वाल मामलो के बार मे विधेयको का प्रस्ताव रखने का भी अधिकार है। ऐसे विधेयका का प्रस्ताव समिति के सभापति द्वारा रखा जाता है। समितियो को सावजनिक हित अथवा जनता से सम्बधित महत्त्वपूण मामलो पर सावजनिक सुनवाई करन का अधिकार प्राप्त है। ऐसे अवसरा पर वे विचाराधीन विषयो म से सम्बन्धित पक्षो, विद्वान और अनुभवी व्यक्तियो के मतो को सुनती है। समितिया चाहे तो गुप्त बठकें कर सकती है। *समितियो की कायवाही मे दशक रूप म केवल डायट के सदस्य ही सम्मिलित हो* सकते है। समितियो के निणयो और कायवाही की रिपाट सदन के सामने सभापतियो द्वारा रखी जाती है। प्रत्येक समिति को योग्य अथवा विशेष ज्ञान प्राप्त सहायक अधिकारी और रिसच सेक्रेटरी भी नियुक्त करने की शक्ति प्राप्त है।

समालोचना—समितियो का गठन शासन के विभिन्न पहलुओ के आधार पर हाता है जैसा कि सयुक्त राज्य अमरीका म है। अतएव उन्ह विशेष ज्ञान प्राप्त समितिया कह सकत है। इनके सदस्य अपनी अवधि के अ त तक रहत है, उनकी नियुक्ति प्रति वप नही हाती। समितियो की शक्तिया और उनके कार्य महत्त्वपूण है। व अपनी ओर स विधायी प्रस्ताव भी पेश कर सकती हैं और उन्ह सयुक्त राज्य अमरीका की समितियो की तरह सावजनिक सुनवाई का अधिकार भी है, परन्तु उन्हे विधेयको के सम्ब ध म वह शक्ति प्राप्त नही है जो कि सयुक्त राज्य अमरीका मे काग्रेस की समितियो को है। यनागा का मत है कि समितिया की सख्या बहुत अधिक है, जिसके परिणाम स्वरूप राष्ट्रीय मामल छोटे छोटे खण्डो म विभाजित हो जात है। इसके कारण राष्ट्रीय समस्याओ के बारे म एकीकृत तथा वृहत् दृष्टिकोण के विकास म गम्भीर बाधा पैदा होती है। विभिन्न प्रशासनिक विभागा के लिये अलग अलग समितिया है, जिसके कारण समितिया प्रशासनिक विभागा

[1] The National Diet—Japan 1960 p 33

विषय मे यह आवश्यक है कि यदि दोनो सदनो म मतभेद उत्पन्न हो तो पहले उस दूर करने क लिए सम्मेलन समिति अवश्य बैठाई जायेगी। इसके विफल रहने पर प्रतिनिधि सदन का दूसरी बार 2/3 क बहुमत से किया हुआ निणय अ तिम रहगा। (4) जैसा कि अ य अनेक राज्यो म व्यवस्था है जापान मे भी बजट सम्ब धी विधेयको का आरम्भ प्रतिनिधि सदन म ही हो सकता है क्योकि यह माना है कि उसे राष्ट्रीय वित्त पर निय त्रण शक्ति प्राप्त है।

यदि कौसिलर सदन किसी एसे विधायी प्रस्ताव को अस्वीकार कर दे जिसे प्रतिनिधि-सदन ने पास कर दिया हो अथवा उस प्रस्ताव पर (विश्राम काल को छोड कर) 60 दिन क भीतर कायवाही न कर, तो प्रतिनिधि सदन कौसिलर सदन के प्रतिषेध को 2/3 के बहुमत स गिरा सकता है। दानो सदनो के बीच मतभद पैदा होने की दशा म प्रतिनिधि सदन दाना सदनों की सयुक्त समिति की बठक उस प्रस्ताव पर विचार करने के लिए बुला सकता है। बजट और स धियो पर स्वीकृति दने की प्रक्रिया अ य विधायी प्रस्तावा स भिन्न है। बजट या स धि का पहल प्रतिनिधि सदन म पेश करना और उस पर उसकी स्वीकृति मिलना आवश्यक है। प्रतिनिधि-सदन का निणय ही डायट का निणय समझा जाता है—(1) जबकि कौसिलर सदन प्रतिनिधि सदन से भिन्न निणय करता है और जब दोनो सदनो की सयुक्त समिति क द्वारा भी सहमति प्राप्त नही हो सकती या (2) कौसिलर सदन (विश्राम काल का छोडकर) 30 दिन क भीतर बजट या स धि पर (प्रतिनिधि सदन द्वारा पारित किये जाने पर भी) कोई कायवाही नही करता ना ऐसे विधेयको पर, जिनका सम्ब ध केवल किसी एक स्थानीय सस्था (single local entity) से हो, उस स्थानीय क्षेत्र की जनता के बहुमत की स्वीकृति मिलनी आवश्यक है। डायट सविधान के सशोधनो पर तभी पहल कर सकती है जबकि प्रत्येक सदन को कुल सदस्य सख्या के 2/3 सदस्य उसक पक्ष म मतदान करें। उस सशोधन प्रस्ताव पर उसके बाद जनता के बहुमत द्वारा सम्पुष्टि करए होना आवश्यक है। जब प्रतिनिधि सदन का विघटन होता है, तभी कौसिलर सदन भी ब द हो जाता है। परन्तु राष्ट्रीय आपात् काल म केबिनेट कौसिलर सदन का आपात्कालीन सत्र बुला सकती है।

7 फ्रान्स में विधायी सगठन और प्रक्रिया

सदस्यो के विशेषाधिकार—सविधान के अनुसार पार्लियाम ट से सदस्या को तीन प्रकार के विशेषाधिकार (privileges) अथवा विमुक्तियाँ (immunities) प्राप्त हैं। प्रथम, किसी भी सदस्य द्वारा अपने कत्तव्य पालन म दिय गये मतो अथवा मत की अभिव्यक्ति के लिए उसके विरुद्ध कानूनी कायवाही नही हो सकती और उसे ब दी नही बनाया जा सकता। यह विमुक्ति पार्लियामेन्ट म दिये गय भाषणो व मतो के लिए है जिसस कि व अपना काय स्वत त्रतापूवक कर सकें, परन्तु पार्लियामेन्ट मे बाहर किसी भी बात के कहन या प्रकाशित करने का उन्ह उत्तरदायित्व भरना होता है। दूसरी, पार्लियाम ट क सत्रा के दौरान पार्लियाम ट के किसी सदस्य को कानून का गम्भीर अतिक्रमण करने क सिवा (बिना सदन द्वारा अधिकार दिये गय) अ य अपराधो व कदाचार क लिए न तो नजरबन्द किया जा सकता है और न उसके विरुद्ध कानूनी कार्यवाही ही की जा सकती है। तीसरी, पार्लियाम ट के सदस्य के विरुद्ध गम्भीर अतिक्रमण क लिए की गई कानूनी कायवाही (prosecution) अथवा नजरबन्दी निलम्बित रहेगी, यदि उसका सदन ऐसी प्राथना करे। पार्लियाम ट के सदस्यो का वेतन सबसे उच्च वतन प्राप्त नागरिक अधिकारियो क वेतन से समता रखता है। सदस्यो को एक आधारभूत वतन (basic salary) मिलता है और उसके अतिरिक्त उपस्थिति के अनुसार वानस। स तोषजनक उपस्थिति न रहन पर बोनस घट जाता है, सदस्य ही यह निश्चित करते हैं कि सदस्या को अनुपस्थित रहने के लिए क्या दण्ड दिया जाये।

न हो सके कि विधेयक किस समिति के सुपुर्द किया जाये तो अध्यक्ष उसे सदन के निणय के अनुसार स्थायी समिति को सुपुर्द करता है। यदि किसी विधेयक अथवा मामले पर विचार करने के लिए कोई विशेष समिति बैठाई जाये तो अध्यक्ष उसके अधिकार-क्षेत्र म आने वाले विधेयक या मामले को उसी समिति के सुपुर्द करेगा। समितियो को उप समितियाँ नियुक्त करने की शक्ति प्राप्त है। जब कोई विधेयक या मामला किसी समिति को विचार करने के लिए पेश कर दिया जाता है तो समिति सवप्रथम उसके आशय और सार के बारे म स्पष्टीकरण सुनती है और तब उसकी परीक्षा आरम्भ करती है। परीक्षा के दौरान समिति सदन के सदस्य को गवाही देने के लिए बुला सकती है या कोई सदस्य ऐसा करने के लिए स्वय प्राथना कर सकता है। समिति का कोई भी सदस्य विधेयक के बारे मे सशोधन पेश कर सकता है, पर तु लिखित रूप म सशोधन की पूव सूचना सभापति को देनी आवश्यक है, समिति सदन के अध्यक्ष द्वारा किसी गवाह को बुला सकती है, और केबिनेट तथा सरकारी अथवा सावजनिक कार्यालयो स आवश्यक रिपोट व रिकाड भी मगवा सकती है।

जब समिति किसी विचाराधीन मामले पर विचार अथवा उसकी परीक्षा पूण कर लेती है, तो वह किसी निणय पर पहुँचती है। समिति उसके सम्ब ध मे सभापति के द्वारा सदन के अध्यक्ष को रिपोट देती है। जब वह विधेयक या मामला सदन की काय-सूची म सम्मिलित हो जाता है, तो समिति का सभापति समिति की कायवाही और परिणामो के विषय म सदन के सामने रिपोट रखता है। यदि किसी विषय पर अल्प मत रिपोट भी हो तो यह भी सदन के सामने आती है। *विधेयक पर कोई भी सशोधन सम्ब धी प्रस्ताव किसी सदस्य द्वारा रखा जा सकता है।* इस प्रकार एक सदन मे विधेयक पास होता है।

जब केबिनेट किसी विधेयक को एक सदन मे पेश कर देती है, तो उसके पाच दिन के भीतर वह उस विधेयक को दूसरे सदन म उसकी प्रारम्भिक परीक्षा के लिए भेजती है। कोई भी विधेयक डायट द्वारा तभी पारित समझा जाता है जबकि वह विधेयक एक ही रूप मे दोनो सदनो द्वारा स्वीकृत किया जाय। किसी विधेयक पर सदनो के बीच मतभेद को दूर करने के लिए सम्मेलन समिति नियुक्त की जाती है। जिस विधेयक या मामले पर दोनो ही सदनो का निणय आवश्यक हो या जिसमे उस पर अ तिम निणय हुआ हो उसका अध्यक्ष अथवा प्रतिनिधि सदन का अध्यक्ष, जबकि प्रतिनिधि मण्डल का निणय ही डायट का निणय हो, उस केबिनेट के द्वारा सम्राट की सेवा म पेश करेगा यदि उसे लागू किया जाता है और अ य मामलो म केबिनेट को ही सम्राट की सेवा म भेजे जाने के 30 दिन के भीतर कानून लागू कर दिया जायेगा। अ य देशो की तरह जापान की डायट का निम्न सदन भी, जो लोकप्रिय सदन है, दूसरे सदन से अधिक शक्तिशाली है।

प्रतिनिधि सदन की शक्तिया कौंसिलर सदन से कई बातो मे बढी हुई है, जिनका सक्षिप्त विवेचन अग्रलिखित है—(1) साधारण विधेयको के सम्ब ध मे व्यवस्था इस प्रकार है—जब कोई विधेयक प्रतिनिधि सदन म पास होने के बाद कौंसिलर सदन म जाता है और कौंसिलर सदन उसम सशोधन कर देता है तो साधारणतया दोनो सदनो के बीच मतभेद को दूर करने के लिए सम्मेलन समिति बिठाई जाती है। परन्तु सविधान क अनुसार (सम्मेलन समिति के असफल होने पर अथवा बिना उसके नियुक्त किय हुए) यदि प्रतिनिधि सदन उसे दूसरी बार सदन मे उपस्थित सदस्यो के 2/3 क बहुमत से पारित कर द तो वह विधेयक कानून बन जायेगा। (2) जिन विधेयको का प्रतिनिधि सदन अन्त कर देता है, उन पर कौंसिलर सदन को फिर स विचार करने की शक्ति प्राप्त नही है। (3) इसी प्रकार बजट व स धियो की स्वीकृति तथा प्रधानम त्री क नाम तय करने के सम्ब ध म प्रतिनिधि सदन की शक्तिया बढी हुई है, पर तु इनम से प्रत्येक

समितियां—सभापतियों के सम्मेलन और ब्यूरो से बहुत सहायता मिलती है।

फ्रांस की एसेम्बली के प्रधान की सत्ता को उतना उच्च और निष्पक्ष नहीं समझा जाता जितना कि ब्रिटिश कॉमन सभा के अध्यक्ष की सत्ता का समझा जाता है। इसका कारण यह है फ्रांस में प्रधान अपने दल का सक्रिय सदस्य बना रहता है। परन्तु फ्रांस के संविधान के अनुसार प्रधान के कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य अग्रलिखित हैं—(1) वह सांविधानिक परिषद् के नौ सदस्यों में से तीन को चुनता है, (2) सीनेट के प्रधान और प्रधानमन्त्री के साथ उसे इस परिषद् के सामने अपील करने का अधिकार है, वह किसी निजी सदस्य द्वारा पेश किये गये विधेयक अथवा संशोधन को, जिसे वह सांविधानिक समझे, परन्तु जिसे सरकार न माने, सांविधानिक परिषद् के सामने पेश कर सकता है, और (3) संविधान की धारा 16 के अन्तर्गत जब राष्ट्रपति आपात्कालीन घोषणा करनी चाहे तो उसे एसेम्बली (व सीनेट) के प्रधान से मन्त्रणा करनी होती है। धारा 32 के अनुसार सीनेट के प्रधान का चुनाव प्रति तीन वर्ष बाद होता है, जबकि उसके 1/3 सदस्य चुनकर आते हैं। सीनेट के प्रधान के कृत्य भी बहुत सीमा तक सभापतित्व करने के सम्बन्ध में वैसे ही हैं जैसे कि एसेम्बली के प्रधान के। उसे भी सांविधानिक परिषद् के तीन सदस्यों का चुनाव करने का अधिकार है और आपात्कालीन घोषणा करने से पूर्व राष्ट्रपति उससे भी मन्त्रणा करता है।

सदनों का संगठन—दोनों सदनों का आन्तरिक संगठन प्रायः एक समान है। अक्तूबर सत्र के आरम्भ में प्रत्येक सदन एक ब्यूरो का चुनाव करता है, जिसमें प्रधान, उप-प्रधान (जिनकी संख्या एसेम्बली में 6 और सीनेट में 4 है), सेक्रेटरी (एसेम्बली में 12 और सीनेट में 8), जिनका कार्य सरकारी रिकार्ड तैयार करना और मतों को चैक करना है और क्वेसच्यूस (Questures), जिनकी प्रत्येक सदन में संख्या 3 है और जो प्रशासनिक और वित्तीय व्यवस्था के लिए उत्तरदायी होते हैं, सम्मिलित होते हैं। ब्यूरो के कृत्य सामूहिक रूप से एसेम्बली में विभिन्न सेवाओं को संगठित करने व उनकी देख रेख करने और यदि आवश्यकता पड़े तो बहुत सी बातों में (विशेषकर अनुशासनात्मक मामलों और विधेयकों व प्रस्तावों का पेश किया जा सकता है या नहीं, इस प्रश्न पर) परामर्श देना है। प्रत्येक सदन सभापतियों के सम्मेलन को संसदीय और विधायी कार्य सौंप देता है।

संसदीय समूह (Parliamentary Groups)—प्रत्येक सदन के सदस्य विभिन्न समूहों में बँट जाते हैं। नेशनल एसेम्बली में संसदीय समूह के रूप में मान्यता पाने के लिए यह आवश्यक है कि उसमें कम से कम 30 सदस्य हों। संसदीय समूहों के लिए एक सभापति चुनना होता है, जो उनके सदस्यों की सूचियों का ब्यूरो में रजिस्टर कराता है। और उनके राजनीतिक सिद्धान्तों की घोषणा को प्रकाशित कराता है। अन्य बातों में संसदीय समूहों को जैसा वे चाहें संगठन बनाने की स्वतन्त्रता है। काकस अर्थात् संसदीय समूह तीन प्रकार के होते हैं—रबड़ की मोहर जैसे, क्लब जैसे (club like) तथा संसदात्मक ढंग (Parliament type) के। पहले प्रकार का उदाहरण साम्यवादी कॉकस है, जिसे पहल करने का अधिकार 'नहीं' के समान है और जिसके सभी कार्यों का नियन्त्रण दलीय सचिवालय करता है। दूसरे प्रकार के काकस का उदाहरण उग्र दल (radicals) है, जिसके सदस्य महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करने के लिए बैठक करते हैं, किन्तु जो सदन में मतदान आदि के विषय में किसी अनुशासन से नहीं बँधते। तीसरे प्रकार के काकस समाजवादी, यू० एन० आर० और एम० आर० पी० हैं। इनके सदस्य काकस की बैठकों में अपना मत देने के लिए स्वतन्त्र हैं, परन्तु सदन में काकस के आदेशों के अनुसार कार्य करते हैं, वे दल के आदेश के सामने अपनी अन्तरात्मा की भी परवाह नहीं करते।

सदनों की बैठकें आदि—पार्लियामेन्ट की बैठकों का समय-क्रम प्रति सप्ताह एसेम्बली के

1960 मे एक सदस्य को प्रति माह कुल मिलाकर लगभग 800 डालर मिलते थे ।

सविधान की धारा 27 के अनुसार पार्लियामे ट के सदस्यो को बाधने वाली सभी हिदायतें अवैध है । पार्लियामे ट के सदस्यो का मत देने का अधिकार व्यक्तिगत है । असाधारण परिस्थितियो के अ तगत आगिक कानून (organic law) द्वारा कोई सदस्य अपना मत देने का अधिकार किसी अ य सदस्य को सौप सकता है, कि तु किसी भी सदस्य को एक से अधिक मत देने का अधिकार नही दिया जा सकता । सदस्या के कुछ महत्त्वपूण कत्तव्य भी हैं । पार्लियामे ट के सत्रो के दौरान सदस्य से यह आशा की जाती है कि वह सभी बैठको मे उपस्थित रहे । यदि उसे किसी उचित कारण के लिए बैठक मे अनुपस्थित रहने की आज्ञा न मिले तो बैठको से अनुपस्थित रहने पर उसकी वेतन म कटौती होती है । 1958 म बनाये गये एक कानून के अनुसार 'पार्लियामे ट के सदस्य कोई दूसरा व्यवसाय नही कर सकते और वे कोई ऐसा सावजनिक पद ग्रहण नही कर सकते जिसके लिए चुनाव न होता हो' अर्थात् वे कम्यूनो की कौसिलो मे मयर व कौसिलर आदि रह सकते है । पार्लियामे ट के वे सदस्य जो वकील हो या स्वय या अपने सहयोगिया के द्वारा ऐसे फौजदारी मामलो म भाग नही ले सकते जिनका राज्य पर प्रभाव पडता हो । पार्लियामे ट के सदस्यो के लिए यह भी मनाही है कि वे वित्त, वाणिज्य और उद्योग से सम्ब धित किसी भी कारखाने के विज्ञापनो पर अपने नाम के आगे पार्लियामे ट की सदस्यता के सूचक वाक्याश आदि का प्रयोग करें ।

पार्लियामे ट के सत्र—सविधान की धारा 28 के अनुसार वप म पार्लियामे ट के दो साधारण सत्र होने आवश्यक है—प्रथम सत्र अक्तूबर के प्रथम मगलवार को आरम्भ होकर दिसम्बर के तीसरे शुक्रवार तक चलता है । दूसरा सत्र अप्रैल के अ तिम मगलवार को आरम्भ होता है, जो तीन माह से अधिक समय तक नही चल सकता । धारा 29 के अनुसार पार्लियामे ट के असाधारण सत्र की व्यवस्था भी है । ऐसा सत्र प्रधानम त्री या नेशनल एसेम्बली के सदस्या के बहुमत की प्राथना पर किसी विशेष कायक्रम पर विचार करने के लिए बुलाया जा सकता है । जब ऐसा सत्र सदस्या की प्राथना पर बुलाया जायेगा तो जस काय समाप्त होगा या अधिक से अधिक बारह दिन के भीतर सत्र का अ त होना आवश्यक है । धारा 30 के अनुसार वप म दो साधारण सत्रा को छोडकर, जबकि पार्लियामे ट अपने अधिकार मे एकत्रित होती है, असाधारण सत्रा का आरम्भ और अ त राष्ट्रपति की आज्ञप्ति (decree) द्वारा होता है । सविधान की धारा 31 के अनुसार सदनो की कायवाही म सरकार (म त्रि परिषद्) के सदस्या का भाग लेने का अधिकार है । वे उनमे भाषण कर सकते है परन्तु मतदान म भाग नही ले सकते, क्योकि वे पार्लियामे ट के सदस्य नही रहते ।

सदनो के प्रधान—सविधान की धारा 32 के अनुसार नेशनल एसेम्बली का प्रधान उसकी पूरी अवधि के लिए चुना जाता है, इससे पूव उसके वार्षिक चुनाव की व्यवस्था थी । प्रधान का चुनाव एसेम्बली के प्रथम सत्र की पहली ही बैठक म होता है, उस बैठक म एसेम्बली का सबसे वृद्ध सदस्य सभापति रहता है । सविधान म चुनाव पद्धति का कोई उल्लेख नही है, वह पूर्ववत् जारी है । चुनाव गुप्त मत-पत्र द्वारा होता है । पहले और दूसरे मतदान म सदन के कुल सदस्या का पूण बहुमत आवश्यक है, पर तु तीसरे मतदान म केवल सापेक्ष बहुमत काफी है । प्रधान का सबसे महत्त्वपूण कत्तव्य तो सदन की बैठको का सभापतित्व करना और उसके स्थायी आदेशो (standing orders) को लागू करना है । वाद विवाद का कायक्रम पहले से ही सभापतियो के सम्मेलन द्वारा निर्धारित कर लिया जाता है और सम्मेलन पर सरकार व दलो के नेताओ नियन्त्रण रहता है । एसेम्बली के स्थायी आदेश भी प्रधान को अपने विवेक के प्रयोग के लिए ही कम अवसर देते हैं । नियमो अथवा आदेशो के लागू करने म प्रधान को दो म

समिति पद्धति म क्रान्तिकारी परिवर्तन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। पुरानी एसम्बली म 19 विशिष्ट समितियाँ थी। उनम स कुछ के पास इतना काम था कि व सारहीन विधेयको की संख्या बढ़ान म लगी रहती थी जिसस कि व अपने अस्तित्व को यथोचित ठहरा पाती। अन्य समितियाँ महत्त्वपूर्ण समूहा के हित साधन म लगी रहती थी।[1]

विधेयक पर सदन मे विचार—सरकारी विधेयक पर समिति की रिपोर्ट आ जाने पर सदन मे विचार मन्त्री द्वारा की जाने वाली घोषणा क बाद होता है। पूर्वगामी व्यवस्था क अनुसार एसेम्बली के वाद विवाद सधारणतया समिति द्वारा दी गई रिपोर्ट के आधार पर होता था और विधेयक का सचालन मन्त्री के स्थान पर समिति का सभापति करता था। सरकार का अपनी ओर से सशोधन प्रस्ताव पेश करना भी कठिन था। वर्तमान पद्धति के अनुसार विधेयक का सचालन मन्त्री स्वय करता है और वह उसम सशोधन पेश कर सकता है। एसम्बली म पहले विधेयक के सामान्य सिद्धान्तो पर, जिन्हे सरकार और समिति का प्रवक्ता पेश करते हैं, वाद विवाद होता है। उसके बाद सदन उसकी एक एक धारा पर मतदान करता है और अन्त म उसके सशोधन रूप म पूर्ण विधेयक पर मतदान होता है। एसम्बली स पास होने के बाद विधेयक सीनेट (या सीनेट से एसम्बली) म जाता है, जहाँ उस पर समान प्रक्रिया के अनुसार विचार होता है। दोनो सदनो द्वारा एक ही रूप म पारित किये जाने पर उसे राष्ट्रपति लागू करता है और वह कानून बनता है।

यदि किसी सरकारी अथवा ससदीय विधेयक पर दोनो सदनो म मतभेद हो तो उसे दूर करने के लिये सविधान की धारा 45 के अनुसार प्रधानमन्त्री को अधिकार है कि वह दोनो सदनो के बराबर सदस्यो की एक सयुक्त समिति की बैठक कराय, जिसका कार्य वाद विवाद होने वाले शेष मामलो पर नये रूप का प्रस्ताव रखना है। सयुक्त समिति द्वारा तैयार किये गये रूप को सरकार दोनो सदनो की स्वीकृति के लिए पेश करेगी। यदि सयुक्त समिति सहमति पर आधारित रूप स्वीकार न कर सके तो सरकार उस पर एसेम्बली व सीनेट द्वारा एक नया वाचन होने के बाद, नेशनल एसेम्बली स उस पर अन्तिम निर्णय के लिए कह सकती है। इस प्रकार विधि-निर्माण के मामलो मे एसम्बली अन्तिम अधिकार रखती है और सीनेट का भाग गौण है। वाद-विवाद के दौरान मन्त्री और समितियो के सभापति किसी भी समय हस्तक्षेप कर सकते हैं। वाद विवाद के दो रूप हो सकते है—खुला और सगठित। प्रथम दशा मे बोलने वाले सदस्य प्रधान को पहले से सूचना देते हैं और प्रधान उनके बोलने का क्रम निर्धारित करता है। दूसरी दशा म वाद विवाद के लिए कुल समय और उसमे से प्रत्येक ससदीय समूह को मिलने वाला भाग पहले से ही कठोरतापूर्वक नियत कर लिया जाता है। अब एक स्थायी आदेश के अनुसार सदस्यो को अपने लिखित भाषण पढने की मनाही है। किसी भी विधेयक पर मतदान होने से पूर्व विभिन्न समूहो के प्रवक्ताओ को अपना रुख समझाने के लिए 5 मिनट का समय दिया जाता है।

आंगिक कानून (Organic laws)—उन कानूनो का जिन्हे सविधान ने यह नाम दिया है, धारा 46 के अनुसार, अग्रलिखित दशाओ के अन्तर्गत पारित व सशोधित किया जायेगा। सरकारी अथवा ससदीय विधेयक को जिस सदन मे वह पेश किया गया हो उस सदन द्वारा विचार तथा मतदान के लिए उनके पेश करने के केवल 15 दिन बाद लाया जायेगा। उसके सम्बन्ध म अन्य

---

[1] The revolution in the committee system is much the most important change in Parliamentary organization The old Assembly had a remarkable system of nineteen specialist committees Some had so little to do that they turned to multiplying insignificant bills to justify their existence Others were bridgeheads of important interest groups which could easily block measures which displeased them —Williams and Harrison *De Gaulle's Republic* pp 146–47

प्रधान, उप प्रधाना, मसदीय समूह के अध्यक्षो, समितियो के प्रधानो और वित्त समिति के रिपोटर की सभा म निर्धारित किया जाता है। वतमान सविधान के अ तगत सरकार को समय क्रम पर प्रभावी नियन्त्रण प्राप्त है और वह सरकारी विधेयको तथा ऐसे निजी विधयको को प्राथमिकता दे सकती है जो उसे स्वीकाय हो। पालियामे ट का प्रथम सत्र लगभग 74 दिन चलता है, जिसमे मुख्यत बजट पर विचार होता है। दूसरा सत्र तीन माह से कम चलता है और उसम मुख्यत विधायी कायक्रम पूरा किया जाता है। एसेम्बली सप्ताह मे चार दिन अपराह्न मे बैठती है और सवरे समितिया की बैठके होती है। शुक्रवार की बैठकें साधारणतया प्रश्नो क लिए होती है। सविधान की धारा 33 के अनुसार दोनो सदनो की बैठकें खुले रूप से होनी है और सरकारी जरनल मे उनके बाद विवाद की विस्तृत रिपोट प्रकाशित होती है। प्रधानमन्त्री अथवा 1/10 सदस्यो की प्राथना पर किसी भी सदन की गुप्त बैठक बुलाई जा सकती है।

विधायी प्रक्रिया—प्रधानमन्त्री और पार्लियामेन्ट के सदस्यो को विधि निर्माण म पहल करने का अधिकार है। सरकारी विधेयका (Government Bills) पर पहले मन्त्रि परिषद् मे विचार होता है और उन्ह पार्लियामेन्ट के किसी भी सदन के सचिवालय म जमा कर दिया जाता है, परन्तु वित्तीय विधेयको को नेशनल एसेम्बली मे ही आरम्भ किया जा सकता है, अर्थात् उन पर प्रथम विचार एसेम्बली म होता है। निजी सदस्या के विधेयक (Private Member's Bills) के नियमानुसार नही माने जाते, यदि उनके द्वारा आय म कमी और व्यय म वृद्धि हो। यदि विधेयक अथवा सशोधन कानून की सीमा के बाहर अथवा धारा 38 क अ तगत सौपी गई सत्ता के विरुद्ध लगे तो सरकार घोषित कर सकती है कि उसे पेश नही किया जा सकता, परन्तु यदि इस प्रश्न पर सरकार और सम्बन्धित सदन के प्रधान के बीच मत भेद हो, तो प्रश्न को किसी भी पक्ष की प्राथना पर सावैधानिक परिषद् के सामने पेश किया जायेगा और परिषद् उस पर आठ दिन के भीतर अपना निणय देगी।

पेश हो जाने के बाद विधेयको को छ मे से किसी भी एक नियमन समिति अथवा सरकार या एसेम्बली की प्राथना पर किसी तदथ (ad hoc) समिति को सुपुद कर दिया जाता है। तदथ समिति के सदस्यो की सख्या 90 से ऊपर नही हो सकती। 1959 म एसेम्बली की छ समितियाँ ये थी—(1) सास्कृतिक, पारिवारिक और सामाजिक मामलो की समिति जिसका अधिकार क्षेत्र शिक्षा, कलाओ, खेल, सस्कृति, जनसख्या, परिवार, सावजनिक स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा और सूचना आदि तक विस्तृत है। (2) वैदेशिक मामलो की समिति। (3) राष्ट्रीय प्रतिरक्षा और सशस्त्र सेनाओ की समिति। (4) वित्त, अथव्यवस्था, और आर्थिक नियोजन की समिति। (5) सविधान, विधि निर्माण और सामान्य प्रशासन की समिति। (6) उत्पादन और व्यापार की समिति। प्रथम और अन्तिम समितियो मे से प्रत्येक के सदस्यो की सख्या 120 है। तीसरी और पाँचवी समितियो मे से प्रत्येक के सदस्यो की सख्या 90 है और शेष दो म से प्रत्येक के सदस्यो की सख्या 60 है। स्थायी समितियो के सदस्यो का चुनाव ससदीय समूहो द्वारा किया जाता है, जिन्ह उनम अपने सदस्यो की सख्या के अनुपात म स्थान मिलते है। प्रत्येक स्थायी समिति एक सभापति चुनती है और तीन या चार उप सभापति तथा दो से चार तक सेक्रेटरी भी। इनके अतिरिक्त वित्त समिति एक रिपोटर चुनती है।

समितियो की सख्या मे कमी करने के दो उद्देश्य रहे है—पहला, समितिया की सत्ता को कम करना, जिनके सभापति जबकि उनका काय क्षेत्र मन्त्रालयो के समानान्तर था, एक प्रकार स छाया मन्त्री बन जाते थे। दूसरा, समय की बचत करना, क्योकि पहले यदि किसी विधेयक का सम्बन्ध एक से अधिक मन्त्रालयो से होता था तो उस पर अन्य सम्बन्धित समितियो का मत भी प्राप्त किया जाता था, जिसम बहुत समय व्यथ ही व्यय होता था। कुछ लेखको के अनुसार

दूसरी, तीसरी कांग्रेस कहा जाता था। 1933 में हुए बीसवें संशोधन के अनुसार कांग्रेस का सत्र प्रति वर्ष 3 जनवरी से शुरू होता है, जब तक वे कानून द्वारा दूसरी तारीख तय न करें। नियमित अथवा वार्षिक सत्रों के अतिरिक्त राष्ट्रपति कांग्रेस का विशेष सत्र भी आहूत कर सकता है। साधारणतः कांग्रेस का सत्र जुलाई में समाप्त होता है, किन्तु युद्ध या आपात्काल में पूरे वर्ष चल सकता है।

प्रतिनिधि-सदन के अधिकारी—सदन का सबसे महत्त्वपूर्ण अधिकारी इसका अध्यक्ष (speaker) होता है। सदन के अध्यक्ष का चुनाव प्रत्येक नई कांग्रेस के पहले सत्र के आरम्भ में होता है। संविधान में कोई ऐसा उपबन्ध नहीं है, किन्तु प्रथा के अनुसार अध्यक्ष सदन का सदस्य होता है। अध्यक्ष का चुनाव बहुमत दल अपने संसदीय समूह (caucus) में कर लेता है, फिर भी सदन में उसके चुनाव की औपचारिक कानूनी कार्यवाही की जाती है। अध्यक्ष साधारणतः कोई अनुभवी और ज्येष्ठ सदस्य होता है, किन्तु व्यक्तिगत लोकप्रियता भी उसके चुनाव में सहायक होती है। अब यह प्रथा पड़ती जा रही है कि यदि वह दल अगली कांग्रेस में बहुमत प्राप्त करता है तो पूर्वगामी अध्यक्ष को ही नया अध्यक्ष बनाया जाता है। अध्यक्ष को वार्षिक वेतन, अन्य भत्ते व सुविधायें मिलती हैं।

अध्यक्ष के मुख्य कार्य इस प्रकार हैं (1) वह सदन की बैठकों में सभापति रहता है। (2) सदन की कार्यवाही को शान्ति और व्यवस्था के साथ चलाता है। (3) सदन की प्रक्रिया के नियमों का आवश्यकता पड़ने पर निर्वचन करता है। साधारणतया नियमों को लागू करते समय वह निष्पक्ष रहता है, किन्तु उनके निर्वचन में कभी-कभी वह अपने दल को लाभ पहुंचाने का प्रयत्न करता है। (4) सदस्यों को पहचानने अर्थात् बोलने की आज्ञा देने की शक्ति। कोई भी सदस्य तब तक किसी विषय पर भाषण नहीं कर सकता, जब तक कि अध्यक्ष उसे ऐसा करने की आज्ञा न दे। (5) विधेयकों को समितियों के सुपुर्द करना—अध्यक्ष ही विधेयकों को, जो समितियों द्वारा पेश किये जाते हैं, समितियों को उनके द्वारा विचार और कार्यवाही के लिए सुपुर्द करता है। (6) अध्यक्ष को विशेष समितियाँ नियुक्त करने की शक्ति—बहुधा सदन अध्यक्ष को जाँच करने वाली समितियाँ नियुक्त करने का अधिकार देता है। (7) वह सदन का सदस्य होने के रूप में किसी भी विषय पर बोल सकता है और मतदान भी कर सकता है। कभी कभी वह वाद विवाद में भी भाग लेता है। यदि वह किसी विषय पर मतदान कर चुकता है तो फिर उसे निर्णायक मत का अधिकार नहीं रहता।

प्रतिनिधि सदन के अध्यक्ष की ब्रिटिश कामन सभा के अध्यक्ष से तुलना—यह एक सर्वविदित बात है कि ब्रिटिश कॉमन सभा का अध्यक्ष पूर्णरूप से निष्पक्ष होता है। उसकी निष्पक्षता इस सीमा तक मानी जाती है कि आगामी चुनाव में उसका विरोध नहीं किया जाता और यदि विरोधी पक्षों का बहुमत होता है तो भी उसे ही अध्यक्ष बनाया जाता है। इसके विपरीत संयुक्त राज्य के प्रतिनिधि सदन का अध्यक्ष अपने दल से सम्बन्ध विच्छेद नहीं करता वरन् वह तो दल का सदन में महत्त्वपूर्ण नेता होता है। वह अपने कार्य में भी पूर्ण निष्पक्षता का पालन नहीं करता। अवसर पाने पर वह बहुमत दल के पक्ष के समर्थन का प्रयत्न करता है। इसके अतिरिक्त वह वाद-विवाद में भी भाग लेता है, जबकि कॉमन सभा का अध्यक्ष किसी विचारणीय विषय पर अपने विचार कभी भी प्रकट नहीं करता। आग और रे ने लिखा है कि संयुक्त राज्य अमरीका में अध्यक्ष पद का विकास ब्रिटेन से बहुत भिन्न आधार पर हुआ है और वह खुले रूप में दलीय व्यक्ति रहता है। रीड और केनन के समय में तो वह राष्ट्रपति के दूसरे स्थान पर ही दल का नेता होता था। फाइनर के अनुसार जबकि ब्रिटिश कामन सभा का अध्यक्ष केवल नियमों का उल्लेख करता है (अर्थात् उन्हें पूर्ण निष्पक्षता से लागू करता है) प्रतिनिधि सदन का अध्यक्ष उनके निर्वचन में अपनी व्यापक विवेकीय शक्ति के द्वारा उनके निर्माण में भी भाग लेता है। प्रतिनिधि सदन का अध्यक्ष

विधेयको जैसी प्रक्रिया का ही पालन होगा, परन्तु यदि दोना सदनो क बीच मतभेद रह तो नेशनल एसेम्बली उसके अ तिम वाचन मे अपने सदस्यो के पूण बहुमत से उसे स्वीकार करेगी। सीनेट के सम्ब ध म भी आगिक कानून दोनो के द्वारा इसी प्रकार पारित किये जायेग। ऐसे कानूनो को उनकी सावैधानिकता पर सावैधानिक परिषद् द्वारा घोषणा किये जाने के बाद ही लागू किया जायेगा। आगिक कानून वे कानून है जो सविधान के कुछ उपब धो का स्पष्टीकरण करते ह तथा अ य कुछ बातो के सम्ब ध मे सविधान के पूरक है। उनम से अधिकतर अध्यादेशो तथा सरकारी जनरलो म मिलत है। कुछ महत्त्वपूण आगिक कानून इन विषयो के बारे मे है—राष्ट्रपति की अवधि और उसको फिर से चुने जाने के लिए योग्यता, निर्वाचक मण्डल की रचना, नेशनल एसेम्बली के लिए चुनाव और उम्मीदवारा की योग्याएँ, सीनेट के चुनाव, पार्लियामेन्ट की रचना, आर्थिक व सामाजिक परिषद् की रचना, न्यायपालिका की उच्च परिषद्, समुदाय की सीनेट रचना आदि।

8 पश्चिमी जमनी मे विधायी सगठन और प्रक्रिया

पश्चिमी जमनी के लोकप्रिय सदन (Bundestag) मे विधि निर्माण प्रक्रिया मुख्य बाता म 1958 से पूवकालीन फ्रासीसी लोकप्रिय सदन के समान है। ब डस्टेग की कायसूची उसका प्रधान विभिन्न मा यता प्राप्त समूहो के नेताओ के साथ बैठकर बनाता है। विधेयक के तीन वाचन भी फ्रासीसी नमूने पर है। समितिया छोटी है, परन्तु फ्रास मे उनकी सख्या बडी थी। समितियो की कायवाही साधारणतया ब द बैठको म होती है, यद्यपि सगठित हिता को समितिया के सदस्या से सम्पक के काफी अवसर मिलते हैं। विधेयक पर सदन म वाद विवाद के दौरान रिपोर्टियर और रिपोट देन वाली समिति के सभापति का कुछ अधिक महत्त्वपूण भाग रहता है, पर तु उतना नहीं जितना कि कभी फ्रास म था। बोलने वाले सदस्या को प्रधान की सूची म नाम लिखना होता है। म त्री, रिपोर्टियर और ऊपर वाले सदन के सदस्य किसी भी समय बोल सकते है, जब भी वे चाह। ब न्डस्टेग का प्रधान उसकी कायवाही पर सभापतित्व करता है और ऐसे सदस्या को चुप कर सकता है या सदन से बाहर निकाल सकता है, जो कि विषय से हटकर बोले या अव्यवस्था पदा करें।

पश्चिमी जमनी का दूसरा सदन ब डस्रेट (Bundesrat) इस बात म सभी पाश्चात्य राज्यो के असमान है कि इसका सत्र निरन्तर चलता है। इसके सदस्य राज्य सरकारा के प्रतिनिधि, (और बहुधा केबिनेट के मन्त्री) होते है, और उन्ह अपनी राज्य सरकार के अनुदेशा के अनुसार ही मतदान करना होता है। उसमे राज्या के विभिन्न म त्रालयो के तदनुरूप समितियाँ हैं, जो कि दोनो ही स्तरा पर कायपालिका शाखाओ की विधायी कायवाहियो म समन्वय स्थापित करती हैं। प्रत्येक राज्य सरकार का प्रत्येक समिति म एक प्रतिनिधि रहता है। सघीय विधि-निमाण मे बन्डस्रेट की भूमिका दूसरे सदन के सम नही है। दोनो सदनो के बीच मतभेद की दशा मे, एक मध्यस्थ समिति की रचना की जाती है, जिसम प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधि मण्डल का प्रतिनिधि रहता है और लोकप्रिय सदन के सदस्य भी बराबर सख्या मे रहते हैं। उसका काय ऐसा समझौता पूण रूप तैयार करना होता है कि जो दोना सदनो को स्वीकाय हो। अधिकतर महत्त्वपूण विधेयको पर बन्डस्रेट की सहमति आवश्यक है। परन्तु अन्य विषयो पर सप्रतिब ध बहुमत के साथ लोकप्रिय सदन दूसरे सदन के प्रतिषेध के विरुद्ध निणय कर सकता है। पास हो जान पर कानून को सघीय राष्ट्रपति चासलर और उपयुक्त मन्त्री के प्रति हस्ताक्षर के साथ प्रस्थापित होता है।

9 सयुक्त राज्य अमरीका मे विधायी सगठन और प्रक्रिया

काग्रेस के सत्र—जब से काग्रेस की स्थापना हुई है प्रति दो वर्ष के बाद नो

सके। इस प्रकार सीनेट मे वाद विवाद की समाप्ति (closure) के लिए कोई व्यवस्था न थी और सीनेट के सदस्यों को बोलने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। उदाहरण के लिए, अगस्त 1954 म नागरिक अधिकार विधेयक (civil rights bill) पर विचार करन के दौरान म कैरोलिना राज्य का एक सीनेटर उस विधेयक के विरोध म लगातार 24 घण्टे और 19 मिनट तक बोला।

वाक स्वातन्त्र्य का इससे बढकर दुरुपयोग नही हो सकता। इसी कारण भूतपूर्व राष्ट्रपति विल्सन ने लिखा था कि सयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट ही एक ऐसी वैधानिक सस्था है जिसम अल्पमत बहुमत के कार्यों को रोक सकता है। इस दोष को दूर करने के लिए 1917 म एक नियम स्वीकार हुआ। इस नियम के अनुसार कोई भी 16 सदस्य विचाराधीन विषय पर वाद विवाद का अन्त कराने के लिए प्रार्थना कर सकते हैं। यदि ऐसी प्रार्थना को सीनेट के 2/3 मतो स स्वीकार कर लिया जाय तो उसके बाद कोई भी सीनेटर उस विषय तथा उसके शेष सशोधनो पर एक घण्टे से अधिक नही बोल सकता। व्यवहार म इस नियम का पालन करा सकना अधिक उपयोगी सिद्ध नही हुआ है। 1917 से 1918 तक इस प्रकार की 22 बार प्रार्थनायें की गयी, जिनम स केवल चार स्वीकृत हुईं और 1927 के बाद एक बार भी ऐसी स्वीकृति न मिल सकी। परन्तु अब एक अन्य प्रकार से वाद-विवाद की समाप्ति कराई जाती है। यह किसी भी महत्त्वपूर्ण विषय पर सर्वसम्मति की सहमति के समझौते द्वारा होता है जिसके अनुसार पहले ही यह समझौता कर लिया जाता है कि विचाराधीन विषय पर एक नियत समय पर मतदान करा लिया जायगा।

समिति पद्धति—सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान म समितियो का उल्लेख नही है। आरम्भ म समितियो की आवश्यकता बहुत कम थी और सख्या भी कम थी। उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ मे प्रतिनिधि सदन मे केवल 5 स्थायी समितियाँ और सीनेट म एक भी न थी, किन्तु समय बीतने के साथ साथ आवश्यकतानुसार समितियो की सख्या बढती गयी। वर्तमान समिति पद्धति का आधार 1946 का 'विधायिका पुन सगठन कानून' है। इसके पूर्व सदन और सीनेट की स्थायी समितियो की सख्या क्रमश 48 और 33 थी, जो अब 22 और 16 रह गई है। दोनो सदनो मे अधिकतर समितियो के नाम और कार्य प्राय समान है। उदाहरण के लिए दोनो ही सदनो मे इन विषयो से सम्बन्धित समितिया है—कृषि, विनियोग, सशस्त्र सेनायें, बैंक और मुद्रा, नागरिक सेवा, सार्वजनिक निर्माण-कार्य, श्रम, विदेश सम्बन्ध, न्यायपालिका, अन्तरराज्यीय और वैदेशिक वाणिज्य, इत्यादि। काग्रेस के दोनो सदनो म स्थायी समितियो के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की समितियाँ भी हैं। विभिन्न प्रकार की समितियो का सक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है—

स्थायी समितियाँ—इनकी सख्या और प्रमुख समितियो के कार्य क्षेत्र का वर्णन ऊपर दिया जा चुका है। इनका निर्वाचन सदन द्वारा होता है और इनमे दोनो ही दलो के सदस्य सम्मिलित किये जाते है और उनकी सख्या दलो की सख्या के अनुपात मे रहती है। साधारणतया प्रत्येक सीनेटर दो समितियो का सदस्य रहता है और प्रतिनिधि किसी एक समिति का। समितियो के सभापतियो को ज्येष्ठता के नियम (seniority rule) के आधार पर नियुक्त किया जाता है अर्थात् प्रत्येक समिति म बहुसख्यक दल का वह सदस्य सभापति बनता है जिसकी समिति की सदस्यता सबसे अधिक हो। सभापति समितियो की कार्यवाही का सचालन करते है, वाद विवाद का नेतृत्व करते है और सदन म समितियो की रिपोर्ट भी पेश करते हैं। ये कार्य बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

सदन मे प्रस्तुत किये गये प्राय सभी विधेयक उनके विषयो स सम्बन्धित समितियो को सुपुर्द कर दिये जाते है। राष्ट्रपति का सत्र के आरम्भ म भेजा गया 'सघ की स्थिति सम्बन्धी सन्देश' भी खण्डो म विभाजित करके विभिन्न समितियो को विचारार्थ भेज दिया जाता है। प्रथा के अनुसार समितियो को विधेयको के स्वरूप तथा विषय पर सभी प्रकार के निर्णय करने का अधिकार है। उनका सबसे महत्त्वपूर्ण अधिकार तो यह है कि जिन विधेयको को समाप्त करना

कार्यक्रम के निर्धारण आदि मे भी भाग लेता है।[1]

प्रतिनिधि-सदन के अन्य अधिकारी—सदन मे दलो के नेता (Floor leader) भी होते हैं, क्योंकि सयुक्त राज्य अमरीका के सदन मे सदन का नेता और विरोधी पक्ष का नेता होते नही। बहुमत तथा अल्पमत दोनो ही दल अपने अपने नेताओ को दलीय कॉकस या सम्मेलन मे छाँट करते हैं। जिस प्रकार अपने देश मे तथा ब्रिटेन मे दलीय मीटिंग अथवा सगठन होता है, सयुक्त राज्य मे डेमोक्रेटिक दल और रिपब्लिकन दल का क्रमश कॉकस और कान्फ्रेंस (Caucus and Conference) होते हैं। उनका काम अपने सदन की कार्यवाही की देख रेख करना अथवा उस पर नियन्त्रण रखना है। दल का नेता सदस्यो से सम्पर्क रखता है और उन्हे दल की इच्छा के अनुसार मत देने के लिए कहता है और दलीय सचेतको के कार्यों का भी निदेशन करता है। दलीय सचेतको का कार्य सदस्यो से दल के निर्णयों के अनुसार मतदान कराना होता है और यह देखना भी कि सदस्य महत्त्वपूर्ण प्रश्नो पर मतदान के समय उपस्थित भी रहें। सदन मे सम्पूर्ण समिति का सभापति उपाध्यक्ष का कार्य करता है।

सीनेट के अधिकारी—सविधान के अनुसार सयुक्त राज्य का उप राष्ट्रपति सीनेट का सभापति होता है। सभापति के कार्य और अधिकार लगभग वैसे ही हैं जैसे कि सदन के अध्यक्ष के, परन्तु सदन की कार्यवाही मे उसका स्थान प्रतिनिधि सदन के अध्यक्ष के समान महत्त्वपूर्ण नही होता। उसका महत्त्व बहुत सीमा तक उप राष्ट्रपति के व्यक्तित्व और इस बात पर निर्भर करता है कि सीनेट मे उसके दल का बहुमत है या नहीं। सीनेट का उप सभापति भी होता है जिसे एक प्रकार का अस्थायी अध्यक्ष कहते हैं। उसका निर्वाचन सदस्यो द्वारा दलीय आधार पर होता है और उसका कार्य उप राष्ट्रपति की अनुपस्थिति मे सीनेट की बैठको का सभापतित्व करना है।

वाद विवाद सम्बन्धी नियम—प्रतिनिधि सदन मे विचाराधीन विषय पर नियमो के अन्तर्गत प्रत्येक सदस्य एक घण्टे तक बोल सकता है। परन्तु सभी को बोलने के लिए इतना समय नही मिल पाता। जब किसी विषय पर विचार अथवा वाद विवाद जारी रहता है, किसी भी सदस्य को उसे समाप्त कराने के लिए इस उद्देश्य से प्रस्ताव पेश करने (अर्थात् पूर्व प्रश्न पर मतदान करा लिया जाय) का अधिकार है। जब ऐसा प्रस्ताव पेश हो जाता है तो उस पर तुरन्त ही मतदान कराया जाता है और यदि इस प्रस्ताव के पक्ष में बहुमत होता है तो वाद विवाद का अन्त हो जाता है और विधेयक अथवा विचाराधीन विषय पर मतदान कराया जाता है। इसके अतिरिक्त प्राय सभी महत्त्वपूर्ण विषयो पर सम्पूर्ण सदन की समिति मे विचार होता है। इसमे वाद विवाद दो भागो मे होता है—पहले सम्पूर्ण विधेयक पर साधारण वाद विवाद होता है और बाद मे उसके प्रत्येक सैक्शन पर वाद विवाद होता है तथा सशोधन पर विचार भी। साधारण वाद विवाद मे साधारणतया दो सदस्य एक पक्ष मे और दूसरा विपक्ष मे भाग लेते हैं और विस्तृत वाद विवाद मे सदस्यो को ५-५ मिनट के लिए प्रस्तावित सशोधन पर बोलने का अवसर मिलता है।

सीनेट मे किसी भी विचाराधीन विषय पर वाद विवाद को समाप्त करने के लिए प्रस्ताव पेश करने का नियम नही है। इसी कारण सीनेट मे फिलिबस्टरिंग (Filibusturing) की प्रथा जारी है जिसका अर्थ है कि अल्प मत वाले सदस्य किसी विधेयक या प्रस्ताव के विरोध मे चाहे जितने समय तक बोले जा सकते हैं, जिससे कि बहुमत विचाराधीन विषय को [illegible]

[1] Whereas the Speaker of the House of Commons [illegible] House the Speaker of the House of Representatives has often [illegible] by wide discretion in interpretation, in [illegible] of Commons [illegible] proceedings of the House —Finer H., Theory and Practice of Modern [illegible]

हो। ये समितियाँ स्थायी तथा प्रवर दोना ही प्रकार की हो सकती हैं। स्थायी समितियाँ काग्रस के कानून के अनुसार बनती हैं और प्रवर समितियाँ दोना सदना के प्रस्ताव पर। ऐसी समितियों मे उल्लेखनीय य हैं—मुद्रण, काग्रेस क पुस्तकालय, अणु शक्ति और आ तरिक आय कर विषयो स सम्ब धित समितियाँ।

सम्पूण सदन समिति—इस समिति का उद्देश्य महत्वपूण कार्यों को शीघ्र कराना है। यह समिति यूनियन क्लेण्डर पर आय सभी विधेयको पर सघ की स्थिति पर सम्पूण सदन के रूप मे विचार करती है। निजी विधेयक के क्लण्डर पर आये विधयको पर भी सम्पूण सदन की समिति म विचार होता है। साधारणतया किसी सदन के प्रस्ताव पर सम्पूण सदन समिति का रूप धारण कर लेता है। इसका सभापति अध्यक्ष के स्थान पर कोई अ य सदस्य होता है, जिस अध्यक्ष नियुक्त करता है। इस समिति का मुख्य लाभ यह है कि इसमे कोई सचालन सम्ब धी नियमो का कठोरता से पालन नही होता, अतएव काय शीघ्रता स हो जाता है। इसकी बठक के लिए गणपूर्ति (quorum) केवल 100 है जबकि सदन की बठको म कम से कम बहुमत उपस्थित होना आवश्यक है। इसमे प्रत्येक सदस्य को बोलने की स्वत त्रता होती है, पर तु केवल पाँच-पाँच मिनट के लिए ही। जिन विधेयको पर यह समिति विचार तथा निणय करती है, वे पास होन से पूव सदन म आते है। यह समिति केवल प्रतिनिधि सदन ही नियुक्त करता है।

सम्मेलन समितियाँ—जब कभी दोनो सदनो के बीच किसी विधेयक पर मतभेद उत्पन्न हो जाता है, तो उसे दूर करने के लिए दोना सदन इस प्रकार की समितियाँ नियुक्त करते हैं। ये समितियाँ जिनमे दोनो ही सदनो के सदस्य होते हैं, मतभेद को दूर करने और सहमति अथवा समझौते के आधार पर विधेयक को स्वीकार करती है। ये समितियाँ भी एक प्रकार की सयुक्त समितियाँ होती हैं, किन्तु स्थायी सम्मलन समितियो के सदस्यो को सदन का अध्यक्ष और उप-राष्ट्रपति (जो सीनेट का सभापति होता है) नियुक्त करते हैं। यदि सम्मलन समिति सहमति के आधार पर विधयक तयार करने म सफल हो जाती है, तो इसकी रिपोट दोना सदनो म रखी जाती है। यदि दोनो सदन उस स्वीकार कर लेते हैं तो विधेयक कानून बन जाता है, अ यथा या तो विधेयक का अ त हो जाता है अथवा उस पर फिर से सम्मेलन समिति बैठाई जाती है।

सदन की स्टीयरिंग समिति—दोनो ही सदन इस प्रकार की समितियाँ नियुक्त करते हैं। ये समितियाँ सदन व सीनेट मे कायक्रम (order of business) निर्धारित करती हैं। ये ही समितियाँ दल की नीति और कायवाही पर साधारण निय त्रण रखती हैं जिस कारण इ ह नीति समितियाँ भी कहा जाता है। इस समिति का सभापति बहुमत दल के कॉकस द्वारा नियुक्त होता है। इस समिति के दो काय मुख्य हैं—(1) सदन के क्लेण्डरो पर बहुत बडी सख्या म आये विधेयको मे से उ हे छाँटना जि हे बहुसख्यक दल शीघ्र ही पास कराना चाहता है। (2) ऐसे विधेयको पर विचार किये जाने के माग म आने वाली रुकावटो को दूर करना।

समिति पद्धति पर विचार—काग्रेस की विधि निर्माण प्रक्रिया मे समितियो का अ य देशो की तुलना म कही अधिक महत्त्व है। इसी कारण जैसा पहले बताया गया है, स्थायी समितियाँ एक प्रकार की लघु विधायिकाएँ है। काग्रेस की समितियो द्वारा जिन विधेयको की सिफारिश की जाती है उसम से बहुत बडी सख्या मे कानून बन जाते हैं और कानूनो का सार समितियो मे ही अधिकाशत निर्धारित होता है। परन्तु सयुक्त राज्य अमरीका की समिति पद्धति मे कुछ दोष उल्लेखनीय है, जिनका अति सक्षिप्त विवेचन यहा दिया जाता है—1948 से पूव स्थायी समितिया की सख्या बहुत बडी थी, जो अब घटा दी गयी है, कि तु इन समितियो का आकार अभी तक पहले की भाति छोटा है। सीनेट व सदन की अधिकतर समितियो के सदस्यो की सख्या क्रमश 15 और 25 है। यद्यपि इन समितियो के सदस्यो म दोना ही प्रमुख दलो के प्रतिनिधि रहते है,

चाहे, विचार करके अथवा जिना विचार किये ही उन पर सदन म रिपोट नही देती। इस प्रकार *प्रतिवर्ष हजारो विधेयक समितियो म ही समाप्त हो जाते है। समितियो मे सभी प्रकार के* महत्त्वपूण परिवतन व सशाधन भी पेश किये जाते हैं। इन्ही कारणो से कुछ लेखको ने सयुक्त राज्य की समितियो को लघु विधायिकाए कहा है।[1] कुछ लेखको ने इन्हे सदन की आँखें, कान और हाथ बताया है। इस कथन से इन समितियो के महत्त्व का पता चलता है। ये समितियाँ सभी विधेयको की पूण रूप से परीक्षा करती है, व्यक्तिया की गवाहिया लेती है और खूब छानबीन के बाद उनके ऊपर सदन म रिपोट पेश करती है। सक्षेप मे, काग्रस की समितिया उसके वास्तविक काय भार को सम्भालने वाली निकाय है। उनके नाम, सत्र और निणय पर ही विधायी कायक्रम की पूण दिशा और सार मुख्यत निभर करते है। यद्यपि वे राष्ट्रीय कानूनो के प्रारम्भिक स्रोत नही है, किन्तु वे अवश्य ही वह माग हैं जिनके द्वारा विधायी प्रस्ताव कानून बनाने से पूव होकर जाते है।

नियम समिति—यह सदन की अत्य त महत्त्वपूर्ण समिति है। प्रत्येक काग्रेस मे 20–30 हजार विधेयक पेश हाते हैं। उनम से बहुत बडी सख्या की काट छाट तो विभिन्न समितिया ही कर देती है, परन्तु फिर भी महत्त्वपूण विधेयको पर विचार करने के लिए सदन को काफी समय नही मिल पाता। इस उद्देश्य की प्राप्ति मे नियम समिति द्वारा बनाय गये विशेष नियम अथवा आदेश बहुत सहायक होते है। अब इसके सदस्यो की सख्या बारह है और इसके सदस्य दोनो प्रमुख दलो से लिए जाते है। अब अध्यक्ष इसका सभापति नही होता, किन्तु इसके सभापति का स्थान अब भी बडा महत्त्वपूण है, महत्त्व म वह अध्यक्ष और बहुमत दल के नेता के बाद ही आता है। नियम समिति के मुख्य अधिकार इस समय इस प्रकार है—(1) प्रत्येक नयी काग्रेस के आरम्भ मे प्रक्रिया सम्ब धी नये नियमो और उन पर आये सशोधना पर विचार करना। (2) बाद विवाद समाप्त करने और पेश किये जाने वाले विधेयको तथा प्रस्तावो के सम्बन्ध म प्रक्रिया विन्यास के लिए नियम बनाना। (3) जब चाहे कोई विधेयक तैयार करके, जो कि उससे भिन्न हो सकता है, सदन के विचाराथ पश कर सकती है, और (4) विशेष अवसरो पर विशेष नियम बना सकती है अथवा ऐसे निश्चय कर सकती है—विचाराधीन विधेयको म से कौन सा पहले या बाद म प्रस्तुत किया जाये और कितने तथा किस प्रकार के सशोधन उस पर रखे जा सकते हैं। इसी कारण *सदन का अल्पसख्यक दल सदा ही इसके द्वारा बनाये गये प्रतिबन्ध नियमो (gag rules)* के विरुद्ध आवाज उठाता रहता है।

प्रवर समितिया—इनकी नियुक्ति समय समय पर विशेप उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए की जाती है। ये समितिया एक प्रकार से अस्थायी होती है और इनका काम की समाप्ति पर अन्त हो जाता है। प्रतिनिधि सदन की प्रवर समितिया के सदस्या की नियुक्ति अध्यक्ष द्वारा की जाती है और इनकी रचना सदन के साधारण प्रस्ताव पर की जाती है। साधारणतया किसी प्रवर समिति को विशेष समस्या के अध्ययन अथवा उसके विषय म छानबीन करने के लिए निश्चित समय के लिए नियुक्त किया जाता है। ऐसी समितियो को काग्रेस के स्थगन के बाद भी अपना काय जारी रखने का अधिकार दिया जाता है। इन्ही समितिया को विशेष समितियाँ भी कहा जाता है। दोनो ही सदन इस प्रकार की समितियो का प्रयोग करते है।

सयुक्त समितियाँ—कभी कभी काग्रेस के दोना सदन सयुक्त समितियाँ भी नियुक्त कर देत हैं। इनका मुख्य रूप मे ऐसे विषयो से सम्ब ध होता है जिन पर सदना का समवर्ती अधिकार क्षेत्र

[1] The committees are in fact the real legislative bodies of the House of Representatives They have been called the little legislatures by the critic They have full power over bills committed to them except that they cannot change the title or subject but amendment of a project may essentially change it —*Ibid* p 497

वैदेशिक नीति के किसी पहलू क सम्ब ध म अपने मत की अभिव्यक्ति अथवा सदन सम्ब-धी नियमा म परिवतन एस प्रस्ताव द्वारा कर सकता है। किसी भी विधेयक के सम्ब-ध म प्रक्रिया के मुख्य चरणो (main stages) और सम्बधित बातो का सक्षिप्त वणन निम्न प्रकार है

विधेयक का प्रारूप तयार करना और उसे पेश करना—सयुक्त राज्य अमरीका म सरकारी विधेयक तो नही होते, किन्तु अधिकतर महत्त्वपूण विधेयका को कायपालिका शाखा म तयार किया जाता है, बहुत स विधेयक प्रभावशाली समूहो द्वारा तयार किय जात हैं और अधिकतर विधेयको की उत्पत्ति मार्गोपाय समिति म होती हैं। महत्त्वपूण विधेयको की भाषा और उनक प्रारूप तैयार करन मे सदस्य और विशेषज्ञो का हाथ रहता है। कोई भी एक या अधिक सदस्य किसी विधेयक अथवा प्रस्ताव को प्रतिनिधि सदन अथवा सीनट म पश कर सकत हैं। विधेयक पश करने के लिए पश करन वालो को विधेयक सदन के क्लर्क के डेस्क तक भेजना होता है। विधेयका को जिस सदन म वे आरम्भ होते हैं, उसके अनुसार 'एच० आर०' अथवा 'एस' से अकित कर दिया जाता है। इस प्रकार की कोई सीमा न लगी है कि एक सदस्य कितन विधयक पश कर सकता है। पश किये जाने वाल विधेयको की सख्या बहुत बडी होती है और उनम स दसवां या बारहवां भाग कठिनाई से कानून का रूप पाता है। शेष विधेयको का काग्रेस के अन्त के साथ ही अन्त हो जाता है, अर्थात् नई काग्रेस म नये सिरे स विधेयक पेश किये जाते है।

समिति मे विचार—प्रत्येक विधेयक को पश होने के बाद ही सदन का अध्यक्ष सम्बधित समिति (appropriate committee) के सुपुर्द कर दता है। विधेयक के सम्बन्ध म समिति विचार करती है और इनम स किसी एक निर्णय पर पहुँचती है—(अ) विधेयक के पक्ष मे सदन को रिपोट दे उसके पारित करने के लिए सिफारिश करे, और सदन म उसक ऊपर विचार के दौरान उसका समथन करे, (आ) उसके विरुद्ध रिपोट दे और उसका सदन म भी विरोध कर, यदि अन्य सदस्य उसे पारित कराने का प्रयत्न करें, या (इ) उस पर कोई कायवाही न करे और विधेयक को समिति के फाइलो मे ही समाप्त हो जाने दे। जब किसी विधेयक पर समिति विचार कर लेती है और अपनी रिपोट तैयार कर लेती है तो विधेयक उसी सदन म विचार के लिए वापस भेजा जाता है, जिसम वह आरम्भ हुआ हो। परन्तु ऐसा प्रत्येक विधेयक सदन मे विचार हेतु पहुचने से पूव तीन मुख्य सूचियो (Calenders) म से किसी एक म सम्मिलित किया जाता है। आय कर, धन या सम्पत्ति के विनियोग से प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप म सम्बन्धित विधेयक सघ कलेण्डर' म रखे जाते है। अन्य सभी सावजनिक विधेयक, जिनका स्वरूप वित्तीय नही होता, सदन कलेण्डर' म सम्मिलित किये जाते है और सभी निजी विधेयक निजी कलण्डर' (Private calender) म सम्मिलित किय जात हैं। सघ व सदन कलेण्डरो से ऐसे विधेयको को, जिनके बारे मे प्रवाद न हो सहमति कलेण्डर' म स्थानान्तरित किया जा सकता है। एस विधेयक जिन्हे समितियो स वापस लिया गया हो सदन के सामने 'डिस्चाज कलेण्डर' पर रखे जाते है। प्रतिनिधि सदन के एक नियम क अनुसार विधेयको का सदन म विचार के लिए उसी क्रम म लिया जाता है जो क्रम उनका कलेण्डरो मे होता है, किन्तु अधिक महत्त्वपूण विधयको के सम्ब ध म बहुधा अपवाद कर दिया जाता है।

सदन मे विधेयकों पर विचार—जब विधेयक सदन के सामने आता है तो उस पर वाद-विवाद होता है। सदन के नियमो के अनुसार प्रत्येक विधेयक के तीन वाचन होते है। पहले 'वाचन तो तभी पूण हो जाता है जब विधेयक पेश होने के बाद उनका शीर्षक सदन के रिकार्ड और जरनल छप जाता है। दूसरा वाचन, जो वास्तव म पूण होता है, तब किया जाता है जब विधेयक समिति से सदन के सामने आता है या उस पर सम्पूण सदन की समिति म विचार किया जाता है। दूसर वाचन के दौरान मे पहल साधारण वाद विवाद होता है और जब विधेयक के खण्डो

फिर भी इनके वारे म यह नही कहा जा सकता कि इनमे सीनेट व सदन के सभी वर्गा व हितो का प्रतिनिधित्व रहता है। राष्ट्र का उचित प्रतिनिधित्व करने के लिए ये बहुत ही छोटी है।

इन समितियो का दूसरा दोप इनके सभापतियो की नियुक्ति का ढग—ज्येष्ठता का नियम है। उसम योग्यता पर ध्यान नही दिया जाता, जिसके कारण परिश्रमी और योग्य व्यक्तियो को अपने काय म उत्साह नही रहता। तीसरे, यद्यपि इन समितिया को विशेपज्ञा व सहायका की सुविधाएँ प्राप्त हैं, किन्तु ऐसी सुविधाएँ अपर्याप्त है। चौथे, यद्यपि समितियो का प्रयोग काय को शीघ्रता से सचालित करना है, कि तु वहुत सी समितिया के कारण काग्रेस के काय मे धीमापन आता है और दर लगती है अन्त मे, कुछ आलोचको के अनुसार इनकी शक्तिया बहुत विस्तृत है। समितियो का अन्तिम दोप यह है कि उनकी कुछ विशेपताएँ है जिनके कारण निणय करने मे देरी व कठिनाई होती है। एक तो वहाँ यह प्रथा है कि समितिया अपने काय उप समितियो को सौंप देती है। इससे भी बढकर महत्त्वपूण तथ्य यह है कि उनकी रचना का आधार दोनो सदना मे उनका दलगत सन्तुलन है।[1] 1949 म सदन ने नियम समिति की शक्तियो को कम कर दिया और यह व्यवस्था की कि यदि समिति किसी विधेयक पर 21 दिन तक कोई कार्यवाही न कर तो समिति का सभापति उस विधेयक को बिना किसी विशेष नियम के निश्चित तिथि को सदन मे प्रस्तुत कर सकता है। यद्यपि नियम समिति की उस आधार पर बडी आलोचना की गयी है और वह उदारवादी विधेयको के माग म बाधा डालती है, किन्तु यह कुछ अवाछनीय विधेयको को सदन मे अवश्य ही जाने से रोकती है। 1950 मे समिति की शक्तियो को फिर से प्रदान करने की चेष्टा की गयी, परन्तु उसम सफलता नही मिली।

विधि निर्माण और वित्तीय प्रक्रिया—काग्रेस म प्रस्तुत विधेयक दो प्रकार के होते है—सावजनिक (public) और निजी (private)। सावजनिक विधेयको और सकल्पो का सम्ब ध सामान्य विषयो अथवा सवसाधारण जनता से होता है। इसके विपरीत निजी विधेयको का रूप विशेष विधि-निर्माण का होता है। बहुत से निजी विधेयको को इस उद्देश्य से पेश किया जाता है कि जिन व्यक्तियो को सरकारी काय से हानि पहुँची है, उन्हे उसके लिए प्रतिकर की व्यवस्था की जा सके, जबकि प्रचलित कानूनो के अन्तगत उपचार के लिए आवश्यक व्यवस्था न हो। निजी विधेयको की कानून बनाने की सम्भावना प्राय कम होती है, यदि उनके पक्ष म सभी की सहमति न हो।

काग्रेस के दोनो सदनो मे सम्पूण विधि निर्माण के चार रूप अथवा प्रकार है, जिनका सक्षिप्त वणन अग्रलिखित है (1) विधेयक (Bill)—इनका प्रयोग अधिकाश विधि निर्माण के लिए किया जाता है, चाहे वे सावजनिक हो या निजी। (2) सयुक्त सकल्प (Joint resolution)—इनके कानून बनन के लिए, विधेयको की तरह, राष्ट्रपति के हस्ताक्षर आवश्यक है। विधेयको और सयुक्त प्रस्तावा म कोई महत्त्वपूण अ तर नही है, विधेयक स्थायी होते हैं और सयुक्त प्रस्ताव अस्थायी। (3) समवर्ती सकल्प (Concurrent resolution)—इनका स्वरूप साधारणतया विधायी नही होता, परन्तु इनका सम्बन्ध केवल काग्रेस से होता है या य मता प्रयोजनो अथवा सिद्धान्तो की अभिव्यक्ति करते है। इसका एक बहुत अच्छा उदाहरण ऐसा समवर्ती प्रस्ताव होगा कि काग्रेस के मतानुसार साम्यवादी चीन को सयुक्त राष्ट्र सघ का सदस्य न बनाया जाय। (4) साधारण सकल्प (Simple resolutions)—इसका प्रभाव बहुत ही सीमित होता है, क्योंकि इसका सम्ब ध काग्रेस के केवल एक ही सदन से होता है। कोई भी सदन

[1] Still more important is the fact that the committees themselves in their party composition reflect more or less the balance of parties within their respective houses —Beloff M *The American Federal Government* pp 148

नहीं करते । (4) प्रत्येक कांग्रेस में पेश होने वाले विधेयकों की संख्या बहुत बड़ी (12–14) हजार तक होती है, किन्तु पास होने वाले कानूनों की संख्या लगभग 1,000 होती है । (5) कार्यपालिका के सदस्य और अधिकारी कांग्रेस द्वारा नियुक्त स्थायी तथा अस्थायी समितियों के सामने गवाही देते हैं और समितियाँ प्रशासन सम्बन्धी सभी सूचना प्राप्त कर सकती हैं, किन्तु सम्पूर्ण सदन में कार्यपालिका से प्रश्न नहीं पूछे जाते हैं, क्योंकि कार्यपालिका विधायिका से अलग है ।

9 स्विट्जरलैण्ड में विधायी संगठन और प्रक्रिया

सदनों का संगठन—दोनों ही सदन अपने सभापति और उप-सभापति चुनते हैं । सभापतियों को संयुक्त राज्य अमरीका के प्रतिनिधि सदन के अध्यक्ष (Speaker) की तरह कोई विशेष अधिकार अथवा शक्तियाँ प्राप्त नहीं हैं, वे सदन की बैठकों का सभापतित्व करते हैं और आवश्यकता पड़ने पर निर्णायक मत देते हैं, फिर भी उनका पद सम्मानित है । साधारण नियम यह है कि सभापति विभिन्न दलों व कैण्टनों से समय समय पर क्रमानुसार चुने जाते हैं । धारा 82 के अनुसार कौंसिल आफ स्टेट के सभापति और उप-सभापति का चुनाव सदस्यों में से प्रत्येक सत्र के लिए होता है, परन्तु यह अभिसमय पड़ गया है कि वे एक वर्ष तक अपने पदों पर रहें । नेशनल कौंसिल के सभापति और उप-सभापति के लिए व्यवस्था इस प्रकार है—कोई सभापति अगले वर्ष सभापति अथवा उप-सभापति नहीं चुना जा सकता । संविधान के अनुसार तो इस सदन के सभापति और उप-सभापति का चुनाव भी प्रत्येक सत्र के लिए होना चाहिए, परन्तु अभिसमय के अनुसार उनका चुनाव भी एक वर्ष की अवधि के लिए होता है ।

सत्र आदि—स्विट्जरलैण्ड की फेडरल एसेम्बली प्रतिवर्ष, नियमों के अनुसार नियत दिन, साधारण सत्र के लिए एकत्रित होती है । नेशनल कौंसिल के ¼ सदस्यों अथवा 5 कैण्टनों की प्रार्थना पर फेडरल कौंसिल उसका असाधारण सत्र बुला सकती है, परन्तु ऐसा सत्र बहुत ही कम होता है । दोनों सदनों का सत्रावसान और विघटन उनके समवर्ती प्रस्तावों से होता है न कि कार्यपालिका के आदेश से, जैसा कि भारत और ब्रिटेन में होता है । दोनों सदनों में गणपूर्ति के लिए बहुसंख्या की उपस्थिति आवश्यक है और निर्णय मतदान में भाग लेने वाले सदस्यों के बहुमत से होते हैं । संघीय एसेम्बली के प्रति वर्ष साधारणतया चार सत्र होते हैं और एसेम्बली कुल मिला कर वर्ष में 10–12 सप्ताह कार्य करती है । सदस्यों को विभिन्न भाषाओं में बोलने का अधिकार है, परन्तु सरकारी आलेख केवल तीनों राज भाषाओं (जर्मन, फ्रेंच और इटलियन) में ही प्रकाशित होते हैं, क्योंकि रोमान्स चौथी राष्ट्रीय भाषा है, किन्तु राज भाषा नहीं है । सदस्य अपने अपने स्थान से खड़े होकर बोलते हैं । सदनों में सदस्यगण दलीय आधार पर अथवा सरकारी और विरोधी पक्ष में नहीं बटते, वे निर्वाचन जिलों अथवा कैण्टनों के अनुसार बटते हैं । सदस्यों को प्रश्न पूछने का अधिकार है, किन्तु फेडरल एसेम्बली में फ्रांस की तरह प्रश्नों से उत्पन्न वाद विवाद के आधार पर मन्त्रिमण्डल में विश्वास और अविश्वास का प्रस्ताव नहीं उठता ।

दोनों सदनों के बीच सम्बन्ध—फेडरल एसेम्बली के दोनों सदनों की शक्तियाँ पूर्णतया बराबर हैं । अन्तर केवल यह है कि जब दोनों सदनों की संयुक्त बैठक होती है, तो वे बड़े सदन के भवन में एकत्रित होते हैं और नेशनल कौंसिल का सभापति संयुक्त बैठक का सभापतित्व करता है । कोई भी कानून अथवा प्रस्ताव तब तक पास नहीं होता जब तक कि दोनों सदन उसे स्वीकार न कर लें । दोनों सदनों में से किसी एक को दूसरे पर किसी भी बात में प्राथमिकता प्राप्त नहीं है, बजट सम्बन्धी मामलों में भी दोनों की शक्तियाँ पूर्णतः सम हैं । प्रत्येक सत्र के आरम्भ में दोनों सदनों के सभापति सहमति के आधार पर कार्य विभाजन कर लेते हैं । उदाहरण के लिए, प्रथानुसार जब साधारण बजट पर नेशनल कौंसिल में वाद विवाद होता है तो कौंसिल ऑफ स्टेट में संघीय

(Sections) पर एक एक करके विचार होता है तभी उनसे सम्बर्धित सशोधनो पर भी विचार किया जाता है । पूण विधेयक पर विचार और वाद विवाद हो चुकने के वाद अध्यक्ष कहता है—'प्रश्न तीसरे वाचन के लिए प्रस्तुत है ।' यदि यह प्रस्ताव स्वीकृत हो जाता है तो विधेयक पर तीसरा वाचन आरम्भ हो जाता है और सदन उसमे लग जाता है । तीसरे वाचन अथवा विचार के वाद अध्यक्ष कहता है—'प्रश्न, विधेयक को अतिम रूप से पारित कराने का है' जब विधेयक सदन म पास हो जाता है तो उसे सीनेट म विचार के लिए भेज दिया जाता है ।

सदन मे मतदान की पद्धतिया—सदन मे मतदान के लिए चार पद्धतियो का प्रयोग किया जाता है (क) साधारणतया सबसे पहले आवाज द्वारा मत लिया जाता है । यदि यह अनिर्णीत हो अथवा गणपूर्ति का 1/5 ऐसी प्राथना करे तो दूसरी पद्धति का प्रयोग किया जा सकता है । (ख) मत विभाजन (division) अर्थात् सदस्य खडे हो जाते है और अध्यक्ष उनकी गिनती करता है । (ग) गणको (Tellers) द्वारा मता की गिनती का अथ यह है कि सदस्य खडे होकर किसी एक नियत स्थान से गणको के सामने स क्रमवार निकलते है । (घ) 'हा' या 'ना' द्वारा अर्थात् सदन का क्लक सदस्या के नाम पुकारता है और ये एक एक करके 'हा' या 'ना' कहते है ।

दूसरे सदन मे विधेयक पर विचार—उसी काग्रेस म, शीघ्र ही अथवा कुछ समय वाद वही या न्यूनाधिक अश मे वैसा ही विधेयक दूसरे सदन के सामने आता है और उसके सम्बन्ध मे प्राय वसी ही प्रक्रिया का पालन होता है जसी कि ऊपर वर्णित है । सीनेट म विधेयक पेश करने की कायवाही इस घापणा के साथ पूरी हो जाती है कि अमुक सीनेटर विधेयक को पेश करता है । विधेयक का शीपक पढकर सुना दिया जाता है और इस प्रकार विधेयक का प्रथम वाचन पूण हो जाता है । इसके उपरान्त विधेयक पर समिति म विचार होता है और समिति की रिपोट पक्ष मे होने पर विधेयक को सीनेट मे कलेण्डर म सम्मिलित कर लिया जाता है । इसके वाद विधेयक पर सीनेट म विचार होता है ।

सम्मेलन समिति—यदि एक ही सदन पर दोना सदनो द्वारा पारित किये गये विधेयको के रूप विस्तार की बातो म एक दूसरे से भिन्न हो, तो उनम मतभेद की बातो पर विचार करने के लिए दोनो सदनो के अध्यक्ष सम्मेलन समिति मे भाग लेने वाले सदस्यो को नियुक्त कर देते है और ये प्रतिनिधि मतभेद दूर करने अथवा समझौते का प्रयत्न करते है । जब समझौता हो जाता है और सहमति के आधार पर तैयार किया गया विधेयक दोनो सदना म एक ही रूप मे पास हो जाता है तो उसे राष्ट्रपति की स्वीकृति अथवा उसके हस्ताक्षर के लिए भेजा जाता है । राष्ट्रपति के हस्ताक्षर होने पर विधेयक कानून वन जाता है । यदि राष्ट्रपति चाहे तो उसको अपन सुझावो सहित वापस लौटा सकता है । यदि काग्रेस उस विधेयक को दूसरी बार $\frac{2}{3}$ के वहुमत से पारित कर देती है तो वह कानून वन जाता है । जो विधेयक काग्रेस के सत्र के समाप्त होने के दस दिन के भीतर राष्ट्रपति के पास जाते है, राष्ट्रपति उन पर कोई कार्यवाही न करके उनका अन्त कर सकता है । सदन और सीनेट के कलण्डरो पर आये हुए विधेयको को दूसरे वाचन के लिए सदन की नियम समिति (अथवा विनियोग या मार्गोपाय समिति) या सीनेट के वहुसख्यक नेता द्वारा सीनेट समितिया की मन्त्रणा स छोडा जाता है ।

निष्कर्ष—काग्रेस म विधायी तथा वित्तीय प्रक्रिया के सम्बन्ध मे ये बातें ध्यान न देने योग्य हैं—(1) सयुक्त राज्य अमरीका की विधि निर्माण प्रक्रिया म समितिया का महत्त्व अन्य देशो की तुलना म वहुत ही विस्तृत और वास्तविक है । समितिया एक प्रकार की लघु विधायिकायें वताई गयी है । (2) काग्रेस की कायवाही म केबिनट के सदस्य भाग नही ले सकते । अतएव सदनो म प्रभावी नतृत्व का अभाव है । (3) दोनो सदनो म दल है, किन्तु उनका सगठन ब्रिटेन जसा सुदृढ़ और सदस्यो के ऊपर अनुशासन कडा नही है । सदनो म दल, सरकारी पक्ष अथवा विरोधी पक्ष की भाति काय

पहल की शक्ति नहीं जहाँ निहित हो, कार्यपालिका को भी प्रस्ताव में विधेयकों के प्रारूप तैयार करने और उन्हें फेडरल एसेम्बली में पेश करने का विशेषाधिकार या एकाधिकार प्राप्त है।

समितियों का प्रयोग—दोनों ही सदनों में कार्यक्रम के अधिकतर प्रश्नों को पहले समितियों के सुपुर्द कर दिया जाता है। समितियों में सभी दलों का प्रतिनिधित्व रहता है। जब ये समितियाँ एकमत निर्णय पर पहुँचती हैं तो वे एक रिपोर्टर चुनती हैं, जो उनके दृष्टिकोण को सम्पूर्ण सदन के सामने रखता है। महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के सम्बन्ध में दो रिपोर्टर नियुक्त किये जाते हैं। उनमें से एक जर्मन और दूसरा फ्रांसीसी भाषा बोलने वाला होता है। जब कोई मामला महत्त्वपूर्ण होने के साथ साथ विवादमय भी होता है, तो समितियाँ बहुमत और अल्पमत रिपोर्टें देती हैं, जिनके लिए अलग अलग रिपोर्टर होते हैं। चूँकि कौंसिल आफ स्टेट में सदस्यों की संख्या बहुत कम है, प्रत्येक सदस्य के पास दूसरे सदन के सदस्य की तुलना में अधिक सीमित कार्य होता है। वित्त समितियों के विषय में पहले ही लिखा जा चुका है।

दोनों सदनों में वाद विवाद के समय पूर्ण व्यवस्था कायम रहती है। सदस्यों का व्यवहार बड़ा शिष्ट और एक दूसरे के प्रति सम्मानपूर्ण होता है। दोनों सदन शान्त वातावरण में कुशलता पूर्वक कार्य करते हैं। मुनरो और जयस्ट के अनुसार फेडरल एसेम्बली में प्रक्रिया की चार विशेषताएँ ये हैं—(1) दोनों सदनों में अधिकतर विधेयक एक साथ पेश होते हैं। (2) विधेयकों के प्रारूप तैयार करने और पेश करने में प्रधान प्रभाव फेडरल कौंसिल का रहता है। (3) दोनों सदन अपना बहुत-सा कार्य समितियों द्वारा करते हैं। (4) दोनों सदनों में विधायी मतभेद बहुत कम होते हैं।

10 सोवियत संघ में विधायी संगठन और प्रक्रिया

सर्वोच्च सोवियत की प्रक्रिया-सम्बन्धी बातें—सर्वोच्च सोवियत की कार्य सूची में कानून बनाने के प्रस्ताव बहुत कम होते हैं, उसकी कार्य सूची में अधिकतर विषय सरकारी कार्यों की रिपोर्टें सुनने से सम्बन्धित होते हैं। साधारणतया रिपोर्ट को कोई मन्त्री प्रस्तुत करता है, उसके बाद कोई सदस्य खड़ा होकर उसके कुछ पहलुओं की प्रशंसा करता है और प्रस्ताव पेश करता है कि उसे स्वीकार कर लिया जाय। यह प्रस्ताव साधारणतया सर्वसम्मति से स्वीकृत हो जाता है। सर्वोच्च सोवियत इतने कम कानून पास करती है कि इसका विधि निर्माण सम्बन्धी कार्य अत्यन्त महत्त्वहीन होता है। उदाहरणार्थ, वर्तमान सर्वोच्च सोवियत ने 1958 में अपने प्रथम सत्र में केवल पाँच कानून पास किये। सर्वोच्च सोवियत मन्त्रि-परिषद् व प्रेसीडियम द्वारा की गई आज्ञप्तियों पर औपचारिक स्वीकृति प्रदान करती है। विधेयकों के प्रस्ताव पेश करने का अधिकार दोनों सदनों, उनकी स्थायी समितियों, सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों, मन्त्रि परिषद् के सदस्यों और सभी संघीय गणराज्यों को है। कानूनी प्रस्तावों पर दोनों सदनों में थोड़ा सा वाद विवाद होता है और उसके बाद उन पर मतदान कराया जाता है। मतदान पहले प्रत्येक धारा पर होता है और अन्त में सम्पूर्ण कानून पर। साधारण वाद विवाद के दौरान 50 सदस्यों के प्रत्येक समूह को एक रिपोर्टर चुनने का अधिकार है, जो वाद विवाद में भाग लेता है। इन रिपोर्टरों को आरम्भ में एक एक घण्टे तक भाषण देने और वाद विवाद के बाद आधे आधे घण्टे तक सारांश देने के लिए समय मिलता है। कुछ ज्येष्ठ सदस्यों की एक समिति कार्य सूची तैयार कराती है। प्रश्नों की संख्या बहुत कम होती है और उनका उद्देश्य केवल साधारण सूचना पाना होता है। यद्यपि अंग्रेजी में इस अधिकार को फ्रांस की तरह 'इण्टरपलेशन' कहा गया है, किन्तु सर्वोच्च सोवियत में फ्रांस की

submitted to the executive for consideration A motion is a demand addressed to the executive that it takes effective action on a certain matter The motion must be passed by both houses and contains specific proposals

रेलो के बजट पर वाद विवाद होता है । यदि किसी विचाराधीन विषय पर दोनो सदनो के बीच मतभेद उत्पन्न हो जाय, तो उस प्रश्न को दोना सदना के बराबर सदस्यो की पच समिति को सुपुद कर दिया जाता है । यदि फिर भी कोई सहमतिपूण समझौता नही हो पाता तो उस प्रश्न को समाप्त कर दिया जाता है । गतिरोध बहुत ही कम हाते है और जब कभी भी मतभेद उत्पन्न हुआ है दोनो सदनो को मा य समझौता सम्भव हुआ । ऐसे अवसर आय है जब कौंसिल ऑफ स्टेट म नेशनल कौसिल की बात मान ली है और उससे बढकर राष्ट्रीयता का परिचय दिया है । वास्तव मे अधिकतर राज्यो के द्वितीय सदनो से कौंसिल ऑफ स्टेट एक बात म भिन्न है । यह उनकी तरह प्रथम सदन से अधिक अनुदारवादी नही है ।

काय प्रणाली—अग्रलिखित कार्यो को करने के लिए सघीय एसेम्बली एकात्मक निकाय की तरह काय करती है अर्थात् दोनो सदन सयुक्त बैठक म य काय करते है—(1) कायपालिका, न्यायिक और सघ के अ य अधिकारियो को चुनने की शक्ति का प्रयोग करते समय, (2) सामूहिक क्षमा दान तथा साधारण क्षमा दान जारी करने की शक्ति का प्रयोग करते समय, और (3) अधिकार क्षेत्र सम्ब धी विवादो का निर्माण करते समय । अ य सभी कार्यो को करने के लिए दोनो सदन अलग अलग बैठत है । दोना सदनो के सामने अधिकाश काय फेडरल कौसिल से आता है, क्योकि उसका यह कत्तव्य है कि वह प्रशासन के बारे मे अनेक रिपोट एसेम्बली के सामने प्रस्तुत करे और उसका यह विशेषाधिकार भी है कि वह विधि निर्माण मे पहल करे । विधि निमाण मे पहल करने मे विशेषाधिकार दोनो सदना और उनके सदस्यो को भी प्राप्त है । सिद्धा त रूप मे के टनो को भी यह विशेषाधिकार प्राप्त है ।

साधारणतया फेडरल एसेम्बली फेडरल कौंसिल से प्राथना करती है कि वह प्रस्ताव पर अपनी रिपोट दे । दोनो सदन आपस मे यह समझौता कर लेते हैं कि कौन सा प्रस्ताव पहले किस सदन मे पेश किया जायेगा और पेश हो जान पर वह प्रस्ताव उस सदन की समिति को सौप दिया जाता है । यह समिति उस प्रस्ताव की परीक्षा करती है, बहुधा फेडरल कौसिल के सदस्या, नागरिक सेवको और अ य गवाहो के साथ, जि हे वह बुलाना ठीक समझे और उसके बाद कानून का प्रारूप (मसविदा) तयार किया जाता है, सदन उस पर पहल साधारण रूप मे विचार करता है और बाद मे प्रत्येक अनुच्छेद पर । यदि इस प्रकार विचार किये जाने पर प्रारूप स्वीकृत हो जाता है तो उसे दूसरे सदन मे समान कायवाही के लिए भेजा जाता है । किन्तु दोनो सदनो म स्वीकृत हो जाने पर यह आवश्यक नही कि विधि निर्माण प्रक्रिया का अ त हो जाय, क्योकि सविधान के अनुसार कानून मे सारमय परिवतना पर सभी नागरिको का मत प्राप्त किया जा सकता है । सविधान ने कानून और आज्ञप्ति म नाम का अन्तर किया है, परन्तु दोनो को एसेम्बली मे एक ही प्रकार से पारित किया जाता है और दोनो की कानूनी शक्ति सम होती है । कानूनो पर लोक निणय कराया जा सकता है और सवव्यापी प्रभाव की आज्ञप्ति पर भी ।

किसी निजी सदस्य द्वारा प्रस्तुत किसे गय प्रस्ताव के दो रूप हो सक्ते हैं—पोस्टयूलेट (Postulate) अथवा मोशन (Motion) । पास्टयूलेट की स्वीकृति के लिए पश किये जाने वाले सदन का बहुमत ही आवश्यक है और यह एक प्रकार की फेडरल कौंसिल स प्राथना हाती है कि वह उस आशय के विधायी प्रस्ताव का प्ररूप तैयार करे, किन्तु फेडरल कौंसिल को यह विवकीय शक्ति प्राप्त है कि वह ऐसा करे या न करे । परन्तु मोशन के पास होने के लिए दोनो सदना का बहुमत उसके पक्ष म होना आवश्यक है और उसके पास होने पर फेडरल कौंसिल के लिए आवश्यक है कि उसके अनुसार विधेयक का प्रारूप तैयार करके सघीय एसेम्बली म लाय ।[1] इससे यह स्पष्ट है कि प्रत्यक दशा में ...

[1] A postulate is a reque t addressed to the executive asking that a certain bill be considered but making no specific proposals If it is passed by a single house

सदस्यों के विशेष अधिकार और कर्तव्य—सोवियत संघ के संविधान के अन्तर्गत सदस्यों को कुछ विशेषाधिकार अथवा विमुक्तियाँ (immunities) प्राप्त हैं। सर्वोच्च सोवियत का कोई सदस्य जिन दिनों उसका सत्र होता है, उसकी सहमति के बिना न तो बन्दी बनाया जा सकता है और न ही उसके विरुद्ध अन्य कानूनी कार्यवाही की जा सकती है। जिन दिनों सर्वोच्च सोवियत का सत्र नहीं होता, सदस्यों को बन्दी बनाने तथा उनके विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए प्रेसीडियम की सहमति आवश्यक है। सदस्यों के कुछ विशेष कर्तव्य भी हैं। प्रथम, प्रत्येक सदस्य को चुने जाने पर उसके निर्वाचक उसे आदेश भी दे सकते हैं अर्थात् उसे क्या कार्य करने हैं, इस सम्बन्ध में निर्वाचक सुझाव दे सकते हैं और उसका यह कर्तव्य है कि वह उन्हें पूरा करने के लिए प्रयत्न करे। दूसरे, सदस्यगण अपने तथा सर्वोच्च सोवियत के कार्यों के बारे में नियमित रूप से रिपोर्ट देते हैं। संविधान के अन्तर्गत निर्वाचक अपने प्रतिनिधि को, यदि उसने उनके आदेशानुसार कार्य नहीं किया है, उसकी अवधि के समाप्त होने से पूर्व वापस भी बुला सकते हैं। इसे प्रत्यावर्तन (recall) कहते हैं।

11 साम्यवादी चीन मे विधायी सगठन और प्रक्रिया

इस सम्बन्ध मे उल्लेखनीय बातें ये हैं—(1) राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का वर्ष मे एक सत्र होता है, जिसे इसकी स्थायी समिति आहूत करती है। यदि स्थायी समिति आवश्यक समझे या 1/5 प्रतिनिधि ऐसा प्रस्ताव रखें तो इसका और भी सत्र बुलाया जा सकता है। जब राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस एकत्रित होती है तो यह अपने सत्र का सचालन करने के हेतु एक प्रेसीडियम चुनती है। (2) राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस समितियों का प्रयोग करती है। संविधान के अनुसार यह एक राष्ट्रीयताओं की समिति, एक विधेयक समिति, एक बजट समिति और अन्य आवश्यक समितियाँ नियुक्त कर सकती है। जिन दिनों राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का सत्र नहीं चलता, राष्ट्रीयताओं की समिति तथा विधेयक समिति राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थायी समिति के निर्देशन के अधीन रहती हैं। राष्ट्रीय कांग्रेस विशिष्ट प्रश्नों की जाँच करने के लिए या जिन दिनों उसका सत्र न हो तो स्थायी समिति आवश्यकता पडने पर जाँच समितियाँ भी नियुक्त कर सकती है। जब ये समितियाँ जाँच करती हैं, राज्य के सभी अंगों, जनता के संघों और सम्बन्धित नागरिकों को आवश्यक सूचना देनी होती है।

राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्य, राज्य-परिषद् उसके मन्त्री या आयोगों से प्रश्न पूछ सकते हैं, जिनका उत्तर दिया जाना आवश्यक है। जिन दिनों राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का सत्र चल रहा हो तो उसकी आज्ञा के बिना राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का कोई सदस्य बन्दी बनाया जा सकता है और न ही उसके विरुद्ध मुकदमा चलाया जा सकता है। जिन दिनों राष्ट्रीय कांग्रेस का सत्र न चल रहा हो, सदस्यों की गिरफ्तारी आदि के लिए स्थायी समिति की आज्ञा जरूरी है। अन्त मे, एक उल्लेखनीय बात यह है कि राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्य अपने निर्वाचकों की देख रेख के अधीन हैं। कार्य प्रणाली का वर्णन अन्य स्थान पर किया जा चुका है।

12 युगोस्लाविया मे विधायी सगठन और प्रक्रिया

एसेम्बली का एक अध्यक्ष और एक या अधिक उपाध्यक्ष होते हैं और वे फेडरल चेम्बर के सदस्यो मे से चुने जाते हैं। प्रत्येक चेम्बर का, उपराष्ट्रों के चेम्बर का भी, अपना एक अध्यक्ष होता है। इसका कार्यकाल चार वर्ष होता है और उन्हें उन्ही पदो के लिए फिर से लगातार दूसरी अवधि के लिए नही चुना जा सकता है। एसेम्बली का एक सेक्रेटरी भी होता है, जिसकी नियुक्ति फेडरल चेम्बर करता है और वही उसे उसके पद से भी हटा सकता है। एसेम्बली का अध्यक्ष एसम्बली

पार्लियामेंट की तरह प्रश्न पूछने का परिणाम कभी भी वाद विवाद अथवा म त्री का अपदस्थ होना नही होता ।

नयी सर्वोच्च सोवियत के प्रथम सत्र मे साधारणतया इस कायक्रम का पालन होता है । सर्वोच्च सोवियत के चुनाव के बाद पहले दोनो सदनो की बठकें अलग अलग होती है जिनमे व अपने अधिकारियो का चुनाव करते है, काय सूची अथवा समय क्रम को स्वीकार करते हैं और समितियो का चुनाव करते हैं । अगली बैठक म दोना सदनो की सयुक्त बैठक होती है जिसम बजट पर रिपोट सुनी जाती है । इस दौरान सदस्य अपन सुझाव दते है और बजट प्रस्तावो को साधारण आलोचना भी करते है । इसके बाद वित्त म त्री आलोचना का उत्तर देता है और सुझावो के सम्ब ध म कुछ आश्वासन भी । अ त मे दोना सदनो की अलग अलग बैठकें होती है, जिनम बजट स्वीकार कर लिया जाता है । इसके बाद दोनो सदनो की पृथक बठको म प्रेसीडियम द्वारा जारी की गयी आज्ञप्तियो पर स्वीकृति दी जाती है और कुछ कानून भी पास किय जाते है । सत्र की अ तिम बैठक म सर्वोच्च सोवियत प्रेसीडियम के सदस्यो के नामो की सूची पर स्वीकृति प्रदान करती है और इसी प्रकार म त्रि परिषद् के सदस्या के नाम भी स्वीकार कर लिए जाते है । कभी कभी महत्त्वपूण अ तर्राष्ट्रीय प्रश्नो के सम्ब ध मे भी सर्वोच्च सोवियत प्रस्ताव स्वीकार करती है ।

सर्वोच्च सोवियत की स्थायी समितिया—अ य राज्यो की विधायिकाओ की तरह सोवियत सघ म सर्वोच्च सोवियत भी समितियो का प्रयोग करती है । सर्वोच्च सोवियत के सत्रो के अ तरकाल म भी ये समितिया अपने काय करती रहती है । दोना सदन अपनी अपनी स्थायी समितिया नियुक्त करते हैं, उनम से मुख्य समितिया ये है—विधायी प्रस्ताव समिति, बजट समिति, प्रमाणीकरण समिति, वदेशिक मामला की समिति । य प्रश्ना पर प्रारम्भिक विचार करती है और उ ह सदन के समक्ष पेश करने के लिए तैयार करती हैं । सदन ही उन पर अ तिम निणय करत है । इस प्रकार समितिया को विधायी प्रस्तावो को आरम्भ करने का अधिकार प्राप्त है । समितियाँ प्रशास निक विभागो तथा अधिकारियो से *विधायी प्रस्तावो क सम्ब ध मे सरकारी आलेख व सामग्री* और लिखित सूचना माँग सकती है । इसी बीच मे व सरकार और विभिन्न वज्ञानिक तथा साव जनिक सगठनो के प्रतिनिधियो की रिपोर्टें भी सुनती है । समितिया म सभी विषयो पर निणय बहुमत से किये जाते है । प्रत्येक समिति अपने कार्यों के लिए सम्ब धित सदन के प्रति उत्तरदायी होती है *और सत्रो के अ तरकाल मे सदन के सभापति के प्रति ।*

विधायी प्रस्ताव समितिया—य स्वय विधायी प्रस्ताव तैयार करती है और अ य अगा द्वारा पेश किये गय प्रस्तावो पर भी विचार करती है । य विचारहीन प्रस्तावो के सम्ब ध म नागरिका द्वारा भेज गये पत्रो पर भी ध्यान देती है । दोना दस दस सदस्यो की विधायी प्रस्ताव *समितियाँ नियुक्त करते हैं । बजट समितियो के काय का बडा महत्त्व है ।* प्रतिवष य सरकार द्वारा तैयार किये गये बजट की जाच करती हैं, गत वष के बजट की क्रियान्विति की रिपोर्टों पर विचार करती हैं और नये बजट की आय तथा व्यय की मदा पर भी विचार करती हैं । समितियाँ अपने निष्कर्षों के बारे म सम्ब धित सदन को रिपोट देती है । प्रत्यक सदन की बजट समिति म 13 सदस्य होते हैं । वदशिक मामला की समितियाँ नीति सम्ब धी सभी प्रश्नो पर प्रारम्भिक विचार करती हैं । उनके सम्ब ध म कभी कभी आवश्यक कानून और प्रस्ताव भी य समितियाँ पश कर सकती हैं । सघ की सोवियत और राष्ट्रीयताओ म क्रमश 11 और 10 सदस्य हात हैं । प्रमाणीकरण समितियाँ प्रथम सत्र के आरम्भ म प्रत्यक सदन इस प्रकार की एक समिति नियुक्त करता है, जिसमे एक सभापति और कुछ सदस्य हात हैं । ये समितियाँ अपने अपन सदन के नव निर्वाचित सदस्या के प्रमाण पत्रो की परीक्षा करती हैं, इनके अतिरिक्त प्रत्यक सदन छान-बीन समितियाँ भी नियुक्त कर सकता है ।

मामलों पर उचित और आवश्यक कार्यवाही फेडरल चेम्बर द्वारा की जाती है, परन्तु ऐसा करने में वह अन्य सक्षम चेम्बरों के साथ मिलकर ही समता के आधार पर ऐसा काम करता है। परन्तु कुछ अन्य मामलों पर जो अन्य चेम्बरों के ही अधिकार क्षेत्र में आते हैं, उचित और आवश्यक कार्यवाही सम्बन्धित चेम्बर ही स्वतन्त्र रूप से करते हैं। फेडरल चेम्बर और आर्थिक चेम्बर आर्थिक क्षेत्र में काम करने वाले समुदायों से सम्बन्धित मामलों तथा अर्थव्यवस्था और वित्त के क्षेत्र में आने वाले मामलों पर विचार करते हैं। वे इन क्षेत्रों में कानून पास करते हैं और सामाजिक योजनाएँ भी पारित करते हैं। इसी प्रकार फेडरल चेम्बर शिक्षा व संस्कृति के चेम्बर या सार्वजनिक स्वास्थ्य व सामाजिक कल्याण के चेम्बर के साथ मिलकर उनके क्षेत्र में आने वाले मामलों पर विचार करता है और सम्बन्धित चेम्बर के साथ मिलकर उन विषयों के बारे में आवश्यक कानून पारित करता है। फेडरल चेम्बर संगठनात्मक व राजनीतिक चेम्बर के साथ मिल कर फेडरल बजट और वार्षिक वित्तीय विवरण पास करते हैं।

परन्तु फेडरल चेम्बर स्वतन्त्र रूप में उन मामलों पर विचार करता है जो वैदेशिक नीति, राष्ट्रीय प्रतिरक्षा, राज्य की सुरक्षा के क्षेत्र में आते हैं और यह सामान्य आन्तरिक नीति के मामलों पर भी विचार करता है तथा आवश्यक कानून बनाता है। यही अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों की सम्पुष्टि करता है। यही चेम्बर संघीय कार्यकारिणी परिषद् के प्रधान व सदस्यों का चुनाव करता है और उन्हें उनके पदों से हटाता भी है। ऐसे ही यह सर्वोच्च तथा संविधानिक न्यायालयों के प्रधान व न्यायाधीशों को नियुक्त करता है और उन्हें उनके पदों से हटा भी सकता है। यही चेम्बर राज्य सचिवों तथा उप-सेनापति को नियुक्त करता है तथा पद से हटाता है। संघीय एसेम्बली के सदस्यों को प्रतिकर अथवा पारिश्रमिक दिये जाने के बारे में यही निर्णय करता है। ऐसे ही उन अधिकारियों के पारिश्रमिक भी यही नियत करता है जिन्हें यह नियुक्त करता है। यह ऐसे कार्य भी करता है जो एसेम्बली के अधिकार क्षेत्र में आते हैं, किन्तु अन्य चेम्बरों के अथवा अन्य किसी एक चेम्बर के अधिकार क्षेत्र में स्वतन्त्र रूप से नहीं आते।

काम करने वाले समुदायों का प्रत्येक चेम्बर जैसे आर्थिक चेम्बर या शैक्षिक व सांस्कृतिक चेम्बर अपने अपने अधिकार क्षेत्र में ऐसे मामलों पर विचार कर सकता है जिनका सम्बन्ध संघीय एसेम्बली के अन्य निर्णयों से हो तथा अन्य ऐसे मामलों पर भी जो उनके सामान्य कार्य संचालन से सम्बन्धित हों और उनके कार्य क्षेत्र में अन्य स्वायत्तता प्राप्त संगठनों व काम करने वाले वाले समुदायों से सम्बन्धित हों, जिससे कि उनके सम्बन्धों में समन्वय कायम किया जा सके और पारस्परिक सहयोग का विकास किया जा सके। चेम्बरों को इन मामलों के बारे में उपयुक्त या संगत स्वायत्तता प्राप्त संगठनों, काम करने वाले संगठनों और राजकीय अंगों से सिफारिशें करने का अधिकार है। इनमें से प्रत्येक चेम्बर, अपने अधिकार क्षेत्र में, फेडरल कार्यकारिणी परिषद् से रिपोर्टें माँग सकता है और उसे प्रश्न सम्बोधित कर सकता है।

एसेम्बली के सभी चेम्बरों के संयुक्त अधिवेशन में गणराज्य के राष्ट्रपति और उप राष्ट्रपति तथा एसेम्बली के प्रधान व उप प्रधान के चुनाव होते हैं और यही प्रतिनिधियों की अवधि के विस्तृत करने का भी निर्णय करता है। प्रत्येक चेम्बर में वैध निर्णय चेम्बर में उपस्थित बहुमत से किये जाते हैं, परन्तु उसकी बैठक में कम से कम बहुसंख्या उपस्थित होनी चाहिए। फिर भी कुछ ऐसे निर्णय होते हैं जिनके लिए संविधान के अनुसार विशेष बहुमत की आवश्यकता होती है। संयुक्त अधिवेशन में भी एसेम्बली के निर्णय उपस्थित सदस्यों के बहुमत से होते हैं, जब तक कि किन्हीं विषयों पर निर्णय के लिए संविधान द्वारा विशेष बहुमत की आवश्यकता न हो। परन्तु संयुक्त अधिवेशन में भी प्रत्येक चेम्बर के सदस्यों की बहुसंख्या उपस्थित होनी चाहिए। प्रत्येक प्रतिनिधि को अपने चेम्बर में, संघीय कार्यकारिणी परिषद् और चेम्बर की किसी भी

का प्रतिनिधत्व करता है, वही चेम्वरा के सयुक्त अधिवशन वुला सकता है, वही उनका सभापतित्व करता है और वही एसेम्वली के प्रक्रिया नियमा को लागू करता है। प्रत्येक चेम्वर का अध्यक्ष चेम्वर के निणय के अनुसार अथवा अपने आप जब समझे अपने अपने चेम्वर का अधिवशन वुलाता है।

प्रतिनिधिया के अधिकार और कत्तव्य—प्रत्येक प्रतिनिधि को उस चेम्वर म जिमका वह सदस्य होता है, विधेयका, सिफारिशा, घोपणाओ और प्रस्तावा तथा चेम्वर के अधिकार क्षेत्र म आने वाल अन्य प्रश्नो को भी पश करने का अधिकार है। इसक साथ ही उसे सघीय कायकारिणी परिपद् के काय व नीति से सम्वधित मामला, कानूना के लागू किये जान अथवा सघीय प्रशासकीय अगा के कार्यों की परीक्षा करने का प्रस्ताव पेश करने का भी अधिकार है। प्रतिनिधियो की एक निर्धारित सख्या को, प्रक्रिया नियमो के अनुसार, एसेम्वली के अधिकारिया के चुनाव, नामजदगी, पद से हटाये जान के बारे म प्रस्ताव पश करन का अधिकार है, जब तक कि इन विपया के बारे म सविधान द्वारा अय व्यवस्था न की गई हो। उन्ह सघीय कायकारिणी परिपद् के सदस्यो या सघीय प्रशासनिक अगा क अधिकारियो से उनक कार्यों तथा सम्वधित अगो के अधिकार क्षेत्र म आन वाले मामलो के वारे म प्रश्न पूछन का अधिकार है और सम्वधित अधिकारी अपेक्षित सूचना दगा।

प्रत्येक प्रतिनिधि अपने निर्वाचका के प्रति उत्तरदायी है और उसे अपने तथा अपने चेम्वर के काय के वारे म अपन निर्वाचन क्षेत्र क निर्वाचको को सूचित रखना चाहिए। प्रत्येक सघाय प्रतिनिधि को उस कम्यून की एसेम्वली के काय मे भाग लेन का अधिकार है, जिसम कि वह चुना जाता है। यदि कम्यून की एसम्वली माँग करे तो प्रतिनिधि को अपने तथा अपने चम्बर के काय के वारे म उसे सूचना देनी चाहिए। फेडरल चेम्बर का कोई भी सदस्य उसी समय किसी राजकीय अग का अधिकारी या कमचारी नही रह सकता। प्रत्येक प्रतिनिधि को एसेम्वली के भीतर व वाहर ससदीय उ मुक्ति के उपभोग का अधिकार है। उन्ह एसेम्वली म दिये गय मत या मत की अभिव्यक्ति के लिए उत्तरदायी नही ठहराया जा सकता, बन्दी नही बनाया जा सकता या दण्डित नही किया जा सकता।

समितियाँ और आयोग—अग्रलिखित विपयो पर विचार करन के लिए स्थायी समितिया नियुक्त की जाती है। *नीति के सामान्य मामले, उन मामलो के वारे म एसेम्बली मे प्रस्ताव पश करन*, विधेयको और एसम्बली के अन्य कार्यों तथा फेडरल चेम्बर के अधिकार क्षेत्र म आने वाले अन्य मामले, इन समितिया की नियुक्ति और उनके अधिकार क्षेत्रो का निर्माण फेडरल चेम्बर के निणया द्वारा होते हैं। फेडरल चेम्बर की स्थायी समितियाँ, अपने अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर, सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रो म मामला की स्थिति पर विचार करती है, सघीय अधिकारिया के कार्यों, कानूनो व एसेम्वली के अन्य निणयो को लागू करने के वारे म विचार करती है और विधेयको, कानूनो, मसविदा व एसेम्बली के अधिकार क्षेत्र म आने वाले अन्य मामला का अध्ययन करती है तथा अपने निष्कर्षों व प्रस्तावो को फेडरल चेम्वर के सामन पेश करती है। आर्थिक चेम्बर, शक्षिक सास्कृतिक चेम्बर, सावजनिक स्वास्थ्य सामाजिक कल्याण का चेम्वर और सगठनात्मक राजनीतिक चेम्वर अपनी अपनी समितियाँ नियुक्त कर सकते है, जो विधेयको और अन्य कानूनी मसविदो तथा अपने अधिकार क्षेत्र मे आने वाले अन्य मामलो की परीक्षा कर सकती हैं। एसेम्वली के लिए चुनावा तथा नामजदगियो से सम्वधित मामलो के लिए एक *आयोग* नियुक्त करना आवश्यक है। उस आयोग का सभापति तथा सदस्यो की वहुसख्या का चुनाव फेडरल चेम्वर और अन्य चेम्बर अपने सदस्यो म स करते हैं।

फेडरल एसेम्वली मे काय प्रणाली—सघीय एसेम्वली के अधिकार क्षेत्र म आन

तेरहवाँ अध्याय

बजट और वित्तीय प्रक्रिया

1 सार्वजनिक वित्त और बजट

सावजनिक वित्त—सावजनिक वित्त सामान्यत विस्तृत एव वहद् अर्थों म परिभाषित किया जाता है, किन्तु मुख्य रूप स इसका सम्बन्ध सरकार की उन सभी क्रियाओ म है जो 'अर्थ' से सम्बन्धित है। 'सावजनिक वित्त' लोक प्रशासन के अधिकारियो (केन्द्रीय तथा स्थानीय प्रशासन) की ऐसी क्रियाओ स सम्बन्धित है जिसके आधार पर व अपने कार्यों को वित्त के माध्यम से पूरा करते हैं। साथ ही राज्य की आय के निर्धारण एव व्यय को किस प्रकार सन्तुलित किया जाय इसका भी इसम समावश होता है। मुख्य रूप स इसम हम दो क्रियाओ का अध्ययन करते हैं। कर निर्धारण एव व्यय, किन्तु ऐसी क्रियाएँ जसे आय के अनुमान लगाना तथा कर वसूल करना, धन को सरक्षण देना, लोक ऋण की व्यवस्था करना, आय एव व्यय के सभी अनुमानो को तैयार करना, बजट को प्रस्तुत करके स्वीकृत कराना, आय व्यय का लेखा, उसकी निर्धारित समय पर जाँच तथा वित्तीय रिपोट आदि सभी बातें सावजनिक वित्त म सन्निहित है। 'वित्त' अथवा 'अथ' प्रत्येक व्यक्तिगत परिवार, समुदाय एव व्यापारिक सस्थान की उन महत्त्वपूण क्रियाओ को प्रभावित करता है जिनमे उनकी आय तथा व्यय की समस्त क्रियाएँ अन्तग्रस्त होती हैं। यही सावजनिक वित्त के लिए भी पूणरूपेण सही है। अत हम सहज रूप म यह कह सकत हैं कि वित्तीय प्रशासन लोक प्रशासन का एक महत्त्वपूण अग है। एक लेखक के शब्दा म 'यह सरकार का जीवन तत्त्व (life blood) है।' एक महान् राजनीतिज्ञ ने यह कहा है कि वित्त ही सरकार है। वित्त की सुदृढ स्थिति किसी राष्ट्र के राजनीतिक स्वास्थ्य की दृष्टि स सर्वोत्तम महत्त्व रखती है। सावजनिक वित्त का सुदृढ होना निश्चित और उस नीति के साथ साथ सगठन पर भी निभर करता है, किन्तु अन्य किसी की अपेक्षा सगठन पर यह अधिक आश्रित है।'[1]

विलोबी के अनुसार, लोक प्रशासन की विशिष्ट समस्याआ म से अन्य कोई इतनी महत्त्व पूण नही है जितनी कि सरकार की वित्तीय क्रियाआ का सही सचालन एव उसकी सुदृढ व्यवस्था।[2] इसके महत्त्व को इस तथ्य स भी आका जा सकता है कि प्रत्येक विधायिका का आधे से अधिक समय केवल वित्तीय मामला पर विचार के लिए दिया जाता है। हमारे अपने ही देश मे ससद तथा राज्यो के विधानमण्डल अपना पूरा एक सत्र, जिसे बजट सत्र कहते है और जो कई माह तक चलता है केवल इसी काय के सम्पादन हेतु करते हैं। उसी अवसर पर प्रशासन को भी अपनी वित्तीय क्रियाओ की विस्तृत एव सही रूप (आय व्यय की दृष्टि) से व्यवस्था करनी होती है, इस प्रकार सरकार का प्रत्येक काय वित्तीय रेकार्डों मे प्रतिबिम्बित होता है। वित्तीय

---

[1] Chand G *The Financial System of India* p 1
[2] Willoughby W F, *The National Budget System* p 1

समिति को चेम्बर म विधेयक व कानूनो के मसविदे प्रस्तुत करने का अधिकार है। कोई भी चेम्बर ऐस विधेयक व कानूनो के मसविदे प्रस्तुत कर सकता है। जो कि किसी दूसरे चेम्बर के अधिकार क्षेत्र मे आते हो। किसी विधेयक के प्रस्तुत करने का प्रस्ताव स्वायत्तता-प्राप्त सगठनो, सामाजिक राजनीतिक सगठनो व सघो और नागरिको स आ सकता है।

प्रत्येक चेम्बर को किसी भी विधेयक, सामाजिक योजना के मसविदे और बजट पर विचार विमश करन का अधिकार है तथा किसी अ य ऐसे मामले पर भी जोकि दूसरे चेम्बर के अधिकार क्षेत्र म आता हो और चेम्बर उस विधेयक या मामले के बारे म अपने मत सक्षम चेम्बर के सामने रख सकता है, यदि सम्ब धित विधेयक या विचाराधीन प्रश्न किसी ऐसे क्षेत्र से सम्ब धित हो जो उसके अपने अधिकार क्षेत्र मे भी आता हो। सक्षम चेम्बर अ य चेम्बरा से किसी विधेयक, सामाजिक योजना के मसविदे, बजट या अ य मामला के बारे मे उनका मत माग सकता है। सक्षम चेम्बर दूसरे चेम्बरो क मतो पर वाद विवाद कर सकता है और उन पर अपनी स्थिति को निर्धारित कर सकता है। प्रत्येक चेम्बर का पृथक से अपना अपना अधिवशन हाता है, जिसमे वह विचार-विमश करता है, पर तु चेम्बर चाहे तो सयुक्त अधिवेशन करके उनमे निणय कर सकत है। किसी कानून के बनाने या किसी और काय के लिए दो चेम्बर मिलकर समस्त अधिवेशन कर सकते है और समता के आधार पर कानून पास कर सकते है। ऐसे ही दो या अधिक चेम्बर सयुक्त अधिवेशन मे सामा य महत्त्व के विषय पर वाद विवाद कर सकते हैं। यदि व चेम्बर सयुक्त अधिवेशन मे मतदान करने का निणय करे, तो प्रत्येक चेम्बर के सदस्य पृथक रूप मे मतदान करते है।

चेम्बरो के सम्ब ध—कोई कानून या अ य काय जिसके निर्माण मे दो चेम्बर समता के आधार पर भाग लेते है, तब पारित समझा जाता है जबकि वह दोनो चेम्बरो द्वारा एक ही रूप मे पास हो जाता है। पर तु यदि किसी विचाराधीन विषय पर मतभेद पैदा हो जाय और वे उसके बारे मे कानून के मसविद पर लगातार अधिवेशनो म विचार विमश करने के बाद भी एकमत न हो, तो दोना चेम्बर एक सयुक्त आयोग बनाते हैं जिसम दोनो चेम्बरो के बराबर सदस्य रहते है और उस आयोग को यह काय सौपा जाता है कि वह उस विवाद का निणय करने के लिए अपनी सिफारिश कर। पर तु यदि सयुक्त आयोग भी एकमत पर न पहुँच सके अथवा आयोग द्वारा की गई सिफारिश को कोई भी एक चेम्बर स्वीकार न करे तो वह विधेयक या मसविदा दोनो चेम्बरो के सयुक्त अधिवेशन के सामने रखा जाता है और यदि दोनो चेम्बर भी सयुक्त अधिवेशन द्वारा एकरूप निणय पर न पहुचे तो प्रवादमय विधेयक एसेम्बली के एजेण्डा से हटा दिया जाता है।

उपराष्ट्रो का चेम्बर—इसका अधिवेशन तब अनिवाय रूप से होता है जबकि फेडरल चेम्बर के एजेण्डा पर सविधान मे परिवतन करने का कोई प्रस्ताव हो। इसकी बैठकें तब भी हो सकती हैं जबकि कोई ऐसा विधेयक कानूनी मसविदा या अ य मामला जिनका सम्ब ध उप राष्ट्रो या गणत त्रो की समता से हो या सविधान द्वारा स्थापित गणत त्रा के अधिकारो से हो और वे फेडरल चेम्बर के एजेण्डा पर हो। यदि फेडरल चेम्बर उपराष्ट्रा के चेम्बर का प्रस्ताव स्वीकार न करे तो उपराष्ट्रो का चेम्बर उस पर फिर से वाद विवाद कर सकता है। यदि वह अपनी मौलिक स्थिति पर ही अडा रहे और विवादग्रस्त मामले पर फेडरल चेम्बर से फिर सहमति के आधार पर समझौता न हो, तो दोना चेम्बर मिलकर एक सयुक्त आयोग बनायेंगे जिसमें दोनों चेम्बरा के बराबर सदस्य होगे और उस आयोग को ऐसी सिफारिश निर्णय करने का काम सौंपा जायगा कि उसस विवाद का अ त हो जाय।

यह एक प्रतिवेदन है और एक प्रस्ताव भी है। यह वह आलेख है जिसके द्वारा मुख्य कार्यपाल, सरकारी कार्यों के यथार्थ सम्पादन के लिए उत्तरदायी प्राधिकारी के रूप में, कर लगाने तथा व्यय की स्वीकृति देने वाले प्राधिकारी (विधायिका) के सामने आता है और इस बात की पूरी रिपोर्ट देता है कि उसने तथा अधीन अधिकारियों ने गत वित्तीय वर्ष में वित्तीय मामलों का किस प्रकार प्रशासन किया है जिसमें कि वह कोष की वर्तमान स्थिति का प्रदर्शित करता है, इन्हीं सूचनाओं के आधार पर आगामी वर्ष के कार्यक्रमों की रूप रेखा तैयार करता है तथा उस ढंग का व्यवस्था का सुझाव भी देता है जिसके आधार पर कार्य को सचालित करने के लिए धन प्राप्त हो और वह पूरा हो सके। बजट एक ऐसी रिपोर्ट है जो सबसे अधिक महत्त्व रखती है, क्योंकि यही सरकार के वित्तीय कार्यों का आधार है। इसे विधायिका के सम्मुख रखा जाना आवश्यक है। वस्तुत यह उन महत्त्वपूर्ण सचार साधनों में से है जिन्हें कार्यपालिका विधायिका के माध्यम से जनता तक पहुँचाती है। यह एक प्रस्ताव है, इसमें सरकार के भावी कार्यक्रमों की ओर सकेत होता है तथा भविष्य की भिन्न भिन्न योजनाओं के लिए वित्त की व्यवस्था का विवरण भी होता है। इसी दृष्टि से राष्ट्रीय बजट का निर्माण होता है तथा उसे प्रस्तुत भी किया जाता है। इस प्रकार बजट राज्य के विवरण पत्र के प्रयोजन को पूरा करता है। इसका उद्देश्य सरकारी नीति को निर्धारित करने के लिए आवश्यक तथ्यों को सक्षेप में प्रस्तुत करना और साथ ही वित्तीय साधनों के लिए व्यवस्था करना है।

बजट के प्रकारों में हम तीन बहुचर्चित रूपों का अध्ययन करते हैं—सन्तुलित बजट, बचत का बजट एवं घाटे का बजट। सन्तुलित बजट में पूर्व अनुमानित आय तथा पूर्व अनुमानित व्यय समान होते हैं। साधारणत सरकारी बजट ऐसा ही होना चाहिए, लेकिन कठिनाई से ही ऐसा हो पाता है। बचत के दिखाने वाले बजट के अनुसार अनुमानित व्यय से आय अधिक होनी चाहिए। एक अच्छे बजट को कुछ न कुछ बचत सुरक्षित रूप से दिखानी चाहिए। बचत वाला बजट सर्वथा स्वागत योग्य है। किन्तु यह भी कठिनाई से ही देखने को मिलता है। घाटे का बजट ऐसा बजट होता है जिसमे अनुमानित व्यय अनुमानित आय से अधिक होता है। ऐसा बजट आवश्यकता का सूचक होने के साथ साथ विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था का एक सामान्य लक्षण है। असन्तुलित अथवा घाटे का बजट सार्वजनिक ऋणग्रस्तता के साथ साथ सभी सम्बन्धित लोगों में चिन्ता पैदा करता है।

परम्परागत बजटों में व्यय की मदों को कार्यों, परियोजनाओं या कार्यवाहियों की अपेक्षा लक्ष्यों के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत किसी विशिष्ट कार्यक्रम से सम्बन्धित व्यय की मदें विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत इधर उधर बिखरी हुई हो सकती है। परन्तु व्यय का कार्यों के अनुसार विभाजन जिसमें प्रत्येक पर किया गया व्यय भी दिया हो, उपलब्ध साधनों का सर्वोत्तम प्रयोग करने के लिए विश्वसनीय आधार, उत्तरदायित्वों के उपयुक्त वितरण, प्रभावी कार्यपालिका और प्रबन्धात्मक नियन्त्रण को सुनिश्चित बनाने, रिपोर्ट देने और मूल्यांकन की स्वस्थ पद्धति की स्थापना करने, अर्थमय विधायी नियन्त्रण और परिवीक्षण तथा सुधरे हुए सार्वजनिक सम्बन्धों (सम्पर्क) की व्यवस्था करता है। कार्यक्रम और निष्पत्ति बजट में या तो वर्गीकरणों अथवा निष्पादन (performance) पर बल दिया जा सकता है। आधुनिक प्रवृत्ति बाद वाले के पक्ष में है, जिसमें परियोजनायें और उनकी प्राप्ति अथवा पूर्ति का वर्णन स्पष्ट रूप में दिया रहता है, अर्थहीन और असम्बन्धित विस्तार की असख्य बातों के रूप मे नहीं। सयुक्त राज्य अमरीकी सरकार की कार्यपालिका शाखा के सगठन पर बैठाये गये आयोग ने अपनी रिपोर्ट में कहा है, हम सिफारिश करते हैं कि कार्यों व परियोजनाओं के आधार पर सघीय बजट को पुनर्गठित करना चाहिए।' बजट के इस नवीन रूप का सामान्य अर्थ यही है कि यह केवल प्राप्य लक्ष्यों का आधार

प्रशासन पहले की अपेक्षा आधुनिक युग म अधिक महत्त्व रखता है। उसका मुख्य कारण यह है कि प्रशासन द्वारा लगाय गये करो, चुगी कर, शुल्क, अपदण्ड आदि द्वारा होने वाली आय पूर्वापेक्षा बहुत अधिक बढ़ी है और राजकीय उद्योगो स भी आय बढ़ी है। इसके अतिरिक्त राज्य कार्यों तथा अन्य सामाजिक सेवाओ पर व्यय होने वाले धन म पूर्वापेक्षा वृद्धि हुई है। इस ध्यान म रखते हुए अकुशल तथा अपव्ययी वित्तीय प्रक्रियाओ को सहन नही किया जा सकता। जो सरकार वित्तीय प्रशासन की सन्तोषजनक व्यवस्था करती है निश्चय ही उसकी सभी क्रियायें सुदृढ और कुशल आधार पर सचालित होती हैं। वित्तीय प्रशासन म कार्यपालिका एव विधायिका के उन कार्यों का समावेश होता है जिसके आधार पर दोनो ही अग वित्तीय नीतियो के निर्धारण म योग देते हैं और उन नीतियो को पूरा करने का मुख्य दायित्व भी पूरा करते हैं जिनम आय तथा व्यय सम्बन्धी सुझाव आते हैं।

सक्षेप म, वित्तीय प्रशासन क मुख्य उप विभाजन इस प्रकार हैं (1) आय के अनुमानो को तैयार करना—बजट का निर्माण। (2) बजट अथवा अनुमानो को विधायिका द्वारा पास करना (या किसी अन्य अधिकारी द्वारा जो उस पास करने के लिए सक्षम हो)। (3) बजट को क्रियान्वित करना, जस करो को एकत्र करना और अन्य सभी प्रकार के आय-व्यय पर नियन्त्रण रखना। (4) कोष प्रबन्ध (Treasury management) अर्थात् राजकीय कोष गृह म धन को सुरक्षित रखने और व्यय के लिए इसी धन की देनदारी करने की व्यवस्था है। (5) लेखा तथा लेखा परीक्षण (audit) की व्यवस्था रखना, जिसम लेखा परीक्षण की रिपोर्ट भी आती हैं, यह भी बहुत आवश्यक है कि हम वित्तीय प्रशासनिक सगठन पर भी थोड़ा ध्यान दें। विकासशील देशो म वित्तीय सगठन के मुख्य अगो म हम इनका अध्ययन करते हैं (1) विधायिका, (2) वित्त विभाग, अतिरिक्त बजट को तैयार करने वाला एक मुख्य सगठन भी इसका अध्ययन विषय है जैसे सयुक्त राज्य अमरीका म 'ब्यूरो ऑफ दी बजट' का सगठन, (3) वित्तमन्त्री और मुख्य वित्तीय अधिकारी, (4) नियन्त्रक के अधीन लेखा परीक्षण विभाग जसे भारत मे महालेखा परीक्षक, (5) विधायिका की वित्तीय समितियाँ जैसे भारत म प्राक्कलन समिति (Estimates Committee) और लोक लेखा परीक्षण समिति (Public Accounts Committee) है।

बजट—साधारण शब्दो म 'बजट' एक ऐसा आलेख है जिसम भूतकालीन आय, व्यय और राजकीय कोष का वर्णन होता है तथा इसके साथ ही भविष्य की आय व्यय सम्बन्धी आवश्यकताओ के अनुमानो का उल्लेख होता है। यह आलेख बजट सूचना के साथ अमरीका म तथा वित्तमन्त्री के भाषण के साथ भारत मे प्रसारित होता है। बहुत से लेखको ने बजट' की परिभाषाएँ विभिन्न रूपो म की है। मुख्य परिभाषायें तथा विचार इस प्रकार है—सामान्यत 'बजट' एक ऐसा निर्धारित एव निश्चित अनुमानो का आलेख है जिसमे एक निश्चित अवधि के आय और व्यय के आँकडो का उल्लेख रहता है। प्रशासक के हाथ मे बजट एक ऐसा रेकार्ड है जिसमे भूतकालीन सफलताओ, वर्तमान नियन्त्रण एव नियमन के साधनो तथा भावी योजनाओ का चित्र अकित रहता है।[1]

मुनरो के अनुसार, 'बजट एक प्रकार से आगामी वित्तीय वर्ष की वित्तीय योजनाओ का लेखा है जिसम एक तरफ होने वाली अनुमानित आय का और दूसरी तरफ सम्पूर्ण व्यय का वर्णन होता है।'[2] बजट एक सगठित योजना तथा वित्तीय प्रशासन की केन्द्रीय धुरी है। विलोबी ने सत्य ही कहा है कि बजट केवलमात्र अनुमानो का सकलन ही नही है, वरन् इससे कुछ अधिक है,

[1] Dimock and Dimock *Public Administration* p 185

[2] Munro W B *The Government of the United States*, p 237

करने की शक्ति के द्वारा पूरा नियन्त्रण रखता है। यह इसी आधार पर होता है कि कार्यपालिका अपने सम्पूर्ण कार्यक्रम के लिए विधायिका से पहले ही स्वीकृति लिए होती है। संयुक्त राज्य अमरीका में 1921 के बजट एवं एकाउंटिंग एक्ट के बाद से यह कार्यपालिका प्रबन्ध का एक साधन ही बन गया है। अत आजकल बजट को कार्यपालिका प्रबन्ध के आधारभूत साधन के रूप में देखा जाता है।

आर्थिक नीति के साधन रूप में—वर्तमान समय में बजट ही वास्तव में सरकार की प्रयोग में लायी जा रही आर्थिक नीतियों का एक निश्चित संकेत है। बजट ही सरकार के हाथ में ऐसे शक्तिशाली साधन के रूप में है जिसके आधार पर वह अपनी नीतियों को क्रियान्वित करती है। बजट में नये करो के सुझाव एवं नये ऋण प्राप्त करने के प्रस्ताव भी दिये होते हैं। नये कर प्रस्तावों अथवा ऋण के आधार पर ही कोई भी सरकार अपनी आर्थिक नीतियों को क्रियान्वित करती है। यातायात, खानों, उद्योगों के राष्ट्रीयकरण एवं मृत्यु शुल्क, पूंजीकर की प्रतिस्थापना, वेतन क्रमों का उच्च स्तरों पर कम करके तथा छोटे स्तरों पर बढ़ाकर, मुद्रा-स्फीति को रोक कर मूल्य स्तर को स्थिर करना आदि की व्यवस्था समाजवाद की ओर झुकाव का एक स्पष्ट संकेत है। हमारे अपने ही देश में बजट सरकार की आर्थिक नीतियों को पूरा करने का साधन बन गया है।

2 ग्रेट ब्रिटेन में वित्तीय प्रक्रिया

संसदीय नियन्त्रण का विकास—इंग्लैण्ड का संविधानिक इतिहास, बहुत सीमा तक, जनता के कोष (Treasury) पर नियन्त्रण और सामान्य इच्छा को सर्वोपरिता पाने के लिए संघर्ष का इतिहास है। कामन सभा द्वारा प्रयुक्त वित्तीय नियन्त्रण कानून, संसदीय अधिकारों और प्रथाओं पर आधारित है। मध्ययुग और ट्यूडर काल में जैसे जैसे संसद की शक्ति बढ़ी वैसे ही क्रमिक रूप में इस सिद्धान्त का विकास हुआ कि ताज द्वारा कर लगाने पर संसद की सहमति आवश्यक है। 1689 में अधिकार पत्र (Bill of Rights) द्वारा स्टुअर्ट काल के संघर्षों के उपरान्त यह सिद्धान्त स्थापित हो गया था। अठारहवी शताब्दी में, कॉमन सभा ने क्रमिक रूप से विनियोग की विधि द्वारा व्यय पर नियन्त्रण की आधुनिक पद्धति को विकसित किया, जिसे 1866 के कानून (Exchequer and Audit Departments Act) में समाविष्ट किया गया। इस कानून के अन्तर्गत उन सभी विभागों के लिए जिन्हें संसद की स्वीकृति से धन मिलता है, यह आवश्यक बना दिया गया कि वे प्रतिवर्ष संसद के सामने विनियोग लेखों (Appropriation Accounts) को प्रस्तुत करेंगे। इन लेखों पर ट्रेजरी द्वारा नियुक्त विभागों के एकाउंटिंग अधिकारियों के हस्ताक्षर होते थे। कानून में यह व्यवस्था की गयी कि महालेखा नियन्त्रक व परीक्षक समय समय पर उन प्रार्थनाओं पर संचित निधि से ट्रेजरी को धन निकालने की आज्ञा देगा, यदि उसे यह समाधान हो जाय कि वे प्रार्थनायें ठीक हैं।

संसद के अति आरम्भिक काल में ही यह सिद्धान्त स्थापित हो गया था कि संसद के वित्तीय नियन्त्रण सम्बन्धी अधिकारों का प्रयोग कॉमन सभा द्वारा किया जायगा। कामन सभा ने परम्परानुसार यह दावा किया है कि लार्ड सभा को वित्तीय प्राविधानों में संशोधन करने की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है, यद्यपि लार्ड सभा ऐसे प्राविधानों को अस्वीकृत कर सकती है। 1911 के संसदीय कानून के पारित होने के बाद से अध्यक्ष द्वारा प्रमाणित धन विधेयकों पर लार्ड सभा की अनुमति आवश्यक नहीं रही। वित्त विधेयक, जो कर लगाने का अधिकार देता है और विनियोग विधेयक जो संचित निधि से पूर्ति सेवाओं (Supply Services) पर व्यय का अधिकार देता है, केवल कॉमन सभा में ही सम्पूर्ण सदन की समिति के संकल्पों पर केवल ताज के किसी

हो अपेक्षाकृत उन वर्गीकरणो के जा कि सामान्य रूप से बजट मे दिये होते है । इस प्रकार सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि बजट के निर्माण मे लक्ष्य क्या है और उसकी प्राप्ति पर कितना व्यय होना है । डा० रॉबर्ट एस० हमन के शब्दों मे, 'निष्पादन बजट' सरकार की आवश्यकताओ के महत्त्व पर अधिक प्रकाश डालता है, अपेक्षाकृत अन्य किसी आवश्यकताओ के ।' दूसरे शब्दों मे, 'यह आवश्यकता से अधिक बल लक्ष्य की पूर्ति पर देता है ।' वास्तव मे निष्पादन बजट का प्रयोग स्थानीय निकायो मे ही होता है । अमरीका मे यह स्थानीय निकायो से ही प्रारम्भ हुआ, क्योकि उनकी सेवाओ को अधिक सरलता के साथ आका जा सकता है ।

बजट के सम्बन्ध मे सरकार की सामान्य कार्यविधि यही है कि वह सभी प्रशासनिक विभागो का एक ही बजट रखती है । किन्तु यह देखा गया है कि कुछ दशाओ मे यह लाभदायक है कि कुछ महत्त्वपूर्ण आय करने वाले विभागो के बजट पृथक् हो । हमारे अपने ही देश मे सामान्य बजट के साथ 1921 के बाद से रेलवे के पृथक् बजट की व्यवस्था है । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि भारत मे बहुल बजट की व्यवस्था है । जहाँ तक अन्य राजकीय उद्यमो (state undertakings) के बजटो का प्रश्न है उनके अपने बजट होते है । उन उद्यमो के लिए केवल राज्य निधि से दी जाने वाली धनराशियो और उनकी आय मे से ऐसी धनराशियो को जिन्हे राज्य निधि मे हस्तान्तरित किया जाता है, राज्य के सामान्य बजट मे दिखाया जाता है ।

बजट की तीन अवस्थायें—विनोजी के अनुसार बजट की तीन अवस्थाये है—(1) निर्माण की अवस्था—निर्माण की समस्या को इन तत्त्वो मे रखा जा सकता है (अ) उस अधिकारी को तय करना जो कि निर्माण के लिए उत्तरदायी होगा । (ब) उस साधन अथवा समिति की व्यवस्था करना जो कि निर्माण करने वाले अधिकारी का सहयोग देगी, उदाहरणार्थ, अमरीका मे ब्यूरो आफ दी बजट । (स) कार्य को पूरा करने के लिए किस तरीके अथवा ढग का प्रयोग होगा । (द) बजट का रूप । बजट तीन भागो मे विभाजित होना चाहिए—(क) बजट भाषण, (ख) सामान्य वित्तीय सूचनायें, (ग) विनियोगो (appropriations) के अनुमान । (2) बजट पर विधायिका की कार्यवाही—अमरीका ब्रिटेन और भारत की पद्धति को लेकर इसके सम्बन्ध मे सविस्तार आगामी अध्यायो मे विवेचन दिया गया है । (3) बजट की क्रियान्विति—विनियोग एव आय कानूनो को कार्यरूप देना इसके विस्तृत वर्णन और मुख्य मुख्य देशो के सन्दर्भो के लिए आगामी पृष्ठो का अवलोकन सहायक होगा ।

विधायी नियन्त्रण के साधन रूप मे—बजट वास्तव मे प्रशासन पर विधायिका के नियन्त्रण का सबसे सरल एव महत्त्वपूर्ण साधन है । बजट के माध्यम से जिसे कि कार्यकारिणी प्रस्तुत करती है, विधायिका विस्तृत रूप मे नियन्त्रण, परिवीक्षण एव निदेशन की शक्तियो एव अधिकारो का प्रयोग प्रशासन की विभिन्न क्रियाओ को देखने मे करती है । यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया गया है कि विधायिका की स्वीकृति के बिना न तो कोई नया कर लगाया जा सकता है और न कर मे किसी भी प्रकार का परिवर्तन किया जा सकता है, यहाँ तक कि धन की छोटी से छोटी मात्रा भी विधायिका की स्वीकृति के बिना खर्च नही की जा सकती । बजट पर बहस के समय विधायिका के सदस्य सभी प्रकार के सामान्य और विशेष प्रश्नो को उठाते है और अपने मतभेद के साथ साथ शिकायतें भी प्रकट करते हैं । ससदात्मक प्रणाली वाले देशो मे बजट पर निम्न सदन के बहुमत का समर्थन प्राप्त करने मे असमर्थ रहता है तो उसे त्याग पत्र देना पडता है ।

कार्यपालिका प्रबन्ध के साधन रूप मे—ब्रिटेन तथा अन्य ससदात्मक पद्धति वाले देशो मे बजट वास्तव मे कार्यपालिका प्रबन्ध का अति महत्त्वपूर्ण साधन है । वस्तुत भिन्न भिन्न विभागो की सभी क्रियायें बजट के माध्यम मे रहती हैं तथा एक ही योजना एव सूत्र मे आबद्ध रहती हैं । मन्त्रिमण्डल सर्वोच्च कार्यपालिका की शक्ति के रूप मे प्रशासन के सभी विभागो पर धन प्रदान

आरम्भ होता है। जबकि वित्तीय प्रस्तावों को अंतिम रूप में जुलाई के अंत तक पास किया जाता है। जिससे इस काल में प्रशासन जारी रहे अर्थात् विभिन्न विभागों को अपने कार्यों के लिए धन उपलब्ध हो सके, अनुमानों का काफी बडा भाग अप्रैल से पहले ही पेश कर दिया जाता है और उस पर स्वीकृति ले ली जाती है।

कर-सम्बन्धी प्रस्ताव—अप्रैल में वित्त मंत्री सदन की मार्गोपाय समिति में सरकार का वार्षिक बजट पेश करता है। वास्तव में यह वित्त मन्त्री का भाषण होता है, जिसमें वित्तीय स्थिति और करों में परिवर्तनों सम्बन्धी प्रस्तावों का विवरण होता है। बजट पर वाद विवाद कई दिन तक चलता है और इस बीच में सरकारी-नीति व उसके सम्पूर्ण वित्तीय कार्यक्रम पर सबसे अधिक पूर्ण और व्यापक वाद विवाद का अवसर मिलता है। वित्तीय प्रस्तावों पर मार्गोपाय समिति में संकल्पों के रूप में विचार किया जाता है। कुछ प्रस्तावों पर जिनका सम्बन्ध आय-कर, आयात निर्यात शुल्क, उत्पादन शुल्क आदि से होता है, शीघ्र ही विचार किया जाता है और शेष पर आने वाले समय में किन्तु अगस्त से पूर्व ही। ये संकल्प पास हो जाने पर समिति की रिपोर्ट रूप में सदन के सामने रखे जाते हैं और वहाँ उन पर फिर एक बार वाद विवाद होता है तथा उन्हें वित्त विधेयक में सम्मिलित किया जाता है। कॉमन सभा की दो प्रमुख वित्तीय समितियाँ निम्नलिखित हैं—

अनुमानों पर प्रवर समिति—इस समिति में कॉमन सभा के 26 सदस्य होते हैं। समिति में सदस्यों का प्रतिनिधित्व प्रमुख दलों की सदन में संख्या के अनुपात में होता है, परन्तु समिति के कार्य दलीय दृष्टिकोण से नहीं किये जाते। समिति का कार्य सरकारी नीति पर विचार अथवा वाद विवाद करना नहीं है। इसका सम्बन्ध तो प्रशासन व्यय में बचत के लिए सुझाव देना है। यह समिति उप समितियों द्वारा कार्य करती है, प्रत्येक उप समिति का कई कई अनुमानों की परीक्षा करनी होती है। ये उप समितियाँ व्यय के कारणों की परीक्षा करती है, विभागों के कार्यों की जाँच करती है और यह देखती हैं कि कहीं अकुशल प्रशासन या बुद्धिहीन व्यय तो नहीं हुआ।

सार्वजनिक लेखा समिति—इस समिति में केवल 15 सदस्य होते है, जिन्हें प्रतिवर्ष नियुक्त किया जाता है। इस समिति का सभापति विरोधी पक्ष का कोई ज्येष्ठ सदस्य होता है। यह समिति विभागों के लेखों की जाँच करती है। यह देखती है कि ये सही तरीके से रखे गये है और यह पता लगाने का प्रयत्न करती है कि धन पार्लियामेन्ट के इरादे के अनुसार व्यय किया गया है। इसे यह देखने की भी विवेकीय शक्ति मिली है कि कोई अपव्यय नहीं हुआ है और यह भी कि ठेके आदि ठीक तरीके से किये गये हैं। यह गवाहों को बुलाकर गवाही ले सकती है और साधारणतया विभागों के स्थायी अध्यक्ष इस समिति के सामने लेखा अधिकारियों के रूप में आते है।

ब्रिटिश और अमरीकी पद्धतियों की तुलना—ब्रिटिश पद्धति का सबसे बडा गुण यह है कि इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण वित्तीय कार्यक्रम एक इकाई के रूप मे तैयार किया जाता है और यह कार्य एक ही प्राधिकरण अर्थात् केबिनेट द्वारा किया जाता है। संयुक्त राज्य अमरीका में 1921 के 'बजट व एकाउन्टिंग कानून' के अन्तर्गत जब यह कार्य बजट के निदेशक द्वारा किया जाने लगा है, परन्तु इस योजना के तैयार हो जाने पर कांग्रेस के दोनों सदन इसमें चाहे जैसे परिवर्तन कर सकते है। दूसरे, जबकि ब्रिटेन में मन्त्रिगण वित्तीय प्रस्तावों का स्पष्टीकरण करते है तथा उनके पक्ष में तर्क देते हैं, कार्यपालिका को अमरीका में सन्देश भेजने तथा सम्मेलनों के अतिरिक्त इस प्रकार के अवसर नहीं मिलते। इस सम्बन्ध मे एक ही प्रश्न महत्त्वपूर्ण है—क्या वित्त पर संसदीय नियन्त्रण प्रभावी है? इस प्रश्न के उत्तर पर ही वित्तीय पद्धति की अच्छाई और बुराई निर्भर करती है। सिद्धान्त रूप में पार्लियामेन्ट का आय और व्यय दोनों पर ही नियन्त्रण है, किन्तु

म श्री द्वारा प्रारम्भ किये जा सकते है। इन मामलो मे लार्ड सभा की शक्तियाँ बहुत ही प्रतिबन्धित हैं। अनुमानो पर तो उच्च सदन म वाद विवाद भी नही हो सकता और धन विधेयको के पास होने म केवल एक माह की देरी की जा सकती है।

व्यय के मुख्य अनुमान—कुछ व्यय की मदे कानून द्वारा नियत हैं और उनम तभी परिवतन हो सकता है जब सम्बन्धित कानून म परिवतन हो। इस श्रेणी म ये व्यय आते हैं—शाही परिवार के लिए धन, राष्ट्रीय ऋण पर सूद, न्यायाधीशो, नियन्त्रक व महालेखा परीक्षक और विरोधी पक्ष के नेता आदि के वेतन। ये संचित निधि पर भारित व्यय हैं अर्थात् इन पर प्रतिवर्ष पार्लियामेन्ट की स्वीकृति प्राप्त नही की जाती। अन्य सरकारी विभागों पर होने वाले व्यय के अनुमानो के विवरण प्रतिवर्ष तैयार किये जाते है, जिनमे आगामी वर्ष के लिए उनकी आवश्यकताओ को दिया जाता है और यह भी कि कितनी धनराशि किन प्रयोजनो के लिए रखी जानी है। ये अनुमान विभागो द्वारा ट्रेजरी की सहायता से तैयार किये जाते है और इन्हे [illegible] समूहो मे विभाजित किया जाता है—सेना, नभ-सेना, नौ सेना, नागरिक अनुमान और [illegible] विभाग। नागरिक अनुमानो को विभिन्न विभागो के अनुसार कई उप विभागो म बाँटा जा सकता है, जैसे केन्द्रीय शासन और वित्त, राष्ट्रमण्डल और विदेश, गृह विभाग, कानून और न्याय, शिक्षा व ब्राडकास्टिंग, स्थानीय शासन, गृह निर्माण, स्वास्थ्य और श्रम, व्यापार [illegible] और उद्योग आदि। इनमे से प्रत्येक उप विभाग को कई 'वोटो' (Votes) मे बाँटा जाता है और प्रत्येक 'वोट' उप शीर्षको म बँटी रहती है।

इन अनुमानो को पार्लियामेन्ट के सामने प्रत्येक सत्र के आरम्भ में प्रस्तुत किया जाता है। सैनिक अनुमानो को उनके मन्त्री पेश करते हैं और नागरिक अनुमान ट्रेजरी के वित्तीय सेक्रेटरी द्वारा पेश किये जाते है। ये सभी अनुमान सम्पूर्ण सदन की सम्भरण समिति में पेश किये जाते हैं और यह समिति अनुमानो पर विभिन्न 'वोटों' म विचार करती है। आवश्यक इस कार्य के लिए लगभग 20 दिन (supply days) नियत हैं, साधारणतया [illegible] और [illegible] के बीच [illegible] बृहस्पतिवार। प्रथा के अनुसार वाद विवाद के लिए विषयों का [illegible] विरोधी पक्ष द्वारा [illegible] जाती है परन्तु चूँकि सभी अनुमानो पर वाद विवाद के लिए [illegible] समय [illegible] है, अतएव उनम से बहुतो पर वाद विवाद भी नहीं हो [illegible]। [illegible] दिन सम्भरण समिति के विभिन्न वोटो के सम्बन्ध मे पास किये [illegible] सदन के सामने [illegible] होता है और सदन को उन्हे एक ही दिन म स्वीकार [illegible] है। अनुमानों [illegible] स्वीकृति ही काफी नहीं होती। संचित निधि [illegible] के लिए [illegible] लेनी पड़ती है। विभिन्न प्रयोजनो के लिए [illegible] के प्रस्ताव [illegible], जो आवश्यक धन निकालने की भी [illegible] सदन [illegible] उन्हे विनियोग कानून म सम्मिलित किया [illegible] इस कानून द्वारा विभिन्न 'वोटों' के लिए [illegible] किया जाता है।

होता है। व्यय के वार्षिक अनुमान लोकसभा के सामने अनुदानों के लिए माँगों के रूप में रखे जाते हैं। माँगें साधारणतया मन्त्रालयवार तैयार की जाती हैं और प्रत्येक माँग के अन्तर्गत व्यय सम्बन्धी विस्तार की बातें विभिन्न शीर्षों के अधीन रखी जाती हैं जैसे 'अधिकारियों व कर्मचारियों के वेतन', 'अन्य व्यय', 'निर्माण कार्य' आदि।

व्यय के अनुमान दो भागों में बँटे रहते हैं—प्रथम भाग में नियत या स्थायी व्यय दिखाये जाते हैं और दूसरे में नये अथवा प्रस्तावित व्यय दिये जाते हैं। राजकीय उद्योगों के लिए आवश्यक धनराशियों को कम्पनी का हिस्सा पूँजी अंश (share capital) के रूप में दिखाया जाता है और कम्पनियाँ अपना व्यय का स्वयं विनियमित करती हैं। प्रशासकीय मन्त्रालय अथवा अधीन कार्यालयों की माँगों में आवश्यक कटौती करता है और उन्हें पास करके वित्त मन्त्रालय को भेजता है। वित्त मन्त्रालय सभी नये प्रस्तावों अथवा प्रत्येक बढ़े हुए व्यय का बड़े ध्यान से परीक्षण करता है। इसके व्यय सम्बन्धी कुछ प्रभाग (divisions) विभिन्न मन्त्रालयों अथवा उनके समूहों से सम्बन्धित हैं और सम्बन्धित प्रभाग उन मन्त्रालयों के प्रस्तावों की व्याख्या और जाँच करते हैं। प्रत्येक मन्त्रालय के साथ एक वित्तीय परामर्शदाता लगा हुआ है और चूँकि वह वित्त मन्त्रालय का प्रवर अधिकारी होता है इसलिए वह सम्बन्धित प्रशासकीय मन्त्रालय के अति निकट सम्पर्क में रहकर काम करता है। नियन्त्रक एवं महालेखा परीक्षक भी, भारत सरकार का महालेखा अधिकारी होने के रूप में बजट अनुमानों के बारे में महत्वपूर्ण भाग लेता है। उसके नीचे केन्द्रीय राजस्व के लिए एक महालेखापाल (Accountant General) होता है और ऐसा ही प्रत्येक राज्य के लिए भी एक महालेखाकार होता है। वर्ष के लिए राजस्व अनुमानों की तैयारी वित्त मन्त्रालय का ही उत्तरदायित्व है। तथ्य तो यह है कि महत्वपूर्ण राजस्व एकत्रित करने वाले अभिकरण वित्त मन्त्रालय में ही स्थित हैं। उनमें आयकर विभाग, केन्द्रीय उत्पादन शुल्क विभाग और आयात निर्यात शुल्क विभाग आते हैं। वार्षिक वित्तीय विवरण अनुदानों के लिए माँगें और कर सम्बन्धी विधेयक लोकसभा के सामने वित्त मन्त्री द्वारा उसी दिन रखे जाते हैं जिस दिन कि वह बजट प्रस्तुत करता है और बजट भाषण देता है।

धन विधेयकों के सम्बन्ध में विधान प्रक्रिया—धन विधेयक राज्य सभा में पेश नहीं किया जा सकता। कोई भी ऐसा विधेयक लोकसभा में पास हो जाने पर राज्य सभा में उसकी सिफारिश के लिए भेजा जाता है। राज्य सभा को ऐसा विधेयक अपनी सिफारिशों के साथ चौदह दिन के भीतर वापस भेज देना चाहिए। यदि इस अवधि के भीतर राज्य सभा ऐसा नहीं करती तो वह विधेयक लोकसभा द्वारा पास हुए रूप में ही दोनों सदनों द्वारा पास हुआ समझा जाता है। परन्तु यदि राज्य सभा इस बीच में विधेयक को अपनी सिफारिशों सहित लोकसभा को लौटा देती है तो उन सिफारिशों को स्वीकार या अस्वीकार करना लोकसभा की इच्छा पर निर्भर करता है। इसके बाद वह विधेयक दोनों सदनों द्वारा पास समझा जाता है और उसे राष्ट्रपति की अनुमति के लिए भेजा जाता है, जो उसे देनी ही होती है। राज्य सभा को उसमें कोई संशोधन करने का भी अधिकार नहीं, वह तो केवल उसके सम्बन्ध में कुछ सिफारिशें ही कर सकती है, जिनको मानना लोकसभा की इच्छा पर निर्भर है। इस सम्बन्ध में राष्ट्रपति की शक्ति भी नहीं के बराबर है। अतएव इन विधेयकों पर लोकसभा के निर्णय एक प्रकार से अन्तिम ही होते हैं।

वार्षिक वित्तीय विवरण—प्रत्येक वर्ष राष्ट्रपति संसद में संघ सरकार का आय व्यय सम्बन्धी विवरण अर्थात् आय व्ययक (Budget) रखवाता है। इसमें वर्ष की अनुमानित आय व्यय का विवरण होता है। अनुमानित व्यय में दो प्रकार के व्यय की रकम अलग अलग दिखाई जाती हैं—व्यय की वे रकम जो संचित निधि पर भारित होती है तथा अन्य व्यय की रकम। पहली श्रेणी में अग्रलिखित खर्चे सम्मिलित होते हैं (1) राष्ट्रपति का वेतन, उसके भत्ते तथा उसके

जसा इस विषय क आरम्भ म ही बताया जा चुका है पार्लियामेन्ट (अर्थात् कॉमन सभा) की वास्तविक शक्तियाँ केबिनेट के हाथा म आ गयी हैं और पार्लियामन्ट तो क्वल केबिनेट द्वारा पेश किये गय वित्तीय प्रस्तावो—व्यय क अनुमानो तथा कर सम्ब धी प्रस्तावा पर वाद विवाद करती है तथा सरकार की आलोचना करती है। प्रथा ऐसी पड गई है कि पार्लियामेन्ट उनमे कोई भी परिवतन नही करा सक्ती, जब तक कि केबिनट उसके लिए सहमत न हो जाये। इससे यह स्पष्ट निष्कष निकलता है कि पार्लियामेन्ट का नियन्त्रण केवल औपचारिक है, वास्तविक नही है।

इस बारे में ऑग न लिखा है यदि हम वित्तीय स्थिति का निकट स विश्लेषण करें तो ये कठिनाइयाँ सामन आती हैं—(1) वित्त क सम्बन्ध म पार्लियामन्ट को सूचना दी जाती है, यद्यपि वह आकार म बहुत बडी होती है, वास्तव म बहुत ही सीमित और अपर्याप्त होती है। (2) कॉमन सभा म बजट सम्बन्धी मामला पर विचार के लिए मिलन वाला समय, विशष रूप से व्यय के सम्बन्ध म बहुत ही अपर्याप्त होता है। इसी कारण से प्रतिवष करोडो रुपयो की 'वोटें' बिना वाद विवाद के पास हो जाती हैं। (3) वित्तीय मामला पर विचार के लिए जो भी समय मिलता है, उसका प्रयोग वास्तव म वित्तीय प्रस्तावा के गुण और दोषा पर विचार करन के लिए नही होता वरन् सरकार की नीति की आलोचना पर होता है। य सभी प्रस्ताव सरकार द्वारा पश किय जाते है और उसके समर्थको का यह कत्तव्य समझा जाता है कि व उन सभी का समथन करें। दूसरी ओर विरोधी पक्ष इन प्रस्तावा का इस दृष्टि स दखता है कि उस शिकायतो को रखन और सरकार की राजनीतिक नीति की आलोचना का अवसर मिलता है। परिणामस्वरूप यदि किसी 'वोट' म कमी या अस्वीकार करने का प्रस्ताव आता है तो उस सरकार म विश्वास का प्रश्न बना लिया जाता है और वाद विवाद इसी आधार पर चलता है। अतएव वित्तीय प्रस्तावा की निष्पक्ष, सीधी और रचनात्मक आलोचना बहुत ही कम होती है। फल यह होता है कि किसी एक-दो अवसरा का छोडकर ससदीय नियन्त्रण केवल औपचारिक रहता है। कुछ प्रेक्षकों ने सुझाव दिया है कि वित्तीय समस्याओ पर विचार करने के लिए कई समितिया होनी चाहिएँ। इसके अतिरिक्त सदस्यो म वित्तीय उत्तरदायित्व को कुछ मात्रा म प्रोत्साहित करने के लिए यह अच्छा हो कि प्रत्यक व्यय सम्बन्धी प्रस्ताव के साथ एक वक्तव्य इस बारे मे भी लगा हो कि उसका कर पर क्या प्रभाव पडेगा।[1]

3 भारत मे वित्तीय प्रक्रिया

राष्ट्रपति को प्रत्येक वित्तीय वष के बारे म ससद के दोनो सदनो के सामने भारत सरकार के अनुमानित आय और व्यय का विवरण रखना होता है। इसी को बजट कहते ह, तकनीकी भाषा म, यही वार्षिक वित्तीय विवरण होता है। सम्पूण बजट प्रक्रिया को दो भागो म बाँट सकते हैं—पहला, अनुमानो का तयार किया जाना, और दूसरा, विधानमण्डल म बजट। हम यहाँ पर इन्ही दो भागो का ही अति सक्षिप्त विवचन दगे। अनुमानो की तैयारी म भाग लेन वाले चार अभिकरण ये है—(1) वित्त मन्त्रालय, (2) प्रशासकीय मन्त्रालय, (3) नियोजन आयोग, और (4) नियन्त्रक एव महालेखा परीक्षक। अनुमानो की तयारी पूवगामी वष के जुलाई या अगस्त माह मे आरम्भ हो जाती है जब कि वित्त मन्त्रालय प्रशासकीय मन्त्रालयो और विभागो के अध्यक्षो को अपनी अपनी आवश्यकताओ का अनुमान लगान क लिए फाम (skeleton form) भेजता है। विभागीय अधिकारी आगामी वित्तीय वष के लिए अनुमान को चालू वष क सशोधित अनुमानो के आधार पर तयार करते है और उनका काय चालू वष के अक्तूबर माह तक पूण

[1] Ogg F A *English Government and Politics* pp 440–42

मे ससद के सामने पेश किया जाता है। यही विधेयक वास्तव म आय विधेयक होता है। जबकि विनियाग अधिनियम म व्यय सम्ब धी रकमा को सम्मिलित किया जाता है, सभी नये कर सम्बन्धी प्रस्तावो को वित्तीय विधेयक म सामूहिक रूप म ससद के विचाराथ रखा जाता है। उसक पास होने पर ही नये कर सम्ब धी प्रस्ताव प्रभावी होते हैं। नय कर सम्बन्धी प्रस्ताव वप म और किसी समय भी लाये जा सकते हैं, उन्ह भी वित्तीय विधेयक के रूप म पास किय जाने पर लागू किया जाता है। उसके पास होने पर नय कर आरोपित (impose) तथा सग्रहित (collect) किये जाते है।

भारतीय बजट प्रक्रिया की ब्रिटिश प्रक्रिया से तुलना—यह एक सुविदित तथ्य है कि हमारे देश की बजट प्रक्रिया, शासन के रूप और प्रशासन के अनक पहलुओ की भांति, बहुत कुछ ब्रिटेन की बजट प्रक्रिया के समान है। यह ठीक ही कहा गया है कि 'वित्त म भारतीय ससद की प्रक्रिया ब्रिटिश नमूने का दोष-रहित रूप है।' तीन मूलभूत सिद्धान्त—धन विधेयको के सम्बन्ध मे प्रक्रिया, वित्तीय पहल का नियम और भारित तथा मतदान द्वारा स्वीकृत मदा म अन्तर ब्रिटन के दायदान (legacies) है। ब्रिटेन मे कामन सभा और भारत म लोकसभा को अनुमानो पर विचार करने और अनुदाना की मांग को स्वीकृत, अस्वीकृत अथवा कम करन की पूण शक्तियाँ प्राप्त हैं। दोनो देशो मे यह व्यवस्था है कि यदि किसी विधेयक के विषय म यह प्रश्न उठे कि वह धन विधेयक है या नही तो अध्यक्ष का निणय अन्तिम होता है। दोनो ही देशो म सदना को वित्तीय मामला म बहुत कम शक्तियाँ प्राप्त हैं।

परन्तु उपयुक्त समानताओ के बावजूद दानो देशा की बजट प्रक्रियाओ के बीच अन्तर की मुख्य बातें अग्रलिखित है (1) ब्रिटेन म आगामी वप के लिए मुख्य अनुमानो को पूर्ति समिति मे पश किया जाता है और वित्त मन्त्री द्वारा बजट मार्गोपाय समिति म प्रस्तुत किया जाता है। भारत म इस प्रकार की सम्पूण सदन की समितिया ही नही हैं। (2) भारत म बजट ससद के सामने पश होता है और उस पर दो भागो मे विचार किया जाता है—प्रथम का सम्बन्ध रेलो से है और दूसर का असनिक व प्रतिरक्षा विभागा से। (3) भारतीय पद्धति मे ब्रिटेन की तरह धन सकल्पो के पास करने की व्यवस्था नही है। (4) भारत मे सचित निधि विधेयक की व्यवस्था भी नही है, केवल विनियोग अधिनियम के पास होने पर ही सचित निधि से धन निकालने का अधिकार मिल जाता है। (5) ब्रिटेन मे वित्त विधेयक को कामन सभा म किसी भी अन्य विधेयक की भांति पास किया जाता है। भारत मे जब अनुदाना की मागा पर मतदान हो चुकता है और विनियोग अधिनियम पास हो जाता है, तब सदन वित्त विधेयक पर विचार करता है। पहले उस पर दो दिन तक व्यापक वाद विवाद होता है। उसके बाद विधेयक को प्रवर समिति को सौंप दिया जाता है, जो कॉमन सभा की एक स्थायी समिति के समान है। यह समिति विधेयक पर विस्तारपूर्वक विचार करती है और अपनी रिपोट लोकसभा को देती है। लोकसभा म उस पर दो दिन तक विचार होता है और वाद विवाद तीन भागो मे बँटता है—समिति की रिपोट पर साधारण वाद विवाद, विधेयक पर खण्डवार (clause by clause) विचार और तीसरा वाचन। अध्यक्ष को शक्ति प्राप्त है कि वह विधेयक के बारे मे सभी ऐसी बाता को जिन पर विचार हाना रह गया हो, दो दिन के बाद सदन क सामन अन्तिम मतदान के लिए रख दे।

4 सयुक्त राज्य अमरीका मे वित्तीय प्रक्रिया

बजट निर्माण—बजट को तैयार करना और उसे प्रस्तुत करना अब राष्ट्रपति का उत्तरदायित्व है। सयुक्त राज्य का बजट आगामी वप म सरकार क लिए राष्ट्रपति के कायक्रम की वित्तीय अभिव्यक्ति है। कानून क अनुसार यह आवश्यक है कि बजट प्रतिवप कांग्रेस का सत्र

पद से सम्बन्ध रखने वाले अन्य खर्चे, (2) ससद के दोनो सदनो के अध्यक्ष व उपाध्यक्षो के वेतन और भत्ते, (3) ऋण चुकाने के सम्बन्ध म व्यवस्था, (4) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो के वेतन, उनके भत्ते व पेंशन इत्यादि (5) कोई भी वह व्यय जिसे सविधान अथवा ससद कानून द्वारा ऐसा घोषित कर दे यथा सर्वोच्च न्यायालय के सगठन का पूरा व्यय, रियासतो के राजाओ को दी जाने वाली निजी थलिया (privy purse) और सघीय लोक सेवा आयोग का पूरा व्यय। इस श्रेणी मे सम्मिलित खर्चों के ऊपर सदन मे मतदान नही होता, किन्तु उस पर वाद विवाद हो सकता है। अनुदानो की माग व अन्य खर्चों की अनुमानित मागे अनुदानो की मागो के रूप म लोकसभा म रखी जाती है। लोकसभा को इनमे से किसी भी माग को घटाने या अस्वीकार करने की शक्ति प्राप्त है किन्तु उसम वृद्धि नही की जा सकती। यह व्यवस्था ब्रिटेन म प्रचलित प्रथा के अनुकूल है। अनुदान की माग केवल राष्ट्रपति की सिफारिश पर ही लोकसभा मे रखी जा सकती है।

बजट पर साधारण वाद विवाद—वार्षिक वित्त विवरण (बजट) पेश किये जाने के कुछ ही समय बाद ससद के दोनो सदनो मे आय व्यय के प्रस्तावो पर साधारण वाद विवाद होता है। इसके लिए दो-तीन दिन दिये जाते है। इन दिनो वाद विवाद आय सम्बन्धी प्रस्तावो के मूल सिद्धान्तो अथवा उनकी नीति पर होता है। इस दौरान मे आय व्यय सम्बन्धी विस्तार की बातो पर विचार नही होता और न किसी प्रकार का कटौती प्रस्ताव पेश किया जा सकता है। यदि कोई सदस्य किसी माग को अपर्याप्त अथवा आवश्यकता से अधिक समझता है तो वह उस पर वाद विवाद करने के उद्देश्य से ही ऐसा प्रस्ताव रखता है। साधारणतया ऐसे प्रस्तावो पर वाद विवाद के उपरान्त मतदान नही होता क्योकि यदि स्वीकार भी कर लिया जाय उससे माग पर विशेष प्रभाव नही पडता। वास्तव मे कटौती प्रस्तावो द्वारा विरोधी सदस्य उस माग से सम्बन्धित विभाग के प्रशासन की कमियो को खोलकर तीव्र आलोचना करते है। परन्तु कभी कभी ऐसे प्रस्ताव बडी सख्या म पेश किये जाते है, तब अध्यक्ष उनमे से कुछ को वाद विवाद के लिए चुनता है और शेष पर वाद विवाद नही किया जाता। जब तक लोकसभा म सभी मागो पर मतदान हो जाता है तब उन मागो को सचित निधि पर भारित व्यय की राशियो सहित एक विधेयक के रूप मे सदन के सामने पेश किया जाता है। *यही विधेयक विनियोग विधेयक अर्थात् व्यय विधेयक* कहलाता है।

अन्य अनुदान—प्रतिवर्ष जो साधारण अनुदान होते है उनके अतिरिक्त आवश्यकता पडने पर राष्ट्रपति पूरक अथवा अधिक अनुदान की मागे भी सामने रखवाता है। उनके सम्बन्ध म भी इसी प्रक्रिया का पालन किया जाता है। इस प्रकार की लोकसभा को पेशगी अनुदान और अपवाद अनुदान देने का भी अधिकार है। इसमे लेखानुदान महत्त्वपूर्ण है जिसे ब्रिटेन की प्रक्रिया से अपनाया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि उपर्युक्त अनुदान की माग तथा आय व्यय के ऊपर ससद द्वारा विचार पूर्ण होने से पूर्व ही सरकार के आवश्यक खर्चों के हेतु वित्तीय वर्ष के प्रारम्भिक कुछ काल के लिए एक बडी धनराशि पेशगी अनुदान के रूप मे स्वीकार कर दी जाती है। फलस्वरूप आय व्यय प्रक्रिया को 31 मार्च से पूर्व पूर्ण करना आवश्यक नही रहा।

करों की स्वीकृति और वित्त विधेयक—विनियोग-अधिनियम के पास होने के बाद बजट के दूसरे भाग अर्थात् आय अथवा कर सम्बन्धी प्रस्तावो पर सदन विचार करता है। कुछ कर स्थायी होते है जिन पर ससद प्रति वर्ष विचार नही करती। जिन कानूनो द्वारा कर लगाये जाते है उनके अन्तर्गत कार्यपालिका उनकी दरो को घटाने अथवा बढाने सम्बन्धी कार्यवाही करती है। अन्य करो जैसे आयकर, आयात निर्यात कर, उत्पादन शुल्क की दरें प्रतिवर्ष ससद द्वारा ही निर्धारित की जाती है। अगले वर्ष के लिए सभी कर सम्बन्धी प्रस्तावो को एक विधेयक के रूप

तो उसके ऊपर उसी प्रकार की कायवाही होती है जसी कि अन्य किसी विधेयक पर । नियमित विनियोग विधेयको पर विह्त वाचन तथा वाद विवाद सम्पूण सदन की समिति मे होते हैं। सदन को अधिकार है कि वह अपने विवेक मे किसी भी मद को निकाल दे, नया मद जोड दे, और किसी मे कमी कर दे या वद्धि कर दे। सदन द्वारा पारित हो जाने पर कर सम्बन्धी तथा विनियोग विधेयक सीनेट म जाते हैं। वहाँ पर भी उन्हे वित्त तथा विनियोग समितियो के सुपुद कर दिया जाता है। इनमे से भी प्रत्येक समिति उप समिति द्वारा काय करती है। उप समितिया म विचार हो जाने के बाद विधेयको पर सम्पूण समितिया मे विचार होता है। सीनेट भी विचार करत समय विधेयको म परिवतन कर सकती है और करती है। उसके बाद विधेयक सदन को उसकी सम्मति के लिए भेजे जाते है और यदि सदन सीनेट के द्वारा किय गये परिवतना से सहमत न हो तो वे सम्मेलन समिति को सुपुद किये जाते है, जिसम सीनेट व सदन के छँटे हुए सदस्य होते हैं। इस समिति का काय है कि वह विभिन्न मदा म ऐसे परिवतन करे और विधेयक को ऐसा रूप दे कि वह दोनो सदनो द्वारा स्वीकृत हो जाये। जब कोई विनियोग विधेयक काग्रेस द्वारा पारित कर दिया जाता है, राष्ट्रपति के सामने उसे स्वीकार करने के सिवाय कोई दूसरा विकल्प नही होता। वह सम्पूण विधेयक पर प्रतिषेध (veto) के अधिकार का प्रयोग कर सकता है, किन्तु वह इसम किसी एक या दो मदो के विरुद्ध प्रतिषेध का प्रयोग नही कर सकता। जव नये वित्तीय वप के लिए कुछ माह वीत जाते है तो राष्ट्रपति काग्रेस को 'पूरक विनियोग को स्वीकार करने के लिए कह सकता है।

मे सफील्ड और माक्स के अनुसार वतमान पद्धति के दोष ये हैं—(1) साधारणतया विनियोग समिति (प्रत्येक सदन मे) बिना किसी प्रकार के प्रारम्भिक तीक्ष्ण विश्लेषण के ही सम्पूण बजट के खण्डो को विभिन्न उप समितियो मे बाँट देती है, और प्रत्येक उप समिति स्वतन्त्र रूप से विचार करती है, जिसका परिणाम यह होता है कि काग्रेस सघीय वित्त के अधिक महत्त्वपूण प्रश्नो पर पर्याप्त ध्यान नही दे पाती। (2) कायपालिका बजट ,पर खण्डित दृष्टिकोण से विचार होने के कारण एक ओर उप समितियो मे और दूसरी ओर उनसे सम्बन्धित विभागो तथा दबाव समूहो म एक प्रकार का गठबन्धन हो जाता है। (3) ऐसा ही महत्त्वपूण परिणाम कर सम्बन्धी और विनियोग समितियो के बीच सस्थागत पृथक्करण का है।[1] मुनरो के मतानुसार—'अभी तक राष्ट्रीय बजट पद्धति सभी बातो मे वैसी नही है जैसी कि यह होनी चाहिए, परन्तु इसकी स्थापना ने आगे की दिशा म एक अति महत्त्वपूण पग उठाया। फिर भी सयुक्त राज्य अमरीका मे राष्ट्रीय व्यय पर नियन्त्रण अभी तक कठोर नही हैं। बजट ब्यूरो के निदेशक को विनियोगो की सिफारिश करने मे पहल का अधिकार दिया गया है। परन्तु न तो उसे ही और न राष्ट्रपति को पहल करने का एकमात्र (पूण) अधिकार मिला है। काग्रेस यह नही मानती कि राष्ट्रीय बजट पद्धति ने उसके अन्तिम प्राधिकार पर विनियोगो के प्रस्तावित करने या उन्हे स्वीकार करने म कोई सीमा लगाई है। परिणाम यह है कि पूण उत्तरदायित्व न तो कायपालिका पर है और न विधायिका पर ही। यह दोना के बीच विभाजित है। राष्ट्रपति व्यय म बचत का आश्वासन दे सकता है, परन्तु जब तक उसे काग्रेस का सहयोग नही मिलता वह अपने आश्वासन को पूरा नही कर सकता।'[2]

5 फ्रास मे वित्तीय प्रक्रिया

बजट और वित्त—बजट दो भागो म बँटा होता है—आय (revenues) और व्यय

[1] Marx M (ed) *Elements of Public Administration* pp 534-35
[2] Munro W B *The Government of the United States* p 391

प्रारम्भ होने के पन्द्रह दिन के भीतर भेज दिया जाये। 1921 के कानून म व्यवस्था है कि बजट साराश मे तथा विस्तारपूर्वक अग्रलिखित बातो को सम्मिलित करेगा (अ) व्यय के अनुमान और सरकार के लिए आवश्यक विनियोग, (ब) आय के अनुमान, और (स) अन्य अनेक वित्तीय विवरण आदि। राष्ट्रपति की ओर से बजट ब्यूरो द्वारा बनाये गये बजट म दो भाग होते हैं। पहले भाग म राष्ट्रपति का स देश और ट्रेजरी की दशा दिखाने वाले सामान्य वित्तीय विवरण, गत वप की आय और व्यय तथा चालू वप की आय और व्यय सम्बन्धी विवरण होते है। दूसरे भाग म सरकार की विभिन्न सगठन इकाइयो के विस्तृत व्यय के अनुमान दिये रहते है।

इस काय म प्रथम पग राष्ट्रपति द्वारा अपनी वित्तीय नीति का अगीकार किया जाता है। दूसरा पग ब्यूरो के निदेशक द्वारा आय और व्यय के अनुमानो का निर्धारण है। इस बारे मे तैयारियाँ बजट के प्रभावी होने के लगभग एक वप पूव से आरम्भ हो जाती है। ग्रीष्म म ब्यूरो विभिन्न व्यय करने वाली सेवाओ से आगामी वप के लिए व्यय के अनुमान तयार करने की प्राथना करती है और ट्रेजरी से आय के अनुमानो तथा राष्ट्रीय ऋण पर सूद आदि के विषय म सूचना देने की प्राथना की जाती है। उपर्युक्त अभिकरणो द्वारा इन अनुमानो के बनने के बाद, वे शरद् ऋतु के आरम्भ म ही ब्यूरो के पास भेज दिये जाते है और वे इसके द्वारा बजट बनाने के काय का आधार बनते है। तीसरा पग ब्यूरो द्वारा उठाया जाता है, जो विभिन्न मदो के बारे म विचार करने के लिए सम्मेलनो व सुनवाइयो (hearings) की व्यवस्था करती है। ब्यूरो को प्राधिकार प्राप्त है कि वह विभिन्न विभागो के अनुमानो को एकत्रित करे, सशोधित करे और उनमे कमी या वद्धि करे। अन्त मे, विभागो की स्वीकृत प्राथनाएँ, आय के अनुमान और घाटे के सम्बन्ध मे की गयी सिफारिशे बजट मे एकत्रित की जाती हैं और राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जाता है। उसके बाद बजट आलेख को सरकारी मुद्रणालय म मुद्रित किया जाता है, जिससे कि उसे राष्ट्रपति द्वारा जनवरी के प्रथम सप्ताह मे काग्रेस के पास भेजा जा सके।

राष्ट्रपति का बजट सन्देश प्रमुख सन्देशो मे से एक होता है, इसम सम्पूण बजट का साराश दिया जाता है, बजट को राष्ट्र की आवश्यकताओ से सम्बन्धित किया जाता है, विनियोग और कर सम्बन्धी प्राथनाओ के पीछे के तर्कों का स्पष्टीकरण किया जाता है और इसमे बजट के साथ भेजे गये विधायी प्रस्तावो का साराश भी दिया जाता है। स देश प्रत्येक वार्षिक सत्र के आरम्भ म काग्रेस को भेजा जाता है। इसके बाद राष्ट्रपति 1946 के रोजगार अधिनियम के अन्तगत अपनी आर्थिक रिपोट भेजता है। कायपालिका बजट के सिद्धान्त से हटकर विनियाग समितियो मे राष्ट्रपति के अनुमाना का पक्ष समथन विभिन्न सम्बन्धित अभिकरणो के प्रतिनिधियो द्वारा किया जाता है। एक सतक पयवेक्षक और कभी-कभी समितियो की प्राथनाओ पर अतिरिक्त सूचना देने मे स्रोत के अलावा बजट ब्यूरो का विधायी प्रक्रिया म कोई अधिकारपूण भाग नही है।

काग्रेस के सदन बजट पर जनवरी के आरम्भ से जुलाई तक विचार करते हैं। तब भी हो सकता है कि यह सभी विनियोग विधेयको पर अपनी कायवाही पूण न कर पाय, ऐसी दशा मे यह अस्थायी विनियोग पारित करती है जिससे कि सरकारी अभिकरण नियमित विनियोग पारित होने तक अपने काय जारी रखें। सविधान के अनुसार सभी धन विधेयक प्रतिनिधि सदन म ही आरम्भ होने चाहिएँ और यही सदन बजट पर प्रथम और विस्तृत विचार करता है। कर सम्बन्धी सिफारिशें 25 सदस्या वाली मार्गोपाय समिति के सुपुद कर दी जाती है और व्यय सम्बन्धी प्रस्ताव 50 सदस्यो वाली विनियोग समिति का सौंप दिय जाते है। इनम स प्रत्यक समिति अनेक उप-समितियो द्वारा काय करती है। उप-समितियो की सिफारिशो पर सम्पूण समिति पुनर्विचार करती है और तभी उन विधेयको पर रिपोट दी जाती है।

जब कोई कर सम्बन्धी या विनियोग विधेयक समिति के बाहर रिपोट कर दिया जाता है

चौदहवाँ अध्याय

कानूनी पद्धतियाँ और न्यायपालिका

1 कानूनी पद्धतिया

प्रारम्भिक समाजो की कानूनी पद्धतियो की तुलना म आधुनिक राज्या की कानूनी पद्धतियाँ बहुत ही विस्तृत और पचीदा हैं। विधि के विकास म रोम का स्थान अति महत्त्वपूण रहा, और पाश्चात्य यूरोप मे रोमन कानूनी पद्धति का महत्त्व अन्य सभी पद्धतिया से बढकर है। जबकि महाद्वीपीय यूरोप म कानूनी पद्धति (system of common law) विकसित हुई, अंग्रेजी भाषा भाषी—सयुक्त राज्य अमरीका व राष्ट्रमण्डलीय देशा म सामान्य कानून की पद्धति को अपनाया गया। सोवियत सघ, साम्यवादी चीन आदि साम्यवादी राज्या म एक नयी प्रकार की कानूनी पद्धति का विकास हो रहा है। अतएव हम इस परिच्छेद म इन तीनो प्रमुख पद्धतियो का सक्षिप्त परिचय देगे।

रोमन विधि—रोमन कानूनो का आधार मुख्यत न्यायिक निणय और सुस्थापित किन्तु अलिखित कानूनी प्रथायें थी। रोम का व्यवहार कानून (jus civile) और अन्तर्राष्ट्रीय कानून (jus gentium) के विचार कानूनी जगत को रोम की महानतम देन है। रोमन कानूनो का प्रसिद्ध सग्रह जस्टीनियन कोड (533 A D) है। रोमन कानून को मानने वाले वतमान राज्यो की विधायी प्रथाओ और व्यवहारो मे उनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के कारण काफी भिन्नतायें हैं। परन्तु कुछ बातो मे वे 200 वष पूव से कही अधिक समान हैं, क्योकि नेपोलियन प्रथम ने फ्रासीसी व्यवहार सहिता को 1804 म जारी किया और इसके बाद कई व्यवहार सहिताएँ आयी। फ्रासीसी व्यवहार सहिता पुतगाल, स्पेन, लटिन अमरीकी गणतन्त्रो, स्विट्जरलैण्ड, आस्ट्रिया, बेल्जियम, नीदरलण्ड्स, इटली, तुर्की व जापान आदि देशो की कानूनी पद्धतियो के लिए नमूना बन गयी। तुर्की और जापान ने इस पद्धति को आधुनिकीकरण की खोज म अगीकार करना पसन्द किया तथा साम्राज्यवादी देशो व उपनिवेशो के लिए भी।

रोमन विधि की मुख्य बातें, सक्षेप म, ये हैं—इसने रोमन जगत् के सभी कानूनी नियमो को एक क्रमबद्ध और मानक रूप देने का प्रयत्न किया। इसका स्वरूप औचित्यपूण होने की अपेक्षा औपचारिक अधिक था, क्योकि रोमन विधि ने वर्णित नियमो और सिद्धान्ता के कठोर पालन पर अधिक बल दिया। इनकी दूसरी विशेषता वर्गीकरण पर बल था। उसने व्यवस्था, एकरूपता, निश्चितता और दुष्परिवतनीयता पर जोर दिया तथा तक व अनुभव के आवश्यक तत्त्वो को मिलाया। इसने मानव व्यवहार को व्यवस्थित बनाने तथा शान्ति बनाये रखने म सफलता पायी। इसका मुख्य दोष परिवतनशील दशाओ के सामने न बदलने मे वास्तविकता का अभाव है।

सामान्य विधि—अंग्रेजी सामान्य विधि की उत्पत्ति भी लगभग उस समय हुई जबकि मध्य युग म रोमन विधि की पुन खोज हुई। यह अंग्रेजी शासको, जैसे हेनरी द्वितीय (1133–89)

(expenditure) और उसे वित्त-मन्त्री तैयार करता है। बजट का प्रारूप नशनल एसेम्बली के सम्मुख अक्टूबर के पहले मगलवार तक अवश्य पहुच जाना चाहिए। उसके तुरन्त बाद समिति को भेज दिया जाता है, परन्तु सदन म उस पर पन्द्रह दिन बाद ही वाद विवाद आरम्भ हो सकता है। इस प्रकार पार्लियामेंट के सदस्यो को बजट का अध्ययन करने के लिए दो सप्ताह मिलते है। सविधान की धारा 47 के अनुसार वित्तीय विधेयको को आगिक कानूनो के लिए विहित दशाओ के अन्तगत पारित किया जायेगा। यदि नेशनल एसेम्बली विधेयक के पेश किये जान के 40 दिन के भीतर उस पहले वाचन मे निणय करन मे असफल रहे, तो सरकार उस सीनेट म पेश करेगी और सीनेट को उस पर पन्द्रह दिन के भीतर निणय देना होगा। उसके बाद विधेयक के सम्बन्ध म धारा 45 मे दी गयी प्रक्रिया (साधारण प्रक्रिया जिसका ऊपर वणन किया गया है) के अनुसार कायवाही की जायेगी। यदि विधेयक पर पार्लियामट 70 दिन के भीतर निणय न कर पायगी तो विधेयक को अध्यादेश द्वारा लागू किया जा सकता है। यदि किसी वित्तीय वष के सम्बन्ध म आय और व्यय की स्वीकृति दने वाला विधेयक वित्तीय वष के आरम्भ होने से पूव लागू न हो सके तो सरकार पार्लियामेंट से तुरन्त यह प्राथना करेगी कि उसे कर एकत्रित करने का अधिकार दे और सरकार स्वीकृत व्यय करने के लिए आज्ञप्ति द्वारा कोष उपलब्ध कर सकेगी। जिन दिना पार्लियामेंट का सत्र न हो रहा हो इस सम्बन्ध म दी गयी समय सीमाओ को निलम्बित रखा जायेगा। आडिट कार्यालय पार्लियामेंट और सरकार को वित्तीय कानूना के कार्यान्वित रूप की देख रेख करन म सहायता देगा।

है ।[1] यह स्वय म कोई पूण कानूनी पद्धति नही है, वरन् ऐसे विविध कानूनी सिद्धा तो का समूह है जो *सामा य विधि से होने वाले अनुचति याय को रोकने म साधक हैं।*

रोमन विधि और सामा य विधि की तुलना—दोनो के बीच वास्तविक अ तरो को सविधियो, यायिक निवचन और मुकदमो से निकले कानून के शब्दा मे वणन करना बहुत कठिन है। सामा य विधि वाले देशो मे अनेक सविधियो और कुछ कानून सग्रह भी है, उनके अपने महान् विशेषज्ञ और कानूनी टीकाएँ भी हैं। रोमन विधि वाले देश भी अपनी सविधियो को किसी प्रकार के यायिक निवचन के बिना लागू नही कर सकते और वहाँ पर दृष्टा त का एक नियम भी है जो अधीन यायालयो को उच्चतर यायालया के निणयो से बाँधता है। वास्तव मे दोनो के बीच वास्तविक अ तर न्यायाधीशा, वकीला और साधारण व्यक्तियो की पहुँच मे उनके तत्वो व स्रोता से अधिक है। यह बात एक उदाहरण से अधिक स्पष्ट हो जायगी। यदि कभी कोई ऐसा मामला आये जहा कि सविधि कुछ न कहे या अस्पष्ट और अपर्याप्त हो, तो *सामा य विधि वाला यायाधीश* साहसपूवक किसी नय नियम को विहित करेगा, जिसका किसी बहुत पुराने और अस्पष्ट दृष्टा त से सम्ब ध हो सकता है। इसके विरुद्ध *रोमन विधि का यायाधीश नये नियम की रचना* करने मे हिचकता है, वह तो अपना निणय किसी वतमान नियम (कानून) पर आधारित करके देगा। *यद्यपि रोमन विधि की पद्धति वाले देशा म राष्ट्रीय अ तर हैं, फिर भी उनका बल कानूनी* निश्चितता या औपचारिकता पर है तथा उनकी आधारभूत धारणा यह है कि कानून अधिकाशत तक सगत है। रोमन विधि के *यायशास्त्र वेत्ता उसे लिखित तक, पूणतया तकमय, सामजस्यपूण* स्वाभाविक और सु दर मानते है। उसम सामा य कानून की विशेषताओ अनुभव और व्यवहारवाद पर बल अथवा यायिक व्यवहार के कठोर तथ्यो के लिये आदर का अभाव है। जबकि सामा य कानून यायाधीशो द्वारा निमित मुकदमा से उत्पन्न और वकीलो का कानून है, रोमन कानून प्रोफेसरो का कानून तथा महान् सग्रहो का कानून है।[2]

सोवियत सघ व साम्यवादी चीन की कानून पद्धति—सोवियत सघ म शासन के अ य अगो की तरह, याय पद्धति भी अ य राज्यो से भिन्न है। सोवियत सघ की याय पद्धति भी साम्यवादी सिद्धा तो से प्रभावित हैं। माक्सवाद लनिनवाद मे कानून की स्पष्ट परिभाषा दी गई है। यह बताता है कि कानूनी सम्ब धो की जड जीवन की भौतिक दशाओ म होती है और कानून केवल *प्रभुत्वपूण वग की इच्छा होती है।*[3] *अतएव यूमेन के अनुसार सोवियत याय शास्त्र स्वत त्र 'कानून* के विचार' को अस्वीकृत करता है अर्थात् कानून की आर्थिक व्यवस्था और वर्गीय रचना से अलग कोई स्वत त्र धारणा नही हो सकती। कानून राज्य की अभिव्यक्ति अर्थात् प्रभुत्वपूण वग की इच्छा और अभिव्यक्ति होता है।[4] सार म, सोवियत कानून वह है जो साम्यवादी क्रान्ति के लक्ष्या को

---

[1] Equity is in effect the appendix It is not a complete system of law Equity consists of miscellaneous collection of principles not systematically related to one another but each tending to make this or that rule of the common law more equitable than it would otherwise be —Brierely J L (ed) *Law and Government in Principle and Practice* p 130

[2] In this sense then common law is indeed judge made litigation born a lawyer s law whereas Roman law is a professor s law and the law of the great codes that have sought to draw the whole life of civil society of crime and punishment or of commercial transactions each into one comprehensive perfect code of civil criminal and commercial law —Merkl Peter H *op cit* p 322

[3] Marxism Leninism gives a clear definition of the essence of law It teaches that legal relationship (and consequently law itself) is rooted in the material conditions of life and that law is merely the will of the dominant class elevated into a statute —Vyshinsky A V , *The Law of the Soviet State* p 23

[4] Soviet legal science therefore utterly rejects the concept of an independent idea of the law which may exist separate from the economic and class structure of the state *Law is merely an expression of the state, an expression of the material form of life in that*

के प्रयत्नों का परिणाम था, जिन्होंने न्यायिक सत्ता को भ्रमणशील न्यायाधीशों के द्वारा केन्द्रीकृत किया। ये भ्रमणशील न्यायाधीश एक स्थानीय न्यायालय से दूसरे स्थानीय न्यायालय में जाकर मुकदमों की सुनवाई करते थे। उन्होंने विभिन्न प्रदेशों की भिन्न भिन्न कानूनी प्रथाओं को एक 'सामान्य विधि' का रूप दिया। न्यायालयों के रिकार्डों की सहायता से, हेनरी ब्रेक्टन जैसे उच्च न्यायविदों ने सामान्य विधि को दृष्टान्तों के नियम के आधार पर एक पूर्ण और स्थायी पद्धति का रूप दिया।[1] सामान्य कानून में अभी तक काफी कठोरता और उपचारों की कमी रही, जिसने साम्य विधि को जन्म दिया। ब्रिटिश (कानूनी) पद्धति का आधारभूत तत्त्व अभी तक सामान्य कानून है और ब्रिटिश नागरिक की विभिन्न स्वतन्त्रताओं की रक्षा ऐसे ही कानूनों द्वारा होती है। सामान्य विधि को न्यायाधीशों द्वारा निर्मित कानून कहा जाता है। इस प्रकार के कानून का विकास न्यायाधीशों द्वारा दिये गये निर्णयों और उनके रिकार्डों से हुआ है, उन्हें सविधियों की तरह पार्लियामेंट ने नहीं बनाया है। इन कानूनों को सविधियों के विरुद्ध अलिखित कानून कहा जाता है, परन्तु वास्तव में अब ये भी अलिखित नहीं रहे हैं, क्योंकि इनके नियमों और चलनों को न्यायविदों ने लिखित रूप प्रदान कर दिया है। ये कानून चलनों पर आधारित होने के कारण प्रथागत कहलाते हैं।[2] अनेक सामान्य कानूनों को पार्लियामेंट ने सविधियों का रूप दे दिया है, अतएव जैसे जैसे सविधियों की संख्या बढ़ती है वैसे ही सामान्य कानूनों की परिधि छोटी होती जा रही है।

पन्द्रहवीं शताब्दी के आस पास ऐसा समय आया कि जब सामान्य कानून बदलते हुए समय व परिस्थिति के अनुसार विस्तृत न हो सका और न्यायाधीशों ने सामान्य कानूनों को समाज की बदलती हुई आवश्यकता के अनुसार ढालना प्रायः बन्द सा कर दिया, तब ऐसी परिस्थितियों में साम्य विधि का आरम्भ हुआ। कानूनी दृष्टि से राजा को सदा ही 'न्याय का निर्झर या स्रोत' माना गया है और न्यायालय राजा के न्यायालय रहे हैं। उस समय साम्य विधि शासक की इच्छा पर आधारित थी। न्याय के लिये प्रस्तुत अपील आदि को राजा अपनी परिषद् के कानूनी सदस्य चान्सलर को विचारार्थ सौंप देता है। जैसे जैसे यह व्यवहार बढ़ा, कुछ ऐसे सिद्धान्तों का प्रतिपादन हुआ जिनके अनुसार अठारहवीं शताब्दी में साम्य विधि इच्छा पर आधारित न रही, यथार्थ में इसके सिद्धान्त सामान्य विधि की भाँति निश्चित होते चले गये। इसका परिणाम यह निकला कि चान्सलर ने एक न्यायाधीश का रूप पाया और उसका प्रशासनिक कार्यालय एक न्यायालय बन गया। इस प्रकार इंगलैण्ड में दो प्रकार के न्यायालय (जो एक दूसरे से स्वतन्त्र थे) चलते रहे और वे दो प्रकार के पृथक कानूनों को लागू करते रहे। ऐसी स्थिति 1873 तक चली, क्योंकि उस वर्ष के न्यायपालिका कानून ने एक ही प्रकार की न्यायालय पद्धति को स्थापित किया। इसने साम्य विधि को सामान्य विधि से नहीं मिलाया, किन्तु उसके आपसी सम्बन्धों को निश्चित कर दिया और इस सिद्धान्त को कानूनी रूप दे दिया कि जहाँ दोनों में विरोध हो, साम्य विधि का पालन हो। अतएव दोनों प्रकार के कानूनों में अभी तक अन्तर है। यदि हम सामान्य कानून को एक पुस्तक मानें जो अधिक पुरानी हो गयी है, तो साम्य विधि को हम उसका परिशिष्ट कह सकते

---

rule of precedent which means that all principles used in judicial decisions have to be deduced from earlier cases It provided uniformity and certainty without depriving the courts of a creative role —Merkl Peter H *Political Continuity and Change* p 320

[2] But it ceased to be *unwritten* law in a strict sense for its rules and usages as they grew were put into written form by the succeeding jurists It was unwritten law in the sense that it did not originate in statutes passed by Parliament It was customary law in that usages supplied its basis It was judge made law in that the courts had evolved most of it —Munro and Ayearst *The Government of Europe* p 256

और राजनीति का प्रभाव पडे बिना नही रह सकता । सोवियत सघ म न्यायाधीश शासन से अलग नही होते, इसके अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायालय के साथ प्रोक्यूरेटर जनरल और सघीय न्याय मन्त्री का निकट सम्पक रहता है । इससे यह स्पष्ट है कि कायपालिका न्यायालयो के कार्यों पर पर्याप्त प्रभाव डालती है । वास्तव म, सोवियत न्यायपालिका सवहारा वर्ग की अधिनायकशाही के हाथों मे सशक्त अस्त्र है । इसलिए सोवियत सघ के सर्वोच्च न्यायालय को शासन का एक सहायक अग समझा जाता है न कि शासन के उच्चतर अथवा शासन के प्रभाव स स्वतन्त्र अग । सोवियत न्याय पद्धति की अन्य प्रमुख विशेषताओ का सक्षिप्त विवेचन अग्रलिखित है—(1) न्याय-पद्धति सामान्य प्रशासन की एक शाखा के रूप म है । उस पर प्रशासनिक देख रेख की व्यवस्था है और यह अधिकार सोवियत सघ के प्रोक्यूरेटर जनरल म निहित है, जिसके अधीन सभी स्तरों पर प्रोक्यूरेटर हैं । (2) सोवियत सघ के न्यायालय नागरिको क अधिकारो की वहाँ तक तो रक्षा करते हैं जहाँ तक कि कोई नागरिक दूसरे के अधिकारो मे हस्तक्षेप करता है, परन्तु उनका यह कत्तव्य नही है कि वे *सरकार द्वारा हस्तक्षेप के विरुद्ध नागरिको के अधिकारो की रक्षा करे ।* (3) *सविधान* के अनुसार मुकदमो की सुनवाई खुले अर्थात् सावजनिक रूप से होती है, यदि कानून द्वारा किन्ही मुकदमो के लिए विशेष व्यवस्था न हो । बहुधा मुकदमो की सुनवाई मिलो, कारखानो और कोलखाजो मे होती है जिससे सम्बन्धित मामलो के निणय म रुचि रखने वाल नागरिक अधिकतम सख्या मे उपस्थित हो सके । प्राय सभी न्यायालयो म, साधारणतया मुकदमो की सुनवाई मे जनता द्वारा *निर्वाचित असेसर भाग लेते हैं, जो कानून के विशेषज्ञ नही होते ।*

(4) सोवियत सघ का प्रत्येक नागरिक जिसको साधारण मताधिकार प्राप्त हो, किसी भी न्यायालय का न्यायाधीश या असेसर निर्वाचित हो सकता है । वहाँ पर न्यायाधीशो के लिए कोई विशेष योग्यता का होना आवश्यक नही है ।

(5) प्रत्येक न्यायालय मे कई न्यायाधीश अथवा असेसर होते हैं । निम्न स्तर के छोटे न्यायालयों को छोडकर ऊपर के सभी स्तरो के *न्यायालयो के न्यायाधीशो की नियुक्ति कायपालिका* द्वारा होती है । न्यायाधीश अपनी नियत अवधि तक न्यायालयो के नियमित सदस्य रहते हैं परन्तु असेसर प्रतिवष केवल 10 दिन ही काय करते हैं । उन दिनो उन्ह वही भत्ता मिलता है जो वे अपने पेशे मे कमाते हैं । (6) न्यायाधीशो या असेसरो को निर्वाचक वापस बुलाकर उनके पदो से हटा सकते हैं । *न्यायाधीशो और असेसरो के विरुद्ध फौजदारी कानून की कायवाही केवल* उपयुक्त प्रोक्यूरेटरो द्वारा *(वह भी प्रेसीडियम की अनुमति से) आरम्भ की जा सकती है ।* (7) 1938 के न्यायपालिका कानून द्वारा सोवियत सघ की न्याय व्यवस्था मे जो सुधार किये गये हैं वे इस प्रकार हैं—(अ) कानून की दृष्टि से सब नागरिक बराबर हैं, (आ) न्यायाधीशो की स्वतन्त्रता—अब न्यायाधीश केवल कानूनो के पाबन्द है (इ) न्यायालयो मे स्थानीय भाषाओ का प्रयोग किया जाता है, (ई) प्रतिवादी (defendant) को साधारणत अपने बचाव के लिए वकील *करने का अधिकार है, और* (उ) *न्यायालयो की कायवाही प्रकाशित* की जाती है । (8) सोवियत सघ का सर्वोच्च न्यायालय वहाँ की सर्वोच्च सोवियत द्वारा पास किये गये कानूनो को अवध घोषित करन का अधिकार नहीं रखता अर्थात् वहा के सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनरवलोकन की शक्ति प्राप्त नही है । यह शक्ति तो प्रेसीडियम को प्राप्त है । (9) सोवियत न्याय-व्यवस्था म भी उच्च मात्रा का केन्द्रीकरण है । सोवियत सघ के सर्वोच्च न्यायालय को उच्च श्रेणी के सभी *न्यायालयो की देख रेख का अधिकार है ।* प्रोक्यूरेटरो की व्यवस्था भी इसी दिशा की ओर सकेत करती है ।

(10) एक बडी ही रोचक बात यह है कि सिद्धान्त रूप म साम्यवादी वकीलो को बहुत उपयोगी नही मानते, क्योंकि उनके विचार म वे पूजीवादी पद्धति से सम्बन्धित है । फिर भी,

आगे बढाये। न्यायपालिका कानून की दूसरी धारा मे न्यायपालिका के मुख्य काय निम्नलिखित हैं—(1) प्रत्येक प्रकार के हस्तक्षेप के विरुद्ध सोवियत सघ के सामाजिक और राजकीय सगठन, साम्यवादी सम्पत्ति और समाजवादी आर्थिक पद्धति की रक्षा करना, (2) नागरिको के हितो और अधिकारा की रक्षा करना, और (3) राजकीय सस्थाओ व उद्योगो, सामूहिक फार्मों आदि की रक्षा करना। सोवियत सघ मे न्यायालयो की आवश्यकता दो प्रयोजनो के लिए है—पहला, सोवियत शासन के शत्रुओ से सघप करना और दूसरे, नई सोवियत पद्धति को सुदृढ बनाना।

साम्यवादी सर्वाधिकारवादी राजनीतिक पद्धतिया म शक्ति पृथक्करण सिद्धा त को नही माना जाता। वहाँ पर दल जनता की इच्छा का समाविष्ट करता है और न्यायालय जनता के सेवक है, अत न्यायालय दलीय निदेशो के अधीन हैं। उदारवादी और सर्वाधिकारवादी कानूनी पद्धतियो के बीच दृष्टिकोणा के इस अ तर का उनकी शासन-पद्धतियो मे न्यायालयो की भूमिका पर महत्त्वपूण प्रभाव पडता है।[1] विशिस्की के अनुसार समाजवाद के अन्तर्गत राज्य के हितो और सव साधारण के हिता मे जैसा कि शोपक देशा मे है, कोई पारस्परिक विरोध नही है। समाजवाद व्यक्तिगत हितो को मना नही करता, साधारणतया यह उन्हे सामूहिक हितो से मिला देता है। निष्पक्षता, कानून की उचित प्रक्रिया और ऐसे ही पूजीवादी कानूनी पद्धतियो के सु दर वाक्याश सोवियत कानूनी पद्धति मे महत्त्व की दृष्टि से दूसरे स्थान पर आत है। कानून, लेनिन के कथनानुसार, एक राजनीतिक साधन है अथवा कानून राजनीति है। सोवियत सघ की वतमान न्याय-पद्धति 1936 के सविधान और 1938 मे बने 'न्यायपालिका कानून' के अ तगत सगठित है। सोवियत सघ म न्यायाधीश स्वत त्र नही हाते और उ हे सरलता से हटाया जा सकता है। यथाथ मे, न्यायाधीश भी अधिकतर साम्यवादी दल के सदस्य होते है चाह वे दल के सदस्य हो या न हो, उन सभी का लक्ष्य समाजवाद को आगे बढाना है। न्यायपालिका राज्य-सत्ता का एक अग है, अतएव वह राजनीति से बाहर नही हो सकती।

न्यायपालिका को कायपालिका तथा विधायिका से स्वत त्र नही माना जाता, इससे भी बढकर बात यह है कि न्यायपालिका साम्यवादी दल के प्रभाव से स्वत त्र नही है। न्यायाधीशो की नियुक्ति साधारणतया कायपालिकाओ द्वारा की जाती है और उनके कायकाल कुछ ही वर्षों तक क लिए सीमित है। सबसे नीचे के धरातल पर न्यायाधीशो को जनता चुनती है और उन्हे वापस भी बुला सकती है। सम्पूण न्यायपालिका पर प्रोक्यूरटर जनरल क विभाग की देख रेख रहती है। सोवियत सघ मे सघात्मक सविधान होते हुए भी न्यायपालिका को विशेष रूप से उच्च और स्वत त्र स्थान प्राप्त नही है। न्यायपालिका सविधान का निवचन नही करती, इसे कानूनो को अवैध घोषित करने की शक्ति प्राप्त नही है और न ही यह नागरिको के अधिकारो की रक्षा करती है। परन्तु नीचे के स्तरो पर न्यायालयो के काय म स्थानीय नेताओ का हस्तक्षेप नही होता, यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय पर सर्वोच्च नीति निर्धारण करने वाले निकाय—सर्वोच्च सोवियत का बहुत नियन्त्रण रहता है और सर्वोच्च सोवियत म 80 प्रतिशत सदस्य साम्यवादी दल के होते है।[2]

सोवियत सघ की न्यायपालिका राज्य सत्ता का एक अग है, इसलिए उस पर देश के शासन

---

state and in a class society it is the will of ruling class —Neumann R G *European and Comparative Government* p 592

[1] In communist totalitarian political systems no lip service is paid to the doctrine of the separation of powers the Party is the embodiment of the will of the people and the courts are the servants of the people audit is not a large steps to the conclusion that the cou ts therefore are subject to the directions of the Party This distinction between totalitarian and liberal democratic attitudes to the legal system has important repercussions on the value of the courts in their respective political systems —Ball, A R, *Modern Politics and Government*, p 204

[2] Hazard John N *The Soviet System of Government* p 193

जिमका आधार यह सिद्धात था—राजा कोई भूल नही करता। परन्तु 1947 के 'दी क्राउन प्रोसीडिंग एक्ट' क अ तगत अब सरकारी कमचारियो के विरुद्ध मुकदम चलाये जा सक्ते हैं और अव एक सरल व सीधी प्रक्रिया द्वारा अ सरकारी व्यक्ति अधिकारियो के विरुद्ध कत्तव्यपालन म हुई हानि के लिए हर्जाने के लिए कानूनी कायवाही कर सकते है। प्रत्येक ज्यादती के लिए कानून के अ तगत उपचार की व्यवस्था है और इस प्रकार नागरिक के अधिकारो की रक्षा होती है। अवध रूप से ब दी बनाये जाने के विरुद्ध 'ब दी प्रत्यक्षीकरण' के लेख (Writ of Habeas Corpus) का प्रयोग किया जा सकता है। अ य सामा य कानूनो के अ तगत नागरिको के स्वत त्रता सम्ब धी अधिकारो की रक्षा होती है। इस दृष्टि से ब्रिटेन मे कानूनो का शासन है, व्यक्तियो का स्वेच्छाचारी शासन नही। यह 'विधि के शासन' का दूसरा महत्वपूण पहलू है।

डायसी के अनुसार इस सिद्धात की तीन मुख्य बातें इस प्रकार हैं—(1) किसी व्यक्ति को कानून के विरुद्ध दण्ड नही दिया जा सकता अथवा किसी व्यक्ति को शारीरिक दण्ड या सम्पत्ति की हानि केवल कानून के अनुसार ही, कानून का उल्लघन करने पर जो साधारण न्यायालय म साधारण कानूनी प्रक्रिया द्वारा सिद्ध होनी चाहिए, दी जा सकती है। (2) केवल यही नही कि कोई व्यक्ति, कानून के ऊपर है, वरन् यह है कि प्रत्येक व्यक्ति, उसका पद अथवा स्थिति कुछ भी हो, राज्य के साधारण कानूनो के अधीन है और उस पर साधारण यायालयो मे ही मुकदमा चलाया जाता है। इसका आशय यह है कि सभी व्यक्तियो के लिए ब्रिटेन म एक ही प्रकार के कानून और एक ही प्रकार के यायालय है। इसके विपरीत, फ्रास म विधि के शासन' की पद्धति के स्थान पर 'प्रशासनिक कानून' (Administrative Law) की पद्धति है, जिसके अ तगत वहाँ साधारण नागरिको और सरकारी कमचारियो के लिए दो प्रकार के कानूनो के समूह और दो ही प्रकार के पृथक् यायालय हैं। कि तु आजकल विभिन्न प्रकार के मुकदमा की सुनवाई साधारण यायालयों म भी होती है। ऐस न्यायालयो के उदाहरण है—भूमि न्यायाधिकरण (Land Tribunal), परिवहन यायाधिकरण, बिक्री कर यायाधिकरण आदि।

प्रशासनिक कानून की पद्धति—फ्रास (तथा वेल्जियम आदि देशो) म साधारण यायालयो के साथ साथ प्रशासनिक कानूनो (Administrative Law) क अनुसार याय किया जाता है। प्रशासनिक कानून ऐसे नियमो का सग्रह है जो प्रशासन अधिकारियो के नागरिका के प्रति सम्ब धो को विनियमित करते है, और जिनक अनुसार सरकारी अधिकारियो की स्थिति, नागरिका क इन अधिकारियो से सम्ब ध तथा व्यवहार के बारे मे अधिकारा व दायित्वा को निर्धारित किया जाता है। सक्षेप म, हम कह सकते हैं कि साधारण यायालय ऐसे मुकदमा की सुनवाई नही कर सकते जोकि सरकार के कायपालिका (अथवा प्रशासनिक) विभाग द्वारा किय गये कार्यों से पदा होते हैं, चाहे उनका सम्ब ध सरकारी अधिकारियो के अधिकारो व दायित्वो स हो अथवा उनके सम्ब ध म नागरिको के अधिकारो व दायित्वो से हो। इस पद्धति के विकास के लिए दो कारण उत्तरदायी रहे हैं—प्रथम, फ्रास मे एकात्मक शासन प्रणाली के साथ-साथ अत्यधिक मात्रा म शक्तियो का केन्द्रीकरण है, जिसके कारण अधिकारियो के हाथो म बडी शक्तियाँ हैं। प्रशासनिक यायालय यह देखते है कि सरकारी अधिकारी अपनी शक्तियो का दुरुपयोग न करें। दूसरे फ्रास स ही शक्तियो के पृथक्करण का सिद्धात निकला, जिसके अनुसार न्यायपालिका को विधायिका व कायपालिका के कार्यों म हस्तक्षेप नही करना चाहिए। फ्रास म पृथक प्रशासनिक यायालयो की पद्धति के अ तगत व्यक्ति को प्रशासको क स्वेच्छाचारी कार्यों के विरुद्ध प्राय पूण रक्षण प्राप्त है। एक अमरीकी विद्वान् भी कुछ वप पूव इस निष्कष पर पहुँचा कि विश्व क अ य किसी देश म नागरिको क अधिकारो की प्रशासनिक ज्यादतियो के विरुद्ध इतनी अच्छी तरह से रक्षा नही होती

व्यवहार मे, उन्हे उनकी आवश्यकता को स्वीकार करना पड़ा है, यद्यपि उनकी सख्या सीमित कर दी गयी है और उनके कार्यों का क्षेत्र भी बहुत कम कर दिया गया है। उनके लिए निम्नतम प्रशिक्षण और अनुभव निर्धारित कर दिया गया है। इससे भी बढकर दिलचस्प बात यह है कि वकीलो की फीस मुवक्किलो की देने की क्षमता के अनुसार नियमित कर दी गयी है। (11) यह बात भी ध्यान देन योग्य है कि सोवियत सघ मे अपराध दो प्रकार के होते हैं—किसी व्यक्ति की जान या माल लेने के सम्बन्ध मे किये गये अपराध अथवा क्रान्ति द्वारा स्थापित समाजवादी व्यवस्था को पलटने-सम्बन्धी अपराध। प्रथम प्रकार के अपराधो के लिए दूसरे प्रकार के अपराधो की अपेक्षा अधिक नरम दण्ड की व्यवस्था है। सरकारी सम्पत्ति की चोरी, धन के गबन या हत्याओ के लिए साधारणत मृत्यु दण्ड नही दिया जाता।

(12) न्यायालयो का सगठन ऊपर से नीचे तक एक पिरामिड के समान है। सबसे ऊपर सोवियत सघ का सर्वोच्च न्यायालय है, उसके नीचे सघीय गणराज्यो के न्यायालय तथा विभिन्न स्तरो पर अधीन न्यायालय है। इसके अतिरिक्त कुछ विशेष न्यायालय भी है।

चीन मे भी, सोवियत सघ की भाति, न्यायालय को वर्गीय न्याय और राजनीतिक नीति का साधन समझा जाता है। इसे दो व्यक्तियो (अथवा पक्षो) के बीच उठने वाली कानूनी विवादो का निर्णय करने वाला स्वतन्त्र न्यायिक अग नही माना जाता।[1] इस बात को दूसरे शब्दो मे इस प्रकार रखा जा सकता है, "न्याय की धारणा का, सत्य की धारणा की तरह से, चीनी साम्यवादी दल के लिए सिवाय इसके कोई अर्थ नहीं कि उसे दल के उद्देश्यो की पूर्ति करनी चाहिए। वहाँ पर सिद्धान्त रूप मे आदर्श न्याय के प्रशासन की बात कही भी नही जाती, न्यायालयो और कानूनो को इस दृष्टि से बनाया गया है कि वे जनता की सेवा कर सकें और जनता के लिए उसके हितो की परिभाषा चीनी साम्यवादी दल करता है।"[2]

2 विधि का शासन और प्रशासनिक कानून

विधि का शासन (Rule of Law)—ब्रिटेन मे 'विधि के शासन' की पद्धति है, न कि प्रशासनिक कानून (Administrative law) की, जैसा कि फ्रास व अन्य महाद्वीपीय देशो मे पायी जाती है। इस सन्दर्भ मे विधि के शासन का अर्थ यह है कि वहा पर सरकारी अधिकारियो व कर्मचारियो तथा अ सरकारी व्यक्तियो के लिए एक ही प्रकार के कानून तथा न्यायालय है।[3] प्रत्येक व्यक्ति, चाहे उसका पद कितना ही ऊँचा हो एक ही प्रकार के कानूनो के अधीन है और देश के साधारण न्यायालयो के अधिकार क्षेत्र मे है अर्थात् सरकारी व्यक्तियो के विरुद्ध मुकदमे की सुनवाई के लिए पृथक कानूनो का सग्रह तथा प्रशासनिक न्यायालय होते है। मन्त्रिगण भी अपने कार्यों तथा अपराधो के लिए साधारण न्यायालयो के सामने उत्तरदायी होते है।

इस 'विधि के शासन' के अन्तर्गत पहले राजा और सरकारी अधिकारी अपवाद माने जाते थे,

---

[1] Thus in China as in Russia a court is considered an instrument of class justice and political policy It is not supposed to be an independent judicial organ for settling legal disputes between individuals —Linebarger et al *Far Eastern Governments and Politics China and Japan* p 248

[2] The concept of justice like that of truth has no meaning to the C C P except in so far as it serves the aims of the party No pretence is made of administering abstract justice the courts and laws are designed to serve the people whose interests are defined for them by the C C P —Kahin, G M (ed) *Major Governments of Asia* pp 86-87

[3] Every official from the Prime Minister down to constable or a collector of taxes is under the same responsibility for every act done without legal justification as any other citizen —Dicey

करते है। कुछ विचारको का मत है कि अन्तर्राष्ट्रीय कानून सच्चे अथ म कानून नही होत। उनका तक इस प्रकार है—कानून राज्य का आदेश होता है, राज्य ही इसे बनाता व लागू करता है। यदि हम अ तर्राष्ट्रीय नियमो को कानून मानें तो उनके बनाने व लागू करने के लिए एक विश्व राज्य होना आवश्यक है। यदि हम प्रथाओ, चलनो, स धियो या अ य आधारो पर बने अन्तर्राष्ट्रीय नियमो को ही कानून मान लें तो भी उनके लागू करन के लिए राज्य शक्ति होनी जरूरी है। इस मत के मानने वाले मुख्य लेखको मे बे थम, ऑस्टिन और हालैण्ड है। उनके विचार मे *अ तर्राष्ट्रीय कानून नतिक नियमो के समान हैं। जिस कारण से अधिकतर लखक* अ तर्राष्ट्रीय नियमो को कानून नही मानते, यह सच है कि कानूनी रूप मे अ तर्राष्ट्रीय कानून राष्ट्रीय कानून से भिन्न है। अ तर्राष्ट्रीय कानून के निर्माण, निवचन और लागू किये जाने का ढग राष्ट्रीय कानून के ढग से भिन्न है। राष्ट्रीय कानूनो के निर्माण का तरीका अधिकाशत विधायन है या वे प्रभु के आदेश है, यद्यपि उनका कुछ अश प्रथाओ से मिलकर भी बना है। जहा तक अ तर्राष्ट्रीय कानून का सम्ब ध है, वह सारा ही प्रथाओ और स धियो पर आधारित है, क्योकि अभी तक कोई विश्व प्रभु अथवा विधानमण्डल नही है। दूसरा अ तर यह है कि जब राज्य मे रहने वाले कुछ व्यक्तियो के बीच कानूनी विवाद उठते हैं, तो उनका निणय करने के लिए न्यायालय होते हैं। *ऐसे मुकदमो मे न्यायालयो के निणय दोना पक्षो के लिए मानने जरूरी होते हैं।* परन्तु इस प्रकार के अनिवाय अधिकार क्षेत्र वाला कोई अ तर्राष्ट्रीय न्यायालय नही है। तीसरे, राष्ट्रीय कानूनो को लागू कराने के लिए राज्य की कायपालिका और उसके अधीन पुलिस आदि होती है, किन्तु अ तर्राष्ट्रीय कानूना को लागू करने वाली कोई अ तर्राष्ट्रीय कायपालिका अथवा पुलिस नही है। सयुक्त राष्ट्र सघ के होते हुए भी कोई ऐसी शक्ति नही है जो तथाकथित अ तर्राष्ट्रीय कानूनो को लागू कर सके।

इसके विपरीत, कुछ लेखक अ तर्राष्ट्रीय नियमा को कानून ही मानत है। वेस्टलेक यह तक देता है कि विभिन्न राज्य सभ्य ससार म उसी प्रकार साथ साथ रहत हैं, जसे कि राज्य म नागरिक। *इस प्रकार राज्या का पद समान है और उस समाज के नियम अ तर्राष्ट्रीय कानून* कहलाते है। साधारण भाषा म अ तर्राष्ट्रीय कानून उन नियमा का सग्रह है जिनका पालन सभ्य राज्य आपसी सम्ब धो को नियमित करने के लिए करते है। प्रसिद्ध लेखका, ओपनहीम और फ़ेविक[1] ने तो अ तर्राष्ट्रीय नियमा को कानून के रूप मे ही माना है। इन नियमा का पालन प्रत्येक राज्य अपने नतिक स्तर या सुविधा के अनुसार करता है। कुछ राज्य इनका पालन उतनी ही अच्छी तरह से करते हैं जितना कि बहुत से नागरिक राज्य के कानूना का करते हैं। वास्तव म, अ तर्राष्ट्रीय नियम कानून का रूप पाते जा रहे है। अ तर्राष्ट्रीय कानून मे हम अग्रलिखित अभिसमया को सम्मिलित कर सक्त हैं

1907 म हेग सम्मेलन पर स्वीकृत अनेक अभिसमया यथा (अ) स्थल पर युद्ध के सम्ब ध म कानूनो और प्रथाओ के सम्ब ध म, (आ) स्थलीय युद्धकाल मे तटस्थ देशो और व्यक्तियो के सम्ब ध म, (इ) युद्धकाल म नाविक सेनाओ पर बम गिरान के बारे म, (ई) शत्रुता के आरम्भ पर *शत्रु के व्यापारिक जहाजा के पद के बारे म।* सक्षेप म, अ तर्राष्ट्रीय कानूना का सम्ब ध इन विषया से होता है—राज्यो के आपसी सम्ब ध, अ तर्राष्ट्रीय विवादा को तय करना, युद्ध, तटस्थता, इत्यादि।

सावजनिक कानून वे कानून होते हैं जो व्यक्तियो के राज्य से सम्ब ध को विनियमित करते

[1] International law may be defined as the body of general principle and concrete rules which the states *that are members of the community of nations* recognise as binding upon themselves in their mutual relations —Fenwick

जैसी कि फ्रास म ।[1]

प्रशासनिक न्यायालया का साधारण सगठन भी सीधा और सरल है। इस क्षेत्र म सबसे नीचे के स्तर पर प्रीफेक्चरो की अ तरप्रान्तीय कौसिले है और शेष सभी प्रान्तो को 22 समूहो म रखा गया है तथा प्रत्येक के लिए एक कौसिल है। प्रत्येक कौसिल म एक प्रधान और 5 या 4 कौसिलर होते है। इनके अतिरिक्त इसी श्रेणी म अनक विशेष प्रशासनिक यायालय भी रखे जा सकते है, जसे कोर्ट ऑफ एकाउण्ट्स, कौसिल ऑफ पब्लिक इ स्ट्रक्शन, कौसिल आफ मिलिटरी रिव्यू इत्यादि। इन यायालया का अधिकार-क्षेत्र उनके नाम से ही स्पष्ट है। उदाहरण के लिए, शिक्षा विभाग से सम्बन्धित कानूना के उल्लघन से उत्पन्न हुए अपराधो का निणय कौसिल आफ पब्लिक इन्स्ट्रक्शन करती है। अ तरप्रान्तीय कौसिला के सभी निणय अन्तिम नही होते और उनके निणयो के विरुद्ध प्रादेशिक प्रशासनिक न्यायालयो मे अपीलें की जा सकती है। प्रशासनिक याय व्यवस्था का सर्वोच्च यायालय कौसिल ऑफ स्टेट है। इसके यायालय के अतिरिक्त अ य काय भी है। चौथ गणतन्त्र मे इसके स्थायी कौसिलर अधिकारी इस प्रकार थे—(1) एक उप प्रधान पाँच विभागो के प्रधान, (2) 42 नियमित सेवा पर, (3) 45 मास्टर आफ पटीश स (4) 44 आडीटर। याय मन्त्री इसका नाममात्र का प्रधान होता था यथाथ म प्रधान का काय उप प्रधान ही करता था। इसके सभी सदस्यो की भरती बाहर के 12 सदस्यो और याय म त्री को छोडकर प्रतियोगी परीक्षाओ के आधार पर की जाती थी। वतमान सविधान के अन्तगत कौसिल के सभी सदस्या की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।

चूकि फ्रास मे दो प्रकार के न्यायालया की व्यवस्था है, अतएव यह आवश्यक है कि कोई ऐसा अभिकरण हो जो एक क्षेत्र म कोट ऑफ केसेशन (Supreme Court of Appeal in Ordinary Law) और दूसरे क्षेत्र म कौसिल ऑफ स्टेट (Highest Court in Respect of Administrative Law) के बीच अधिकार क्षेत्र सम्ब धी उठने वाले विवादा का अ तिम निणय कर सके। *यदि कभी किसी प्रश्न पर यह मतभेद उत्पन्न हो जाये कि वह कौन से यायालयो के* अधिकार क्षेत्र मे आता है तो उसके निणय के लिए उच्चतर न्यायालय हो। इसी उद्देश्य स 1872 म एक 'कोट आफ कफ्लिक्ट' की स्थापना की गई थी। चौथ गणत त्र मे इस यायालय म न्याय मन्त्री पदेन प्रधान था, कोट आफ केसेशन व कौसिल आफ स्टेट के 3 3 सदस्य थे और उनके द्वारा छाटे गये दो अ य सदस्य थे। इस न्यायालय के सामने आने वाले मामलो की सख्या प्रतिवष छ या आठ से अधिक नही रही।

3 विभिन्न प्रकार के कानून

कानूना का वर्गीकरण विभिन्न दृष्टिकोणा से अथवा आधारो पर किया जा सकता है। विलोबी ने कानूना को चार प्रकार स बताया है—अनुविहित कानून या सविधि (statutes), प्रथागत कानून, सावैधानिक कानून और अ तर्राष्ट्रीय कानून। मैकाइवर ने विभिन्न प्रकार के सम्ब धो के नियमण के आधार पर कानूना को कई प्रकार से बाँटा है कानून (विधि)—राष्ट्रीय और अ तर्राष्ट्रीय। राष्ट्रीय कानून—सावैधानिक और सामान्य। सामा य कानून—सावजनिक और निजी। सावजनिक कानून—प्रशासनात्मक और सवसाधारण।

कानूनो का स्वरूप व क्षेत्र के आधार पर वर्गीकरण—इस दृष्टिकोण स हम कानूनो को अन्तर्राष्ट्रीय, सावजनिक और व्यक्तिगत तीन समूहो म बाट सकते हैं। अ तर्राष्ट्रीय कानून वे है, जो एक राज्य का अ य राज्यो स सम्ब ध अथवा विभिन्न राज्यो के आपसी सम्ब धो को विनियमित

[1] Zink H, *Modern Governments*, p 370

लिए जारी करता है। ब्रिटिश काल म भारत के गवनर जनरल व गवनरो को अनक प्रकार के अध्यादेश निकालने क अधिकार प्राप्त थे। अब भी राष्ट्रपति व गवनर अपन अपन अधिकार क्षेत्र म अध्यादेश निकाल सकते ह, किन्तु ऐसा उस समय होता है जबकि संसद या सम्बन्धित राज्य क विधानमण्डल का सत्र न हो रहा होता। साथ ही विधानमण्डल का सत्र शुरू होते ही प्रत्यक अध्यादेश उसके सामने रखा जाता है और उसकी स्वीकृति पर वह कानून का रूप पा लता है, अन्यथा उसकी निश्चित अवधि पूण होने पर प्रभाव नही रहता। *कायपालिका द्वारा किसी सामान्य कानून* के अ तगत जारी किये गये आदेश, जो किसी विशेष समय पर या परिस्थितियो म लागू होते हैं प्रादेश कहलाते है। उदाहरण के लिए, किसी देश म ससद की अवधि व चुनाव आदि के विषय मे *सामान्य कानून होता है, उसी के अन्तगत राज्य का अध्यक्ष ससद के विघटन या नये चुनावो* का आदेश देता है।

फौजदारी (या दण्ड) और दीवानी (व्यवहार) कानून—फौजदारी कानून समाज की *व्यवस्था को तोडन से सम्बन्धित होत है।* इस समूह म चोरी, डकैती, दग, हत्या आदि बातो से सम्बन्धित कानून आते हैं। दीवानी कानूनो का सम्ब ध व्यक्तियो या समूहो के बीच उठने वाल कानूनी विवादो से होता है। य कानून सम्पत्ति, उत्तराधिकार, साझेदारी, इकरार, व्यवसाय, व्यापार आदि बातो के विषय मे उठने वाले विवादो स सम्ब ध रखते है। भारत म न्यायपालिका का सगठन ही इस भेद पर आधारित है कि कुछ न्यायालय और न्यायाधीश केवल दीवानी मुकदमे तथा दूसरे फौजदारी मुकदमे सुनते है। प्रत्येक जिले म विभिन्न स्तरो की फौजदारी व दीवानी अदालतें हैं।

4 न्यायपालिका का महत्त्व और उनके कार्य

महत्त्व—शासन के प्रधान अगो मे तीसरा अग न्यायपालिका का है। किसी देश के शासन की अच्छाई की पहचान उसकी न्यायपालिका की स्वत त्रता, निष्पक्षता और उसके सम्मानित स्थान से की जाती है। साधारण नागरिक को यदि यह विश्वास रह कि आवश्यकता पडने पर वह न्यायालयो की शरण ले सकता है, जहाँ उसको वास्तव म कानूनो के अनुसार न्याय मिलगा, तो उसे बडी मानसिक शान्ति रहती है। ब्राइस ने सत्य ही कहा है कि कुशल न्यायपालिका का होना अच्छे शासन के लिए आवश्यक ही नही है, वरन् यह तो शासन की अच्छाई की पहचान है। बाकर के अनुसार राज्य का सार इस बात म है कि यह प्रभावी कानूनो व नियमो की जीवित व्यवस्था है, इस अथ मे राज्य कानून हैं। न्यायपालिका अर्थात् न्यायालयो का प्रधान काय न्याय का प्रशासन अथवा न्याय करना है। वास्तव म मानवीय सम्बन्धो की सगठित व्यवस्था के लिए विभिन्न मूल्यो को आवश्यक समझा जाता है, यथा स्वत त्रता समता और भ्रातृत्व। प्रत्येक कानूनी व्यवस्था मे ये मूल्य विद्यमान रहते है। न्यायालय को स्वतन्त्रता व समता के दावो क बीच उचित सम्बन्ध कायम करना पडता है। इस दृष्टि से न्याय विभिन्न राजनीतिक मूल्यो म उचित सम्ब ध स्थापित करने की व्यवस्था है। न्याय के विचार के विभिन्न स्रोत माने जाते हैं। कुछ विद्वानो के विचार म न्याय का स्रोत धम है। मध्य युग म ईसाई धम गुरुओ का विश्वास था कि न्याय का स्रोत ईश्वर है और चच उसका साधन है। स्टाइक दाशनिको का यह विश्वास था कि न्याय का स्रोत प्रकृति का कानून (natural law) है, जिसके अनुसार सब व्यक्ति समता के अधिकारी हैं। कुछ विचारक आचार शास्त्र अथवा नतिक नियमो को न्याय का आधार मानते है। ग्रेट ब्रिटेन मे राजा को न्याय का स्रोत माना जाता था। कहन का तात्पय यह है कि न्याय शब्द का अथ विभिन्न दृष्टियो से किया जाता है और ऐसा किया जाना सवथा उचित माना जाता है।

आजकल यह माना हुआ राजनीतिक आदश है कि व्यक्तियो को राजनीतिक क्षेत्र के

है। इनके विपरीत व्यक्तिगत कानून वे कानून होते है जो व्यक्तियो के आपसी सम्बन्धो को विनियमित करते हैं। सार्वजनिक कानूनो का सम्बन्ध राज्य के सगठन और कृत्यो तथा नागरिको व राज्य के बीच सम्बन्धो से है। इनमे नागरिको के सभी राजनीतिक अधिकार आते है और वे नागरिक अधिकार भी, जिनका व्यक्ति राज्य के विरुद्ध उपयोग करता है। इनके तीन मुख्य विभाग—सांविधानिक कानून, प्रशासनिक कानून और फौजदारी कानून व प्रक्रिया है। व्यक्तिगत कानून का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति के अधिकारो की दूसरे व्यक्तियो के हस्तक्षेप से रक्षा करना है। राज्य व्यक्तियो के समस्त सम्बन्धो के स्थान पर केवल उन्ही सम्बन्धो के विनियमित करने की चेष्टा करता है जो उसकी राय मे सार्वजनिक महत्त्व के है और जिनके लिए कानूनी विनियमन आवश्यक है। व्यक्तिगत कानूनो के प्रमुख विभागो मे हम इन्हे गिन सकते है—सम्पत्ति इकरार, निगमो, आपसी सम्बन्धो (विवाह, तलाक इत्यादि) और व्यवहार प्रक्रिया सम्बन्धी कानून। इन सार्वजनिक और व्यक्तिगत कानूनो के समूह को ही म्युनिसिपिल या राष्ट्रीय कानून कहते हैं।

निर्माण की प्रक्रिया के आधार पर कानूनो को सांविधानिक, सविधि प्रशासनिक, कार्यपालिका के आदेश (आज्ञप्ति, decree), अध्यादेश, न्यायालयो के बनाये कानून आदि विभिन्न प्रकारो का बताया जाता है। सांविधानिक कानून वे मौलिक कानून है जो राज्य के सविधान से सम्बन्धित होते है तथा राज्य का सगठन अर्थात् सरकार के तीन प्रमुख अगो—कार्यपालिका, विधानमण्डल और न्यायपालिका की रचना, उनकी शक्तियो और आपसी सम्बन्धो, नागरिको के मूल अधिकारो आदि विषयो से सम्बन्धित है। इन कानूनो और सामान्य कानूनो मे साधारणतया उनके निर्माण की प्रक्रिया मे भेद होता है। सांविधानिक कानून राज्य व सरकार के लिए आधारभूत होते है, इसी कारण इनका विशेष महत्त्व होता है। विधानमण्डल द्वारा पारित किये गये तथा राज्य के अध्यक्ष से अनुमति प्राप्त सभी कानूनो को सविधि (statutes) कहते हैं।

आंगिक कानून (Organic Laws)—फ्रास के सविधान मे ऐसे अनेक प्रावधान हैं जो स्वय मे पूर्ण नही कहे जा सकते, अत उनमे उल्लिखित कुछ बातो का स्पष्टीकरण व निर्धारण करने के लिए आंगिक कानूनो का निर्माण करना आवश्यक है। उदाहरण के लिए, हम कुछ प्रावधानो को लेते है। सविधान मे राष्ट्रपति के निर्वाचन हेतु निर्वाचक मण्डल की रचना दी गई है और उसे कार्यान्वित करने की प्रक्रिया के लिए आंगिक कानून बनाये जाने की बात भी कही गई है। सविधान के अनुसार एक आंगिक कानून यह निर्धारित करने के लिए बनेगा कि मत्रि-परिषद् की बैठको मे कौनसे अन्य पदो पर नियुक्तियाँ की जायेगी तथा उन दशाओ का निर्धारण करने के लिए भी जिनके अन्तर्गत राष्ट्रपति विभिन्न पदो पर नियुक्तियो के करने के अपने अधिकार का प्रतिनिधान (delegation) कर सकेगा। इसके साथ ही आंगिक कानून ससद के प्रत्येक सदन की अवधि, उसके सदस्यो की सख्या, उनकी उपलब्धियाँ व अर्हता की दशाएँ आदि भी निर्धारित करेगा। आंगिक कानून किस प्रकार बनता है, इस विषय मे *सविधान की धारा 46 मे बताया* गया है कि इस उद्देश्य से सरकार या ससद द्वारा विधेयक प्रथम सदन के सामने विचार तथा मत व्यक्त करने के लिए प्रस्तुत किया जायेगा। विचार उसके प्रस्थापित करने के 15 दिन के बाद ही हो सकता है। यदि दोनो सदनो के बीच सहमति का अभाव हो, तो विधेयक उस रूप मे अगीकृत होगा जिसमे कि नेशनल एसेम्बली उसे अपने सदस्यो के पूर्ण बहुमत से अन्तिम वाचन मे स्वीकार करे। सीनेट के सम्बन्ध मे भी आंगिक कानून दोनो सदनो द्वारा इसी प्रकार से पास होने जरूरी हैं। आंगिक कानूनो को सांविधानिक परिषद् द्वारा उनकी सांविधानिकता की घोषणा हो जाने पर प्रस्थापित किया जायेगा।

अध्यादेश, आदेश (आज्ञप्ति) और प्रशासनात्मक कानून—अध्यादेश एक प्रकार का सामयिक अथवा अस्थायी कानून होता है, जिसे आपात्काल मे राज्य का अध्यक्ष कम अवधि के

5 संविधान का निर्वचन और न्यायिक पुनरवलोकन

संविधान के निर्वचन (interpretation) का कार्य बहुत महत्त्वपूर्ण होता है, जो राज्य के सर्वोच्च न्यायालय ही कर सकते हैं। निर्वचन की आवश्यकता सभी लिखित संविधान वाले राज्यों में पड़ती है। परन्तु संघात्मक राज्यों में संविधान के निर्वचन का कार्य कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि ऐसे संविधान का रूप संघ व राज्यों के बीच संधि अथवा अनुबन्ध जैसा होता है। संघात्मक संविधान द्वारा संघीय सरकार व संघातरित राज्यों की सरकारें केवल अपने अपने अधिकार क्षेत्र में ही कानून बना सकती हैं। अस्तु, कभी भी किसी विषय के बारे में यह प्रश्न अथवा विवाद उठ सकता है कि उस पर कानून बनाने की शक्ति संघीय अथवा राज्य सरकारों में से किस को मिली है। यह कार्य किसी सर्वोच्च स्थान प्राप्त व पूर्णतया निष्पक्ष न्यायालय द्वारा ही किया जा सकता है। ऐसे न्यायालय निर्वचन करते समय संविधान के प्राविधानों में कभी कभी नये अर्थ निकाल देते हैं। संविधान के निर्वचन के महत्त्व का एक न्यायाधिपति के अग्रलिखित कथन से भली प्रकार अनुमान लगाया जा सकता है 'हम संविधान के अन्तर्गत हैं, किन्तु संविधान क्या है यह हम बताते है।'[1] भारत में संविधान की धाराओं का निर्वचन उच्च तथा सर्वोच्च न्यायालयों द्वारा किया जाता है।

संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान का संघीय न्यायालयों, विशेषकर सर्वोच्च न्यायालय, ने समय समय पर निर्वचन किया है और उसकी धाराओं की अनेक अधिकृत व्याख्यायें की है। मुख्य न्यायाधिपति मार्शल ने उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में ही इन सिद्धान्तों को अभिव्यक्त किया था—यह ऐसा संविधान है जिसकी हम व्याख्या करते हैं तथा 'विधायिका कानून बनाती है और न्यायपालिका उनका अर्थ लगाती है।' चूंकि सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान की अनेक धाराओं का निर्वचन किया है और ऐसा करते समय अनेक वाक्यांशों तथा धाराओं की बहुत सी व्याख्याएँ की हैं, इसलिए कुछ लेखकों ने सर्वोच्च न्यायालय को न्यायालय के अतिरिक्त एक अर्थ में अनवरत सांविधानिक सम्मेलन कहा है, जो निर्वचन द्वारा फिलडेलफिया सम्मेलन का कार्य जारी रखे हुए हैं।[2] संविधान की विभिन्न धाराओं की व्याख्या करने में सर्वोच्च न्यायालय ने बहुधा उनका उदार अथवा विस्तृत अर्थ लगाया है, जिसके परिणामस्वरूप संविधान द्वारा कांग्रेस को स्पष्ट रूप से दी गई शक्तियों मे निहित शक्तियों का सिद्धान्त निकला है। इसी कारण कांग्रेस की वर्तमान शक्तियां काफी विस्तृत हो गई है। सर्वोच्च न्यायालय ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन इस प्रकार किया है 'संविधान के सही अर्थ मे राष्ट्रीय विधायिका को संविधान द्वारा प्रदत्त शक्तियों को क्रियान्वित करने के लिए साधनों के बारे में वह विवेक प्राप्त होना चाहिए जिससे कि यह निकाय अपने उच्च कर्त्तव्यों का इस प्रकार पालन कर सके कि जनता का सर्वाधिक हित साधन हो, यदि उद्देश्य उचित और वैध हो, यह संविधान की सीमाओं में हो, तो वे सभी साधन जो उसकी प्राप्ति के लिए उचित हो और जिन्हे संविधान ने मना न किया हो सांविधानिक है।'

न्यायिक पुनरवलोकन क्या है ? इस प्रकार की शक्ति का सर्वोच्च न्यायालय को प्रदान किया जाना संघात्मक संविधान की तीन अति आवश्यक शर्तों मे से एक है। इसी आधार पर यह कहा जाता है कि जिन संघात्मक संविधानों मे सर्वोच्च न्यायालय को इस प्रकार की शक्ति प्राप्त नहीं होती वे सच्चे अर्थ में संघात्मक नहीं कहला सकते। न्यायिक पुनरवलोकन की पद्धति का

---

[1] We are under the constitution but the constitution is what the judges say it is —Chief Justice of the Supreme Court of U S A

[2] Thus the Supreme Court is not only a court of justice but in a qualified sense a continuous constitutional convention It continues the work of the convention of 1787 by adapting through interpretation the great charter of government —Beck J M *Constitution of the United States* p 221

अतिरिक्त सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र म भी "याय की प्राप्ति होनी चाहिए। यहाँ पर हम "याय-प्रशासन का अथ केवल कानूना के लागू करने और यायालया के कार्यों से ही लेंगे। विधायिका कानून वनाती है, कायपालिका कानूनो को लागू करती है और न्यायपालिका उनके अनुसार कानून तोडने वालो को उचित दण्ड देती है और आवश्यकता पडने पर उन कानूना का निवचन (interpretation) भी करती है। इसका अथ यह हुआ कि "यायपालिका अत्याचार को रोकती है, क्योकि "यायाधीशा स यह आशा की जाती है कि वे अपना काय निर्भीकता और निष्पक्षता-पूवक करेंगे। इस प्रकार "यायपालिका नागरिका के बीच होने वाल झगडो मे ही "याय नही करती वरन् उन झगडो मे भी याय करती है जो नागरिको और सरकार के बीच उठें। इस अथ मे "यायपालिका वैयक्तिक स्वत त्रता की सबसे महत्त्वपूण रक्षक है। जिन देशो के सविधान मे नागरिका के मूलभूत अधिकारो का वणन होता है, वहाँ ता नागरिक अपने अधिकारो मे किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप के विरुद्ध यायालया म उपचार के हेतु जा सकते हैं। सघात्मक राज्या मे यायपालिका का महत्त्व और भी अधिक होता है, क्योकि उनम सर्वोच्च "यायालय को सविधान का अधिकारपूण निवचन करना होता है और यदि कोई भी सघीय अथवा उप राज्य की विधायिका कोई ऐसा कानून बना देती है जो उसक अधिकार क्षेत्र से बाहर हो, तो सर्वोच्च न्यायालय उसे अवध घोपित करने की शक्ति रखता है।

यापालिका के कार्यों को सक्षेप म अग्रलिखित प्रकार से रख सकते हैं—(1) कानूनो और सविधान का निवचन करना—सबसे प्रमुख काय तो न्यायपालिका का यही है कि वह कानूना और सविधान का निवचन कर। (2) दीवानी मुकदमा मे याय करना—विभिन्न नागरिको के बीच अथवा नागरिको और राज्य के बीच सम्पत्ति व अधिकारो से सम्बन्धित दीवानी मुकदमा मे याय करना। (3) फौजदारी मुकदमो का याय करना—चोरी, डकैती, हत्या आदि मुकदमो मे याय करना भी न्यायालयो का महत्त्वपूण कार्य है। ऐस अपराधो के अभियुक्तो के विरुद्ध यायिक कायवाही राज्य की ओर से की जाती है अर्थात् पुलिस और सरकारी वकील इन मुकदमो को चलाते है। (4) सविधान का सरक्षण—सघात्मक राज्य मे "यायपालिका सविधान की सरक्षक (guardian of the constitution) होती है। कहने का अभिप्राय यह है कि यदि सविधान की धाराओ के विरुद्ध सघ या राज्य की विधायिकाएँ कोई भी कानून बना दें तो उसे सर्वोच्च "यायालय अवैध घोपित कर देता है। (5) नागरिको के मूलभूत अधिकारो की रक्षक—जिन राज्या के सविधानो मे नागरिको के अधिकारो का प्रगणन कर दिया जाता है, उ ह नागरिको के मूलभूत अधिकार कह देते हैं। यदि कोई व्यक्ति अथवा सरकारी अधिकारी उन अधिकारो मे किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप करते है, तो नागरिक अपने अधिकारा की रक्षा के लिए "यायालयो म मुकदमा ल जा सकत हैं। (6) कानून का निर्माण—मुख्यत यायालया का कार्य कानूनो के अनुसार याय करना है। कि तु कभी कभी यायाधीश कानूना का निवचन करते समय अपने निणयो द्वारा कानूनो का सवथा नया अथ लगाते है। उनके निणय भविष्य म कानूनो जसा ही प्रभाव रखत हैं। उनके द्वारा निर्मित कानून 'केस ला (case law) या "यायाधीशो द्वारा बनाये कानून (judge made law) कहलाते है। (7) परामश देना—कुछ राज्या म उच्च न्यायालयो का कायपालिका अथवा विधायिका की प्रायना पर महत्त्वपूर्ण कानूनी प्रश्नो पर परामश देने का अधिकार प्राप्त है। भारत के सविधान के अ तगत यदि कभी भी राष्ट्रपति को ऐसा प्रतीत हो कि किसी कानूनी या तथ्य के प्रश्न पर सर्वोच्च यायालय की सम्मति ली जानी आवश्यक है, तो वह उस प्रश्न पर सर्वोच्च यायालय की सम्मति माँग सकता है और सर्वोच्च यायालय उसके सम्ब ध म आवश्यक सुनवाई के बाद अपनी सम्मति या प्रतिवेदन राष्ट्रपति को देगा।

ाय कानूनो की रचना नही कर सकेगा। परन्तु कुछ विचारको न भारतीय स्थिति की आलोचना ा हुए कहा है कि भारत म विधायी अत्याचार की पर्याप्त सम्भावना है।

आस्ट्रेलिया म सविधान की धाराओ का निवचन उच्च यायालय करता है तथा कुछ ा म प्रीवि परिषद् की यायिक समिति भी कर सकती है। जहाँ तक राष्ट्रमण्डल और राज्य ारा की शक्तियो से सम्बधित किसी विवाद का प्रश्न है, उच्च यायालय ही एस विवादा निणय कर सकता है। सक्षेप म, आस्ट्रेलिया म यायिक पुनरवलोकन की व्यवस्था है। ज़रलण्ड म फेडरल ट्रिब्यूनल को क टनो क विधानमण्डलो द्वारा पारित कानूनो पर पुनर कन की शक्ति प्राप्त है। कि तु सघ सरकार द्वारा पारित कानूनो पर एसा अधिकार नही है, तु स्विटजरलैण्ड म यायिक पुनरवलोकन की सीमित व्यवस्था है। सोवियत सघ म सघ क च्च यायालय को इस प्रकार की शक्ति प्राप्त नही है, क्योकि वहाँ पर सर्वोच्च यायालय ान की धाराओ का निवचन नही कर सकता। यद्यपि सोवियत सघ का सविधान सघात्मक मके सर्वोच्च यायालय को सविधान के निवचन व सर्वोच्च सोवियत द्वारा बनाय गय कानूनो की धानिकता पर निणय करने का अधिकार नही है। यदि इस प्रकार की शक्ति सोवियत सघ हित है तो उसकी प्रेसीडियम म है।[1] कनाडा का सविधान ब्रिटिश पार्लियामट द्वारा निर्मित ा है, अत वहाँ पर सावैधानिक प्रश्नो का निणय प्रीवि परिषद् की यायिक समिति करती ाघ व प्रान्तो की सरकारे सविधान का अतिक्रमण करने वाले कानून नही बना सकती। ऐस ा को यायपालिका द्वारा अवैध घोषित किया जा सकता है। इस प्रकार कनाडा म भी ाक पुनरवलोकन की व्यवस्था है।

फ्रास म चौथे गणतन्त्र क अन्तगत यायिक पुनरवलोकन की व्यवस्था तो न थी, किन्तु सावैधानिक समिति उसकी सावैधानिकता की परीक्षा करती थी। पाचवें गणतन्त्र के ान न उस समिति के स्थान पर एक सावैधानिक परिषद् की स्थापना की है, जिसके अनेक म से एक महत्त्वपूण काय कानूनो की सावैधानिकता पर निणय देना है, जिनका प्रभाव ालिका तथा विधायिका के बीच शक्तियो के सन्तुलन पर पडता है।[2] परिषद् क सामने आने मामल दो प्रकार क होते है—(1) व जिन्ह परिषद् के सामने पेश किया जाना आवश्यक है 2) व जिन्ह पेश किया जा सकता है। पहली श्रेणी में य आते है—पार्लियामट के स्थायी (Standing order), आगिक कानून, और व कानून जिनमे सरकार आनप्तिया द्वारा न करना चाहती है। इस प्रकार पूवगामी सावैधानिक समिति स भिन्न रूप म, वतमान ् का कुछ विषयो पर अनिवाय अधिकार क्षेत्र है। पर तु अन्य मामलो म परिषद् स्वय कोई नही कर सकती, अर्थात यह उन पर तभी निणय कर सकती है। जबकि उन्हे परिषद् क लाया जाये। एसी अपील राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री अथवा नेशनल असेम्बली व सीनट के प्रधान क सामने ले जा सकते हैं। इस प्रकार की अपीलें विधायी प्रक्रिया के दौरान दो स्टेजो जा सकती है। विधेयक पर मतदान होन स पूव सम्बधित सदन का प्रधान और प्रधान- परिषद् के सामने अपील कर सकते है। ऐसा किया जाने पर परिषद् को 8 दिन के भीतर निणय दना होगा। पार्लियामेंट द्वारा विधेयक पास होने पर, पर तु उस राष्ट्रपति द्वारा लागू

[1] It does not appear to have the power of interpreting the Constitution and deciding e constitutionality of laws If that power resides anywhere in the U S S R. it is he Presidium of the Supreme Soviet —Stewart W *Modern Forms of Government*

[2] The major role of the Council is to act as an umpire between the executive and egislature by passing on the constitutionally of the bills and other texts affecting the e of power between the two branches of Government —Laponce J A *The Govern of the Fifth Republic* p 292

उदय और विकास संयुक्त राज्य अमरीका में हुआ और यह उस देश की विश्व को एक महान् देन है। संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायिक पुनरवलोकन अधिकतम मात्रा में पाया जाता है। भारत में भी संघात्मक संविधान है, सर्वोच्च और उच्च न्यायालयों को संसद व राज्य विधानमण्डलों द्वारा बनाये गये कानूनों पर पुनरवलोकन की शक्ति प्राप्त है। परन्तु संयुक्त राज्य अमरीका व भारत में पुनरवलोकन की मात्रा में कुछ अन्तर है। जबकि संयुक्त राज्य अमरीका में 'कानून की उचित प्रक्रिया' वाक्यांश प्रयुक्त हुआ है, भारत के संविधान में उसके स्थान पर 'सिवाय उस प्रक्रिया के अनुसार जिस कानून द्वारा स्थापित किया गया हो' वाक्यांश का प्रयोग हुआ है। फलतः जबकि संयुक्त राज्य अमरीका में सर्वोच्च न्यायालय कांग्रेस द्वारा निर्मित किसी कानून को इस आधार पर भी अवैध घोषित कर सकता है कि उसमें औचित्य का अभाव है। भारत में सर्वोच्च न्यायालय संसद या राज्यों के विधानमण्डलों द्वारा निर्मित कानून की इस दृष्टि से जाँच नहीं कर सकते, वे तो किसी कानून को केवल तभी अवैध घोषित कर सकते हैं जबकि उसकी धारायें संविधान के प्रावधानों का अतिक्रमण करती हों। जैसा कि गोपालन बनाम मद्रास राज्य नामक मुकदमे में जस्टिस दास ने कहा था।

भारत में न्यायपालिका की स्थिति इंग्लैण्ड और संयुक्त राज्य अमरीका के न्यायालयों के बीच की है। हमारा संविधान अंग्रेजी संविधान के विरुद्ध विधायी अधिकारियों पर न्यायालय की सर्वोपरिता को मानता है, परन्तु यह सर्वोपरिता अति सीमित है, क्योंकि यह उसी क्षेत्र तक परिमित है जहाँ पर कि विधानमण्डलों की विधायी शक्तियों पर वैधानिक सीमायें लगी हैं। परन्तु संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान के प्रतिकूल विधायी अधिकारियों पर सभी बातों में हमारा संविधान न्यायालयों की सर्वोपरिता को स्वीकार नहीं करता, क्योंकि सांविधानिक सीमाओं के प्रतिबन्धित क्षेत्र के बाहर संसद और राज्य विधानमण्डल अपने अपने विधायी क्षेत्र में सर्वोपरि हैं और उस अधिक व्यापक क्षेत्र में अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय की भाँति महत्त्वपूर्ण भाग प्राप्त नहीं है।[1]

इसके अतिरिक्त किसी संविधि (कानून) को केवल इस आधार पर अवैध घोषित नहीं किया जा सकता कि वह न्यायालय की सम्मति में स्वतन्त्रता या संविधान की भावना में से किसी *सिद्धान्त का अतिक्रमण करता है जब तक कि वे सिद्धान्त संविधान में समाविष्ट न हों।* किसी संविधि की सांविधानिकता पर निर्णय देते हुए, न्यायालय को कानून की बुद्धिमत्ता या बुद्धिहीनता उसके न्याय और अन्याय से कोई सम्बन्ध नहीं।[2] इस विषय पर हम एक और दृष्टि से भी विचार कर सकते हैं। कुछ लेखकों ने अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय की इस आधार पर आलोचना की है *कि वह एक प्रकार का तीसरा विधायी सदन बन गया है। हमारा संविधान सर्वोच्च न्यायालय को* इस प्रकार के विस्तृत अधिकार प्रदान नहीं करता, अतएव हमारा सर्वोच्च न्यायालय इस दोष से रहित रहेगा। यह उचित ही है कि सर्वोच्च न्यायालय संविधान की धाराओं के निवचन के रूप

---

[1] Instead of judicial supremacy we have the doctrine of legislative supremacy subject to constitutional limitations Though the Supreme Court will nullify an act which is in clear contravention of a constitutional limitation it will not assume the role of suppressing or correcting the law passed by the Legislature under any theory of Natural Rights of justice ideals of the constitution In India the position of the judiciary is somewhere between the courts in England and the United States —Basu D D *Commentary on the Indian Constitution* pp 404-05

[2] A statute cannot be declared unconstitutional merely because in the opinion of the Court it violates one or more of the principles of liberty or the spirit of the constitution unless such principles and their spirit are found in the terms of the constitution

In pronouncing on the constitutional validity of a statute the court is not concerned with the wisdom or unwisdom the justice or injustice of the law —Seervai H M *Constitutional Law of India* p 56

किये जान से पूव, किसी भी सदन का प्रधान, प्रधानम त्री या राष्ट्रपति परिषद् के सामन अपील कर सकता है। परिषद् को अपना निणय एक माह के भीतर देना आवश्यक है, पर तु यदि सरकार ने विधेयक को अविलम्ब कायवाही वाला घोषित कर दिया हो तो निणय 8 दिन के भीतर दिया जायेगा जिस विधेयक को सविधान के विरुद्ध घोषित किया जाता है उस लागू नही किया जाता। परिषद् यह भी निणय करती है कि वह पूण विधेयक अथवा उसके अशो को अवैध घोषित करती है।

यद्यपि जापान मे भी सघात्मक सविधान नही है, फिर भी सर्वोच्च यायालय को सयुक्त राज्य अमरीका व भारत के सर्वोच्च यायालयो की भाति यायिक पुनरवलोकन की महत्त्वपूण शक्ति प्राप्त है। इसके अ तगत सर्वोच्च यायालय ऐसे कानूनो को अवैध घोषित कर सकता है जो सविधान का अतिक्रमण करते हा। यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जापान के सर्वोच्च यायालय को यह शक्ति एकात्मक सविधान के अ तगत मिली है, जबकि भारत व सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान सघात्मक है। यह बात भी उल्लेखनीय है कि जापान मे सर्वोच्च यायालय को यह शक्ति सविधान द्वारा स्पष्ट रूप से प्रदान की गयी है, जबकि सयुक्त राज्य *अमरीका मे इसका आधार स्थापित प्रथा है।*[1]

एक महत्त्वपूण उदाहरण—भारत के सर्वोच्च यायालय ने माच 1967 म एक अति महत्त्वपूण निणय म घोषित किया कि सविधान मे समाविष्ट मूल अधिकारो मे ससद मे कानून द्वारा कोई कमी नही की जा सकती, दूसरे शब्दो म, मूल अधिकारो म परिवतन या सशोधन करने की शक्ति ससद को प्राप्त नही है। इस सम्ब ध मे सविधान के निम्नलिखित दो अनुच्छेदो के निवचन के बारे म विभिन्न मत है। अनुच्छेद 13 (2)—राज्य ऐसी कोई विधि नही बनायेगा जो इस भाग (3) द्वारा दिये गये अधिकारो को छीनती या यून करती हो और इस खण्ड के उल्लघन मे बनी प्रत्यक विधि उल्लघन की मात्रा तक शू य होगी। अनुच्छेद 368—इस सविधान के सशोधन का सूत्रपात उस प्रयोजन के लिए विधेयक को ससद के किसी सदन म पुन स्थापित करके ही किया जा सकेगा तथा जब प्रत्येक सदन द्वारा उस सदन की समस्त सदस्य सख्या के बहुमत स तथा उस सदन के उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्यो के दो तिहाई के अ यून बहुमत से वह विधेयक पारित हो जाता है तब वह राष्ट्रपति के समक्ष उसकी अनुमति के लिए रखा जायगा और विधेयक को ऐसी अनुमति दी जाने के पश्चात् विधेयक के निब धना के अनुसार *सविधान सशोधित हो जायगा।*

सर्वोच्च यायालय के निणय के हित म निहित बातो का प्रभाव बडा ही दूरगामी सिद्ध होगा। इस निणय के परिणामस्वरूप कई प्रश्न उठत है। क्या ससद सविधान मे सशोधन करने क लिए प्रभुत्वपूण (sovereign) नही है? क्या यह निणय सविधान को इतना दुस्सशो य बना देगा कि जन इच्छा द्वारा कोई भी सुगम परिवतन न किया जा सके? इन प्रश्नो क उत्तर दो विरोधी मता के अनुसार दिय गये है। श्री के० एम० मु शी ने, जो कि सविधान सभा क भी सदस्य थे, कहा है कि व यह न सोचते थे कि मूल अधिकार ससद की दया पर निभर रहेगे। पर तु एन० सी० चटर्जी (एक प्रतिष्ठित वकील) न राष्ट्रपति स अपील की कि ससद की प्रभुता के मामल को स देह से ऊपर उठाया जाय। जबकि अधिकतर विचारवान् व्यक्ति इस बात से प्रसन्न हुए कि

[1] The doctrine of judicial review has also been made an integral part of the Japanese constitution which vests the Supreme Court with the supreme judicial power to interpret laws and pass upon their constitutionality Although this follows the American instead of the British practice it goes a step further than the United States where it exists not as a constitutional provision but rather as an established custom —Yanaga C *Japanese People and Politics* p 350

वक्ता ने कहा कि राष्ट्र के जीवन म वह स्थिति उत्पन्न हो सकती है जबकि देन
' (अर्थात् सशोधन सम्बन्धी उपबन्धो) का मशाधन आवश्यक हो। तब ससद की
पना कीजिये जबकि वह यह देखेगी कि उसे सशोधन करने की शक्ति प्राप्त
न आगे यह तक भी दिया कि अनुच्छेद 13 (2) म 'कानून' शब्द मे साविधानिक
रही है। अत सविधान मे सशोधन करने की शक्ति सीमित नही है।
नरवलोकन की समालोचना—इसी शक्ति के प्रयोग द्वारा यायपालिका सविधान
त शक्ति का प्रधानत प्रयोग सर्वोच्च यायालय करता है, जिसे बेक ने सविधान
(balance wheel) बताया है। उसी लेखक के अनुसार सविधान न सर्वोच्च
न की शक्तियो के सम्ब ध म राष्ट्र की अन्तिम अ तरात्मा बताया है। परन्तु
अनुसार यायिक पुनरवलोकन के सिद्धान्त म भी दोष है—पहला, यह सम्भव है
लय काग्रेस द्वारा तयार किय गय कायक्रम को जिसके पक्ष मे जनमत का भी
वी बना सकता है। ऐसा होने का परिणाम यह होगा कि प्रजात त्र शासन एक
।। यायिक पुनरवलोकन की सस्था ने जनता क निर्वाचित प्रतिनिधियो के निर्णय
कभी भी किसी साविधानिक प्राविधान के पूण अथ के बार म स देह उत्पन्न हुआ
निणय को रखा है।[1]
साविधानिक प्राविधानो का निवचन करते समय यायाधीश साधारणतया यह
विधान निर्माताओ का अभिप्राय यह था। पर तु जहा उस समय के वाद विवाद
कोई सकेत न मिलता हो, इस प्रकार का तक स देह पैदा करता है। समक्ष म
डा बग्धी' युग म सविधान के निर्माताओ का अ तर्राज्य वाणिज्य के सम्बन्ध मे
सकता था, जैसा कि रेलो, जहाजो, मोटरो और हवाई जहाज के युग म इसका
दूसर, न्यायाधीश सभी प्रश्नो को केवल कानूनी दृष्टि से ही देखते है, जो
रिवतनशील होती है और बदलती हुई सामाजिक व आर्थिक आवश्यकता के
पाती। तीसरे यह सिद्धा त शक्ति पृथक्करण सिद्धा त के विरुद्ध है, क्योकि इसके
का को कायपालिका और विधायिका क ऊपर सर्वोपरिता मिली है। ब्रोगन ने
क पुनरवलोकन के दो राजनीतिक परिणाम हैं, जो इसके द्वारा होने वाली भलाई
ते है—(1) यह अनुत्तरदायी विधि निर्माण को प्रोत्साहन देता है, और (2) इसके
उद्देश्यो की प्राप्ति बडी दूर और अनिश्चित हो गयी है। परन्तु अब अधिकतर
देशी इस सिद्धा त की आवश्यकता और महत्त्व को स्वीकार करते है।
का पर नियन्त्रण—कुछ व्यक्ति यायपालिका की स्वत त्रता' सिद्धान्त की
, विशेषकर इस बात की कि यायाधीशो का दिग्विन्यास (orientation) कभी-
रोधी होता है। परन्तु यायपालिका पर नियन्त्रण के कुछ सस्थागत रूप है।
कि ही कानूनो का उनकी अवैधता के आधार पर विरोध करे तो विधायिका नय
विरोध से बचने का माग निकाल सकती है, और यायाधीशो के पद से हटाये
म भाग रख सकती है। सविधान को भी सशोधित किया जा सकता है।

[1] ...titution of judicial review substitutes the judgment of judges for the ... elected representatives of the people whenever doubt exists regarding the ... constitutional provision —Friedrich Carl J Constitutional Government ... p 228

प्रणाली सबसे अच्छी मानी जाती है और लगभग सभी प्रगतिशील राज्यों में इसी का अनुकरण किया जाता है। संयुक्त राज्य अमरीका में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति जीवन पर्यन्त होती है। भारत में सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के लिए पद से निवृत्ति की आयु सीमा क्रमशः 65 और 62 वर्ष रखी गयी है।

न्यायाधीशों को पद से हटाना—सदाचरण पद-अवधि के रहते हुए यह आवश्यक है कि प्रत्येक ऐसे राज्य में न्यायाधीशों को विशेष, किन्तु कठिन विधि द्वारा हटाया भी जा सके यदि ऐसा कार्य राष्ट्र हित में हो। इस विधि का प्रयोग भ्रष्टता अथवा अयोग्यता के आधार पर किसी न्यायाधीश को हटाने के लिए किया जाना उचित है, परन्तु किसी न्यायाधीश को हटाने की विधि में अत्यधिक विचार का समावेश होना चाहिए और उसे एक व्यक्ति की इच्छा पर नहीं छोड़ना चाहिए। इसीलिए ब्रिटेन में किसी न्यायाधीश को पार्लियामेंट के संयुक्त आवेदन पर जिसमें उसके ऊपर भ्रष्ट या अयोग्य होने अथवा नैतिक पतन का आरोप लगाया गया हो, ताज द्वारा हटाया जा सकता है। संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायाधीशों को कांग्रेस महाभियोग की कार्यवाही द्वारा हटा सकती है। इस प्रकार की कार्यवाही का प्रारम्भ प्रतिनिधि सदन द्वारा होता है और सीनेट महाभियोग की सुनवाई करती है। ग्रेट ब्रिटेन में न्यायाधीशों को पार्लियामेंट के दोनों सदनों द्वारा सम्बोधन पास करने पर हटाया जा सकता है। संयुक्त राज्य अमरीका के कुछ संघ-रहित राज्यों में प्रत्यावर्तन द्वारा न्यायाधीशों को हटाने की विधि अपनायी गयी है, किन्तु न्यायविद् इस विधि को निन्दनीय समझते हैं। भारत के संविधान के अन्तर्गत इस सम्बन्ध में व्यवस्था इस प्रकार है—कोई भी न्यायाधीश त्यागपत्र द्वारा पद त्याग कर सकता है। किसी भी न्यायाधीश को इस प्रकार पदच्युत किया जा सकता है—सर्वोच्च तथा उच्च न्यायालय का कोई भी न्यायाधीश तब तक पदच्युत न किया जायगा जब तक कि राष्ट्रपति ऐसा आदेश न निकाले, किन्तु ऐसा आदेश राष्ट्रपति तभी देगा जबकि संसद का प्रत्येक सदन कुल संख्या के 2/3 बहुमत से यह पारित करे कि अमुक न्यायाधीश का दुराचार या अयोग्यता के आधार पर हटाया जाय और इस उद्देश्य से राष्ट्रपति के पास सम्बोधन भेजा जाय। इससे यह स्पष्ट है कि संसद ऐसा प्रस्ताव पारित करने से पूर्व उसके बारे में जाँच करायेगी। साथ ही यह आवश्यक नहीं कि राष्ट्रपति उसके प्रस्ताव को मान ही ले।

न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता—कार्यपालिका द्वारा नियुक्त न्यायाधीशों को यदि कार्यपालिका आसानी से न हटा सके और उनकी नियमानुसार पदोन्नति होती रहे तो वे स्वतन्त्र रह सकेंगे। साथ ही विधायिका को उनके वेतन और भत्तों में उनके कार्यकाल में कमी करने की शक्ति नहीं मिलनी चाहिए। ऐसा होने पर न्यायाधीश स्वतन्त्र और निष्पक्ष रह सकते हैं। इस सम्बन्ध में एक बात और भी है, वह यह कि यदि कार्यपालिका अथवा विधायिका किसी भी प्रकार से उनके कार्यों में हस्तक्षेप करे या उन पर अनुचित दबाव डालने का प्रयत्न करे तो समझदार नागरिकों को उनके अनुचित कार्यों की खुलकर आलोचना करनी चाहिए।

न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता की सुरक्षा के लिए अग्रलिखित बातें आवश्यक हैं—(अ) उनकी नियुक्ति कार्यपालिका अध्यक्ष अथवा नामजद आयोग द्वारा की जाय, (आ) एक बार नियुक्त होने पर पद से निवृत्त होने की अवधि तक उन्हें सिवाय दुराचार, मानसिक विकृति या शारीरिक अयोग्यता के आधार के पद से न हटाया जाय, (इ) उनको पर्याप्त वेतन और भत्ते आदि दिए जायँ जिससे वे प्रलोभन में न पड़ें और भ्रष्टाचार में न फँसें और (ई) कार्यपालिका अथवा विधायिका उन पर किसी भी प्रकार का अनुचित दबाव न डाल सके।

संयुक्त राज्य अमरीका में कुछ राज्यों में न्यायाधीशों का चुनाव जनता करती है, परन्तु वहाँ राष्ट्रपति सीनेट के परामर्श और सहमति से नियुक्त करता है। न्यायाधीशों का अन्य देशों में सम्मानित

स्वतन्त्र नही रह सकते । इन कारणो से इस विधि को आजकल पसन्द नही किया जाता ।

(2) जनता द्वारा चुनाव—गत शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे लोकप्रिय राजसत्ता के सिद्धान्त के अनुसार न्यायाधीशो के लोकप्रिय चुनाव को पसन्द किया जाता था । इस विधि को कुछ समय के लिए फ्रास मे अपनाया गया, परन्तु इसके परिणाम निराशाजनक रहे । फिर भी संयुक्त राज्य अमरीका के कई सघान्तरित राज्यो मे इस विधि का प्रयोग जारी है । स्विटजरलैण्ड मे अधीन न्यायालयो के न्यायाधीशो की नियुक्ति के लिए तथा सोवियत सघ मे कुछ सीमा तक इस विधि का प्रयोग होता है । इस विधि मे ये कई दोष है (क) आधुनिक प्रजातन्त्रीय राज्यो मे लोकप्रिय चुनाव का अर्थ भी दलो द्वारा चुनाव से है । इस प्रकार से नियुक्त न्यायाधीशो का दलो के प्रभावाधीन रहना स्वाभाविक है । (ख) इस प्रकार से कम योग्यता वाले तथा कमजोर व्यक्तियो का चुनाव होता है क्योकि मतदाताओ की बडी सख्या योग्यतम व्यक्तियो को चुनने मे यथेष्ट सावधानी नही रख सकती, वस भी योग्यतम व्यक्ति चुनाव की विधि को पसन्द न करने के कारण इससे दूर रहेगे । (ग) यदि न्यायाधीशो की अवधि पुनर्निर्वाचन पर निर्भर करे तो यह स्वाभाविक है कि न्यायाधीश अपने कार्य मे जनमत का ध्यान रखेंगे और ऐसे निर्णय देंगे जो लोकप्रिय हो, चाहे उनमे कानूनी दृष्टि से कमी रहे । सक्षेप मे, इस प्रकार से नियुक्त किये गये न्यायाधीश अपना कार्य स्वतन्त्रता व निष्पक्षता के साथ नही कर सकते । संयुक्त राज्य अमरीका मे इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिलते हैं कि चुनावो मे अच्छे और योग्य उम्मीदवारो की हार हुई ।

(3) कार्यपालिका द्वारा नियुक्ति—आजकल इसी विधि को अधिकतर राज्यो ने अपनाया हुआ है । इसके अनुसार अध्यक्षात्मक शासन पद्धति वाले देशो मे न्यायाधीशो की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा और ग्रेट ब्रिटेन जैसे ससदात्मक पद्धति वाले देशो मे न्याय मन्त्री द्वारा की जाती है । भारत के सविधान के अन्तर्गत सर्वोच्च और उच्च न्यायालयो के न्यायाधीशो की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है । राष्ट्रपति राज्य का अध्यक्ष है और उसे दलगत राजनीति से ऊपर माना जाता है। इसके अतिरिक्त न्यायाधीशो की नियुक्ति मे राष्ट्रपति न्याय मन्त्री के स्थान पर सम्बन्धित न्यायालयो के न्यायाधिपतियो अथवा न्यायाधीशो से परामर्श लेता है । अधीन न्यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति राज्यो के लोक-सेवा आयोगो द्वारा की जाती है । हमारे मत मे यह विधि सर्वश्रेष्ठ है, क्योकि न्यायाधीश अपना कार्य स्वतन्त्रता व निष्पक्षता से कर सकते है । उन पर कार्यपालिका अर्थात् मन्त्रियो व विधायिकाओ के सदस्यो का कोई अनुचित प्रभाव नही पड सकता । ग्रेट ब्रिटेन तथा अन्य कई यूरोपीय देशो मे भारत की भाति निम्नस्तरीय न्यायालयो के न्यायाधीशो की नियुक्ति प्रतियोगी परीक्षाओ के आधार पर ही होती हैं । बहुत से राजनीतिक विचारको को यह विधि अधिक पसन्द है कि न्यायाधीशो की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा हो, किन्तु उन्हे न्यायाधीशो द्वारा तैयार की गयी सुयोग्य व्यक्तियो की सूची मे से ही न्यायाधीश नियुक्त करने का अधिकार हो। इस प्रकार की सूची उस न्यायालय के न्यायाधीशो द्वारा जिसमे कि रिक्त स्थान है, या उच्चतर श्रेणी के न्यायाधीशो द्वारा बनायी जा सकती है । लास्की ने लिखा है, इस विषय मे सब बातो को देखते हुए न्यायाधीशो की कार्यपालिका द्वारा नियुक्ति के परिणाम सबसे अच्छे रहे है ।

न्यायाधीशों की पदावधि— न्यायाधीशो की स्वतन्त्रता और निष्पक्षता के लिए उनकी पदावधि भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी कि उनकी नियुक्ति की प्रणाली । संयुक्त राज्य अमरीका, स्विटजरलैण्ड, सोवियत सघ के सघान्तरित राज्यो मे न्यायाधीशो का जनता द्वारा निर्वाचन होता है, इसी कारण उनके पद की अवधि कुछ ही वर्ष होती है । अल्प अवधि के लिए नियुक्त न्यायाधीश अपनी स्थिति का दुरुपयोग कर सकते हैं । वे न्याय की सभी रीतियो और यहाँ तक कि औचित्य के सिद्धान्तो की उपेक्षा करते हुए अपनी अवधि मे अधिक से अधिक लाभ उठाने का प्रयत्न करेंगे । अत पद से निवृत्त होने की आयु तक सदाचरण (during good behaviour) पदावधि की

उसके विषय मे कुछ साधारण बातें इस प्रकार रखी जा सकती हैं—(1) प्राय प्रत्येक देश म विभिन्न स्तरो अथवा श्रेणियो के यायालयो को एक पिरामिड के रूप मे रखते हैं। उदाहरण क लिए, भारतीय यायपालिका म सबसे ऊपर सर्वोच्च यायालय है, उसके नीचे प्रत्यक राज्य मे एक उच्च यायालय है और उसके नीचे जिले के तथा अधीन यायालय है। (2) सभी देशो म यायपालिका के दो प्रमुख अग होते है—दीवानी यायालय और फौजदारी यायालय। इनके अतिरिक्त विभिन्न राज्यो मे भि न भिन्न प्रकार के यायालय भी होते हैं। भारत म भूमिकर सम्ब धी मुकदमो के लिए माल के यायालय है। ग्रेट ब्रिटेन, सयुक्त राज्य अमरीका, सोवियत सघ आदि राज्यो म कई प्रकार के विशेष यायालय हैं। फ्रास म प्रशासनिक यायालयो की पृथक व्यवस्था है। (3) साधारणतया सघात्मक राज्या म सघीय कानूना और राज्य कानूनो के प्रशासन हेतु दो प्रकार के यायालया के समूह होते हैं। सयुक्त राज्य अमरीका म ऐसी ही व्यवस्था है, कि तु भारत म सभी यायालया को एक ही सघटित व्यवस्था म रखा गया है। (4) कुछ यायालयो म एक ही यायाधीश होता है और कुछ म यायाधीशो की बे च होती है। ग्रेट ब्रिटेन म एक यायाधीश वाले यायालयो मे ज्यूरी का प्रयोग होता है और भारत म भी ज्यूरी पद्धति अपनायी गयी है।

यायालयो का क्षेत्राधिकार—साधारणतया यायालया का क्षेत्राधिकार दो प्रकार का होता है—प्राथमिक (original) और अपील सम्ब धी (appellate)। जिन मुकदमो का जिस यायालय म आरम्भ होता है, उस यायालय का उन मुक्दमा के ऊपर प्राथमिक क्षेत्राधिकार होता है। जिन मुकदमा की अपीले उच्चतर श्रेणी के यायालयो म सुनी जाती हैं उन यायालयो को उन मुकदमो के सम्ब ध म अपीलीय क्षेत्राधिकार प्राप्त होता है। उदाहरण क लिए, भारत म छोट छोटे दीवानी और कम गम्भीर मुकदमे जिले के छोटे न्यायालया म सुने जात हैं, उन यायालया का उन पर प्राथमिक क्षेत्राधिकार है। इन मुकदमा की अपीलें उच्च यायालया म जाती है, अत उ ह अपीलीय क्षेत्राधिकार प्राप्त है। उच्चस्तरीय न्यायालयो को नीचे के यायालया म सुने गये मुकदमो की अपीले सुनन के अधिकार के साथ साथ बडी मालियत के दीवानी मुक्दम सुनने का प्राथमिक क्षेत्राधिकार भी प्राप्त है। जिन यायालया को परामश देने का अधिकार है, वह उनका परामशदात्री क्षेत्राधिकार कहलाता है। भारत के सर्वोच्च यायालय और उच्च यायालयो को कुछ प्रकार के मुकदमो म समवर्ती (concurrent) क्षेत्राधिकार भी प्राप्त है।

यायपालिका का कायपालिका से सम्ब ध—कुछ बाता म कायपालिका यायपालिका पर निय त्रण के अधिकार रखती है, और कुछ म यायपालिका कायपालिका पर निय त्रण के अधिकार रखती है। कायपालिका के यायपालिका पर निय त्रण के तीन मुख्य रूप हैं—(1) कायपालिका यायाधीशो की नियुक्ति, उनक पद स हटाय जाने और स्थाना तरण आदि क सम्ब ध म कम या अधिक अधिकार रखती है। (2) यायालया के निणया का कायरूप कायपालिका ही दती है। एसा करने म कायपालिका ढील अथवा दरी कर सकती है। (3) कुछ यायिक काय अभी तक कायपालिका द्वारा किय जात हैं। उदाहरण क लिए यायालया द्वारा दण्डित व्यक्ति क दण्ड का कम करना, उस निलम्बित करना तथा क्षमादान करना। इसक अतिरिक्त सनिक व नागरिक सवाओ म अनुशासन रखना और अनुशासन भग करन वाल व्यक्तियो का विभागीय दण्ड दना आदि भी एक प्रकार क यायिक काय हैं, जि ह कायपालिका करती है। यायपालिका काय पालिका पर इन बाता म निय त्रण शक्ति रखती है। कायपालिका क सभी अधिकारी, राज्य क अध्यक्ष का छोड़कर जिस कुछ उ मुक्तियाँ प्राप्त होती हैं अवध कार्यों क लिए यायालया क अधीन होत हैं, चाह व प्रशासनिक यायालय ही हो। यायालय सभी अधिकारियो को कानून का उल्लघन या अतिक्रमण करन पर उचित दण्ड दत है तथा उनक विरुद्ध लेख (writ) जारी कर सकत हैं।

काल म आसीन रहने का अधिकार है, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का कार्यकाल तो आजीवन है। उन्हें काफी ऊँचे वेतन मिलते हैं और किसी भी न्यायाधीश का वेतन उसके कार्यकाल मे घटाया नही जा सकता। उन्हे उनके पद से केवल महाभियोग की कठिन कार्यवाही के पश्चात् ही हटाया जा सकता है। कार्यपालिका तथा विधायिका न्यायपालिका के ऊपर किसी भी प्रकार का दबाव नही डाल सकती। न्यायपालिका उतनी ही स्वतन्त्र है जितनी कि संविधान के अन्तर्गत हो सकती थी, किन्तु न्यायाधीशो की नियुक्ति की विधि अवश्य पक्षपातपूर्ण होती है। राष्ट्रपति सदा ही यह प्रयत्न करते रहे है कि जब उन्हें सर्वोच्च न्यायालय मे किसी न्यायाधीश की नियुक्ति करनी होती है तो वे अपने दल के समर्थको को नियुक्त करते है। निम्नस्तरीय न्यायालयो के न्यायाधीशो की नियुक्ति भी राष्ट्रपति द्वारा की जाती है और वह सभी रिक्त स्थानो मे अपने दल के सदस्यो को नियुक्त करता है। इस प्रकार न्यायाधीशों की नियुक्ति राजनीतिक आधार पर होती है किन्तु उन्हें दलीय नियुक्तियो के रूप मे नही समझा जाता।

ग्रेट ब्रिटेन के न्यायाधीश अपने कार्य मे निष्पक्ष व स्वतन्त्र हैं। उनकी स्वतन्त्रता की रक्षा कई प्रकार से की गयी है। न्यायाधीशो की नियुक्ति ताज द्वारा लार्ड चासलर अथवा प्रधानमन्त्री की सिफारिश पर की जाती है और न्यायाधीशो की छांट अनुभवी बरिस्टरो मे से की जाती है। न्यायाधीशों को पद की सुरक्षा प्राप्त है, उनकी नियुक्ति जीवन भर के लिए होती है और वे अपने पदो पर सदाचरण काल तक रहते है। उन्हे केवल ताज ही उनके पद से हटा सकता है और वह भी तब जबकि पार्लियामेंट के दोनो सदन इस उद्देश्य से ताज की सेवा मे सम्बोधन प्रस्तुत करें। इस प्रक्रिया का 200 वर्ष से भी अधिक काल मे कभी प्रयोग नही हुआ है। सिद्धान्त रूप मे ताज निम्नस्तरीय न्यायालयों के न्यायाधीशो को उनके पद से हटा सकता है, परन्तु वास्तव मे उन्हे भी पद की सुरक्षा का पूर्ण अधिकार प्राप्त है। न्यायाधीशो के वेतन इतने पर्याप्त है कि वे घूस आदि के आकर्षण से बचे रहे। मुख्य न्यायाधिपति (Lord Chief Justice) को 11,000 पौण्ड वार्षिक वेतन मिलता है, उससे नीचे के स्तर के न्यायाधीशो को 8 000 पौण्ड तथा निम्न स्तरीय न्यायालयो के न्यायाधीशो को 2,000 से लेकर 2,800 पौण्ड तक। न्यायाधीशो के लिए पद से निवृत्ति की आयु नियत नही है। अत उन्हे पद निवृत्ति के बाद अन्य पद की तलाश नही करनी पड़ती। यह उनकी स्वतन्त्रता को सुदृढ बनाने का महत्त्वपूर्ण तरीका है। इसके अतिरिक्त न्यायाधीशो के वेतन का व्यय राज्य की संचित निधि पर भारित होता है, अर्थात् उस पर मतदान नही होता और उसमे साधारण रूप से कमी या वृद्धि नही की जा सकती। अन्त मे, न्यायाधीश अपने कर्त्तव्य पालन मे जो कुछ करते है उसके लिए उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही नही की जा सकती। न्यायाधीशों के कार्यों की पार्लियामेंट मे अथवा बाहर कोई आलोचना नही की जा सकती, क्योंकि ऐसा करने वालो के विरुद्ध 'न्यायालय के अपमान' की कार्यवाही की जा सकती है। भारतीय न्यायपालिका भी ग्रेट ब्रिटेन व संयुक्त राज्य अमरीका की न्यायपालिकाओं के समान स्वतन्त्र है। न्यायपालिका को यथासम्भव कार्यपालिका तथा विधायिकाओं के प्रभाव से स्वतन्त्र रखा है।

न्यायपालिका की स्वतन्त्रता हेतु संविधान मे अग्रलिखित उपबन्ध हैं—(1) सर्वोच्च और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा न्यायाधीशों के परामर्श से की जाती है। (2) किसी भी ऐसे न्यायाधीश को राष्ट्रपति एक कठोर विधि द्वारा ही हटा सकता है। (3) न्यायाधीशो के वेतनो और भत्तो आदि मे उनके कार्यकाल मे कोई कमी नहीं की जा सकती और साथ ही उनके ऊपर होने वाला व्यय, संघ या राज्यो की संचित निधियों पर भारित है। (4) उनकी स्वतन्त्रता बनी रहे इस उद्देश्य से यह भी व्यवस्था है कि उनके अधीन अधिकारियों और कर्मचारियों की नियुक्ति व सेवा की शर्तों पर नियन्त्रण न्यायाधीशों का ही रहे।

न्यायालयों का संगठन—आजकल न्यायालयों का गठन काफी जटिल होता है, फिर भी

पन्द्रहवा अध्याय

विभिन्न राज्यो मे न्यायपालिका का संगठन

1 ग्रट ब्रिटेन मे न्यायालय

इग्लैण्ड और वेल्स के व्यवहार अथवा दीवानी यायालयो म सबसे महत्त्वपूण यायालयो का सगठन अग्रलिखित है—काउ टी यायालयो का सगठन इस प्रकार किया गया है कि देश का कोई भी भाग उनसे अधिक दूर न रहे। उनका सम्ब ध अधिकाश दीवानी मुकदमा से है, उनमे प्रतिवष लगभग दस लाख मुकदमे दायर होते है। इन यायालयो के अध्यक्ष वैतनिक यायाधीश होते हैं, वे साधारणतया अकेले ही मुकदमो की सुनवाई करते है, यद्यपि वे जूरी का प्रयोग भी कर सकते है। ऐसे यायाधीशो की वतमान सख्या 74 है, यद्यपि यायालयो की सख्या लगभग 400 है। वास्तव म एक ही यायाधीश कई यायालयो मे समय समय पर बठता है। इनका साधारण अधिकार क्षेत्र इस प्रकार है—सभी मुकदमे जिनमे अ तग्रस्त धनराशि 400 पौड से कम हो या भूमि सम्ब धी मामले जिनमे, भूमि का लगान 100 पौड से अधिक न हो। इनसे ऊपर की मालियत के मुकदमा की सुनवाई दोनो पक्षो की सहमति से या तो इ ही न्यायालयो म या उच्च यायालय मे होती है। इन साधारण काउ टी यायालयो के अतिरिक्त इ ही के स्तर के कुछ स्थानो म पुराने यायालय अभी तक चले आ रहे हैं, जसे ल दन शहर का यायालय तथा मेयर का यायालय।

उच्च यायालय (High Court of Justice) सर्वोच्च यायालय (Supreme Court of Judicature) का अग है और इसके दो भाग है—उच्च यायालय तथा अपील का यायालय। उच्च यायालय तीन विभागो म बैठता है—(1) क्वी स वे च डिवीजन, (2) चासरी डिवीजन और (3) प्रोवेट, डाइवोस व एडमिरलटी डिवीजन। पहले डिवीजन म लाड चीफ जस्टिस तथा अ य 27 यायाधीश बैठते है। इसम हर्जाने, ऋण वाणिज्य, भूमि कर सम्ब धी मुकदमे आते है। चासरी डिवीजन म नाम का अध्यक्ष लाड चासलर होता है, परन्तु इसका काय छ यायाधीश करते है, जो वष-भर ल दन म ही रहते हैं। इसके अधिकार क्षेत्र का सम्ब ध साम्य विधि से है और इसम बडी जायदादा, साझेदारी यास और बनामे, कुछ प्रकार के करो, कम्पनिया व दिवालियेपन से सम्ब धित मुकदमो की सुनवाई होती है। तीसरे, डिवीजन म जसा कि नाम से ही पता लगता है, वसीयतो के सबूत, तलाक, समुद्री व जहाजरानी सम्ब धी मुकदमे सुन जाते हैं।

दीवानी कानून के सम्ब ध म अपीलें सुनन के लिए दो यायालय हैं—पहला, अपील का यायालय जो सर्वोच्च यायालय का अग है और दूसरा, लाड सभा। अपील के यायालय का अध्यक्ष एक यायाधीश होता है, जिसे 'मास्टर ऑफ दी रोल्स' कहते हैं और उसकी सहायता के लिए आठ अपीलीय लाड यायाधीश है। इसम काउ टी यायालयो तथा अ य समान यायालयो

न्यायपालिका और विधायिका—कुछ बातो मे एक का दूसरे पर नियन्त्रण होता है। साधारणतया प्रत्येक राज्य म न्यायपालिका के सगठन, यायाधीशा की योग्यता, उनकी नियुक्ति और उनके वेतन व भत्ता आदि के सम्ब ध म आवश्यक कानून विधायिका द्वारा बनाये जाते है। ग्रेट ब्रिटेन म लाड सभा सर्वोच्च अपीलीय यायालय है। सयुक्त राज्य अमरीका म सर्वोच्च न्यायालयो के यायाधीशो के विरुद्ध महाभियोग की कायवाही काग्रेस द्वारा की जाती है। भारतीय ससद भी विहित विधि के अनुसार सर्वोच्च व उच्च यायालयो के यायाधीशो के विरुद्ध पदच्युति के लिए कायवाही कर सकती है। यायपालिका भी विधायिका के ऊपर निय त्रण की शक्ति रखती है। इसम सवसे महत्त्वपूण शक्ति यायिक पुनरवलोकन की है। इस प्रकार याय पालिका सविधान के सरक्षण का महत्त्वपूण काय करती है।

सुव्यवस्थित न्यायपालिका के सम्ब ध म जहाँ तक सम्भव हो सके सभी नागरिको के लिए एक ही प्रकार के कानून और एक ही प्रकार के यायालय होने चाहिएँ तभी कानूनो की दृष्टि मे सभी नागरिको को समान समझा जायेगा। किन्तु इसका अथ यह नही है कि प्रशासनिक कानून की व्यवस्था अवाछनीय है। दूसरे, यायाधीश योग्य, स्वत त्र और निष्पक्ष हो इस आदश नीति के लिए सभी प्रकार की उचित व्यवस्था या साविधानिक उपब ध होने चाहिएँ। यायाधीशा के काय म कायपालिका अथवा विधायिका द्वारा किसी भी प्रकार का अनुचित हस्तक्षेप नही होना चाहिए और यायाधीशो को राजनीति से दूर रहना चाहिए। तीसरे, याय व्यवस्था सीधी और कानून सरल भाषा मे होने चाहिएँ। चौथे, यायपालिका पूणतया कायपालिका से पृथक् रहनी चाहिए। पाचवें, याय शीघ्र और सस्ता अथात् साधारण नागरिको की पहुँच क भीतर होना चाहिए। याय म देरी का अथ अ याय हो सकता है।

विरुद्ध एसाइज न्यायालय में कार्यवाही के लिए भेजा जाता है। इसके साथ ही यदि किसी स्थान पर सोने या चांदी की छिपी हुई वस्तुएँ पायी जाती है, तो कौरोनर उनकी भी छानबीन करता है और उनके असली स्वामी अथवा पता लगाने वाले का निर्णय करता है। इन न्यायालयों को कौरोनस न्यायालय कहते है।

2 संयुक्त राज्य अमरीका मे न्यायालय

सर्वोच्च न्यायालय—सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की संख्या मे काग्रेस ने समय समय पर परिवर्तन किये हैं—1789 में न्यायाधीशो की संख्या 6 थी, 1837 मे वह संख्या 9 रही, 1863 मे 10 और 1869 मे 9 कर दी गई, किन्तु तब से इस संख्या में परिवर्तन नही हुआ है। न्यायाधीशो की नियुक्ति सीनेट के परामर्श और सहमति से राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। 1897 से केवल एक न्यायाधीश का नाम सीनेट ने अस्वीकृत किया है, अर्थात् सीनेट राष्ट्रपति द्वारा नामजद व्यक्तियों को साधारणतया अपनी सहमति प्रदान कर देती है। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए भारत की तरह कोई योग्यताएं निर्धारित नही हैं, परन्तु नियुक्ति करते समय राष्ट्रपति कई बातो पर ध्यान देता है—जैसे न्यायालय की वर्गीय और धार्मिक रचना, नियुक्त किये जाने वाले व्यक्तियों के मत और विचार, उनकी पद के लिए योग्यता आदि। साधारणतया राष्ट्रपति इस पद पर अपने दल के समर्थकों को नियुक्त करते हैं, अतएव न्यायाधीश के पद पर नियुक्ति को दल के लिए राजनीतिक सेवा फल समझा जाता है। परन्तु सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश अधिकतर ख्याति प्राप्त व अनुभवी वकील व न्यायविद् होते हैं। जिन व्यक्तियों को सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनाया जाता है, उनकी औसतन आयु लगभग 50 वर्ष होती है और वे अपने पदों पर 20 से लेकर 40 वर्ष तक कार्य करते है। केवल सर्वोच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को ही 'जस्टिस' कहा जाता है। अन्य सभी न्यायाधीश जज कहलाते हैं। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को 25,000 डालर प्रतिवर्ष मिलता है और मुख्य न्यायाधिपति का वार्षिक वेतन 25,500 डालर है। उनका कार्यकाल आजीवन है, किसी न्यायाधीश का केवल महाभियोग की कार्यवाही द्वारा पदच्युत किया जा सकता है, जो एक कठिन कार्य है। अब तक सर्वोच्च न्यायालय का केवल एक न्यायाधीश इस प्रकार हटाया गया है।

सर्वोच्च न्यायालय के कर्त्तव्यों के बारे में संविधान में तो बहुत कम लिखा है। संविधान ने उसे प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र प्रदान किया है, परन्तु यह अनन्य नही है। इसमे तथा निम्नस्तरीय संघीय न्यायालयों में ऐसे सभी मामलों की सुनवाई होती है जिसका सम्बन्ध राजदूतों, अन्य सार्वजनिक मन्त्रियों, वाणिज्य दूतों से हो या ऐसे मामले जिनमे कोई भी राज्य एक पक्ष हो, अर्थात् जहाँ तक संविधान का सम्बन्ध है, ऐसे मुकदमो की सुनवाई आरम्भ मे ही सर्वोच्च न्यायालय मे भी हो सकती है (अथवा नीचे के न्यायालयों में) परन्तु अन्य सभी मामलों में सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र अपीलीय है। काग्रेस के कानूनों के अन्तर्गत आजकल निम्नस्तरीय संघीय तथा राज्य न्यायालयों के जिन मुकदमो की अपीलें सर्वोच्च न्यायालय मे ले जाई जा सकती हैं उनका सम्बन्ध मुख्यतः ऐसे मामलो से होता है जिनमें संघीय अथवा राज्य कानूनो की सांविधानिकता तथा आर्थिक उद्योगो के विनिमय का प्रश्न अन्तग्रस्त हो। सर्वोच्च न्यायालय की विवेकीय शक्ति बहुत ही विस्तृत है। इसे उत्प्रेषण लेख (writ of certiorari) की प्रार्थनाएँ सुनने की व्यापक शक्ति प्राप्त है। सर्वोच्च न्यायालय के सामने आने वाले अधिकतर मुकदमों का सम्बन्ध सार्वजनिक नीति के महत्त्वपूर्ण प्रश्नो या तकनीकी मामलों से होता है। न्यायालय के निर्वचन सम्बन्धी मार्ग में बड़ी वृद्धि हुई है। संघ और राज्यों द्वारा न्यासों, रेलों, श्रम और आर्थिक मामलों के नियन्त्रण सम्बन्धी कानूनों के निर्वचन हेतु अनेक मुकदमे सर्वोच्च न्यायालय में आते हैं। इसमें साधारण या

और उच्च न्यायालय के सभी डिवीजनों से आने वाली अपीलें सुनी जाती हैं। अपील के न्यायालय में आगे अपीलें लार्ड सभा अथवा अपील न्यायालय की आज्ञा से लार्ड सभा में सुनी जा सकती हैं। ऐसी अपीलों की सुनवाई का साधारण अपीलीय लार्डों में से किन्हीं पाँच द्वारा सुनी जाती है। ये साधारण अपीलीय लार्ड वैतनिक होते हैं और आजीवन पीयर भी। इस प्रकार सभी दीवानी मुकदमों के लिए लार्ड सभा सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय है।

इंग्लैंड और वेल्स में दण्ड या फौजदारी न्यायालय—पैटी सेशन या दण्डाधीशों के न्यायालय सबसे नीचे के न्यायालय हैं, जहाँ पर सभी प्रकार के छोटे मुकदमों की सुनवाई होती है। ये ही न्यायालय अधिक गम्भीर मुकदमों की प्रारम्भिक सुनवाई करके उन्हें उच्चतर न्यायालयों में भेजते हैं। इन न्यायालयों में साधारणतया दो से लेकर सात तक अवैतनिक दण्डाधीश या 'शान्ति के न्यायाधीश' होते हैं, जिनकी नियुक्ति प्रत्येक काउन्टी में और प्रत्येक बरो के लिए लार्ड चांसलर द्वारा की जाती है। केन्द्रीय लन्दन में अधिकतर न्यायालयों में वैतनिक दण्डाधीश नियुक्त हैं और ऐसे दण्डाधीशों की वर्तमान संख्या 29 है। प्रत्येक न्यायालय में एक दण्डाधीश ही मुकदमे सुनता है। क्वार्टर सेशन के न्यायालय भी दो प्रकार के हैं—काउन्टी सेशन व बरो सेशन। दोनों ही साधारणतया वर्ष में चार बार बैठते हैं। इन न्यायालयों में अत्यधिक गम्भीर मुकदमों को छोड़कर अन्य सभी मुकदमे सुने जाते हैं। 65 काउन्टियों में प्रत्येक काउन्टी सेशन न्यायालय में एक योग्य सभापति या उपसभापति अध्यक्ष के रूप में कार्य करता है। यह अध्यक्ष वैतनिक अथवा अवैतनिक हो सकता है। उसके साथ काउण्टी दण्डाधीश। बरो में अध्यक्ष रेकार्डर होता है, जो एक वैतनिक न्याय अधिकारी होता है और अकेले ही सुनवाई करता है। काउन्टी तथा बरो के सेशन न्यायालयों में जूरी का व्यापक प्रयोग होता है।

उच्च न्यायालय की ही एक शाखा एसाइज न्यायालय (Courts of Assizes) है। ये काउन्टी नगरों तथा बड़े शहरों में वर्ष में तीन बार बैठते हैं और इनमें क्वीन्स बेंच का कोई न्यायाधीश अथवा एसाइज कमिश्नर अध्यक्ष रहता है। एसाइज न्यायाधीश विभिन्न नगरों में—एक नगर से दूसरे और दूसरे से तीसरे में—मुकदमों की सुनवाई करते हैं और वे सभी प्रकार के दण्डनीय मुकदमों की सुनवाई करते हैं। लिवरपूल और मान्चेस्टर में ताज के न्यायालय (Crown Courts) हैं, ये एसाइज न्यायालयों के समान हैं। केन्द्रीय फौजदारी न्यायालय जो ओल्ड बैली का प्रसिद्ध न्यायालय है लन्दन और अन्य प्रदेशों के लिए एसाइज न्यायालय है। मुकदमा चलाने वाला अथवा बचाव पक्ष की ओर से कानून के प्रश्न पर दण्डाधीशों के न्यायालयों से अपीलें सीधी उच्च न्यायालय में लाई जा सकती हैं, परन्तु साधारणतया दण्डित व्यक्तियों की अपीलें ही क्वार्टर सेशन न्यायालयों में इसमें आती हैं। ये अपीलें दण्ड अपील के न्यायालय (Court of Criminal Appeal) में सुनी जाती हैं। इसमें लार्ड चीफ अध्यक्ष रहता है और उसके साथ तीन या पाँच क्वीन्स बेंच के अन्य न्यायाधीश बैठते हैं। 1960 के न्याय प्रशासन कानून के अन्तर्गत अपील कोर्ट के निर्णयों के विरुद्ध लार्ड सभा में अपीलें जा सकती हैं।

उत्तरी आयरलैण्ड के दीवानी व फौजदारी न्यायालय इंग्लैण्ड और वेल्स के न्यायालयों के समान ही हैं, उनमें केवल साधारण बातों में अन्तर है। स्कॉटलैण्ड में न्यायालयों का संगठन कुछ भिन्न है। इनके अतिरिक्त ब्रिटेन में कई प्रकार के विशेष न्यायालय भी हैं जिनका संक्षिप्त परिचय देना ही काफी होगा। बच्चों के लिए न्यायालय (Juvenile Courts) भी दण्डाधीशों के न्यायालय हैं, जिनमें सत्तर वर्ष तक की आयु के प्रायः सभी प्रकार के मुकदमों की सुनवाई होती है। जब किसी व्यक्ति की मृत्यु हिंसात्मक कार्य या असामयिक रूप से होती है, तो ऐसी मृत्यु कैसे हुई, कब हुई और कहाँ हुई आदि बातों की छानबीन कौरोनर करता है। कुछ मामलों में जूरी की भी सहायता ली जाती है। यदि मृत्यु का कारण हत्या होता है तो अभियुक्त को उसके

पूर्व वर्णित विभिन्न न्यायालयों की व्यवस्था के अतिरिक्त विशेष प्रकार के मुकदमों की सुनवाई के लिए कई विशेष न्यायालयों की भी व्यवस्था है। दावों का न्यायालय (Court of Claims) में संघीय सरकार के विरुद्ध नागरिकों के दावे सुने जाते हैं। इस न्यायालय की स्थापना 1855 में हुई थी और अब इसमें 5 न्यायाधीश हैं, इसका मुख्य स्थान वाशिंगटन है। आयात निर्यात महसूल के न्यायालय (Court of Customs) में आयात निर्यात महसूल एकत्रित करने वाले अधिकारियों के निर्णयों के विरुद्ध अपीलें सुनी जाती हैं। इस न्यायालय में 9 न्यायाधीश हैं और इसका मुख्य स्थान न्यूयार्क है। कस्टम और पेटेण्ट अपीलीय न्यायालय में 5 न्यायाधीश हैं और यह कस्टम तथा पेटेण्ट आफिस के निर्णय के विरुद्ध अपीलें सुनता है। कर न्यायालय में 5 न्यायाधीश हैं। इसमें कर सम्बन्धी मुकदमों की सुनवाई होती है। इनके अतिरिक्त कांग्रेस ने कोलम्बिया डिस्ट्रिक्ट तथा संयुक्त राज्य द्वारा शासित अधिकृत प्रदेशों के लिए भी न्यायालयों की व्यवस्था की है।

3 भारत में न्यायपालिका

सर्वोच्च न्यायालय—यह भारत का उच्चतम संघीय न्यायालय है। यह एक अर्थ में संविधान का संरक्षक है, क्योंकि इसका सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह है कि यह संघ अथवा राज्यों की सरकारों को संविधान का अतिक्रमण न करने दे। सर्वोच्च न्यायालय को भारत के सभी न्यायालयों के ऊपर अधीक्षण की सामान्य शक्तियाँ प्राप्त हैं और जहाँ आवश्यक हो यह उनकी व्याख्या भी कर सकता है। उसे प्रारम्भिक, अपीलीय और परामर्शदात्री तीनों ही प्रकार का अधिकार क्षेत्र प्राप्त है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधिपति और जब तक संसद अधिक न्यायाधीशों के लिए व्यवस्था न करे 7 न्यायाधीश रहेंगे, अर्थात् संसद इस संख्या में वृद्धि कर सकती है। 1962 के आरम्भ में मुख्य न्यायाधिपति के अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायालय में 13 न्यायाधीश और एक अस्थायी न्यायाधीश थे। सभी न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। इस सम्बन्ध में राष्ट्रपति सर्वोच्च तथा उच्च न्यायालयों के जिन न्यायाधीशों को उपयुक्त समझे उनसे परामर्श करता है, किन्तु मुख्य न्यायाधिपति को छोड़कर अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति के विषय में मुख्य न्यायाधिपति से परामर्श करना आवश्यक है। ये सभी न्यायाधीश 65 वर्ष की आयु तक अपने पदों पर आसीन रहते हैं। इस न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होने वाले व्यक्तियों में ये योग्यताएँ होनी चाहिएँ—(1) वह भारत का नागरिक हो, (2) वह 5 वर्ष तक किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश रह चुका हो या कम से कम 10 वर्ष तक किसी एक या अधिक उच्च न्यायालयों में एडवोकेट रह चुका हो या राष्ट्रपति की सम्मति में वह कानून शास्त्र अथवा न्यायशास्त्र का प्रख्यात विद्वान् हो। मुख्य न्यायाधीश को 5 000 रुपये तथा प्रत्येक अन्य न्यायाधीश को 4,000 रुपये मासिक वेतन मिलता है। प्रत्येक न्यायाधीश को बिना किराये का सरकारी निवास स्थान तथा भारत में यात्रा करने का न्यायोचित भत्ता भी मिलता है। प्रत्येक न्यायाधीश को पद ग्रहण पर विहित शपथ लेनी होती है। पदच्युति के सम्बन्ध में सांविधानिक व्यवस्था इस प्रकार है—कोई भी न्यायाधीश त्यागपत्र द्वारा पद-त्याग कर सकता है। किसी भी न्यायाधीश को इस प्रकार से पदच्युत किया जा सकता है—सर्वोच्च (तथा उच्च) न्यायालय का कोई भी न्यायाधीश तब तक पदच्युत नहीं किया जायगा जब तक कि राष्ट्रपति ऐसा आदेश न निकाले किन्तु ऐसा आदेश राष्ट्रपति तभी देगा जबकि संसद का प्रत्येक सदन कुल संख्या के 2/3 के बहुमत से यह पास करे कि अमुक न्यायाधीश को सिद्ध कदाचार या अयोग्यता के आधार पर हटाया जाय और इस उद्देश्य से राष्ट्रपति के पास सम्बोधन भेजा जाय।

इससे यह स्पष्ट है कि संसद ऐसा प्रस्ताव पास करने से पूर्व उसके बारे में जाँच करायेगी,

सामान्य कानूनो से सम्बन्धित मुकदमा की सुनवाई बहुत कम होती है ।

सर्वोच्च न्यायालय के सामने पेश होने वाले मुकदमे का सम्बन्ध सम्पत्ति, वैयक्तिक अधिकारो, या राज्य व सघ के किसी कानून की वैधता के बारे मे दो पक्षो के बीच कानूनी कार्यवाही से होता है। मुकदमे का तथ्यो के वितरण और विवाद के प्रश्न मे अन्तग्रस्त कानून के रूप मे पेश किया जाता है। सर्वोच्च न्यायालय म मुकदमे की सुनवाई (hearing) साधारण न्यायालयो म अभियुक्ता के विरुद्ध मुकदमे की सुनवाई (trials) से भिन्न होती है। इसम गवाहा को नही बुलाया जाता। न्यायालयो के सामने अटॉर्नी अपने अपने पक्षा मे युक्तिया पेश करते है। न्यायाधीश उनसे प्रश्न पूछ सकते हैं। मुकदमे की पेशी के बाद प्रत्यक न्यायाधीश उठने वाले प्रश्नो तथा उनके सम्बन्ध मे लागू होने वाले कानूनो के बारे म विचार करता है। जब प्रत्येक न्यायाधीश स्वतन्त्र रूप से विचार कर लेता है, न्यायाधीशो का सम्मेलन होता है, जिसम विभिन्न बातो पर वाद विवाद होता है और निणय पर पहुँचा जाता है। यदि आवश्यक हो तो निणय बहुमत से होते हैं। उसके बाद मुख्य न्यायाधिपति तथा अन्य कोई न्यायाधीश न्यायालय की सम्मति तैयार करता है। इस प्रकार स दी गयी सभी सम्मतियाँ सयुक्त राष्ट्र की रिपार्टो म प्रकाशित होती हैं।

सर्वोच्च न्यायालय का महत्त्वपूण काय तो ऊपर वर्णित मुकदमो म सम्मतियाँ देना ही है। दूसरा काय लेखा (writs) सम्बन्धी प्राथनाओ को सुनना और उनमे निणय देना है। न्यायालय के काय का महत्त्व अत्यधिक है। एक ओर यह सविधान का सरक्षक है और विभिन्न सघीय व राज्यो के कानूनो का निवचन कर उनकी वैधता पर निणय देता है दूसरी ओर यह नागरिको के अधिकारो का भी सरक्षक है। इनके अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायालय निम्नस्तरीय सघीय न्यायालयों क प्रशासन पर देख रेख भी करता है। सर्वोच्च न्यायालय के नीचे सघीय न्यायालय मे तीन प्रकार के न्यायालयो का सक्षिप्त विवचन अग्रलिखित है—जिला न्यायालय सघीय न्यायालयो मे सबसे नीचे के स्तर पर हैं, किन्तु इन्ही म अधिकाश मुकदमो की सुनवाई होती है। अतएव इन्हे सघीय न्याय पद्धति की 'रीढ की अस्थि' कहा गया है। इन न्यायालया की सख्या 84 है और इनमे लगभग 200 न्यायाधीश काय करत है। इन न्यायाधीशो की नियुक्ति भी राष्ट्रपति द्वारा सीनेट के परामश व सहमति से होती है। ये अपने पदो पर सदाचरण काल तक अर्थात् आजीवन रहते हैं, परन्तु इन्हे यह विशेषाधिकार प्राप्त है कि वे 70 वष की आयु पर पद से निवृत्त हो सकते है और उसके बाद भी उन्हे पूरा वेतन पेशन के रूप म मिलता है। इन न्यायाधीशो को 15,000 डालर प्रतिवष वेतन मिलता है। ये न्यायालय सघीय कानूनो के अधिकार क्षेत्र म दोनो ही प्रकार को दीवानी व फौजदारी मुकदमे सुनते हैं। 20 डालर से कम मालियत के दीवानी मुकदमो को छोडकर सभी अन्य मुकदमा की सुनवाई ये जूरी की सहायता स करते है। फौजदारी मुकदमे जो सघीय कानूनो के उल्लघन के परिणामस्वरूप चलाये जाते है—जसे मूल्य नियन्त्रण, महसूली माल को चोरी से मँगाना या बाहर भेजना, मनुष्या के अपहरण आदि को रोकने सम्बन्धी कानूनो के विरुद्ध अपराध। सभी प्रकार के मुकदमो का अधिकार क्षेत्र प्राथमिक है।

अपीलीय सर्किट न्यायालय जिला न्यायालयो के ऊपर वाले स्तर के न्यायालय है। इनका सम्पूण काय अपील सुनने का है और इनम जिला न्यायालयो म अपीले आती है। इनका मुख्य काम कानूनी विवादग्रस्त प्रश्ना पर निणय करना है। नियम यह है कि अपीलीय न्यायालय मे 3 जजो की बेंच होती है। अधिकतर मामलो म इनके निणय अन्तिम होते हैं, इसी प्रकार ये बहुत बडी सख्या मे अपीला को सर्वोच्च न्यायालयो मे जाने स रोकते है इनमे आये हुए अत्यधिक मुकदमा को ही सर्वोच्च न्यायालय अपने सामने आन देता है। सम्पूण राज्य क्षेत्र 10 स[illegible] बँटा है और प्रत्येक मे एक सर्किट न्यायालय है। इन न्यायालया के न्यायाधीश भी [illegible] सीनेट के परामश और सहमति से नियुक्त किय जाते हैं।

उपस्थित होने का आदेश, किसी भी आलेख की खोज या पत्री करने या छानबीन करन का आदेश देने की भी शक्ति प्राप्त है।

यदि किसी भी राष्ट्रपति को ऐसा प्रतीत हो कि किसी कानून या तथ्य के प्रश्न पर सर्वोच्च न्यायालय की सम्मति ली जानी आवश्यक है तो वह उस प्रश्न पर सर्वोच्च न्यायालय की सम्मति माग सकता है और सर्वोच्च न्यायालय उसके सम्बन्ध म आवश्यक सुनवाइ के उपरान्त अपनी सम्मति का प्रतिवेदन राष्ट्रपति को देगा, किन्तु न्यायालय ऐसा करने के लिए बाध्य नही है और इसकी सम्मति को अन्य न्यायालय भी कानूनी रूप म स्वीकार करन को बाध्य नही हैं। सर्वोच्च न्यायालय को अपनी काय प्रणाली तथा व्यवहार के विनियमन क लिए व्यापक शक्तियाँ प्राप्त है। परन्तु किसी भी ऐसे प्रश्न का निणय करने के लिए, जिसम सविधान क निवचन स सम्बन्धित कानून या कोई महत्त्वपूण प्रश्न अन्तग्रस्त हो, कम से कम पाँच न्यायाधीशो की बच बठेगी। अन्य मामलो की सुनवाई एक या अधिक न्यायाधीश करेंगे, जैसा नियमो द्वारा विहित किया जाये। न्यायालय के सभी निणय न्यायाधीशो के बहुमत से किय जाते हैं, किन्तु कोई भी न्यायाधीश यदि वह बहुमत निणय से सहमत न हो, अपना पृथक अथवा असहमतिपूण निणय द सकता है। सभी निणयो और सम्मतियो को खुले न्यायालय म दिया जाता है। इन बातो स एक बात स्पष्ट है, वह यह है कि भारत के सविधान मे सर्वोच्च न्यायालय से सम्बन्धित उपबन्ध अन्य किसी भी देश क सविधान की अपेक्षा अधिक विस्तृत हैं।

राज्यो मे उच्च न्यायालय—प्रत्येक स्वायत्तपूण राज्यो म एक उच्च न्यायालय है, जो अभिलेख न्यायालय है और उसे न्यायालय के अपमान के लिए दण्ड देने का भी अधिकार प्राप्त है। प्रत्येक न्यायालय म एक मुख्य न्यायाधिपति तथा उतने न्यायाधीश रहत हैं जितनी कि सख्या राष्ट्रपति समय-समय पर आवश्यक समझकर नियत करे। उच्च न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा भारत के मुख्य न्यायाधिपति, राज्य के गवनर तथा (मुख्य न्यायाधिपति को छोडकर अन्य न्यायाधीशो की नियुक्ति क समय) राज्य क मुख्य न्यायाधिपति के परामश से की जाती है। प्रत्येक न्यायाधीश अपने पद पर 60 वष की आयु तक आसीन रहता था, पन्द्रहवें सशोधन अधिनियम, 1963 के द्वारा यह आयु सीमा 62 वष कर दी गई है। परन्तु कोई भी न्यायाधीश (1) त्याग पत्र द्वारा अपना पद अवधि से पूव ही त्याग सकता है, (2) उस राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश की तरह पदच्युत भी किया जा सकता है, अथवा (3) वह अपना पद सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होने पर या किसी दूसरे उच्च न्यायालय मे स्थानान्तरित होने पर खाली कर सकता है। कोई व्यक्ति उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त हो सकता है, यदि वह (1) भारत का नागरिक हो, (2) भारत के राज्य क्षेत्र की सीमा म 10 वष तक न्यायिक पद पर आसीन रहा हो या राज्य के उच्च न्यायालय अथवा अन्य उच्च न्यायालयो म 10 वष तक एडवोकेट रहा हो। प्रत्येक न्यायाधीश को अपना पद ग्रहण करने से पूव विहित शपथ लनी आवश्यक है। प्रत्येक न्यायाधीश को 3,500 रुपय मासिक वेतन व भत्ते मिलते है किन्तु मुख्य न्यायाधिपति का मासिक वेतन 4,000 रुपये है। जब कभी मुख्य न्यायाधिपति का पद किसी कारण से रिक्त हो जाये तो उसके कत्तव्यो का पालन कोई भी ऐसा अन्य न्यायाधीश करेगा जिसे राष्ट्रपति इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे। किसी भी राज्य के उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति राष्ट्रपति की पूव स्वीकृति से किसी भी ऐसे व्यक्ति से, जो किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश रह चुका हो, उस राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप म काय करने की प्राथना कर सकता है और ऐसे न्यायाधीश को वही उपलब्धियाँ प्राप्त होगी जो कि राष्ट्रपति उसके लिए निर्धारित करे।

साधारणत प्रत्यक उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की सीमा उस राज्य की सीमा है,

साथ ही यह आवश्यक नही कि राष्ट्रपति उसके प्रस्ताव को मान ही ले। जब कभी मुख्य न्याया धिपति अनुपस्थित हो या उसका पद रिक्त हो, चाहे किसी भी कारण से ऐसा हो तो उसके कर्तव्या का पालन किसी ऐसे अन्य न्यायाधीश द्वारा किया जायेगा कि राष्ट्रपति उस प्रयोजन स नियुक्त करे। यदि किसी समय न्यायालय की कायवाही जारी रखने के लिए गणपूर्ति की कमी हो तो मुख्य यायाधिपति राष्टपति की पूव सहमति स तथा सम्बन्धित उच्च यायालय के मुख्य याया धिपति के परामश से उस न्यायालय के किसी यायाधीश से ऐसी बठको म तदथ न्यायाधीश के रूप म उपस्थित होने की प्राथना कर सकता है, परन्तु ऐसा यायाधीश भी वही व्यक्ति बनाया जा सकता है जिसम सर्वोच्च न्यायालय क यायाधीश होने की योग्यताए मिलती हा। इस प्रकार से मुख्य न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय के पेंशन प्राप्त यायाधीशो को भी विनियुक्त कर सकता है। जबकि तदथ यायाधीश के प्रति उपलब्धिया आदि के सम्बन्ध मे सर्वोच्च यायालय के न्यायाधीश जैसा ही व्यवहार होगा, कायवाहक न्यायाधीशो को राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित उपलब्धिया मिलेगी।

केवल सर्वोच्च न्यायालय को ही अग्रलिखित प्रकार के विवादा के विषय म प्राथमिक अधिकार क्षेत्र प्राप्त है—(1) जो विवाद भारत सरकार तथा किसी अन्य राज्य सरकार क बीच उठे। (2) जिस विवाद म भारत सरकार और एक या अधिक राज्य सरकारे एक ओर हा तथा अन्य कोई एक या अधिक राज्य दूसरी ओर हो, और (3) जब कभी दो या अधिक राज्यो क बीच म कोई ऐसा विवाद उठ जिसम कि कानून या तथ्य का कोई प्रश्न अन्तग्रस्त हो और जिसके ऊपर किसी कानूनी अधिकार का अस्तित्व या विस्तार निभर हो। यदि कोई उच्च यायालय यह प्रमाणित करे कि अमुक मामल म सविधान के निवचन सम्बन्धी कानून का सारमय प्रश्न अन्तग्रस्त है जो उच्च यायालय के निणय, प्रादश आदि से दीवानी अथवा फौजदारी या अन्य कायवाही क फलस्वरूप उठे तो ऐसे मामला की अपील सर्वोच्च न्यायालय म की जा सकेगी। किसी मामल मे उच्च यायालय अपील करने की आज्ञा न दे तो सर्वोच्च यायालय अपील करने की विशेष आज्ञा प्रदान कर सकता है। यायालय के निणय अथवा प्रादेश क विरुद्ध किसी भी ऐस दीवानी के मामल म सर्वोच्च यायालय म अपील की जा सकती है।

यदि (1) उच्च यायालय यह प्रमाणित करे कि उसम कम से कम बीस हजार रुपय की मालियत का प्रश्न अन्तग्रस्त है या (2) वह ऐसा उपयुक्त मामला है जिसम कि सर्वोच्च न्यायालय म अपील की जा सकती है। तीसर, फौजदारी कायवाही के फलस्वरूप किसी उच्च न्यायालय द्वारा दिये गय किसी निणय अथवा दण्ड क विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय म अपील की जा सकती है यदि (1) उच्च यायालय ने अपील म किसी अभियुक्त की मुक्ति क आदेश को पलट दिया हो और उस मत्यु दण्ड दिया हो, या (2) उच्च यायालय न किसी मामले को अधीन न्यायालय से हटाकर स्वय अभियुक्त को मत्यु दण्ड प्रदान किया हो, या (3) उच्च यायालय यह प्रमाणित करे कि अमुक मामला ऐसा उपयुक्त मामला है जिसकी अपील सर्वोच्च न्यायालय म की जा सकती है।

उपयुक्त अधिकार क्षत्र के अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायालय को यह भी अधिकार है कि वह किसी भी अन्य यायालय या न्यायाधिकरण क, उनको छोडकर जो सशस्त्र सनाओ के द्वारा या उनस सम्बन्धित कानून के अन्तगत स्थापित किये गय हों, निणय अथवा प्रादेश आदि के विरुद्ध भी अपील करन की आज्ञा प्रदान कर सकता है। सर्वोच्च न्यायालय को अपन निर्णय या आदश पर पुनरवलोकन की शक्ति भी प्राप्त है। ससद चाहे तो सघीय सूची म प्रगणित विषया क सम्बन्ध म सर्वोच्च न्यायालय को शक्तियाँ व अधिकार क्षेत्र प्रदान कर सकती है। सर्वोच्च यायालय द्वारा घोषित कानून भारत राज्य क्षत्र म स्थित सभी यायालयो को मानना होगा ससद द्वारा बनाय कानून के प्राविधाना क अधीन सर्वोच्च यायालय या किसी भी व्यक्ति

अपील उससे उच्च स्तर के यायालय म की जाती है। ऐसे मजिस्ट्रेट को छोटे अपराधा से सम्बं धत फौजदारी मुकदम सुनने का भी अधिकार है। एसे दण्डाधीशो की सख्या लगभग 3000 है। प्राथमिक यायालय सुधारात्मक यायालय कहलाते हैं। ऐस यायालय प्राय प्रत्येक काउण्टी के मुख्य स्थान पर होते ह। इनकी सख्या 350 के लगभग है। दीवानी मुकदमो मे इन यायालया का अधिकार क्षेत्र प्रारम्भिक और अपीलीय दोनो ही प्रकार का रहता है। प्रत्येक मुकदमे की सुनवाई तीन यायाधीश करने है। दीवानी मुकदमा म उन यायालया के निणया के विरुद्ध अपीलें 'काट ऑफ अपील' मे की जाती ह, जिनके निर्णय तथ्या और कानून के सम्ब ध म अ तिम होते है। फौजदारी मुकदमो मे इन यायालया से अपीलें 'एसाइज कोट' म जाती है। इन यायालयो का अधिकार क्षेत्र अपीलीय होने के साथ साथ प्रारम्भिक होता है। इनम प्रारम्भ हान वाले मुकदमा की सुनवाई तीन से पांच तक यायाधीश करत है।

उपर्युक्त साधारण यायालया का सगठन पाचवें गणत त्र क आरम्भ तक चला। उन्नीसवी शताब्दी क आरम्भ मे फ्रास म भी शहरो की सख्या और उनमे रहने वाली जनसख्या बढ़ी, जिसके फलस्वरूप शहरी यायालयो पर काय भार बढा। इस दोष को दूर करने के लिए प्रधानम त्री डेबरे की सरकार ने दीवानी यायालया का अधिक जनसख्या वाल क्षेत्रा म स्थानान्तरित किया। इस प्रकार लगभग 3000 'जस्टिस ऑफ दी पीस' अर्थात् दण्डाधीशो के स्थान पर छोटे मामला पर अधिकार-क्षेत्र वाले 455 प्राथमिक यायालय स्थापित किय गय और 351 प्रारम्भिक यायालयो के स्थान पर 172 अधिक महत्वपूर्ण मामलो पर अधिकार क्षेत्र वाले उच्चतर यायालय स्थापित गये।

साधारण यायालयो म उच्चतम यायालय 'कोट ऑफ केसेशन होता है जो सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय है। चौथे गणत त्र म, इस यायालय मे एक प्रथम प्रधान (मुख्य यायाधीश), चार अधीन विभागा के प्रधान और 60 अन्य न्यायाधीश थे। इसी यायालय स मुख्य अभियोक्ता (Chief Prosecutor) और उसके अधीन अधिकारी सम्बद्ध है। इसका प्रथम विभाग (Screening Chamber) मुकदमो की प्रारम्भिक जाच करता है और ऐसी अपीला को रद्द कर देता है जिसम काइ सार नही होता। यह यायालय वास्तव म किसी मुकदम का निणय नही करता, वरन् उसका अ त कर देता है। चौथे गणत त्र के सविधान म उपयुक्त यायालयो के अतिरिक्त, एक उच्च यायालय की व्यवस्था भी थी। इसम 1 प्रधान, 2 उप प्रधान, 30 यायाधीश और 30 आल्टरनेट (alternate) होते थे, जिनम से 20 यायाधीशा व आल्टरनेटा की नियुक्ति नेशनल एसेम्बली अपन सदस्या मे स और शेष को बाहर से अनुपाती प्रतिनिधित्व के अनुसार करती थी। इस यायालय का एक जाच आयोग भी था। यह यायालय महाभियोगो की सुनवाई करता था और ऐसी कायवाही राष्ट्रपति, मन्त्रिया और उनके साथिया क विरुद्ध की जा सकती था। चूंकि उनके विरुद्ध ऐसी कायवाही नेशनल एसेम्बली के प्रस्ताव पर ही की जा सकती थी, अत ऐसी कायवाही किसी के विरुद्ध न की गई।

वतमान सविधान के अ तगत भी 'याय क उच्च यायालय' की स्थापना की गई है। यह एक प्रकार का विशुद्ध राजनीतिक यायाधिकरण है। इस यायालय म सीनेट व नेशनल एसेम्बली द्वारा प्रत्येक चुनाव के बाद निर्वाचित 12 सीनेटर और 12 प्रतिनिधि रहते है। यायालय अपने सभापति और दो उप सभापतिया का चुनाव करता है। राष्ट्रपति के विरुद्ध केवल गम्भीर राज्य-विरोधी अपराधो के लिए इस यायालय मे कायवाही की जा सकती है। उसके विरुद्ध महाभियोग की कायवाही पार्लियामट के दोनो सदना म खुल मतदान द्वारा कुल सदस्या के पूण बहुमत से एक रूप निणय के अनुसार ही हो सकती है। मन्त्रिया और उनके साथिया क विरुद्ध भी इसी प्रकार से उनके द्वारा राज्य की सुरक्षा के विरुद्ध किय गय कार्यों क लिए महाभियोग की कायवाही हो

जिनमें कि वह स्थित है, परन्तु संसद कानून द्वारा किसी उच्च न्यायालय के अधिकार-क्षेत्र के विस्तार में वृद्धि कर सकती है। वर्तमान न्यायालयों का अधिकार-क्षेत्र तथा न्यायाधीशों की शक्तियाँ वही हैं जो उच्च न्यायालयों को संविधान के प्रारम्भ के समय प्राप्त थीं। एक महत्त्वपूर्ण अन्तर केवल यह हुआ है कि अब उच्च न्यायालयों का अधिकार-क्षेत्र भूमि-कर व उसकी वसूली से सम्बन्धित माल के मामलों तक विस्तृत हो गया है। अर्थात् इस सम्बन्ध में संविधान लागू होने के पूर्व जो प्रतिबन्ध उच्च न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र पर था, वह अब हटा दिया गया है। उच्च न्यायालय को दीवानी व फौजदारी दोनों ही प्रकार के मामलों में विशेष रूप से अपने स्थानीय क्षेत्र के लिए प्रारम्भिक अधिकार-क्षेत्र प्राप्त हैं। वे सभी दीवानी मामले जो खफीफा अदालतें नहीं सुन सकतीं, उच्च न्यायालय में ही प्रारम्भ होते हैं। इसी प्रकार से फौजदारी के वे सभी मुकदमे जिनकी सुनवाई अन्य स्थानों पर सेशन्स कोर्ट में होती है, उच्च न्यायालय द्वारा सुने जाते हैं। उनका अपीलीय अधिकार क्षेत्र भी दोनों ही प्रकार के मुकदमों तक विस्तृत है। दीवानी मुकदमों की अपीलें, यदि उनमें कम से कम 5000 रुपये की मालियत का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो, उच्च न्यायालय में की जा सकती हैं। फौजदारी मुकदमों की अपीलें उच्च न्यायालय में तभी सुनी जा सकती हैं जबकि उनमें कानून का कोई महत्त्वपूर्ण प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो। प्रत्येक ऐसे मुकदमों में दिये हुए दण्ड का अनुसमर्थन उच्च न्यायालय द्वारा होना आवश्यक है, जिसमें कि सेशन्स कोर्ट ने अभियुक्त को मृत्यु-दण्ड दिया हो।

प्रत्येक उच्च न्यायालय को अपने क्षेत्र में स्थित, [illegible] करने का भी अधिकार प्राप्त है। प्रत्येक उच्च न्यायालय को राज्य में स्थित सभी अधीन न्यायालयों के अधीक्षण की शक्तियाँ प्राप्त हैं। यह (1) इन न्यायालयों के रिकार्ड को मँगा सकता है, (2) उनकी प्रक्रिया के सामान्य नियमों को बनाता व लागू करता है और इन न्यायालयों की प्रक्रिया व व्यवहार के रूपों को भी नियमित करता है, तथा (3) उन फार्मों को निर्धारित करता है जिनमें हिसाब व अन्य रिकार्ड रखे जाते हैं, परन्तु अधीक्षण की इस शक्ति का विस्तार [illegible] द्वारा अथवा इनसे सम्बन्धित कानूनों के अन्तर्गत बनाये गये न्यायालयों व न्यायाधिकरणों तक विस्तृत नहीं है। यह भी व्यवस्था है कि जब उच्च न्यायालय को सन्तोष हो जाय कि किसी अधीन न्यायालय में कोई ऐसा मुकदमा लम्बित है जिसमें संविधान के निर्वचन [illegible] कानून का कोई सारमय प्रश्न अन्तर्ग्रस्त है तो वह [illegible] उस कानूनी प्रश्न का निर्णय करके उसे अधीन न्यायालय को [illegible]। उच्च न्यायालय के अधिकारियों व कर्मचारियों की नियुक्ति [illegible] न्यायाधीश या पदाधिकारी करता है, परन्तु [illegible] कि इन [illegible] की इन पदों पर नियुक्ति जिनका [illegible] आयोग के परामर्श से की जाय। [illegible] वेतन आदि अधिकारी द्वारा निर्धारित की जाती है, परन्तु वे राज्य विधानमण्डल [illegible] में बनाये कानून के अनुसार होंगे।

न्यायालयों में मुख्य रूप से मुकदमे होते हैं। इनका अधिकार-क्षेत्र प्राय व्यवहार के सभी मुकदमों पर है। साधारणतया मुकदमों की सुनवाई एक ही न्यायाधीश द्वारा होती है, परन्तु गम्भीर मुकदमों की सुनवाई तीन जजों की बेंच द्वारा की जाती है। सभी प्रकार के गम्भीर अपराधों से सम्बंधित मुकदमे भी इन्हीं न्यायालयों द्वारा सुने जाते हैं। सबसे नीचे के स्तर पर 'समरी न्यायालय' हैं। इनकी संख्या 500 से ऊपर है। इनके अधिकार-क्षेत्र में साधारण फौजदारी के मुकदमे और ऐसे दीवानी मुकदमे आते हैं, जिनमें अन्तर्ग्रस्त मालियत 5,000 यन से कम न हो।

उपर्युक्त के अतिरिक्त जिला न्यायालयों की शाखा रूप में पारिवारिक सम्बन्धों के न्यायालय (Court of Domestic Relations) भी हैं। इनका उद्देश्य परिवार के सदस्यों और सम्बंधियों में सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखने में सहायक होना है। इस प्रकार के न्यायालय 240 हैं। उनमें न्यायाधीशों के साथ साथ अव्यावसायिक व्यक्ति भी बैठते हैं। वे वसीयत, तलाक, वायदा भंग, उत्तराधिकार, सम्पत्ति का बँटवारा, गोद लेना, संरक्षण आदि घरेलू सम्बन्धों से उत्पन्न होने वाले मुकदमों का निर्णय करते हैं। प्रत्येक स्तर पर प्रत्येक न्यायालय के तत्सम्बन्धी सार्वजनिक प्रोक्यूरेटर हैं, जो फौजदारी मुकदमों में राज्य का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस प्रकार सर्वोच्च, उच्च, जिला और स्थानीय प्रोक्यूरेटरों के पद हैं। प्रोक्यूरेटर नागरिक सेवक हैं, जिन पर न्याय मन्त्री देख रेख और नियन्त्रण के अधिकार रखता है। जापान में कानून और न्यायालयों का महत्त्व अन्य देशों की तुलना में कम है। वहाँ पर कुल जनसंख्या लगभग नौ करोड़ है, परन्तु वकीलों की संख्या केवल 6,000 है और सब न्यायालयों के न्यायाधीशों की संख्या 1800 से कम है।

6 स्विट्जरलैण्ड में न्यायपालिका

फेडरल ट्रिब्यूनल में इस समय 25–28 न्यायाधीश रहते हैं। इन न्यायाधीशों का चुनाव छः वर्ष की अवधि के लिए फेडरल एसेम्बली द्वारा किया जाता है। कोई भी ऐसा व्यक्ति न्यायाधीश चुना जा सकता है, जो नेशनल कौंसिल की सदस्यता के लिए योग्य हो। व्यवहार में अनुभवी वकील ही चुने जाते हैं और उन्हें दूसरी अवधि के लिए भी चुन लिया जाता है। इस प्रकार वे अपने पदों पर तब तक रह सकते हैं जब तक वे चाहें। इसलिए यथार्थ में न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता के लिए पूर्ण व्यवस्था है। संविधान के अनुसार फेडरल एसेम्बली के लिए यह आवश्यक है कि न्यायाधीशों में तीनों ही राजभाषाओं का प्रतिनिधित्व हो। प्रथा के अनुसार न्यायाधीशों में केंटनों और राजनीतिक समूहों का भी प्रतिनिधित्व होता है। फेडरल ट्रिब्यूनल का मुख्य स्थान लासेन है।

बहुत ही कम अवसरों पर देश द्रोह या राज्य के विरुद्ध गम्भीर अपराधों के मुकदमे सुनते समय ट्रिब्यूनल ज्यूरी के साथ बैठता है, परन्तु साधारणतया ज्यूरी का प्रयोग नहीं किया जाता। ट्रिब्यूनल विभिन्न प्रकार के कार्यों को करने के लिए अपने को कई न्यायालयों में विभाजित कर लेती है। इसका फौजदारी न्यायालय फेडरल कानूनों के विरुद्ध साधारण अपराधों की सुनवाई करता है। इसका कोर्ट आफ कसेशन ऐसे व्यक्तियों की अपीलें सुनता है जिन्हें केंटनों के न्यायालयों ने केंटनों के कानूनों के विरुद्ध अपराध के लिए दण्डित किया हो और जो यह दावा करे कि उन्हें दिया गया दण्ड संघीय कानून के विरुद्ध है। ट्रिब्यूनल का तीसरा अंग प्रशासनिक न्यायालय सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा किये गये अपराधों सम्बन्धी मुकदमे सुनता है। ट्रिब्यूनल व्यवहार (दीवानी) मुकदमे भी सुनती है।

एक आधार पर फेडरल ट्रिब्यूनल को मौलिक अथवा प्रारम्भिक और अपीलीय अधिकार क्षेत्र प्राप्त है। संघीय संहिताओं में सम्मिलित अधिकांश साधारण दीवानी व फौजदारी कानूनों

सकती है। राज्य विरोधी गम्भीर अपराधा की परिभाषा स्वय सदन व न्यायालय करेगे और न्यायालय ही उनके लिए दण्ड निर्धारित करेगा। न्यायालया के निणया के विरुद्ध, जबकि उन्हे कुल सदस्यो क बहुमत से दिया गया हो, कोई अपील नही की जा सकती। साधारण काल म यह न्यायालय पूणतया निष्क्रिय रहेगा, कि तु यदि सविधान की धारा 16 के अन्तगत राष्ट्रपति द्वारा की गई आपात्कालीन घोषणा के सम्बन्ध म राष्ट्रपति व पालियामट के बीच गम्भीर सघष पैदा हो जाये तो इस न्यायालय को अत्य त महत्त्वपूण काय करना पड सकता है।

यद्यपि वतमान सविधान म भी न्यायिक पुनरवलोकन जसी कोई व्यवस्था नही है, फिर भी उसके अन्तगत एक ऐसे निकाय की रचना हुई है जो कुछ विशिष्ट दशाओ और सकुचित रूप से परिभाषित सीमाओ के भीतर सरकार या पालियामट क कार्यों की सावैधानिकता पर निणय देने का काय करती है। यह काय सावैधानिक परिषद् का है, जिसने वतमान सविधान म पूवगामी सावैधानिक समिति का स्थान लिया है। इसम गणतन्त्र के भूतपूव राष्ट्रपति पदेन सदस्य है, उनक अतिरिक्त इसके नौ सदस्य है जिन्हे नौ वप की अवधि के लिए छाँटा जाता है। उनम से तीन राष्ट्रपति द्वारा तीन नेशनल एसम्बली के प्रधान और तीन सीनेट क प्रधान द्वारा चुने जाते है। भूतपूव राष्ट्रपतिया के अतिरिक्त नौ सदस्या मे से एक तिहाई प्रति तीन वप बदल जाते हैं। परिषद् का सभापति गणतन्त्र के राष्ट्रपति द्वारा चुना जाता है और उसे सम मत आने पर अपना निर्णायक मत दने का अधिकार है। परिषद् के सदस्य अपने कायकाल म न्यायपालिका, पालियामट अथवा अन्य किसी सावैधानिक अग के अथवा प्रशासनिक पद धारण नही कर सकते।

5 जापान में न्यायालय

इसम मुख्य न्यायाधिपति सहित 15 न्यायाधीश है, जिनम कम स कम 10 न्यायाधीश ऐसे व्यक्ति होते है जिनकी कानूनी क्षेत्र म उच्च व्यावसायिक योग्यताएँ हो परन्तु शेप न्यायाधीशा को अन्य क्षेत्रो स चुना जा सकता है। इस उद्देश्य से कि सर्वोच्च न्यायालय पर काय का अधिक भार न रहे, उसका अधिकार-क्षेत्र अपीलें सुनने तक ही सीमित है। अपीलें ऐस मुकदमो की आती है जिनम कानूनी प्रश्न अन्तग्रस्त होते हैं। सर्वोच्च न्यायालय की प्रक्रिया म एक नई बात यह है कि न्यायाधीश विरोधी मत भी दे सकते हैं। सर्वोच्च न्यायालय अन्तिम न्यायालय है। इस किसी भी कानून, आदश, विनिमय और सरकारी काय की सावैधानिकता पर निणय देने की शक्ति प्राप्त है। सर्वोच्च न्यायालय को नियम बनाने की भी बडी व्यापक शक्ति प्रदान की गई है। उनके अन्तगत यह प्रक्रिया और व्यवहार के नियमो का निर्धारण करती है। साथ ही एटार्नियो स सम्बन्धित मामला, न्यायालय के आन्तरिक अनुशासन और न्यायिक मामलो के प्रशासन क बारे म भी यही न्यायालय नियम निर्धारित करता है। सर्वोच्च न्यायालय अपनी नियम बनाने की कुछ शक्ति को अधीन न्यायालयो को भी प्रदान कर सकता है। सावजनिक प्रोक्यूरटर भी सर्वोच्च न्यायालय की नियम बनाने की शक्ति क अधीन है। वतमान सविधान म ज्यूरी पद्धति की व्यवस्था नही है। सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनरवलोकन की महत्त्वपूण शक्ति प्राप्त है। इसके अन्तगत सर्वोच्च न्यायालय ऐसे कानूनो को अवैध घोपित कर सकता है जो सविधान का अतिक्रमण करत हो।

सर्वोच्च न्यायालय के ठीक नीचे आठ उच्च न्यायालय है जिनका अधिकार क्षेत्र जापान के आठ भौगोलिक विभागा के अनुरूप है। इनका अधिकार क्षेत्र भी प्रधानत अपने-अपन क्षेत्र में अपीलीय है और अधिकाश मामलो म उनक निणय अन्तिम होते है। इनक नीच क जिला न्यायालय हैं। इनकी सख्या 49 है और प्रत्यक प्रीफेक्चर म एक जिला न्यायालय है

ही सौंपा हुआ है। प्रत्येक संघीय क्षेत्र म अपनी पृथक यायपालिका है। संघ क यायालयों की इस पद्धति के ऊपर लदन म स्थित प्रिवी कौंसिल की यायिक समिति म अपीलें जा सकती हैं, परन्तु कुछ महत्त्वपूर्ण सांविधानिक प्रश्नों के सम्बन्ध म अपीलें उच्च यायालय क प्रमाण पत्र द्वारा ही की जा सकती है। एसे मामलों म जिन पर राज्य का अनन्य अधिकार क्षेत्र हो, राज्य क सर्वोच्च यायालय क निर्णयों क विरुद्ध अपीलें सीधी प्रिवी कौंसिल म की जा सकती हैं। उच्च यायालय तथा संघीय संसद द्वारा स्थापित अय न्यायालयों क यायाधीशों को (1) सपरिषद् गवर्नर जनरल नियुक्त करता है, (2) उन्हें सपरिषद् गवर्नर जनरल क अतिरिक्त कोई पद स नहीं हटा सकता और वह भी कवल तब ही हटा सकता है जबकि संसद क दोनों सदन एक ही सत्र म सिद्ध कदाचार या अक्षमता के आधार पर उन्हें हटाने के लिए सम्बोधन प्रस्तुत कर, और (3) उन्हें संसद द्वारा नियत पारिश्रमिक मिलता है, जिसम उनक कार्यकाल म कमी नहीं की जा सकती।

इस समय उच्च यायालय म मुख्य यायाधिपति के अतिरिक्त छ अय यायाधीश हैं। उनकी नियुक्ति आजीवन कार्यकाल क लिए की जाती है और उन्हें सपरिषद् गवर्नर-जनरल ही पद से हटा सकता है, जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है। उच्च यायालय का मुख्य स्थान मलबोन शहर म है, परन्तु अवसर के अनुसार यायालय अय राज्यों की राजधानियों म भी बैठ सकता है। संघीय यायपालिका कानून म यह प्राविधान है कि उस दिन स जिसकी कि उद्घोषणा की जायगी उच्च यायालय का मुख्य स्थान संघ की राजधानी कैनबरा हो जायगा। उच्च यायालय का अधिकार-क्षेत्र दो प्रकार का है—अपीलीय और प्राथमिक। अपीलीय यायालय के रूप म संविधान ने उच्च यायालय को अग्रलिखित के निणयों के विरुद्ध अपीलें सुनने और उनका निणय करने की शक्ति प्रदान की है जो कुछ अपवादों और विनिमयों के अधीन है—(1) उच्च यायालय के प्राथमिक अधिकार क्षेत्र में किसी यायाधीश द्वारा दिये गये निणय, (2) किसी अय संघीय यायालय के निणय, (3) किसी राज्य यायालय के निणय, यदि राष्ट्रमण्डल की स्थापना क समय उस यायालय के निणयों के विरुद्ध अपीलें सीधी प्रिवी कौंसिल म जाती थीं। इस प्रकार उच्च यायालय राज्यों के उच्चतम यायालयों के ऊपर यायपालिका अधिनियम के प्राविधानों के अधीन, जो कम महत्त्व के मामले म अपील ऊपर जाने स रोकते हैं, साधारण रूप म अपील यायालय है।

जहाँ तक प्राथमिक अधिकार क्षेत्र का सम्बन्ध है, संविधान के सैक्शन 75 के अनुसार उच्च यायालय को ऐसा अधिकार क्षेत्र निम्नलिखित मामलों म प्राप्त है—(1) जो किसी संधि से उत्पन्न हो, (2) अय देशों के दूतों व प्रतिनिधियों पर प्रभाव डालने वाले, (3) जिसम राष्ट्रमण्डल या कोई व्यक्ति जो राष्ट्रमण्डल के विरुद्ध मुकदमा चलाये या जिसके विरुद्ध राष्ट्रमण्डल की ओर से मुकदमा चलाया जाय, एक पक्ष हो, (4) राज्यों या विभिन्न राज्यों म रहने वाले निवासियों के बीच या एक राज्य और किसी अय राज्य के निवासियों के बीच जो विवाद उठें और (5) जिनमे राष्ट्रमण्डल के किसी अधिकारी के विरुद्ध कोई पक्ष परमादेश (mandamus) या निषेध (prohibition or injunction) की रिट प्राप्त करे।

इनके अतिरिक्त सैक्शन 76 के अन्तगत संघ की संसद उच्च यायालय को कानून बनाकर अग्रलिखित मामलों के विषय म प्राथमिक अधिकार क्षेत्र सौंप सकती है—(अ) जो संविधान के अन्तगत उठें या जिनमे संविधान के निवचन का प्रश्न अन्तग्रस्त हो (आ) जो किसी ऐसे कानून के अन्तगत उठें, जिसे संसद ने बनाया हो, (इ) जो समुद्रीय अधिकार क्षेत्र मे आते हों, (ई) उस एक ही विषय स सम्बन्धित हों जिसके बारे म विभिन्न राज्यों के कानूनों के अन्तगत मुकदमा दायर किया जाय। यायपालिका कानून ने उच्च यायालय को इन मामलों के बारे म प्राथमिक अधिकार क्षेत्र प्रदान किया है—(1) संविधान के अन्तगत उठने वाले व ऐसे मामले जिनमे

का प्रशासन केन्टनो और अद्ध केन्टनो के न्यायालयो द्वारा किया जाता है। इन न्यायालयो के ऊपर फेडरल ट्रिब्यूनल को पुनरवलोकन का केवल सीमित अधिकार प्राप्त है, क्योकि केन्टनो के न्यायालयो से ऐसे दीवानी मुकदमो की अपीले फेडरल ट्रिब्यूनल म आ सकती ह जिनमे ऊँची मालियत के प्रश्न अन्तग्रस्त हो। अन्य सभी मामलो मे फेडरल ट्रिब्यूनल का अधिकार क्षेत्र मौलिक अथवा प्राथमिक है। इसके सामने ऐसे सभी दीवानी मुकदमे आते हैं जिनका सम्बन्ध सघ और केन्टनो तथा विभिन्न केन्टनो के बीच उठने वाले विवादो से हो। इसम ऐसे भी मुकदमे आते हैं जिन्ह कोई व्यक्ति सघ अथवा किसी केन्टन की सरकार के विरुद्ध दायर करे और उसम अन्तग्रस्त मालियत 4,000 फ्रेंक से अधिक हो। फौजदारी मुकदमो म इसका अधिकार क्षेत्र ऐसे सभी मुकदमो तक विस्तृत है जिनका सम्बन्ध देश द्रोह, सघीय अधिकारियो के विरुद्ध विद्रोह और हिंसा तथा राष्ट्रो के कानून के विरुद्ध दण्डनीय अपराधो से हो। ऐसे मुकदमो की सुनवाई ज्यूरी की सहायता से की जाती है। फौजदारी के मुकदमे सुनने के लिए ट्रिब्यूनल समय समय पर देश के पाँच विभिन्न केन्द्रो म बैठती है। एसाइज न्यायालय मे ट्रिब्यूनल के तीन न्यायाधीश ज्यूरी के बारह सदस्यो के साथ मुकदमो की सुनवाई करते है। 1942 से राजनीतिक अपराधो तथा सामान्य कानूनो के विरुद्ध अपराधो के लिए मृत्यु दण्ड का अन्त हो गया है, परन्तु युद्ध-काल म सनिक कानूनो के अन्तर्गत अब भी मत्यु-दण्ड दिया जा सकता है।

स्विट्जरलैण्ड की फेडरल ट्रिब्यूनल को सघीय कानूनो के ऊपर न्यायिक पुनरवलोकन का अधिकार प्राप्त नही है। इसी कारण जसा कि रेपर्ड ने कहा है, स्विटजरलण्ड की ट्रिब्यूनल को अमरीका की सर्वोच्च न्यायालय जैसी प्रतिष्ठा और स्वतन्त्रता प्राप्त नही है।[1] स्टिवट के शब्दो म 'स्विटजरलैंण्ड मं, न्यायालय का प्रभाव निम्नतम है, क्योकि वहा सावधानिक एव साधारण विधि निर्माण पर जन निणय द्वारा जनता से परामश करने की प्रथा सुस्थापित है। जहाँ पर अन्तिम पच (निर्णायक) जनता किसी भी प्रश्न पर शीघ्रता और सुविधा से अपना निणय द सकती हो वहा न्यायालय का महत्त्व कम हो जाता है। परन्तु स्विटजरलण्ड म सघात्मक शासन पद्धति, फेडरल ट्रिब्यूनल का सावधानिक अधिकार क्षेत्र सीमित होते हुए भी सफल रही है। यह तथ्य इस सिद्धान्त का खण्डन करता है कि जब तक कानूनी सावधानिकता अथवा नागरिको व केण्टनो के अधिकारो की रक्षा के लिए सर्वोच्च न्यायालय न हो सघात्मक शासन सुचारु रूप से नही चल सकता।

7 आस्ट्रेलिया मे न्यायालय

वहाँ सघीय सर्वोच्च न्यायालय (High Court) की व्यवस्था है जो सब न्यायालयो के ऊपर है। इस न्यायालय की स्थापना स्वय सविधान द्वारा की गयी है। इस न्यायालय को सघ व राज्यो के न्यायालयो के ऊपर अपीले सुनने का अधिकार क्षेत्र प्राप्त है और इसकी स्थिति ऐसे मुकदमो के सम्बन्ध म जिनमे कि सविधान के निवचन का प्रश्न अन्तग्रस्त हो, विशेष महत्त्व की है। आस्ट्रेलिया की ससद ने सम्पूर्ण सघ के राज्य क्षेत्र के लिए दो अन्य सघीय न्यायालयो की रचना की है। उन न्यायालयो के नाम ये हैं—दिवालियपन (Bankruptcy) का सघीय न्यायालय और राष्ट्रमण्डलीय औद्योगिक न्यायालय। किन्तु इन न्यायालयो का अधिकार क्षेत्र बहुत ही सीमित है यद्यपि सघीय ससद को शक्ति प्राप्त है, फिर भी उसने अभी तक सघीय न्यायालयो के सोपान की रचना नही की है, इसने तो सघीय मामलो के अधिकार क्षेत्र राज्यो के न्यायालयो को

[1] On the other hand the Federal Tribunal has never enjoyed the prestige and independence of the American Supreme Court —Rappard W E. *The Government of Switzerland* p 91

कौंसिल की न्यायिक समिति थी और उसके ठीक नीचे कनाडा का सर्वोच्च न्यायालय था। का एक अन्य महत्त्वपूर्ण न्यायालय 'एक्सचेकर कोर्ट' है। सघीय न्यायालयों के नीचे प्रान्त 'कोर्ट ऑफ अपील' या सर्वोच्च न्यायालय है और उसके नीचे अधीन अथवा निम्नस्तरीय न्याय हैं। इस बात में कनाडा की सघीय न्यायपालिका भारत की न्यायपालिका के समान है, क्य सघ व प्रान्तो के न्यायालय एक ही पद्धति में सगठित हैं।[1] परन्तु अन्य बातो में उनके महत्त्वपूर्ण अन्तर है। प्रथम, जबकि भारतीय सघ के राज्यो में एकरूप न्यायपालिका हैं, कन के प्रान्तो में न्यायालयो का सगठन भिन्न भिन्न है। द्वितीय, जबकि भारत में सर्वोच्च और उ न्यायालयो के सगठन सम्बन्धी प्राविधान भारत के सविधान में दिये गये हैं, कनाडा के प्रान्तो प्राय पूर्ण न्याय व्यवस्था प्रान्तीय शासन के अधिकार क्षेत्र में है। कनाडा में न्यायपालिका एक और विशेषता है, यह स्वतन्त्र है और सविधान में उसकी स्वतन्त्रता के लिए कई प्रावि धान है।

इसकी स्थापना कनाडा की पार्लियामेंट के कानून द्वारा 1875 में की गई थी। इसमें ए मुख्य न्यायाधिपति रहता है, जो कनाडा का मुख्य न्यायाधिपति कहलाता है और 8 न्यायाधी हैं। ये सभी न्यायाधीश सपरिषद् गवनर जनरल द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। इसका न्यायाधी कोई ऐसा व्यक्ति नियुक्त किया जा सकता है जो कनाडा के किसी प्रान्त के उच्च न्यायालय क न्यायाधीश है या रहा है अथवा जो किसी प्रान्त की बार का 10 वर्ष पुराना सदस्य है। कम कम 3 न्यायाधीश क्यूबेक से लिए जाते हैं। न्यायाधीश अपने पदों पर 75 वर्ष की आयु तक रहते हैं। वे अपने पदो पर सदाचरण काल तक रहते हैं अर्थात् जब तक वे जीवित रहें अथवा पद से निवृत्ति की आयु तक पहुँचें। उन्हें गवर्नर जनरल सीनेट व कॉमन सभा द्वारा सम्बोधन पेश करने पर ही उनके स्थान से हटा सकती है। न्यायालय का केन्द्रीय स्थान ओटावा है और न्यायालय को सम्पूर्ण कनाडा में दीवानी व फौजदारी अपील सुनने का अधिकार प्राप्त है। यह न्यायालय सपरिषद् गवनर जनरल को कानूनी प्रश्नो पर परामर्श दे सकता है, यदि किसी प्रश्न पर उसका परामर्श माँगा जाय और यदि सीनेट या कॉमन सभा अपने नियमो के अनुसार इस न्यायालय से किसी व्यक्तिगत विधेयक के विषय में परामर्श मागे तो न्यायालय परामर्श दे सकता है।

किसी भी प्रान्त के उच्चतम न्यायालय द्वारा किये गये निर्णय के विरुद्ध इस न्यायालय में अपील सुनी जा सकती है जबकि उस मामले में अन्तग्रस्त धनराशि 2 000 डालर हो। अन्य किसी भी प्रकार के मुकदमो में प्रान्त के उच्चतम न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय के विरुद्ध उस न्यायालय की आज्ञा से इस न्यायालय में अपील आ सकती है, यदि ऐसा न्यायालय अपील करने की आज्ञा न दे तो सर्वोच्च न्यायालय स्वय अपील करने की स्वीकृति प्रदान कर सकता। दण्डनीय अभियोगो में अपीलें दण्ड विधान सग्रह द्वारा विनियमित होती हैं। सघीय न्यायालयो के निर्णयो के विरुद्ध अपीलो की व्यवस्था सघीय कानूनो द्वारा विनियमित है। सभी मामलो में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय अन्तिम होता है।

एक्सचेकर न्यायालय की स्थापना प्रथम बार 1875 में सर्वोच्च न्यायालय के अग रूप में

---

[1] Although Canada is a dual state its judicial structure shows marked variations from that of the United States The British North America Act assigns almost the entire administration of justice to the provinces Subject to minor exceptions all disputes whatever the persons or subject matter involved and whether or not the decision turns on provincial or a federal law are brought to trial in provincial courts —Corry and Hodgetts *Democratic Government and Politics* p 412

संविधान का निर्वचन अन्तग्रस्त हो और (2) संघीय कानूनों के विरुद्ध दण्डनीय अपराधों की सुनवाई। प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र का एक महत्त्वपूर्ण भाग यह है कि उच्च न्यायालय विभिन्न प्रशासनिक न्यायालयों जैसे कर के क्षेत्र में पुनरवलोकन वाले बोर्ड से आने वाली अपीलों का निर्णय करता। दसन में यह अधिकार क्षेत्र अपीलीय है किन्तु सांविधानिक सिद्धान्त की दृष्टि में यह प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र का ही अंग है।

एक सांविधानिक प्रश्नों के सम्बन्ध में, जिनका सम्बन्ध राज्य न्यायालयों और प्रिवी कौंसिल से हो उच्च न्यायालय की स्थिति बड़ी महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि साधारण रूप में राज्य न्यायालयों में संविधान के अन्तर्गत उठने वाले मामलों अथवा उसके निर्वचन से सम्बन्धित मामलों का संघीय अधिकार क्षेत्र निहित है किन्तु किसी भी ऐसे मामले को जो किसी राज्य न्यायालय में लम्बित हो, उच्च न्यायालय के आदेश द्वारा उच्च न्यायालय में मँगाया जा सकता है। राष्ट्र मण्डल और राज्यों के बीच वितरित शक्तियों की सीमाओं को प्रभावित करने वाले मामलों में राज्य न्यायालयों को कोई अधिकार क्षेत्र प्राप्त नहीं है। फलतः ऐसे मामलों में अंतिम निर्णय देने की महत्त्वपूर्ण शक्ति उच्च न्यायालय को ही है। ऐसे मामलों में उच्च न्यायालय के प्रमाण पत्र के बिना प्रिवी कौंसिल में भी कोई अपील नहीं की जा सकती। अब तक इस प्रकार का प्रमाण पत्र केवल एक ही बार दिया गया है।

क्रिस्प के मतानुसार संघीय संविधान का अर्थ लगाते समय न्यायालयों को अवश्य ही जहाँ तक शासन और नागरिकों का सम्बन्ध है कानून बनाने पड़ते हैं। संविधान के निर्वचन के सम्बन्ध में उच्च न्यायालय द्वारा प्रयुक्त शक्ति प्रारम्भिक तथा अपीलीय दोनों ही क्षेत्रों में है और जिस प्रकार उस शक्ति का अब तक प्रयोग हुआ है उसका संविधान के विभिन्न प्राविधानों और संघीय सरकार के कानूनों पर बड़ा दूरगामी प्रभाव पड़ा है और आगे भी पड़ सकता है न्यायालयों के बहुत से निर्णयों के बड़े आश्चर्यजनक और दूरगामी परिणाम निकले हैं। फलतः न्यायाधीश बहुधा संविधान के प्राविधानों को फिर से लिखते रहे हैं अर्थात् उन्हें दोहराते रहे हैं, वे उसके प्राविधानों को नई शक्ल देते हैं या उन्हें इधर-उधर तोड़ते मोड़ते हैं।[1] मिलर भी कहता है कि 'व्यवहार में, उच्च न्यायालय एक प्रकार की सरकार है—यदि वह यह कहे कि संघीय संसद या राज्य की संसद द्वारा पास किया गया अमुक कानून या संघीय अधिकारी द्वारा किया गया कोई कार्य अवैध है तो इसका निर्णय मान्य होता है। आस्ट्रेलिया में संसद की सर्वोपरिता नहीं है कोई भी संसद उच्च न्यायालय के विरोध में कानून नहीं बना सकती। संसद चाहे तो नया संघीय न्यायालय स्थापित कर सकती है परन्तु उसके न्यायाधीशों को आजीवन कार्यकाल मिलना चाहिए। तीसरे वर्ग के ऐसे न्यायालय नहीं बन सकते जो न संघीय है और न राज्यीय, और न ही ऐसा कोई न्यायाधिकरण (tribunal) बन सकता है जिसके निर्णयों के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील न की जा सके जब तक कि संसद ही अपील के अधिकार को सीमित न करे।

8 कनाडा में न्यायालय

कनाडा में न्यायिक पद्धति की सर्वप्रमुख विशेषता यह है कि न्यायालय अधिकांशतः पिरामिड के रूप में संगठित है नीचे के न्यायालयों में दिये गये निर्णयों के विरुद्ध ऊपर के स्तर पर स्थित न्यायालयों में अपील की जा सकती है। 1949 तक न्यायपालिका की चोटी पर प्रिवी

[1] In effect the judges are often rewriting the constitution giving here or there a new look twist or slant —Crisp L F *The Parliamentary Government of the Commonwealth of Australia* p 275

[2] Miller J D B *American Government and Politics* pp 141–42

न्यायालयों के न्यायाधीश तथा असेसर क्रमश उनकी सोवियतो के द्वारा चुने जाते हैं। इनकी अवधि पांच वप की होती है। इनके प्राथमिक अधिकार क्षेत्र म कुछ अधिक गम्भीर अपराध वाले मुकदम जसे समाजवादी व्यवस्था के विरुद्ध की गई कायवाहिया, समाजवादी शासन की सम्पत्ति की चोरी और वे दीवानी मुकदमे जिनमे राज्य या सावजनिक सस्थाये वादी या प्रतिवादी हो, आते हैं। ये यायालय अपने-अपने क्षेत्रो के जन यायालयो के लिए पुनरवलोकन का भी काय करते हैं। ऐसे न्यायालयो म एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष, कई न्यायाधीश अथवा असेसर होते हैं। स्वाधीन गणराज्यो और सघीय गणराज्यो म से प्रत्येक मे अपना अपना सर्वोच्च यायालय है। इनके यायाधीशो का निर्वाचन वहा की सर्वोच्च सोवियतें करती है। इनकी अवधि पाच वप है। ये यायालय भारत के विभिन राज्यो म स्थित उच्च न्यायालयो की तरह है। इनके अधिकार क्षेत्र के अ तगत दीवानी तथा फौजदारी दोना ही प्रकार के विशेष महत्त्व के मुकदमे आते हैं। इन न्यायालयो को अपने अपने क्षेत्र म नीचे के सभी यायालयो के निणयो को रद्द करने के अधिकार के साथ साथ उनके याय वितरण के कार्यों के निरीक्षण का भी अधिकार है।

सोवियत सघ का उच्चतम यायालय है। इसके यायाधीशो का निर्वाचन सर्वोच्च सोवियत करती है और उनकी अवधि पांच वप होती है। इसम एक अध्यक्ष, उपाध्यक्ष तथा कई यायाधीश होते है। 1946 मे सर्वोच्च न्यायालय मे 66 यायाधीश तथा 15 असेसर थे। सर्वोच्च यायालय क अधिकार क्षेत्र के अ तगत गणराज्यो के बीच के झगडे तथा विशेष महत्त्व के गम्भीर मुकदम आते है। इनके अतिरिक्त इसे सभी प्रकार की अपीलें सुनने का भी अधिकार है। सर्वोच्च न्यायालयो को नीचे के सभी न्यायालयो के निणय पर पुनरवलोकन (review) का भी अधिकार है, परन्तु सर्वोच्च यायालय सर्वोच्च सोवियत के बनाये कानूनो को सविधानिक दृष्टि स अवध घोषित करने का अधिकार नही है। यह यायालय मन्त्रि परिषद् के निणयो और आज्ञप्तियो को भी रद्द नही कर सकता है। इस कारण सोवियत सघ के सर्वोच्च न्यायालय का महत्त्व सयुक्त राज्य अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय की अपेक्षा बहुत कम है। सोवियत सघ म सर्वोच्च न्यायालय की सघीय शासन की रचना से गुथा हुआ है और साधारणत सयुक्त राज्य अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय से कम स्वतन्त्र है।[1] सर्वोच्च न्यायालय के ऊपर सभी गणराज्यो के यायालय द्वारा यायवितरण सम्बधी कार्यों के निरीक्षण की भी जिम्मदारी है। यह अपने नीचे के यायालयो को भारत के सर्वोच्च न्यायालय की तरह से उनकी काय प्रणाली के सम्बन्धी मे आवश्यक निदश भी दे सकता है।

सोवियत सविधान के अ तगत प्रोक्यूरेटर जनरल सोवियत सघ का अत्यधिक महत्त्वपूण अधिकारी है। सर्वोच्च सोवियत सघ के प्रोक्यूरेटर जनरल को सात वप की अवधि क लिए नियुक्त करती है। उसके विभाग का काय पूणतया केन्द्रीकृत है, क्योकि वही गणराज्यो व प्रदेशो आदि के प्रोक्यूरेटरो को नियुक्त करता है और नीचे क स्तरो पर अर्थात् जिला, क्षेत्रो शहरो आदि के प्रोक्यूरेटरो का सम्बधित गणत त्रो के प्रोक्यूरेटर नियुक्त करते हैं, किन्तु उनकी नियुक्ति पर प्रोक्यूरेटर-जनरल की स्वीकृति आवश्यक है। उसके विभाग को यह देखने की शक्ति प्राप्त है कि सभी अधिकारी, सस्थाएँ और नागरिक सोवियत कानूनो का ठीक ठीक पालन करते है। अय राज्यो म यह काय न्यायालयो का होता है। प्रोक्यूरेटर सरकारी अधिकारियो के विरुद्ध भी अभियोग लगा सकते हैं यदि उन्हे यह सन्देह हो जाय कि किसी अधिकारी ने कानून के विरुद्ध आचरण किया है। उनका यह भी कत्तव्य है कि वे प्रशासनिक विनियमो और आदेशो पर भी

[1] The Supreme Court is carefully integrated into the structure of the central government and in general is less independent than the Supreme Court of the United States —Ogg and Zink *Modern Foreign Governments* p 876

की गई थी, परन्तु अब 1952 के कानून के अन्तर्गत यह एक पृथक् न्यायालय है। इस न्यायालय में एक प्रधान और 4 न्यायाधीश रहते हैं, जिन्हें सपरिषद् गवर्नर जनरल नियुक्त करता है। ये सभी सदाचरण काल तक अपने पदों पर रहते हैं परन्तु उन्हें सीनेट व कॉमन सभा के सम्बोधन पर पर गवर्नर-जनरल उनके पद से हटा सकता है। उनके लिए भी पद से निवृत्ति की आयु 75 वर्ष है। न्यायालय ओटावा में स्थित है, किन्तु यह कनाडा में कहीं भी बैठ सकता है। न्यायालय का अधिकार-क्षेत्र उन सभी मामलों तक विस्तृत है जिनमें कनाडा की सरकार द्वारा अथवा उसके विरुद्ध दावे किए जायें। ताज के विरुद्ध कार्यवाही याचिका द्वारा की जा सकती है। यह न्यायालय समुद्रीय मुकदमों में भी अधिकार क्षेत्र रखता है। इस न्यायालय को अनन्य और समवर्ती दोनों ही प्रकार का अधिकार क्षेत्र प्राप्त है।

इसके अनन्य अधिकार क्षेत्र में अग्रलिखित बातें आती हैं (1) कनाडा की सरकार के सम्बन्ध में जिन मामलों में ताज के विरुद्ध समाधान (कष्ट से मुक्ति) की प्रार्थना की जाती है (2) सार्वजनिक प्रयोजन के लिए सम्पत्ति ले जाने पर ताज के विरुद्ध दावा, (3) सम्पत्ति का हानि पहुँचने पर ताज के विरुद्ध दावे, (4) किसी भी सार्वजनिक कार्य में, किसी भी सार्वजनिक अधिकारी या कर्मचारी की लापरवाही से किसी व्यक्ति की मृत्यु होने अथवा शरीर या सम्पत्ति को हानि पहुँचने पर ताज के विरुद्ध दावा, (5) कनाडा के किसी कानून अथवा सपरिषद् गवर्नर द्वारा बनाये गये किसी भी विनियम के अन्तर्गत ताज के विरुद्ध दावे, और (6) ताज की ओर से किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध दावा।

अग्रलिखित बातों में न्यायालय को समवर्ती अधिकार क्षेत्र प्राप्त है (1) भूमि-कर सम्बन्धी सभी मामले, (2) पेटेन्ट सम्बन्धी अभियोग, (3) जिन मामलों में ताज के किसी अधिकारी के विरुद्ध कोई भी अवैध काम किये जाने अथवा कर्तव्य पूरा न किये जाने के लिए समाधान की प्रार्थना की जाय। एक्सचेकर न्यायालय में अपील की जा सकती है, यदि उनमें 500 डालर से अधिक मालियत का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो, परन्तु जिन मामलों में कम मालियत का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो उनमें अपील तब की जा सकती है जबकि (अ) उनमें कनाडा या प्रान्त के किसी कानून की वैधानिकता का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो, (आ) जिनका सम्बन्ध पद की फीस, महसूल किराये, भूमिकर ताज को दी जाने वाली धनराशि से है अथवा जिनमें भूमि या मकान आदि पर अधिकार का प्रश्न अन्तर्ग्रस्त हो।

9 सोवियत संघ में न्यायालय

सबसे ऊपर संघ का सर्वोच्च न्यायालय तथा संघीय विशेष न्यायालय है और सबसे नीचे के स्तर पर जन-न्यायालय हैं। इनके बीच में विभिन्न प्रशासनिक इकाइयों के अपने अपने न्यायालय हैं। न्यायपालिका के संगठन को भली प्रकार से समझने के लिए नीचे से ऊपर की ओर चलना उचित होगा। अतः सबसे पहले जन न्यायालयों का संगठन दिया जाता, जो कि प्रारम्भिक न्यायालय हैं। इनके न्यायाधीश जिले (raion) के मतदाताओं द्वारा सीधे चुनाव व गुप्त मतदान की प्रणाली से पाँच वर्ष की अवधि के लिए निर्वाचित होते हैं। इनके न्यायाधीशों तथा असेसरों की संख्या गणराज्य (Constituent Republic) की मन्त्रिपरिषद् वहाँ के न्याय मन्त्रालय के परामर्श से नियत करती है। इनका अधिकार क्षेत्र दीवानी तथा फौजदारी दोनों ही प्रकार के मुकदमों पर है। पहली प्रकार में मामूली चोरी डकैती, शारीरिक हमला, अधिकारियों द्वारा शक्ति का दुरुपयोग अथवा कर्तव्य-पालन न करना आदि है। दूसरे प्रकार के मुकदमे सम्पत्ति के अधिकार, श्रम नियमों का उल्लंघन आदि से सम्बन्धित होते हैं।

जन न्यायालयों के ऊपर क्षेत्रीय, प्रादेशिक और स्वाधीन प्रदेशों के न्यायालय हैं

जन न्यायालयों में यह सबसे ऊपर है। सर्वोच्च न्यायालय सर्वोच्च न्यायिक अंग है। सर्वोच्च न्यायालय स्थानीय जन न्यायालय और विशेष जन न्यायालयों के काम की देख रेख करता है। सर्वोच्च न्यायालय राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी है और अपने काम के बारे में उसे रिपोर्ट देता है। जिन दिनों राष्ट्रीय जन कांग्रेस का अधिवेशन नहीं होता, यह उसकी स्थायी समिति के प्रति उत्तरदायी रहता है।

इनमें काउण्टी स्वाधीन काउण्टी, म्युनिसिपैलिटी व जिले के न्यायालय सम्मिलित हैं। किसी भी स्तर पर उस स्तर की कौंसिल की स्वीकृति से उच्चतर स्तर के न्यायिक विभाग की प्रार्थना पर इन न्यायालयों को स्थापित किया जा सकता है। मध्य श्रेणी के जन न्यायालय उच्च स्तर के प्रशासनिक विभागों प्रान्तों के उप विभागों में स्थापित हैं। इस प्रकार एक प्रान्त अथवा स्वाधीन प्रदेश के भीतर केन्द्रीय सरकार के अधीन म्युनिसिपलिटियों, अन्य बड़ी म्युनिसिपैलिटियों और स्वाधीन प्रीफक्चरों में मध्य श्रेणी के कई न्यायालय हो सकते हैं। परन्तु प्रत्येक प्रान्त व स्वाधीन प्रदेश आदि में उच्च श्रेणी का केवल एक ही न्यायालय होता है। आधारभूत न्यायालयों का अधिकार क्षेत्र प्रारम्भिक है, वे दीवानी तथा फौजदारी दोनों ही प्रकार के मुकदमों की सुनवाई करते हैं। दीवानी व साधारण फौजदारी मुकदमों में वे बीच-बचाव द्वारा निर्णय के प्रयत्न करते हैं। कुछ गम्भीर प्रकार के मुकदमों की सुनवाई का प्रारम्भ ही उच्च स्तर के न्यायालय में होता है। इसके अतिरिक्त यदि कोई आधारभूत न्यायालय यह अनुभव करे कि मुकदमा ऐसा महत्त्वपूर्ण है कि उसकी सुनवाई उच्चतर न्यायालय में प्रारम्भ हो तो वह उसे सुनने से इनकार कर सकता है। मध्य और उच्च स्तर के न्यायालयों में उनसे नीचे के स्तर के न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों के विरुद्ध अपीलें सुनी जा सकती हैं। इसी प्रकार सर्वोच्च न्यायालय में उच्च न्यायालयों के निर्णयों के विरुद्ध अपीलें की जा सकती हैं। इनके अतिरिक्त राज्य परिषद् के अन्तर्गत विशेष जन-न्यायालय स्थापित किये जा सकते हैं, जिनमें ये उल्लेखनीय हैं—सैनिक न्यायालय, रेल परिवहन न्यायालय, जल परिवहन न्यायालय। सभी साधारण तथा विशेष न्यायालयों के ऊपर सर्वोच्च न्यायालय सबसे ऊँचा न्यायिक अंग है, अर्थात् यह उनमें सुने गये मुकदमों की कार्यवाही की देख रेख करता है।

प्रत्येक न्यायालय में एक प्रधान, एक या एक से अधिक उप प्रधान और कई अन्य न्यायाधीश होते हैं। आधारभूत न्यायालय दीवानी और फौजदारी के लिए अलग अलग विभाग बना सकते हैं और उच्च स्तर के न्यायालयों में इनके अतिरिक्त भी विभाग बनाये जा सकते हैं। प्रत्येक विभाग के मुख्य और उप मुख्य होते हैं। प्रत्येक न्यायालय का प्रधान प्रत्येक स्तर पर निर्वाचित होता है और उसे उसी स्तर की जनवादी कांग्रेस पद से हटा सकती है। अन्य अधिकारियों और न्यायालयों के सदस्यों को नियुक्त किया जाता है और उन्हें सम्बन्धित स्तर की जनवादी परिषदें उनके पदों से हटा भी सकती हैं। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति और उन्हें पद से हटाने की शक्तियाँ राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की स्थायी समिति को प्राप्त हैं। न्यायाधीशों के लिए विहित योग्यताओं और उनकी नियुक्ति तथा उनके पद से हटाये जाने के तरीकों से स्पष्ट है कि वे अपना काम स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं कर सकते। कोई भी नागरिक जिसकी आयु कम से कम 23 वर्ष हो और जिसे निर्वाचन के राजनीतिक अधिकार से वंचित न किया गया हो, न्यायालय का प्रधान चुना जा सकता है। अन्य न्यायाधीशों और असेसरों के लिए भी यही योग्यता है। इस प्रकार न्यायालयों में अव्यावसायिक व्यक्तियों का बड़ा प्रतिशत हो सकता है, जिन्हें न्यायिक कार्य का विशेष ज्ञान व प्रशिक्षण न हो। अतएव उन पर एक ओर प्रोक्यूरेटरों और दूसरी ओर जनता के भाग लेने का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।

न्यायिक कार्यवाही में 'सर्वसाधारण के भाग' का अर्थ व्यवहार में यह होगा कि जनता

नजर रखें जिससे प्रशासन द्वारा कानूनों का उल्लंघन न हो। उनका यह देखना भी कर्तव्य है कि न्यायालय कानूनों का ठीक अर्थ लगाते हैं या नहीं। यदि किसी नागरिक को अन्यायपूर्ण ढंग से नजरबन्दी में रखा गया है, ऐसे मामले में प्रोक्यूरेटर हस्तक्षेप करते हैं। यदि वे ऐसा अनुभव करें कि किसी अभियुक्त को अत्यधिक कठोर अथवा अपर्याप्त दण्ड दिया गया है तो वे ऐसे निर्णयों का पुनरवलोकन करा सकते हैं।

प्रोक्यूरेटर विशेष रूप से क्रान्ति विरोधी अपराधों के प्रति सजग रहते हैं। कारपिस्की के अनुसार प्रोक्यूरेटर फौजदारी के मुकदमे चलाता है। ऐसे मामलों की छानबीन कराता है और अपराधियों व उनके साथियों का पता लगाता है। प्रोक्यूरेटर न्यायालयों में राज्य की ओर से प्राभियोक्ता के रूप में कार्य करता है। जब न्यायालय निर्णय देता है तो वह यह भी देखता है कि निर्णय न्याय के अनुसार है या नहीं। प्रोक्यूरेटर ही निर्णयों के अधीन दण्ड की व्यवस्था कराता है अथवा निर्णय को क्रियान्वित कराता है। यदि वह समझे कि निर्णय अनुचित है तो वह उसके विरुद्ध अपील दायर करता है। इस प्रकार प्रोक्यूरेटर-जनरल सम्पूर्ण न्यायपालिका पर प्रशासनिक देख-रेख करता है। न्याय पद्धति की एकरूपता बनाये रखने में उसका विशेष योग रहता है। विशिंस्की के मतानुसार 'सोवियत प्राभियोक्ता सोवियत समाजवादी वैधता का प्रहरी है, साम्यवादी दल और सोवियत सत्ता का नेता है और समाजवाद का वीर योद्धा है।'

10 चीन में न्यायालय

सोवियत संघ की तरह चीन में भी न्यायपालिका के दो अंग हैं—न्यायालय और जन-प्रोक्यूरेटर। एक ओर नीचे से लेकर ऊपर तक जन-न्यायालय हैं जिनमें सबसे ऊपर सर्वोच्च जन न्यायालय (Supreme People's Court) है। दूसरी ओर प्रशासन के विभिन्न स्तरों के लिए नीचे से ऊपर तक जन प्रोक्यूरेटरों की व्यवस्था है। ये दोनों अंग एक दूसरे से गुथे हुए हैं, पृथक नहीं हैं। अन्तिम रूप से दोनों ही राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस और उसकी स्थायी समिति के प्रति उत्तरदायी हैं, यद्यपि उनके ऊपर न्याय मन्त्री है जो राज्य-परिषद् का सदस्य है। सोवियत संघ की तरह, चीन में भी शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धान्त नहीं अपनाया गया है। इसी कारण न्यायपालिका स्वतन्त्र नहीं है। यह बात इससे और भी स्पष्ट है कि निम्नस्तरीय कांग्रेसों के कार्यों के औचित्य और सांविधानिकता पर न्यायिक पुनरवलोकन की शक्ति उच्चतर कांग्रेसों और अन्तिम रूप में राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को दी गई है न कि न्यायपालिका को। इसी प्रकार निम्नस्तरीय कौंसिलों के निर्णयों और आदेशों तथा कांग्रेस के कार्यों का पुनरवलोकन उच्चस्तरीय कौंसिलें करती हैं।

1951 के विनियमों के अधीन न्यायालयों के तीन स्तर थे—काउण्टी, प्रान्त और राष्ट्र। मुकदमे की सुनवाई अधिक से अधिक दो स्तर के न्यायालयों में हो सकती थी, अर्थात् एक स्तर के न्यायालय में सुनवाई होने पर निर्णय दिया जाता था, जिसके विरुद्ध अभियुक्त उच्च स्तर के न्यायालय में अपील कर सकता था। न्यायालयों का यह भी कार्य था कि वे मुकदमे लड़ने वालों तथा सर्वसाधारण जनता में राज्य-कानूनों के पालन के बारे में प्रचार और शिक्षा का संचालन करें। 1954 के कानूनों के अनुसार जन न्यायालयों के मुख्य कार्य इस प्रकार हैं—(1) दीवानी और फौजदारी मुकदमों की सुनवाई करना तथा सभी अपराधियों को दण्ड देना और दीवानी मुकदमों में अन्तर्ग्रस्त विवादों को तय करना, जिससे कि जनवादी प्रजातन्त्रात्मक पद्धति की रक्षा की जा सके, सार्वजनिक व्यवस्था बनी रहे, सार्वजनिक सम्पत्ति की रक्षा हो और नागरिकों के कानूनी अधिकार व हित भी सुरक्षित रहें। (2) राज्य में समाजवादी परिवर्तन करने और समाजवादी रचना को सफलतापूर्वक क्रियान्वित रूप देने में राज्य... [illegible]

यद्यपि यह न्यायालय सर्वोच्च कहलाता है, फिर भी इसे न्यायिक पुनरवलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं है। इस कार्य के लिए वहाँ पर एक सांविधानिक न्यायालय है।

युगोस्लाविया का सर्वोच्च न्यायालय अग्रलिखित कार्य करता है—(1) महत्त्वपूर्ण मामलों में संघीय कानून को साधारण तथा विशेष अधिकार क्षेत्र वाले न्यायालयों द्वारा एक रूप से लागू किये जाने के लिए आधारभूत निर्णय और न्यायिक निर्णय देता है, (2) गणतन्त्रों के सर्वोच्च न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों के विरुद्ध जबकि संघीय कानून द्वारा ऐसी व्यवस्था की गई हो, नियमित कानूनी उपायों का निर्णय करता है, (3) ऐसे मुकदमों में, जिनकी कानून द्वारा व्यवस्था की गयी हो, न्यायालयों के वैध निर्णयों के विरुद्ध विशेष कानूनी उपायों का निर्णय करता है, (4) संघीय अंगों द्वारा दिये गये प्रशासनिक निर्णयों अथवा युगोस्लाविया के राज्य क्षेत्र में सार्वजनिक शक्तियों का उचित और आवश्यक पालन करने वाले संगठनों के विरुद्ध प्रशासनिक मुकदमों का निर्णय करता है, (5) विभिन्न गणतन्त्रों के राज्य क्षेत्रों में स्थित न्यायालयों के बीच अधिकार क्षेत्र सम्बन्धी विवादों को हल करता है, और (6) संघ के अधिकारों व कर्त्तव्यों के क्षेत्र के भीतर संघीय कानून द्वारा की गयी व्यवस्था के अन्तर्गत अन्य आवश्यक कार्य करता है। सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र और संगठन संघीय कानून द्वारा निर्धारित किये गये हैं।

युगोस्लाविया के सांविधानिक न्यायालय को 1963 में संविधान के प्रारम्भ के बाद ही स्थापित किया गया था। इसमें एक प्रधान और अन्य न्यायाधीशों का आठ वर्ष की अवधि के लिए चुना जाता है और उन्हें अधिक से अधिक दूसरी अवधि के लिए भी चुना जा सकता है। न्यायालय के चार न्यायाधीशों को प्रति चार वर्ष बाद चुना जाता है। न्यायालय के सदस्यों अर्थात् न्यायाधीशों को उनके कार्यकाल के अन्त होने से पूर्व उनकी प्रार्थना पर ही पद से अलग किया जा सकता है, अथवा यदि उन्हें किसी फौजदारी अपराध के लिए व दीर्घ का दण्ड दिया जाय, अथवा यदि उन्होंने कानूनी क्षमता (योग्यता) खो दी हो, अथवा वे स्थायी रूप से शारीरिक दृष्टि से अक्षम हो गये हों और अपने कर्त्तव्य करने योग्य न रहे हों। न्यायालय के प्रधान तथा अन्य न्यायाधीशों को संघीय प्रतिनिधियों की भाँति उन्मुक्ति प्राप्त है।

यह न्यायालय अग्रलिखित कार्य कर सकता है—(1) यह निर्णय करना कि कानून *संविधान से संगत अर्थात् उसके विरुद्ध नहीं है, (2) यह निर्णय करना कि गणतन्त्रीय कानून* संघीय कानून से संगत है, (3) यह निर्णय करना कि अन्य विनिमय और अंगों व संगठनों के अन्य सामान्य निर्णय, युगोस्लाविया के संविधान, संघीय कानून और संघीय विनियमों से संगत है (4) संघ और किसी गणतन्त्र, गणतन्त्रों और दो या अधिक गणतन्त्रों के राज्य क्षेत्र में स्थित सामाजिक, राजनीतिक समुदायों के बीच उनके अधिकारों व कर्त्तव्यों के बारे में उठने वाले विवादों पर निर्णय देना, यदि उन विवादों के निर्णय हेतु कानून द्वारा किसी अन्य न्यायालय की व्यवस्था न की गयी हो, गणतन्त्रों के बीच सीमा-विवादों पर निर्णय देना, (5) न्यायालयों और संघीय अंगों तथा न्यायालयों और दो या अधिक गणतन्त्रों में स्थित राजकीय अंगों के बीच अधिकार क्षेत्र सम्बन्धी विवादों पर निर्णय करना, और (6) संविधान या संघीय कानून द्वारा अपने अधिकार-क्षेत्र में सौंपे गये अन्य कार्यों को करना, किन्तु संघ के सांविधानिक अधिकारों व कर्त्तव्यों के अनुसार। इनके अतिरिक्त सांविधानिक न्यायालय संविधान द्वारा स्थापित स्वशासन के अधिकारों तथा अन्य आधारभूत स्वतन्त्रताओं व अधिकारों की रक्षा के बारे में भी निर्णय या संघीय अंगों के कार्य द्वारा अतिक्रमण हुआ हो और अन्य मामलों में भी जो संघीय कानून द्वारा निर्धारित हों और जिनके लिए किसी अन्य न्यायालय द्वारा रक्षा की व्यवस्था न की गयी हो।

न्यायिक कार्यवाही के दौरान अपनी टिप्पणिया और शोर कर सकती है। बहुधा जनता अभियुक्त की कटु निन्दा करती है और नारे लगाती है। इससे भी बढकर उन पर प्रोक्यूरेटरो का प्रभाव रहता है। उनका यह दायित्व है कि शासन के विभिन्न अगो के कानूनो, निर्णयो व आदेशो आदि का ठीक प्रकार से पालन हो। यदि कोई प्रोक्यूरेटर, किसी भी स्तर पर किसी अग के निर्णय या आदेश या पग को कानून के विरुद्ध पाये तो वह उसके सुधार के लिए प्रार्थना कर सकता है। यदि उसकी प्रार्थना स्वीकृत न हो तो वह उसके बारे मे उच्चतर प्रोक्यूरेटर को उसकी रिपोर्ट देगा। प्रोक्यूरेटरो को स्वय यह शक्ति प्राप्त नही है कि वे ऐसे निर्णयो या आदेशो को रद्द कर सके या उन्हे विलम्बित रखे, परन्तु उनकी रिपोर्टों का अवश्य ही बहुत मान होना होगा।

चीन मे स्तरीय न्यायालय है, परन्तु मुकदमा की सुनवाई दो स्तरो पर ही हो सकती है। साधारणतया एक ही अपील की व्यवस्था है। आधारभूत न्यायालय (basic court) पहले स्तर के न्यायालय हैं और प्रान्तीय स्तर के न्यायालय अपील अथवा मुकदमो की दूसरी सुनवाई के न्यायालय हैं। अधिक महत्त्वपूर्ण मामलो मे पहली सुनवाई प्रान्तीय न्यायालयो मे होती है और उनके निर्णयो के विरुद्ध अपील सर्वोच्च न्यायालय मे की जा सकती है। असाधारण परिस्थितियो मे ही किन्ही मुकदमो की सुनवाई तीसरी बार अथवा केवल एक बार हो सकती है। न्यायिक कार्यवाही अथवा मुकदमे की सुनवाई की प्रक्रिया बडी नमनीय है। न्यायालयो द्वारा औपचारिक सुनवाई के अतिरिक्त जनवादी न्यायालय घटना स्थान पर ही छान बीन तथा मुकदमो की सुनवाई करने की शक्ति रखते है। इनके अतिरिक्त वे भ्रमणशील सुनवाई (circuit trials) भी कर सकते है। ऐसे मुकदमो मे से बहुत से मामलो मे जनसाधारण अभियुक्तो के कार्य को निन्दनीय ठहराने मे भाग लेता है, जिसे न्यायालयो द्वारा 'प्रचार शिक्षण' कहा जाता है। आधारभूत न्यायालयो मे साधारणतया सुनवाई एक न्यायाधीश द्वारा की जाती है। यद्यपि अधिक महत्त्वपूर्ण मुकदमो की सुनवाई तीन न्यायाधीशो की बेन्च द्वारा की जाती है।

प्रशासन के विभिन्न स्तरो पर न्यायालयो की तरह प्रोक्यूरेटरो की व्यवस्था है। सर्वोच्च जनवादी प्रोक्यूरेटर (S P P) के प्रोक्यूरेटर जनरल का निर्वाचन चार वर्ष की अवधि के लिए राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस करती है। उनके अधीन अन्य प्रोक्यूरेटरो को प्रान्त, स्वाधीन प्रदेश और प्रत्यक्ष रूप से नियन्त्रित म्युनिसिपलटियो के स्तर पर प्रोक्यूरेटर जनरल नामजद करता है और उनकी नियुक्ति तथा उन्हे पदो से हटाने की शक्तियां स्थायी समिति मे निहित है। नीचे के स्तरो पर प्रोक्यूरेटरो की नामजदगी के अधिकार प्रान्तीय स्तर के प्रोक्यूरेटरो को है, किन्तु उनकी नियुक्ति आदि पर सर्वोच्च प्रोक्यूरेटर की स्वीकृति आवश्यक है। प्रत्येक स्तर पर प्रोक्यूरेटर जनरल, उप प्रोक्यूरेटर जनरल और अन्य प्रोक्यूरेटर होते है। जहा तक प्रोक्यूरेटरो के उत्तरदायित्व का सम्बन्ध है, नीचे के स्तरो पर वे अपना कार्य सम्बन्धित स्तरो के शासनिक अगो के स्वतन्त्र रूप मे करते है। वास्तव मे वे उच्च स्तर के प्रोक्यूरेटरो के निर्देशन मे कार्य करते है। सम्पूर्ण प्रोक्यूरेटर व्यवस्था पर सर्वोच्च प्रोक्यूरेटर का निरीक्षण व निर्देशन रहता है। इस प्रकार जहा तक उसकी रचना का सम्बन्ध है प्रोक्यूरेटर व्यवस्था पर शासन के अन्य अगो का नियन्त्रण नही है। अभियुक्तो के विरुद्ध मुकदमे चलाने मे उन्हे जनता के प्रजातान्त्रिक अधिकारो का ध्यान रखना होता है, परन्तु वे भी न्यायालयो और अन्य सार्वजनिक सुरक्षा अगो की तरह शासन के उद्देश्यो और नीतियो से प्रभावित होते है।

11 युगोस्लाविया मे न्यायालय

युगोस्लाविया का सविधान सघात्मक है, प्रत्येक राज्य मे अपना सर्वोच्च न्यायालय है। का सर्वोच्च न्यायालय अलग है, जो सघीय कानूनो के विरुद्ध मुकदमो की सुनवाई कर

की दुनिया म ही अस्तित्व व महत्त्व है।[1]

व्यक्तिगत अधिकारो और स्वतन्त्रताओ का विकास—आधुनिक सविधानवाद की एक मुख्य विशेषता व्यक्तिगत अधिकारो और स्वतन्त्रताओ का विकास रही है, यह एक ऐसी प्रवृत्ति है जिसक फलस्वरूप विगत दो शताब्दियो म मनुष्य को वद्धिपूर्ण मात्रा म स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है। व्यक्तिगत अधिकारो और स्वतन्त्रताओ का विकास मुख्यत दो दिशाओ म हुआ है—पहली, प्रक्रिया सम्बन्धी सरक्षण, विशेष रूप से सम्पत्ति के अधिकारो और दण्ड (फौजदारी) के मुकदमो म अभियुक्त के अधिकारो के बारे म। दूसरे, सरकारी हस्तक्षेप के विरुद्ध सारमय मानव अधिकारो और स्वतन्त्रताओ क बारे म।

जहाँ तक प्रक्रिया सम्बन्धी सरक्षणो का सम्बन्ध है। कुछ देशो (विशेषकर सयुक्त राज्य अमरीका) म उन्ह 'कानून की उचित प्रक्रिया' म समाविष्ट किया गया है, जिसक बिना किसी व्यक्ति को उसके जीवन, स्वतन्त्रता, सम्पत्ति अथवा सुख की खोज के लिए प्रयत्न स वचित नही किया जा सकता। राज्य की पुलिस शक्तियो के विरुद्ध महत्त्वपूर्ण सरक्षणो म य उल्लखनीय हैं—अनुचित तलाशी और जब्ती से स्वतन्त्रता, अत्यधिक जमानत स स्वतन्त्रता, अत्याचारी और असाधारण दण्डो स स्वतन्त्रता, जूरी द्वारा सुनवाई का अधिकार, बन्दी प्रत्यक्षीकरण का लेख, वकील करने का अधिकार और अपने बचाव क लिए उचित अवसर का मिलना इत्यादि।

परन्तु सम्पूर्ण पाश्चात्य जगत में इस प्रकार के प्रक्रिया सम्बन्धी रक्षण की जटिल पद्धति नही पायी जाती। उदाहरण के लिए, फ्रास म बन्दी प्रत्यक्षीकरण को मान्यता प्राप्त नही है और कभी कभी वर्गीय अन्तरो का न्यायालयो व पुलिस के व्यवहार पर प्रभाव पडता है। इस सिद्धान्त को कि अभियुक्त को तब तक दोषी नही समझा जायेगा जब तक कि वह अपराधी सिद्ध न हो जाय, जमनी मे हाल ही मे मान्यता मिली है, यद्यपि यह सिद्धान्त रोमन विधि म निहित रहा है। अधिकारो व स्वतन्त्रताओ की प्रत्याभूतियो को आधुनिक सविधानवाद का केन्द्रीय विचार समझा जाता है। इनम स कुछ मुख्य य हैं (1) शरीर की स्वतन्त्रता अर्थात् अब दासता, कृषि दासत्व, जबरन श्रम तथा अन्य प्रकार की अनिच्छापूर्ण दासतायें जो अतीत म व्यापक रूप से प्रचलित सस्थायें थी, साधारणतया लुप्त हो गयी है। शरीर की स्वतन्त्रता को अब नये रूपो मे विकसित किया गया है, यथा काम अथवा व्यवसाय का स्वतन्त्र चुनाव, पति पत्नी का स्वतन्त्र चुनाव, देश भर मे स्वतन्त्र रूप से विचरण आदि। (2) मन और अन्तरात्मा की स्वतन्त्रता इसमे मुख्यत धार्मिक स्वतन्त्रता व ईश्वर म विश्वास आदि की स्वतन्त्रता तथा विचारो की स्वतन्त्रता सम्मिलित है। (3) अवसर की समता—इसम काम पाने का अधिकार, काम न मिलने की दशा म आर्थिक सुरक्षा आदि के अधिकार सम्मिलित है। (4) राजनीतिक कार्यो की स्वतन्त्रता—इसमे सभी राजनीतिक अधिकार आ जाते है।

उपर्युक्त चार प्रकार की स्वतन्त्रतायें और प्रक्रिया सम्बन्धी सरक्षण आधुनिक सविधानवाद का सारभूत तत्त्व है, जैसा कि उसका इतिहास के मार्गचिह्नो—मेग्ना कार्टा सामान्य विधि, 1628 की अधिकार याचना, 1679 का बन्दी प्रत्यक्षीकरण कानून, 1689 का बिल आफ राइटस और मानव अधिकारो की अनेक घोषणाओ के द्वारा विकास हुआ है। आज किसी भी राष्ट्र (राज्य) का सम्मानित सविधान ऐसा नही है जिसम विभिन्न प्रकार के नागरिक अधिकारो और स्वतन्त्रताओ की गारन्टी न दी गयी हो। सब बातो से बढकर गारन्टी वह है जो उदारवादी प्रजातन्त्र और सर्वाधिकारवादी शासनो व बीसवी शताब्दी के अधिनायकतन्त्रो तथा अतीत के परम्परागत

[1] In ordinary usage a right is a reasonable claim to freedom in the exercise of certain activities Rights have meaning therefore only within the sphere of social relations —Wide N *Ethical Basis of the State* pp 115-17

सोलहवा अध्याय

विभिन्न राज्यो में नागरिको के अधिकार

1 अधिकार क्या है और क्यो ?

सरल शब्दो मे, हम कह सकते है कि किसी व्यक्ति के अधिकारो का अभिप्राय उन बातो की स्वतन्त्रता तथा दशाओ से है जो उसके पूण विकास के लिए आवश्यक ह । वाइल्डे के अनुसार किसी व्यक्ति के लिए अपने कार्यों को करने की उचित स्वत त्रता की माग का नाम अधिकार है। वास्तव मे, अधिकार अच्छे जीवन के आधार ह । ससार म सभी प्राणी अपने अधिकारा को समझत है और उनम किसी प्रकार का हस्तक्षेप खुशी से सहन नही करते । अधिकार प्रत्येक दशा और काल मे रहे है । इस ससार मे आरम्भ से लेकर आज तक जितने बडे बडे युद्ध, बलिदान, हत्याएँ राज्य क्रान्तिया, विद्रोह और परस्पर राष्ट्रा के आक्रमण हुए है वे सब अधिकारो के लिए ही हुए है, या तो दूसरो के अधिकारा को छीनने या अपने अधिकारा की रक्षा करने के लिए ही सब घटनाये हुई है । स्वेच्छाचारी शासन अथवा निरकुश राजत त्र प्रणाली म प्रजा के कोई मूल अधिकार नही माने जाते थे, वे सब राजा की इच्छा पर निभर रहत थे । पर तु आधुनिक युग मे जनतन्त्रीय शासन प्रणाली के विकास के साथ साथ अधिकारो का महत्त्व बहुत बढा है । फ्रासीसी क्रा तिकारिया ने भीख नही मागी, वरन् अधिकारो के लिए क्रा ति की । फ्रास की दलित जनता न अपने राजा के विरुद्ध अधिकारो क लिए युद्ध किया । उसके उपरान्त सयुक्त राज्य अमरीका तथा अन्य देशो के सविधाना मे उसका समावेश किया गया ।

विभिन्न लेखको ने अपन अपने मतानुसार 'अधिकार' शब्द की परिभाषायें की हैं । मक्कन क शब्दो मे, अधिकार सामाजिक हित के लिए कुछ लाभकारी परिस्थितियाँ है, जो कि नागरिक के समुचित विकास के लिए आवश्यक हैं ।' वास्तव मे, अधिकतर विद्वान् इस मत से सहमत है कि अधिकार उन सामाजिक दशाओ से कम और अधिक कुछ नही जो कि मनुष्य के विकास के लिए आवश्यक है ।[1] हॉलण्ड के मतानुसार अधिकार 'समाज के मत और शक्ति क द्वारा किसी मनुष्य की दूसरो के कार्यो को प्रभावित करने की सामथ्य है ।' हमारे विचार म अधिकार किसी व्यक्ति के अच्छे जीवन को उन दशाओ के लिए दावे है जिन्ह कि समाज सामान्य हित के लिए आवश्यक समझ कर माने । अधिकारा की सष्टि न राज्य द्वारा होती है न राजकीय कानून द्वारा । उनका अस्तित्व समाज म पहले से ही होता है । राज्य उन्हे स्वीकार करके अपने कानूनो द्वारा उनकी रक्षा का प्रब ध करता है । अधिकार मनुष्य के आधारभूत स्वत्व हैं । चूंकि अधिकार कुछ प्रकार के कार्यों के करने की स्वतन्त्रता के लिए उचित दावे अथवा शक्तियाँ हैं अत उनका केवल कत्तव्या

[1] Rights in fact are those conditions of social life without which no man can in general to be himself at his best —Laski H J *A Grammar of Politics* p 91

का ऐसा घोषणा पत्र तयार करना आसान काम नही था, जिस कि सभी स्वीकार कर सकें तथा समझ सके । इसके महत्त्व का कम नही करना चाहिए । जब स यह स्वीकार किया गया है, तब स अब तक इसका हर जगह प्रचार हुआ है । ससार की सभी प्रमुख भाषाओ म इसका अनुवाद किया गया है । 1948 म जनरल एसम्बली न 10 दिसम्बर का, जिस दिन कि यह घोषणा पत्र स्वीकार किया गया था 'मानव अधिकार दिवस' घोषित किया । यह दिवस लगभग सभी देशा म प्रतिवर्ष मनाया जाता है ।

मूल अधिकार (Fundamental Rights)—य व अधिकार होते हैं जिनका किसी राज्य के आधारभूत कानून अर्थात् सविधान म समावश या प्रगणन किया जाय, किन्तु नागरिक या व्यक्ति के अधिकारो का सविधान म प्रगणन ही उन्ह मूल बनान के लिए काफी नही है । इसक लिए यह भी आवश्यक है कि इन अधिकारा को मनवाने क लिए प्रभावी व्यवस्था हो अर्थात उनका उल्लघन करन अथवा उनम हस्तक्षेप करन के विरुद्ध सरक्षण हो। दूसरे शब्दा म, विधायिका व कार्यपालिका द्वारा मूल अधिकारो का किसी भी प्रकार स अतिक्रमण किय जान के विरुद्ध सावैधानिक उपचार की व्यवस्था होनी चाहिए । यह काय राज्यो के सर्वोच्च या उच्च न्यायालय करते है, इसीलिए उन्ह अधिकारा का सरक्षक कहा जाता है । इस प्रकार की व्यवस्था सयुक्त राज्य अमरीका व भारत आदि राज्या म है ।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद से यह प्रवृत्ति बढी है कि मूल अधिकारा का सविधान म सम्मिलित किया जाय । सयुक्त राज्य अमरीका के उदाहरण स प्रभावित राज्यो म फिलीपाइन और कई लटिन अमरीकी राज्य है, जहां पर इस प्रकार की प्रथा नई नही है । परन्तु राष्ट्रमण्डलीय देशो मे इसका अपनाया जाना नई बात है, क्योकि यह ब्रिटिश प्रथा के विरुद्ध है । भारत, पाकिस्तान, बर्मा, नाइजीरिया आदि राज्या ने अपने सविधाना म मानव अधिकारा को समाविष्ट किया है । व्यावहारिक दृष्टि स इन्ह सविधान म सम्मिलित करने के पक्ष म सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस प्रकार स अल्पसख्यको के भया को दूर अथवा काफी कम किया जा सकता है । अल्पसख्यक समूहो ने राजनीतिक सघो म मिलने के लिए लिखित और सावैधानिक प्रत्याभूतियो की मागें की हैं, जिन्ह सम्बन्धित सविधानो के निर्माताओ न स्वीकार करना ही न्यायोचित समझा है ।

2 सयुक्त राज्य अमरीका मे नागरिको के अधिकार

केवल दो बातो को छोडकर सभी अमरीकी नागरिको का पद, चाहे वे किसी प्रकार के नागरिक हो समान है । दो अपवाद ये है—(1) कोई भी देशीकृत नागरिक सयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति अथवा उप राष्ट्रपति नही बन सकता । (2) कोई भी देशीकृत नागरिक सनिक सेवा जैसे सावजनिक कर्त्तव्या क विरुद्ध अमरीकी रक्षा का अधिकारी नही है, यदि उसका पुराना देश उसके वहाँ जाने पर उससे ऐसी सेवा की माँग कर । सभी नागरिको को सम्पूर्ण सयुक्त राज्य के क्षेत्र म कानूना की सम रक्षा पाने का अधिकार है, बहुत से राज्यो मे तो यह अधिकार विदेशियो का भी प्राप्त है ।

नागरिक अधिकार—सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान निर्माताओ का आरम्भ से ही यह विश्वास रहा कि व्यक्तियो के कुछ अधिकार अनपहरणीय (inalienable) होते है । मौलिक सावैधानिक आलेख मे नागरिको के अधिकारो का प्रगणन न किया गया था, अतएव इस कमी को पहले दस सशोधनो द्वारा पूरा किया गया । इसी कारण इन दसो सशोधनो को नागरिको के अधिकारो का अधिकार पत्र कहत है । नागरिको को बहुत से अधिकार सविधान अथवा सघ सरकार से प्राप्त हैं, साथ ही राज्यो के सविधान भी नागरिको को कुछ अधिकार प्रदान करते हैं ।

स्वेच्छाचारी शासना वे सत्तावाद के बीच अन्तर बताता है ।[1]

आजकल आधारभूत अधिकार और स्वतन्त्रताएँ—अमरीकी बिल ऑफ राइटस तथा समान अधिकार पत्रो म सम्मिलित मूल अधिकारो की आजकल इस आधार पर आलोचना की जाती है कि वे अत्यधिक व्यक्तिवादी हैं, समूहो की आवश्यकताओ से उनका सम्बन्ध अति अल्प है । कहन का तात्पय यह है कि आजकल भाषण की स्वतन्त्रता अथवा मनचाही तलाशी व गिरफ्तारी के विरुद्ध रक्षण आदि का निधन और बेकार मनुष्यो के लिए महत्त्व बहुत कम है । यह सच है कि आजकल काम पान क अधिकार, काम क लिए उचित पारिश्रमिक का अधिकार, सामाजिक सुरक्षा व शिक्षा के अधिकार आदि का महत्त्व अब बहुत बढ़ गया है । नई स्वाधीनता प्राप्त राज्यो के सविधाना म विशेषकर ऐसे ही अधिकारो पर बल दिया गया है । परन्तु पुराने व्यक्तिगत अधिकारो और स्वतन्त्रताओ का महत्त्व आर्थिक अधिकारो के प्राप्त हो जाने पर भी कम नही होना चाहिए । सर्वाधिकारवादी व सत्तावादी राज्यो के नागरिक इन अधिकारो क महत्त्व को सहज ही समझ जाते हैं । पुरानी स्वतन्त्रताओ के क्षेत्र म आधुनिक परिस्थितियो के कारण कुछ परिवतन हुआ है । आज के सवसाधारण समाज म बल राजनीतिक परम्परागत अधिकारो से हटकर ऐसे अधिकारो पर दिया जाने लगा है जिनका प्रभाव वयक्तिक विकास और सास्कृतिक अभिव्यक्ति स है यथा कलाओ, साहित्य और मनोरजन क क्षेत्रो म रचनात्मक अभिव्यक्ति अत्यधिक शोर और दूषित पर्यावरण के विरुद्ध रक्षण, अपने ही देश म नही वरन् विश्व भर म स्वतन्त्रतापूवक विचरण का अधिकार आदि ।[2]

सयुक्त राष्ट्र सघ क उद्देश्यो म से एक यह भी है जसा कि इसके चाटर म लिखा है—'जाति, लिंग, भाषा अथवा धम क भेद भाव के बिना सब लोगो क लिए मानव अधिकारो एव आधारभूत स्वतन्त्रताओ को बढावा देना' सयुक्त राष्ट्र सघ का एक लक्ष्य रहेगा । इसी उद्देश्य की पूर्ति क लिए 10 दिसम्बर, 1948 को जनरल एसेम्बली ने 'मानव अधिकारो की सवलौकिक घोषणा' पर स्वीकृति दी थी, जिससे कि प्रत्येक व्यक्ति और समाज का अग इस ध्यान मे रखे और मानव अधिकारो के प्रति आदर भाव बढ़े । इस घोषणा म सम्मिलित किय गये हैं—मनुष्य को जीवन सुरक्षा एव स्वतन्त्रता का अधिकार, दासता स स्वतन्त्रता, अत्याचार, अमानवीय अथवा अपमानजनक व्यवहार अथवा दण्ड से स्वतन्त्रता, कानून क सम्मुख व्यक्ति की मान्यता का अधिकार, प्रभावशाली न्याय प्राप्त करने का अधिकार, कानून की समान सुरक्षा बिना किसी जाँच पड़ताल के गिरफ्तार करने नजरबन्द करने अथवा देश निष्कासन से स्वतन्त्रता एक स्वतन्त्र तथा निष्पक्ष ट्रिब्यूनल द्वारा उचित सुनवाई का अधिकार, दोष सिद्ध होने स पूव निर्दोषी माने जाने का अधिकार, गोपनीयता, परिवार, घर अथवा पत्र व्यवहार म मनमाने हस्तक्षेप से मुक्ति घूमने फिरने की स्वतन्त्रता, राष्ट्रीयता का अधिकार, मकान, सम्पत्ति रखने का अधिकार, सोचने विचारने तथा धम की स्वतन्त्रता, विचारो तथा अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, आपस मे मिलने जुलने तथा सभा आयोजित करने का अधिकार, सरकार म भाग ले सकने का अधिकार, सरकारी नौकरियो म समान अवसरो का अधिकार, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार, काम करने का अधिकार, विश्राम करने का अधिकार, समाज के सास्कृतिक जीवन म भाग लने का अधिकार तथा एसोशियशन व सघ बनाने का अधिकार है ।

इतने सारे देशो के लिए इकट्ठे मिलकर मानव अधिकारो तथा आधारभूत स्वतन्त्रताओ

---

[1] It is the *garantisme* above all that distinguishes liberal democracy from the totalitarian regimes and dictatorships of the twentieth century as well as from the authoritarianism of traditional autocracies before our time —Merkl Peter H *Political Conti and Change* p 196

[2] Carter and Herz *Government and Politics in the Twentieth Century* pp 67-69

है। इसके अतिरिक्त सविधान म यह भी प्राविधान है कि सघ व राज्य सरकारें इकरार क दायित्वा को कम नही कर सकती।

नागरिकों के दायित्व— इनकी सूची बनाना कठिन काय है। सविधान म सोवियत सघ के सविधान की तरह से नागरिका के कत्तव्या का वणन नही है। परन्तु प्रजात त्र म नागरिका को अपने दायित्वा का पालन करना होता है। उनके कुछ दायित्व स्पष्ट हैं, यथा कर दना, राष्ट्रीय प्रतिरक्षा मे सहयोग देना और कानूनो का पालन करना। अ य अस्पष्ट दायित्व भी हैं जस नागरिका को भाषण, लेखन, धमपालन की स्वत त्रता के अधिकार प्राप्त हैं, उनका यह कत्तव्य है कि व दूसरो के भी इन अधिकारो का पूरा ध्यान रखें तथा स्वय इनका उचित उपभाग करें।

3 ब्रिटन मे नागरिको के अधिकार

वहाँ साविधानिक कानून नागरिक के अधिकारो का स्रोत नहीं वरन् परिणाम हैं, जि ह यायालयों ने परिभाषित किया है और यायालय ही लागू करते हैं। इस प्रकार 'विधि का कानून' नागरिका की स्वेच्छाचारी शासन के विरुद्ध रक्षा और कानून की सर्वोपरिता स्थापित करता है। नागरिको के मुख्य अधिकारा का अति सक्षिप्त उल्लख इस प्रकार है। 1689 क अधिकार-पत्र द्वारा इन अधिकारो की घोषणा की गयी—(1) नागरिको को शस्त्र धारण करन की स्वत त्रता होगी। (2) उनसे अत्यधिक जमानत नही माँगी जायगी। (3) उ ह अमानवीय व असाधारण दण्ड नही दिये जायेंगे। (4) उ ह पालियाम ट को अपनी शिकायतो का प्राथना-पत्र भेजने का अधिकार होगा। (5) पालियाम ट के सदस्यो को भाषण की स्वत त्रता का पूण अधिकार होगा। (6) राजा नये यायालय स्थापित नही कर सकता और न पालियामेंट की सहमति के बिना सेना ही रख सकता है। (7) नये कर पालियामे ट की अनुमति के बिना नही लगाये जायेंगे। इनके अतिरिक्त अ य प्रमुख नागरिक अधिकार निम्नलिखित हैं—

(अ) भाषण की स्वत त्रता—ब्रिटिश नागरिका को अपने विचार अभिव्यक्त करने और उ हे प्रकाशित करने का अधिकार है, कि तु ये बातें अपमानकारी एव अश्लील नही होनी चाहिएँ।

(आ) धार्मिक स्वत त्रता—विभिन्न कानूनो के परिणामस्वरूप ब्रिटेन म सभी नागरिका को धार्मिक स्वत त्रता का अधिकार है और वहाँ पर किसी भी धम के मानने वालो पर न कोई प्रतिब ध है और न ही किसी के लिए विशेष रियायतें। केवल राज्य का अध्यक्ष 'अंग्रेजी चच' का मानने वाला होना चाहिए।

(इ) सभा और सम्मेलन करने की स्वत त्रता—पर तु इस अधिकार पर आवश्यक मर्यादाएँ हैं— सम्राट को प्रजाजना को दृष्टि मे गिराना, अस तोष व रोष उत्पन्न करना, जनता को अशा ति, हिंसा और अव्यवस्था के लिए उत्तेजित करना, शासन और सविधान के विरुद्ध घृणा पदा करना या शारीरिक शक्ति द्वारा कानून म परिवत्तन करना राजद्रोह है।' इसक अतिरिक्त भाषणो और सभाओ पर पुलिस का व्यापक निय त्रण रहता है।

(ई) सघ बनाने को स्वत त्रता—इस पर कवल एक सीमा है और वह यह कि सघो के उद्देश्य और साधन वधानिक होने चाहिएँ।

(उ) प्राण रक्षा व शारीरिक स्वत त्रता—किसी भी व्यक्ति को बिना कानूनी कायवाही क प्राण अथवा शारीरिक स्वत त्रता से वचित नही किया जा सकता। य स्वत त्रताएँ विधि के शासन पर आधारित हैं।

नागरिक स्वत त्रताएँ—ये अधिकार व स्वत त्रताएँ किसी एक आलेख मे सग्रहित नही है। विभिन्न सविधियो के आधार पर ब्रिटिश नागरिको को ब दी प्रत्यक्षीकरण के लेख, शस्त्र धारण करने का अधिकार, याचिका देने का अधिकार आदि प्राप्त हैं। इनम से कुछ 'अधिकार पत्र' (Bill

उदाहरण के लिए, जूरी द्वारा मुकदमे की सुनवाई या संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकार संघीय न्यायालयों में ही लागू हो सकता है, किन्तु अधिकतर राज्यों के संविधानों ने अपने-अपने क्षेत्र में अर्थात् राज्य कानूनों के लिए भी इस अधिकार को प्रदान किया है। यहाँ पर यह बात उल्लेखनीय है कि संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकार पूर्ण नहीं है अर्थात् उनके दुरुपयोग को रोकने के उद्देश्य से उन पर प्रतिबन्ध लगाये जा सकते हैं विशेष रूप से युद्ध-काल में। नागरिक अधिकारों को अध्ययन की सुविधा के लिए निम्न समूहों में रखा जा सकता है—

व्यक्तिक अधिकार—इस समूह में सम्मिलित मुख्य अधिकार, जिन्हें सामूहिक रूप से जीवन और स्वतन्त्रता के अधिकार कह सकते हैं, इस प्रकार हैं—धर्म की स्वतन्त्रता, भाषण व लेखन की स्वतन्त्रता, शान्तिपूर्ण और बिना शस्त्र सभा करने और याचिका देने की स्वतन्त्रता, जिसमें सार्वजनिक सुरक्षा को खतरा न हो, शस्त्र रखने का अधिकार, तथा दासता की मनाही के साथ ही समानता बनाये रखने के उद्देश्य से राष्ट्रीय तथा राज्य सरकारें व्यक्तियों को उच्चता की उपाधियाँ प्रदान न करेंगी, किन्तु अमरीकी नागरिक विदेशी उपाधियाँ स्वीकार कर सकते हैं।

शिक्षा का समान अधिकार—हाल में संघीय न्यायालयों ने चौदहवें संशोधन के अन्तर्गत नीग्रो जाति के लोगों के लिए समान शिक्षा के अधिकार को स्वीकार किया है। नीग्रो जाति के लोगों को सभी उच्च विद्यालयों में बिना भेदभाव के शिक्षा पाने का अधिकार प्राप्त हो गया है।

कानूनों व कानूनी प्रक्रिया के सम्बन्ध में अधिकार—सर्वप्रथम, चौदहवें संशोधन के अन्तर्गत संयुक्त राज्य अमरीका के सभी नागरिकों को चाहे वे स्वदेश में रहें या संयुक्त राज्य के राज्य क्षेत्र में कहीं भी जायें, कानूनों का सम रक्षण प्राप्त है। दूसरा नागरिकों को बिल आफ अटेंडर और एक्स पोस्ट फैक्टो कानूनों से स्वतन्त्रता प्रदान की गयी है। बिल ऑफ अटेंडर ऐसा कानून होता है जो किसी अपराधी को बिना कानूनी कार्यवाही के दण्डित करने का अधिकार दे। राष्ट्रीय या राज्य सरकारें अपराधियों को अदालत में कार्यवाही के बाद ही दण्ड दे सकती हैं और यह दण्ड अपराधी के सम्बन्धी तक विस्तृत नहीं हो सकता। एक्स पोस्ट फैक्टो कानून बाद में बना होता है जो किसी कार्य को अपराध ठहराये जबकि वह कार्य करते समय अपराध न था या अपराध को पहले की अपेक्षाकृत अधिक गम्भीर घोषित करे और अपराधी को अधिक कठोर दण्ड देने के लिए बना हो। तीसरा, बन्दी प्रत्यक्षीकरण का लेख राष्ट्रीय संविधान ने राष्ट्रीय सरकार को विद्रोह या आक्रमण के सिवाय, जबकि सार्वजनिक सुरक्षा के लिए ऐसा करना आवश्यक हो, इस लेख के विशेषाधिकार को निलम्बित करने की मनाही करता है। इस अधिकार के बिना सेना या पुलिस चाहे जिस व्यक्ति को बन्दी बनाकर उसे अनिश्चित काल तक बिना मुकदमा चलाये बन्दी-गृह में बन्द रख सकते हैं। चौथा, अपराधियों को शीघ्र एवं सार्वजनिक मुकदमा, की सुनवाई का अधिकार है। पाँचवें, अभियुक्तों को अपने बचाव के लिए गवाही पेश करने, वकील करने, जूरी द्वारा मुकदमे की सुनवाई कराने के अधिकार भी प्राप्त हैं।

अन्त में, सबसे महत्त्वपूर्ण अधिकार उचित कानूनी प्रक्रिया का है। पाँचवें संशोधन में कहा गया है कि किसी व्यक्ति को उसके जीवन, स्वतन्त्रता व सम्पत्ति से बिना उचित कानूनी प्रक्रिया के वंचित न किया जायगा। उचित कानूनी प्रक्रिया में साधारणतया ये बातें आती हैं (अ) मुकदमे की अच्छी प्रकार से सुनवाई (आ) न्यायालय या मुकदमा सुनने वाले अधिकारी को कानून द्वारा उसकी सुनवाई का अधिकार हो, (इ) अभियुक्त को अपना बचाव पक्ष पेश करने का अवसर दिया जाय, और (ई) उसे गवाहों तथा वकीलों आदि से सहायता पाने का अधिकार हो।

सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार—संयुक्त राज्य अमरीका में निजी सम्पत्ति का अधिकार सुरक्षित है, संविधान कहता है कि किसी व्यक्ति की निजी सम्पत्ति सार्वजनिक प्रयोग के लिए उचित प्रतिकर दिये बिना संघ सरकार नहीं ले सकती। ऐसा अधिकार राज्यों के संविधान

के अनुसार दण्डनीय होगा। यह अछूत कहे जाने वाले नागरिकों की सामाजिक अयोग्यताओं को दूर करता है, तथा इसके अनुसार अपराधी को 500 रुपये जुर्माने अथवा 6 माह की कारागार या दोनों दण्ड दिये जा सकते हैं।

पाँचवें, सैनिक अथवा विद्या सम्बन्धी उपाधियों को छोड़कर अन्य कोई उपाधि राज्य द्वारा प्रदान न की जायगी। इसके अतिरिक्त (अ) भारत का कोई नागरिक किसी विदेशी राज्य से कोई उपाधि स्वीकार नहीं करेगा, (आ) कोई ऐसा व्यक्ति जो भारत का नागरिक नहीं है, किन्तु राज्य के अधीन लाभ या विश्वास के किसी पद को धारण किये हैं, किसी विदेशी राज्य से कोई उपाधि राष्ट्रपति की सहमति से बिना स्वीकार न करेगा, और (इ) राज्य के अधीन लाभ या विश्वास के पद पर आसीन कोई भी व्यक्ति विदेशी राज्य से किसी रूप में कोई भेंट, उपलब्धि के पद राष्ट्रपति की सहमति के बिना स्वीकार न करेगा।

समता के अधिकार में भारत के सभी नागरिकों को विधि के समक्ष समता का अधिकार मिला है। सरकारी नौकरियाँ पाने के लिए सभी को समान अवसर मिला है और पिछड़े हुए वर्गों के लिए कुछ आवश्यक तथा वाछनीय विशेष सुविधाओं की व्यवस्था भी की गई है। इसी अधिकार के अन्तर्गत अस्पृश्यता जैसे भयंकर कलंक व अभिशाप को दूर किया गया है। वास्तव में इस उपबन्ध द्वारा भारत की छः करोड़ जनता को सामाजिक न्याय की प्राप्ति हुई है। किन्तु इस उपबन्ध को यथार्थ रूप देने के लिए केवल कानूनी व्यवस्था ही पर्याप्त न होगी। अतएव सभी विचारशील व्यक्तियों के लिए यह उचित है कि वे इस उपबन्ध को क्रियात्मक रूप दें और राज्य को अस्पृश्यता मिटाने में पूर्ण सहयोग प्रदान करें। उपाधियों की प्रथा का अन्त करने की व्यवस्था आधुनिक प्रजातन्त्रात्मक विचारधारा के अनुकूल है। यहाँ पर यह भी उल्लेखनीय है कि 'भारत रत्न', 'पद्म विभूषण' इत्यादि विभिन्न प्रकार के पदक हैं जो देश सेवकों को उनकी विभिन्न क्षेत्रों में की गई सेवाओं के उपलक्ष में दिए जाते हैं। ये पूर्वकालीन उपाधियों से सर्वथा भिन्न हैं, क्योंकि सर, रायबहादुर, खान बहादुर आदि उपाधियाँ तो नाम के पूर्व अनिवार्य रूप से प्रयुक्त की जाती थी।[1]

स्वातन्त्र्य अधिकार—अनुच्छेद 19 से 22 तक नागरिकों को विभिन्न प्रकार की स्वतन्त्रतायें प्रदान करते हैं। इनमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद 19 है, जिसके द्वारा नागरिकों को अग्रलिखित स्वतन्त्रतायें प्रदान की गई है—(1) वाक् स्वातन्त्र्य और अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य, (2) शान्तिपूर्ण और निरायुध सम्मेलन, (3) संस्था या संघ बनाना, (4) भारत राज्य क्षेत्र के किसी भाग में निवास करने और बस जाने की स्वतन्त्रता, (5) सम्पत्ति के अर्जन, धारण व व्यय की स्वतन्त्रता, और (6) कोई वृत्ति, उपजीविका या कारोबार करने की स्वतन्त्रता। इन अधिकार द्वारा दी गयी स्वतन्त्रताओं को संविधान (प्रथम संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा इस प्रकार से सीमित किया गया है—वाक् स्वातन्त्र्य व अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य की कोई बात वर्तमान कानून पर कोई प्रभाव नहीं डालेगी अथवा राज्य द्वारा किसी ऐसे कानून के बनाने में बाधा नहीं डालेगी जो कि इस अधिकार पर उचित प्रतिबन्ध लगाता हो, और जो प्रतिबन्ध राज्य की सुरक्षा, विदेशों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध, सार्वजनिक व्यवस्था और नैतिकता के हित में हो अथवा न्यायालयों के अपमान या बदनामी से सम्बन्ध रखता हो या अपराध को प्रोत्साहन देने से सम्बन्ध रखता हो।

यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्य में ही प्रेस की स्वतन्त्रता सम्मिलित है। इसका उल्लेख पृथक रूप से नहीं किया गया है। इसकी भाँति शान्तिपूर्ण और निरायुध सम्मेलन के आधार की कोई बात इस अधिकार के प्रयोग पर सार्वजनिक व्यवस्था

[1] Kagzi M C I *The Constitution of India* p 162

of Rights) म समाविष्ट है । इन सभी के पीछे 'विधि के शासन' का सिद्धान्त है । इन अधिकारो या स्वतन्त्रताओ पर पार्लियामेन्ट जब चाहे सीमाएँ लगा सकती है या उन्हे निलम्बित कर सकती है, क्योकि वह सर्वोपरि है । परन्तु हम यह ध्यान रखना चाहिए कि इन अधिकारो व स्वतन्त्रताओ का सबसे बडा सरक्षक जनमत है और जनमत के विरुद्ध पार्लियामेन्ट भी काय नही कर सकती ।

4 भारत मे नागरिको के अधिकार

भारत के सविधान म सभी नागरिको को सम मूल अधिकार प्रदान किये गये है । इन अधिकारो मे ही एक अधिकार साविधानिक उपचार का है । इसीलिए यह कहा जाता है कि नागरिको के अधिकार यायालयो द्वारा समथनीय हैं । सविधान म समाविष्ट मूल अधिकारो का आलोचनात्मक विवेचन निम्न प्रकार है—

समता का अधिकार—इस श्रेणी म पाँच प्रकार से समता के अधिकार प्रदान किये गये हैं । पहले, विधि के समक्ष समता है । राज्य कोई ऐसा अधिनियम नही बना सकता जो किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता के अधिकार की मनाही करे अथवा भारत राज्य-क्षेत्र मे नागरिको को कानून के समान रक्षण से वचित करे । आजकल यह अनुभव किया जाने लगा है कि यह अधिकार तब तक अपूण है जब तक कि समाज के निधन सदस्यो को भी दीवानी और फौजदारी कायवाही के सम्बन्ध मे दूसरा के समान कानूनी परामश पाने की सुविधाएँ प्राप्त न हो । वतमान काल मे भारत मे कानूनी परामश बिना व्यय किये हुए उन फौजदारी मुकदमो मे प्राप्य है जिनम कि मत्यु दण्ड दिया जा सके, यह भी जबकि यायालय इस बात से सन्तुष्ट हो जाय कि अभियुक्त के पास वकील करने के लिए साधन नही है । ऐसे मुकदमा मे न्यायालय राज्य की ओर से अभियुक्त के बचाव के लिए वकील की व्यवस्था करता है ।

दूसरे, धम, मूलवश, जाति, लिंग, जन्म-स्थान आदि के आधार पर भेदभाव करने की मनाही है अर्थात् राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धम, मूलवश, जाति, जन्म स्थान अथवा इनमे से किसी के आधार पर कोई विभेद नही करेगा तथा इसम से किसी के आधार पर कोई नागरिक (अ) दुकानो, भोजनालयो, सावजनिक मनोरजन के स्थानो मे प्रवेश से अथवा (आ) सार्वजनिक कुओ, तालाबो, स्नान घाटो, सडको व सावजनिक स्थानो के उपयोग के बारे म किसी भी निर्योग्यता, दायित्व, निबन्ध अथवा शत के अधीन न होगा । साथ ही इस अनुच्छेद की किसी बात से राज्य को सामाजिक और शिक्षा की दृष्टि से पिछडे हुए वर्गों अथवा अनुसूचित जातियो व जनजातियो की उन्नति के लिए कोई विशेष उपबन्ध बनाने म किसी प्रकार की बाधा न होगी । 1951 के सविधान (प्रथम सशोधन) अधिनियम ने राज्य के लिए यह साविधानिक घोषित किया है कि वह सावजनिक शिक्षा सस्थाओ म नागरिको क पिछडे हुए वर्गों, अनुसूचित जातियो व जनजातियो के लिए सुरक्षित स्थानो (reserved seats) की व्यवस्था कर सके और उनकी उन्नति के लिए अन्य आवश्यक उपबन्ध भी बना सके ।

तीसरे, सावजनिक पदो की प्राप्ति के लिए अवसर की समता प्रदान की गयी है । धम, मूलवश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्म-स्थान अथवा इनमे से किसी के आधार पर किसी नागरिक के लिए राज्याधीन किसी नौकरी या पद के विषय मे किसी प्रकार की न तो अपात्रता होगी और न किसी प्रकार का विभेद किया जायगा । परन्तु उपर्युक्त अनुच्छेद के रहते हुए भी राज्य को नागरिको के उन पिछडे हुए वर्गों के पक्ष म जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय मे राज्याधीन सेवाओ मे पर्याप्त नही है, नियुक्तियो या पदो के आरक्षण के लिए व्यवस्था करने मे कोई बाधा न होगी ।

चौथे, अस्पृश्यता का अन्त किया गया है और उसका किसी भी रूप म आचरण निषिद्ध ठहराया गया है । अस्पृश्यता स उपजी किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध है

'उचित' शब्द का अर्थ न्यायालयों की सम्मति में न्यायोचित प्रक्रिया से है। इस अन्तर का संक्षेप में आशय यह है कि भारतीय न्यायालय किसी कानून के औचित्य पर अपना निर्णय देने से वंचित कर दिये गये हैं। अतः इस सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय न्यायालयों का न होकर विधानमण्डलों का ही रहेगा। ए० के० गोपालन बनाम मद्रास राज्य नाम के प्रसिद्ध मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया को छोड़कर' शब्दों की अधिकारपूर्ण व्याख्या इस प्रकार की। इन शब्दों का अर्थ यह होता है कि जब विधानमण्डल जीवन तथा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के अपहरण के सम्बन्ध में कोई कानून बना देते हैं तो न्यायालय उन्हें अवैध नहीं घोषित कर सकते।

दूसरे, निवारक निरोध के सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भारतीय संविधान के अनुसार नागरिकों को साधारण व असाधारण सभी परिस्थितियों में नजरबन्द बनाया जा सकता है। अन्य प्रजातन्त्रीय देशों के संविधानों में ऐसी धारायें नहीं हैं। ब्रिटिश संसद अवश्य ही ऐसे कानून बनाने की शक्ति रखती है, किन्तु उसने युद्धकाल के अतिरिक्त कभी ऐसे कानून नहीं बनाये। भारतीय संविधान के अन्तर्गत निवारक निरोध युद्ध व शान्ति दोनों ही काल में प्रयुक्त हो सकता है। इस दृष्टि से इन प्राविधानों को न्यायोचित ठहराना अत्यधिक कठिन है। परन्तु इसके पक्ष में यह युक्ति दी जा सकती है कि राज्य की सुरक्षा व सार्वजनिक व्यवस्था के हित में ऐसे प्राविधानों का होना भारत की वर्तमान परिस्थितियों में उचित है। साथ ही इस बात पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए कि विधानमण्डलों की इस सम्बन्ध में कानून बनाने की शक्ति की कठोरता को कम करने के लिए अनेक संरक्षणों की व्यवस्था की गयी है।

शोषण के विरुद्ध अधिकार—संविधान के अनुसार मानव का पण्य (traffic in human beings) और बेगार तथा इसी प्रकार के जबरदस्ती से कराये गये श्रम को निषिद्ध ठहराया गया है। इस प्राविधान का कोई भी उल्लंघन अपराध होगा, जो विधि के अनुसार दण्डनीय होगा। परन्तु इस अनुच्छेद की किसी बात से राज्य को सार्वजनिक प्रयोजन के लिए बाध्य सेवा लागू करने में बाधा न पड़ेगी। किन्तु ऐसी बाध्य सेवा लागू करने में केवल धर्म, मूल वंश जाति या वर्ग या इनमें से किसी एक के आधार पर राज्य कोई विभेद न करेगा। 14 वर्ष से कम आयु वाले किसी बालक को किसी कारखाने अथवा खान में नौकर न रखा जायगा और न किसी अन्य संकटमय नौकरी में लगाया जायेगा। इसका महत्त्व यह है कि भारत में बेगार की प्रथा बड़ी पुरानी थी, जिसका संविधान ने अन्त कर दिया है। अब किसी भी प्रकार की बेगार लेना अपराध है जिसके लिए कानून द्वारा अपराधियों को दण्ड दिये जाने की व्यवस्था की जानी चाहिए। अनेक देशों में दास प्रथा का प्रचलन था। यह विभिन्न रूपों में भारत में भी प्रचलित थी। किन्तु आधुनिक युग में दास प्रथा को निन्दनीय समझा गया और उसका अन्त भी हुआ। परन्तु राज्य सार्वजनिक प्रयोजन के लिए बिना किसी प्रकार का भेदभाव किये बाध्य सेवा लागू कर सकता है।

धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार—सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य तथा इस भाग के दूसरे प्राविधानों के अधीन रहते हुए प्रत्येक व्यक्ति को अन्तःकरण की स्वतन्त्रता का तथा धर्म के अबाधरूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने तथा धार्मिक संस्थाओं की स्थापना का सम अधिकार है। परन्तु इस अधिकार से किसी ऐसे वर्तमान कानून के प्रवर्तन पर प्रभाव न पड़ेगा अथवा राज्य द्वारा ऐसा कानून बनाने में बाधा न होगी—जो धार्मिक आचरण से सम्बद्ध किसी आर्थिक, वित्तीय, राजनीतिक अथवा अन्य किसी प्रकार की लौकिक क्रियाओं का विनियमन या निर्बन्धन करती हो, अथवा हिन्दुओं की सार्वजनिक धार्मिक संस्थाओं को हिन्दुओं के सभी वर्गों और विभागों के लिए खोलती हो। इस के अतिरिक्त किसी भी व्यक्ति को ऐसे कर देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता, जिसकी आय किसी विशेष धर्म अथवा धार्मिक सम्प्रदाय की उन्नति या पोषण में व्यय करने के लिए विशिष्ट रूप से तय कर दी गयी हो। राज्य निधि से

के हित में उचित प्रतिबन्ध, जहाँ तक कोई वर्तमान कानून लगाता हो, वहाँ तक उसके प्रवर्तन अथवा वैसे प्रतिबन्ध लगाने वाला कोई कानून बनाने में राज्य के लिए कोई बाधा नहीं डालेगी। अनुच्छेद 20 के अनुसार कोई व्यक्ति तब तक दण्डित नहीं किया जा सकता जब तक कि अपराध करने के समय उसने किसी कानून का अतिक्रमण न किया हो और न उससे अधिक दण्ड का पात्र होगा जो उस अपराध के करने के समय उस चालू कानून के अधीन दिया जा सकता था। इसका प्रभाव यह होगा कि राज्य ऐसा कानून नहीं बना सकता जो किसी बीती हुई घटना पर लागू हो सके।

निवारक निरोध—किसी व्यक्ति को अपने प्राण अथवा दैहिक स्वाधीनता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया को छोड़कर अन्य प्रकार से वंचित न किया जायगा। कोई व्यक्ति जो बन्दी बनाया गया है ऐसे बन्दीकरण के कारणों से यथाशक्ति शीघ्र अवगत कराये बिना हवालात में बन्द नहीं किया जायगा और न अपनी रुचि के वकील से परामर्श करने तथा बचाव करने के अधिकार से वंचित किया जायगा। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति जो बन्दी बनाया गया है या हवालात में रखा गया है बन्दीकरण के स्थान से दण्डाधीश के न्यायालय तक यात्रा के लिए आवश्यक समय को छोड़कर ऐसे बन्दीकरण से 24 घण्टे के भीतर निकटतम दण्डाधीश के सामने पेश किया जायेगा और ऐसा व्यक्ति उक्त कालावधि से आगे दण्डाधीश के प्राधिकार के बिना हवालात में न रखा जायगा। किन्तु ये उपबन्ध तत्समय किसी विदेशीय शत्रु व निवारक निरोध सम्बन्धी अधिनियम के अधीन बन्दी बनाये गये व्यक्तियों पर लागू न होंगे। स्पष्ट है कि व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण संरक्षणों की व्यवस्था की गयी है। जो व्यक्ति नजरबन्द किये जायेंगे उन्हें शीघ्रातिशीघ्र दण्डधीश के सामने पेश किये जाने, नजरबन्दी के कारणों से अवगत कराने और वकीलों की राय लेने तथा पैरवी कराने की आवश्यक सुविधायें दी गयी हैं।

समालोचना—स्वतन्त्रता सम्बन्धी उपर्युक्त अधिकार मूल अधिकार हैं और उनका संविधान में प्रगणित किया जाना व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की प्रत्याभूति है। परन्तु यह सर्वविदित तथ्य है कि कोई भी अधिकार पूर्ण अथवा असीमित नहीं होता। यह बात विशेष रूप से स्वातन्त्र्य अधिकार के बारे में अधिक सत्य है। अतएव स्वातन्त्र्य अधिकार पर प्रतिबन्ध होते हैं तथा होने चाहिये। इस प्रश्न पर तो मतभेद नहीं हो सकता, किन्तु देखना यह है कि प्रतिबन्ध किस सीमा तक उचित एवं वांछनीय है। राज्य की सुरक्षा, सार्वजनिक नैतिकता आदि के हित में आवश्यक प्रतिबन्ध लगाये जा सकते हैं। बेयर्ड[1] तथा ऑग और रे आदि प्रसिद्ध विद्वान् लेखकों के कथनों से हमारे मत का समर्थन होता है। बर्क के सुन्दर शब्दों में स्वतन्त्रता पाने के लिए उसका सीमित होना आवश्यक है, क्योंकि स्वतन्त्रता का अर्थ कभी स्वच्छन्दता नहीं हो सकता।

परन्तु भारतीय संविधान द्वारा दिये गये स्वातन्त्र्य अधिकार के विभिन्न पहलुओं, उसके अपवादों व प्रतिबन्धों के ऊपर ध्यानपूर्वक विचार करने से कुछ बातें विशेष रूप से उल्लेखनीय प्रतीत होती हैं। प्रथम, हमारे संविधान में 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया को छोड़कर' वाक्यांश का प्रयोग किया गया है। विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया का अर्थ यह है कि किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता विधानमण्डल द्वारा बनाये कानून के अनुसार छीनी जा सकती है चाहे विधानमण्डल द्वारा बनाया गया कानून उचित अथवा अनुचित हो। इसके विपरीत विधि की उचित प्रक्रिया में

---

[1] Freedom is relative not absolute No government could allow unrestricted liberty to persons who urge direct attempts to overthrow it by violence or the murder of its officials —Beard

[2] Liberty is not licence and rights are relative not absolute After all one of the main purposes of government is to protect the safety and well being of the many from being jeopardized by one or a few —Ogg and Ray

ऐसा अजन (कब्जा) करने का प्राधिकार देता है तब तक अर्जित नहीं की जा सकती जब तक कि वह कानून अर्जित की जाने वाली सम्पत्ति के लिए प्रतिकर का उपबंध न करे या उन सिद्धान्तों और रीतियों का उल्लेख न करे जिनसे प्रतिकर निर्धारित होना तथा दिया जाना है। इसके अतिरिक्त किसी राज्य के विधानमण्डल द्वारा पास किया गया ऐसा कानून जो राष्ट्रपति के विचार के लिए रोक रखा गया हो और जिस पर राष्ट्रपति की अनुमति मिल गयी हो तो सविधान में इस अनुच्छेद के होते हुए भी इस प्रकार अनुमत कानून के विरुद्ध किसी न्यायालय में इस आधार पर आपत्ति न की जा सकेगी वह प्रतिकर सम्बन्धी उपबन्धों का उल्लंघन करता था।

सविधान की मूलधारा में सविधान के (प्रथम संशोधन) कानून 1951 के द्वारा अग्रलिखित दो अनुच्छेद और जोड़े गये हैं—31 (क) अनुच्छेद 31 के रहते हुए भी राज्य द्वारा निर्मित सम्पत्ति या तत्सम्बन्धी अधिकार प्राप्त करने वाला या उन्हें घटाने वाला कोई भी कानून इस आधार पर अवैध नहीं ठहराया जा सकता कि वह इसमें दी गयी धाराओं का उल्लंघन करता है अथवा अपहरण करता है या उन्हें सीमित करता है। 31 (ख) कुछ कानूनों और नियमों की वैधता (Validation of certain Acts and Regulations)—साधारणत 31 (क) में दी गई बातों का विरोध किये बिना अनुसूची 9 में दिये हुए कोई भी कानून और नियम अवैध नहीं समझे गये। उन्हें इस आधार पर अवैध नहीं ठहराया जा सका कि इस भाग में दी हुई धाराओं और नियमों का वे उल्लंघन करते थे। संक्षेप में, अनुच्छेद 31 (क) और (ख) का उद्देश्य यह था कि जमींदारी उन्मूलन या भूमि सुधार सम्बन्धी जो भी कानून विभिन्न राज्यों के विधानमण्डलों ने बनाये उन्हें इस आधार पर कि वे कुछ मूल अधिकारों का अतिक्रमण करते थे अवैध घोषित नहीं किया जा सका।

आलोचना—सार्वजनिक प्रयोजन के लिए प्रतिकर देकर सम्पत्ति के अर्जन सम्बन्धी धाराएँ काफी उलझी हुई हैं परन्तु एक अच्छी बात यह है कि प्रतिकर व्यवस्था के विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही नहीं की जा सकती। वास्तव में, प्रतिकर की राशि या मात्रा न्यायालयों के विचाराधीन नहीं रखी गयी। दूसरे शब्दों में, न्यायालय यह विचार करने से वंचित कर दिये गये हैं कि प्रतिकर उचित है या नहीं।[1] संयुक्त राज्य अमरीका और आस्ट्रेलिया के संविधानों में न्यायोचित प्रतिकर की व्यवस्था है। इससे यह स्पष्ट है कि हमारा सविधान सम्पत्ति के अर्जन हेतु विधानमण्डल को ही अन्तिम अधिकार प्रदान करता है, किन्तु न्यायालय इस बात की जाँच अवश्य ही कर सकते हैं कि कहीं प्रतिकर सम्बन्धी उपबन्ध सविधान पर धोखा मात्र तो नहीं है अर्थात् जो प्रतिकर दिखाया गया है वह वास्तव में प्रतिकर है या केवल दिखावा। इस सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण बात तो यह है प्रतिकर कितना हो इसका अन्तिम निर्णय जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों के हाथ में छोड़ा गया है।

सांविधानिक उपचार का अधिकार—अनुच्छेद 32 के अनुसार मूल अधिकारों को लागू करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समुचित कार्यवाही करने के अधिकार की गारंटी मिली है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सर्वोच्च न्यायालय को ऐसे निदेश, आदेश या लेख जो भी समुचित हो, जारी करने की शक्ति दी गयी है। सर्वोच्च न्यायालय की इन शक्तियों पर बिना प्रतिकूल प्रभाव डाले संसद कानून द्वारा किसी दूसरे को अपने क्षेत्राधिकार की सीमाओं के भीतर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रयोग की जाने वाली ऐसी सब अथवा किसी शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार दे सकती है। साथ ही सविधान में अन्यथा उपबंधित आवश्यकता को छोड़कर इस

[1] The chief provision of the Amendment is that compensation under article 31 is no more a justiciable matter under the Constitution Thus the question of compensation is withdrawn from the field of judicial determination and placed exclusively at the will of the legislature whatever might be the compelling reason for the adoption of such measure The Fourth Amendment has brought about a major departure from the original intention of the framers of the Constitution —Pylee M V *India s Constitution* p 130

पूरी तरह से पोषित किसी शिक्षा सस्था मे कोई धार्मिक शिक्षा न दी जायेगी। परन्तु यह बात ऐसी शिक्षा सस्थाओ पर लागू न होगी, जिनका प्रशासन तो राज्य करता हो, किन्तु जो किसी ऐसे धर्मस्व या न्यास के अधीन स्थापित हुई हो, जिसके अनुसार उस सस्था मे धार्मिक शिक्षा देना, आवश्यक हो। इसके अतिरिक्त राज्य से अभिज्ञात अथवा राज्य से आर्थिक सहायता पाने वाली शिक्षा सस्था मे पढने वाले किसी व्यक्ति को ऐसी सस्था मे दी जाने वाली धार्मिक शिक्षा मे भाग लेने के लिए अथवा उसमे या उससे लगे स्थान मे की जाने वाली धार्मिक उपासना मे उपस्थित होने के लिए बाध्य न किया जायगा, जब तक कि वह व्यक्ति स्वय, यदि वह वयस्क है, अन्यथा उसका सरक्षक इसके लिए अपनी सहमति न दे दे।

यह तो पहले ही बताया जा चुका है कि हमारे सविधान निर्माताओ ने धर्मनिरपेक्ष राज्य के आदर्श को, जो आधुनिक प्रगतिशील विचारधारा के अनुकूल है अपनाया है। धार्मिक स्वतन्त्रता का महत्त्व भारत मे अन्य देशो से बढकर ही है, क्योकि यहा पर विभिन्न धर्मों के अनुयायी बडी सख्या मे रहते है और सभी धर्मावलम्बी धर्म को अपने वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन मे बहुत महत्त्व देते है। जहा तक धर्म का सम्बन्ध है राज्य किसी विशेष धर्म को कोई महत्त्व न देगा और राज्य की नीति सभी धर्मों के प्रति तटस्थता की रहेगी, किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नही कि राज्य नास्तिकता को प्रोत्साहन देगा। इसका आधार यह है कि धर्म का सम्बन्ध व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन से है, जिससे राज्य का कोई विशेष सम्बन्ध नही है। दूसरे शब्दो मे, राज्य का एक राजनीतिक समुदाय के रूप मे, व्यक्तियो के सामाजिक सम्बन्धो से सम्बन्ध है न कि व्यक्ति और उसके ईश्वर के बीच सम्बन्ध। अन्त करण की स्वतन्त्रता का यही आशय है। अतएव धर्मनिरपेक्ष राज्य वह राज्य है जिसका अपना कोई धर्म न हो और जो नागरिको के बीच धार्मिक आधार पर कोई विभेद न करे। ऐसे राज्य मे किसी धर्म को कोई विशेष अधिकार प्राप्त नही हो सकता और न ही किसी व्यक्ति को किसी धर्म विशेष को मानने या न मानने के लिए कोई प्रोत्साहन दिया जा सकता।

सास्कृतिक तथा शिक्षा सम्बन्धी अधिकार—भारत के राज्य क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी नागरिको के किसी समूह को, जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपि या सस्कृति है उसे बनाये रखने का अधिकार है। परन्तु राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य कोष से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा सस्था मे किसी भी नागरिक को केवल धर्म मूलवश जाति, भाषा तथा इनमे से किसी के आधार पर प्रवेश से वचित नही किया जा सकता। इसके अतिरिक्त शिक्षा सस्थाओ को सहायता देने मे राज्य किसी शिक्षालय के विरुद्ध इस आधार पर विभेद नही कर सकता कि वह धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसख्यक वर्ग के प्रबन्ध मे है। सभी अल्पसख्यको को जो धर्म सम्प्रदाय या भाषा आदि पर आधारित हो सकते है, अपनी सस्कृति के सम्बन्ध मे स्वतन्त्रता मिली है। वे अपनी विशेष भाषा या लिपि या सस्कृति को बनाये रख सकते है। किन्तु अनेक राष्ट्रवादी धर्म, सम्प्रदाय अथवा भाषा आदि पर आधारित सस्थाओ का अन्त करने अथवा कम से कम उन्हे राज्य द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान न करने के पक्ष मे है। परन्तु हमे यह न भूलना चाहिए कि भारत एक विशाल देश है, जिसमे विविध भाषाएँ, लिपियो व सस्कृति के विभिन्न रूप पाये जाते है। वास्तव मे, भारत की विशेषता ही विविधता मे एकता है। अतएव इन सभी के विकास के लिए सविधान मे पर्याप्त गारटी देना उचित ही है। अत जहा एक ओर विभिन्न अल्पसख्यक वर्गो को अपनी रुचि की शिक्षा सस्थाएँ स्थापित करने व उनका प्रशासन करने का अधिकार मिला है दूसरी ओर किसी भी राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य कोष से सहायता-प्राप्त सस्था मे अन्य वर्गों के विद्यार्थियो के प्रवेश पर कोई रोक नही लगायी जा सकती।

सम्पत्ति का अधिकार—किसी व्यक्ति को उसकी सम्पत्ति से कानून के प्राधिकार के बिना वचित नही किया जा सकता। साथ ही कोई स्थावर या जगम सम्पत्ति ऐसे कानून के

इस आक्षेप मे सत्य का अधिक अश नही है, क्योकि स्वात न्य अधिकार को केवल बाह्य युद्ध अथवा व्यापक आन्तरिक अशांति से उत्पन्न होने वाले आपातकाल के दौरान ही स्थगित किया जा सकता है। ऐसे काल मे व्यक्ति की स्वत त्रता से राज्य की सुरक्षा का महत्त्व कही अधिक बढा हुआ मानना उचित है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति द्वारा इस सम्ब ध मे निकाले गये आदश को यथा शीघ्र ससद के दोनो सदनो मे स्वीकृति के लिए रखा जाना आवश्यक है अर्थात् उन पर निर्वाचित प्रतिनिधियो की स्वीकृति मिलनी चाहिए। अनुच्छेद 14, 19, 21 और 31 पर यदि हम एक साथ विचार करें तो यह निष्कर्ष निकलेगा कि भारत म अब विधि का शासन (Rule of law) स्थापित हो गया है। जब हम अपने सविधान म प्रगणित मूल अधिकारो की तुलना सोवियत सघ के सविधान म दिये गये अधिकारो से करते है तो हमे निम्नलिखित तीन बातो म अ तर मिलता है—

प्रथम तो यह कि कुछ महत्त्वपूर्ण अधिकारा जैसे काम पाने का अधिकार, आराम और अवकाश का अधिकार, भौतिक सुरक्षा का अधिकार, शिक्षा का अधिकार आदि का हमारे सविधान मे अभाव है, जबकि इन्हे सोवियत सघ के सविधान म महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। आज की आर्थिक कठिनाइयो के काल मे काम पाने आदि अधिकारो का अभाव बहुत ही खलता है, कि तु इस सम्ब ध म हमे यह बात ध्यान म रखनी चाहिए कि हमारे सविधान निर्माता देश की वतमान परिस्थितियो मे तथा प्रजातन्त्रात्मक प्रणाली को अपनाते हुए ऐसी व्यवस्था नही कर सकते थे। फिर भी इनम से कुछ अधिकारा की पूर्ति करने की व्यवस्था उ होने राज्य नीति के निदेशक सिद्धा तो म सम्मिलित करके की है। दूसरे सोवियत सघ मे स्वात त्र्य अधिकार को छोडकर जो यवहार मे अत्यधिक सीमित है अन्य अधिकारो के समुचित उपभोग के लिए राज्य की ओर से व्यवस्था की जाती है। अभी हमारे देश म एसी व्यवस्था करने का कोई बडा प्रयत्न नही हो सका है। तीसरे, सोवियत सघ के सविधान मे अधिकारो के समान उनसे अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान नागरिको के कत्त यो का है, कि तु हमारे सविधान म उनका कोई उल्लेख नही है यद्यपि वे अधिकारो म ही निहित कहे जा सकते है, क्योकि अधिकार और कत्तव्य एक ही वस्तु के दो पहलू है।

5 फ्रास मे नागरिको के अधिकार

वतमान सविधान की प्रस्तावना म यह कहा गया है कि फ्रास की जनता 1789 म घोषित मानव अधिकारो तथा 1946 के सविधान की प्रस्तावना मे प्रगणित अधिकारो व कत्त यो को स्वीकार करती है। अतएव यहा पर 1948 के सविधान की *प्रस्तावना म प्रगणित अधिकारो व* कत्तव्यो का दिया जाना आवश्यक और उपयुक्त प्रतीत होता है, जो अग्रलिखित है (1) स्त्रियो को पुरुषो के समान ही अधिकारो की प्रत्याभूति (Guarantee) कानून द्वारा की गई है। (2) यदि किसी विदेश म किसी व्यक्ति को स्वत त्रता स सम्ब धित गतिविधियो के कारण सताया जाय तो फ्रास ऐस व्यक्तियो को शरण का अधिकार देता है। (3) प्रत्येक व्यक्ति का कत्त य है कि वह काम करे और उसे काम पान का अधिकार है। किसी भी व्यक्ति को अपना काम या नौकरी म अपन उद्भव (origin), अपने मत या विश्वास के कारण कोई हानि नही पहुँचाई जायगी। (4) प्रत्येक व्यक्ति को अपने अधिकारो और हितो की रक्षा का अधिकार है और उनकी रक्षार्थ वह ट्रेड यूनियनो म सम्मिलित हो सकता है। (5) हडताल करने का अधिकार (right to strike) का प्रयोग कानूनो की सीमाओ के भीतर किया जा सकता है। (6) प्रत्येक श्रमिक अपने प्रतिनिधियो के द्वारा व्यवसाय के प्रब ध और *काम करन की दशाओ के निर्धारण म* सामूहिक सौदे (collective bargaining) म भाग ल सकता है। (7) राष्ट्र प्रत्येक व्यक्ति और परिवार को उनके विकास हेतु आवश्यक दशाओ की उचित व्यवस्था का विश्वास दिलाता है। (8) यह सभी को विशेष रूप से बालको, माताओ और बूढ़ो क स्वास्थ्य की रक्षा, भौतिक सुरक्षा, आराम

द द्वारा दी गयी गारण्टी को निलम्बित (suspend) नही किया जा सकता। अतएव मूल ारो की रक्षा के लिए सर्वोच्च यायालय म प्राथना पत्र दिये जा सकने है और यायालय प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार पृच्छा और उत्प्रेषण आदि लेख जारी कर सकता स प्रकार के अधिकार उच्च यायालया को भी दिये गय है।

इस अधिकार का विशेष महत्त्व है। ऐसा किया जाना अति आवश्यक और उचित ही था, सावैधानिक उपचार का अधिकार तो अन्य अधिकारा की आत्मा है। सर्वोच्च यायालय चिरजीलाल वाले मुकदमे मे दिये गये निणय की इन बातो से इस अनुच्छेद का महत्त्व स्पष्ट ना चाहिए—(अ) इस अनुच्छेद का मुख्य उद्देश्य सविधान द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकारा ागू करना है, (आ) इसका उद्देश्य मूल अधिकारा को लागू करना है, जिसकी आवश्यकता ामण्डल अथवा कायपालिका किसी के भी काय के कारण उत्पन्न हो सकती है, और (इ) कोई ाक्ति जिसे सविधान द्वारा प्रत्याभूत किसी भी मूल अधिकार मे हस्तक्षेप की शिकायत हो, इस के लिए स्वतन्त्र है कि वह सर्वोच्च यायालय म उपचार हेतु जाय।

अनुच्छेद 33 के अन्तगत ससद को शक्ति प्राप्त है कि वह कानून से यह निर्धारित कर कि इस भाग द्वारा दिये गय अधिकारो म से किसी का सशस्त्र सेनाओ के सदस्यो के लिए होने की अवस्था म उसका किस सीमा तक निब ध आदि लगाकर सुधार किया जाय, जिससे नके कत्तव्या का उचित पालन हो सके तथा उनम अनुशासन सुनिश्चित रूप से बना रहे। अतिरिक्त सशोधित अनुच्छेद 34 के अनुसार ससद को यह भी अधिकार है कि जिन क्षेत्रो मे शासन लागू हो उनम किय गय कार्यों तथा दिये गये दण्ड को वह कानून द्वारा उचित सकती है। इसका प्रभाव यह होगा कि ऐसे क्षेत्रा म सनिक शासन के दौरान मूल अधिकार निलम्बित रहगे। अनुच्छेद 35 म उन कानूनो के लिए व्यवस्था का वणन है, जिनका उद्देश्य ्ल अधिकारो के प्राविधाना को काय रूप देना हो। इसके अ तगत ससदो को इन विषय के र कानून बनाने की अनन्य शक्ति प्राप्त है—सावैधानिक उपचार का अधिकार, सावजनिक ो के हेतु निवास सम्ब धी योग्यताओ को विहित करना, सशस्त्र सेनाएँ और सनिक कानून। को यह भी अन य शक्ति प्राप्त है कि वह मूल अधिकारो के अ तगत बने कानूनो का उल्लघन वाले अपराधो के लिए दण्ड विहित करे। सविधानो के अनुसार इन सभी विषया से सम्बन्धित के लिए राज्यो को किसी प्रकार क भी कानून बनाने की मनाही की गयी है। इन प्राविधाना योजन स्पष्टत इन विषया के बारे मे सम्पूण देश के लिए सामान्य स्तरो की स्थापना करना ोकि यदि राज्या को इन विषयो के बारे मे कानून बनाने के कुछ भी अधिकार प्रदान किय तो व इकहरी नागरिकता और राष्ट्रीय एकता की स्थापना म बाधक सिद्ध होते।

मूल अधिकारो का निलम्बित किया जाना—जब देश म बाह्य आक्रमण या आ तरिक ंत के कारण राष्ट्रपति द्वारा आपातकालीन घोषणा का प्रवतन हो तो राष्ट्रपति के आदेश करने पर अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदान किये गय स्वतन्त्रता सम्ब धी सभी अधिकार निलम्बित जा सकते हैं। साथ ही राष्ट्रपति मूल अधिकारो की प्राप्ति या रक्षा के लिए यायालय ाथना करने का अधिकार भी स्थगित कर सकता है। ऐसा आदेश राष्ट्रपति द्वारा ा भारत अथवा उसके किसी भाग के लिए जारी किया जा सकता है, परन्तु जितना शीघ्र व हो सकगा ऐसा आदेश ससद के दोनो सदनो के सामने रखा जायगा। ऐसी आपातकालीन ापणा के दौरान म अनुच्छेद 19 म दी गयी कोई शक्ति पर सीमा न लगायेगी परन्तु उद्घोषणा की समाप्ति पर ऐसा कोई भी कानून विरोध की सीमा तक अप्रभावी हो जायेगा।

समालोचना—कुछ आलोचको का यह कथन है कि स्वातन्त्र्य अधिकार को स्थगित करना ो जड को काटना है तथा ऐसा करने से राज्य का रूप सर्वाधिकारवादी हो जायगा। परन्तु

7 जापान में नागरिकों के अधिकार

संविधान के तीसरे अध्याय में नागरिकों के अधिकारों व कर्त्तव्यों का प्रगणन किया गया है। नागरिकों को प्राप्त प्रमुख अधिकार इस प्रकार हैं—'जनता को उन मूल मानव अधिकारों में से किसी एक के भी उपभोग में नहीं रोका जायगा, जिन्हें उसे सदैव के लिए अनतिक्रमणीय अधिकारों के रूप में प्रदान किया गया है। सभी लोगों का व्यक्तियों के रूप में मान होगा। विधि निर्माण और अन्य सरकारी मामलों में उनके जीवन, स्वतन्त्रता व सुख की प्राप्ति के प्रयत्नों के अधिकार को इस सीमा तक स्वीकार किया जायगा जहाँ तक कि वह सार्वजनिक कल्याण में हस्तक्षेप न करे। कानून के अन्तर्गत, सभी नागरिक सम हैं और मूलवंश, धार्मिक विश्वास, लिंग अथवा सामाजिक पद के कारण उनके बीच राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व धनों में कोई भेदभाव न किया जायगा। पीयरों को मान्यता प्राप्त न होगी। जनता को अपने सार्वजनिक अधिकारियों को चुनने और उन्हें अपदस्थ करने का अनपहरणीय अधिकार है। सभी सार्वजनिक अधिकारी जनता के सेवक हैं। सार्वजनिक अधिकारियों के चुनाव में गुप्त मतदान का अतिक्रमण न किया जायगा। इसके अतिरिक्त सभी प्रकार की स्वतन्त्रतायें—विचार और धार्मिक विश्वास, सभा करने और संघ बनाने, विश्वास, शिक्षा, विवाह आदि की प्रत्याभूतियाँ दी गई हैं।

सभी व्यक्तियों को स्वस्थ और सुसंस्कृत जीवन के निम्नतम स्तरों को बनाये रखने का अधिकार रहेगा। जीवन के सभी क्षेत्रों में राज्य सामाजिक कल्याण व सुरक्षा और जन स्वास्थ्य के विस्तार व प्रोत्साहन के लिए प्रयत्न करेगा। अपनी योग्यता के अनुसार सभी व्यक्तियों को सम शिक्षा व काम पाने का अधिकार है। वेतन, काम के घण्टे, आराम और काम की दशाओं के स्तरों को कानून द्वारा नियत किया जायगा। बच्चों का शोषण न होगा। श्रमिकों को संगठित होने और सामूहिक रूप में वेतन आदि के लिए न्याय करने की प्रत्याभूति है। सम्पत्ति रखने अथवा उसके स्वामित्व के अधिकार का अतिक्रमण न किया जायगा। प्रतिकर देकर निजी सम्पत्ति को सार्वजनिक प्रयोग के लिए प्राप्त किया जा सकता है।

संविधान में केवल दो कर्त्तव्यों का समावेश किया गया है। काम पाने के अधिकार के साथ यह भी कहा गया है कि काम करना सभी व्यक्तियों का कर्त्तव्य है। इस प्रकार सोवियत संघ के संविधान की भाँति जापान का संविधान भी नागरिकों को काम करने का अधिकार व कर्त्तव्य प्रदान करता है। संविधान में कहा गया है कि कानून के अनुसार सभी व्यक्तियों से कर लिया जा सकता है। संविधान में कर्त्तव्यों का उल्लेख महत्त्वपूर्ण है, परन्तु संविधान के अध्ययन से यह पता नहीं लगता कि काम पाने के अधिकार को वास्तविक बनाने के लिए राज्य क्या करेगा। विभिन्न प्रकार की स्वतन्त्रताओं की प्रत्याभूति दी गयी है और उनके मनवाने के लिए पीडित व्यक्ति न्यायालयों की शरण भी ले सकते हैं, परन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि वहाँ न्यायालयों को विभिन्न प्रकार के लेख (writs) जारी करने का अधिकार दिया गया है अथवा नहीं।

यहाँ पर हम नागरिकों के स्वातन्त्र्य अधिकारों और उनकी रक्षा का संक्षिप्त विवेचन देना आवश्यक समझते हैं। 'यदि किसी व्यक्ति को किसी सरकारी अधिकारी के अवैध कार्य से हानि पहुँचे तो वह कानून की व्यवस्था के अनुसार राज्य अथवा सार्वजनिक संस्था (public entity) के विरुद्ध क्षतिपूर्ति के लिए न्यायिक कार्यवाही कर सकता है।' विचार और अन्तरात्मा की स्वतन्त्रता का अतिक्रमण नहीं किया जा सकता। सभी व्यक्तियों को धार्मिक स्वतन्त्रता की प्रत्याभूति दी गयी है। राज्य किसी भी धार्मिक संगठन को कोई विशेषाधिकार प्रदान न करेगा। सभा करने, संघ बनाने, भाषण, प्रेस व अन्य प्रकार की अभिव्यक्तियों की स्वतन्त्रता प्रदान की गयी

और अवकाश की प्रत्याभूति देता है। (9) राष्ट्र सभी बालकों और प्रौढ़ों को शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण और संस्कृति के समान लाभों की गारण्टी प्रदान करता है। सभी श्रेणियों की नि:शुल्क, धर्मनिरपेक्ष और सार्वजनिक शिक्षा की स्थापना करना राज्य का कर्त्तव्य है। (10) अधिकारों और कर्त्तव्यों की समता के आधार पर जाति और धर्म के भेदभाव बिना फ्रांस अपने उपनिवेशों की जनता के साथ मिलकर फ्रेंच संघ का निर्माण करता है।

अधिकारों का महत्त्व—वास्तव में फ्रांस ही प्रथम देश है जिसने 1789 की महान् क्रान्ति के उपरान्त मानव अधिकारों की प्रसिद्ध घोषणा की थी। इसके सभी गणतन्त्रीय संविधानों में नागरिक अधिकारों के प्रगणन को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। परन्तु वर्तमान संविधान के निर्माताओं ने अधिकारों की घोषणा के विषय में यह काफी समझा कि उन्हें संविधान की प्रस्तावना में प्रगणित कर दिया जाय।[1] यह स्पष्ट है कि कानूनी दृष्टि से उनका महत्त्व उतना नहीं है जितना कि संविधान में वर्णित मूल अधिकारों का होता है और जैसा कि संयुक्त राज्य अमरीका या भारत में है। ऊपर वर्णित विभिन्न अधिकार तो केवल सिद्धान्तों का विवरण है, कानूनी उपबन्ध नहीं है। संयुक्त राज्य अमरीका और भारत में यदि कोई व्यक्ति सरकारी अधिकारी, कार्यपालिका अथवा विधायिका किसी अधिकार का उल्लंघन करते हैं तो पीड़ित व्यक्तियों के लिए सांविधानिक उपचार की व्यवस्था है, परन्तु फ्रांस में ऐसी बात नहीं है। फ्रांस के नागरिक अधिकारों की तुलना संयुक्त राज्य अमरीका के अधिकार पत्र (Bill of Rights) से न की जाकर स्वतन्त्रता के घोषणा पत्र से की जानी उचित है। फ्रांस में नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए कोई सांविधानिक व्यवस्था नहीं है।

6 स्विट्‌जरलैण्ड में नागरिकों के अधिकार

उस संविधान में विशेष रूप से अधिकार पत्र का अभाव है। किन्तु संघ व केन्टनों के संविधानों में इधर उधर बिखरी हुई विभिन्न धाराओं के अन्तर्गत नागरिकों को वे सभी सामान्य अधिकार व स्वतन्त्रतायें प्राप्त हैं, जोकि साधारणतया अन्य प्रजातन्त्रों के नागरिकों को प्राप्त होती हैं। नागरिकों के प्रमुख राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक अधिकार व स्वतन्त्रताएँ इस प्रकार हैं। सभी नागरिकों को अन्तरात्मा और धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार है, परन्तु इस स्वतन्त्रता के होते हुए भी नागरिकों को आवश्यक नागरिक कर्त्तव्यों, जैसे—सैनिक सेवा का पालन करना पड़ता है तथा सभी स्विस नागरिकों को कानून के समक्ष समता का अधिकार प्राप्त है तथा प्रेस की स्वतन्त्रता की प्रत्याभूमि दी गई है। अन्य महत्त्वपूर्ण अधिकार ये हैं—भाषण की स्वतन्त्रता, संघ बनाने की स्वतन्त्रता, विवाह की स्वतन्त्रता, व्यापार व उद्योग की स्वतन्त्रता, वैयक्तिक और पारिवारिक स्वतन्त्रता। उनका एक महत्त्वपूर्ण अधिकार यह है कि वे केन्टनों के सार्वजनिक स्कूलों में नि:शुल्क एवं असाम्प्रदायिक प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। हेस स्यूवर के मतानुसार स्विट्‌जरलैण्ड ही यूरोप महाद्वीप में शायद अकेला देश है, जिसमें व्यक्ति की धार्मिक, बौद्धिक और आर्थिक स्वतन्त्रता की संयुक्त राज्य अमरीका के बराबर रक्षा की जाती है और जिसकी कानूनी पद्धति, जहाँ तक स्वतन्त्रता का सम्बन्ध है, संयुक्त राज्य अमरीका से बहुत मिलती है। यदि किसी अधिकार का अतिक्रमण हो तो प्रत्येक नागरिक सर्वोच्च न्यायालय—संघीय ट्रिब्यूनल में शिकायत ले जा सकता है और यदि उसकी शिकायत का आधार उचित हो तो यह भी सम्भव है कि जनता द्वारा स्वीकृत कानून भी गिरा दिया जाय।

[1] The framers of the constitution of the Fifth French Republic dealt with the problem of a declaration of rights—a historic and transitional part of French Constitution making by placing it in the Preamble to the Constitution and contending themselves with proclaiming their attachment to the Rights of Man and the principles of National Soverignty. Wheare K. C., *Modern Constitution* p. 72

देश की प्रतिरक्षा प्रत्यक नागरिक का अधिकार तथा सर्वाच्च कत्त य और सम्मान की बात है। प्रत्येक नागरिक को जो कोई भी सावजनिक या सामाजिक पद दिया जाय, उसक दायित्वो को ईमानदारी स पूरा करना होगा और वह उन्ह पूरा करन के लिए व्यक्तिगत रूप स उत्तरदायी होगा। प्रत्येक नागरिक को सविधान और कानूनो का पालन करना होगा। सविधान द्वारा प्रत्याभूत स्वतन्त्रतायें और अधिकार अनपहरणीय हैं और उन्ह किसी कानून द्वारा प्रतिबन्धित नही किया जायेगा। इन स्वतन्त्रताओ और अधिकारो का स्वय सविधान के आधार पर प्राप्त किया जायेगा। केवल उनके प्राप्त किये जाने के ढग को ही कानून द्वारा विहित किया जा सकता है। सविधान द्वारा प्रत्याभूत स्वतन्त्रताओ और अधिकारो के लिए न्यायिक रक्षण की व्यवस्था की जायेगी।

उपर्युक्त अधिकारो और कत्तव्या की सूची काफी विस्तृत है, उसम प्राय सभी प्रकार क सामाजिक, राजनीतिक एव आर्थिक अधिकारो को स्थान दिया गया है। इन अधिकारो की अय प्रजातन्त्रात्मक सविधानो मे सम्मिलित अधिकारो से तुलना करन पर इनम कोई विशेष कमी नही दिखाई देती। इनकी एक प्रमुख विशेषता यह है कि इन्ह अनपहरणीय बनाया गया है और इन्ह कानून द्वारा प्रतिबन्धित नही किया जा सकता। साथ म यह भी कहा गया है कि विभिन्न स्वतन्त्रताओ और अधिकारो के लिए न्यायिक रक्षण प्राप्त होगा। इस दृष्टि स युगोस्लाविया का सविधान सोवियत सघ के सविधान से अवश्य ही आगे बढा है, परन्तु वह उनकी पूर्ति के लिए आवश्यक दशाओ का वणन नही करता, जैसा कि सोवियत सघ के सविधान म किया गया है। चूंकि युगोस्लाविया म एक ही राजनीतिक दल है, अत यह नही कहा जा सकता कि वहाँ के नागरिको को प्राप्त राजनीतिक स्वतन्त्रताये कहाँ तक वास्तविक हैं।

9 कनाडा मे नागरिको के अधिकार

ब्रिटिश नाथ अमरीका कानून म सयुक्त राज्य अमरीका की भाँति अधिकार पत्र नही दिया गया है। ब्रिटेन की भाँति कनाडा म भी नागरिक स्वतन्त्रताये उपयुक्त विधानमण्डल की दया पर निभर करती है। 'मोटे रूप म आधारभूत नागरिक स्वतन्त्रतायें जिनस हमारा यहाँ सम्बन्ध है, सार मे वही है जो ब्रिटेन म है। जिन बातो के लिए कानून मनाही नही करता उनको करने की कानून आज्ञा देता है।'[1] क्यूबक को छोडकर कनाडा के सभी प्रान्तो मे सामान्य कानून (common law) ही कनाडा क कानून हैं। परन्तु इस सम्बन्ध म दो बातें ध्यान देने की हैं—प्रथम, कुछ ऐस मामलो की, जिनका नागरिक स्वतन्त्रताओ पर महत्त्वपूण प्रभाव पडता है, ब्रिटिश नाथ अमरीका कानून म गारण्टी दी गई है और उन्ह सघीय तथा प्रान्तीय विधानमण्डलो की पहुच से बाहर रखा गया है। सैक्शन 93 ने कुछ धार्मिक समूहो को पृथक स्कूल खोलने के अधिकार की गारण्टी दी है। सक्शन 133 कुछ सावजनिक कायवाहियो म अग्रेजी व फ्रासीसी भाषाओ के प्रयोग के अधिकार की गारण्टी देता है। इसम यह भी कहा गया है कि कनाडा की पालियामट और क्यूबक के विधानमण्डल के कानून उन दोनो ही भाषाओ म छाप और प्रकाशित किय जायेंगे। ये प्राविधान ऐस अपवाद है जिनम केवल ब्रिटिश पालियामट के कानून द्वारा ही परिवतन किया जा सकता है। दूसर, हाल म ऐसी प्रवृत्ति का उदय हुआ है जो ब्रिटिश नाथ अमरीका कानून म अधिकार-पत्र को समाविष्ट करने के पक्ष म है। इस प्रवृत्ति को सयुक्त राष्ट्र सघ की जनरल एसेम्बली द्वारा 1948 म घोषित 'अधिकारो के सवव्यापी घोषणा पत्र' को समथन मिला है, इस घोषणा ने कनाडा पर भी इसकी शर्तों के पालन हेतु एक प्रकार का दायित्व डाला है। उन्ही बातो का ध्यान रखत हुए

[1] Corry and Hodgetts *Democratic Government and Politics* p 459

है प्रत्येक व्यक्ति को अपना निवास स्थान छोड़ने, उसे बदलने और अपने व्यवसाय का छाटन की स्वतन्त्रता है, परन्तु शर्त यह है कि उससे सार्वजनिक कल्याण में हस्तक्षेप न हो। शैक्षणिक स्वतन्त्रता की प्रत्याभूति दी गयी है। विवाह का आधार केवल दोनों के बीच आपसी सहमति होगी। किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन अथवा स्वतन्त्रता से वंचित न किया जायेगा और न ही उस पर सिवाय कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के कोई दण्ड लागू किया जायगा। अतः कहा जा सकता है कि जापान की कानूनी पद्धति में बन्दी प्रत्यक्षीकरण व सामान्य कानून के सिद्धान्तों को स्वीकार किया गया है। व्यक्ति के स्वतन्त्र पद को मान्यता मिली है और जापान में विधि के शासन की व्यवस्था स्थापित हो गई है। संविधान में प्रगणित अधिकारों के अवलोकन से स्पष्ट है कि नागरिको के अधिकारों और प्राय सभी प्रकार की नागरिक स्वतन्त्रताओं पर बल दिया गया है।

8 युगोस्लाविया में नागरिको के अधिकार

मनुष्य और नागरिक की स्वतन्त्रताओं व उनके अधिकारों को अनपहरणीय तथा संविधान में रक्षित समाजवादी व प्रजातान्त्रिक सम्बन्धों की अभिव्यक्ति बताया गया है जिनके द्वारा मनुष्य को सभी प्रकार के शोषण और स्वच्छाचारिता से मुक्ति दिलायी जा रही है। अधिकार और कर्तव्यों में सभी नागरिक, उपराष्ट्र, मूलवंश, धर्म लिंग, भाषा, शिक्षा अथवा सामाजिक पद में अन्तर होते हुए भी सम है। सभी कानून के समक्ष सम रहेंगे। नागरिक के सामाजिक स्वशासन के आधार का अतिक्रमण नहीं किया जा सकता। सामाजिक स्वशासन को प्राप्त करने के लिए नागरिक को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त रहेंगे—

(1) निर्वाचक मण्डल और काम करने वालों की सभाओं में सामाजिक मामलों के ऊपर प्रत्यक्ष रूप में निर्णय करने का अधिकार, (2) उद्यम व कारखाने आदि से प्रबन्ध अंगों के लिए चुनाव में भाग लेने तथा उनके पदों के लिए खड़े होने का अधिकार, (3) राज्य के अंगों और सामाजिक स्वशासन आदि के अंगों के कार्यों की परीक्षा करने का अधिकार।

प्रत्येक ऐसे नागरिक को जिसकी आयु 18 वर्ष की हो गई हो, मताधिकार प्राप्त होगा। इस अधिकार को प्राप्त करने में नागरिक उम्मीदवारों को नामजद कर सकेगा और प्रतिनिधिक निकायों के लिए प्रतिनिधियों को चुन सकेगा और वह स्वयं उन पदों के लिए खड़ा हो सकेगा। काम करने का अधिकार और काम करने की स्वतन्त्रता के अधिकार को प्रत्याभूति दी गई है। काम करने वाले व्यक्ति का काम के सीमित घण्टों तक ही काम करने का अधिकार है। पारस्परिकता और संगठन के सिद्धान्त के अनुसार संघीय कानून द्वारा स्थापित सामाजिक सुरक्षा की एकरूप पद्धति के भीतर काम करने वाले का बीमा किया जायेगा।

विचार प्रकट करने की स्वतन्त्रता की प्रत्याभूति दी गई है। प्रेस और सूचना के अन्य माध्यमों की स्वतन्त्रता, संघ बनाने की स्वतन्त्रता, भाषण व सार्वजनिक अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, सभा करने की स्वतन्त्रता आदि की प्रत्याभूति दी गयी है। नागरिक को अपनी उप राष्ट्रीयता और संस्कृति को अभिव्यक्त करने तथा अपनी भाषा बोलने की स्वतन्त्रता प्रदान की गई है। युगोस्लाविया की विभिन्न जातियों (उप राष्ट्रों) की भाषाएँ और उनकी लिपियाँ सम रहेंगी। धार्मिक विश्वास प्रतिबन्धित न होगा और वह व्यक्ति का निजी मामला रहेगा। किसी व्यक्ति को ऐसे कार्य के लिए दण्डित न किया जायेगा जो किये जाने के समय कानून द्वारा दण्डनीय न था अथवा जिसके लिए कानून में किसी प्रकार के दण्ड की व्यवस्था न थी। नागरिकों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने तथा बसने की स्वतन्त्रता होगी। किसी नागरिक के मकान का अतिक्रमण नहीं किया जायेगा। उत्तराधिकार की प्रत्याभूति दी गयी है। प्रत्येक नागरिक को अपने स्वास्थ्य की रक्षा का अधिकार है।

काम पाने का अधिकार—आज की आर्थिक कठिनाइयो के युग म यह अकेला अधिकार अ य सभी के बराबर महत्त्व का है। इसके अनुसार सोवियत सघ के प्रत्यक नागरिक को काम पाने का अधिकार प्राप्त है अर्थात सबको काम दन और काम के परिमाण तथा गुण (quantity and quality of work) के अनुसार काम के वेतन दने की जिम्मेदारी राज्य की है। राष्टीय अथ सम्ब धी समाजवादी व्यवस्था, सोवियत समाज के बढत हुए उत्पादन, आर्थिक सकटा के अभाव और बकारी के मिट जाने क कारण प्रत्येक नागरिक के लिए काम पाने का अधिकार सुरक्षित है।

विश्राम का अधिकार—इस अधिकार को सबसे पहले तो इस बात से सुरक्षित बना दिया गया है कि सोवियत सघ मे किसी भी व्यक्ति को सप्ताह-भर म 46 घण्टा से अधिक काम नहा करना पडता। सोवियत मजदूरो को, प्रत्यक सप्ताह मे कम स कम एक पूरी छुट्टी, और शनिवार तथा छुट्टियो के पहल दिन कम काम के घण्टा के अतिरिक्त, कानूनी रूप म सवेतन वार्षिक छुट्टी भी मिलती है। वार्षिक छुट्टी की कम स कम अवधि दो सप्ताह की है, लकिन वहुत स मजदूरा को तीन सप्ताह या पूरे एक महीने की भी छुट्टी मिलती है, खनिज, लोहा और इस्पात के कारखानो के मजदूरो, कपडे की मिलो के मजदूरो, रेलव कमचारियो और अ य मजदूरो को एक महीने की छुट्टी मिलती है। अध्यापको और वैज्ञानिक काय करन वाला को दो महीने की छुट्टी दी जाती है। इनके अतिरिक्त प्रतिवप करोडो मजदूर आरोग्यालयो या छुट्टियो की सरगाहो म अपनी छुट्टिया बिताते है। आरोग्यालयो या छुट्टियो की सरगाहा म स्थान जुटाने का खच राज्य की सामाजिक बीमा निधि से दिया जाता है। श्रमिको के लिए इन स्थाना म या तो 70 प्रतिशत रियायत कर दी जाती है या फिर बिल्कुल मुफ्त प्रब ध होता है। सोवियत यूनियन भर मे क्रीमिया और काकेशस म लगभग 4,000 आरोग्यालय और छुट्टियो की सैरगाह तथा ग धक के पानी के स्रोत है, जहा कडा परिश्रम करने वाल लोग स्वास्थ्य लाभ करत है और विश्राम करके अपने रोगा को दूर करते है।

सामाजिक सुरक्षा और शिक्षा पाने का अधिकार—सोवियत सघ के प्रत्येक नागरिक को बुढापे या बीमारी मे या काम करने के लिए अयोग्य हो जाने पर राज्य की ओर से पोषण पाने का अधिकार है। राष्ट्र के व्यय मे सामाजिक बीमे की व्यवस्था, मुफ्त इलाज और देश भर म स्वास्थ्य सुधार के लिए स्थानो का प्रब ध करक राज्य न इस अधिकार को सुरक्षित बनाया है। सभी नागरिको को शिक्षा पाने का अधिकार है। शिक्षा को अनिवाय और सातवी ग्रेड तक नि शुल्क बनाकर उच्च शिक्षा पाने वाले विद्यार्थियो के लिए सरकारी छात्र वत्तियो का प्रब ध स्कूलो म उसी प्रदेश की भाषा म शिक्षा देने की व्यवस्था और कारखाना, सरकारी खेता, मशीनो और ट्रक्टर के स्टेशना तथा सामूहिक खेता म औद्योगिक और कृषि शिक्षा सम्ब धी प्रब ध द्वारा नागरिको के इस अधिकार को सुरक्षित किया गया है।

सभी नागरिको के लिए बिना किसी भेद भाव के सम अधिकार—सभी मूल जातियो व उप राष्ट्रा के नागरिको को समान अधिकार प्रदान किये गये हैं। किसी भी जाति के सोवियत नागरिक को इस बात का अधिकार है कि वह शासन की किसी भी सस्था के लिए चुनाव म खडा हो सके और किसी भी सरकारी पद पर नियुक्त हो सक। सभी सोवियत नागरिको को समान काय के लिए समान वेतन मिलता है। उ हे किसी भी प्रकार की शिक्षण सस्थाओ म प्रवेश और कोई ध धा अपनाने की समान स्वत त्रता है। सघ म बसन वाली सभी राष्ट्रीयताओ के सभी लोगा म सोवियत सविधान पूण समता की प्रतिष्ठा करता है। सभी नागरिका को सभी क्षेत्रा म समान अधिकार प्राप्त है। स्त्रियो के इस अधिकार को सुरक्षित बनाने के लिए राज्य की ओर से यह व्यवस्था की गयी है राज्य की ओर से माँ और बच्चे की रक्षा, वतन के साथ प्रसूति-गहो, बाल-घरो और किंडरगाटना की सुविधाएँ तथा बडे परिवार वाली माताओ के लिए राज्य की ओर स

सस्केच्वान के विधानमण्डल ने 1947 मे एक अधिकार-पत्र को स्वीकार किया । 1960 म कनाडा की पार्लियामेंट ने भी सविधान म एक अधिकार पत्र को सम्मिलित करने के लिए कानून बनाया ।

1960 का अधिकार पत्र—मानव अधिकारो को मान्यता प्रदान करने और उनके रक्षण के लिए 1960 म एक कानून बना । कानून के दो भाग हैं—प्रथम भाग म अधिकार पत्र दिया गया है और दूसरे म युद्ध, आक्रमण, विद्रोह अथवा उनकी धमकी की दशा म अधिकारो व स्वतन्त्रताओ के पद का सविस्तार वणन किया गया है । प्रथम भाग मे अग्रलिखित प्राविधान है—1 (अ) व्यक्ति का जीवन, स्वतन्त्रता, शारीरिक सुरक्षा, सम्पत्ति क उपभोग और यह अधिकार भी कि किसी व्यक्ति को इनम स किसी से भी बिना कानूनी कायवाही क वचित नही किया जायगा, (आ) व्यक्ति को कानून के समक्ष समता और कानून की रक्षा का अधिकार, (इ) धम की स्वतन्त्रता, (ई) भाषण की स्वतन्त्रता, (उ) सभा करन व सघ बनाने की स्वतन्त्रता, और (ऊ) समाचार पत्रो की स्वतन्त्रता । 2 कनाडा का प्रत्येक कानून, जब तक कि कनाडा की पार्लियामेंट स्पष्ट रूप से यह घोषित न करे कि वह अधिकार-पत्र के बावजूद भी काय म परिणत किया जायगा, इस प्रकार लागू किया जायगा और उसका ऐसा अथ लिया जायगा कि वह किसी भी अधिकार व स्वतन्त्रता को रद्द न करेगा अथवा उनम कोई हस्तक्षेप न करेगा । कानून क दूसरे भाग म अग्रलिखित प्राविधान मुख्य है—(1) प्रथम भाग म दिया गया कोई भी प्राविधान किसी भी ऐसे मानव अधिकार या स्वतन्त्रता को रद्द अथवा कम नही करेगा जो कि कानून के प्रारम्भ पर व्यक्तियो को प्राप्त रहे हो, चाहे उन्हे भाग 1 म खोलकर प्रगणित न किया गया हो । (2) युद्ध क दौरान युद्ध सम्बन्धी कानून के प्रभावी सक्रान्त तब तक लागू न होगे जब तक कि सपरिषद् गवनर-जनरल यह घोषणा न कर कि युद्ध, आक्रमण या विद्रोह वास्तव म जारी है अथवा उसका खतरा है । (3) ऐसी घोषणा शीघ्र ही पार्लियामेंट क सामने रखी जायगी और यदि पार्लियामेंट का सत्र न हो रहा हो तो उसक बाद 15 दिन के भीतर ।

10 सोवियत सघ मे नागरिको के अधिकार

1936 के सविधान क दसवें अध्याय म नागरिको क मूलभूत अधिकारो और कर्तव्यो का दिया गया है, इससे पूर्व के सविधानो म इस प्रकार की कोई व्यवस्था न थी । [illegible] से उसके नागरिको क अधिकारो सम्बन्धी प्राविधानो और पाश्चात्य राज्यो क [illegible] म अग्रलिखित पाँच बातो म अन्तर है (1) सोवियत सघ म विभिन्न अधिकारो [illegible] यह है कि व श्रमिको क हितो के अनुकूल होगे और उनका उद्देश्य समाजवादी पद्धति [illegible] है ।' (2) यद्यपि इनम पाश्चात्य देशो की भाँति नागरिक अधिकार भी सम्मिलित हैं । [illegible] नये सामाजिक व आर्थिक अधिकारो, यथा काम करने का अधिकार, [illegible] स्थान दिया गया है ।[1] (3) इन सामाजिक और आर्थिक अधिकारो म [illegible] और वास्तव मे व राज्य की सेवाओ [illegible] । (4) [illegible] एक साथ ही राज्य द्वारा की जाने वाली [illegible] सैद्धान्तिक वणन ही नहीं दिया गया है वरन् उन [illegible] किया गया है [illegible] उसे मनवाया जा सकेगा । (5) अधिकारो क साथ [illegible] म प्रगणित अधिकारो को मोटे रूप म निम्न समूहो म [illegible] जा सकता है ।

[1] Unlike others it lays stress on social and [illegible] to rest and leisure to educa e and to support for the [illegible] incapacitated. This is a code of state [illegible] et al Foreign Governments and their Backgrounds [illegible]

विशेष महत्त्व है क्योंकि वहाँ वेकारी का अन्त हो गया है, श्रमिकों के लिए काम के घण्टे कम हुए हैं और काम करने की दशाओं म सुधार हुआ है। आलोचको ने सत्य कहा है कि व्यवहार म व्यक्तिगत स्वतन्त्रता सम्बन्धी अधिकार वास्तविक नही है। सोवियत सघ मे साम्यवादी दल क अतिरिक्त किसी अन्य दल को सगठित न होने देना सगठन की स्वतन्त्रता के अधिकार को अवास्तविक बना देता है। ऐसे ही वहाँ पर भाषण व समाचार पत्रो की स्वतन्त्रताएँ भी दिखावटी हैं, क्योंकि कोई भी व्यक्ति शासन की आलोचना नही कर सकता और समाचार पत्र शासन की नीति क विरोध मे कोई बात प्रकाशित नही कर सकते। व्यवहार म, सरकारी अधिकारियो के काय बहुत ही मनचाहे होते ह और सभी प्रकार की स्वतन्त्रताओ पर विभिन्न प्रकार की रोक लगी है तथा अनगिनत अपराधियो के विरुद्ध मुकदमा म गुप्त न्यायिक कायवाही होती है।

सविधान मे यह भी स्वीकार किया गया है कि विभिन्न प्रकार की स्वतन्त्रताओ का प्रयोग समाजवादी व्यवस्था को सुदृढ करने और परिश्रम करने वालो के हित के अनुसार ही हो सकता है। हमे इस सम्बन्ध म दो-तीन बात कहनी है पहली, सोवियत शासन पद्धति और साम्यवाद के समथको के अनुसार साम्यवाद विरोधी बातो के प्रचार और तत्वो को विभिन्न प्रकार की स्वतन्त्रताए नही दी जा सकती, क्योंकि ऐसा करने से क्रान्ति के परिणामो पर उल्टा प्रभाव पड सकता है। इस मत मे सत्य का काफी अश है। दूसरी, किन्तु व्यवहार म इन सब बातो का अर्थ केवल साम्यवादी व्यवस्था को सुदृढ बनाना ही नही है वरन् शासनारूढ दल के नेता के कायक्रम का समथन करना है, जिसे उचित नही माना जा सकता। तीसरी, सोवियत सघ म इन अधिकारो की रक्षा के लिए भारत तथा पाश्चात्य देशो की तरह न्यायपालिका को शक्ति प्राप्त नही है, न्यायपालिका स्वय स्वतन्त्र नही है और उसे बन्दी प्रत्यक्षीकरण आदि महत्त्वपूण लेख जारी करने की शक्ति प्राप्त नही है।

कत्तव्य—सोवियत सघ के सविधान (अनुच्छेद 130, 131, 132, 133) म सोवियत सघ के नागरिको के लिए अग्रलिखित कत्तव्य निर्धारित किये गये है (1) सोवियत सघ क प्रत्येक नागरिक का कत्तव्य है कि वह सोवियत समाजवादी प्रजातन्त्रीय सघ के सविधान के अनुकूल चले, कानूनो का पालन कर श्रम सम्बन्धी अनुशासन को माने ईमानदारी के साथ अपने सावजनिक कत्तव्यो को पूरा करे और समाजवादी आचार व्यवहार के नियमो का सम्मान करे। (2) सोवियत व्यवस्था के पवित्र और अनुल्लघनीय आधार के रूप म, सभी श्रमिको की समद्धि और सस्कृति के स्रोत क रूप मे, सावजनिक तथा समाजवादी सम्पत्ति की रक्षा करना और उसे सुदृढ बनाना, सोवियत सघ के प्रत्येक नागरिक का कत्तव्य है। (3) सावजनिक, समाजवादी सम्पत्ति को हानि पहुचाने वाले व्यक्ति जनता के शत्रु है। (4) सावजनिक सनिक सेवा कानून द्वारा अनिवाय है। (5) सोवियत सघ की सन्य शक्ति म फौजी सेवा करना सोवियत सघ के नागरिको का सम्मानजनक कर्त्तव्य है। (6) देश की रक्षा करना सोवियत सघ क प्रत्येक नागरिक का पवित्र कत्तव्य है। मातृभूमि के साथ गद्दारी करना, वफादारी की शपथ को भग करना शत्रु से मिल जाना राज्य की सन्य शक्ति को हानि पहुँचाना, जासूसी करना सबसे घृणित अपराध हैं और इनके लिए कानून मे कडी से कडी सजा दी जाती है।

11 चीन मे नागरिको के अधिकार

चीनी साम्यवादियो ने देश म 'जनवादी गणतन्त्रात्मक अधिनायकशाही' (People's Democratic Dictatorship) स्थापित की है। चीन का साम्यवादी शासन भी सोवियत शासन पद्धति की तरह सर्वाधिकारवादी अधिनायकशाही है परन्तु दोनो ही देशो म शासन-पद्धति को प्रजातन्त्रात्मक बताया जाता है। अन्य प्रजातन्त्रीय राज्यो की तरह उनके सविधान म भी नागरिको

आर्थिक सहायता। राष्ट्रीय अथव्यवस्था की किसी भी शाखा मे भाग लेने के जो विस्तृत अधिकार सोवियत स्त्रियो को प्राप्त हुए, उनके आधार पर वे देश के आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक जीवन म पुरुषा के बराबर अशभागी बन सकी। समाजवादी निमाण की प्रक्रिया मे सावियत सघ की स्त्रियो ने अपनी समता के अधिकार सुदृढ कर लिए और पुरुष उन्हे अपने साथी और सहयोगी मानने लगे। पुरुषो के कधे से क धा लगाकर उ होने शहरो और कारखाना का निर्माण किया। उद्याग, विज्ञान और सस्कृति का विकास किया और युद्ध-काल मे अपने देश की प्रतिरक्षा की। उन्होने समाज म उचित स्थान प्राप्त कर लिया। सोवियत स्त्रिया अपने काम करने के अधिकार का प्रयोग करते हुए आधुनिक उद्योग की प्रमुख शाखाआ के भौतिक मूल्यो को ऊँचा उठाने म हाथ बँटा रही है। उद्योगो म लगे हुए कामगारो म 45 5 प्रतिशत स्त्रिया है।

अन्त करण, शरीर, घर व पत्र व्यवहार की स्वतन्त्रता—अ त करण की स्वत त्रता के अधिकार की रक्षा के लिए सोवियत सघ मे धम का राज्य व स्कूल से कोई सम्बन्ध नही रखा गया है। साथ ही सभी नागरिका को धार्मिक उपासना या धम विरोधी प्रचार की स्वत त्रता भी मिली है। शरीर, घर और पत्र व्यवहार की स्वतन्त्रता के अनुसार कोई भी नागरिक यायालय के निणय अथवा प्रोक्यूरेटर की अनुमति के बिना गिरफ्तार नही किया जा सकता। किसी भी नागरिक के घर मे किसी को जबरदस्ती घुसने का अधिकार नही है। नागरिको की चिट्ठी-पत्री नही खोली जा सकती।

भाषण, प्रेस, सभा और प्रदशन, जलूस आदि की स्वत त्रता—सोवियत सघ के प्रत्येक नागरिक को राज्य सत्ता की किसी भी सस्था के लिए प्रतिनिधि चुनने और प्रतिनिधि चुन जाने का अधिकार है। सोवियत सघ के सभी नागरिको को भाषण देन और पत्रो म अपने विचार व्यक्त करने, लोगा को एकत्रित करने और श्रमिको को सभाये करने, जलूस निकालने तथा प्रदशन करने की आजादी दी गयी है। इन अधिकारो को व्यावहारिक रूप देने के लिए सोवियत सघ के श्रमिक-जनो का सभी भौतिक और राजनीतिक स्वत त्रताए प्राप्त है। सोवियत सघ मे लिखकर अपने विचार व्यक्त करने की आजादी को सुनिश्चित बनाने के लिए श्रमिको और उनके सगठना को छापखाने और कागज के स्टॉक दे दिये गये है, जिससे कि वे पुस्तकें, पत्रिकायें और समाचार पत्र छाप सके। प्रत्यक नागरिक को इस बात का अवसर दिया जाता है कि वह इन पत्रा म लिखे और किसी भी सरकारी अफसर की आलोचना कर सके। सावियत यूनियन म भाषण, सगठन, सभाआ, जलूसा और प्रदशनो की आजादी इसलिए सुनिश्चित है कि सभी सावजनिक भवन, परिवहन के साधन आदि जनता की सम्पत्ति हैं और वे श्रमिको को प्राप्य है। सोवियत नागरिका का सावजनिक सगठना म—जैसे ट्रेड यूनियनो, सहकारी सस्थाओ, नवयुवको के सगठनो, सास्कृतिक सस्थाआ, खेल-कूद की सस्थाओ, तकनीकी और वैज्ञानिक सस्थाओ म सगठित होने की स्वतन्त्रता है। अन्त मे, श्रमजीवियो के हितो की रक्षा करने या राष्ट्रीय आजादी के युद्ध म भाग लेने के कारण पीडित किसी भी विदेशी नागरिक को सावियत सघ म आश्रय पाने का अधिकार है।

समालोचना—सविधान के प्रारूप पर बोलते हुए स्टालिन ने नागरिको को दिये जाने वाले अधिकारा के विषय म कहा था कि नागरिको को केवल अधिकार नही, वरन् उनके समुचित उपभोग की दशायें और आश्वासन भी प्रदान किये जा रहे है। इस कथन म सत्य का अश है, क्योकि काम पाने और विश्राम आदि अधिकारो के उपयोग के लिए समुचित व्यवस्था की गयी है।[1] विशिस्की ने भी इन अधिकारो को सच्चा अधिकार-पत्र बताया है। इन अधिकारा म आर्थिक अधिकारो का

[1] What distinguishes the draft of the new Constitution is the fact that it does not confine itself to stating the formal rights of citizens but stresses the guarantees of these rights the means by which these rights can be exercised —Stalin on Draft Constitution.

किया जा सकता। प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य है कि वह सार्वजनिक सम्पत्ति की रक्षा और उसका आदर करे। (3) कानून के अनुसार कर देना नागरिकों का कर्त्तव्य है। (4) स्वदेश की प्रतिरक्षा करना प्रत्येक नागरिक का पवित्र कर्त्तव्य है। कानून के अनुसार सैनिक सेवा करना प्रत्येक नागरिक का सम्मानित कर्त्तव्य है।

समालोचना—अधिकारों और कर्त्तव्यों को ध्यानपूर्वक देखने से कुछ बातें स्पष्ट होती है—(1) अधिकारों की सूची विस्तृत है। उसमे नागरिक के स्वतन्त्रता सम्बन्धी सामाजिक, और आज के युग मे अधिक महत्त्वपूर्ण आर्थिक अधिकारों को सम्मिलित किया गया है। (2) अधिकारों को वास्तविक बनाने के उद्देश्य से उनके उचित उपभोग की व्यवस्था भी की गई है तथा की जा रही है। (3) सभी नागरिकों के अधिकार बिना किसी भेदभाव के सम हैं। (4) नागरिकों के आवश्यक और उचित कर्त्तव्यों को संविधान में प्रगणित करके उनके महत्त्व पर बल दिया गया है। (5) अधिकारों व कर्त्तव्यों की सूची सोवियत संघ के संविधान में दिये गये अधिकारों व कर्त्तव्यों से बहुत मिलती जुलती है। परन्तु विदेशी आलोचकों ने अधिकारों के व्यावहारिक रूप की आलोचना का प्रधान आधार यह है कि अन्य साम्यवादी राज्यों की तरह चीन भी एक सर्वाधिकारवादी राज्य है। वहां स्वतन्त्रता को एक विशेष अर्थ में ही समझा जाता है अर्थात् नागरिकों को भाषण, लेखन आदि की सच्ची स्वतन्त्रता प्राप्त नही है। व्यवहार, मे, भाषण की स्वतन्त्रता का अर्थ साम्यवादी दल की नीति के समर्थन अथवा पक्ष में ही व्यक्त करने तक सीमित है। दल के मुख पत्र 'जनवादी दैनिक' के अनुसार मत की अभिव्यक्ति तक ही नागरिकों की स्वतन्त्रता सीमित है। यदि कोई व्यक्ति दल की नीति से मतभेद प्रकट करता है तो उसे दक्षिणपंथी, प्रतिक्रियावादी अथवा क्रांति विरोधी कहा जाता है और उसके विरुद्ध उसी समय अथवा बाद में दण्डात्मक कार्यवाही की जाती है। धर्म की स्वतन्त्रता के विषय में भी कुछ ऐसी ही बात है। साम्यवादी खुले रूप में तो यह नही कहते कि वे धर्म का अन्त करना चाहते हैं, परन्तु सभी धर्मों को दल के नेता और कार्यकर्त्ता बुरी दृष्टि से देखते है। बहुत से धर्म पादरियों को क्रांति-विरोधी कहकर बन्दी बनाया गया है और उन्हे कठोर श्रम का दण्ड दिया गया है।

वैयक्तिक स्वतन्त्रता के अधिकार भी वास्तविक नहीं हैं। बहुत से व्यक्तियों को बिना वारन्ट बन्दी बनाया गया है। नागरिकों के घरों का बहुधा अतिक्रमण किया जाता है। पुलिस बिना उचित कारणों या कानूनी आधार के घरों में घुस जाती है। जासूसी व्यवस्था को बहुत व्यापक बनाया हुआ है। पत्र व्यवहार के निजीपन में बहुधा हस्तक्षेप किया जाता है। यथार्थ में, नागरिक स्वतन्त्रतायें तब तक वास्तविक नही हो सकती जब तक न्यायालय स्वतन्त्र न हों और उन्हें नागरिक अधिकारों की रक्षा की शक्ति प्रदान न की गई हो। चीन मे न्यायालय स्वतन्त्र नहीं हैं और उन्हें नागरिकों की स्वतन्त्रताओं की रक्षा के लिए आवश्यक शक्तियाँ भी प्राप्त नही हैं। अन्त में, यह बात अति महत्त्वपूर्ण है कि साम्यवादी चीन में सत्ताधारी साम्यवादी दल किसी भी प्रकार के बाह्य अथवा आन्तरिक विरोध को सहन नही करता है यहाँ तक कि नई क्रांति के समर्थक तो केवल माओ के विचारों को ही सर्वमान्य समझते है और माओ विरोधी साम्यवादी नेताओं को भी दल से निकाल रहे है।

के विभिन्न सामा य अधिकारो और कत्तव्या का प्रगणन किया गया है। नागरिका के अधिकार और कत्तव्य सविधान के तीसरे अध्याय मे दिये गय है। महत्त्वपूण अधिकारों और कत्तव्या का सार निम्नलिखित है —

मताधिकार और स्वातन्त्र्य अधिकार—सभी नागरिक कानून के स मुख सम है। सभी नागरिका का जो 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर चुके हो, चाहे व किसी राष्ट्रीयता, मूल-जाति, लिंग, व्यवसाय, सामाजिक उद्भव, धार्मिक विश्वास, शिक्षा, सम्पत्ति, पद अथवा निवास मे हो (सिवाय ऐसे व्यक्तियो के जो पागल हो अथवा जि है कानून द्वारा मताधिकार तथा चुनाव मे खडे होने क अधिकार से वचित कर दिया हो) मताधिकार व चुनाव मे खडे होने का अधिकार है। नागरिको को प्रदान की गयी विभिन्न स्वत त्रताएँ ये है—भाषण, प्रेस, सभा करने, सघ बनाने, जलुस निकालने और प्रदशन आदि। राज्य ने इन स्वत त्रताओ के उपभोग के लिए आवश्यक सुविधाओ की व्यवस्था करके नागरिको को उनके उपभोग की प्रत्याभूति दी है। नागरिका को धार्मिक विश्वास की स्वत त्रता नागरिको का शरीर की स्वतन्त्रता भी प्राप्त है और किसी नागरिक को किसी जन- यायालय के निणय अथवा जन प्रोक्यूरटर की सहमति के बिना ब दी नही बनाया जा सकता। नागरिका के घरा का अतिक्रमण नही किया जा सकता और उनके पत्र व्यवहार का निजीपन कानून द्वारा सुरक्षित है। नागरिको को निवास तथा उसके परिवतन की स्वत त्रता प्राप्त है।

आर्थिक अथवा सामाजिक सुरक्षा सम्ब धी अधिकार—नागरिको को काम पाने का अधिकार है, जिसके उपभोग के लिए राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के नियोजित विकास द्वारा प्रयत्न किये जा रहे है। श्रमिक जना का आराम और अवकाश पान का अधिकार है। इसके उपभोग हेतु राज्य ने काम के घण्टे नियत किय है। नागरिका को बुढापे, बीमारी, और शारीरिक अयोग्यता म भौतिक सुरक्षा का अधिकार है। इस अधिकार के उपभोग की प्रत्याभूति सामाजिक बीमे, सामाजिक सहायता और जन स्वास्थ्य सेवाआ की बढती हुई सुविधाआ द्वारा दी गयी है। नागरिका को शिक्षा पाने का अधिकार है। इस अधिकार क उपभोग का प्रत्याभूति दने के लिए राज्य विभिन्न प्रकार के शिक्षालयो, सास्कृतिक और शिक्षा सस्थाआ का विस्तार कर रहा है। नागरिका की वैज्ञानिक अनुस धान साहित्यिक और कलात्मक रचनाओ की स्वत त्रता सुरक्षित है। राज्य एस कार्यों म नागरिको को सभी प्रकार का उत्साह और सहायता प्रदान करता है। स्त्रिया को जीवन के सभी क्षेत्रा—राजनीतिक, आर्थिक, सास्कृतिक सामाजिक और घरेलू—मे पुरुषो के सम अधिकार हैं। राज्य विवाह, परिवार, माता और स तान की रक्षा करता है।

अन्य अधिकार—नागरिको को यह अधिकार है कि वे शासन के किसी अग म काय करने वाले व्यक्ति क विरुद्ध कानूना का उल्लघन करने अथवा कत्तव्य का पालन न करने के लिए किसी भी स्तर के शासनिक अग के सामने लिखित रूप म अथवा मौखिक वक्तव्य द्वारा शिकायत कर सकते है। राज्य के अगा म काम करने वालो क द्वारा नागरिको के अधिकारा का अतिक्रमण होने पर क्षति उठान वाले व्यक्ति प्रतिकर का अधिकार रखते हैं। समुद्र पार बसे चीनी नागरिको के उचित अधिकारो व हितो की जनवादी गणत त्र रक्षा करता है। किसी उचित उद्दश्य के लिए आ दोलन, शा ति आ दोलन अथवा वैज्ञानिक कायवाही मे भाग लेने पर पीडित किसी भी विदेशी नागरिक को चीन म शरण पाने का अधिकार है।

कत्तव्य—सविधान की 100 धारा से लेकर 103 तक नागरिको के मुख्य कत्तव्या का प्रगणन इस प्रकार है (1) सविधान और कानूना का पालन करना, काम मे अनुशासन रखना, सावजनिक व्यवस्था रखना और सामाजिक नैतिकता का आदर करना सभी नागरिका के लिए आवश्यक है। (2) जनवादी चीन की सावजनिक सम्पत्ति पवित्र है और उसका अतिक्रमण नहीं

शासन पद्धति अ य नगर राज्या म भी प्रचलित थी और भारत म भी छोटे-छोटे गणराज्य थ। परन्तु विशालकाय बड़े देशीय राज्या म प्रत्यक्ष प्रजात त्र सम्भव और व्यावहारिक नही, अत मध्य युग म प्रतिनिधि सस्थायें बनी और आधुनिक युग म उनका व्यापक विकास हुआ है। मध्य युग म प्रतिनिधि मस्थाओ का ज म विभिन्न यूरोपीय देशा म भिन्न भिन्न नाम स हुआ। इग्लण्ड की पार्लियामट, फ्रास म एस्टेट जनरल (Estate General), स्पेन म कॉर्टेस (Cortes) और जमनी म डॉयट (Diet) आदि सस्थाओ का तरहवी तथा चौदहवी शताब्दिया म उदय हुआ। य सस्थायें प्रजात त्रात्मक न थी, वे जनता के केवल कुछ वर्गों, भूमिपतियो, धनी व्यापारियो और उच्च चच अधिकारियो का ही प्रतिनिधित्व करती थी। उन्नीसवी शताब्दी म प्रतिनिधि सस्थाओ का विशष रूप से विकास हुआ। ग्रेट ब्रिटन म विभिन्न सुधार कानूना द्वारा मताधिकार का क्रमिक विस्तार होता रहा और ससद, विशेष रूप से कामन सभा, अधिकाधिक प्रतिनिध्यात्मक होती गई। अ य देशो म भी ससदीय सस्थायें स्थापित हुई और उनके निर्माण का आधार विस्तृत होता गया। आजकल प्राय सभी प्रगतिशील देशा म जनप्रिय प्रतिनिधि सस्थायें बन गइ हैं। मताधिकार पर आरम्भ म सम्पत्ति, शिक्षा तथा अ य प्रकार की सीमायें थी, जो क्रमश हटा दी गइ और मताधिकार सवव्यापक (universal) अथवा वयस्क आधार पर विस्तृत हो गया।

अखिल अथवा वयस्क मताधिकार के पक्ष पोषको का यह अभिप्राय है कि मतदान का अधिकार राज्य की सीमा के अ दर रहन वाल प्रत्यक वयस्क स्त्री और पुरुष को प्राप्त होना चाहिए। बालको को यह अधिकार नही दिया जा सकता, क्योकि उनम इतना विवक नही होना कि वे मतदान करते समय यह निणय कर सकें कि किसे मत देना चाहिये। इसी प्रकार पागल और अपराधी वत्ति के मनुष्यो को भी यह अधिकार नही दिया जाता, क्योकि व भी अपन नतिक पतन के कारण उचित और अनुचित म भेद नही कर सकते। यह अधिकार विदेशियो का भी नही दिया जाता, क्योकि उनकी राज-भक्ति दूसरे देश के प्रति होती है। गानर के शब्दा म, मताधिकार के विषय मे आधुनिक काल मे यह दृष्टिकोण अपनाया जाता है यह एक कत्तव्य है जो राज्य द्वारा उन व्यक्तियो का प्रदान किया जाता है जिनके विषय मे यह समझा जाता है कि वे इसका प्रयोग राष्ट्रीय हित म करने की आवश्यक योग्यता रखत है। यह एक नसर्गिक अधिकार नही है जा प्रत्यक नागरिक को बिना किसी भेद-भाव के प्राप्त होता है।'

वयस्क मताधिकार के पक्ष मे अग्रलिखित तक दिय जाते है (1) प्रजातन्त्र का सिद्धा त यह है कि सभी व्यक्ति सम ह। अत न्याय की यह माग है कि सभी को मताधिकार मिल। इसक अतिरिक्त जनता ही मर्वोच्च शक्ति का स्रोत है अत मताधिकार एक मूलभूत अधिकार है। (2) राज्य की नीति और निणयो का प्रभाव सभी यक्तिया पर पडता है, इसलिए राज्य की नीति के निर्धारण मे सब लोगा का हाथ रहना चाहिये। यह तभी सम्भव है जब सभी वयस्का को मत देन का अधिकार प्राप्त हो। (3) मताधिकार प्राप्त होन स व्यक्ति मे आत्म सम्मान की भावना बढती है और समाज म उसका महत्त्व भी बढता है। यह बात उसके व्यक्तित्व क विकास म बहुत सहायक होती है। (4) जिन लोगा को मताधिकार प्राप्त नही होता, उनकी ओर से शासक वग उदासीन हो जाता है। जिनके पास मत की शक्ति नही होती सरकार उनके हितो की चिन्ता नही करती। (5) मताधिकार मिलन से नागरिका म राजनीतिक जागति पदा होती है और सावजनिक कार्यों म उनकी रुचि बढती है। इससे नागरिका म सन्तोष और उत्तरदायित्व की भावना भी पदा होती है। अत मताधिकार एक मूलभूत अधिकार तो है ही, जिससे किसी व्यक्ति को वचित नही करना चाहिये। साथ ही उसका उचित उपभोग मतदान के द्वारा सामुदायिक जीवन म एक प्रकार का उचित योगदान भी है।

उपयुक्त मत के विरोध म ये तक दिय जाते हैं—(1) लकी और मेन के अनुसार

सत्तरहवां अध्याय

मताधिकार, प्रतिनिधित्व और प्रत्यक्ष विधि-निर्माण

1 मताधिकार

प्रतिनिधिक शासन पद्धति म निर्वाचक मण्डल का निर्धारण और निर्वाचन प्रक्रिया का सगठन अत्यधिक महत्त्व के विषय है क्योंकि प्रतिनिधिक शासन का आधार ही निर्वाचक और निर्वाचन प्रणाली है। निर्वाचक मण्डल अपने अधिकार का प्रयोग मतदान द्वारा करता है, जो व्यक्ति मतदान के अधिकार का प्रयोग करते है, वे मतदाता कहलाते हैं। इस प्रकार निर्वाचक-मण्डल सक्रिय नागरिकों का समूह होता है। निर्वाचकों अथवा मतदाताओं को सामूहिक रूप म निर्वाचक मण्डल कहते हैं। जो व्यक्ति चुनाव म खडे होते हैं, उन्हे उम्मीदवार अथवा अभ्यर्थी कहते हैं। सक्षेप म, मत दान के अधिकार को मताधिकार कहते हैं, जो सबसे महत्त्वपूर्ण राजनीतिक अधिकार है। निर्वाचकों का मुख्य काय प्रतिनिधियों को चुनना है, निर्वाचित प्रतिनिधियों से राज्य की विधायिका बनती है और उन्ही म से मन्त्री बनते हैं। मन्त्री और विधायिका राज्य की नीति का निर्धारण करते हैं अर्थात् आवश्यक कानून बनाते हैं। इस प्रकार राज्य के नीति निर्धारण तथा कानून निर्माण म परोक्ष रूप से निर्वाचकों का भाग रहता है।

मताधिकार सम्बन्धी सिद्धान्त—निर्वाचन काय म कौन व्यक्ति भाग लें यह बात मताधिकार के स्वरूप के बारे म मान्य मत पर निर्भर करती है। ग्रीक, रोमन और जर्मन जातियों के प्राचीन सगठन म जनजातीय आधार पर मताधिकार दिया जाता था, अत इसे जनजातीय सिद्धान्त कह सकते हैं। राज्य की सदस्यता के साथ मताधिकार चलता था और यह नागरिक के जीवन का आवश्यक और स्वाभाविक भाग समझा जाता था। मध्यकाल म, जब प्रतिनिधित्व प्रणाली का आरम्भ हुआ, मताधिकार एक निहित विशेषाधिकार था, क्योंकि यह केवल धनी भूमिपतियों के वग को ही मिला था। इसे मताधिकार का सामन्ती सिद्धान्त कहा गया है। आगे चलकर सविदा सिद्धान्त के विकास के फलस्वरूप यह सिद्धान्त निकला कि प्रत्येक नागरिक को मत देने का प्राकृतिक अधिकार है इस ही प्राकृतिक अधिकार का सिद्धान्त कहते है। बाद म विकसित हुए कानूनी सिद्धान्त के अनुसार निर्वाचक मण्डल शासन का एक अंग है, जिसकी रचना और शक्तियां राज्य के कानूनों द्वारा निर्धारित होती हैं। अस्तु मतदान एक सावजनिक काय है। अन्त म, नैतिक सिद्धान्त के अनुसार शासन काय म भाग लेने का अधिकार, यद्यपि प्राकृतिक अधिकार नहीं है, वाछनीय है जिससे कि व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हो सके।

मताधिकार का विस्तार—वास्तव म, आदश प्रजातन्त्र तो वही होगा जिसम जनता स्वय शासन का सचालन करे। इस प्रकार की प्रथा प्राचीन एथेन्स मे प्रचलित थी, जहाँ पर अनेक छोटे छोटे पदों पर नागरिकों को लाट द्वारा नियुक्त किया जाता था और साधारण सभा (assembly) की बठक म कोई भी साधारण नागरिक भाग ले सकता था। इसी **प्रकार की**

महिला मताधिकार के विरोध मे दी जान वाली युक्तिया का अन्त होता जा रहा है, फिर भी अनेक राज्या का अभी तक मताधिकार नही मिला है। स्त्री मताधिकार के पक्ष और विपक्ष म निम्न लिखित तर्क दिय जात हैं—

(1) यदि स्त्रियाँ राजनीति म भाग लेंगी तो उन्ह इसकी कठोरता व अशिष्टताओ को सहन करना पडगा, जिससे उनके स्वाभाविक स्त्री गुणा का नाश हो जायगा और विश्व की सस्कृति को हानि पहुँचेगी। पर तु यह कहना कि सावजनिक जीवन म भाग लेने से स्त्रियोचित गुणा का ह्रास होता है, ठीक नही है। कुछ विद्वाना का तो यह मत है कि स्त्रिया के सावजनिक क्षेत्र म आने स सावजनिक जीवन की बहुत सी बुराइयाँ दूर हो जायेंगी।

(2) बहुत से व्यक्ति यह समझते हैं कि स्त्री का उचित स्थान घर के भीतर है, न कि पार्लियामेंट भवन या सावजनिक सभाएँ। उनके विचार म यदि स्त्रियाँ सावजनिक जीवन म भाग लेंगी तो वे बच्चा का उचित ध्यान नही रख सकती। परन्तु यह तक मानवीय नही है। यदि अपढ मजदूर को मताधिकार मिलन से कोई घोर अनिष्ट नही हुआ है तो शिक्षित स्त्रियो को मताधिकार मिलन से कौन से अनिष्ट की आशका है। वास्तव म स्त्रिया को मताधिकार मिल जाने पर, राष्ट्रीय समस्याओ के सुलझाने म स्त्रियाँ भी अपना योग दे सकेंगी, क्योकि उनको घरेलू जीवन का अधिक ज्ञान और व्यावहारिक अनुभव होता है। पारिवारिक जीवन म अशान्ति की आशका केवल काल्पनिक है। सच तो यह है कि आज उनकी क्षुद्र और सकुचित मनोवृत्ति के कारण जो छोटी छोटी बातों पर अनेक झगडे होत हैं, उनका बहुत सीमा तक अन्त हो जायेगा, क्योकि जब उनका दृष्टिकोण विस्तृत हो जायेगा तो वे छोटी मोटी बाता पर ध्यान देने के बजाय देश की बडी समस्याओ पर ध्यान देने लगेंगी।

(3) कुछ व्यक्तियो का मत है कि शारीरिक दृष्टि से स्त्रिया पुरुषो की अपेक्षा दुबल होती हैं और वे राज्य की रक्षा के हेतु शस्त्र धारण नही कर सकती। अत उन्ह मताधिकार क्या दिया जाय ? यह बात सवथा सत्य नही है, आज हमारे देश मे तथा विदेशो म स्त्रिया सनिक शिक्षा ग्रहण कर रही हैं, यदि उन्हे कमजोर भी मान लिया जाय तो भी उन्ह अपनी रक्षा के हेतु विशेष रूप स मताधिकार दिया जाना चाहिये। यह सभी मानते हैं कि स्त्रियाँ बुद्धि मे पुरुषा से कम नही होती। जहाँ जहाँ उन्ह पुरुषो के समान सुविधाएँ और अवसर मिले है, वे उनसे किसी भी कायक्षेत्र म पीछे नही रही हैं।

(4) यह भी कहा जाता है कि स्त्रिया स्वय मताधिकार की माँग नही करती। नारिया अब जागत हो गयी है और आजकल सभी प्रगतिशील देशा म वे सम राजनीतिक अधिकारो के लिए माग कर रही हैं। अत उन्हे इस अधिकार से वचित रखना अन्याय है।

(5) कुछ व्यक्ति यह कहते है कि स्त्रियाँ अपने हितों के लिए पहले पिता और बाद म पति पर निभर रहती हैं और वे अपने राजनीतिक विचारो के लिए पुरुषो पर ही आश्रित हैं। इसलिए उन्ह मताधिकार देने स क्या लाभ ? वास्तव म इस निभरता के कारण तथा राजनीतिक अधिकारो के न मिलने से तो उन्ह पुरुष हीन अथवा दासी के समान समझते हैं।

(6) प्रजातन्त्र सभी व्यक्तियो की समता पर आधारित है, इसलिए लिंग के आधार पर मताधिकार अथवा दूसरे अधिकारो के प्रदान करने मे किसी भी प्रकार का भेद भाव नही होना चाहिए। अपने व्यक्तित्व के विकास, नागरिक चेतना और राजनीतिक जागति के लिए यह अधिकार नारियो के लिए भी उतना ही आवश्यक है जितना पुरुषो के लिए। अन्त मे, इतिहास और अनेक राज्यो के उदाहरण यह बताते है कि स्त्रियाँ राज्य कर सकती हैं।

2 विभिन्न राज्यो मे मताधिकार

(1) ग्रेट ब्रिटेन—ब्रिटिश कॉमन सभा के लिए मताधिकार के विकास का इतिहास वास्तव

मताधिकार लोगो का जन्म सिद्ध अधिकार नही है। यह राज्य द्वारा दिया हुआ अधिकार है जिसका उपभोग व ही व्यक्ति कर सकते हैं जो इसके प्रयोग की योग्यता व क्षमता रखते हो। (2) अधिकाश व्यक्ति अपढ, अज्ञानी मूख और निधन होते है। न तो उनम पर्याप्त समझ ही होती है और न उन्हे पर्याप्त अवकाश ही मिलता है, जिससे कि वे अपने सावजनिक कत्तव्यों का उचित ढग से पालन कर सकें। मिल का कथन है कि मताधिकार को सावजनिक बनाने से पहले शिक्षा को अनिवाय करना नितान्त आवश्यक है।'[1] (3) मताधिकार एक सामाजिक उत्तरदायित्व है, अत उसका प्रयोग बहुत सावधानी और सोच विचार के साथ होना चाहिए। राजनीतिक प्रश्न आजकल इतने जटिल होते जा रहे है कि जनसाधारण के लिए उन्हे समझना या उनके विषय म निर्णय करना सम्भव नही है। वयस्क मताधिकार के दोष कुछ भी हो, यह स्वीकार करना पडता है कि यह पद्धति अब व्यापक रूप म मान्य हो गई है। हम गानर के इस विचार से सहमत है कि हम जॉन स्टुअट मिल के उस कथन का उचित ध्यान रखना चाहिये कि सावजनिक मताधिकार के पूव सावजनिक शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए।

सीमित अधिकार—वयस्क मताधिकार के पक्ष और विपक्ष म तक समझ लेने के बाद यह प्रश्न उठता है कि यदि मताधिकार सीमित भी हो तो उसका आधार क्या रहे? इस सम्बन्ध म दो आधार शिक्षा और सम्पत्ति मुख्य माने गये है। यह तो सवथा उचित है कि प्रजातन्त्र को सफल बनाने के लिए नागरिक शिक्षित हो। परन्तु शिक्षित होना और योग्य होना दो भिन्न भिन्न बाते हैं। एक अशिक्षित व्यक्ति सामान्य बातो म एक शिक्षित व्यक्ति की अपेक्षा अधिक योग्य हो सकता है। साथ ही मताधिकार स्वय शिक्षा का साधन है। इसके अतिरिक्त आजकल शिक्षा भी अधिक से अधिक व्यक्तियो को दी जाने की सुविधायें बढ रही है। जो विद्वान् सम्पत्ति को मताधिकार का आधार बनाने के पक्ष मे है, उनका कहना है कि जिन लोगो के पास वैयक्तिक सम्पत्ति होती है और जो राज्य को कर देते है, उनको शान्ति और व्यवस्था अधिक प्रिय होती है। मिल के अनुसार यदि उन मनुष्यो के हाथ म शासन सूत्र दे दिया जाय जो सम्पत्तिहीन हो तो निश्चय ही वे राष्ट्रीय धन का अपव्यय करेंगे और मितव्ययिता से काम नही करेंगे, क्योंकि इससे उनकी कोई हानि नही होती। परन्तु ये युक्तियाँ सारहीन है क्योकि इनके आधार पर शासन शक्ति सम्पत्तिशालियो का एकाधिकार बन जायगा और दीन मनुष्यो का सदा ही उनके द्वारा शोषण होता रहेगा। दूसरे, प्रजातन्त्र का एक यह भी माना हुआ सिद्धान्त है कि राज्य को मताधिकार या प्रतिनिधित्व का अधिकार दिये बिना कर लगाने का अधिकार नही है। इसी आधार पर अमरीकी उपनिवेशो ने इग्लैण्ड से स्वतन्त्रता के लिए युद्ध किया। आजकल कोई भी विचारवान् व्यक्ति यह मानने को तयार नही होगा कि मताधिकार का आधार सम्पत्ति अथवा कर देने को बनाया जाय, क्योकि राज्य कोई 'ज्वाइंट स्टाक कम्पनी नही है।'[2]

स्त्री मताधिकार—अन्त म, मताधिकार से सम्बन्धित एक अति महत्त्वपूर्ण प्रश्न स्त्रियो को मत देने के अधिकार का है। कुछ समय पूव तक सभ्य एव समुन्नत देशो म भी स्त्रियो को मत देने का अधिकार प्राप्त नही था। इग्लण्ड म 1928 म स्त्रियो को पुरुषो के समान ही मताधिकार प्राप्त हुआ। सयुक्त राज्य अमरीका म स्त्रियो को मताधिकार 1920 म मिला और फ्रास म द्वितीय विश्व युद्ध के बाद। स्विटजरलैण्ड म स्त्रियो को अभी तक मताधिकार नही मिला है। यद्यपि

---

[1] I regard it as wholly inadmissibly that any person should participate in the suffrage without being able to read write universal teaching must precede universal enfranchisement —J S Mill

[2] But to make literacy a qualification for voting is not practical politics So is the tax paying qualification The state is not a joint stock company so that those who contribute to the stock have a voice in its operations —Sinha H N *Political Scienc* pp 148 49

किया गया जिनमे जनसख्या की वृद्धि हो गयी थी। कानून द्वारा नगरो मे रहने वाले अधिकाश श्रमिको को भी मताधिकार प्राप्त हुआ, जिसके फलस्वरूप निर्वाचको की सख्या लगभग दस लाख बढ गयी। 1872 मे गुप्त मतदान प्रणाली जारी की गयी और 1883 म भ्रष्ट प्रथाओ का रोकने का कानून पास किया गया। पर तु अभी तक ग्रामीण निर्वाचन क्षेत्रो म रहने वाले खेतिहर श्रमिको और खानो म काम करने वाले मजदूरो को मताधिकार प्राप्त न हुआ था। 1885 क पुनर्वितरण कानून द्वारा प्रतिनिधित्व को एक नियत स्तर के अनुसार सम्पूण देश के लिए फिर स वितरित किया गया। 1885 और 1918 के बीच चुनाव सम्ब धी महत्त्वपूण प्रश्न य रहे— पहला, अभी तक मताधिकार का आधार सम्पत्ति था। दूसरे, शब्दो म, किसी व्यक्ति को मतदाता तभी बनाया जाता था जबकि वह किसी मकान, भूमि या दुकान आदि का स्वामी, अधिकारी या प्रयोग करने वाला होता था। 1910 म लगभग दस लाख व्यक्ति ऐस थे जो इनम से किसी भी श्रेणी म न आते थे। दूसरे, बहु मतदान का दोष अभी तक शेष था। चूकि मताधिकार का आधार सम्पत्ति था, इसलिए एक ही व्यक्ति एक चुनाव मे एक से अधिक मत दे सकता था। उदाहरण क लिए, एक व्यक्ति एक नगर के चुनाव क्षेत्र म निवासी होने के कारण, दूसरे म दुकान या दफ्तर का स्वामी होने के नाते और किसी ग्रामीण क्षेत्र म ग्रामीण मकान का स्वामी होने के नात तीन मत दे सकता था। यदि वह एक से अधिक काउ टियो मे भू स्वामी होता था ता वह उन सभी म मतदान कर सकता था। 1918 से पूव आम निर्वाचन लगभग दो सप्ताह तक चलता था। अतएव एक व्यक्ति कई स्थानो पर मतदान कर सकता था। तीसरे, वतमान शताब्दी के आरम्भ स ही स्त्री-मताधिकार का प्रश्न महत्त्वपूण हो गया था।

1918 का जन प्रतिनिधित्व कानून (The Representation of People Act, 1918)— जब 1914 म यूरोपीय युद्ध आरम्भ हो गया तो मताधिकार के विस्तार के लिए चल रहा आन्दोलन स्थगित हो गया और स्त्रियो ने युद्ध सचालन म विभिन्न प्रकार से योग दिया। 1917 म लॉयड जाज न स्त्रियो क लिए मताधिकार को विस्तृत करन का प्रस्ताव रखा। 1918 क कानून ने तीस वष स ऊपर की स्त्रियो को पहली बार मताधिकार प्रदान किया, यदि वे विश्व विद्यालय की स्नातिकायें हो या गृह-स्वामिनिया हो। मताधिकार सभी वयस्क पुरुषो क लिए भी विस्तृत किया गया, सिवाय पीयरो, अपराधियो व पागलो के। इस कानून के परिणामस्वरूप लगभग बीस लाख पुरुषो और साठ लाख स्त्रियो को मताधिकार प्राप्त हुआ, पर तु स्त्रियो की बहुत बडी सख्या अभी तक मताधिकार से वचित रह गयी। वयस्क मताधिकार की दिशा म अ तिम पग 1928 म उठाया गया जबकि सम मताधिकार कानून (Equal Franchise Act) द्वारा 21 और 30 वष के बीच आयु वाली स्त्रियो तथा 30 वष स ऊपर आयु वाली ऐसी स्त्रियो को भी मताधिकार प्रदान किया गया जो गृह स्वामिनी अथवा गृह स्वामियो की पत्नियाँ न थी। इस कानून ने बहु मतदान (plural voting) को दो निर्वाचन क्षेत्रो क लिए सीमित किया अर्थात् उन निर्वाचन क्षेत्रो म जहाँ मतदाताओ का निवास-स्थान हो तथा व्यवसाय का स्थान हो। 1970 के आम चुनावो से पूव ब्रिटेन म अठारह वष की आयु वाल युवको और युवतियो को भी मताधिकार प्रदान किया गया।

(2) सयुक्त राज्य अमरीका—सयुक्त राज्य अमरीका म मताधिकार की एकरूपता नही है, क्योकि वहाँ पर भारत की तरह सब नागरिको का सविधान स मताधिकार नही मिला है। वास्तव म जब सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान बना था, उस समय वयस्क मताधिकार, नीग्रो व स्त्रियो के लिए समान मताधिकार के विचार भी निर्माताओ के ध्यान म न थ। सविधान न तो मताधिकार पर निय त्रण राज्यो को सौपा हुआ है। यहाँ यह भी उल्लखनीय है कि सयुक्त राज्य अमरीका मे नागरिक व मतदाता होना एक ही बात नही है अर्थात् बहुत स व्यक्ति नागरिक हैं

मे ब्रिटिश शासन पद्धति का इतिहास है। शायरो के वीर पुरुषो (Knights of Shire) को, जिन्हे काउन्टी कोर्ट के भूमिपतियो के प्रतिनिधि छाँटते थे, तेरहवी शताब्दी मे बडी परिषद् (Great Council) मे भाग लेने के लिए बुलाया जाता था। इसके अतिरिक्त बरो (Boroughs) को भी पार्लियामेंट मे अपने प्रतिनिधि भेजने का अधिकार था। शायरो के वीर पुरुषो और बरो के प्रतिनिधियो से मिलकर कॉमन सभा का निर्माण हुआ। हेनरी छठे के शासन-काल म (1429 म) प्राविधान बना कि काउंटिया के चुनाव म केवल वे ही भूमिपति मतदान कर सकेगे जो इतनी भूमि के स्वामी हो कि जिसके किराये का मूल्य कम से कम 40 शिलिंग हो। पन्द्रहवी शताब्दी से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी तक नगरो मे मताधिकार विभिन्न प्रकार से अधिक प्रतिबन्धित होता गया, क्योकि राजा कॉमन सभा पर अपना नियन्त्रण बनाये रखना चाहते थे।

1832 से पूर्व मताधिकार सम्बन्धी नियमा म बडी कमिया थी। कॉमन सभा के प्रतिनिधिया का चुनाव जनसख्या के अनुपात म न होता था, प्रत्यक बरो और काउन्टी से, उसके आकार का ध्यान न रखते हुए, दो दो प्रतिनिधि चुने जाते थे। उस समय ब्रिटिश शासन का सबसे गम्भीर दोष मताधिकार का सीमित होना नही वरन् असमान प्रतिनिधित्व था। इसके फलस्वरूप अनेक कम जनसख्या वाले बरो (Rotten Boroughs) का पहले की तरह प्रतिनिधि चुनने का अधिकार बना रहा। उदाहरण के लिए, प्राचीन सेरम नगर म कोई आबाद घर न रहा था, फिर भी अन्य स्थानों मे निवासी इसके सात भूमिपतियो को पार्लियामेंट के दो सदस्य चुनने का अधिकार चलता रहा। इस प्रकार 1832 के सुधार कानून के पूर्व ब्रिटेन म वास्तविक प्रजातन्त्र न था। सक्षेप मे, ऑग के अनुसार 1832 से पूर्व निर्वाचन पद्धति के मुख्य दोष ये थे—(1) मताधिकार धनवान् तथा ऊँचा कर देने वाले व्यक्तियो को ही प्राप्त था, (2) प्रतिनिधित्व का वितरण जनसख्या के अनुपात मे न था, और (3) चुनाव मे गम्भीर अनियमितताओ (Shocking irregularities) का प्रयोग होता था। उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक काल म ब्रिटेन मे निश्चित रूप स उच्च व धनी वर्गों का शासन था।

1832 के सुधार कानून मे दो प्राविधान प्रमुख थे। पहले, निर्वाचन क्षेत्रो का पुनर्वितरण—इस कानून द्वारा सभी निर्वाचन क्षेत्रो का पुनर्वितरण नहीं हुआ और न ही उनका वितरण मतदाताओ के अनुपात म हुआ, परन्तु इसने प्रचलित गम्भीर दोषो को दूर किया। उजडे हुए बरो और पाकिट बरो को निर्वाचन क्षेत्र की सूची से निकाल दिया गया और इस प्रकार से घटे लगभग 150 स्थान नये घने आबाद नगरा म वितरित कर दिये गये। दूसरे, मताधिकार का विस्तार काउंटिया और बरों के बीच प्रतिनिधित्व सम्बन्धी पुराना अन्तर कायम रहा, किन्तु मताधिकार का विस्तृत किया गया। काउन्टियो म 40 शिलिंग वाले भूमिपतियो के अतिरिक्त कुछ ऊँचे मूल्य वाली भूमि को जोतने वाले किसानो को भी मतदाता बनाया गया। नगरो म विविध प्रकार के मताधिकार के स्थान पर एकरूप मताधिकार जारी किया गया, क्योकि इस कानून द्वारा उन सभी मकान कर देने वाले निवासियो को मताधिकार दिया गया, जो ऐसे मकानो म रहते थे जिनकी किराये की वार्षिक आय दस पौण्ड या अधिक थी। 1832 के सुधार कानून द्वारा केवल दो ही बडे सुधार हुए थे। अतएव अन्य सुधारो के लिए आन्दोलन जारी रहा। उग्र सुधारवादियो ने, जिन्हे चार्टिस्ट (Chartists) कहा जाता था, छ बातो की माँग की और उनके लिए जोरदार आन्दोलन चलाया। उनकी छ माँगे अग्रलिखित थी—(1) सब व्यापी पुरुष मताधिकार, (2) सम-निर्वाचन क्षेत्र, (3) गुप्त मतदान, (4) कॉमन सभा की सदस्यता के लिए सम्पत्ति की योग्यता का उन्मूलन, (5) सरकारी कोष से सदस्यो को वेतन दिया जाय, और (6) पार्लियामेंट के वार्षिक सत्र।

इस आन्दोलन के फलस्वरूप 1867 म दूसरा बडा सुधार कानून बना। इस कानून द्वारा उन बरो स प्रतिनिधित्व छीनकर जिन्हे आवश्यकता स कही अधिक प्राप्त था उन क्षेत्रो को प्रदान

किसी अपराध के लिए दण्डित नही किया गया, उसे पोलिंग अधिकारी डराते व धमकाते हैं, या उसे मतदान से पूव धमकी दी जाती है कि वह मतदान मे भाग न ले। परन्तु अब ये चाल प्रभावशाली सिद्ध नही हो रही है, क्योंकि नीग्रो जाति मे भी चेतना उत्पन्न हो गयी है। अब सयुक्त राज्य अमरीका म प्राय सवव्यापी मताधिकार स्थापित हो गया है। परन्तु मतदाता बनन के लिए नागरिक को अग्रलिखित शर्तें पूरी करनी पडती है—(1) सयुक्त राज्य अमरीका का नागरिक होना, (2) कम से कम इक्कीस वष की आयु हो (सयुक्त राज्य अमरीका की काग्रेस न अठारह वष की आयु वाले व्यक्तियो को मताधिकार देने का कानून पास कर दिया है), (3) किसी राज्य अथवा स्थानीय क्षेत्र मे विहित समय के लिए निवास की शर्तें पूरी करना, (4) जिन राज्यो म साक्षरता की शत है, पढने और लिखने की शत रखना, (5) जिन राज्यो मे आवश्यक हो, करदाता होना, (6) किसी अन्य आधार पर अयोग्य न ठहराया जाना, और (7) नियत समय के भीतर अपना नाम रजिस्टर कराना।

(3) भारत मे वयस्क मताधिकार—भारतीय निर्वाचन पद्धति की सवप्रथम विशेषता 'वयस्क मताधिकार' है। भारतीय सविधान के निर्माताओ ने प्रजातन्त्र के आधार को अधिक से अधिक व्यापक बनाने के उद्देश्य से वयस्क मताधिकार के आदश को व्यावहारिक रूप प्रदान किया है। अब लोकसभा और राज्य की विधान सभाओ के लिए सभी 21 वष की आयु वाले व्यक्ति मतदाता बन गये हैं। प्रथम आम चुनाव के अवसर पर कुल मतदाताओ की सख्या लगभग 17 2 करोड थी, जो दूसरे चुनाव म बढ कर लगभग 19 3 करोड हो गई और अब मतदाताओ की सख्या 24 करोड से ऊपर है। भारत मे साक्षरता का प्रतिशत अभी 20 भी नही है, इस आधार पर कुछ आलोचको ने वयस्क मताधिकार दिये जाने की बुद्धिमत्ता म सन्देह प्रकट किया है। अशिक्षितो को मताधिकार मिलने से प्रजातन्त्र की सफलता म उनका विश्वास नही है।

परन्तु हमे *यह स्वीकार करना पडेगा कि यदि अब भी सम्पत्ति या शिक्षा आदि को* आधार मानकर मताधिकार प्रदान किया जाता तो वयस्क मताधिकार का आदश भावी 10–15 वष म भी व्यावहारिक बनना कठिन होता और प्रजातन्त्र की दिशा म प्रगति बहुत धीमी होती। जनसाधारण के हितो की रक्षा और उनके व्यक्तित्व के पूण विकास के लिए मताधिकार का मिलना अति आवश्यक है। मताधिकार प्राप्ति से जनसाधारण की सावजनिक मामलो म अभिरुचि बढती है, अत मताधिकार राजनीतिक शिक्षा का एक अनुपम साधन भी है। डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने *सविधान सभा म सत्य ही कहा था—'हमारे दशवासियो म बुद्धिमत्ता है। उनकी* सस्कृति भी ठोस है, चाहे वतमान समय का भ्रष्ट शिक्षित वग उसका मान न करे। व साक्षर नही है, परन्तु इसमे कोई सन्देह नही है कि वे अपने तथा देश के हित म उचित पग उठाने की *समझ रखते है, यदि उन्ह आवश्यक बातें समझा दी जायें।'*

(4) जापान—प्रथम निर्वाचन कानून (electoral law), जो 1879 म पास हुआ था, अत्यधिक सीमित मताधिकार के सिद्धान्त पर आधारित था। मताधिकार केवल 25 वष या अधिक आयु वाले पुरुषो को कर देने के आधार पर दिया गया था। जो व्यक्तिगत रूप म 15 येन या अधिक भूमिकर अथवा आय कर देते थे, व हो मतदाता बन सकते थे। इतना ही नही मताधिकार के लिए यह भी आवश्यक था कि भूमिकर कम से कम *1 वष के लिए और आय कर 3 वष के लिए* दिया जाय। अन्त म, मतदाता के लिए यह भी आवश्यक था कि वह चुनाव जिले म कम स कम 1 वष तक निवासी रहा हो। इन शर्तों के परिणामस्वरूप, व्यवहार म अधिकतर मतदाता भूमिपति कुछ व्यवसायी तथा कुछ उच्च अधिकारी होते थे, बुद्धिजीवी और शहरो की बडी सख्या मताधिकार से वचित थी। 1890 म कुल जनसख्या 4 करोड थी, जिसम मतदाताओ की कुल सख्या केवल 4½ लाख अर्थात् 1 10 प्रतिशत थी। मताधिकार का कर दने की सीमा को क्रमिक रूप स नीचे

किन्तु मतदाता नही हैं। 21 वष से कम आयु वाले व्यक्तियो को तो मताधिकार प्राप्त है ही नही, फिर भी मतदाता केवल वे ही नागरिक हैं जिन्हे यह अधिकार प्राप्त हो गया है। मतदाताओ के अनुपात म क्रमिक रूप से विकास हुआ है और अब प्राय सभी वयस्क मतदाता हैं। मताधिकार की वतमान स्थिति और शर्तों को भली प्रकार से समझने के लिए उसके विकास पर एक विहगम दृष्टि डालना उचित होगा।

1787 म बहुत से प्रतिनिधि बहृत् मताधिकार के विरुद्ध थ, इसी कारण सम्मेलन ने इस सम्बन्ध म सविधान म कोई प्राविधान सम्मिलित नही किया था। उसमे केवल यह प्राविधान है कि राष्ट्रीय चुनावो म मतदान के लिए योग्यतायें राज्य स्वय निर्धारित करें। 1789 से लेकर 1920 तक मताधिकार का पूण विकास हुआ। परन्तु अठारहवी शताब्दी के अन्त से पूव ही चार पुराने राज्यो ने मताधिकार के सम्बन्ध म सम्पत्ति की शर्तों का अन्त कर दिया था, उसके स्थान पर उन्होने कर देने की शत कायम रखी। सघ म प्रवेश करने वाले अधिकतर नये राज्यो ने कर देने की शत रखी, किन्तु तीन राज्यो न सभी वयस्क पुरुषो का मताधिकार प्रदान किया। जैसे जसे पश्चिम के अन्य राज्य सघ म सम्मिलित हुए, प्राय सभी ने पुरुष मताधिकार को स्वीकार किया। 1820 तक केवल सात राज्यो मे पुरुष मताधिकार पर सम्पत्ति या कर देने की शर्तें लगी रही। 1845 तक उत्तरी केरोलिना को छोडकर प्राय सभी राज्यो ने सम्पत्ति व कर देने की शर्तें भी पुरुष मताधिकार से हटा दी। 1856 तक गोरे लोगो के लिए पुरुष मताधिकार का सिद्धान्त सभी राज्यो म स्वीकार कर लिया गया। स्त्री मताधिकार बडी धीमी चाल से आया। स्त्रियो को मताधिकार सबस पहल 1869 म केवल एक प्रदेश म प्राप्त हुआ। 1917 तक अन्य राज्यो न भी स्त्री मताधिकार स्वीकार कर लिया। 1919 म काग्रेस ने राज्यो की सम्पुष्टि के लिए उन्नीसवां सशोधन प्रस्तुत किया जो 1920 म स्वीकार हो गया। इस सशोधन म यह प्राविधान है कि मताधिकार स किसी भी नागरिक को लिंग भेद के आधार पर वचित न किया जाय।

गृह युद्ध के बाद पन्द्रहवां और सोलहवा सशोधन पास किय गय, जिन्होने नीग्रो जाति के लिए मताधिकार का मार्ग खोला। काग्रेस ने 1867 के पुनर्निर्माण कानून द्वारा दक्षिणी राज्यो पर नीग्रो मताधिकार लागू किया, और 1870 म पन्द्रहव सशोधन ने राज्यो को मूल जाति, रग अथवा दासता की पूव दशा के आधार पर किसी नागरिक को मताधिकार स वचित करने की मनाही कर दी। फिर भी नीग्रो मताधिकार का विकास बहुत धीमे हुआ, क्योकि विभिन्न राज्यो ने इस सम्बन्ध म कई प्रकार के प्रतिबन्ध लगाय।

कुछ राज्यो ने निवास व पोल टक्स के सम्बन्ध म कठोर नियम बनाये। दो तीन वष के निवास की शत नीग्रो जाति के अधिकतर घूमने फिरने वाले व्यक्ति पूरा न कर सके। ऐसे ही नीग्रो जाति क बडे भाग ने पोल टैक्स समय पर जमा न किया, विशेष रूप से इस कारण भी कि गोरे कर एकत्रित करने वालो ने इसे जमा करने मे दबाव न डाला, यहाँ तक कि नोटिस भी न भेजा। यद्यपि नीग्रो जाति के नागरिको के नाम मतदाता सूची म लिख लिये जाते है, फिर भी उन्हे निर्वाचनो म भाग लेने से वचित रखा जाता है। यह काय दलीय सगठन द्वारा किया जाता है। दक्षिण के अधिकतर राज्य डेमोक्रेटिक दल के समथक है, जो उम्मीदवार उस दल के प्राइमरी चुनाव म नामजदगी कराने म सफल हो जाते है, वे चुनाव मे भी जीत जाते है। सर्वोच्च न्यायालय ने इस प्राविधान को इस आधार पर अवैध ठहराया कि यह नीग्रो जाति के सदस्यो को कानूनो का सम रक्षण प्रदान न करता था।

अन्त म, यद्यपि नीग्रो जाति के सदस्यो का नाम मतदाता सूची मे लिख लिया जाता है और उन्हे प्राइमरी मे भी भाग लने से वचित नही किया जाता, फिर भी उन्हे मतदान से अलग रखने का प्रयत्न किया जाता है। उन्हे यह सिद्ध करने के लिए कहा जाता है कि उसे कभी

सूचियाँ उचित ढग से बनाई जायें। निर्वाचन क्षेत्रों का उचित परिसीमन हो जिससे समुदाय के प्रत्येक वर्ग को ससद मे उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके। साथ ही यह भी आवश्यक है कि मतदाताओ के सामने अभ्यर्थियो (उम्मीदवारो) और कार्यक्रमो की वास्तविक छाँट का अवसर रहे। चुनाव बहुधा हो और जनता को राजनीतिक शिक्षा प्राप्त हो।

जहाँ तक ससद मे वाद विवाद और निर्णय का सम्बन्ध है, इसके लिए भी कई बातें आवश्यक हैं। प्रथम, ससदीय विशेषाधिकार (parliamentary privilege), जिसका अर्थ ऐसी बात कहना है जिसमे साधारणतया कानूनी परिणाम (किसी प्रकार का दण्ड) अन्तर्ग्रस्त हो। सभी ससदो को सरकार या मन्त्रियो की आलोचना करनी पडती है, यह उनके अति महत्त्वपूर्ण कार्यों मे से एक है। वे अपना कार्य उचित रीति से नही कर सकती, यदि ससद के सदस्यो को बोलने से पूर्व (कानूनी परिणामो के बारे मे) सोचना पडे। आजकल ब्रिटेन मे ससदीय विशेषाधिकार को बडी सावधानीपूर्वक कायम रखा जाता है। समाचार पत्र सदन की कार्यवाही का वर्णन छापते हैं, परन्तु उन्हे उस पर टिप्पणी करने मे बडी सावधानी बरतनी पडती है। कॉमन सभा की एक विशेषाधिकार-सम्बन्धी स्थायी समिति है जिसके पास समाचार-पत्रो द्वारा विशेषाधिकारो के उल्लघन सम्बन्धी समाचार (या मामले) भेजे जाते हैं। सदन को बन्दीपन का दण्ड आदि देने की शक्तियाँ प्राप्त है।

दूसरी आवश्यकता पर्याप्त सूचना पाने की है। यह आवश्यक है कि ससद के सदस्यो को सरकार की आलोचना करने के लिए अपेक्षित तथ्यो और आँकडो की सूचना मिले। सासद शासन का प्रभावी होना बहुत सीमा तक इस बात पर निर्भर करता है कि सरकार अपने समर्थको तथा विपक्षियो को अपेक्षित सूचना देने पर किस प्रकार सहयोग करती है। मन्त्रियो से पूछे गए प्रश्नो का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत होता है और जिस प्रकार की सूचना सदस्यगण माँगते है, वह कभी कभी बडी विस्तारपूर्ण होती है। ब्रिटेन (भारत और अन्य कई देशो) मे तो सदन की कार्यवाही प्रश्नोत्तर काल से ही आरम्भ होती है। तीसरी आवश्यकता इस बात की है कि ससद अपनी कार्यवाही (प्रक्रिया) मे सरकारी हस्तक्षेप से स्वतन्त्र रहे। प्रजातान्त्रिक ससद की यह एक पहचान है, जिसके आधार पर उसके तथा अधिनायकशाही विधानमण्डल (जैसा कि सोवियत सघ मे है) के बीच अन्तर किया जाता है। अन्त मे, इस बारे मे अधिक कहने की आवश्यकता नही है कि सरकार (कार्यपालिका) को ससद के निर्णय मानने जरूरी हैं। सबसे कार्यकुशल और राजनीतिज्ञतापूर्ण ससद भी अपने कार्य मे विफल रहेगी, यदि सरकार उसके निर्णयो की परवाह न करे, अत यह बहुत आवश्यक है कि ऐसे उपाय ढूढे जायें कि सरकार ससद के निर्णयो का आदर करे। इनमे से एक यह है कि सरकारी आय और व्यय पर ससद (व्यवहार मे लोकप्रिय सदन) का नियन्त्रण रहे। दूसरा उपाय यह है कि मन्त्रिमण्डल के सदस्य ससद (व्यवहार मे लोक सदन) के प्रति उत्तरदायी हो।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि प्रतिनिधित्व उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए एक आवश्यक साधन है। प्रतिनिधित्व की सभी योजनाओ का केन्द्रीय लक्ष्य ही है कि सरकार किसी के प्रति उत्तरदायी हो। प्रजातन्त्र मे तो सरकार, स्पष्टत परोक्ष रूप मे जनता के प्रति और प्रत्यक्ष रूप मे जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियो के प्रति उत्तरदायी होती है। किसी भी प्रकार के प्रतिनिधित्व की योजना को लागू करने के लिए यह आवश्यक है कि सविधान द्वारा प्रतिनिधित्व के रूप, निर्वाचन-क्षेत्रो व निर्वाचनो के सचालन आदि की समुचित व्यवस्था की जाय। अत यह कहना उचित होगा कि प्रतिनिधित्व और सावैधानिक शासन मे घनिष्ठ सम्बन्ध है। शासन की वैधता इस बात पर निर्भर करती है कि जनता उसे स्वीकार करे अथवा उसका समर्थन करे। प्रतिनिधियो की छाँट निर्वाचन द्वारा होती है, अत प्रतिनिधित्व और निर्वाचन मे अति

गिरान से विस्तार किया गया। 1900 म यह सीमा 15 येन से 10 येन की गयी और 1919 म 3 येन। उसके परिणामस्वरूप मतदाताओ की सख्या 20 लाख हो गई। 1925 मे कानून द्वारा सवव्यापी पुरुष मताधिकार का सिद्धान्त अपनाया गया और मतदाताओ की सख्या म बडी वृद्धि हुई। मतदाताओ की सख्या 1 करोड 20 लाख हो गयी।

दूसरे विश्वयुद्ध के उपरान्त 1947 म स्त्रियो को भी सम मताधिकार प्राप्त हुआ अर्थात् सवव्यापी वयस्क मताधिकार का सिद्धान्त स्वीकृत हुआ और जापान पश्चिम के प्रजातन्त्री देशो के समान हो गया। सवव्यापी मताधिकार का सिद्धान्त 1947 म नय सविधान से पूव ही लागू हो गया। अब सभी वयस्को को मताधिकार मिल गया है। 20 वष की आयु के सभी व्यक्ति मतदाता हो सकते हैं। चुनाव जिले म 3 महीने के निवास की शर्त आवश्यक है। अब शिक्षा अथवा साक्षरता सम्बन्धी योग्यता आवश्यक नही है, क्योकि वहाँ प्राय शत-प्रतिशत साक्षरता है, जो किन्ही कारणो के आधार पर अयोग्य ठहराये जायें जिन्हे बन्दीपन की भारी सजा मिली हो या जो चुनाव सम्बन्धी अपराधो के लिए दण्ड भोग रहे हो, उन्हे मताधिकार से वंचित किया गया है।

(5) सोवियत सघ—1936 के सविधान मे क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए, क्योकि इसके अन्तगत पूव सविधान के विशेष समूहो को मताधिकार से वंचित करने वाले, अप्रत्यक्ष निवाचन और ग्रामीण क्षेत्रो की अपेक्षा शहरी क्षेत्रो के लिए अधिक प्रतिनिधि सम्बन्धी प्रावधानो का अन्त कर दिया गया। अब प्रत्येक नागरिक को जिसकी आयु 18 वष हो चुकी हो, लिंग, मूल जाति राष्ट्रीयता, धम, शिक्षा, निवास, सामाजिक उद्भव, सम्पत्ति और पूवकालीन गतिविधियों का कोई ध्यान न रखते हुए मताधिकार प्रदान किया गया है। केवल पागल व दण्ड भोगने वाले व्यक्तियो को मताधिकार से वंचित किया गया है। नीचे से लेकर ऊपर तक विभिन्न सोवियतो के सदस्यो को सर्वव्यापी, सम और प्रत्यक्ष मताधिकार के आधार पर गुप्त मतदान द्वारा चुना जाता है। सशस्त्र सेनाओ के सदस्यो को मताधिकार प्राप्त है और व पदो पर निर्वाचित भी किये जा सकते है। मताधिकार की दृष्टि से सोवियत सघ के प्रावधान सयुक्त राज्य अमरीका की तुलना म आगे है, क्योकि सयुक्त राज्य अमरीका म अभी तक सवव्यापी मताधिकार पर व्यवहार म कई प्रकार के प्रतिबन्ध हैं और नीग्रो जाति यथाथ म मतदान के अधिकार सीमित रूप मे ही प्रयोग कर पाती है।

(6) चीन—सभी नागरिको को जो 18 वष की आयु प्राप्त कर चुके हो, मताधिकार और चुनाव मे खडे होने का अधिकार है, चाहे व किसी राष्ट्रीयता, मूल जाति, लिंग, व्यवसाय, सामाजिक उद्भव, धार्मिक विश्वास, शिक्षा, सम्पत्ति, पद अथवा निवास काल के हो, सिवाय ऐसे व्यक्तियो के जो पागल हो अथवा जिन्हे कानून द्वारा मताधिकार तथा चुनाव म खडे होने के अधिकार से वंचित कर दिया गया हो। स्त्रियो को पुरुषो के सम ही मताधिकार व चुनाव म खडे होने का अधिकार है।

3 प्रतिनिधित्व

प्रतिनिधि शासन (Representative Government)—इसके सफल सचालन के लिए तीन शर्तों की पूर्ति होना आवश्यक है और प्रत्येक की पूर्ति के लिए कई प्रकार की सावधानियो का प्रयोग होना आवश्यक है। प्रथम, ससद को जनता के सभी वर्गों का सच्चे अर्थ म प्रतिनिधि होना चाहिए। दूसरे, ससद के सदस्यो को विभिन्न विषयो (मामलो) के बारे म खुल कर वाद विवाद करने दिया जाना चाहिए। तीसरे, सरकार को ससद के निणय को अवश्य ही मानना चाहिए। इनके अतिरिक्त सच्ची प्रतिनिधिक ससद के लिए यह आवश्यक है कि चुनाव स्वतन्त्र हो। निर्वाचित

प्रतिनिधित्व का अभिप्राय यह है कि राज्य को अनेक निर्वाचन क्षेत्रो म भूमि अथवा भूगोल के आधार पर बाँटा जाता है, निर्वाचन क्षेत्रो से एक या अधिक सदस्या का चुनाव किया जाता है। इस विधि का सबसे अधिक सुविधाजनक माना गया है। इसके पक्ष म यह भी तक दिया जाता है कि जो व्यक्ति एक स्थान या क्षेत्र म रहते हैं, उनके हित समान होत हैं। परन्तु कुछ समय से इस विधि की आलोचना की जाने लगी है। इसम दो दोष बताये जाते हैं। प्रथम तो यह है कि भूमिगत सीमाएँ यथाथ नहीं, कृत्रिम होती हैं, व एक समूह या वग के हिता को दूसर वग या हिता से अलग नही कर सकती। केवल एक स्थान पर रहने से व्यक्तियो के दृष्टिकोण अथवा हिता म एकरूपता नही आ सकती। दूसरे, यह इस युक्तिहीन सिद्धान्त पर आधारित है कि कोई एक व्यक्ति दूसरे व्यक्तियो का प्रतिनिधित्व कर सकता है। वास्तव म प्रतिनिधित्व व्यक्तियो का नही वरन् हितो का होता है। अत सच्चा प्रतिनिधित्व सामान्य हितो का ही होता है। प्रतिनिधित्व का आधार व्यवसाय, वग अथवा काय होने चाहिएँ। जी० डी० एच० कोल ने इस विधि का जोरदार समथन किया है।

दूसरी विधि के अन्तर्गत कोई व्यक्ति अपने व्यवसाय क व्यक्तियो के साथ मत देगा, न कि अपने क्षत्र के निवासी मतदाताओ के साथ। इसके फलस्वरूप विधायिका म विभिन्न हितो के प्रतिनिधि पहुँचेंगे। इस विधि के समथको का विश्वास है कि जो व्यक्ति एक ही प्रकार का काय अथवा व्यवसाय करते है, उनके हित अपेक्षाकृत अधिक समान होते हैं। विधायिकाओ म विभिन्न हितो का प्रतिनिधित्व होना चाहिए, विशेष रूप से आजकल क्योकि अधिकाश राजनीतिक प्रश्न आर्थिक होते हैं। इस विधि का विभिन्न विचारधाराओ के समाजवादी अधिक समथन करते हैं। परन्तु इस विधि के विरुद्ध कई व्यावहारिक तक दिये जाते है। उनम से सवप्रथम यह है कि इसके फलस्वरूप राष्ट्रीय विधायिका वर्गीय और विशेष हितो की सभा बन जायेगी और ये प्रतिनिधि राष्ट्रीय हिता का उचित ध्यान न रखेंगे। दूसरे, प्रतिरक्षा, शान्ति और व्यवस्था, वदेशिक सम्बन्ध, कर आदि जसे सामान्य हितो के प्रतिनिधित्व के लिए यह विधि अनुपयुक्त है। इसके लागू करने मे बहुत सी व्यावहारिक कठिनाइयाँ भी आती है, इसी कारण इस विधि को अधिकतर राज्यो ने नही अपनाया है।

प्रतिनिधित्व के मुख्य सिद्धान्त (Theories of Representation)—यहाँ पर हम दो मुख्य सिद्धान्तो का सक्षेप म विवेचन करेंगे। प्रथम, उदार प्रजातान्त्रिक (liberal democratic), जिसका बल व्यक्ति के अधिकारो के महत्त्व पर है। इसके अनुसार सभी वयस्को का मताधिकार मिलना चाहिए और मताधिकार सम होना चाहिए। इसका आधार यह भी है कि जनता प्रभु है (sovereignty of the people), जिस सवव्यापी मताधिकार द्वारा ही अभिव्यक्त किया जा सकता है। दूसर, प्रतिनिधित्व के समूहवादी (collectivist) सिद्धान्त है, जिनका विकास उन्नीसवी शताब्दी म समाजवादियो न किया। उन्होन पूववर्णित सिद्धान्तो के व्यक्तिवाद को अस्वीकार किया और समाज के भीतर वग सघष के पहलू पर बल दिया। अतएव विधायिका व्यक्तियो और मता की प्रतिनिधि न होकर बहुसख्यक वग की प्रतिनिधि होनी चाहिए। इन लोगो ने व्यावसायिक और कार्यात्मक (vocational and functional) प्रतिनिधित्व पर बल दिया। सोवियत सघ के पूवगामी सविधान म इस प्रकार के प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की गई थी, परन्तु 1936 म बने वर्तमान सविधान म व्यावसायिक प्रतिनिधित्व को त्याग दिया गया। सोवियत सिद्धान्तकार अब भी अपनी प्रतिनिधि सस्थाओ को श्रेष्ठतर बताते हैं। उनका कथन है कि उनके यहाँ जनता का भाग अधिक व्यापक है।[1]

[1] Ball A R, *Modern Politics and Government*, pp 125–27

घनिष्ठ सम्बन्ध है, यहाँ तक कि कभी कभी उन्हें पर्यायवाची समझा जाता है। फ्रीडरिच के शब्दों म प्रतिनिधित्व की परिभाषा अग्रलिखित है— प्रतिनिधित्व वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा उस प्रभाव को, जो कि सम्पूर्ण नागरिक समुदाय या उसका एक भाग है सरकारी कार्यों पर उसकी अभिव्यक्ति स्वीकृति से रखता है, उनकी ओर से उनमें से एक छोटी संख्या द्वारा प्रयुक्त किया जाता है और इस प्रकार कि उसका उन पर बन्धनकारी प्रभाव होता है जिनका प्रतिनिधित्व किया जाता है।'[1]

आदेश (Mandate)—उदारवादी प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्त की यह पूर्वधारणा है कि कोई भी विधायिका तब तक कानून नहीं बनाती जब तक कि उस निर्वाचक मण्डल से पूर्व अनुमति अथवा आदेश न मिला हो। दलीय पद्धति के विकास के पूर्व, आदेश का विचार उसी मात्रा में लागू होता था जिसमें कि प्रतिनिधि अपने को निर्वाचक मण्डल की इच्छाओं से तथा अथवा अपनी अन्तरात्मा के अनुसार कार्य करने के लिए स्वतन्त्र समझता था। वमर गणतन्त्र के संविधान में तो बलपूर्वक कहा गया था कि 'सदस्य सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रतिनिधि हैं' और केवल अपनी अन्तरात्मा के अधीन हैं किसी आदेश या अनुदेश से नहीं बँधे हैं। दलीय अनुशासन के विकास के बाद यह समझा जाने लगा कि प्रतिनिधियों को दलीय सचेतक (party whips) के आदेशों का पालन करना चाहिए। इस प्रकार आदेश के विचार ने नया रूप धारण किया। यह कहा गया कि निर्वाचक मण्डल तो किसी दल को चुनता है और उसे आदेश देता है कि वह अपनी नीतियों को कार्यान्वित कराने के लिए अपनी सरकार बनाये।

साधारणतया सरकार निर्वाचक मण्डल के विशिष्ट वायदे करना पसन्द नहीं करती, वे चाहती हैं कि अपनी नीतियों में परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन करें। यह माना जायगा कि विजयी दल के कार्यक्रम (या घोषणा पत्र) में अनेक बातें दी होती हैं, यह कहना बड़ा कठिन है कि निर्वाचक मण्डल ने किन बातों को चाहा है। कभी कभी यह कहा जाता है कि ब्रिटेन में यह अभिसमय पड़ गया है कि पालियामेंट को कोई भी महत्त्वपूर्ण संविधानिक परिवर्तन के लिए निर्वाचक मण्डल से आदेश प्राप्त करना चाहिए। प्रतिनिधित्व के विभिन्न प्रकार अथवा रूप हैं, जिनका संक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जाता है—

वास्तविक प्रतिनिधित्व—इसके समर्थकों का यह तर्क है कि बुद्धिमान नीति को सुनिश्चित करने के लिए श्रेष्ठ मार्ग यह है कि समुदाय के सबसे योग्य सदस्यों को छाँट लिया जाये जो सामान्य हितों के प्रति कर्त्तव्य और लगन की भावनाएँ रखें। 1792 में एडमंड बर्क ने कहा था— 'यद्यपि ब्रिटिश समुदाय का एक छोटा सा वर्ग ही यथार्थ में मतदान का अधिकार रखता है, फिर भी पालियामेंट सम्पूर्ण जनता के वास्तविक हितों का भली प्रकार से प्रतिनिधित्व करती है।' 1832 के सुधार विधेयक के विरोधियों ने तर्क दिया कि प्रतिनिधित्व का विस्तार महत्त्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि वास्तव में पालियामेंट सभी का प्रतिनिधित्व करती थी। मताधिकार में किसी भी प्रकार के विस्तार से ताज लार्डों और कामन सभा के सदस्यों के बीच नाजुक सन्तुलन बिगड़ जायेगा।

भूमिगत और व्यावसायिक प्रतिनिधित्व—एक आधार पर प्रतिनिधित्व की विधियों को भूमिगत (territorial) अथवा भौगोलिक और कार्य अथवा व्यवसाय (functional) के अनुसार दो प्रकार का माना जाता है। अधिकतर देशों में प्रथम प्रकार की विधि का ही चलन है, सोवियत संघ के पुराने संविधान के अन्तर्गत दूसरे प्रकार की विधि को अपनाया गया था। भूमिगत

[1] Representation is the process through which the influence which the entire citizency or a part of them have upon governmental action is with their expressed approval exercised on their behalf by a smaller number among them with binding effect upon these represented —Friedrich Carl J *Constitutional Government and Democracy* p 266

यदि अब किसी उम्मीदवार को बहुमत प्राप्त हो जाता है तो उस निर्वाचित घोषित कर दिया जाता है, अन्यथा फिर सबसे कम मत वाले उम्मीदवार का नाम हटाकर उनके मतों को तीसरी पसन्द के अनुसार शेष उम्मीदवारों में बाँट दिया जाता है। इस प्रकार जिस उम्मीदवार को पूर्ण बहुमत प्राप्त होता है, वह निर्वाचित घोषित कर दिया जाता है। यह प्रणाली आनुपातिक प्रतिनिधित्व-पद्धति से मिलती जुलती है। इसमें क्षेत्र एक सदस्य वाले होते हैं, जबकि आनुपातिक पद्धति में बहुसदस्य वाले क्षेत्र होते हैं। इसके गुण और दोष दूसरे मत की प्रथा के समान ही हैं, परन्तु इसमें दूसरी बार चुनाव की आवश्यकता नहीं पड़ती।

आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति—अल्पसंख्यकों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिलाने के लिए अनेक विधियों में यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है और इसका चलन लगभग सभी प्रगतिशील राज्यों में कुछ प्रकार के चुनावों के लिए होता है। इस पद्धति के भी दो मुख्य रूप हैं प्रथम एकल संक्रमणीय मत पद्धति (Single transferable vote system) और दूसरी सूची-पद्धति। आनुपातिक पद्धति का प्रथम रूप अधिक महत्त्वपूर्ण व प्रचलित है। इसके लिए अग्रलिखित बातें आवश्यक हैं (1) बहुसदस्य वाले निर्वाचन क्षेत्र जिनमें कम से कम तीन प्रतिनिधि चुने जाने चाहियें। (2) किन्तु मतदाता को केवल एक ही मत का अधिकार होता है। (3) मतदाता अपनी पसन्द (preference) को विभिन्न उम्मीदवारों के नाम के आगे 1, 2, 3, 4 आदि संख्या लिखकर बता देता है। (4) मतों का संक्रमण, और अन्त में (5) निर्वाचन के लिए आवश्यक कोटा (गिनती)। कोटा निकालने के लिए ये फार्मूले प्रयोग में लाये जाते हैं—

(अ) $\dfrac{\text{कुल मतों की संख्या}}{\text{चुने जाने वाले सदस्यों की संख्या}}$

(आ) $\dfrac{\text{कुल मतों की संख्या}}{\text{चुने जाने वाले सदस्यों की संख्या}+1}+1$

उपर्युक्त फार्मूलों में प्रथम अधिक सरल है, किन्तु दूसरा अधिक ठीक और अधिक ही प्रचलित है। इस प्रकार यदि किसी निर्वाचन क्षेत्र से 8 उम्मीदवार हों और तीन सदस्य चुने जाने हों तो मतदाता तीन नामों के सामने अपनी पहली, दूसरी तथा तीसरी पसन्द दिखायेगा। मतदाता का मत पहली पसन्द के उम्मीदवार को पड़ेगा परन्तु यदि गणना का यह परिणाम निकले कि उसकी पहली पसन्द वाला उम्मीदवार कोटा पूरा होने पर निर्वाचित घोषित कर दिया गया है अथवा उस उम्मीदवार के मत इतने कम आये हैं कि उसके चुने जाने की कोई सम्भावना न हो तो उसका मत दूसरी पसन्द वाले उम्मीदवार के पक्ष में पड़ जायगा। यदि दूसरी पसन्द का उम्मीदवार भी चुना जा चुका है, तो उसका मत तीसरी पसन्द के उम्मीदवार के पक्ष में गिना जायगा। आवश्यकतानुसार यही क्रम जारी रहेगा।

एक उदाहरण—मान लीजिए कि एक निर्वाचन-क्षेत्र से पाँच प्रतिनिधि चुने जाने हैं और डाले गये कुल मतों की संख्या 24 000 है। इस दशा में किसी प्रतिनिधि के चुने जाने के लिए कोटा इस प्रकार निकाला जायेगा—

$\dfrac{24000}{5+1}+1=4001$, अर्थात् जिस उम्मीदवार को पहली पसन्द के इतने मत मिल जायेंगे, या गुंजाइश होने पर दूसरी, तीसरी तथा चौथी पसन्द के इतने मत मिल जायेंगे उसे निर्वाचित घोषित कर दिया जायेगा।

यह पद्धति उन निर्वाचकों के लिए व्यापक रूप से अपनायी जाने लगी है जहाँ निर्वाचकों की संख्या अत्यधिक कम हो। भारत के राज्यों की विधान सभायें विधान परिषदों व राज्य सभा के लिए अपने द्वारा चुने जाने वाले सदस्यों का चुनाव इसी पद्धति के अनुसार करती हैं।

अल्पसख्यको का प्रतिनिधित्व—एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रो के लाभ और हानियो की विवेचना करते समय बताया गया है कि इस प्रणाली का सबसे गम्भीर दोष यह है कि इनमें अल्पमत अथवा अल्पसख्यको को उचित प्रतिनिधित्व नही प्राप्त होता। इस दोष को दूर करने के लिए निर्वाचन की अनेक विधियाँ निकली हैं, जिनका विभिन्न देशो म प्रयोग किया गया है। उनमे से निम्नलिखित प्रमुख हैं, इसलिए प्रत्येक का साधारण परिचय तथा सक्षिप्त विवेचन देना आवश्यक प्रतीत होता है।

सीमित मत-प्रथा—इसके अनुसार राज्य को बहु सदस्य वाले निर्वाचन क्षेत्रो म बाटा जाता है। प्रत्येक क्षेत्र से 3, 4 या अधिक सदस्य चुने जाते हैं। प्रत्येक मतदाता को सीमित मत देने का अधिकार मतदाताओ को दिया जा सकता है। मतदाता किसी भी उम्मीदवार को एक से होते हैं। उदाहरण के लिए तीन सदस्य वाले क्षेत्र से दो, पाच सदस्य वाले क्षेत्र से तीन मत देने अधिक मत नही दे सकते। इस विधि के अन्तगत अल्पसख्यको के एक या अधिक प्रतिनिधि चुने जा सकते हैं। परन्तु इससे पूर्ण सन्तोष बहुसख्यक व अल्पसख्यक दलो म से किसी को भी नही होता क्योकि इनम केवल दो बडे दलो को तो प्रतिनिधित्व मिलता है, किन्तु छोटे छोटे दलो का प्रतिनिधित्व नही हो पाता।

एकत्र मत प्रथा—अल्पसख्यको की दृष्टि स उपर्युक्त विधि का मुख्य दोष यह है कि उन्हे अपने मतो का विभाजन करना पडता है, अत कभी कभी ऐसा होता है कि वे अपना एक भी प्रतिनिधित्व नही भेज पाते। इस दोष को दूर करने के लिए एकत्र मत प्रथा का चलन हुआ। इसके अनुसार कई सदस्य वाले निर्वाचन क्षेत्र म मतदाता को उतने ही मत दने का अधिकार होता है, जितने उस क्षेत्र से सदस्य चुने जाने होते हैं। साथ ही मतदाता को यह अधिकार भी रहता है कि वह स्वेच्छानुसार अपने मतो को एक या अधिक उम्मीदवारो म जिस प्रकार चाहे बाँट सकता है। इसम अल्पसख्यक वग या दल अपने प्रतिनिधियो का चुनाव कराने म अधिक सफल होते हैं, क्योकि उनके समथक अपने मतो को एक या दो उम्मीदवारो के पक्ष म एकत्रित कर सकते हैं। इसका सबसे बडा गुण यह है कि इसम अल्पसख्यको के प्रतिनिधियो के चुने जाने की अधिक सम्भावना रहती है, परन्तु इसका दोष यह है कि इसके फलस्वरूप विभिन्न दलो का प्रभाव बढ जाता है।

दूसरे मतदान की प्रणाली—इसका तात्पय यह है कि यदि चुनाव म तीन या अधिक उम्मीदवार हो और उनम से किसी एक को भी चुनाव म पूर्ण बहुमत प्राप्त न हो तो प्रथम दो उम्मीदवारो को छोडकर शेष नाम को हटा दिया जाता है और मतदाताओ से उन दो उम्मीदवारो म स एक को फिर से मतदान द्वारा चुनने को कहा जाता है। इसम बहुसख्यक मतदाताओ को उम्मीदवार तो चुना जाता है, परन्तु अल्पसख्यको को तब तक सफलता नही मिलती जब तक कि कुछ या सभी अल्पसख्यक दल मिलकर अपना एक गुट न बना लें। इसका मुख्य दोष यह है कि दूसरी बार चुनाव किया जाता है, जिसके कारण अनावश्यक व्यय और परेशानी बढती है।

वैकल्पिक मत की प्रणाली—इसम निर्वाचन क्षेत्र एक ही सदस्य वाला रहता है, परन्तु चुनाव के लिए पूर्ण बहुमत आवश्यक होता है इसके अनुसार मतदाता मत तो एक ही देता है, किन्तु उस अपनी पहली, दूसरी और तीसरी पसन्द बताने का अधिकार होता है अर्थात् यदि उसकी पहली पसन्द वाला उम्मीदवार न चुना जाय तो उसका मत दूसरी या तीसरी पसन्द के उम्मीदवार को पड जायगा। यदि मतदान के बाद, किसी उम्मीदवार को पूर्ण बहुमत प्राप्त हो जाता है, तो उसे निर्वाचित घोषित कर दिया जाता है। परन्तु यदि किसी भी उम्मीदवार को पूर्ण बहुमत प्राप्त नही होता, तो सबस कम मत प्राप्त उम्मीदवार का नाम हटा दिया है और उसके मतो को अन्य उम्मीदवारो के पक्ष मे दूसरी पसन्द के अनुसार बाट दिया

प्रतिनिधित्व पद्धति बेल्जियम की है। वहाँ पर मतदाता को अनेक दलीय सूचियों में से एक का छाँटना होता है, परन्तु इसके साथ ही वह सूची के भीतर अपनी पसन्द के संकेत दे सकता है। यह बात उल्लेखनीय है कि बहुत समय तक एक ही दल को सुदृढ़ और स्थायी बहुमत प्राप्त होता रहा, परन्तु हाल का अनुभव यह बताता है कि बेल्जियम ने भी मन्त्रिमण्डलों की अस्थिरता का अनुभव किया है, जिसके कारण अब वहाँ के निवासियों का इस पद्धति में उत्साह कम हो गया है। बेल्जियम की पद्धति से ही काफी मिलती-जुलती उच्च योजना थी, जिसे वहाँ पर 1917 में अंगीकृत किया गया था। परन्तु नीदरलण्ड में सम्पूर्ण देश को एक ही निर्वाचन-क्षेत्र बनाया गया, उस पद्धति से भी सुदृढ़ दलीय मन्त्रिमण्डल था, अतः जनमत उससे सन्तुष्ट रहा। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि बेल्जियम और हालैण्ड दोनों ही देशों में संसद शासन पद्धति है। ऐसा प्रतीत होता है कि वहाँ पर दलों की संख्या में वृद्धि नहीं हुई, कदाचित् इसी कारण कि इस प्रकार की शासन-पद्धति छोटे दलों को अप्रभावी बना देती है।

स्केन्डिनेविया के तीनों राजतन्त्रों स्वीडन, नार्वे और डेनमार्क में भी संसद पद्धति के साथ आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति को अपनाया हुआ है। उनकी पद्धतियाँ एक दूसरे से भिन्न हैं, परन्तु नार्वे और स्वीडन में सूची पद्धति है, जबकि डेनमार्क में एक-सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों के साथ आनुपातिक प्रतिनिधित्व को मिलाकर एक पेचीदा योजना को लागू करने का प्रयत्न किया गया है। स्वीडन और नार्वे में तो मतदाता को सूचियों में दिये गये उम्मीदवारों की छाँट में पूरी आवाज प्राप्त है। कुछ समय से स्वीडन की निर्वाचन-पद्धति की काफी आलोचना हो रही है और एक-सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों की पद्धति को फिर से अपनाये जाने की माँग की जा रही है। परन्तु इन तीनों देशों में से किसी में भी ऐसी सम्भावना नहीं है कि आनुपातिक पद्धति को हटाकर कोई अन्य पद्धति अपनायी जायेगी।

स्विटजरलण्ड में संघात्मक संविधान है, और वहाँ पर संसद कार्यपालिका भी नहीं है। 1919 में ही संघीय विधानमण्डल के निचले सदन के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व को अपनाया गया, अतः वहाँ इस पद्धति का अनुभव अधिक लम्बे काल का नहीं है। स्विस पद्धति सूची का ही एक भिन्न रूप है, जिसे मतदाता को अपनी सूची बनाने में पूर्ण स्वतन्त्रता देकर अधिक लचीला बनाया गया है। वहाँ पर यह भी अवसर प्रदान किया गया है कि मतदाता उसी उम्मीदवार के लिए दो बार मत दे सकता है। स्विस पद्धति के परिणामस्वरूप विधायी निकाय में समुदाय के विभिन्न मतों का प्रायः ठीक ठीक प्रतिनिधित्व हो जाता है। यद्यपि वहाँ दलों की संख्या काफी बडी है, किन्तु उसका वहाँ की कार्यपालिका की स्थिरता पर कोई कुप्रभाव नहीं पडता। जबकि स्विट्जरलैण्ड एक ऐसा देश है जो राजनीति में अतिवाद से दूर है, आयरलण्ड अपनी राजनीतिक दल बन्दियों के हिंसापूर्ण स्वरूप के लिए विख्यात है। आयरलण्ड के गणतन्त्र ने आनुपातिक प्रतिनिधित्व की एकल संक्रमणीय मतदान-पद्धति को अपनाया हुआ है। प्रत्येक मतदाता का केवल एक ही मत होता है, परन्तु यदि किसी उम्मीदवार को अपने कोटे से अधिक प्रथम पसन्द के मत मिल जाते हैं, तो उसके अतिरिक्त मत-पत्रों को दूसरी पसन्द के अनुसार अन्य उम्मीदवारों में बाँट दिया जाता है। यद्यपि राजनीतिक दल अपने समर्थकों को अनुदेश देते हैं कि वे किस उम्मीदवार को प्रथम स्थान दें, फिर भी साधारणतया वे इसी बात पर बल देते हैं कि मतदाता उनकी सूचियों में सम्मिलित उम्मीदवारों के लिए ही मतदान करें। काफी समय तक वहाँ भी मन्त्रिमण्डल स्थिर रहे, किन्तु 1948 के चुनाव मे आयरलैण्ड को अल्पमत प्राप्त दल और मिले जुले दलों के मन्त्रि मण्डल के बीच चुनाव करना पडा।

निष्कर्ष—आनुपातिक प्रतिनिधित्व के कुछ भी गुण हों, जहाँ तक उस आनुपातिक योजना का सम्बन्ध है जोकि सम्पूर्ण देश को एक ही निर्वाचन क्षेत्र बनाती है और अपने अनुपात का

सूची पद्धति—इसमे निर्वाचन क्षेत्र बहुत बडे आकार के होते है। चुनाव म भाग लेने वाले उम्मीदवारा को विभिन दलो की सूचिया म रखा जाता है, प्रत्येक दल के उम्मीदवारा की एक सूची होती है। प्रत्येक मतदाता को यह अधिकार होता है कि जितने प्रतिनिधि उस क्षेत्र मे चुने जाने है, उतने मत दे सके, किन्तु किसी भी उम्मीदवार को यह एक से अधिक मत नही दे सकता। निर्वाचन का परिणाम निकालने के लिए पहले कोटा निश्चित किया जाता है, कोटा निकालने का ढग वही होता है, जैसा कि उपयुक्त प्रणाली मे। मान लीजिए, किसी निर्वाचन क्षेत्र से आठ प्रतिनिधि चुने जान हैं, कुल डाले गये मतो की की सख्या 72,000 है, तो कोटा 8001 हुआ। उम्मीदवारा की विभिन्न सूचिया के पक्ष म मान लीजिए मत इस प्रकार आय है—

काग्रेस	34,000
प्रजासमाजवादी दल	17,000
साम्यवादी दल	10,000
जनसघ	11,000
	72,000

अत विभिन दलो के निर्वाचित सदस्यो की सख्या क्रमानुसार 4, 2, 1, 1 होगी। किसी दल की सूची म से किन उम्मीदवारो को निर्वाचित माना जाये, इसका निर्णय इस आधार पर होगा कि उस सूची म किन उम्मीदवारो को सबसे अधिक मत प्राप्त हुए हैं। इस प्रणाली का चलन फ्रास तथा कुछ अन्य यूरोपियन देशा मे पाया जाता है। इस पद्धति के अ तगत मतदाताओ को दलो द्वारा प्रस्तुत उम्मीदवारा की सूचियो के बीच छाँट करनी होती है। पश्चिम जमनी के व डेस्टेग मे, जहाँ एक मिश्रित प्रणाली का प्रयोग होता है, आधे सदस्य एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रा का प्रतिनिधित्व करते हैं, जबकि शेष आधे दला द्वारा नामजद व्यक्ति होते है। सूची पद्धति के दो रूप हो सकते हैं (1) बधी सूची—मतदाता को अपने दल द्वारा छाटे गये उम्मीदवारो के बीच किसी प्रकार की पस द करने का अधिकार नही होता। (2) स्वतन्त्र सूची—अपने दल द्वारा नामजद उम्मीदवारो के बीच मतदाता अपनी पसन्द को दिखा सकता है। कुछ राज्यो म तो वह अतिरिक्त नाम भी लिख सकता है।

आनुपातिक पद्धति के मुख्य गुण अग्रलिखित है (1) इसमे प्रतिनिधित्व न्यायपूण होता है, क्योकि बहुसख्यक व अल्पसख्यक मता अथवा दला को उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है। (2) इसम कोई मत व्यर्थ नही जाता अत प्रतिनिधित्व अधिक यथाथ और जनतन्त्रात्मक होता है, क्योकि प्रत्येक मतदाता के मत की गणना का निर्वाचन फल पर प्रभाव पडता है। (3) इसके फलस्वरूप विधान सभा जनमत का सच्चा प्रतिनिधित्व करती है, क्योकि इसमे सभी दला को शासन काय मे अपनी बात कहने का अवसर मिलता है। (4) यह मतदाता को छाट की पूण स्वतन्त्रता प्रदान करता है। उसे अपनी पस द दिखाने मे खूब अच्छी तरह सोचना पडता है, अतएव यह राजनीतिक शिक्षा का एक उत्तम साधन है। पर तु प्रत्येक विधि मे गुण और दोष दोना ही होते है। इस पद्धति के मुख्य दोष य हैं—(1) कुछ व्यक्तियो का कथन है कि यह पद्धति अत्यधिक पचीदा है, अत मतदाता दलो के एजेण्टो के हाथ म फँस जाते है। इस पद्धति को सफल बनाने के लिए मतदाता शिक्षित होने चाहियें। (2) विधायिका म विभिन दला का प्रतिनिधित्व होता है, फलस्वरूप स्थायी मन्त्रिमण्डल का निर्माण और स्थायी रहना बहुत कठिन हो जाता है। (3) अति विस्तृत निर्वाचन क्षेत्रो के कारण प्रतिनिधियो और मतदाताओ के बीच निकट सम्पर्क नही रहता।

आनुपातिक प्रतिनिधित्व व्यवहार मे—राष्ट्रीय निर्वाचन के लिए सबसे पुरानी आनुपातिक

यह भी कहना उचित होगा कि कठोर दलीय अनुशासन के कारण जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि स्वतन्त्र रूप से अपने मत का प्रयोग नहीं कर सकते। इन कारणों से तथा प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के सिद्धान्त को यथासम्भव क्रियात्मक रूप देने के लिए आजकल प्रत्यक्ष विधि निर्माण का समर्थन किया जाता है। प्रत्यक्ष विधि निर्माण की प्रमुख विधियों का संक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है—

जन निर्णय (Referendum)—जन निर्णय अथवा लोक निर्णय का तात्पर्य उस साधन से है जिसके द्वारा उन विधेयकों अथवा सांविधानिक संशोधनों पर जनता की निर्णायक सम्मति ली जाती है जिन पर विधायिका में वाद विवाद हो चुका होता है। यदि निर्वाचकगण एक निश्चित बहुमत द्वारा उसको स्वीकार कर लेते हैं तो वह कानून बन जाता है, अन्यथा नहीं। इसका आधारभूत विचार यह है कि कानून जनता की इच्छा की अभिव्यक्ति होती है, इसलिये विधायिका द्वारा पारित कानून पर जनता की निर्णायक स्वीकृति प्राप्त करना आवश्यक है। जन निर्णय दो प्रकार का होता है—अनिवार्य और ऐच्छिक (वैकल्पिक)। अनिवार्य जन निर्णय के अन्तर्गत विधायिका द्वारा पारित प्रत्येक कानून जनता की सम्मति जानने के लिए उसके सामने अनिवार्य रूप से पेश किया जाता है। ऐच्छिक जन निर्णय में प्रत्येक कानून को जनता के सामने पेश नहीं किया जाता, वरन् वे ही कानून जनता के निर्णय हेतु उसके सामने रखे जाते हैं जिनके लिए निर्वाचक एक निश्चित संख्या में मतदाताओं के हस्ताक्षरों के साथ प्रार्थना करते हैं। यह संख्या संविधान में दी हुई होती है।

जन निर्णय का प्रयोग सांविधानिक संशोधनों के सम्बन्ध में आस्ट्रेलिया, डेनमार्क, आयरलैण्ड, फ्रांस, इटली व स्विटजरलैण्ड तथा अमरीकी संघ के राज्यों में किया जाता है। जर्मनी के वेमर गणतन्त्र में भी इसके लिए व्यवस्था थी, परन्तु जर्मन संघात्मक गणतन्त्र के आधारभूत कानून (Basic Law of 1949) में इसका एकमात्र हवाला धारा 29 में दिया गया है, जिसका सम्बन्ध प्रदेशों की सीमाओं में परिवर्तन से है। आजकल साधारण विधायन के सम्बन्ध में जन निर्णय का प्रयोग अनेक राज्यों के सांविधानिक व्यवहार का अंग है। इटली में जन निर्णय का प्रयोग सर्वप्रथम 1946 में राजतन्त्र को रखने या न रखने के प्रश्न पर किया गया, जिसके फलस्वरूप वहाँ गणतन्त्रात्मक संविधान बना। इटली के गणतन्त्र में 1947 के संविधान की धारा 75 के अनुसार यदि पाँच लाख मतदाता या पाँच प्रादेशिक परिषदें माँग करें तो वित्तीय कानूनों और सन्धियों को छोड़कर किसी कानून के पूर्ण अथवा आंशिक निरसन के लिए जन निर्णय किया जाता है। फ्रांस में 1958 के संविधान के अन्तर्गत, जन निर्णय निम्न रूप में स्वीकार किया गया है—

संसदीय सत्रों के दौरान सरकार के प्रस्ताव या दोनों एसेम्बलियों के संयुक्त प्रस्ताव पर (जिसे सरकारी गजट में प्रकाशित कर दिया गया हो) गणतन्त्र का राष्ट्रपति किसी भी ऐसे विधेयक को जन निर्णय के लिए प्रस्तुत कर सकता है जिसका सम्बन्ध सरकारी प्राधिकरणों के संगठन से हो और जिसके लिए समुदाय के समझौते की आवश्यकता हो या किसी ऐसी सन्धि के पुष्टीकरण के लिए अधिकार देने की व्यवस्था करता हो, जो कि संविधान के विरुद्ध न होते हुए भी, वर्तमान संस्थाओं के कार्य सम्पादन को प्रभावित करता हो।

स्विटजरलैण्ड के संघीय शासन तथा केण्टनों के शासन में इसका व्यापक रूप से प्रयोग होता है और इसके दो प्रमुख रूप हैं—ऐच्छिक तथा अनिवार्य। अनिवार्य जन निर्णय की व्यवस्था 1948 के संघीय संविधान में ही सभी सांविधानिक परिवर्तनों के लिए थी, इस व्यवस्था को 1874 के संविधान में जारी रखा गया। अनिवार्य जन निर्णय ऐसे संशोधनों अथवा पूर्ण परिवर्तनों के लिए लागू है जिनका प्रस्ताव फेडरल एसम्बली रखती है। कोई भी संशोधन तभी वैध और प्रभावी होता है जबकि सम्पूर्ण संघ के भाग लेने वाले मतदाताओं तथा केण्टनों का बहुमत उसके पक्ष में हो। केण्टन और अर्द्ध केण्टन का मत उसके मतदाताओं के बहुमत से जाना जाता है (जो मतदाता

अपरिवर्तनशील दलीय सूचियों पर आधारित करती है, उसे संसद पद्धति के लिए दोषपूर्ण और असंगत पाया गया है। यदि आनुपातिक पद्धति को अपनाया जाता है, तो संसद शासन-पद्धति को यदि उसे उसके साथ अपनाया जाय, आनुपातिक प्रतिनिधित्व के फलस्वरूप राजनीतिक दलों में उत्पन्न होने वाली दशाओं के अनुरूप समायोजित करना आवश्यक है। यह पद्धति बेल्जियम, नीदरलण्डस, नार्वे, डेनमार्क, स्वीडन आदि बहुत छोटे देशों में ही सफलतापूर्वक चली है। जबकि इंग्लण्ड और संयुक्त राज्य अमरीका में आनुपातिक प्रतिनिधित्व के विरुद्ध जनमत जोरदार ही नहीं वरन् स्वस्थ भी है।

साम्प्रदायिक अथवा पृथक निर्वाचन पद्धति—अल्पसंख्यकों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्रदान करने के लिए भारत के विदेशी शासकों ने इस पद्धति को चलाया था, परन्तु उसका वास्तविक उद्देश्य भारतीयों को आपस में लड़ाना था। 'फूट डालो और शासन करो' वाली नीति के फल स्वरूप यह पद्धति चलाई गई थी और इसका अंतिम परिणाम देश के विभाजन में निकला। धर्म अथवा सम्प्रदाय के आधार पर विभिन्न अल्पसंख्यकों को अपने अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार मिला। इससे संकीर्ण स्वार्थों पर बल दिया गया और साम्प्रदायिक वैमनस्य अत्यधिक बढ़ा। प्रतिनिधि और निर्वाचक राष्ट्रीय समस्याओं को साम्प्रदायिक दृष्टिकोण से देखने लगे। यह प्रणाली गम्भीर दोषों से पूर्ण है यह बात अंग्रेज राजनीतिज्ञों ने मानी परन्तु फिर भी इस सिद्धान्त को क्रमश विस्तृत किया गया।

इस पद्धति के मुख्य दोष अग्रलिखित हैं (1) इन चुनावों का आधार प्रजातन्त्र के सिद्धान्त के विरुद्ध है, अन्य देशों में ऐसे उदाहरण नहीं मिलते। यह पद्धति वैसे भी इतिहास की शिक्षा के विरुद्ध है। (2) इस पद्धति के अन्तर्गत मतदाता अपने वर्गीय अथवा साम्प्रदायिक हितों को राष्ट्रीय हितों से बढ़कर महत्त्व देते हैं। (3) इसके फलस्वरूप साम्प्रदायिक वैमनस्य बढ़ता है और विभिन्न सम्प्रदायों के मतदाता एक दूसरे के विरोधी बन जाते हैं वे सच्चे अर्थ में नागरिक नहीं रह जाते। (4) अल्पसंख्यक सम्प्रदाय अपनी स्थिति से एक प्रकार से संतुष्ट रहता है और अपने अच्छे कार्यों व गुणों के द्वारा बहुसंख्यक समुदाय की बराबरी करने का प्रयत्न नहीं करता। (5) बहुसंख्यक समुदाय भी ऐसी स्थिति में अल्पसंख्यकों के प्रति अपना कोई अन्य दायित्व अनुभव नहीं करता।[1]

4 प्रत्यक्ष विधि निर्माण

कुछ समय से जनता का प्रतिनिधि संस्थाओं में विश्वास कम हो रहा है और जनता द्वारा स्वयं विधि निर्माण हो, ऐसी प्रवृत्ति देखने में आती है। इसके दो मुख्य कारण हैं प्रथम जनता यह समझने लगी है कि राजसत्ता जनता में निहित है और राजसत्ता को वास्तविक रूप में व्यक्त करने के लिए यह आवश्यक समझा जाने लगा है कि जनता कानूनों पर स्वीकृति दे या उनके निर्माण में प्रत्यक्ष भाग ले। दूसरा कारण विधायिकाओं के कार्यों से निराशा और उनमें अविश्वास का बढ़ना है। यह सच है कि विधान सभाओं में राजनीतिक दलों की प्रधानता रहती है, अतः वे वास्तविक जन हित का पूरा ध्यान नहीं रख पाती। अधिकतर देशों में वर्गीय हितों को बढ़ाने के लिए पक्षपात-पूर्ण कानून बनाये जाते हैं। ऐसे कानून सामान्य इच्छा पर आधारित नहीं कहे जा सकते। यही

[1] They are opposed to the teaching of history. Division by creeds and classes means the creation of political camps organised against each other and teaches men to think *as partisans* and not *as citizens*. A minority which is given special representation owing to its weak and backward state is positively encouraged to settle down into a feeling of satisfied security. It is under no inducement to make good the ground which it has lost compared with the stronger majority. —*Montford Report* 1918

जनता को कानूनी प्रस्तावों म पहल करन का अधिकार देता है। यह माना जाता है कि नागरिकों को अपनी इच्छा के कानूनों के लिए विधायिका म प्रस्ताव रखन का अधिकार भी होना चाहिए। इसके अन्तगत संविधान द्वारा निश्चित संख्या म नागरिकों को चाहे कानून क लिए प्रार्थना करन या स्वय उसका मसविदा तयार करके उस पर कानून बनान की प्राथना करन का अधिकार होता है। जब विधायिका उस कानून को पास कर देती है तो यह कानून पुन एक बार जनता का निणय जानन के लिए नागरिकों के सामन रखा जाता है।

संयुक्त राज्य अमरीका म, प्रस्तावाधिकार का प्रयोग बहुत कम संघा तरित राज्य करते हैं। कुछ राज्यों म प्रस्तावाधिकार का प्रयोग साधारण विधायन के लिए किया जाता है और कुछ दूसरो मे सांविधानिक संशोधनों क लिए। प्रस्ताव रखन क लिए नागरिकों की संख्या राज्यों म भिन्न भिन्न है, जो पूण निर्वाचक मण्डल के 5 स लेकर 15 प्रतिशत तक है, जबकि कुछ राज्यों म इस प्रकार की संख्या नियत कर दी गयी है। जिन राज्यों म प्रस्तावाधिकार का प्रयोग किया जाता है, वहाँ पर सांविधानिक अथवा साधारण कानूनों क लिए प्रक्रिया म अन्तर नहीं है। वमर गणतन्त्र के अन्तगत जमनी म एक दिलचस्प अनुच्छेद द्वारा प्रस्तावाधिकार क सिद्धान्त की व्यवस्था की गयी थी। उसम कहा गया था कि यदि मताधिकार प्राप्त व्यक्तियों की 1/10 संख्या किसी ऐसे विधेयक को पश करन की प्राथना करे जिसका कि पूण प्रारूप दिया गया हो, तो सरकार के लिए यह आवश्यक होगा कि वह उसे लोकप्रिय सदन म प्रस्तुत करे। इटली क संविधान म भी प्रस्तावाधिकार हेतु एक समान धारा की व्यवस्था की गयी है। कोई भी 50,000 निर्वाचक प्रस्तावित विधेयक का प्रारूप तैयार कर, विधायिका के विचाराथ प्रस्तुत कर सकते हैं।

स्विट्जरलण्ड म 50,000 मतदाताओं के हस्ताक्षरों से संविधान म पूण परिवतन का प्रस्ताव किया जाय तो उस पर वही कायवाही होती है जो कि तब होती है जबकि फेडरल एसेम्बली का एक सदन पूण परिवतन का प्रस्ताव रखे और दूसरा उसका विरोध कर। यदि विधायिका म किसी विशिष्ट संशोधन की माग की जाये तो आगे कि कायवाही इस पर निभर करेगी कि प्रस्तावित संशोधन को कानूनी रूप म प्रस्तुत किया गया है अथवा साधारण शब्दों म। यदि कानूनी रूप म प्रस्ताव पश किया गया है और फेडरल एसेम्बली या उसका एक सदन उस स्वीकार कर लेता है तो उस पर शीघ्र ही जन निणय कराया जाता है और मतदाताओं तथा केटनों का बहुमत पक्ष म होने पर वह प्रभावी हो जाता है। परन्तु यदि फेडरल एसेम्बली उस अस्वीकार करे तो वह जनता से उसे गिरान की माँग कर सकती है या उसके साथ अपनी ओर स वैकल्पिक प्रस्ताव जन निणय के लिए प्रस्तुत कर सकती है और जन निणय के अनुसार काय होता है। जब जनता द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव साधारण भाषा म होता है तो एसेम्बली उसके सम्बन्ध म भी दो प्रकार से कायवाही कर सकती है। यदि वह प्रस्ताविक संशोधन की नीति स सहमत है तो उसके अनुसार संशोधन का प्रारूप तैयार कर उस पर जनता व केटनों का निणय प्राप्त करना पडता है। यदि एसेम्बली प्रस्तावित संशोधन स सहमत नहीं तो उसे जनता का इस प्रश्न पर निणय प्राप्त करना होता है कि प्रस्तावित संशोधन के बारे म आगे कायवाही की जाय या नहीं। यदि जनता का निणय उसक पक्ष मे होता है तो एसेम्बली को उसके अनुसार संशोधन तयार कर उस पर जनता व केन्टनों का मत प्राप्त करना आवश्यक है।

प्रतिनिधि प्रत्यावतन (Recall)—प्रत्यावतन के द्वारा एक निश्चित संख्या म मतदाता किसी निर्वाचित कमचारी या ऐसे प्रतिनिधि को पदच्युत कराने की प्राथना करते है जिनके काय से उनको सन्तोष प्राप्त न हो। प्राथना पर मतदान होता है, यदि बहुमत प्राथना को स्वीकार करता है तो वह कमचारी या प्रतिनिधि पदच्युत हो जाता है और शेष अवधि क लिए रिक्त पद को भरन के हेतु नया चुनाव कराया जाता है। इसका प्रयोग कुछ अमरीकी राज्यो व सोवियत संघ म किया जाता है।

जन निणय मे भाग लेते है) और इस सम्ब ध मे अद्ध के टन का आधा मत होता है । पूण परिवतन के लिए भी उपर्युक्त प्रक्रिया लागू होती है, जब तक कि फेडरल एसेम्बली के दोना सदनो म मतभेद न हो । जब एक सदन पूण परिवतन के पक्ष मे हो और दूसरा उसका विरोध करे, तो जन निणय इस प्रश्न पर कराया जाता है कि परिवतन के लिए कायवाही आगे बढ़े या नही । इस जन निणय मे के टनो का मत नही लिया जाता । यदि जन-निणय इस पक्ष मे हो कि परिवतन किया जाय तो फेडरल एसेम्बली को सशोधित सविधान का प्रारूप तैयार करके जन निणय क लिए प्रस्तुत करना आवश्यक है । उसकी स्वीकृति के लिए उसके पक्ष मे मतदाताओ तथा के टना का बहुमत होना चाहिए । इसी प्रकार के टनो म उनके सविधानो व उनम सशोधना के लिए जन निणय आवश्यक है क्योकि सघीय सविधान म ही प्राविधान है कि के टना के सविधान जनता द्वारा अनिवाय रूप से स्वीकृत होने चाहिएँ । आठ के टनो म सभी कानूना व प्रस्तावा के लिए भी अनिवाय जन निणय की व्यवस्था है ।

सभी सघीय कानूनो और ऐस प्रस्तावो के लिए, जिनका प्रभाव सभी पर पडने को हो और जिनके अ तगत अविलम्ब कायवाही आवश्यक न हो ऐच्छिक जन निणय की व्यवस्था है । ऐसा तभी हो सकता है जबकि कम से कम 30,000 नागरिक या आठ के टन ऐसी माग करें । सात के टना म नागरिका की विहित सख्या द्वारा माँग किये जाने पर कानूनो के लिए ऐच्छिक जन निणय की व्यवस्था है । तीन के टनो म कानूनो म इस आधार पर अ तर किया जाता है कि कुछ के लिए जन निणय अनिवाय है और दूसरा के लिए ऐच्छिक । एक के टन म कानूनो के लिए जन निणय की व्यवस्था नही है । जिन के टनो मे लडसजमीडी की व्यवस्था है, उनम जन निणय की आवश्यकता ही नही है । ऐस भी कुछ के टन है जिनम महत्त्वपूण वित्तीय मामला के लिए भी अनिवाय प्रशासनिक जन निणय की व्यवस्था है । इसके अनुसार यदि के टन की विधायिका द्वारा स्वीकृत व्यय की राशि एक निश्चित सीमा से बढ जाय तो उस पर जनता का मत प्राप्त किया जाता है ।

स्विटजरलैण्ड के कुछ के टनो मे जन निणय स भी बढकर प्रत्यक्ष विधि निर्माण की एक विधि और भी है । इन के टनो मे निर्वाचक वप मे एक बार खुले चरागाहो म एकत्रित होते हैं । वे अपनी सभाआ म कानूना को पास करते है करा पर स्वीकृति देते हैं और आगामी वप क लिए अपन कायपालिका अधिकारियो को चुनते है । इसके अतिरिक्त जन निणय से मिलती जुलती एक विधि और है, जिसे जनमत (plebiscite) कहते हैं । जनमत एक प्रकार का लोकप्रिय जन निणय है जिसका राजनीतिक उद्देश्य अथवा महत्त्वपूण प्रश्ना पर जनता का मत जानने के लिए प्रयोग किया जाता है । 1947 म भारत के विभाजन के सम्ब ध म पश्चिमोत्तर सीमाप्रा त तथा असम क सिलहट जिल म यह जानने के लिए जनमत कराया गया था कि वहाँ क निवासी भारत म रहना चाहते थे या पाकिस्तान मे सम्मिलित होना चाहते थे ।

प्रस्तावाधिकार (Initiative)—मुनरो व अयस्ट के शब्दो म 'प्रस्तावाधिकार वह व्यवस्था है, जिसक द्वारा मतदाताओ की एक विहित सख्या किसी कानून का प्रारूप तैयार कर यह माँग करे कि या तो उसे विधायिका स्वीकार कर ले अथवा उस पर जनता का मत प्राप्त करे ।[1] यह एक प्रकार स ऊपर वर्णित सस्था का पूरक है, क्योकि पहली सस्था क अनुसार विधायिका द्वारा पास किये गये सांविधानिक सशोधना एव कानूना पर जन निणय कराया जाता है तो प्रस्तावाधिकार

[1] By the right of initiative we understand the right of a definite number of voters to propose an amendment of the Constitution the drafting of a law or a single constitutional or legal ordinance and to demand popular vote upon it —Munro and Ayearst *The Governments of Europe* p 27

(उ) स्विटजरलैण्ड और अमरीकी राज्यो के अनुभव से पता चलता है कि अधिकतर मनुष्य जन निर्णय और प्रस्तावाधिकार मे दिलचस्पी नही लेते। इसका परिणाम यह होता है कि बहुधा कानून अल्पमत के द्वारा पास हो जाते हैं और इसलिए कानून मे जनता की वास्तविक इच्छा प्रतिबिम्बित नही हो पाती। मतदाताओ की इस उदासीनता का कारण यह है कि प्रतिदिन की मतदान सम्बन्धी परेशानी से वे तंग आ जाते हैं। इसके अतिरिक्त राजनीति जनसाधारण के लिए विशेष रूप से आकर्षक भी नही होती तथा साधारण मनुष्यो का अधिकांश समय जीविकोपार्जन मे व्यय हो जाता है और इसलिए राजनीतिक विषयो पर विचार करने के लिए उनके पास बहुत कम अवसर रहता है। (ऊ) इस कथन मे भी अधिक सत्य नही है कि प्रत्यक्ष विधि निर्माण के साधनो द्वारा जनसाधारण को अच्छी राजनीतिक शिक्षा मिल जाती है। जो बात साधारण निर्वाचन के विषय मे सत्य है, वही जन निर्णय या प्रस्तावाधिकार के विषय मे भी कही जा सकती है। इनके द्वारा उत्तेजना एवं भ्रष्टाचार फैलाने वाले लोगो को जनसाधारण के अज्ञान और भोलेपन से अनुचित लाभ उठाने का अवसर प्राप्त होता है। (ए) जन निर्णय और प्रस्तावाधिकार का प्रयोग विशालकाय देशो मे नही किया जा सकता, क्योंकि वहाँ पर इनके द्वारा कानून के निर्माण मे अवाछनीय विलम्ब होगा।

निष्कर्ष—यदि जन निर्णय का बहुधा प्रयोग किया जाय, तो उसका परिणाम कानूनो के लागू करने में ऐसी देरी करना होगा जो समाज को उनसे होने वाले लाभो से ही वंचित कर दे। दूसरा आरोप यह है कि घने औद्योगिक समुदाय मे जिन विभिन्न आवाजो को यह उठने का अवसर देगा, सम्भवतया वे एक दूसरे के विरुद्ध प्रभावहीन हो जायेंगी और इसका परिणाम प्रगतिशील विधायन को पूर्णतया रद्द करना होगा। इनके अतिरिक्त आधुनिक दशाओ मे विधायन इतना विशेषीकृत हो गया है कि अच्छी प्रकार से सूचना पाने वाला नागरिक भी सब विधेयको मे विस्तार की बातो को कठिनाई से ही समझ सकता है। यह बात भी ध्यान देने की है कि संविधान एक ऐसा आधारभूत कानून होता है जिसमे बहुत सोच समझ कर ही परिवर्तन किया जाना चाहिए। यदि उसमे ऐसे कानूनो को भर दिया जाय जिनके प्रारूप जनता द्वारा तैयार किये गये हो और जिन पर जनता का मत लिया गया हो तो उसका आवश्यक स्वरूप खो जायेगा और वह ऐसे प्राविधानो का समूह बन जायगा कि जिन्हे कार्यरूप न दिया जा सके।[1]

जहा तक प्रत्यावर्तन का सम्बन्ध है, ऐसे उदाहरण है कि संयुक्त राज्य अमरीका के कुछ राज्यो मे इसका सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है। परन्तु इसके विरोधी यह कहते हैं कि यह सरकारी अधिकारियो मे एक भय और दासता की भावना को पैदा करने वाला है। यदि इसका प्रयोग विधायको के लिए किया जाय तो यह उन्हे सच्चे अर्थ मे प्रतिनिधि से केवल डेलीगेट मे बदलेगा और उसे भ्रष्ट व चालाक गुट के अनुचित आक्रमणो का शिकार बना देगा, जिसके परिणामस्वरूप सार्वजनिक भावना से प्रेरित व्यक्ति सार्वजनिक जीवन से निकल जायेंगे। यदि इसे कार्यपालिका अधिकारियो के बारे मे लागू किया जाय, तो इसकी प्रवृत्ति स्पष्टत उनकी सत्ता को क्षीण बनाने की रहेगी और यह श्रेष्ठ व्यक्तियो को सार्वजनिक पदो पर आने से रोकेगा। यदि इसे न्यायाधीश के लिए लागू किया जाय तो यह उन्हे जनता की सनक का शिकार बनायेगा और उनके लिए कार्यकाल की सुरक्षा को नष्ट करेगा, जो कि राज्य के हित मे आवश्यक है। भविष्य मे कुछ भी हो, अतीत मे रिकार्ड सराहनीय रहा है। इस रिकार्ड से निर्वाचक मण्डल की स्थिर अभिरुचि, मतदान मे भाग लेने वालो की बुद्धि और सावधानी व साधारण समझ पर आधारित निर्णयो का पता लगता है।[2]

---

[1] Strong C F *Modern Political Constitutions* pp 230–31
[2] Shotwell J T (ed) *Governments of Continental Europe* p 345

प्रत्यक्ष विधि निर्माण के गुण—ये अग्रलिखित है—(1) इसके द्वारा लोकप्रिय राजसत्ता के विचार को व्यावहारिक रूप दिया जाता है। प्रस्तावाधिकार के द्वारा जनता स्वय चाहे कानून का प्रस्ताव रखती है और जन निणय के द्वारा विधायिका द्वारा पास किये गये कानून पर अपनी स्वीकृति देती है। इस प्रकार अनुचित विधेयको को कानून बनाने से रोका जाता है और उचित एव चाह विधेयको को कानून का रूप दिया जाता है। (2) प्रत्यक्ष विधि निर्माण द्वारा जो कानून पास होते है उन पर जनता की स्वीकृति होती है। अत उनका इच्छापूवक पालन किया जाता है। इस प्रकार इन कानूनो के पालन द्वारा देश-भक्ति की भावना को प्रोत्साहन एव बल मिलता है। (3) इन साधना के द्वारा जनता की राजनीतिक शिक्षा होती है। इनके अभाव मे नागरिको को चार या पाच वष के पश्चात् केवल निवाचन काल मे ही देश की महत्त्वपूण तथा राजनीतिक समस्याओ पर विचार करने का अवसर प्राप्त होता है। (4) विधायिका के सदस्य साधारण निर्वाचन समाप्त होने के कुछ समय पश्चात् लोकमत से दूर तथा उदासीन हो जाते हैं। जन निणय और प्रस्तावाधिकार विधायिका को सदा लोकमत के घनिष्ठ सम्पक मे रखते है। (5) साधारण निर्वाचन के समय मतदाता लुभावने नारो के प्रवाह म बह जात है और नीति विषयक मामलो पर गम्भीरतापूवक विचार नही कर पाते। इसके अतिरिक्त साधारण निर्वाचन के समय एक साथ अनेक समस्याये तथा विषय एक दूसरे स मिले जुले रहते है, इस कारण से भी साधारण नागरिक उनको पूणतया नही समझ पाते। पर तु जन निणय और प्रस्तावाधिकार का प्रयोग करत समय उनके सामने केवल एक विशेष विषय होता है। अत उन पर वे लोग गम्भीरतापूवक विचार कर सकते है। (6) विधायिका के सदस्यो को घूस आदि देकर पूजीपति तथा अ य लोग भ्रष्ट कर सकते हैं और सावजनिक हित की अवहेलना करके व्यक्तिगत अथवा वर्गीय हितो को पूरा कर सकते है। पर तु प्रत्यक्ष विधि निर्माण की व्यवस्था म ऐसा करना सम्भव नही है। (7) प्रत्यक्ष विधि निर्माण क ये साधन विधायिका के दोना सदनो के बीच गतिरोध को दूर करने मे सफल सिद्ध हुए है। आस्ट्रेलिया इसका उदाहरण है। (8) दुष्परिवतनीय सविधान वाले देशो म प्रस्तावाधिकार का एक महत्त्वपूण लाभ यह होता है कि इसके द्वारा सविधान का सशोधन सरलता से हो जाता है जबकि विधायिका को ऐसा करने मे अनेक कठिनाइयो का सामना करना पडता है।

दोष—प्रत्यक्ष विधि निर्माण भी दोषरहित नही है, इसके मुख्य दोष इस प्रकार है (अ) इसके कारण विधायिका का गौरव नष्ट हो जाता है और परिणामस्वरूप वह अनुत्तरदायी हो जाती है, क्योकि उसे यह ध्यान रहता है कि कानून का पास होना या न होना अ तिम रूप म नागरिको की ही इच्छा पर निभर करता है। इस प्रकार विधायिका अपने मुख्य काय विधि निर्माण के प्रति उदासीन हो जाती है। (आ) कानून का निमाण करना विशेषज्ञो का काय होता है। साधारण मनुष्यो म ऐसी योग्यता नही होती कि व आधुनिक काल की जटिल, आर्थिक एव राजनीतिक समस्याओ का समझ सके। अनेक पर राष्ट्र नीति और वित्तीय नीति सम्ब धी समस्यायें ऐसी होती हैं जिनको शिक्षित मनुष्य भी भली प्रकार नही समझ पाते तो फिर साधारण मनुष्यो का तो कहना ही क्या। इसलिए प्रत्यक्ष विधि निर्माण के द्वारा बहुधा दोषपूण कानून, जिस पर यथोचित विचार नही किया जाता, पास हो जाते है। (इ) जन निणय और प्रस्तावाधिकार म मतदाताओ का केवल हा' या नही' कहने स काय पूरा नही हो जाता। (ई) यह कथन भी अधिक सारपूण नही है कि प्रत्यक्ष विधि निर्माण द्वारा पास किय गय कानूनो का अपेक्षाकृत अच्छी तरह पालन किया जाता है। यदि जन निणय म मतदाता 51 प्रतिशत बहुमत से किसी कानून को पास कर देते है तो 49 प्रतिशत मतदाता उस कानून के उस समय स अधिक विरोधी बन जाते है जबकि वही कानून केवल प्रतिनिधि विधायिका क द्वारा ही पास किया गया होता है।

अठारहवाँ अध्याय

विभिन्न राज्यो में निर्वाचन-पद्धतियाँ

ाज्य अमरीका मे राष्ट्रपति का निर्वाचन

ाधानिक प्राविधान—सविधान निर्माण के समय राष्ट्रपति के निर्वाचन क सम्बन्ध म दो
) राष्ट्रपति का प्रत्यक्ष चुनाव हो, जिसे व्यावहारिक दृष्टि से असम्भव समझा गया
राष्ट्रपति का चुनाव काग्रेस करे, इसे अवाछनीय समझा गया । अतएव इस बात पर
ुआ कि राष्ट्रपति का चुनाव एव निर्वाचक मण्डल' करे, जसा कि सविधान की दूसरी
कहा गया है। इस मण्डल म प्रत्येक राज्य के निर्वाचको की सख्या उस राज्य के दो
ौर प्रतिनिधि सदन म प्रतिनिधियो के जोड क बराबर होती है। मौलिक पद्धति के
निर्वाचक मण्डल के सदस्यो का चुनाव अथवा उसकी छाँट प्रति चार वप बाद प्रत्यक
उस प्रकार से होती थी जसा कि वहाँ की विधायिका निर्देश दे । ये निर्वाचक अपने-अपने
म काग्रेस द्वारा नियत समय पर एकत्रित होते थे और गुप्त मत-पत्र द्वारा दो व्यक्तियो क
मतदान करते थे । ये मत-पत्र बाद म काग्रेस के पास भेजे जाते थे और उनकी गिनती दोनो
के समक्ष की जाती थी । जिस व्यक्ति को सबसे अधिक मत प्राप्त होते थे वह राष्ट्रपति
त होता था और जिसको उससे कम मत मिलते थे वह उप राष्ट्रपति घोषित होता था,
ु दोनो के लिए यह शत थी कि उनके मत आधे से अधिक हो। यदि किसी भी उम्मीदवार
बहुमत न मिलता था तो प्रतिनिधि-सदन सबसे अधिक मत पाने वाले उम्मीदवार को राष्ट्रपति
सकता था । सम मत प्राप्त होने की दशा म भी राष्ट्रपति चुने जान का निर्णायक प्रतिनिधि
ान ही होता था पर तु ऐसा करते समय प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधि का केवल एक सामूहिक मत
ता था ।

1800 मे एसा हुआ था कि दो उम्मीदवारो को सम मत प्राप्त हुए, अतएव यह प्रश्न
उठा कि कौन राष्ट्रपति बने और कौन उप राष्ट्रपति । सदन न उस वप इस प्रश्न का निणय किया
और उसके बाद सविधान मे बारहवाँ सशोधन भी किया गया। इस सशोधन के बाद प्रत्यक
निर्वाचक राष्टपति व उप राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारो के लिए पृथक पृथक् मत देता है। यदि
किसी उम्मीदवार को राष्ट्रपति पद के लिए निर्वाचको का बहुमत (अर्थात् आधे से अधिक) प्राप्त
नही होता तो प्रतिनिधि सदन सबसे अधिक मत पाने वाले तीन उम्मीदवारो मे से एक राष्ट्रपति
चुनता है, ऐसा करते समय प्रत्यक राज्य क प्रतिनिधियो का केवल एक ही मत होता है। ऐसे
ही यदि उप राष्ट्रपति पद के किसी उम्मीदवार को बहुमत प्राप्त नही होता, तो सबसे अधिक
मत पाने वाले दो उम्मीदवारो म स एक को सीनट उप राष्ट्रपति चुन लेती है।

मौलिक पद्धति मे राष्ट्रपति व उप राष्ट्रपति के निर्वाचको के विषय मे कोई विशिष्ट
उल्लेख नही था । 1845 के एक राष्ट्रीय कानून के अनुसार अब यह आवश्यक है कि चुनाव

अधिकतर विदेशी लेखको ने, जिनका प्रजात त्र म विश्वास रहा है, प्रत्यक्ष विधि निर्माण पद्धति की स्विट्जरलैण्ड मे सफलता को स्वीकार किया है। घोष के अनुसार तो प्रस्तावाधिकार व लोक निणय वह चूल है जिसके चारो ओर सम्पूण स्विस शासन पद्धति घूमती है।[1] स्विटजरलण्ड की बहुसस्यक जनता इस पद्धति से स तुष्ट है। ब्राइस और ब्रुक्स (R C Brooks) जैसे अमरीकी लेखको न यह माना है कि इस पद्धति के लाभ हानियो स कही अधिक ह। पर तु हे स हूवर के अनुसार लाड ब्राइस ने स्विटजरलैण्ड मे अपनी अ तिम यात्रा के अवसर पर मत प्रकट किया था कि आर्थिक सघर्षो के युग मे जन निणय व प्रस्तावाधिकार अधिक अनिश्चित अथवा शका के योग्य हो गये हैं। यह सच है कि स्विट्जरलैण्ड म इन सस्थाओ की सफलता के लिए उपयुक्त दशाएँ विद्यमान रही है। य सस्थाएँ छोटे आकार व कम जनसख्या वाा राज्यो के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है और स्विटजरलैण्ड इस दृष्टि से एक आदश राज्य है। साथ ही स्विटजरलैण्ड एक ऐसा राज्य है जहा दलीय भावना की प्रधानता नही है। इन सस्थाओ की सफलता के लिए स्विट्जरलैण्ड मे अ य ऐतिहासिक दशाए और जनता का चरित्र भी उत्तरदायी है। स्विस जाति को प्रत्यक्ष प्रजात त्र व स्वशासन की समस्याओ का सबस अधिक व्यावहारिक अनुभव प्राप्त है। उसम सामाजिक समता, देश-भक्ति और सावजनिक कत्तव्य पालन की भावनाएँ भी सुदृढ है। अ य राज्या म इन सस्थाओ का कायान्वित करने के अवश्य ही भिन्न परिणाम होते। वास्तव मे, जसा ब्राइस ने कहा है, स्विटजरलैण्ड म इन सस्थाओ का विकास स्वाभाविक है।[3] ब्युएल का भी यह मत है कि स्विटजरलैण्ड की शासन पद्धति म समझौता और सहनशीलता आवश्यक तत्त्व है। ऐसे राष्ट्र म जहा जनता पूण सिद्धा तो मे अधिक विश्वास करती हो अथवा जहा जनता का झुकाव सिद्धा ता पर अतिवादी वाद विवाद की ओर हो वहाँ स्विस-पद्धति सुचारु रूप स नही चल सकती।[4] स्विस सविधान म दलो क नाटकीय सघर्षा के लिए स्थान नही है, जैसा कि अ य देशो मे पाया जाता है और न ही वहाँ जनता के लिए किसी दूरगामी सुधार के पक्ष मे आ दोलन के लिए अवसर है कि तु इसमे स्थायी प्रशासन के लिए व्यवस्था है।

---

[1] Ghosh R C *The Government of the Swiss Republic* p 116

[2] Lord Bryce expressed the opinion on his last visit to Switzerland that the referendum and initiative had grown more problematic in an age of economic conflicts which even Switzerland had not been able to avoid —See Huber H, *How Swit erland is Government* p 29

[3] In Switzerland it is a natural growth racy of the soil There are institutions which like plants, flourish only on their own hillside and under their own sunshine —Bryce J *Modern Democracies* Vol I pp 453–54

[4] Buell R L (ed) *Democratic Governments of Europe* p 583

चुनाव-व्यय—संयुक्त राज्य अमरीका में चुनावों पर बहुत अधिक व्यय किया जाता है। 1952 के राष्ट्रपति चुनाव में लगभग 3 करोड़ डालर से ऊपर तो दोनों दलों ने व्यय किया और कुल व्यय 10 करोड़ डालर तक पहुँचा। परन्तु इस सम्बन्ध में ये बातें ध्यान देने की हैं—यदि चुनाव अभियान में प्रत्येक मतदाता को केवल एक पोस्टकार्ड भेजा जाय तो उसका डाक खर्च ही 10 लाख डालर होता है वास्तव में संयुक्त राज्य में 16 करोड़ जनता रहती है और देश का विस्तार बहुत अधिक है। इसके अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमरीका संसार का सबसे धनी देश है और वहाँ प्रत्येक काम पर काफी ऊँचा व्यय होता है। फिर भी चुनाव आन्दोलन में एक बुलेटिन निकलते हैं जो देश के व्यय में बचत पर जोर देते हैं। दलों को धन की बहुत बड़ी राशि धनी व्यक्तियों और कम्पनियों से प्राप्त होती है। इस सम्बन्ध में अब आवश्यक कानून बन गये हैं।

मतदान प्रक्रिया और मत गणना—जिस वर्ष राष्ट्रपति का निर्वाचन होता है, नवम्बर माह के प्रथम सोमवार के बाद वाले मंगलवार को संयुक्त राज्य अमरीका के लगभग 6 करोड़ मतदाता मतदान केन्द्रों पर राष्ट्रपतीय निर्वाचकों को चुनने के लिए जाते हैं। चुनाव से पूर्व प्रत्येक दल प्रत्येक राज्य के लिए अपने-अपने उम्मीदवारों की सूची (slate) निकाल देता है। 27 राज्यों में तो मत पत्रों पर उम्मीदवारों के नाम भी नहीं दिये जाते, उनके स्थान पर मत-पत्रों पर केवल दलों के राष्ट्रपति व उप राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारों के नाम लिखे रहते हैं इन्हें ही 'राष्ट्रपति लघु मत पत्र' (Presidential short ballot) कहते हैं। निर्वाचकों के चुनाव के बाद ही यह कहा जा सकता है कि किस दल के उम्मीदवार, राष्ट्रपति व उप राष्ट्रपति बनेंगे, किन्तु दोनों उच्च पदाधिकारियों के चुनाव हेतु निर्वाचक-गण संघीय कानून के अन्तर्गत दिसम्बर माह के किसी नियत दिन अपने-अपने राज्यों की राजधानियों में इकट्ठे होते हैं और मतदान करते हैं। निर्वाचक मण्डल के सदस्यों द्वारा डाले गये मतों का परिणाम सरकारी रूप से तब तक मान्य नहीं होता जब तक कि नई कांग्रेस जनवरी में एकत्रित हो, क्योंकि मत पत्रों की गिनती कांग्रेस के दोनों सदनों के सामने होती है। नवम्बर 1968 में राष्ट्रपति पद के लिए हुए चुनाव में मिस्टर रिचार्ड एम० निक्सन (रिपब्लिकन पार्टी) विजयी हुए। मिस्टर निक्सन को 302 निर्वाचक मत (electoral votes) प्राप्त हुए उनके प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी मिस्टर ह्यूबर्ट एच० हम्फ्री (डेमोक्रेटिक पार्टी) को 191 मत प्राप्त हुए और शेष मत मिस्टर वालस को मिले, जो तीसरी पार्टी के उम्मीदवार थे। तीनों उम्मीदवारों को क्रमशः 3,12 84,746, 3 09,48,634 और 98,20,996 लोकमत (popular votes) मिले।

निर्वाचन प्रक्रिया में दोष—निर्वाचक अपने अपने दल के उम्मीदवारों को मत देते हैं। इस पद्धति में ऐसा सम्भव है कि विजयी उम्मीदवार (अ) को मिले मत (electoral vote) दूसरे उम्मीदवार (ब) के पक्ष में जनता द्वारा डाले गये कुल मतों से कम हों। वर्तमान निर्वाचन पद्धति का गम्भीर दोष यह है कि किसी राज्य में जिस उम्मीदवार को जनता के मतों की सबसे अधिक संख्या प्राप्त होती है, उस राज्य के सभी निर्वाचकों के मत उसी उम्मीदवार को मिलते हैं। इसी से यह सम्भव है कि जीते हुए उम्मीदवार को जनता के मतों की अल्पसंख्या प्राप्त हुई हो, किन्तु उसे निर्वाचकों के मतों का बहुमत मिल जाय। जैसा निम्न तालिका से स्पष्ट है—

राज्य	जनता के मत		निर्वाचकों के मत	
	अ	ब	अ	ब
न्यूयार्क	5,100,000	3,000,000	45	0
पेंसिलवेनिया	900 000	3,400,000	0	32
कुल	6 000 000	6 400,000	45	32

नवम्बर मास के पहले सोमवार के बाद आने वाले मगलवार को हो (अर्थात् उस वष जबकि राष्ट्रपति का चुनाव होता है)। परन्तु जहाँ तक उनके चुनाव के ढग का प्रश्न है, इस सम्बन्ध मे कोई राष्ट्रव्यापी नियम नही बना है, क्योकि यह अधिकार प्रत्येक राज्य की विधायिका को प्राप्त है। 1792 म निर्वाचको का 9 राज्यो मे विधायिकाओ द्वारा चुनाव हुआ और केवल 5 राज्यो म जनता द्वारा परन्तु एक के बाद दूसरे राज्य म इनका चुनाव लोकप्रिय आधार पर होने लगा। अब सभी राज्यो मे निर्वाचको का चुनाव जनता द्वारा होता है। जनता निर्वाचको का चुनाव करते समय दलो के प्रतिनिधियो को मत देती है और दलीय आधार पर चुने गये निर्वाचक अपना मत दल के आदेशानुसार देते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि यद्यपि अब भी राष्ट्रपति का निर्वाचन अप्रत्यक्ष रूप से 535 निर्वाचको द्वारा होता है, किन्तु अब वह वास्तव मे जनता द्वारा निर्वाचित कार्यपालिका का अध्यक्ष (Plebiscitary executive) है। राष्ट्रपति के निर्वाचन की वतमान पद्धति के दो मुख्य चरण है—पहले, नामजदगी, और दूसरे, निर्वाचको का चुनाव तथा निर्वाचको द्वारा राष्ट्रपति का चुनाव। इन दोनो चरणो तथा अन्य ज्ञातव्य बातो का सक्षिप्त वणन यहाँ पर दिया जाता है।

राष्ट्रपति (व उप राष्ट्रपति) की नामजदगी—इन महत्त्वपूण पदो के लिए अपने अपने उम्मीदवारो की नामजदगी दोनो प्रमुख दल राष्ट्रीय सम्मेलनो मे करते है। सम्मेलन के लिए प्रतिनिधियो का चुनाव होता है, जिसके लिये दलो ने आवश्यक नियम बनाये हुए है। राज्यो म प्रतिनिधियो का चुनाव प्रत्यक्ष प्राइमरी द्वारा होता है और कुछ मे क्षेत्रीय अथवा राज्य सम्मेलनो द्वारा।

राष्ट्रीय सम्मेलन—सिवाय इसके कि राज्य कानून सम्मेलन के लिए प्रतिनिधियो की निर्वाचन पद्धति को विनियमित करते है, प्रत्येक दल यह निर्धारित करता है कि सम्मेलन की रचना किस प्रकार की होगी। सम्मेलन मे दल के नेता, पदाधिकारी, व्यापारी, वकील, पत्रकार, राज्यो के गवनर, वतमान तथा भूतकालीन सीनेटर, प्रतिनिधि सदन के सदस्य आदि भाग लेते है। सम्मेलन किसी बडे नगर के बडे हाल मे होता है, जिसे खूब सजाया जाता है। सम्मेलन की कायवाही का आरम्भ चार वष पूव हुए सम्मेलन के नियमानुसार प्रारम्भ होता है और सम्मेलन चार मुख्य समितिया नियुक्त करता है—(1) प्रमाणीकरण (credentials), (2) स्थायी सगठन, (3) नियम और कायक्रम, तथा (4) प्रस्ताव अथवा प्लेटफाम (platform)। ये समितियाँ अपनी रिपोट देती है और उन्हे सम्मेलन के सामने पेश किया जाता है। अन्त म उम्मीदवारो के नाम घोषित होते है। दोनो ही दलो के सम्मेलनो मे राष्ट्रपति व उप राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारो की नामजदगी की प्रणाली प्राय एक समान है।

चुनाव अभियान—नामजदगी की कायवाही के बाद शीघ्र ही प्रत्येक दल की नई राष्ट्रीय समिति की बैठक होती है और एक सभापति चुना जाता है। यही सभापति चुनाव अभियान का प्रबन्धक होता है, उसके निदेशन के अनुसार ही उप समितियाँ, सहायक समितियाँ नियुक्त की जाती है और एक कोषाध्यक्ष भी नियुक्त किया जाता है। दल की ओर से धन एकत्रित किया जाता है और पूव तथा पश्चिम के दो बडे नगरो म दो मुख्य कार्यालय खोले जाते है। दल की ओर से चुनाव पुस्तिका प्रकाशित की जाती है इसमे दल का कायक्रम, उम्मीदवारो का जीवन परिचय, उनके भाषणो के अश, दल के पक्ष म युक्तिया व आकडे दिये रहते है। यह पुस्तिका व्यापक रूप से वितरित की जाती है, और मतो के लिए अपील की जाती है। इस प्रकार अभियान आरम्भ होता है जो दिन बीतने पर जोरदार होता चला जाता है। साथ ही अन्य अधिकारियो मे चुनाव के लिए भी अभियान चलता है। चुनाव अभियान म छपे साहित्य, भाषणो, रेडियो ब्राडकास्ट व टेलीविजन आदि आधुनिक साधनो का खूब प्रयोग किया जाता है।

के प्रतिनिधियों में समुद्रपार प्रदेशों के प्रतिनिधि आते हैं, जिनमें ये प्रतिनिधि सम्मिलित हैं—स्थानीय एसम्बलियों के सभी सदस्य, सभी सीनेटर, प्रादेशिक अथवा प्रान्तीय कौंसिलों के सदस्य, म्युनिसिपल कौंसिलों के सदस्य और समुदाय के परतन्त्र राज्यों के प्रतिनिधि। 1958 के चुनाव में समुद्रपार प्रदेशों के निर्वाचकों की कुल संख्या 2,553 थी, जो कुल निर्वाचकों की संख्या (81,761) का केवल 4 प्रतिशत थी।

यदि पहली बार हुए मतदान में किसी उम्मीदवार को कुल डाले गये मतों का पूर्ण बहुमत प्राप्त न हो, तो दूसरी बार मतदान होगा। दूसरी बार के मतदान में केवल साधारण बहुमत प्राप्त होना आवश्यक है। दूसरी बार मतदान के समय (जो कि प्रथम बार के एक सप्ताह बाद होता है) कोई नया उम्मीदवार तब तक नहीं खड़ा हो सकता जब तक कि पहले मतदान में खड़े हुए दो उम्मीदवार स्वयं चुनाव से निकलकर किसी नये उम्मीदवार को समझौते के उम्मीदवार के रूप में खड़ा करें। राष्ट्रपति के चुनाव में भाग लेने वाले निर्वाचक अपने अपने डिपार्टमेंट (प्रान्त) की राजधानी अथवा समुद्रपार राज्यों के चुने हुए स्थानों में मतदान करते हैं। जो निर्वाचक मतदान में भाग लेकर अपना कर्त्तव्य-पालन करता है उसे व्यय के लिए भत्ता मिलता है और जो निर्वाचक चुनाव में भाग नहीं लेता उस पर छः डालर के बराबर जुर्माना लगता है। 1958 में चुनाव के समय कुल निर्वाचकों की संख्या 81,761 थी, जिनमें से 81,290 ने मतदान किया। डि गॉल को कुल मतों का 77 प्रतिशत भाग मिला।

उम्मीदवार और चुनाव अभियान—संविधान अथवा कानून द्वारा राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारों के लिए कोई विशेष प्रतिबन्ध लागू नहीं किये गये हैं। एक आवश्यक बात यह है कि उम्मीदवार का समर्थन निर्वाचक मण्डल के कम से कम 50 सदस्य करें। अब 1884 से लागू इस प्रतिबन्ध का भी अन्त हो गया है जिसके अनुसार फ्रांस के भूतपूर्व शासक-वंशों के सदस्य तथा बोनापार्ट के वंशज राष्ट्रपति के चुनाव में भाग न ले सकते थे। संविधान में ऐसा भी कोई प्रावधान नहीं है कि कोई व्यक्ति एक से अधिक बार न चुना जा सके। कानून द्वारा चुनाव अभियान केवल निर्वाचक मण्डल तक ही सीमित होता है। उम्मीदवार निर्वाचकों के पास प्रचार साहित्य भेज सकते हैं तथा उनके सामने भाषण दे सकते हैं। वे रेडियो अथवा टलीविजन आदि का प्रयोग नहीं कर सकते। कहने का तात्पर्य यह है कि अभियान का साधारण जनता से कोई सम्बन्ध नहीं होता। चुनाव में राजनीतिक दल भाग ले सकते हैं।

निर्वाचन प्रक्रिया की समालोचना—इस आधार पर की गयी आलोचना का कि राष्ट्रपति के निर्वाचकों में ग्रामीण क्षेत्रों की प्रधानता रखी गयी है, प्रधानमन्त्री डेबरे ने यह उत्तर दिया कि फ्रांस छोटे गांवों का देश है। डुवरगर ने इस प्रक्रिया की इस आधार पर भी आलोचना की है कि राष्ट्रपति के चुनाव में अधिकतर उच्च पद प्राप्त व्यक्ति भाग लेते हैं, परन्तु आजकल यह मानना कठिन है कि गाँवों के मेयर इस श्रेणी के व्यक्तियों में रखे जा सकते है। डारोथी पिकिल्स के अनुसार इस प्रक्रिया में दो दोष हैं पहला, यदि चुनाव में भाग लेने वाले दो या तीन से अधिक उम्मीदवार हो तो दूसरी बार मतदान के होने पर भी यह सम्भव है कि निर्वाचित व्यक्ति को कुल मतों का बहुमत प्राप्त न हो। ऐसा होने पर इस पद्धति का मुख्य उद्देश्य जिसके अनुसार राष्ट्रपति राष्ट्र का प्रतिनिधि हो, पराजित हो सकेगा। दूसरा दोष यह है कि इस पद्धति में सरलता से परिवर्तन नहीं किया जा सकता, क्योंकि इस पद्धति का समावेश संविधान में किया गया है। इसकी अपेक्षा एसेम्बली और सीनेट की चुनाव पद्धतियों में सरलता से परिवर्तन किया जा सकता है। यह सच है कि राष्ट्रपति के चुनाव का आधार इतना बहुत रखा गया है कि चुना जाने वाला व्यक्ति राष्ट्र का प्रतिनिधि कहला सके और उसकी स्थिति पार्लियामेंट तथा मन्त्रिमण्डल के प्रति काफी सत्तापूर्ण रहे।

वतमान नियम के अन्तगत ज को न्यूयाक के और ब को पेंसिलवेनिया के सभी निर्वाचक मत प्राप्त होते है। सक्षेप मे, गत निर्वाचनो के रिकाड से पता लगता है कि निर्वाचक के मत का जनता की छाट से बहुत ही अप्रत्यक्ष सम्ब ध है। उदाहरण के लिए 1956 के चुनावो को लीजिए, जिससे स्पष्ट होगा कि जनता के मतो और निर्वाचको के मत म कितना अन्तर है—

उम्मीदवार	निर्वाचको का मत	प्रतिशत	जनता का मत	प्रतिशत
आइजनहावर	457	86 1	35,582 235	57 2
स्टीवे सन	73	13 7	26,028,887	41 9
जोंस	1	0 2	—	—

सविधान मे कोई ऐसा प्राविधान नही है जो निर्वाचको को जनता के मत के अनुसार मत देने पर बाध्य करे। इस पद्धति का दूसरा दोष यह है कि यदि किसी उम्मीदवार को निर्वाचको के कुल मतो का बहुमत नही मिलता तो उसका चुनाव प्रतिनिधि सदन को करना होता है। राष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवार को अग्रलिखित शर्तें पूरा करनी आवश्यक है— (1) उसकी आयु कम स कम 35 वष हो, (2) वह सयुक्त राज्य अमरीका का कम से कम 14 वष से निवासी रहा हो, और (3) वह सयुक्त राज्य अमरीका का जन्मजात नागरिक हो।

2 फ्रास मे राष्ट्रपति का निर्वाचन

राष्ट्रपति का चुनाव सात वष की अवधि के लिए होता है। राष्ट्रपति के पुनर्निर्वाचन के विषय मे सविधान म कुछ नही कहा गया है। यह देखना है कि इस विषय म क्या अभिसमय या परम्परा पडेगी। राष्ट्रपति का निर्वाचन एक निर्वाचक मण्डल द्वारा होता है जिसम तीन प्रकार के सदस्य अथवा निर्वाचक होते हे—राष्ट्रीय, स्थानीय और समुद्रपार प्रदशा के प्रतिनिधि। प्रथम प्रकार क प्रतिनिधियो म नेशनल एसेम्बली के 465 सदस्य (Deputies) और सीनट के 230 सदस्य रहते है। सबस बडा समूह स्थानीय निर्वाचको का होता है, जिसमे 1958 के चुनाव म 31,401 मेयर 3,149 साधारण कौसिलर, मध्यम आकार वाल तथा वडे कम्यूना के 32, 524 उप मेयर व कौसिलर और अधिक वडे कम्यूना के 8,541 अतिरिक्त प्रतिनिधि सम्मिलित थे। राष्ट्रपति के निर्वाचन म भाग लेन वाले म्युनिसिपल कौसिल के प्रतिनिधियो का आधार सविधान की धारा 6 के अनुसार निम्न प्रकार है—

1,000 से कम जनसख्या वाले कम्यूनो के मेयर, 1,000 स 2,000 तक जनसख्या वाल कम्यूनो के मेयर, और उप मेयर 2,000 से 2,500 तक जनसख्या वाले कम्यूना क मेयर, उप मेयर और एक एक निर्वाचित कौसिलर, 2,501 से 3,000 तक जनसख्या वाले कम्यूना क मेयर और दो प्रथम उप मयर। इस प्रकार जनसख्या बढने के साथ साथ प्रतिनिधिया की सख्या भी बढती चली जाती है परन्तु निर्वाचक मण्डल की रचना पर ध्यान देने से पता लगता है कि छोट कस्बा और ग्रामीण क्षेत्रो के प्रतिनिधियो की सख्या अन्य बडे कम्यूना की अपक्षा अधिक है। 1,000 स कम जनसख्या वाल कम्यूना क गत निर्वाचक मण्डल म 38 प्रतिशत प्रतिनिधि थे और परिस क्षत्र क जिसम फ्रास की लगभग 1/8 जनसख्या रहती है, निर्वाचक मण्डल म केवल 7 प्रतिशत प्रतिनिधि थ। कुछ राजनीतिक विश्लेषणकर्त्ताओ को भय है कि निर्वाचक मण्डल म ग्रामीण फ्रास की प्रधानता है अत ग्रामीण फ्रास औद्योगिक फ्रास पर अपनी छांट का राष्ट्रपति लाद सकेगा।[1] तीसर प्रकार

[1] According to Prof Duverger communes with under 300 inhabitants, whose combined populations were only 2 850 000 had 16 312 electors. The President is in realit elected by village Mayors —Pickles D *The Fifth French Republic* p 116.

हजार व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करता है। अतः उसके मतों के मूल्य में एकरूपता लाने के लिए पहला सूत्र रखा गया है। साथ ही विभिन्न राज्यों की विधान सभाओं के कुल सदस्य एक ओर और संसद के सदस्य दूसरी ओर अपने अपने ढंग से देश की सम्पूर्ण जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करते हैं, अतः उनके कुल मतों के योग का मूल्य सम रखना उचित है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति का निर्वाचन गुप्त मतदान द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति की एकल संक्रमणीय मतदान प्रणाली के अनुसार होता है अर्थात् प्रत्येक मतदाता मत-पत्र पर 1, 2, 3, 4 लिखकर अपनी पसन्द को व्यक्त कर सकता है। यदि अभ्यर्थी केवल दो ही हों तो एक को स्पष्ट बहुमत प्राप्त होगा, ऐसी अवस्था में निर्वाचन फल साधारण पद्धति के समान ही निर्धारित होगा, किन्तु यदि अभ्यर्थियों की संख्या दो से अधिक हो तो सम्भव है कि किसी को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो, तो निर्वाचन फल निकालने के लिए कुल वैध मतों के योग में दो का भाग देकर और फल में एक एक जोड़कर चुनाव कोटा निकाल लिया जायगा अर्थात् निर्वाचित होने के लिए अभ्यर्थी को कुल वैध मतों की संख्या का स्पष्ट बहुमत प्राप्त होना चाहिए।

यदि कुल अभ्यर्थी चार हैं और किसी को भी स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं होता है तो सबसे कम मत पाने वाले अभ्यर्थी को पराजित घोषित कर दिया जायगा और उसके मतों को शेष अभ्यर्थियों में उन पर लिखी दूसरी पसन्द के अनुसार वितरित कर दिया जायगा। यदि ऐसा करने पर भी किसी एक अभ्यर्थी को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो तो फिर कम से कम मत प्राप्त करने वाले अभ्यर्थी को पराजित घोषित कर दिया जायगा और उसके मतों को उन पर लिखी दूसरी पसन्द के अनुसार शेष दो अभ्यर्थियों में बाँट दिया जायगा और अन्त में वोट से अधिक मत प्राप्त करने वाला अभ्यर्थी निर्वाचित होगा। इस प्रकार इस पद्धति के अन्तर्गत वही व्यक्ति निर्वाचित हो सकेगा जिसे कुल मतों का पूर्ण बहुमत प्राप्त हो न कि साधारण बहुमत, जैसा कि एकल बहुमत पद्धति (single majority system) में होता है। साथ ही इसमें संसद के छोटे दलों तथा प्रादेशिक दलों को चुनाव में अपनी आवाज रखने का अवसर मिलता है, यदि निर्वाचक मण्डल में किसी एक दल का बहुमत न हो तो उसे अन्य दलों का सहयोग प्राप्त करना पड़ेगा।

केवल एक अधिकारी के चुनाव के लिए, कुछ आलोचकों की दृष्टि में, आनुपातिक पद्धति का अपनाया जाना व्यर्थ है। इस पद्धति की आलोचना करते हुए डा० एम० पी० शर्मा ने लिखा है 'इस पद्धति और आनुपातिक प्रतिनिधित्व की पद्धति में बाह्य लक्षणों की समानता अवश्य प्रतीत होती है क्योंकि दोनों में मतों का हस्तान्तरण होता है, किन्तु इन दोनों में उतना ही अन्तर है जितना खच्चर और घोड़े में। यह पद्धति विकल्पात्मक मत (alternative vote) के नाम से संसार भर में प्रसिद्ध है और सामान्य या बहुमत प्रतिनिधित्व का ही थोड़ा परिष्कृत रूप है। इस पद्धति के परिणामस्वरूप आनुपातिक प्रतिनिधित्व नहीं होता, बल्कि केवल इतना होता है कि स्पष्ट बहुमत मिले बिना कोई राष्ट्रपति नहीं चुना जा सकता, विजयी उम्मीदवार का फैसला प्रथम विकल्प के मतों द्वारा ही न हो, वरन् बाद के विकल्पों द्वारा हो, ऐसा होने से सम्भव है अल्पसंख्यक समूहों का चुनाव पर कुछ प्रभाव पड़ सके, किन्तु ऐसा सदैव नहीं होता है।

चूँकि भारत के संविधान के अन्तर्गत मन्त्रिमण्डलात्मक शासन पद्धति अपनाई गई है और राष्ट्रपति केवल एक सांविधानिक अध्यक्ष रहेगा, अतएव संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति की भाँति उसका सम्पूर्ण निर्वाचक मण्डल द्वारा अप्रत्यक्ष चुनाव करना आवश्यक और हितकारी नहीं समझा गया।[1] परन्तु फिर भी यह वांछनीय समझा गया है कि राष्ट्रपति के चुनाव का आधार

[1] Justifying the indirect election of the President Jawaharlal Nehru had observed If we had the President elected on adult franchise and did not give him any real powers it might become a little anomalous It was intended to emphasize that real power was

राष्ट्रपति पद क लिए चुनावा की दम्ब रेख और उनम होने वाली अनियमितताओ की जाँच आदि काय सावियानिक परिषद् को सौंपे गये हैं जो पेरिस म सावजनिक रूप से अ तिम गणना करती है और परिणाम की घोषणा करती है। सविधान की धारा 7 के अनुसार कुछ अ य उल्लेखनीय बातें सक्षेप में इस प्रकार है—(1) नय राष्ट्रपति का चुनाव पदारूढ राष्ट्रपति की शक्तियो के अ त होने स कम स कम 20 तथा अधिक से अधिक 50 दिन पूव होगा। यदि किसी भी कारण स राष्ट्रपति का पद रिक्त हो जाये अथवा सरकारी रूप से सावियानिक परिषद् उसे काम करने से रोक दे तो राष्ट्रपति के कृत्य कवल उनको छोडकर जो धारा 11 व 12 म दिय गये है, अस्थायी रूप स सीनेट का प्रधान करेगा। पद रिक्त होने पर अथवा जबकि सावियानिक सभा राष्ट्रपति को काय करने स रोक दे राष्ट्रपति का चुनाव उसके बाद कम स कम 20 दिन तथा अधिक स अधिक 50 दिन क भीतर होना आवश्यक है।

3 भारत मे राष्ट्रपति का निर्वाचन

राष्ट्रपति पद के लिए अभ्यर्थी म य योग्यताएँ होनी आवश्यक है—(1) वह भारतीय नागरिक हो, (2) उसने 35 वप की आयु पूण कर ली हो और लोकसभा क लिए अहताए रखता हो। पर तु ऐसा कोई व्यक्ति जो शासन क अधीन लाभ पद पर आसीन हो, अभ्यर्थी नही बन सकता, कि तु यह प्रतिब ध स्वय राष्ट्रपति, उप राष्ट्रपति, गवनर, राज प्रमुख व म त्रियो पर लागू नही। पदासीन राष्ट्रपति पुनर्निर्वाचन के लिए खडा हो सकता है। राष्ट्रपति का चुनाव एक निर्वाचक मण्डल द्वारा होता है, जिसम (अ) ससद के सभी निर्वाचित सदस्य, और (आ) राज्यो की विधान सभाओ क निर्वाचित सदस्य रहते है। परन्तु उसके चुनाव के सम्ब ध म दो बातें विशेष हैं। एक तो यह कि निर्वाचन म विभिन्न राज्यो क प्रतिनिधित्व म एकरूपता रहेगी। दूसरे सब और राज्यो म प्रतिनिधियो के बीच समता होगी। इस कारण स राष्ट्रपति के निर्वाचन का फल मतो की साधारण गणना स निर्धारित नही होता वरन् मतो का एक प्रकार से मान निकाला जाता है जिसके लिए निम्नलिखित सूत्र हैं

किसी राज्य की विधान सभा के सदस्य क मत का मूल्य

$$= \frac{\text{राज्य की जनसख्या}}{\text{विधान सभा के निर्वाचित सदस्यो की कुल सख्या}} - 1000$$

उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि उत्तर प्रदेश की जनसख्या 5 करोड है और विधान सभा के निर्वाचित सदस्यो की सख्या 400 है तो प्रत्यक सदस्य का मत बराबर होगा।

$$\frac{50000000}{400} - 1000 = 125$$

ससद सदस्य के मत का मूल्य $= \frac{\text{राज्यो की विधान सभाओ के सदस्यो के मतो का योग}}{\text{ससद के दोनो सदनो के निर्वाचित सदस्यो की कुल सख्या}}$

मान लीजिए कि विधान सभाओ क सदस्यो के मत का योग 7,50 000 है और ससद के निर्वाचित सदस्यो की सख्या 750 है तो प्रत्येक सदस्य का मत

$$= \frac{7{,}50{,}000}{750} = 1000$$

उपयुक्त से स्पष्ट है कि राष्ट्रपति का चुनाव एक पेचीदा ढग स होता है और वह एक प्रकार से जनता का अप्रत्यक्ष रूप स चुना गया प्रतिनिधि होता है। इस पद्धति को अपनाने के कारण स्पष्ट है। जनसख्या की दृष्टि स कुछ राज्यो म निर्वाचन क्षेत्र अ य राज्यो की अपेक्षा बडे है अर्थात् किसी राज्य म प्रत्येक सदस्य 50 हजार व्यक्तियो का तथा दूसर राज्य म 60 या 75

अवश्य होने चाहिएँ, पर तु पालियामट जब चाहे अपनी अवधि को बढा सकती है। ब्रिटेन म चुनाव कभी बहुत शीघ्र और कभी बहुत देर से होते है, वहाँ पर सयुक्त राज्य अमरीका की तरह कोई निश्चित अवधि नही है। इसका कारण यह है कि प्रधानमन्त्री जब उचित समझे ताज को कामन सभा के विघटन हेतु परामश दे सकता है। कोई व्यक्ति यह कह नही सकता कि आम चुनाव कब होने वाले है। सरकारी घोपणा हो जाने पर ही कॉमन सभा का विघटन होता है और घोषणा द्वारा ही चुनावो के लिए नामजदगी व मतदान की तिथियाँ नियत की जाती हैं। ऐसी घोषणा व नामजदगी की तारीख के बीच म कम समय रहता है, साधारणतया दो तीन सप्ताह।[1]

निर्वाचन क्षेत्र—ब्रिटेन म एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र हैं। पालियामट के कानून के अनुसार समय समय पर निर्वाचन क्षेत्रो का पुन वितरण हुआ है, परन्तु 1944 म स्थायी सीमा आयोग बैठाये गये थे, जिनकी सिफारिशो के फलस्वरूप 1948 म निर्वाचन क्षेत्रो का निर्माण किया गया था। इग्लण्ड, स्कॉटलैण्ड, उत्तरी आयरलैण्ड तथा वेल्स के लिए स्थापित स्थायी आयोगो को अपने अपने क्षेत्र मे जनसख्या के परिवतनो पर ध्यान रखना होता है और उनका काम निर्वाचन क्षेत्रो के वितरण मे उचित उलट फेर के लिए सिफारिश करना है।

नामजदगी—नामजदगी की प्रक्रिया बडी सरल है। उम्मीदवार को अपना नामजदगी पत्र दाखिल करने से पूव उस पर निर्वाचन क्षेत्र के कम से कम 10 अह मतदाताओ के हस्ताक्षर कराने पडते हैं। नामजदगी पत्र 'रिटर्निंग आफीसर' को इसके लिए नियत दिन उम्मीदवार अथवा उसके एजे ट द्वारा देना होता है। इस प्रयोजन के लिए एक घण्टे का समय मिलता है। नामजदगी पत्र के साथ उम्मीदवार को 150 पौण्ड स्टर्लिंग जमा करने होते हैं। यह जमानत का रुपया उम्मीदवार को चुनाव के बाद लौटा दिया जाता है, यदि वह कुल मतो का 1/8 से अधिक प्राप्त करता है। अधिकतर निर्वाचन क्षेत्रो म दो तीन उम्मीदवार खडे होते है।

उम्मीदवार की अर्हताएँ—कोई भी ब्रिटिश प्रजाजन, जो मतदाता हो, उम्मीदवार हो सकता है और स्त्रियाँ भी उम्मीदवार बन सकती है। परन्तु दिवालिये या ऐसे व्यक्ति जो कुछ पदा पर आसीन हो, उम्मीदवार नही बन सकते। नागरिक सेवक, सशस्त्र सेनाओ, पुलिस और चच अधिकारी वग के सदस्य चुनाव म खडे नही हो सकते। अधिकतर उम्मीदवार राजनीतिक दलो द्वारा खडे किये जाते हैं। कानून अथवा प्रथा के अनुसार यह आवश्यक नहा है कि उम्मीदवार जिस निर्वाचन क्षेत्र से खडा हो, वह उसी का निवासी हो।

चुनाव अभियान और मतदान—प्रत्येक दल का एक केन्द्रीय या राष्ट्रीय सगठन होता है और प्रत्यक निर्वाचन क्षेत्र मे उसकी शाखा होती है। स्थानीय सघ या शाखाएँ अपने उम्मीदवार चुनते हैं। चुनाव काय घोषणा के पूर्व ही आरम्भ हो जाता है। भावी उम्मीदवार सभी सावजनिक समारोहो मे भाग लते है और सभी अच्छे कार्यों म योगदान करते हैं। यही निर्वाचन क्षेत्र की सुश्रूषा करना (nursing) कहलाता है। प्रथा के अनुसार जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी होती है, वे उम्मीदवार हाथ खोलकर निर्वाचन क्षेत्र की सुश्रूषा करते है। विजयी उम्मीदवार निर्वाचन के उपरान्त भी ऐसा करता रहता है। जम ही आम चुनाव की तारीख घोषित होती है, प्रत्येक उम्मीदवार निर्वाचन क्षेत्र के मतदाताओ के नाम एक सम्बोधन या घोषणा-पत्र जारी करता है। इसम वह अपनी दलीय निष्ठा या स्वतन्त्र विचारो पर बल देता है। कानून के अन्तगत प्रत्यक उम्मीदवार को डाक व्यय स एक ऐसा घोषणा पत्र सभी मतदाताओ के पास भेजने की सुविधा प्राप्त है। उसके बाद सावजनिक भवनो तथा सडको के कोनो पर सभाएँ की जाती है। कुछ सीमा तक उम्मीदवार मतदाताओ स समाचार पत्रो म प्रकाशित इश्तिहारो द्वारा भी अपील करते

[1] Ogg F A *English Government and Politics* p 283

यथासम्भव लोकप्रिय रहे। वतमान पद्धति के अ तगत दोनो ही प्रयोजना की प्राप्ति हो सकेगी। राष्ट्रपति के चुनाव म ससद क अतिरिक्त राज्यो की विधान सभाआ के सदस्यो को भाग लेन का अधिकार इस दृष्टि से भी महत्त्वपूण है कि यदि केवल ससद क सदस्य ही उसक निर्वाचन म भाग लेते तो साधारणतया वही व्यक्ति चुना जाता जिसे ससद म बहुमत प्राप्त दल चाहता।

भूतपूव राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसन की मृत्यु के बाद 1969 म वतमान राष्ट्रपति श्री वी० वी० गिरि का चुनाव हुआ। उस चुनाव मे 17 उम्मीदवारो ने भाग लिया जिनम से 9 को कोई मत प्राप्त न हुए। श्री गिरि और उसके मुख्य प्रतिद्व द्वी श्री रेडडी के बीच वास्तविक सघष रहा। तीसरे उल्लेखनीय उम्मीदवार डा० सी० डी० देशमुख थे, जिन्ह जनसघ, भारतीय क्रांति दल और स्वतन्त्र पार्टी ने सयुक्त रूप से खडा किया था। उ ह केवल 54,593 मत प्राप्त हुए। श्री गिरि ने अपने निकटतम प्रतिद्व द्वी श्री सजीव रेडडी को 14,650 मता से पराजित किया। दोना प्रमुख उम्मीदवारा को इस प्रकार मत मिले—श्री गिरि 4,20,677 और श्री सजीव रेडडी 4 05,427। श्री गिरि, श्री रेडडी, श्री दशमुख और अ य को ससद मे क्रमश 359, 268, 101 और 6 मत मिले जिनका मूल्य 2 06,784, 1,54 368, 58,176 और 3,456 रहा। वास्तव मे श्री गिरि की विजय का श्रेय उत्तर प्रदेश को है। प्रथम गिनती के मतो मे श्री गिरि अपन प्रतिद्व द्वी श्री रेडडी से बहुत पीछे थे, उत्तर प्रदेश ने उ ह विजय पथ पर रखा आर उत्तर प्रदेश से दूसरी पस द के 8,176 मत मिलने पर ही वह विजयी हुए।

4 ग्रेट ब्रिटेन मे कॉमन सभा का निर्वाचन

मतदाता—किसी व्यक्ति को तब तक मतदाता नही बनाया जा सकता जब तक कि वह ज म या देशीकरण से ब्रिटिश प्रजाजन न हो। ब्रिटिश प्रजाजन म वे सभी व्यक्ति सम्मिलित हैं जा राजा के प्रति निष्ठा रखते हो चाहे वे ब्रिटिश द्वीपसमूह के निवासी हो या कनाडा, आस्ट्रेलिया या दक्षिणी अफ्रीका आदि के निवासी हो। मताधिकार का प्रयोग करने क लिए मतदाताआ को अपने निवास स्थान के निर्वाचन क्षेत्र वाल 'निर्वाचको के रजिस्टर मे विहित तारीख (ग्रेट ब्रिटेन म 10 अक्टूबर) तक अपना नाम लिखा लेना चाहिए। एसे मतदाता जो सशस्त्र सेना या अ य सेवाआ मे विदेशा मे नियुक्त हो (और उनकी पत्निया भी) अपने अपने निर्वाचन क्षेत्रो मे सेवा घोषणा' का फाम भेजकर अपना नाम निर्वाचको की सूची म लिखा सकते है।

साधारणतया प्रत्येक 21 वप स ऊपर आयु वाला ब्रिटिश नागरिक कामन सभा के लिए मतदाता है फिर भी अग्रलिखित म से किसी भी अनहता क कारण बहुत स व्यक्तिया को मता धिकार से वचित किया जाता है (1) सावजनिक सस्थाओ मे रखे गये अपराधिया और मानसिक दोप से पीडित व्यक्तिया को मतदान का अधिकार नही है। (2) कामन सभा के चुनावो म पीयरो को मतदान का अधिकार नही है, क्योकि उच्च सदन मे उनका प्रभुत्वपूण प्रतिनिधित्व है। वे स्थानीय सस्थाओ के चुनावो म भाग ल सकते है। (3) पहले ऐसे सभी व्यक्तियो को मताधिकार प्राप्त न था जि ह सावजनिक निधन सहायता निधिया स सहायता मिलती थी। इस अनहता का 1918 के कानून द्वारा अ त कर दिया गया, कि तु ऐसे निधन व्यक्तियो को अब भी मताधिकार प्राप्त नही हुआ है, जि हे सावजनिक सस्थाओ म रखा जाता है, क्याकि व निवास सम्ब धी शत को पूरा नही करते। (4) जिन व्यक्तियो को चुनाव सम्ब धी भ्रष्टाचारी अपराधा के लिए उपयुक्त यायालयो द्वारा दण्डित किया जाता है।

कामन सभा की अवधि—कानून के अनुसार प्रति पाँच वप म एक बार आम चुनाव

vested by the Constitution in the Ministry and not in the President —Rau B N *India s Constitution in the Making* p 378

होती है। इस पद्धति से बडे दलो को लाभ होता है, और यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि दूसरे विश्व युद्ध के बाद प्रत्येक चुनाव म, शासक दल को पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ है, यद्यपि उसे प्राप्त कुल मतो की सख्या हर बार 50 प्रतिशत से कम रही है।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद हुए चुनावो म विभिन्न दलो को प्राप्त हुए मतो व स्थानो के प्रतिशत निम्न सारणी म दर्शित हैं—

वर्ष	अनुदार		मजदूर		उदारवादी	
	मत	स्थान	मत	स्थान	मत	स्थान
1945	40 2	33 2	48 1	62	1 0	1 9
1950	43 5	47 7	46 1	50	9 1	1 4
1951	48 0	51 3	48 8	47 3	2 5	1 0
1955	49 7	54 5	46 4	44 0	2 7	1 0
1959	49 4	57 9	43 8	40 9	5 8	1 0
1964	43 4	48 3	44 1	50 3	11 2	1 4
1966	41 9	40 2	47 9	57 6	8 5	1 9

3 भारत मे निर्वाचन

वयस्क मताधिकार—भारतीय निर्वाचन पद्धति की सवप्रथम विशेषता 'वयस्क मताधिकार' है। भारत के सविधान निर्माताओ ने प्रजातन्त्र के आधार को अधिक से अधिक व्यापक बनाने के उद्देश्य से वयस्क मताधिकार के आदर्श को व्यावहारिक रूप प्रदान किया है। अब लोकसभा और राज्य की विधान सभाओ के लिए सभी 21 वर्ष की आयु वाले व्यक्ति मतदाता बन गये हैं और मतदाताओ की सख्या 21 करोड से ऊपर है। भारत मे साक्षरता का प्रतिशत अभी 20 भी नही है, इस आधार पर कुछ आलोचको ने वयस्क मताधिकार दिये जाने की बुद्धिमत्ता म स देह प्रकट किया है। अशिक्षितो को मताधिकार मिलने से प्रजातन्त्र की सफलता म उसका विश्वास नही है। परन्तु हम यह स्वीकार करना पडेगा कि यदि अब भी सम्पत्ति या शिक्षा आदि को आधार मानकर मताधिकार प्रदान किया जाता तो वयस्क मताधिकार का आदर्श भावी दस पन्द्रह वर्ष म भी व्यावहारिक बनना कठिन होता और प्रजातन्त्र की दिशा म प्रगति बहुत धीमी होती। जनसाधारण के हितो की रक्षा और उनके व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए मताधिकार का मिलना अति आवश्यक है।

सयुक्त निर्वाचन पद्धति—भारतीय निर्वाचन पद्धति की दूसरी मुख्य विशेषता सयुक्त निर्वाचन प्रणाली है। अब प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र के लिए केवल एक ही निर्वाचक सूची होती है, जिसम सभी धर्मों व सम्प्रदायो के मतदाताओ के नाम होते हैं और वे सभी मिलकर एक प्रतिनिधि का चुनाव करते हैं। यह प्रणाली सभी विधानमण्डलो के लिए अपनाई गई है। इसके अतिरिक्त पूर्वकालीन पृथक् निर्वाचन प्रणाली के अन्य सभी दोषो को भी दूर कर दिया गया है अर्थात अब किसी सम्प्रदाय के लिए जनसख्या के अनुपात स अधिक प्रतिनिधित्व जैसा दोष मिटा गया है। केवल अनुसूचित वर्गों व पिछडे हुए लोगो के लिए एक विशेष सुविधा प्रदान की गयी है। उनके लिए राज्य विधान सभाओ व लोकसभा म उनकी जनसख्या के आधार पर आरक्षित स्थानो की व्यवस्था है। इस प्रकार की व्यवस्था को प्रजातन्त्र विरोधी कहना बडी भूल होगी।

है। मतदाताओं क पास उम्मीदवार व उसके समर्थक व्यक्तिगत रूप म जाते है। कानून द्वारा चुनाव पर व्यय की सीमा लगी है। यह सीमा 450 पौण्ड तथा काउ टी व बरो निर्वाचन क्षेत्रों म क्रमश 2 व 1½ पेंस प्रति मतदाता क हिसाब स व्यय का अधिकार देती है। चुनाव अभियान एव अधिकृत एजे ट द्वारा किया जाता है। कॉमन सभा क चुनावो म छोटे और सरल मत पत्रो का प्रयोग होता है जिन पर उम्मीदवारो के दलो का नही दिया जाता। मतदान केन्द्र साधारणतया सार्वजनिक भवनो म रखे जाते हैं। मतदान की विधि गुप्त व सरल है।

निर्वाचन पद्धति के प्रमुख गुण व दोष—ब्रिटेन की निर्वाचन प्रणाली सीधी और बहुत सरल है, जिसे अन्य अनेक देशो ने अपनाया है। यद्यपि ब्रिटेन म अनिवार्य मतदान की व्यवस्था नही है फिर भी मतदान 81 प्रतिशत स ऊपर रहता है, जो ब्रिटिश जाति की राजनीतिक अभिरुचि व जागरूकता और नागरिक उत्तरदायित्व की भावना का प्रतीक है। 1950 क चुनाव म मत देने वाले वोटरो की सख्या 84 प्रतिशत थी, 1951 म यह 82 3 प्रतिशत थी और 1955 म 76 8 प्रतिशत। वर्तमान निर्वाचन-पद्धति का (जिसका आधार एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र है) सबसे बडा लाभ यह है कि इसके परिणामस्वरूप ब्रिटेन म दो प्रमुख राजनीतिक दल रहे है, जिनम स एक सत्तारूढ होता है और दूसरा विरोधी दल। इसी कारण ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल स्थायी रहता है। उसम फ्रास की तरह स जल्दी जल्दी उलट फेर व परिवर्तन नही होते। वर्तमान प्रणाली क अन्तर्गत प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र से वह उम्मीदवार चुना जाता है जिसे सबसे अधिक मत प्राप्त हो चाहे अन्य उम्मीदवारो को प्राप्त मतो का जोड निर्वाचित सदस्य को प्राप्त मतो म काफी बडा हो। इस कारण स इस पद्धति म ये कठिनाइयाँ अथवा दोष उत्पन्न होते है—(1) कॉमन सभा म राजनीतिक दलो का प्रतिनिधित्व उनके उम्मीदवारो को प्राप्त कुल मतो के अनुपात म नही होता, विशेष रूप से अल्पसख्यक दलो का बहुत कम प्रतिनिधित्व हो पाता है। इस पद्धति के परिणामस्वरूप बडे दल सुदृढ हुए है और छोटे क्षीण हुए हैं क्योकि कुल निर्वाचन क्षेत्रो से एक बडे दल के और कुछ दूसरे बडे दल के उम्मीदवार चुन जाते है। इस बात की बहुत सम्भावना रहती है और बहुधा ऐसा होता है कि यद्यपि छोटे दल के समर्थको की सख्या काफी हो किन्तु विभिन्न निर्वाचन-क्षेत्रो म बिखरी हुई हो तो उसे बहुत ही कम प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है। इस दृष्टि से अनुदार दल को बडी हानि रहती है। (2) कॉमन सभा के सदस्य राष्ट्र के जनमत का ठीक से प्रतिनिधित्व नही करते।

इस पद्धति के दोष इस बात से और भी अधिक प्रकट होते है कि इसका कॉमन सभा म दलो की रचना पर बडा प्रभाव पडता है। चुनावो म किसी दल की सफलता केवल इस बात पर निर्भर नही करती कि उसे कितने मतदाताओ के मत मिले, वरन् इस बात पर भी कि उसके समर्थक मतदाताओ का विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रो म वितरण किस प्रकार हुआ है। छोटे दलो को बडी हानि रहती है क्योकि उनके समर्थक मतदाता निर्वाचन क्षेत्रो म इतनी बडी सख्या म नही होते कि वे जीत सके, सिवाय दो चार निर्वाचन क्षेत्रो के जहाँ कि वे बडी सख्या मे केन्द्रीभूत हो।[1] यदि हम उदारवादी पार्टी द्वारा विगत चुनावो म प्राप्त मतो और स्थानो की तुलना करे तो यह बात स्पष्ट हो जायगी। 1964 के चुनाव म एक उदारवादी सदस्य को जीतने के लिए 3 लाख 43 हजार से अधिक मत प्राप्त करने पडे, जबकि अनुदार और मजदूर दल के प्रत्येक सदस्य का चुनाव औसतन 40 हजार मत पाने पर हो गया। छोटे दलो के विरुद्ध पक्षपात के कारण वे केवल थोडे से ही स्थानो स ही चुनाव लड पाते है, फलत अधिकतर निर्वाचन क्षेत्रो म निर्वाचको की छाट बहुत सीमित रह जाती है और कुछ मतदाताओ म मतदान के प्रति उदासीनता भी उत्पन्न

[1] Marder K B British Government p 31

गया है, क्योंकि इसके फलस्वरूप स्थायी मन्त्रिमण्डल के निर्माण की सम्भावना काफी बढ़ जाती है। भारत के संविधान में यह भी व्यवस्था है कि प्रत्येक जनगणना के उपरान्त परिसीमन आयोग (Delimitation Commission) संसद के आदेशानुसार विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व में आवश्यक परिवर्तन करेगा किन्तु इस परिवर्तन का प्रभाव वर्तमान लोकसभा पर नहीं पड़ेगा। इस प्रकार की व्यवस्था ब्रिटेन के संविधान में नहीं है परन्तु ऐसी ही व्यवस्था संयुक्त राज्य अमरीका में है, किन्तु वहाँ पर उसके साथ एक दोष सम्बद्ध है। संयुक्त राज्य अमरीका के प्रत्येक राज्य में निर्वाचन क्षेत्रों का विभाजन उस समय का सत्तारूढ़ दल इस प्रकार से करता है कि आगामी चुनाव में उसके सदस्य अधिक चुने जा सकें और विरोधी दल को अपेक्षाकृत कम स्थान मिलें। इसी दोष को जेरीमंडरिंग कहते हैं। भारत में ऐसा दोष उत्पन्न नहीं हो सकता, क्योंकि निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन निर्वाचन आयोग की देखरेख में और संसद की अन्तिम स्वीकृति के अधीन किया जाता है।

4 फ्रांस में निर्वाचन पद्धति

युद्ध के बाद थोड़े से समय को छोड़कर जिसमें कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व लागू किया गया था, निर्वाचनों का प्रयोजन डाले गये मतों और स्थानों के बीच कुछ मात्रा तक अनुपात विकृत करना रहा है। उसका उद्देश्य या तो छोटे और अनुशासनहीन दलों की संख्या कम करना है अथवा उनके रहते हुए ऐसी एसेम्बली का निर्माण करना रहा है जिसमें कि सामंजस्यपूर्ण बहुमत रहे या कभी कभी विशेष रूप से साम्यवादियों अथवा डि गाल के समर्थकों की संख्या कम रहे। 1919, 1924 और 1951 के निर्वाचनों में ऐसा ही किया गया। दूसरी बात यह है कि युद्ध के बाद से फ्रांस की निर्वाचन पद्धति के सुधार हेतु जो भी प्रस्ताव रखे गये हैं, उनसे यह पता लगता है कि अधिकतर राजनीतिक नेता पेचीदा निर्वाचन पद्धति को अधिक पसन्द करते हैं। तीसरी बात यह है कि फ्रांसीसी ऐसी पद्धति चाहते हैं जिससे एसेम्बलियाँ ऐसी बनें जो स्थिर, अनुशासित और उत्तरदायी निर्वाचकों व दलों के विभागों की ठीक प्रकार से प्रतिबिम्ब हों। परन्तु अनुभव यह बताता है कि फ्रांस में निर्वाचन पद्धति निर्वाचकों का प्रतिबिम्ब तो कर सकती है किन्तु दूसरा परिणाम प्राप्त नहीं हो सकता।[1] फ्रांस में निर्वाचन पद्धतियाँ संविधानों से भी अधिक बार परिवर्तित हुई हैं। गत 100 वर्षों में या तो निर्वाचन क्षेत्र का ढंग, मतदान की संख्या, अथवा स्थानों के वितरण की पद्धति 15 बार संशोधित हो चुकी है। विभिन्न निर्वाचन पद्धतियों में से जिनका प्रयोग हुआ है, तीन प्रमुख हैं। उनका संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है।

एक बार मतदान और बहुमत पद्धति—इस पद्धति का प्रयोग दूसरे गणतन्त्र के दौरान और तीसरे के आरम्भ में किया गया। इसका प्रयोग फ्रांस में, इंग्लैण्ड के व्यवहार के विरुद्ध, एक सदस्य वाले क्षेत्रों में नहीं वरन् बहु सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों के साथ किया गया। इसके पक्ष में यह दावा किया गया है कि इस पद्धति के परिणामस्वरूप राजनीतिक दलों की संख्या कम होगी। निःसन्देह प्रत्येक स्थान के लिए चुनाव में भाग लेने वाले दलों की संख्या कम हुई है, किन्तु पार्लियामेंट में प्रतिनिधित्व पाने वाले दलों की संख्या कम नहीं हुई है। प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र में प्रतिद्वन्द्विता दो दलों के बीच रहती है।

दो बार मतदान के साथ बहुमत पद्धति—इस पद्धति का सबसे अधिक लम्बे काल तक प्रयोग हुआ है। तीसरे गणतन्त्र में कुछ समय को छोड़कर इसी का प्रयोग हुआ। इसे 1945 में त्यागा गया, किन्तु फिर 1958 में पाँचवें गणतन्त्र के अन्तर्गत अपनाया गया। इसका प्रयोग एक

[1] Pickles D The Fifth French Republic pp 56-57

स्वतन्त्र चुनाव और निर्वाचन आयोग—भारतीय निर्वाचन पद्धति की तीसरी मुख्य विशेषता 'स्वतन्त्र चुनाव' है। यह एक निर्विवाद सत्य है कि प्रजातन्त्र म निर्वाचन स्वतन्त्र और निष्पक्ष होने चाहिएँ। जिस सीमा तक जनता को चुनाव की निष्पक्षता और स्वतन्त्रता मे विश्वास कम हो उसी सीमा तक चुनावो को असफल समझना चाहिए। इसी विचार से भारत के सविधान निर्माताओ ने चुनावो को स्वतन्त्र और निष्पक्ष बनाने की बडी ही सराहनीय व्यवस्था सावैधानिक उपबन्धो द्वारा की है। भारत के सविधान म एक निर्वाचन आयोग की व्यवस्था है। इस आयोग को ससद, राज्य विधानमण्डलो व राष्ट्रपति और उप राष्ट्रपति के चुनावो के अधीक्षण, निदेशन व नियन्त्रण, निर्वाचित सूचियो के तयार कराने और निर्वाचन सम्बन्धी विवादो के निर्णय कराने आदि के महत्त्वपूर्ण कार्य सौपे गये हैं। निर्वाचन आयोग को परामर्श देने का काय भी मिला है। अनुच्छेद 103 के अनुसार यह राष्ट्रपति तथा गवनरो को क्रमश ससद व राज्य विधानमण्डलो का निर्योग्यताओ से सम्बन्धित किसी भी प्रश्न पर अपनी सम्मति देगा, क्योकि अनुच्छेद 324 (5) के अनुसार मुख्य चुनाव आयुक्त को केवल उसी प्रकार से उसके पद से हटाया जा सकता है जसे कि सर्वोच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश को। परन्तु जबकि न्यायाधीश 64 वष की आयु तक पदासीन रहते है, मुख्य आयुक्त की नियुक्ति किसी भी सीमित अवधि के लिए की जा सकती है। निर्वाचन आयोग चुनाव कराने के एक स्वतन्त्र अभिकरण है, इसके महत्त्व के विषय म दो राय नही हो सकती। इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना उचित ही था कि सत्तारूढ दल अपने हित म निर्वाचनतन्त्र पर किसी प्रकार का प्रभाव न डाल सके। इस दृष्टि से भारत का सविधान अन्य अनेक देशो के सविधानो से एक पग आगे ही है।

निर्वाचन आयोग म एक मुख्य निर्वाचन आयुक्त है, जो उसका सभापति होता है, तथा अन्य आयुक्त होते है, जिनकी सख्या समय समय पर राष्ट्रपति द्वारा नियत की जायेगी। इनकी नियुक्ति राष्ट्रपति ससद द्वारा विहित नियमो के अधीन करता है। राज्य विधानमण्डलो के निर्वाचनो म आयोग की सहायता करने के लिए निर्वाचन आयोग के परामर्श से राष्ट्रपति प्रादेशिक आयुक्त भी नियुक्त कर सकता है। इन आयुक्तो की अवधि और सेवा की शर्तें भी राष्ट्रपति नियम बनाकर निर्धारित करता है, किन्तु वे इस सम्बन्ध मे ससद द्वारा बनाये गये कानून के ही अनुसार होने आवश्यक है, मुख्य आयुक्त के सम्बन्ध म सविधान म यह व्यवस्था भी है कि मुख्य आयुक्त को नियुक्ति के उपरान्त केवल उन्ही कारणो और उसी ढग से पदच्युत किया जा सकता है जिन कारणो और जिस ढग से सर्वोच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश को। किन्तु अन्य निर्वाचन आयुक्तो को मुख्य आयुक्त की सिफारिश पर ही पदच्युत किया जा सकता है।

निर्वाचन के विषय मे ससद की शक्तियाँ—सविधान के अनुसार निर्वाचन सम्बन्धी अन्य आवश्यक उपबन्ध बनाने की शक्ति ससद को मिली है। इनम विधानमण्डलो के निर्वाचन के लिए निर्वाचन सूचियाँ तयार करना, निर्वाचन क्षेत्रो का परिसीमन और अन्य सभी आवश्यक उपबन्ध आते हैं। इसी हेतु ससद ने 1950 व 1951 मे जन प्रतिनिधित्व अधिनियम (Representation of People's Acts) पास किये थे और समय समय पर उनम आवश्यक सशोधन किय हैं। किसी भी न्यायालय म उपयुक्त उपबन्धो के अधीन निर्वाचन क्षेत्रो अथवा स्थानो के वितरण के सम्बन्ध म जो कानून बनेंगे उस पर किसी प्रकार की न्यायिक कायवाही नही की जा सकती। ससद अथवा विधानमण्डल के लिए हुए चुनावो के सम्बन्ध मे किसी भी प्रकार की चुनाव-याचिका कानून द्वारा निर्धारित ढग से ही उपयुक्त अधिकारी को दी जायगी। भारत ससार म सबसे अधिक मतदाताओ वाला देश है, जिसमे साक्षरो की सख्या अभी बहुत कम है। फिर भी गत चारो ही आम चुनाव शान्तिपूर्वक हुए और देशवासियो तथा विदेशियो ने उनकी सराहना की।

भारत के सविधान मे प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र स एक प्रतिनिधि वाली पद्धति को अपनाया

कारण से वह अयोग्य ठहराया जाय तो उसका स्थान भरने के लिए उप चुनाव होता है।

चुनाव अभियान आदि—चुनाव कानून के अन्तर्गत रेडियो और टेलीविजन द्वारा प्रचार के सम्बन्ध में कठोर नियम बने हैं। प्रत्येक चुनाव क्षेत्र में उम्मीदवारों को आस-पास लगे हुए कुछ लकड़ी के बोर्ड मिलते हैं जिन पर वे चुनाव पोस्टर (जिनका नाम और संख्या सीमित है) लगा सकते हैं। कानून द्वारा यह भी नियत है कि उम्मीदवार कितना और किस प्रकार का साहित्य मतदाताओं के पास भेज सकते हैं और एक जिले में सभी उम्मीदवारों का साहित्य एक ही लिफाफे में भेजा जाता है जिससे कि डाक व्यय अधिक न हो। इस प्रकार के साहित्य का वितरण एक स्थानीय अधिकारियों की समिति द्वारा किया जाता है। रेडियो और टेलीविजन व्यवस्था पर राष्ट्रीय दलों को (जो कम से कम 75 चुनाव जिलों में उम्मीदवार पेश करते हैं) रेडियो व टेलीविजन पर बिना व्यय ब्राडकास्ट के लिए समय प्रदान किया जाता है। राज्य इन ब्राडकास्टों और साहित्य बँटवाने का व्यय भार उठाता है, किन्तु उम्मीदवार को अपने मत पत्रों, पोस्टरों व इश्तहारों आदि के छपाने का व्यय उठाना पड़ता है। निर्वाचन सम्बन्धी प्रचार के नियमों का उल्लंघन करने पर सांविधानिक परिषद् विजयी उम्मीदवार का स्थान रिक्त घोषित कर सकती है और उसे फौजदारी अदालत 600 से लेकर 1,600 डालर जुर्माने व 15 दिन से लेकर तीन माह तक की कैद का दण्ड दे सकती है। प्रत्येक उम्मीदवार को नामजदगी के समय 200 डालर जमानत रूप में जमा करने होते हैं, जो उसे वापस कर दिये जाते हैं यदि उसे पाँच प्रतिशत से अधिक मत मिले हों।

मतदान—साधारण नियम तो यही है कि मतदाता स्वयं जाकर मतदान करे। परन्तु कुछ प्रकार के मतदाताओं के लिए जो चलने फिरने के लिए अयोग्य हों वाणिज्य के सम्बन्ध में यात्रियों, कृषि या उद्योग में काम करने वाले ऐसे व्यक्ति जिन्हें स्थान छोड़कर जाना पड़ा हो—डाक द्वारा मत पत्र भेजने की सुविधा है। इसके अतिरिक्त ऐसे फ्रांसीसी नागरिकों के लिए जो विदेशों में रहते हों और सैनिकों के लिए जो फ्रांस से बाहर गये हों, प्रोक्सी की भी व्यवस्था है अर्थात् किसी दूसरे के द्वारा मत डलवाया जा सकता है। मतदान की प्रक्रिया बहुत सरल है, एक मेज पर मत पत्र रखे होते हैं। मतदाता अपनी पसन्द के उम्मीदवार का मत पत्र लेकर मत डाल सकता है किन्तु यदि वह अपने मत को गुप्त रखना चाहे तो मतदाता एक से अधिक उम्मीदवारों के मत पत्र लेकर चुनाव स्थान पर उसे एक लिफाफे में बन्द कर मतों की पेटी में डाल देता है।

सीनेट का चुनाव—संविधान में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि सीनेटरों का चुनाव सर्वव्यापी मताधिकार द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से होगा। यथार्थ चुनाव पद्धति कानून द्वारा निर्धारित की गयी है। सीनेट के लिए उम्मीदवारों की आयु कम से कम 35 वर्ष होनी चाहिए। उनका चुनाव 9 वर्ष की अवधि के लिए होता है और प्रति तीन वर्ष में 1/3 सदस्य चुने जाते हैं। फ्रांस की सीनेट भारत की राज्य सभा के समान एक स्थायी निकाय है। सीनेट के उम्मीदवारों के लिए अन्य अर्हताएँ वे ही हैं जो एसेम्बली के सदस्यों के लिए विहित हैं, उन्हें अपने स्थानापन्न का नाम भी देना होता है। फ्रांस, सहारा और अन्य चार समुद्रपार प्रान्तों में सीनेटरों का चुनाव निर्वाचक मण्डलों द्वारा होता है।

प्रत्येक प्रान्त के निर्वाचक मण्डल में अग्रलिखित श्रेणियों को सम्मिलित किया जाता है (1) डिपार्टमेंट के प्रतिनिधि। (2) डिपार्टमेंट का प्रतिनिधित्व करने वाले कौंसिलर। (3) म्युनिसिपल कौंसिलर, जिनकी संख्या जनसंख्या के अनुसार इस प्रकार नियत होती है—(अ) 9 000 से लेकर 30 000 तक जनसंख्या वाले कम्यूनों तथा सीन प्रान्त के सभी 60 कम्यूनों में सभी म्युनिसिपल कौंसिलर, (आ) 30,000 से ऊपर जनसंख्या वाले कम्यूनों में प्रत्येक 1,000 अधिक जनसंख्या के

सदस्य वाले तथा वहु सदस्यीय क्षेत्रो के साथ हुआ है।

आनुपातिक प्रतिनिधित्व—इसे 1945 म लागू किया गया था। चुनाव-क्षेत्र बहु-सदस्यीय थे और चुनाव उम्मीदवारो की सूचियो के लिए होते थे। अधिक वडे दलो को कुछ अधिक प्रतिनिधित्व मिलता था, परन्तु उन दलो द्वारा *प्राप्त स्थानों को उनके बीच आनुपातिक आधार* पर विभाजित किया जाता था। उदाहरण के लिए, एम० आर० पी० को 24 9 प्रतिशत मता के मिलने पर 27 प्रतिशत स्थान मिले और दक्षिण पथी दलो को 13 3 प्रतिशत मता के मिलने पर 11 9 प्रतिशत स्थान मिले। अतएव इस पद्धति ने वडे और सगठित दलो को लाभ पहुचाया और प्रतिनिधियो पर दला का *अनुशासन* भी बढा, परन्तु इसका मुख्य दोष यह रहा कि पार्लियामेंट म प्रधान तत्वो के प्रतिनिधित्व के स्थान पर निर्वाचको के सभी विभागो का प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ।

1958 मे लागू हुई चुनाव पद्धति—वतमान चुनाव-पद्धति 13 अक्टूबर 1958 को नये *शासन द्वारा जारी अध्यादेश पर आधारित है। अभी तक 1958 म अपनायी गयी पद्धति ही* जारी है जबकि पार्लियामट को निवाचन पद्धति के विषय म कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है। वर्तमान निर्वाचन-पद्धति 'दो वार मतदान के साथ एक सदस्य वाली' है, जो फ्रास की पद्धतिया म सबसे अधिक सरल और सबसे अधिक बार अपनायी गयी है। पर तु नेशनल एसेम्बली के सभी *552 प्रतिनिधिया का चुनाव इसी एक पद्धति के द्वारा नही होता वरन् उसम कुछ अन्तर भी है।* वास्तव मे इस समय फ्रास म तीन पद्धतियो का प्रयोग होता है, जिसका सक्षिप्त वणन अग्रलिखित है (1) फ्रास और कार्सिका के 93 प्रान्तों (Departments) के 465 प्रतिनिधियो तथा समुद्रपार चार प्रान्ता के प्रतिनिधियो का चुनाव 'दो बार मतदान के साथ एक सदस्य वाली' पद्धति के अनुसार होता है। इसके अनुसार प्रथम मतदान म वह उम्मीदवार विजयी घोषित होता है जिसे कम से कम डाले गये मतो का '50 प्रतिशत+1' मत मिलें और एक सप्ताह बाद होने वाले मतदान म जिसे कुल मतदाताओ की सख्या का 1/4 अथवा सबसे अधिक मत मिलें, वह उम्मीदवार विजयी होता है। निर्वाचन के लिए सम्पूर्ण फ्रास 465 चुनाव क्षेत्रा म बँटा है। (2) पाच समुद्र-पार प्रदेशा को छ प्रतिनिधि चुनने का अधिकार है। चार का चुनाव एक सदस्य वाले क्षेत्रो और शेष दो का एक दो सदस्य वाले चुनाव क्षेत्र से होता है और उनमे केवल एक ही बार मतदान होता है। (3) सहारा क दो प्रान्ता को चार प्रतिनिधि चुनने होते हैं। एक प्रान्त केवल एक ही प्रतिनिधि चुनता है और दूसरा तीन। दूसरे प्रान्त म तीन उम्मीदवारा की सूचियो के लिए मतदान होता है। दोनो ही प्रान्ता म उम्मीदवार यूरोपीय या मुसलमान हो सकते है।

उम्मीदवार और स्थानापन्न—उम्मीदवारो के लिए कोई विशेष अर्हता आवश्यक नही है। उनके नाम निर्वाचका के रजिस्टर म लिखे होने चाहिएँ और 5,000 से अधिक जनसख्या वाले कम्यूनो म उन्हे अपनी पहचान का सरकारी अधिकारियो का सन्तोषजनक प्रमाण देना होता है। मतदाता एक से अधिक निर्वाचन क्षेत्रा म मतदान नही कर सकते। उम्मीदवारा की आयु कम से कम 23 वर्ष होनी जरूरी है। उम्मीदवारो का चुनाव पाँच वर्ष की अवधि के लिए होता है। वतमान सविधान के अन्तगत पुरुषो और स्त्रियो को समान शर्तों पर ही मतदाता व उम्मीदवार बनने का अधिकार मिला है। वतमान गणतन्त्र म सबसे महत्त्वपूर्ण नई बात यह है कि सभी उम्मीदवारो, और जहाँ सूचियो के अनुसार चुनाव होता है, वहाँ सूचियो के स्थानापन्न उम्मीदवारो की नामजदगी भी होनी आवश्यक है। ये स्थानापन्न उम्मीदवार चुनाव के बाद चुने गये प्रतिनिधि का रिक्त स्थान भरते हैं जो चाहे उनकी मृत्यु के कारण खाली हो अथवा वे मन्त्रि-परिषद् का सदस्य बनने पर पार्लियामेंट की सदस्यता के लिए अयोग्य ठहराये जायें। ऐसी दशाओ म प्रतिनिधि का रिक्त स्थान स्थानापन्न को मिलता है, परन्तु यदि कोई प्रतिनिधि त्याग पत्र दे दे या अन्य किसी

विहित किय जायेगे, पर तु काग्रेस इस सम्ब ध म बने नियमो को कानून द्वारा बदल सकती है अथवा उनके सम्ब ध म विनियम बना सकती है। इसी के आधार पर चुनावो का सचालन राज्यो द्वारा किया जाता है। अ त म, सविधान की धारा 1 क सैक्शन 5 म लिखा है— प्रत्येक सदन चुनावो, उनके परिणामो और अपने सदस्यो की योग्यता का निर्णय करगा।'

सीनेटरो की अर्हताओ के विषय म सविधान म कहा गया है कि उनकी आयु 30 वष से कम नही होनी चाहिए वह जिस राज्य के लिए चुना जाय उसी का निवासी होना चाहिए, और कम से कम 9 वष की अवधि से सयुक्त राज्य अमरीका का नागरिक होना चाहिए। इनके अतिरिक्त सीनेट ने ऐसा नियम बनाया है कि यदि कोई सीनेटर एक नियत सीमा स अधिक धन चुनाव म खच करता है तो सीनेट उसे अपना स्थान ग्रहण करने स वचित कर देगी। 1913 के सत्तरहवें सशोधन क अ तगत सीनेटर उ ही मतदाताओ द्वारा चुने जाते हैं, जो राज्य विधायिका क बडी सख्या वाले सदन को चुनते है। इस प्रकार सीनेटरो का प्रत्यक्ष चुनाव होता है और उसका आधार लोकप्रिय है। सीनेटरो का कायकाल 6 वष है, पर तु सीनेटर बहुधा फिर से दूसरी तीसरी बार चुने जात है। साधारणतया सीनेटर 12 18 या 24 वष तक सीनेट के सदस्य रहते है। 1/3 सदस्यो का चुनाव प्रति दो वष होता है इस प्रकार सीनेट एक स्थायी सदन है।

प्रतिनिधि सदन के सदस्यो की कुल सख्या 435 है, जो 1910 की दस वर्षीय जनगणना के बाद स्थायी रूप से नियत कर दी गयी थी। प्रति 10 वष बाद होने वाली जनगणना के आधार पर कुल सख्या को विभिन्न राज्यो म बाट दिया जाता है। सविधान ने यह सीमा लगा दी है कि प्रति 30,000 जनसख्या पर एक से अधिक प्रतिनिधि नही होगा इन निर्वाचन क्षत्रो का निर्माण राज्यो की विधायिकाएँ करती है और ऐसा करते समय प्रभुत्वशाली दल यह प्रयत्न करता है कि निर्वाचन क्षेत्र इस प्रकार बनाये जाये कि उस दल के अधिक से अधिक सदस्य चुने जा सके। इस अवाछनीय प्रथा को जेरीमडरिंग (Gerrymandering) कहते है क्योकि इसका आरम्भ करने वाला जरी नाम का गवनर था। बीयड के अनुसार इस प्रथा के परिणामस्वरूप विचित्र राजनीतिक भूगोल की रचना होती है। उदाहरण के लिए जूते के फीत (Shoe string) जैसा निर्वाचन क्षेत्र जो एक दक्षिणी राज्य के लम्ब प्रदेश म फला हुआ था और काठी क थल (saddle bag) जैसे निर्वाचन क्षत्र जो इलियोनाइस राज्य म था। इस प्रथा के कारण प्रतिनिधि सदन निर्वाचन के समय व्यक्त मतो का सही रूप म प्रतिनिधित्व नही कर पाता। 1952 के चुनावो म रिपब्लिकनो डेमोक्रटो और स्वत त्र सदस्यो को क्रमश 50 6, 47 4 और 2 प्रतिशत मत मिल थ। कि तु सदन म बहुमत डेमोक्रेटो का रहा।[1] इस समय एक प्रतिनिधि औसतन 3½ लाख जनसख्या का प्रतिनिधित्व करता है।

प्रतिनिधि म अग्रलिखित अहताएँ होनी आवश्यक है (1) वह सयुक्त राज्य का कम स कम 7 वष की अवधि का नागरिक हो (2) कम से कम उसकी आयु 25 वष हो और (3) वह उसी राज्य का रहने वाला हो जिसके द्वारा वह चुना जाय। इसके अतिरिक्त वह सघ सरकार का सैनिक अथवा नागरिक अधिकारी नही होना चाहिए। प्राय सभी राज्यो ने यह नियम भी बनाया है कि राज्य सरकार के अधिकारी भी सघीय सरकार म कोई उत्तरदायी स्थान न ग्रहण करें। कुछ राज्यो म यह भी प्रतिब ध है कि प्रतिनिधि उसी निर्वाचन क्षत्र का निवासी हो जहाँ से वह चुना जाय। अ य राज्यो म एसा नियम प्रथा पर आधारित है। प्रत्यक सदस्य दो वष के लिए चुना जाता है। यह काय काल इतना कम है कि इस व्यवस्था की व्यापक आलोचना की गयी है। एक वष म तो सदस्य को सदन के काय और कायवाही का कुछ ज्ञान व अनुभव हो

[1] Bruntz G C *Understarding Our Government* p 245

लिए एक अतिरिक्त प्रतिनिधि। (4) 9,000 से कम जनसंख्या वाले कम्यूनों के म्युनिसिपल कौंसिलर अपने में से जनसंख्या के अनुसार 1 से 15 तक प्रतिनिधि चुनते हैं। (5) समुद्रपार प्रदेशों में भी, जिनमें से प्रत्येक एक सीनेटर चुनता है, निर्वाचक मण्डल इसी प्रकार बने हैं, परन्तु जिन कम्यूनों में अभी तक पूर्णतः निर्वाचक कौंसिलें नहीं हैं, उनके लिए विशेष व्यवस्था है। 307 सीनेटरों का चुनाव भी निम्नलिखित चार विभिन्न पद्धतियों के अनुसार होता है (क) फ्रांस के 90 प्रान्तों में से केवल 7 को छोड़कर सभी प्रान्तों में, जिन्हें 1 से 4 तक सीनेटर भेजने का अधिकार प्राप्त है, समुद्रपार प्रान्तों व प्रदेशों में सीनेटरों का चुनाव दो मतदान के साथ बहुमत पद्धति से होता है। चुने जाने के लिए उम्मीदवार को प्रथम मतदान में कुल डाले गये मतों का पूर्ण बहुमत और कुल मतदाताओं की 1/4 संख्या के बराबर मत प्राप्त होने चाहियें, परन्तु दूसरे मतदान में केवल सापेक्ष बहुमत (relative majority) आवश्यक है। (ख) फ्रांस में अधिक घने प्रान्तों को 5 या अधिक सीनेटर चुनने का अधिकार है। वे अपने 60 सीनेटरों का चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व के अनुसार करते हैं। (ग) अल्जीरिया के 8 निर्वाचन क्षेत्रों से 32 सीनेटरों का चुनाव भी दो बार मतदान के साथ बहुमत पद्धति से हुआ। परन्तु मतदान नियत अनुपात के अनुसार यूरोपियन और मुस्लिम उम्मीदवारों की सूचियों के लिए हुआ। इस प्रकार 10 यूरोपियन और 22 मुस्लिम चुने गये। (घ) विदेशों में बसे फ्रांसीसी नागरिकों का प्रतिनिधित्व करने वाले 6 सीनेटरों का चुनाव पहले विदेशों में रहने वाले फ्रांसीसियों की उच्च परिषद् करती है, और परिषद् के चुनाव को सीनेट स्वीकृत करती है।

कुछ विचार—जैसा कि ऊपर दिये गये वर्णन से ही स्पष्ट है, फ्रांस में पार्लियामेंट के दोनों सदनों के लिए निर्वाचन-पद्धति काफी पचीदा है। सभी निर्वाचन क्षेत्र एक प्रकार के नहीं हैं और विभिन्न प्रकार के निर्वाचन-क्षेत्रों के लिए विभिन्न निर्वाचन पद्धतियों का प्रयोग होता है। यद्यपि चुनाव अभियान के सम्बन्ध में रेडियो व टेलीविजन तथा मुद्रित साहित्य के द्वारा प्रचार आदि पर कठोर सीमायें हैं, फिर भी एक कमी यह है कि कानून के अन्तर्गत राजनीतिक दलों व उम्मीदवारों को अपनी आय के स्रोतों तथा व्यय के मदों को प्रकाशित करना आवश्यक नहीं है। पूर्व वर्णित प्रचार साधनों के अतिरिक्त अन्य साधनों के प्रयोग पर कोई कानूनी प्रतिबन्ध नहीं है। ट्रेड यूनियनों तथा अन्य व्यावसायिक संघों द्वारा दिये जाने वाले अंशदानों—चन्दों—पर भी कोई प्रतिबन्ध नहीं है। इस प्रकार के प्रतिबन्धों का न होना एक दोष है। वर्तमान निर्वाचन-पद्धति का एक अन्य उल्लेखनीय दोष यह है कि विभिन्न दलों के लिए डाले गये मतों की संख्या और उनको पार्लियामेंट में मिले स्थानों अर्थात् प्रतिनिधित्व में बड़ा अन्तर है। परिणामस्वरूप 1958 में बनी एसेम्बली फ्रांस के इतिहास में सम्भवतः सबसे कम प्रतिनिध्यात्मक थी। 70 लाख मतदाताओं का, जिन्होंने समाजवादी व साम्यवादी उम्मीदवारों के पक्ष में मतदान किया केवल 70 सदस्य प्रतिनिधित्व करते हैं, जबकि यू० एन० आर० का मतदान करने वाले लगभग 35 लाख मतदाताओं के एसेम्बली में 200 प्रतिनिधि हैं।

5 संयुक्त राज्य अमरीका में निर्वाचन-पद्धति

मौलिक संविधान में कहा गया है कि प्रतिनिधि-सदन के सदस्यों (Representatives) का चुनाव विभिन्न राज्यों की जनता द्वारा किया जायगा। संविधान का सत्रहवां संशोधन, जो 1913 में पास हुआ, यही व्यवस्था करता है कि सीनेट के सदस्यों का चुनाव भी जनता द्वारा हो। मौलिक संविधान में उनका चुनाव राज्य की विधायिकाओं द्वारा की जाने की व्यवस्था थी। इस प्रकार चुनाव की व्यवस्था के बारे में सबसे महत्वपूर्ण उपबन्ध धारा 1 सेक्शन 4 में इस प्रकार है—"प्रतिनिधियों और सीनेटरों के चुनाव के समय, स्थान और विधि प्रत्येक राज्य के

देहान्त हो जाये या वह त्याग पत्र दे दे तो उसके रिक्त स्थान पर नया चुनाव नहीं कराया जाता, वरन् उससे कम मत प्राप्त करने वाले अगले उम्मीदवार को उस स्थान पर निर्वाचित घोषित कर दिया जाता है।

चुनाव में धन का बड़ा महत्वपूर्ण भाग रहता है। व्यय को सीमित रखने के लिए एक कानून (The Political Fund Regulating Law) बना है, जो भ्रष्ट प्रथाओं को भी रोकता है। 1952 में हुए आम चुनाव में चुनाव अभियान की सीमा 3 और 4 लाख येन के बीच रखी गयी थी, परन्तु यथार्थ में चुनाव व्यय उससे दुगुना या तिगुना हुआ था। चुनाव अभियान के लिए राजनीतिक दलों को व्यावसायिक फर्मों से बड़ी धनराशि, दान व चन्दे के रूप में मिलती है। ऊपर वर्णित कानून के अनुसार किसी भी व्यक्ति तथा संगठन द्वारा क्रमशः 500 और 1,000 येन या अधिक चन्दे में दी जाने वाली राशि का प्रत्येक दल को हिसाब रखना पड़ता है और दल के कोषाध्यक्ष को इस प्रकार की सूचना वर्ष में 3 बार प्रकाशित करनी होती है।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद के चुनावों में मत देने वालों का प्रतिशत 75 के लगभग रहा है। यह कुछ आश्चर्यजनक बात है कि शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में मतदान का प्रतिशत ऊँचा रहता है, जिनकी आर्थिक स्थिति खराब है, उनमें मतदान न करने वालों की संख्या अधिक है। ऐसे व्यक्ति उम्मीदवारों व चुनाव प्रश्नों से अपेक्षाकृत, अपरिचित होते हैं और वे चुनाव में भाग लेने के लिए समय भी नहीं निकाल पाते। परन्तु ऐसे ही व्यक्ति बाह्य दबाव तथा भ्रष्टाचार के शिकार भी अधिक होते हैं। जापान में यनागा के मतानुसार, अन्य प्रजातन्त्रीय देशों जैसी राजनीतिक शिक्षा मतदाताओं को नहीं मिल पायी है। अभी तक मतदाता अन्य प्रभावों व सम्बन्धों के अधीन मतदान करते है। यदि मतदाता का अपना कोई राजनीतिक विश्वास भी होता है तब भी वह उसके अनुसार मतदान नहीं करता।

मतदान करते समय मतदाता पर उम्मीदवारों के सामाजिक पद, आय, परिवार, पेशा, धार्मिक सम्बन्ध, भौगोलिक स्थिति आदि बातों का विशेष प्रभाव पड़ता है, अर्थात् राजनीतिक प्रश्नों या दलीय कार्यक्रम का प्रभाव कम रहता है। नोबुटाका आइक के मतानुसार चुनावों के सम्बन्ध में तीन 'बन' (ban) का विशेष महत्त्व है, जो इस प्रकार हैं—कमबन (Kamban) अर्थात् साइन बोर्ड, जिबन (Jiban) अर्थात आधार, और कबन (Kaban), अर्थात् थैली।[1] 'कमबन' का सम्बन्ध समुदाय में उम्मीदवार के नाम और पद (reputation and standing) से है। जिन उम्मीदवारों का समुदाय में किन्हीं कारणों से नाम ऊँचा होता है या जो विख्यात होते हैं, उन्हें अधिक मत प्राप्त होते हैं। यह बात स्थानीय चुनावों के लिए विशेष रूप से सच है, परन्तु राष्ट्रीय चुनावों के बारे में भी लागू होती है। 'जिबन' का अभिप्राय यह है कि उम्मीदवार का निर्वाचन क्षेत्र में क्या आधार है। आधार बनाने के लिए उम्मीदवार निर्वाचन क्षेत्र के प्रमुख व्यक्तियों और साधारण मतदाताओं से सम्पर्क स्थापित करता है। उम्मीदवार बहुधा विशेष अवसरों पर मतदाताओं के सामने आता है और वह उस क्षेत्र के संगठनों व संघों को चन्दा आदि देता है। वह अन्य प्रकार से जनता की सेवा व सहायता कर उनका सेवक बनने का प्रयत्न करता है। 'कमबन' का तात्पर्य बड़ा सरल और सीधा है। जो उम्मीदवार अधिक व्यय करता है, उसे साधारणतया अधिक मत प्राप्त होते है। अन्त में, जैसा अन्य देशों में भी होता है, जापानी मतदाता अपने मत को खोना नहीं चाहते अर्थात् वे उस उम्मीदवार के पक्ष में मतदान करते हैं जिसके जीतने की उन्हें अधिक आशा होती है। साथ ही, यदि उन्हें यह अनुभव होता है कि कोई उम्मीदवार बहुत बड़ी बहुसंख्या से अवश्य जीतेगा तो वे अपना मत उसे देकर खोना पसन्द नहीं करते।

---

[1] Ike, N, *Japanese Politics* pp 192-93

पाता है और अगले ही वप उसे नये चुनाव की तैयारी करनी पड जाती है, अतएव वह अपना काय लगन और कुशलता से नही कर पाता। एक आलोचक ने ठीक ही कहा है—जबकि ब्रिटेन म उम्मीदवार कॉमन सभा के लिए खडे होते है (candidates stand), सयुक्त राज्य म प्रतिनिधि के लिए उम्मीदवार दौडते हैं (candidates run)।

6 जापान मे निर्वाचन-पद्धतियाँ

प्रतिनिधि सदन की अवधि 4 वप है। साधारण चुनाव, अवधि पूण हाने पर ही होते हैं, यदि प्रतिनिधि सदन का विघटन न किया गया हो। प्रधानमन्त्री आम निर्वाचन का समय नियत करता है। चुनाव की तारीख की घोपणा सम्राट के आदश से की जाती है। प्रतिनिधि-सदन के विघटन के 30 दिन के भीतर चुनाव होना आवश्यक है। प्रतिनिधि सदन का चुनाव किसी भी दिन हो जाता है। नामजदगी का ढग ब्रिटेन की तरह से सरल है। दल अपने अपने उम्मीदवारा के नाम तय कर लेते हैं। जापान म इस उद्देश्य के लिए सयुक्त राज्य अमरीका की तरह सावजनिक रूप से प्रारम्भिक चुनाव आदि की व्यवस्था नही है। कोई भी व्यक्ति जो चुनाव म खडा होना चाहता है अपना नामजदगी पत्र स्थानीय चुनाव बोड के अध्यक्ष के सामने दाखिल करता है। उसम उसका नाम, कानूनी निवास, जन्म तिथि, पेशा और दल का नाम जिससे सम्बन्धित होता है, आदि दिये रहते है। नामजदगी पत्र वह स्वय या उसकी ओर से दूसरा कोई व्यक्ति पेश कर सकता है। नामजदगी पत्र के साथ उम्मीदवार को जमानत रूप म विहित धनराशि जमा करनी होती है, जो जब्त कर ली जाती है, यदि उम्मीदवार चुनाव म भाग न ले अथवा कानून द्वारा नियत सख्या से कम मत प्राप्त करे।

नामजदगी के बाद से ही विभिन्न राजनीतिक दल अपने उम्मीदवारा के पक्ष म चुनाव अभियान चलाते हैं। इस काय के लिए जापान म केवल 3 सप्ताह मिलते हैं। चुनाव अभियान के दौरान सावजनिक सभायें एव भापण आदि सगठित किये जाते है। उम्मीदवार छपे पोस्टकाड तथा फोटोग्राफ आदि भी मतदाताआ क पास भेजते हैं। प्रत्येक उम्मीदवार का एक अभियान प्रबन्धक और वित्तीय प्रतिनिधि होना आवश्यक है। वित्तीय प्रतिनिधि को चुनाव के बाद सरकार को व्यय की रिपोट देनी होती है। चुनाव आन्दोलन म प्रधानमन्त्री, अन्य मन्त्री और राजनीतिक दला क नेता अपने अपने दला के उम्मीदवारा के पक्ष म सक्रिय भाग लेते है। सरकार की ओर स यह व्यवस्था है कि जापान की ब्राडकास्टिंग कार्पोरेशन के रेडियो स्टशन पर प्रत्येक उम्मीदवार का रिकाड किया हुआ 5 मिनट का भापण तीन बार प्रसारित किया जाता है।

चुनावो के प्रबन्ध का दायित्व प्रधानमन्त्री के कार्यालय के एक अग स्थानीय स्वायत्त बोड के चुनाव विभाग पर है। यह सगठन चुनाव म भाग लेने के लिए मतदाताआ को उत्साहित करता है और इस उद्देश्य स दश भर मे चुनाव देख रेख कमीशनो का समथन करने के लिए यह विभिन्न सगठनो की सेवाओ का इश्तहार व पोस्टर आदि बँटवाने मे प्रयोग करता है। स्थानीय देख रेख कमीशन सयुक्त बठको म उम्मीदवारो को बोलने का अवसर दते हैं। प्रत्येक उम्मीदवार 1,500 शब्द का एक सावजनिक वक्तव्य, जिसम उसका सक्षिप्त जीवन परिचय तथा उसके राजनीतिक विचार दिये हो, प्रीफेक्चर के चुनाव देख रेख कमीशन द्वारा प्रकाशित तथा वितरित कराने का अधिकार रखता है। चुनाव अभियान क सम्बन्ध म उम्मीदवारो को सरकार से मिलने वाली सुविधायें और मतदाताओ को उत्साहित करने सम्बन्धी प्रयत्न बडे ही सराहनीय हैं। इनकी व्यवस्था करन म जापान अनेक प्रजातन्त्रीय देशो स कुछ आगे बढा है। मतदान प्रक्रिया बडी सरल है। मतदाता को मत पत्र पर एक उम्मीदवार का, जिसे वह मत देना चाहता है, कवल नाम लिखना होता है। मतदान के बाद गिनती होती है। यदि किसी सदस्य का अपना स्थान ग्रहण करने से पूव

किया गया है। कोई भी मतदाता उम्मीदवार बन सकता है, यदि उसकी आयु 23 वर्ष की हो। सभी नागरिकों को शिक्षा, निवास, सामाजिक उद्भव, सम्पत्ति और पूर्वकालीन गतिविधियों का कोई ध्यान न रखते हुए मताधिकार प्रदान किया गया है। केवल पागल व दण्ड भोगने वाले व्यक्तियों को मताधिकार से वंचित किया गया है। नीचे से लेकर ऊपर तक विभिन्न सोवियतों के सदस्यों को सर्वव्यापी, सम और प्रत्यक्ष मताधिकार के आधार पर गुप्त मतदान द्वारा चुना जाता है। सशस्त्र सेनाओं के सदस्यों को मताधिकार प्राप्त है और वे पदों पर निर्वाचित भी किये जा सकते हैं। मताधिकार की दृष्टि से सोवियत संघ के प्रावधान संयुक्त राज्य अमरीका की तुलना में आगे हैं क्योंकि संयुक्त राज्य अमरीका में अभी तक सर्वव्यापी मताधिकार पर व्यवहार में कई प्रकार के प्रतिबन्ध हैं और नीग्रो जाति यथार्थ में मतदान के अधिकार सीमित रूप में ही प्रयोग कर पाती है।

सोवियत संघ के कानूनों द्वारा निर्वाचन क्षेत्रों का निर्माण भूमिगत आधार पर है और निर्वाचन क्षेत्र एक-सदस्यीय हैं। निर्वाचन क्षेत्र और उनके विभागों को इस प्रकार बनाया जाता है कि सभी नागरिक सुविधापूर्वक मतदान कर सकें। निर्वाचन सम्बन्धी नियमों के अन्तर्गत सभी नागरिक वे चाहे जहाँ हों, चाहे यात्रा कर रहे हों अथवा स्वास्थ्य लाभ केन्द्र में हों, मतदान कर सकते हैं। निर्वाचन सम्बन्धी कानूनों व नियमों के पालन की देख रेख का उत्तरदायित्व निर्वाचन आयोगों पर है। चुनाव सम्बन्धी प्रश्नों का निर्णय केन्द्रीय निर्वाचन आयोग करता है। केन्द्रीय निर्वाचन आयोग में एक सभापति, एक उप सभापति, एक सेक्रेटरी और 12 सदस्य होते हैं। आयोग में मजदूर संघों, सहकारी समितियों, साम्यवादी दल के संगठनों, युवा संगठनों, विभिन्न सांस्कृतिक, तकनीकी और वैज्ञानिक सोसाइटियों तथा मजदूरों व किसानों के अन्य संगठनों के प्रतिनिधि रहते हैं। इसी आधार पर केन्द्रीय क्षेत्रीय तथा वार्ड चुनाव आयोग बनाये जाते हैं। सोवियत संघ के निर्वाचन कानून के अनुसार सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत में प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र को सम प्रतिनिधित्व का अधिकार प्राप्त है। अब साधारणतया प्रति 3,00,000 जनसंख्या के पीछे एक प्रतिनिधि संघीय सोवियत (Soviet of the Union) के लिए चुना जाता है। राष्ट्रीयताओं की सोवियत (Soviet of the Nationalities) में जो सर्वोच्च सोवियत का द्वितीय सदन है, प्रत्येक संघीय गणराज्य, स्वाधीन गणराज्य, स्वाधीन प्रदेश और राष्ट्रीय क्षेत्र को सम प्रतिनिधित्व का अधिकार है।

सोवियत संघ में उम्मीदवारों की नामजदगी का अधिकार 'सार्वजनिक संगठनों और काम करने वालों की सोसाइटियों में निहित है। साम्यवादी दल के संगठन, मजदूर संघ, सहकारी संगठन और सांस्कृतिक सोसाइटियाँ विभिन्न स्तरों की सोवियतों के लिए उम्मीदवारों को नाम कर सकते हैं। इस प्रकार किसी भी पद के लिए साम्यवादी दल अथवा अन्य संगठनों द्वारा एक अधिक उम्मीदवारों को नामजद किया जा सकता है। परन्तु विभिन्न उम्मीदवारों की यक्ति योग्यताओं पर सार्वजनिक रूप से विचार होता है और साधारणतया एक पद के लिए किसी ए को स्वीकार कर लिया जाता है। मतपत्र पर केवल एक ही उम्मीदवार का नाम दिया होता है मतदाता को मतदान करते समय उसी उम्मीदवार के पक्ष में मत देना होता है या वह उसका नाम काट सकता है। इस प्रकार चुनाव केवल एक औपचारिक क्रिया है।

आलोचना—सोवियत पद्धति की इस आधार पर तीव्र आलोचना की जाती है। यह कहा गया है कि सोवियत संघ के चुनावों में केवल एक ही राजनीतिक दल भाग लेता है। अन्य सार्वजनिक संगठन भी उम्मीदवारों की नामजदगी में भाग ले सकते हैं, किन्तु वे सभी साम्यवादी दल के समर्थक होते हैं। चुनावों में साम्यवादी दल के बाहर से सदस्य भी चुने जाते हैं, विशेषकर निम्न स्तरीय सोवियतों में ऐसे सदस्यों की संख्या ऊपर की सोवियतों की अपेक्षा बड़ी होती है।

7 स्विट्जरलैण्ड में निर्वाचन पद्धतियाँ

नेशनल कौंसिल के सदस्यो की सख्या 196 है और एक सदस्य 22 से 24 हजार तक जनसख्या का प्रतिनिधित्व करता है। प्रतिनिधियो का चुनाव पुरुष मताधिकार के आधार पर होता है। मतदाता अपने प्रतिनिधियो को प्रत्यक्ष रीति से गुप्त मतदान द्वारा चुनते हैं। प्रत्येक पुरुष स्विस नागरिक, जिसकी आयु कम से कम 20 वर्ष हो और जिसे केन्टन के मताधिकार से वचित न किया गया हो, नेशनल कौंसिल के चुनाव मे भाग ले सकता है। प्रत्येक केन्टन और अर्द्ध-केन्टन एक निर्वाचन जिला होता है। केन्टनो को 23,000 जनसख्या के पीछे एक प्रतिनिधि के हिसाब से स्थान मिले हैं, किन्तु जिनकी सख्या इससे भी कम है, उन्हे एक एक स्थान मिला है। चुनावो के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति का प्रयोग होता है। जिन केन्टनो को केवल एक स्थान प्राप्त है वहाँ आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति का पालन नही किया जा सकता। शेष केन्टनो मे सूची पद्धति के अनुसार चुनाव होता है। प्रत्येक बडा केन्टन 2, 3, 4 या अधिक प्रतिनिधि चुनता है। बर्न और ज्यूरिच दो बहुत बडी जनसख्या वाले केन्टन हैं और उन दोनों को कुल स्थानो के लगभग ⅕ स्थान प्राप्त है। प्रत्येक केन्टन मे विभिन्न दलो को डाले गये मतो के अनुपात मे स्थान मिलते है। प्रत्येक मतदाता को उतने ही मत प्राप्त होते हैं जितने उस निर्वाचन क्षेत्र से प्रतिनिधि चुने जाने हो। विभिन्न सूचियो मे से वह किसी एक सूची के पक्ष मे मत देता है। सूची मे सभी या कम स्थानो के लिए उम्मीदवारो के नाम दिये जा सकते है। चुनाव प्रति चार वर्ष मे अक्तूबर माह के अन्तिम रविवार को होते है। यदि अपने कार्य-काल के बीच मे नेशनल कौंसिल का कोई सदस्य त्याग-पत्र दे दे या किसी सदस्य की मृत्यु हो जाय, तो उसी केन्टन से मे चुना गया वह उम्मीदवार, जो उस सूची मे अगले स्थान पर हो, रिक्त स्थान को भरता है। अत स्विट्जरलैण्ड मे उप चुनाव की आवश्यकता नही पडती।

कौंसिल ऑफ स्टेट मे, प्रत्येक केन्टन दो और प्रत्येक अर्द्ध केन्टन एक प्रतिनिधि भेजता है। अर्द्ध केन्टन वह होता है जिसे द्वितीय सदन मे एक प्रतिनिधि भेजने तथा सघीय सविधान के सशोधन पर हुए लोक निर्णयो मे केवल आधा मत प्राप्त होता है। केवल तीन केन्टन दो-दो अर्द्ध केन्टनो मे विभाजित हैं। विभिन्न केन्टनो मे प्रतिनिधियो का चुनाव भिन्न भिन्न प्रकार से होता है। कुछ केन्टनो मे इन प्रतिनिधियो का चुनाव उनकी बडी कौंसिल (Great Councils—Legislatures) करती है अर्थात अप्रत्यक्ष ढग से होता है। अन्य केन्टनो मे ये प्रतिनिधि मतदाताओ द्वारा चुने जाते हैं और लैंड्सजमीडे वाले केन्टनो मे प्रतिनिधियो का चुनाव लैंडसजमीडें करती है। कौन व्यक्ति प्रतिनिधि बन सकते है, इस बारे मे भी केन्टनो के अपने-अपने कानून हैं। इसके अतिरिक्त सदस्यो का कार्य-काल भी केन्टनो के कानूनो द्वारा विनियमित होता है। अधिकतर केन्टनो मे प्रतिनिधियो का कार्य काल 4 वर्ष है कुछ दूसरो मे 3 वर्ष और कुछ मे केवल एक ही वर्ष है। नेशनल कौंसिल की सदस्यता के लिए कोई विशेष अर्हता आवश्यक नही है, उम्मीदवार मतदाता होना चाहिए। परन्तु सविधान के अनुसार चर्च पादरी अथवा चर्च अधिकारी उसकी सदस्यता के लिए नही खडे हो सकते। कौंसिल ऑफ स्टेट की सदस्यता के लिए विभिन्न केन्टनो के अपने अपने कानून है, इन्ही के अनुसार चर्च पादरियो और केन्टन अधिकारियो को सदस्य बनने का अधिकार या न बनने की मनाही है। कोई एक व्यक्ति एक समय मे दोनो सदनो का सदस्य नही रह सकता। फेडरल एसेम्बली का कोई सदस्य सघ सरकार का अधिकारी नही रह सकता, यद्यपि कौंसिल आफ स्टेट के सदस्य केन्टनो की सरकार मे पदाधिकारी हो सकते हैं।

8 सोवियत सघ में निर्वाचन-पद्धतियाँ

1936 के अन्तर्गत 18 वर्ष से ऊपर आयु वाले सभी नागरिको को मताधिकार प्रदान

के बीच छाँट करने का कोई अवसर ही नही है और कुछ लेखक इस पूर्ण दिखावा समझते हैं, जिसका उद्देश्य विदेशियो पर यह प्रभाव डालना है कि सोवियत सघ म प्रजातन्त्र है।[1]

9 चीन मे निर्वाचन पद्धति

चीन म जनवादी काग्रेस का स्थान वैसा ही है जसा कि सोवियत सघ म सर्वोच्च सोवियत का है। राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस प्रान्तो, स्वाधीन प्रदशो, केन्द्रीय शासन के अधीन म्युनिसिपलिटियो, सशस्त्र सनाओ और विदशो म रहने वाल चीनियो के प्रतिनिधियो स मिलकर बनती है। प्रतिनिधियो की सख्या, राष्ट्रीय अल्पसख्यको क प्रतिनिधियो सहित, और उनक निर्वाचन के ढग की व्यवस्था कानून द्वारा की गयी है। राष्ट्रीय काग्रेस का निर्वाचन चार वर्ष क लिए होता है। चालू राष्ट्रीय काग्रस की अवधि पूर्ण होने स दो माह पूर्व इसकी स्थायी समिति के लिए आगामी काग्रेस के प्रतिनिधियो का निर्वाचन पूर्ण करा लना आवश्यक है। यदि कभी असाधारण परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जायें, जिनके कारण चुनाव न कराया जा सके, तो चालू काग्रेस के प्रतिनिधियो का कार्यकाल आगामी काग्रेस के प्रथम सत्र तक के लिए बढाया जा सकता है। प्रत्येक प्रान्त के लिए चुने जान वाल प्रतिनिधियो की सख्या का निर्धारण आठ लाख जनसख्या के पीछे एक प्रतिनिधि क हिसाब स किया गया है, जबकि केन्द्रीय सरकार के अधीन म्युनिसिपलिटियो और अन्य बडी जनसख्या वाले प्रदशो को एक लाख जनसख्या के पीछे एक प्रतिनिधि चुनन का अधिकार दिया गया है।

निर्वाचन कानून के अनुसार भूमिपति वर्ग के तत्त्वो, जिनका पद अभी तक नही बदला है और क्रान्ति विरोधियो को राजनीतिक अधिकारो से वंचित रखा गया है। इस प्रकार चीन के चुनाव कानून के अन्तर्गत सर्वव्यापी मताधिकार नही है। साधारणत निर्वाचन का आधार भूमिगत प्रतिनिधित्व है, परन्तु कुछ अपवादो म विशेष समूहो को भी प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है। स्वाधीन प्रदशो के प्रतिनिधि तो स्वत भूमिगत इकाइयो और राष्ट्रीय अल्पसख्यको का प्रतिनिधित्व करते हैं। परन्तु साधारण प्रान्तो और म्युनिसिपलिटियो के प्रतिनिधियो म विशेष रूप से 150 स्थान तो राष्ट्रीय अल्पसख्यको के प्रतिनिधियो के लिए अलग रखे गये थे, 60 स्थान सशस्त्र सनाओ क लिए अलग रखे गये थे, जिनका चुनाव सेनाओ म बनी सनिको की काग्रेसो ने किया और 30 स्थान समुद्रपार देशो म बस चीनियो के प्रतिनिधित्व के लिए रखे गये थे।

1959 म राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस के कुल सदस्यो की सख्या भी 1226 थी, जिनम से 150 स्त्रियाँ थी और 179 राष्ट्रीय अल्पसख्यको के प्रतिनिधि थे। सितम्बर 1964 म चुनी गयी तीसरी राष्ट्रीय जन काग्रस क प्रतिनिधियो की सख्या 2848 हो गयी। 1963 म सशोधित निर्वाचन कानून के अनुसार प्रान्त और स्वायत्त प्रदेश प्रति 4 लाख व्यक्तियो के पीछे एक प्रतिनिधि चुनते हैं परन्तु प्रत्येक प्रान्त से कम से कम 3 प्रतिनिधि अवश्य चुनकर आते हैं केन्द्रीय सरकार के प्रत्यक्ष नियन्त्रण के अधीन शहर, औद्योगिक शहर व जिले, जिनकी सख्या 2–3 लाख है प्रत्येक 50 हजार व्यक्तियो के पीछे एक प्रतिनिधि चुनते हैं राष्ट्रीय अल्पसख्यक 300, सशस्त्र सेनाएँ 120, समुद्रपारीय चीनी 30 प्रतिनिधि चुनते हैं।

राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस के प्रतिनिधियो का चुनाव पूर्णतया स्वतन्त्र नही होता। अन्य समाजवादी देशो की तरह चीन में भी उम्मीदवारो की एक ही सूची रखी जाती है। राष्ट्रीय जन काग्रेस की सदस्यता के लिए उम्मीदवारो की नामजदगी पर केन्द्रीय अधिकारियो का नियन्त्रण रहता है। यह नियन्त्रण 'मन्त्रणा पद्धति' के द्वारा लागू होता है। निर्वाचन कानून के अनुसार

---

[1] Stewart M *Modern Forms of Government* p 250

परन्तु आलोचको की दृष्टि म इन सदस्यो का चुनाव साम्यवादी दल की कृपा अथवा समथन से होता है । अतएव फाइनर के मतानुसार सोवियत सघ म ऐसे चुनावो पर आधारित सरकार को स्वतन्त्र नही कह सकते ।[1] प्रचलित पद्धति के पक्ष म एक सोवियत समथक का कथन इस प्रकार है—सोवियत निर्वाचन कानून के अनुसार नामजद किये जाने वाले उम्मीदवारो की सख्या पर कोई सीमा नही लगी है । तथ्य यह है कि अपने निर्वाचन सम्मेलन मे मतदाता स्वय ही एक व्यक्ति के नाम को सबकी सहमति से स्वीकार कर लेते है, सम्पूण सोवियत समाज की नतिक और राजनीतिक एकता की दशाओ म, जैसी एकता का पूजीवादी ससार को ज्ञान नही है । उसी लेखक के अनुसार सयुक्त राज्य अमरीका मे उम्मीदवारो की नामजदगी का अधिकार दोनो पूजीवादी राजनैतिक दलो को प्राप्त है, जिसका अथ केवल आय वाले पदो को आपस म बाटना है । इसके विपरीत सोवियत सघ म स्वय जनता अपने उम्मीदवारो को नामजद करती है । सयुक्त राज्य अमरीका की काग्रेस म एक भी श्रमिक नही, जबकि सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत म सभी श्रमिक, किसान, साम्यवादी दल के पदाधिकारी, वज्ञानिक, कलाकार, सरकारी कमचारी—पुरुष और स्त्रियाँ है ।

वतमान सविधान के निर्माण से पूव ही स्टालिन ने एक बार कहा था कि सोवियत सघ म विरोधी दल नही है, क्योकि वहाँ पर अब एक ही वग का समाज है । विभिन्न दल नही होते है, जहा कई वग हो, क्योकि दल वग का ही अग होता है । 1946 के चुनाव मे किसी भी मत पत्र पर एक से अधिक नाम अकित न था । चुनाव म 99 8 प्रतिशत मतदाताओ ने मतदान किया और लगभग 99 2 प्रतिशत मत 'साम्यवादी दल और उसके समर्थको के समूह के उम्मीदवारो के पक्ष' म डाले गय । 1954 म सर्वोच्च सोवियत के चुनावो म 99 98 प्रतिशत मतदाताओ ने मतदान किया । चुनावो म मतदाताओ का इतना बडा प्रतिशत भाग लता है, किन्तु पाश्चात्य प्रतिमानो के अनुसार चुनाव स्वतन्त्र नही होते । मतदान का अधिकार केवल 'साम्यवादी दल और उसके समथको के समूह' द्वारा नामजद उम्मीदवार को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने तक ही सीमित है । कुछ लेखको के अनुसार सोवियत सरकार चुनावो का प्रयोग प्रचार के प्रयोजन तथा सरकार म नये अधिकारियो की भर्ती के लिए करती है । हेजाड के अनुसार सोवियत सघ के निर्वाचन कानून के अन्तगत चुनावो का रूप लोकतन्त्रात्मक है, किन्तु उन पर ऐसे प्रतिबन्ध और विरोधी भार लगे हैं कि चुनाव स्वतन्त्र नही हो सकते ।[2]

इस विषय मे आग और जिक ने लिखा है—'सोवियत पद्धति वास्तव म उसस कम लोकतन्त्रात्मक है जितनी कि वह दिखायी पडती है । इन बातो का स्मरण न रखने से निणय करने म भूल होगी—(1) पाश्चात्य देशो की तरह बहुदलीय पद्धति का पूणतया अभाव, और (2) साम्यवादी दल व उनके अधिकारियो द्वारा चुनाव पद्धति पर प्राय पूण नियन्त्रण और प्रतिबन्धो का प्रयोग । निसन्देह बाद के निर्वाचन कानूनो म पूवकालीन पद्धतियो की तुलना म लोकतन्त्रात्मक रूप की व्यवस्था की गयी है और इसके लिए सोवियत सघ के कणधारो को उचित श्रेय देना चाहिए । परन्तु कठोर दलीय अधिनायकशाही के अन्तगत यह सम्भव नही हो सकता कि बहुसख्यक निर्दलीय निर्वाचकगण अपने राजनीतिक अधिकारो का बिना मागदशन व प्रतिबन्ध के प्रयोग कर सकें । यदि वहाँ प्रजातन्त्र है तो यह शक्ति के साम्यवादी एकाधिकार के लोह ढाँचे क भीतर है ।[3] माइकेल स्टीवट ने सत्य ही कहा है 'इस प्रक्रिया म (मतदाताओ के लिए) नीतियो

---

[1] This connot be called a free government for it is dominated by the Communist party and if there are non party nominees and later deputies it is by grace of and to the satisfaction of the party It is in a sophisticated sense only that the people choose their representatives —Finer H *Theory and Practice of Modern Government* p 256

[2] Hazard John N *The Soviet System of Government* pp 48-49

[3] Ogg and Zink *Modern Foreign Governments* pp 832-33

उन्नीसवाँ अध्याय

राजनीतिक दल और दलीय पद्धतियाँ

1 राजनीतिक दल

यह ठीक ही कहा गया है कि लोकतन्त्रात्मक शासन दलगत शासन है। लोकतन्त्र के सुचारु संचालन के लिए राजनीतिक दलों का होना नितान्त अनिवार्य है। यदि लोकतन्त्र, जैसा कि वाशिंगटन ने कहा था, 'जनता की शक्ति' पर आधारित है तो राजनीतिक दल वह नेतृत्व और दिशा प्रदान करते हैं जिसके बिना 'प्रभुता सम्पन्न' जनता की शक्ति प्रभावहीन ही रहती है। तात्पर्य यह है कि राजनीतिक दल उस तेल की तरह हैं जो लोकतान्त्रिक मशीनरी के संचालन में सुविधा उत्पन्न करता है। वस्तुतः राजनीतिक दल जनमत के वाहक और लोकतन्त्र की साज सज्जा के अनिवार्य अंग हैं (Political parties are the life line of modern democracy)। यह कहना सर्वथा उचित है कि दल नहीं तो लोकतन्त्र नहीं। मनरो ने लिखा है 'स्वतन्त्र राजनीतिक दलों का शासन लोकतन्त्रीय शासन का दूसरा नाम है। कहीं भी राजनीतिक दलों के बिना स्वतन्त्र शासन नहीं हो सका है।'

सामान्य रूप में राजनीतिक दल का अर्थ उस जन समूह से है जो किसी समस्या पर एकमत हो और अपनी उद्देश्य पूर्ति के लिए संगठित होकर कार्य करने का निश्चय कर चुका है। एडमण्ड बर्क के अनुसार राजनीतिक दल 'मनुष्यों का ऐसा समूह है जो किसी सिद्धान्त विशेष के आधार पर सहमत हो और अपने संयुक्त प्रयत्नों द्वारा राष्ट्रीय हित की उन्नति के लिए संगठित हुआ हो।' गैटेल के शब्दों में, 'राजनीतिक दल ऐसे लोगों का संगठन है जो राजनीतिक इकाई के रूप में कार्य करते हैं और जिनका उद्देश्य अपने मतदान बल के प्रयोग द्वारा सरकार पर नियन्त्रण करना व अपनी सामान्य नीतियों का संचालन करना होता है।'[1] मैकाइवर के मतानुसार 'राजनीतिक दल एक ऐसा समुदाय है जो किसी ऐसे सिद्धान्त अथवा ऐसी नीति के समर्थन के लिए संगठित हुआ हो जिसे वह वैधानिक साधनों से सरकार का आधार बनाना चाहता हो।' गिलक्राइस्ट ने अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा है 'राजनीतिक दल की परिभाषा उन नागरिकों के संगठित समूह के रूप में की जा सकती है जो राजनीतिक रूप से एक विचार के हों और जो

---

[1] A political party consists of a group of citizens more or less organised who act as a political unit and who by the use of their voting power aim to control the government and carry out their general policies —Gettell

Also see Political parties may be principally defined by their common aim They seek political power either singly or in cooperation with other political parties As Joseph Schumpeter has observed The first and foremost aim of each political party is to prevail over the others in order to get into power or to stay in it It is this goal of attaining political parties from other groups in the political system —Ball A R *Modern Politics and Government* p 79

उम्मीदवारा की नामजदगी अलग अलग या सयुक्त रूप से चीनी साम्यवादी दल अन्य प्रजातन्त्रात्मक दल, विभिन्न जन सगठन और निर्वाचको व प्रतिनिधिया (जो इन दला या सगठनो के सदस्य न हो) द्वारा की जा सकती है। व्यवहार म, उम्मीदवारो की नामजदगी इन दलो व सगठनो के नेताआ द्वारा आपसी मन्त्रणा के बाद की जाती है। कहने का तात्पय यह है कि सोवियत सघ की तरह चीन म भी अधिकतर स्थाना के लिए एक एक उम्मीदवार खडे होत है। मतदान गुप्त मत पत्र द्वारा होता है।

10 युगोस्लाविया मे निर्वाचन-पद्धति

युगोस्लाविया की फेडरल एसम्बली म पाच सदन (चेम्बर) है। प्रत्येक नागरिक जिस मताधिकार प्राप्त है, फेडरल चेम्बर का निर्वाचन द्वारा सदस्य बन सकता है, किन्तु अन्य चेम्बरो के केवल वे ही नागरिक सदस्य बन सकते है जो कि उनम स प्रत्येक के अलग अलग क्षेत्र म आने वाल कार्यों मे लगे हैं। उदाहरण के लिए, ऐसा नागरिक ही जो सामाजिक कल्याण और सावजनिक स्वास्थ्य की सस्थाओ या इस क्षेत्र के श्रमिक सघा के अधिकारी हो सामाजिक कल्याण और सावजनिक स्वास्थ्य चेम्बर के सदस्य बन सकते है। केवल फेडरल चेम्बर क ही सदस्य प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुने जाते है, अन्य चेम्बरा के सदस्य अप्रत्यक्ष ढग स सामुदायिक एसेम्बलियो द्वारा चुने जाते हैं। यदि सघीय कानून द्वारा निर्धारित निर्वाचक मण्डल की बहुसख्या किसी प्रतिनिधि के प्रत्यावतन (recall) का निणय करे तो उस प्रतिनिधि को वापस बुलाया जा सकता है। नय प्रतिनिधि के लिए चुनाव उनकी अवधि पूण होने से पन्द्रह दिन पूव किये जाते हैं। एसम्बली का प्रधान ही प्रतिनिधियो क चुनावो को करवाता है, यदि एसम्बली के किसी चेम्बर को विघटित कर दिया जाता है, तो उसके लिए चुनाव विघटन के दिन से पन्द्रह दिन के भीतर किये जाते है। इस प्रकार से नये निर्वाचित चेम्बर की अवधि तब तक रहेगी जब तक कि विघटित चेम्बर की अवधि रहती है। विशेष परिस्थितियो मे एसेम्बली सघीय प्रतिनिधिया की अवधि को उन परिस्थितिया के अन्त होने तक बढा सकती है और उन परिस्थितियो क समाप्त होने पर शीघ्र नये चुनाव होंगे।

के वाद नही हुई। यथाथ म राजनीतिक दल प्रजात न शासन प्रणाली के पूव भी पाये जाते थे। इग्लैण्ड मे केवेलियर और राउण्डहेड तथा उनके उत्तराधिकारी ह्विग और टोरी सत्तरहवी शताब्दी म भी थे, यद्यपि उस समय इग्लण्ड म स्वेच्छाचारी राज्य का वोलवाला था। दलो की उत्पत्ति वास्तव म, स्वाभाविक है। जव तक मनुष्य को सोचने की स्वत त्रता है, दलो की उत्पत्ति होना अनिवाय है। विचारो की स्वत त्रता से मतो म भेद उत्पन्न होता है और विभिन्न मतो के आधार पर ही समुदाय विभिन्न दलो म वँट जाता है। दलो की उत्पत्ति के विभिन्न कारण होते हैं। सवप्रथम, मनुष्यो के स्वभाव म अ तर होता है, कुछ स्वभावत अनुदार होते हैं और दूसरे शीघ्र परिवतन के समथक व उदार अथवा प्रगतिशील होते हैं। इस आधार पर अनुदार दल (conservative) तथा उदार दल (liberal) का निर्माण होता है।

दलो के निर्माण के अ य कारणो मे विभिन्न प्रकार के धम, जाति, भाषा, सस्कृति आदि के भेद मुख्य है। कई धम अथवा जातियो वाले देशो म धम व जाति के आधार पर वहुत से दलो का निर्माण होता है। भारत म स्वत त्रता के पूव काग्रेस को छोडकर अधिकतर दलो के आधार यही थे। पर तु आजकल दलो के निर्माण का सबसे महत्त्वपूण आधार आथिक या राष्ट्रीय दल का असम वितरण है। पश्चिमी यूरोप मे दलीय इतिहास सावधानिक और प्रतिनिधि शासन के विकास के पहलू का दिग्दशन कराता है। आधुनिक प्रजात त्रात्मक दल दो प्रकार के महत्त्वपूण राजनीतिक विकास का परिणाम है—प्रथम राजाओ की निरकुश सत्ता के सीमित किये जाने और द्वितीय, जनता के प्राय सभी वयस्को के लिए मताधिकार के विस्तार का। जव तक राजा के हाथो मे निरकुश सत्ता केन्द्रित रही और जनता को किसी प्रकार का मताधिकार प्राप्त न था, दलीय काय व्यथ ही नही वरन् राजद्रोहात्मक समझे जाते थे। अत इसमे कोई आश्चय की वात नही कि दलो की ऐतिहासिक उत्पत्ति की जड अप्रलिखित दो वातो मे गडी है (1) विधानमण्डल द्वारा राजाओ के परमाधिकारो पर सीमाएँ लगाने के लिए किये गये सघष मे, (2) विस्तारपूण निर्वाचक मण्डल के भीतर ऐसे समूहो के विकास म जिन्होने उस सघष म किसी एक का समथन किया अथवा अपने हितो को मनवाने के लिए मागें रखी और उनको पूरा कराने के लिए प्रयत्न किया।

राजनीतिक दल का रूप व सगठन—प्रत्यक दल के अपने उद्देश्य, नीति तथा कायक्रम होते हैं जिनम समय और आवश्यकता क अनुसार परिवतन होते रहते हैं। प्रत्येक दल अपनी नीति और कायक्रम को निर्धारित करता है, जिसे सयुक्त राज्य अमरीका म 'प्लेटफाम' कहा जाता है। दल की नीति और कायक्रम का निर्धारण विशेष रूप से निर्वाचनो के पूव किया जाता है। इस हेतु चुनाव म भाग लेने वाला प्रत्येक दल अपना घोपणा-पत्र (manifesto) निकालता है। जिस दल के उम्मीदवार वहुसख्या म चुने जाते हैं, उसक विषय म यह कहा जा सकता है कि जनता ने उस दल की नीति और कायक्रम को अपनाया है। प्रत्यक दल क सदस्यो की सख्या छोटी या वडी होती है। सदस्यो को सदस्यता का फाम भरना होता है और कुछ मासिक अथवा वार्षिक च दा भी देना होता है। प्रत्येक दल यही प्रयत्न करता है कि उसके सदस्यो तथा समथको की सख्या वढती रहे। राजनीतिक दल का उद्देश्य शासन पर निय त्रण पाना होता है अर्थात् विधायिकाओ क निर्वाचन म वहुमत प्राप्त करके म त्रिमण्डल वनाना उसका मुख्य उद्देश्य होता है। अ य दल जो अल्प मत म रहते हैं विधायिका म विरोधी दल का काय करते हैं। सत्ताधारी तथा विरोधी, दोनो ही प्रकार के दल शासन म महत्त्वपूण भाग रखते हैं।

साल्टा के इस कथन म सत्य का वडा अश है कि दल, विशेष रूप स सगठित वहुमत दल, जिसके हाथ म सत्ता रहती है, राज्य के अधीन एक छोटा राज्य (Party is a state within a state) होता है। वहुत वडी सख्या म इसके सक्रिय सदस्य तथा समथक होते हैं और स्थानीय,

राजनीतिक इकाई के रूप मे सरकार पर निय त्रण करना चाहते हो।' लीकॉक के कथनानुसार, 'राजनीतिक दल से हमारा तात्पय नागरिको के उस सगठित समूह से होता है जो एक राजनीतिक इकाई के रूप मे काय करता है।' इन परिभाषाओ पर दृष्टिपात करने से राजनीतिक दल के निम्न तत्त्वो पर प्रकाश पडता है

(1) राजनीतिक दल कुछ व्यक्तियो का एक सगठित समूह होता है। जब तक समान विचार-धारा वाले व्यक्ति मिलकर एक नही होते, वे राजनीतिक दल का रूप धारण नही कर सकते। दल के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि उसके सदस्य सगठित हो, सगठन का कोई विधान हो और उसका अनुशासन हो, जिसके पालन के लिए सब तैयार हो, क्यांकि इसी कारण दल के सदस्यो म वह भावना आ सकती है जिसका होना एक राजनीतिक दल के अस्तित्व के लिए नितान्त आवश्यक है।

(2) कतिपय मौलिक सिद्धा तो पर राजनीतिक दल के सदस्य एक दूसरे से सहमत होते ह। व्यक्तिगत रूप से दल के सदस्यो मे चाहे कितने ही मतभेद हो, दल मे एक होने पर दल के सिद्धा त तथा साधन उनके सिद्धान्त तथा साधन हो जाते है। राजनीतिक दल के सदस्या के एक-स सिद्धा त होते है तथा समस्याओ पर विचार विमश के उपरा त सबका एक सा निष्कप निकलता है, जिसका वे पालन करते हैं। दल ने सामा य नीति एव सिद्धा तो के आधार पर यदि सरकार बनाने की शक्ति प्राप्त कर ली, तो निश्चित नीति व ध्येय की पूर्ति मे दल के सदस्य समान रूप से काय करते है। यदि वह सरकार न बना सका तो सरकार के बाहर वे अपने मत का प्रचार करते है सरकार का विरोध करते है, जनता की इच्छा सरकार तक पहुँचाते है तथा जनमत को अपने दल की नीति और सिद्धातो के पक्ष म करने का प्रयास करते है। वास्तव म, जब तक दल के सदस्यो की विचारधारा मे साम्य या मतैक्य नही है तब तक उसका सगठन सुदृढ नही हो सकता।

(3) अपन उद्देश्य—जनहित—को प्राप्त करने के लिए वैधानिक विधि का आश्रय लेना पडता है। दल के सुचारु सचालन के लिए यह अति आवश्यक है कि उसके सदस्य वैधानिक तथा लोकता त्रिक साधनो के माध्यम से राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करें। उ ह अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए अलोकता त्रिक साधनो जैस क्रा ति, तोड फोड, सनिक शक्ति का उपयोग नही करना चाहिए क्योकि ऐसी दशा म दल का स्वरूप विकृत हो जाता है। दल के सदस्यो को चाहिए कि वे मतदान की शक्ति मे विश्वास रखे और जन-समथन प्राप्त करन के लिए शा तिपूण और वैधानिक ढगो को काम मे लाये।

(4) राजनीतिक दल विभागीय अथवा सामुदायिक हिता को दृष्टि म रखते हुए राष्ट्रीय हित को ही अपना उद्देश्य मानते हैं। दलो के लिए यह आवश्यक है कि जो उद्दश्य वे अपने स मुख रखें, उनका आधार सकीणता, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, प्रादेशिकता अथवा व्यक्तिगत स्वाथ न होकर राष्ट्रीय हित हो। यदि कोई राजनीतिक दल राष्ट्रहित को प्राथमिकता देन के स्थान पर साम्प्रदायिकता या सकीण गुटवादिता का प्रश्रय लेता है तो उसका स्वरूप साम्प्रदायिक दल का हो जाता है। अत लोकत त्र म राजनीतिक दल का उद्देश्य सावजनिक हित होना चाहिए।

(5) प्रत्येक राजनीतिक दल सरकार पर अपना प्रभुत्व जमाना चाहता है, क्योकि वसा करने से ही वह जनहित का सम्पादन कर सकता है। यह सत्य है कि राजनीतिक दल का उद्देश्य राजनीतिक सत्ता को हस्तगत करके सरकार का सचालन करना हाता है, लेकिन ऐसा करन के लिए दल के सदस्यो को अनुशासनबद्ध हाकर समान नीति एव कायक्रम के आधार पर जनमत का समथन प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए।

राजनीतिक दलो की उत्पत्ति—आज प्रजात त्रात्मक राज्यो मे ही नही वरन् प्राय अ य सभी राज्यो म राजनीतिक दल पाये जाते है। राजनीतिक दल की उत्पत्ति प्रजात त्र की स्थापना

दृष्टि से दल एक बड़ी छलनी का कार्य करते हैं जिनके द्वारा योग्य व्यक्तियों का चयन होता है और अन्तिम रूप में उनको चुना जाता है।

(2) सार्वजनिक नीतियों का निर्धारण—राष्ट्र के सम्मुख उपस्थित महत्त्वपूर्ण समस्याओं को सुलझाने के लिए ठोस कार्यक्रम और नीतियों का निर्धारण करना भी राजनीतिक दलों का एक मुख्य कार्य है। परस्पर विरोधी नीतियों और जटिल विवरणों के मायाजाल के बीच अपना मार्ग तय करने में व्यक्ति को राजनीतिक दलों की प्रणाली से बहुत अधिक सहायता मिलती है।[1] लोवेल ने ठीक ही कहा है कि 'राजनीतिक दल विचारों की दलाली' (brokery of ideas) का काम करते हैं। वे मतदाताओं के सम्मुख अपनी वैकल्पिक योजनायें और प्रतियोगी उम्मीदवार पेश करते हैं और मतदाताओं को अपनी इच्छा अभिव्यक्त करने का सुअवसर प्रदान करते हैं।

(3) सरकार का संचालन—निर्वाचनों में जन समर्थन के आधार पर विजय प्राप्त करने के उपरान्त जब राजनीतिक सत्ता पर किसी राजनीतिक दल का अधिकार हो जाता है तो वह सुनिश्चित नीतियों और ठोस कार्यक्रम के आधार पर शासन का संचालन करने का दायित्व संभालता है। शासन सत्ता हस्तगत करके सरकार का संचालन करना अपनी नीतियों को मूर्त रूप प्रदान करना और जनता की इच्छा को कार्यान्वित करना राजनीतिक दलों का सर्वप्रमुख कार्य है।

(4) सत्तारूढ़ दल पर अंकुश—निर्वाचन में बहुमत प्राप्त न होने की दशा में विरोधी दल के रूप में सरकार की आलोचना करना और उसकी स्वेच्छाचारिता पर नियन्त्रण लगाना भी राजनीतिक दलों का ही काम है। राजनीतिक दल ही सरकार को निरंकुश होने से रोकते हैं और प्रशासन की कमियों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करके सरकार को जनमत के प्रति सचेत और जागरूक बनाये रखते हैं।

(5) प्रबुद्ध जनमत का निर्माण—जनता की उदासीनता को दूर करके उनमें जागरूकता उत्पन्न करना और नागरिकों को राजनीतिक शिक्षा प्रदान करके प्रशासन की समस्याओं के प्रति उनमें अभिरुचि जाग्रत करने का काम भी राजनीतिक दल सम्पन्न करते हैं।[1]

(6) जनता और सरकार में मध्यस्थता—एक ओर तो राजनीतिक दल जनता की शिकायतों को सरकार के समक्ष रखते हैं और उनके निवारण के लिए सुझाव प्रस्तुत करते हैं, दूसरी ओर वे सरकार की नीतियों की व्याख्या करते हैं और जनता को प्रशासनिक गतिविधियों से अवगत कराते हैं। इस प्रकार दल व्यक्ति और सरकार को जोड़ने वाली कड़ी का काम करते हैं तथा जनता और सरकार को एक दूसरे को समझने का अवसर प्रदान करते हैं।

(7) शासन के विविध अंगों में सामंजस्य—संयुक्त राज्य अमरीका जैसे देश में, जहाँ शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त को अपनाया गया है, राजनीतिक दल ही कार्यपालिका और विधायिका में परस्पर समन्वय उत्पन्न करते हैं। यदि वहाँ राजनीतिक दल न हों, तो कार्यपालिका और व्यवस्थापिका के बीच गतिरोध पैदा हो सकते हैं। राजनीतिक दल शासन की दोनों शाखाओं के बीच पुल का कार्य करके और संविधान के सुचारु संचालन में योग देकर संघर्षों को कम से कम करते हैं और गतिरोधों को दूर करते हैं।

2 दलीय पद्धति

जनतन्त्र की सफल क्रियान्विति के लिए दलों का होना अत्यन्त आवश्यक है। वस्तुतः दल

[1] Parties keep a nation's mind active as the rise and fall of the sweeping tide refreshes the water of long ocean inlets ... so few people think seriously and steadily upon any subject outside the range of their own business interests that public opinion might be vague and ineffective if the party searchlight were not constantly turned on.—Bryce

क्षेत्रीय व राष्ट्रीय स्तरो पर इस सगठन की शाखाएँ होती हैं, जो च दा इकट्ठा करती है और दल का प्रचार काय भी करती है। राजनीतिक दल का सगठन जटिल होता है, दल राज्य की नीति और कायक्रम का निर्धारण करता है। इस प्रकार सगठित दल एक अथ मे राज्य के अधीन राज्य होता है। भारत मे काग्रेस की स्थिति कुछ ऐसी ही है। फासिस्ट तथा साम्यवादी अधिनायकशाही वाले राज्यो म तो दल ही वास्तव में सरकार का सचालन करता है, राजनीतिक सस्थायें तो बहुत सीमा तक दिखाने के लिए बनायी जाती है।

राजनीतिक दलों के काय—राजनीतिक दल लोकत त्र के आधार होते है क्योंकि वे जनमत का निर्माए, उसका प्रकाशन व उचित दशाओ म उसका विकास करत है। मतदान व निर्वाचन के समय वे नागरिको को राजनीतिक साहित्य प्रदान करते है, शासन की समस्याओ के प्रति उनमे जागरूकता उत्पन्न करते है, उनको उनके राजनीतिक दायित्वो का बोध कराते है और भाषण प्रचार आदि के द्वारा स्वस्थ एव प्रबुद्ध लोकमत का निर्माण करते है। पैटरसन के मतानुसार राजनीतिक दल राष्ट्रीय एकता को पल्लवित करने व उसे बनाये रखन म सहायक होते है, जहा शासन शक्ति का पृथक्करण है, वहा शासन के विविध अगो मे सामजस्य स्थापित करते है, आर्थिक हितो के सघर्षों को कम करते है, क्योंकि विभिन्न आर्थिक समुदायो की मागे दल के माध्यम से व्यक्त की जा सकती है। अमरीकी दल प्रणाली पर लिखते हुए डा० मेरियम ने राजनीतिक दलो के अग्रलिखित काय बताये हैं—(i) सरकारी अधिकारियो का निर्वाचन, (ii) सावजनिक नीतिया का निर्माए, (iii) सरकार का सचालन करना अथवा उसकी आलोचना करना, (iv) राजनीतिक शिक्षा प्रदान करना, तथा (v) व्यक्ति और सरकार मे मध्यस्थता का काय करना।

मनरो के अनुसार राजनीतिक दलो का मुख्य काय लोगो के राजनीतिक विचारो को बनाना, प्रत्याशियो का चयन करना, सामूहिक और निर तर राजनीतिक प्रतिनिधित्व की स्थापना करना, नागरिक शिक्षा के साधन रूप म काय करना तथा जनता की आकाक्षाओ को सही रूप म अभिव्यक्त करना है। फाइनर ने लिखा है 'राजनीतिक दल सम्पूण राष्ट्र को व धुत्व के रूप म सगठित करते हैं तथा प्रत्येक नागरिक के स मुख सम्पूण राष्ट्र का चित्र प्रस्तुत करते हैं, जो इनके बिना इतिहास मे तथा भविष्य मे सम्भव नही है।' पश्चिम मे राजनीतिक दलो को प्रथमत प्रतिनिधिक साधन समझा जाता है, सावजनिक पदो पर नेताओ के उत्तराधिकार के द्वारा वैकल्पिक सरकारो के शा तिपूण और नियमित रूप से आने जाने का साधन दलो का रूप कुछ भी हो। वे राजनीतिक शिक्षण और समाजीकरण के साधन रूप म भी। प्रतिनिधित्व, पदो पर शान्तिपूण ढग से उत्तराधिकारिया का आना और प्रजातन्त्र के लिए आवश्यक मूल्यो का समाजीकरण दलो के काय हैं, पर तु ये सब एक ध्येय के साधन है।[1] इन विचारो के आधार पर हम कह सकते है कि राजनीतिक दलो के मुख्य काय निम्नलिखित है—

(1) उम्मीदवारो का चयन—दलो का अस्तित्व चुनाव लडने के लिए है अत इनका प्रथम काय उचित उम्मीदवारो का चुनाव करना है जो दल की नीतियो और सिद्धान्तो को व्यावहारिक रूप प्रदान कर सकें और शासन सत्ता प्राप्त होने पर प्रशासन का कुशल सचालन कर सकें। इस

[1] In the West political parties are thought of primarily as representative instruments a means of insuring peaceful and regular alternation of governments through the succession of leaders to public office whatever the form parties are important also as an instrument of political education and socialization that shapes the habits and attitudes of a people towards government Representation peaceful succession in office and the socialization of values intrinsic to democracy are the functions of parties that are approaching the secular libertarian model but they are all means to an end —D E. Apter in *Comparative Government* ed Blondel, I, pp 94-95

राजनीतिक दल न हो तो लोकप्रिय एव दमनकारी सरकार को बदलने के लिए जनता को क्रान्ति का अवलम्बन लेना पडता है। मकाइवर के मत म दलीय व्यवस्था क अभाव म क्रान्तिया द्वारा ही शासन म परिवतन लाया जा सकता है।

स्वेच्छाचारिता पर नियन्त्रण—दल व्यवस्था शासन की निरकुशता पर समुचित नियन्त्रण रखती है। विरोधी दलो द्वारा सरकार की कायवाहिया की निरन्तर जाँच पडताल सरकार को सन्तुलित रखती है और उसकी स्वेच्छाचारिता पर अकुश लगाती है। लॉवेल के अनुसार 'पर्याप्त जनमत पर आधारित योजना से युक्त एक विरोधी दल का अस्तित्व न कवल एक स्वच्छाचारी शासक के अत्याचारो के विरुद्ध वरन् एक व्यावहारिक बहुमत प्राप्त राजनीतिक दल के अत्याचारो के विरुद्ध भी अवरोध का काय करता है। वस्तुत दलो के द्वारा जनता को सरकार पर नियन्त्रण लगाने का अवसर मिलता है। विरोधी दल सरकारी कार्यों की आलोचना करके, प्रश्न पूछकर, अविश्वास प्रस्ताव, स्थगन प्रस्ताव तथा निन्दा प्रस्ताव पारित करके और जनता की शिकायतो को सरकार के सम्मुख उपस्थित करके उसे स्वेच्छाचारी बनने से रोकते हैं। जेनिंग्स ने लिखा है कि यह जानने के लिए कि अमुक जाति स्वतन्त्र है या नही, यह पूछना काफी है कि वहाँ विरोधी दल का अस्तित्व है या नही।

जनता की राजनीतिक शिक्षा का साधन—दलो की गतिविधियाँ शिक्षा-सम्बन्धी गतिविधियाँ हैं। विभिन्न राजनीतिक दल देश की ज्वलन्त समस्याओ को समाचार पत्रो, भाषणो, सभाओ पम्फलटो, लेखो व रेडियो आदि के द्वारा जनता के समक्ष रखते हैं और जनता को उन पर अपना मत देने का सुअवसर प्रदान करते हैं। निरन्तर प्रचार-काय द्वारा दल जनता की उदासीनता को दूर करके शासन की समस्याओ के प्रति उसे जागरूक बनाते है जनमत को सगठित करते है और उचित दशाओ म उसका विकास करते हैं। ब्राइस का कथन है दलो की विरोधी गतिविधियाँ शिक्षा प्राप्ति की इच्छा रखने वाले व्यक्तियो को शिक्षा देती हैं और कम उत्साही तथा कम विचारशील लोगो मे भी कुछ न कुछ शिक्षा तथा दिलचस्पी भर देती हैं।' दल देश रूपी सागर के बुद्धि रूपी जल को ज्वार भाटे रूपी उतार चढाव के द्वारा सदव ताजा रखते है।

नैतिक गुणो के विकास म सहायक—दल प्रणाली अनुशासन पर आधारित होती है। दल के सभी सदस्यो को अनुशासनबद्ध होकर दलीय नीतियो का एकमत से समथन करना होता है। फलत उनम अनुशासनशीलता का विकास होता है। राजनीतिक दलो म सम्मिलित होकर व्यक्ति अपने पराये के सकीण दृष्टिकोण से ऊपर उठकर व्यापक सावजनिक हित के दृष्टिकोण से देखना सीखते हैं। वस्तुत दलीय अनुशासन व्यक्तियो की स्वायपरक और सकुचित व्यक्तिवादी प्रवत्तियो को दबाकर उन्हे सावजनिक हित के लिए काय करने को प्ररित करता है। वर्गीय और क्षत्रीय स्वार्थों का उन्मूलन करके दल पद्धति व्यक्ति के दृष्टिकोण को व्यापक और उदार बनाती है और विभिन्न वर्गों, जातियो तथा धर्मों के व्यक्तियो को एकता के सूत्र मे बाँधकर राष्ट्रीय एकता का सवधन करती है। यद्यपि दलीय पद्धति मे अनेक गुण हैं तथापि अनेक आलोचको ने निम्न आधारो पर दलीय पद्धति की आलोचना की है—

अप्राकृतिक राजनीतिक घटना—यह मानना सत्य नही है कि राजनीतिक दलो की उत्पत्ति स्वाभाविक है। वास्तव मे दलो की उत्पत्ति का मुख्य कारण सामाजिक सरचना तथा राज्य व्यवस्था मे प्रचलित पद्धतिया हैं जो व्यक्तियो को अपनी स्वाथ सिद्धि की प्रेरणा देकर दलो के रूप म सगठित होने के लिए प्रेरित करती हैं। अधिकतर दल मनुष्यो की स्वस्थ मनोवत्ति के परिचायक न होकर सम्प्रदायवाद, जातिवाद और प्रादेशिकतावाद जैसी क्षुद्र प्रवत्तियो के कारण पनपते हैं और राजनीति मे अनीति का प्रसार करते है।

दल व्यवस्था व्यक्तित्व को कुचलती है—कठोर दलीय अनुशासन सदस्यो को दल के नियमो

जनतन्त्र की धुरी के समान होते है, क्योकि उन्ही पर जनतन्त्र के पहियो का भार होता है। जनतन्त्रीय शासन जनमत के आधार पर चलता है और राजनीतिक दल ही वे साधन हैं जो जनमत का निर्माण करते है और उसे अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। मेकाइवर ने लिखा है, 'बिना दलीय सगठन के किसी सिद्धान्त का एक होकर प्रकाशन नही हो सकता, किसी भी नीति का क्रमबद्ध विकास नही हो सकता, ससदीय चुनावो की वैधानिक व्यवस्था नही हो सकती और न ऐसी मान्य सस्थाओ की व्यवस्था ही हो सकती है, जिनके द्वारा कोई भी दल शक्ति प्राप्त करता है।'[1] दलीय पद्धति के गुण निम्न प्रकार हैं—

मानव स्वभाव के अनुकूल—यदि मनोवज्ञानिक दृष्टिकोण से देखा जाये तो दलो की उत्पत्ति मनुष्य के स्वभाव म निहित प्रवृत्तिया तथा उससे उत्पन्न विचार-भेद के आधार पर हुई है। कुछ लोग स्वभाव से ही रूढिवादी होते हैं और पुरानी परम्पराओ को बनाये रखना चाहत हैं, जबकि दूसरे लोग स्वाभाविक तौर पर प्रगतिवादी होते है और सुधार, परिवत्तन तथा नवीनता के समथक होत हैं। वस्तुत समाज म दलो की उत्पत्ति मानव स्वभाव के अनुकूल प्रक्रिया है, अत इसे दबाना अप्राकृतिक एव अवाछनीय होगा। दलीय भावना मानव को सगठित रूप से अपने विचारो को व्यक्त करने का अवसर देती है। यदि दल न हो तो मनुष्य के विचार कुण्ठित हो जायेंगे और उन्हे सगठित रूप म अभिव्यक्त होने का अवसर नही मिलगा।

विभिन्न मतो का सगठन—मनुष्यो म मतभेदो का होना स्वाभाविक ही है। राजनीतिक दल ऐसे विभिन्न मतावलम्बी मनुष्यो को सगठित करते हैं और मतो की विभिन्नता म से लोकमत की उस एकता का निर्माण करते हैं जिसके आधार पर शासन काय चलता है। इसके अतिरिक्त जनमत के निमाण म जो वाद विवाद होता है, उससे मनुष्यो म परस्पर विचारो का सहयोग, सहिष्णुता और सहनशीलता बढती है।

जनतन्त्र की आधारशिला—दल पद्धति जनतन्त्र के लिए रीढ की हड्डी का काम करती है और इसी की सफलता पर उसका भविष्य निभर है जनतन्त्र जनमत के आधार पर चलता है और प्रवुद्ध तथा सचेत जनमत का निर्माण करना व उसे उचित अभिव्यक्ति प्रदान करना दलो का ही काय है। यह सत्य है कि जनतन्त्र जनता का शासन होता है, किन्तु यदि प्रत्येक व्यक्ति भिन्न विचारधारा के आधार पर शासन का सचालन करना चाहे तो यह सम्भव नही है। केवल दल प्रणाली के माध्यम से ही यह सम्भव होता है कि समान विचारधारा वाले व्यक्ति दल के रूप मे सगठित होकर शासन सत्ता प्राप्त करें और अपने विचारो को मूत रूप प्रदान करने म समथ हो। लीकाक के अनुसार 'जनतन्त्रीय सरकार के सिद्धान्तो के साथ दल प्रणाली का कोई विरोध नही है अपितु यह एक ऐसी चीज है जो जनतन्त्रीय सरकार को व्यावहारिक बनाती है।' वस्तुत यह कहना समीचीन है कि प्रतिनिध्यात्मक जनतन्त्र दल-पद्धति पर ही आधारित है। दल उम्मीदवार खडे करते हैं, निर्वाचन आन्दोलन का सगठन करत है उसके लिए आवश्यक धन जुटाते है, जनता के ध्यान को कुछ विशिष्ट प्रश्नो पर केन्द्रित करत है, जनमत का सगठन करते हैं, उम्मीदवारो की सख्या कम करते है और नीति से सम्बन्ध रखने वाले प्रश्नो को सीमित करते है। यदि दल न हो तो निर्वाचन बिल्कुल अव्यवस्थित और जनतन्त्र दिशाहीन हो जायेगा।

शासन मे शान्तिपूर्ण परिवतन—दल प्रणाली की एक उपयोगिता यह है कि इसके द्वारा जनता की मनोवत्तियो एव उग्र प्रवत्तियो को एक सुनिश्चित दिशा मिलती है। मतदान एव अन्य शान्तिपूर्ण तथा सावैधानिक उपायो द्वारा सरकार म परिवतन लाना सम्भव होता है। यदि

[1] Without such party organization, there can be no unified statement of principle no orderly evolution of policy no regular resort to constitutions by means of which a party seeks to gain or maintain power —MacIver

अनुसार दल-भक्ति यदि सीमा से अधिक बढ जाय तो वह आसानी से देश भक्ति की भावना का लोप कर देती है। मत प्राप्त करने के लक्ष्य पर अत्यधिक ध्यान देने से दलो के नेता और उनके संचालक देश की उच्चतम आवश्यकताओ को भूल जाते हैं।

योग्य व्यक्तियो की अवहेलना—दलीय पद्धति के कारण शासन सत्ता पर बहुमत दल के कुछ अवसरवादी और स्वार्थी नेताओ का आधिपत्य हो जाता है, अन्य दलो के सर्वोत्तम व्यक्तियो की घोर उपेक्षा की जाती है। फलत देश उनके ज्ञान, अनुभव और कौशल से वंचित रह जाता है राजनीतिक दल चुनाव के लिए उन प्रत्याशियो का चयन करते हैं जो दल की नीतियो का अन्ध समर्थन करते है और दलीय नेताओ की जी हुजूरी मे लगे रहते हैं। साधारणत योग्य और विद्वान् व्यक्ति दलीय सिद्धान्तो का आँख मूदकर समर्थन नही कर सकते। अत उनका चुनाव नही किया जाता और प्रशासन ऐसे लोगो की कठपुतली बन जाता है जिनके लिए स्वार्थ साधना ही प्रमुख ध्येय होता है। योग्य व्यक्तियो को शासन मे भाग लेने का अवसर न मिलने से प्रशासन का स्तर गिर जाता है और पक्षपात, भ्रष्टाचार, अनैतिकता तथा स्वार्थ का बोलबाला हो जाता है।

अहितकर कानूनो का निर्माण—विधायिका मे जब किसी विधेयक पर वाद विवाद होता है तो बहुमत दल और विरोधी दल के सदस्य अपने अपने संकुचित दृष्टिकोण से उस पर विचार करते है। फलत अधिकतर कानून दलीय हितो को दृष्टि मे रखकर बनाये जाते है और जनता के हितो की सर्वथा उपेक्षा की जाती है। दल प्रणाली मे उपयोगी और हितकर कानूनो का निर्माण सम्भव नही हो पाता, क्योकि प्रत्येक दल कानून पर निष्पक्ष विचार करने के स्थान पर इस दृष्टि से विचार करता है कि उससे उसके दलीय हित की साधना कहा तक होगी।

आपातकाल मे निर्बल शासन—आलोचको की मान्यता है कि दलीय सरकार संकट काल का दृढतापूर्वक सामना करने मे असमर्थ रहती है, क्योकि दलीय हितो को राष्ट्रीय हितो से बढ कर माना जाता है। आपात्काल मे वाछनीय यह है कि सभी दल पारस्परिक मतभेदो को भुला कर राष्ट्रीय हित मे शासन का संचालन करें, परन्तु व्यवहार मे अधिकाशत यह सम्भव नही हो पाता क्योकि बहुमत दल विरोधी दलो के उपयोगी सुझावो को भी शका की दृष्टि से देखता है और विरोधी दल भी शासन की स्वस्थ आलोचना करने के स्थान पर 'आलोचना के लिए आलोचना' करते हैं। राजभक्ति की कीमत पर दल के प्रति निष्ठा राज्य के लिए घातक सिद्ध होती है और प्रशासन को निर्बल तथा शिथिल बनाती है।

धन का अपव्यय—दल प्रणाली के अन्तर्गत धन का बहुत अपव्यय किया जाता है जिससे राष्ट्र की क्षति होती है। प्रत्येक दल को अपने संगठनात्मक तथा प्रचार कार्यों के लिए एक विशाल धनराशि की आवश्यकता होती है और चुनाव मे करोडो रुपया पानी की तरह बहाया जाता है। वास्तव मे वह धन, जिसका उपयोग निर्माणकारी योजनाओ मे किया जाना चाहिए, लोगो की वोट खरीदने मे और असत्य प्रचार करने मे व्यय किया जाता है।

निष्कर्ष—यह स्पष्ट है कि दल प्रणाली मे अनेक दोष है। यह सम्पूर्ण राष्ट्र को छोटे छोटे खण्डो मे विभक्त कर देती है, सामान्य देश भक्ति के स्थान पर ईर्ष्या और द्वेष को जन्म देती है, मनुष्यो के मस्तिष्क को पक्षपातपूर्ण बना देती है जिसके कारण एक पक्ष दूसरे पक्ष के प्रस्तावो को संदिग्ध दृष्टि से देखता है, गुणो के आधार पर प्रत्येक समस्या का सही मूल्याकन होने मे बाधा उत्पन्न करती है। प्रतिनिधियों को दास बनाती है और स्वतन्त्र चिन्तन को हतोत्साहित करती है। इतना होते हुए भी हम यह स्वीकार करना पडेगा कि प्रतिनिध्यात्मक लोकतन्त्र के सुचारु संचालन के लिए दलो का होना नितान्त आवश्यक है। दल प्रणाली का समाप्त करने का अर्थ होगा तानाशाही का निमन्त्रण देना, जिसमे जनता की आवाज कुचल दी जाती है और लोकतान्त्रिक परम्पराओ का गला घोट दिया जाता है। वस्तुत दल प्रणाली को समाप्त करने के स्थान

पर चलने के लिए विवश करना है, अत मदस्यो की वयक्तिकता और स्वतन्त्र चिन्तन की प्रवृत्ति कुण्ठित हो जाती है और वे दल रूपी मशीन के पुर्जे मात्र बनकर रह जाते है। प्रत्येक सदस्य को दल की एकता के नाम पर उसकी नीतियो, उद्देश्यो और साधनो का आख मीचकर समर्थन करना पडता है, चाहे वह उनसे सहमत हो या नही। व्यक्तिगत धारणाओ और व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य के लिए दल पद्धति म बहुत कम अवसर होता है। लीकॉक ने मत व्यक्त किया है कि व्यक्तिगत निर्णय दल के साचे मे सख्ती से जमकर रह जाता है। दल-पद्धति उसी व्यक्तिगत विचार और कार्य सम्बन्धी स्वतन्त्रता का गला घोटती है जिसे प्रजातन्त्रात्मक सरकार का मूल मन्त्र समझा जाता है।

गुटबन्दी की जनक—सामाजिक एकता का परिवर्धन करने के स्थान पर दल-व्यवस्था समाज मे विभिन्न वर्गों को जन्म देती है और सकीर्ण प्रवृत्तियो को प्रोत्साहित करती है। सम्पूर्ण देश परस्पर विरोधी कैम्पो म विभक्त हो जाता है, जो कि जहाँ तक सम्भव हो सके एक दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश मे लगे रहते है। गिलक्राइस्ट के शब्दो मे 'दल पद्धति का ध्येय राजनीतिक जीवन को यन्त्र की भाति कृत्रिम बनाना है। विरोधी दल सदैव सत्तारूढ दल का शत्रु होता है।' दल पद्धति के दोषो की ओर इगित करते हुए वाशिंगटन ने एक बार कहा था 'राजनीतिक दल सदैव ही कुछ न कुछ शरारत करते रहते है, अत प्रत्येक बुद्धिमान व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह उन्हे अनुत्साहित करे और रोके। दल प्रथा जनता को दूषित ईर्ष्याओ व झूठे भयो से भर कर एक दल की दूसरे दल के विरुद्ध शत्रुता को उत्तजित करती है और कभी-कभी यह उपद्रवो तथा राजद्रोहो के जालो को रचती है।'

खोखलेपन और कृतघ्नता को प्रोत्साहन—दल-पद्धति राजनीति को दूषित कर देती है और समाज मे नैतिकता के स्तर को गिरा देती है। सत्ता प्राप्ति की लालसा मे राजनीतिक दल भोली भाली जनता को झूठे भुलावे देकर, स्वप्न जाल दिखाकर, धोखा देकर और अन्य कृतघ्न उपायो का सहारा लेकर प्रलोभन म फँसाते है और मत प्राप्त करके शासन म अनैतिकता भाई भतीजा वाद तथा भ्रष्टाचार का प्रसार करते हैं। रचनात्मक आलोचना के स्थान पर 'विरोधी दल के के लिए विरोध' की प्रवृत्ति अपनाने के कारण समाज म नैतिकता का स्तर गिर जाता है। ब्राइस का कथन है कि दल प्रथा न राजनीति को पतित और कुत्सित बना दिया है। दल के सदस्यो का मतैक्य तथा अन्य मामलो म उनकी एकता कृत्रिम तथा अवास्तविक होती है, फलत दल मे खोखलापन और अस्थायीपन आ जाता है। नेतागिरी के मोह मे दलो के अवसरवादी सदस्य दलीय नीतियो को तिलाजलि देकर बहुधा एक दल को छोडकर दूसरे म शामिल हो जाते हैं ताकि उनके स्वार्थ की परिपूर्ति हो सके। भारत म चतुर्थ आम निर्वाचन के उपरान्त दल बदल की यह प्रवृत्ति बहुत विकराल रूप म सामने आई है और इसने भारत के नव विकसित ससदीय प्रजातन्त्र की जडो पर गहरा कुठाराघात किया है। सत्ता प्राप्ति के मोह म दल के सदस्य झूठे वचनो और आकर्षक निर्वाचन नारो का सहारा लेकर जनता को दिग्भ्रमित करते हैं। इसी कारण कुछ आलोचको ने दल प्रणाली को 'सगठित मक्कारी' की सज्ञा दी है।

राष्ट्रीय हितो की उपेक्षा—राजनीतिक दल समाज म सकुचित गुटवादिता, सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद और प्रादेशिकतावाद जैसी कलुषित प्रवृत्तियो को उत्तेजित कर राष्ट्रीय हितो को हानि पहुँचाते हैं। दलबन्दी मे पडकर जनता राष्ट्रीय हित को भूल जाती है। अत्यधिक विचार सकुचितता के कारण राष्ट्रीयता की उपेक्षा होने लगती है और दल व्यक्तिगत या दलगत हितो के साधन मात्र बन जाते हैं। सकीर्ण दलबन्दी का शिकार होकर दल के सदस्य राष्ट्रीय समस्याओ को सही परिप्रेक्ष्य म जनता के सामने न रखकर तथ्यो को तोड मरोड कर प्रस्तुत करते हैं और इस प्रकार दलीय हितो की वेदी पर राष्ट्रीय हितो को उत्सर्ग कर दिया जाता है। मेरियट के

वास्तव मे, स्पष्ट रूप मे सांसद सस्थाओ का उन्मूलन नहीं करता। यह केवल उन्हें निष्क्रिय बना देता है।'[1] साम्यवादी व फासिस्ट सभी एक-दलीय पद्धतियों की सामान्य विशेषताएँ अधोलिखित हैं (1) ऐसा दल सरकारी दल होता, चूंकि उसे एकाधिकार प्राप्त होता है और उसका नेतृत्व व ही व्यक्ति करते हैं, जो कि राज्य पर पूर्ण सत्ता का प्रयोग करते हैं। (2) यह जनता में शासकों की विचारधारा के प्रचार का काय करता है। (3) यह शासकों की सभी नीतियों को कार्यान्वित करता है। (4) यह एक प्रकार से नियन्त्रणतन्त्र का कार्य करता है इस उद्देश्य से सैनिक दस्तों व गुप्त पुलिस के सहायक सगठनो का विकास करता है। (5) इसकी सदस्यता सबके लिए खुली नही रहती, सदस्यो को छांटकर लिया जाता है। (6) इसका अपना सैनिक संगठन हो सकता है, जैसे हिटलर के स्टॉमट्रूपर और मुसोलिनी की मिलिशिया थे।

3 एक-दलीय पद्धतियाँ

अच्छी द्वि-दलीय पद्धति के कई लाभ हैं। यह सोचकर आश्चय होता है कि कोई देश उन्हे छोडकर एक-दलीय पद्धति को क्यो अपनाये। वतमान कालीन एक-दलीय पद्धति वाले राज्यों को दो समूहों मे रखा जा सकता है—(1) साम्यवादी राज्य, और (2) अफ्रीका तथा अन्य भागों मे नई स्वतन्त्रता पाने वाले राज्य, जो यह अनुभव करते हैं कि वे दो दलो के परिणामस्वरूप होने वाले विभाजनो को सहन नही कर सकते। एक दलीय राज्य का आरम्भ सोवियत सघ से हुआ। वह प्रथम देश था जहाँ साम्यवादी शासन स्थापित हुआ था, उसके बाद नाजी जमनी (1933–45) और इटली व अन्य अधिनायकशाही वाले देशों मे एक-दलीय पद्धति अपनायी गयी। एक दलीय पद्धति वाले साम्यवादी राज्य की स्थापना का प्रमुख कारण यह था और है कि साम्यवादियो (और उनके समान नाजियो) की दल के बारे मे धारणा पाश्चात्य देशो में राजनीतिक दल विषयक धारणा से भिन्न है। पश्चिम मे दलो के बीच इच्छित ध्येय (अभीष्ट) के बारे मे अधिकाशत सहमति होती है, किन्तु उनमे ध्येय की प्राप्ति के साधनो के बारे मे मतभेद होता है। सभी दल इस बात पर सहमत हैं कि वे प्रजातन्त्र चाहते हैं, अर्थात् एक ऐसे समाज की स्थापना जिसमें पुरुष और स्त्रियाँ अपने हितो का विकास कर सकें, जिसमे सभी के लिए शिक्षा पाने के अवसरों की समता हो, और जिसमे व्यक्तियो को सम्पत्ति पर स्वामित्व, उनके अजन व उपभोग की स्वतन्त्रता हो।

परन्तु साम्यवादी ऐसी कोई बात स्वीकार नही करते। उनका विश्वास तो मार्क्स द्वारा विहित नीति मे है और जैसे ही वे सत्ता धारण करते हैं वे उस नीति को कायरूप देते हैं। वे पाश्चात्य जगत् की सभी पूव धारणाओ को अस्वीकार करते हैं। वे एक क्रान्तिकारी दल के सदस्य हैं और पाश्चात्य समाज को खण्डित कर उसके स्थान पर मार्क्सवादी आधार पर समाज का निर्माण करना चाहते हैं। ऐसी पूण क्रान्ति तब तक नही हो सकती जब तक कि उसे लाने के लिए क्रान्तिकारियो का सुप्रशिक्षित और सुसगठित समूह न बने। उनका यह विश्वास होना जरूरी है कि व्यक्ति का कोई महत्त्व नहीं है, दल ही सब कुछ है। अतएव साम्यवादी या नाजीवादी राज्य की एक दलीय पद्धति पाश्चात्य देशो की दलीय पद्धतियों से सर्वथा भिन्न है। एक दलीय पद्धति क्रान्ति ला और सवशक्तिशाली राज्य स्थापित कर सकती है, इसका और कोई प्रयोजन नही है।

एक-दलीय प्रजातन्त्र—यद्यपि उपर्युक्त विवेचन से यही निष्कष निकलता है कि जिन राज्यों में केवल एक दल होता है वहाँ शासन का रूप अधिनायकतन्त्री होता है, परन्तु इस नियम के कुछ अपवाद भी हैं, इसीलिए यह कहा जा सकता है कि एक-दलीय प्रजातन्त्र भी हो सकते हैं और यथाथ मे हैं। इस प्रकार क शासन का एक महत्त्वपूण उदाहरण टेंगेनिका है। टेंगेनिका अफ्रीकन

[1] Barker E *Reflections on Government* pp 274–95

नेशनल यूनियन नामक दल के संस्थापक और नेता जुलियस नरेरे (Julius Nyerere) का मत है कि सभी व्यक्तियो का उसी एक जनसाधारण दल (mass party) म सम्मिलित होना जरूरी है, जिसने देश के स्वाधीनता प्राप्ति के सघर्ष म सफल नेतृत्व किया और उसी दल को स्वत त्रता पा लेने के बाद शासन का सचालन करना चाहिए।

सयुक्त राष्ट्र सघ के सेक्रेटरी जनरल श्री यूथा ने भी कहा है—'यह विचार कि प्रजातन्त्र म सगठित विरोधी पक्ष का होना आवश्यक है, सच नही है।' डुवरगर का भी कथन है कि 'कुछ एक दलीय पद्धतियाँ अपने विचारो व सगठन मे वास्तव मे, सर्वाधिकारवादी नही है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण 1923 से लेकर 1946 तक तुर्की की 'पीपल्स रिपब्लिकन पार्टी' रही, इसकी मौलिकता ही यह थी कि इसकी विचारधारा प्रजात त्रात्मक थी। इसकी सदस्यता पर प्रतिब ध न थे और सदस्यो को दल से बाहर निकालने आदि के त त्र का इसमे अभाव था। तथ्य तो यह है कि दल के भीतर इसकी विशेषता प्रजात त्रात्मक भावना थी।'[1] इस विषय मे कार्टर और हज ने लिखा है यद्यपि अधिकतर अफ्रीकी राज्यो मे द्वि दलीय अथवा बहु दलीय पद्धति नही है, उनके नेता साधारणतया यह कहते है कि उनके राज्य न तो अधिनायकत त्री है और न सर्वाधिकारवादी ही, वरन् वे एक दलीय प्रजातन्त्र है। इस नाम को दो आधारो पर न्यायोचित ठहराया जाता है—प्रथम, औपचारिक विरोधी पक्ष वतमान मतभेदो और विभाजनो को केवल तीव्र ही बनायेगे, जबकि खिचाव के इन शक्तिशाली स्रोतो को एक ही राजनीतिक समूह के भीतर अभिव्यक्ति का अवसर और उनम मेल मिलाप पैदा करने का प्रयत्न किया जा सकता है। दूसरे, जबकि वतमान कुशलता और अनुभव अत्यधिक सीमित है तथा सभी प्रकार की शक्तियो और बौद्धिक गुणो की राष्ट्रीय विकास को बढाने के लिए आवश्यकता है, उन राज्यो म परम्परागत ससदीय सघर्ष के लिए कोई स्थान नही है।'

हमने जिसे एक दलीय प्रजात त्र कहा है, वह आधारभूत बातो मे सोवियत सघ तथा फासिस्ट राज्य के एक दलीय सर्वाधिकारवाद से भिन्न है। प्रथम बात तो यह है कि एक-दलीय प्रजातन्त्रो म एक दल का होना कोई कठोर विश्वास की बात नही है, वरन् एक इष्टकर तरीका है। इसका लक्ष्य यह है कि देश क सभी शक्तियो को राष्ट्रीय विकास के काय म स्वेच्छापूवक कार्य करने के लिये क्रियाशील बनाया जाये। दूसरे, एक-दलीय प्रजातन्त्र के भीतर आलोचना की सम्भावनाओ मे ही एक प्रकार से विरोधी पक्ष की व्यवस्था देखी जा सकती है। नये विकासशील राज्यो म जनसाधारण के दल एकात्मक (monolithic) नही है। जिस प्रकार का विरोध इन दलो मे पाया जाता है, उसे किसी वग मे रखना तथा नाम देना कठिन है, किन्तु यह सच है कि कीनिया व टेंजेनिया म सरकार का विरोध अवश्य है जिसके कारण सरकारी नीतियो व कायक्रमो की कार्यान्विति धीमी है।[2]

अफ्रीका के राज्यो म एक दलीय पद्धति के लिए एक दूसरा कारण यह है। प्रजातन्त्र के बारे मे अफ्रीकी और यूरोपीय विचारो म अन्तर है। सभी अफ्रीकी राष्ट्रो ने प्रजातान्त्रिक [illegible] का विकास नही किया था, पर तु उनम से कुछ ने एक संविधान को विकसित किया था [illegible] अधिक मात्रा म प्रजातन्त्रात्मक था। यदि 100 व्यक्तियो का कोई यूरोपीय समूह हो [illegible] से 51 व्यक्ति एक बात चाह तथा 49 व्यक्ति दूसरी बात चाहे तो वह समूह [illegible] काय करगा। अल्पमत के कुछ सदस्य उस निर्णय को मानकर सहयोग कर [illegible] उसके विरुद्ध शिकायत करते रहो। परन्तु अफ्रीका मे ऐसा तरीका नहीं [illegible]

[1] Duverger M, *Political Parties* pp. 275-77

[2] Carter and Herz, *Government and Politics in the Twentieth* [illegible]

वर्ग हो या धार्मिक वर्ग हो। कोई भी दल किसी एक दो वर्ग या समुदाय के सहारे पर नही जीत सकता। इसका परिणाम यह हुआ है कि ब्रिटेन और अमरीका म राजनीतिक दलो के कारण वर्ग विभेद समाप्त हो रहे हैं मतभेदा की उग्रता कम हो रही है और संघर्ष मिट रहे हैं। इसके विपरीत बहुदलीय पद्धति न प्राय वर्गभेदो को आश्रय दिया है, राष्ट्र को टुकडे टुकडे कर दिया है और देश को जाति, धर्म और आर्थिक हितो के आधार पर परस्पर विरोधी टुकडो म बाट दिया है।

अनेक गुणा स सम्पन्न होते हुए भी द्वि दलीय पद्धति दोषा स रहित नही है। इसके अनेक अवगुण हैं—(1) क्योकि द्वि दलीय व्यवस्था म सरकार के पीछे ठोस बहुमत का समर्थन रहता है अत वह निरकुश हो जाती है और अल्पसख्यका के हितो की सम्यक सुरक्षा नही हो पाती। बहुमत प्राप्त सरकार स्वेच्छाचारितापूर्वक प्रशासन का सचालन करती है और मनमाने ढग से नीतिया का निर्माण करती है, परिणामस्वरूप बहुमत दल की तानाशाही स्थापित हो जाती है। (2) इस पद्धति म दलगत अनुशासन की कठोरता के कारण विधायिका का महत्त्व कम हो जाता है। अल्पसख्यक दल के सदस्यो को हमेशा ही बहुमत क सामने नतमस्तक होना पडता है और उनके विचारा तथा सुझावा को कोई मान्यता प्राप्त नही होती। कठोर दलीय अनुशासन के कारण सदस्या को मूक पशुआ की भांति काम करना होता है और उनके व्यक्तित्व को दबा दिया जाता है। बहुमत का समर्थन प्राप्त होने के कारण मन्त्रिमण्डल की प्रधानता स्थापित हो जाती है और विधायिका उसक निर्णया पर अपनी स्वीकृति की मोहर लगाने वाली सस्था बनकर रह जाती है। यही कारण है कि आज ब्रिटेन म मन्त्रिमण्डल की तानाशाही की बात कही जाती है और ससद तो कवल एक रजिस्टरिंग मशीन की भांति हो गयी है। (3) दो दलो का अस्तित्व सम्पूर्ण राष्ट्र को दो विरोधी पक्षा म बाँट देता है जो हमेशा एक दूसरे का विरोध करने की नीति का पालन करते हैं। दो ही दल होने से जनमत का शुद्ध प्रकाशन नही हो पाता और बहुत स हितो व मतो की आवाज दबकर रह जाती है।[1]

ब्रिटिश द्वि दलीय पद्धति—द्वि दलीय पद्धति का सबसे अधिक अच्छा और परिचित नमूना ग्रेट ब्रिटेन है। वहाँ क दोनो प्रमुख दलो म प्रत्येक दल ससद सदस्या म प्रभावी एकता बनाये रखता है। फलत जो दल बहुमत म होता है वह सरकार (मन्त्रिमण्डल) को बनाये रखता है, और जो दल विरोधी पक्षा म रहता है वह यह दिखाने की क्षमता रखता है कि यदि उसे बहुमत प्राप्त हो जाय तो वह सरकार बना सकेगा और उसे कायम रख सकेगा। ऐसे उदाहरण हैं कि जब कुछ सदस्य दल क साथ मत नही देते व अनुपस्थित हो जाते हैं, परन्तु ऐसे उदाहरण कवल अपवाद हैं। सच तो यह है कि ब्रिटिश दलगत राजनीति की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता दो प्रमुख दलों का अस्तित्व है। कुछ समय को छोडकर कभी एक और कभी दूसरा दल सत्तारूढ़ रहा है और तीसरे दल का महत्त्व ब्रिटिश राजनीति म बहुत कम रहा है। ब्रिटिश ससदीय पद्धति क अन्य पहलुओ की अपेक्षा द्वि-दलीय पद्धति ने अन्य देशो क प्रेक्षको और लेखको को अधिक आकर्षित किया है।

ब्रिटेन म द्वि-दलीय पद्धति क विकास और स्थिरता के लिए कई कारण हैं, जिनका सक्षिप्त विवेचन अग्रलिखित है—(1) दो प्रमुख दलो क विकास म ऐतिहासिक कारणो का महत्त्वपूर्ण योग रहा है। द्वि-दलीय पद्धति की उत्पत्ति इस कारण स हुई कि प्रारम्भिक काल म ही जनमत दो भागो म धार्मिक प्रश्नो पर विभाजित हो गया था, जिसका आधार आगे राजनीतिक मतभेद हो गया। (2) ब्रिटिश सविधान अथवा निर्वाचन-पद्धति की विशेषता है एक सदस्य वाले निर्वाचन

[1] The division of a whole nation into two political parties must obviously be more or less unreal or arbitrary since it would be absurd that there could ever be only two schools of thought in a nation. —Ramsay Muir

जरूरी नही है कि सभी आलोचना शत्रुतापूण हो, वह मित्रतापूण व सहायक भी हो सकती है। आलोचना को सुने बिना कोई यह नही कह सकता कि वह क्या और कसी होगी।

4 द्वि दलीय पद्धतियाँ

जहा दो सुसगठित राजनीतिक दलो का अस्तित्व होता है वहाँ द्वि दलीय पद्धति होती है। द्वि दलीय पद्धति का दो मुरय कारणो से एक मानक पद्धति मानते है—प्रथम, यह विश्वास कि राजनीतिक प्रश्नो के बारे म जनता की प्रतिक्रिया स्वभावत दो विरोधी रूपो म होती है, अर्थात् यह विचार कि राजनीतिना और मतदाताआ के किसी नीति के पक्ष और विपक्ष मे दो समूह बन जाते है। अत यह स्वाभाविक प्रतीत होता है कि दो विरोधी मतो के समथको के अपने-अपने उम्मीदवार हो और मतदाता उनम से किसी एक को चुन ले। दूसरे, इस प्रकार की पद्धति को प्रभावी प्रजातान्त्रिक शासन का सबसे अधिक सरल और सम्भव माग समझा जाता है। अशत ऐसा विचार बन गया है कि मतदाताओ को ऐसे दो दलो के बीच स्पष्ट छाट का अवसर मिले कि जिनम स एक शासक दल बने। इसके पक्ष मे यह बात भी कही जा सकती है कि ऐसा शासन अधिक स्थायी होता है। द्वि दलीय पद्धति से अनेक लाभ है—

(1) द्वि दल पद्धति मे सुदृढ और स्थायी सरकार का निर्माण होता है, फलत प्रशासन चुस्त और कुशल बना रहता है। निर्वाचनो म जिस दल को भी स्पष्ट बहुमत प्राप्त होता है वह सरकार का निर्माण करता है और दूसरा दल उसकी रचनात्मक आलोचना करता है। दोनो ही दल सुदृढ और सगठित होते है, अत सरकार स्थायी बनती है।

(2) सरकारो की स्थिरता प्रशासन को कुशलता तथा नीति को निरन्तरता प्रदान करती है। सरकार स्थायी होती है अत विश्वासपूवक अपनी योजनाओ और नीतियो का निर्धारण करती है और उन्हे व्यावहारिक रूप प्रदान करने म भी सफल होती है। नीतियो मे जल्दी जल्दी अवाञ्छित परिवतन नही होते और जनमत को ध्यान मे रखकर ठोस नीतिया का निमाण सम्भव हो पाता है।

(3) इस पद्धति म यह निष्कष सुगमता से निकाला जा सकता है कि प्रशासन सम्बन्धी कुशलता या अकुशलता का उत्तरदायित्व किस दल का है, क्योकि बहुमत प्राप्त दल ही शासन के सभी कार्यों के लिए उत्तरदायी होता है। जहा कई दला की मिश्रित सरकार बनती है वहा उत्तरदायित्व भी बँट जाता है और प्रशासन म शिथिलता आ जाती है, पर तु द्वि दल पद्धति के अन्तगत उत्तरदायित्व का निर्धारण आसानी से हो जाता है।

(4) सगठित विरोधी दल का अस्तित्व सरकार को निरकुश होने से रोकता है। सरकारी नीतिया की ठोस और रचनात्मक आलोचना सम्भव हो पाती है और सरकार भी जनमत के प्रति जागरूक बनी रहती है, क्योकि उसे मालूम रहता है कि यदि उसन जनमत की उपक्षा की तो अगले निर्वाचना मे उसकी हार हो जायगी और विरोधी दल सत्ता पर अधिकार कर लेगा।

(5) द्वि दलीय व्यवस्था म सरकार जनता के मतो की सच्ची दपण होती है, क्योकि वही दल सरकार का निर्माण करता है जिसे जनता का स्पष्ट बहुमत प्राप्त हुआ हो, जबकि बहुदल पद्धति मे अवसरवादी गुट आपस म मिलकर सरकार बनाते ह। लास्की ने मत व्यक्त किया है कि यही एक ऐसी पद्धति है जिसमे मतदाताओ को प्रत्यक्ष रूप स अपनी सरकार का चुनाव करन का अवसर मिलता है।

द्वि दलीय पद्धति म वग विभेदा को अनावश्यक प्रोत्साहन नही मिलता और राष्ट्रीय एकता का सवधन होता है। चूकि दानो ही दल विधायिका म अपना बहुमत चाहते है इसलिए प्रत्येक दल दश के प्रत्यक वग को अपन पक्ष म करना चाहता है, चाह वह किसी जाति का वग हो, आर्थिक

दायी रहे हैं—(1) अमरीकी उपनिवेशो म इगलण्ड से द्वि दलीय पद्धति भी आई। (2) सयुक्त राज्य अमरीका म भी एक सदस्य वाले निर्वाचन क्षेत्र है, जिनके कारण द्वि दलीय पद्धति का विकास होता है और छोटे दलो का अन्त हो जाता है। (3) ऐतिहासिक कारण—प्रारम्भिक काल मे ही दो प्रमुख दलो का विकास हुआ और उनका सगठन सुदृढ बना, जिसके परिणामस्वरूप तीसरे प्रमुख दल का विकास नही हो सका है।

सयुक्त राज्य अमरीका के वतमान प्रमुख दलो के नाम डेमोक्रेटिक और रिपब्लिकन हैं। ये दोनो ही दल अमरीकी राजनीति म बहुत समय स महत्त्वपूण रहे है, परन्तु समय समय पर छोटे दलो का जन्म हुआ है और अन्त भी। वास्तव मे, रिपब्लिकन दल ही एक ऐसा दल है जिसने तीसरे दल के रूप म जन्म लिया और तत्कालीन एक प्रमुख दल का सफलतापूवक स्थान ले लिया। कई बार छोटे दलो के राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारो को काफी मत मिले हैं, किन्तु उनमे से कोई विजयी नही हुआ है। एसे कुछ छोटे दलो का अस्तित्व कई वर्षों तक रहा, जसे नशाबन्दी दल (Prohibition Party) और समाजवादी दल। तीसरे दलो ने नई नीति को अपनाया है, किन्तु एक या दूसरे प्रमुख दल ने उनके कार्यक्रम को अपना लिया और कभी भी तीसरे दल का राष्ट्रपति नही बना।

विदेशियो के लिए अमरीकी दलीय पद्धति वडी रहस्यमय है और उसको समझना कठिन है। इसका कारण यह है कि सयुक्त राज्य अमरीका के दोना प्रमुख दला मे कोई वास्तविक अन्तर नही है। अमरीकी पद्धति म जिस प्रकार एक दल मे उग्रवादी और अनुदारवादी है, वस ही उग्रवादी और अनुदारवादी दूसरे दल म भी है। दोनो प्रमुख दला के बीच मुख्य अन्तर सगठन सम्बन्धी है, सैद्धान्तिक नही। 1888 म जेम्स ब्राइस ने लिखा था, किसी भी दल के कोई सिद्धान्त नही हैं, दाना की परम्पराएँ है, दोना ही प्रवृत्तियो का दावा करते हैं, दोनो के युद्ध घोष और सगठन हैं, उनके समथन म हित है।' उसी लेखक ने यह भी कहा था कि 'दोनो बडे दल दो बोतलो के समान हैं। प्रत्यक पर लबिल लगा है, जो इस बात का सूचक है कि उसम कौनसी शराब भरी है, किन्तु दोना ही खाली है।' वास्तव मे दाना ही प्रमुख दल अमरीकी समाज के प्राय सभी वर्गों और हितो का प्रतिनिधित्व करते हैं। अतएव उन दोनो के कायक्रमा म बहुत कम अन्तर रहता है और सिद्धान्ता पर तो उनम कोई अन्तर नही है। इसी आधार पर फाइनर का यह कथन सत्य है कि 'वास्तव म सयुक्त राज्य अमरीका म एक दल—रिपब्लिकन डेमोक्रेटिक—है, जो आदतो और पदा के लिए सघष स लगभग दो बराबर अद्ध भागा म बँटा हुआ है, दल का एक आधा भाग रिपब्लिकन है और दूसरा आधा भाग डेमोक्रेट है।' एक अमरीकी लेखक के शब्दो म 'हमारे दोना दल किसी (सिद्धान्त) का प्रतिनिधित्व नही करत, दिखावा मात्र है, एक ही फली स निकले समान दान हैं। अमरीकन सभी डेमोक्रेट और सभी रिपब्लिकन हैं।'

सयुक्त राज्य अमरीका के दल समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ब्रोगन के अनुसार अमरीकी दल विभिन्न वर्गों के बीच समझौते हैं और दलीय नेताओ का काम इस प्रकार के समझौते करना और कायम रखना है।[1] इस काम म सफलता पाना ही दल को सत्तारूढ़ बनाना है। इससे यह भी स्पष्ट है कि दला का आधार सैद्धान्तिक नही है। दल विभिन्न प्रकार के वर्गों से मिलकर बनत हैं—आर्थिक, प्रादेशिक व धार्मिक आदि। धार्मिक आधार पर रोमन कैथोलिको तथा अन्य ईसाइयो के वग हैं। प्रादेशिक आधार पर उत्तरी राज्यो व दक्षिणी राज्यो के वग हैं और रगभेद के आधार पर नीग्रो जाति का वग गोरो स अभी तक पृथक् है। दोना ही

[1] Within each party there are many *wings* or elements which do not always agree with each other on all points but which find more upon which they agree than upon which they disagree so they stay within the party —Comfort et al *Your Government* p 293

क्षेत्र, जिनके कारण छोटे दलो का विकास नही हो सका है। निर्वाचन की अन्य पद्धतियो के परिणामस्वरूप कई दलो का विकास होता है और उनमे से कोई भी अकेले मन्त्रिमण्डल का निर्माण नही कर सकता। इस प्रकार द्वि दलीय पद्धति की जडे देश की राजनीतिक पद्धति मे गहरी गडी हैं। इसी के परिणामस्वरूप राजनीति मे स्थिरता रहती है और चुनाव मे सरकार की छाट होती है। (3) दलीय अनुशासन बहुत कठोर रहता है। एक दल के टिकट पर चुना हुआ सदस्य आसानी से दूसरे दल मे सम्मिलित नही हो सकता। यदि सत्तारूढ दल के कुछ सदस्य किसी प्रश्न पर मन्त्रिमण्डल का समर्थन न करें और विरोधी दल मे मिल जायें तो मन्त्रिमण्डल की पराजय हो सकती है, किन्तु ऐसा होने पर केबिनेट पार्लियामेंट का विघटन करा सकती है जिसके फलस्वरूप नये चुनाव होगे, विपक्षी दल का मन्त्रिमण्डल न बन सकेगा। वास्तव मे यह द्वि दलीय पद्धति की स्थिरता का महत्त्वपूर्ण कारण है।

ब्रिटिश दलीय पद्धति की अन्य विशेषतायें भी है। यह सच है कि मजदूर दल मुख्यत श्रमिको का और अनुदार दल धनिको का प्रतिनिधित्व करते हैं, किन्तु दोनो ही दलो मे प्राय सभी वर्गों के समर्थक मिलते हैं। इसी कारण ब्रिटिश दल अपना कार्यक्रम वर्गीय दृष्टिकोण से नही बनाते। वास्तव मे, ब्रिटिश जाति मे एकरसता (homogeneity) अधिक है और विविधताये कम हैं। इसी कारण 1924 तक सरकार चाहे अनुदार दल की रही अथवा उदार दल की, उनके बीच गहरे सैद्धान्तिक मतभेद नही रहे और समाज की आधारभूत रचना के विषय मे कभी कोई महत्त्वपूर्ण प्रश्न नही उठा। उसके बाद यद्यपि चुनावो के अवसर पर दलो के नेता एक दूसरे दल की कटु आलोचना करते हैं, फिर भी उनके कार्यक्रम मे आधारभूत अन्तर नही होता। वास्तव मे मजदूर दल व अनुदार दल दोनो ही मध्यम वर्ग का समर्थन पाने का प्रयत्न करते हैं। दोनो दलो की नीतियो और कार्यक्रम मे बहुत बडा अन्तर नही रहता। विदेश नीति के क्षेत्र मे दोनो ही दल संयुक्त राष्ट्र संघ का समर्थन करते है, राष्ट्रमण्डल के प्रति अपनी निष्ठा दर्शाते हैं, संयुक्त राज्य अमरीका व पश्चिम यूरोप से सहयोग का समर्थन करते है और साम्राज्य के अधीन उपनिवेशो के विकास को स्वीकार करते हैं। आन्तरिक नीति के क्षेत्र मे भी उनमे कई प्रश्नो पर सहमति है।

परन्तु उद्देश्यो के बारे मे सहमति के पीछे उनकी प्राप्ति के साधनो के बारे मे दोनो प्रमुख दलो मे मतभेद रहा है। दोनो के दृष्टिकोण भिन्न राजनीतिक सिद्धान्तो मे विश्वास का परिणाम हैं। उनके बीच मतभेद रहता है और वह इतना व्यापक है कि मतदाता को वास्तविक छाट का अवसर मिलता है। उनके मतभेद सैद्धान्तिक है केवल दलीय नही। मतदाता को सदस्य छाँटने के साथ साथ कार्यक्रम की छाट करनी होती है। मजदूर दल समाजवाद मे विश्वास करता है और अनुदार दल स्वतन्त्र तथा निजी उद्योग का समर्थक है। मजदूर दल का विश्वास राष्ट्रीयकरण अथवा एकाधिकारी उद्योगो के समाजीकरण अर्थात् उन पर राज्य के स्वामित्व की स्थापना मे है। मजदूर दल ने उद्योगो व मूल्यो पर नियन्त्रण का समर्थन किया है। अनुदार दल 'राजकीय केन्द्रीकरण' अथवा समाजवादी नौकरशाही का विरोधी रहा है। परन्तु साधनो के सम्बन्ध मे दोनो के बीच एक आधारभूत सहमति है, दोनो ही दल प्रजातन्त्रात्मक साधनो मे विश्वास रखते है। ब्रिटिश दलीय पद्धति का सबसे महत्त्वपूर्ण गुण यह है कि उसके अन्तर्गत मन्त्रिमण्डल सुदृढ रहता है और विरोधी दल भी सुदृढ होने के कारण सरकार की तीव्र आलोचना कर सकता है। इस पद्धति के अन्तर्गत सभी वर्गों की बाते सुनी जाती है किन्तु बहुमत की बात मान ली जाती है। इस दलीय पद्धति के रहते हुए सरकार मे शान्तिपूर्ण ढग से परिवर्तन हो जाता है।

संयुक्त राज्य अमरीका मे द्वि दलीय पद्धति—ब्रिटेन की तरह संयुक्त राज्य भी द्वि दलीय पद्धति है। वहाँ समय समय पर तीसरे अथवा कम महत्त्वपूर्ण दल जन्मे है, प्रमुख दल दो ही रहे है। द्वि दलीय पद्धति के विकास के लिए मुख्यत अग्रलिखित कारण

कारण यह है कि कनाडा के प्रमुख दलों को कम से कम कनाडा के पाँच बड़े प्रदेशों में से तीन का समर्थन प्राप्त करना आवश्यक है। इसका अर्थ यह निकला कि बड़े दल को इन विभिन्न प्रदेशों के विरोधी हितों में सामंजस्य स्थापित करना पड़ता है। इस कार्य में इसे जितनी अधिक सफलता मिलती है, उतना ही इसका समर्थन बढ़ता है और उतने ही इसके सत्तारूढ़ होने के अवसर भी बढ़ते हैं।[1]

क्लोकी ने लिखा है—"कनाडा में फ्रांसीसी उद्भव के लोग सबसे अधिक अनुदारवादी हैं और वे साधारणतया अनुदार दल के ही समर्थक हो सकते हैं, परन्तु चूंकि अनुदार दल को कुछ फ्रांस विरोधी समझा जाता है, अतः यह अनुदार समूह उदार दल समूह में चला गया है। परिणाम यह निकला है कि उदार दल वर्षों से अनुदार सदस्यों के बोझ से दबा है। यदि इनके साथ किसानों को भी अनुदार मान लिया जाय, जैसा कि अन्य देशों में उनको समझा जाता है, तो फ्रांसीसियों और किसानों के मेल से उदार दल विश्व के सबसे अधिक अनुदार दलों में से एक है। इस प्रकार अनुदार दल अनुदार तत्त्वों से रहित रहा है। इसने औद्योगिक व वित्तीय हितों की रक्षा का प्रयत्न किया है। दोनों बड़े दल किन्हीं सिद्धान्तों अथवा नीतियों पर नहीं बने हैं, क्योंकि उनका आधार विभिन्न प्रदेशों में समर्थन प्राप्त करना रहा है।'[2]

कौरी और हाजट्स ने लिखा है—'जहाँ तक दोनों दलों के कार्यक्रमों का सम्बन्ध है वे संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रीय दलों के कार्यक्रमों से मिलते हैं, जिन्हें दल के विभिन्न समूहों व हितों से अपील करने के उद्देश्य से बनाया जाता है।' परन्तु क्लार्क का मत है—'यद्यपि दोनों बड़े दलों में राजनीतिक सिद्धान्तों का अन्तर सदा ही निश्चित रूप से नहीं पाया जाता, फिर भी यह नहीं सोचना चाहिए कि ये दल एक दूसरे के इतने समान हैं कि राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता अर्थहीन है और वे उन खाली बोतलों की भाँति है जिन पर भिन्न लेबिल लगे हैं, अतः वे बेकार है जैसा कि कभी कभी कहा गया है।' कनाडा में दलीय-पद्धति की चौथी विशेषता यह है कि उनका संगठन सुदृढ़ नहीं है। कुछ लेखकों के अनुसार तो बड़े दल भी प्रान्तीय तथा छोटे दलों के संघ है। दूसरे शब्दों में, विभिन्न स्तरों पर संगठन की इकाइयाँ एक दूसरे से अच्छी प्रकार गुँथी हुई नहीं है। दोनों ही बड़े दलों की विशेषताएँ ढीला-ढाला संगठन और स्थानीय इकाइयों द्वारा स्वायत्तता पर बल रही है। चुनावों के बीच में प्रगतिशील अनुदार दल तो इतने अकर्मण्य रहते हैं कि इनका दल केवल उम्मीदवार छाँटने वाला और मत प्राप्त करने वाला है, ऐसा नहीं जो दलीय नीतियों पर प्रभाव डालता है।

5 बहुदल पद्धतियाँ

भारत, फ्रांस, इटली, जापान और पश्चिम जर्मनी में अनेक राजनीतिक दलों का अस्तित्व है, अतः वहाँ बहुदल पद्धति है। इस पद्धति के ये लाभ है (1) इस पद्धति में जनमत का शुद्ध प्रकाशन सम्भव हो पाता है और समाज के विभिन्न वर्गों तथा हितों को अपनी समस्याओं की अभिव्यक्ति का समुचित अवसर मिलता है। विभिन्न हितों को लेकर जो राजनीतिक दल बनते हैं वे अपनी संगठित शक्ति के द्वारा अपनी आकांक्षाओं तथा कठिनाइयों को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त कर सकते हैं। इस प्रकार समाज के अल्पसंख्यक वर्गों की आवाज दबी रहने से बच पाती है और दलीय संगठनों के माध्यम से विधायिका में भी उन्हें समुचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जाता है। (2) विधायिका में अनेक दलों का अस्तित्व होने से किसी भी एक दल की तानाशाही स्थापित

[1] Dawson R M *Democratic Government in Canada* pp 122-24

[2] Clokie Hugh McD *Canadian Government and Politics* p 77

दलो म कई वर्गों के समथक अथवा विभिन्न तत्त्व पाये जाते है और ऐसे वग तथा तत्त्व भी जिनम मतभेद होते हैं। अमरीका के दल सच्चे अर्थ मे राष्ट्रीय नही है। दला की आर्थिक, धार्मिक तथा प्रादेशिक रचना होने के कारण उ हे राष्ट्रीय दल कहना उचित नही है। दोनो ही दलो के सगठन म राज्यो और स्थानीय अथवा क्षेत्रीय इकाइयो की प्रधानता है न कि राष्ट्रीय सगठन की। चूकि निर्वाचन का सचालन और निय त्रण मुरयत राज्या के हाथ मे है, इसलिए दलो के विकास म राज्यो की इकाइया का महत्त्व चला आ रहा है। प्रधानतया दलो का हित राज्यो व स्थानीय क्षेत्रो के निर्वाचन पदो के पाने म है यद्यपि वे राष्ट्रपति तथा उप राष्ट्रपति पद के लिए चुनावो म भाग लते है। इस प्रकार दलो के सामने अधिकाशत राज्य, क्षेत्र व स्थान से सम्बधित प्रश्न अधिक महत्त्वपूण रहते ह।[1] वास्तव म अमरीकी दलो का आधार राष्ट्रीय सगठन नही है। सयुक्त राज्य अमरीका म राष्ट्रीय प्रश्नो का अधिक महत्त्व नही रहा है, जहा तक विदेश नीति का सम्ब ध है, दोनो ही दलो की नीति प्राय समान होती है। एक लेखक के अनुसार अमरीकी दल यह मानते है कि उनके बीच आधारभूत प्रश्नो पर सामा य सहमति है। इस कारण भी सयुक्त राज्य अमरीका म राष्ट्रीय महत्त्व के प्रश्नो का प्राय अभाव है।

कनाडा मे द्वि दलीय पद्धति—कनाडा म अभी तक दो प्रमुख दल रहे है और अब भ है[2]—उदारवादी दल और अनुदारवादी दल। अनुदारवादी दल ने 1943 म अपना नाम प्रगतिशील अनुदारवादी (Progressive Conservative) दल रखा। 'कनाडा म दो बडे राजनीतिक दल है और इस समय तीन छोटे दल भी है। बडे दल उदारवादी और अनुदारवादी, सघ निर्माण के समय से चले आ रहे हैं, छोटे दल—कोआपरेटिव कॉमनवैल्थ फडरेशन, सोशल क्रेडिट पार्टी और यूनियन नेशनलस पिछली कुछ दशाब्दियो म ज मे है। इन दला का स्थानीय, प्रा तीय व सघीय स्तरो पर प्रभाव भिन भिन है। द्वि-दलीय पद्धति का एक महत्त्वपूण परिणाम कनाडा म कुछ अल्पकालीन अपवादा को छोडकर एक या दूसरे दल का स्थायी शासन रहा है, इस वात म तथा कुछ अ य वातो म भी कनाडा की दलीय पद्धति ब्रिटेन की ससदीय पद्धति से मिलती है। यहा यह भी कहना उचित होगा कि कनाडा म द्वि दलीय पद्धति एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रो का परिणाम है।

कनाडा की दलीय पद्धति की दूसरी महत्त्वपूण विशेषता यह है कि इस पर ब्रिटेन व सयुक्त राज्य अमरीका दोनो की पद्धतियो का प्रभाव पडा है। जहा तक द्वि दलीय पद्धति का सम्ब ध है, यह तो ब्रिटिश और अमरीकी दोनो ही पद्धतिया के समान है, परन्तु कनाडा म दो दलो का विकास ब्रिटेन से बहुत मिलता है, यहाँ तक कि दोना प्रमुख दलो के नाम भी वही है जो ब्रिटेन म है, फिर भी उनके रूप को तथ्य मान लेना कनाडा के राजनीतिक जीवन क स्वरूप को गलत समझना होगा। 75 वष के काल म उनक विकास का आधार ब्रिटिश नमूने से बहुत बदल गया है उसी अनुपात म जिसमे कि उस कनाडा के पर्यावरण के लिए ढाला गया है। कनाडा की दलीय पद्धति की तीसरी विशेषता यह है कि उसके दोना प्रमुख दल निश्चित रूप स सिद्धान्ता म विश्वास रखने वाले दल नही है। डासन क अनुसार दोना प्रमुख दला के मत और उनकी नीतियाँ ऐसी है जिनका प्रगणन करना कठिन है, क्योकि उनम बहुधा परिवतन होते रहे हैं और उनम असगति भी रही है। अधिकतर वातो म उनकी विशेषताए साधारण प्रवृत्तियाँ रही है। इसका

[1] The localism of party organisation deserves close attention Thus a network of issues local issues without federal counterparts present itself to the electorate —Griffith Ernest S *American System of Goverrment* pp 122-23

[2] From the formation of the Dominion of Canada in 1867 until the last few years Canadani political scene has been dominated by two parties the Liberal party and the Conservative party —Corry and Hodgetts *Democratic Goverrment and Politics* p 24

एक साथ मतदान नही किया, वरन् शासन का समर्थन करने वाले दलो मे मतदान के समय फूट पड गयी।

परन्तु फ्रांस के पाँचवे गणतन्त्र के अन्तर्गत स्थिति बदल गई है। यू० एन० आर० (The Union of the New Republic) नि सदेह एक कार्यक्रम वाला संसदीय दल रहा है जिसने राष्ट्रपति डि गाले द्वारा नियुक्त सरकारो का समर्थन किया है। यह कहा जा सकता है कि एक प्रकार से यह दल (अपने समर्थको सहित) बहुमत दल रहा है। परन्तु विरोधी पक्ष मे कम दल रहे हैं। यह भी कहा जा सकता है कि पाँचवे गणतन्त्र के अन्तर्गत फ्रांस मे परिशुद्ध रूप मे संसद पद्धति को स्थापित नही किया गया है। यह बात निश्चित है कि राष्ट्रपति का वर्तमान संविधान द्वारा प्रदान की गयी शक्तियाँ संसद पद्धति के परम्परागत मान्य सिद्धान्त से असगत है, फिर भी यह मानना उचित है कि वहाँ काफी बडी मात्रा मे संसद पद्धति के सिद्धान्त को अंगीकृत किया गया है। अत शासक दल के लिए संसद पद्धति के अन्तर्गत पाये जाने वाले एकीकृत कार्यक्रम के लिए वहाँ पर काफी प्रेरणा विद्यमान है।

यह बात निश्चित है कि जिस प्रकार फ्रांसीसी शासक दलो मे नीति व कार्यक्रम की एकता का अभाव रहा है, उस प्रकार का उदाहरण साधारणतया अन्य यूरोपियन देशो मे नही मिलता। उदाहरण के लिए जर्मनी का अनुभव इसके विपरीत है, वेमर गणतन्त्र मे भी संसद मे मतदान दलीय आधार पर होता था। यह बात सोशल डेमोक्रेटो के बारे मे भी सच है, साम्यवादियो और नाजियो ने तो सदा ही एकीकृत शक्तियो के रूप मे कार्य किया। क्रिश्चियन डेमोक्रेट्स मे भी काफी मात्रा मे एकता रही है। अतएव पश्चिमी जर्मनी मे बावजूद कई दलो के प्राय दो दल जैसी प्रतिस्पर्धा रही है 1966–67 मे मिले जुले मन्त्रिमण्डल के अन्तर्गत भी। वहाँ पर इस समय दो प्रमुख दल सोशल डेमोक्रेट व क्रिश्चियन डेमोक्रेट है, जिनके बीच सत्ता के लिए वास्तविक संघर्ष होता है और जो मतदाताओ के सामने वैकल्पिक सरकारो के रूप मे अपने कार्यक्रम रखते है। फ्री डेमोक्रेट, तीसरा मुख्य दल है, किन्तु वह क्रिश्चियन डेमोक्रेट का अवर साझी रहा है। अन्य महाद्वीपीय राज्यो का जहाँ संसदीय पद्धति है, बहुदलीय पद्धति के रहते हुए भी, अनुभव फ्रांस की अपेक्षा जर्मनी से अधिक मिलता है। उदाहरण के लिए, इटली के गणतन्त्र मे नियमित रूप से क्रिश्चियन डेमोक्रेट दल का बहुमत अथवा लगभग बहुमत रहा है। बेल्जियम और नीदरलैण्ड्स दोनो ही सुदृढ संसदीय दल के एकीकृत कार्यक्रम के उदाहरण है, यद्यपि वहाँ पर कई दल है, और कोई भी एक दल बहुमत मे नही है। परन्तु पश्चिमी यूरोप के बाहर वाले देशो मे, जहाँ संसद पद्धति भी है, एकीकृत कार्यक्रम वाले दलो के उदाहरण बहुत कम है।

फ्रांस मे बहुदलीय पद्धति के लिए उत्तरदायी कारण—फ्रांस मे बहुदलीय पद्धति का विकास कई कारणो से हुआ है और अभी तक वही पद्धति प्रचलित है। ऐतिहासिक कारण यह है कि फ्रांस मे 1789 तक राजतन्त्र चला और उस वर्ष क्रान्ति हुई। क्रान्ति के उपरान्त भी दो बार साम्राज्यो की स्थापना हुई और बीच बीच मे गणतन्त्रीय संविधान लागू हुए। इससे स्पष्ट है कि फ्रांस मे राजतन्त्र बनाम गणतन्त्र (Monarchy *vs* Republicans) की समस्या का अन्त नही हुआ है। अभी तक फ्रांस मे ऐसे व्यक्तियो की काफी संख्या है जो राजतन्त्र की पुन स्थापना का स्वागत करेंगे और साथ ही राजतन्त्र के विरोधियो की संख्या बहुत बडी है, जो किसी भी रूप मे राजतन्त्र का आना सहन नही कर सकते। दूसरा कारण धार्मिक प्रश्न का है। परम्परा की दृष्टि से फ्रांस प्रधानत एक कैथोलिक देश है। इसकी 4 2 करोड जनसंख्या मे से 3 8 करोड इसी धर्म के अनुयायी हैं, शेष प्रोटेस्टेंट अथवा यहूदी है। पक्के कथोलिक गणतन्त्रीय अथवा प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्तो का हृदय से समर्थन नही करते, व राजतन्त्र के समर्थक रहे है और उन्होंने स्त्री मताधिकार का विरोध किया है। दूसरी ओर अधिकांश व्यक्ति प्रजातन्त्र के प्रबल समर्थक

नही हो पाती और देश बहुमत की निरकुशता के खतरे से बच जाता है। (3) इस पद्धति म अधिकाशत कई दलो की मिली जुली सरकार बनती है अत देश के सर्वोत्तम व्यक्तियो को प्रशासनिक कार्यों म भाग लेन और अपनी प्रतिभा के प्रदशन करने का अवसर मिलता है।

जनतन्त्र के अधिक अनुकूल होते हुए भी बहुदल पद्धति के अनेक दोष अग्रलिखित है (1) अनेक दलो का अस्तित्व विधायिका को झगडे का मच और विरोधो का अखाडा बना देता है। विभिन्न दल पारस्परिक मनमुटाव के शिकार होकर सदव एक दूसरे का विरोध करते रहने है, फलत सुनिश्चित और ठोस नीतिया का निर्माण सम्भव नही हो पाता। (2) बहुदल व्यवस्था म सुदृढ और स्थायी मन्त्रिमण्डल का निर्माण नही हो पाता। भारत, फ्रास, इटली आदि देशो म अनेक दलो की मिश्रित सरकार बनती है जो अस्थिर और अल्पकालीन होती है। उदाहरण के लिए, फ्रास म 1870 और 1934 के बीच 88 मन्त्रिमण्डल बने, जिनकी औसत आयु 9 माह से कम थी। उसी अवधि म इगलण्ड म 18 मन्त्रिमण्डल बने, जो औसतन तीन से साढ़े तीन वष तक रहे। सयुक्त सरकार का सारा समय अपनी रक्षा और साँठ गाठ म ही व्यय हो जाता है और उसके पास देश की सेवा करने के लिए समय ही नही बच पाता। उसके पास न तो सुनिर्धारित नीति होती है और न इतनी शक्ति होती है कि किसी नीति को विश्वासपूवक कार्यान्वित कर सके। (3) सरकारो म जल्दी जल्दी परिवतन होने से शासन दुबल व शिथिल हो जाता है। सुनिश्चित नीतियो और ठोस योजनाओ का निर्माण नही हो पाता और शासन की नीतियो म तारतम्य तथा निरन्तरता का भी अभाव रहता है। (4) अनेक दलो के होने के कारण वर्गीय हितो और क्षुद्र स्थानीय स्वार्थों को अनावश्यक प्रश्रय प्राप्त होता है और सम्पूण राष्ट्र अनेक खण्डो म विभक्त हो जाता है। विभिन दलो म ईर्ष्या, द्वेष और वैमनस्य की भावना होने से अनुशासनहीनता फलती है, नैतिकता का ह्रास होना है और देश के हितो की उपेक्षा होती है। (5) बहुदल पद्धति म एक सुसगठित विरोधी दल का निर्माण सम्भव नही हो पाता जो कि ससदात्मक पद्धति की सफलता का मूल आधार है। विभिन्न विरोधी दल शासन की रचनात्मक आलोचना करने के स्थान पर आपस म ही एक दूसरे स उलझते रहते हैं।

यद्यपि बहुदल पद्धति आज ससार के अनेक देशो म प्रचलित है फिर भी अधिकाश विचारक द्वि-दल पद्धति का ही समथन करते है क्योकि इसम सुदृढ मन्त्रिमण्डल का निर्माण सम्भव हो पाता है और शासन की नीतियो मे निरन्तरता बनी रहती है। वास्तव म ससद प्रणाली की सफलता द्वि दल पद्धति पर ही आधारित है और यही कारण है कि अधिकतर देश अपने यहा दो सुसगठित राजनीतिक दलो का विकास करना चाहते है। फाइनर ने लिखा है कि राष्ट्रा की प्रसन्नता और उनक कत्तव्य पालन के लिए बहुदलीय व्यवस्था की अपेक्षा द्वि दलीय व्यवस्था अधिक उचित है और यदि दो दल हर स्थान पर चुनाव प्रतियोगिता मे लडें तो असत्या तथा त्रुटियो को हर स्थान पर ललकारा जा सकता है।

बहुदलीय ससद पद्धति के विभिन्न रूप—यदि ब्रिटिश और अग्रजी भाषा भाषी राष्ट्र मण्डलीय राज्या के अनुभव पर आधारित तक ठीक है, तो ससद पद्धति की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि मन्त्रिमण्डल बनाने वाले दल या मिले जुले दल की नीतियो व कायक्रमो म एकता हो। इस प्रकार की एकता दो या तीन दल भी मिलकर प्राप्त कर सकते हैं इसके अभाव का प्रमुख उदाहरण फ्रास रहा है। चौथ गणतन्त्र मे तो विशेष रूप से इस प्रकार की एकता का अभाव रहा। 1946 और 1956 के बीच 72 महत्त्वपूर्ण प्रश्नो पर नेशनल एसेम्बली म हुए मतदान से पता लगता है कि सिवाय समाजवादिया और साम्यवादियो क ऐसे सदस्य बहुत कम रहे जिन्होने दल के सदस्यो के साथ एक ही प्रकार से मत दिया हो। उसी काल म दस बार मन्त्रिमण्डलो का पतन इसी कारण हुआ कि दलो के सदस्या म भिन्न भिन्न प्रश्नो पर

बीसवाँ अध्याय

विभिन्न राज्यो मे राजनीतिक दल

1 ग्रेट ब्रिटेन मे राजनीतिक दल

अनुदारवादी दल—यह दल सिद्धान्त रूप म तो यह विश्वास करता है कि राष्ट्र की राजनीतिक परम्पराओ के श्रेष्ठ तत्त्वा को कायम रखा जाये और परम्पराओ को बदलती हुई दशाओ के अनुसार ढाला जाय। प्राचीन काल स लेकर अभी तक अनुदारवादी राजतन्त्र, चच और साम्राज्य के रक्षक है और उन्हे किसी भी प्रकार क खतरा म बचाना चाहते हैं। परन्तु राजतन्त्र और चच के सम्बन्ध मे अब कोई प्रभाव नही है, दल के सामने मुख्य समस्या समाजवाद का मुकाबला करने की है। इस प्रश्न पर दल के दक्षिणपथी तथा वामपथी भागो म मतभेद है। दक्षिणपथी अभी तक स्थापित सामाजिक व्यवस्था को बुद्धि और न्याय का सार मानते है, परन्तु दल म ऐसे भी सदस्य हैं जिनका विश्वास है कि देश जीवित नही रह सकता यदि समय की माँग के अनुसार सामाजिक और आर्थिक सुधार न किये गये। सिद्धान्त म दल अभी तक व्यक्तिगत उद्योगा के पक्ष म है व्यवहार मे, यह विस्तृत सावजनिक स्वामित्व को आवश्यक बुराई के रूप म मानने को तैयार है और सिवाय फौलाद उद्योगो के राष्ट्रीयकरण को स्वीकार करता है। सक्षेप मे, दल का दृष्टिकोण अभी तक पुराने ही मतो पर आधारित है, जैसा कि इसके चच, आयरिश गृह शासन, लाड सभा, साम्राज्य के बारे म आर्थिक नीति आदि के प्रति अपनाये गये रखो तक सामाजिक व आर्थिक सुधारो के प्रति बहुत धीमे से और सोच विचार कर चलने से विदित होता है।

दल ने अपने चुनाव प्रचार साहित्य म समाजवाद और नियोजन की बडी निन्दा की है परन्तु व्यवहार म, उसने यह माना है कि—(1) ब्रिटेन की वतमान आर्थिक व्यवस्था इतनी बुरी है कि सरकारी निदेश बिना केवल निजी उद्योग द्वारा उसे सुधारा नही जा सकता, (2) मजदूर दलीय सरकार द्वारा लागू किये गये बहुत से सुधार और जारी की गयी सेवाएँ इतनी जनप्रिय हैं कि उनका पूरी तरह से अन्त नही किया जा सकता, (3) कोयले उद्योग के राष्ट्रीयकरण का अन्त करना व्यथ है। वदशिक व राष्ट्रमण्डलीय मामला म अनुदार दल राष्ट्रवादी तथा साम्राज्यवादी है।

यह दल अभी तक कुलीन वग, धनी वर्गों, बडे व्यवसायियो तथा उन लोगा स जो कृषि व उदार पेशे म लगे हैं, समथन पाता है। इसके समथको म धनी और साधारण आय वाले ऐसे व्यक्ति हैं जो समाजवाद को अपनी सुरक्षा के लिए खतरा समझते है। स्त्रियो को मताधिकार मिलने से अनुदारवादी दल के समथकों की सख्या कुछ बडी है। 1950 के चुनाव मे अनुदारवादी दल को मिले मतो म 53 प्रतिशत स्त्रियो द्वारा मत डाले गये थे। आयु की दृष्टि स इसे नवयुवक मतदाताओ का कम समथन प्राप्त है, इससे पता चलता है कि आयु और साधन बढ़ाने के साथ

हैं। अतएव अभी तक धार्मिक प्रश्न फ्रास म एक दीघकालीन और कटु प्रवाद का विपय रहा है, जिसका फ्रास की राजनीति पर बुरा प्रभाव पडा है।

टेलर का कथन है—'तीसरे गणतन्त्र के अन्तगत दलीय स्थिति के समान आज भी फ्रासीसी राजनीतिक दला का उनके 1789 की क्रान्ति के प्रति रुख के आधार पर वर्गीकरण किया जा सकता है। अति वामपन्थी श्रेणी म हम साम्यवादी दलो को रख सकते है। केन्द्रीय वामप थी समूह मे ऐसे प्रगतिशील समूह आते है जो मार्क्सवाद व समष्टिवाद के विरोधी है। एम० आर० पी० दक्षिणपन्थी दल है। इस प्रकार कई अन्य दल भी है।' न सी पियरसन के मतानुसार फ्रास के सभी दल एक ही युग (era) अथवा जाति (species) के नही है। उनम स कुछ पत्थर युग के है तो कुछ अणु युग के हैं (अर्थात् कुछ अति पुराने और कुछ सवथा नये है)। कुछ अति प्राचीन जानवरो के फॉसिलो की तरह निर्जीव है (fossilized beings), कुछ विभिन्न प्रकार के अन्य जीवो की तरह सभी परिस्थितिया म जीवित रहन वाल है।

स्वभावगत कारण (Temperamental Factors)—इस श्रेणी म हम राजनीतिक विचारधाराओ की शक्ति को गिन सकते है। राजनीति मे, अधिकाश फ्रास निवासी किसी एक या दूसरी राजनीतिक विचारधारा मे विश्वास करते है। यह फ्रास मे व्यापक आधार पर विभिन्न विचार समूहो के व्यक्तियो म कोई स्थायी मेल व सहयोग स्थापित होन मे बडी बाधक है, क्योकि इस प्रकार के मेल का आधार समझौता ही हो सकता है। बदलती हुई परिस्थितियो के अनुसार राजनीतिक दल और कायक्रम बनते है और चल जाते है। पर तु दलीय चित्र की मुख्य विशेपताएँ वे ही कायम है। उनकी जडे राष्ट्र के चरित्र मे गडी है, जिसके आधार है—फ्रासीसी व्यक्तिवाद और उनकी विश्लेपण के लिए विशेप रुचि। एक स्पेनिश लेखक के अनुसार औसत अग्रेज अथवा अमरीकी के लिए राजनीति एक खेल है, जिसे साधारणतया दो विरोधी दल खेलते है। वे सहयोग की आवश्यकता को ध्यान म रखकर अपने विश्वास और पसन्द को सहप दलीय निणयो और अनुशासन के अधीन कर लेते हैं, कि तु फ्रास म राजनीति एक प्रकार का युद्ध है और अधिकाश फ्रासीसी आपस म सहयोग नही कर पाते और न ही वे दलीय अनुशासन और निणयो को महत्त्व देत हैं।

अन्य कारण—ब्रिटेन की अपेक्षा फ्रास क्षेत्र मे बहुत विस्तृत है, इस कारण वहा अनेक दला का निर्माण प्रादेशिकता के आधार पर भी होता है। कई प्रश्ना पर फ्रास मे पूरब और पश्चिम, उत्तर और दक्षिण के निवासियो और सदस्या म मतभेद उत्पन्न होते रहते है। एसे ही फ्रास म ट्रेड यूनियनें भी कई है, जिनके आधार पर मजदूरो के भिन्न दल बने है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद फ्रास म एक ओर तो विरोधी तत्त्वो, जिन्होने देश को जमन अधीनता से स्वत त्र करने का प्रबल आन्दोलन चलाया और दूसरी ओर विचि के शासन स सहयोग करने वाले तत्त्वो के विरोध से भी कुछ नये दलो की उत्पत्ति हुई। इनके अतिरिक्त कुछ छोटे-छोटे सहायक कारणो (contributing factors) म हम इन दो को गिन सकते है—पहले, नशनल एसम्बली के सदस्य और उसके निर्वाचको के बीच निकट और वैयक्तिक सम्बन्ध होता है, जिसके कारण सदस्य अपने दल को अधिक महत्त्व नही देता और उस दल का अनुशासन अत्यन्त ढीला होता है। दूसरे फ्रास मे लोकप्रिय सदन के विघटन की प्रथा स्थापित नही हो सकी है। इस कारण से भी सदस्यो पर दलो का अनुशासन बहुत ढीला है। इन दोनो कारणो से दलो का सगठन सुदृढ नही होता और सदस्य चाहे जब अपनी वफादारी को बदल लेते हैं। इनके फलस्वरूप दलो की सख्या कम नही हो पाती। अन्तिम कि तु अत्यधिक महत्त्वपूण कारण वहा की निर्वाचन पद्धति है। फ्रास ने अभी तक ब्रिटेन के ढग के एक सदस्यीय चुनाव क्षेत्रो की पद्धति को नही अपनाया है। गत सविधान के अन्तगत तो फ्रास मे आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति रही। अन्य देशा और फ्रास का अनुभव यह सिद्ध करता है कि यह पद्धति दला की सख्या घटाने के बजाय बढाने म अधिक सहायक होती है।

चार्टिज्म और समाजवाद से हुआ। उन्नीसवी शताब्दी के अन्त से पूर्व 'समाजवादी प्रजातन्त्रात्मक सघ' (Social Democratic Federation) और फेबियन सोसाइटी की स्थापना हुई। 1899 म ट्रेड यूनियनो, स० प्र० सघ व अन्य समाजवादी सगठनो के सम्मेलन ने एक मजदूर प्रतिनिधि समिति नियुक्त की, जिसने 1906 म मजदूर दल का नाम धारण किया। दल ने 1911 म 'डेली हेराल्ड' नाम का दैनिक पत्र निकाला। दल को 1923 के चुनाव म ही 191 स्थान प्राप्त हुए थे और 1945 म पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ था। गत 10–11 वर्षों स यही दल प्रमुख विरोधी दल है, परन्तु परिस्थितियो के कारण इस उग्र समाजवादी कार्यक्रम म सशोधन करने पडे हैं। यह दल प्रजातन्त्रात्मक तरीको द्वारा ही समाजवाद स्थापित करने म विश्वास करता है।[1]

समाजवादी ऐसे समाज की स्थापना का समर्थन करते हैं, जिसम धन उत्पादन के साधनो का स्वामित्व सम्पूर्ण जनता म निहित हो और जिन्हे सहमति के आधार पर तैयार की गयी योजना के अनुसार नियन्त्रित किया जाये, अर्थात् धन का वितरण व्यापक सामाजिक और आर्थिक न्याय पर आधारित हो अतएव मजदूर दल के कार्यक्रम म ये बातें सम्मिलित हैं—देश के बड़े उद्योगो को समुदाय के स्वामित्व तथा नियन्त्रण म लाना अर्थात् उनका राष्ट्रीयकरण करना और कुछ सीमा तक भूमि का समाजीकरण भी। 1946 म 'बैंक ऑफ इग्लैण्ड' का राष्ट्रीयकरण करके मजदूर दलीय सरकार ने वित्त और पूजी लगाने पर भी कुछ नियन्त्रण स्थापित किया। कृषि के क्षेत्र मे मजदूर दल आयात की जाने वाली वस्तुओ और उनके वितरण पर इस प्रकार से नियन्त्रण करना चाहता है कि उत्पादको को अपनी वस्तुओ के लिए एक निश्चित मूल्य प्राप्त हो सके। ऐसे तरीको से मजदूर दल देश के आर्थिक जीवन को काफी सीमा तक नियन्त्रित तथा विनियमित करना चाहता है। सामाजिक क्षेत्र म दल की नीति सर्वसाधारण के लिए सामाजिक सुरक्षा तथा विस्तृत सामाजिक सेवाओ की व्यवस्था करने म विश्वास रखना है। दल साम्राज्यवाद का विरोधी है और राष्ट्रमण्डल व सयुक्त राष्ट्र सघ का बडा समर्थक है।[2] 1945 के चुनाव घोषणा-पत्र म मजदूर दल ने 'समाजवादी कॉमनवैल्थ' (Socialist Commonwealth) की स्थापना का विश्वास दिलाया था। दल को मजदूर वर्ग के व्यापक समर्थन के अतिरिक्त मध्यम वर्ग म शिक्षको तथा अन्य बुद्धिजीवियो का काफी समर्थन प्राप्त है।

1918 तक दल की सदस्यता केवल किसी सम्बद्ध सगठन की सदस्यता द्वारा ही प्राप्त हो सकती थी। आजकल दल का सगठन राष्ट्रव्यापी हो गया है और इसके सदस्यो की सख्या 70 लाख के लगभग है, परन्तु यह अभी तक विभिन्न प्रकार के सगठनो का सघ ही है। इससे सम्बद्ध सगठनो म अग्रलिखित सम्मिलित है (1) 600 से अधिक निर्वाचन क्षेत्रीय दल की इकाइया जिनमे लगभग 10 लाख व्यक्ति सदस्य हैं। ये दल के वार्षिक सम्मेलन म अपने प्रतिनिधि भेजते है। इन निर्वाचन क्षेत्रो के 11 क्षेत्रीय समूह बनाये गये है। (2) 70 से ऊपर ट्रेड यूनियनें, जिनके आकार म बडी विभिन्नता है। एक ओर परिवहन और साधारण श्रमिको का सघ (Transport and General Workers Union) है जिसमे लगभग 10 लाख सदस्य है और दूसरी ओर 100 से कम सदस्यो वाली यूनियनें भी है। बडी ट्रेड यूनियनें अपना उम्मीदवार खडा करती है और उनके उम्मीदवारो की सफलता निश्चित सी रहती है। (3) सहकारी सोसाइटिया जो निर्वाचन क्षेत्रो के सगठनो से सहयोग करती है और अपने कुछ उम्मीदवार भी खडे करती है। (4) समाज

[1] The Labour Party is the political expression of a working class movement This movement manifested itself in Trade Union and in Cooperative Societies and in the great Chartist agitation of the mid 19th century Labour proposes to use the democratic system of government so as to transform Britain from a capitalist to socialist country —Stewart M *The British Approach to Politics* p 146

[2] Shannon J B (ed) *The Study of Comparative Government*, p 49

लोग अनुदारवादी हो जाते है। आय स्तरो की दृष्टि से 1950 के चुनाव मे ही दल को विभिन्न वर्गों स मिले मतो का प्रतिशत इस प्रकार था—सबसे अधिक धनिक वग 9, मध्यम वग 31, काम करने वाले 48 और निधन वग 12। मजदूर दल के तुलनात्मक आकडे 0, 19, 65 और 16 प्रतिशत थे। 1970 म हुए चुनावो मे इसी दल को बहुमत प्राप्त हुआ।

1832 के सुधार कानून के बाद दल को केन्द्रीय सगठन की आवश्यकता अनुभव हुई और 1867 मे कन्जरवेटिवा तथा यूनियनिस्टो का राष्ट्रीय सघ (National Union of Conservative and Unionist Associations) स्थापित हुआ। डिजरेली ने 1870 मे दल का केन्द्रीय कार्यालय खोला और दल का एक प्रब धक नियुक्त किया। उसके कुछ वर्षों बाद ही दल क केन्द्रीय सघ (National Union) म आवश्यक परिवतन हुए और निर्वाचन क्षेत्रा म भी शाखाएँ खोली गयी। अब दल के सगठन म प्रमुख अग नेशनल यूनियन, दलीय सगठन सभापति, ससदीय दल और नेता, प्रान्तीय परिषदें, निर्वाचन क्षेत्रा के सघ और अनेक परामशदात्री समितियाँ हैं। नेशनल यूनियन अनेक निर्वाचन क्षेत्रीय सघा व बारह प्रान्तीय क्षेत्रो की परिषदा का सघ है। यह सगठन को सहायता देने और निर्वाचन क्षेत्रीय सघो के विकास के लिए उत्तरदायी है। यह दल के नेता, सभी दलीय सगठना व केन्द्रीय कार्यालय के बीच सम्ब ध स्थापित करती है।

दल का काय सुविधापूवक चलाने के लिए इग्लैण्ड और वेल्स म 12 प्रान्तीय परिषदें तथा स्कॉटलैण्ड व उत्तरी आयरलण्ड मे पृथक् परिषद हैं। प्रत्येक निवाचन क्षेत्रीय सघ प्राय पूणतया स्वाधीन होता है, वह अपने पदाधिकारी चुनता है, व्यय के लिए स्वय धन एकत्रित करता है और यह क्षेत्रीय व केन्द्रीय परिषदा व वार्षिक दलीय सम्मेलन म प्रतिनिधि भेजता है। नेशनल यूनियन का प्रब धक निकाय केन्द्रीय परिषद् है, जिसम नेता व मुख्य पदाधिकारियो के अतिरिक्त पार्लियामेण्ट के सदस्य व उम्मीदवार और विभिन्न क्षेत्रीय परिषदो के कुछ प्रतिनिधि लिये जाते हैं। इसका निर्माण प्रतिवष होता है। और यह अपना एक प्रधान, नेशनल यूनियन का एक सभापति व तीन उप सभापति चुनता है। इसका छोटा निकाय कायकारिणी समिति है जिसके अधिकतर सदस्य निर्वाचित होते हैं। इमे परामशदात्री समितिया नियुक्त करने की शक्ति प्राप्त है, इनम से मुख्य का सम्ब ध इनसे है—साधारण प्रायोजना, महिलाओ, युवको, ट्रेड यूनियना, शिक्षको, राजनीतिक शिक्षा, स्थानीय शासन आदि केन्द्र सगठन से सम्बद्ध एक नीति समिति, वित्त समिति और ससदीय उम्मीदवारों की परामशदात्री समिति भी हैं। केन्द्रीय कार्यालय के मुख्य कृत्य इस प्रकार हैं—दल का कुशल सगठन, नीति का प्रचार, पदाधिकारियो की नियुक्ति, फण्ड इकट्ठा करना और निर्वाचन क्षेत्रीय सघा को उम्मीदवारो के सम्बन्ध मे आर्थिक सहायता देना है।

प्रतिवष दल का सम्मेलन होता है जिसमे प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्रीय सघ तीन प्रतिनिधि भेजता है। दलीय सगठन म नेता का सर्वाधिक महत्त्व है। वह दल की नीति के लिए उत्तरदायी होता है और वही दल का सभापति नियुक्त करता है। उसका चुनाव करने वाले निकाय मे ससदीय दल, उम्मीदवार और नेशनल यूनियन की कायकारिणी समिति सम्मिलित रहते हैं। नीति निर्धारण काय म नेता को नीति समिति से सहायता मिलती है। ससदीय दल म पालियामेण्ट के सभी अनुदारवादी सदस्य होते हैं, जो दल के अनुशासन को मानते हैं। इसका प्रब धक मुख्य सचेतक (Chief Whip) होता है, जिसकी नियुक्ति नेता द्वारा की जाती है। ससदीय दल कई विशेष समितिया नियुक्त करता है, यथा विदेश मामले, राष्ट्रमण्डलीय मामले, प्रतिरक्षा, वित्त आदि विषयो से सम्बन्धित, जि ह दल के खोज विभाग की सेवा प्राप्त होती है।

मजदूर दल—मजदूर दल का आरम्भ पार्लियामेण्ट स बाहर दल (extra parliamentry party) के रूप म हुआ और यह ट्रेड यूनियन आन्दोलन का परिणाम था। औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप ट्रेड यूनियना का विकास 1825 से होने लगा था। मजदूरो के आन्दोलन को उ

यह दावा है कि वे इन अतियो से बचे है, अतएव उनका दल किसी वर्ग विशेष के स्थान पर सम्पूर्ण राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है। इस दल के समर्थको म अधिकाशत साधारण आय वाले व्यक्ति और कुछ धनी व निर्धन व्यक्ति भी हैं।

उदारवादी दल का विश्वास है कि यदि आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति अपना ली जाय तो पार्लियामेन्ट म उनके दल की सदस्य सख्या काफी बढ़ जाय और उनके समर्थको का उचित अनुपात म प्रतिनिधित्व हो जाय। मन्रिमोट के अनुसार इस दल का महत्त्व कम होने के अन्य दो कारण निम्नलिखित है (1) इसके बहुत से सिद्धा त आज मौलिक नही रहे हैं अथवा वे आधुनिक दशाओ मे उपयुक्त नही रह हैं, (2) इस दल के प्रयत्नो स हुए सुधारो द्वारा मताधिकार इतना विस्तृत हो गया कि राजनीतिक सन्तुलन इसके विरुद्ध हो गया है, अर्थात् साधारण जनता व श्रमिक मजदूर दल के समर्थक हो गय हैं और यह दल दोनो प्रमुख दलो के बीच म रहन के कारण महत्त्वहीन हो गया है।

साम्यवादी दल—इस दल का सगठन महत्त्वपूर्ण नही है। 1920–48 के बीच म दल के सदस्यो की सख्या 10 से लेकर 50 हजार तक रही। दल का मुख्य-पत्र 'डली वकर' है और दल अन्य प्रकाशन भी निकालता है, य सभी वही बातें कहते और प्रकाशित करते हैं जो मास्को के दलीय अधिकारी चाहते हैं। साम्यवादी दल का प्रभाव फिर भी सदस्यो की थोडी सख्या की दृष्टि से अधिक है। कभी कभी औद्योगिक नगरो की स्थानीय सभाओ म दल का कोई 1–2 प्रतिनिधि चुना जाता है। 1945 के चुनावो म दो प्रतिनिधि कामन सभा के लिए भी चुन गये थे। साम्यवादी दल के सदस्यो न मजदूर दल मे घुसकर अन्दर से उस पर प्रभुत्व जमाने का प्रयत्न किया है, किन्तु मजदूर दल न साम्यवादियो के ऐसे प्रयत्न सफल नही होन दिये हैं।

फासिस्ट दल—फासिस्टो की दशा तो और भी बुरी है। इटली म मुसोलिनी के उत्थान के बाद ब्रिटन म भी कुछ धनी घराना के नवयुवक फासिस्ट बन ग और व अव्यवस्था के समय पुलिस की सहायता करने की आशा करते थे। सर ओस्वाल्ड मास्ले न दूसरे विश्व युद्ध से पूर्व ब्रिटिश सैन्यवादी फासिस्टो का सघ (A Militant British Union of Fascists) बनाया, य लोग काली कमीज वाले (Blackshirts) थे और इन्होने एक साप्ताहिक पत्र भी निकाला था। बाद म मोस्ले का झुकाव हिटलर की नाजी पार्टी के सगठन की ओर गया। दूसरे विश्व युद्ध काल म देश-भक्त उससे अलग हो गये और मोस्ल को बन्दी बना लिया गया। छूटने पर उसने फिर से सगठन बनाया और एक पत्र भी निकाला। फासिस्ट यहूदियो को नागजगी का अवसर देते है और साम्यवादियो से लडते हैं। उन्हे अपने कार्य म सफलता नही मिली है और उनका स्थानीय सस्थाओ तथा पालियामेन्ट मे कोई प्रतिनिधित्व नही रहा है।

2 सयुक्त राज्य अमरीका मे राजनीतिक दल

रिपब्लिकन और डेमोक्रेट—1856 म दास प्रथा के विरोधियो ने, जिन्हे दासता के प्रश्न पर ह्विग दल की असफलता स बडी निराशा हुई थी, एक नया दल बनाया जो रिपब्लिकन दल कहलाया। यह उस समय का उदारवादी दल था, क्योकि डेमोक्रेटिक दल दक्षिणी राज्यो म बागबानो के नेतृत्व म अनुदार बन गया था। वास्तव म दक्षिणी राज्यो द्वारा पथक् होन (secession), गृह युद्ध और उसके उपरान्त पुनर्निर्माण के प्रश्नो का दलीय राजनीति पर गहरा प्रभाव पडा। सयुक्त राज्य अमरीका म रिपब्लिकन दल की विजय से दासता का अन्त हुआ। 1880 तक सयुक्त राज्य अमरीका की दलीय राजनीति का आधार भौगोलिक बन चुका था। पूर्वगामी दास प्रथा वाले राज्यो स बाहर सघीय तथा राज्यो के चुनावो म रिपब्लिकन दल का प्रभुत्व रहा। 1860 के निर्वाचन म रिपब्लिकन दल पहली बार विजयी हुआ और 1912 तक वह

वादी सोसाइटियाँ, जस फेबियन सोसाइटी, समाजवादी मैडिकल एसोसिएशन, नेशनल तथा समाजवादी शिक्षक संघ।

दल की नीति का निर्धारण करने वाला मुख्य अंग वार्षिक सम्मेलन है, जिसमें प्रत्येक सम्बद्ध संगठन को 5,000 सदस्यों के पीछे एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है, परन्तु पार्लियामेन्ट के सदस्य और उम्मीदवार इसके पदेन (ex officio) सदस्य होते हैं। 1953 के सम्मेलन में ट्रेड यूनियनों के हाथ में लगभग 64 लाख मतों में से 50 लाख मत थे। दल की नियन्त्रण व प्रशासक सत्ता राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति (National Executive Committee) में निहित है। इसका चुनाव वार्षिक सम्मेलन द्वारा होता है, इसके कुल 25 सदस्यों में से 12 ट्रेड यूनियनों, 7 निर्वाचन-क्षेत्रीय संगठनों, एक सहकारी समितियों और 5 महिलाएँ सम्पूर्ण सम्मेलन द्वारा चुने जाते हैं, संसदीय दल के नेता, उपनेता और दल का कोषाध्यक्ष इस समिति के पदेन सदस्य रहते हैं। यही निकाय सम्मेलनों के बीच में नीति सम्बन्धी प्रश्नों पर निश्चय करने नियमों को लागू करने और संशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव पेश करने के लिए उत्तरदायी है। इसे अनुशासन बनाये रखने के सम्बन्ध में बड़े अधिकार प्राप्त हैं। राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति पार्लियामेन्ट के लिए निर्वाचन क्षेत्रों से संगठनों द्वारा उम्मीदवारों की छाँट में भी महत्त्वपूर्ण भाग लेती है।

दल के संसदीय अंग (Parliamentary Party) में सभी सदस्य सम्मिलित रहते हैं। इसके अधिकारियों में सभापति, उप सभापति, मुख्य सचेतक और सदस्यों द्वारा निर्वाचित एक समिति हैं। मजदूरों की राष्ट्रीय परिषद् (The National Council of Labour) एक प्रकार का समन्वय स्थापित करने वाला निकाय है यह मजदूरों को प्रभावित करने वाले सभी मामलों के बारे में सामान्य नीति व संयुक्त कार्यवाही का निर्धारण करता है। इसके सदस्यों में 7-7 प्रतिनिधि, ट्रेड यूनियन कांग्रेस, सहकारी समितियों के संघ और संसदीय दल व राष्ट्रीय कार्यकारिणी परिषद् के मिलाकर तथा इन निकायों के सभापति और हेराल्ड का सम्पादक व लेबर पीयरों का एक प्रतिनिधि होते हैं।

उदारवादी दल—ऐतिहासिक दृष्टि से उदारवादी स्वेच्छाचारी शासन के विरोध की परम्परा के समर्थक हैं, जिसने सत्तरहवीं और अठारहवीं शताब्दी में दल के सदस्यों को प्रेरित किया था। तदनुसार उन्होंने जनता की सत्ता पर बल दिया और उन्नीसवीं शताब्दी में कुलीन ह्विग प्रजातन्त्री उदारवादी बने, जिन्होंने मताधिकार के विस्तार के लिए कार्य किया। सरकारी प्रतिबन्धों के विरोधी होने के कारण उन्होंने आर्थिक क्षेत्र में स्वतन्त्र व्यापार और उद्योग (laissez faire) का समर्थन किया, परन्तु अब उदारवादी दल ने लोकप्रिय तत्त्वों ने इस नीति के विरुद्ध सामाजिक सुधारों का समर्थन किया है।[1] आजकल उदारवादी, जबकि समाजवाद को अस्वीकार करते हैं, पूँजीवादी व्यवस्था में बहुत से सुधार करना चाहते हैं। समाज की अच्छी व्यवस्था के लिए वे समाजीकरण को आवश्यक नहीं समझते, किन्तु यदि उससे औद्योगिक कुशलता में वृद्धि हो तो वे उसे स्वीकार कर सकते हैं। उनका यह भी विचार है कि सामाजिक सेवाओं को उस सीमा से आगे बढ़ाया जा सकता है जिस सीमा तक अनुदारवादी जाना चाहते हैं। उदारवादियों की दृष्टि में एक ओर अनुदारवादियों पर धनिकों का अधिक प्रभाव है, जिस कारण से वे सर्वसाधारण की सहायता करने में तत्पर नहीं हैं, दूसरी ओर वे मानते हैं कि मजदूर दल ट्रेड यूनियनों व समाजवादी सिद्धान्तों से अत्यधिक प्रभावित हैं, फलतः वे व्यावहारिक सुधारों की ओर उचित ध्यान नहीं दे पाते। उनका

[1] Traditionally the liberals were the Party of political reform, free trade and *laissez faire* While some liberals still profess their belief in free trade the *Liberal party* has discarded its allegiance both to that doctrine and to the policy of let alone —*Munro a* Ayearst *Governments of Europe* p 224

वास्तव म, वदेशिक मामला म दोना की नीति एक समान (bi partisan) है । आ तरिक क्षेत्र मे भी उनकी नीतिया मे महत्त्वपूण अ तर नही है । दोनो ही दल हवाई और अलास्का को राज्य पद दिलाने के पक्ष मे रहे हैं, दोना ही दल कम आय वालो के लिए गह निर्माण व शिक्षा म सहायता देने का समथन करते है, दोना ही दल सुदृढ सेना रखने और सयुक्त राष्ट्र को सहयोग देने का समथन करत हैं और दोनो ही दल कृपि उत्पादन मे सहायता दन म विश्वास करते हैं, जिससे कि खेती की पैदावार का मूल्य निर्धारित सीमा से नीचे न गिरे । मेकार्थी के अनुसार इस शताब्दी मे डेमोक्रेटिव दल ने आ तरिक तथा विदशी मामलो म निणय किये हैं । इसने राष्ट्र सघ का प्रस्ताव रखा और सयुक्त राष्ट्र सघ की स्थापना म भाग लिया । इसने सामाजिक सुरक्षा के कार्यक्रम को स्थापित तथा विकसित किया, टेनसी वेली ऑथोरिटी एव श्रमिक प्रब धक सम्ब धो के बारे म आधारभूत कानून बनाये । इसके विपरीत, रिपब्लिकन दल परिवतन तथा नई बाता को स्वीकार करने म धीमा रहा है। यह नई बातो को स देह की दृष्टि से देखता रहा है और अनिश्चित बातो के प्रति इसने भय प्रकट किया है ।[1]

दलीय सगठन—दोनो प्रमुख राजनीतिक दला का सगठन पिरामिड जसा है और शासन के विभिन्न स्तरा—राष्ट्रीय, राज्य तथा स्थानीय स्तरो—पर प्रत्यक दल की इकाइयाँ है । सबसे नीचे के स्तर अर्थात् धरातल पर लगभग 1,25,000 निर्वाचन क्षेत्रीय सगठन है । इनका आकार जनसख्या के घनत्व और मतदाताओ की सख्या पर निभर करता है । साधारणतया क्षेत्रीय सीमा (precinct) म 100 से 500 तक मतदाता सम्मिलित होते हैं । प्रत्यक क्षेत्रीय सीमा के सगठन की एक समिति है और उसका एक सभापति अथवा कप्तान होता है जिसका मतदाताओ से निकट सम्पक रहता है । ये सभापति अथवा कप्तान नवयुवक होते हैं, जो राजनीति को जीवन-व्यवसाय बनाते है । शहरी समुदाय मे इनके ऊपर वाड समितिया होती हैं, वाड वह चुनाव क्षेत्र होता है, जिसस शहर की परिषद् के सदस्य चुने जाते है । यह समिति क्षेत्रीय सीमा समितियो के कार्यों मे समन्वय लाती है और स्थानीय समस्याओ अर्थात् म्युनिसिपल राजनीति से सम्ब धित रहती है। वाड समितियो के ऊपर नगर समिति होती है । ग्रामीण क्षेत्रो म कस्बा या ग्राम समितिया क्षेत्रीय सीमा समितियो के ऊपर होती हैं ।

काउ टी समितिया अ य सभी छोटी समितिया के काम मे सम वय कायम करती हैं काउ टी शासन के मामलो से सम्ब ध रखती है और महत्त्वपूण मामला म राज्यो की के द्रीय समितियो से सम्ब ध रखती है । सम्पूण देश मे लगभग 3 000 काउ टियाँ हैं और प्राय सभी मे एक या दोना दलो के सगठन मिलते है । बहुत से राज्यो मे राज्य तथा स्थानीय सगठनो के बीच जिला के दलीय सगठन भी है । उनकी स्थापना राज्यो मे सीनेट, प्रतिनिधियो तथा काग्रेस के चुनावो के लिए बन जिलो म की जाती है । अत यह स्वाभाविक ही है कि इनका सगठन विभिन्न राज्यो तथा शहरी व ग्रामीण क्षेत्रो मे भिन्न है । राज्यो की के द्रीय समितिया राज्य मे सम्पूण दलीय सगठनो की देख रेख करती है, राज्य के निर्वाचित पदो और सयुक्त राज्य की सीनेट के लिए चुनाव अभियान का निर्देशन करती हैं । इन समितियो के सदस्या की सख्या कुछ सदस्यो से लेकर सैकडो तक म होती है और उनकी छाट की विभिन्न पद्धतियाँ हैं—नियुक्ति या जिलो व काउ टियो आदि का प्रतिनिधित्व । जहा समितियो के सदस्या की सख्या बडी होती है, वहा समितिया अपनी शक्तिया कायकारिणी समूहो को सौप देती है । बहुधा राज्यो की समितिया के सभापति महत्त्वपूण राजनीतिक नेता होते है ।

प्रत्येक दल की राष्ट्रीय समिति दल के स्थायी सगठन म सबसे ऊपर हाती है । इसम

[1] McCarthy E J *Frontiers in American Democracy*, p 86

राष्ट्रीय राजनीति म प्रभुत्वशाली बना रहा, पर तु 1912 तक रिपब्लिकन अनुदारवादी हो गये थे, अतएव 1933 से पूव डेमोक्रेटिक दल को राज्य के अधिकारा और आर्थिक क्षेत्र म स्वत त्रता का समथक समझा जाता था। रिपब्लिकना को राष्ट्रीय शक्तियो म वद्धि अर्थात सविधान का उदार निवचन कराने वाला का दल माना जाता था, पर तु 1933 के बाद से दोना दला की नीतियो न पलटा खाया। डेमोक्रेटिक और रिपब्लिकन दलो की नीतिया को क्रमश उदारवादी और अनुदारवादी कहा गया है।[1] इसका कारण यह है कि 1932 से ही डेमोक्रेटिक दल के राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रूजवेल्ट ने आर्थिक क्षेत्र म शासन द्वारा हस्तक्षेप की नीति को प्रारम्भ किया। न्यू डील (New Deal) के प्रश्न पर रिपब्लिकन दल के उदारवादी डेमोक्रेटिक दल म आ गये। 1933 स कम आय वाले नगरो का श्रमिक वग डेमोक्रेटिक दल का समथक रहा है और रिपब्लिकन दल का न मतदाताओ का अधिक समथन मिला है। धार्मिक आधार पर अधिकतर कैथोलिक डेमोक्रेटिक दल और प्रोटेस्टेन्ट रिपब्लिकन दल के समथक रहे है। 1912 से लकर 1961 तक डेमोक्रेटिक दल क राष्ट्रपति लगभग 21 वप तक रहे है और शेष काल म रिपब्लिकन दल के।

दलीय प्रश्न (Party Issues)—सयुक्त राज्य अमरीकी दलो के बीच कोई महत्त्वपूण सैद्धान्तिक मतभेद नही है, अतएव इनका कोई निश्चित ध्येय और कायक्रम नही रहा। वास्तव मे, प्रजात त्र और प्रतिनिधि शासन के बारे म दोना का एक ही मत रहा है। दोना का ही इस प्रकार की शासन पद्धति और देश प्रेम म विश्वास है। दोना ही दल देश की समद्धि और प्रगति को बढाने म प्रगतिशील रह ह। पर तु समय समय पर उनम कुछ महत्त्वपूण प्रश्ना पर मतभेद पैदा हुआ है—यथा देश म प्रभुत्व कृषि का हो या उद्योग का, आ तरिक सुधार, दास प्रथा, गृह युद्ध के उपरा त पुनर्निर्माण सम्बन्धी नीतियाँ, आयात निर्यात महसूल, पहले विश्व युद्ध के बाद राष्ट्र सघ की सदस्यता और बेकारा को सीधे सघ सरकार द्वारा अथवा राज्या के प्रशासन द्वारा आर्थिक सहायता आदि। 1936 म रिपब्लिकन दल ने अपन कायक्रम मे ये बाते सम्मिलित की थी—राष्ट्र सघ और विश्व न्यायालय का सदस्य न बनना कि तु मानवता के विकास हेतु राष्ट्र सघ के साथ सहयोग करना, व्यापारिक क्षेत्र म आ तरिक उद्योगा की रक्षा, राष्ट्र की सुरक्षा के लिए काफी सेना रखन पर जोर, आदि। उसी वप डेमोक्रेटिक दल ने यह कायक्रम अपनाया था—अ य राष्ट्रा के मामलो म न पडना, भले पडोसी की नीति, अमरीका की रक्षा के लिए सुदृढ सेना रखना, अ तर्राष्ट्रीय विवादो का पचो द्वारा निणय।

कुछ समय से रिपब्लिकन दल का कायक्रम यह रहा है—अमरीका के सभी राज्यो के बीच सुदृढ सगठन, सयुक्त राष्ट्र सघ का समथन, सोवियत सघ क विरुद्ध क्रियाशील पग उठाना, राष्ट्रवादी चीन को अधिक से अधिक सहायता देना, सनिक तैयारी, श्रमिका के लिए बीमा तथा सामाजिक बीमे की योजनायें, उत्पादका व श्रमिका के हित म आयात कर की नीति, सहकारी उद्योगा पर सरकारी निय त्रण का विरोध। दूसरी ओर डेमोक्रेटिक दल के कायक्रम मे ये बाते सम्मिलित रही है—निजी उद्योगा का समथन, राज्या म जाति भेद का अ त, सावजनिक कल्याण हेतु सरकार का उत्तरदायित्व, सयुक्त राष्ट्र सघ का समथन, साम्यवाद के समथका को सरकारी पदो से हटाना, सोवियत सघ को प्रसन्न करने की नीति का विरोध, उत्तरी एटलांटिक सन्धि का समथन, यूरोप तथा अ य पिछडे हुए प्रजात त्रो को आर्थिक सहायता। इसस स्पष्ट है कि दोना ही दल साम्यवाद के विरोधी व सयुक्त राष्ट्र सघ के समथक है।

---

[1] Since 1933 the national Democratic party has been recognised as the party of loose construction and the Republican party as the party of states rights and laissez-faire The Democratic policies in the domestic affairs both before and after 1933 have been called liberal and the Republican policies conservative —Potter Allen M, *American Government and Politics* p 125

पुस्तक के आठवे भाग के पहले अध्याय मे नगर मशीन की कायशली का सु दर वणन दिया उसी लेखक ने छठ अध्याय म 'टम ने हॉल' की मशीन का वणन दिया है। टवीड नामक वा निय त्रण मे उस मशीन ने राष्ट्रीय सस्था के रूप मे नाम पाया। टमन्ने और टवीड नगर म और बॉस के सुन्दर प्रतीक बन गये और नाम के अतिरिक्त इसे चीते का चि ह भी मिला।[1] किसी मकान मे आग लग जाती है तो क्षेत्रीय समिति का कप्तान वहा जाकर तुर त पी व्यक्तियो को धन, कपडे तथा चिकित्सा से सहायता का प्रब ध करता है।

इसी प्रकार के अ य काय मतदाताओ अथवा जनता के लिए दलीय नेता करते है। इ उद्देश्य मानव सहायता और सेवा है, कि तु इसके पीछे राजनीति निहित है। इन सभी कार्यों उद्देश्य मतदाताओ को अपने प्रभाव मे रखना और चुनाव म उनका समथन प्राप्त करना है। कार्यों के लिए धन, धनी समथको तथा अ य अनुचित साधनो से एकत्रित किया जाता है। धन की प्राप्ति ठेको के देने, सरकारी धन व्यय करने मे बेईमानी से होती है। उदाहरण के लि नगर के प्रभावशाली नेता पहले ही यह पता लगा लेते है कि नगर की परिषद् किसी विशेष म सडक चौडी करने जा रही है या पाक बनायेगी जिससे आस पास की भूमि का मूल्य जायेगा, वह पहले ही बहुत सी भूमि खरीद लेता है और उसे बेचकर काफी धन कमा लेता है ऐसे ही कही कही जुआ खेलने की आज्ञा दी जाती है और उससे होने वाली आय मे प्रभावशा नेता कुछ भाग पाता है। पर तु अब कुछ समय स इस प्रकार के दूषित नेताओ की सख्या घट र है, इसका कारण यह है कि नागरिक स्वय सावजनिक मामलो मे वृद्धिपूण भाग लेने लगे है अं वे बहुत सी बातो म प्रभावशाली नेताओ पर निभर नही करते। मतदाताओ की राजनीति शिक्षा का भी इस बुरी प्रथा को कम करने मे महत्त्वपूण भाग रहा है।

दलीय वित्त—अमरीकी राजनीति म धन का केन्द्रीय महत्त्व है। सयुक्त राज्य म अने पदा के लिए चुनाव होते हैं, क्षेत्रफल व जनसख्या दोना म ही देश बहुत बडा है। करोडो मत दाताओ तक पहुच करने के लिए सचार व प्रचार के आधुनिक साधनो—रेडियो, समाचार पत्र टेलीविजन और चुनाव साहित्य पर चुनाव अभियान मे बहुत धन व्यय होता है। 1963 मे दोनं दलो ने लगभग 140 लाख डालर व्यय किया। 1940 के एक कानून (Hatch Act) द्वार यह प्रतिब ध लगाया गया कि कोई भी दल एक चुनाव अभियान म 30 लाख डालर से अधि व्यय नही करेगा। इस कानून से बचने के लिए अतिरिक्त व्यय को राज्या का अ य सहाय निकायो पर किया हुआ व्यय बता दिया जाता है। आवश्यक कार्यों के लिए भी बहुत बडी धन राशि चाहिए। दल द्वारा नामजदगी कराने के लिए उम्मीदवार और उसके साथी काफी धन देते हैं। यह सच है कि बिना धन के कोई भी नागरिक महत्त्वपूण पद पाने की आशा नही कर सकता। साधारणतया, इन कार्यों के लिए धन इन चार मुख्य स्रोतो स प्राप्त होता है—धनी व्यक्ति, पद धारण करने वाले, पद पाने का प्रयत्न करने वाले और नागरिको से जो ऐसे आर्थिक कार्यों मे लगे हो जि ह सरकार की नीति से लाभ हो सकता हो। सयुक्त राज्य अमरीका म सदस्या से च दे द्वारा काफी धन इकट्ठा नहीं हुआ, व्यक्तिगत च दा की अपक्षा अ य स्रोता स प्राप्त धन की राशि बहुत बडी होती है। बडे च दे वे व्यक्ति अथवा फर्में देती हैं जिन्ह दल विशेष के जीतने पर सरकारी नीति व कायक्रम स काफी लाभ पहुँचने की आशा होती है। कई जाँचा और छानबीन के द्वारा पता चलता है कि प्रारम्भिक चुनावा म काफी धन व्यय किया जाता है और यह धन धनी दानकर्त्ताओ स स्वाथ हित म मिलता है। इसी कारण अधिकतर राज्या न अभियान पर व्यय को विनियमित करने के लिय बहुत से कानून बनाये हैं।

[1] Brogan D W *The American Political System* p 254

प्रत्येक राज्य अथवा प्रदेश से एक पुरुष और एक स्त्री लिए जाते हैं। कुल सदस्यों की संख्या जो प्रत्येक दल में 100 से ऊपर होती है, जिनकी दल के राष्ट्रीय सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधि मण्डलों द्वारा छाँट की जाती है परन्तु कुछ राज्यों में ऐसी व्यवस्था भी है कि उनकी छाँट राज्यों के सम्मेलनों अथवा समितियों द्वारा की जाय। प्रत्येक दल के राष्ट्रीय संगठन में सबसे अधिक महत्त्व राष्ट्रीय समिति का है, जिसका मुख्य काम राष्ट्रपति का चुनाव लड़ना होता है। राष्ट्रीय समिति के अन्य महत्त्वपूर्ण काम ये हैं—राष्ट्रीय सम्मेलन के लिए समय और स्थान का निश्चय करना, प्रतिनिधियों के चुनाव के लिए आदेश निकालना, सम्मेलन के लिए प्रारम्भिक तैयारियाँ करना, सम्मेलन के बाद एक राष्ट्रीय सभापति को चुनना, और उसे निर्वाचन अभियान के संचालन में सभी प्रकार की सहायता देना। वास्तव में, राष्ट्रीय समिति के ऊपर राष्ट्रपति के चुनाव अभियान में सभापति का काम सेनापति के समान होता है। सभापति ही चुनाव सम्बन्धी सभी दायित्वों को सम्भालता है। उसके अन्य सहायक अधिकारियों में एक या अधिक उप सभापति एक सेक्रेटरी एक सहायक सेक्रेटरी, एक कोषाध्यक्ष आदि होते हैं। राष्ट्रीय सभापति एक कार्यकारिणी समिति भी नामजद करता है। इस समिति के सदस्य चुनाव अभियान में उसके सहायकों और परामर्शदाताओं का काम करते हैं। यह समिति चार वर्ष तक काम करती है। राष्ट्रीय सभापति के नियन्त्रण में केन्द्रीय कार्यालय के विभिन्न अधिकारी जन प्रचार, धन-संचय और अन्य प्रकार के चुनाव आदि काम करते हैं। इसके अतिरिक्त सीनेटरों और प्रतिनिधि-सदन के सदस्यों के चुनाव हेतु पृथक् अभियान समितियाँ भी संगठित की जाती हैं।

अपने उच्च स्थान के कारण राष्ट्रपति अपने दल का नेता होता है। जिस दल का नेता राष्ट्रपति नहीं होता, वह दल अपने राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार को ही नेता मानता है। प्रत्येक दल के कुछ प्रभावशाली सीनेटर तथा अन्य राजनीतिक कार्यकर्त्ता भी नेता होते हैं। राष्ट्रीय नेतृत्व के अतिरिक्त नीचे के स्तरों पर भी दल के नेता होते हैं। दलीय संगठन और नेताओं के साथ उनके अनुयायियों और साधारण समूहों के सदस्य होते हैं। दल के वे ही व्यक्ति सदस्य होते हैं जिनके नाम दल की सूचियों में रहते हैं और जो इसके प्रारम्भिक तथा अन्य चुनावों में भाग ले सकते हैं। चुनावों में प्रत्येक दल को मतदाताओं की ऐसी बहुत बड़ी संख्या का समर्थन प्राप्त होता है जो उसके उम्मीदवारों के पक्ष में मत देते हैं, किन्तु दल के सदस्य नहीं होते। दल के सदस्यों में से लगभग आधे सदस्य उसकी गतिविधियों में सक्रिय भाग लेते हैं। वास्तव में, दलों की शक्ति का सबसे महत्त्वपूर्ण स्रोत विभिन्न स्तरों पर अनेक अधिकारियों का निर्वाचन होता है, अतएव दल का कार्य मुख्यतः ऐसे व्यक्ति करते हैं जो राजनीति को जीविका व्यवसाय बना लेते हैं और जिन्हें राजनीतिक कला का बड़ा अनुभव होता है। अब तो संयुक्त राज्य अमरीका की सरकारी सेवाओं में भरती का आधार बन गया है, किन्तु प्रारम्भिक काल में वहाँ लूट की पद्धति (spoils system) को अपनाया गया था, जिसके अनुसार राष्ट्रपति के चुनाव के बाद विजयी दल के समर्थकों और कार्यकर्त्ताओं को सरकारी नौकरियाँ दी जाती थीं।

उपर्युक्त कारणों से संयुक्त राज्य अमरीका के दलीय संगठनों में कुशल तथा व्यावसायिक राजनीतिक नेताओं का बाहुल्य है। संगठन का कार्य मशीन की तरह संचालित होता है, इसी कारण विभिन्न संगठनों के लिये दलीय मशीन, नगर मशीन एवं ग्राम मशीन प्रचलित हैं। प्रत्येक दल के संगठन में विभिन्न इकाइयों के संगठन अथवा मशीनों पर कुछ प्रभावशाली नेताओं (bosses) का नियन्त्रण रहता है और उनके साथियों के गुट (rings) बन जाते हैं।[1] बोसों की

[1] The boss is a political leader who maintains political power through corruption spoils and patronage The machine is the organisation through which the dominant group of individuals rules Political machines and bosses have flourished in American urban communities —Ferguson and McHenry *The American System of Government* p 208

आर्थिक पुनर्निर्माण के लिए मिलकर काय करने की अपील की। 1945 मे हुई साम्यवादी का ने गणत त्रीय परम्परा से सम्बन्धित विचारो का समथन किया। यह कहता है प्रभुता राष्ट्र निहित है और उसका प्रयोग सवव्यापी मताधिकार पर आधारित निर्वाचित नेशनल एसम्बल द्वारा होना चाहिए। इसने मानव अधिकारा की घोषणा के सिद्धान्तो, पूजा की स्वत त्रता अभिव्यक्ति और सभा करने की स्वत त्रता, राज्य और चच के पृथकत्व, समान अधिकार आदि व भी समथन किया।

सभी देशो के साम्यवादी दला की रचना, उनका सगठन व कायक्रम एक दूसरे से बहु मिलते है। पर तु प्रत्येक देश के साम्यवादी दल पर उस देश की विशिष्ट परिस्थितियो का प्रभा भी पडा है। फ्रास का साम्यवादी दल सम्पूण राजनीतिक शक्ति प्राप्त करना चाहता है। वास्त म यह प्रजात त्रात्मक सस्थाओ और प्रक्रियाओ का विरोधी है। ससदीय पद्धति को स्वीकार करन केवल इसकी एक चाल है। दल का वैध और अवैध दोनो ही प्रकार का सगठन रहता है। जब य वैध कायवाही को स्वीकार कर लेता है तब भी यह अवैध और गुप्त सगठन को बनाय रखता है अपने सिद्धान्तो और चालो से यह सवसाधारण का दल बना हुआ है और इस व्यापक लोकप्रियता प्राप्त है। इसका सासद पद्धति म विश्वास नही है, कि तु अपने प्रभाव को बनाये रखने और उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए दल ससद म अधिक से अधिक प्रतिनिधित्व को आवश्यक समझता है। इसके दो मुख्य उद्देश्य, सक्षेप म ये है—(1) विश्व क्रान्ति को सोवियत विदेश नीति के समथन द्वारा आगे बढाना, और (2) देश मे सम्पूण राजनीतिक सत्ता प्राप्त करना।

जहा तक दल के सदस्यो की सख्या का प्रश्न है, उनम दो बार बडी वृद्धि हुई—लोकप्रिय मोर्चे और फ्रास को स्वत त्र बनाने के समय पहले अवसर पर 1934 और 1937 के बीच सदस्या की सख्या 45,000 से बढकर तीन लाख से ऊपर हो गयी थी। दूसरे अवसर पर सदस्या की सख्या मे वृद्धि इस प्रकार हुई—1944 म यह चार लाख से कम थी, पर तु 1943 तक सख्या नौ लाख से ऊपर पहुँच गयी। तीन वप बाद ही सख्या 7½ लाख रह गयी और 1952 तक छ लाख से भी कम हो गयी थी। साम्यवादी दल की एक विशेषता यह रही है कि यह नवयुवको की भरती पर बहुत बल देता है। दल को जनता का भी व्यापक समथन मिलता रहा है। 1936 म दल को प द्रह लाख अथवा 15% से कम मत प्राप्त हुए थे, पर तु 1945 म उसको मिले मतो की सख्या 50 लाख और 26 प्रतिशत से अधिक रही। 1946 के बाद उसके पक्ष मे डाले गये मतो की सख्या म कमी आयी। 1946 के कुछ महीनो को छोडकर, साम्यवादी दल को अ य किसी भी दल से सदा ही अधिक मत प्राप्त हुए है, यहा तक कि 1958 के चुनावा म भी, जिनके परिणामस्वरूप नेशनल एसेम्बली म दल के प्रतिनिधिया की सख्या 142 स घटकर केवल 10 रह गयी, दल को प्रथम मतदान म 38 लाख से ऊपर मत प्राप्त हुए। उसके सहायक सगठनो म सबम बडा मजदूरो का सगठन सी॰ जी॰ टी॰ (C G T) है। दल का सगठन प्रजात त्रात्मक नही है, नीचे के स्तरा के सभी सगठनो को उच्चस्तरीय सगठन के निणयो को मानना पडता है।

समाजवादी दल—वामपक्षी दला म साम्यवादी दल के बाद दूसरा स्थान समाजवादी दल का है। इसकी स्थापना 1905 मे हुई थी, जबकि बहुत स समाजवादी तत्त्व एक दल म सगठित हुए। यद्यपि यह दल भी मावस के सिद्धान्तो म विश्वास करता है और अपन को वग-सघप व क्रान्ति का दल बताता है, यह अधिनायकशाही और आतकवादी तरीको को पस द नही करता। अत अपने स्वरूप मे यह दल विकासवादी है। तीसरे गणत त्र मे यह उच्च सदन (Senate) के अन्त और स्त्रियो को मताधिकार दिलाने का पक्षपाती था। साधारणतया यह श्रमिको के हित म प्रगतिशील कानून निर्माण, छोटे भूस्वामियो के हित म कृषि सम्ब धी विधि निर्माण, और राज्य के एकाधिकार को विस्तृत कराने का समथक रहा है। समाजवादी दल काफी पुराना है, किन्तु इस

3 फ्रास मे राजनीतिक दल

एक अग्रेज और अमरीकी के लिए फ्रासीसी दलो का चित्र भ्रम पैदा करने वाला है। वहाँ सुदृढ दलीय सगठन का अभाव है, सिवाय साम्यवादियो के। ऐसे समूहो का उदय हुआ है जिनका ससद से बाहर दलीय सगठन ही नही है और ससद से बाहर कुछ दलीय सगठन ऐसे हैं जिनका ससद मे कोई समूह प्रतिनिधित्व नही करते।[1] प्रमुख दलो का सक्षिप्त परिचय निम्न लिखित है—

साम्यवादी दल—इस दल की स्थापना 1920 मे हुई थी। वैरन के अनुसार दल का आधारभूत ग्रन्थ सोवियत सघ के साम्यवादी दल का इतिहास (History of the Communist Party of the Soviet Union) रहा है। साम्यवादी दल के सदस्य मार्क्स और लेनिन द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तो म विश्वास करते है। 1944 तक दल के सदस्य मास्को स्थित इन्टरनेशनल के निर्देशों के अधीन काय करते थे। उनके कायक्रम म मुख्य बातें ये है—क्रान्तिकारी उपायो द्वारा पूजीवादी व्यवस्था को उखाड फेंकना, सवहारा वग का अधिनायकत्व, उत्पादन तथा वितरण आदि के साधनो का समाजीकरण। साधारणतया दल का तरीका मास्को द्वारा स्वीकृत कायक्रमो की सीमाओ के भीतर अपने कायक्रम पर चलना रहा है। इसका क्रेमलिन स ठीक सम्बन्ध क्या है, यह तो बताना कठिन है, किन्तु यह स्पष्ट है कि इसके कार्यो और अन्य यूरोपीय देशो के साम्यवादी दलो के कार्यो मे समन्वय है और इसकी नीति सोवियत सघ की वदेशिक नीति से प्रभावित होती है, यद्यपि इसका कायक्रम फ्रास की परिस्थितियो के अनुसार ढला है।

साम्यवादी दल का आधार अतिवादी वामपन्थ है और इसे 25 प्रतिशत स अधिक निर्वाचक मण्डल का समथन प्राप्त रहा है। साम्यवादी दल की जडें समाजवादी विचारधारा म गडी हैं। प्रथम विश्व युद्ध के बाद फ्रास म, साथी देशो की विजय होने पर भी आर्थिक स्थिति काफी बिगडी थी। उस समय समाजवादी दल और ट्रेड यूनियनो के समथको की सख्या बढी। परन्तु समाजवाद के अधिकतर समथको ने यह अनुभव किया कि सुधारवादी (reformist or revisionist) तथा अन्य दलो से मिलकर चलने वाली पूवगामी नीति सफल सिद्ध न होगी। उन पर रूस म हुई बोल्शेविक क्रान्ति का भी प्रभाव पडा। उस समय तक समाजवादी और साम्यवादी समूहो म जो एकता रही थी, वह भग हो गई और साम्यवादी दल का सगठन समाजवादी दल से अधिक व्यापक बन गया। परन्तु 1933 म जमनी मे हिटलर के अभ्युदय से साम्यवादी दल को बडा धक्का लगा। 1934 की फरवरी म साम्यवादी दल ने श्रमिक वर्गीय पेरिस के जिले म फासिस्ट विरोधी प्रदशन सगठित किय।

1939 तक साम्यवादी दल म एक लाख से अधिक सदस्य थे। उस समय तक यह फासिस्टवाद और जमन विदेश नीति का कट्टर विरोधी था। किन्तु जस ही हिटलर और स्टालिन म मल हुआ, साम्यवादी दल की नीति मे भी परिवतन हो गया। साम्यवादी दल ने दानो देशो के मेल को 'शान्तिमय काय' बताया। इस नीति से अनेक साम्यवादी कायकर्त्ताओ और समथको को धक्का लगा। साम्यवादी दल ने जून 1941 तक जबकि हिटलर न रूस पर आक्रमण किया, जमनी के साथ तुरन्त सन्धि करन का समथन किया। परन्तु रूस पर जमनी क आक्रमण के बाद तो साम्यवादी दल ने जमनी और विची शासन' (Vichy regime) के प्रति विरोध की नीति अपनायी। फ्रास पर जमन आधिपत्य के दौरान साम्यवादियों न 'डि गॉल के नतृत्व' को स्वीकार किया और अन्य विरोधी समूहो (resistance groups) म सहयोग किया। युद्ध के पश्चात साम्यवादी दल न अनेक सामाजिक व राजनीतिक सुधारो का माग की।

---

[1] Wright F. J. *Democratic Government* p 2-3

भी इसके सदस्य हैं। इसके नेता इसे अ साम्प्रदायिक दल मानते हैं।[1]

जबकि मार्क्सवादी कार्यक्रम आर्थिक कारणों म नियन्त्रित विकास पर आधारित हैं एम० आर० पी० के प्रजातन्त्र म आर्थिक तत्त्व मानव तत्त्व क अधीन रहेगा। इस दल के समर्थकों का विश्वास प्रजातन्त्र म है, ऐसा प्रजातन्त्र जो सामाजिक और आर्थिक भी हो। यह उदारवाद पर आधारित पूजीवादी व्यवस्था का विरोधी है। साथ ही यह सर्वाधिकारवादी राज्य का घोर विरोधी है। इसने कई बातों म आधुनिक उदारवाद का रूप अपनाया है। इसने राष्ट्रीयकरण और सामाजिक सुरक्षा के कई विधेयकों के पक्ष म मतदान किया। यह पूजीवादी शोषण व वर्ग संघर्ष के अस्तित्व को मानता है। यह श्रमिक वर्ग की समस्याओं क प्रति जागरूक है और श्रमिकों म इसके समर्थक भी हैं। दसने म, इसके कार्यक्रम की शब्दावली समाजवादी कार्यक्रम से कम क्रान्तिकारी है। एम० आर० पी० आन्दोलन उपनिवेशों म फ्रास के अधिकारों और प्रतिष्ठा का बड़ा पक्का समर्थक रहा है। जब 'म डेस फ्रास' ने इण्डोचीन म समर्पण किया तो एम० आर० पी० ने समाजवादियों और उग्रवादियों से बढ़कर उस नीति का डटकर विरोध किया। यह फ्रासीसी साम्राज्य के किसी भी भाग को स्वतन्त्रता प्रदान किये जाने का विरोधी रहा है, यद्यपि यह सभी भागों व उपनिवेशों म वहाँ की जनता क लिए सामाजिक कल्याण और व्यापक स्वशासन के विस्तार का समर्थक है। आरम्भ म इस आन्दोलन का सम्पर्क 'डि गॉल' के व्यक्तित्व से अधिक निकट का रहा और निर्वाचकों के बड़े समूह इसे डि गाल का दल समझते थे। 1947 म यह दल 'डि गॉल' स राजनीतिक कारणों व अपने हित म अलग हो गया।

1945 म एम० आर० पी० ने फ्रास के अन्य दलों द्वारा मान्य संगठन अपनाया अर्थात् उसने स्थानीय सेक्शन, प्रादेशिक फेडरेशन और राष्ट्रीय कांग्रेस तथा कार्यकारिणी स्थापित की। सेक्शनों का संगठन साधारणतया कम्यूनों के आधार पर भूमिगत है। सेक्शन मे कम से कम दस सदस्य होने जरूरी है और एक कार्यकारिणी भी जिसे सदस्य चुनते हैं। एक डिपार्टमेन्ट के सेक्शनों से मिलकर फेडरेशन बनती है। केन्द्रीय संगठन से सम्बन्धित होने के लिए एक फेडरेशन मे कम से कम दस सेक्शन और 100 सदस्य होने जरूरी हैं। विभिन्न फेडरेशन अपना अपना संविधान बनाते है, जो मुख्य बातों म एक ही नमूने के होते हैं। प्रत्येक फेडरेशन मे एक कांग्रेस होती है और एक कार्यकारिणी समिति भी। आन्दोलन का राष्ट्रीय संगठन काफी पेचीदा है। उसके दो विधायी अंग हैं—नेशनल कांग्रेस और नेशनल कमेटी और कार्यपालिका के चार अंग हैं—प्रधान, सेक्रेटरी जनरल, कार्यपालिका कमीशन और ब्यूरो। नेशनल कांग्रेस म फेडरेशन का प्रतिनिधित्व रहता है और कांग्रेस का मुख्य कार्य दल की नीति व कार्यक्रम का निर्धारण तथा दलीय नेताओं का निर्वाचन करना है। नेशनल कमेटी एक प्रकार से कांग्रेस के अधीन उसी का दूसरा रूप है। यह चार प्रकार के सदस्यों से मिलकर बनती है—पदेन सदस्य, पार्लियामेंट के प्रतिनिधि, फेडरेशनों के प्रतिनिधि और विनियुक्त सदस्य। कमेटी कांग्रेस से छोटा निकाय है जिसे दो वार्षिक कांग्रेसों के बीच म महत्त्वपूर्ण निर्णय करने के लिए बुलाया जा सकता है। नेशनल कमेटी की बैठकों के बीच म कार्यकारी कमीशन को सभी अविलम्ब कार्यवाही वाले निर्णय करने होते हैं। ब्यूरो एक प्रकार स कार्यपालिका कमीशन सेक्रेटरी जनरल के बीच एक निकाय क रूप म है।

डि गाले के समर्थक—प्रायः सभी फ्रासीसी सुदृढ शासन की आवश्यकता का भली प्रकार अनुभव करते हैं। बहुत ही कम फ्रासीसी ऐसे होंगे जिन्ह जनरल डि गाले की बौद्धिक ईमानदारी मे सन्देह रहा हो। स्थायी शासन के दौरान सार्वजनिक सत्ता के संरक्षक के रूप म उसे बहुत बड़ी

---

[1] It is not a religious party but it claims to be a party inspired by Christian ideals Hence moral and spiritual questions play an important part in its programme —Duverger M *The French Political System* p 109

अभी तक ब्रिटेन के मजदूर दल की भाँति मजदूर वग का समथन नही मिल पाया है । दूसरे विश्व युद्ध के ठीक पहले समाजवादी दल (S F I O) सभी दला म सबसे बडा था और इससे आशा की जाती थी कि स्वात न्य आ दोलन म भाग लेने के वाद यह अधिक शक्तिशाली बन सकेगा, किन्तु ऐसा नही हुआ, क्योकि फ्रास म (भारत की भाति) साम्यवादी दल का भी जोर है जो समाजवादी दल को बढने नही देता । युद्ध के बाद ही पूव की भाँति समाजवादी दल के सिद्धान्तो और व्यवहार म विरोध ा है । फ्रास के अधिकाश मजदूर मध्यम वग के नेतृत्व पर विश्वास नही करते, जबकि ब्रिटेन म समाजवादी दल को मध्यम वग और श्रमिक वग दोना का ही समथन प्राप्त है । दल के भीतर भी सदस्यो के समूहा की भिन्न विचार प्रवत्तिया (tendencies) और विशेष समूह है, जिनम आन्तरिक सघप रहता है । यद्यपि दूसरे विश्वयुद्ध के वाद इस दल का लियो ब्लम के नेतृत्व मे कुछ समय के लिए मन्त्रिमण्डल भी बना फिर भी यह दल व्यापक नही बन पाया है ।

इसका सगठन आरम्भ से अब तक एक ही समान रहा है, जो एक पिरामिड जैसा है । इसकी निम्नतम इकाइया सैक्शन कहलाती है जो कम्यूना के टना और एरो डाइजमट मे सगठित हैं । सैक्शनो से मिलकर प्रत्येक डिपाटम ट म एक फेडरेशन बनती है सैक्शनो के डेलीगेट फेडरल काग्रेस बनाते है । फेडरेशना के डेलीगेटा से मिलकर राष्ट्रीय काग्रेस बनती है । राष्ट्रीय काग्रेस की एक राष्ट्रीय परिषद् है । काग्रेस एक निर्देश समिति चुनती है और यह समिति एक जनरल सेक्रेटरी को नियुक्त करती है । साधारणतया विभिन्न प्रतिनिध्यात्मक अगो की बनावट का आधार आनुपातिक प्रतिनिधित्व है । दो वार्षिक काग्रेसो के बीच दल म निर्देशन का काय दो निकाय करते है—नेशनल कौसिल और कार्यकारिणी परिषद् (Executive Council) । नेशनल कौसिल साधारणतया तीन माह मे एक बार एकत्रित होती है । इसम प्रत्येक फेडरेशन का एक प्रतिनिधि रहना है, उसकी बठको म कायकारिणी परिषद् और ससदीय दल के प्रतिनिधि भी सम्मिलित हो सकते हैं किन्तु मत नही दे सकते । दल की सत्ता का वास्तव मे प्रयोग कायकारिणी परिषद् द्वारा होता है । यह व्यवहार मे दलीय नीति और कायक्रम का निणय करती है तथा अनुशासन को लागू करती और पालियामट के सदस्य भी इसके निय न्त्रण म रहते है । 1937 म इसके सदस्यो की सख्या तीन लाख स कुछ ही कम थी और 1952 म केवल एक लाख के लगभग रही ।

लोकप्रिय गणतन्त्रीय आन्दोलन (Movement Republican Popularie)—इस आन्दोलन की उत्पत्ति 1940–44 के बीच की घटनाओ से सम्बन्धित है । इसका आधार जमन आक्रान्ताओ और विची शासन के प्रति विरोधी आन्दोलन रहा । इसका सम्बन्ध क्रिश्चियन प्रजातन्त्र से है, यद्यपि यथाथ मे यह एक छोटे दल 'जन प्रजातन्त्रात्मक दल' है, (Peoples Democratic Party) जिसकी स्थापना 1924 मे हुई थी, वजश है । इस प्रकार के दल की स्थापना फ्रास के लिए कोई नयी वात नही है । वास्तव म, जमनी, इटली व वेल्जियम आदि देशो म चल रहे क्रिश्चियन प्रजात न्त्र आन्दोलन से इसे अलग नही किया जा सकता । दल के सिद्धान्त क्रिश्चियन प्रजात न्त्र के मतानुसार हैं । यूरोप म विशेष रूप से उन्नीसवी शताब्दी म चर्च एक अनुदार दलीय शक्ति था और फ्रास के कैथोलिक चच अन्य दक्षिणपन्थी समूहा म एकता स्थापित करने वाला तत्त्व था । एम० आर० पी० का विश्वास ईसाई प्रजातन्त्र की स्थापना मे है । इसका मुख्य उद्देश्य मध्य का दल रहना है । चूंकि यह गणतन्त्रात्मक व प्रजातन्त्रात्मक शासन का जोरदार समथन करता है, अतएव यह आन्दोलन परम्परागत दक्षिणपन्थ स अलग है । एम० आर० पी० म कैथोलिक ईसाइया की बडी सख्या सम्मिलित है परन्तु प्रोटेस्टेन्ट ईसाई व यहूदी

मई 1958 में डि गॉल ने यह घोषणा की कि वह राष्ट्र को फिर अपनी सेवाएं प्रदान करेगा और गणतन्त्र की शक्तियों को धारण करेगा। यह घोषणा उसके राजनीति से अलग होने के लगभग 5 वर्ष बाद की गयी थी। 1955 से लेकर 1957 तक हर प्रत्येक मन्त्रिमण्डल के सामने अल्जीरिया का युद्ध और राजकीय वित्त की समस्याएँ महत्त्वपूर्ण रहीं। आर्थिक कठिनाइयों के कारण अल्जीरिया में राजनीतिक दल की अविलम्ब आवश्यकता को सभी अनुभव कर रहे थे। ऐसी परिस्थितियों में तत्कालीन राष्ट्रपति रेने कॉटि ने नेशनल एसेम्बली में यह घोषित किया कि यदि उसने डि गॉल को प्रधानमन्त्री के रूप में स्वीकार न किया तो वह स्वयं त्यागपत्र दे देगा। एसेम्बली ने डि गॉल और उसकी शर्तों को काफी बहुमत से स्वीकार कर लिया और फिर से शासन के अधिकार डि गॉल को प्राप्त हुए। उसके प्रभाव के अधीन फ्रांस का वर्तमान संविधान बना।

रेडीकल समाजवादी और आर० जी० आर०—वर्तमान शताब्दी के आरम्भ से 1936 तक यह एक प्रमुख दल के रूप में नीचे की मध्यम श्रेणी के वर्गों, छोटे दूकानदारों, किसानों, छोटे व्यवसायों के सदस्यों का प्रतिनिधित्व करता रहा। चौथे गणतन्त्र के आरम्भ पर यह छोटे दल के रूप में रह गया, किन्तु शीघ्र ही इसका जोर बढ़ा। 1948 में गणतन्त्र परिषद् के चुनाव में आर० जी० आर० को समाजवादियों और डि गॉल के आर० पी० एफ० से अधिक स्थान मिले। आर० जी० आर० (Rally of Republicans of the Left) वास्तव में छोटे संसदीय समूहों का निर्वाचन के लिए एक समूह है, जिसमें मुख्य अंग रेडीकल समाजवादी और यू० डी० एस० आर० (The Democratic and Socialist Resistance Union) हैं। अन्य दलों की भाँति रेडिकल समाजवादियों का संगठन है। इसकी राष्ट्रीय कांग्रेस के नीचे डिपार्टमेंटों की फेडरेशनें हैं, जिन्हें काफी स्वाधीनता प्राप्त है। राष्ट्रीय कांग्रेस की एक कार्यकारिणी समिति और एक कार्यकारिणी कमीशन भी है, जिसमें कार्यकारिणी समिति और संसदीय समूह के सदस्य हैं और जो महत्त्वपूर्ण प्रश्नों का निर्धारण करता है। परन्तु दल का अनुशासन बहुत ढीला है, यहाँ तक कि दल के सदस्य ऐसे मन्त्रिमण्डल का भी विरोध कर बैठते हैं जिसमें कि दल के मन्त्री सम्मिलित हों।

अनुदारवादी—आर० जी० आर० के दक्षिण में कई छोटे छोटे दल हैं, जिनके कार्यक्रम भी स्पष्ट नहीं हैं। उन सभी को हम अनुदारवादी समूह में रख सकते हैं। 1946 के चुनावों में इनमें स्वतन्त्र, किसान व सामाजिक कार्य दल और पी० आर० एल० (Republican Party of Liberty) सम्मिलित थे। इन्होंने मिलकर 1955 के चुनाव लड़े और इनके मिले जुले संगठन का नाम 'चौथी शक्ति' (Fourth Force) पड़ा। साधारणतया अनुदारवादी दल परम्परागत संस्थाओं, परिवार और चर्च के समर्थक हैं, वे राज्य द्वारा चर्च स्कूलों को सरकारी सहायता दिलाने के पक्ष में हैं और राष्ट्रीयकरण तथा आर्थिक नियोजन का विरोध करते हैं।

यू० एन० आर० (U N R)—इसकी रचना 1958 में आम चुनावों से दो माह पूर्व हुई। वास्तव में यह आर० पी० एफ० की ही नये नाम से फिर से स्थापना रही। इसका निर्माण डि गॉल के समर्थक तीन बड़े समूहों से मिलकर हुआ। उनके विलयन के समय सबसे प्रमुख नेता सूस्टेले (Soustelle) था, परन्तु उसे नये संगठन का प्रधान बनाया गया। प्रधान के स्थान पर 15 संचालकों का समूह नियुक्त किया गया, जिससे स्पष्ट है कि इसका वास्तविक नेता डि गॉल था। दल नियमों के अनुसार आधारभूत इकाइयाँ निर्वाचन क्षेत्रों के संगठन हैं, जिनसे मिलकर डिपार्टमेंटों में संघ बने हैं। राष्ट्रीय स्तर पर अन्य दलों की तरह इसकी भी एक नेशनल कांग्रेस, एक नेशनल कौंसिल, एक केन्द्रीय समिति, एक राजनीतिक समिति और सचिवालय हैं। दल डि गॉल के दो लक्ष्यों का समर्थक है—(1) फ्रांस को राजनीतिक स्थायित्व प्रदान करना, और (2) उसे फिर से विश्व की एक बड़ी शक्ति का पद दिलाना।

जनसख्या का विश्वास और निष्ठा प्राप्त रहे । वह शत्रु देशो के प्रति विरोध की भावना का व्यक्तिगत रूप था, वह फ्रास का ही प्रतीक था । डि गॉले, नि स देह उन सभी के प्रति घणा रखता था जिनका तृतीय गणतन्त्र के अतिम वर्षो से सम्बन्ध था । इसका कारण यह था कि वे ही नेता फ्रास जैसे शक्तिशाली राज्य को अशक्त और विभाज्य बनाने के लिए उत्तरदायी थे । जनरल डि गॉले द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्वकालीन राजनीतिक नेताओ को उनकी गुटबन्दी और फलहीन राजनीति के लिए घणा की दृष्टि से देखते थे । साथ ही वह तृतीय गणतन्त्र की सावैधानिक पद्धति अथवा ससदीय शासन का भी विरोधी थे ।

डि गाले ने जमन आधिपत्य और विचि शासन के विरुद्ध सघर्ष का सफलतापूर्वक नेतृत्व किया । उसके बाद वह अस्थायी शासन का मुख्य अधिकारी रहा । उस रूप म उसके हाथो म गणत त्र के राष्ट्रपति और प्रधानम त्री की शक्तियाँ निहित रही । अस्थायी शासन के काल म फ्रास मे कई सामाजिक व आर्थिक सुधार हुए, कोयले की खानो व बडे बैंको का राष्ट्रीयकरण हुआ और मजदूर सघो को फिर से स्वतन्त्रता प्रदान की गयी । परन्तु डि गाले के नेतृत्व म स्थापित अस्थायी शासन उस समय उत्पन्न हुई गम्भीर आ तरिक समस्याओ को, जिनका सम्ब ध वित्त खाद्य प्रशासन से था, हल न कर सका । साम्यवादियो ने डि गाले और उसके साथियो के विरुद्ध प्रचार किया । उन्होने डि गॉले व साथियो को अतिवादी दक्षिणपथी (extreme rightist) व फासिस्ट बताया । जब नयी एसेम्बली का चुनाव हो गया तो डि गाले की शक्तियो मे कमी आयी । पार्लियामट म उसके समथन के लिए उसका अपना कोई समूह न था । उसका विरोध बढा और 1946 म उसन त्यागपत्र दे दिया ।

उसके त्यागपत्र के बाद फ्रास म तीन दलो की सरकार और सावैधानिक झगडो के कारण सुचारु शासन चलाना कठिन हो गया । कुछ समय बाद डि गॉले ने अपने सावजनिक भाषणो म राजनीतिक दलो के आपसी झगडा के लिए तीव्र नि दा की । जिस सविधान के कारण ऐसी स्थिति उत्पन्न हो रही थी, डि गाले ने उस सविधान का भी दोषपूण बताया । कुछ ही दिनो बाद उसने आर० पी० एफ० (R P F) नाम के दल की रचना की । इस सम्ब ध मे की गयी घोषणा म कहा गया था अपने उचित ध्यया की प्राप्ति के लिए राष्ट्र पर ऐसा एकरस (Coherent), व्यवस्थित और केन्द्रीभूत शासन हो जो सामान्य जन कल्याण के लिए आवश्यक पगो का निणय कर सके और उन्हे लागू कर सके । वतमान व्यवस्था के स्थान पर, जिसम कठोर और विरोधी दल शक्तियो म साझीदार है, ऐसी पद्धति आये जिसम कायपालिका को शक्ति सीधी जनता स प्राप्त हो, दलो से नही और जिसम हल न होने वाले सघर्ष स्वय जनता द्वारा हल किये जा सके ।

जनरल डि गाले सविधान म सशोधन कराना चाहते थे । इसी उद्देश्य से उसने फिर से राजनीतिक क्षेत्र म प्रवेश करने का निणय किया । उस निणय से किसी को आश्चय नही हुआ, परन्तु एक महत्त्वपूण विवाद उठ खडा हुआ । एक ओर अनक राजनीतिक नेताओ न ससदीय शासन का पक्ष लिया । साम्यवादी दल को डि गाले और उसके नये दल स बडा खतरा दीखा । अतएव साम्यवादी दल ने प्रचार किया कि डि गाल अधिनायक बनना चाहता है और गणतन्त्र को उससे खतरा है, परन्तु आर० पी० एफ० का प्रभाव तेजी से बढा । 1951 के चुनाव म आर० पी० एफ० को अन्य प्रत्येक दल से अधिक स्थान प्राप्त हुए । 1952 के आरम्भ म यह स्पष्ट प्रतीत हुआ कि फ्रास म दलो की शक्ति कम होनी चाहिए और सुदृढ कायपालिका स्थापित होनी चाहिए। ससदीय पद्धति म गतिरोध उत्पन्न हुआ । 1953 म डि गॉले न यह घोषणा की कि आर० पी० एफ० के नाम मे कोई ससद सदस्य काय न कर सकेगा, अत 1956 मे नेशनल एसम्बली के चुनाव मे आर० पी० एफ० ने अपने उम्मीदवार नही खडे किये । दल को भग तो नही किया गया किन्तु नेता की तरह दल की सक्रिय राजनीति स अलग रहा ।

उदारवादी डेमोक्रट—वास्तव में जिन लोगों ने प्रतिक्रियावादी और संघ विरोधी कैथोलिकों का विरोध किया तथा 1848 के संविधान का समर्थन किया वे सभी उदारवादी अथवा केन्द्रवादी पार्टी के सदस्य कहलाये परन्तु समय बीतने पर ऐसी अनेक आर्थिक समस्याएँ उठी कि उन्हें उदारवादी अहस्तक्षेप की नीति द्वारा हल न किया जा सका, अतएव उदारवादियों के दो दल बन गये। एक दल ने, जो उग्रवादी कहलाने लगा, रेलों के राष्ट्रीयकरण और सरकार के अधिक विस्तृत कार्यक्षेत्र का समर्थन किया। दूसरा दल, स्वतन्त्रता का अर्थ, भारी कर से मुक्ति तथा राज्य के बढ़े हुए हस्तक्षेप का विरोध ही समझता है। उदारवादियों का दक्षिणपंथी अंग (Right wing) एक प्रकार से समाजवाद विरोधी है। वर्तमान शताब्दी में उदारवादियों के दल का नाम 'लिबरल डेमोक्रेटिक पार्टी' पड़ा। यह दल समाजवाद और संघ द्वारा प्रत्यक्ष कर लगाये जाने का विरोधी है। यह स्वतन्त्र व्यापार और सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र में क्रमिक विधि निर्माण का समर्थन करता है। इस दल के समर्थकों में अधिकतर धनी प्रोटेस्टेंट और उच्चतर मध्यम वर्ग के व्यक्ति हैं।

सोशल डेमोक्रटस—वर्तमान समय में यह सबसे बड़ा दल है। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद इसने कुछ समय तक मार्क्सवादी सिद्धान्तों—वर्गयुद्ध और क्रान्ति को अपनाया, किन्तु बहुत समय से इसने प्रजातन्त्री सिद्धान्तों और एक प्रकार के विकासवादी समाजवाद को ही स्वीकार किया हुआ है। स्विट्जरलैण्ड में बड़े उद्योगों और भूमिहीन सर्वहारा वर्ग के विकास तथा आर्थिक समस्याओं की निरन्तर वृद्धिपूर्ण पेचीदगियों व अविलम्ब कार्यवाही की आवश्यकताओं के कारण इस दल का प्रभाव बहुत बढ़ा है। इसका ट्रेड यूनियनों से निकट सम्पर्क है जो प्रजातन्त्र की समर्थक रही हैं। आजकल स्विटजरलैण्ड में यही सबसे अधिक सुसंगठित दल है और इसकी शाखाएँ सम्पूर्ण देश में फैली हैं। इसके कार्यक्रम में सम्मिलित मुख्य बातें ये हैं—उद्योगों और निजी एकाधिकारों (private monopolies) का राष्ट्रीयकरण, श्रमिकों के लिए उच्च वेतन, बेकार व्यक्तियों के लिए आर्थिक सहायता, काम पाने के अधिकार को मान्यता दिलाना, सामाजिक बीमे का विस्तार और स्त्रियों के लिए मताधिकार।

पीजेंटस, आर्टिजन्स व मिडिल क्लास पार्टी—यह किसानों, हस्त कलाकारों और मध्यम वर्ग के लोगों का दल है। स्विटजरलैण्ड में किसानों और उनके दल का बड़ा महत्त्व है। स्विट्जरलैण्ड के किसानों का दल उग्रवादियों की तुलना में अधिक अनुदारवादी है। इसका बल अधिक राष्ट्रीय प्रतिरक्षा, अधिक केन्द्रीकरण, संघ से इकाइयों को अधिक आर्थिक सहायता, अन्न उत्पादन को प्रोत्साहन, कृषि की पैदावार का मूल्य नियत करना आदि पर है।

अन्य दल—मजदूरों का दल एक प्रकार से साम्यवादी दल है। सरकार ने इसे 1940 में अवैध घोषित कर दिया था, परन्तु अब यह अवैध नहीं रहा है। इस दल का अन्तर्राष्ट्रीय नीति में सोवियत संघ के हितों से मेल खाता है। दूसरे विश्वयुद्ध से पूर्व साम्यवाद के विरोध और जर्मनी में नाजी दल के विकास के कारण स्विटजरलैण्ड में भी नाजी विचारधारा के समर्थकों के छोटे छोटे दल बन थे अथवा आन्दोलन चले थे जो 'यूनियन' या 'फ्रंट' कहलाये। नेशनल फ्रंट और स्विस नेशनल मूवमेंट को, जिनका स्वरूप विशेषतया नाजी था, 1940 में अवैध घोषित कर दिया गया था।

5 भारत में राजनीतिक दल

भारत ने ब्रिटिश नमूने का संसद प्रजातन्त्र अपनाया है, किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से ही भारत में कई राजनीतिक दल रहे हैं। फिर भी 1967 के आम चुनावों के पूर्व तक संघ राज्यों में (एक-दो राज्यों को छोड़कर) कांग्रेस सत्तारूढ़ रही और कोई भी एक अथवा मिला जुला ऐसा दल विकसित न हो सका जो कांग्रेस को हटाकर उसका स्थान ले पाता। वास्तव में,

4 स्विट्ज़रलैण्ड मे राजनीतिक दल

चूकि स्विटजरलैण्ड मे भाषा, धम, के टना, के प्रति निष्ठा आदि के कारण कई प्रकार से विभाजनात्मक प्रभाव शेष हैं, अतएव बडे दलो के समथक प्राय सभी भागो मे पाये जाते हैं। जसा कि पहले बताया जा चुका है, दलो का स्थानीय अथवा क टनो मे सगठन अधिक महत्त्वपूण है। सिवाय सोशल डेमोक्रेटिक दल के, जिसने केद्रीय सगठन को काफी विकसित कर लिया है और जिसका यथाथ म राष्ट्रीय सगठन बन गया है, अ य प्रमुख दल तो के टनो मे सगठित स्वाधीन दलो और समान राजनीतिक प्रवृत्तिया वाले व्यक्तिया के शिथिल सगठन हैं। ये ही केन्टनो म सगठित दल धन की व्यवस्था करते है और नेशनल कौंसिल के चुनावो मे भाग लेते है। परन्तु जैसे जैसे सघ की शासन शक्तियो का विस्तार हुआ है, इन क टनो के दलो के आधार पर राष्ट्रीय दलीय सगठन की रचना भी हुई है। उग्रवादियो न 1878 म प्रथम ससदीय समूह सगठित किया था और आगे के वर्षों मे कयोलिको, कजरवदिवो तथा लिबरलो ने भी ऐसा ही किया। इस समय उन सभी प्रमुख दलो के राष्ट्रीय अथवा ससदीय सगठन बन गये है जिन्हे फेडरल एसेम्बली म प्रतिनिधित्व प्राप्त है। इनमे स प्रत्येक की एक वार्षिक डायट है और एक स्थायी केद्रीय समिति भी, जिसम डायट अथवा के टनो की इकाइयो अथवा दोना तरीको द्वारा चुने हुए सदस्य रहते है। वार्षिक डायट म फडरल एसेम्बली व प्रशासन के कार्यों पर विचार होता है और आगामी वष के लिए कायक्रम भी बनता है। समय समय पर प्रत्येक राष्ट्रीय सगठन अपने नेताओ व कायकर्ताओ के माग दशन हेतु सिद्धान्ता का विवरण निकलता है। दलो के सगठन का रूप प्रजात त्रात्मक है और उनम स कुछ के मुखपत्र भी हैं।

रेडिकल डेमोक्रेट्स—यह उग्रवादी अथवा प्रगतिशील प्रजात त्रवादी दल है। 1919 म नेशनल कौंसिल के चुनाव हेतु आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के लागू होने से पूव बहुत समय तक नशनल कौंसिल म इस दल का बहुमत रहा। आज भी यह एक प्रमुख दल है, किन्तु यह मुख्यत केन्टनो का ही दल है। इसके समथक देश के सभी भागो म है और जनता के सभी वर्गों मे पाये जाते हैं। यह दल क द्र की वृद्धिपूण शक्तियो का समथक रहा है। इसी के प्रयत्नो से रेलो का राष्ट्रीयकरण हुआ। देश म मुद्रा और राष्ट्रीय प्रतिरक्षा का एकीकरण हुआ और अनेक सार्वजनिक उपयोगिता व सामाजिक सुरक्षा के कानून पास हुए। यह दल अब भी सघ के केन्द्रीकरण अर्थात् सुदृढ सघीय शासन का समथक है। इस दल का अभी तक धमनिरपेक्षता, व्यक्तिगत स्वत त्रताओ की प्रत्याभूति और राजनीतिक प्रजात त्र म विश्वास है। उग्रवादी पर्याप्त राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिए सनिक सगठन की स्थापना पर जोर देते है।

कैथोलिक अनुदारवादी दल—इस दल म, जसा कि नाम से ही पता चलता है, कैथोलिक सदस्य है और उनका दृष्टिकोण अनुदारवादी है। पर तु यह दल भी सघवाद का समथक है। यह दल कथोलिक चच के सामाजिक सिद्धा तो का प्रतिनिधित्व करता है। इसने केन्टनो की अधिक स्वत त्रता, शराब पर कर और साधारण सामाजिक सुधारो का समथन किया है। इसकी दो मुख्य माँगे पारिवारिक जीवन तथा सम्पत्ति के लिए विशेष रक्षण की है। यह केद्रीकृत समाजवादी राज्य के विरुद्ध है परन्तु समाजवादियो की तरह यह स्त्री मताधिकार का समथन करता है। किन्तु इसका कारण यह है कि चच का स्त्रिया पर अधिक प्रभाव है, अत उन्हे मताधिकार मिलने स दल की शक्ति बढेगी। रेपड के मतानुसार यह दल न तो व्यक्तिवादी है और न उदारवादी, वरन् धार्मिक राजनीति मे विश्वास रखता है। पर तु इस दल मे भी वामपथी (*Left wing*) है, जो इसाई ट्रेड यूनियनो स बना है। इन यूनियनो के सदस्य अब वृद्धिपूर्ण कल्याणकारी विधि निर्माण की माँग कर रहे हैं।

दोहराई कि कांग्रेस का उद्देश्य सम्पूर्ण भारत के लिए, जिनमे देसी रियासतें भी सम्मिलित थी, पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करना था। इस बार मे कोई मतभेद नही है कि कांग्रेस कुछ मात्रा मे एक राष्ट्रीय पार्लियामेंट का कार्य करती थी, जिसमे विरोधी दृष्टिकोणो और हितो के प्रतिनिधि एकत्रित होते थे और सामान्य रूप मे मान्य नीति को निर्धारित करते थे। महात्मा गाधी के नेतृत्व मे कांग्रेस ने सत्य और अहिंसा पर आधारित सत्याग्रह आन्दोलन द्वारा देश की स्वतन्त्रता को प्राप्त किया। उनका कहना था कि केवल स्वराज्य कांग्रेस का अन्तिम ध्येय नही है बल्कि उसका ध्येय 'राम राज्य अर्थात् सुराज्य' की स्थापना है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति तक तो कांग्रेस संगठन प्रमुख रूप से सरकार विरोधी मोर्चा रहा, जिसमे सभी वर्गों और दृष्टिकोणो के व्यक्ति सम्मिलित थे। उसके उपरान्त कांग्रेस संगठन मे बडा परिवर्तन हुआ। 1948 मे कांग्रेस मे घोषित किया कि कांग्रेस का लक्ष्य भारतवासियो का कल्याण और उन्नति तथा शान्तिपूर्ण एव वैध उपायो द्वारा सहकारी कॉमनवैल्थ की स्थापना है, जिसके आधार अवसर की समता और राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक अधिकार है। जनवरी 1955 के अधिवेशन पर कांग्रेस ने समाजवादी व्यवस्था के ध्येय को अपनाया। 1964 के आरम्भ मे कांग्रेस ने भुवनेश्वर (उडीसा) अधिवेशन पर अपना ध्येय 'लोकतन्त्रात्मक समाजवाद' (democratic socialism) घोषित किया। इस ध्येय की पूर्ति के लिए ही कांग्रेस ने आर्थिक नियोजन को देश के बहुमुखी विकास का आवश्यक साधन माना है। कांग्रेस दल के नेतृत्व मे ही भारत सरकार और विभिन्न राज्यो की सरकारो ने तीन पचवर्षीय योजनाएँ कार्यान्वित की है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से 1967 तक सघ व सभी राज्यो मे, दो तीन साधारण अपवादो को छोडकर, कांग्रेस दल की सरकारे पदासीन रही। इस प्रकार कांग्रेस ने देश को एक स्थायी सरकार दी। इस तथ्य का महत्त्व इस बात से अधिक अच्छी प्रकार समझा जा सकता है कि किसी भी अन्य नये स्वतन्त्रता-प्राप्त राज्य मे किसी भी दल की सरकार इतने लम्बे काल तक स्थायी नही रह पाई। कांग्रेस सरकार के अन्तर्गत ही भारत मे राज्यो के पुनर्गठन का कार्य पूर्ण हुआ और सामाजिक तथा आर्थिक जीवन के क्षेत्र मे अनेक सुधार एव परिवर्तन हुए है। गत वर्षों मे कांग्रेस ने प्रजातन्त्र को सुदृढ व सफल बनाने के प्रयत्न किये हैं और देश समाजवाद की दिशा मे बढा है।

चूँकि कांग्रेस 1967 तक सत्तारूढ रही, उसमे सभी प्रकार के अवसरवादी और लाइसेंस, परमिट व कोटा पाने वाले सार्वजनिक कार्यकर्ता घुस गये, जिनके कारण सम्पूर्ण संगठन व्यापक रूप से बदनाम हुआ। परिणामस्वरूप 1967 के आम चुनावो मे कांग्रेस को भारी पराजय का मुह देखना पडा। उसके बाद कांग्रेस संगठन और पदासीन नेताओ के बीच विवाद चला कि पराजय के लिए कौन अधिक उत्तरदायी रहे। फिर भी किसी प्रकार एकता बनी रही, परन्तु 1969 मे तत्कालीन राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन की असामयिक मृत्यु के बाद कांग्रेस संगठन मे इस प्रश्न पर गहरा मतभेद उत्पन्न हुआ कि कांग्रेस की ओर से राष्ट्रपति पद के लिए किसे नामजद किया जाये। केन्द्रीय ससदीय बोर्ड ने बहुमत से श्री सजीव रेड्डी, तत्कालीन लोकसभा अध्यक्ष को कांग्रेसी उम्मीदवार बनाने का निर्णय किया। प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाधी ने उनके नाम का विरोध किया था, किन्तु बहुमत के निर्णय का समर्थन करने की घोषणा की। बाद मे चुनाव के दिन से कुछ ही दिन पूर्व प्रधानमन्त्री के सहयोगी श्री जगजीवन राम और श्री फखरुद्दीन अली अहमद ने चुनाव मे स्वतन्त्र मतदान के अधिकार की माँग की, जिसे कांग्रेस के प्रधान ने अस्वीकृत कर दिया। फिर भी प्रधानमन्त्री और अन्य मन्त्रियो के विचार का अनेक कांग्रेसी विधायको ने, कांग्रेसी उम्मीदवार के विरुद्ध, श्री वी० वी० गिरि के पक्ष मे मतदान कर समर्थन किया और कांग्रेसी उम्मीदवार की चुनाव मे हार हुई।

1967 तक विरोधी पक्ष कमजोर और आपस मे विभाजित था, इसीलिए इतने लम्बे काल तक काग्रेस का प्राधा य बना रहा। 1967 के बाद से भी दलो की सख्या कम नही हुई वरन् बढी है। गत 2–3 वर्षो मे तो काग्रेस, साम्यवादी दल तथा अ य दलो मे आपसी फूट के कारण नये दलो अथवा गुटो का ज म हुआ है। यद्यपि आशा यह की गई थी और इस दिशा मे प्रयत्न भी किये जा रहे है कि काग्रेस म 1969 मे हुइ फूट के परिणामस्वरूप राजनीति अथवा राजनीतिक दलो मे ध्रुवीकरण की प्रक्रिया आगे बढेगी, कि तु उसके विपरीत दलो म खण्डनकारी प्रवत्ति बढती दिखाई पड रही है।

(1) भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस—काग्रेस की स्थापना राष्ट्रीयता के आधार पर हुई थी, जैसा कि इसके प्रारम्भिक उद्देश्य मे कहा गया था—'व्यक्तिगत मित्रता और मेल-जोल के द्वारा देश प्रेमियो के बीच जातीयता, साम्प्रदायिकता तथा प्रा तीयता की सकीण भावनाओ का विनाश तथा राष्ट्रीयता की भावनाओ का विकास करना।' अपने ज म से लेकर आज तक काग्रेस की नीति पूणतया राष्ट्रीय रही है और उसने सदा ही वर्गीय हितो तथा साम्प्रदायिकता का प्रत्येक रूप म विरोध किया है। यह तथ्य अनेक तर्को द्वारा सिद्ध किया जा सकता है। काग्रेस के सभापतियो और नताओ क नामो पर विचार करन से यह भली-भाति स्पष्ट होता है कि काग्रेस म हि दू, मुसलमान, सिक्ख, पारसी, ईसाई आदि सभी धर्मो और सम्प्रदायो के व्यक्तियो ने शुरू से लेकर अब तक भाग लिया है। साथ ही काग्रेस सम्पूण राष्ट्र (सारे भारतवष) की सस्था रही है और इसके सगठन तथा कार्यो म सभी प्रा तो के निवासियो ने पूरा पूरा भाग लिया है। काग्रेस क लिए यह नही कहा जा सकता कि यदि किसी विशेष वग, जाति हित, धम, सम्प्रदाय, प्रा त,अथवा प्रदश का प्रतिनिधित्व करती है। 1931 मे महात्मा गाधी न गोलमेज सम्मलन म कहा था—'इस सभा मे अ य सभी दल अलग अलग वर्गो का प्रतिनिधित्व करते है। केवल काग्रेस ही सम्पूण भारत और सभी हितो का प्रतिनिधित्व करने का दावा करती है। यह कोई साम्प्रदायिक सस्था नही है। यह तो साम्प्रदायिकता की किसी भी रूप मे कट्टर दुश्मन है।

काग्रेस का राष्ट्र निमाण सम्ब धी कायक्रम—आरम्भ म काग्रेस उच्च मध्यम वग क शिक्षित वर्गो की सस्था थी, जिसका काम सभी प्रकार के शासन सुधार प्राप्त करना था, जैसा कि काग्रेस क प्रस्तावो तथा उसकी मागो से पता चलता है। 1905 म बगाल का विभाजन होन क विरोध म जो आ दोलन चला उसके द्वारा काग्रेस ने विदेशी माल के बहिष्कार और स्वदेशी माल के प्रचार को अपने कायक्रम म प्रमुख स्थान दिया। 1921–22 के असहयोग आ दोलन के द्वारा काग्रेस न खादी और स्वदेशी प्रचार, राष्ट्रीय शिक्षा, पचायतो द्वारा याय आदि पर जोर दिया तथा देशवासियो को स्वराज्य प्राप्ति के लिए आन्दोलन का एक नया ढग प्रदान किया। गाधी जी के नेतृत्व मे काग्रेस धीरे धीरे जनसाधारण की सस्था बनती चली गई। 1930–32 के सत्याग्रह आ दोलन म काग्रेस ने नमक कानून तोडने (जिसका गरीबो पर अधिक बोझ था), शराब ब दी तथा स्वदेशी के प्रचार का कायक्रम चलाया। इस आ दोलन म उद्योगपतियो तथा मजदूरो न भी भाग लिया।

काग्रस के नताओ न गावो म किसानो तथा शहरो म मजदूरो के बीच अधिक काय करना शुरू किया। गाधी जी के नेतृत्व म काग्रेस ने साम्प्रदायिकता का विरोध, हरिजनोद्धार, स्त्रियो का पद ऊचा करने, सभी प्रकार के रचनात्मक काय करन, ग्राम उद्योगो को प्रोत्साहन दन तथा बुनियादी शिक्षा (basic education) का प्रसार आदि को अपन कायक्रम का मुख्य अग बनाया। साथ ही यह बात भी जान लनी चाहिए कि यद्यपि काग्रेस ने स्वत त्रता प्राप्ति स पूव देशी रियासतो मे अपनी ओर से कोई आ दोलन नही चलाया, फिर भी काग्रेस न वहाँ प्रजामण्डलो द्वारा सचालित आ दोलन को पूण सहयोग और प्रोत्साहन दिया तथा अपन प्रस्तावो म कई बार यह बात

हितो की रक्षा करने की शपथ ली है। धर्मनिरपेक्षता हमारे संविधान का एक आधारभूत सिद्धान्त है। संविधान के इस आदेश के अनुसार कांग्रेस का यह प्रयास होगा कि सभी अल्पसंख्यकों को अपनी शिक्षा और अन्य संस्थाओं की स्थापना, उनके प्रबन्ध और संचालन की पूर्ण स्वतन्त्रता को सुनिश्चित बनायेगी। विदेश नीति के क्षेत्र में, सभी देशों के साथ, विशेष रूप से पड़ोसी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का विकास करेगी। हमारा यह भी प्रयास होगा कि पाकिस्तान व चीन के साथ हमारे सम्बन्ध फिर से साधारण रूप धारण करें।

ऊपर वर्णित सम्पूर्ण कार्यक्रमों को कार्य रूप देने के लिए एक ऐसी सुदृढ़ और स्थायी सरकार का होना आवश्यक है जिसने उग्र नीतियों को स्वीकार किया हो और जिसे लोकसभा में निर्णायक बहुमत का समर्थन प्राप्त हो। अतएव कांग्रेस जनता से अपील करती है कि वह लोकसभा में उसके उम्मीदवारों को चुनकर भेजे और उसे अप्रतिबन्धित के लिए आदेश (mandate) दे (अ) प्रजातन्त्रात्मक प्रक्रियाओं द्वारा समाजवाद की दिशा में प्रगति जारी रखना, (आ) हिंसा और अव्यवस्था की सभी शक्तियों को दबाना जिससे की सभी नागरिक शान्ति और सामंजस्य में जी सकें, (इ) धर्मनिरपेक्षता की प्रतिरक्षा करें और अल्पसंख्यकों व समुदाय के कमजोर विभागों के हितों की रक्षा करे, (ई) प्रिवी पर्स जैसे समय के विरुद्ध विशेषाधिकारों का अन्त करें, (उ) विज्ञान और तकनीकी को लागू करके कृषि के विकास का गतिशील कार्यक्रम संचालित करे, (ऊ) रोजगार के नये मार्गों की व्यवस्था करे और इस प्रकार राष्ट्र निर्माण कार्यों में नागरिकों के भाग को अधिक व्यापक बनाये, (ए) सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका का विस्तार बढ़ाये और उसके कार्य संचालन को सुधारे, (ऐ) निजी क्षेत्र भी देश की अर्थव्यवस्था में अपनी उचित भूमिका अदा करे, (ओ) मूल्यों पर नियन्त्रण करे और जनता के लिए आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति उचित दरों पर करे, (औ) बाल कल्याण का कार्यक्रम आरम्भ करे जिसमे शिशुओं के लिए पौष्टिक खुराक और प्रारम्भिक शिक्षा की सभी के लिए व्यवस्था की जाय, (अं) इन सभी प्रयोजनों के लिए, संविधान में आवश्यक संशोधन करे।[1]

पुरानी (संगठन) कांग्रेस का चुनाव घोषणा-पत्र, 1971—इसकी मुख्य बातों का सारांश इस प्रकार है (1) शासक दल की राजनीति मुख्यतः जीवित रहने की रही है, उसने अपनी राजनीतिक व्यवस्था को प्रजातन्त्रात्मक रचना को तोड़ने मोड़ने व क्षति पहुँचाने की राजनीति का एक नया ढंग निकाला है। उसने साम्यवादियों और सम्प्रदायवादियों से खुला समर्थन पाने के लिए देश में खण्डनकारी शक्तियों का सक्रिय उत्साहवर्द्धन किया है। (2) देश की अर्थव्यवस्था आज जैसी अव्यवस्थित और नाजुक कभी नहीं रही, यह शासक दल की झूठी उग्र नीतियों का परिणाम है। उत्पादन में वृद्धि रुक गई है, निवेशों का अभाव है, बचतों में कमी है, कीमतें बढ़ी हैं, जीवन स्तर गिरा है और रोजगार के मार्ग संकुचित हुए हैं, इन सभी ने देश में गम्भीर संकट को उत्पन्न किया है। (3) भारत को, जिसकी आन्तरिक शक्ति कमजोर पड़ी है, सोवियत संघ पर झुकना पड़ रहा है हमारे आन्तरिक मामलों में उसके हस्तक्षेप को शासक दल के ध्येयों तथा प्रजातन्त्र विरोधी शक्तियों को सबल बनाने के लिए आमन्त्रित किया जा रहा है। सार्वजनिक व्यवहार के मानदण्डों में पतन हुआ है। (4) हमारे संविधान निर्माताओं ने ठीक ही सुदृढ केन्द्र को पसन्द किया, परन्तु आज संघ सरकार संविधान के कई प्राविधानों का प्रयोग देश की एकता व शक्ति को बनाने के लिए नहीं, वरन् कुछ राज्यों के मन्त्रिमण्डलों को कमजोर बनाने तथा दूसरे

[1] Poverty must go Disparity must diminish Injustice must end These are but essential steps towards our ultimate goal—the goal of an India which is united and strong an India which lives up to its ancient and enduring ideals yet is modern in thought and achievement meeting the future with vision and confidence

पदाधिकारी अपने दलों को छोडकर नई कांग्रेस में सम्मिलित हो गये ।

नई (शासक) कांग्रेस का चुनाव घोषणा पत्र, 1971—(1) अतिवादी वामपथ और दक्षिणपथ की विचारधारायें देश के लिए गम्भीर धमकी है। कांग्रेस का यह पक्का विश्वास है कि वर्तमान राजनीतिक स्थिति द्वारा प्रस्तुत चुनौतियों का मुकाबला केवल प्रजातन्त्रात्मक प्रक्रियाओं द्वारा सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रम का उचित और प्रभावी कार्यान्वयन है। (2) कांग्रेस का विश्वास राज्य नीति के आर्थिक क्षेत्र में नीति निदेशक सिद्धान्तों को कार्य रूप देने में है। परन्तु हाल में दिये गये कुछ न्यायिक निर्णयों ने संविधान में निर्दिष्ट कुछ नीति निदेशक सिद्धान्तों का प्रभावी कार्यान्वयन असम्भव बना दिया है। हमारे संविधान में पहले भी आर्थिक विकास के हित में संशोधन किये गये है। हमारा यह प्रयत्न होगा कि हम ऐसे सांविधानिक उपचारों और संशोधनों को करायें, जो कि सामाजिक न्याय के मार्ग में बाधाओं को जीतने के लिए आवश्यक हो। (3) कांग्रेस यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि उसका निजी सम्पत्ति की संस्था के उन्मूलन करने का कोई इरादा नहीं है। परन्तु कांग्रेस की नीति यह है कि सम्पत्ति का अधिकार जनता की बडी से बडी संख्या के लिए वास्तविक बने। अतः कांग्रेस ने शपथ ली है कि वह व्यक्तिगत जोतों और सम्पत्ति के अधिकार को उचित सीमाओं से आगे बढने को रोकेगी तथा आर्थिक शक्ति और धन के कुछ हाथों में केन्द्रीभूत होने को भी, चूंकि यह प्रजातन्त्र और सामाजिक न्याय की धारणा से असंगत है। (4) चूंकि भारत की निर्धन जनता की बडी बहुसंख्या भूमिहीन और छोटे किसानों की है अतः देश की अर्थव्यवस्था के सुधार की किसी भी योजना में केन्द्र ग्रामीण क्षेत्र होने चाहिएँ। इस कार्यक्रम में प्रथम स्थान कृषि का तेजी से विकास होगा। कृषि में नयी वैज्ञानिक विधियों को लागू किया जायेगा। ऐसे विकास के फलों को समता और न्याय के आधार पर विस्तृत किया जायेगा, जिससे कि भूमिहीनों और छोटे किसानों को लाभ पहुँचाया जा सके।

(5) औद्योगिक विकास में सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका प्रधान होनी चाहिए। सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों को इस प्रकार से संगठित और संचालित किया जायेगा कि आगे निवेश के लिए आय साधनों की रचना हो सके। प्रबन्ध के आधुनिक तरीकों को लागू करना जरूरी है, जिनमें प्रबन्ध में श्रमिकों के भाग लेने पर बल दिया जायगा। साथ ही श्रमिकों के लिए उचित मजदूरी की नीति को अपनाया जायगा जिससे कि उन्हें उत्पादन बढाने की प्रेरणा मिले। परन्तु हमारी अर्थव्यवस्था में निजी क्षेत्र का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसे इस प्रकार कार्य करना चाहिए कि वह हमारे सामाजिक लक्ष्यों से संगत हो। लघु उद्योग विकास के बिन्दु होंगे। (6) शहरी सम्पत्ति पर सीमाएँ लगाई जायेंगी। शहरी भूमि की खरीद और बिक्री में असामाजिक ठगी (racketeering) पर रोक लगाई जायगी। (7) कांग्रेस को वर्तमान बेरोजगारी से उत्पन्न कठिनाइयों के बारे में गम्भीर चिन्ता है। रोजगार दिलाने के लिए एक प्रभावी कार्यक्रम को जो पहले से ही [illegible] है, देशभर में लागू किया जायगा। (8) बालक देश का धन हैं और उनका कल्याण [illegible] सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में एक आवश्यक निवेश है। सर्वव्यापी प्रारम्भिक [illegible] का प्रसार बाल कल्याण कार्यक्रम के साथ बँधा है। (9) राष्ट्रीय सुरक्षा को [illegible] औद्योगिक आधार को सुदृढ और विस्तृत बनाने, ग्रामीण अर्थव्यवस्था [illegible] जनता के जीवन को सुधारने के लिए विज्ञान और तकनीकी विकास [illegible]। (10) शहरों के विकास से नई समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं [illegible] गम्भीर रूप धारण कर रही है। कांग्रेस यह वादा कर चुकी है [illegible] समूहों के लिए वह बडे पैमाने पर गृह निर्माण कार्यक्रम का [illegible] भूमिहीन व्यक्तियों का मकान बनाने के भूमि का [illegible] (11) अपनी अतीत की परम्पराओं के अनुसार [illegible]

हुई, जिसम लगभग 300 सदस्यो ने भाग लिया और प्रधानम त्री मे अपने विश्वास को फिर से प्रकट किया। फलत काग्रेस सगठन के समथन करन वाले ससद सदस्यो को नया नेता चुनने को कहा गया और उ होने श्री मोरारजी देसाई को अपना नेता चुना। 17 नवम्बर का ससद का सत्र आरम्भ हुआ, उस दिन एक 'काम रोको' प्रस्ताव पर मतदान हुआ जिसका परिणाम प्रधान म त्री और सरकार के पक्ष म रहा। तब से काग्रेस के दो सगठन अथवा दल बन गय।

कुछ दिनो म दोनो समूहो के बीच पडी फूट स्थायी हो गई, दोनो ही समूह वास्तविक काग्रेस होने का दावा करते रह। व्यवहार मे शासक दल को नई काग्रेस और सगठनात्मक दल को पुरानी काग्रेस कहा जाने लगा। चूकि लोकसभा म शासक दल का पूण बहुमत न रहा, उसे दूसरे दलो का सहयोग प्राप्त करना पडा। साधारणतया उसका समथन भारतीय साम्यवादी दल और डी० एम० के० के सदस्यो ने किया। सरकार की ओर स दो महत्त्वपूण विधेयक पेश किय गये। लोकसभा म दोनो ही पास हो गये। 14 बडे बैंको के राष्ट्रीयकरण का विधेयक जिसका विरोध पुरानी काग्रेस, जनसघ और स्वतन्त्र पार्टी ने किया, राज्य सभा म भी पास हो गया। परन्तु उसे सर्वोच्च यायालय ने अवध घोषित किया। फलत मूल विधेयक म आवश्यक सशोधन करके विधेयक का फिर से पेश किया गया और पास हो गया। 1970 के अ त से पूव सरकार न पुराने नरेशो के विशेषाधिकारो और उनकी निजी थलियो (privy purses) के उन्मूलन के लिए सविधान मे आवश्यक सशोधन कराने के प्रयोजन से 24वा सशोधन विधेयक पेश किया जो लोकसभा म $\frac{2}{3}$ के बहुमत स पास हो गया, पर तु राज्य सभा मे आवश्यक बहुमत प्राप्त न होने के कारण गिर गया। उसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सरकार के परामश स राष्ट्रपति ने एक कायपालिका आदेश निकाला, जिसके विरुद्ध उससे प्रभावित होने वाले नरेशो ने सर्वोच्च न्यायालय म अपील की और सर्वोच्च यायालय ने आदेश को अवध घोषित कर दिया।

इस बीच मे कई राज्यो म शासक दल की ओर स यह प्रयत्न किया गया कि पुरानी काग्रेस तथा अ य विरोधी दलो की सरकारो का पतन हो। ऐसी परिस्थितियो म सगठन काग्रस जनसघ, स्वतन्त्र पार्टी और नरेशो के प्रतिनिधि एक दूसरे के अधिक निकट आये। आगे चलकर जब उत्तर प्रदेश म नई काग्रेस और भारतीय क्रान्ति दल क मिले जुले मन्त्रिमण्डल का पतन हुआ तो भारतीय क्रान्ति दल भी विरोधी दलो म सम्मिलित हो गया। जनवरी 1971 म प्रधानम त्री के परामश पर राष्ट्रपति ने लोकसभा को विघटित कर दिया और माच के शुरू म नये चुनावो के लिए तैयारी आरम्भ हो गई। शासक दल को भारतीय साम्यवादी दल व डी० एम० के० का पहले ही सहयोग और समथन प्राप्त था। अब अखिल भारतीय मुस्लिम लीग और मुस्लिम मजलिस न भी उसके उम्मीदवारो का समथन करने का निणय किया। दूसरी ओर पुरानी काग्रेस के प्रधान तथा अ य विरोधी दलो क प्रतिनिधियो क बीच गठबन्धन (alliance) क लिए प्रयत्न किय गये, जो आशिक रूप म ही सफल हुए। विरोधी दल कोई सामा य कायक्रम स्वीकार न कर सके और अनेक निर्वाचन क्षेत्रो म उ होने अपने अपने उम्मीदवार खडे किये। भारतीय क्रान्ति दल एलाय स म सम्मिलित न हुआ, यद्यपि उनके बीच कुछ आपसी समझौता रहा। माच 1971 के आरम्भ मे लोकसभा और चार राज्यो की विधान सभाओ क लिए निर्वाचन पूण हुए। निर्वाचन फल घोषित होने के पूव तक विरोधी दलो के नेताओ की बडी ऊँची आशायें रही, परन्तु निर्वाचन फल ने यह निश्चित रूप से स्पष्ट कर दिया कि जनता ने भारी समथन प्रधानम त्री के नेतृत्व वाली काग्रेस तथा उसके समथक दलो को दिया। शासक काग्रेस को लोकसभा म 2/3 स्थान प्राप्त हुए और पुरानी काग्रेस व भारतीय क्रान्ति दल को बुरी तरह पराजय का मुह देखना पडा। फलत नई काग्रेस की ओर से यह कहा गया कि जनता ने उसे ही वास्तविक काग्रस माना। चुनावो के बाद पुरानी काग्रेस और कुछ अ य विरोधी दलो क अनेक विधायक और सगठन क

राष्ट्रपति के निर्वाचन के बाद काग्रेस के दोना गुटो के बीच अति गम्भीर मतभेद पदा हो गया, परन्तु अ त मे कुछ नताओ के प्रयत्नो के फलस्वरूप काग्रेस कायसमिति ने 25 अगस्त को एकता प्रस्ताव पास किया, जिसके परिणामस्वरूप उस समय सकट टल गया, फिर भी कुछ दिनो के लिए ही ऐसा हुआ। दोनो गुटो के नताओ ने विभिन्न स्थाना व अवसरो पर अपन भाषणो म एकता की भावना का स्पष्ट रूप से अतिक्रमण किया और एक दूसरे के गुट पर दोषारोपण भी करना आरम्भ किया। अक्टूबर म श्रीमती इन्दिरा गाधी और उसके समथको ने काग्रेस के प्रधान श्री निजलिंगप्पा के स्थान पर दिसम्बर 1969 के अ त होने स पूव ही नये प्रधान का चुनाव कराने के लिए काग्रेस महासमिति (A I C C) की बैठक बुलाने का निणय किया और इस उद्देश्य स महासमिति के सदस्यो की ओर से एक प्राथना पत्र प्रस्तुत करने के लिए सदस्यो के हस्ताक्षर कराने आरम्भ किये। जैसा कि स्वाभाविक ही था, दूसरे गुट ने इस प्रस्ताव के विरोध मे काय किया। प्राथना-पत्र पर लगभग 400 (50%) स अधिक महासमिति के सदस्यो के हस्ताक्षर कराय गय। पहली नवम्बर को होने वाली कायसमिति की बैठक मे इस प्राथना पत्र पर विचार होना था। उस बठक से दो दिन पूव श्री फखरुद्दीन अली अहमद को (जो प्रधान द्वारा नामजद सदस्य थे) काग्रेस प्रधान न अपना विश्वास खो दने के आधार पर कायसमिति की सदस्यता से पृथक कर दिया और श्री सी० सुब्रह्मण्यम को (जो कुछ दिन पूव तक तमिलनाडु काग्रेस समिति के प्रधान थे) प्रधान पद से त्याग पत्र दने क कारण कायसमिति की सदस्यता से वचित कर दिया। इस प्रकार उ होन कायसमिति मे श्रीमती इन्दिरा गाधी के बहुमत को अल्पमत म बदल दिया।

काग्रेस प्रधान के उपयुक्त काय के विरोध मे श्रीमती इन्दिरा गाधी और उनके समथको ने कायसमिति की बठक म भाग न लेकर प्रधानम त्री के निवास स्थान पर पृथक् से बैठक करने का निणय किया। कायसमिति के दो समूहो की पृथक पृथक बठकें एक ही समय पर 1 नवम्बर को हुईं। काग्रेस प्रधान की अध्यक्षता म, काग्रेस के मुरय कार्यालय म हुई बैठक मे 21 मे स 11 सदस्यो ने भाग लिया और सवसम्मिति से यह महत्त्वपूण निणय किया कि दिसम्बर म गुजरात म महासमिति का नियमित अधिवेशन बुलाया जाय। इस प्रकार कायसमिति ने महासमिति का विशेष अधिवेशन बुलान के लिए विरोधी समूह द्वारा प्रस्तुत प्राथना पत्र को अस्वीकार कर दिया। श्रीमती इन्दिरा गाधी और उनके समथको की बैठक मे निणय किया गया कि 22 और 23 नवम्बर को दिल्ली म महासमिति का विशेष अधिवेशन किया जाये। काग्रेस प्रधान ने महासमिति के दूसरे जनरल सक्रेटरी श्री शकरदयाल शर्मा को जनरल सक्रेटरी के पद से अलग कर दिया। इस कारण वह कायसमिति की सदस्यता से भी वचित हो गये। इस प्रकार काग्रेस म ऐसी गम्भीर फूट पडी कि उसका कोई हल निकालना सम्भव नही दिखाई पडा। फिर भी मसूर के मुख्य मन्त्री श्री पाटिल और केरल प्रदेश काग्रेस कमेटी के प्रधान श्री अब्राहम के प्रयत्नो के फलस्वरूप श्री निजलिंगप्पा और श्रीमती इन्दिरा गाधी के बीच श्रीमती इन्दिरा गाधी के निवास स्थान पर दोपहर के खाने पर एकता के लिए वार्ता हुई, जो पूणतया निष्फल रही। 11 नवम्बर को काग्रेस काय समिति की बठक से पूव कुछ मुख्य मन्त्रियो ने एकता स्थापित करने के लिए एक प्रयास और किया किन्तु वह भी विफल रहा।

11 नवम्बर को काग्रेस कायसमिति की बठक हुई, जिसमे प्रधानम त्री को काग्रेस की प्रारम्भिक सदस्यता से भी अलग करने और काग्रेस ससदीय दल द्वारा नये नेता के चुन जाने का निणय किया गया। प्रधानमन्त्री पर मुरय आरोप यह लगाया कि वह दलीय सगठन पर अपना अधिकार जमाना चाहती थी। उसी दिन काग्रेस ससदीय दल के लगभग 190 ससद सदस्यो ने प्रधानमन्त्री के समथन म प्रस्ताव पास किया। 12 नवम्बर को काग्रेस ससदीय दल की बैठक

भावनाओ को उभारने की थी, विशेषकर पुलिस, होम गार्डों और नेशनल केडैट कोर आदि म घेराव, तोड फोड, कमचारियो म तीव्र अनुशासनहीनता द्वारा वे पश्चिमी बगाल से पूजीपतियों को भगाने की बात सोचते थे। परन्तु वर्तमान स्वामियो की अचल लेनदारिया (immovable assets) तथा फैक्ट्रिया, फार्मों और मिलो पर नया शासन जबरदस्ती अधिकार जमाता, यह दिखाने के लिए कि उत्पादन को हानि न पहुँचे, ये सब काय अपने सघात्मक सविधान के अन्तगत राज्य की स्वायत्तता (autonomy of the state) के नाम म किये जाते। यह योजना साम्यवाद की पुस्तक के अनुरूप थी। वास्तव मे, घेराव एक प्रकार की सगठित अव्यवस्था और अराजकता है। जनता से कहा गया कि उनकी यातनाओ का तब तक अन्त न होगा जब तक कि पूजीवादी व्यवस्था का पूण नाश न हो। यदि सयुक्त विधायक मोर्चे (U L F) की सरकार बनी रहती तो कदाचित ऐसी दशायें उत्पन्न हो जाती, किन्तु बगाल के गवनर ने मिली जुली सरकार को इस आधार पर पदच्युत कर दिया कि उसे बहुमत का समथन प्राप्त न रहा था।

उसके बाद प० बगाल म डा० पी० सी० घोष के नेतृत्व मे काग्रेस दल का समथन प्राप्त सरकार बनी, वह भी कुछ ही समय तक पदासीन रह सकी और गवर्नर ने राज्य मे राष्ट्रपति शासन लागू करने की सिफारिश की, जिसे स्वीकार किया गया। माच 1968 मे राष्ट्रपति शासन लागू किय जाने के बाद इस विषय पर लोकसभा मे विचार के दौरान स्वतन्त्र पार्टी के नेता श्री डन्डेकर ने गवनर को बधाई देते हुए कहा कि उसने और डा० घोष ने प० बगाल को एक राजनीतिक विध्वस से बचा लिया। इस बात से सहमति प्रकट करते हुए कि प्रजातन्त्रात्मक प्रक्रिया का अनुसरण किया जाय, वक्ता ने कहा कि उसे आश्चय है कि क्या मध्यावधि चुनावो से राज्य म प्रजातन्त्र आगे बढेगा। उसने आग कहा कि यदि साम्यवादियो को एक बार पद प्राप्त हो गये तो वे खुशी से सत्ता न छोडेंगे। साम्यवादियो के साथ बने सयुक्त मोर्चे आत्मघात करने वाले हैं। काग्रेस सदस्य श्री के० के० चटर्जी ने कहा कि प० बगाल म कानून और व्यवस्था पूणतया भग हो गये थे। नक्सलवादियो की गतिविधियाँ पूवगामी सयुक्त मोर्चे की सरकार और कुछ बाह्य अभिकरणो के बीच षड्यन्त्र का परिणाम थे।

फरवरी 1969 म प० बगाल व अन्य 4 राज्यो मे मध्यावधि चुनाव हुए। राज्य म 280 सदस्यो वाली विधान सभा मे सबसे अधिक स्थान (80) साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) को प्राप्त हुए। राज्य म फिर स सयुक्त मोर्चे की सरकार बनी, जिसमे मुख्य मन्त्री श्री अजय घोष और उप मुख्य मन्त्री श्री अजय बसु बने। श्री बसु और उनके दल ने अन्य दलो पर अपना प्रभुत्व जमाने का प्रयत्न किया। पुलिस विभाग उनके हाथ मे था, राज्य मे कानून और व्यवस्था व्यापक रूप से भग हुए। बगला काग्रेस और साम्यवादी दल के बीच फिर स गम्भीर मतभेद पैदा हुए और मन्त्रिमण्डल को त्याग-पत्र देना पडा। वहाँ पर फिर से राष्ट्रपति शासन लागू हुआ। माच 1971 के आरम्भ म लोकसभा के लिए चुनावो के साथ साथ राज्य विधान सभा के लिए भी चुनाव हुए। इन चुनावो म साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) सबस बडा दल रहा, परन्तु उसे बहुमत प्राप्त नही हुआ। उस राज्य म बगला काग्रेस के श्री अजय मुकर्जी की अध्यक्षता म नई काग्रेस और अन्य दलो का मिलकर मन्त्रिमण्डल बना जो कुछ ही दिन चला।

भारतीय साम्यवादी दल (दक्षिणपथी) का चुनाव घोषणा-पत्र, 1971—इसम सम्मिलित मुख्य बातें ये हैं (1) वतमान उच्च सीमाओ म भारी कमी करके भूमि के स्वामित्व पर सीमाएँ लगाना, इस प्रकार स प्राप्त हुई तथा सभी प्रकार की सरकारी भूमि का खेतिहर मजदूरो, निधन किसानो और आदिवासियो म बिना मूल्य वितरित करना। किसानो की पैदावार के लिए लाभकारी कीमतें और सस्ते ऋण की व्यवस्था। खेतिहर मजदूरो के लिए पर्याप्त मजदूरी और बिना मूल्य मकान बनाने के लिए स्थान। (2) उद्योग के क्षेत्र म एकाधिकारी उद्यमो का

कारण सयुक्त मोर्चे से अलग कर दिया और सितम्बर 1962 म तत्कालीन मुरयमन्त्री पट्टम थानु पिल्ल (जो प्रजा समाजवादी थे) पजाब के गवनर नियुक्त किये गये। उसके बाद प्रजा समाजवादी दल भी मन्त्रिमण्डल से अलग हो गया और कुछ समय तक केरल म पूणतया काग्रेसी मन्त्रिमण्डल रहा। चौथे आम चुनावो के बाद केरल मे माक्सवादी, साम्यवादी तथा अन्य वामपथी दलो की सरकार बनी, परन्तु वह अधिक समय तक न चल सकी। बाद म भारतीय साम्यवादी दल और अन्य दलो की मिली जुली सरकार बनी। 1971 म हुए चुनाव के बाद भी ऐसा ही हुआ।

दल का सगठन—दल का सगठन बहुत कुछ रूस के दल के सदृश है इसके सगठन के मुरय सिद्धान्त अग्र प्रकार है (1) प्रजातन्त्रात्मक केन्द्रीकरण (Democratic Centralism) ऊपर से नीचे तक सभी समितिया के चुनाव इस सिद्धान्त के अनुसार होते है और वे अपने निणय बहुमत स करती हैं, किन्तु सभी नीचे के स्तरो की समितियो का अपने ऊपर की समिति के निदशो व आदेशा का पालन करना आवश्यक है। यह सिद्धान्त देखने म तो बुरा नही है, किन्तु व्यवहार म इसका जोर प्रजातन्त्र पर नही वरन् केन्द्रीकरण पर है। (2) यह एक वग के लिए शासन सत्ता को प्राप्त करन का साधन है, क्योकि साम्यवादी वग युद्ध और सवहारा वग की तानाशाही म विश्वास करत है (3) यह एक ससदीय दल नही है, यद्यपि इसने वतमान काल म सांविधानिक तरीको को अपनाया है।

इसका सगठन एक पिरामिड के समान है। सबसे नीचे के धरातल पर दल के छोटे छोटे केन्द्र (cells) हैं, जो किसी भी क्षेत्र, कारखान आदि म थोडे से कायकर्त्ताओ से मिलकर बनते है। सबस ऊपर अखिल भारतीय दलीय काग्रेस है, जिसके सदस्यो को प्रदेश समितिया चुनती है। प्रदेश समितिया क नीच क्षेत्रीय अथवा जिला समितिया भी है। दल के ऊपर सर्वोच्च नियन्त्रण के अधिकार प्राप्त निकाय दल का पोलिट-ब्यूरो (Polit Bureau) है जिसमे केन्द्रीय समिति (Central Committee) द्वारा छांटे गये सदस्य हैं। यही निकाय इसकी नीति और कायक्रम का निर्धारण करता है। केन्द्रीय समिति इसकी कायकारिणी है जिसम लगभग 30 सदस्य है। इस दल का प्रमुख जनरल सेक्रेटरी होता है। फलत इसम प्रधान या उप प्रधान नही होते। इस दल मे सदस्यो की भर्ती के नियम काफी कठोर है और पक्के साम्यवादी कायकर्त्ता ही इसके सदस्य बन सकते हैं। कुछ समय पूव अजयघोष की मत्यु क बाद दल ने एक चेयरमन और एक जनरल सेक्रेटरी दो महत्त्वपूण अधिकारी रखने का निणय किया।

कुछ समय से भारत के साम्यवादी दल म फूट पड गई, दल का पुराना और बहुसख्यक अग दक्षिणपथी (C P I Right) कहलाने लगा है और दूसरा वामपथी अग (C P I Left or Marxist) जो अधिक उग्रगामी है। पश्चिमी बगाल मे दूसरे अग की शक्ति काफी बढी हुई है और इसका झुकाव पेकिंग की ओर अधिक है। 1967 के आम चुनावो के बाद उस राज्य म काग्रेस विरोधी दलो का मिला जुला मन्त्रिमण्डल बना, जिसम साम्यवादी दल (वामपथी) की प्रधानता रही। पकिंग समथक दल न यह प्रयत्न किया कि उसके सदस्य राज्य के प्रशासनतन्त्र के प्रत्येक क्षत्र—पुलिस, होम गाड, नागरिक सवाओ न्यायपालिका और कायपालिका म घुस जायें और पश्चिमी बगाल को साम्यवादी बनाने का यह प्रथम पग हो। उनका विचार यह था कि प्रशासनिक सेवाओ म घुसकर अधिक स अधिक व्यक्तियो को कट्टर साम्यवादी सिद्धान्तो अर्थात् आज की भाषा म 'माओ के विचारो' की शिक्षा दें। उनका अगला पग अनेक मोर्चों पर केन्द्रीय सरकार को चुनौती देना होगा। वे जानते है कि वे सांविधानिक उपायो द्वारा प्रभावी शक्ति कभी नही प्राप्त कर सकते, तथ्य तो यह है कि वे उन लोगो को जो सामाजिक परिवतन लाने के लिए सांविधानिक तथा ससदात्मक उपायो पर निभर करते है, प्रतिगामी कहते हैं।

केन्द्रीय सरकार को प्राप्त रिपोर्टों के अनुसार उसकी योजना जनसाधारण म विद्रोहात्मक

काग्रेस दल पर आक्रमण किया, जिसके फलस्वरूप यह दल सबसे महान् राष्ट्रीय शक्ति से पृथक रहा और इसने वामपथी तत्वा के मेल की सम्भावनाओ को नष्ट किया । 1942 मे, जबकि साथी देशा और सोवियत सघ ने धुरी शक्तियो (Axis Powers) के विरुद्ध एकता स्थापित की ता भारत के साम्यवादी दल न ब्रिटिश युद्ध-प्रयत्ना का समथन किया, जिसके परिणामस्वरूप उसकी सम्पूण राष्ट्रवादी आ दोलन ने नि दा की । दल ने ब्रिटिश शासको द्वारा उन सनिक अधिकारिया का कोट माशल किये जाने के प्रयत्नो का भी समथन किया जि होने जापानियो की सहायता की थी । जब फरवरी 1944 म ब्रिटिश शासका के विरुद्ध समुद्री बेडे के अधिकारियो ने विद्रोह किया तो भी साम्यवादी दल उससे अलग रहा । इसके आगे, सोवियत नीति के अनुसार स्वतन्त्रता सम्ब धी समझौत के गम्भीर काल म साम्यवादी दल ने अपने को भारतीय स्वत त्रता की प्रमुख समस्याओ से अलग रखा, एक ओर अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्ना पर ध्यान देकर और दूसरी ओर स्थानीय प्रश्नो पर ध्यान लगाकर । 1948 मे कलकत्ता म फरवरी मास म हुए सम्मेलन के दौरान साम्यवादी दल न अन्तर्राष्ट्रीय नेतृत्व के कहने पर एक आतकवादी अभियान आरम्भ किया और तीन वप तक इस बात पर झगडा होता रहा कि क्रांति की रूसी या चीनी कौनसी योजना का प्रयोग किया जाय । इस प्रकार एतिहासिक दृष्टि से यह स्पष्ट है कि साम्यवादी दल की नीति व कायक्रम भारतीय राष्ट्रवाद के विरोध म रहे ।

जब देश मे राष्ट्रवादी सरकार का निर्माण हुआ तो इस दल के नताओ ने युद्धोपरान्त की तजी और आवश्यक पदार्थों की कमी के कारण मजदूरा को अधिक वतन के लिए आ दोलन व हडताल आदि करन पर उकसाया । दल की ओर से तेलगाना व पश्चिमी बगाल और मद्रास म हिंसात्मक कायवाहियो का सचालन किया गया । भारत का साम्यवादी दल अ य देशो के समाना तर दलो की भाति हिंसात्मक तरीका मे विश्वास करता है और इसन देश म राष्ट्रीय सरकार को उखाड फेकने के लिए विनाशकारी व हिंसात्मक कार्यों का सगठित किया, जिसस कि सरकार परिस्थितियो पर निय त्रण न पाकर असफल होती और शासन पर दल अपना अधिकार जमा पाता । यह दल प्रजाताि त्रक सिद्धा तो म विश्वास नही करता । साम्यवादी तो किसाना और मजदूरो अर्थात् सवहारा वग की तानाशाही (Dictatorship of the Proletariat) की स्थापना म विश्वास रखते है । इनकी ऐसी गतिविधिया के कारण कई राज्यो म इस दल के सगठन को अवध अथवा प्रतिबन्धित किया गया पर तु 1951–52 के आम निर्वाचनो के पूव दल ने पुरानी नीति के परित्याग की घोषणा की और सावैधानिक तरीका पर चलन का निणय किया । दल ने चुनावा मे भाग लिया और उस लोकसभा म 23 स्थान मिले । यह सख्या अन्य सभी विरोधी दलो की पृथक् पृथक सख्या से बडी थी, अतएव इस ससद म विरोधी दल का स्थान मिला ।

दूसरे आम चुनावा म साम्यवादी दल को केरल म बहुमत प्राप्त हुआ था और उसका मन्त्रिमण्डल बना था, किन्तु कुछ समय बाद ही उस राज्य के सभी विरोधी दला न एक सयुक्त मोर्चा बनाया और तत्कालीन मन्त्रिमण्डल को अपदस्थ करने की मांग की । उसके परिणामस्वरूप राष्ट्रपति न केरल म सावैधानिक शासन विफल होन की घोषणा करके शासन अपन हाथ म लिया । फरवरी 1960 म उस राज्य मे फिर स चुनाव हुआ और प्रजातन्त्री मोर्चे (Democratic Alliance) को 126 म स 94 स्थान प्राप्त हुए—काग्रेस 63, प्रजा समाजवादी दल 20 और मुस्लिम लीग 11 । साम्यवादी दल के 25 और उसके द्वारा समर्थित स्वत त्र उम्मीदवार 3 विजयी हुए शेष स्थान अन्य छोटे छोटे दला का प्राप्त हुए । उन चुनावा के बाद केरल म काग्रेस और प्रजा समाजवादी दलो का मिलकर मन्त्रिमण्डल बना तथा मुस्लिम लीग क एक सदस्य का अध्यक्ष चुना गया, परन्तु कुछ ही दिना क बाद काग्रेस न मुस्लिम लीग को सम्प्रदायवादी सगठन होन के

मन्त्रिमण्डलो के प्रति अनुचित पक्षपात की व्यवस्था के लिए किया जा रहा है। (5) कुछ समय से न्यायपालिका को बदनाम करने के लिए जानबूझकर प्रयत्न किया गया है। यह अत्य त महत्त्व की बात है कि यायपालिका की स्वतन्त्रता की प्रभावी ढग से सुरक्षा हो। (6) काग्रेस का मुख्य लक्ष्य प्रजात नात्मक, समाजवादी और धर्मनिरपेक्ष समाज की रचना है। केवल यही सामाजिक न्याय, सभी के लिए अवसर की समता और व्यक्ति की स्वतन्त्रता को सुनिश्चित बनायेगा।

(7) शासक दल के सकुचित राजनीतिक विचारा और गतिशील नीतियो के अभाव के कारण आज अथव्यवस्था म प्रगति का रूक जाना सबसे अधिक उद्योगा के क्षेत्र मे उल्लेखनीय है। काग्रेस का विश्वास मिश्रित अथव्यवस्था मे है। राष्ट्रीयकृत उद्योगा का सचालन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि वे वास्तव म समाजवादी स्वरूप का प्राप्त करे और केवल मात्र राजकीय पूजीवाद के रूप मे न गिर जाये। उनका प्रबन्ध स्वायत्तता प्राप्त निगमो के द्वारा हो और वे अपने काय आदश रूप म करें। निजी क्षेत्र के उद्यमो से भी इसी प्रकार के ऊचे मानदण्ड की आशा की जाती है। देश मे सन्तुलित औद्योगिक विकास को प्रोत्साहन देने और शहरी क्षेत्रो के अत्यधिक विकास को रोकने क लिए लाइसेन्स दने की पद्धति का प्रयोग किया जायगा। किन्तु यह काय भी एक अद्ध स्वतन्त्र बोड पर छोडा जाना चाहिए। (8) यद्यपि देश की उन्नति के लिए ग्रामीण भारत का विकास अति आवश्यक है, फिर भी शहरी विकास के कायक्रम मे देरी करना उचित न होगा। मध्यम और निधन वर्गा के लिए गृह निर्माण की आकर्षक योजनाओ की व्यवस्था की जायगी। आरम्भ मे हमारा लक्ष्य प्रति वप 10 लाख रहने क मकानो का निर्माण रहेगा। (9) देश की कर सरचना (tax structure) को सरल बनान क लिए काग्रेस एक आयोग बैठायेगी, साथ ही प्रशासन व्यय मे बचत की जायेगी। काग्रस बढती हुई कीमतो को रोकने के लिए आवश्यक पग उठायेगी। कृषि के विकास के लिए ये पग उठाये जायेंगे—(अ) किसानो के काम आने वाले विज्ञान और तकनीकी के नये औजारा को अगीकार करना, (आ) सिचाई की सुविधाओ का विस्तार, (इ) उवरको, पौधो की रक्षा सामग्री और खेती की मशीनो की पूर्ति म विस्तार (ई) किसानो के लिए ऋण देने की सुविधाओ म बडा विस्तार, और खेती के उत्पादन की वस्तुओ के लिए बाजार की सुविधाय बढाना। (10) खेतीहर मजदूरा के लिए यूनतम मजदूरी लागू की जायगी। भूमि सुधारो का तेजी के साथ कार्यान्वित किया जायगा। सभी को काम देने के लिए व्यवस्था की जायगी। कुटीर और लघु उद्योगा के विकास पर बल दिया जायगा। कानून द्वारा लगभग 1 000 कराड की निधि पाच वप म कायम की जायगी, जिससे रोजगार क साधना को विकसित किया जायगा। ग्रामीण विद्युतीकरण म बडी वृद्धि की जायगी। मवशियो और फसलो के लिए बीमे की व्यवस्था, पशु पालन और स्वास्थ्य कायक्रम को सभी के लिए विस्तृत किया जायगा। (11) मूल अधिकारा और प्रजातन्त्रात्मक स्वत त्रताओ म किसी भी प्रकार की कमी करने का विरोध किया जायगा। (12) हरिजना के उत्थान और अल्पसख्यको म सुरक्षा की भावना उत्पन्न करने के लिए पग उठाये जायेंगे। (13) भारत की विदेश नीति म फिर से सन्तुलन कायम किया जायगा और उसे सच्चाई म गतिशीलता के साथ गुटा से अलग रहने की नीति बनाया जायगा। दक्षिण पूर्वी और पश्चिमी एशिया के सम्बन्धा पर विशेष बल दिया जायगा।

(2) **भारत का साम्यवादी दल**—इसकी स्थापना 1922 म हुइ थी, किन्तु 1924 तक अधिकाश समय के लिए वह अवध रहने के कारण अपने कार्यो को छुपकर करता रहा। इसके सविधान का प्रारूप 1931 मे बना था, जिसे 1933 म ही दलीय काग्रेस के प्रथम खुले अधिवेशन पर स्वीकार किया गया। 1928 से 1935 तक, स्टालिन के कहने पर, साम्यवादी दल ने गाधी, नेहरू और

नीति, जिसका जनता की कमाई को लूटने के लिए जानबूझ कर पालन किया जा रहा है, इस नीति के साथ चलने वाली ऊँची कीमतें और जीवन मान के सदव बढने वाले इन्डेक्स ने केन्द्रीय व राज्य सरकारों के कर्मचारियों की वास्तविक आयों को लगातार कम किया है।

(5) भारत पर विदेशी ऋण, जो 7000 करोड रुपये से भी अधिक हो गया है, इतना भारी भार हो गया है कि सरकार ने विवश होकर उसकी अदायगी में परिवर्तन की माग की है और अब नये ऋणों का लगभग 30 40 प्रतिशत तो पुराने ऋण चुकाने में ही चला जाता है। इन्दिरा कांग्रेस की सरकार ने एकाधिकारियों और विदेशी पूजीपतियों को निर्यात प्रोत्साहन के नाम मे रियायतें दी है। उपभोक्ताओं की वस्तुओं के उद्योगों में विदेशी पूंजी को लगने दिया जा रहा है। करों के द्वारा इन्दिरा सरकार ने लूट को अधिक तीव्र बना दिया है। गत 3 वर्षों में ही सरकार ने 600 करोड रुपये से अधिक का कर भार बढाया है। जनता को लूटने में बढती हुई कीमतें और मुद्रा स्फीति मुख्य है। (6) अब मूल अधिकारों का अर्थ निजी सम्पत्ति की पवित्रता की रक्षा करना रह गया है। संगठनों की स्वतन्त्रता को दबाया जा रहा है। समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता का अर्थ वास्तव में गोयनकाओं, बिरलाओं और टाटाओं की स्वतन्त्रता है। (7) राज्यों की स्वायत्तता केवल नाम को रह गई है, सार और व्यवहार में संविधान एकात्मक बन गया है। राष्ट्रपति किसी भी राज्य का शासन अपने हाथों में ले सकता है। (8) बंगाल में राष्ट्रपति शासन के अन्तर्गत आतंक का शासन कायम हुआ है। हमारे आन्दोलन पर पुलिस और गुण्डों के आक्रमणों को उत्साहित किया जा रहा है। फिर भी संयुक्त मोर्चे के मन्त्रिमण्डल जनता के प्रति वफादार रहे हैं। (9) विदेश नीति में इन्दिरा कांग्रेस की सरकार बार बार प्रतिगामियों से समझौता करती है। (10) सरकार की नीतियों से राष्ट्रीय एकता पर आक्रमण हो रहा है।

(3) समाजवादी दल—भारत में प्रथम समाजवादी दल की उत्पत्ति, जिसे अब तक समाजवादी दल कहते हैं, 1934 में हुई थी, जबकि कुछ नवयुवक कांग्रेसियों ने, जिनमें अधिकतर शिक्षित थे, यह सोचा कि गांधीजी की अहिंसा और सत्याग्रह की नीति पूर्णतया सफल नहीं हो रही है, अतः स्वातन्त्र्य संघर्ष को सफल बनाने के लिए नया मोड देना चाहिए। इस दल का जन्म नासिक जेल में हुआ, जहां श्री जयप्रकाश नारायण और अन्य साथी बन्दी थे। आरम्भ में ही श्रमिकों और किसानों की समस्याओं पर उनका विशेष ध्यान गया। 1937 के आरम्भ में जब कांग्रेस ने अनेक प्रान्तों में चुनाव जीते तो उन्होंने कांग्रेस द्वारा मन्त्री पदों को स्वीकार किये जाने का विरोध किया, परन्तु 1947 तक वे कांग्रेस के भीतर ही बने रहे।

उसी वर्ष कानपुर के अधिवेशन पर उन्होंने अपने नाम से 'कांग्रेस' शब्द हटा दिया, क्योंकि उनके विचार में स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त दलीय एकता की अपेक्षा समाजवाद पर अधिक बल देना उचित था। उस अवसर पर उन्होंने प्रजातान्त्रिक समाजवाद और सर्वाधिकारवादी साम्यवाद के अन्तर को भी स्पष्ट किया। नासिक सम्मेलन के उपरान्त वे कांग्रेस से अलग हो गये। संविधान सभा में उनके सदस्यों ने समाजवादी गणतन्त्र की स्थापना और बिना प्रतिकार जमींदारी के उन्मूलन पर जोर दिया। प्रथम आम चुनावों के पूर्व आचार्य कृपलानी ने अपने साथियों सहित जिन्होंने कांग्रेस को छोड दिया था 'कृषक मजदूर प्रजापार्टी' संगठित की थी। समाजवादी दल और कृ० म० प्र० पा० ने कांग्रेस के विरुद्ध मिलकर प्रथम आम चुनाव लडे और उन्होंने लोकसभा के लिए पडे कुल मतों के 10 4 प्रतिशत प्राप्त किये, किन्तु उन्हें स्थान केवल 12 ही मिले। 1952 के सितम्बर मास में दोनों ही दलों ने मिलकर प्रजा समाजवादी दल बनाया जिसका उद्देश्य इस प्रकार बताया गया—'शान्तिपूर्ण उपायों द्वारा प्रजातान्त्रिक समाजवादी समाज की स्थापना, जो सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक शोषण से मुक्त हो।'

कांग्रेस के समान इसकी भी स्थानीय, जिला व प्रदेश समितियाँ हैं, जिनका चुनाव दल के

राष्ट्रीयकरण, विदशी तेल कम्पनियो और वको आदि की विदेशी पूजी पर अधिकार, सावजनिक क्षेत्र का द्रुत गति से विस्तार जिससे कि उस राष्ट्रीय अथव्यवस्था म निर्णायक स्थान प्राप्त हो सके, नये उद्योगा को आरम्भ करके रोजगार के नये अवसरो की रचना, बेरोजगारी के लिए सहायता की व्यवस्था, पिछड़े हुए प्रदेशो म नये उद्योगो की स्थापना को प्रोत्साहन, जिससे कि प्रादेशिक अन्तरो को दूर किया जा सके, मजदूरो के लिए आवश्यकता पर आधारित न्यूनतम मजदूरी, ट्रेड यूनियन अधिकारा की पूण मान्यता। (3) कीमत रेखा को रोकने के लिए प्रभावी पगो को उठाना और दैनिक आवश्यकता की वस्तुआ का उचित मूल्य की दुकानो द्वारा वितरण कराना। (4) काले दमनकारी कानूना को हटाना। (5) साम्प्रदायिक शक्तिया को दबाने के लिए जोरदार पग उठाना, अल्पसख्यक समुदायो के लिए सभी प्रकार का आवश्यक रक्षण, साम्प्रदायिक प्रचार और गतिविधिया पर रोक, और अस्पृश्यता निवारण कानून को अधिक सुदृढ बनाना। (6) वतमान शिक्षा पद्धति म पूण उलट फेर, विनान और तकनीकी के विकास के लिए अधिक धन की व्यवस्था और वैज्ञानिक सस्थाआ म भ्रष्टतन्त्र का अन्त। (7) स्त्रियो के लिए अधिकार, जिनकी देश मे आधी जनसख्या है—(अ) सभी कानूनी अयोग्यताआ को दूर करना और उनके लिए पुरुषो के सम राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक अधिकारो को सुनिश्चित बनाना, सम काय के लिए सम वेतन, और देश के सामाजिक आर्थिक जीवन म स्त्रियो को पूरी तरह से भाग लेने योग्य बनाना। (8) विदेश नीति के क्षेत्र म—(अ) भारत की शान्ति व गुटा स अलग रहने की नीति को सुदृढ बनाना, ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल स सम्ब ध विच्छेद और जाति विभेद नीति का अधिक प्रभावी विरोध, उत्तरी वियतनाम, पूर्वी जमनी और उत्तरी कोरिया के जनवादी गणतन्त्रा को मान्यता, चीन के जनवादी गणत न्त्र के साथ भारत के सम्ब धा म उत्पन्न गतिरोध को दूर करने के लिए सभी सम्भावनाआ की खोज, अफ्रीकी एशियाई देशो के साथ अधिक घनिष्ठ सम्ब ध, उत्तरी वियतनाम व क्यूबा आदि देशो के साथ विना रोक व्यापार, और नये साम्राज्य वादी प्रयासा व दबावा के विरुद्ध प्रभावी पगो का उठाना।

भारतीय साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) का चुनाव घोषणा पत्र, 1971—इसकी मुख्य बातें इस प्रकार है (1) इस चुनाव म दो गुट (two combines) एक दूसरे का मुकाबला कर रह है। सिंडीकेट जनसघ स्वतन्त्र गुट प्रतिगामी शक्तियो का मेल है जो निहित हिता की प्रतिरक्षा क लिए खडा है। इन्दिरा गाधी के नेतृत्व म दलो का दूसरा मिला जुला सगठन है जो प्रथम का विरोध कर रहा है। पर तु यह भी उन्ही वर्गीय हितो को प्राप्त करना चाहता है और एकाधि कारियो व भू स्वामियो के शासन को सुदृढ बनाना चाहता है काग्रेस मे फूट, जिस आधारभूत नीतिया म अन्तर का परिणाम बताया गया था, वास्तव म एक ही वग के जनसाधारण पर शासन को जारी रखने की दो चाले है। (2) इस चुनाव म जनता की मुख्य शक्तियो को, जिन्होन 1967 और 1969 मे सयुक्त काग्रेस का मुकाबला किया था विभाजित कर दिया है। सयुक्त समाजवादी दल क नेताओ ने खुलकर सिंडीकेट जनसघ स्वत न्त्र के गुट स मेल कर लिया है। दक्षिणप थी साम्यवादी दल और प्रजा समाजवादी दल इन्दिरा काग्रेस के समूह से मिल गये है। हमारा दल ही जनसाधारण के हितो तथा प्रजात न्त्रवादी व समाजवादी आन्दोलन के लक्ष्या के प्रति सच्चाई से खडा है। पूव वर्णित दोना समूहा म से किसी के लिए भी मतदान करना भृत्यतन्त्रात्मक पुलिस राज्य के लिए मतदान करना है। (3) काग्रेस शासन के गत चार वर्षा म भारत म सबस बुरा आर्थिक सकट पदा हुआ है। इन्दिरा गाधी के प्रधानमन्त्री पद के काल म जनता की दरिद्रता बढती चली गई है। दिसम्बर 1969 के अन्त म शिक्षित बेकारा की सख्या 15 26 लाख थी और केवल बेकार इ जीनियरो की सख्या 61 हजार थी। यह है इन्दिरा के समाजवाद का वास्तविक रूप जिसकी दक्षिणपथी साम्यवादी दल प्रशसा करते है। (4) मुद्रा स्फीति (inflation) की

व्यक्तित्व अथवा समूह के स्वतन्त्र अस्तित्व से सम्बन्धित हैं। इन छोटे छोटे दलों या समूहों का भविष्य पूर्णतया अन्धकारमय है। सभी वामपक्षी दलों को अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये देश में विरोधी दल को सुसंगठित और सुदृढ़ बनाने तथा देश हित में संयुक्त होकर कार्य करना चाहिए। अच्छा हो यदि सभी दल प्रजा समाजवादी दल में सम्मिलित हो जायें या सब मिलकर एक बड़ा दल सामान्य कार्यक्रम के आधार पर बना लें। दिसम्बर 1962 में उत्तर प्रदेश विधानमण्डल के समाजवादी दल व प्र० स० दल के बीच आपसी समझौता हुआ और उन्होंने मिलकर संयुक्त समाजवादी दल बनाया, जिसका अधिकतर राजनीतिक नेताओं व समाचार पत्रों ने स्वागत किया। उसके बाद दोनों दलों की राष्ट्रीय कार्यकारिणियों में दोनों दलों का विलय किस आधार पर हो उस पर बहुत समय तक कोई सहमति नहीं हो सकी। अन्त में एक बार दोनों दलों में एकता स्थापित करने के उद्देश्य से सहमति हुई। परन्तु यह एकता बहुत ही कम दिन रह पाई, क्योंकि कुछ ही दिन बाद प्रजा समाजवादी संयुक्त समाजवादी दल से अलग हो गये। तब से प्रजा समाजवादी दल का संगठन काफी क्षीण हो गया है।

संयुक्त समाजवादी दल का चुनाव घोषणा पत्र, 1971—(1) श्रीमती इन्दिरा गांधी की वर्तमान सरकार और पूर्वगामी कांग्रेस सरकार की नीतियों में कोई अन्तर नहीं है। तथ्य तो यह है कि वर्तमान प्रधानमन्त्री का शासन अधिक भ्रष्ट है और उसकी नीतियाँ जन विरोधी हैं। अतः दल का यह पक्का विश्वास है कि वर्तमान सरकार को अपदस्थ करना प्रत्येक भारतीय का पुनीत कर्त्तव्य है। (2) दल दूसरी संविधान सभा के आहूत किये जाने में विश्वास करता है, जिसका आधार वयस्क मताधिकार हो और जो भारत के लिए नया संविधान बनाये। सम्पत्ति के अधिकार को मूल अधिकारों की सूची से निकाला जाय। खाना, कपड़ा, मकान, शिक्षा, रोजगार और चिकित्सा सहायता को मूल अधिकारों में सम्मिलित किया जायगा। केन्द्र और राज्यों के सम्बन्धों में भी परिवर्तन किया जाएगा, राज्यों को अधिक स्वायत्तता सौंपी जाएगी। अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्यपालिका पदों के लिए नियुक्ति के स्थान पर निर्वाचन का सिद्धान्त अपनाया जाएगा। (3) सभी भारी उद्योगों और विदेशी पूंजी को समाजीकृत किया जाएगा। दल का विश्वास है कि स्थूल और समय सीमा में बंधे कार्यक्रम अपनाए जायें जो ऐसे उग्र परिवर्तनों का साधन बनें जिनका परिणाम देश को समता व समृद्धि की ओर ले जाना हो। कृषि की संरचना में उग्र परिवर्तनों के बिना देश में समृद्धि प्राप्त करना असम्भव होगा। बचतहीन जोतों पर भूमिकर का उन्मूलन किया जाएगा। भूमि के स्वामित्व पर व्यक्तिगत सीमा की तिगुनी परिवार की सीमा होगी। एक राष्ट्रीय सिंचाई नीति बनाई जाएगी जो 7 वर्ष में पूर्ण की जाएगी। सारी बंजर भूमि को खेती योग्य बनाने और सिंचाई की सुविधायें बढ़ाने के लिए भूमि सेना गठित की जाएगी, जिसमें बेरोजगार व्यक्तियों और खेतिहर मजदूरों को सम्मिलित किया जाएगा। (4) बृहत् आधार वाली अर्थव्यवस्था के विकास हेतु शासक वर्गों के सुख सम्भोग की वस्तुओं पर व्यय सीमा लगाई जाएगी। व्यक्तिगत व्यय की सीमा 1 500 रु० प्रति मास होनी चाहिए। अवसर की समता की प्रथम शर्त शिक्षा में समता है। व्यय वेतन भवन और पुस्तकों आदि में सभी प्राइमरी स्कूल सम होने चाहिएँ। अंग्रेजी माध्यम का तुरन्त अन्त किया जाए। माध्यमिक शिक्षा के स्तर तक शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिए। एक ही श्रेणी के शिक्षकों को सम वेतन मिलना चाहिए।

(5) मजदूर वर्ग को उद्योगों के प्रबन्ध में भाग प्रदान किया जाएगा। संगठित होने की स्वतन्त्रता और हड़ताल के अधिकार सरकारी कर्मचारियों को भी प्रदान किये जायेंगे। पिछड़े हुए वर्गों और हरिजनों के लिए सेवाओं में अधिक सुविधायें दी जायेंगी, जिससे वे अपने लिए आरक्षित स्थानों के प्रतिशतों को शीघ्र ही प्राप्त कर सकें। स्त्रियों की स्वतन्त्रता को वास्तविक बनाने के लिए पग उठाये जायेंगे। परिवर्तन और पुनर्निर्माण के लिए दल युवा शक्ति को सबसे अधिक

सदस्यों द्वारा किया जाता है किन्तु इसकी समितियों और सदस्यों की संख्या कांग्रेस की तुलना में बहुत कम है। इस दल में राष्ट्रीय कार्यकारिणी (National Executive) सर्वोच्च और नियन्त्रक समिति है दल की सदस्यता कोई भी व्यक्ति, जिसका दल के उद्देश्यों और तरीकों में विश्वास हो, सरलता से पा सकता है। इस दल का संगठन अभी तक सुदृढ़ नहीं है, यद्यपि इसमें अनेक अच्छे कार्यकर्ता हैं, किन्तु वे व्यक्तिगत मतभेदों तथा अन्य कारणों से दल के उद्देश्यों व सदस्यता को व्यापक बनाने में असमर्थ रहे हैं। भारत की परम्पराओं और परिस्थितियों को देखते हुए अनेक समझदार व्यक्तियों ने आशा की थी कि यही दल संगठित होकर विरोधी दल का स्थान पायेगा और अभी भी ऐसी आशा की जाती है, किन्तु अभी तक कारण कुछ भी रहे हों यह दल उन आशाओं को पूरा नहीं कर पाया।

अधिकांश व्यक्तियों के विचार में जब से कांग्रेस ने समाजवादी व्यवस्था के ध्येय को अपनाया है, इन दोनों दलों के राजनीतिक और आर्थिक उद्देश्यों व कार्यक्रम में विशेष अथवा आधारभूत अन्तर नहीं रहा है। दोनों ही दल देश में अपनी विशेषताओं के अनुकूल प्रजातन्त्रात्मक ढंग से समाजवाद की स्थापना करना चाहते हैं। यहाँ पर एक बात उल्लेखनीय है। ग्रामीण अर्थ व्यवस्था के विषय में प्र० स० दल का घोषणा-पत्र कहता है 'भूमि का फिर से वितरण होगा जिसमें उसके स्वामित्व पर सीमा लगाई जायेगी और छोटे *भूमिपतियों को व्यक्तिगत रूप से कृषि* करने की सुविधायें दी जायेंगी तथा गाँव पंचायतों को भूमि सुधारों को लागू करने का मुख्य साधन बनाया जायगा।' इससे यह स्पष्ट है कि प्र० स० दल केन्द्रीभूत नियोजित विकास पर कम और धरातल से ऊपर की ओर विकेन्द्रीकृत विकास पर अधिक बल देता है। जहाँ तक विदेश नीति का सम्बन्ध है कांग्रेस और प्र० स० दल में साधारण अन्तर है। अतएव कुछ व्यक्ति दोनों दलों के मिल जाने का समर्थन करते है, जिससे कि वे संयुक्त मोर्चे के रूप में साम्यवादियों व सम्प्रदायवादियों का विरोध कर सकें। यह उचित ही है कि ये दल साम्यवाद और सम्प्रदायवाद का विरोध करें।

भारत का समाजवादी दल—इसके वास्तविक संस्थापक डा० राममनोहर लोहिया थे। इसके संस्थापन सम्मेलन में, जो जनवरी 1956 में हैदराबाद में हुआ था यह स्पष्ट किया गया था कि यह कांग्रेसी असमाजवादी, झूठे समाजवादी और सम्प्रदायवादी दलों से मिलकर संयुक्त सरकार बनाने के विरुद्ध था। इस दल ने समाजवाद के निम्नलिखित मुख्य सिद्धान्त स्वीकार किये (1) राष्ट्र के भीतर और बाहर सभी व्यक्ति सम हैं। राष्ट्रीय सीमाओं में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण संसार में सभी व्यक्तियों का जीवन-स्तर अच्छा और न्यूनतम से ऊपर हो। (2) समाजवादियों को इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जहाँ सम्भव हो सांविधानिक कार्यों और जहाँ आवश्यक हो सविनय विरोध (Civil Disobedience) के उपायों का प्रयोग करना चाहिए। (3) जहाँ तक सम्भव हो उत्पादन की इकाइयाँ छोटी रहें, किन्तु आवश्यकतानुसार बड़े मशीनों का प्रयोग किया जाए। (4) प्रायः सभी प्रकार की सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण हो। आय की उच्चतम और न्यूनतम मात्रा निर्धारित की जायें, जिनमें 10 गुने से अधिक अन्तर न रहे। (5) असमान सदस्यों के अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के स्थान पर एक संगठन के लिए प्रयत्न किया जाएगा जिसमें सभी सदस्यों को समान अधिकार प्राप्त हों। (6) अन्तर्राष्ट्रीय परिषदों में जहाँ तक हो सके वयस्क मताधिकार के आधार पर चुने गये प्रतिनिधियों को भाग लेने दिया जाए।

पूर्व वर्णित समाजवादी दल, के अतिरिक्त देश में कई वामपक्षी दल हैं, जैसे क्रान्तिकारी समाजवादी दल, मार्क्सवादी दल, फारवर्ड ब्लाक, पक्षान्तर और कई पार्टी इत्यादि, किन्तु उनका अपने अपने क्षेत्र में ही कुछ प्रभाव है और देश के राजनीतिक दलों में उन्हें सम्मिलित करना उनके महत्त्व का व्यर्थ ही बढ़ाना है। वास्तव में यह देखा गया कि

नीति म भाग लेने की भावना को विकसित करने के लिए दल चाहता है कि मताधिकार क लिए आयु सीमा घटाकर अठारह वष कर दी जाय। (8) प्रजात त्र के विकास क लिए राजनीतिक शक्ति का यागमन और अथव्यवस्था का विके द्रीकरण अत्य त आवश्यक है। भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए दल लोकपाल के पद को अधिक प्रभावी बनायेगा। (9) दल का विश्वास गतिशील, स्वत त्र विदेश नीति म है, जो सभी राष्ट्रो की शा ति और स्वत त्रता को कायम रखने म सहायक हो। दल सभी प्रकार के सैनिक गठब धनो के विरुद्ध है। प्रतिरक्षा के मामल म दल चाहता है कि देश आत्म निभर बने, केवल परम्परागत शस्त्रो के क्षेत्र मे ही नही वरन् अणु शस्त्रा क क्षेत्र मे भी। (10) जम्मू कश्मीर राज्य भारत का अखण्ड भाग है और उस राज्य का भारतीय सघ म प्रवेश अ तिम तथा न उलटने वाला है। परन्तु दल अनुच्छेद 370 के दुरुपयोग को रोकेगा, जो कि उस राज्य की जनता के विशेष हितो की रक्षा के लिए आवश्यक है।

(4) भारतीय जनसघ—भारतीय जनसघ की स्थापना 21 अक्टूबर 1951 म स्वर्गीय डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी के प्रधानत्व म हुई थी। वास्तव मे इसके अधिकतर सगठनकर्त्ता 'राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ के सदस्य थे, जो कि सघ के राजनीतिक विचारो के आधार पर एक राजनीतिक सगठन बनाना चाहते थे, क्योकि कुछ समय पूव राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ ने राजनीति को छोडकर एक सास्कृतिक सघ का उद्देश्य स्वीकार किया था। जनसघ को प्रजात त्र के सिद्धा तो पर सगठित किया गया, किन्तु इसम पुराने राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ के कायकर्त्ताओ की बहुसख्या बनी रही, जि होने प्रजात त्रात्मक तरीको को व्यवहार म नही चलने दिया, परिणामस्वरूप अनक जनसघियो ने जनसघ स अलग होने का निश्चय किया। पामर का यह कथन सच है कि भारतीय जीवन म साम्प्रदायिकता सबस अधिक प्रबल और विभाजनात्मक शक्तियो म से एक है, परन्तु अभी तक किसी भी साम्प्रदायिक दल को राष्ट्रीय राजनीति म कोई सफलता नही मिली है और उनम से बहुत कम ने राज्यीय या स्थानीय स्तर पर महत्त्वपूण प्रभाव डाला है। पर तु हमारे विचार म 1967 म हुए आम चुनावो म जनसघ, अकाली दल व रिपब्लिकन पार्टी आदि का महत्त्व काफी बढा। पामर के मतानुसार हि दू साम्प्रदायिक दला म राजनीतिक दृष्टि स सबस अधिक सफल भारतीय जनसघ रहा है।[1] इस सभी आम चुनावो मे सबस अधिक मत प्राप्त हुए। पहल आम चुनाव म इसे लोकसभा म तीन स्थान प्राप्त हुए थ, दूसरे म चार और तीसरे म प द्रह। चौथे आम चुनाव म उसक प्रतिनिधियो की सख्या 35 हो गई। पर तु पाचवे चुनाव म इसक तथा अ य सभी विरोधी दलो के प्रतिनिधियो की सख्या बहुत घटी।

पहले आम चुनावा के अवसर पर प्रकाशित अपने घोषणा पत्र म जनसघ ने इन बातो पर विशेष बल दिया था—भारतवष कई सदियो के लम्बे सघष क बाद स्वत त्र हुआ है, कि तु स्वत त्रता की प्रसन्नता व्यक्तिया के हृदया से तीव्र गति स मिटती जा रही है। सत्तारूढ दल की गलत नीतिया और राष्ट्रीय समस्याओ का हल करन म अभारतीय व अवास्तविक प्रयत्न ही देश म ऐसी स्थिति के लिए उत्तरदायी है। जनसघ विश्वास करता है कि भारत का एक होना आवश्यक है, अत जनसघ उसकी प्राप्ति के लिए सभी उचित उपाया को अपनायगा। भारतीय राष्ट्रीयता का आधार सम्पूण भारत के प्रति निष्ठा होना चाहिए। 'विविधता मे एकता' भारतीय सस्कृति की विशेषता रही है, पर तु भारतीय सस्कृति एक ओर अविभाज्य है। मिश्रित सस्कृति (composite culture) की कोई भी बात अवास्तविक और राष्ट्रीय एकता क लिए खतर स पूण होगी। जनसघ का ध्येय धम राज्य है जिसका अथ धमत त्र (Theocracy) नही वरन् विधि

[1] Communalism is one of the most powerful and divisive forces in Indian life The most successful politically of the Hindu communal parties is the Bhartiya Jan Sangh —Kahin G M (ed) *Major Governments of Asia* pp 344-45

शक्तिशाली माध्यम समझता है। उन्हे बेरोजगारी के पजो से बचाया जाय और देश के भविष्य निर्माण कार्य मे उनका भाग प्रभावी बनाने के उद्देश्य से मताधिकार की आयु सीमा घटाकर 18 वर्ष की जायगी। (6) साम्प्रदायिक सामजस्य बनाये रखने के लिए आवश्यक पग उठाये जायेंगे। दल देश मे धर्मनिरपेक्षता और जाति-व्यवस्था के विलोपन का समर्थक है। दल यह समझता है कि मुस्लिम समुदाय के जीवन और मान की रक्षा करने के लिए हिन्दुओ का उत्तरदायित्व अधिक है। दल ने मुसलमानो मे पिछडे हुए विभागो को पिछडे हुए वर्गों के लिए सुविधाओ वाली श्रेणी मे रखा है। (7) विदेश नीति के क्षेत्र मे दल चाहता है कि भारत राष्ट्रमण्डल की सदस्यता त्याग दे। राष्ट्रीय हित मे या तो तिब्बत स्वतन्त्र बने अथवा कैलाश मानसरोवर और पूर्व मे ब्रह्मपुत्र नदी भारत और चीन के बीच मे सीमा रेखा हो। अपने देश की उत्तरी सीमाओ की प्रतिरक्षा को सुदृढ बनाने के लिए यह आवश्यक है कि नेपाल, सिक्किम, भूटान आदि मे प्रजातन्त्रात्मक शक्तियो को सुदृढ बनाया जाय। सभी पडोसी देशो से निकट सम्बन्धो का विकास किया जाए। (8) दल का विश्वास है कि देश की एकता और प्रजातन्त्र को सुदृढ बनाने के लिए लोक शक्ति को विकसित किया जाय। जनता के प्रजातान्त्रिक अधिकारो की रक्षा के लिए दल सगठित रूप मे सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाता रहेगा।

प्रजा समाजवादी दल का चुनाव घोषणा पत्र, 1971—(1) दल सदा ही राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और प्रभुता के लिए सतर्क रहा है। यह सामान्य व्यक्ति के अधिकारो और हितो की रक्षा के लिए भी बडा उत्साही रहा है। जबकि वर्तमान स्थिति को बनाये रखने वाली शक्तियो ने 'असीमित सम्पत्ति के मूल अधिकार' की रक्षा के लिए बडी चिन्ता व्यक्त की है, प्रजा समाजवादी दल यह प्रयत्न करता रहा है कि सविधान मे सशोधन किये जायें, जिससे कि मूल अधिकारो मे 'काम करने के अधिकार' को सम्मिलित किया जा सके। (2) दल ऐसी नीति को अपनायेगा जिससे कि खाद्य पदार्थों का उत्पादन बढे और उसका न्यायपूर्ण वितरण हो। किसानो को उनकी पैदावार के लिए लाभकारी कीमत की व्यवस्था को सुनिश्चित बनाया जाएगा। राजकीय प्रयास द्वारा नई तोडी गई भूमि पर खेती करने के लिए भूमि सेना सगठित की जाएगी। खाद्य पदार्थो की खरीद सरकार अपने हाथ मे लेगी और शहरो के लिए प्रभावी [illegible] व्यवस्था लागू की जाएगी। (3) विभिन्न वस्तुओ के मूल्यो के बारे मे एक एकीकृत (integrated price policy) नीति अपनाई जाएगी। कीमतें नियत करते समय वस्तुओ के उत्पादन व्यय और उत्पादनकर्ता के लिए उचित लाभ को ध्यान मे रखा जाएगा। (4) बेकारी को दूर करने के लिए कुटीर उद्योगो पर अधिक बल दिया जायेगा। दल का विश्वास है कि सफल नियोजन के लिए [illegible] आवश्यक है। समाजवादी योजना मे सार्वजनिक क्षेत्र की वृद्धि तो निश्चित ही है, परन्तु [illegible] या एकाधिकारी स्थिति मे राज्य के प्रवेश को ही समाजवाद नहीं कहा जा सकता। [illegible] व्यक्तिगत पहल और साहस की भावना को मारना नहीं है। [illegible] तनावो का मुख्य स्रोत विकास मे प्रादेशिक असन्तुलन है। (5) [illegible] औद्योगिक उत्पादन की सफलता के लिए दल मजदूरों के [illegible] प्रयत्न करेगा। कार्य परिषदों और उत्पादन समितियों द्वारा उद्योगों के [illegible] श्रमिकों का सहयोग प्राप्त किया जाएगा।

(6) [illegible]
हैं। दल चाहता है कि [illegible]
दल अप्रतिबन्धित सम्पत्ति के विरुद्ध है, [illegible]
लिए सम्पूर्ण [illegible] (7) [illegible]
कि वह युवाओ की [illegible]

अधिकारियों से स्वतन्त्र करेगा । उद्यमों की स्वायत्तता और संसद के प्रति उनके उत्तरदायित्व में उचित सन्तुलन कायम करेगा । सार्वजनिक क्षेत्र के अविवेकपूर्ण विस्तार के स्थान पर यह उसके समेकन (consolidation) पर अधिक बल देगा । (10) शहरी और औद्योगिक कर्मचारियों के लिए जनसंघ सेवा सुरक्षा, आवश्यकता पर आधारित न्यूनतम वेतन को सुनिश्चित बनायेगा । यह स्त्रियों को सम अवसर प्रदान करने का समर्थक है । बड़े शहरों में यह काम करने वाली लड़कियों के लिए होस्टलों का निर्माण करायेगा । जनसंघ ऐसे युक्तिकरण (rationalisation) के विरुद्ध जिसका परिणाम पदों में कमी करना हो । जनसंघ का स्वदेशी योजना में विश्वास है । यह सार्वजनिक क्षेत्र और सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के लिए क्रमश सूक्ष्म और वृहद् नियोजन (micro and macro planning) करेगा । इसका विश्वास पूर्ण रोजगार, अधिकतम उत्पादन, न्यायपूर्ण वितरण और कीमतों के स्थिर रखने में है । (11) संविधान में संशोधन के लिए एक आयोग बैठाया जायगा । यह राष्ट्रीय एकीकरण के लिए सक्रिय कार्य करेगा । यह शिक्षा को देश भक्तिपूर्ण और नैतिकता को सार देगा । इसका विश्वास नागरिकों के भारतीयकरण में है । यह अन्तरराज्य परिषद् की स्थापना भी करेगा । (12) जनसंघ का विश्वास स्वतन्त्र विदेश नीति में है । पाकिस्तान को विदेशों द्वारा दी जाने वाली सैनिक सहायता को यह अमित्रतापूर्ण कार्य समझता है । यह भारत को राष्ट्रमण्डल से बाहर निकालेगा । अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत सदैव ही सब देशों के साथ मित्रता चाहता रहा है । जनसंघ देश की प्रतिरक्षा सेनाओं को सुदृढ़ बनायेगा ।

(5) **हिन्दू महासभा**—इसकी स्थापना 1916 में हुई थी, आरम्भिक काल में इसका उद्[देश्य] हिन्दुओं की सांस्कृतिक व सामाजिक उन्नति करना था । इसके विकास में मदन मोहन मालव[ीय], ला० लाजपतराय, वीर सावरकर और डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी जैसे नेताओं का बड़ा भाग र[हा] है । आगे चलकर महासभा ने हिन्दुओं के लिए वही कार्य करने का प्रयत्न किया जो मुस्लिम ली[ग] मुसलमानों के लिए करती थी । वास्तव में इसे मुस्लिम लीग की अनुचित राजनीतिक मांगों और कांग्रेस की मुसलमानों को यथासम्भव अधिक से अधिक सुविधायें देने की नीति के विरोध से ही बल मिला । फिर भी महासभा अपने राजनीतिक उद्देश्य में कभी भी सफल न हो सकी, क्योंकि हिन्दुओं की बहुसंख्या कांग्रेस की नीति का ही समर्थन करती रही और देश हित में यह उचित ही था । महासभा ने 1932 में साम्प्रदायिक पंचाट और आगे पाकिस्तान की स्थापना का विरोध किया किन्तु इसका विरोध प्रभावशाली न बन सका । महासभा का दृष्टिकोण बहुत कुछ जनसंघ से ही मिलता है ।

हिन्दू महासभा का चुनाव घोषणा पत्र, 1967—इसमें निम्नलिखित बातों को मुख्य स्थान दिया गया (1) भारत के संविधान का संशोधन (अ) देश को हिन्दू लोकतन्त्रात्मक राज्य घोषित करना, (आ) शिक्षा के सम्पूर्ण काल में हिन्दू धर्म के शिक्षण को एक अनिवार्य विषय बनाना, (इ) वर्तमान राज्यों को राज्य न कहकर प्रान्त कहना, (ई) गायों सांडों और सभी आयु की गौ सन्तान के वध को कानून द्वारा बन्द करना, (उ) हिन्दुस्तान के सभी नागरिकों के लिए पूर्ण नागरिक स्वतन्त्रता की प्रत्याभूति देना, और (ऊ) किसी भी सत्तारूढ़ दल के लिए यह असम्भव बना देना कि वह निवारक निरोध कानून तथा अन्य ऐसे कानूनों द्वारा जो कि मूल अधिकारों के विरुद्ध हों, विरोधी दलों का दमन कर सके ।

(2) भारत की वैदेशिक नीति को अग्रलिखित आधारों पर पुनर्गठित करना (अ) नेपाल, सिक्किम, भूटान, वर्मा और सीलोन जैसे सभी पड़ोसी हिन्दू देशों से मित्रता कायम करना, (आ) दूसरे देशों के मामलों में न तो अन्तग्रस्त होना और न ही उनमें हस्तक्षेप करना, (इ) सभी सम्भव उपायों द्वारा भारतीय क्षेत्रों को स्वतन्त्र करना और तिब्बत को चीनी आधिपत्य से स्वतन्त्रता दिलाना, जिससे कि वह चीन और भारत के बीच में मध्यवर्ती राज्य (buffer state) बन सके,

का शासन है। किन्तु जिस अर्थ मे आज धर्मनिरपेक्षता को लिया जाता है वह तो मुसलमानो को प्रसन्न करने की नीति है। जनसघ भारतीय सस्कृति, भारत का भारतीय सस्कृति और मर्यादा पर पुनर्निर्माण करने के लिए खडा हुआ है और राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक प्रजातन्त्र की अवसर की समता व व्यक्ति की स्वतन्त्रता के आधार पर स्थापना करना चाहता है। यह व्यक्ति की स्वतन्त्रता और विधि के शासन पर आधारित प्रजातन्त्र मे विश्वास करता है, अतएव यह हिंसापूर्ण उपायो के प्रयोग को पसन्द नही करता।

जनसघ की नीति व्यवहार मे एक ओर कुछ प्रतिक्रियावादी तत्त्वो को और दूसरी ओर साम्प्रदायिक तत्त्वा को बढावा देने वाली प्रतीत होती है। भारत को अखण्ड बनाने की बात वतमान दशाओ मे अव्यावहारिक है। दल ने अपने घोषणा पत्र मे आर्थिक प्रजातन्त्र की स्थापना, प्रशासन के निम्नतम स्तरो पर विकेन्द्रीकरण, शिक्षा पद्धति मे क्रान्तिकारी परिवतन, बेकारी को मिटाने तथा राष्ट्रीय एकता का सुदढ बनाने इत्यादि सराहनीय राजनीतिक आदर्शों को सम्मिलित किया है, किन्तु उसके अधिकतर कायकर्त्ताओ और सदस्या की प्रतिगामी व साम्प्रदायिक मनोवृत्ति के कारण व्यवहार मे यह दल उन आदर्शों की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करेगा, इसमे सन्देह है। चीनी आक्रमण के विरुद्ध जनमत के सुदृढ बनाने और शत्रु का डटकर विरोध करने मे जनसघ ने महत्त्वपूर्ण भाग लिया। मार्च 1971 मे लोकसभा के आम चुनावो पर जनसघ द्वारा प्रकाशित घोषणा पत्र की मुख्य बातो का साराश अग्रलिखित है (1) जनसघ भारत को एक राष्ट्र समझता है और सभी भारतीयो को एक ही जन समुदाय। जातिया, धार्मिक विश्वासो, भाषाओ और प्रान्तो की विविधताये हमारे राष्ट्रीय जीवन की एकता को सुन्दरता और शान प्रदान करती है। जनसघ भारत के प्राचीन विचार—असाम्प्रदायिक राज्य—मे विश्वास करता है। परन्तु जनसघ झूठे धर्म निरपेक्षवाद को स्वीकार नही करता है, जिसमे अधार्मिकता का प्रसन्न करने की नीति से मेल है। (2) जनसघ ने देश मे समता पर आधारित समाज की रचना करने की शपथ ली है, जिसमे किसी भी नागरिक के विरुद्ध जन्म, जाति, वेश या धार्मिक विश्वास के आधार पर कोई भेदभाव नही किया जायगा। (3) जनसघ ने गरीबी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की है। जनसघ सभी व्यक्तियो के लिए पूर्ण रोजगार की योजना बनायेगा। अणु कायक्रम मे सभी शिक्षित व्यक्तियो को काय मिलेगा। अनिवाय प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रो से गावो मे बेकारी दूर होगी। (4) कृषि हमारा सबसे बडा उद्योग है। जनसघ आगामी पाच वर्षो मे खाद्य पदार्थों मे आत्म निर्भरता प्राप्त करेगा। उसका यह भी विश्वास है कि भूमि पर अधिकार उसके जोतने वाले का है। (5) प्रत्येक परिवार के लिए मकान की व्यवस्था की जायगी।

(6) जनसघ समझता है कि उद्योगो के क्षेत्र मे शिथिलता आ गई है। यह उस क्षेत्र मे स्वास्थ्य और नवजीवन को फिर से प्राप्त करने के लिए सभी आवश्यक पग उठायगा। जनसघ उपभोग की वस्तुओ के उद्योग मे लघु और मध्यम दर्जे के उद्योगो को अधिक महत्त्व देगा, जिससे एकाधिकारो का विकास रुकेगा। यह स्वदेशी की भावना को भी पुनर्जीवित करेगा, जिससे कि भारतीय अर्थव्यवस्था सुदृढ बने। जनसघ आर्थिक (और राजनीतिक) दोना ही प्रकार की सत्ता के विकेन्द्रीकरण के पक्ष मे है। (7) यह राष्ट्रीयकृत बैंक उद्योग को एक स्वायत्तता-प्राप्त धन प्राधिकरण (autonomous monetary authority) मे परिवर्तित करेगा, जो छोटे किसानो, दस्तकारो, शिक्षित बेकारो, इन्जीनियरो तकनीकियो और नये व छोटे उद्यम चलाने वालो को ऋण की उचित सुविधायें प्रदान करेगी। यह कर-सम्बन्धी कानूनो को भी सरल बनायगा और बिक्री-कर के स्थान पर उत्पादन महसूल लगायेगा। (8) जनसघ पूर्णतया आत्म निर्भर अर्थव्यवस्था के लिए काय करेगा और सभी विदेशी सहायता का अन्त करेगा। यह विदेशी बैंको का भी राष्ट्रीयकरण करेगा। (9) जनसघ सावजनिक उद्यमो को राजनीतिज्ञो और उच्च सरकारी

शताब्दी वाले व्यक्तिवाद को पुनर्जीवित करना चाहती है। यह समाजवाद की विरोधी और पूजीवाद की समथक है। जवाहरलाल नेहरू क मतानुसार यह स्वतन्त्र उद्योग और व्यापार (Free enterprise) के समथको का राजनीतिक क्षेत्र म प्लेटफाम है।

यद्यपि स्वतन्त्र पार्टी की स्थापना तीसरे आम चुनावो स केवल ढाई वष पूव हुई थी, फिर भी उन चुनावो म इसने काग्रेस और साम्यवादी दल को छोडकर अन्य सभी पार्टियो स अधिक स्थान जीते। लोकसभा म प्राप्त स्थाना तथा इसक उम्मीदवारो को प्राप्त मता की दृष्टियो स्वतन्त्र पार्टी का स्थान तीसरा रहा और जनसघ, प्रजा समाजवादी पार्टी, समाजवादी पार्टी हिन्दू महासभा उससे नीचे रहे। राज्य विधान सभाओ के चुनावा म पार्टी को 207 स्थान प्राप्त हुए जबकि साम्यवादी पार्टी को 201, प्रजा समाजवादी पार्टी को 181, जनसघ को 112 और समाजवादी पार्टी को 62 स्थान मिल। उसके बाद पार्टी ने बिहार, राजस्थान, उडीसा और गुजरात म क्रमश 50, 46, 36 और 26 स्थानो के साथ विरोधी पक्ष (official opposition) का स्थान प्राप्त किया। इस प्रकार 1962 म ही पार्टी की उपलब्धियाँ प्रभावशाली रही। राष्ट्रीय दृश्य पर आने से पूव सत्तारूढ पार्टी के विरुद्ध आवाज केवल वामपथी पार्टी की ओर स आती थी। उसका एक परिणाम यह रहा कि काग्रेस स्वय वामपथी बनती चली गई। जब स्वतन्त्र पार्टी की स्थापना की गई उसके नेताओ का उद्देश्य कदाचित काग्रेस पर वामपथी पार्टी के विरोध मे दक्षिणपथी दबाव डालना था। परन्तु चुनावो म सफलता के बाद पार्टी क नेताओ की दृष्टि ऊपर उठ गई। वे सोचने लगे कि वे काग्रेस को अगले चुनावो पर अधिक गम्भीर चुनौती दे सकेंगे। गुजरात, राजस्थान और उडीसा म उनकी आशा कुछ पूरी हुई। चौथ आम चुनावो म पार्टी ने और अधिक स्थान प्राप्त किये जैसा कि इन आंकडो स स्पष्ट होगा—लोकसभा म 42, आन्ध्र प्रदेश 29, गुजरात 64, मद्रास 30, उडीसा 49, राजस्थान 47, परन्तु बिहार म इसके प्रतिनिधियो की सख्या बहुत कम हो गई। परन्तु 1971 म हुए चुनाव मे अन्य विरोधी दलो की भाति स्वतन्त्र पार्टी को भी बहुत कम समथन मिला।

स्वतन्त्र पार्टी का चुनाव घोषणा पत्र, 1971—इसम अग्रलिखित बातो को ही महत्त्वपूण स्थान दिया गया (1) स्वतन्त्र पार्टी का विश्वास है कि स्थायी प्रजातन्त्र सविधान की पवित्रता पर आधारित होना चाहिए। अत यह आवश्यक है कि सविधान द्वारा न्यायपालिका को प्रदत्त महत्त्वपूण भूमिका और सविधान म समाविष्ट मूल अधिकारो को बिना शत स्वीकार किया जाय और उन्हे कायम रखा जाय। (2) यह दुर्भाग्य की बात है कि देश म कानून और व्यवस्था व्यापक रूप से भग हो रहे है। जनता के जीवन और स्वतन्त्रताओ की कानून और व्यवस्था को प्रभावशाली ढग से लागू करके रक्षा की जानी आवश्यक है। (3) बेकारी की समस्या को हल करने क लिए अग्रलिखित कायक्रम सहायक होगा—(अ) देशभर म बडी जनसख्या को उत्पादक काय म लगाया जाय, (आ) ग्रामीण क्षेत्रो म बनी वस्तुओ के लिए बाजारो का विस्तार किया जाय (इ) देश के विभिन भागो के बीच परिवहन और सचार की सुविधाओ को बढाना, (ई) ग्रामीण क्षेत्रो म खेती के विकास की गति को बढाने के लिए आवश्यक वस्तुओ (much needed inputs) की तेजी से व्यवस्था की जाय, (उ) उपभोग की वस्तुओ स्वचालित गाडियो और अन्य सम्बन्धित उद्योगो के लिए नये विकासशील बाजारो की रचना, और (ऊ) जनसाधारण के जीवन स्तर को ऊचा उठाना। (4) मुद्रा स्फीत (inflation) और बढती हुई कीमतो को रोकने के लिए आवश्यक पग उठाय जायेगे। (5) कृषि भारत का आधारभूत उद्योग है और रहेगा, अत उसे उचित

---

towards liberal democracy This is not surprising because after all human intelligence wins in the end —Masani M R *Congress Misrule and the Swatantra Alternative* p 196

और (ई) राष्ट्रमण्डल की सदस्यता को त्यागना जिसस कि भारत वास्तव म स्वतन्त्र देश बन सके।

(3) भारत को प्रतिरक्षा नीति की अग्रलिखित बाता को सुनिश्चित बनाना चाहिय (अ) भारतीय अस्त्र कानून के स्थान पर दूसरा कानून बनाना, (आ) 18 और 20 वष की आयु के बीच वाले सभी नवयुवका को अनिवाय सैनिक शिक्षा देना, (इ) स्कूलो और कालिजा म विद्यार्थिया को अनिवार्य एन० सी० सी० का प्रशिक्षण देना, (ई) अस्त्र और प्रतिरक्षा उद्योगा का निर्माण करना, (उ) अणुबम तथा अन्य अणु शस्त्र बनाना, और (ऊ) देश क सीमा प्रदेशा म पवतीय और गुरिल्ला युद्ध का प्रशिक्षण देना तथा पाकिस्तान सीमा के साथ 220 मील चौडे सुरक्षा जान की रचना करना।

(4) भाषा सम्बन्धी नीति ऐसे सभी प्रयत्ना का विरोध करन की होगी जो कि हिन्दी का सविधान द्वारा प्रदत्त स्थानो स हटाने के लिए किय जाये। (5) काश्मीर के बारे म अनुच्छेद 370 को रद्द करना, जिसस उस राज्य को विशेष पद प्राप्त हुआ है। (6) विदेशी ईसाई धम प्रचारको तथा विदशी धन के प्रवेश पर कानूनी प्रतिबन्ध लगाना क्योकि धन ही उन्ह अपन काय करने का अवसर प्रदान करता है। (7) सभी अत्यन्त महत्त्वपूण उद्योगो कोयला और लोहा, परिवहन और सचार क साधन तथा ऐस उद्योगा का, जिनका सम्बन्ध युद्ध सामग्री और प्रतिरक्षा शस्त्रा से है, राष्ट्रीयकरण करना। (8) सभी के लिए सम अवसर, कमचारिया उद्योगपतिया व उपभोक्ताओ के बीच उद्योगो स होने वाले लाभा का सम वितरण जिसके लिए उचित नियन्त्रण तन्त्र कायम किया जाय। (9) भूमि के जातने वाले क लिए परिश्रम क पूण फल सहकारी आन्दोलन को प्रोत्साहन देना, सस्ते तथा लम्बी अवधि वाल ऋणा की व्यवस्था। (10) करा म कमी करना, विशेषकर निम्नतर और मध्यम वर्गों तथा छोटे उद्योगपतिया पर।

(6) स्वतन्त्र पार्टी—अगस्त 1959 क आरम्भ म श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी श्री के० एम० मुन्शी, श्री मसानी, श्री एन० जी० रगा आदि नेताओं के नेतृत्व के अन्तगत भारत म एक नई राजनीतिक पार्टी की स्थापना हुई। इस पार्टी का नाम स्वतन्त्र पार्टी है। इसके भूतपूव प्रधान पुराने कांग्रेसी श्री एन० जी० रगा हैं। इस पार्टी की नीति कांग्रेस समाजवादी एव साम्यवादी दल द्वारा समाजवाद के पक्ष समयन के विरोध की है। यह उद्योगा पर राज्य का कम से कम नियन्त्रण चाहती है तथा सरकारी खेती और जोत की भूमि पर सीमा लगाने का विरोध कर रही है। यह सक्षेप म, व्यक्ति के लिए अधिकतम स्वतन्त्रता का समयन करती है और यह राज्य द्वारा कम स कम हस्तक्षेप चाहती है। यह महात्मा गाधी द्वारा प्रस्तावित ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त को स्वीकार करती है। पार्टी के मत म कांग्रेस का नागपुर अधिवेशन पर सहकारी कृषि प्रस्ताव सोवियत सघ म अपनाये गय सामूहिक फार्मों स भिन्न नहीं है। यह प्रस्ताव किसान के भूमि पर स्वामित्व की भावना का विरोधी है और पार्टी का विश्वास है कि सयुक्त कृषि एच्छिक आधार पर व्यवहारिक नही है। स्वतन्त्र दल जोत की भूमि पर सीमा (ceilings) लगाने क विरुद्ध है। पार्टी क नेता वतमान नियोजन प्रणाली के भी विरुद्ध हैं, उनके विचार म इसका परिणाम पूण नियोजन (total planning) होगा। श्री मसानी के शब्दा म उदारवादी तरीके जो आर्थिक स्वतन्त्रता और आर्थिक प्रजातन्त्र है, सामाजिक न्याय, समता, समद्धि और स्वतन्त्रता की ओर राजकीय पूंजीवाद या राज्यवाद से अधिक तेजी स ल जात हैं। विश्व की प्रवृत्ति अब साम्यवाद और समाजवाद स दूर हटने और उदारवादी प्रजातन्त्र की ओर है। यह कोई आश्चय की बात नहीं है क्योकि अन्त म मानव बुद्धि की ही जीत होती है।"[1] आलोचका क अनुसार स्वतन्त्र पार्टी फिर स उभारा

[1] Liberal methods which are economic freedom or economic democracy lead to social justice equality prosperity and freedom much quicker than the methods of State Capitalism or State ism The world trend is away from communism and social sm and

पद नही दिये जायगे। (9) दल का विश्वास ऐसे प्रजातन्त्र म है जो सम्पत्ति के स्वामित्व पर आधारित है। (10) दल का न तो पूजीवादी पद्धति म विश्वास है और न ही साम्यवादी या समाजवादी पद्धति मे। इसका विश्वास तो बीच के गाधीवादी माग म है। (11) दल प्रजातन्त्र क रक्षण और सुदृढता का समथक है, अथवा कानून के शासन म विश्वास करता है। (12) चूकि वतमान ढग की ससदात्मक पद्धति असफल रही है, अत ससदात्मक पद्धति के बजाय अससदात्मक नमूने की सरकार सघ राज्यो म बन। (13) दल का विश्वास छोटी सम्पत्ति के स्वामित्व म है। (14) दल चाहता है कि कृषक परिवार के भूमि पर अधिकार की सीमा 75 एकड है या होगी। (15) दल कृषि के उत्पादन को प्रथम प्राथमिकता देगा। (16) भूमि पर जमीदारी की प्रथा समाप्त की जाय। (17) खाद्य अनाजा म राजकीय व्यापार हो। (18) कुछ अपवादो क अधीन औद्योगिक सरचना की ऊपर वाली नोक (apex) तो बडे उद्योग बनायेंगे किन्तु उसका आधार लघु और कुटीर उद्योग होगे, अर्थात विकास की प्रक्रिया नीचे से ऊपर की ओर चलगी। (19) छोटे खेतो और छोटी फर्मा या उद्योगा म सहकारिता के सिद्धान्त से सम्पक स्थापित किया जायगा। (20) जबकि दल श्रमिका के प्रति बुरे व्यवहार और उनके शोषण की आज्ञा नही देगा यह श्रम नीति को इस प्रकार ढालेगा कि औद्योगिक उत्पादन की कीमतें न बढें। (21) ज— पर आधारित जाति व्यवस्था ने हमारे समाज को अलग अलग टुकडो म विभाजित कर दिया ह और यही अस्पृश्यता की समस्या के लिए उत्तरदायी है, अत इसके बन्धनो को सभी प्रकार स तोडा जायगा। यद्यपि दल आरक्षण के सिद्धान्त को बुरा समझता है फिर भी पिछडे हुए वर्गों के लिए गजेटिड पदा म 25% आरक्षित करेगी। (22) स्वास्थ्य सुधार और शिक्षा का प्रसार किया जायगा। परन्तु दल इस बात को पसन्द नही करता कि विश्वविद्यालय और अन्य सस्थायें राजनीति म भाग ल। (23) दल सन्तति निरोध और क्रमिक मद्य निषेध का समथन करता है। (24) सभी नागरिको के प्रति सम व्यवहार होना चाहिए। (25) राष्ट्रीय हित मे देश को एलाये स करने चाहिएँ, अपनी सशस्त्र शक्ति को बढाना चाहिए अणु शस्त्रो से भी अपने को सुसज्जित करने का समय आ गया है। दल उन सभी क्षेत्रा को वापिस लगा जो विदेशी आधिपत्य के अधीन हैं। (26) दल लालबहादुर शास्त्री की मृत्यु के वास्तविक कारण की जाँच करायगा।

जहाँ तक दल क लक्ष्यो और कायक्रम का सम्बन्ध है, उसम कोई दोष नही प्रतीत होता। दल के नेता भी पुराने अनुभवी काग्रेसी कायकर्त्ता हैं, उनम से बहुतो न देश के राष्ट्रीय आन्दोलन म महत्त्वपूण भाग लिया। परन्तु उनम जहाँ एक ओर वे काग्रेसी हैं जिन्होने काग्रेस को चुनावा से स पहल छोड दिया था, दूसरी आर ऐस भी काग्रेसी हैं जिन्होने मन्त्रि पदा को पाने के लिए काग्रेस स चुने जाने के बाद त्याग पत्र दिया। इसलिए कुछ आलोचक भा० क्रा० दल को भ्रष्ट काग्रेसी दल कहते हैं। दल की स्थापना क समय ऐसा लगता था कि यह एक महत्त्वपूण अखिल भारतीय सगठन का रूप शीघ्र ही पायेगा परन्तु कुछ ही समय बाद बिहार व उत्तर प्रदेश क मुख्य मन्त्रियो को त्याग पत्र देना पडा, जिसक परिणामस्वरूप दल के समथको की सख्या म कुछ कमी आई। प० बगाल म श्री अजय मुकर्जी व हुमायू कबीर और उनके साथिया ने दल को छोडकर अलग अलग सगठन बनाये। हरयाणा म हुए मध्यावधि चुनावा म दल का केवल एक ही प्रतिनिधि चुना गया। वास्तव म, दल म सम्मिलित विभिन्न राज्या के नता व कायकर्ता अपने अपने राज्य की राजनीति स अधिक प्रभावित हैं और व व्यक्तिक तथा अपने गुटा क लाभ हेतु कभी भी दल को छोड सकत हैं। अब भी दल का सगठन केवल उत्तर प्रदेश म ही सुदृढ बन पाया है।

(8) रिपब्लिकन पार्टी अनुसूचित वग सघ (Scheduled Castes Federation)— इसक सस्थापक और प्राण स्वर्गीय डा० भीमराव अम्बेडकर थे, जिन्होने हिन्दू समाज द्वारा अछूत कहे जाने वाले लोगो के प्रति होने वाले दुर्व्यवहार की प्रतिक्रिया-स्वरूप इस सगठन को जन्म

प्राथमिकता दी जायगी। पार्टी खेतो पर किसानो के स्वामित्व और पारिवारिक कृषि के पक्ष मे है। साथ ही भूमि सुधारो को तेजी के साथ पूरा तथा कार्यान्वित किया जाना आवश्यक है। (6) वेकारी और वढती हुई कीमतो की समस्या का हल उत्पादन म वृद्धि है। भारतीय अथव्यवस्था का विस्तार, कृषि व्यापार या उद्योग सभी क्षेत्रो मे तभी हो सकता है जव सरकारी नीतियो द्वारा कडे परिश्रम और साहस के लिए प्रेरणा की व्यवस्था हो, जिसका कि इस समय अभाव है। (7) भारत जैसे देश म अल्पसख्यका व पिछडे हुए वर्गो के प्रति व्यवहार का बडा महत्त्व है। इस सम्बन्ध मे सविधान के प्राविधानो को प्रभावी ढग से लागू किया जायगा। (8) निष्कर्ष—स्वतन्त्र पार्टी भारत की जनता से अपील करती है कि वह शासक काग्रेस को अस्वीकार और पराजित कर द, क्योकि (अ) उसने सविधान को समाप्त करने का प्रयत्न किया है, (आ) वह साम्यवादियो से सहायता ले रही है, जिनकी निष्ठा विदेशो के प्रति है, (इ) वह देश म कानून और व्यवस्था कायम करने मे असफल रही है, और (ई) उसने समय की दृष्टि से अनुपयुक्त और आत्मघातक आर्थिक नीतियो का पालन किया है, जिनके कारण तेज उन्नति नही हो पाई है।

(7) भारतीय क्रान्ति दल (B K D)—1967 मे हुए आम चुनावो के बाद बनी यही एक महत्त्वपूर्ण अखिल भारतीय पार्टी है। इसकी स्थापना 1967 के मध्य मे हुई, जबकि उत्तर प्रदेश, बिहार, प० बगाल और मध्य प्रदेश के पुराने काग्रेसी नेताओ ने, जो कि काग्रेस को चुनावो से पूर्व छोड गये थे या जिन्होने चुनावो के बाद काग्रेस से त्याग पत्र दिये, एक सयुक्त अखिल भारतीय राजनीतिक दल बनाने का निर्णय किया। इसके सस्थापको मे तत्कालीन बिहार के मुख्य मन्त्री श्री महामाया प्रसाद सिन्हा, प० बगाल के मुख्य मन्त्री श्री अजय मुकर्जी, उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री श्री चरण सिंह, श्री कुम्भा राम आर्य (राजस्थान), ला० जगत नारायण (पजाब), प्रो० हुमायू कबीर (प० बगाल) आदि उल्लेखनीय है। दल के चोटी के नेताओ ने, जिनकी बैठके अक्टूबर 1967 म लखनऊ म हुई, नई पार्टी का नाम 'भारतीय क्रान्ति दल' रखा। दल के जनरल सेक्रेटरी श्री डी० के कुन्टे (मध्य प्रदेश) ने दल के उद्देश्यो और लक्ष्यो के विषय म कहा कि 'यह प्रजातन्त्र, राष्ट्रवाद, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के आधारभूत मूल्यो म भारतीय जन के विश्वास को फिर से कायम करने का प्रयत्न करेगा।' दल के प्रारूप सविधान को इन्दौर मे 28 अक्टूबर को प्रकाशित किया गया। उसम कृषि के बारे म कहा गया कि दल बडे फार्मो की अपेक्षा छोटे फार्मो को प्रोत्साहन और अधिमान्यता (preference) देगा और ऐसी कृषि अर्थव्यवस्था को जिसमे स्वतन्त्र किसान आपस मे सहकारिता के सिद्धान्त से सम्बन्धित हो। कारखानो के उद्योगो के बारे म कहा गया कि 'दल ऐसी अर्थव्यवस्था की स्थापना करेगा जिसम इस वात का ध्यान रखा जाय कि देश म पूजी की कमी है, प्रति व्यक्ति आय बढाने की आवश्यकता है, वेकारी और अर्द्ध वेकारी को दूर करना, तथा मनुष्य के मनुष्य द्वारा शोषण से बचना।

फरवरी 1971 म प्रकाशित चुनाव घोषणा पत्र मे निम्नलिखित बातो को सम्मिलित किया गया है (1) इसका उद्देश्य ईमानदार और कार्यकुशल प्रशासन है। (2) जबकि दल यह चाहता है कि सार्वजनिक सेवको को अच्छे वेतन दिये जायें, यह उनम अनुशासन पर जोर देगा। (3) करो के वसूल करने के तन्त्र को अधिक शुद्ध और कार्यकुशल बनायेगा और प्रशासन व्यय म बचत करेगा। (4) दल का प्रस्ताव है कि उच्च अधिकारियो मे भ्रष्टाचार को रोकने के लिए विशिष्ट प्रक्रियायें निकाली जायेगी और विशेष अभिकरण स्थापित किये जायेंगे। (5) पूजीवाद से कोई समझौता नही किया जायगा। (6) कानून और व्यवस्था को बनाये रखा जायगा। (7) न्यायपालिका के सगठन म सुधार किया जायगा, किन्तु उसकी स्वतन्त्रता को कायम रखा जायगा। (8) गवर्नरो की स्वतन्त्रता बनाये रखने के लिए उन पदो से निवृत्त होने के बाद उन्हे कोई अन्य

जीवन म कम से कम सरकारी हस्तक्षेप, और (इ) कानून द्वारा एक केन्द्रीय प्रशासन सुधार समिति की स्थापना। (8) वदेशिक नीति—देश की प्रतिरक्षा को सुदृढ वनाया जाये और वदेशिक नीति म परिवतन किया जाये। भारत को ऐसे पडोसी और अन्य देशो से मित्रतापूण सम्बन्ध वढाने चाहियें जो कि चीन के विरुद्ध भयानक शक्ति का गठन कर सकें। भारत और पाकिस्तान के बीच सौहाद्रपूण सम्बन्ध स्थापित होने चाहिएँ, इस उद्देश्य से दोनो देशो के बीच व्यापार और आर्थिक सहयोग को फिर से कायम किया जाये। (9) कल्याणकारी राज्य म प्रत्येक व्यक्ति के साथ न्याय होना चाहिए, श्रमिको के सम्बन्ध म ऐसी नीनि का विकास किया जाये कि उनके लिए सामाजिक न्याय को सुनिश्चित वनाया जा सके।

(9) **अखिल भारतीय मुस्लिम मजलिसे मुशावरात**—इसकी काय समिति न जुलाई 1966 म डा० सैयद महमूद (वरिष्ठ काग्रेसी नेता तथा ससद के सदस्य) की अध्यक्षता मे चुनाव घोषणा पत्र स्वीकार किया। उसम कहा गया था मजलिस का जन्म लगभग 2 वप पूव लखनऊ म हुआ, जवकि भारत के कुछ पूर्वी तथा केन्द्रीय क्षेत्रा मे मुसलमानो को खुली ववरता का निशाना वनाया गया था। दुर्भाग्यवश सरकार ने प्रतिगामी दशन का अनुमोदन किया, जिससे मुसलमाना को भारत म अपने भविष्य के वारे म सन्देह होने लगा। उन मुसलमानो ने यह अनुभव किया कि भारतीय मुसलमानो के लिए उस समय दो ही माग खुले थे—या तो वे पूण निराशा म पाकिस्तान को भाग जात, या आत्म सम्मान और मान की सम्पूण भावना को तिलाजली देकर तत्कालीन दशाओ के सामने झुक जाते। परन्तु इन दोनो निराशपूण मार्गों म से किसी एक को भी न अपनाकर मुसलमाना ने रोना और शिकायत करना वन्द किया और निश्चय किया कि वे अपनी खोई शक्तियो को फिर से प्राप्त करें। लखनऊ सम्मेलन पर भारतीय मुसलमानो को यह याद दिलाया गया कि उनका कत्तव्य केवल अपने को ही सुधारना और अपनी समस्याय ही हल करना न था वरन् उन्हे कुरान ने यह सिखाया है कि वे दूसरो की भलाई के लिए भी काय करें। अत' उनका यह कत्तव्य है कि वे जाति, धामिक विश्वास, मूल वश या रग का भेद न करते हुए प्रत्यक व्यक्ति की भलाई के लिए काय करें और यदि आवश्यकता पडे तो मानवता के लिए अपना जीवन उत्सग कर दें।

एक प्रश्न यह उठता है कि शीघ्र ही चौथे चुनाव होने को थे, उनम मजलिस को क्या भाग लेना चाहिए। सामान्य रूप से मुसलमाना न यह अनुभव किया कि सत्तारूढ़ दल (काग्रेस) गत 19 वर्षों म अपने उच्च सिद्धान्ता का पालन करन म असफल रहा था और मुसलमानो की शिकायतो को दूर करने म अपनी वह सच्चाई को सिद्ध नही कर सका था। मुसलमान अव ऐसा अनुभव करते हैं कि काग्रस पार्टी का उदासीनता का रुख कदाचित इस भ्रम के कारण वना है कि मुसलमाना ने अपने को सदा के लिए काग्रस से वाँध लिया है। मजलिस यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि भारतीय मुसलमान अपन को किसी पार्टी का दास नही मानते और किसी पार्टी को यह नही मान लेना चाहिए कि व तो उसका समर्थन करेंगे ही। वे जानत हैं कि उन्हें अपने मताधिकार का प्रयोग देश के तथा अपने हित म किस प्रकार करना चाहिए। इन वातो पर प्रारम्भिक विचार विमश करन के वाद मजलिस ने अग्रलिखित घोषणा पत्र तयार किया शिक्षा पद्धति का सुधार—इसका कम से कम तीन वातो म सुधार होना चाहिए—(1) नतिक शिक्षा और अनुशासन इनके प्रमुख सिद्धान्तो म से एक हो। (2) इतिहास की पुस्तकें जिन्हें हमारे स्कूलो म पढाया जाता है, इस प्रकार लिखी गई हैं कि वे देश के विभिन्न समुदायो विशेषकर हिन्दू और मुसलमानो के वीच अविश्वास और पारस्परिक घृणा की भावनायें पदा करती हैं। अत उनका सुधार करना आवश्यक है। (3) भारत जसे देश म, जहाँ अनक धर्मों का जन्म और प्रारम्भिक विकास हुआ, यह उचित ही है कि सरकार द्वारा स्वीकृत पाठ्यक्रम विशेषकर प्रारम्भिक और माध्यमिक स्तरो पर धमनिरपेक्षीय हो और प्रत्यक समुदाय अपनी धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था

दिया था । उन्होने मुस्लिम लीग के नमूने पर दलित वर्गों के लिए पृथक चुनाव पद्धति की मांग की थी, जिसे साम्प्रदायिक पचाट म मान्यता मिली थी, किन्तु गांधीजी के आमरण अनशन ने उसे पूना पैक्ट क रूप म सशोधित कराने म असफलता पाई थी । डा० अम्बेडकर न अस्पृश्यता-निवारण उपायो म कभी विश्वास नही किया । अपन स्वर्गवास स पूव डा० अम्बेडकर ने बौद्ध धम स्वीकार कर लिया था और अपने अनुयायियो को भी ऐसा ही करने का परामश दिया था । राजनीतिक क्षेत्र म इस सघ का काग्रेस विरोधी नीति म सरकार से सभी प्रकार का प्रोत्साहन मिला, किन्तु फिर भी यह दलित वर्गों म जनप्रिय न बन सका ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद डा० अम्बेडकर भारत सरकार क कानून मन्त्री बने और सविधान के निर्माण काय म उनका महत्त्वपूण भाग रहा । उनक जीवन काल के अन्तिम वर्षों म दलित वग सघ का महत्त्व कम हो गया और उसका सगठन भी क्षीण बन गया । अपनी मृत्यु स पूव डा० अम्बेडकर न रिपब्लिकन पार्टी की स्थापना की । इसका ध्येय ससद प्रजातन्त्र (Parliamentary Democracy) मे है । यह राज्य के धमनिरपेक्षीय स्वरूप की समथक दल की नीति उपर्युक्त सिद्धान्तो को कायरूप म बदलना होगी । उसकी नीति किसी विशिष्ट सिद्धान्त या विचारधारा से बँधन की नही रहगी । पार्टी सामाजिक और आर्थिक विकास की किसी भी एसी योजना को स्वीकार करन क लिए, जो कि इसक सिद्धान्तो स मल खाती हो तयार रहगी । जीवन के बारे म इसकी दृष्टि विशुद्धत बुद्धिवादी, आधुनिक, अनुभववादी और शक्षिक रहगी । पार्टी का कायक्रम 1967 के चुनाव घोषणा-पत्र के आधार पर निम्नलिखित है

(1) कृषि—कृषि का विकास तथा दश को खाद्यान्नो के उत्पादन म आत्म निभर बनाने के लिए ये पग उठाये जायें—(अ) भूमि का राष्ट्रीयकरण, (आ) गहन खेती (intensive cultivation), (इ) सिंचाई, (ई) बेकार पडी भूमि को कृषियोग्य बनाना, (उ) जिस भूमि पर कृषि न हो सक वहाँ वन लगाना । (2) खाद्य समस्या—इसे हल करने के लिए अग्रलिखित पग उठाये जायें—(अ) खाद्य जोनो का उन्मूलन, (आ) प्रतिरोधक स्टॉक (buffer stock), (इ) अनाज एकत्रित करने का एकाधिकार (monopoly procurement) तथा थोक व्यापार का राष्ट्रीयकरण, (ई) लाभकारी मूल्य, (उ) ऋण प्राप्त करने की सुविधायें, (ऊ) फसल का बीमा, और (ए) उचित मूल्य की दूकानें । (3) सावजनिक या निजी क्षेत्र—निधनता का उपचार अधिक उत्पादन है न कि उत्पादन का ढग । अत इस विषय म दल किसी विशिष्ट सिद्धान्त या ढग से नही बँधा है । जहाँ कही राष्ट्रीय उद्यम सम्भव और आवश्यक हो, दल उसका समथन करेगा और जहाँ कही निजी उद्यम सम्भव है तथा राष्ट्रीय उद्यम का होना आवश्यक नही है वहाँ निजी उद्यम को जारी रहन दिया जायेगा । (4) जनसख्या की वद्धि को रोका जाये—पार्टी परिवार नियोजन कायक्रम को प्राथमिकता देगी जिससे कि आगामी 10 वर्षों म ज म-दर आधा रह जाये । (5) कमजोर समूहो का उत्थान—पार्टी विशेष रूप ऐसे समूहो के लिए चिन्तित है, अत वह उनके लिए सभी मोर्चों पर युद्ध करेगी तथा पिछडे हुए वर्गों, अनुसूचित जातियो, अनुसूचित जनजातियो (tribes) और बौद्ध बनने वाले लोगो को शिक्षा, सेवाओ व आर्थिक कल्याण के मामलो मे ऊपर उठायेगी । (6) भाषावाद की समस्या—(अ) विभिन्न राज्यो के बीच सीमा विवादो को भाषा के आधार पर हल किया जायेगा । (आ) विभिन्न भाषाओ के बीच सम्बन्ध जोडने वाली भाषा (link language) के रूप मे अग्रेजी का स्थान हिन्दी ही ले सकती है । (इ) हिन्दी के साथ अन्य राष्ट्रीय भाषाओ का भी विकास किया जाये । (ई) उर्दू का प्रश्न केवल भाषा का प्रश्न है । उसके विकास के लिए प्रत्येक अवसर दिया जायेगा । (7) प्रशासन की शुद्धता—भ्रष्टाचार को रोकने तथा प्रशासन के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए ये पग उठाये जाये (अ) भ्रष्ट लोगो के विरुद्ध कडी कायवाही, (आ) अनावश्यक कानूनो और प्रतिब धो को हटाकर

थी । उसके लिए कई कारण उत्तरदायी थे, किन्तु मुख्य कारण यह था कि डी० के० के नेता, ई० पी० रामास्वामी नैकर (E P Ramaswami Naikar) ने अपनी वृद्धावस्था म पार्टी की एक 25 वर्षीया सदस्या से विवाह कर लिया था, जिसे नय दल के बनाने वालो ने बहुत नापस द किया । उन लोगो ने डी० के० को छोड दिया, परन्तु वे अपने साथ डी० के० की बहुत सी नीतियाँ व कायक्रम लाये और उन्होने 15 सितम्बर 1949 को नय दल की स्थापना की । आरम्भ स 1957 तक डी० एम० के० ने आम चुनावा म भाग नही लिया, इसने 1957 के आम चुनावो में प्रथम बार भाग लिया ।

जब डी० के० के सदस्या ने नय दल की स्थापना की थी, उनका राजनीतिक आदश एक पृथक द्रविड राज्य (Dravidian State) को प्राप्त करना था । उनका यह विश्वास था कि भारत के चार दक्षिणी राज्य—तामिलनाडु (मद्रास), आध्र, केरल और कर्नाटक अपनी उत्पत्ति व सस्कृति म द्रविड हैं । डी० एम० के० को अपने कायक्रम मे काफी सफलता मिली, यहा तक कि सरकार को डी० एम० के० की गतिविधियो को दबाने के लिए सविधान म सशोधन करना पडा तभी पृथकतावादी कायक्रम रुक सका । 1962 म चीनी आक्रमण के बाद डी० एम० के० न पृथकतावादी प्रचार को स्थगित कर दिया और सरकार तथा भारतीय अखण्डता का समथन किया । गत 6–7 वर्षों मे डी० एम० के० की शक्ति और लोकप्रियता म अत्यधिक वद्धि हुई । 1962 क आम चुनावा मे डी० एम० के० ने मद्रास विधान सभा के कुल 250 स्थानो म से 50 स्थान प्राप्त किये थे, यद्यपि उसके उम्मीदवारा को 30 लाख मत मिले थे और काग्रस को 50 लाख मत मिले थे । उससे पूव 1957 म डी० एम० के० ने केवल 15 स्थान प्राप्त किये थे । इस प्रकार 5 वष मे उसके सदस्यो की सख्या तीन गुनी से अधिक हो गयी थी ।

डी० एम० के० के नेता और सदस्य भारत मे ही रहना चाहते है, पर तु अ य देशवासियो को भी उ हे भारतीय समझना चाहिए । स्व० अ नादुराई के मतानुसार यह तभी सम्भव हो सकेगा जबकि सरकारी भाषा नीति को पूणतया त्याग दिया जाये । यदि हि दी को राजभाषा बनाया जाता है तो दक्षिण के लोग जिनकी अपनी भाषा धनी है, उसे स्वीकार न करेंगे । उनका यह विश्वास है कि हि दी भाषा का साम्राज्यवाद (Hindi imperialism) है । राष्ट्रीय एकीकरण केवल एक भाषा को सम्पूण भारत की राजभाषा बनाने से प्राप्त न हो सकेगा, वरन् सभी राज्य स्तर की भाषाओ को राजभाषा बनाने स ऐसा हो सकता है । उ हे सम पद दिया जाये और जब तक ऐसा हो अग्रेजी को रखा जाये । डी० एम० के० का विश्वास एकता मे है, एकरूपता म नही (Unity but not uniformity) । विविधता मे एकता (Unity in diversity) को प्राप्त किया जा सकता है विभिन्न राज्यो की सस्कृतियाँ को समझकर । डी० एम० के० चाहती है कि एक सस्कृति के लोगा को समझें । माच 1971 म लोकसभा व तामिलनाडु की विधान सभा क लिए आम चुनाव हुए । उनमे दल को बडी शानदार विजय प्राप्त हुई । उस अवसर पर प्रकाशित घोषणा पत्र मे सम्मिलित मुख्य बातें निम्नलिखित है

(1) डी० एम० के० का ध्येय ऐस समाजवादी समाज की स्थापना है जो वैज्ञानिक युग के उपयुक्त हो । अत यह तामिलनाडु व भारत म अपने समान विचार वाली शक्तियो से सहयोग करेगी । साथ ही यह तमिल विरासत तमिल भाषा और तमिल परम्परा की रक्षा करेगी । जहा तक तमिलनाडु का सम्ब ध है, इसकी भाषा नीति तमिल और अग्रजी को इस प्रकार स साथ साथ रखने की होगी कि वे उपयोगी और फलदायक सिद्ध हो । (2) यह दल अखिल भारतीय आधार पर राज्यो के लिए स्वायत्तता आ दोलन के लिए समथन प्राप्त करेगा । (3) औद्योगिक क्षेत्र म दल कुछ बडे और मध्यम उद्योगो के लिए सयुक्त क्षेत्र (joint sector) की पद्धति को काय रूप देगा । इसके द्वारा सरकार, निजी क्षेत्र और श्रमिको की त्रिदलीय साझेदारी की रचना की

करे। चुनाव पद्धति मे परिवतन की आवश्यकता—वतमान एक सदस्यीय चुनाव पद्धति के स्थान पर आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति को अपनाया जाये। यह पद्धति विश्व के एक दजन से अधिक देशो मे प्रचलित है और सफलतापूवक चल रही है।

(4) वैयक्तिक कानून (Personal Law) को सरक्षण—हमारे देश मे विभिन्न धार्मिक समुदाय और मतावलम्बी समूह रहते हैं, अत यह बहुत ही महत्त्वपूण है कि उनके वैयक्तिक कानून को सरक्षण प्रदान किया जाये, यदि सविधान का कोई अनुच्छेद उसम बाधा डालता हो तो उसे सशोधित किया जाये। मातृ-भाषा का परिरक्षण (preservation) किया जाय—यह एक मा य सिद्धा त है कि मातृ भाषा ही शिक्षा का माध्यम हो। हमारा विश्वास है विहार, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदश, आन्ध्र प्रदेश और मसूर मे जनसख्या के काफी वडे भाग की मातृ भाषा उर्दू है, अत इन राज्यो म उर्दू को दूसरी भाषा का पद मिलना चाहिए और उर्दू बोलने वालो को स्कूलो म उर्दू पढाये जाने की सुविधाये प्राप्त होनी चाहिएँ। अल्पसख्यक मण्डली (Minority Board)—अल्पसख्यको की समस्याओं को हल करने के लिए तथा उनकी शिकायतो को दूर करने के लिए एक अल्पसख्यक मण्डली का गठन किया जाये, उसम अल्पसख्यको के विश्वास प्राप्त व्यक्ति सदस्य हो। शिक्षण सस्थायें—यह हमारा आधारभूत कत्तव्य है कि हम भारत के किसी समूह या समुदाय द्वारा अपने वालको की शिक्षा के लिए स्थापित सस्था के मूल उद्देश्यो व लक्ष्यो के परीक्षण की प्रतिरक्षा करे। ऐसी सस्थाओ म अलीगढ मुस्लिम युनिवर्सिटी, बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी, शान्तिनिकेतन, जामिया मिलिया और गुरुकुल कागडी उल्लेखनीय है। भारत के मुसलमानो न अलीगढ मुस्लिम युनिवर्सिटी के वारे मे भारत सरकार की नीति की खुले रूप मे नि दा की है। वे इस बात को फिर दोहराते है कि वे इस विश्वविद्यालय के अल्पसख्यक स्वरूप और परम्पराओ (minority character and traditions) को बचाने के लिए अपना सघप जारी रखेगे।

(10) द्रविड मुनेत्र कजगम (D M K)—द्रविड आन्दोलन, वास्तव मे, हिन्दूवाद के विरुद्ध एक सामाजिक धार्मिक विद्रोह है, यह उन शूद्रों की हीनता की मनोग्रथि (inferiority complex) को आक्रामक और हिंसापूण प्रकटन है, जिनमे पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव अधीन आत्मचेतना जग गई है और जो अपनी बहुसख्या की राजनीतिक सुप्त शक्ति को अनुभव करते है। द्रविड आन्दोलन के समथको का विश्वास है कि वे द्रविड अर्थात् उत्तर के आर्यो से भिन्न मूलवश के लोग है और उनकी अपनी सस्कृति है। उनके मतानुसार ब्राह्मण अब्राह्मण से भिन्न जाति के वशज है, अर्थात् वे आय जाति के वशज है। पद दलित द्रविड अ-ब्राह्मण और सताने वाल आयन-ब्राह्मण के बीच सास्कृतिक अन्तरो को ही दो प्रजातियो (two races) के सिद्धान्त का रूप दे दिया गया है।[1]

कुछ लोग डी० एम० के० का डी० के० समझते हैं, वास्तव म, दूसरे सगठन का मुख्य कायक्रम इस समय सामाजिक पुनर्निर्माण है और जहा तक उसकी राजनीति का सम्वन्ध है, उसन 1967 से पूव शासक दल काग्रेस से मेल कर लिया था। डी० एम० के० के बनन से पूव उसके अधिकतर सदस्य, मद्रास के वतमान मुख्य मन्त्री सहित, डी० के० के सदस्य थे परन्तु 1949 में [illegible] उसका एक काफी वडा अग उससे अलग हो गया था और उन्हाने डी० एम० के० को [illegible]

[1] The Dravidian movement is a socio-religious revolt against [illegible] of social life it represents it is an aggressive and violent man[illegible] complex of the *sudras* who under the influence of western-ori[illegible] self conscious and also realize the political potentiality of [illegible] Brahmins are racially different from non Brahmins sin[illegible] the Aryan race —Balsundaram S N The Dravidian [illegible] in *State Politics in India* (edited by Iqbal Narain) [illegible]

पदार्थों म राजकीय व्यापार का समर्थन किया जायगा। (2) दल चाहता है कि पंजाब म भारी उद्योगो को स्थापित किया जाय। साथ म मध्यम श्रेणी और लघु उद्योगो को भी प्रोत्साहन दिया जायेगा। (3) शहरी सम्पत्ति पर सीमाएँ लगाई जायेंगी और निर्धन व मध्यम वर्गों के लिए सरकार भूमि खरीदेगी और बिना लाभ उन्हें मकान बनाने के लिए स्थान देगी। (4) यह प्रयत्न करेगी कि संसद बेकारी के लिए बीमा योजना स्वीकार करे। (5) दल एकाधिकारी उद्योगो के विकास का विरोध करेगा। (6) दल श्रमिको व खेतिहर मजदूरो के लिए आवश्यकता पर आधारित न्यूनतम वेतन की व्यवस्था के लिए कार्य करेगा। (7) दल बाल कल्याण पर विशेष ध्यान देगा। (8) हरिजनो और अन्य पिछडे हुए वर्गों के भाग्य को सुधारने के लिए तेजी से पग उठाये जायेंगे। (9) दल धर्मनिरपेक्षवाद म विश्वास करता है और यह अल्पसंख्यको के हितो की रक्षा करेगा। (10) राष्ट्रीय सम्पर्क भाषा के रूप म हिन्दी का विकास किया जायगा।

(12) मुस्लिम लीग—इस दल को, जिसने द्वि राष्ट्र के सिद्धान्त पर भारत का विभाजन कराया, हमने अन्त म रखा है। इस दल के विकास की विस्तृत विवेचना तो पूर्वगामी अध्यायो म यथा स्थान की जा चुकी है, फिर भी चूंकि यह पाकिस्तान के निर्माण के बाद अभी तक भारत म जीवित है अत इसके विषय म कुछ कहना आवश्यक है। अखिल भारतीय मुस्लिम लीग का नाम शेष है, किन्तु इसका संगठन प्राय समाप्त हो चुका है, फिर भी दक्षिण म विशेषकर मालाबार प्रदेश म इसका संगठन कुछ सक्रिय है। पहले आम चुनावो म केरल मे कुछ स्थानो पर इसने अपने उम्मीदवारो को खडा किया और चुनावो के प्रश्न पर इसमे व प्रजा समाजवादी दल म गठबंधन हुआ। दूसरे आम चुनावो म साम्यवादी दल की जीत के बाद केरल म साम्यवादी मन्त्रिमण्डल बना, परन्तु कुछ ही महीनो के बाद सभी विरोधी दलो ने मिलकर वहाँ एक सत्याग्रह आन्दोलन चलाया, जिसके फलस्वरूप वहाँ राष्ट्रपति का शासन स्थापित हुआ। वहाँ फिर से चुनाव हुए जिनम कांग्रेस, प्रजा समाजवादी दल व मुस्लिम लीग ने मिलकर भाग लिया और उनकी जीत हुई। मुस्लिम लीग का कोई प्रतिनिधि मन्त्रिमण्डल म तो नही लिया गया, किन्तु उसके एक प्रतिनिधि को विधान सभा का अध्यक्ष चुना गया। आगे चलकर कांग्रेस ने मुस्लिम लीग से, साम्प्रदायिक होने के कारण सम्बन्ध तोड लिया। 1967 म हुए चुनाव म मुस्लिम लीग ने केरल विधान सभा के कुल 133 स्थानो म से 14 स्थान प्राप्त किये। मार्च 1971 म लोकसभा व केरल विधान सभा के लिए चुनावो से पूर्व नई (शासक) कांग्रेस और मुस्लिम लीग ने आगामी चुनावो म सहयोग की नीति अपनाई। मुस्लिम लीग के नेताओ ने उसे फिर से अखिल भारतीय संगठन के रूप म पुनर्जीवित करने के प्रयत्न किये और उत्तर प्रदेश, बिहार आदि कई राज्यो म उसके संगठन बने परन्तु चुनाव मे लीग को विशेष सफलता नही मिली।

भारत म मुस्लिम लीग जैसे संगठन के लिए अब कोई स्थान नही है। भारत के मुसलमानो को सम्प्रदायवादी संगठन की मनोवृत्ति को छोडकर सच्चे हृदय से अन्य राजनीतिक दलो मे भाग लेना चाहिए। अनेक मुस्लिम लीगी अन्य दलो म विशेषकर कांग्रेस म मिल गये हैं। किन्तु यह कहना कि उन सभी के मत और हृदयो म वास्तविक परिवर्तन हो गया है, कठिन है। यदि अभी तक उनके मन और हृदय साम्प्रदायिकता या भय से भरे है तो उनका परित्याग करना चाहिए और भारत के प्रति अपनी निष्ठा व सेवा से अन्य वर्गों के पीछे न रहना चाहिए। अन्त म, यह कहना शेष है कि भारत ने साम्प्रदायिक दलो के विकास से पहले ही बडी हानि उठाई है, अत स्वतन्त्र भारत म ऐसे दलो का बना रहना खतरे से पूर्ण है। साम्प्रदायिकता को उभारा देने वाले दलो व तत्वो का अन्त करने के लिए सरकार को सभी आवश्यक व उचित पग उठाने चाहिएँ।

1971 के बाद—1971 म लोकसभा के लिए चुनाव हुए। उनमे नई (शासक) कांग्रेस को लोकसभा म 350 स्थान प्राप्त हुए। केन्द्र म फिर एक बार कांग्रेस की प्रधानता कायम हुई।

जायगी । (4) यह एक कृषि उत्पादन परिषद् स्थापित करना चाहता है । (5) समाजवादी समाज में पिछड़े हुए वर्गों और दलित वर्गों के लिए आवश्यक सुविधाओं की व्यवस्था की जायगी । (6) डी० एम० के० यह अनुभव करती है कि हिन्दी के प्रभुत्व को रोकना और तमिल का विकास करना इसके जन्म का कारण और प्रयोजन ही है । (7) जब पार्टी भारतीय एकीकरण और पड़ोसी राज्यों के साथ एकीकरण चाहती है, उसने 'हुमवती' जैसे बाँधों के निर्माण के विरोध करने का पक्का सकल्प किया है, यदि वे तमिलनाडु के हितों पर कुप्रभाव डालने वाले हैं । (8) डी० एम० के० ने शपथ ली है कि यह कड़ा परिश्रम करने वाले किसानों, औद्योगिक श्रमिकों, वाल बनाने वालों, धोबी का काम करने वालों तथा सर्वहारा वर्ग के अन्य विभागों तथा समाज के निम्न स्तरों पर दरिद्रता के कष्ट भोगने वालों और मध्यम वर्ग के लोगों को क्रमिक रूप से वृद्धिपूर्ण सुविधाएँ प्रदान करने की व्यवस्था करेगी । (9) किसी भी वर्ग के आन्दोलन (agitation) के बारे में पार्टी की नीति उसके उद्देश्य पर ध्यान देने तथा आन्दोलनकर्त्ताओं की उचित मांगों को पूरा करने की है । (10) डी० एम० के० समाज की सेवक है और जनसाधारण के घरों का प्रकाश है ।

(11) अकाली दल—यह पंजाब में अकालियों का एक संगठित दल रहा । इसने भी मुस्लिम लीग की भांति सिक्खों के हितों और अधिकारों के नारे लगाये । इसके प्रधान नेता मास्टर तारासिंह रहे । मास्टर तारासिंह ने अगस्त 1961 में पंजाबी सूबे के निर्माण हेतु आमरण अनशन आरम्भ किया । प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने स्पष्ट रूप में कहा कि वह पंजाब के और विभाजन के लिए तैयार नहीं थे । उनके मतानुसार पंजाब की प्रधान भाषा पंजाबी पहले से ही थी और यदि भाषा विवाद नहीं रहा तो पंजाबी सूबे की माँग साम्प्रदायिक हुई । 40 दिन बाद मास्टर तारासिंह ने भी अनशन तोड़ दिया क्योंकि प्रधानमन्त्री ने उन्हें यह विश्वास दिलाया कि भारत सरकार इस प्रश्न की जाँच के लिए एक उच्च शक्ति प्राप्त आयोग नियुक्त करेगी कि क्या सिक्खों के विरुद्ध कोई भेदभाव बरता जाता है । 31 अक्टूबर को भारत सरकार ने भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधिपति श्री एस० आर० दास के सभापतित्व में तीन सदस्यों का आयोग नियुक्त किया, परन्तु अकाली दल ने फिर से उसका बहिष्कार किया । फिर भी आयोग ने अपना काम पूर्ण किया और वह इस निश्चय पर पहुँचा कि सिक्खों के विरुद्ध भेदभाव बर्ते जाने की शिकायतें निराधार हैं ।

उसके बाद सभी राज्यों की भांति पंजाब में भी आम चुनाव के लिए तैयारी शुरू हुई । अकाली दल ने पंजाबी सूबे की माँग पर चुनाव लड़ा और कांग्रेस को हराने के उद्देश्य से विरोधी दलों ने आपस में एक समझौता किया, जिसके अनुसार निर्वाचन क्षेत्रों में कांग्रेस का किसी भी विरोधी दल के एक उम्मीदवार ने सीधा मुकाबला किया । चुनाव में कांग्रेस को फिर से पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ, यद्यपि कांग्रेसी सदस्यों की संख्या पहले से कुछ कम अवश्य हो गई । अकाली दल के लोकसभा में तीन और पंजाब की विधान सभा में उन्नीस प्रतिनिधि चुने गये । कुछ समय के लिए मास्टर तारासिंह ने राष्ट्रीय एकता व संगठन पर बल दिया, क्योंकि उनके विचार में देश गम्भीर स्थिति से गुजर रहा था । उस समय अकाली दल ने सूबे के लिए कोई आन्दोलन नहीं चलाया । अगस्त अक्टूबर 1962 में अकाली दल में आपसी फूट हुई और दल दो बराबर के गुटों में बँट गया । एक गुट के नेता फतहसिंह थे और उन्हें बहुमत का समर्थन प्राप्त था । दूसरे गुट के नेता मास्टर तारासिंह थे । दोनों ही गुटों ने चीन के आक्रमण का मुकाबला करने के लिए सरकार को पूर्ण सहयोग और समर्थन दिया । मार्च 1971 को लोकसभा के लिए हुए चुनावों के अवसर पर दल द्वारा प्रकाशित घोषणा-पत्र में निम्नलिखित बातों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया—

(1) कृषि के क्षेत्र में भूमि सुधारों को तेजी से कार्यान्वित किया जायेगा और

द्वारा पुष्टीकरण के प्रश्न पर दल म फूट पड गयी। दक्षिणपथियो ने सधि का तो समथन किया, किन्तु उसके साथ लग सयुक्त राज्य अमरीका और जापान के बीच प्रतिरक्षा समझौते का विरोध किया। वामपथिया ने सधि का विरोध किया तथा उन्होने पश्चिम को उसके विश्व साम्यवाद के विरुद्ध सघष मे सहयोग देने का भी बडा विरोध किया। उन्होने कोरिया युद्ध म दक्षिण कोरिया को किसी भी प्रकार की सहायता दिये जाने का विरोध किया और युद्ध के बाद इस बात पर बल दिया कि जापान से सभी विदेशी सेनायें हट। साथ ही, उन्होने जापान द्वारा फिर से शस्त्रीकरण की नीति का विरोध किया। जापान के बहुत से तटस्थवादी भी उनकी ओर खिचे।

1955 म अमरीका और सोवियत सघ के बीच तनाव कुछ कम हुआ, जिसके प्रभाव से दोनो भागो के बीच मतभेद के प्रश्न क्षीण हो गये और उन्होने मिलकर जापान सोशलिस्ट दल सगठित किया। वामपथी दल का नेता मोसाबुरो सुकुकी (Mosaburo Sukuki) दल का सभापति बना और दक्षिणपथी नेता इनेजिरो असानुमा (Inejiro Asanuma) मुख्य सेक्रेटरी हो गया। दल के गुटो म अभी तक मतभेद है, यद्यपि वे सब आन्तरिक क्षेत्र म पूजीवादी कायक्रम और वैदेशिक क्षेत्र मे बहुसख्यक दल के अमरीकापक्षीय कायक्रम के विरोधी है। गुटबन्दी के कारण समाजवादी दल मतदाताओ के सामने स्पष्ट और रचनात्मक कायक्रम नही रख पाता। यद्यपि द्वि दलीय पद्धति म समाजवादी दल दूसरे स्थान का सुदृढ दल है, फिर भी वतमान योजना के अन्तगत वह निम्न सदन के लिए आधे स्थानो से भी उम्मीदवार खडा नही करता अत समाजवादी कभी बहुमत प्राप्त न कर सके है। प्रतिनिधि सदन म सोशलिस्टो को 1/3 से कम स्थान प्राप्त है, परन्तु उनके कायक्रम को मजदूर सघो और बुद्धिजीवियो से व्यापक समथन प्राप्त है।

जापान के निर्वाचको की कुल सख्या के 1/3 भाग का प्रतिनिधित्व करने वाले समाजवादी इस समय प्रमुख विरोधी दल है। साम्यवादी उन्ह लोकप्रिय मोर्चे के नाम पर अपने साथ मिलाने का प्रयत्न करत रहे हैं। 1955 के अन्त तक समाजवादी दो भागो—वामपथी समूहो मे बट रहे, परन्तु अब वे मिलकर काय कर रहे है। जबकि दक्षिण पथी समाजवादी सदा ही साम्यवाद के विरोधी रहे है वामपथी समाजवादियो ने समय समय पर साम्यवादियो से मिलकर काय करने का प्रयत्न किया है। इस समय समाजवादी दल के कायक्रम म कई मांगें जापानी साम्यवादी दल से मिलती है। दोनो ही दल सविधान व निर्वाचन कानून मे परिवतनो के विरोधी हैं, दोनो ही पुन शस्त्रीकरण और अमरीकी सनिक अड्डो के विरुद्ध हैं, और दोनो ही दल स्वतन्त्रता, शान्ति और प्रजातन्त्र के नारे लगाते हैं। साम्यवादियो की भांति समाजवादी भी पकिंग शासन को चीन का वध प्रतिनिधि मानते हैं और साम्यवादी देशो के साथ व्यापार के पक्ष म हैं। दोनो दल अणु और उद्जन बमो पर प्रतिबन्ध की मांग करते हैं। साम्यवादी और समाजवादी दलो म सत्ता को शान्तिपूर्ण व ससद प्रणाली बनाम हिंसात्मक क्रान्ति द्वारा पाने के प्रश्न पर गम्भीर मतभेद है।

लिबरल और डेमोक्रेटिक दल—विश्व युद्ध के बाद जापान की डायट के निम्न सदन म पूण बहुमत प्राप्त करने वाला पहला दल 'लिबरल पार्टी' था। 1950 म इसमे डेमोक्रेटिक दल के सदस्य भी मिल गये थे और मिले-जुले दल को 466 स्थानो म 286 स्थान प्राप्त थे। द्वितीय सदन म उसे केवल मामूली बहुमत प्राप्त था। अपने नाम के बावजूद लिबरल पार्टी अनुदारवादी समूहो म भी दक्षिणपथी रही। उसे नये औद्योगिक और व्यावसायिक हितो तथा ग्रामीण जापान के अनुदारवादियो का समथन प्राप्त है। डेमोक्रेटिक दल का नाम पहले प्रोग्रेसिव दल था। अपनी मिनसीटो पृष्ठभूमि के कारण डेमोक्रेटिक दल ने कुछ समय तक समाजवादी और सहकारी दलो (Socialists and Cooperative Parties) से मल रखा। अनुदारवादी दलो म डेमोक्रेटो पर ही समाजवाद के उदय का सबसे अधिक प्रभाव पडा है। फिर भी डेमोक्रेटिक पार्टी लिबरल पार्टी से कुछ ही कम अनुदारवादी है। इसके राजनीतिक सिद्धान्त कुछ भी हो,

इस बात को सभी स्वीकार करेंगे कि देश म एक स्थायी और सुदृढ सरकार बनी, और प्राय सभी विरोधी दलो की बुरी हार हुई। 1972 के आरम्भ म कई राज्यो की विधान सभाओ के लिए आम चुनाव हुए। उनमे भी शासक दल (काग्रेस) को प्राय सभी राज्यो म आशा से बढकर जीत और स्थान प्राप्त हुए। बडे राज्यो म केवल तमिलनाडु और उडीसा ही एसे राज्य रह जहा काग्रेस के मन्त्रिमण्डल न बने, केरल के मिले-जुले मन्त्रिमण्डल म काग्रेस प्रमुख दल रहा। विशेष रूप से उल्लखनीय बात यह है कि काग्रेस ने दिल्ली महानगर परिषद् और पश्चिमी बगाल की विधान सभा के लिए हुए चुनावो मे क्रमश जनसघ व साम्यवादी दल (मार्क्सवादी) को भी पराजित किया।

1972 के प्रारम्भिक महीनो म जनता का मनोबल काफी ऊँचा था और प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गाधी के नेतृत्व म उन्होने पक्का विश्वास प्रकट किया। उस समय बहुसख्यक जनता अधिक अच्छे भविष्य के लिए कठिनाइया सहन करने को तयार थी। यदि उस समय काग्रेस अवसर के अनुसार ऊँची उठ पाती तो अवश्य ही देश प्रगति पथ पर तेजी स बढता। परन्तु शासक दल मे फिर से पुरानी कमिया उभरी, नेताओ म महत्त्वपूर्ण नीतियो के बारे म मतभेद पैदा हुए, यद्यपि प्रधानमन्त्री के शक्तिशाली नेतृत्व के प्रभावाधीन वे दब रहे। दल के भीतर केन्द्रीय स्तर पर नहरू फारम और सोशलिस्ट फोरम के बीच खुला विवाद और सघर्ष आरम्भ हुआ। नहरू फोरम के समर्थको न कहा कि सोशलिस्ट फोरम साम्यवादी दल को काग्रेस के आन्तरिक मामला म हस्तक्षेप करने का अवसर दे रहा था। सोशलिस्ट फोरम की ओर स कहा गया कि यदि साम्यवादी दल काग्रेस की आर्थिक नीतियो का समर्थन करता है तो उसका समर्थन पाने म कोई हानि नही। काग्रेस सगठन की उच्च सत्ता ने दोनो फोरमो को भग कर दिया, किन्तु सगठन मे एकता व सुदृढता की कमी बनी रही।

1973 के ग्रीष्म काल म सरकार ने गेहूँ का थोक व्यापार सरकारी नियन्त्रण मे लने का निर्णय किया, किन्तु उसक कार्यान्वयन म सरकारी तन्त्र और सगठन अधिकाशत असफल रहा। उसके बाद देश भर म अनाज और उपभोक्ताओ के लिए आवश्यक अन्य सभी वस्तुओ के मूल्यो म असाधारण वृद्धि हुई और देश म एक अभूतपूर्व आर्थिक सकट उत्पन्न हुआ। बिहार, गुजरात व अन्य राज्यो के मन्त्रिमण्डलो मे आन्तरिक झगडो क कारण भारी उलट फेर हुए। अन्य राज्यो पर भी उनका कुप्रभाव पडा, उत्तर प्रदेश म काग्रेसी मन्त्रिमण्डलो को बहुमत का समर्थन प्राप्त होते हुए भी त्याग पत्र देना पडा और वहाँ राष्ट्रपति का शासन लागू हुआ। एसी परिस्थितियो म विरोधी दलो मे एकता व गठबधन के लिए प्रयत्न आरम्भ हुए। काग्रेस की स्थिति काफी कमजोर हो गई किन्तु अभी तक विरोधी दलो म फूट के कारण भावी चुनावो के अवसर पर उसका कोई प्रबल विकल्प दिखाई नही देता। साथ ही शासक काग्रेस और सगठन काग्रस क नताओ के बीच फिर स मिलने हेतु कुछ बातचीत आरम्भ हुई है।

6 जापान मे राजनीतिक दल

जापान सोशलिस्ट दल (Nihon Shakai to)—1945 स पूर्व समाजवादी आन्दोलन को दबाया गया था, जिसक कारण जापान के वामपथियो म एक्य स्थापित हो गया था, जो राजनीतिक कार्यवाही की स्वतन्त्रता मिलन पर कायम न रह सका। सोशल डेमोक्रेटिक दल की आरम्भिक वर्षों म एकता के परिणामस्वरूप उस 1947 के चुनावो म अप्रत्याशित शक्ति प्राप्त हुई और बाद म बनन वाले दोनो मिल जुल मन्त्रिमण्डलो म उसका स्थान सुदृढ रहा। परन्तु 1950 म दल क अतिवादियो और उदारवादियो के बीच मतभेद उत्पन्न हुए और अक्टूबर 1951 म शान्ति सन्धि न (जिसका प्रारूप तैयार करन म सोवियत सघ और चीन न कोइ भाग न लिया था)

दल का राष्ट्रीय स्वतन्त्रता का उद्देश्य शान्तिपूर्ण तरीको से ही प्राप्त हो सकता है, परन्तु जापान में इस प्रकार की सम्भावना के बारे में उसने गम्भीर स देह प्रकट किया। नोसाका ने एक छोटी सी पुस्तिका मे दल की नीति स्पष्ट करते हुए कहा—'पूजीवाद से समाजवाद का माग प्रत्येक दे में आवश्यक रूप से एक ही समान नही है। चीन ने अवश्य ही शस्त्रो की शक्ति द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त की परन्तु हम यह नही मानते कि जापान में भी उसी नमूने की क्रान्ति होगी। यह झूठ है कि सामाजिक क्रान्ति लाने के लिए हमारा विश्वास केवल हिंसा व गृह युद्ध में है, इससे स्पष्ट है कि जापान का साम्यवादी दल उदारता की नीति पर चलकर अपने क्षेत्र का फिर से विस्तृत कर रहा है।'

इस बात के काफी प्रमाण है कि जापानी साम्यवादियो और सोवियत संघ व चीन के साम्यवादी नेतृत्व में निकट सम्बन्ध है। अनेक जापानी साम्यवादी नेताओ ने सोवियत संघ में प्रशिक्षण प्राप्त किया और बहुत से वहाँ पर परामर्श, आदेश व आर्थिक सहायता लेने गये। युद्ध के बाद वाले काल में केवल यह अन्तर आया है कि जापानी साम्यवादी विदेशी सम्बन्धो के अस्तित्व को खुलकर स्वीकार नही करते। समय-समय पर जापानी साम्यवादी नेता मास्को और पेकिंग की यात्रा पर गये हैं। साम्यवादी दल ने युद्ध के बाद भी, अपनी चालो को मास्को और पेकिंग की इच्छा के अनुसार बदला है। लोकप्रियता कम होने की परवाह न करते हुए भी साम्यवादी दल ने जापान द्वारा सोवियत भूमि पर दावे का विरोध किया है। जापान क्यूराइल और सखालीन द्वीपो को अपना बताता है। हगरी मे सोवियत संघ ने जो सैनिक हस्तक्षेप किया, जापानी साम्यवादियो ने उसका भी समर्थन किया। प्रश्न यह उठता है कि जापानी साम्यवादियो पर प्रभाव मास्को का अधिक है अथवा पेकिंग का। गत वर्षों की तरह अब भी जापानी साम्यवादी दल आदर्शों और परामर्श के लिए मास्को से माग दर्शन लेता है। यह मार्क्सवाद लेनिनवाद को आधार मानता है और सोवियत नीति में हुए परिवर्तनो के अनुसार अपनी नीति व कार्यक्रम में परिवर्तन करता रहा है, जैसे सामूहिक नेतृत्व के सिद्धान्त को स्वीकार करना, परन्तु 1950 से साम्यवादी दल अपनी नीतियो को कार्यरूप देने में पेकिंग से माग दर्शन प्राप्त करता रहा है। जापानी साम्यवादियो के छापामार युद्ध पर चु-तेह की पुस्तिका तथा ऐसे ही प्रकाशन बडी सख्या में निकाले गये है। जापान के साम्यवादी समाचार पत्र चीन की घटनाओ को वृद्धिपूर्ण स्थान दे रहे हैं।

7 आस्ट्रेलिया मे राजनीतिक दल

लेबर पार्टी—आस्ट्रेलियन लेबर पार्टी (A L P) तीनो प्रमुख दलो में सबसे पुरानी है। इसकी स्थापना 1891 में हुई थी और तब से अभी तक यह सगठित श्रमिक वर्ग का प्रतिनिधित्व करती आ रही है। आजकल यह अधिकतर यूनियनो के लिए माना हुआ राजनीतिक साधन है और वित्तीय समर्थन (साधनो) के लिए यह उन्ही पर निभर करती है। इण्डीपेण्डेण्ट लेबर पार्टी की स्थापना से आस्ट्रेलिया में दलीय पद्धति पर बडा प्रभाव पडा है। आस्ट्रेलियन लबर पार्टी बहुत से सामाजिक समूहो से मिलकर बनी है, इस कारण यह भिन्न भिन्न बातो (कार्यक्रम) को अपनाती रही है और कभी-कभी इसके अगो ने भिन्न भिन्न दिशाओ में चलने के प्रयत्न भी किये हैं। इसी कारण इसने राजनीतिक आदर्शों के बारे मे एकरूपता प्राप्त नही की है। यूमैन के मतानुसार इसकी एक महत्त्वपूर्ण विशेषता 'इसकी सदस्यता का विस्तार है और उसके परिणामस्वरूप इसमें मता की भिन्नता है। यह ट्रेड यूनियनो में केन्द्रित है परन्तु इसने छोटे दुकानदारो सानो के स्वामियो आदि को आकर्षित किया है।' फिर भी यह कहना उचित होगा कि मुख्यत यह ट्रेड यूनियनो का दल है। इस विषय में क्रिस्प का कथन है—'आस्ट्रेलियन लेबर पार्टी मुख्यत एक

लिबरल और डेमोक्रेटिक पार्टी के बीच केवल महत्त्वहीन बातो म अन्तर है। इसी कारण आगामी वर्षों मे लिबरल और डेमोक्रेटिक दलो से मिलकर एक दल बन गया। लिबरल डेमोक्रेटिक दल जापान का वतमान बहुसग्यक दल अनुदारवादी है और पश्चिम स मित्रता का समथक है। इस दल की उत्पत्ति नवम्बर 1955 म हुई, जबकि लिबरल और डेमोक्रेटिक दलो मे एकता कायम हुई। डेमोक्रेटिक दल मे पुराने प्रोग्रेसिव दल के सदस्य तथा कुछ ऐसे व्यक्ति सम्मिलित थे जो लिबरल दल से अलग हो गये थे। माच 1957 मे नोबुसुके किशी (Nobusuke Kishi) इस दल के अध्यक्ष बने जो पूवगामी फरवरी म जापान के प्रधानमन्त्री बन गये थे। इस दल के सगठन का दोष यह है कि इसम गुट हैं, इस कारण यह विरोधी पक्ष के विरुद्ध सयुक्त मोर्चा नही बना सकता है।[1]

रयोक्युफ्युकाई अथवा ग्रीन ब्रीज सोसायटी (Ryokufukai or Green Breeze Society)—इसकी स्थापना 1947 म कौंसिलर सदन के कुछ सदस्यो ने की थी, जिनका झुकाव अनुदारवादी राजनीतिक दशन की ओर था। जापान के राजनीतिक जीवन म इस दल अथवा समूह का महत्त्व यह है कि इसके सदस्यो की सख्या 30 के लगभग है और उनके रहते हुए कोई भी प्रमुख दल उस सदन मे बहुमत प्राप्त नही कर सका है। परन्तु 1956 के चुनाव म इस समूह की बुरी हार हुई और सम्भव है कि इसका अन्त हो जाये। कुछ लेखको के मतानुसार यह कोई दल नही है यह तो कुछ स्वतन्त्र सदस्यो का ढीला ढाला सगठन है, इस दल का न तो कोई स्पष्ट कायक्रम है और न दल म अनुशासन ही है।

जापान का साम्यवादी दल (Nihon Kyosanto)—साम्यवादी दल की शक्ति का ठीक से अनुमान डायट मे उसके सदस्यो की सख्या से नही लगाया जा सकता। 1949 के चुनावो मे इसके डायट मे 35 प्रतिनिधि थे, जबकि 1958 म केवल 4 रह गये। दल के कायकर्त्ताओ और सदस्यो म अनुशासन, इसको सोवियत सघ से मिलने वाली गुप्त सहायता और सकट काल म इसकी व्यापक अपील आदि की दृष्टि से साम्यवादी दल जापान का प्रमुख दल समझा जाना चाहिए। इसके लक्ष्य ये हैं—जापान से सयुक्त राज्य की सुरक्षा सेनाएँ तुरन्त हटे, जापान और सयुक्त राज्य के बीच हुए प्रतिरक्षा समझौते रद्द कर दिये जायें, निशस्त्रीकरण की नीति पर चला जाये और सामाजिक सुधार हो। इसका अन्तिम उद्देश्य जापान को साम्यवादी गुट म सम्मिलित करना है। साम्यवादी दल अप्रैल 1952 से अन्य दलो के समान वैध है। 1950 तक द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जापान साम्यवादी दल का नारा 'शान्तिपूर्ण क्रान्ति' था। दल को सवसाधारण जनता का सगठन बनाने के उद्देश्य से दल ने अपने नेता नोसाका के नेतृत्व म समाजवादियो के साथ मिलकर लोकप्रिय मोर्चे की नीति अपनायी थी। उन वर्षों म दल ने अमरीकी शासन अधिकारियो की खुलकर आलोचना नही की और सोवियत सघ ने परम्परागत सम्बन्धो के महत्त्व पर बल नही दिया। परिणामस्वरूप 1949 के चुनाव म दल के 35 प्रतिनिधि डायट म चुने गय। कई वष से जापानी साम्यवादियो का मुख्य शत्रु 'अमरीकी साम्राज्यवाद' है। उस पर विजय पाने के लिए साम्यवादी दल का फार्मूला राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए जनता का सगठित मोर्चा है। मोर्चे म अमरीकी साम्राज्यवाद का विरोध करने वाले सभी प्रगतिशील तत्त्व सम्मिलित होते हैं।

1955 के अन्त म साम्यवादी दल के नेता, नोसाका ने कहा कि कुछ देशो म साम्यवादी

---

[1] The Liberal Democratic Party has been quite as ridden with factionalism as were the two parties from which it was formed It has therefore not always been able to show a united front against the opposition —McNelly T, *Contemporary Government of Japan* pp 119-20

समर्थन पाया है। परन्तु इसके सामने उग्र उदारवादी दल की कठिनाइयाँ आई हैं, क्योंकि इसके एक अंग अनुदारवादियों का रहा है। इस अंग में अनुदारवाद को साधारणतया प्रतिक्रियावाद कहा जाता है और इस एक दल के विरोध में काम करना पड़ा है (अर्थात् आस्ट्रेलियन लेबर पार्टी के) जिसने बड़ी मात्रा में उदारवाद को अभिव्यक्त किया है। शासन को कायम रखने के लिए इस दल को मध्य मार्गीय नीतियों का अनुसरण करना पड़ा है और उदारवादियों से बहुत मिलता-जुलता है कि लेबर पार्टी ने आरम्भ किया।[1] मिलर के शब्दों में—लिबरल पार्टी व्यापारियों तथा व्यावसायिकों की राजनीतिक अभिव्यक्ति रही है। यह दल उनसे मिलकर बना, जो लेबर पार्टी की राजनीति और उसके विचारों का विरोध करते और जो यह अनुभव करते हैं कि आस्ट्रेलिया की राजनीति के सम्बन्ध में स्वतन्त्र उद्योग और ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति वफादारी के आदर्शों पर बल देने की आवश्यकता है।[2] संक्षेप में, लिबरल पार्टी संसदीय शासन प्रणाली की ब्रिटिश परम्पराओं को जारी रखने, राष्ट्र के सागर आदि पर बल देती है। दल का संगठन ढीला ढाला समझा है और उसके अन्तर्गत शक्तिशाली केन्द्रीय राज्य संगठन हैं।

कंट्री पार्टी—संघीय कंट्री पार्टी का आरम्भ 1918 में हुआ। यद्यपि इसके अनुयायियों की संख्या बहुत बड़ी नहीं है किन्तु उनका सरकार पर भारी प्रभाव रहता है। इस दल की शाखाएँ सभी राज्यों में रही हैं। इस दल के केन्द्रीय संगठन और चरवाहों, किसानों व बागवानों (horticulturists) के संगठित कृषि हितों के साथ निकट सम्पर्क है। इसका ध्यान मुख्यतः ग्रामीण मतदाताओं के प्रति भी जाती रही है और यह उम्मीदवार भी ग्रामीण निर्वाचन-क्षेत्रों के लिए नामजद करती है। इसकी माँगों में महत्वपूर्ण स्थान विदेशों के बाजारों में वस्तुओं के मूल्यों की गारण्टी आदि को दिया गया है। संक्षेप में, इस दल का उद्देश्य कृषकों के व्यवसाय को आगे बढ़ाना है। प्रारम्भिक काल में इस दल ने शहरों की व्यावसायिक संस्थाओं का विरोध किया, परन्तु अब जबकि किसानों ने बाजार बोर्डों और मूल्यों की गारण्टी आदि के उद्देश्यों को प्राप्त कर लिया है कंट्री पार्टी ट्रेड यूनियनों व लेबर पार्टी पर आक्रमण करती है क्योंकि ऐसा माना जाता है कि उनसे किसानों के परिश्रम की कीमत बढ़ती है और उनका प्रभाव घटता है। साथ ही यह दल माँग करता है कि शिक्षा, कृषि और किसानों की सेवाओं के क्षेत्र में सरकारी प्रयत्नों को बढ़ाया जाय। यद्यपि यह किसानों, चरवाहों आदि के संगठनों से मिलकर बनी है, फिर भी यह अपने को एक वर्गीय दल नहीं मानती।

श्रमिक आन्दोलन की व्यापारिक अतियों पर साम्यवादी और रोमन कैथोलिक हैं। साम्यवादी पार्टी लेबर पार्टी की इस बात के लिए कड़ी आलोचना करती है कि उसने सुधारवादी तरीके अपनाये हैं और समाजवाद की क्रान्तिकारी नीति नहीं अपनाई। परन्तु राजनीतिक क्षेत्र में इस दल को नहीं के बराबर सफलता मिली है। आस्ट्रेलिया में जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग रोमन कैथोलिक धर्म को मानता है। रोमन कैथोलिक व लेबर पार्टी में एक सम्बन्ध रहा है। कैथोलिक समाजवाद में तो विश्वास नहीं करते, उसके स्थान पर वे सामाजिक न्याय की माँग करते हैं। यह पूर्ण समाजवाद तथा पूँजीवाद दोनों का ही विरोधी विचार है। कुछ समय से देश की राजनीति में लेबर पार्टी सबसे बड़ी एकल कारक बन गई है, और इसके विरोधियों ने विवश होकर इसके संगठन का आलोचक होते हुए भी अनुकरण किया है। लेबर पार्टी का लक्ष्य श्रमिक वर्ग का प्रजातन्त्र है और उसकी प्राप्ति के लिए उसके साधन ये रहे हैं—शक्तिशाली ट्रेड यूनियन, आधारभूत मजदूरी, मजदूरों और मालिकों के बीच विवादों में अनिवार्य पंचनिर्णय, सुदृढ़ शुल्क

[1] Neumann S *Modern Political Parties* p 87
[2] Miller J D B *Australian Government and Politics* p 73

वर्गीय दल है, यह एक ऐसा तथ्य है, जिसका उसे गव है। जसा कि इसके नेता कहा करते थे, यह जनसाधारण के हितो क लिए, वर्गीय हितो के विरुद्ध लडती रही है। इसके सदस्या मे प्राधान्य श्रमिको का है, यद्यपि इसे निर्वाचनो म अधिक व्यापक समथन मिलता है। श्रमिक दल के आदर्शवादियो का विश्वास है कि समाजवाद, अधिकतम माना म, एक प्रजात त्रात्मक आ दोलन है, चूकि यह राजनीतिक क्षेत्र की भाति आर्थिक क्षेत्र मे भी सभी व्यक्तियो की प्रभुसत्ता को सगठित करने चला है और यह नई व्यवस्था को व्यक्तियो के अधिकारो पर आधारित करेगा, क्योकि यह प्रत्येक व्यक्ति को उसके पूण विकास के लिए साधन प्रदान करेगा। आस्ट्रेलिया मे श्रमिक दल की योजनाओ व कल्पनाआ मे सामाजिक कायक्रमो जैसी निश्चितता नही है। दल की इच्छा यह है कि यह अनुभव के आधार पर आगे बढे और समता पर आधारित अधिक समद्धिशाली समाज की प्राप्ति के लिए पालियामे ट के द्वारा सामाजिक निय त्रण की विधियो का प्रयोग करे।[1]

1905 के श्रमिक सम्मेलन न दल के उद्देश्य अपनाये—'एकाधिकारी उद्योगो का सामूहिक स्वामित्व और राज्य व म्युनिसिपैलिटिया के औद्योगिक व आर्थिक कार्यो का विस्तार।' हाल के बीत वर्षो मे लबर पार्टी ने ससदीय तरीको का अन्तरराज्यीय तथा विदेशी हवाई मार्गो समुद्रपार टेली सचार पर सरकारी निय त्रण लागू करने और बैको का राष्ट्रीयकरण व अ य क्षेत्रो म राष्ट्रीयकरण करने के लिए प्रयोग किया। लेबर पार्टी बडी भू सम्पत्तियो को टुकडो म बाटना चाहती है, किन्तु यह नही चाहती कि आस्ट्रेलिया छोटे कडा परिश्रम करने वाले किसानो का राष्ट्र बन। यहाँ पर लेबर पार्टी के सगठन का, सक्षिप्त वणन देना भी उपयुक्त होगा। प्रत्येक राज्य मे सर्वोच्च अग राज्य सम्मेलन या क वे शन है। राज्य सम्मेलनो के ऊपर सघीय सम्मेलन है, जिसका अधिवेशन प्रति 3 वप म होता है। इस सम्मेलन म प्रत्येक राज्य के 6 डेलीगेट भाग लेते है। दो सम्मेलनो के बीच मे एक सघीय कायपालिका कार्य करती है, इसकी रचना 1915 मे की गई थी। राज्यो म राज्य कायपालिकाआ की रचना भिन्न भिन्न प्रकार से होती है। कन्वे शन (या कान्फ्रेंस) दल का सविधान और नियम बनाती है। यह दल के सिद्धा त भी निर्धारित करती है और उसका कायक्रम बनाती है। राज्य सम्मेलन स नीचे निर्वाचिको की कौसिले होती है। ये निर्वाचक कौसिले पालियामे ट के लिए उम्मीदवार छाटती हैं, कि तु उन पर अ तिम स्वीकृति पूण सत्तावान कान्फ्रेंस या क वे शन दती है।

लिबरल पार्टी—यह उन समूहो का मिला-जुला सगठन है, जो 1910 म एक होने से पूव लबर पार्टी का विरोध करत थे। इसका मौलिक नाम उदारवादी दल था, जो 1917 म बदलकर नेशनल पार्टी हुआ और 1931 मे युनाइटेड आस्ट्रेलिया पार्टी कहलाया, परन्तु दूसरे विश्व युद्ध मे वह भी खण्डित हो गया। 1944 म लिबरल पार्टी नये सिर से फिर बनी, जिसने युनाइटेड आस्ट्रेलिया पार्टी के पूरक का काम किया। इस दल का सघीय सगठन है, जिसकी सभी राज्या मे जोरदार काम करने वाली शाखायें है। इस दल के महत्त्वपूण लक्ष्यो मे य हैं—आस्ट्रेलिया म बुद्धिमान, स्वत त्र और उदारवादी प्रजात त्र बनाये रखना, जिसम पालियामट कायपालिका पर निय त्रण रखे और कानून सभी पर निय त्रण रखें, भापण, धम और सगठन की स्वत त्रता, नागरिको को अपने जीवन और जीवन शैली की स्वत त्रता, कि तु दूसरा के अधिकारो को मानते हुए, शोपण के विरुद्ध जनता की रक्षा, और दश के विकास व उन्नति म व्यक्तिगत पहल तथा निजी उद्योगा को प्रोत्साहन। स्वाभाविक बात है कि इस दल ने व्यावसायिक समूहा म काफी

[1] Crisp L F *The Parliamentary Government of the Commonwealth of Australia* pp 74–75

तरीके से वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था के स्थान पर सहकारी समाज की स्थापना करना है, जिसमें पुरुष और स्त्रियाँ अपनी सामान्य समस्याओं को मिलकर हल करेंगे। यह साम्यवादी विचारधारा का अस्वीकार करता है और कहता है कि सहकारी समाज की स्थापना सांविधानिक उपायों द्वारा की जा सकती। अगस्त 1961 में सी० सी० एफ० और कनेडियन लेबर कांग्रेस ने मिलकर एक नये दल का निर्माण किया, जो नया प्रजातन्त्रात्मक दल (New Democratic Party) कहलाता है।

अन्य दल—सोशल क्रेडिट पार्टी एक छोटा दल है। 1940 और 1949 में कनाडा की पार्लियामेंट में इस दल के क्रमशः आठ और दस प्रतिनिधि थे। 1953 में उनकी संख्या पन्द्रह हो गयी और 1957 में उन्नीस। परन्तु 1958 के आम चुनाव में इसे कनाडा की पार्लियामेंट में एक भी स्थान प्राप्त न हुआ। फिर भी अल्बर्टा व ब्रिटिश कोलम्बिया के प्रान्तों में यह एक महत्त्वपूर्ण दल है। 1922 से जबकि साम्यवादियों ने अपना संगठन बनाया उसका नाम लेबर प्रोग्रेसिव (Labour Progressive) दल था। इसको कभी-कभी किसी प्रान्तीय विधानमण्डल में प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ। साम्यवादियों का उद्देश्य एक छोटा किन्तु प्रशिक्षित और अनुशासित समूह स्थापित करना है जो कि क्रान्ति करके अधिनायकशाही स्थापित कर सके। लेबर प्रोग्रेसिव दल ने अक्टूबर 1959 में अपना नाम कनाडा की कम्युनिस्ट पार्टी रखा। कनाडा में चुनाव प्रायः दलीय आधार पर होते हैं और कई वर्षों से सत्ता के लिए मुख्य प्रतिद्वन्द्वी लिबरल और कंजरवेटिव दल रहे हैं।

9 सोवियत संघ में राजनीतिक दल

साम्यवादी दल—सोवियत संघ में यह एकमात्र राजनीतिक दल तथा सोवियत शासन का संचालक है। 1952 के दलीय संविधान के अनुसार, दल की परिभाषा इस प्रकार है—सोवियत संघ का साम्यवादी दल साम्यवादियों का ऐच्छिक व युद्ध में लगा हुआ संघ है, जिनके एक समान विचार हैं, जिसमें श्रमिक जन, किसान और बुद्धिजीवी सम्मिलित हैं। इस समय दल के मुख्य कृत्य ये हैं—समाजवाद से साम्यवाद की ओर क्रमिक विकास द्वारा समाजवादी समाज का निर्माण करना, समाज के जीवन-स्तरों और सांस्कृतिक स्तर को निरन्तर ऊँचा उठाना, समाज के सदस्यों को अन्तर्राष्ट्रवाद में शिक्षित बनाना एवं सभी देशों के श्रमिक जनों से भ्रातृत्व के सम्बन्ध स्थापित करना और देश के शत्रुओं के विरुद्ध सोवियत संघ की सक्रिय प्रतिरक्षा को प्रत्येक दृष्टि से सुदृढ़ बनाना। न्यूमैन के अनुसार साम्यवादी दल सोवियत राज्य और उसके लोगों का मार्ग दर्शक है, यह सभी सार्वजनिक कार्यों का स्पार्क प्लग (spark-plug) है।

इसके मुख्य कार्य अग्रलिखित है—(1) यह जनता की साम्यवादी विचारधारा में शिक्षा का व्यवस्थापक है। वैसे तो सभी प्रकार के प्रशासनों को जनता का समर्थन पाना आवश्यक है, किन्तु यह बात साम्यवादी शासन के लिए विशेष रूप से सच है। चूँकि साम्यवादी सिद्धान्तों के अनुसार जीवन के सभी पहलुओं और प्रयत्नों को वर्गीय संघर्ष का ही साधन माना जाता है, अतः राजनीतिक विचारों, कला, विज्ञान, संगीत आदि सभी बातों को साम्यवादी दृष्टिकोण से विकसित किया जाता है। इस कारण साम्यवादी दल के शिक्षा सम्बन्धी कार्य का बड़ा महत्त्व है। वास्तव में, साम्यवादी दल एक अर्थ में जनता का संरक्षक है। यह उन्हें शासन की प्रक्रियाओं में शिक्षित बनाता है। (2) दल के द्वारा शासन और दल अपने कार्यों के बारे में जनता को सूचित करते रहते हैं। शासन और दल को सूचना के प्रायः सभी साधनों का एकाधिकार प्राप्त है। सभी समाचार पत्र, रेडियो व अन्य संचार के साधन शासन अथवा दल के नियन्त्रण में हैं। साम्यवादी दल का मुख-पत्र 'प्रवदा' सूचना प्रसार का सबसे महत्त्वपूर्ण साधन है। दल ही जनता को यह सूचित करता रहता है कि शासन क्या कर रहा है? इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए दल बड़े पैमाने

दर की नीति जिससे उद्योगो मे मजदूरी की दरो की रक्षा की जा सके, भूमि के सम्बन्ध म ऐसी नीति जिसका उद्देश्य बडी जमीदारियो के विकास को रोकना है, और बैंकिंग जल रक्षण उद्योग की अनेक शाखाओ म सावजनिक उद्यम । आरम्भ म लेबर पार्टी का विरोध तीव्र था, परन्तु खण्डित था, क्योकि कुछ राज्यो के शहरी मध्यम वग और दूसरे राज्या के अधिक धनी किसानो ने मिल जुले प्रभावी कायक्रम को बनाने मे कठिनाई का अनुभव किया । परन्तु हाल म लिबरल और कट्री पार्टियो ने मिला जुला कायक्रम स्वीकार किया है ।

8 कनाडा मे राजनीतिक दल

प्रगतिशील अनुदार दल (Progressive Conservative Party)—यह कनाडा का सबसे पुराना राजनीतिक दल है । अनुदार दल ने सदा ही रक्षण की नीति का समथन किया है । उनक नेताओ व सदस्यो ने साम्राज्यीय सम्बन्ध बनाये रखने और प्रबल सघवाद अथवा राष्ट्रीय नीति का समथन किया है । इस दल का कनाडा की राजनीति म प्रमुख भाग रहा है यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि इसने सघ निर्माण के बाद लगातार 30 वर्षों तक कनाडा म शासन किया । अल्पकाल को छोडकर फिर इस दल के हाथ म सत्ता आई और बहुत काल तक यह दल सत्तारूढ रहा, परन्तु 1934 से 1957 तक यह विरोधी पक्ष म रहा । 1957 म इस दल न उदार दल के विरुद्ध ऐतिहासिक विजय पाई । 1962 के चुनाव मे भी दल की जीत हुई, परन्तु अप्रल 1963 मे हुए आम चुनाव मे यह दल पराजित हुआ ।

उदार दल (The Liberal Party)—सघ निर्माण के बाद यह बहुत समय तक विरोधी दल रहा, जिसका धीमे धीमे विकास हुआ । 1869 मे लिबरल दल ने कनाडा के फ्रासीसियो को अपनी ओर करने मे विजय पाई । लिबरल दल ने क्यूबेक और प्रेरी प्रान्तो के बीच गठबन्धन को आगे बढाया । 1935 से 1957 तक कनाडा म लिबरल दल सत्तारूढ रहा । अप्रैल 1963 म हुए आम चुनाव म लिबरल दल ने फिर विजय पाई और उसके नय नेता लेस्टर बी पीयरसन को प्रधानमन्त्री बनाया गया । उदारवादियो न नीचे आयात व निर्यात शुल्क (Lower tariff) का पक्ष लिया है । जबकि अनुदारदली साम्राज्यीय सम्बन्ध बनाये रखने म गव अनुभव करत हैं, उदारदली नेताओ न अधिक राष्ट्रवादी नीतिया को अपनाया है । उन्ह कनाडा के स्वशासन पर प्रतिबन्ध पसन्द नही है। साथ ही, उदारदली नेताओ ने प्रान्तीय स्वायत्तता पर बल दिया है ।

कोआपरेटिव कामनवल्थ फेडरेशन (Cooperative Commonwealth Federation)—इस दल की स्थापना 1932 म हुई, जबकि पाश्चात्य किसान आन्दोलन के कुछ उग्र तत्वा न पश्चिम के शहरी श्रमिक सगठना स मेल किया । 1940 के चुनाव म दल ने डोमीनियन पार्लियामट म आठ स्थान प्राप्त किय और बाद म हुए उप चुनावो के परिणामस्वरूप इसके सदस्या की सख्या ग्यारह तक पहुँच गयी । 1943 के अन्त तक आन्टरियो म सी० सी० एफ० दूसरे स्थान पर सबस बडा दल बना और अन्य चार प्रान्तो म भी यह मुख्य विरोधी दल रहा । 1953 और 1957 क चुनावो मे डामीनियन पार्लियामट म सी० सी० एफ० को क्रमश 23 और 25 स्थान प्राप्त हुए । परन्तु 1958 म इसकी सदस्य-सख्या गिरी और यह अब भी एक छोटा दल है ।

इस दल का उद्देश्य कनाडा म सहकारी कॉमनवल्थ स्थापित करना है, जिसम सभी कनाडावासिया को उपयोगी काम, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक व धार्मिक स्वतन्त्रता, स्वास्थ्य, शिक्षा, अच्छा मकान, ऊँचा जीवन स्तर प्राप्त होग । सबको जीविका क साधन प्रदान किय जायेंगे । यह दल उद्योगो, बैंको और वित्तीय सस्थाओ क समाजीकरण और उन पर प्रजातान्त्रिक नियन्त्रण का समथक है । किसानो क लिए यह कीमतो की गारण्टी तथा बाजार बोर्डो द्वारा व्यापार को प्रोत्साहन देना चाहता है । सी० सी० एफ० का विश्वास क्रमिक रूप तथा प्रजातान्त्रिक

प्रारम्भिक सगठन की इकाइया जिला सम्मेलन के लिए प्रतिनिधि चुनती हैं। सम्मेलन एक समिति चुनता है और समिति एक ब्यूरो तथा सक्रेटरी का चुनाव करती है। ये दल के स्थानीय पदा के लिए सदस्यो की नियुक्ति करते हैं। इन्हीं सगठना पर दल म सदस्या की भरती के लिए प्रस्ताव प्रारम्भिक इकाई का सेक्रेटरी ब्यूरो के सामने रखता है। शहर और जिले क सगठन सदस्यो को निकाल भी सकते है और वे ऐस सदस्यो की अपीलें भी सुनते है जिन्हे अपने विरुद्ध की गयी कायवाही के लिए कोई शिकायत है। शहर और जिले के सगठन दल के आधार भूत रेकाड कार्यालय का भी काम करते है। ये सगठन अपने अपन क्षेत्र मे आर्थिक, प्रशासनिक और सास्कृतिक कार्यों की दख रेख भी करते है, कि तु उनका यह अधिकार क्षेत्र अन्य नही है।

शहर और जिलो के सगठना के ऊपर क्षेत्रो, प्रदेशो व गणराज्यो के सगठन है। प्रत्यक सगठन की एक कायकारिणी अर्थात् ब्यूरो और सक्रेटरी होते है, जिनकी सख्या उच्चतर सगठनो मे साधारणतया तीन होती है। एक स्तर का सगठन अपने ऊपर के स्तर वाले सगठन क लिए प्रतिनिधि चुनता है और ऊपर वाला सगठन नीचे वाल सगठन के कार्यों की देख रेख करता है। रूसी सोवियत गणराज्य सबसे बडा गणराज्य है, जो कई स्वाधीन गणराज्यो व प्रदेशो म बँटा है। उनके अपने सगठन हैं, जि हे सर्व-सघीय काग्रेस के लिए सीधे प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। प्रत्येक सघीय गणराज्य की काग्रेस एक केन्द्रीय समिति चुनती है और यह समिति एक काय कारिणी निकाय अर्थात् ब्यूरो चुनती हैं, जिसमे अधिक से अधिक ग्यारह सदस्य हो सकते हैं और उ ही म तीन सेक्रेटरी भी सम्मिलित है। सगठन के कार्यों के लिए पहल की शक्ति सेक्रेटेरियट, विशेष रूप से प्रथम सेक्रेटरी के हाथो मे केन्द्रीभूत होती है। प्रथम सक्रेटरी साधारणतया केन्द्रीय सगठन द्वारा चुना गया व्यक्ति होता है। सक्रेटरी के बाद ब्यूरो का स्थान प्रभावशाली होता है क्याकि इसम दल के सेक्रेटरी, गणराज्य की मन्त्रि परिषद् का सभापति, सर्वोच्च सोवियत का सभापति और आन्तरिक मामलो के मन्त्री सम्मिलित रहते हैं। गणराज्या के दलीय सगठन का सबसे महत्त्वपूण दायित्व केन्द्रीय दल के निर्देशो व आज्ञप्तियो को कार्यान्वित करना है। यही दल के विभिन्न सगठना म महत्त्वपूण पदा पर दलीय अधिकारियो को नियुक्त करता है। यह दलीय समाचार पत्र प्रकाशित करता है और दल व शासन के सदस्या के लिए एक राजनीतिक शिक्षा हेतु स्कूल व प्रशिक्षणालय सगठित करता है। सर्वोच्च सगठन के नीचे के स्तरा पर विभिन्न प्रकार के सगठनो की सख्या इस प्रकार है—गणराज्य 15, प्रादेशिक (krai) 8, रीजनल (oblast) 167, ओक्रग 36, शहर 544, राआन (raion) 4,886 और प्रारम्भिक 2,50,304।

विभिन्न गणराज्यो के सगठन सव-सघीय काग्रेस के लिए प्रतिनिधि चुनते है। सव-सघीय काग्रेस का अधिवशन साधारणतया प्रति चार वप म होता है। सव सघीय काग्रेस दल का सर्वोच्च सगठन है, इसके सदस्यो की सख्या बहुत बडी होती है, जिसके लिए नीति निर्धारण करना कठिन है। प्रति 1,000 सदस्यो के पीछे एक प्रतिनिधि चुना जाता है। 1959 की सघीय काग्रेस म कुल प्रतिनिधि 1,269 थे और उनके अतिरिक्त 106 उम्मीदवार सदस्य थे। दल के सर्वोच्च सगठन मे काग्रेस के अतिरिक्त तीन अन्य महत्त्वपूर्ण अग है, जिनका वणन सक्षप म यहाँ दिया जाता है। सिद्धान्त म केन्द्रीय समिति दल का सबस महत्त्वपूण अग है, यद्यपि प्रेसीडियम (जिस 1952 से पहले पोलिट ब्यूरो कहते थे) सबसे शक्तिशाली और नीति निर्धारित करने वाला अग है। इसके सदस्यो का चुनाव दलीय काग्रेस ही करती है और इनम सभी महत्त्वपूण व प्रभावशाली साम्यवादी नेता सम्मिलित रहते हैं। इसके नाम से अनेक आदेश जारी किये जात है, यद्यपि आलोचको के मतानुसार इसकी बठकें भी बहुत कम होती हैं और यथाथ म अधिकतर आदेश प्रेसीडियम अथवा सक्रेटेरियट द्वारा निकाल जाते हैं। दल के नियमा के अनुसार केन्द्रीय समिति (जिन दिनो काग्रेस का अधिवेशन नही होता) दल क काय का निदशन करती है, यह अन्य सगठनो

पर प्रचार काय करता है। (3) दल के नेता विभिन्न क्षेत्रो मे काम करने वाले स्थानीय प्रतिनिधियो को योजनाओ की पूर्ति के लिए उत्तरदायी ठहराते है। इसलिए दलीय सगठन द्वारा दल के नेता सोवियत समाज के सभी महत्त्वपूण पदो अथवा स्थाना पर दल के सदस्यो को रखवाते है। (4) दल का यह भी महत्त्वपूण काय है कि वह अपने प्रभाव को उन सोवियत नागरिको तक विस्तृत करे जो दल के सदस्य नही होते।[1]

यद्यपि साम्यवादी दल सोवियत सघ का एकमात्र राजनीतिक दल है और एक अथ मे सम्पूण शासन का सचालन करता है, फिर भी दल की सदस्यता सीमित है। इसका मुख्य कारण यह है कि दल म सदस्यो की भरती बडे कठोर नियमो के अनुसार की जाती है और सदस्यो के लिए वफादारी के स्तर वहुत कडे है। साम्यवादी दल क सदस्य केवल वे ही व्यक्ति बन सकते है, जो साम्यवादी सिद्धान्तो का अच्छा ज्ञान रखते है, उनम विश्वास रखते है और और उनके अनुसार काम करने को उत्सुक है और किसी दूसरे व्यक्ति के श्रम का शोषण न करते हो। दल के सदस्य साम्यवादी उद्देश्या की प्राप्ति म लग हुए सनिका के समान हैं। 1959 मे सदस्या और उम्मीदवारो की सख्या क्रमश 76 लाख और 6 लाख से कुछ ऊपर थी। सदस्यो के लगभग 22 प्रतिशत श्रमिक, 18 प्रतिशत किसान और 60 प्रतिशत हाथ से काम न करने वाले (non manual) व्यक्ति थे। नियमो के अनुसार दल के सदस्यो के मुख्य काय निम्न प्रकार हैं (1) हर प्रकार के दलीय एकता की रक्षा करना, (2) दल के निणयो की पूर्ति के लिए क्रियाशील सघष कर्ता बनना, (3) काम करने म उदाहरण बनना, अपने काम की तकनीक पर पूण अधिकार पाकर काय कुशलता को बढाना और हर प्रकार स सावजनिक समाजवादी सम्पत्ति की रक्षा करना, (4) सवसाधारण स सम्पक को निरन्तर सुदृढ बनाना, (5) अपनी राजनीतिक जानकारी का बढाना और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तो पर अधिकार प्राप्त करना, (6) दलीय और राज्यीय अनुशासन का पालन करना, (7) आत्म आलोचना को विकसित करना, (8) दल के निकायो के काम म कमियो के बारे मे रिपोट देना, (9) दल क सामने सच बोलना और ईमानदार रहना, और (10) जिस स्थान पर भी दल द्वारा रखा जाये, काम करन वालो की छाट मे दल के निदेशो के अनुसार काय करना अर्थात् मित्रता, व्यक्तिगत सम्बन्ध आदि के आधार पर छाट न करना।

दल के सगठन का रूप पिरेमिड जैसा है। सबस नीचे के स्तर पर दल की प्रारम्भिक इकाइया हं, जिन्ह पहले 'सल' (cell) कहा जाता था। जहाँ कही भी दल के तीन सदस्य बन जाये वहा ऐसी इकाई का निर्माण होता है। प्रत्येक प्रारम्भिक इकाई एक कायकारिणी समिति अथवा ब्यूरो चुनती है और एक सेक्रेटरी भी जो इकाई का सबस महत्त्वपूण अधिकारी व सभापति होता है। ब्यूरो केवल अधिक सदस्यो वाली इकाई मे ही बनती है। प्रत्येक दशा मे सेक्रेटरी ही उसका निदेशक अथवा सबसे महत्त्वपूण अधिकारी होता है। दल के नियमो के अनुसार प्रारम्भिक इकाइयो के काय य है—(1) दल की अपीलो और निणया को क्रियात्मक रूप दने के लिए सवसाधारण म सगठनात्मक व आन्दोलनात्मक काय करना। इस काय के करन म उन्ह स्थानीय समाचार पत्रो व दीवार समाचार-पत्रो का समथन मिलता है। (2) दल म नय सदस्यो की भरती करना और उनके लिए राजनीतिक प्रशिक्षण की व्यवस्था करना। (3) दल के सदस्यो और उम्मीदवारो की राजनीतिक शिक्षा का सगठन करना, जिससे कि वे मार्क्सवाद-लेनिनवाद का आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर सके। (4) राजनीतिक विभाग को उसके सभी क्रियात्मक काय मे सहायता देना।

[1] Neumann R G *European and Comparative Government* pp 533–34

विनियुक्त किया जाता है । जहा तक छोटे निकायो का बडे सगठन् के प्रति उत्तरदायित्व का प्रश्न है, यह भी दिखावा मात्र है । वास्तव म, सम्पूर्ण दलीय सगठन को सर्वोच्च दल के प्रेसीडियम और सेक्रेटरी जनरल द्वारा निर्धारित नीति पर चलना पडता है । आलोचको के अनुसार साम्यवादी दल के सगठन म बल लोकत त्र पर नही वरन् केन्द्रीकरण पर है । पाश्चात्य आलोचक तो इसे सर्वाधिकारवाद का सूचक मानते है ।

दल की रचना इस प्रकार से की गई है कि सारी शक्तिया इसी मे केन्द्रीकृत हैं और यह दल मोनोलिथिक है अर्थात् ये एक ही पत्थर से काटे गये स्तम्भ की तरह है, क्योकि इसमे केवल पक्के साम्यवादी (जो दल के नेतृत्व को स्वीकार करते हो) ही रह सकते है । स्टालिन के कायकाल म तो विरोधी मत वाले साम्यवादी नेताओ को दल के बाहर ही नही निकाला जाता था वरन् उ ह मरवा दिया जाता था । पर तु अब उन्ह महत्वपूर्ण पदो से हटा दिया जाता है और उनका सावजनिक दृष्टि स अपमान किया जाता है । सोवियत सघ की सेना म भी दल का सगठन फला हुआ है, बहुत बडी सख्या म प्रारम्भिक सगठन व कोम्सोमोल सेना के भीतर बने है । इन सगठनो के ऊपर सोवियत सघ के प्रतिरक्षा म त्रालय का एक विभाग (Main Political Administration) पूरी तरह देख रेख करता है । यह विभाग उन्ह परामश देता है और उनका निदेशन भी करता है। इस विभाग को सेना पर दल के निय त्रण का साधन कह सकते है । कला तथा विज्ञान जस अराजनीतिक क्षेत्रो म भी दल की नीति के अनुसार कार्य होता है, अर्थात् जीवन के सभी क्षेत्रो मे साम्यवादी सिद्धा तो को लागू किया गया है अथवा उनका सचालन साम्यवाद के उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए किया जाता है । शिक्षा साहित्य समाचार पत्र व धम पर भी शासक दल और नीति के अनुसार निय त्रण किया जाता है । जो देश साम्यवादी समाज का निर्माण कर रहे है, वहा के साम्यवादी अपने सृजनात्मक काय सोवियत सघ की साम्यवादी पार्टी के आधार पर करते हैं । पूजीवादी देशो के साम्यवादी श्रमिक जनता के अधिकारा के लिए सघष म इस अनुभव स लाभ उठाते है । यह सवहारावर्गीय अ तर्राष्ट्रीयता का एक निदेशन है । सोवियत सघ की साम्यवादी पार्टी, विदशो की साम्यवादी और श्रमिक पार्टियो के साथ निकट सम्ब ध बनाये रखती है । सम्ब ध सवथा स्वच्छित ढग पर, समानता, मैत्रीपूण आलोचना और विवादास्पद प्रश्नो के बारे मे सौहाद्र पूण विचार विनिमय पर आधारित है । एक-दूसरे के यहाँ प्रतिनिधि मण्डल भेजना ऐसे सम्ब ध बनाये रखने का एक प्रकार है । 1959 मे सोवियत सघ की साम्यवादी पार्टी की इक्कीसवी काग्रेस मे उपस्थित रहने के लिए 72 भ्रातृ साम्यवादी व श्रमिक पार्टियो के प्रतिनिधि आमन्त्रित हुए थे । दूसरी ओर सोवियत सघ की साम्यवादी पार्टी के प्रतिनिधि विदेशो की साम्यवादी और श्रमिक पार्टियो की काग्रेस म तथा समाजवादी देशो के राष्ट्रीय पर्वो व राजकीय समारोहो मे भाग लेते है ।

10 चीन मे राजनीतिक दल

साम्यवादी दल—इसका सगठन सोवियत सघ के दल जसा ही है । 1956 म स्वीकृत किये गये दलीय सविधान के अनुसार साम्यवादी चीनी श्रमिक वग का हरावल (vanguard) और श्रमिक वग के सगठन का सर्वोच्च रूप है । दल का ध्येय चीन म समाजवाद व साम्यवाद की प्राप्ति है । अपनी कायवाहियो के लिये दल माक्सवाद लनिनवाद को अपना माग दशक मानता है । 1949 म साम्यवादी दल तथा जनता न साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और नौकरशाही पूजीवाद क शासन को उखाड फेंका और जनवादी गणत त्र की स्थापना की जो एक प्रकार से जनता की प्रजातन्त्रात्मक अधिनायकशाही है, जिसका नेतृत्व श्रमिक वग क हाथ म रहा और जो श्रमिको व किसानो की मित्रता पर आधारित है । जनवादी शासन की स्थापना स साम्यवाद की स्थापना

व सस्थाओ से अपने सम्ब धो म दल का प्रतिनिधित्व करती है, यह दल की विभिन्न सस्थाओ को सगठित करती है और उनके कार्यों का निदेशन भी। दल के समाचार-पत्रो व साहित्य प्रकाशन के लिए सम्पादको की नियुक्ति भी यही करती है, और के द्रीय कोष का प्रशासन भी करती है।

दलीय सगठन का यही अग के द्रीय समिति का सम्पूण काय करता है। प्रेमीडियम दल की मानव शक्ति और साधनो का वितरण करती है और यह के द्रीय सोवियत सघ सावजनिक सगठनो के काय का माग दशन करती है। सक्षेप म, सोवियत शासन के सम्पूण राजनीतिक और प्रशासनिक तन्त्र का सचालन यही अग करता है और यह काय उनमे दल के सदस्यो के समूहो द्वारा किया जाता है। प्रेसीडियम दल के सगठन का सर्वोच्च अग (apex) है और दल के सर्वोच्च नेता इसके सदस्य हाते ह। जिस प्रकार से नीचे के सगठनो म ब्यूरो होता है उसी प्रकार सर्वोच्च सगठन म प्रेसीडियम है। 1960 मे सदस्यो क उम्मीदवारी की सख्या क्रमश चौदह और दस थी। फाइनर के अनुसार, प्रेसीडियम को एक दल का मन्त्रिमण्डल समझा जा सकता है। यह दलीय काग्रस अथवा के द्रीय समिति की साधारणतया परवाह नही करती। वास्तव म इसने दल की अन्य सस्थाओ पर अधिकार प्राप्त कर लिया है। सचिवालय दल की सभी कायवाहियो का निदेशन करन वाला तथा उनमे सम वय स्थापित करने वाला य त्र है। दल का जनरल सेक्रेटरी होने के नाते सगठन म स्टालिन का स्थान सबसे ऊँचा था। उसी के कायकाल म सचिवालय ने नीति को क्रियात्मक रूप देने वाले अग के स्थान पर कायकारिणी का रूप पाया था।

दलीय निय त्रण समिति—इसका चुनाव के द्रीय समिति करती है और इसके मुख्य कृत्य य है—(1) दल के सदस्यो व उम्मीदवारो द्वारा दलीय अनुशासन की देख रेख करना और उसका अतिक्रमण करने वाले से स्पष्टीकरण मागना। (2) प्रादेशिक व गणराज्यो की क द्रीय समितियो द्वारा निकाले गय सदस्यो की अपीलो की जाच करना। (3) गणत त्रीय, प्रादेशिक व रीजनल सगठनो म सर्वोच्च सगठन के प्रतिनिधियो को नियुक्त करना। युवक सगठन के अतिरिक्त साम्यवादी दल म नवयुवको के भी सगठन है। यग पायनियर उन स्कूलो क बच्चो को कहा जाता है, जो लैनिन यग पायनियस नामक सस्था के सदस्य होते है। यह सगठन किशोरो का जन सगठन है जिसमे नौ और चौदह वप के बीच की आयु के बच्चे सगठित है। यग कम्युनिस्ट लीग का ही सक्षिप्त नाम 'कॉम्सोमोल (Komsomol) है। चौदह से छब्बीस वप तक की आयु के युवक और युवतियाँ इसके सदस्य बन सकते है। सदस्य बनने के लिए इसके नियमो और कायक्रमो को मानना और इसके किसी एक सगठन मे काय करना आवश्यक है। ये सगठन फक्ट्रियो, राज्यीय तथा सामूहिक खेतो, सस्थाओ, स्कूलो और उच्च शिक्षा के सस्थापको म स्थापित किय जाते है। इसका मुख्य उद्देश्य युवको को देश के प्रति निष्ठापूण सेवा की भावना मे प्रशिक्षण देना है। यह सगठन देश के राजनीतिक जीवन व साम्यवादी समाज के निर्माण म सक्रिय हाथ बँटाता है और युवको मे श्रम के प्रति प्रेम पदा करता है। इसके एक लाख से ऊपर सदस्य सोवियतो के प्रतिनिधि चुने गये है और 7,000 सदस्य सोवियत वीर की उपाधि पा चुके है।

लोकत त्रात्मक के द्रीकरण—यह दल के सगठन का अति महत्त्वपूण माग दशक सिद्धा त है। इसका अथ यह है (अ) नीचे से लेकर ऊपर तक के सभी नायक निकायो का चुनाव होता है। (आ) दल के विभिन्न निकाय समय समय पर अपन दलीय सगठन को रिपोट देते है। (इ) दल म कडा अनुशासन और अल्पमत की बहुमत के प्रति अधीनता। (ई) उच्चतर निकायो के निणयो का निम्न स्तरो के निकायो के द्वारा पूण बाध्यता के साथ पालन। इस सिद्धान्त के समथक यह दावा करते है कि दल के भीतर लोकत त्र है क्योकि दल के सभी निकायो का चुनाव होता है, प्रत्येक निकाय वडे निकाय क प्रति उत्तरदायी है और दल मे आत्म आलोचना का सिद्धान्त लागू है। आलोचको का कहना है कि दल मे चुनाव वास्तविक नही होते, दल के अधिकारियो को

मोर्चे के नाम से साम्यवादी दल अ य दलो को अपने ध्येय की प्राप्ति का साधन मात्र ही बनाता रहा है। अ य छोटे दलो को साम्यवादी इसलिए भी सहन करते है जिससे कि उनके द्वारा विदेशो को यह विश्वास हो जाये कि चीन म अ य दलो को सहन किया जाता है और यह भी कि चीन म मिली जुली सरकारे हैं।

वास्तव म, चो चिंग वेन के अनुसार, अ य दलो का समूह के सदस्यो को सरकारी पदो पर केवल दिखावे के लिए रखा जाता है और उ ह कोई महत्त्वपूर्ण पद नही दिय जाते। विदेशो म प्रचार हेतु भेजे जाने वाले प्रतिनिधि मण्डलो म उनके सदस्यो को सम्मिलित किया जाता है और विशेषकर विदेशो से आये दशको को ऐसे व्यक्तियो से मिलने के अवसर दिये जाते हैं। छोटे दलो के वास्तविक पद के बारे म स्थिति इस प्रकार है 'साम्यवादी शासन की स्थापना से पूव चीन म सात छोटे राजनीतिक दल व समूह थे जिनके अपने ध्येय और सिद्धा त थे। व अपने कायक्रम निर्धारित कर उनके अनुसार चलते थे। पर तु साम्यवादी शासन म सम्मिलित होने के उपरा त उन दलो के अपने कायक्रमो का अ त हो गया। प्रत्यक दल के सशोधित सविधान म कहा गया है कि 'इस दल (अथवा लीग व सघ) का कायक्रम सामा य कायक्रम है और यह दल चीनी साम्यवादी दल के नेतृत्व को स्वीकार करता है।'

अत इन दो धाराओ के अनुसार छोटे दलो का पद निर्धारित होता है, जिसके परिणाम स्वरूप इनके अलग अलग नाम व सगठन है, पर तु वास्तव म वे अब अपने पुराने अस्तित्व के केवल खोल मात्र है। उ ह किसी स्वत त्र वाद अथवा सदन मे मत विभाजन कराने की मनाही है। चीनी साम्यवादी दल ने ऐसे समूहो और दलो से *सम्ब धित मामलो के लिए एक विभाग (United* Front Works Department) की रचना की है, जो इन दलो व समूहो से निकट सम्पक बनाये रखता है। जब कभी कोई छोटा दल कोई सभा करना चाहता है तो उसे उससे कायवाही व भाषणो आदि के बारे म अनुमाएँ प्राप्त करनी होती हैं। ऐसे ही उसके प्रस्तावो पर प्रकाशित होने से पूव इस विभाग की स्वीकृति लेनी आवश्यक है। वास्तव मे इन दलो को अ साम्यवादी दल कहना उचित नही है, क्योकि उनके सदस्य साम्यवादी न होते हुए भी साम्यवाद के विरोधी नही है और उ हे साम्यवाद के लक्ष्य व साम्यवादी दल के शासन का विरोध करने का भी अधिकार नही है। अतएव ये दल किसी प्रजात त्रीय देश म स्वत त्र राजनीतिक दलो के सदृश नही हैं।

11 युगोस्लाविया मे राजनीतिक दल

साम्यवादी दल—युगोस्लाविया म साम्यवादी दल का सगठन सोवियत सघ या अ य किसी भी देश के साम्यवादी दल से भिन्न न था सभी दशो की भाँति युगोस्लाव साम्यवादी दल का सगठन भी प्रजाताि त्रक के द्रीकरण के आधार पर हुआ। जिसका अथ है कठोर दलीय अगो द्वारा सगठनो *के सामने नियत काल पर अपने कार्यों की रिपाट देना, निम्न स्तर के सगठनो द्वारा ऊपर के दलीय* सगठनो के आदेशो व निणयो का पालन और सर्वोच्च से लेकर निम्न स्तर तक के दलीय प्रशासन अगो का चुनाव। सिद्धा त तथा व्यवहार दोनो म ही दलीय सरचना पिरामिड के समान थी। निम्न स्तर पर छोटे छोटे सगठन सल थे। इसी स्तर पर दलीय नीतियो को कार्यान्वित किया जाता है। ऐसे सगठन सभी स्थानो पर पाये जाते थे, और इनके सदस्यो की सख्या तीन से लेकर सैकडो तक हो सकती थी। उनके ऊपर स्तरो पर दलीय सगठन की इकाईयाँ ये थी—कम्यून, टाउन, जिला और वाड, प्रा त (वाजवोदीना) और प्रदेश (Kosovo-Metohija), जनवादी गणत त्र और राष्ट्रीय। 1952 म छठी काग्रेस के अवसर पर साम्यवादियो ने सगठन का नाम साम्यवादी दल के बजाय युगोस्लाविया के साम्यवादियो की लीग (League of Communists of Yugoslavia) रखा। विभिन्न स्तरो पर लीग के सगठन की सरचना कुछ इस प्रकार है

तक के सक्रमण काल मे दल का सबसे महत्त्वपूण काय पग प्रति पग कृषि, दस्तकारियो और पूजीवादी उद्योग तथा वाणिज्य का समाजवादी परिवतन करना और देश का औद्योगीकरण करना है। अब जो भी पूजीवादी स्वामित्व शेष है उसे सम्पूण जनता के स्वामित्व मे बदलना है। इसी प्रकार जो कुछ भी व्यक्तिगत स्वामित्व बचा है उसे श्रमिक वर्गों के सामूहिक स्वामित्व मे बदलना है। समाजवादी समाज के निर्माण की प्रक्रिया म इस सिद्धा त को क्रमिक रूप से कार्यान्वित किया जायेगा 'प्रत्येक व्यक्ति से उसकी योग्यता के अनुसार काम लेना प्रत्येक व्यक्ति को उसके काम के अनुसार पारिश्रमिक देना।' साथ ही पुराने शोषको को शा तिपूण ढग से सुधार कर अपने परिश्रम पर जीवित रहने वाले व्यक्ति बनाना है।

साम्यवादी दल का यह महत्त्वपूण काय है कि वह राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था को नियोजित ढग से विकसित करे और जितना शीघ्र हो सके देश का औद्योगीकरण करे चूकि चीन एक बहु-राष्ट्रीय राज्य है, अतएव साम्यवादी दल को विभिन्न राष्ट्रीयताओ क पद को उठाने के लिए विशेष प्रयत्न करने हैं। अल्पसख्यक राष्ट्रीयताओ म सामाजिक सुधार उन्ही के द्वारा उन्ही की इच्छा के अनुसार होते है। साम्यवादी दल को चीन के जनवादी प्रजात त्रात्मक अधिनायकतन्त्र को अथक प्रयत्नो द्वारा ठोस बनाना है। दल को श्रमिको और किसानो की मित्रता का सुदढ करना सभी देशभक्त शक्तियो के सयुक्त मोर्चे को ठोस बनाना तथा अ य सभी राजनीतिक दलो व प्रजात त्र के समथको से स्थायी सहयोग को सुदृढ बनाना है। अ तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे साम्यवादी दल, शान्ति, प्रजात त्र और समाजवाद के कम्प के अन्य सभी देशो से मित्रता को सुदृढ बनाने का प्रयत्न करेगा। दल विश्व के विभिन्न भागो मे चलाय जा रहे सघर्षो का समथन करता है। इसका नारा है—'सभी देशो के सवहारा वग एक हो।'

सयुक्त मोर्चा—साम्यवादी दल के सवप्रमुख नेता माओ त्से तुग ने कई बार कहा था कि साम्यवादी दल ने चीन म सत्ता पाने के लिए तीन शस्त्रो का प्रयोग किया—मार्क्सवाद लेनिनवाद सशस्त्र सेनाएँ और सयुक्त मोर्चा जिन्हे साम्यवादी दल के नेता आवश्यक समझते रहे हैं। अतएव चीन मे सयुक्त मोर्चे का विशेष महत्त्व रहा है। 1922 मे चीनी साम्यवादी दल ने अपनी घोषणा मे अपने दल और राष्ट्रवादी दल कोमिन्ताग—के साथ सयुक्त मोर्चा बनाने की बात पर बल दिया, जिसका उद्देश्य प्रजातन्त्रात्मक क्रान्तिकारी आन्दोलन का सचालन था। 1935 म दल ने जापान तथा साम्राज्यवाद विरोधी मोर्चा बनाने का सुझाव रखा। 1937 म साम्यवादी दल की राजनीतिक ब्यूरो न सयुक्त मोर्चे का कायक्रम अपनाया। तीसरी बार साम्यवादी दल ने सत्ता पर अधिकार पाने के लिए अन्य प्रजातन्त्रीय दलो स मिलकर सयुक्त मोर्चा बनाया। 1 अक्टूबर 1949 को माओ ने चीन मे जनवादी गणत त्र की स्थापना की घोषणा की। जैसा स्वाभाविक था, केन्द्रीय जनवादी सरकार म अन्य प्रजातन्त्रात्मक दलो व समूहो को भी भाग मिला। इसी कारण अभी तक साम्यवादी चीन मे अन्य प्रजातन्त्रात्मक दलो का अस्तित्व शेष है।

सरकारी दृष्टि से चीनी साम्यवादी दल उन अनेक दलो और समूहो मे से एक हैं जो एक प्रकार से मिली-जुली सरकार बनाए हुए हैं, यद्यपि साम्यवादी दल खुलकर स्वीकार करता है कि वह मिली जुली सरकार का नतृत्व करता है। पर तु यह स्पष्ट है कि दलीय गठबन्धन म अन्तिम सत्ता का प्रयोग साम्यवादी दल ही करता है। इसके नेता राष्ट्रीय, प्रादेशिक और स्थानीय सरकारो म सबसे महत्त्वपूण स्थानो (पदो) पर आसीन है, इसका सशस्त्र सेनाओ पर कडा नियन्त्रण है, और यह उन जनसाधारण के सगठनो के पीछे चालक शक्ति है जोकि सभी स्थानो म ऊपर की ओर अत्यधिक बडे राष्ट्रीय सघो तक विस्तृत है, जिनमे किसान, स्त्रियाँ, युवक व युवतियाँ, विद्यार्थी शिक्षक और जीवन के अन्य क्षेत्रो म काम करने वाले चीनी सम्मिलित हैं। परन्तु कुछ आलोचको का मत है कि चीनी साम्यवादियो ने सयुक्त मोर्चे को एक जाल व साधन बनाया हुआ है। सयुक्त

केवल ऐसे साधना द्वारा किया जा सक्ता है जैसे समाजवादी फाम और कृषि सहकारी सगठन, जोकि आर्थिक और प्रजातांत्रिक सामाजिक विकास के परिणाम हो। एलाये स के विधान के अनुसार उसके सगठनो मे सदस्या को भूमिगत आधार पर एकत्रित (सगठित) किया जाता है—बस्तियो, गावो, कम्यूनो, कस्बा, जिला, प्रदेशो और प्रा तो म। प्रत्येक गणत त्र के समस्त सदस्यो से मिलकर गणतन्त्रीय एलाय स बनती है और देश की सोशलिस्ट एलाय स म सभी गणत त्रा के सदस्यो को सम्मिलित किया जाता है। एलाये स मे व्यक्तियो और सगठनो का ही सदस्य बनाया जाता है। सगठन की आधारभूत इकाइया स्थानीय शाखाए है जिनके ऊपर कम्यून, नगर, जिले व प्रान्तो के सगठन है इसका सर्वोच्च अग काग्रेस है और दो काग्रेसो के मध्यकाल म फेडरल बोड है जो इसके सगठना का नेतृत्व करती है। इनके अतिरिक्त फेडरल बोड विभिन्न आयोग भी बनाती है यथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो, प्रेस और सामाजिक सगठनो के लिए आयोग आदि। दो काग्रेसो के बीच म फेडरल बोड सवशक्ति प्राप्त अधिवेशन बुलाती है, जिनम विभिन्न शाखाओ से सम्बंधित प्रश्नो तथा युगोस्लाविया की सामान्य नीति पर विचार होता है। 1958 मे एलायन्स के कुल सदस्यो की संख्या लगभग 75 लाख थी। इसके अतिरिक्त इसके 110 सामाजिक राजनीतिक सगठन भी सदस्य थे, अत एलायेन्स के कुल सदस्या की अनुमानित सख्या उस समय लगभग एक करोड 20 लाख थी।

साम्यवादियो की लीग और सोशलिस्ट एलायन्स के आपसी सम्ब धो का आधार घनिष्ठ पारस्परिक ब धन व सहयोग है। यद्यपि उनके ध्येय एक समान है, फिर भी व दो पृथक् और स्वत त्र सगठन है। कार्डेल्ज के मतानुसार 'साम्यवादियो की लीग का मुख्य काय विचारधारा के क्षेत्र मे सामा य नेतृत्व तथा जनसाधारण मे राजनीतिक व शैक्षिक काय करना है जबकि सोशलिस्ट एलाये स का सम्ब ध विशिष्ट राजनीतिक और अ य सामाजिक प्रश्नो स है। सक्षेप म साम्यवादी लीग मे बैठकर व्यापक और सामा य नीति का निर्धारण करते हैं और फिर बाद म व्यक्तिगत रूप म उस नीति को विशिष्ट स्थितियो मे लागू करने म सोशलिस्ट एलाय स का नेतृत्व करते है। अ त मे, साम्यवादियो की लीग के नेतृत्व करने वाली भूमिका क्रमश कम होगी और लुप्त हो जायेगी, यह बात प्रत्यक्ष समाजवादी प्रजात त्र और समाज म विरोधो तथा सभी प्रकार से, बल प्रयोग के, जोकि इन विरोधो से उत्पन्न होते है, मुर्झाने पर निभर करेगा।[1] इस प्रकार लीग म केवल साम्यवादी ही सदस्य हैं और उसका काय सामान्य नीति का निर्धारण करना है और सोशलिस्ट एलाये स म साम्यवादी व अन्य व्यक्ति व सगठन सम्मिलित है, जो साम्यवाद के समथक है और साम्यवादियो से ही माग दशन ग्रहण करते हैं। सोशलिस्ट एलाये स पुराने साम्यवादी मोर्चे का ही नया रूप है।

साम्यवादी दल, लीग तथा समाजवादी एलाये स म आरम्भ स ही माशल टीटो का स्थान सवप्रमुख रहा है। वह एक अधिनायक स कुछ कम परन्तु एक सांविधानिक राष्ट्रपति स बहुत अधिक रहा है, अतएव उसका स्थान अनोखा है। उसकी वास्तविक तथा विवादहीन शक्ति का स्रोत उसका साम्यवादी दल म प्रधान स्थान है, केन्द्रीय समिति व कायकारिणी समिति के केवल सभापति ही नही वरन् दल के नेता है। वास्तव म, युगोस्लाविया म आरम्भ से ही एक प्रकार का सामूहिक नेतृत्व स्थापित हुआ। उसम टीटो का स्थान प्रधान और अन्य किसी भी नेता से कहीं अधिक महत्त्वपूण रहा। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि टीटो की शक्ति का स्रोत केवल उसके साम्यवादी अनुयायी ही नही, वरन् उसका राष्ट्रीय नेतृत्व है। युगोस्लाविया के प्राय सभी वग और विभिन्न राष्ट्रीय समूह उस देश का सवमा य नेता स्वीकार करते हैं।

[1] *Facts about Yugoslavia* (1966) p 69

(1) युगोस्लाव सघ के सम्पूण क्षेत्र के लिए लीग की काग्रेस और लीग की केन्द्रीय समिति, (2) इसी के समान गणतन्त्रा के स्तर पर सगठन हैं, (3) प्रात और प्रदेश के स्तर पर प्रातीय व प्रादेशिक सम्मेलन तथा समितियाँ, (4) इसी प्रकार कस्बो, कम्यूनो के लिए सम्मेलन व समितियाँ, और (5) उद्यमो, ग्रामो, सेना की इकाइया आदि के लिए आधारभूत सगठन की सामान्य सभा।

लीग का सर्वोच्च अग लीग की काग्रेस है, जो चार वष की अवधि के पश्चात एकत्रित होती है। काग्रेस ही लीग के लिए कायक्रम और विधान पास करती है, दो काग्रेसो के बीच मे की गयी कायवाहियो की रिपोट पर विचार करती है, लीग की नीति को निर्धारित करती है और केन्द्रीय समिति का चुनाव करती है। लीग की काग्रेस के निणयो को केन्द्रीय समिति कायरूप मे परिणत करती है, लीग की नीति और अभिवृत्तियो को तैयार करती है, सगठन के विकास का अध्ययन करती है और महत्त्वपूण राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा विचाराधारा सम्बन्धी समस्याओ का अध्ययन करती है। केन्द्रीय समिति अपनी प्रेसीडियम और लीग के प्रधान तथा अपनी कायकारिणी समिति, जिसका अध्यक्ष सेक्रेटरी होता है, और अपने आयोगो तथा उनके सभापतिया को चुनती है। लीग के प्रधान माशल टीटो है।

लीग के सगठन, अग और मुख्य निकाय अपने अपने काम म स्वतन्त्र है, परन्तु बहुमत के निणय अल्पसख्यक समूह के लिए भी मानने अनिवाय हैं। सभी अग और मुख्य निकाय निर्वाचित है और अपने कार्यों के लिए उनके प्रति उत्तरदायी हैं जो उन्हे चुनते हैं। इन चुनावो मे प्रत्यक उम्मीदवार का चुनाव गुप्त मतदान द्वारा होता है और प्रत्यक चुनाव पर कम से कम $\frac{1}{3}$ सदस्य नये चुने जाते हैं। कोई भी सदस्य किसी कायकारी पद पर दो बार चुना जा सकता है और लगातार दो बार से अधिक अवधि के लिए केवल अपवाद रूप मे ही चुना जा सकता है। लीग का काय सावजनिक है, स्वशासन के अनगिनत निकायो और सामाजिक सगठनो, विशेषकर समाजवादी एलायेन्स मे साम्यवादी सक्रिय सदस्य है। इन्ही निकायो म, साम्यवादियो की राजनीतिक और विचारधारा सम्बन्धी कायवाहियो द्वारा साम्यवादियो की लीग के माग दशक भाग की पूर्ति की जा सकती है। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो के क्षेत्र मे लीग समाजवादी अन्तर्राष्ट्रवाद से माग दशन प्राप्त करती है। लीग अन्य साम्यवादियो, काम करने वाला और अन्य साम्राज्य विरोधी, प्रगतिशील व प्रजातन्त्रात्मक दलो और आन्दोलनो से सहयोग करती है तथा विश्व के सभी समाजवादी, स्वातन्त्र्य और प्रगतिशील आन्दोलनो को अपना समथन प्रदान करती है।

सोशलिस्ट एलायेन्स (The Socialist Alliance of Working People of Yugoslavia)—यह युगोस्लाविया मे सबसे अधिक व्यापक राजनीतिक सगठन है जिसका निर्माण युगोस्लाविया के जनवादी मोर्चे की चौथी काग्रेस पर फरवरी 1953 म हुआ था। 18 वष से अधिक आयु का प्रत्येक व्यक्ति इसका सदस्य बन सकता है। समाजवादी एलायेन्स के सभी मुख्य निकायो का चुनाव गुप्त मतदान द्वारा होता है और वे उनके प्रति उत्तरदायी है जो कि उन्हे चुनते हैं। सविधान म कहा गया है कि एलायेन्स म नागरिक सामाजिक गतिविधियो के सभी क्षेत्रो म उठे सामाजिक राजनीतिक प्रश्नो पर विचार विमश करते है, मतो का समन्वय करते हैं और उन समस्याओ के हल के बारे मे प्रस्ताव पास करते है, समाजवादी एलायेन्स एक प्रकार का विशिष्ट प्लेटफाम है, जहाँ विरोधी विचारो का टकराव होता है और सामान्य समाजवादी आधार पर नीति की जाती है। इसम प्रत्येक नागरिक को अपने प्रस्तावो को रखने का और उस स्थानीय व राष्ट्रीय समुदाय से सम्बन्धित मामलो के बारे म अपनी आलोचना व्यक्त करने का भी अवसर मिलता है।

समाजवादी एलायन्स का मत है कि आन्तरिक क्षेत्र म बिना प्रजातन्त्र के समाजवाद नही आ सकता, जोकि उत्पादको के इस अधिकार से स्पष्ट होता है कि उन्हे अथ व्यवस्था का प्रबन्ध सौप दिया गया है। इसका यह भी मत है कि ग्रामीण प्रदेशो मे समाजवाद का विकास

करता है, पर दबाव गुट कहलाता है।' राजनीतिक दल और दबाव गुट में मौलिक भिन्नता है, यद्यपि दोनों का ही उद्देश्य अपना हित सिद्ध करना होता है। राजनीतिक दल अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु राजनीतिक साधन अपनाता है अर्थात् वह शासकीय पदों पर अपने सदस्यों को निर्वाचित कराने, राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने तथा प्रत्यक्ष रूप में शासन कार्यों में भाग लेकर अपने लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है, लेकिन दबाव गुट का उद्देश्य शासन संस्थाओं पर प्रत्यक्ष नियन्त्रण स्थापित करना नहीं होता, वह तो शासन-संस्थाओं तथा राजनीतिक संगठनों के ऊपर दबाव डालकर अपने हितों को पूर्ण करना चाहता है। माइरन वीनर के अनुसार, 'हित समूह अथवा दबाव गुट से अभिप्राय एक ऐसे ऐच्छिक रूप से संगठित समुदाय से है, जो प्रशासकीय ढाँचे से बाहर रहकर, सरकारी अधिकारियों के निर्वाचन व मनोनयन तथा सार्वजनिक नीति के निर्माण और क्रियान्वयन को प्रभावित करने का प्रयास करता है।'[1] फाइनर फसिल्स ने मत व्यक्त किया है कि 'दबाव गुट उन्हें कहते हैं जो शासकीय कार्य कलापों द्वारा या उनके बिना ही राजनीतिक परिवर्तन लाने का प्रयत्न करें और जो स्वयं किसी विधायिका में उस समय विशेष में प्रतिनिधित्व प्राप्त राजनीतिक दल के रूप में न हों।'

राजनीतिक दल और दबाव गुट में अन्तर—(1) राजनीतिक दल दबाव गुट की अपेक्षा अधिक विस्तृत संगठन है। इसके सम्मुख अनेक राजनीतिक कार्यक्रम रहते हैं। इसके विपरीत दबाव गुट का मुख्य लक्ष्य अपने समूह के हितों की रक्षा करना होता है। इसका स्वरूप राजनीतिक नहीं होता, इसका कार्यक्रम सीमित और प्रभाव का क्षेत्र भी संकुचित होता है। (2) राजनीतिक दल निर्वाचनों में सक्रिय भाग लेते हैं जबकि दबाव गुट चुनावों में प्रत्यक्ष रूप से कोई महत्त्वपूर्ण भाग नहीं लेते। (3) राजनीतिक दल मुख्यतः शासन के संचालन और नियन्त्रण के उद्देश्य से प्रेरित होता है और इसलिए निर्वाचन लड़कर विजय की अपेक्षा रखता है। दबाव समूह केवल अपने सामान्य हितों से सम्बन्धित सार्वजनिक नीति को अपने अनुरूप करवाने में ही रुचि रखता है। (4) राजनीतिक दल विधानमण्डल में कार्य करते हैं, जबकि दबाव गुट विधानमण्डल के बाहर रहकर कार्य करते हैं। (5) दबाव समूह एकरस हितों का प्रतिनिधित्व करते हुए सरकार पर प्रभाव डालते हैं। राजनीतिक दल सत्ता प्राप्त करके नीति निर्धारण कार्य करना चाहते हैं। राजनीतिक दल में अनेक हित समूह सम्मिलित होते हैं, इस प्रकार राजनीतिक दल समाज में एकीकरण का महत्त्वपूर्ण कार्य करता है।[2]

आधुनिक काल में राज्यों का स्वरूप अधिकाधिक लोक कल्याणकारी होता जा रहा है, अतः राज्य की गतिविधियाँ अत्यन्त व्यापक होती जा रही हैं। व्यक्ति के जीवन के विविध पहलुओं के सम्यक् विकास हेतु आर्थिक, व्यापारिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में अनेक समूहों का विकास हो रहा है क्योंकि व्यक्ति यह अनुभव करने लगा है कि वह किसी संगठित समूह के माध्यम से ही अपने हित साधन के लिए राज्य तथा शासन से लाभ प्राप्त कर सकेगा। अतः समान हितों में आस्था रखने वाले व्यक्ति दबाव गुटों की संरचना करके अपने प्रतिनिधियों अथवा अभिकर्त्ताओं

---

[1] By interest or pressure group we mean any voluntary organised *group, outside* of the governmental structure which attempts to *influence* the nomination or appointment of governmental personnel the *adoption* of public policy its administration or its *adjudica*tion —Myron Weiner

[2] *Fundamentally* pressure groups are the representation of homogeneous interests *seeking* influence The interests group is strong and effective when it has a directed *specific* purpose Political parties on the other hand seeking office and directed *towards* policy decisions combine luterogeneous groups In *fact it is one of their major* thunes to reconcile the diverse *forces* within political society Theirs is an integrative function which is not the *domain of the* interest groups —Neumann in Ball A R *op cit*, p 106

इक्कीसवा अध्याय

दबाव अथवा हित समूह

1 दबाव समूह और राजनीतिक दल के बीच अन्तर

आधुनिक युग म सामाजिक जीवन की बढती हुई जटिलता और उग्र विषमताओ क कारण व्यक्ति की आवश्यकताओ और हितो म निरतर वद्धि हो रही है। अपनी उत्तरोत्तर बढती हुइ आवश्यकताओ की परिपूर्ति के लिए व्यक्ति स्वय सक्षम नही है और न ही वह राज्य क माध्यम से उन्ह पूर्ण करने की आशा रख सकता है। जनतन्त्र के विकास के कारण समाज मे विभिन्न हितो और स्वार्थों को लकर अनेक प्रकार के समूहो अथवा गुटो का निर्माण होने लगा है। व्यक्ति की बहुविध आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु य समूह इतने महत्त्वपूर्ण बन चुके है कि बहुधा व्यक्ति राज्य की अपक्षा इनके प्रति अधिक निष्ठा रखता है। इन्ही समूहो को हित समूह (interest groups) अथवा दबाव गुट (pressure groups) के नाम स अभिहित किया जाता है। ओडगाड ने लिखा है— एक दबाव समूह ऐस लोगो का औपचारिक सगठन है जिनके एक अथवा अधिक सामा य उद्देश्य या स्वार्थ होते हैं और जो घटनाओ के क्रम को, विशेष रूप स सावजनिक नीति के निर्माण और शासन को इसलिए प्रभावित करने का प्रयास करत हैं कि वे अपने हितो की रक्षा और वृद्धि कर सकें।' वस्तुत जब औद्योगिक, व्यापारिक, व्यावसायिक अथवा समाज के अ य भाग, व्यापार सघो या व्यावसायिक सगठनो आदि द्वारा प्रतिनिधित्व प्राप्त करके किसी कानून या विधि व्यवस्थापन को बनाने या हटाने आदि की दृष्टि स व्यवस्थापिका को प्रभावित करने का प्रयत्न करत है तो उन्ह दबाव समूह कहा जाता है। जबकि राजनीतिक दल का उद्देश्य अपनी जनप्रियता के प्रयोग द्वारा सरकार का नियन्त्रण करना और अपनी सामा य नीतियो का सचालन करना होता है, दबाव गुट राजनीतिक सत्ता को हस्तगत करन के स्थान हर सरकारी अधिकारियो को प्रभावित करके अपने हितो की परिपूर्ति करने का प्रयास करते है।

दबाव समूहो की गतिविधियो के महत्त्वपूर्ण पहलू य हैं कि वे राजनीतिक प्रक्रिया (political process) के भाग हैं और वे सरकारी नीति को सुदृढ बनाने या उस बदलन का प्रयास करते है। किन्तु सरकार नही बनाना चाहते।[1] एम० जी० गुप्ता न दबाव गुट की व्याख्या करत हुए लिखा है—'यह एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा समान हितो से युक्त जन समूह सावजनिक मामलो की गतिविधियो को प्रभावित करन का प्रयास करता है, इस दृष्टि से कोई सामाजिक गुट जो औपचारिक रूप से शासन पर निय त्रण प्राप्त करने की कोशिश किये बिना ही प्रशासकीय एव विधायिनी, दोनो प्रकार के राजनीतिक पदाधिकारियो के आचरण को प्रभावित करने का यत्न

[1] A pressure group ha been defined as an organised aggregate which seeks to influence the context of governmental decisions without attempting to place its members in formal governmental capacities —Ball A R *Modern Politics and Government* p 103

अपने आप सामूहिक अधिकारों की रक्षा हेतु गुट उपायों का ही सहारा लेते हैं। वे विधायकों के साथ सम्पर्क स्थापित करते हैं, उनकी गतिविधियों पर निगरानी रखते हैं और सदन में उनके कार्य को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं किन्तु कमेटी-सभा में अधिकतर अपने संगठन के स्वार्थों का अनुसमर्थन ही करते हैं। कभी-कभी सदन समय में रिश्वत, बेईमानी, दूसरों की बदनामी आदि दूषित उपायों का भी आश्रय लेने में वे बाज नहीं आते। मतदाता क्षेत्रों को प्रभावित करने का अब एक नया तरीका निकला है जिसे 'धुंआधार संवीदन' (Grassroots Lobbying) कहते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि किसी प्रश्न पर संसद-सदस्य के पास उसके निर्वाचन क्षेत्र से अगणित पत्र, तार टेलीफोन से संदेश, शिष्ट मण्डल आदि भेजे जायें और उसी प्रश्न पर अखबारों में भी अनेक लेख प्रकाशित किये जायें।

वस्तुतः अमरीका में राजनीतिक दलों का संगठन और अनुशासन अधिक सुदृढ़ नहीं है। वहाँ व्यवस्थापन कार्य मुख्यतः कांग्रेस के सदनों में न होकर समिति-कक्षों में होता है और प्रत्येक विधायक को कोई भी विधेयक प्रस्तुत करने का अधिकार है, अतः वहाँ दबाव गुटों की भूमिका अत्यन्त प्रभावशाली रहती है। संयुक्त राष्ट्र अमरीका ने 1946 में एक कानून (American Federal Regulation of Lobbying Act) बनाया जिसका उद्देश्य दबाव समूहों की लॉबीइंग (Lobbying) पर रोक लगाना है। इसके अन्तर्गत विभिन्न दबाव समूहों का रजिस्ट्रीकरण होता है, उन्हें अपने आय (कोष) के खातों को घोषित करना पड़ता है और यह भी सूची देनी होती है कि उन्होंने किन विधेयकों का समर्थन अथवा विरोध किया। इसके विपरीत ब्रिटेन में समस्त विधि निर्माण के लिए मन्त्रिमण्डल ही उत्तरदायी होता है अतः वह कॉमन्स सभा के बहुमत की सहायता से अपना सारा व्यवस्थापन-सम्बन्धी कार्यक्रम पूरा करता है, इसलिए ब्रिटेन में संसद को लॉबियों के प्रभावों को कोई विशेष महत्त्व नहीं दिया जाता। वहाँ संसदीय शासन प्रणाली के अन्तर्गत कठोर एवं अनुशासनबद्ध द्वि-दलीय व्यवस्था है, इसलिए भी वहाँ दबाव गुट राजनीतिक दलों पर इतना अधिक प्रभाव नहीं डाल पाते जितना कि वे अमरीका की अध्यक्षात्मक पद्धति के अन्तर्गत कांग्रेस के सदस्यों पर डालने में समर्थ होते हैं। फ्रांस की बहुदलीय पद्धति के अन्तर्गत भी दबाव गुट अत्यन्त सक्रिय रहते हैं। वहाँ दबाव गुटों के अन्तर्गत केवल आर्थिक हितों और ट्रेड यूनियनों को ही सम्मिलित नहीं किया जाता वरन् चर्च, विश्वविद्यालयों जैसे विचारधारा वाले समूहों (ideological groups) तथा प्राविधिक, प्रशासनिक समूहों और प्रेस को भी सम्मिलित किया जाता है। संक्षेप में, दबाव डालने वाले समूह राजनीतिक दलों को छोड़कर राजनीतिक जीवन को प्रभावित करने वाली सभी शक्तियों का प्रतिनिधित्व करते हैं।[1] भारत तथा जापान में भी बड़े बड़े उद्योगपतियों के दबाव गुट हैं जो अपने व्यावसायिक हितों की सुरक्षा के लिए सरकार पर प्रभाव डालते रहते हैं और राजनीतिक दलों को उदारता के साथ दान देते हैं।

दबाव गुट आलोचनात्मक मूल्यांकन—आरम्भ में दबाव गुटों को शंकायुक्त दृष्टि से देखा जाता था और उन्हें प्रतिनिध्यात्मक प्रजातन्त्र की जड़ों पर कुठाराघात करने वाला, राजनीति में अनीति और विषमता का प्रचारक तथा भ्रष्टाचार, बेईमानी, घूसखोरी और धोखाधड़ी का पर्यायवाची समझा जाता था। परन्तु प्रजातन्त्र के विकास के साथ साथ उनकी महत्ता को स्वीकार किया जाने लगा और आज उन्हें न केवल जनतन्त्र के नितान्त आवश्यक और अपरिहार्य ही समझा जाता है वरन् व्यक्ति के हितों का संरक्षक भी माना जाता है। राज्य के व्यवस्थापन कार्यों पर इनका प्रभाव निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है और निःसन्देह उन्हें विधानमण्डल के पीछे विधान

[1] Pressure groups include not only economic interests and trade unions but also ideological groups In brief pressure groups represent all the forces at work in political life rather than political parties proper —M Duverger

(agents) के द्वारा राजनीतिक दलो, विधानमण्डलो तथा प्रशासन का सचालन करने वाले अधिकारियो के ऊपर दबाव डालते हैं। दबाव गुटो के कार्य कलाप तथा प्रभाव विभिन्न प्रकार की शासन प्रणालियो म विभिन्न प्रकार के होते ह।

यद्यपि भारत, ब्रिटेन, कनाडा, फास, जापान तथा अ य सभी देशो म अनेक दबाव गुट काय कर रहे हैं तथापि सयुक्त राज्य अमरीका की राजनीति मे इनका प्रभाव अत्यधिक व्यापक है। दबाव गुट ही जनमत तैयार करते है, वे ही सरकार की प्रशासनिक नीतियो को प्रभावित करते हैं तथा उ ही का सरकारी व्यवस्थापन नीति पर भी प्रभाव पडता है। वास्तव मे, दबाव गुट ऐसे विशेष हितो वाल समुदाय है जो देश के व्यवस्थापन को अपने हितो के अनुकूल प्रभावित करने का प्रयत्न करते है और जो सरकारी नीति पर भी अपना प्रभाव डालने की कोशिश करते है। ये सगठन देश के विधायका को अपनी ओर मिलाने का प्रयत्न करत है और सरकारी अधिकारियो को भी प्रभावित करने का प्रयास करते है।

दबाव समूहो के विभिन्न प्रकार—उनम कई प्रकार के भेद होते है। वे स्थायी तथा अस्थायी, आकार म बडे व छोटे, शक्तिशाली या कमजोर हो सकते हैं। अ य आधार पर उन्हे आर्थिक तथा अ य कई बडे समूहो म विभाजित किया जा सकता है। अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काग्रेस, फेडरेशन आफ चेम्बस आफ कामस, किसान सभा आदि आर्थिक हित समूह हैं। डाक्टरो, शिक्षको, वकीलो, विद्यार्थियो आदि के सघ अधिकाशत आर्थिक नही हैं। ब्रिटेन व भारत मे दबाव व हित समूहो की काफी बडी सख्या है कि तु सयुक्त राज्य अमरीका म उनकी सख्या तीन लाख से भी ऊपर है और वे इतने प्रकार के ह कि उनका वर्गीकरण करना भी कठिन है। ऐसे सैंकडो सगठन तो केवल वाशिगटन म हैं जो राष्ट्रीय नीति को अपने हित मे प्रभावित करने का यत्न किया करते है। व ऐसे कानूनो को प्रोत्साहन देते हैं जो उनके लिये लाभकारी हो और अपने हितो के लिये हानिकारक कानूनो का भरसक विरोध करते ह। वे काग्रेस के सदस्यो पर इस बात के लिए जोर डालते है कि व उनके हितो से सम्बद्ध कानूनो का निर्माण करे। अपने हितो के अनुकूल अथवा प्रतिकूल प्रस्थापनाओ के प्रबल समथन अथवा विरोध का जो काय ये विशेष प्रकार के समूह करते है, उसे लॉबीइग (lobbying) कहा जाता है। उदाहरण के लिए, सयुक्त राज्य अमरीका का चेम्बर ऑफ कामस अथवा अमरीका के उत्पादको का राष्ट्रीय समूह अथवा अमरीकी महाजनो (bankers) का सघ आदि ऐसे सगठन हैं जो उद्योगो अथवा अपने व्यापारो के हितो का सरक्षण चाहते हैं। कुछ ऐसे सगठन भी है जि हे निजी विशेष उद्योग या व्यापार म अभिरुचि होती है जसे राष्ट्रीय पेट्रोलियम सघ आदि। अमरीकन फाम ब्यूरो एसोसियेशन आदि कुछ ऐसे सगठन है जो किसानो के हितो की रक्षा करते है। अमरीकी श्रमिक सघ के माध्यम से अमरीका के श्रमिक वग अपने हितो की देखभाल करत है। इनके अतिरिक्त कुछ इस प्रकार के दबाव गुट भी है जो नीग्रो लोगो के हितो का सरक्षण करते है। अमरीकन लीजन (American Legion), अमरीका के वृद्ध सनिक की समिति (The American Veterans' Committee), रेलवे एक्जीक्यूटिव्ज का अमरीकी सघ और अमरीकन मेडिकल एसोसिएशन आदि ऐसे सगठन है जो अपने विशेष व्यापारो अथवा अपने विशिष्ट हितो की देखभाल करते है।

दबाव गुटो की काय प्रणाली—दबाव गुट अपने उद्देश्यो की पूर्ति के लिए कई उपायो का आश्रय लेते है। प्रथम, वे सुदृढ सगठन बनाते है, दूसरे, वे पुस्तको, समाचार पत्रो, विज्ञापनो, रेडियो, भाषणो आदि के द्वारा जनमत को प्रभावित करते है, तीसरे, वे ससद *अथवा काग्रेस* के सभाकक्षो म जाकर काग्रेस के सदस्यो को प्रभावित करने की कोशिश करते हैं। *प्राय आर्थिक* सगठन काग्रेस की लॉबियो को प्रभावित कराने के लिए चतुर वकीलो *या एजेण्टो* की नियुक्ति करते हैं जो कि अपने उद्देश्यो के लिए बडा परिश्रम करते है। परन्तु लॉबी क्षेत्रो के अभिकर्त्ता

नेशनल एसोसिएशन फॉर दी एडवासमेन्ट ऑफ कलड पीपल और वीमेन्स, क्रिश्चियन टम्परन्स एसोसिएशन तथा लीग ऑफ वीमेन वोटस। अमरीकी राजनीति म अनक स्थानीय दबाव समूह भी हैं और एस दवाव समूह भी जिनका सम्बन्ध किसी एक राष्ट्रीय प्रश्न स हा जिन्ह तदथ दवाव समूह (ad hoc pressure groups) कह सकते हैं, क्योंकि ऐसे समूहा की सम्बधित प्रश्न के हल अथवा अन्त हो जान पर आवश्यकता नही रहती और उनका अन्त हा जाता है।

विभिन्न प्रकार के हित (दवाव) समूहा की उपयुक्त सूची अति सक्षिप्त है, किन्तु यह इस बात की स्पष्ट रूप मे सूचक है कि वहाँ पर किस प्रकार के सगठना म जनता के विभिन्न वग सगठित होकर अपने मता का अभिव्यक्त करते हैं और सामाजिक व्यवस्था पर अपना प्रभाव डालते रहते हैं। राजनीतिक गतिशास्त्र (dynamics) को समझन के लिए इनका महत्त्व यह है कि कोई भी हित समूह राजनीतिक समूह बन सकता है, जब भी वह अपने को सावजनिक नीति और राजनीतिक शक्ति सम्बन्धी की कार्यान्विति से सम्बन्ध कर ल। इस अथ म इन समूहा का शक्ति सरचना (power structures) कहा जा सकता है। किसी भी एसी शक्ति सरचना की सदस्यता उसके ध्येय और मूल्य, सगठन, पद-सोपान, एकता, पद, प्रतिष्ठा, कायकुशलता हाती है, और साधन तकनीकी तथा भौतिक दाना ही प्रकार के हाते हैं। अपन लक्ष्या की पूर्ति क लिए प्रत्यक शक्ति सरचना अपने साधना का प्रयोग करती है। य हित जो किसी समूह को जन्म दते हैं अन्य समूहा के हिता से कभी भी अलग नही हाते। हिता को तो केवल सहयोग और सघप की प्रक्रिया द्वारा ही आगे वढाया आ सकता है। इस काय का सबसे उपयुक्त माध्यम प्रचार काय है। इसीलिए हित समूह राजनीतिक प्रचार के प्रमुख निर्माताओ म हैं। अमरीकी दबाव समूहो की एक विशेषता यह है कि उनम द्विन्दलीय हान की प्रवत्ति पायी जाती है, अर्थात् व स्थायी रूप से किसी एक दल का समथन नही करते अथवा एक ही दल स अपना सम्बन्ध नही बनाये रखते। यथाथ म, व तो एक दल को दूसरे दल के विरुद्ध लडान का खेल खेलते रहते हैं। दल स्वय म अच्छी प्रकार से अनुशासित नही है और दवाव समूहा की इस चाल स कि दोनो दला मे अपना पैर रखा जाय—दोनो दलो का चन्दा देकर अथवा दोनो के बीच सावधानीपूण तटस्थता बनाय रखकर—उन्हे काफी लाभ होता रहता है।

3 ग्रेट ब्रिटेन मे हित समूह

ग्रेट ब्रिटेन मे राजनीति से प्रेरित समूहा का उदय कोई नयी बात नही है। उन्नीसवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध म '*Chartist Movement and the Anti Corn Law League*' अति क्रियाशील दवाव समूह थे। परन्तु आजकल उनक प्रचुर मात्रा मे होने का कारण आधुनिक शासन का सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रो म विस्तृत हो जाना है। अतएव विभिन्न प्रकार के समूह सगठित हो गये है जो कि अपने हित म सरकार को प्रभावित करते रहत है। यद्यपि ऐस समूहो और उनकी गतिविधियो को वर्गीकृत करना बडा कठिन है, फिर भी उनका सक्षिप्त वणन कुछ उदाहरणो द्वारा किया जा सकता है। सबसे बडी सख्या म और राजनीतिक दृष्टि से सबसे अधिक प्रभावशाली वे सगठन हैं जिनका सम्बन्ध वर्गीय आर्थिक हितो स है, जिनम ट्रेड यूनियने, ट्रेड एसोसियेशन, चेम्बर ऑफ कामर्स तथा बडे राष्ट्रीय सघ, यथा ट्रेड यूनियन कांग्रेस और क फेडरेशन ऑफ ब्रिटिश इन्डस्ट्रीज हैं। 'एम्स ऑफ इन्डस्ट्री' और 'इकॉनामिक लीग' जैसे सगठन भी परोक्ष रूप म आर्थिक हितो का प्रतिनिधित्व करते है, क्योकि उन दोना का मुख्य काय स्वतन्त्र व्यापार और उद्यम की सावजनिक स्वामित्व क विरुद्ध रक्षा करना है।

अनेक सगठन विभिन्न वर्गों के ऐसे हितो की रक्षा व प्रोत्साहन के लिए काय करते है जो वास्तव मे आर्थिक नही है। उदाहरण के लिए, 'दी एसोसियेशन आफ म्युनिसिपल कार्पोरेशन्स',

मण्डल (legislature behind a legislature) तथा फाइनर के शब्दों में 'एक अज्ञात साम्राज्य' (the anonymous empire) की संज्ञा दी जा सकती है। वस्तुस्थिति यह है कि यदि दबाव गुट भ्रष्ट और अजनतांत्रिक साधन अपना कर अपने क्षुद्र हितों की पूर्ति करना चाहें तो उन पर आवश्यक नियन्त्रण अवश्य लगाने चाहिएं। परन्तु यदि वे जनतांत्रिक साधनों से व्यक्ति के हितों का पूरा करें तो उन्हें पनपने की पूरी स्वतन्त्रता प्रदान की जानी चाहिए क्योंकि वे स्वस्थ और प्रबुद्ध जनमत का निर्माण करने में सहायता देते हैं, शासक के अधिकारियों को जनता की आकांक्षाओं से परिचित कराते हैं, आँकड़े और तथ्य आदि प्रस्तुत करके विधायका को उनके व्यवस्थापन कार्य में सहायता करते हैं तथा जनता और प्रशासन के बीच संचार के मुख्य साधन हैं।[1]

2 संयुक्त राज्य अमरीका में हित समूह

संयुक्त राज्य अमरीका में हित समूहों की संख्या हजारों में है और उनके सदस्यों की संख्या लाखों में है। प्रमुख आर्थिक समूहों का तीन वर्गों में रखा जा सकता है—व्यापार, कृषि और श्रमिक। इन वर्गों के प्रमुख संगठनों के नाम ये हैं—संयुक्त राज्य अमरीका का चेम्बर आफ कामर्स, नेशनल एसोसिएशन आफ मैन्यूफैक्चरर्स, दी अमरीकन फार्म ब्यूरो फेडरेशन, नेशनल फार्मर्स यूनियन अमरीकन फेडरेशन आफ लेबर और कांग्रेस आफ इन्डस्ट्रियल आर्गेनिजेशन। प्राय सभी व्यवसायों के भी राष्ट्रीय संघ हैं जो अपने-अपने हितों को आगे बढ़ाने का कार्य करते हैं। उनके मुख्य उदाहरण ये हैं—अमरीकन मेडिकल एसोसिएशन, नेशनल एज्यूकेशन एसोसिएशन, नेशनल सोसाइटी आफ प्रोफेशनल इन्जीनियर्स और अमरीकन बार एसोसिएशन।

व्यावसायिक समूहों में दो मुख्य प्रकार हैं—प्रथम, वे जो सम्पूर्ण व्यवसाय की ओर से बोलते और कार्य करते हैं। ऐसे समूह यह प्रयत्न करते हैं कि सरकारी व्यय और कर कम रहें सरकार का व्यवसाय पर विनियमन सीमित रहे और सरकार व्यवसाय की अप्रतिबंधित प्रतियोगिता के विरुद्ध रक्षा करे आदि। इसका सबसे अधिक विख्यात उदाहरण 'नेशनल एसोसिएशन आफ मैन्युफैक्चरर्स' है। दूसरे समूह में ऐसे व्यवसाय समूह आते हैं जो विशिष्ट उद्योगों की ओर से बोलते हैं और जिनमें कभी कभी पारस्परिक संघर्ष भी हो जाते हैं। ऐसे समूहों में 'अमेरिकन पैट्रोलियम इन्स्टीट्यूट' और 'एसोसिएशन आफ अमरीकन रेलरोड्स' उल्लेखनीय हैं। कृषि उद्योग से सम्बंधित भी दो प्रकार के दबाव समूह हैं—एक प्रकार के समूह सम्पूर्ण कृषि के लिए बोलते हैं और ऐसी नीतियों को स्वीकार कराने के लिए प्रयत्न करते हैं जैसे खेतों की पैदावार के लिए निम्नतम कीमतें, देश के किसानों की विदेशी उत्पादकों की प्रतियोगिता के विरुद्ध रक्षा। इसका सबसे अच्छा उदाहरण 'अमरीकन फार्म ब्यूरो फेडरेशन' और 'नेशनल फार्मर्स यूनियन' है। दूसरे प्रकार के समूह विशिष्ट वस्तुओं से सम्बंधित हैं जैसे 'दी नेशनल कोआपरेटिव मिल्क प्रोड्यूसर्स फेडरेशन' और 'अमरीकन सोयाबीन एसोसिएशन' हैं।

देशभक्त सोसाइटियाँ और पेंशन प्राप्त सैनिकों के समूह (Veterans group) की संख्या बहुत बड़ी है और वे राजनीतिक क्षेत्र में क्रियाशील भी अधिक हैं। उनमें से अधिक विख्यात ये हैं—अमरीकन लिजियन, दी वेटरन्स ऑफ फारिन वार्स, डाटर्स ऑफ दी अमरीकन रिवोल्यूशन, धार्मिक, सामाजिक, मूलजातीय (racial) और सुधारवादी समूहों के उदाहरण ये हैं—फेडरल कौंसिल आफ चर्चेज ऑफ क्राइस्ट इन अमरीका, दी नेशनल कैथोलिक वेलफेयर कान्फ्रेंस, दी

---

[1] Pressure groups help to prevent Governments from imposing unfair burdens on the unorganized masses They serve as a bridge between policy and popular aspirations In fact, far from being an obstruction to democracy they are really its *sine qua non*

ट्रेड यूनियनें—प्रथम श्रेणी में सम्मिलित समूहों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। उनमें से अधिकतर पर बुद्धिवादियों के छोटे समूहों का नियन्त्रण है और उनका झुकाव राजनीति की ओर है। उनमें से कुछ का तो राजनीतिक दलों या ओं दोनों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। ऐसे समूहों के सुविदित उदाहरण ट्रेड यूनियनें, किसान संगठन, विद्यार्थी समूह और सांस्कृतिक संघ हैं। ट्रेड यूनियनों का नेतृत्व अभी तक बुद्धिवादियों के हाथों में है और उनका दलों के प्रमुख राजनीतिक दलों से ऐसा सम्बन्ध है कि उन्हें उनका सहायक संगठन कहा जा सकता है। अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस साम्यवादी दल से सम्बन्धित है, इण्डियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस, कांग्रेस का ही श्रमिक संगठन है, हिन्द मजदूर सभा समाजवादी दल से सम्बन्धित है, और युनाइटेड ट्रेड यूनियन कांग्रेस का सम्बन्ध छोटे वामपंथी दलों से है और इसका झुकाव साम्यवादियों की ओर है। इस प्रकार भारत में मजदूरों के चार प्रमुख संगठन हैं।

ट्रेड यूनियनों को शिक्षित व्यक्तियों ने प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व संगठित किया था। यह आश्चर्य की बात है कि उनका नेतृत्व अभी तक ऐसे ही व्यक्तियों के हाथों में जारी रहा है। उसका एक परिणाम यह रहा है कि 1920 के बाद से ही वे राजनीतिक दलों से सम्बन्ध रही हैं और उनके प्रति निष्ठा रखती हैं। अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस का विभिन्न यूनियनों के संघ रूप में 1920 में जन्म हुआ था और उस समय वह कांग्रेस के प्रभावाधीन थी। यद्यपि गांधी जी ने सत्याग्रह के प्रथम प्रयोग भारत में बिहार में नील के बगीचों में काम करने वाले मजदूरों के अधिकार या मनवाने के लिए किये थे और उसके बाद गुजरात में भारतीय कपड़ा मिलों के मालिकों व मजदूरों के बीच अच्छे सम्बन्ध बनाये रखने के लिए प्रयत्न किये, उनका ट्रेड यूनियनों से सम्बन्धित मामलों में प्रभाव और हित अहमदाबाद तक ही सीमित रहा, जहाँ उन्होंने टेक्सटाइल लेबर एसोसियेशन को संगठित करने में सहायता दी थी। परन्तु कांग्रेस के भीतर समाजवादियों ने सदैव ही यह प्रयत्न किया कि उनके नेता मजदूरों व किसानों में कार्य करें। साम्यवादी दल के कार्यकर्त्ताओं ने ट्रेड यूनियनों में परिश्रम से कार्य किया और 1929 में उन्होंने अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस पर अपना नियन्त्रण स्थापित कर लिया।

ट्रेड यूनियनों का देश की राजनीति पर काफी प्रभाव रहा है, विशेषकर ऐसे नगरों व क्षेत्रों में जहाँ संगठित मजदूरों की संख्या काफी बड़ी है। परन्तु उनके प्रभाव के परिमित रहने का एक बड़ा कारण उनमें आन्तरिक विभाजन तथा अस्वस्थ प्रतिस्पर्धा हैं। उनके आपसी सम्बन्ध अति कटु रहे हैं और उन्होंने अनुशासन का कोई आचरण नियम संग्रह विकसित नहीं किया है। उनके विषय में प्रा० मौरिस डेविड ने लिखा है, 'भारतीय ट्रेड यूनियनों का विकास उन रेखाओं पर नहीं हुआ है जो संयुक्त राज्य अमरीका और पाश्चात्य यूरोप में परिचित है, अतएव राजनीतिक प्रक्रिया में उनकी भूमिका साधारण रूप में अन्य संसद लोकतन्त्रों की ट्रेड यूनियनों के समान नहीं है। भारत में ट्रेड यूनियनें न तो दबाव समूहों के रूप में ही कार्य करती हैं और न राजनीतिक दलों के रूप में ही। उन्हें तो विभिन्न राजनीतिक दलों के बाजुओं के रूप में मध्यम-वर्गीय नेतृत्व ने संगठित किया है। ट्रेड यूनियन आन्दोलन के इस राजनीतिक प्रयोग ने कांग्रेस सरकारों को राज्य की शक्तियों का प्रयोग मजदूरों को अनुशासित करने तथा उनके कल्याण को विनियमित करने का अवसर दिया है। राज्य की इस भूमिका ने भारत में ट्रेड यूनियनों के स्वरूप और शक्ति को परिवर्तित किया है।'

किसान संगठन—भारत कृषि प्रधान देश है और देश की जनसंख्या में बहुसंख्या किसानों की है, फिर भी मजदूर संघों की अपेक्षा किसानों के संगठन देर से अस्तित्व में आये और इस समय उनके संगठन क्षीण अथवा शिथिलता की दशा में हैं। व्यावसायिक समूह के रूप में किसानों के संगठनों के सामने कठिनाइयाँ रही हैं। यह सच है कि गांधी जी और उनके अनुयायियों ने 1920

जो कि स्थानीय शासन म बरो (boroughs) के पद की रक्षा करता है और दी ब्रिटिश लीजियन, जो कि भूतपूव सनिको के हितो का प्रतिनिधित्व करता है। अन्य अनेक समूह किसी विशेष हित का प्रतिनिधित्व नही करते, वरन् कुछ परापकारी अथवा आदश लक्ष्या की प्राप्ति के लिए कार्य करते है और उन्हे जनता के विभिन्न वर्गों से समथन प्राप्त होता है। इस श्रेणी के मुख्य समूहा के उदाहरण ये है—रॉयल सोसायटी फार दी प्रवी शन ऑफ क्रूएल्टी टू एनीमल्स, दी हावड लीग फॉर पीनल रिफॉम, प्रपोशनल रिप्रेजेन्टेशन सोसायटी।

सेमुएल एच० बीयर (Samuel H Beer) के मतानुसार श्रमिक दल का ब्रिटिश समाजवाद के इतिहास म ही नही ब्रिटिश दबाव राजनीति के इतिहास म भी महत्त्वपूण स्थान है। इस बात के कहन का तात्पय यह है कि श्रमिक दल का उदय और विकास यह बताता है कि उसमे विभिन्न दबाव समूहो का योग रहा है और दल ने एक नयी दबाव राजनीति को विकसित किया। 1870 म अपने आरम्भ से ही नेशनल यूनियन ऑफ टीचस ने, जो मुख्यत प्रारम्भिक स्कूला के अध्यापका की प्रतिनिधि थी, दबाव राजनीति को अपनाया। ऐसे ही ट्रेड यूनियन काग्रेस की पार्लियामेन्टरी कमटी मे सम्पूण सगठित मजदूरो की ओर से लॉबीइग की तकनीको द्वारा मन्त्रिया व पार्लियामन्ट के सदस्यो को प्रभावित करने के प्रयत्न किय। इसी प्रकार अन्य सघो ने भी दबाव राजनीति का सहारा लिया। इस प्रकार के अनेक सघा से मिलकर ही लेबर पार्टी का उदय और विकास हुआ। इसलिए लेखक ने श्रमिक दल को अनक दबाव समूहो का मिला जुला सगठन कहा है।

उसी लेखक के मतानुसार ग्रेट ब्रिटेन की नयी समूह राजनीति (new group politics) मे अनेक उत्पादक समूहा और उपभोक्ता समूहो का महत्त्वपूण भाग है। उत्पादक समूह जो वस्तु सरकार का दे सकते है, वह है परामश, जिसमे सभी प्रकार की उपयोगी सूचना भी सम्मिलित है। उदाहरण के लिए, सांख्यिकीय आंकडे जिसके बिना किसी व्यापार का विनिमय तथा सम्पूण अथव्यवस्था का प्रबन्ध करना सम्भव नही है। देश की प्रतिबन्धित अथ व्यवस्था (managed economy) मे, विशेष रूप से दूसरे विश्व युद्ध के बाद उपभोक्ता समूहो ने भी महत्त्वपूण भाग लिया है। सक्षेप म, दलीय सरकार और समूह राजनीति मे गहरा सम्बन्ध स्थापित हो गया है। यहाँ पर ब्रिटन के विभिन्न क्षेत्रो म मुख्य समूहा के नाम देना ही काफी होगा। व्यवसाय—फेडरेशन ऑफ ब्रिटिश इन्डस्ट्रीज, दी नेशनल यूनियन आफ मेनुफैक्चरस, दी एसोसियेशन ऑफ ब्रिटिश चेम्बर ऑफ कामस, दी ब्रिटिश आयरन एण्ड स्टील फेडरेशन, दी ब्रिटिश मेडीकल एसोसियशन। श्रमिक—दी ब्रिटिश ट्रेड यूनियन काग्रेस। कृषि—नेशनल फॉमस यूनियन। पेन्शन प्राप्त सनिक—दी ब्रिटिश लीजियन। सुधार—दी फेबियन सोसायटी, दी सोसायटी फॉर दी प्रीवेन्शन ऑफ क्रूएल्टी टू एनीमल्स तथा दी सोसायटी फॉर दी प्रीवेन्शन ऑफ क्रूएल्टी टू चिल्ड्रन।

4 भारत मे हित समूह

भारत मे ऐसे समूह का महत्त्व अभी पाश्चात्य देशो की तुलना म बहुत कम है और उनकी सख्या भी अभी तक थोडी ही है, यद्यपि उनके महत्व और सख्या दोना म ही निरन्तर वृद्धि हो रही है। अनेक दबाव या हित समूह का भारतीय राजनीति पर काफी समय से प्रभाव रहा है और अब वह बढता ही जा रहा हैं। भारत म तीन मुख्य प्रकार के दबाव समूह है (1) विशेष हित सगठन, जिनका विकास हाल म ही हुआ है और पाश्चात्य पयवेक्षक के परिचित सामाजिक एव आर्थिक सघो के आधुनिक आधारा का प्रतिनिधित्व करते है यथा ट्रेड यूनियनें, व्यावसायिक समूह, सामाजिक कल्याण अभिकरण अथवा युवा और महिला सगठन। (2) ऐसे सगठन जो परम्परागत सामाजिक सम्बन्धा का प्रतिनिधित्व करत है, यथा जाति व धार्मिक समूह। (3) एसे सगठन जो गाधीवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करत है।

सांस्कृतिक समूह—स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद में भारत के और देशों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हुए। एक ओर भारत तथा दूसरी ओर संयुक्त राज्य अमरीका, ब्रिटेन, सोवियत सघ व चीन आदि बड़े देशों के बीच मित्रता को बढ़ाने के हेतु अनेक सगठन बने और उनकी ओर से विदेशों में प्रतिनिधि मण्डल गये तथा विदेशों से आने वाले प्रतिनिधि मण्डलों का सम्बन्धित सगठनों ने विशेष रूप से स्वागत किया। जबकि भारत ब्रिटिश व भारत अमरीकी सगठन उन देशों की नीतियों का यथासम्भव समर्थन करते रहे हैं, भारत सोवियत और भारत-चीन मैत्री सगठन साम्यवादी नीति के समर्थक रहे हैं। साम्यवादियों के प्रभुत्व अधीन विश्व शान्ति आन्दोलन से सम्बन्धित अखिल भारतीय परिषद् बहुधा सोवियत सघ की अन्तर्राष्ट्रीय नीति का समर्थन करती रही है। इन सगठनों को अप्रत्यक्ष रूप में विदेशों से सहायता मिलती है और ये देश की राजनीति पर प्रभाव डालने का प्रयत्न करते रहे हैं।

व्यावसायिक समूह—भारत में शिक्षित वर्ग के प्रमुख व्यवसाय—सरकारी सेवा, वकालत, डाक्टरी, शिक्षण और इन्जीनियरिंग आदि हैं। अन्य देशों की भाँति भारत में भी इन सभी व्यवसायों में लगे व्यक्तियों ने अपने अपने व्यावसायिक सगठनों का निर्माण किया है। उनमें से ये विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं—अखिल भारतीय मेडिकल कौंसिल, अखिल भारतीय बार एसोसियेशन, अखिल भारतीय केन्द्रीय सरकार के सेवकों के विभिन्न सघ, तथा अखिल भारतीय रेलवेमैंस एसोसियेशन, अखिल भारतीय पोस्टल एण्ड टेलीग्राफ वर्कर्स यूनियन, इत्यादि। भारत में सार्वजनिक कर्मचारियों को मत देने तथा सघ व समुदाय बनाने का अधिकार है, परन्तु उनका अन्य राजनीतिक क्रियाओं में भाग लेना निषिद्ध है। 1960 से पूर्व लोक कर्मचारियों की हड़ताल पर कोई प्रतिबन्ध न था। परन्तु जब जुलाई 1960 में सघीय (केन्द्रीय) कर्मचारियों ने एक देशव्यापी हड़ताल करने का निर्णय किया तो सरकार के आवश्यक सेवाओं की व्यवस्था बनाये रखने सम्बन्धी अध्यादेश के अन्तर्गत उस हड़ताल को गैर-कानूनी घोषित किया गया। सरकारी कर्मचारियों के विभिन्न सगठन, जहाँ कहीं उनके सदस्यों की बड़ी सख्या होती है, लोकसभा व राज्यों की विधानसभाओं के चुनावों में काफी दिलचस्पी लेने लगे हैं और कुछ क्षेत्रों में तो वे फेडरेशन आफ इण्डियन चैम्बर्स के लक्ष्य ये हैं आन्तरिक और विदेशी व्यापार, परिवहन, उद्योग, कारखानों में बनी वस्तुओं, वित्त और अन्य आर्थिक विषयों में भारतीय व्यवसाय को प्रोत्साहन देना, इन सभी विषयों के बारे में सगठित कार्य करना, और पूर्वोक्त आर्थिक हितों को प्रभावित करने वाले विधायन या अन्य कार्य को प्रोत्साहन देने उसका समर्थन अथवा विरोध करने के लिए सभी आवश्यक पग उठाना किन्तु वैध उपायों द्वारा ही इण्डियन मर्चेन्टस चैम्बर ने अपने लक्ष्यों को और अधिक शब्दों में इस प्रकार रखा है भारतीय व्यावसायिक समुदाय के हितों से सम्बन्धित सभी विषयों पर सगठित कार्यवाही करना, और सरकार द्वारा पूर्वोक्त हित को प्रभावित करने वाले प्रत्येक कार्य या विधायन को प्रोत्साहन देने, उसका समर्थन या विरोध करने के लिए प्रत्येक आवश्यक पग उठाना।[1]

व्यापारियों के अन्य महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय सगठनों में 'All India Manufacturers Organisation' और 'Associated Chambers of Commerce of India' हैं। इनमें से प्रथम संयुक्त राज्य अमरीका के 'National Association of Manufacturers' के समानान्तर है और दूसरे सगठन में ब्रिटिश तथा अन्य विदेशी स्वामित्व अधीन फर्में विशेष रूप से सक्रिय हैं। पराधीनता के काल में वाणिज्यिक और औद्योगिक हितों ने कुछ सीमा तक कांग्रेस और राष्ट्रीय

[1] The Indian Merchants Chamber is more candid in its objects namely To secure organised action on all subjects relating to the interests of the Indian business community directly and indirectly and to take all steps which may be necessary for promoting supporting or opposing legislation or other action affecting the aforesaid interest by the government or any department thereof

के वाद किसानो के स्थानीय आन्दोलनो को सत्याग्रह के आधार पर सचालित किया , उनमे बिहार मे चम्पारन के किसानो का आन्दोलन तथा गुजरात म सरदार पटेल के नेतृत्व म बारदोली सत्याग्रह जो कि भूमिकर म वृद्धि के विरोध मे किया गया था, सबसे अधिक सगठित और उल्लखनीय थे। उन आन्दोलनो के परिणामस्वरूप तथा अन्य कारणो से देश के कुछ प्रदेशो म प्रारम्भिक किसान सगठनो का विकास हो गया था उसम काग्रेसी नताओ व कायकर्त्ताओ का योग महत्त्वपूण था। 1930 के बाद काग्रेस म उग्रवादिता के उदय के बाद किसानो को व्यापक आधार पर स्वातन्त्र्य आन्दोलन के अग रूप म, सगठित करने के प्रयत्न किय गये, फलत अखिल भारतीय किसान सभा की स्थापना 1936 म हुई। परन्तु विभिन्न कारणो से अखिल भारतीय किसान सभा के नेता काग्रेसी सहयोगियो से पूणतया स तुष्ट न रह, अत कुछ ही वर्षों म सगठन पर साम्यवादी दल के सदस्यो व समथको का प्रभुत्व कायम हो गया। अखिल भारतीय किसान सभा विभिन्न राजकीय सगठनो के फेडरेशन के रूप मे जारी है। समाजवादी नेतृत्व मे हि द किसान पचायत सगठित की गयी और युनाइटड किसान सभा का सम्बन्ध छोटे वामपथी दलो से रहा है। कुछ समय से काग्रेसी और समाजवादी नेताओ न भू दान यज्ञ आन्दोलन को अपना समथन प्रदान किया है। विभिन्न कारणो से कई वष से किसान और खेतिहर मजदूरो के सगठन भारतीय राजनीति म अधिक सक्रिय और प्रभावशाली नही रह हैं। इस विषय म एक उल्लेखनीय बात यह है कि यद्यपि शहरी क्षेत्रो के हितो के विरोध म ग्रामीण क्षेत्रो के हित कुछ सीमा तक सामान्य है फिर भी किसानो म कोई एक व्यावसायिक हित समूह दिखायी नही पडता। ग्रामीण भारत के सकीण गुटो ने, जो स्थान, जाति, आर्थिक पद आदि पर आधारित है, किसान सगठनो को खण्डो मे विभाजित किया हुआ है।

विद्यार्थी सगठन—किसानो और मजदूरो की अपेक्षा भारतीय विद्यार्थी राजनीतिक चेतना मे कहीं अधिक बढ़े हुए है। वस तो शिक्षित होने के कारण उनका ऐसा होना स्वाभाविक ही है। किन्तु उनम राजनीतिक जागृति का मुख्य कारण यह है कि भारत के विद्यार्थियो ने देश के स्वातन्त्र्य सघष म एक महत्त्वपूण भाग लिया। उसी काल म साम्यवादी दल के प्रभाव म अखिल भारतीय विद्यार्थी सघ का सगठन विकसित हुआ। आगे चलकर काग्रेस के प्रभाव से विद्यार्थियो की राष्ट्रीय सभा की स्थापना हुई। आजकल अखिल भारतीय विद्यार्थी सघ और काग्रेस द्वारा सचालित युवा काग्रेस आदि विद्यार्थियो के कई सगठन बने हैं। यह एक अच्छी बात है कि भारत के विद्यार्थियो मे राजनीतिक जागृति काफी बडी मात्रा मे पायी जाती है परन्तु यह बडी दु खपूण और दुर्भाग्यपूण बात है कि विद्यार्थियो के सगठन विभिन्न राजनीतिक दलो की प्रतिस्पर्धी कायवाहियो के सक्रिय अखाडे बने हुए हैं। प्राय सभी राजनीतिक दल और नेता विद्यार्थियो के सगठनो म अनुचित दिलचस्पी लेते हैं। साथ ही विद्यार्थी और उनके सगठन भी राजनीतिक दलबन्दियो म आवश्यकता से अधिक भाग लेते है। विद्यार्थियो के अन्य अनेक समूह—राष्ट्रीय, राज्यीय अथवा प्रादेशिक और स्थानीय, जिनके साथ कल्याणकारी समूहो, विभिन्न विषयो स सम्बन्धित परिषदो व समितियो, वाद विवाद सघो आदि को भी सम्मिलित किया जा सकता है—राजनीतिक गतिविधियो म भाग लेते है।

महिला सगठन—महिलाओ के सगठन भी अधिक सक्रिय रहे हैं। उनम सबस महत्त्वपूण और उल्लेखनीय अखिल भारतीय महिला सम्मेलन रहा है, जिसकी देश के प्राय सभी प्रदेशो व बडे नगरो मे शाखाएँ हैं। कुछ समय तक उस पर साम्यवादियो का प्रभाव रहा, परन्तु बाद म वह काग्रेस स सम्बद्ध हो गया। इसका प्राथमिक उद्देश्य स्त्री समाज के कल्याण के लिए विभिन्न प्रकार के काय करना तथा उनके कानूनी व सामाजिक पद को सुधारना है। जब भारतीय ससद म हिन्दू कोड बिल के विभिन्न अशो पर विचार हुआ तो इसन एक दबाव समूह के रूप म बडा सक्रिय काय किया। परन्तु अब कुछ समय से उसका सगठन क्षीण तथा निष्क्रिय हो गया है।

जाट सभा, त्यागी सभा, बंगाली समाज आदि सम्मिलित हैं। ये सभी संघ या सभायें अपनी अपनी जाति के हितों की रक्षा तथा उन्हें आगे बढ़ाने के लिए काय करते हैं। भारतीय राजनीति और चुनाव अभियानों में इनका भाग महत्त्वपूर्ण रहता है।

भारत की राजनीति में अभी तक साम्प्रदायिक व जातीय समूहों अथवा संगठनों का महत्त्वपूर्ण भाग है। एक ओर मुस्लिम संगठन और विधायकों व नेताओं के समूह शासन, दल व सरकार पर अपने हितों को सेवाओं, शिक्षा संस्थाओं, राजभाषा में उर्दू के स्थान आदि को सुरक्षित करने के लिए सम्मेलनों, प्रतिवेदनों व आवेदन आदि के द्वारा प्रयत्न करते रहे हैं, दूसरी ओर हिन्दू संगठन जैसे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (R S S) तथा हिन्दू समाज भारतीय (हिन्दू) संस्कृति के हितों और हिन्दी को उचित स्थान दिलाने के लिए प्रयत्नशील रहे हैं। इसी प्रकार अनुसूचित वर्गों (हरिजनों) के संगठन व समूह अपने हितों को सुरक्षित बनाये रखने के लिए शासक दल व सरकार पर दबाव डालते रहे हैं। उसी के परिणामस्वरूप संविधान में तेइसवाँ संशोधन हुआ है, जिसके अन्तर्गत उनके लिए लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं में आरक्षित स्थानों की व्यवस्था को फिर दस वर्ष के लिए बढ़ा दिया गया है। इस समूह ने समय समय पर यह भी प्रयत्न किया है कि उनके नेता यथा जगजीवन राम (केन्द्र में), गिरधारी लाल (उत्तर प्रदेश में) प्रधान अथवा मुख्यमन्त्री बनें। 1969 में हुई कांग्रेस की फूट के परिणामस्वरूप इन साम्प्रदायिक संगठनों व हित समूहों का पूर्व की अपेक्षा अधिक महत्त्व प्राप्त हुआ। इस श्रेणी में भाषायी समूहों (linguistic groups) को भी सम्मिलित किया जा सकता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के आरम्भ से अब तक हिन्दी के समर्थकों, हिन्दी विरोधियों व अन्य प्रादेशिक भाषाओं के समर्थकों के समूहों का भारत की राजनीति में महत्त्वपूर्ण भाग रहा है।

साधारणतया जातियाँ नये राजनीतिक दलों के पृथक् निर्माण का आधार नहीं रही हैं। परन्तु उन्हें वर्तमान राजनीतिक दलों में विशेष रूप से कांग्रेस के भीतर ही महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। परम्परागत समाज और राजनीतिक दलों के बीच में जाति सभा ने एक मध्यवर्ती स्टेज का काम किया है—जाति समूहों का संगठन कुछ थोड़े से गाँवों के आधार से अधिक व्यापक है और उनका प्रयोजन अन्य समूहों के मुकाबले में अपनी अपनी जातियों की स्थिति की रक्षा करना तथा उसे सुधारना है।[1] भारत में जातीयता व प्रान्तीयता भारत की एकता के लिए बड़े खतरे हैं। शिक्षित वर्ग और उच्च अधिकारी इस प्रकार के विषय की बुराई करते हैं, परन्तु ये दोष उनमें भी काफी बड़ी मात्रा में पाये जाते हैं।

दबाव समूहों की तीसरी श्रेणी में गांधीवादी विचारधारा का प्रचार तथा प्रतिनिधित्व करने वाले संगठन आते हैं। ये भारतीय परिस्थितियों में एक प्रकार से अनोखा काय करते हैं। इनके कार्यों का क्षेत्र किसी विशिष्ट समुदाय या प्रश्न तक सीमित रहा है। इनका काय साधारण ग्रामवासियों और पाश्चात्य ढंग के राजनीतिक नेताओं सभी को प्रभावित करता है। ये अभिकरण औपचारिक रूप में साधारण दबाव समूहों या राजनीतिक संस्थाओं को प्रभावित [illegible] काय नहीं करते, ये तो संस्थागत संरचना के बाहर आवश्यक नैतिक उत्थान [illegible] एक मूलभूत भिन्न प्रकार का परिवर्तन लाना चाहते हैं। किन्तु इनकी बड़ी प्रतिष्ठा की [illegible] तथा सरकार से घनिष्ठ वैयक्तिक सम्पर्क द्वारा [illegible] प्रभाव का

---

1 [illegible] generally castes have not served separat[illegible] [illegible] have rather sought to be accommodated with[illegible] [illegible] Congress. The intermediate stage between t[illegible] [illegible] partially filled by the caste association the earlier [illegible] than a small number of villages in one loca[illegible] improving the position of the groups in relation [illegible]

आन्दोलन का समथन किया था, क्योकि उनसे स्वदेशी उद्योगो को प्रोत्साहन मिला था। चूकि स्वत त्रता के बाद शासन सत्ता काग्रेस के ही हाथ म आई, अत व्यापारियो और काग्रेस के बीच पुराने सम्पक बने रह। उ होने काग्रेस को चुनाव लडने के लिए भी समय समय पर काफी च दे दिये। जब काग्रेस सरकार ने प्रथम पचवर्षीय योजना बनाई और आर्थिक नियोजन जारी किया तब भी निजी उद्यमो के प्रतिनिधियो ने सरकार और सत्तारूढ दल का विरोध नही किया।

पर तु जब काग्रेस ने समाजवादी समाज (Socialist Pattern of Society) की स्थापना का ध्येय अपनाया और अपनी नीतियो को समाजवादी दिशा प्रदान की तो, जैसा कि स्वाभाविक ही है, व्यापारी वग और उद्योगपतियो म भय का सचार हुआ और 1956 मे अनेक भारतीय व्यापारियो ने स्वत त्र उद्यम के लिए फोरम (Forum for Free Enterprise) की स्थापना की, जिसका उद्देश्य निजी उद्यम के महत्व और उपलब्धियो के बारे म जनमत को शिक्षित करना है। इस फोरम ने निश्चित अनुदारवादी नीति का अनुसरण किया है और इसके प्रयत्न मुख्यत जनता को राजकीय पूजीवाद के खतरो के बारे मे जागत करने की दिशा दे रहे है। कुछ व्यापारियो ने 1959 म स्थापित स्वत त्र पार्टी का खुले रूप म समथन किया, इसीलिये अनेक समाजवादी व काग्रेसी नेताओ ने स्वत त्र पार्टी को फोरम का प्रवक्ता बताया। परन्तु अधिकतर व्यापारियो तथा उद्योगपतियो ने सरकार स अच्छे सम्ब ध बनाय रखने के लिए काग्रेस से पूववत् सम्पक व सम्ब ध जारी रखे।

इस विषय मे, मौरिस जो स ने लिखा है 'निजी व्यापार और उद्योग, यह सच है, अति सरकारी निय त्रण के अधीन है, पर तु व्यापारिक क्षेत्रो मे प्रभाव के तरीको के प्रयोग करने का ज्ञान बहुत विकसित है और बडे लाभ कमाने के लिए अवसरो का अभाव नही रहा है। व्यापारिक समुदाय की ओर से स्वत त्र पार्टी द्वारा दिये गये तक ऐसा सकेत देते है कि कुछ निराश तत्त्व है, जि ह भविष्य के बारे म भय है। व्यापारियो के साथ काग्रेस के सम्ब ध इसलिए खिचे हुए रहे है कि कुछ हितो ने करो से बचने की समाज विरोधी कायवाहियो को अपनाया। फिर भी इस बीच मे काग्रेस को कम्पनियो और व्यक्तिगत व्यापारियो से भारी आर्थिक सहायता मिली है। जब (जीवन बीमा निगम वाले मामले मे) मूद्रा ने यह बताया कि उसन काग्रेस पार्टी को 1 लाख रुपये दिये थे, और जब के द्रीय सरकार के म त्री श्री के० डी० मालवीया न स्वीकार किया कि उ होने एक व्यापारी से काग्रेस चुनाव अभियान मे धन दने को कहा था, तो काग्रेस को धन प्राप्त होने वाले साधनो का भेद खुला। व्यापारी वग, सरकार और काग्रेस के बीच बहुधा पारस्परिक क्षोभ पैदा हो सकता है, पर तु समग्रत प्रत्यक का दूसरो की ऐसी आवश्यकता है कि त्रिकोण का अस्तित्व समद्धिपूण दशा मे बना रहेगा।'[1]

दबाव समूहो की दूसरी मुख्य श्रेणी जातिय तथा धार्मिक समूहो की है। इसम ऐसे सगठन सम्मिलित किये जा सकते है, जि होन राजनीतिक दलो व सघो दोनो ही रूप म किसी एक धार्मिक समूह या समुदाय के हितो को प्रोत्साहन देने का काय किया है और अब भी कर रह हैं। इसम पामर के मतानुसार, ऐसे राजनीतिक दलो को सम्मिलित किया जा सकता है जस कि रिपब्लिकन पार्टी, अकाली दल और कुछ मानो म हिन्दू महासभा भी। एसे सगठनो म जो विशिष्ट धार्मिक समूहो के हितो के लिए कार्य करते रहे है, भारतीय ईसाइयो के अखिल भारतीय सम्मेलन, पारसियो क के द्रीय एसोसियेशन और राजनीतिक लीग और आग्ल भारतीय एसोसियेशन, आय प्रतिनिधि सभा, सनातन धम रक्षिणी सभा आदि का सम्मिलित किया जा सकता है। जाति समूहो की सख्या काफी बडी है। उनम मारवाडी एसोसियेशन, हरिजन सवक सघ, वैश्य महासभा,

[1] Morris-Jones, W H, *The Government and Politics of India* p 183

ओर ले जाने वाली हो।

फ्रांस— आजकल फ्रांस म व्यापक अर्थो म, एस समूहा म केवल आर्थिक हिता और ट्रेड यूनियनो का ही सम्मिलित नही किया जाता वरन् चच, विश्वविद्यालयो जैसे विचारधारा वाले समूहा तथा प्राविधिक, प्रशासनिक समूहा और प्रेस को भी सम्मिलित किया जाता है। सक्षेप म, दबाव डालने वाले समूह राजनीतिक दलो को छोडकर राजनीतिक जीवन को प्रभावित करने वाली सभी शक्तिया का प्रतिनिधित्व करते हैं।[1] इस समय फ्रांस म अनेक प्रकार के दबाव डालने वाले समूह है, जिनका अति सक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जाता है। ट्रेड यूनियनें—फ्रांस म ट्रेड यूनियनो का विकास ब्रिटेन की तुलना म कुछ कम हो पाया है, परन्तु फ्रांस म दो बडे सगठन सी० जी० टी० और सी० एफ० टी० सी० हैं। प्रथम, मुख्यत साम्यवादी दल का समर्थक है। दूसरा भी वर्ग सघर्ष की भावना से प्रेरित है। फ्रांस की सभी ट्रेड यूनियन सगठनो ने अपने को राजनीतिक दलो से अलग घोषित किया हुआ है परन्तु व किसी न किसी दल से सम्बन्धित हैं।

आर्थिक हिता म मुख्य मालिको के सगठनो और किसानो के सगठन हैं, जो अपने-अपने हित म सरकार की नीति को प्रभावित करने के प्रयत्न करते रहते हैं। विचारधाराओ के समूह (Ideological groups) म कथोलिक चच, विश्वविद्यालय और सगठन हैं जो एक या दूसरी विचारधाराओं का समर्थन करते हैं और उसके द्वारा राजनीतिक जीवन को भी प्रभावित करते हैं। इसी समूह म समाचार पत्र भी आते हैं। समाचार पत्र राष्ट्रीय, प्रादेशिक व स्थानीय हैं और व विभिन्न स्तरो पर अपने सम्पादकीय लेखो व समाचारो द्वारा देश का जनमत बनाने तथा राजनीतिक जीवन को प्रभावित करने का सदा ही प्रयत्न करते रहते हैं। टेकनीशियनो व सरकारी सेवको के सघ भी अपने हितो की रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहते है। उनके कार्यों का भी राजनीतिक जीवन पर प्रभाव पडता है। अन्त म, पेन्शन प्राप्त सैनिको के सगठन भी हैं। उनके सगठन राजनीति से दूर हैं, किन्तु अन्य राजनीतिक दलो से सम्बन्धित हैं। इस प्रकार वे भी देश की राजनीति को प्रभावित करते हैं।

जापान—अन्य देशो की तरह से जापान म भी विभिन्न हितो ने अपने सगठन बनाये हुए है। मुख्य हित जिनके अपने सगठन हैं और जो अदृश्य ढग से राजनीति पर प्रभाव डालते हैं, ये हैं—व्यवसाय, श्रम, कृषि, स्त्रियाँ और पेन्शन प्राप्त सैनिक। कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण सगठनो के नाम इस प्रकार है—वाणिज्य और उद्योग का चम्बर, प्रबन्धको का सघ, मालिको के सघो की फेडरेशन, जनरल कौसिल आफ ट्रेड यूनियन काग्रेस, जापान फामस यूनियन पत्नियो की फेडरेशन, इम्पीरियल रिजर्विस्ट एसोसियेशन। आर्थिक समूहो के हितो को आगे बढाने के लिए अनेक सगठन बने हैं। य सघ सरकार पर विभिन्न तरीको से प्रभाव अथवा दबाव डालते रहते हैं जिससे कि कानून उनके हित म बनें या कम से कम उनका अहित करने वाले न हो। साधारणतया ये सगठन विधायिका पर सगठित काय द्वारा दबाव डालते है। सम्बन्धित सगठन सभाएँ करता है प्रदर्शन कराता है सभाओ मे प्रस्ताव पास किये जाते है और वह अपने प्रतिनिधि-मण्डल विधायको से मिलने के लिए भेजता है। एक तरीका यह है कि एस सगठन सरकार मे प्रभावशाली व्यक्तियो से सम्पर्क स्थापित करके उन्हे प्रभावित करते है। बहुत से सगठन अपने पक्ष म जनमत बनाने के उद्देश्य से छपा हुआ साहित्य बाँटते है। अन्त मे, विभिन्न सगठन अपने हित म सरकार, विशेषकर मन्त्रियो और विधेयको, पर प्रभाव डालने के लिए लॉबीइग सम्बन्धी कार्यवाहियो का प्रयोग करते हैं। जापान की राजनीति पर विभिन्न दबाव डालने वाले समूह अदृश्य रूप से प्रभाव डालते हैं। बहुधा राजनीतिक दल और नेता उनकी इच्छा के अनुसार काय करते है।

---

[1] Duverger M *The French Political System* p 112

इनम से अधिकतर समूहा का मूल भारतीय परम्परा और अभिवृत्तियो मे है। कई की स्थापना महात्मा गाधी ने की थी अथवा वे उनकी शिक्षाओ की प्रेरणा और उदाहरण से अस्तित्व म आये। वे महात्मा जी के महान् ध्येय वग विहीन और जाति रहित सर्वोदय समाज को प्रोत्साहन देना चाहत हैं, जिसके लिए व व्यक्ति के नतिक पुनरुत्थान और सभी के कल्याण पर बल दते है। भारत के राजनीतिक नेता गाधी जी की शिक्षाओ की भावना और व्यवहार से हटते जा रहे है, परन्तु वे इन शिक्षाओ के गहरे महत्त्व तथा इनके देश मे बडे प्रभाव के प्रति चेतनाशील हैं। वे राष्ट्रीय प्रयत्नो के ऐसे पहलुओ जैसे कल्याण काय तथा सामुदायिक विकास परियोजनाओ मे गाधीवादी सघा व आन्दोलनो के सहयोग को उत्साह प्रदान कर रहे है। इन आन्दोलनो मे सबसे महत्त्वपूण आचाय विनोबा भावे का भूदान यज्ञ आन्दोलन है। इसका प्रयोजन गाधी जी की कल्पना के अनुसार अहिंसक क्रान्ति को प्राप्त करना है। सर्वोदय आन्दोलन सामान्य रूप म और भूदान आन्दोलन विशेष रूप म काय और सगठन के अनुत्तरदायी रूपा की ओर महत्त्वपूण झुकाव का प्रतिनिधित्व करते है, जो भारत की राजनीतिक सस्थाओ के भावी विकास को प्रभावित कर सकते हैं।

सर्वोदय समाज, सव सेवा सघ, ग्रामीण उद्योग सघ, गो सेवा सघ, हिन्दुस्तानी प्रचार सभा और तालिमी सघ द्वारा काय करता है। आचाय विनोबा भावे के अतिरिक्त अनेक गाधीवादी कायकर्त्ता, जिनम सबस प्रमुख जयप्रकाश नारायण हैं तथा गाधी आश्रम व ग्राम उद्योगो से सम्बन्धित कायकत्ता सम्मिलित है, विभिन्न कार्यों का सचालन कर रहे है। विनोबा भावे की शान्ति सेना के सदस्य साम्प्रदायिक दगो को शान्त करने तथा डाकुओ पर नैतिक प्रभाव डालने का प्रयत्न करते हैं। आर्थिक क्षेत्र म गाधीवादी सगठना व समूहो न सूती कपडे की मिलो की उत्पादन क्षमता को प्रभावित किया है, जिससे कि खादी और खडडी उद्योगो को प्रोत्साहन मिलता रहे। उन्होने सामाजिक नीतियो के रूप म मद्य निषेध (prohibition) और बेसिक शिक्षा पर बल दिया है। इन समूहा का उद्देश्य राज्य शक्ति के महत्त्व को कम करके लोक शक्ति अर्थात् जनता की आत्म निर्भर शक्ति को बढाना है। उनके साधन वयक्तिक उदाहरण और राजनीतिक दलो स बाहर प्रत्यक्ष पहुच हैं। एक प्रकार से य सभी समूह अपने प्रयोजनो म राजनीतिक हैं, किन्तु उनके सदस्य राजनीतिक पदा स दूर रहकर अपना काय करना चाहते है।

5 कुछ अन्य राज्यो मे हित समूह

जर्मनी—उच्च सरकारी, राजनयिक और सनिक अधिकारियो का एक बडा ही सगठित समूह है। सघीय, प्रादेशिक तथा स्थानीय स्तरो की सरकारो म लगभग ग्यारह लाख व्यावसायिक नागरिक अधिकारी हैं, और उनके अतिरिक्त लगभग तेरह लाख क्लक व अन्य कमचारी है। यह अधिकारी-वग एकमात्र सामाजिक समूह है जिसने सत्ता म सारपूण भाग अपने हाथ मे रखा हुआ है, बावजूद दो विश्व-युद्धा और शासक वग मे तीन बार परिवतनो के अपने हितो के बचाव म उनका सगठन काफी सुदृढ है, उनके समूहा म हम इन्हे सम्मिलित कर सकते है—सेवा म काय-काल की सुरक्षा, पेन्शनें, वेतन, पद और प्रतिष्ठा। उनम से 84 प्रतिशत दो प्रमुख सगठना के सदस्य हैं—जमन फेडरेशन आफ सिविल सर्वेन्टस 43 प्रतिशत और जमन क फेडरेशन आफ ट्रेड यूनियन्स 41 प्रतिशत। उनके सगठन इतन सुदृढ है कि जब अलाईड प्राधिकारियो (Allied Authorities) न उनम नाजीवाद के अन्त और नागरिक सेवा मे सुधार हेतु प्रयत्न किय तो उन्होने उनका सफलतापूवक विरोध किया। अधिकारी वग और सैनिक अधिकारियो के राजनीतिक मत जनसाधारण के मत से बहुत भिन्न हैं, वे जमनी द्वारा पुन शस्त्रीकरण, पाश्चात्य सनिक सगठन म जमनी की सदस्यता और ऐसी बडी सन्धियो के पक्ष म हैं जो पश्चिमी यूराप को एकीकरण की

मन्त्रियो को अनुभव पर आधारित परामर्श, सभी प्रकार की सूचना और आँकडे देते हैं। वे ही विभिन्न कानूनो के प्रारूप तैयार करते है। इस प्रकार प्रशासन के उच्च अधिकारी नीति निर्धारण अर्थात् राजनीति मे भी भाग लेते हैं। साथ ही यह आवश्यक है कि प्रशासको का देश के सविधान और प्रशासनिक पद्धति का समुचित ज्ञान हो।

लोक प्रशासन का अर्थ—प्रशासन का अर्थ शासन की नीति को कार्यान्वित करना अर्थात् सभी प्रकार के शासन कार्यों का करना है। वुडरो विलसन के शब्दो मे 'सार्वजनिक कानूनो का विस्तार और व्यवस्थित रूप से क्रियान्वित किया जाना लोक प्रशासन है। साधारण कानून को लागू करने के लिए किया गया प्रत्येक कार्य प्रशासन है।'[1] इससे यह स्पष्ट है कि लोक प्रशासन का सम्बन्ध शासन की सम्पूर्ण कार्यवाहियों से है, किन्तु लोक प्रशासन के विद्वान् लेखको मे इस बात पर सहमति है कि लोक प्रशासन का सम्बन्ध शासन की कार्यपालिका शाखा से है, अर्थात् इसके क्षेत्र मे न्यायपालिका और विधायिका के कार्यों को सम्मिलित नही किया जाता। इसके साथ ही यह भी बता देना उचित होगा कि लोक प्रशासन के क्षेत्र मे केवल नागरिक प्रशासन को ही लिया जाता है।

लोक प्रशासन का महत्त्व—आधुनिक राज्य नागरिको के लिए अनेक प्रकार की सेवाओ की व्यवस्था करते हैं, *यथा आन्तरिक शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना, बाह्य आक्रमण से रक्षा* करना, सचार व परिवहन के साधनो, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि की व्यवस्था करना, इत्यादि। अधिकतर प्रगतिशील राज्यो ने कल्याणकारी राज्य का ध्येय अपनाया है और वे अपने नागरिको के सुख और कल्याण के लिए अनेक प्रकार के कार्य करते हैं। इन सभी कार्यों व सेवाओ को करने वाले वास्तव मे असख्य प्रशासन अधिकारी और कर्मचारी होते है। इन कार्यों की पूर्ति के लिए प्रगतिशील सरकारो के अधीन अनेक प्रशासनिक विभाग है और अनेक प्रकार की नयी प्रशासनिक सस्थाओ—यथा बोर्ड, कमीशन, परामर्शदात्री समिति, निगम आदि की स्थापना हुई है। आज के देशीय राज्य मे रहने वाले बडे जन समुदायो के लिए बडी सरकार की स्थापना हुई है। प्रत्येक उन्नतिशील राज्य मे विशाल प्रशासनिक तन्त्र पाया जाता है। आजकल प्रशासन का महत्त्व बहुत अधिक बढ गया है। जीन ब्लॉन्डेल के मतानुसार तो एक सीमा तक सभी आधुनिक राज्य *प्रशासनिक राज्य है, क्योंकि अनेक महत्त्वपूर्ण निर्णय प्रशासको तथा प्रविधियो द्वारा किये जाते* है। आजकल राज्य ऐसे है जिनमे निर्णयो का बडा प्रतिशत प्रशासको द्वारा किया जाता है और यह भी स्वीकार किया जाता है कि नीति के व्यापक क्षेत्र पर प्रशासको की सत्ता है।[3] सार्वजनिक प्रशासन नागरिक और समुदाय के जीवन को शान्तिमय और सुखमय बनाता है। इस कथन मे सत्य का बडा अंश है कि कोई राज्य विधायिका या न्यायपालिका के बिना कुछ समय तक रह सकता है, किन्तु प्रशासन के बिना तो अत्यधिक पिछडा हुआ राज्य भी नही रह सकता।

प्रशासनिक अधिकारीगण जो राज्य के स्थायी कर्मचारी होते हैं वास्तव मे शासन करते है

---

[1] Wilson W *The Study of Public Administration* p 15

[2] At its fullest range public administration embraces every area and activity under the jurisdiction of public policy By established usage however, the term 'public administration has come to signify primarily the organisation personnel practice and procedures essential to effective performance of the civilian functions entrusted to the executive branch of government —Marx M (ed) *Elements of Public Administration* p 5

[3] to an extent all modern politics are administrative states since a number of decisions of importance are in the hands of the administrators and of technicians It is a polity in which both—a *very large percentage of decision making is in the hands of the* administrators and the authority of the administrators is recognized over a wide area of policy —Blondel, J *An Introduction to Comparative Government* p 405

बाईसवाँ अध्याय

लोक-प्रशासन और नागरिक सेवायें

I लोक-प्रशासन

कुछ लेखको ने प्रशासन को शासन की एक पृथक् और स्वत त्र शाखा माना है। यह एक माना हुआ तथ्य है कि लाक प्रशासन पर काफी बडी माना मे साहित्य उपलब्ध है, जो सरकार के सगठन और उसके लक्ष्यो को प्राप्त करने के लिए अपनायी जाने वाली अनेक प्रक्रियाओ का अध्ययन करता है। कायपालिका शक्ति अथवा कायपालिका सम्पूण शासन का प्रतिनिधित्व करती है और यह देखती है कि सरकार के सभी कानूनो का विभिन्न अगो द्वारा उचित रूप म पालन होता है। प्रशासनिक काय का अथ विधायी शाखा द्वारा घोषित तथा न्यायपालिका द्वारा निर्धारित कानूनो का यथाथ म प्रशासन करना है।[1] इस अ तर को साधारणतया इस प्रकार से व्यक्त किया जाता है—कायपालिका का काय प्रधानत अपने स्वरूप मे राजनीतिक है, अर्थात् ऐसा कि जिसके प्रयाग म निणय अ तग्रस्त हो, और प्रशासनिक काय नीतियो का काय रूप दना तथा अ य अगा द्वारा दिये गये अथवा निर्धारित आदेशो को कार्यान्वित करना है। पर तु यह कहना ठीक न हागा कि कायपालिका का काय और राजनीतिक कायपालिका तथा प्रशासनिक काय और स्थायी नागरिक सेवा एक है।

राजनीति और प्रशासन—राजनीति और प्रशासन म बडा निकट सम्ब ध है। एक लेखक के मतानुसार तो राजनीति और प्रशासन एक ही मुद्रा के दो पहलू है। पिफनर क अनुसार राजनीति और प्रशासन एक दूसर से इतना मिले जुले है कि उनके बीच स्पष्ट अ तर बताना कठिन है। फिर भी कुछ लेखको ने राजनीतिक और प्रशासनिक क्षेत्रों को एक दूसर स अलग बताया है। उनका विश्वास है कि नीति निर्धारण और उस कार्यान्वित करना अलग अलग क्षेत्र ह, पहला क्षेत्र राजनीतिज्ञो का है और दूसरा प्रशासको का है। राजनीतिज्ञ और प्रशासक म मुख्य अ तर इस प्रकार है—राजनीतिज (म त्री) शासन के काय म विशेषज्ञ नही होता उसका पद राजनीतिक होता है अथात् वह अपने पद पर कुछ समय के लिए रहता है, शासन करना उसका जीवन व्यवसाय नही है, उसका जनता स अधिक सम्पक रहता है, और वह किसी राजनीतिक दल का सदस्य होता है। इसके विपरीत प्रशासनिक अधिकारी का पद स्थायी हाता है, प्रशासन उसका जीवन-व्यवसाय होता है और उसे अपन काय का विशष ज्ञान भी होता है। ग्रेट ब्रिटन तथा अ य दशा म इस बात को अधिक समझा जाता है कि प्रशासन स राजनीति का दूर रखा जाय तथा प्रशासनिक अधिकारियो व कमचारियो को राजनीति स अलग रहना चाहिए। इसी कारण नागरिक सेवाओ के लिए 'राजनीतिक तटस्थता' एक मा य आदश है। परन्तु इस तथ्य का स्वीकार करना पडता है कि यद्यपि नीति का निर्धारण म त्रिया और विधायका का मुख्य काय है फिर भी इस काय म प्रशासका का महत्त्वपूण भाग रहता है। विभिन्न विभागा क उच्च अधिकारी

[1] Willoughby, W F *Principles of Public Administration*

अनक अभिकरण, स्वत न नियामक आयोग आदि स्थापित किय हैं। राष्ट्रपति मुख्य प्रशासक है, परन्तु काग्रेस भी प्रशासन कार्यों की दख रेख करती रहती है।

1 ग्रेट ब्रिटेन मे राष्ट्रीय प्रशासन

पालियामेन्ट नीति का स्वीकार करती है और आवश्यक कानून बनाती है। नीति और कानूनो को काय रूप दिलाने का उत्तरदायित्व म त्रिमण्डल पर है। मन्त्रिमण्डल सभी कार्यों के लिए पार्नियामन्ट अर्थात् कॉमन सभा क प्रति उत्तरदायी है। मन्त्रियो की सख्या व श्रेणियो म समय समय पर परिवतन होत रहते है। प्रधानमन्त्री के नीचे बहुत स विभागीय म त्री है, इनमे सात प्रमुख सेक्रेटरी आफ स्टेट हैं, जिनके अधीन विदश, गृह, राष्ट्रमण्डल, स्कॉटलण्ड, उपनिवश, युद्ध ओर नभ सेना विभाग है। हाल मे रचित विभागीय अध्यक्ष म त्री कहलाते हैं जस कृषि मन्त्री, शिक्षा म त्री, स्वास्थ्य मन्त्री, प्रतिरक्षा म त्री इत्यादि। कुछ ऐसे मन्त्री है, जिनक अधीन काई विभाग नही, पर तु जो कि ही परम्परागत पदो के अधिकारी हैं जैस लाड प्रीवि सील, लाड प्रेसीडेण्ड ऑफ दी कौसिल। इन मन्त्रियो के विभागीय कृत्य नही हैं। इन ज्यष्ठ मन्त्रियो के नीचे के स्तर पर राज्यम त्री है, जो बडे विभागो म उप म त्री के समान हैं। इनक अतिरिक्त बहुत स जूनियर मन्त्री भी होत हैं, जो ससदीय सचिव तथा अवर सचिव कहलाते हैं।

शासन का काय अनक विभागो द्वारा किया जाता है। शासन के कार्यों म वृद्धि हो जाने पर विभागो की सख्या म भी वृद्धि हुई है। कुछ विभागो का सम्बन्ध सम्पूण राज्य क्षेत्र अर्थात् इग्लैण्ड, वेल्स, स्कॉटलण्ट और उत्तरी आयरलैण्ड से है, जसे पोस्ट आफिस और कस्टम्स व एक्साइज। अ य विभागो का सम्ब ध ग्रेट ब्रिटेन से है अर्थात् उत्तरी आयरलण्ड उनके काय क्षेत्र के बाहर है, उदाहरण के लिए, श्रम म त्रालय और राष्ट्रीय सेवा। परन्तु कुछ ऐस भी विभाग है जिनका काय क्षेत्र कवल इग्लण्ड और वल्स तक परिमित है, उन कार्यों के क्षेत्र म स्काटलण्ड क लिए पृथक् विभाग है। विभागो क आकार और उनके कार्यों की सख्या तथा काय विधि म अ तर है। अधिकतर विभागो का अध्यक्ष कोई म त्री होता है, कुछ विभाग ऐसे भी हैं जिनके कार्यो के लिए कोई म त्री पालियामे ट के प्रति उत्तरदायी नही है। उदाहरण क लिए, 'एक्सचेकर और आडिट विभाग, जो पालियामेन्ट के अधीन अधिकारी 'नियन्त्रक व महालेखा परीक्षक' की अध्यक्षता म काय करता है।

उपयुक्त बातो से स्पष्ट है कि ग्रेट ब्रिटेन में विभागीय व्यवस्था बडी पेचीदा है और परिवतनशील भी। इसके लिए कुछ एतिहासिक कारण तथा राज्य के कार्यों म हुई वृद्धि उत्तर दायी है। ट्रेजरी व एडमिरल्टी कुछ परम्परागत कार्यालयो के वतमान जीवित रूप है। वतमान काल मे अनेक बोड व अभिकरण स्थापित हुए है।[1] एक आधार पर विभिन्न विभाग और प्रशासनिक सगठनो को तीन समूह म रख सकते है—(1) ट्रेजरी और आय करने वाल विभाग, (2) व्यय करन वाले विभाग, और (3) अद्ध सरकारी सगठन। इन सभी विभागो म ट्रेजरी का महत्त्व सबसे अधिक है उसका सक्षिप्त परिचय अग्रलिखित है। महत्त्व की दृष्टि मे इसका स्थान पालियामेन्ट और कबिनेट के नीचे है। सम्पूण व्यय पर इसका नियन्त्रण रहता है। इसका एक अधिकारी ही स्थायी सवाओ का अध्यक्ष है, इन सवाओ के बारे म अनेक नियम ट्रेजरी द्वारा ही बनाय गये हैं, और अ य सभी विभागो पर भी कम या अधिक निय त्रण रखती है। ट्रेजरी का अध्यक्ष कोई एक मन्त्री ही नही वरन एक बोड होता है, जिसम प्रधानम त्री, वित्त-मन्त्री और पाँच अ य लाड सदस्य है। वास्तव म यह केन्द्रीय विभाग है। इसके कार्यों को हम दो समूहो म

1 Viewed from any vantage point, the nation s central administrative machinery presents an aspect of considerable complexity —Ogg and Zink *op cit* p 108

यद्यपि नाम को शासन संसद व राष्ट्रपति के हाथों में होता है। मुख्य कार्यपाल—मन्त्रिमण्डल अथवा राष्ट्रपति—प्रशासनिक सेवाओं के अध्यक्ष तथा मुख्य प्रशासक होते है। आजकल तो सार्वजनिक प्रशासन के द्वारा ही सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था म परिवर्तन आ सकता है, अर्थात् किसी भी प्रकार की उन्नति और विकास बहुत सीमा तक प्रशासन पर निर्भर करता है। अत प्रशासन कुशल होना चाहिए। कुशल प्रशासन के लिए योग्य, दक्ष और ईमानदार अधिकारी व कर्मचारी होने चाहिएँ तथा सुचारु प्रशासनिक संगठन आवश्यक है। प्रशासन के अध्यक्ष का ध्येय शासन की नीति और कार्यक्रम को कार्यान्वित करना है। प्रशासन के अन्य उद्देश्यों में हम कार्यकुशलता और व्यय में बचत को सम्मिलित कर सकते है। प्रजातन्त्रात्मक राज्य म प्रशासन का यह उद्देश्य होता है कि वह राज्य की नीति और कार्यक्रम पर अपने अच्छे कार्यों द्वारा जनता की स्वीकृति भी प्राप्त करे। अत प्रजातन्त्र में शासन शासितों के समर्थन पर ही निर्भर नहीं करता वरन् प्रशासन द्वारा विभिन्न कार्यों और सेवाओं के अच्छे और कुशल संचालन पर भी। सार्वजनिक प्रशासन के प्रमुख अंगों हम इन्हें सम्मिलित कर सकते हैं। (1) प्रशासनिक संगठन—प्रशासन के विभाग, विविध बोर्ड, कमीशन, परामर्शदात्री समितियां, निगम आदि, (2) नागरिक सेवायें, (3) सार्वजनिक वित्त, (4) नियोजन, और (5) जन सम्पर्क इत्यादि।

इनका अति संक्षिप्त विवेचन अग्रलिखित है—विभिन्न देशों म प्रशासन का संगठन साधारणतया विभागीय पद्धति के अनुसार होता है अर्थात् शासन के विभिन्न कार्यों को अनेक विभागों मे विभाजित किया जाता है। प्राय सभी प्रगतिशील राज्यों म ये अथवा ऐसे ही विभाग होते हैं—विदेश, प्रतिरक्षा (सेना), गृह या आन्तरिक, वित्त, कृषि, न्याय, उद्योग और श्रम, संचार व परिवहन, वाणिज्य, शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य इत्यादि, प्रत्येक विभाग उपविभागों ब्यूरो और सैक्शनों आदि में बँटा होता है। एक या एक स अधिक विभागों का कोई राजनीतिक अध्यक्ष—मन्त्री अथवा संयुक्त राज्य अमरीका म सेक्रेटरी होता है। उसकी सहायता के लिए उप मन्त्री, संसदीय सचिव अथवा सहायक सेक्रेटरी होते हैं। उनके अधीन प्रत्येक विभाग म सचिव, उप सचिव, संयुक्त सचिव तथा सरकारी सचिव आदि अनेक स्थायी प्रशासनिक अधिकारी होते हैं और उनके नीचे विभिन्न श्रेणियों के कार्यकारी अधिकारी और बड़ी संख्या म कार्यालय अधीक्षक, क्लर्क व टाइपिस्ट आदि कर्मचारी होते हैं, जो विभागों के दैनिक कार्यों का संचालन करते है। अधिकतर विभागों स संलग्न अथवा स्वतन्त्र अनेक प्रशासनिक निकाय भी होते है, जसे बोर्ड (भारत म रेलवे बोर्ड), कमीशन (प्लानिंग कमीशन, पब्लिक सर्विस कमीशन, टैरिफ कमीशन, फाइनेंस कमीशन), सार्वजनिक निगम (जसे जीवन बीमा निगम, एयर इण्डिया कार्पोरेशन, दामोदर वैली कॉर्पोरेशन) और अनेक परामर्शदात्री समितियाँ (जसे भारत की राष्ट्रीय विकास परिषद् निर्यात परामर्शदात्री समिति, इत्यादि)। संयुक्त राज्य अमरीका म दस प्रमुख विभागों के अतिरिक्त अनेक स्वतन्त्र प्रशासनिक निकाय हैं, जिनकी स्थापना कांग्रेस ने की है। इनमे बहुत से स्वतन्त्र नियामक कमीशन जसे फेडरल ट्रेड कमीशन, इण्टर स्टेट कामर्स कमीशन, स्वतन्त्र प्रशासन, अभिकरण और सेवायें है।

ग्रेट ब्रिटेन व भारत म मन्त्रिमण्डल (या मन्त्रि-परिषद्) की रचना म बहुधा परिवर्तन होते रहते हैं। कभी कोई नया मन्त्रालय अथवा विभाग बनता है, कभी पुराने मन्त्रालय या विभाग का अन्त होता है और कभी किन्हीं दो विभागों को मिला दिया जाता है। ऐसी उलट फेर के परिणामस्वरूप इन तथा ऐसी पद्धति वाले राज्यों म प्रशासनिक मन्त्रालयों और विभागों म बहुधा परिवर्तन होते रहते है, अर्थात् उनका संगठन बदलता रहता है। इसके विपरीत संयुक्त राज्य अमरीका म संविधान द्वारा मुख्य विभागों की रचना करने की शक्ति कांग्रेस (विधायिका) को सौंपी गई है। इस समय वहाँ बारह प्रमुख प्रशासनिक विभाग हैं, परन्तु उनके अतिरिक्त कांग्रेस ने

अभिकरण जैसे—सिविल सर्विस कमीशन, बजट ब्यूरो। (3) विविध स्वतन्त्र अभिकरण—जस नेशनल रिक्वरी एडमिनिस्ट्रेशन, वटरेंस एडमिनिस्ट्रेशन नेशनल मीडियगन बोर्ड, इत्यादि।

अन्य प्रशासनिक अभिकरणा म स दो का सक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जाता है—प्रथम, सघीय शक्ति आयोग—इस आयोग म पाच सदस्य हैं, जिनकी नियुक्ति राष्ट्रपति सीनट की सहमति से करता है। इसका मुख्य काय सघ सरकार क जल शक्ति कानून को लागू करना है। सभी आन्तरिक जल माग सघीय सरकार के अधीन हैं, अत इस आयोग का मुख्य काय एक ओर जल शक्ति सम्बन्धी योजनाओ के वित्तीय स्थायित्व को बढ़ाना और दूसरी ओर उपभोक्ताओ के हितो की रक्षा करना है। इन प्रयोजना की दष्टि से इस आयोग को जल शक्ति की दरो और इन उद्योगो मे लगे कमचारियो की सवा सम्बन्धी दशाओ को विनियमित करना है। इस प्रकार इसक काय मिश्रित है—अशत नियम बनाने और अशत उन्हें लागू करने के सम्बन्ध म। यह एक स्थायी रेगुलेटरी कमीशन है। दूसरा, टेरिफ कमीशन— यह एक स्थायी सवा अभिकरण है। इस आयोग म एक सभापति, एक उप सभापति और चार सदस्य हैं। इसका मुख्य काय टेरिफ अर्थात् वस्तुओ पर महसूल, प्रश्नो की छानबीन कर उन पर रिपोट दना है। इसकी रिपोर्टों क आधार पर काग्रेस आवश्यक कानून बनाती है। सिविल सर्विस कमीशन का सक्षिप्त परिचय आग दिया जायगा।

आलोचना—सयुक्त राज्य की प्रशासन पद्धति की आलोचना मुख्यत इन आधारो पर की जाती है—(1) यह एक अत्यधिक बडा और पचीदा तन्त्र है। इनम 12 बडे विभागो के अतिरिक्त अनेक पृथक अभिकरण हैं, जिन सभी पर राष्ट्रपति को मुख्य प्रशासन होने के नाते निरीक्षण करना तथा उनके कार्यों म समन्वय रखना पडता है। (2) बहुत से अभिकरणो के कार्यों मे बहुत कुछ समानता है एक ही समस्या के विभिन्न पहलुओ से सम्बन्ध रखने वाले 6–8 अभिकरण पाय जाते हैं और किसी एक का भी पूण उत्तरदायित्व नही हैं। उदाहरण के लिए सघीय चिकित्सा सेवाओ का काय 26 अभिकरण करते है। (3) लगभग एक दजन स अधिक स्वतन्त्र रेगुलटरी अभिकरणो ने, जिन्हें काग्रेस ने बहुत सी बातो म राष्ट्रपति के नियन्त्रण स स्वतन्त्र रखा है, पेचीदगी को बहुत बढाया है। वे एक प्रकार की बिना अध्यक्ष वाली शासन की चौथी शाखा है और सविधान के आधारभूत सिद्धान्त (कि शासन की तीन शाखायें हो) का अतिक्रमण करती है।[1]

3 फ्रास मे राष्ट्रीय प्रशासन

ब्रिटेन की तरह फ्रास म भी राष्ट्रीय प्रशासन की आधारभूत इकाइया और शक्ति के केन्द्र विभिन्न मत्रालय हैं। मत्रालयो का सगठन विभागीय पद्धति के अनुसार है। प्रत्यक केन्द्रीय विभाग म बहुत से ब्यूरो होते है, जो प्रशासनिक सगठन के छोटे केन्द्र है। साधारणतया किसी भी मत्रालय के सबसे बडे उप विभाग 'डायरेक्शन' हैं, और प्रत्येक उप विभाग का अध्यक्ष एक डायरेक्टर होता है। डायरेक्शन म अनक ब्यूरो होते हैं और अनेक डायरेक्शनो म दोनो के बीच उप डायरेक्शन डिवीजन, सेवायें आदि है। कुछ मत्रालयो म उच्च स्थायी अधिकारी होते हैं, जिन्हें जनरल सेक्रेटरी कहते है। इस समय फ्रास म मत्रालयो की सख्या लगभग उतनी ही है जितनी कि ब्रिटेन म, जिसका अथ यह हुआ कि उनकी सख्या सयुक्त राज्य अमरीका के प्रमुख विभागो से कही बडी है। फ्रास के विभिन्न मत्रालयो का मोटे रूप मे पाँच समूहो म रखा जा

---

[1] They constitute a headless fourth branch of the government a haphazard deposit of irresponsible agencies and uncoordinated powers They do violence to the basic theory of the American Constitution that there should be three major branches of the government and only three —*President s Committee on Administrative Management 1937*

रख सकते है—(1) वित्त तथा साधारण आर्थिक नियोजन पर निय त्रण, और (2) अ य विभागो के कार्यों मे सम वय लाना तथा उनके व्यय और अधिकारी वग पर निय त्रण रखना। यह प्रथम समूह के काय तो वित्त म त्रालय के रूप मे और दूसरे समूह के काय के द्रीय विभाग के रूप मे करता है।

म त्रालयो का वर्गीकरण को केवल सुविधा की दृष्टि से अपनाया गया है, यह कोई सविधान का भाग नही है। केबिनेट साधारणतया इसी आधार पर काय करती है कि उसके सभी सदस्य समरूप से उत्तरदायी हैं। समान काय करने वाल म त्रिया (म त्रालयो) के बीच सम्पर्क केबिनेट की समितियो द्वारा रखा जाता है। कभी कभी अनुभव यह बताता है कि किसी काय विशेष को अधिक अच्छी प्रकार से किया अथवा कराया जा सकता है यदि उसे दूसरे म त्रालय को हस्ता तरित कर दिया जाय। इस प्रकार का हस्ता तरण पार्लियामे ट के अधिनियम के अनुसार 'परिषद् आदेश' द्वारा किया जाता है। जबकि शासन के लिए पूर्ण उत्तरदायित्व म त्रियो मे निहित है नागरिक सेवको का उस पर बडा प्रभाव पडता है, जो कि अपने पदो पर कायम रहते है, चाहे शासक दल मे निर्वाचन के परिणामस्वरूप परिवतन हो जाय।

म त्री के अधीन विभाग म एक या अधिक ससदीय सचिव होते हैं। म त्री और ससदीय सचिव विभाग के राजनीतिक अ यक्ष तथा सहायक अध्यक्ष होते है, उनका पदो पर रहना राजनीतिक कारणो से होता है। उनके नीचे प्रत्येक विभाग म एक स्थायी सचिव होता है, जो अपने विभाग के म त्री का मुख्य परामशदाता होता है। बडे विभाग मे स्थायी सचिव के नीचे एक या अधिक सहायक अथवा उप सचिव होते ह। विभाग कुछ डिवीजनो मे बँटा होता है, जिसका मुख्य अधिकारी सहायक सचिव होता है। प्रत्येक डिवीजन कुछ सवशनो म बँटा रहता है, और प्रत्येक सवशन का मुख्य अधिकारी प्रिंसिपल कहलाता है। प्रिंसिपल के नीचे सहायक प्रिंसिपल होते है। ये सभी विभाग के प्रशासनिक अधिकारी होते है। इनके नीचे कार्यालय म काम करने वाले अनेक क्लर्क, सहायक क्लर्क व अ य कमचारी होते हैं।

2 सयुक्त राज्य अमरीका मे राष्ट्रीय प्रशासन

सयुक्त राज्य अमरीका के सघीय सविधान मे प्रशासन की शाखाओ के विषय म कोई प्राविधान नही है, इस कारण कांग्रेस को सरकार के कृत्यो के सचालन के लिए आवश्यक विभागो अथवा अभिकरणो की रचना करने की स्वत त्रता है। वास्तव म सभी प्रमुख प्रशासनिक विभाग जिनकी वतमान सख्या 12 है, तथा अ य महत्त्वपूर्ण अभिकरण कांग्रेस द्वारा स्थापित किये गये है कि तु कुछ अभिकरणो की रचना राष्ट्रपति ने भी की है। सविधान ने कानूनो के परिपालन अथवा कार्यान्वित कराने का उत्तरदायित्व राष्ट्रपति को सौपा है। उसके नीचे प्रशासन काय म सबसे महत्त्वपूर्ण अधिकारी 12 विभागो के अध्यक्ष हैं, जिनसे मिलकर राष्ट्रपति की केबिनेट बनती है। केबिनेट ही वह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अग है, जो प्रशासन कार्यों म सम वय कायम करता है। जाज वाशिंगटन ने प्रथम राष्ट्रपति पद की अवधि आरम्भ होने पर चार म त्रियो की नियुक्ति की थी। ज्यो ज्यो सरकार के काय बढते गये, त्यो त्यो कांग्रेस ने नये नये विभाग खोलने का अधिकार दिया। इस समय सयुक्त राष्ट्र अमरीका म 12 प्रमुख विभाग है, जिनके नाम ये है—(1) स्टेट अथवा विदेश, (2) वित्त, (3) राष्ट्रीय सेना, (4) न्याय, (5) डाक, (6) आ तरिक, (7) कृषि, (8) वाणिज्य, (9) श्रम, (10) स्वास्थ्य, शिक्षा और कल्याण, (11) गृह निर्माण और शहरी विकास, और (12) परिवहन। इन 12 प्रमुख प्रशासनिक विभागो के अतिरिक्त प्रशासन के अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण अग है जिनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—(1) स्थायी रेगुलेटरी अभिकरण जैसे—अ तर्राज्यीय वाणिज्य आयोग और सघीय शक्ति आयोग, (2) स्थायी

पर जोर देने और एम० आर० पी० द्वारा दूसरे विधायी अग जिसका निर्माण कार्पोरेशन के आधार पर हो, के लिए सघर्ष करने के बीच एक प्रकार का समझौता था। एम० आर० पी० आर्थिक परिषद् को एक आर्थिक उप पार्लियामेंट का रूप देना चाहती थी।[1] परन्तु वह परिषद् प्रभावी रूप से कार्य करने के लिए अत्यधिक बडी थी, अतएव उसका यथार्थ प्रभाव बहुत अधिक नही रहा। आर्थिक नियोजन म आर्थिक परिषद् स भी अधिक महत्त्वपूर्ण भाग नियोजन परिषद् का रहा। उसका अध्यक्ष प्रधानमन्त्री था और सभी मन्त्री तथा कृषको, श्रमिको, मालिको आदि के अठारह प्रतिनिधि उसके सदस्य थे। इसी निकाय न अपने सचिवालय और टकनिकल स्टाफ के द्वारा विख्यात 'मोने योजना' (Monnet Plan) तैयार कराई थी। मालिको, श्रमिको और साधारण जनता का प्रतिनिधित्व करने वाले अठारह आयोगो को नियुक्त किया गया था, जिन्ह आर्थिक जीवन के प्रमुख क्षेत्रो म नियोजन व आर्थिक पुनर्निर्माण का कार्य सौंपा गया था। उनके कार्यों म समन्वय स्थापित करने का दायित्व नियोजन परिषद् पर था। ग्रेट ब्रिटेन की तरह फ्रास न भी विभिन्न उद्योगो का राष्ट्रीयकरण किया है। इनम स प्रमुख कोयला, गस, बिजली व रल उद्योग है। इनके अतिरिक्त फ्रास की सरकार ने 'सेन्ट्रल बैंक' को राष्ट्रीयकृत किया है और साथ ही अन्य बडे बको के हिस्से प्राप्त किय हैं। मोटर उद्योग का भी आशिक राष्ट्रीयकरण किया गया है। अधिकतर राष्ट्रीयकृत उद्योगो का प्रशासन सीधे मन्त्रालयो द्वारा नही किया जाता, वरन् उसके लिए सावजनिक निगम बनाये गये है।

4 सोवियत सघ मे राष्ट्रीय प्रशासन

सोवियत सघ मे न तो पूजीपति है और न व्यक्तिगत उद्यम ही। इसी कारण कोई व्यक्ति दूसरो को काम म नही लगाता। वास्तव म, निजी सम्पत्ति अत्यधिक सीमित और महत्त्वहीन है। सभी उत्पादन साधनो पर राज्य का स्वामित्व है। अतएव राष्ट्रीय प्रशासन के दो मुख्य क्षेत्रो का सम्बन्ध उद्योगो व कृषि के प्रशासन से है और तीसरे का सरकारी प्रशासन के रूप म। इनका सक्षिप्त विवचन अग्रलिखित है—औद्योगिक कारखाने, खाने आदि राज्य द्वारा सचालित हैं। दूसरे, सहकारी आधार पर उद्योगो का सचालन और तीसरे व्यक्तिगत हस्तकलाकार। सहकारी आधार पर छोटे छोटे उद्योग चलते है जैसे फर्नीचर, चूने व चमडे की अन्य वस्तुएँ, कपडे का सामान आदि। रेस्तोराँ व होटल आदि भी सहकारी आधार पर चलाये जाते है। ये सब भी सरकारी योजना के अनुसार कार्य करते हैं। व्यक्तिगत हस्तकलाकार सख्या म बहुत कम है और आर्थिक व्यवस्था मे उनके भाग का कोई महत्त्व नही है। अतएव सबसे महत्त्वपूर्ण और प्रचलित पद्धति सरकारी उद्योगो की है। सविधान की धारा 11 के अनुसार प्राय सम्पूर्ण आर्थिक जीवन का निर्धारण व निदेशन राज्य द्वारा होता है। इसी कारण एक के बाद दूसरी पाच या सप्तवर्षीय योजनायें निरन्तर चल रही हैं। इसके उद्देश्य, सक्षेप म, अग्रलिखित है (1) सावजनिक धन की वृद्धि। (2) श्रमिक जनो के भौतिक व सास्कृतिक स्तरो को उठाना। (3) सोवियत सघ की स्वतन्त्रता को पुष्ट करना। (4) राज्य की प्रतिरक्षा क्षमता को सुदृढ बनाना।

उद्योगो की विभिन्न शाखाओ से सम्बन्धित अनेक मन्त्रालय हैं, जसे रसायन, निर्माण, इन्जीनियरिंग, परिवहन आदि उद्योगो के लिए अलग अलग मन्त्रालय। इन मन्त्रालयो का सगठन प्रादेशिक आधार पर है अर्थात् मन्त्रालय म कई विभाग होते है जिनका सम्बन्ध देश के विभिन्न प्रदेशो से होता है। ये विभाग अपने अपने प्रदेश म उद्योग विशेष स सम्बन्धित लक्ष्यो को पूरा करते हैं। इनम सामान्य सेवा कार्यालयो के द्वारा समन्वय स्थापित किया जाता है। इस प्रकार

[1] Carter et al *The Government of France* p 185

सकता है, जिनका सम्ब ध इन विषयो से है—प्रतिरक्षा, पर राष्ट्र सम्ब ध, आ तरिक व्यवस्था, वित्त और आर्थिक व सामाजिक मामले। अधिकतर नये मत्रालयो का सम्ब ध आर्थिक व सामाजिक मामलो से ही है। जहाँ तक मत्रालया के आ तरिक सगठन का सम्बन्ध है, ब्रिटेन और फास म एक महत्त्वपूण अ तर है। ग्रेट ब्रिटेन म तो केन्द्रीय सरकार के अधिकतर विभाग—जैसे पुलिस व न्याय—प्रशासन के सामान्य स्तरो को निर्धारित करते है और अपने अधीन प्रादेशिक व स्थानीय अधिकारियो के कार्यों की देख रेख करते है, पर तु फास मे अधिकतर मत्रालयो के कृत्य केन्द्रीकृत है, अर्थात् उनका सचालन राष्ट्रीय प्रशासन द्वारा किया जाता है जिसके फलस्वरूप शक्ति केन्द्रीभूत रहती है। इस प्रकार फास म स्वराष्ट्र मत्रालय स्थानीय व प्रादेशिक स्तरो पर राष्ट्रीय सेवाओ का प्रीफक्टा तथा उप प्रीफैक्टो के द्वारा निय त्रण करता है। यह मत्रालय पुलिस व्यवस्था और चुनावो का विशेष रूप से निय त्रण करता है।

अधिकतर मत्रालया म यह प्रथा पड गई है कि उनम से प्रत्यक के विभिन्न डायरेक्शनो के डायरेक्टर सप्ताह मे एक या अधिक बार बैठक म एकत्रित होते हैं। इन बठको का प्रयोजन विभागीय काया म समन्वय लाना होता है। विभिन्न विभागो अथवा मत्रालयो के कार्यों के बीच समन्वय स्थापित करने के दो मुख्य साधन है। प्रथम, प्रधानमन्त्री का सचिवालय है, जो अब शासन के तन्त्र का एक आवश्यक अग है। इसकी दो मुख्य सेवाये हैं—विधायी और वित्तीय व प्रशासनिक। सेक्रेटरी जनरल और उसके अधीन यह सचिवालय विभिन्न विभागा के बीच उत्पन्न मतभेदो को दूर करने का प्रयत्न करता है। दूसरा, सिविल सर्विस डायरेक्टोरेट है, जिसकी स्थापना 1945 मे की गई थी यह नागरिक सेवाओ म एकरूप नीतियो व मानो को प्रोत्साहन देता है। फास के प्रशासनिक सगठन की विशेषता यह है कि उसमे अनेक परामर्शदात्री और मत्रणा देने वाले निकाय हैं।[1] विभिन्न मत्रालया के साथ ऐसी परिषद, समितियाँ, आयोग व कार्यालय लगे है, जिनसे सम्बन्धित मत्रालयो को विशेष ज्ञान प्राप्त होता है। आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र मे ऐसे निकायो की सख्या काफी बडी है। राष्ट्रीय प्रशासन के सम्बन्ध म दो मुख्य दोष बताये गये है। प्रथम, यद्यपि राष्ट्रीय सरकार के कार्या म अत्यधिक विस्तार हो गया है, फिर भी राष्ट्रीय प्रशासन क सगठन मे उसके अनुसार सुधार नही हुआ है। इसी कारण पार्लियामेन्ट के सदस्यो ने इस प्रश्न पर बार बार ध्यान दिया है। दूसरा, फास मे मन्त्रिमण्डल, जो अन्य समान देशा की तुलना म बहुत ही अल्पकालीन और अस्थायी रहे हैं, राजनीतिक परिस्थितियो को अनुकूल बनाने के उद्देश्य से मन्त्रालयो और प्रशासनिक सेवाओ मे अ य समान देशा की अपेक्षा बहुत अधिक उलट फेर और परिवतन करते रह है।

आर्थिक नियोजन के लिए फास ने ग्रेट ब्रिटेन से भी अधिक विशेष निकायो की स्थापना की है। तीसरे गणत त्र के अन्तगत फास मे 1925 मे एक राष्ट्रीय आर्थिक परिषद् की स्थापना हुई थी। उसकी स्थापना आर्थिक नियोजन मे प्रभावी सिद्ध न हुई। चौथे गणत त्र के अन्तगत उसके स्थान पर एक आर्थिक परिषद् स्थापित की गई थी। नेशनल एसेम्बली के लिए सभी सामाजिक और आर्थिक प्रस्तावो पर उस परिषद् का परामश लना आवश्यक था। केबिनेट को भी आर्थिक नीतिया के सम्बन्ध म उससे अवश्य ही परामश लेना था। आर्थिक परिषद् मे 164 सदस्य थ, जिनमे श्रमिको, मालिको, किसाना, विभिन्न व्यवसाओ और महत्त्वपूण हित समूहो का प्रतिनिधित्व था। अतएव वह एक प्रकार की आर्थिक विषयो की पार्लियामेट थी। काटर और सहयोगिया के मतानुसार वह परिषद् वामपथी दला द्वारा एक सम्पूण प्रभुता प्राप्त एसम्बली

---

[1] A particularly salient characteristic of the French Governmental system in general and of administrative organization in particular is the existence of a multitude of advisory and consultative bodies —Shotwell J T (ed) *Governments of Continental Europe* p 140

समय सरकार के कई विभागो और म त्रालयो का पुनगठन हुआ । सामाजिक सुरक्षा के नये विभाग की रचना की गयी, ग्रामीण उद्योगो (खादी व हस्तकलाओ) के *विकास और समन्वय को भी इसी* विभाग को सौंपा गया। अ तर्राष्ट्रीय व्यापार के म त्रालय का नाम वाणिज्य मन्त्रालय कर दिया गया । नागरिक उडडयन विभाग को परिवहन मन्त्रालय से पृथक करके एक पूण मन्त्रालय का दर्जा दे *दिया गया । उद्योग म त्रालय का नाम उद्योग व पूर्ति मन्त्रालय कर दिया गया और उसम* ये तीन विभाग सम्मिलित किये गये—(1) भारी इ जीनियरिंग विभाग, (2) उद्योग विभाग, और (3) पूर्ति और तकनीकी विभाग ।

चौथे आम चुनावो के बाद श्रीमती इ दिरा गाधी ने माच 1967 म नई मन्त्रि-परिषद् बनाई और म त्रालयो तथा विभागो के गठन म फिर कुछ परिवतन हुए । इस समय भारत सरकार के मुख्य म त्रालयो के नाम इस प्रकार हैं—(1) अणु शक्ति, (2) वित्त, (3) औद्योगिक विकास और कम्पनी मामले, (4) परराष्ट्र मामले, (5) गह मामले, (6) वाणिज्य, (7) श्रम और पुनर्वास, (8) खाद्य और कृषि, (9) पयटन और नागरिक उड्डयन, (10) नियोजन पेट्रोलियम रसायन और सामाजिक कल्याण, (11) विधि, (12) रेलवे, (13) ससदीय मामल और सचार, (14) परिवहन और जहाजरानी, (15) फौलाद, खनिज और धातुएँ, (16) सूचना व ब्राडकास्टिंग (17) प्रतिरक्षा ।

भारत सरकार के सगठन का चाट

विधायिका आदि	कायपालिका	यायपालिका आदि
ससद	राष्ट्रपति	
राज्य सभा लाकसभा	उपराष्ट्रपति प्रधानमन्त्री	सर्वोच्च यायालय
निय त्रक व महालेखा परीक्षक	केबिनट व म न्त्र परिषद्	नियाजन आयोग निर्वाचन आयोग लोक सवा आयोग
भारत का महान्यायवादी	केबिनेट सचिवालय	
	विभिन म त्रालय और विभाग	
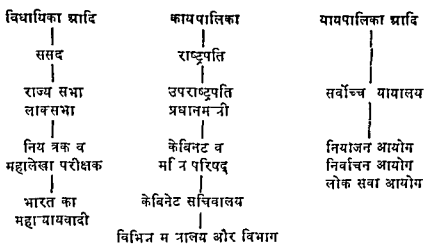
वित्त मन्त्रालय—यह म त्रालय इन विषयो के लिए उत्तरदायी है—(1) सघ सरकार के वित्त का प्रशासन, (2) आवश्यक राजस्व की व्यवस्था करना, (3) मुद्रा व बकिंग सम्ब धी समस्याएँ, और (4) सरकार के सम्पूण व्यय पर निय त्रण । म त्रालय का अध्यक्ष एक केबिनेट म त्री रहता है, जिसकी सहायता के लिए एक राज्य-मन्त्री व उप मन्त्री होत है । इसका अपना पृथक सचिवालय, 17 सम्ब धित कार्यालय और अनेक अधीन कार्यालय है । सचिवालय चार विभागो म सगठित है—(1) राजस्व विभाग, (2) व्यय विभाग, (3) आर्थिक मामलो का विभाग, और (4) कम्पनी कानून प्रशासन का विभाग । प्रत्येक विभाग एक सचिव क नियन्त्रण अधीन हैं, परन्तु सभी विभागो म नीति व निदेशन का समन्वय प्रमुख सचिव द्वारा किया जाता है । राजस्व विभाग का सम्बन्ध अग्रलिखित विषयो स है—आय कर, व्यय कर, धन कर, सम्पत्ति शुल्क, उत्पादन कर, आयात-निर्यात शुल्क और भारतीय स्टाम्प अधिनियम के अन्तगत क द्रीय काय । केन्द्रीय राजस्व बोड, जो इसी विभाग क अन्तगत हैं, एक सविधिक निकाय है, जिनकी स्थापना 1924 से हुई थी । यह बोड आयात निर्यात एव केन्द्रीय उत्पादन करो के अन्तगत अपीलो की सुनवाई करता है और

के कार्यालय वित्त, खरीदारी और अन्य कार्यों के लिए होते है। कुछ उद्योगो को मिलाकर ट्रस्ट बनाये जाते है। उद्योगो व ट्रस्टो मे अधिकारियो की नियुक्ति मन्त्रालयो द्वारा की जाती है। उद्योग अथवा कारखाने के सचालक कर्मचारियो पर उत्पादन के लक्ष्य की पूर्ति का उत्तरदायित्व रहता है। इस काय की देख-रेख व श्रमिकों का सहयोग साम्यवादी दल के कायकर्ताओ द्वारा प्राप्त किया जाता है। किसी भी उद्योग के मन्त्री की प्रशासनिक शक्तियां काफी विस्तृत होती है। वह आदेश और आज्ञायें जारी करता है और इस बात को देखता है कि उनका ठीक से पालन होता है या नही। वह विभिन्न विभागो, उद्योगो व ट्रस्टो के प्रमुख अधिकारियो को नियुक्त करता है। मन्त्री के नीचे एक बोड होता है, जिसमे उपमन्त्री मुख्य कायकारी अधिकारी अथवा विशेषज्ञ होते है। बडे और भारी उद्योगो का प्रशासन सघीय मन्त्रालय करते है और छोटे व हल्के उद्योग गणतन्त्रो के मन्त्रालय द्वारा सचालित होते है। प्रादेशिक सोवियतो के भी स्थानीय उद्योगो के लिए विभाग होते हैं, जिला सोवियतो के बोड और ग्राम सोवियतो मे उद्योगो के लिए समितियाँ होती है। सोवियत सघ म बको पर भी सरकार का एकाधिकार है। इस काय के लिए राज्यीय बैंक है जिसकी हजारो शाखाएँ सम्पूर्ण देश म फली हुई है। खुदरा व्यापार के लिए अधिकतर सरकारी स्टोर है।

कृषि का प्रशासन—कृषि उत्पादन का सचालन सामूहिक फार्मों, राज्यीय फार्मों, कम्यूनो व सयुक्त कृषि द्वारा होता है। कृषि उत्पादन मे अधिक महत्त्व राज्यीय फार्मो और सामूहिक फार्मों का है। राज्यीय फार्मो का आरम्भ 1928 मे अविकसित भूमि पर राज्य द्वारा खेती कराने से हुआ। अब इनकी सख्या काफी बडी है। प्रत्येक फाम का एक सचालक होता है। फाम पर श्रमिको से मजदूरी पर काम कराया जाता है। फार्मों का प्रशासन सीधे राज्यीय फार्मों के मन्त्रालयो द्वारा किया जाता है और सचालक अपने अपने फाम के बारे मे मन्त्रालय को रिपोर्ट देते है। इन फार्मों पर स्वामित्व राज्य का होता है। इन्हे रूसी भाषा मे सोयखोज कहते है। सिद्धान्त रूप म यह एक किसानो का सहकारी सघ होता है सामूहिक फाम ही आजकल कृषि उत्पादन के प्रधान साधन है। सामूहिक फार्मों के सचालन का आधार 1935 का आदश अधिकार-पत्र है। फाम जिला सोवियत के भूमि विभाग के अधीन है और जिला सोवियतो के ऊपर प्रादेशिक अथवा क्षेत्रीय सोवियते हैं। सामूहिक फाम का सामान्य रूप कुछ ऐसा सघ होता है, जिसमे कुछ वस्तुओ पर सम्पूर्ण समुदाय का अधिकार होता है और कुछ व्यक्तिगत परिवारो का। व्यक्तिगत परिवार के अधिकार मे साधारणतया अपना मकान, एक एकड भूमि पर बगीचा, खेती के औजार, गाय व कुछ भेड व बकरियाँ इत्यादि आते है। सामूहिक फार्मों मे सवसाधारण की आवश्यकताओ और शहरो के लिए खाद्य पदार्थों का उत्पादन किया जाता है। फाम के काम करने वाले प्रत्येक स्त्री और पुरुष के काम को नापने के लिए पेचीदा तरीके हैं। एक औसत दर्जे के सामूहिक फाम म लगभग 2,700 एकड भूमि होती है और उसम 200 परिवार सम्मिलित होते हैं। लगभग 1,400 एकड सिंचाई वाले भाग म अन्न आदि पैदा किये जाते है और शेष म जगल व चरागाह रहते हैं। सामूहिक फार्मों का प्रशासन सोवियत सघ के कृषि-मन्त्रालय द्वारा किया जाता है। यह मन्त्रालय अपना काय गणतन्त्रो क अधीन प्रदेशो की सरकारो के द्वारा कराता है।

नियोजन अभिकरण—नियोजन का मुख्य अभिकरण राज्यीय नियोजन आयोग है [illegible] 1948 म राज्यीय नियोजन समिति का नाम दिया गया। नियोजन का निदेशन तो [illegible] करण करता है, किन्तु पाश्चात्य लेखको के अनुसार वास्तव म आर्थिक नीति का [illegible] प्रेसीडियम करती है। गासप्लान पचवर्षीय योजनाओ को बनाता है और उसके [illegible] योजनायें भी। इन योजनाओ को प्रादेशिक खण्डो म बाँटा जाता है और उन्हे [illegible] कार्यान्वित करते हैं। प्रत्यक आर्थिक उद्यम क लिए एक ट्रस्ट होता है और [illegible] स ट्रस्टो से मिलकर कम्बाइन बन हैं, जिनके ऊपर मन्त्रालय होता है। [illegible]

उन पर निर्णय भी देता है। बोर्ड के अन्तगत तीन निरीक्षण निदेशालय है—दो आयकर के लिए और तीसरा आयात निर्यात व सघीय उत्पादन करो के लिए। तीसरे निदेशालय म 1955 मे एक पृथक विजिलेन्स सगठन बनाया था, जिसे भ्रष्टाचार व भ्रष्ट प्रथाओ पर कडी निगरानी रखने का काय सौंपा गया। बोर्ड के अन्तगत एक सांख्यिकीय शाखा भी है।

व्यय विभाग छ प्रभागो म विभाजित है—(1) सिबन्दी (2) नागरिक व्यय, (3) विशेष पुनगठन इकाई, (4) प्रतिरक्षा व्यय, (5) आर्थिक, और (6) बीमा। 1955 म कम्पनी कानून प्रशासन के विभाग की रचना की गयी। यह विभाग सोलह सैक्शनो मे सगठित है और इसके अन्तगत चार प्रादेशिक निदेशालय है जो बम्बई, कलकत्ता, मद्रास और दिल्ली म स्थित है। वित्त मन्त्रालय के अन्तगत कुछ महत्वपूर्ण सम्बन्धित कार्यालय ये है—राष्ट्रीय बचत आयुक्त का कार्यालय शिमला, भारतीय सुरक्षा प्रेस, नासिक, भारत सरकार की टकसालें—बम्बई व अलीपुर, निरीक्षण के निदेशालय आदि। इनके अतिरिक्त मन्त्रालय म अनेक अधीन कार्यालय भी है जैसे कम्पनियो के प्रादेशिक निदेशक, कम्पनियो के रजिस्ट्रार, आयात निर्यात शुल्क वसूली के अधिकारी। अन्त मे, मन्त्रालय म दो परामशदात्री निकाय ये है—(1) कानूनी परामशदात्री आयोग, और (2) राष्ट्रीय बचत परामशदात्री समिति।

II नागरिक सेवायें

प्रशासन के विभिन्न विभागो का काय नागरिक सेवाओ के सदस्यो द्वारा किया जाता है। इन सेवाओ म विभिन्न श्रेणियो के अधिकारी व कमचारी होते हैं। विभागो के उच्च अधिकारियो सेक्रेटरी, सहायक सेक्रेटरी से लेकर नीचे के अधिकारियो और कमचारियो को मिलाकर सामूहिक रूप से नागरिक सेवायें कहते है। प्रशासन का अच्छा या बुरा होना बहुत कुछ इन सेवाओ के सदस्यो के ऊपर निभर करता है। यदि लोग योग्य, काय म दक्ष, ईमानदारी पक्षपात रहित तथा काम म तत्पर होते हैं तो प्रशासन का स्तर ऊँचा ही रहता है। इसके विपरीत यदि ये अयोग्य, भ्रष्टाचारी और आलसी हो तो प्रशासन म अनेक दोष मिलेंगे। यह कथन पूणतया सत्य है कि किसी देश का सविधान कितना ही उत्तम क्यो न हो, वहा का प्रशासन तब तक उत्तम नही हो सकता जब तक कि वहाँ की सावजनिक सेवायें योग्य, निष्पक्ष तथा काय कुशल न हो। प्रजातन्त्रात्मक शासन प्रणाली म मन्त्री लोग तो केवल नीति को निर्धारित करते है और कानून बनाते हैं। प्रशासन के शेष सभी काय तो सावजनिक सेवाओ के सदस्यो द्वारा ही किये जाते है। अत देश के प्रशासन का कुशलता तथा सुगमतापूवक चलाने मे सावजनिक सेवाओ का महत्त्व स्पष्ट है।

जैसा कि यान्त्रिक काय के लिए सच है, शासन का अच्छा या बुरा होना बहुत सीमा तक कार्मिक (personnel) के गुणो पर निभर करता है। कोई भी सुस्थापित नागरिक सेवा एक विस्तारपूण पद्धति होती है, जिसमे विभिन्न स्तरो पर सरकारी सेवको की भर्ती होती है और जिन्हे विभिन्न प्रकार के काय करने होते है। एक नमूने की नागरिक सेवा म कम से कम तीन स्तर के सेवक होते हैं—प्रशासनिक नेतृत्व, मध्यवर्गीय प्रबन्ध, नीचे के स्तरो पर काम करने वाले असख्य कमचारी। प्रमुख कामकारी अधिकारियो मे राजनीतिक दृष्टि से नियुक्त उच्च अधिकारी सम्मिलित रहते हैं—मन्त्री, विभागीय सचिव और उप-सचिव (सयुक्त राज्य अमरीका म) जिन्हे नियमित नागरिक सेवा का अग कहना भी उचित नही है। ब्रिटेन व भारत आदि देशो म उच्च पदो पर नागरिक सेवक—सचिव, उप व सयुक्त सचिव आदि सम्मिलित है, जो मिलकर प्रशासनिक वर्ग बनाते है। आज के विशाल राष्ट्रीय राज्यो म मध्य प्रबन्ध और नीचे के स्तरो पर कमचारियो की सख्या बहुत बडी होती है, जिनमे केन्द्रीय, प्रादेशिक तथा स्थानीय स्तरो की सरकारो के सभी अधिकारी व कमचारी सम्मिलित किये जाते है।

सरकारी दफ्तरो मे काम करने वाले असख्य प्रशासनिक अधिकारियो और कमचारियो को नौकरशाही या दफ्तरी हकूमत (Bureaucracy) कहते हैं। अनेक व्यक्ति इस शब्द का घृणा की दृष्टि से देखते है, उनके मतानुसार ऐसे शासन म कई दोष है—लालफीताशाही अर्थात् नियमो का कठोर पालन जिसके कारण प्रशासन काय म अत्यधिक देरी, अधिकारियो मे अकड व वर्गीय भावना और जनसम्पक व जनता के प्रति सहानुभूति का अभाव। ब्ला डेल स्ट्रॉस के मतानुसार सरकारी कमचारियो के इन दोषा को परिगणित किया जाता है। पूव दृष्टान्तो के प्रति अति लगाव, समुदाय स दूरी पहल और कल्पना का अभाव अप्रभावी सगठन और मानव शक्ति का खोना, काम म टाल करना और उत्तरदायित्व को लेने अथवा निणय देने म अनिच्छा।[1] जब तक भारत म उत्तरदायी शासन का विकास हुआ विशुद्ध नौकरशाही का शासन था, परन्तु अब सभी प्रशासन अधिकारी व कमचारी जनता के निर्वाचित मन्त्रियो के अधीन है। अत उनके प्रति पुरान दृष्टिकोण को अब उचित नही समझा जाता। कुछ विचारको जैस रेमजे म्यूर का मत है कि मन्त्रिगण भी अधिकारी वग के परामश क अनुसार चलत हैं और मन्त्री लोग ससद या विधायिका मे प्रशासन अधिकारियो का बचाव करते है, अत नौकरशाही का खतरा बढ रहा है, परन्तु हमारे विचार म यह अत्युक्ति है। वास्तव मे, अब प्रजातन्त्रीय राज्यो मे प्रशासन अधिकारियो व कमचारियो के लिए नौकरशाही शब्द का प्रयोग उचित नही है और यदि किया भी जाय तो इसके साथ किसी प्रकार की घृणा की भावना का लगाना अनुचित होगा।

नियुक्ति और सेवा की शर्तें आदि—सावजनिक सेवाओ के सदस्यो के लिए सरकारी नौकरी जीवन का लक्ष्य होता है। उसका वेतन ही उसकी आय का मुख्य साधन होता है। उनकी नियुक्ति योग्यता क आधार पर की जाती है। उनकी भर्ती के लिए प्रगतिशील राज्य म प्रतियोगी परीक्षायें होती हैं। लिखित परीक्षाफल तथा इण्टरव्यू के आधार पर उनकी छाट की जाती है। भर्ती या छाट से सम्बन्धित सभी प्रकार के कार्यों को करन के लिए आजकल लोक सेवा आयोग होते हैं। इनके सदस्य योग्य, निष्पक्ष, स्वतन्त्र तथा अनुभवी होते है और उनकी नियुक्ति कायपालिका के अध्यक्ष द्वारा की जाती है। इसी आयोग द्वारा उनकी पदोन्नति एक स्थान स दूसरे स्थान पर तबादला और अनुशासन सम्बन्धी कायवाही के बारे म नियम बनाये जाते हैं। नागरिक सेवाओ के सदस्यो को पद की सुरक्षा पर्याप्त वेतन और उन्नति के भी पर्याप्त साधन प्राप्त होन चाहियें एव विभिन्न प्रकार क पक्षपात तथा बिना अपराध पद से हटाये जाने जसी बुराइयो का अन्त होना चाहिए।

नागरिक सेवाओ के सगठन के बारे म अग्रलिखित सिद्धान्त आवश्यक और उचित माने जाते हैं (1) राजनीतिक कायपालिका को स्थायी अधिकारियो की नियुक्ति के ऊपर नियन्त्रण की शक्ति बहुत कम होनी चाहिए, क्योकि ऐसा न होने पर उसम कई प्रकार के दोष आ जाते हैं, जसे मन्त्रिगण अपने दल के सदस्यो को अधिक पद दना चाहग, फलस्वरूप पक्षपात, भाई भतीजा वाद मे वृद्धि होगी और सेवा की सुरक्षा कम हो जायगी। इन सबका परिणाम यह होगा कि योग्य और सच्चरित्र व्यक्ति सरकारी सेवाओ म आना पसन्द न करेंगे। (2) पदोन्नति का आधार सेवा काल का आधिक्य या ज्येष्ठता का नियम और कायकुशलता होन चाहियें। (3) नागरिक सेवाओ के सदस्यो को दलगत राजनीति स अलग रहना उचित है जिसस कि व मन्त्रियो द्वारा

[1] The faults most frequently enumerated are over devotion to precedent remoteness from the rest of the community in accessibility and faulty handling of the general public lack of initiative and imagination in effective organization and waste of manpower procrastination and unwillingness to take responsibility or to give decisions —E Strauss in Blondel J (ed) *Comparative Government* p 217

निर्धारित नीति वफादारी के साथ कार्यान्वित कर सके। (4) अपने अधीन अधिकारियो के कार्यों के लिए उस विभाग का म त्री उत्तरदायी समझा जाता है।

जब साधारण नागरिक सरकार के सम्पक म आता है, तो उसका सम्पक बहुधा किसी नागरिक सेवक से ही होता है, जो उसके ऊपर कर निर्धारण करता है, उसे कोई परमिट देता है अथवा देने से इनकार करता है, उसके मकान निर्माण के नक्शे को स्वीकार करता है या अ य किसी भी प्रकार का काय करता है। अत सरकार के कार्यों मे यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि सरकारी सेवक जनता को अपनी असावधानी या अकड से कोई हानि न पहुँचाये। इस उद्देश्य से कई तरीके निकाले गय है। ब्रिटेन म तो यह काय पालियामट के सदस्य करत हैं जो अपने निर्वाचको की शिकायतो को पालियामेंट मे रखते है और यदि सावजनिक सवक कोई अवैध काय करते हैं, तो उनके विरुद्ध साधारण यायालयो म कायवाही की जा सकती है। कई यूरोपियन राज्यो म सरकारी सेवको के विरुद्ध अभियोग चलाने के हेतु पृथक यायालयो की व्यवस्था है, जैसा कि फ्रास मे। स्वीडन और डेनमाक मे यह काय प्रोक्यूरेटरो व पालियामटरी कमिश्नरो द्वारा किया जाता है। इसके अतिरिक्त अनेक सरकारी विभाग अथवा अग व अभिकरण अपने कार्यों को करने मे अ सरकारी सदस्यो का परामश पाने के उद्दश्य से परामशदात्री समितियो का प्रयोग करते हैं।

1 ग्रेट ब्रिटेन मे नागरिक सेवाएँ

प्रशासन को चलाने का सबसे अधिक महत्त्वपूण साधन नागरिक सेवायें हैं। राज्य के कृत्यो म अत्यधिक विस्तार हो जाने से नागरिक सेवको की सख्या म बडी भारी वृद्धि हुई है। ब्रिटेन म सामाजिक सेवाओं का उत्तरदायित्व राज्य ने अपने ऊपर लिया है अथवा सरकार ने जन कल्याण का ध्येय अपनाया है, अतएव नागरिक सेवाओ की सख्या तथा उनके कार्यों म बडा विस्तार हुआ है। देश की नागरिक सेवाओ को प्रमुख शाखाओ म बाटा गया है—गृह नागरिक सेवा और विदेश सेवा। विदेश सेवा म राजदूत, उच्चायुक्त, दूतालयो तथा व्यापारिक प्रतिनिधियो के कार्यालय म काय करने वाले अधिकारी व कमचारी सम्मिलित है। गृह नागरिक सेवाओ को उनके कत्तव्यो के अनुसार बहुत सी श्रेणियो म विभाजित किया गया है। विभिन्न श्रेणियों के नाम इस प्रकार हैं—ज्येष्ठ प्रशासक, वैज्ञानिक, प्राविधिक और व्यावसायिक, कायपालिका अधिकारी, क्लक और टाइपिस्ट, डाक व टलीफोन आदि विभागो म काय करने वाले स देशवाहक व सफाई करने वाले और हाथ से काम करने वाल।

नागरिक सेवाओ की भर्ती व प्रशिक्षण आदि—साधारणतया ब्रिटेन म नागरिक सेवाओ की भर्ती खुली प्रतियोगिता द्वारा होती है और नागरिक सेवा आयोग इस काय को करता है और प्रतियोगी परीक्षाओ म लिखित परीक्षा और इण्टरव्यू सम्मिलित रहते है। इस प्रकार नागरिक सेवक योग्यता के आधार पर लिए जाते हैं और यह काय एक निष्पक्ष व स्वतन्त्र आयोग द्वारा किया जाता है। इस सम्बन्ध म एक बात और उल्लेखनीय है। भरती के समय उम्मीदवारो का उनके सामान्य ज्ञान के आधार पर लिया जाता है। कुछ वैज्ञानिक, प्राविधिक तथा व्यावसायिक सवाओ को छोडकर प्राय सभी विभागो के लिए उम्मीदवारो क विशिष्ट ज्ञान का महत्त्व नहीं दिया जाता। कहने का तात्पय यह है कि विभिन्न विभागो क लिए एक साथ भर्ती की जाती है और भर्ती के बाद अधिकारियो व सवको को विभागो म बाँट दिया जाता है। विभिन्न विभागो म काय के लिए आवश्यक प्रशिक्षण की व्यवस्था रहती है। अधिकाश प्रशिक्षण विभाग म काय करके ही प्राप्त होता है, किन्तु अब अधिकारियो व कमचारियो क प्रशिक्षण के लिए विशेष सस्थायें खुली हैं तथा पाठ्यक्रम विहित किए गय हैं।

नागरिक सेवकों की आचार-संहिता—नागरिक सेवक व्यावसायिक संघ अथवा सरकार से मान्यता प्राप्त ट्रेड यूनियन के सदस्य बन सकते हैं। उनके विभिन्न विभागों में 'स्टाफ एसोसियेशन' हैं और उन्हें उनका सदस्य बनने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है। उनकी सेवा की सामान्य शर्तों व दशाओं पर साधारणतः ट्रेजरी का नियन्त्रण रहता है। ब्रिटिश नागरिक सेवायें अपनी कार्य कुशलता निष्पक्षता और ईमानदारी के गुणों के लिए प्रसिद्ध हैं। इसी कारण दलीय शासन प्रणाली के अन्तर्गत स्थायी सेवायें निर्दलीय तत्वों की महत्त्वपूर्ण व्यवस्था करती हैं। स्थायी अधिकारी अपने मन्त्रियों को आवश्यक सूचना व परामर्श देते हैं किन्तु नीति का निर्धारण करना मन्त्रियों का प्रमुख कार्य है। मन्त्रिमण्डल जो भी नीति व कार्यक्रम निर्धारित करता है, नागरिक सेवायें उसे निष्पक्षता और वफादारी के साथ कार्यरूप देती हैं। एक दल के मन्त्रिमण्डल के बाद दूसरे दल का मन्त्रिमण्डल आता है इन परिवर्तनों का नागरिक सेवाओं पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। नागरिक सेवक किसी राजनीतिक दल के न सदस्य होते हैं और न किसी दल का कार्य करते हैं, अतएव वे राजनीतिक दलबन्दी के प्रति तटस्थ रहते हैं। उनकी यह राजनीतिक तटस्थता एक आधारभूत विशेषता है और उनकी कार्य-कुशलता एवं निष्पक्षता का महत्त्वपूर्ण आधार है। इसी कारण नागरिक सेवकों को सेवा की पूर्ण सुरक्षा का अधिकार प्राप्त है, वे अपना कार्य निष्पक्षता व कुशलता से करते हुए पद से निवृत्त होने की आयु तक बिना किसी भय और पक्षपात के कर सकते हैं। इसी कारण उन्हें स्थायी सेवक कहा जाता है।

मन्त्री और स्थायी सेवायें—जबकि मन्त्रियों का पद राजनीतिक होता है, नागरिक सेवकों का स्थायी होता है। नीति और कार्यक्रम सम्बन्धी अन्तिम निर्णय मन्त्री करते हैं, किन्तु उन्हें इस कार्य के लिए सभी प्रकार की आवश्यक सूचना, सहायता व परामर्श प्रशासनिक अधिकारियों से मिलती है। इनके आपसी सम्बन्धों के विषय में कुछ अन्य बातें इस प्रकार हैं—पार्लियामेंट के सदस्यों को प्रशासन व नागरिक सेवाओं की आलोचना करने का अधिकार प्राप्त है, किन्तु वे किसी नागरिक सेवक का नाम लेकर आलोचना नहीं करते, क्योंकि स्थायी सेवक के अच्छे और बुरे कार्यों का उत्तरदायित्व मन्त्री पर है। मन्त्री का कर्तव्य है कि वह अपने विभाग के प्रशासन कार्यों और नागरिक सेवकों की विरोधियों तथा आलोचकों से रक्षा करे अर्थात् उनके बचाव में बोले। इसकी आवश्यकता इसलिए है कि नागरिक सेवक पार्लियामेंट अथवा बाहर अपना बचाव नहीं कर सकते। इसी कारण ब्रिटेन में यह सुस्थापित परम्परा है कि स्थायी सेवक राजनीतिक दलबन्दी से दूर रहते हैं अर्थात् वे राजनीतिक रूप से तटस्थ होते हैं। यदि हम मन्त्रियों व प्रशासकों की तुलना करें तो यह कह सकते हैं कि मन्त्री को अपने कार्यों के बारे में बहुत कम ज्ञान व अनुभव प्राप्त होते हैं, अतएव उन्हें प्रशासकों की अपेक्षा नौसिखिया (laymen) कहते हैं, प्रशासक अपने कार्यों का विशेष ज्ञान व अनुभव रखते हैं। इसी कारण निर्णय तो मन्त्री करते हैं, किन्तु निर्णय पर पहुँचने के लिए सभी प्रकार के आवश्यक आँकड़े, सूचना व परामर्श विशेष ज्ञान व अनुभव प्राप्त प्रशासक देते हैं। पार्लियामेंट में मन्त्री को अनेक प्रश्नों का उत्तर देना होता है, परन्तु उनके लिखित उत्तर कार्यालय द्वारा तैयार किये जाते हैं। यदि विभाग में कोई भूल होती है तो उसका उत्तरदायित्व मन्त्री पर रहता है, मन्त्री स्थायी सेवकों का पक्ष ग्रहण करता है और बहुमत समर्थन के बल पर सरकार उनकी रक्षा करने में सफल रहती है जिस कारण उनके कार्यों की जाँच आदि का प्रस्ताव पास नहीं हो पाता। अस्तु मन्त्रियों के उत्तरदायित्व की आड़ में नौकरशाही खूब पनप रही है। इसका यह अर्थ नहीं है कि मन्त्रीगण स्थायी सेवकों के हाथों की कठपुतली हैं मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन से प्रशासन के दृष्टिकोण और रुख में परिवर्तन होता है।

आधुनिक प्रशासन का स्वरूप ऐसा है कि उसके अन्तर्गत सरकारी अधिकारियों को काफी शक्ति सौंपनी पड़ती है और मन्त्रियों को भी नागरिक सेवकों के व्यावसायिक ज्ञान और अनुभव

निर्धारित नीति वफादारी के साथ कार्यान्वित कर सके। (4) अपने अधीन अधिकारियो के कार्यों के लिए उस विभाग का मन्त्री उत्तरदायी समझा जाता है।

जब साधारण नागरिक सरकार के सम्पक मे आता है, तो उसका सम्पक बहुधा किसी नागरिक सेवक से ही होता है, जो उसके ऊपर कर निर्धारण करता है, उसे कोई परमिट देता है अथवा देने से इनकार करता है, उसके मकान निर्माण के नक्शे को स्वीकार करता है या अन्य किसी भी प्रकार का काय करता है। अत सरकार के कार्यों म यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि सरकारी सेवक जनता को अपनी असावधानी या अकड से कोई हानि न पहुँचाये। इस उद्देश्य से कई तरीके निकाले गये है। ब्रिटेन मे तो यह काय पार्लियामट के सदस्य करते है जो अपने निर्वाचिका की शिकायतो को पार्लियामेट म रखते हैं और यदि सावजनिक सवक कोई अवध काय करते है, तो उनके विरुद्ध साधारण यायालयो मे कायवाही की जा सकती है। कई यूरोपियन राज्यो म सरकारी सेवको के विरुद्ध अभियोग चलाने क हेतु पृथक न्यायालयो की व्यवस्था है, जैसा कि फ्रास म। स्वीडन और डेनमाक म यह काय प्रोक्यूरेटरा व पार्लियामेटरी कमिश्नरो द्वारा किया जाता है। इसके अतिरिक्त अनेक सरकारी विभाग अथवा अग व अभिकरण अपने कार्यों को करने मे अ सरकारी सदस्यो का परामश पाने के उद्देश्य से परामशदात्री समितियो का प्रयोग करते है।

I ग्रेट ब्रिटेन मे नागरिक सेवाएँ

प्रशासन को चलाने का सबसे अधिक महत्त्वपूण साधन नागरिक सेवाये है। राज्य के कृत्या म अत्यधिक विस्तार हो जाने से नागरिक सेवको की सख्या मे बडी भारी वद्धि हुई है। ब्रिटेन म मामाजिक सवाओ का उत्तरदायित्व राज्य ने अपने ऊपर लिया है अथवा सरकार ने जन कल्याण का ध्येय अपनाया है, अतएव नागरिक सेवाओ की सख्या तथा उनके कार्यों म बडा विस्तार हुआ है। देश की नागरिक सेवाओ को प्रमुख शाखाओ म बाटा गया है—गृह नागरिक सेवा और विदेश सेवा। विदेश सेवा मे राजदूत, उच्चायुक्त, दूतालयो तथा व्यापारिक प्रतिनिधियो के कार्यालय मे काय करने वाले अधिकारी व कमचारी सम्मिलित हैं। गृह नागरिक सेवाओ को उनके कत्तव्या के अनुसार बहुत सी श्रेणियो म विभाजित किया गया है। विभिन्न श्रेणिया के नाम इस प्रकार है—ज्येष्ठ प्रशासक, वैज्ञानिक, प्राविधिक और व्यावसायिक, कायपालिका अधिकारी, क्लक और टाइपिस्ट, डाक व टेलीफोन आदि विभागो म काय करने वाले स देशवाहक व सफाई करने वाले और हाथ स काम करने वाले।

नागरिक सेवाओ की भर्ती व प्रशिक्षण आदि—साधारणतया ब्रिटेन म नागरिक सेवाओ की भर्ती खुली प्रतियोगिता द्वारा होती है और नागरिक सेवा आयोग इस काय को करता है और प्रतियोगी परीक्षाओ म लिखित परीक्षा और इण्टरव्यू सम्मिलित रहते हैं। इस प्रकार नागरिक सेवक योग्यता के आधार पर लिए जाते है और यह काय एक निष्पक्ष व स्वतन्त्र आयोग द्वारा किया जाता है। इस सम्बन्ध मे एक बात और उल्लेखनीय है। भरती के समय उम्मीदवारा को उनके सामान्य ज्ञान के आधार पर लिया जाता है। कुछ वैज्ञानिक, प्राविधिक तथा व्यावसायिक सवाओ को छोडकर प्राय सभी विभागा के लिए उम्मीदवारो के विशिष्ट ज्ञान का महत्त्व नही दिया जाता। कहने का तात्पय यह है कि विभिन्न विभागा के लिए एक साथ भर्ती की जाती है और भर्ती के बाद अधिकारिया व सेवको को विभागा म बाँट दिया जाता है। विभिन्न विभागा म काय के लिए आवश्यक प्रशिक्षण की व्यवस्था रहती है। अधिकाश प्रशिक्षण विभाग म काय करके ही प्राप्त होता है, किन्तु अब अधिकारिया व कमचारियो के प्रशिक्षण के लिए विशेष सस्थायें खुली हैं तथा पाठ्यक्रम विहित किय गय हैं।

साधारण सिद्धान्तो का सर्वथा अभाव रहा।

1883 से आगे सयुक्त राज्य अमरीका की नागरिक सेवाओ के इतिहास की विशेषता योग्यता के सिद्धान्त का विस्तृत रूप से अपनाया जाना है। 1883 म कांग्रेस ने पेंडल्टन कानून (Pendleton Act) पास किया था, जिसमे सिविल सर्विस कमीशन की स्थापना और योग्यता के सिद्धान्त की व्यवस्था थी। सिविल सर्विस कमीशन को वर्गीकृत सेवाओ म सम्मिलित पदो के लिए परीक्षा द्वारा अर्थात् योग्यता के आधार पर भर्ती करने का दायित्व सौंपा गया था। आरम्भ म वर्गीकृत सेवाओ की विभिन्न श्रेणियो म कुल सेवाओ के लगभग 10% पद सम्मिलित किये गये थे, परन्तु अब 92% नागरिक पदो पर, कुछ राजनीतिक पदो को छोडकर, इसी आधार पर नियुक्तियाँ की जाती हैं। अन्य देशो की तरह सयुक्त राज्य म भी गत 30 वर्षों म शासन के कार्य क्षेत्र म बहुत वृद्धि हुई है। सयुक्त राज्य सरकार की नागरिक सेवाओ म 1954 म प्रत्यक्ष रूप म 23 लाख से ऊपर नागरिक अधिकारी व कर्मचारी लगे हुए थे और उन पर लगभग दो अरब डालर प्रति वर्ष व्यय होता था। सयुक्त राज्य अमरीका की नागरिक सेवाओ की कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण विशेषताओ का सक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है—

(1) **विशेषज्ञो पर बल**—सयुक्त राज्य अमरीका वालो का यह विश्वास रहा है कि सरकारी नौकरियो मे भी व्यवसायो और उद्योगो की भाँति, विशेष प्रकार के ज्ञान व कुशलता की आवश्यकता है। अतएव जो व्यक्ति सरकारी नौकरियो म प्रवेश करना चाहते हैं उनके लिए सामान्य शिक्षा पर्याप्त योग्यता नही है उन्हे किसी विशेष प्रकार की व्यावसायिक अथवा प्राविधिक शिक्षा व प्रशिक्षण भी प्राप्त करना आवश्यक है।

(2) **क्रियात्मक परीक्षायें**—उपर्युक्त विशेषता के कारण ही सयुक्त राज्य अमरीका म परीक्षाएँ विशेषतया प्रायोगिक होती हैं। इस क्षेत्र म अमरीकियो ने अनेक प्रकार की परीक्षाए निकाली हैं, जिनके द्वारा कार्यकुशलता, बुद्धि और स्वाभाविक झुकाव की परीक्षा ली जाती है। परन्तु इसका मुख्य दोष यह है कि जो व्यक्ति नियुक्त किये जाते हैं, वे केवल विशिष्ट कार्य ही कर सकते है, अतएव उनकी पदोन्नति व स्थानान्तरण आदि म कठिनाई होती है।

(3) **सेवाओ मे प्रजातन्त्र**—सयुक्त राज्य अमरीका म सेवाओ की भर्ती का आधार पूर्णतया प्रजातन्त्रात्मक है, अर्थात् कोई भी व्यक्ति, जिसम आवश्यक योग्यता हो, किसी भी पद पर नियुक्ति पा सकता है। इस सम्बन्ध म एक बात और है कि जबकि ब्रिटेन म विभिन्न सेवाओ म भर्ती के लिए नीची आयु सीमाएँ नियत है, सयुक्त राज्य अमरीका म अधिक आयु वाले व्यक्ति भी सरकारी सेवाओ म प्रवेश कर सकते हैं।

(4) सयुक्त राज्य अमरीका म विभागो के अध्यक्षो के नीचे अनेक पद अभी तक ऐसे है जिनको राजनीतिक कहा जाता है अर्थात् जिन पर नियुक्ति सिविल सर्विस कमीशन के द्वारा नही होती वरन् राजनीतिक आधार पर होती है। इस कारण ये राजनीतिक आधार पर नियुक्त किये गये पदाधिकारी—सेक्रेटरी, सहायक सेक्रेटरी आदि ब्रिटेन के उच्च स्थायी अधिकारियो के समान योग्य व अनुभवी नही होते। ब्रिटेन म तो मन्त्री के नीचे जूनियर मन्त्रियो के अतिरिक्त सभी उच्च पदाधिकारी स्थायी सरकारी सेवाओ के सदस्य होते हैं।

3 भारत मे नागरिक सेवाएँ

1935 के भारतीय शासन अधिनियम के अन्तर्गत प्रान्तो म प्रान्तीय स्वराज्य स्थापित हुआ, परन्तु इम्पीरियल सेवाओं के भारतीयकरण की दिशा म कोई विशेष प्रगति नही हुई और भारत मन्त्री द्वारा नियुक्त पदाधिकारियो के हितो के सरक्षण का विशेष उत्तरदायित्व गवर्नरो के ऊपर रहा। उन सेवाओ के सदस्यो को बहुत ऊँचे वेतन, भत्ते और विशेषाधिकार प्राप्त थे। उनम

पर वडी मात्रा म निभर रहना पडता है। इस प्रकार की निभरता सम्भवतया इसलिए और भी बढी है कि बहुधा मन्त्री अपन विभागीय मामलो म नौसिखिये होते ह तथा समय-समय पर मन्त्रिमण्डल मे उलट फेर से इस प्रकार की कठिनाइयाँ बढ जाती हैं। इन सभी कारणो से यह विश्वास जन्मा है कि व्यवहार म म न्त्री अपने अधीन नागरिक सेवको के स्वामी होने के स्थान पर य न्त्र अधिक है। किन्तु यह कहना ठीक नही है कि म न्त्री स्थायी अधिकारियो के परामश को मानते हैं और उनके द्वारा दी गई सूचना के आधार पर काम करते है। मन्त्री नीति का निर्धारण करते हैं, ऐसा करने म वे जनता की मागो व जनमत का काफी ध्यान रखते है। पालियामेट मे उन्हे अपनी नीति स्वीकृत करानी पडती है और स्थायी अधिकारी भी मन्त्रियो की नीति को कार्यान्वित करने म काफी तटस्थता से काम करते है।

विधि निर्माण के क्षेत्र मे जहा तक विनियमो, नियमो अर्थात् विभागीय विधि निर्माण का सम्बन्ध है, उसके निर्माण के लिए उत्तरदायित्व प्राय पूण रूप से प्रशासको का है, यद्यपि म न्त्री उसमे परिवतन कर सकता है और उस पर अपनी स्वीकृति देता है। गत वर्षो म इस प्रकार के विधि निर्माण मे वहुत वद्धि हुई है। इन शक्तियो का प्रयोग म न्त्री करता है और म न्त्री ही पालियामेट के प्रति उत्तरदायी समझा जाता है। पर तु वास्तव म, रेम्ज म्यूर के मतानुसार, केबिनेट की अधिनायकशाही के अन्तगत नौकरशाही की शक्ति बहुत बढ गई है। इस विषय म ई० स्टॉस का मत है कि उच्च नागरिक सेवक एक प्रकार के स्थायी राजनीतिज्ञ होते है, जो म न्त्री के निर्देशानुसार नही, वरन् उसके साथ काय करते है और जिनका भाग इस सहकारी प्रयत्न म सरकार के काय क्षेत्र म अत्यधिक विस्तार होने के कारण अनिवायत बहुत बढ गया है। साथ ही वे प्रशासनतन्त्र के प्रभावी स्वामी होते है और केवल अत्यधिक सुदृढ मन्त्री ही उनको उनके क्षेत्र मे चुनौती दे सकता है। यह सच है कि आज स्थायी सेवको की सख्या व कार्यों म बहुत वृद्धि हुई है, किन्तु उनके ऊपर मन्त्रियो का भी नियन्त्रण रहता है और मन्त्री पालियामट के प्रति उत्तरदायी हैं। यदि यह माना भी जाये कि ब्रिटेन म नौकरशाही है तो यह कहना उचित होगा कि यह नियन्त्रित अथवा उत्तरदायी नौकरशाही है और इसका उद्देश्य उत्तरदायी शासन है स्वेच्छाचारी अथवा अत्याचारी शासन नही है।

2 सयुक्त राज्य अमरीका मे नागरिक सेवाये

सयुक्त राज्य अमरीका की नागरिक सेवाओ पर विचार करत समय सबस पहले लूट की पद्धति (spoils system) का प्रश्न सामन आता है। इस पद्धति का आरम्भ राष्ट्रपति जक्सन द्वारा 1828 म हुआ था और लगभग 50 वष तक यह जोरो स प्रचलित रही। इसक अनुसार राष्ट्रीय, राज्यीय तथा स्थानीय प्रशासन की शाखाओ म प्राय सभी सरकारी नौकरिया को लूट की दृष्टि स देखा जाता था और राष्ट्रपति के चुनाव के साथ लाखा पदा को विजयी दल के समथको से भरा जाता था तथा पुराने सेवको को हटा दिया जाता था। इस पद्धति का आधार योग्यता न होकर राजनीतिक था, अर्थात् जीतने वाले का सरकारी नौकरिया लूट क रूप म दी जाती थी। दलो के लिए काम करने वाले व्यक्तिया क सामने यही आकषण रहता था और राष्ट्रीय सम्मलनो तथा अन्य अवसरो पर राजनीतिक कायकर्त्ता कहा करत थे कि व इसीलिए तो दल का काय करते है। इस दोषयुक्त प्रथा के परिणामस्वरूप सम्पूण सावजनिक सेवाएँ और सावजनिक जीवन अत्य त दूषित और निकृष्ट हो गया था। राष्ट्रपति और कबिनट क सदस्या का बहुत सा समय काग्रेस के सदस्यो के समथको के लिए नौकरियाँ दन सम्बन्धी सिफारिशें सुनन म ही बीतता था। सरकारी नौकरिया मे पदो क लिए योग्यता, अनुभव, पदावधि की सुरक्षा आदि जैसी आवश्यक दशाओ और सरकारी सवको की स्वतन्त्र व निष्पक्ष आयाग द्वारा भर्ती के

पद तक के सभी पद आते है। 1948 की योजना के अ तगत इन सेवाओ को अग्रलिखित चार श्रेणियो मे पुनगठित किया गया है—अण्डर सक्रेटरी, सुपरिटेंडेंट, असिस्टट सुपरि टेंडेंट और असिस्टेंट। इन सेवाओ के लिए भर्ती लिखित परीक्षा अथवा इण्टरव्यू अथवा दोनो प्रकार से सघीय लोक सेवा आयोग द्वारा की जाती है।

राज्य सेवाएँ—यद्यपि भारतीय प्रशासन सेवा और भारतीय पुलिस सेवा को राज्य म उच्च प्रशासनिक व पुलिस पदा की आवश्यकताओ के आधार पर सगठित किया गया है और इन सेवाओ के सदस्य विभिन्न विभागो व जिलो मे प्राय सभी उच्च स्थानो पर नियुक्त होते है, फिर भी प्रत्येक राज्य म राज्य की सेवाओ के लिए भी व्यवस्था है। राज्य की सेवाए राज्य के अधीन विभिन्न विभागा तथा प्रशासन व पुलिस विभागो के अधीन स्थानो पर काय करती है। राज्य की सेवाओ म भी सबसे महत्त्वपूण स्थान प्रशासन शाखा है। तहसीलो के अधिकारी, राज्य प्रशासन सेवा के सदस्य हैं। अन्य दो महत्त्वपूण सेवाएँ पुलिस और न्याय विभाग की है। इनके अतिरिक्त विभिन्न विभागा मे प्राविधिक तथा विशेष ज्ञान प्राप्त व्यक्तिया की भर्ती की जाती है इन सवाओ के सदस्या को सविधान म दिये गये सभी सरक्षण प्राप्त है, किन्तु उनकी सेवा सम्बन्धी शर्तें राज्य सरकार द्वारा बनाये गये कानून और उनके अधीन बने विनियमा स विनियमित होती है।

लोक सेवा आयोग—भारत के सविधान के अन्तगत एक सघीय लाक सेवा आयोग तथा विभिन्न राज्या के लिए अलग अलग लोक सेवा आयोग बनाने की व्यवस्था है। सघीय लोक सवा आयोग के सभापति और सदस्यो की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। राज्य लोक सेवा आयोग के सभापति और सदस्या की नियुक्ति उस राज्य का राज्यपाल करता है। सविधान का यह भी आदेश है कि प्रत्येक लोक सेवा आयोग के सदस्यो मे जहाँ तक हो सके, आधे व्यक्ति ऐसे हाने चाहिएँ जो अपनी नियुक्ति के समय भारत या राज्य सरकार के अधीन कम से कम दस वष तक कोई पद धारण कर चुके हो। राज्य के लोक सवा आयोग का सदस्य पद ग्रहण स 6 वष की अवधि तक अथवा 60 वष की आयु तक, जो भी इनम से पहले हो, अपना पद धारण करेगा। सघीय लोक सेवा आयोग का सदस्य राष्ट्रपति को सम्बोधित लेख द्वारा अपने पद से त्यागपत्र द सकता है अथवा उसे इस प्रकार हटाया भी जा सकता है—किसी भी आयोग के सभापति या सदस्य को केवल राष्ट्रपति के आदेश द्वारा हटाया जा सकता है, हटाने का आधार कदाचार हागा और ऐसा तभी किया जा सकेगा, जबकि उस मामले का सर्वोच्च न्यायालय को सौपा जाय और वह इस प्रकार की सिफारिश करे। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति इनके सभापतियो अथवा सदस्या का केवल अपने आदेश द्वारा अग्रलिखित आधारो पर हटा सकता है—(अ) यदि उसे अधिकार प्राप्त न्यायालय दिवालिया माने, (आ) वह अपने पद के अतिरिक्त किसी दूसरे लाभ के पद पर काय करने लगे, (इ) मस्तिष्क या शरीर की असमथता के कारण यदि वह राष्ट्रपति की सम्मति म अपन पद के अयोग्य हो गया हो। साथ ही काई भी सदस्य अपनी कार्यावधि पूण होने पर फिर स नियुक्त नही किया जा सकता।

राष्ट्रपति तथा गवनरा को अपने अधीन आयोगो से सम्बन्धित अग्रलिखित बातो के विषय मे नियम निर्धारण के अधिकार प्राप्त हैं—(अ) सदस्या की सख्या और उनकी सेवा की शर्तें, (आ) उनके अधीन कमचारियो व उनकी सेवा की शर्तें। परन्तु आयोग के किसी सदस्य की सेवा की शर्तों म उनके कायकाल मे कोई ऐसा परिवतन नही किया जा सकता जिसक परिणामस्वरूप उसे हानि पहुचे। आयोग की सदस्यता समाप्त होन पर—(1) सघ लाक सवा आयोग का सभापति सरकार के अधीन कोई वतनिक पद प्राप्त नही कर सकता। (2) राज्य आयोग का सभापति केवल सघ लाक सेवा आयोग का सभापति अथवा सदस्य नियुक्त हो सकता है। (3) सघ लोक सवा आयोग का कोई सदस्य कवल सघ या राज्य के किसी लोक सवा आयोग का सभापति

से इण्डियन सिविल सर्विस के सदस्य केद्र तथा प्रातो के सभी प्रशासनिक विभागो म ऊँचे पदो पर काय करत थे। वे योग्य व अनुभवी होते थे, परन्तु उनकी इस आधार पर कडी आलोचना की जाती थी कि उनम से अधिकतर न तो इण्डियन (भारतीय) थे, न सिविल (विनीत) थे (क्योकि उनम तो बहुत अकड थी) और न सेवक ही थे (क्योकि वे अपने को जनता का सेवक न समझते थे)। अन्त मे, 15 अगस्त 1947 को भारत के स्वत त्र होने पर अधिकतर अग्रेज भारत सरकार की सेवा से अलग हो गय और समाज मे उच्च पदाधिकारियो की एकदम बडी कमी अनुभव हुई। स्वत त्रता मिलने पर इण्डियन सिविल सर्विस के स्थान पर भारतीय प्रशासन सेवा (I A S) की स्थापना हुई। इसमे प्रतियोगी परीक्षा द्वारा साधारण भर्ती के अतिरिक्त उच्च अधिकारियो की कमी पूरी करने के लिए विशेष भर्ती भी की गयी।

भारत के सविधान मे सावजनिक सेवाओ सम्बन्धी उपबन्ध—प्रजात त्र म यह स्वीकार किया जाता है कि जनता अपने निर्वाचित प्रतिनिधियो द्वारा शासन चलाती है, अत यह स्पष्ट है कि वे अधिकारी और कर्मचारी जो प्रशासन कार्यो का सचालन करते है जनता अर्थात् विधान मण्डलो के अधीन होने चाहिएँ। इसीलिए सविधान मे कहा गया है कि सघ सरकार और राज्य सरकारो के अधीन सेवाओ मे भर्ती किये जाने वाले व्यक्तियो की भर्ती और उनकी सेवा की शर्तें सघ या राज्य के विधानमण्डल ही कानून द्वारा निर्धारित करेगे। सभी अखिल भारतीय सेवाओ—सनिक तथा नागरिक—के सदस्य अपने पदो पर राष्ट्रपति के प्रसाद पय त ही रह सकते है, ऐसे ही राज्य सरकारो के अधीन सेवाओ के सदस्य राज्यपाल के प्रसाद पय त रह सकते है। इसका व्यवहार मे यही अथ है कि सरकारी सेवको को अपने पदो से केवल अपराध, अनुशासन भग अथवा कत्तव्य न पालन करने के गम्भीर दोष के आधार पर ही पद निवृत्ति के पूव हटाया जा सकता है। सविधान मे यह भी कहा गया है कि कोई नागरिक (सावजनिक) सेवा का सदस्य अपने पद से तव तक नही हटाया जायगा अथवा उसके पद की अवनति नही की जायगी जब तक कि उसके विरुद्ध की जाने वाली कायवाही के सम्ब ध म उसे अपने बचाव के लिए उचित अवसर न दिया जाय। इस प्रकार सरकारी सेवाओ के सदस्यो को उनके पदो की सुरक्षा का पूण आश्वासन दिया गया है। सविधान मे लोक सेवा की आधारभूत बातो—पदावधि, अधिकार, वेतन, विशेषाधिकार और भर्ती का ढग आदि—के विषय मे यह ध्यान रखा गया है कि जन कल्याणकारी राज्य के प्रशासनतन्त्र की ओर योग्य, ईमानदार और व्यापक दृष्टि सम्पन्न व्यक्ति आकृष्ट हो।

वतमान सावजनिक सेवाओ का वर्गीकरण—सविधान मे कहा गया है कि यदि राज्य सभा अपने प्रस्ताव द्वारा घोषित करे कि राष्ट्रीय हित म एक या अधिक प्रकार की अखिल भारतीय सेवाएँ सघ व राज्यो के लिए स्थापित की जायें, तो ससद कानून द्वारा उन्हे स्थापित कर सकती है, पर तु इस सम्बन्ध मे राज्य सभा का प्रस्ताव कुल उपस्थित सदस्यो के दो तिहाई मतो से पास होना आवश्यक है। अब भारतीय सघ म तीन प्रकार की सेवाएँ है—एक वे जो केवल सघ सरकार के अधीन है, दूसरी वे जो राज्यो के अधीन हैं और तीसरी वे जो सघ तथा राज्यो दोनो के ही अधीन काय करेगी। अखिल भारतीय सेवाओ का उद्दश्य सघ तथा राज्यो के अधीन सभी उच्च व महत्त्वपूण पदो के लिए अधिकारियो की व्यवस्था करना है। उनकी भर्ती अखिल भारतीय स्तर पर होती है। अत उनसे आशा है कि व प्रशासन म उच्च स्तर तथा कायकुशलता का परिचय देंगी। इस व्यवस्था का लाभ यह भी है कि इससे सघ की एकता सुदृढ रहेगी तथा राष्ट्रीयता की भावना मे वृद्धि होगी। अखिल भारतीय सेवाओ के लिए प्रति वष सघीय लोक सेवा आयोग एक सम्मिलित प्रतियोगी परीक्षा करता है। इन सेवाओ म भारतीय प्रशासन सेवा, भारतीय पुलिस सेवा भारतीय विदेश सेवा, भारतीय लेखा तथा परीक्षण सेवा इत्यादि प्रमुख हैं।

केन्द्रीय सेक्रेटेरियट की सेवाएँ—इन सेवाओ मे सहायक पद स लेकर अण्डर-सेक्रेटरी क-

पद ग्रहण कर सकता है। (4) किसी राज्य लोक सेवा आयोग का सदस्य भी केवल सघ लाक सेवा आयोग या अ य किसी राज्य लोक सेवा आयोग का सभापति अथवा सदस्य बन सकता है। इन शर्तों का सरल तात्पय यह है कि लोक सेवा आयोग के सदस्या को किसी अ य प्रकार के सरकारी पद नही मिल सकते। पर तु पद निवृत्ति के बाद वे विधानमण्डलो के सदस्य अवश्य चुने जा सकते हैं। इस अनुच्छेद के अनुसार उनके सावजनिक जीवन का प्राय अ त ही हो जाता है। वास्तव म लोक सेवा आयोग की स्वत त्रता व निष्पक्षता को सुरक्षित बनाये रखने का यह एक प्रयत्न है। उनका व्यय भी सम्ब धित सरकारो की सचित निधियो पर भारित है।

लोक सेवा आयोगो के काय—इनका प्रथम कत्तव्य अपने अधीन सेवाओ मे नियुक्तिया कराने के हेतु परीक्षाओ की व्यवस्था करना है। इन आयोगो से अग्रलिखित विषया मे परामश लेना आवश्यक है—(1) नागरिक सेवाओ और पदा के लिए भर्ती से सम्ब धित सभी मामलो पर, (2) इन सेवाओ और पदा पर नियुक्तिया करन म किन सिद्धा तो का पालन किया जाय तथा पदोन्नति और तबादले के क्या सिद्धा त हा, (3) सरकारी सेवको मे अनुशासन सम्ब धी सभी मामलो पर, (4) किसी भी सरकारी सेवक द्वारा या उसकी ओर स किसी भी दावे पर, जैस उसके विरुद्ध सरकारी अधिकारी की हैसियत से किय गये किसी काय के सम्ब ध म चलायी गयी किसी भी यायिक कायवाही का व्यय सघ अथवा राज्य सरकार के कोष से दिया जाय या नही, और (5) राष्ट्रपति अथवा गवनरो द्वारा जो मामला सम्ब धित आयोगो को भेजा जाय उसके विषय मे परामश देना इन आयोगा का कत्तव्य है।

परन्तु राष्ट्रपति और गवनरो को अपने अधीन आयोगा के विषय म ऐसे नियम बनान की शक्ति भी मिली है, जिसके अनुसार वे निर्धारित मामलो को साधारणतया अथवा विशेषत आयोगो के परामश की सीमा से बाहर रख सकते हैं। साथ ही विधानमण्डलो को अपने अधीन सवाओ के विषय म सम्ब धित आयोगो को अतिरिक्त कृत्य सौपन के लिए कानूनी व्यवस्था करने की शक्ति भी प्राप्त है। सविधान म यह भी व्यवस्था है कि प्रत्येक लोक सेवा आयोग अपने कार्यों की वार्षिक रिपोट राष्ट्रपति अथवा गवनर उन रिपोर्टों को अपनी ओर स स्मृति-पत्र सहित सम्ब धित विधानमण्डला के सामने रखवाये। स्मृति पत्र म एसे मामलो का उल्लेख भी होता है जिसम सरकारो ने आयोगा के परामश को न माना हो और साथ मे न मानने क कारण भी दिय जाते है।

सेवा सम्ब धी शर्तों का विनियमन और मूल अधिकार—सविधान द्वारा विधानमण्डलो को सावजनिक सेवाओ की शर्तो क विषय मे नियम बनाने के अधिकार मिले है, किन्तु प्रश्न यह है कि क्या सरकारी नौकर होने के कारण उनकी भाषण, लखन व सगठन की स्वत त्रता को सीमित किया जा सकता है ? अ य देशो मे भी उनके राजनीतिक कायवाहियो के भाग लेने के प्रश्न उठे है और उनके निणय हुए है। ब्रिटेन म सरकारी नौकरो को मतदान करने का अधिकार है, कि तु वे सक्रिय रूप से किसी भी राजनीतिक कायवाही म भाग नही ले सकते। वही स सावजनिक सेवाओ की राजनीति के प्रति तटस्थता की प्रथा चली जा ससदीय पद्धति म आवश्यक और अति उपयोगी है। उसी प्रथा को हमारे देश मे माना गया है। अत जबकि प्रत्यक नागरिक को भाषण व लेखन की स्वत त्रता है, कोई भी सरकारी सेवक राजनीतिक भाषण नही दे सकता। इस मूल अधिकार का सीमित करना नही वरन् सरकारी सेवा को नियमित करना समझा जाता है और यह उचित है। उन देशा की भाँति भारत मे भी सरकारी सदस्यो का अपने सगठन बनान के अधिकार हैं, जो उनकी मागो को समय समय पर सरकार के सामन रखते है। नियमा के अनुसार नोटिस आदि देने पर वे हडताल करने का भी अधिकार रखते हैं। परन्तु आवश्यक सेवाआ के सदस्या क एसे अधिकार (जैसा कि राज्य की सुरक्षा और जनहित म आवश्यक है) अधिक सीमित और प्रतिबन्धित है।

तेईसवाँ अध्याय

राज्य के आर्थिक संगठन

1 प्रजातन्त्र—राजनीतिक और आर्थिक

राजनीति और प्रजातन्त्र अर्थात् शासन प्रणाली के रूप में प्रजातन्त्र के विभिन्न पहलुओं का विवेचन पूर्वगामी अध्यायों में किया जा चुका है। उनके साथ में ही प्रजातन्त्र के राजनीतिक संगठन का भी सविस्तार विवेचन दिया गया है। परन्तु वर्तमान काल में प्रजातन्त्र के आर्थिक पहलू का महत्त्व बहुत बढ़ गया है। व्यक्तिवाद का युग बीते हुए काफी समय हो चुका है और अब तो समाजवाद का प्रसार वेग के साथ बढ़ रहा है। समाजवाद के विभिन्न रूप हैं, जिनके प्रभाव में विभिन्न राज्यों ने प्रजातन्त्र शासन प्रणाली के साथ आर्थिक प्रजातन्त्र की संस्थाओं को अपनाया है। आज के विश्व में प्रजातन्त्र का विकल्प सर्वाधिकारवादी राज्य अथवा अधिनायकतन्त्र है और विभिन्न प्रकार के अधिनायकतन्त्रों में भिन्न भिन्न प्रकार के आर्थिक संगठनों का स्थापित किया गया है। इस अध्याय में हमारा प्रयोजन यह दिखाना है कि सांविधानिक राज्यों में वास्तविक आर्थिक प्रजातन्त्र की स्थापना के लिए क्या प्रयत्न किये गये हैं और किये जा रहे हैं। हम यह भी देखने का प्रयत्न करेंगे कि सांविधानिक राज्य आर्थिक संगठन की संस्थाओं पर किस प्रकार नियन्त्रण करता है।

राजनीतिक व आर्थिक शक्तियाँ—वर्तमान युग में दोनों प्रकार की शक्तियों के बीच सम्बन्ध का प्रश्न बड़ा महत्त्वपूर्ण है। अतः यहाँ पर हम इन शक्तियों के बीच चल रहे संघर्ष की ओर संकेत करेंगे। सत्ता की प्राप्ति के लिए प्रत्येक युग में संघर्ष चला है। उदाहरण के लिए, मध्य युग में सदियों तक 'आध्यात्मिक' और 'लौकिक' शक्तियों अर्थात् धर्म गुरुओं तथा शासकों के बीच संघर्ष चला, परन्तु वर्तमान काल में सत्ता के लिए संघर्ष का रूप भिन्न है। वास्तव में, आजकल संघर्ष राजनीतिक और आर्थिक शक्तियों के बीच में है। अतीत में राजसत्ता (अर्थात् राजनीतिक शक्ति) को अन्तिम अथवा सर्वोच्च सत्ता माना जाता रहा, किन्तु कुछ विचारधाराओं के समर्थक अब इस दावे को नहीं मानते। उदाहरण के लिए, श्रम-संघवादी राज्य की सत्ता को आर्थिक क्षेत्र में किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप का अधिकार नहीं देते अर्थात् उसे राजनीतिक क्षेत्र तक ही सीमित करने में विश्वास करते हैं। अन्य समाजवादी व साम्यवादी भी मजदूर संघों की शक्ति अर्थात् आर्थिक शक्ति के महत्त्व पर बल देते हैं। यदि यह कहा जाये कि आजकल आर्थिक शक्ति सर्वोच्चता का दावा करती है तो अत्युक्ति न होगी, यद्यपि कानूनी दृष्टि से अभी तक सर्वोच्चता राजनीतिक शक्ति की ही है। दोनों शक्तियों के संघर्ष के विषय में मेकाइवर का कथन है—राजनीतिक शक्ति की सीमाएँ निश्चित होती हैं, किन्तु आर्थिक शक्ति सीमाओं से नहीं बंधी है। आर्थिक शक्ति के पास बहुत से शस्त्र हैं और राजनीतिक शक्ति के पास बहुत ही कम। राजनीतिक शक्ति को खुले में युद्ध करना पड़ता है, जबकि आर्थिक शक्ति को गोपनीयता का लाभ है।[1]

[1] MacIver R M *The Modern State*, pp 294-303

उपर्युक्त विचारो को हम, सरल शब्दा म, इस प्रकार रख सकते हैं। साम्यवादियो के अनुसार पाश्चात्य प्रजात त्रीय दशो म सच्चा प्रजात त्र नही वरन् पूजीपति वग का शासन है अर्थात् प्रत्यक्ष व परोक्ष साधनो द्वारा पूजीपति वग न शासन त त्र पर अपना निय त्रण कायम किया हुआ है। बहुधा यह भी कहा जाता है कि इन दशा म चुनाव जीतने के लिए बहुत धन चाहिए, अतएव राजनीतिक दल धनिक वग क अप्रत्यक्ष निय त्रण अथवा अनुचित प्रभाव के अधीन है। इस कथन म सत्य का काफी अश है कि धनी व्यक्ति और पूजीपति अपनी आर्थिक शक्ति के द्वारा राजनीतिक शक्ति पर बहुत प्रभाव डालत हैं। जनमत निर्माण के प्रमुख साधना म से एक अत्य त महत्त्वपूर्ण साधन समाचार-पत्र भी धनी व्यक्तिया के निय त्रण म रहते है। इस प्रकार धनिक व सम्पत्तिशाली वग शासनत त्र पर अपना प्रभुत्व जमाते हैं और उस अपन लाभ का साधन बनाने का प्रयत्न करते है। दूसरी ओर सगठित मजदूर सघ भी राज्य पर अपना प्रभुत्व जमाने का प्रयत्न करते है और साम्यवादी देशो मे राज्य शक्ति पर उनके दला का निय त्रण है।

सम्पत्ति का महत्त्व—सामाजिक जीवन मे धन व सम्पत्ति का सदा ही बडा महत्त्व रहा है और आज का युग तो इसी कारण पूजीवादी युग कहलाता है, जिसका साम्यवादी अ त करना चाहत हैं। सम्पत्ति का प्रश्न एक आधारभूत प्रश्न है, जिसका कोई सरल उत्तर नही है। मनोवैज्ञानिको के अनुसार मनुष्या की अनेक आधारभूत प्रवृत्तियो मे से एक अत्यधिक महत्त्वपूण प्रवत्ति सम्पत्ति के अजन की है और इसका आधार सुरक्षा की मूल प्रवृत्ति है। यह सच है कि सम्पत्ति स सुरक्षा प्राप्त होती है, क्योकि धनी व सम्पत्तिशाली व्यक्तियो को भूखे मरने का भय नही रहता। इसी प्रवृत्ति के कारण प्राय सभी मनुष्य सम्पत्ति का अजन करते है और उसके स्वामी बने रहना चाहते हैं। सम्पत्ति की सस्था सभी दशो व समाजा म किसी न किसी रूप मे प्राचीन काल से चली आ रही है। किसी वस्तु पर किसी एक व्यक्ति या व्यक्ति समूह का अन य निय त्रण और स्वामित्व ही सम्पत्ति कहलाता है। यह मकान मरा है, वह भूमि उसकी है, मकान और भूमि विभिन्न प्रकार की सम्पत्ति है। रूसो का यह कथन सच है कि सम्पत्ति के उदय के साथ साथ ही 'मेरा' और 'तरा' की उत्पत्ति और विकास हुआ।

कुछ विचारक यह मानते हैं कि धन या सम्पत्ति व्यक्तिगत प्रयत्नो का फल है, अत उ हे उसके उपयोग का अधिकार होना चाहिए और राज्य को उस अधिकार म हस्त क्षेप नही करना चाहिए। पर तु अब इस विचार को स्वीकार नही किया जाता। वास्तव म, बहुत सीमा तक धन समाज की रचना है। जमीदार व भूमिपति भूमि पर भी कुछ भी नही करत, कि तु स्वामित्व उनका माना जाता है। शहर मे मकानो और भूमि की कीमत बढने का कारण शहरो मे बढती हुई जनसख्या तथा अ य सामाजिक दशाएँ है, अतएव इनके स्वामिया को बढती हुई कीमतो पर क्या अधिकार है? ऐसे ही उद्योगो म अधिकाश उत्पादन का श्रेय श्रमिका को है, जि ह पेट भर मजदूरी भी कठिनाई स मिलती है और जिन पूजीपतिया ने शोषण द्वारा धन कमाकर कारखाना म लगाया है, वे सम्पूण अतिरिक्त अथ (surplus value) के अधिकारी हो जाते है। इसी आधार पर काल मावस ने अतिरिक्त अथ के सिद्धा त का प्रतिपादन किया।

कुछ अ य विचारका के अनुसार, सम्पत्ति परिश्रम और योग्यता का फल है। अत यहाँ पर इस सिद्धा त स सम्बन्धित पहलुआ पर भी विचार करना उपयुक्त होगा। इस विषय म कुछ मता का सक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है। कुछ आदशवादियो के अनुसार सबको समान पारिश्रमिक मिलना चाहिए। यह मत यायोचित नही ठहराया जा सकता, क्योकि कम परिश्रम करने वाल को अधिक परिश्रम करने वाल के समान समझा जायगा। इससे समाज मे आलस्य फैलेगा और प्रगति रुक जायगी, किन्तु हम यह कहेगे कि पारिश्रमिक म अन्तर कम स कम मे होना चाहिए और उसका निर्धारण कई आधारा पर होना चाहिए। कुछ विचारको के अनुसार पारिश्रमिक

बाजार की सौदेबाजी पर निर्भर होना चाहिए। यदि ऐसा होने लगे तो अनेक उच्च वेतन वाले पदों के लिए बहुत कम वेतन पर व्यक्ति मिल जायें। साथ ही जिन श्रमिकों के हित में सरकार निम्नतम वेतन सम्बन्धी कानून बना रही है वह सब व्यर्थ हो जायगा। नैतिक दृष्टि से भी यह सिद्धान्त मान्य नहीं है, क्योंकि जिनके पास अपने परिश्रम के अतिरिक्त बेचने या खाने को कुछ नहीं उन्हें भूखा मरना पड़ेगा या विवश होकर अत्यधिक कम वेतन स्वीकार करना होगा।

वास्तव में, आदर्श सिद्धान्त तो यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यतानुसार समाज हित में श्रम करे और उसे उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पारिश्रमिक दिया जाय। परन्तु यह सिद्धान्त आदर्श समाज में ही क्रियान्वित हो सकेगा। इस विषय में लास्की का मत मान्य है। वह कहता है कि प्रत्येक व्यक्ति को श्रम करने पर एक निर्धारित निम्नतम पारिश्रमिक तो मिलना ही चाहिए। पारिश्रमिक निर्धारण में योग्यता, कार्यकुशलता और उसकी उपयोगिता पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। स्वस्थ आर्थिक व्यवस्था के लिए यह आवश्यक है कि सम्पत्ति के अधिकार पर राज्य का नियन्त्रण हो।

लास्की के मतानुसार निजी सम्पत्ति का विचार पूर्णतया अमान्य नहीं है। सम्पत्ति का होना व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति और विकास के लिए आवश्यक है, परन्तु सम्पत्ति अपने परिश्रम द्वारा अर्जित होनी चाहिए और व्यक्तिगत प्रयत्न इस प्रकार से संगठित होने चाहिए कि उनके द्वारा समाज का हित हो। यह मात्रा में इतनी अधिक होनी चाहिए कि इसका स्वामी केवल उसी के आधार पर समाज में शक्ति और मान पाये और साथ ही यह इतनी कम भी न हो कि इसका स्वामी अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास कर सकने में अपने को असमर्थ पाये। इस प्रकार अनुचित उपायों द्वारा तथा उत्तराधिकार में प्राप्त सम्पत्ति पर व्यक्तियों के स्वामित्व का अधिकार उचित नहीं, इस पर भी लास्की विधवा स्त्री के जीवन-यापन और बच्चों की शिक्षा आदि के लिए उत्तराधिकार द्वारा प्राप्त सम्पत्ति को बुरा नहीं बताता और हम भी उसके मत से सहमत हैं, तब तक कि राज्य या समाज उन सबके लिए पूर्ण उत्तरदायित्व लेकर समुचित व्यवस्था न करे।

आज सभी विचारवान् व्यक्ति यह स्वीकार करते हैं कि राज्य को समाज के हित में सम्पत्ति के अर्जन, स्वामित्व और क्रय-विक्रय पर आवश्यक प्रतिबन्ध लगाने चाहिएँ अर्थात् ये सभी बातें राज्य द्वारा विनियमित और नियन्त्रित होनी चाहिएँ। बिना मेहनत के प्राप्त आय जैसे किराये व सूद की आमदनी पर कड़े प्रतिबन्ध लगाने उचित हैं। इसी उद्देश्य से जमींदारी व जागीरदारी प्रथा का अन्त किया जा रहा है और किसानों एवं निर्धनों को कम सूद पर ऋण देने की सुविधाएं सभी प्रगतिशील सरकारें बढ़ा रही हैं। गावों की जमींदारी की तरह शहरों की सम्पत्ति अर्थात् रहने के मकान से अधिक मकानों पर किसी व्यक्ति का अधिकार नहीं रहना चाहिए। साथ ही प्राकृतिक साधनों और भूमि पर राज्य का स्वामित्व होना चाहिए।[1] इस विषय में फाइनर का कथन है—'उन सभी देशों में जिनकी राजनीतिक पद्धतियों का हमने विवेचन किया है, राजनीतिक संस्थायें, उद्योग और आर्थिक वितरण के ऊपर अपना नियन्त्रण स्थापित करने में पहले से ही काफी आगे बढ़ चुकी हैं। इस प्रकार के नियन्त्रण की मात्रा और उसके रूप में अनेक विभिन्नतायें हैं। वास्तव में इनसे सम्बन्धित प्रश्न ही आज के राजनीतिक जीवन के ऐसे प्रश्न हैं जिनके बारे में विभिन्न विरोधी मत व्यक्त किये गये हैं। नियोजित अर्थव्यवस्था, राज्यवाद (अर्थात् सर्वाधिकार-वादी राज्य), श्रम संघवाद, श्रेणी समाजवाद, समाजवाद, साम्यवाद आदि उन राज्यों में (जहां उनका जन्म हुआ तथा देशों में) विभिन्न प्रकार के हल हैं जिनकी अनेक समूह माँग कर रहे हैं अथवा जिनका विरोध हो रहा है।'[2]

[1] Laski H J *A Grammar of Politics* Chap 5

[2] Finer H *Theory and Practice of Modern Government* pp 27–28

उपर्युक्त विचारो को हम, सरल शब्दो म, इस प्रकार रख सकते हैं। साम्यवादियो के अनुसार पाश्चात्य प्रजात त्रीय देशो म सच्चा प्रजात त्र नही वरन् पूजीपति वग का शासन है अर्थात् प्रत्यक्ष व परोक्ष साधनो द्वारा पूजीपति वग न शासन त त्र पर अपना निय त्रण कायम किया हुआ है। बहुधा यह भी कहा जाता है कि इन देशो म चुनाव जीतन के लिए बहुत धन चाहिए, अतएव राजनीतिक दल धनिक वग क अप्रत्यक्ष निय त्रण अथवा अनुचित प्रभाव क अधीन है। इस कथन म सत्य का काफी अश है कि धनी व्यक्ति और पूजीपति अपनी आर्थिक शक्ति के द्वारा राजनीतिक शक्ति पर बहुत प्रभाव डालते है। जनमत निर्माण के प्रमुख साधनो म स एक अत्य त महत्त्वपूर्ण साधन समाचार-पत्र भी धनी व्यक्तियो क नियन्त्रण म रहते हैं। इस प्रकार धनिक व सम्पत्तिशाली वग शासनत त्र पर अपना प्रभुत्व जमाते हैं और उसे अपने लाभ का साधन बनाने का प्रयत्न करते है। दूसरी ओर सगठित मजदूर सघ भी राज्य पर अपना प्रभुत्व जमाने का प्रयत्न करते है और साम्यवादी देशो म राज्य शक्ति पर उनके दलो का निय त्रण है।

सम्पत्ति का महत्त्व—सामाजिक जीवन म धन व सम्पत्ति का सदा ही बडा महत्त्व रहा है और आज का युग तो इसी कारण पूजीवादी युग कहलाता है, जिसका साम्यवादी अ त करना चाहते हैं। सम्पत्ति का प्रश्न एक आधारभूत प्रश्न है, जिसका कोई सरल उत्तर नही है। मनोवैज्ञानिको क अनुसार मनुष्यो की अनेक आधारभूत प्रवत्तियो म से एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति सम्पत्ति के अजन की है और इसका आधार सुरक्षा की मूल प्रवृत्ति है। यह सच है कि सम्पत्ति स सुरक्षा प्राप्त होती है, क्योकि धनी व सम्पत्तिशाली व्यक्तियो को भूखे मरने का भय नही रहता। इसी प्रवृत्ति के कारण प्राय सभी मनुष्य सम्पत्ति का अजन करते है और उसके स्वामी बन रहना चाहते हैं। सम्पत्ति की सस्था सभी देशो व समाजो म किसी न किसी रूप म प्राचीन काल से चली आ रही है। किसी वस्तु पर किसी एक व्यक्ति या व्यक्ति समूह का अनन्य निय त्रण और स्वामित्व ही सम्पत्ति कहलाता है। यह मकान मेरा है, वह भूमि उसकी है, मकान और भूमि विभिन्न प्रकार की सम्पत्ति है। रूसो का यह कथन सच है कि सम्पत्ति क उदय के साथ साथ ही 'मेरा' और 'तेरा' की उत्पत्ति और विकास हुआ।

कुछ विचारक यह मानते हैं कि धन या सम्पत्ति व्यक्तिगत प्रयत्नो का फल है, अत उ हे उसके उपयोग का अधिकार होना चाहिए और राज्य का उस अधिकार मे हस्त क्षेप नही करना चाहिए। पर तु अब इस विचार का स्वीकार नही किया जाता। वास्तव म बहुत सीमा तक धन समाज की रचना है। जमीदार व भूमिपति भूमि पर भी कुछ भी नही करते, कि तु स्वामित्व उनका माना जाता है। शहर म मकानो और भूमि की कीमत बढने का कारण शहरो म बढती हुई जनसख्या तथा अ य सामाजिक दशाएँ है, अतएव इनके स्वामियो का बढती हुई कीमतो पर क्या अधिकार है? ऐसे ही उद्योगो म अधिकाश उत्पादन का श्रेय श्रमिको को है, जि हे पेट भर मजदूरी भी कठिनाई से मिलती है और जिन पूजीपतियो न शोषण द्वारा धन कमाकर कारखानो मे लगाया है, वे सम्पूर्ण अतिरिक्त अथ (surplus value) के अधिकारी हो जाते है। इसी आधार पर काल मार्क्स न अतिरिक्त अथ के सिद्धा त का प्रतिपादन किया।

कुछ अ य विचारको के अनुसार, सम्पत्ति परिश्रम और योग्यता का फल है। अत यहाँ पर इस सिद्धा त से सम्बन्धित पहलुओ पर भी विचार करना उपयुक्त होगा। इस विषय म कुछ मतो का सक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है। कुछ आदर्शवादियो के अनुसार सबको समान पारिश्रमिक मिलना चाहिए। यह मत यथोचित नही ठहराया जा सकता, क्योकि कम परिश्रम करने वाले को अधिक परिश्रम करने वाले के समान समझा जायेगा। इससे समाज म आलस्य फैलेगा और प्रगति रुक जायगी, कि तु हम यह कहगे कि पारिश्रमिक म अ तर कम स कम से होना चाहिए और उसका निर्धारण कई आधारो पर होना चाहिए। कुछ विचारको के अनुसार पारिश्रमिक

यह एक तथ्य है कि तथाकथित पूजीवादी राज्यो म भी समाजवाद का प्रभाव बढ रहा है। ब्रिटेन न तो मजदूर दल के बढते हुए प्रभाव और शासन के अन्तगत कई महत्त्वपूण उद्योगो का राष्ट्रीयकरण किया है। भारत सरकार ने भी सावजनिक क्षेत्र (Public sector) की वृद्धि के लिए अनेक उद्योगो का राष्ट्रीयकरण किया है, यथा जीवन बीमा, बकिंग, हवाई यातायात आदि। कुछ राज्य 'राष्ट्रीयकरण' के बजाय 'समाजीकरण' तथा 'सामाजिक नियन्त्रण' की नीति को अधिक अच्छा समझते है। भारत सरकार ने भी 1969–70 म किये गये 14 बडे बैको के राष्ट्रीयकरण से पूव उन पर सामाजिक नियन्त्रण स्थापित किया था। सम्पत्ति के समाजीकरण के कई तरीके हैं, समाजीकरण राष्ट्रीयकरण से भिन्न प्रक्रिया है।[1]

2 ग्रेट ब्रिटेन मे आर्थिक सगठन

भूतपूर्व प्रधानमन्त्री हैरोल्ड विलसन द्वारा 1964 म नई सरकार के निर्माण म आर्थिक मामलो के विभाग की रचना एक अति महत्त्वपूण और प्रवादमय बात थी। इस विभाग ने ट्रेजरी आर्थिक नियोजन और बोड आफ ट्रेड स प्रादेशिक विकास के उत्तरदायित्व को ले लिया। इस प्रकार विभाग ने आर्थिक साधनो के नियोजन के ऊपर नियन्त्रण धारण किया और यह विभिन्न आर्थिक विभागो के कार्यों म समन्वय का केन्द्र बन गया। अब राष्ट्रीय योजना इसी विभाग द्वारा बनाई जाती है, जिस काय म राष्ट्रीय आर्थिक विकास परिषद् सहायता करती है। आर्थिक नीति के वित्तीय पहलुओ का उत्तरदायित्व अभी तक ट्रेजरी के हाथ म है। अन्तिम उत्तरदायित्व कैबिनेट और आर्थिक मामलो की समिति म निहित है, इस समिति का चेयरमैन स्वय प्रधानमन्त्री होता है। आर्थिक नियोजन के तन्त्र का चाट निम्न है[2]
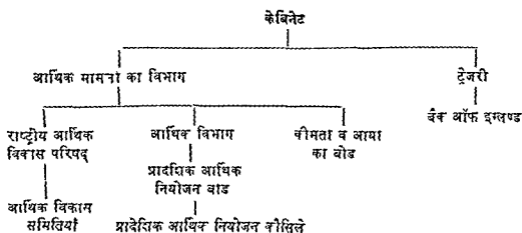
3 इटली मे निगमित राज्य

मुसोलिनी के अधीन फासीवादी सरकार ने राज्य के सम्पूण आर्थिक जीवन को विनियमित किया। यह काय निगमो की एक नयी पद्धति द्वारा किया गया था। 1934 के कानून के अन्तगत राष्ट्र के जीवन को राजनीतिक आर्थिक आधार पर सगठित किया गया। सबसे नीचे के स्तर पर श्रमिको और स्वामियो के सिन्डीकेट स्थापित किये गये। श्रमिको और स्वामियो के स्थानीय सिन्डीकेटो के प्रान्तीय सघ बनाये गये। राष्ट्रीय स्तर पर श्रमिको व स्वामियो के सघ या

[1] Friedrich Carl J *Constitutional Government and Democracy* p 492.
[2] Marder K B *British Government* p 154

सगठन बनाये गये, जिनका गठन प्रा तीय सघो के प्रतिनिधियो से किया गया। राष्ट्रीय सघटना का श्रमिक स्वामियो की 22 राष्ट्रीय निगमो म सगठित किया गया। प्रत्येक निगम की एक कौसिल थी जिसमे श्रमिको व स्वामियो के सदस्य सघा के प्रतिनिधि रखे गये। बाईस निगमो की कौसिना से मिलकर राष्ट्रीय कौसिल बनाई गई, जिसे सम्पूण वाणिज्यिक और औद्योगिक मामलो को नियन्त्रित तथा विनियमित करने की शक्तिया प्रदान की गयी। राष्ट्रीय कौसिल की केन्द्रीय समिति म सघा क प्रतिनिधि फासिस्ट पार्टी का सेक्रेटरी और सभी मन्त्री सदस्य थे। मुसोलिनी शासन का अध्यक्ष और निगमों के म त्रालय का भी अध्यक्ष था।

इस प्रकार श्रमिका और स्वामियो क सघो को अनिवाय राष्ट्रीय सहयोग के अभिकरण बनाया गया था। निगमा के मन्त्रालय द्वारा, फासिस्ट सरकार ने औद्योगिक सघो के सगठन और रचना को नियत किया, उनके अधिकारियो की छाट की और उ ह विवश किया कि वे औद्योगिक विवादो म पच निणय दे, साथ ही मजदूरो द्वारा हडताला और स्वामियो द्वारा कारखाना को बन्द करने की मनाही की गई। निगमा के अन्तगत केन्द्रीय निगम कौसिल न एक प्रकार स सामाजिक, तकनीकी और आर्थिक पार्लियामेट का काय किया। इस कौसिल म विभिन्न निगमो द्वारा नियुक्त पूजीपतियो व श्रमिका के प्रतिनिधि थे। इसके द्वारा तथा इसकी सहायता से निगमा क मन्त्रालय ने राज्य के सम्पूण निगम सगठना को समन्वित व नियन्त्रित किया। इस विषय म मक्सी का कथन है—'फासिस्ट सिद्धान्त क अनुसार निगम व्यवस्था का बडा गुण यह था कि इसने पूजीवाद और सवहारा वग वाद के बीच पूण सामजस्य स्थापित किया और इस प्रकार सच्चे अथ म आर्गिक राज्य की रचना की। निगम योजना के बारे म यह कहा गया कि इसने व्यक्ति का उसके आर्थिक पद और हितों के द्वारा राज्य म सम्बन्धित कर दिया और नागरिकता को यथाथ व अति महत्वपूण बना दिया। यह सच है कि निगमो का विचार ही फ्रासीसी पहनावे म श्रमिक सघवाद था।[1]

4 सोवियत सघ मे नियोजन

ऐसा माना जाता है कि नियोजन को लागू करने वाला प्रथम राज्य सोवियत सघ ही था। सोवियत सघ म समाजवादी अथव्यवस्था को सभी क्षेत्रो म लागू किया गया है और इस प्रकार वहाँ पर पूण नियोजन को अपनाया गया है। साथ ही वहा पर नियोजन का अधिनायकतन्त्र के अन्तगत लागू किया गया। राजकीय नियोजन आयोग पहले पचवर्षीय योजनायें बनाता था और अब सप्त-वर्षीय योजनायें बनाता है। इस उद्देश्य से वह प्रत्येक उत्पादन इकाई—फाम, फक्टरी, सहकारी सगठन आदि से आगामी नियोजन अवधि के लिए उत्पादन म प्रस्तावित वद्धि के अनुमान एकत्रित करता है तथा उन तथ्यो का भी जिनके ऊपर इस प्रकार के निणय आधारित होने हैं। प्रत्येक उद्योग के लिए उत्तरदायी मन्त्रालय इस सूचना को ऊपर तक ले जाता है, उसे जाँचता है और सम्बन्धित करता है। तब नियोजन आयोग पूण योजना तैयार करता है और उसे दल की केन्द्रीय समिति के समक्ष प्रस्तुत करता है। उससे स्वीकृत हो जाने पर योजना सर्वोच्च सोवियत के सामने औपचारिक स्वीकृति के लिए प्रस्तुत की जाती है।

नियोजन आयोग अपना काय वित्त मन्त्रालय स निरन्तर सम्पक बनाये रखकर करता है, जो बजट द्वारा योजना की कार्यान्विति क लिए आवश्यक धनो के लिए व्यवस्था करता है। नियोजन आयोग, वित्त मन्त्रालय और केन्द्रीय समिति आपस म मिलकर वस्तुओ के मूल्यो के बारे म निर्णय करते हैं तथा विभिन्न प्रकार के कार्यों के लिए दिय जाने वाले पारिश्रमिक को भी निर्धारित करते है। सम्पूण योजना के भीतर ही वार्षिक योजनायें तथा अनेक विशेष योजनायें

[1] Maxey C C, *Political Philosophies* p 646

दी जाती है । सोवियत सघ की भाँति ही चीन् और अन्य साम्यवादी राज्यो मे अधिनायकतन्त्र के अन्तगत पूण तथा सत्तावादी नियोजन को अपनाया गया है । इसके विपरीत भारत ने प्रजातान्त्रिक *नियोजन को लागू किया है ।*

5 भारत मे प्रजातान्त्रिक नियोजन

प्रजात त्र, समाजवाद और नियोजन—भारत ने प्रजातन्त्रात्मक पद्धति को सोच समझकर अपनाया है । 1964 से तो देश के प्रधान सत्तारूढ दल काग्रेस ने 'प्रजातन्त्रात्मक समाजवाद' का ध्येय स्वीकार किया है । वास्तव म समाजवाद ध्येय है, जिसे प्रजातन्त्रात्मक तरीको से प्राप्त करना है और उनमे नियोजन का स्थान प्रमुख है । चूकि कुछ व्यक्ति अभी तक प्रजातन्त्र, समाजवाद और नियोजन म असगति देखते है, अत इन तीनो के आपसी सम्बन्धो के महत्त्वपूण पहलुओ का यहाँ पर, सक्षेप मे, विवेचन करना उपयुक्त होगा । बहुत समय तक प्रजातन्त्र को केवल मात्र शासन का ही एक रूप समझा गया, परन्तु अब सच्चे प्रजातन्त्र का अथ उसका राजनीतिक रूप ही नही वरन सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रो म भी प्रजात त्र है । श्री जयप्रकाश नारायण का कथन है

प्रजातन्त्र केवल राजनीतिक अधिकारो और शासन मे जनता के भाग का ही प्रश्न नही है । प्रथम विश्व युद्ध के समय से, प्रजातन्त्र का अथ वृद्धिपूण मात्रा म सामाजिक और आर्थिक न्याय, सम अवसर और औद्योगिक प्रजातन्त्र है ।[1] अत यह एक निर्विवाद सत्य है कि आर्थिक स्वतन्त्रता और समता उतने ही महत्त्वपूण है जितने कि राजनीतिक स्वतन्त्रता और समता । जबकि आर्थिक स्वतन्त्रता का अथ काम पाने का अधिकार और आवश्यकताओ की पूर्ति न होने से उत्पन्न चिन्ताओ से मुक्ति समझा जाता है, आर्थिक समता का अथ सभी के लिए अवसर की समता है । इस तथ्य को स्वीकार किया जाना चाहिए कि प्रजातन्त्र आर्थिक प्रजातन्त्र के बिना अथहीन है और आर्थिक प्रजात न्त्र ही समाजवाद है । अत यह आवश्यक है कि प्रजातन्त्र और समाजवाद को मिलाकर ऐसी पद्धति का विकास किया जाये जो पूजीवाद और साम्यवाद दोनो ही से श्रेष्ठतर हो । यहा यह भी स्पष्ट कर देना उचित होगा कि समाजवाद व्यक्तित्व का दमन नही करता वास्तव म, यह तो असख्य व्यक्तियो को आर्थिक और सास्कृतिक बन्धनो से छुटकारा दिलाता है ।

अब यह प्रश्न उठता है कि क्या प्रजातन्त्र और नियोजन साथ साथ चल सकते हैं ? इस प्रश्न का उत्तर देने से पूव यह बता देना आवश्यक है कि नियोजन क्या है और नियोजन क्यो आवश्यक है ? नियोजन एक प्रकार की प्रक्रिया अथवा तकनीक है । इसका अथ यह है कि अभीष्ट फल की प्राप्ति के लिए समुचित साधनो को अपनाया जाय, इसम साधारण उद्देश्य भी निहित रहता है ।[2] बदलती हुई परिस्थितिया व दशाओ के अनुकूल निर्धारित योजना म समय-समय पर सुधार करन आवश्यक हैं । सक्षेप म, नियोजन भविष्य के विषय म परिस्थिति के अनुसार बदलने वाला बुद्धिपूण विचार है । *विभिन्न लेखको के अनुसार नियोजन के लिए अग्रलिखित पगो को उठाना* आवश्यक है । (1) साधारण प्रशासको द्वारा प्रभावी नियोजन के हेतु पूण और स्पष्ट ध्येय का निर्धारण करना । (2) साधारण प्रशासको द्वारा उस ध्येय की प्राप्ति के लिए नीति का निर्धारण, किन्तु ध्येय और नीति दोनो पर विधानमण्डल की स्वीकृति प्राप्त होनी चाहिए । (3) ध्यय की प्राप्ति के लिए निर्धारित नीति क अधीन प्राविधिक मार्गों व साधनो का निर्धारण । (4) अगला पग नियोजन के लिए नियोजन है, जिसका अथ है निर्दिष्ट ध्येय (पच या सप्तवर्षीय योजना) को

[1] Art Problems of Democracy *N I Patrika* August 15 1961

[2] Planning is strictly a process with its associated techniques. It is a method of arriving at some desired results It implies a general objective —H S Person

उप-ध्येयो यथा वार्षिक योजनाओ म विभक्त करना, जिससे कि प्रतिवष के लिए आवश्यक कार्यों व दायित्वो को विभिन्न अभिकरणो, विभागो आदि को सौप दिया जाय। (5) नियोजन के अ तगत किये गय प्रयत्नो से परिणामो को ठीक ठीक नापन की व्यवस्था।

नियोजन के महत्त्व और उपयोगिता के विषय म आज अधिक मतभेद नही है। अधिकतर विचारवान् व्यक्ति यह मानते है कि सामाजिक समता व आर्थिक याय पर आधारित अच्छे समाज का निर्माण आज की जटिल दशाओ मे बिना बुद्धिपूण नियोजन के सम्भव नही है। आर्थिक कार्या का के द्रीभूत निय त्रण नियोजन म निहित है। प्रजातान्त्रिक समाजवादियो के अनुसार नियोजन का दुहरा महत्त्व है प्रथम, अधिक यायपूण समाज की ओर स्थायी प्रगति की एक अति आवश्यक राजनीतिक शत यह है कि उद्योगो पर निय त्रण समाज का हो। दूसरे, अधिक कुशल आर्थिक व्यवस्था की स्थापना के लिए भी नियोजन अति आवश्यक है,क्योकि ऐसी ही व्यवस्था म तेजी, म दी व अभाव आदि के दोषो को दूर किया जा सकता है। इ ही कारणो से स्वत त्र भारत के कणधारो ने दश के पुनर्निर्माण व जनता की समृद्धि के लिए नियोजन को अपनाया है।

कुछ समय पूव तक यह एक व्यापक विचार अथवा विश्वास था और अब भी कुछ व्यक्ति ऐसा सोचते है कि आर्थिक नियोजन का परिणाम अधिनायकशाही की स्थापना है, अर्थात् प्रजात त्र अथवा वयक्तिक स्वत त्रता व नियोजन मे परस्पर विरोध है। इस विचार के प्रतिनिधि प्रो० हायक की युक्तियो का सार, सक्षेप म, इस प्रकार है—नियोजक एक योजना के अनुसार सम्पूण आर्थिक कार्यो पर के द्रीय निय त्रण की माँग करते है। वे ही यह निर्धारित करते है कि समाज के प्रसाधनो को विशिष्ट उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए किस प्रकार निदेशित किया जाये। प्रजातन्त्रात्मक विधानमण्डल जनता के आदेश (mandate) को पूरा न कर सकने पर जनता म प्रजात त्रात्मक सस्थाओ के प्रति अवश्य ही असन्तोष उत्पन्न करेंगे। ससदो को अकुशल व बात घडने वाले स्थानो के रूप मे समझा जायगा, कि तु यह विचार कि नियोजन आवश्यक है जनता की इस माग को सुदृढ बनाता जायगा कि सरकार या कोई एक व्यक्ति सम्पूण उत्तरदायित्व और शक्तियाँ सम्भाल ले।[1]

यहा पर इस विषय म केवल इतना ही कहना पयाप्त होगा कि यह विचार अब पुराना हो गया है। नियोजन का अथ पूण नियाजन स नही है जिसमे कि जनता की स्वत त्रता का अ त हो जाता है और सभी को एक नमूने पर ढाला जाता है। वास्तविक तथ्य तो यह है कि आज प्राय हम सभी नियोजन म विश्वास करने लगे है। दखने म नियोजन से व्यक्तियो की स्वत त्रता कम होती है, क्योकि राज्य उनके अनक कार्या म हस्तक्षेप करता है, परन्तु वास्तव म किसी भी देश की सवसाधारण बहुसख्यक जनता को सच्ची स्वत त्रता (अर्थात् अच्छा जीवन बिताने की आवश्यक दशायें व सुविधाएँ) केवल नियोजित समाज म ही प्राप्त हो सकती है। अत नियोजन व्यक्तियो की स्वत त्रता का विरोधी नही है। यह विचार भी भ्रमपूण है कि प्रजात त्रात्मक पद्धति के द्वारा नियोजित समाज के ध्येय पर पहुँचना कठिन है। ऐसे व्यक्तियो से जो यह मानते हैं कि नियोजन प्रजात त्र और स्वत त्रता का विरोधी है, फिफनर कहता है—प्रजात त्र तो नियोजन के लिए एक आवश्यक शत है, यह नियोजन का दीघ कालीन सहकारी है, क्योकि नियोजन के लिए यह आवश्यक है कि नियोजन सवसाधारण जनता का विश्वास प्राप्त करके आगे बढ़े, परिणामस्वरूप जब योजनाओ का अन्तिम रूप से स्वीकार तथा कार्यान्वित किया जाता है तो उ ह जनसाधारण की सहमति की सुदृढ शक्ति प्राप्त रहती है।[2]

भारत म नियोजन की आवश्यकता और उपयुक्तता के विषय म श्री मोरार जी दसाई ने

[1] *The Road to Serfdom* (1957) pp 56-64
[2] Pfiffner J M *Public Administration* p 200

दी जाती है। सोवियत सघ की भाँति ही चीन और अन्य साम्यवादी राज्यो मे अधिनायकतन्त्र के अन्तगत पूण तथा सत्तावादी नियोजन को अपनाया गया है। इसके विपरीत भारत ने प्रजातान्त्रिक नियोजन को लागू किया है।

5 भारत मे प्रजातान्त्रिक नियोजन

प्रजातन्त्र, समाजवाद और नियोजन—भारत ने प्रजातन्त्रात्मक पद्धति को सोच समझकर अपनाया है। 1964 से तो देश के प्रधान सत्तारूढ दल काग्रेस ने 'प्रजातन्त्रात्मक समाजवाद' का ध्येय स्वीकार किया है। वास्तव म समाजवाद ध्येय है, जिसे प्रजातन्त्रात्मक तरीको से प्राप्त करना है और उनम नियोजन का स्थान प्रमुख है। चूकि कुछ व्यक्ति अभी तक प्रजातन्त्र, समाजवाद और नियोजन मे असगति देखते है, अत इन तीनो के आपसी सम्बन्धो के महत्त्वपूण पहलुओ का यहा पर, सक्षेप म, विवेचन करना उपयुक्त होगा। बहुत समय तक प्रजातन्त्र को केवल मात्र शासन का ही एक रूप समझा गया, परन्तु अब सच्चे प्रजातन्त्र का अथ उसका राजनीतिक रूप ही नही वरन सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रो म भी प्रजातन्त्र है। श्री जयप्रकाश नारायण का कथन है

प्रजातन्त्र केवल राजनीतिक अधिकारो और शासन मे जनता के भाग का ही प्रश्न नही है। प्रथम विश्व युद्ध के समय से, प्रजातन्त्र का अथ वृद्धिपूण मात्रा मे सामाजिक और आर्थिक न्याय, सम अवसर और औद्योगिक प्रजातन्त्र है।[1] अत यह एक निर्विवाद सत्य है कि आर्थिक स्वतन्त्रता और समता उतने ही महत्त्वपूण है जितने कि राजनीतिक स्वतन्त्रता और समता। जबकि आर्थिक स्वतन्त्रता का अथ काम पाने का अधिकार और आवश्यकताओ की पूर्ति न होने से उत्पन्न चिन्ताओ से मुक्ति समझा जाता है, आर्थिक समता का अथ सभी के लिए अवसर की समता है। इस तथ्य को स्वीकार किया जाना चाहिए कि प्रजातन्त्र आर्थिक प्रजातन्त्र के बिना अथहीन है और आर्थिक प्रजातन्त्र ही समाजवाद है। अत यह आवश्यक है कि प्रजातन्त्र और समाजवाद को मिलाकर ऐसी पद्धति का विकास किया जाये जो पूजीवाद और साम्यवाद दोनो ही से श्रेष्ठतर हो। यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना उचित होगा कि समाजवाद व्यक्तित्व का दमन नही करता वास्तव मे, *यह तो असख्य व्यक्तियो को आर्थिक और सास्कृतिक बन्धनो से छुटकारा दिलाता है।*

अब यह प्रश्न उठता है कि क्या प्रजातन्त्र और नियोजन साथ साथ चल सकते हैं? इस प्रश्न का उत्तर देने से पूव यह बता देना आवश्यक है कि नियोजन क्या है और नियोजन क्या आवश्यक है? नियोजन एक प्रकार की प्रक्रिया अथवा तकनीक है। इसका अथ यह है कि अभीष्ट फल की प्राप्ति के लिए समुचित साधना को अपनाया जाये, इसम साधारण उद्देश्य भी निहित रहता है।[2] बदलती हुई परिस्थितियो व दशाओ के अनुकूल निर्धारित योजना म समय-समय पर सुधार करने आवश्यक हैं। सक्षेप मे, नियोजन भविष्य के विषय म परिस्थिति के अनुसार बदलने वाला बुद्धिपूण विचार है। विभिन्न लेखको के अनुसार नियोजन के लिए अग्रलिखित पगो को उठाना आवश्यक है। (1) साधारण प्रशासको द्वारा प्रभावी नियोजन के हेतु पूण और स्पष्ट ध्येय का निर्धारण करना। (2) साधारण प्रशासको द्वारा उस ध्येय की प्राप्ति के लिए नीति का निर्धारण किन्तु ध्येय और नीति दोनो पर विधानमण्डल की स्वीकृति प्राप्त होनी चाहिए। (3) ध्येय की प्राप्ति के लिए निर्धारित नीति के अधीन प्राविधिक मार्गों व साधनों का निर्धारण। (4) अगला पग नियोजन के लिए नियोजन है, जिसका अथ है निर्दिष्ट ध्येय (पच या सप्तवर्षीय योजना) को

[1] Art Problems of Democracy *N I Patrika* August 15 1961

[2] Planning is strictly a process with its associated techniques. It is a method of arriving at some desired results It implies a general objective —H. S Person

उपर्युक्त निर्देशक सिद्धान्तो की पूर्ति के लिए भारत सरकार (और राज्य सरकारो) ने कल्याणकारी राज्य का ध्येय स्वीकार किया है। उसकी प्राप्ति के लिए अपनाया गया तरीका नियोजन का है। इसी उद्देश्य को ध्यान म रखकर भारत सरकार न स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ही नियोजन पद्धति को अपनाया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व म नियोजन एक लोकप्रिय नारा बन गया। उनकी प्रेरणा और प्रयत्नो से भारत सरकार ने नियोजन आयोग नियुक्त किया, जिसने प्रथम पचवर्षीय योजना तयार की। उस योजना को ससद ने 1951–52 म स्वीकार किया और उसे लागू किया गया। प्रथम योजना के कई लक्ष्य पूर्ण हुए और कुछ वस्तुओ के उत्पादन तथा विकास म उत्साहपूर्ण सफलता मिली। उससे उत्साहित होकर नियोजन आयोग ने दूसरी और तीसरी पचवर्षीय योजनाएँ तैयार की।

भारत की पहली और दूसरी पचवर्षीय योजनाओ के अन्तर्गत सार्वजनिक क्षेत्र (public sector) म अर्थात् केन्द्र तथा राज्यो की सरकारो द्वारा विभिन्न प्रकार के विकास कार्यों पर व्यय के लिए रखी गयी धनराशि क्रमश 2,400 और 4,800 करोड रु० थी। इसके अतिरिक्त निजी क्षेत्र (private sector) म अर्थात् उद्योगपतियो द्वारा लगभग इससे आधी पूँजी लगायी जानी थी। तीसरी पचवर्षीय योजना की रिपोर्ट म जिसे 7 अगस्त 1961 को ससद के सामने पेश किया गया था, अग्रलिखित पाँच मुख्य उद्देश्य स्वीकार किये गये (1) राष्ट्रीय आय म प्रतिवर्ष 5 प्रतिशत से अधिक वृद्धि हो, और धन इस प्रकार लगाया जाय कि बाद म आने वाली योजनाओ के काल म भी विकास की यही गति बनी रहे, (2) खाद्य पदार्थों म देश स्वनिर्भर बने और खेती की पदावार को उद्योगो व निर्यात की आवश्यकताओ के अनुसार बढाया जाय, (3) फौलाद, रासायनिक उद्योग इधन और शक्ति आदि आधारभूत उद्योगो (basic industries) का विस्तार किया जाये और मशीन बनाने के कारखाने खोले जायें, जिससे कि आगे के 10 वर्ष म होने वाले औद्योगीकरण की आवश्यकताओ को अपने ही साधनो से पूरा किया जा सके, (4) जिस सीमा तक सम्भव हो सके देश के मानव शक्ति साधनो का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाये और काम दिलाने वाले अवसरो म सारपूर्ण विस्तार किया जाय, और (5) प्रगतिशील आधार पर अधिक अवसर की समता को स्थापित किया जाय, आय व धन वितरण के बीच विषमताओ को कम किया जाय और आर्थिक शक्ति का सम वितरण हो।

तीसरी पचवर्षीय योजना का एक प्रमुख लक्ष्य जनसख्या की वृद्धि को काफी लम्बे काल तक स्थिर बनाये रखना था। उसका दूसरा मुख्य लक्ष्य यह सुनिश्चित करना था कि देश की अर्थव्यवस्था विदेशो से प्राप्त आर्थिक सहायता पर अपनी निर्भरता को काफी मात्रा म कम कर दे। अतएव यह स्पष्ट है कि नियोजन के लक्ष्य अपने विस्तार म सीमित है, अर्थात भारत मे नियोजन सोवियत सघ व चीन की भाँति पूर्ण नही है। चौथी पचवर्षीय योजना का प्रारूप तैयार करते हुए अग्रलिखित बातो को ध्यान मे रखा गया—(1) आत्मनिर्भरता की यथाशीघ्र प्राप्ति को सुनिश्चित बनाने के लिए कृषि की ऐसी सभी सम्भव योजनाओ को उच्चतम प्राथमिकता दी जायेगी जिनका प्रयोजन निर्यात को प्रोत्साहन देना और आयात का स्थानापन्न हो, (2) मूल्यो की स्थिरता को सुनिश्चित बनाने के हेतु मुद्रा स्फीति के सभी कारणो को रोकने और घाटे की व्यवस्था से बचने लिए प्रभावी पग उठाये जायेगे, (3) ग्रामीण जनसख्या की आय बढ़ाने और खाद्य पदार्थों व कृषि की कच्ची सामग्री की पूर्ति म वृद्धि करने के लिए, कृषि उत्पादन को अधिक से अधिक करने के हेतु सभी सम्भव प्रयत्न किये जायेंगे, (4) जनसख्या की वृद्धि को सीमित करने और जनता के अधिक अच्छे जीवन स्तर को सुनिश्चित बनाने के प्रयोजन से परिवार नियोजन कार्यक्रम को देश व्यापी पैमाने पर कार्यान्वित करने के लिए सभी सम्भव पग उठाये जायेगे, (5) मानवी साधनो के विकास के लिए, सामाजिक सेवाओ के क्षेत्र मे सारपूर्ण अतिरिक्त सुविधाओ की व्यवस्था की

कुछ ही समय पूव कहा था एक अति आवश्यक अथ म नियोजन उपलब्ध साधनो के अधिक ध्यानपूण उपयोग से अधिक और कुछ नही है। अ य तरीको की अपक्षा यह विकास की तीव्रतर गति को अधिक सुनिश्चित बनाता है। यह ठीक ही कहा गया है कि औद्योगिक देशो न जो कुछ एक शताब्दी म प्राप्त किया, हम परिस्थितियाँ विवश कर रही है कि हम उसे दो या तीन दशियो मे प्राप्त करें। हम इसकी प्राप्ति किस प्रकार कर सकेंगे, यदि हम अपनी बचत और निवेशा (investments) की दर म वद्धि न कर सकें और उनका नियोजन द्वारा अधिक स अधिक कुशलतापूवक प्रयोग न कर सकें।[1] आज के विश्व म नियोजन न स्थानीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सभी स्तरो पर महत्त्वपूण स्थान प्राप्त कर लिया है। अब ता यह कथन सवथा सच है—'अब हम सभी आयोजक है।' व्यक्ति और राज्य द्वारा आर्थिक क्षेत्र मे हस्तक्षेप न करने की नीति का युग बीत चुका है, और प्राय सभी प्रगतिशील राज्या ने कल्याणकारी राज्य अथवा सामाजिक सवा क राज्य का ध्येय अपनाया है। प्रजातन्त्रात्मक शासन पद्धति का सच्चे प्रजातन्त्र का रूप देन के लिए ऐसा करना आवश्यक हो गया है। शुम्पीटर का यह मत है कि नियोजन अथव्यवस्था और राजनीतिक स्वतन्त्रता पूर्णतया सगत है।[2]

भारत म प्रजातन्त्रात्मक गणतन्त्र की स्थापना हुई है। सविधान की प्रस्तावना मे इन लक्ष्यो को समाविष्ट किया गया है, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास और पूजा की स्वतन्त्रता, पद और अवसर की समता, और ब धुता। भारत के सविधान मे किसी विशिष्ट अथव्यवस्था को स्थान नही दिया गया है और न ही नागरिका को किसी प्रकार क आर्थिक अधिकार प्रदान किये गये हैं। इस कमी की कुछ सीमा तक पूर्ति सविधान मे प्रगणित राजनीति के निदशक सिद्धान्ता द्वारा की गई है। इस सम्बन्ध मे उपयुक्त प्राविधान अग्रलिखित है—राज्य अपनी नीति का विशेषतया ऐसा सचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से (क) समान रूप स नर और नारी सभी नागरिका को जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो, (ख) समुदाय की भौतिक सम्पत्ति का स्वामित्व इस प्रकार बँटा हो कि जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप स साधन हो, (ग) आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले कि जिससे धन और उत्पादन साधनो का सवसाधारण के लिए अहितकारी केन्द्रण न हो, (घ) श्रमिक पुरुषा और स्त्रिया का स्वास्थ्य और शक्ति तथा बालको की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो तथा आर्थिक आवश्यकता स विवश होकर नागरिका को एसे रोजगारो म न जाना पडे जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हो, (ङ) शैशव और किशोर अवस्था का शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से सरक्षण हो (अनुच्छेद 39)।

राज्य अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओ के भीतर काम पाने के, शिक्षा पाने के तथा बेकारी, बुढापा, बीमारी और अगहीन तथा अन्य अनह अभाव की दशाओ म सावजनिक सहायता पाने के, अधिकार को प्राप्त कराने का कायसाधक उपब ध करेगा (अनुच्छेद 41)। राज्य काम की यथोचित और मानवोचित दशाओ को सुनिश्चित करने के लिए तथा प्रसूति सहायता के लिए उपब ध करेगा (अनुच्छेद 42)। उपयुक्त विधान या आर्थिक सगठन द्वारा अथवा और किसी दूसरे प्रकार से राज्य कृषि के, उद्योग के या अन्य प्रकार के सब श्रमिको को काम, निर्वाह मजदूरी, शिष्ट जीवन स्तर तथा अवकाश का सम्पूण उपभोग सुनिश्चित करने वाली काम की दशाए तथा सामाजिक व सास्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का प्रयास करेगा और विशेष रूप से ग्रामो मे कुटीर उद्योगो को वयक्तिक अथवा सहकारी आधार पर बढाने का प्रयास करेगा (अनुच्छेद 43)।

---

[1] Inevitability of Democratic Socialism *Indian Express* Nov 17 1966

[2] Schumpeter J A *Capitalism Socialism and Democracy* p 235

कौंसिल का गठन कभी भी न हुआ। यद्यपि उसके गठन के लिए एक विधेयक विधायिका के विचाराधीन था जबकि हिटलर ने सत्ता ग्रहण की। वह अस्थायी कौंसिल भी जमन सांविधानिक व्यवस्था से स्वत न थी, किन्तु उसकी सफलता का संकेत इस बात से मिलता है कि 1933 म स्थायी कौंसिल की स्थापना क लिए प्रस्तुत विधेयक म उसकी शक्तिया का बहुत बढाया गया था, उसमे दृढ विधि निर्माण के प्रस्ताव रखने का भी अधिकार दिये जाने की व्यवस्था थी। सम्बन्धित धारा म कहा गया था

सामाजिक और आर्थिक विधायन के मामलो से सम्बन्धित सभी विधेयक, जिनका आधार भूत महत्त्व हो, विधायिका के समक्ष रखे जाने के पूव रीच सरकार द्वारा रीच की आर्थिक परिषद् के सामने उसका मत पाने के लिए प्रस्तुत किये जायेंगे। रीच की आर्थिक परिषद् को स्वय भी ऐसे विधायन के प्रस्ताव रखने का अधिकार होगा। यदि रीच सरकार परिषद् के किसी ऐसे प्रस्ताव से सहमत न हो, तब भी सरकार को वह प्रस्ताव विधायिका के सामने रखना होगा, जिसके साथ उस विधेयक के बारे म सरकार अपने मतो का विवरण भी लगायेगी। रीच की परिषद् यह व्यवस्था भी कर सकती है कि वही किसी अपने सदस्य को रीच म अपने प्रस्ताव का अनुमोदन करने के लिए भेजे। परन्तु 1920 मे स्थापित अस्थायी परिषद् की शक्तियाँ केवल परामशदात्री थी, उसे न तो कोई विधायी प्रस्ताव म पहल करने का अधिकार था और न ही वह विधायिका के सामने अपने मत रख सकती थी। आर्थिक परिषद् मे श्रमिका, स्वामियो और अन्य सम्बन्धित हिता के प्रतिनिधि होते थे जो अपने अपने समूह के आर्थिक और सामाजिक महत्त्व के अनुपात म प्रतिनिधित्व पाते थे।

आयरिश फ्री स्टेट के सविधान की धारा 45 म कहा गया है—'पार्लियामेंट कार्यात्मक या व्यावसायिक कौंसिलो की स्थापना के लिए व्यवस्था कर सकती है, जो कि राष्ट्र के सामाजिक और आर्थिक जीवन का प्रतिनिधित्व करे। एसी कौंसिलो को स्थापित करने वाला कानून ही उसकी शक्तियो, अधिकारो व कत्तव्यो को निर्धारित करेगा तथा यह भी कि उसका राज्य की सरकार स बडा सम्बन्ध रहेगा। युगोस्लाविया व पोलण्ड के पुराने सविधानो म ऐसी कौंसिलो की स्थापना करने के लिए प्राविधान थे, परन्तु उन्ह कार्यान्वित न किया गया था। चेकोस्लोवाकिया म ऐसे निकाय की स्थापना एक आज्ञप्ति द्वारा की गयी थी। इन कौंसिलो के बारे म स्ट्रांग ने लिखा है 'यह समझना आवश्यक है कि ये कौंसिलें इंग्लण्ड म चेम्बर आफ कॉमर्स और अमरीका म 'नेशनल एसोसियेशन आफ मेन्युफेक्चरस' से बहुत भिन्न है, जोकि व्यापार की रक्षा करने वाली सोसाइटियाँ मात्र रह गयी हैं और जो अपने सामान्य काम के लिए सरकार के साथ मिलने के बजाय मुख्यत इस बात की चिन्ता करती हैं कि सरकारी उद्यम को बढने स रोका जाय। इन परिषदो ने अपनी सरकारो को ऐसे विधायी प्रस्तावो के बारे मे जो उनके अधिकार क्षेत्र म आते है, परामश दिया जो मुख्यत विशेषज्ञ जसा था। यह कहना कठिन है कि क्या इन परिषदो को कभी कोई वास्तविक शक्ति प्रयोग करने का अवसर मिला। जमनी म परिषद् को काफी महत्त्व प्राप्त हुआ था और कुछ लेखको ने उसे उद्योगो की पार्लियामेंट की संज्ञा दी।'

1 फ्रास मे सामाजिक और आर्थिक परिषद्

वतमान सविधान म पूवगामी आर्थिक परिषद् के स्थान पर 'आर्थिक और सामाजिक परिषद्' की व्यवस्था है। इसके सदस्यो को सरकार पाच वष की अवधि के लिए नियुक्त करती है। ये सदस्य राष्ट्र के प्रमुख आर्थिक और सामाजिक समूहो का प्रतिनिधित्व करने के उद्देश्य से छाटे जाते हैं। किन समूहो का प्रतिनिधित्व होगा और उनके कितने प्रतिनिधित्व रहेंगे, इन बातो का निर्धारण इस सम्बन्ध म बने आगिक कानून स होता है। वेतन पाने वाले लोगो के 45 प्रतिनिधि हैं और राष्ट्रीकृत उद्योगो के छ, निजी उद्योगो के नौ, हस्तकलाकारो क दस। इन

जायगी, विशेप रूप से ग्रामीण क्षेत्रो म और उत्पादन बढाने की दिशा मे इनका पुन द्विस्थापन किया जायगा, इत्यादि ।

चौथी पचवर्षीय योजना के प्रारूप की रेखा मे 'समाजवादी समाज की ओर' शीपक के अ तगत कहा गया है (53) इन दायित्वो और अधिकारो के प्रयोग तथा शासन के विभिन्न स्तरो पर प्रतिनिधिक सस्थाआ की स्थापना द्वारा सम नागरिकता का विकास हो रहा है, (54) नियोजित अथव्यवस्था के विकास द्वारा अथव्यवस्था और समाज की परिरेखायें बदल रही है। पुरानी सरचना का एकदम नही बदला गया । उसे प्रजात त्रात्मक प्रक्रिया तथा विकास के जोर के अ तगत बदला जा रहा है । भौतिक और मानवी साधना के विकास का प्रयोजनपूण ढग से अनुसरण किया जा रहा है । (57) यदि विकास कायक्रमो का परिणाम नये अस तुलनो और असमताआ को बढाना नही है, तो नये पहल और दृढ निश्चित प्रयत्ना के लिए दो मुरय दिशाये है । (60) समाजवाद मे यह बात निहित है कि विचार और व्यवहार के प्रचलित ढगो मे उग्रगामी परिवतन हो । यह आधुनिकता, समता, बुद्धिवादिता और मानवता क लोकाचार को खोजता है । चौथी पचवर्षीय योजना मे सम्मिलित उत्पादन, शिक्षा और कल्याण के विभिन्न कायक्रम अशत एसे नये वातावरण की रचना करने मे सहायता दे सकेंगे । समाजवाद के बार म सच्चाइ की परीक्षा इस बात म होगी कि प्रत्येक नागरिक मे यह विश्वास पैदा करने का प्रयत्न किया जायेगा कि वह विकास कार्यो म भाग ले रहा है और साथ ही उनसे होने वाले लाभो म भी भागीदार है, जिनम त्याग और फल दोनो ही निहित है । इस प्रकार समाजवाद जितना राष्ट्रीय ध्येय है, उतना ही कार्यात्मक शक्ति भी है ।

यह एक माना हुआ तथ्य है कि भारत पहला देश है जिसमे प्रजात त्रात्मक नियोजन को इतन बडे पैमाने पर लागू किया गया है । पचवर्षीय योजनाओ को तयार करने का उत्तरदायित्व आयोजन आयोग पर है, जिसम सघ सरकार के कुछ मन्त्री योग्य विधायक और अनुभवी प्रशासक सदस्य रहे हैं । अभी तक इसका सभापति प्रधानम त्री है , पर तु अब उपसभापति म त्री के स्थान पर एक विद्वान् अथशास्त्री का बनाया गया है । अपने कठिन काय को करने म आयोग अनेक विशेपज्ञ निकायो स सहायता लेता है । इनके अतिरिक्त एक राष्ट्रीय विकास परिषद् भी है जिसमे प्रधानम त्री और सभी राज्यो के मुरय म त्री सदस्य है । इसी के द्वारा सघात्मक सविधान के कारण उत्पन्न कठिनाइया का हल करन का प्रयत्न किया जाता है। राज्यीय स्तर पर नियोजन बोर्डों और जिला स्तर पर नियोजन समितिया कायम की गयी हं । हाल मे ही जारी की गयी लोकत त्रात्मक विके द्रीकरण की योजना का प्रयोजन ग्राम पचायता और विकास खण्डा के स्तर पर पचायत (या क्षेत्रीय) समितियो को वास्तविक सत्ता का हस्ता तरण करना है । ये स्थापित सस्थाएँ अपने अपने अधिकार क्षेत्रो के अ तगत क्षेत्रो के लिए विकास योजनाओ के निर्माण म प्रभावी रूप मे भाग लेगी । योजनाआ को कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व भी अधिकाश म इ ही पर रहेगा । इस प्रकार जहा तक योजनाआ के निर्माण और कार्या वयन का सम्ब ध है भारतीय नियोजन त त्र प्रजात त्रात्मक है।

6 जमनी मे आर्थिक परिपद्

जमनी मे सविधान की धारा 165 के अन्तगत 'जमन नेशनल इकॉनोमिक कौसिल' का गठन पूणतया नया नही था। इस प्रकार के सगठन फ्रास, जापान, चेकास्लोवाकिया, पोलैण्ड, युगोस्लाविया आदि म भी थे । दो विश्व-युद्धा क मध्यकाल म जमन कौसिल एस सगठन की सम्भावनाओ और सीमाओ का सबसे अच्छा उदाहरण था । एक प्रयोग क रूप मे अस्थायी कौसिल को 1920 मे सगठित किया गया था , परन्तु उस अस्थायी कौसिल के स्थान पर स्थायी

चौबीसवाँ अध्याय

स्थानीय शासन

1 कुछ सैद्धान्तिक पहलू

स्थानीय स्वशासन स हम उन स्थानीय सस्थाओ के शासन को समझते हैं जि हे निर्वाचक प्रत्यक्ष रूप से चुनते है और जो किसी स्थान या क्षेत्र के निवासिया से सम्बंधित मामला का प्रशासन करती है। स्थानीय स्वशासन केन्द्रीय सरकार द्वारा सचालित स्थानीय प्रशासन से भिन्न होता है। स्थानीय प्रशासन क अधिकारी केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त और उसी के कानूना को लागू करन के लिए होते हैं इसके विपरीत स्थानीय स्वशासन की सस्थाओ के सदस्य स्थानीय जनता द्वारा चुने जात है। स्वशासन की सस्थाओ को केन्द्रीय सरकार म स्थानीय मामलो के सम्ब ध म स्वशासन के अधिकार मिले होते ह और वे एक प्रकार की उप विधिया (bye laws) बनाती है और उ हे लागू करती ह। सरल भाषा मे स्थानीय स्वशासन से तात्पय उन निगमो, नगरपालिकाओ जिला बोर्डों व ग्राम पचायतो से है जिनका कत्तव्य उन आवश्यकताओ को पूरा करने तथा ऐसे काय करने से होता है, जिनका सम्ब ध विशेष स्थानीय क्षेत्रो के निवासिया स होता है। स्थानीय स्वशासन का सम्ब ध समस्त सामाजिक जीवन स नही होता, वरन् इसके कार्यो का स्वरूप स्थानीय होता है, राष्ट्रीय नही। साधारणतया प्रा त या उप राज्य की सरकार स्थानीय स्वशासन की सस्थाओ की स्थापना व सगठन के लिए कानून बनाती है, जिसके अ तगत स्थानीय स्वशासन की सस्थाओ को उपनियम बनाने तथा अपन स्थानीय विषयो पर निय त्रण रखने के सीमित अधिकार मिले होते हैं। लीकाक के अनुसार केन्द्रीय और स्थायीय शासन का पद दो बातो पर निभर करता है प्रथम, दोनो की सावैधानिक स्थिति एक दूसरे से सवथा भिन्न होती है। केन्द्रीय शासन की सस्थाए सविधान के अ तगत स्थापित होती हैं स्वशासन की सस्थाओ की स्थापना केन्द्रीय शासन क कानूनो के अ तगत की जाती हैं। दूसरे, क्षेत्रीय सस्थाओ द्वारा किये जाने वाले कार्यो का स्वरूप भिन्न होता है।

स्थानीय स्वशासन की आवश्यकता और महत्त्व—सदैव ही स्थानीय स्वशासन की सस्थाओ को आवश्यक समझा गया है। प्राचीन भारत म विभिन्न प्रकार की स्थानीय सस्थाये थी। ग्रेट ब्रिटेन अपनी स्थानीय स्वशासन की सस्थाओ क लिए प्रसिद्ध है। सभी प्रजात त्रात्मक राज्यो म ऐसी सस्थाएँ पायी जाती हैं। जम्स ब्राइस के अनुसार य सस्थायें नागरिको म अपन सामा य मामलो के प्रति दिलचस्पी पदा करती हैं। य सस्थायें नागरिको को केवल दूसरो के लिए काम करन का प्रशिक्षण ही नही देता, वरन् दूसरो के लिए काम करना भी सिखाती हैं। वास्तव म, स्थानीय स्वशासन की सस्थायें स्वत त्र राष्ट्रो की शक्ति है। स्वत त्रता के लिए स्थानीय सभायें उसी प्रकार हैं जिस प्रकार विज्ञान के लिए प्राइमरी स्कूल। य स्वत त्रता का प्रयोग और

समूहा के प्रतिनिधि (राष्ट्रीयकृत उद्योगो को छोडकर) उनके व्यापारिक तथा व्यावसायिक सघा द्वारा चुने जाते है। कृषि सगठनो को 40 प्रतिनिधि चुनने का अधिकार है और सरकार 15 सदस्यो को छाटती है, जिनकी आर्थिक, सामाजिक या सास्कृतिक क्षेत्रो मे विशेष योग्यताये होती है। शेष सदस्यो मे से प द्रह इनका प्रतिनिधित्व करते है—गृह निर्माण, बचत, सावजनिक स्वास्थ्य, उपभोक्ताओ की सहकारी समितिया और व्यापारिक सघ, सात प्रतिनिधि उत्पादन, निर्यात आदि की सहकारी समितियो का प्रतिनिधित्व करते हैं, दो मध्यम वर्गा के प्रतिनिधि नामजद किये जाते है, दस को समुद्रपार समस्याआ के विशेषज्ञ के रूप म नियुक्त किया जाता है और बीस सदस्य अल्जीरिया व सहारा तथा दस समुद्रपार प्रदेशो का प्रतिनिधित्व करते है।

इसके मुख्य काय सक्षेप मे निम्नलिखित है (1) यह परिषद् 'कार्यक्रम कानूनो' और बजट तथा वित्तीय कानूनो को छोडकर आर्थिक व सामाजिक योजनाआ पर सरकार को परामश देती है। (2) सरकार अथवा पार्लियामेट के सदन परिषद् से एसे विधेयको के विषय मे म त्रणा कर सकते है जिनम आर्थिक व सामाजिक पेचीदगिया अ तग्रस्त हो। (3) परिषद् अपनी ही पहल द्वारा किन्ही भी आर्थिक व सामाजिक समस्याओ पर सरकार का ध्यान दिला सकती है और उसके हल के लिए अपन सुझाव दे सकती है। किसी भी सरकारी व ससदीय विधेयक पर परिषद् की सम्मति को पार्लियामेट के सामने रखने के लिए परिषद् अपन किसी सदस्य को नामजद कर सकती है।

अनेक प्रगतिशील देशा मे फ्रास इस प्रकार का निकाय स्थापित करने मे आगे रहा है। आजकल सरकारे आर्थिक व सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रो मे हस्तक्षेप करने लगी है, अतएव यह आवश्यक है कि राज्य मे विधायिका के साथ इस प्रकार का परामशदायी निकाय हो। आर्थिक और सामाजिक परिषद् सभी महत्त्वपूण समूहो का प्रतिनिधित्व करती है और इसके काय भी महत्त्वपूण हैं। एक लेखक का मत है कि वह परिषद् सरकार को अनेक सदस्यो की नियुक्ति मे पक्षपात करने का अवसर देती है, वह चाहे तो उसम ऐस व्यक्तियो को सदस्य बना सकती है जो पार्लियामेट के चुनावो म हार गये हो और परिषद् म सदस्य बनने पर फिर से पार्लियामेट मे पहुचने का प्रयत्न करें।

है, क्योंकि स्थानीय शासन के कार्यों का उनके नित्य के जीवन से अपेक्षाकृत अधिक सम्बन्ध होता है। साथ ही नागरिकों में उत्तरदायित्व की भावना की वृद्धि होती है।

स्थानीय सस्थाओ द्वारा व्यापार—स्थानीय सस्थाओं का एक अन्य लाभ यह है कि वे कुछ व्यापारिक कार्यों को अधिक अच्छी प्रकार से कर सकती हैं। ये सस्थाएँ नागरिकों के हित में बहुत से व्यापारिक कार्य आर्थिक लाभ की भावना के बिना कर सकती हैं। उदाहरण के लिए, कुछ नगरपालिकाएँ दूध और मक्खन आदि सस्ते दामों पर उपलब्ध करने के विचार से डयरी की व्यवस्था करती हैं और नगर में सस्ते आवागमन के साधन—ट्राम या बसें चलाती हैं।

राजनीतिक प्रशिक्षण—स्थानीय स्वशासन का सबसे बडा लाभ उनके द्वारा होने वाली नागरिकों की राजनीतिक शिक्षा है। स्थानीय सस्थाएँ उत्तरदायी शासन को बडे पैमाने पर चलाने के लिए प्रशिक्षण-केन्द्रों का कार्य करती हैं। प्रथम, इनके सदस्य स्थानीय अथवा नगरपालिकाओं के कार्यों को करने की ट्रेनिंग पाते हैं और आगे चलकर वे बडे क्षेत्र में उन्हीं कार्यों को अधिक सफलतापूर्वक कर सकते है। स्थानीय सस्थाओं के कारण नागरिकों की सार्वजनिक कार्यों में दिलचस्पी बनी रहती है। इनके कार्यों तथा निर्वाचन आदि से साधारण व्यक्ति भी विधायिका की कार्य प्रणाली व निर्वाचन पद्धति को समझ जाते हैं। भावी विधायकों व प्रतिनिधियों को अपने राजनीतिक जीवन का प्रारम्भ अपने नगर या पडोस के जीवन से सम्बन्धित कार्यों में भाग लेकर करना चाहिए। स्थानीय सस्थाओं में कार्य करने और नगरपालिकाओं में नेतृत्व पाने के उपरान्त व्यक्ति अधिक अच्छे नेता बन सकते हैं।

जैसा आरम्भ में ही बताया गया है, 'प्रजातन्त्रात्मक शासन स्थानीय स्वशासन के आधार पर ही सफल हो सकता है।' इस कथन में सत्य का बहुत अंश है। यह सभी समझते हैं कि प्रजातन्त्र का सचालन जनता द्वारा होता है, अतः इसके लिए यह अति आवश्यक है कि जनता अथवा जनता के प्रतिनिधियों को शासन कला का आवश्यक एवं पर्याप्त ज्ञान प्राप्त हो। नागरिकों को यह ज्ञान स्थानीय स्वशासन की सस्थाओ के द्वारा प्राप्त होता है। ब्राइस के अनुसार स्थानीय स्वशासन के द्वारा प्रजातन्त्र का जो अभ्यास नागरिकों को होता है उससे उनमें 'सार्वजनिक कार्यों के प्रति सामान्य हित की भावना एवं रुचि पैदा होती है, तथा उनमें व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक कार्यों के प्रति यह कर्त्तव्य की भावना जाग्रत होती है कि कार्य ईमानदारी और कुशलता के साथ सम्पन्न किया जाय।'

2 ग्रेट ब्रिटेन मे स्थानीय शासन

आग के अनुसार ब्रिटिश पद्धति की तीन आधारभूत बातें अग्रलिखित हैं—(1) इस पद्धति की जडें अतीत में गहरी गडी हैं। अर्द्ध-स्वतन्त्र सक्सन नगरों और शायरों के समय से अंग्रेजों में सामुदायिक भावना बडी सुदृढ रही है और उन्होंने अपने स्थानीय मामलों के अधिकार की हर प्रकार से रक्षा की है। (2) स्थानीय शासन पद्धति मे समय के अनुसार परिवर्तन होते रहे हैं। अभी तक ऐतिहासिक बरो जीवित हैं, परन्तु उनके सगठन व कृत्यों में अन्तर हो गया है। इसके अतिरिक्त स्थानीय शासन के क्षेत्र में नयी निर्वाचित इकाइयों का विकास हुआ है। (3) यद्यपि स्थानीय क्षेत्र स्वतन्त्र नागरिक जीवन को अपनाये हुए हैं, किन्तु उनकी शक्ति व कृत्यों पर केन्द्र का नियन्त्रण काफी बढा है।[1]

स्थानीय सस्थाओ के मुख्य प्रकार—स्थानीय शासन के लिए इग्लैण्ड, वेल्स और उत्तरी आयरलैण्ड को काउन्टी, बरो और प्रशासनिक काउन्टियों मे विभाजित किया गया है। प्रशासनिक

[1] Ogg, F A *European Governments and Politics* pp 346-47

उपभोग करना सिखाती हैं ।[1]

आधुनिक राज्यों का क्षेत्रफल व उनकी जनसंख्या इतनी बड़ी होती है कि उनका शासन एक केन्द्र से सुचारु रूप से नहीं हो सकता । वर्तमान काल में जबकि राज्यों के कार्यों में बहुत वृद्धि हो रही है, यह विशेष रूप से और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो गयी है । यदि राज्य की केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय सरकारों पर भी सभी शासन कार्यों का भार हो तो वे इन कार्यों को कुशलता व सुगमतापूर्वक नहीं कर सकती, क्योंकि न तो उनके पास पर्याप्त समय होता है और न उन्हें विभिन्न स्थानों व क्षेत्रों की आवश्यकताओं और विशेष परिस्थितियों का पर्याप्त ज्ञान होता है । यह बात सभी विचारशील व्यक्ति मानेंगे कि किसी देश की सभी समस्यायें केन्द्रीय अथवा प्रादेशिक नहीं होती, अर्थात् अनेक समस्यायें प्रत्येक स्थान व क्षेत्र की अपनी-अपनी होती हैं । इसके साथ ही सभी व्यक्ति यह भी स्वीकार करेंगे कि इन स्थानीय समस्याओं का अपेक्षाकृत अच्छा हल इनके ही निवासी कर सकते हैं, क्योंकि वे अपने नगर व पड़ोस की समस्याओं और आवश्यकताओं को दूसरे की अपेक्षा अधिक अच्छी प्रकार से जानते हैं और समझ सकते हैं, अपने द्वारा किये गये कार्यों से उन्हें एक विशेष प्रकार का सन्तोष व आनन्द प्राप्त होता है । अन्त में यह भी कहना ठीक होगा कि चूंकि किसी भी स्थानीय सेवा का लाभ वहीं के निवासियों को पहुंचता है, अतः उन्हें उसके लिए कर देने में आपत्ति नहीं होनी चाहिए और वे उन सेवाओं का प्रबन्ध भी अधिक कुशलतापूर्वक कर सकते हैं, क्योंकि उन्हें व्यय में सभी प्रकार की बचत करने की चिन्ता रहना स्वाभाविक है । स्थानीय स्वशासन के अनेक लाभ हैं, उनमें से प्रमुख का संक्षिप्त विवेचन निम्न प्रकार है

प्रशासन में सुविधा—प्रशासन की सुविधा के लिए केन्द्रीय व स्थानीय शासन का विभाजन अति आवश्यक है । आधुनिक राज्यों का क्षेत्रफल और जनसंख्या बहुत बड़े होते हैं, परिणामस्वरूप प्रत्येक राज्य को अनेक और विभिन्न प्रकार की समस्याओं को हल करना पड़ता है । उनमें से बहुत सी स्थानीय व क्षेत्रीय समस्याओं को स्थानीय संस्थायें और वहीं के नागरिक अपेक्षाकृत अधिक अच्छी प्रकार तथा सुविधा से हल कर सकते हैं ।

शासन कार्य में कुशलता—स्थानीय शासन की स्थापना अथवा शासन के विकेन्द्रीकरण से शासन-कार्य में कुशलता बढ़ जाती है । स्थानीय शासन का आधार कार्य विभाजन का सिद्धान्त तथा यह भावना होती है कि 'पहनने वाला ही यह जानता है कि जूता पैर में कहाँ कष्ट देता है ।' साथ ही केन्द्रीय शासन के कार्य भार को स्थानीय शासन द्वारा हल्का किया जाता है ।

शासन व्यय में कमी—स्थानीय स्वशासन की समस्याओं के प्रशासन से व्यय में बचत होती है । यदि स्थानीय शासन के कार्यों को केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय शासन करें तो उन्हें उन कार्यों को कराने के लिए अनेक विभाग खोलने होंगे, जिनमें उच्च वेतनभोगी सरकारी कर्मचारियों को रखना होगा और बड़े बड़े कार्यालय खोलने पड़ेंगे । इस प्रकार राज्य की आय का एक बड़ा भाग स्थानीय शासन पर व्यय होगा, परन्तु स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं की स्थापना से शासन-व्यय में काफी बचत होती है, क्योंकि इन संस्थाओं में जनता के निर्वाचित प्रतिनिधि प्रायः अवैतनिक रूप से कार्य करते हैं । इस प्रकार सरकार का आर्थिक भार कम हो जाता है और अपव्यय का भी भय कम रहता है ।

पड़ोस के जीवन में अधिक दिलचस्पी व उत्तरदायित्व—स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं के निर्माण से नागरिकों को स्थानीय तथा पास-पड़ोस के जीवन में अधिक दिलचस्पी पैदा हो जाती

[1] A nation may establish a free government but without municipal institutions it cannot have the spirit of liberty —Anderson et al *Local Government in Europe*, p. 14

है, उ ह निम्नलिखित तीन समूहा म रखा जा सकता है—

(1) पर्यावरण सम्बन्धी सेवायें—इनका उद्देश्य नागरिका के पर्यावरण को सुधारना तथा अच्छा बनाना है। इन सेवाओ म इ ह गिना जा सकता है—पानी क बहाव व गन्दी नालियो की व्यवस्था, मार्गो की रोशनी, शहर की ग दगी को हटवाना और उनका उचित प्रयोग करना, पानी की व्यवस्था, खाद्य पदार्थों की देख-रेख, वातावरण को गन्दा होने स रोकना, पार्क व मनोरजन स्थानो की व्यवस्था करना, सार्वजनिक कण्टका (public nuisanances) का रोकना। इग्लण्ड और वेल्स म काउन्टी व बरो कौसिलें नगर तथा क्षेत्रीय नियोजन का भी काय करती है।

(2) रक्षा सेवायें—इनम नागरिको की अग्नि स रक्षा, पुलिस व्यवस्था तथा नागरिक प्रतिरक्षा सम्मिलित है। इग्लैण्ड तथा वल्स मे अग्नि स रक्षा सेवा की व्यवस्था काउन्टी बरो और कौसिलें स्वतन्त्र अथवा सयुक्त रूप स करती है। पुलिस सेवा की व्यवस्था स्थायी सयुक्त समितियो द्वारा की जाती है। स्कॉटलण्ड म पुलिस व्यवस्था नगर बग व काउन्टी कौसिलो के अधीन है।

(3) व्यक्तिगत सेवायें—इनका उद्देश्य व्यक्तियो की श्रेष्ठ शारीरिक, मानसिक व नैतिक सुप्त शक्तियो को विकसित करना है। इन सेवाओ म प्रसूति गृहो, शिशु-कल्याण, शिक्षा, गृह निर्माण और मनोविनोद की व्यवस्था आदि आते हैं। इसी समूह म कुछ स्वास्थ्य सेवायें वृद्धो और अगहीन व्यक्तियो की सेवा, पुस्तकालयो, अजायबघरो, कला गलरियो की व्यवस्था भी सम्मिलित है। इनके अतिरिक्त इसी शीर्षक के अन्तगत कुछ व्यापारिक सेवाय तथा यात्रियो क लिए परिवहन पानी की व्यवस्था, जहाजो के लिए डाक आदि की व्यवस्था भी आती है।

ब्रिटिश स्थानीय शासन की यह प्रमुख विशेषता है कि पुलिस स्थानीय सस्थाओ के अधीन है। ब्रिटेन मे प्रारम्भिक व माध्यमिक शिक्षा भी इन्ही सस्थाओ क हाथो म है। अधिकतर स्थानीय क्षेत्रो मे इन्ही सस्थाओ का मजदूरो क लिए गृह निर्माण काय भी करना होता है। ये सस्थाएँ नगर योजनायें भी तयार करती है। सार्वजनिक उपयोगिता की सेवाओ के लिए मुख्यत ये ही सस्थायें उत्तरदायी है। 1935 म ये सस्थाएँ इग्लैण्ड और वेल्स की 80 प्रतिशत जनसख्या क लिए पानी की व्यवस्था करती थी, कुल 600 से अधिक गस कारखानो म लगभग 250 नगर सस्थाओ के स्वामित्व म थे, नगरो म बिजली की 2/3 व्यवस्था इन्ही सस्थाओ के हाथो म थी, और प्राय बडे नगरो म ट्रामवे की सेवा भी स्थानीय सेवाओ द्वारा सचालित है। अधिकतर नगरो म इन सस्थाओ ने अपने बाजार भी खोले हुए हैं। इन सभी तथ्यो से स्पष्ट है कि स्थानीय सस्थाएँ विभिन्न प्रकार की सेवाएँ करती है और नागरिको को प्राय सभी प्रकार की आधुनिक सुविधाए प्रदान करती हैं।

उनकी रचना—स्थानीय कौसिलो म सभी सदस्य निर्वाचित होते है, कुछ कौसिलो म सदस्यो के अतिरिक्त एल्डरमेनो की व्यवस्था भी है। अधिकतर बरो की कौसिलो के प्रमुख मेयर कहलाते है, लन्दन व अन्य बडे नगरो की बरो म लार्ड मेयर होते है। साधारणतया कौसिलो क सदस्यो का काय काल तीन वर्ष है। कुछ क्षेत्रो म पूर्ण कौसिल का प्रति वर्ष चुनाव होता है, और शेष म 1/3 सदस्य चुने जाते हैं। इन चुनावो म 21 वर्ष से अधिक आयु वाला प्रत्येक ब्रिटिश नागरिक जिसका नाम क्षेत्र के चुनाव रजिस्टर म लिखा हो मत द सकता है। उम्मीदवार स्वतन्त्र रूप से अथवा किसी दल की ओर से खडे होते है।

स्थानीय शासन सस्थाओ का आन्तरिक सगठन—ये सस्थाएँ अपने आन्तरिक सगठन म बहुत सीमा तक स्वतन्त्र है। सगठन सम्बन्धी व्यवस्था साधारणतया कुछ इस प्रकार है—सिद्धान्त और नीति-सम्बन्धी प्रश्नो पर निर्णय कौसिलें करती है। ये कौसिलें विभिन्न कृत्यो के सचालन के लिए समितिया नियुक्त करती है। बडी सस्थाओ की महत्त्वपूर्ण समितियाँ उप समितियो का भी

है, उन्हें निम्नलिखित तीन समूहों में रखा जा सकता है—

(1) **पर्यावरण सम्बन्धी सेवायें**—*इनका उद्देश्य नागरिकों के पर्यावरण को सुधारना तथा* अच्छा बनाना है। इन सेवाओं में इन्हें गिना जा सकता है—पानी के बहाव व गन्दी नालियों की व्यवस्था, मार्गों की रोशनी, शहर की गन्दगी को हटवाना और उनका उचित प्रयोग करना, पार्को की व्यवस्था, खाद्य पदार्थों की देख-रेख, वातावरण को गन्दा होने से रोकना, पार्कों व मनोरंजन स्थानों की व्यवस्था करना, सार्वजनिक कण्टकों (public nuisanances) को रोकना। इंग्लैण्ड और वेल्स में काउन्टी व बरो कौंसिलें नगर तथा क्षेत्रीय नियोजन का भी कार्य करती हैं।

(2) **रक्षा सेवायें**—इनमें नागरिकों की अग्नि से रक्षा, पुलिस व्यवस्था तथा नागरिक प्रतिरक्षा सम्मिलित हैं। इंग्लैण्ड तथा वेल्स में अग्नि से रक्षा सेवा की व्यवस्था काउन्टी बरो और कौंसिलें स्वतन्त्र अथवा संयुक्त रूप से करती हैं। पुलिस सेवा की व्यवस्था स्थायी संयुक्त समितियों द्वारा की जाती है। स्काटलैण्ड में पुलिस व्यवस्था नगर बर्ग व काउन्टी कौंसिलों के अधीन है।

(3) **व्यक्तिगत सेवायें**—इनका उद्देश्य व्यक्तियों की श्रेष्ठ शारीरिक, मानसिक व नैतिक सुप्त शक्तियों को विकसित करना है। इन सेवाओं में प्रसूति गृहों, शिशु कल्याण, शिक्षा, गृह निर्माण और मनोविनोद की व्यवस्था आदि आते हैं। इसी समूह में कुछ स्वास्थ्य सेवायें वृद्धों और अंगहीन व्यक्तियों की सेवा, पुस्तकालयों, अजायबघरों, कला-गैलरियों की व्यवस्था भी सम्मिलित हैं। इनके अतिरिक्त इसी शीर्षक के अन्तर्गत कुछ व्यापारिक सेवायें तथा यात्रियों के लिए परिवहन, पानी की व्यवस्था, जहाजों के लिए डाक आदि की व्यवस्था भी आती है।

ब्रिटिश स्थानीय शासन की यह प्रमुख विशेषता है कि पुलिस स्थानीय संस्थाओं के अधीन है। ब्रिटेन में प्रारम्भिक व माध्यमिक शिक्षा भी इन्हीं संस्थाओं के हाथों में है। अधिकतर स्थानीय क्षेत्रों में इन्हीं संस्थाओं को मजदूरों के लिए गृह निर्माण कार्य भी करना होता है। ये संस्थाएँ नगर योजनायें भी तैयार करती हैं। सार्वजनिक उपयोगिता की सेवाओं के लिए मुख्यतः ये ही संस्थायें उत्तरदायी हैं। 1935 में ये संस्थाएँ इंग्लैण्ड और वेल्स की 80 प्रतिशत जनसंख्या के लिए पानी की व्यवस्था करती थीं, कुल 600 से अधिक गैस कारखानों में लगभग 250 नगर संस्थाओं के स्वामित्व में थे, नगरों में बिजली की 2/3 व्यवस्था इन्हीं संस्थाओं के हाथों में थी, और प्रायः बड़े नगरों में ट्रामवे की सेवा भी स्थानीय सेवाओं द्वारा संचालित है। अधिकतर नगरों में इन संस्थाओं ने अपने बाजार भी खोले हुए हैं। *इन सभी तथ्यों से स्पष्ट है कि स्थानीय संस्थाएँ* विभिन्न प्रकार की सेवाएँ करती है और नागरिकों को प्रायः सभी प्रकार की आधुनिक सुविधाएं प्रदान करती हैं।

उनकी रचना—*स्थानीय* कौंसिलों में सभी सदस्य निर्वाचित होते हैं, कुछ कौंसिलों में सदस्यों के अतिरिक्त एल्डरमेनों की व्यवस्था भी है। अधिकतर बरो की कौंसिलों के प्रमुख मेयर कहलाते हैं, लन्दन व अन्य बड़े नगरों की बरो में लार्ड मेयर होते हैं। साधारणतया कौंसिलों के सदस्यों का कार्य-काल तीन वर्ष है। कुछ क्षेत्रों में पूर्ण कौंसिल का प्रति वर्ष चुनाव होता है, और शेष में 1/3 सदस्य चुने जाते हैं। इन चुनावों में 21 वर्ष से अधिक आयु वाला प्रत्येक ब्रिटिश नागरिक जिसका नाम क्षेत्र के चुनाव रजिस्टर में लिखा हो मत दे सकता है। उम्मीदवार स्वतन्त्र रूप से अथवा किसी दल की ओर से खड़े होते हैं।

स्थानीय शासन-संस्थाओं का आन्तरिक संगठन—ये संस्थाएं अपने आन्तरिक संगठन में बहुत सीमा तक स्वतन्त्र हैं। संगठन सम्बन्धी व्यवस्था साधारणतया कुछ इस प्रकार है—सिद्धान्त और नीति-सम्बन्धी प्रश्नों पर निर्णय कौंसिलें करती हैं। ये कौंसिलें विभिन्न कृत्यों के संचालन के लिए समितियाँ नियुक्त करती हैं। बड़ी संस्थाओं की महत्वपूर्ण समितियाँ उप-समितियाँ का भी

प्रयोग करती हैं। कासिलो तथा समितियो के निणया को कार्यान्वित कायकारी अधिकारिया द्वारा किया जाता है। बहुत सी सस्थाएँ कई सेवाओ का सयुक्त रूप से सचालित करती है और इस हेतु सयुक्त समितियाँ अथवा बोड नियुक्त करती हैं। प्रत्येक कौसिल आवश्यक अधिकारी तथा कमचारी नियुक्त करती है। कुछ अधिकारियो की नियुक्ति करना अनिवाय है जस क्लक, कोषाध्यक्ष, चिकित्सा व स्वास्थ्य अधिकारी, सर्वेयर और जन स्वास्थ्य निरीक्षक, अन्य अधिकारी व कर्मचारी नियुक्त करना कौन्सिला की इच्छा पर निभर करता है। अधिकारी व कमचारी तीन प्रकार के समूहा म रखे जा सकते है—(1) विभिन्न विभागा के अध्यक्ष और कमचारी, (2) दफ्तरो म काम करने वाल अधीन अधिकारी व कमचारी, और (3) शारीरिक काय करन वाले कमचारी। अधिकतर अधिकारिया व कमचारिया की नियुक्तियाँ व सवा की शर्तें आवश्यक योग्यताआ के अनुसार कौसिल व उनके अधिकारियो द्वारा नियन्त्रित हैं। अधिकारी व कमचारी योग्य और कुशल होने के साथ अपना काय ईमानदारी स करत हैं।

स्थानीय शासन सस्थाओ का वित्त—य सस्थाएँ प्रति वष 150 करोड़ पौण्ड से भी अधिक व्यय करती ह। इनकी आय के स्रोत मुख्यत य हैं—स्थानीय कर, सरकारी अनुदान, म्युनिसिपल व्यापार, किराय, फीस इत्यादि। सरकारी अनुदान स लगभग 20% आय हाती है, ये अनुदान अग्रलिखित पाँच प्रकार क हैं—(1) कुछ राष्ट्रीय करो से हान वाली आय जो इन्ह मिल जाती है, कुत्तो, शिकार व बन्दूक आदि के लाइसेन्सो मे होने वाली आय, (2) प्रतिशत अनुदान अर्थात् व अनुदान जो केन्द्रीय सरकार कुछ सेवाआ के लिए कुछ व्यय के नियत प्रतिशत क अनुसार इन्हे दती है, जैस शिक्षा, जन स्वास्थ्य, माग, पुलिस और अग्नि रक्षा आदि सवाआ की व्यवस्था के लिए (3) इकाई अनुदान जो की जाने वाली सेवा पर निभर करती हैं, जैस गृह निर्माण पर व्यय, (4) समकरण अनुदान जो कम आय वाली सस्थाआ को अशदान के रूप म दिय जात ह, और (5) विशेष अनुदान जो समय समय पर विशिष्ट प्रयोजना के लिए दिये जाते ह।

स्थानीय कर—ये कर स्थान या भवना के स्वामिया पर स्थानीय सेवाआ की व्यवस्था के लिए कौसिलो द्वारा लगाये जाते हैं। विभिन्न प्रकार के नये काय आरम्भ करन के लिए आवश्यक पूजी व्यय के हेतु ये सस्थाएँ ऋण ल सकती हैं। ऐस ऋण या तो खुले बाजार अथवा सावजनिक काय ऋण बोड से लिये जा सकते है। स्थानीय सस्थाये अपनी कुल आय का लगभग 16% सरकार स ऋण के रूप म पाती है। प्रत्येक कौसिल म वित्त पर नियन्त्रण हेतु एक वित्त समिति होती है। इनके व्यय पर बाह्य नियन्त्रण सरकार द्वारा नियुक्त जिला ऑडीटरो की जाँच द्वारा किया जाता है। ये ऑडीटर गृह तथा स्थानीय शासन मन्त्रालय द्वारा नियुक्त किये जाते ह और ये शिक्षा, राष्ट्रीय सहायता, जन स्वास्थ्य, पुलिस, अग्नि रक्षा व प्रतिरक्षा आदि सभी महत्त्वपूण सेवाआ के व्यय की जाँच करते है।

नियन्त्रण और देख रेख—इन सस्थाआ के ऊपर नियन्त्रण व देख रेख की तीन मुख्य विधियाँ अग्रलिखित है—(1) पार्लियामेन्ट के कानूनो द्वारा, जिनके अन्तगत इनकी तथा समितिया आदि की स्थापना होती है और अनक अधिकारी नियुक्त किये जाते है। ये सस्थाएँ केवल उन्ही शक्तियो का प्रयोग कर सकती हैं, जो कि इन्हे विभिन्न कानूनो के अन्तगत प्राप्त है। (2) पार्लियामेन्ट क कानूना का निर्वाचन न्यायालय करते है और यदि कोई सस्था किसी कानून का अतिक्रमण करती है तो न्यायिक कायवाही द्वारा अवध काय करने स रोका जा सकता है। यदि कोई सस्था आवश्यक काय नहीं कर पाता तो उसे ऐसा करने के लिए न्यायालय से परमादेश का लेख (Writ of Mandamus) प्राप्त किया जा सकता है। (3) सरकार द्वारा नियन्त्रण काफी लचीला है और इसका उद्देश्य इनके कार्यो का अच्छी तरह कराने मे परामश व सहायता देना है। ये सस्थाएँ अपने बजट स्वय स्वीकार करती है और निहित विनियमा के *अधीन अपने अधिकारी व*

प्रयोग करती है। कौसिला तथा समितियो के निणया को कार्यान्वित कायकारी अधिकारिया द्वारा किया जाता है। बहुत सी सस्थाएँ कई सवाओ को सयुक्त रूप से सचालित करती है और इस हेतु सयुक्त समितिया अथवा बोड नियुक्त करती है। प्रत्यक कौसिल आवश्यक अधिकारी तथा कमचारी नियुक्त करती है। कुछ अधिकारियो की नियुक्ति करना अनिवाय है जैसे क्लक, कोपाध्यक्ष, चिकित्सा व स्वास्थ्य अधिकारी, सर्वेयर और जन स्वास्थ्य निरीक्षक, अय अधिकारी व कर्मचारी नियुक्त करना कौसिला की इच्छा पर निभर करता है। अधिकारी व कमचारी तीन प्रकार के समूहा म रखे जा सकते हैं—(1) विभिन्न विभागो के अध्यक्ष और कमचारी, (2) दफ्तरो म काम करने वाले अधीन अधिकारी व कमचारी, और (3) शारीरिक काय करन वाल कमचारी। अधिकतर अधिकारिया व कमचारियो की नियुक्तिया व सेवा की शर्तें आवश्यक योग्यताओ के अनुसार कौसिल व उनके अधिकारियो द्वारा नियन्त्रित है। अधिकारी व कमचारी योग्य और कुशल होने के साथ अपना काय ईमानदारी से करत है।

स्थानीय शासन सस्थाओ का वित्त—ये सस्थाएँ प्रति वष 150 करोड पौण्ड स भी अधिक व्यय करती हैं। इनकी आय के स्रोत मुख्यत य है—स्थानीय कर, सरकारी अनुदान, म्युनिसिपल व्यापार, किराय, फीस इत्यादि। सरकारी अनुदान स लगभग 20% आय होती है, ये अनुदान अग्रलिखित पाच प्रकार के हैं—(1) कुछ राष्ट्रीय करो से होने वाली आय जो इन्हे मिल जाती है, कुत्तो शिकार व बदूक आदि क लाइसेसो से होन वाली आय, (2) प्रतिशत अनुदान अर्थात् वे अनुदान जो केन्द्रीय सरकार कुछ सवाओ के लिए कुछ व्यय के नियत प्रतिशत के अनुसार इन्हे दती है, जैसे शिक्षा, जन स्वास्थ्य, माग, पुलिस और अग्नि रक्षा आदि सवाओ की व्यवस्था क लिए (3) इकाई अनुदान जो की जाने वाली सेवा पर निभर करती है, जस गृह निर्माण पर व्यय, (4) समकरण अनुदान जो कम आय वाली सस्थाओ को अशदान के रूप म दिये जाते है, और (5) विशेष अनुदान जो समय समय पर विशिष्ट प्रयोजनो के लिए दिय जाते है।

स्थानीय कर—ये कर स्थान या भवनो के स्वामियो पर स्थानीय सेवाओ की व्यवस्था के लिए कौसिलो द्वारा लगाय जाते हैं। विभिन्न प्रकार के नये काय आरम्भ करने के लिए आवश्यक पूजी व्यय के हेतु य सस्थाएँ ऋण ले सकती है। ऐसे ऋण या तो खुले बाजार अथवा सावजनिक काय ऋण बोड से लिय जा सकते है। स्थानीय सस्थाय अपनी कुल आय का लगभग 16% सरकार से ऋण के रूप म पाती है। प्रत्येक कौसिल म वित्त पर नियन्त्रण हेतु एक वित्त समिति होती है। इनके व्यय पर वाह्य नियन्त्रण सरकार द्वारा नियुक्त जिला आडीटरा की जाँच द्वारा किया जाता है। ये ऑडीटर गृह तथा स्थानीय शासन मन्त्रालय द्वारा नियुक्त किय जाते है और ये शिक्षा, राष्ट्रीय सहायता, जन स्वास्थ्य, पुलिस, अग्नि रक्षा व प्रतिरक्षा आदि सभी महत्त्वपूण सवाओ के व्यय की जाच करते है।

नियन्त्रण और देख रेख—इन सस्थाओ के ऊपर नियन्त्रण व देख रेख की तीन मुख्य विधियाँ अग्रलिखित हैं—(1) पार्लियामेन्ट के कानूनो द्वारा, जिनके अन्तगत इनकी तथा समितिया आदि की स्थापना होती है और अनेक अधिकारी नियुक्त किय जाते है। ये सस्थाएँ केवल उन्ही शक्तियो का प्रयोग कर सकती है, जो कि इन्हें विभिन्न कानूनो के अन्तगत प्राप्त है। (2) पार्लियामेन्ट के कानूनो का निर्वाचन न्यायालय करते है और यदि कोई सस्था किसी कानून का अतिक्रमण करती है तो न्यायिक कायवाही द्वारा अवध काय करन से रोका जा सकता है। यदि कोई सस्था आवश्यक काय नही कर पाता तो उसे ऐसा करने के लिए न्यायालय स परमादेश का लेख (Writ of Mandamus) प्राप्त किया जा सकता है। (3) सरकार द्वारा नियन्त्रण काफी लचीला है और इसका उद्देश्य इनके कार्यों को अच्छी तरह कराने म परामश व सहायता दना है। ये सस्थाएँ अपन बजट स्वय स्वीकार करती है और निहित विनियमो के अधीन अपन अधिकारा व

कमचारी भी नियुक्त करती हैं। ये सस्थाएँ अपने व्यय का लगभग 2/3 अश स्वय जमा करती हैं।

कानून क अ तगत सरकार को इन सस्थाओ को विघटित करने की शक्ति प्राप्त नही है। स्थानीय सस्थाएँ बहुत से विषयो पर उप विधियाँ बनाने की शक्ति रखती हैं, पर तु उन पर स्वास्थ्य म त्रालय का अनुसमथन प्राप्त करना आवश्यक है। एकरूपता लाने के उद्देश्य स म त्रालय आदश उप नियम तैयार करता है तथा जारी करता है, जि ह स्थानीय सस्थाएँ चाह तो मान सकती है। के द्रीय सरकार विभिन्न विभागा के अधीन निरीक्षक नियुक्त करती है कि तु इ हें कोई कायपालिका शक्तियाँ प्राप्त नही होती। ये स्थानीय सस्थाओ को परामश और आवश्यक सहायता प्रदान करते है। जिन योजनाओ से स्थानीय शासन की सस्थाएँ सरकार से पूण अथवा आशिक अनुदान पाती है या वे जिन कार्यों के लिए ऋण पाती हैं उन पर सरकार अधिक निय त्रण करती है, पर तु इस निय त्रण का उद्देश्य कानूनो का ठीक रूप से पालन कराना है। सक्षेप म, के द्रीय सरकार और स्थानीय शासन की सस्थाओ के बीच सम्ब ध साझीदारा जसा है, उच्च अधिकारी व अधीन अभिकरण जैसा नही। वास्तव म स्थानीय शासन की सस्थाएँ ऐसे उत्तरदायी निकाय हैं जो अपने अधिकार क्षेत्र मे आन वाले सभी काय कुशलतापूवक करती हैं। सरकार उनके कार्यों पर इस प्रकार से निय त्रण का प्रयाग करती है कि वे अपना काय स्वत त्र रूप से और अच्छी प्रकार से कर सकें।

ल दन का स्थानीय शासन—ल दन शहर का शासन एक कॉमन कौसिल द्वारा किया जाता है। इस कौसिल मे 26 एल्डरमेन और 260 कॉमन कौसिलर होते है। इन सदस्यो का चुनाव सभी व्यक्तियो द्वारा नही होता वरन् सम्पत्ति पर आधारित अहता रखने वाले व्यक्तियो द्वारा किया जाता है। लाड मेयर का चुनाव कौसिल तथा शहर के बडे गिल्डा द्वारा किया जाता है। लार्ड मेयर स्वय कोई बडा समद्धिशाली व्यवसायी होता है, जिसका काय ल दन क प्रतिनिधि रूप म महत्त्वपूण विदेशी दशको का स्वागत करना है, लाड मेयर कॉमन कौसिल का सभापति भी है। कौसिल के काय अ य नगर कौसिला के समान ही हैं। ल दन शहर की अपनी पुलिस व्यवस्था है। ल दन की काउ टी का शासन ल दन काउ टी कौसिला द्वारा किया जाता है। ल दन काउ टी 28 मैट्रोपोलिटन बरो म विभाजित है। प्रत्येक बरो की एक कौसिल है, जो आगे लिखी कुछ सेवाओ के लिए उत्तरदायी है—मार्गों पर रोशनी, ग दगी को हटवाना, पुस्तकालय और तैरने के स्नानागार आदि। अधिक महत्त्वपूण विषयो, जस शिशु कल्याण, नगर नियोजन, गृह निर्माण, शिक्षा आदि कार्यों के लिए काउ टी कौसिल उत्तरदायी है। बरो कौसिल और ल डन काउ टी कौसिल के बीच कुछ वैसा ही सम्ब ध है जसा कि किसी ग्रामीण जिला कौसिल और काउ टी कौसिल के बीच होता है। मैट्रोपोलिटन क्षेत्र के लिए अलग पुलिस व्यवस्था है, जिसका अध्यक्ष पुलिस कमिश्नर होता है। ल दन की पानी व्यवस्था मट्रोपोलिटन पानी बोड के हाथ मे है, जिसका ल दन काउन्टी कौंसिल स कोई सम्ब ध नही है।

सुधार के लिए सुझाव—1958 के स्थानीय शासन कानून (Local Government Act) के द्वारा दो स्थानीय शासन आयोग स्थापित किय गये, एक इग्लैंण्ड के लिए दूसरा वेल्स के लिए। उ ह यह कत्तव्य सौंपा गया कि वे (ल दन को छोडकर) सारे स्थानीय शासन का पुनरीक्षण करें, यह निर्धारित करने के लिए कि क्या अधिक प्रभावी और सुविधाजनक सरचना प्राप्त की जा सकती है या नही। अग्रेजी आयोग को विशेष पुनरीक्षण क्षेत्रो मे यह शक्ति दी गयी है कि वह नये प्रकार के प्राधिकरण की स्थापना के लिए भी सिफारिश कर सके—एक प्रकार की शहरी काउ टी, जिसकी सीमा म कोई काउ टी बरो न आये। फरवरी 1966 म जारी किये गये एक श्वेत पत्र (White Paper on Local Government Finance England and Wales) म सरकार ने यह स्वीकार किया कि कर लगाने की प्रचलित पद्धति म दोष है। परन्तु यह भी कहा

योग करती है। कौसिलों तथा समितियों के निर्णयों को कार्यान्वित कार्यकारी अधिकारियों द्वारा किया जाता है। बहुत-सी सस्थाएँ कई सेवाओं का सयुक्त रूप से सचालित करती है और इस हेतु सयुक्त समितियाँ अथवा बोर्ड नियुक्त करती हैं। प्रत्येक कौसिल आवश्यक अधिकारी तथा कर्मचारी नियुक्त करती है। कुछ अधिकारियों की नियुक्ति करना अनिवार्य है जैसे क्लर्क, कोषाध्यक्ष, चिकित्सा व स्वास्थ्य अधिकारी, सर्वेयर और जन स्वास्थ्य निरीक्षक, अन्य अधिकारी व कर्मचारी नियुक्त करना कौंसिलों की इच्छा पर निर्भर करता है। अधिकारी व कर्मचारी तीन प्रकार के समूहों में रखे जा सकते हैं—(1) विभिन्न विभागों के अध्यक्ष और कर्मचारी, (2) दफ्तरों में काम करने वाले अधीन अधिकारी व कर्मचारी, और (3) शारीरिक कार्य करने वाले कर्मचारी। अधिकतर अधिकारियों व कर्मचारियों की नियुक्तियाँ व सेवा की शर्तें आवश्यक योग्यताओं के अनुसार कौसिल व उनके अधिकारियों द्वारा नियन्त्रित है। अधिकारी व कर्मचारी योग्य और कुशल होने के साथ अपना कार्य ईमानदारी से करते हैं।

स्थानीय शासन सस्थाओं का वित्त—ये सस्थाएँ प्रति वर्ष 150 करोड पौण्ड से भी अधिक व्यय करती है। इनकी आय के स्रोत मुख्यत ये है—स्थानीय कर, सरकारी अनुदान, म्युनिसिपल व्यापार, किराये, फीस इत्यादि। *सरकारी अनुदान से लगभग 20% आय होती है,* ये अनुदान अग्रलिखित पाँच प्रकार के है—(1) कुछ राष्ट्रीय करों से होने वाली आय जो इन्हें मिल जाती है, कुत्तों, शिकार व बन्दूक आदि के लाइसेंसों से होने वाली आय, (2) प्रतिशत अनुदान अर्थात् वे अनुदान जो केन्द्रीय सरकार कुछ सेवाओं के लिए कुछ व्यय के नियत प्रतिशत के अनुसार इन्हें देती है, जैसे शिक्षा, जन स्वास्थ्य, मार्ग, पुलिस और अग्नि रक्षा आदि सेवाओं की व्यवस्था के लिए (3) इकाई अनुदान जो की जाने वाली सेवा पर निर्भर करती है, जैसे गृह निर्माण पर व्यय, (4) *समकरण अनुदान जो कम आय वाली सस्थाओं को अशदान* के रूप मे दिये जाते है, और (5) विशेष अनुदान जो समय समय पर विशिष्ट प्रयोजनों के लिए दिये जाते है।

स्थानीय कर—ये कर स्थान या भवनों के स्वामियों पर स्थानीय सेवाओं की व्यवस्था के लिए कौसिलों द्वारा लगाये जाते है। विभिन्न प्रकार के नये कार्य आरम्भ करने के लिए आवश्यक पूँजी व्यय के हेतु ये सस्थाएँ ऋण ले सकती हैं। ऐसे ऋण या तो खुले बाजार अथवा सार्वजनिक कार्य ऋण बोर्ड से लिये जा सकते है। *स्थानीय सस्थायें अपनी कुल आय का लगभग 16% सरकार* से ऋण के रूप में पाती है। प्रत्येक कौसिल में वित्त पर नियन्त्रण हेतु एक वित्त समिति होती है। इनके व्यय पर बाह्य नियन्त्रण सरकार द्वारा नियुक्त जिला ऑडीटरों की जाँच द्वारा किया जाता है। ये आडीटर गृह तथा स्थानीय शासन मन्त्रालय द्वारा नियुक्त किये जाते है और ये शिक्षा, राष्ट्रीय सहायता, जन स्वास्थ्य, पुलिस, अग्नि रक्षा व प्रतिरक्षा आदि सभी महत्त्वपूर्ण सेवाओं के व्यय की जाँच करते है।

नियन्त्रण और देख रेख—*इन सस्थाओं के ऊपर नियन्त्रण व देख रेख की तीन मुख्य* विधियाँ अग्रलिखित हैं—(1) पार्लियामेंट के कानूनों द्वारा, जिनके अन्तर्गत इनकी तथा समितियों आदि की स्थापना होती है और अनेक अधिकारी नियुक्त किये जाते है। ये सस्थाएँ केवल उन्हीं शक्तियों का प्रयोग कर सकती है, जो कि इन्हें विभिन्न कानूनों के अन्तर्गत प्राप्त है। (2) पार्लियामेन्ट के कानूनों का निर्वाचन न्यायालय करते है और यदि कोई सस्था किसी कानून का अतिक्रमण करती है तो न्यायिक कार्यवाही द्वारा अवैध कार्य करने से रोका जा सकता है। यदि कोई सस्था आवश्यक कार्य नहीं कर पाती तो उसे ऐसा करने के लिए न्यायालय से परमादेश का लेख (Writ of Mandamus) प्राप्त किया जा सकता है। (3) सरकार द्वारा नियन्त्रण काफी लचीला है और इसका उद्देश्य इनके कार्यों को अच्छी तरह कराने मे परामर्श व सहायता देना है। ये सस्थाएँ अपने बजट स्वय स्वीकार करती है और निहित विनियमों के अधीन अपने अधिकारी व

लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण को हम साधारण भाषा मे स्थानीय मामलो का स्वतन्त्र एव लोकप्रिय प्रबन्ध कह सकते हैं। इसके आवश्यक तत्त्व अग्रलिखित है—(अ) विभिन्न स्तरो पर ऐसे प्राधिकरणो का अस्तित्व जो आपस म एक-दूसरे स सम्बन्धित हो और अन्त म जनता सर्वोपरि सत्ता के निकट हो, (ब) इन विभिन्न प्राधिकरणो म कार्यों का विभाजन, (स) इनकी प्रजातान्त्रिक रचना, (द) इनकी प्रजातान्त्रिक काय प्रणाली, और (य) विभिन्न प्राधिकरणो को अपने-अपने क्षेत्र म स्वायत्तता का प्राप्त होना और उसका उच्चस्तरीय प्रजातान्त्रिक प्राधिकारियो द्वारा परिवीक्षण से सीमित होना।

अध्ययन समूह के सुझावो के आधार पर विकेन्द्रीकरण की योजना म पहल स चले आ रह जिला बोर्डों को समाप्त कर उनके स्थान पर जिला स्तर पर नय प्राधिकरण का जन्म होना चाहिए। नये जिला स्तरीय प्राधिकरण के अन्तगत अग्रलिखित सस्थाओ का सगठन होना चाहिए—(अ) विकास खण्ड (development block) के स्तर पर पचायत समिति का गठन हो जो मुख्य रूप म विकास-क्षेत्र स सम्बद्ध हो। (ब) प्रत्यक खण्ड के अन्तगत आन वाल ग्रामो म ग्राम-पचायतें हो, और कही कही कुछ गाँवो का एक ही ग्राम पचायत से सम्बद्ध होना चाहिए। परिणामस्वरूप अब ग्रामीण क्षेत्रो के लिए स्थानीय शासन की तीन स्तरो वाली योजना अपनायी गयी है। इसका प्रयोजन नीचे के स्तरो पर कार्यों मे जनता अधिक भाग दिलाना है। यह प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण से भिन्न है, क्योकि इसम सत्ता का न्यायागमन अन्तग्रस्त है। इसम जनता का यह अधिकार भी निहित है कि वह जन-कल्याण के लिए अपनी परियोजनाओ म पहल कर सके और साथ म यह भी कि वह उन्हे स्वायत्ततापूण ढग से कार्यान्वित तथा परिचालित कर सके।

लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण, स्थानीय शासन और सामुदायिक विकास के बीच सम्बन्ध—लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण तो वास्तव में स्थानीय स्वशासन की नयी योजना का ही दूसरा नाम है। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना को जिला परिषदो, खण्ड स्तर की समितियो या पचायतो के द्वारा ही कायरूप दिया जाता है। अत यह कहना सत्य होगा कि जहाँ एक ओर लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण एक राजनीतिक आदश है, स्थानीय स्वशासन इसका सस्थागत रूप है। ऐसा ही घनिष्ठ सम्बन्ध सामुदायिक विकास और स्थानीय स्वशासन के बीच म है। वास्तव म मेहता अध्ययन समूह ने सामुदायिक विकास की योजना को अधिक सफल बनाने के लिए ही लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना का सुझाव दिया। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की नीति के अन्तगत सामुदायिक विकास और स्थानीय स्वशासन की सस्थाओ का प्रजातन्त्र के विकास से सम्बन्ध है। सामुदायिक विकास स्वय एक प्रजातान्त्रिक प्रतिक्रिया है। हमारी लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की नीति का उद्देश्य प्रजातन्त्र का आधार अथवा निम्नतम स्तर स ही निर्माण करना है और इसकी प्राप्ति जनता को प्रजातान्त्रिक सस्थाएँ देकर करनी है, जिनके द्वारा जनता सगठित अथपूण ढग से प्रजातन्त्र को व्यवहार म ला सके।

उत्तर प्रदेश मे लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण

जिला-परिषदें—प्रत्यक जिले म एक जिला-परिषद् की स्थापना 1 जुलाई 1963 स की गयी। जिला-परिषद् म अग्रलिखित सदस्य होते ह—(1) जिले के क्षेत्रीय समितियो के प्रमुख, (2) प्रत्यक समिति द्वारा अपन सदस्यो म स विहित ढग स चुन गय उतन सदस्य जितनी कि प्रत्यक समिति के लिए सख्या निर्धारित की जाय, (3) जिल की सभी म्युनिसिपलिटियो के प्रधान, जिला सहकारी बक का राज्य सरकार द्वारा नामजद मनेजर और जिस जिले मे कोई भी बैंक न हो वहाँ उत्तर प्रदश कोआपरटिव बक के सचालक मण्डल द्वारा चुना हुआ किसी भी बक का प्रतिनिधि, (4) जिला सहकारी फडरेशन का प्रतिनिधि, जिसे उसका सचालक मण्डल चुनेगा,

कि चूंकि स्थानीय शासन के लिए आयोग बैठा दिये गये है, जो इग्लैण्ड और वेल्स म स्थानीय शासन का सभी दृष्टिया से पुनरीक्षण करेंगे, इसलिए अनुदान पद्धति मे कोई मूलभूत परिवतन करना उचित नही। राइट के मतानुसार स्थानीय स्वशासन की सम्पूर्ण समस्या पर आयोग के विचाराधीन वातो स अधिक आधारभूत बाता म विचार की आवश्यकता है। ऐसा लगता है कि किसी प्रकार का स्थागमन करना पडेगा, राज्य का कुछ प्रदेशा म विभाजित करना पडेगा और प्रत्येक प्रदेश की अपनी ससद या कौसिल होगी, जिसका सम्बन्ध प्रादेशिक मामले से रहेगा।'[1]

3 सयुक्त राज्य अमरीका मे स्थानीय शासन

विशेषताएँ—स्थानीय शासन की कुछ प्रमुख विशेषताओ का सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—(1) सयुक्त राज्य म स्थानीय शासन को एक व्यावसायिक दृष्टि से देखा जाता है (local government is looked upon as a business concern)। कौसिल मनेजर योजना का विकास इसका अच्छा प्रमाण है। (2) राज्य क स्तर से नीचे प्रशासन की इकाइयाँ एक प्रकार स राज्य शासन की प्रतिनिधि (agents of the state government) है। उनकी शक्तियो और रचना की परिभाषा राज्य क कानूना द्वारा की गयी है। (3) इसी कारण स्थानीय शासन के रूप मे अलग अलग राज्यो मे काफी विभिन्नताएँ है। सयुक्त राज्य क विभिन्न राज्या म अनक प्रकार की स्थानीय शासन की सस्थाएँ है। इनकी एक विशेषता यह है कि स्थानीय समुदायो का यह भी निर्धारित करने का अधिकार है कि वे अपने यहाँ किस प्रकार की सस्थाएँ रखेंगे।[2] जबकि भारतीय नगरा और ग्रामीण क्षेत्रा म राज्य सरकारा द्वारा बनाये गये कानून के अनुसार ही स्थानीय शासन की सस्थाएँ ह अर्थात किसी नगर का यह अधिकार नही है कि वह नगर निगम रखे या म्युनिसिपलिटी, सयुक्त राज्य क नगरा को यह अधिकार प्राप्त है कि वे विभिन्न प्रकार की स्थानीय सस्थाएँ स्थापित कर सकते है। इनके सगठन मे इस कारण भी पचीदगी पैदा हो गयी है कि ये एक ओर स्थानीय शासन और दूसरी ओर राज्य प्रशासन की इकाइयाँ है।

स्थानीय शासन के रूप—मोटे रूप म, शहरी और ग्रामीण क्षेत्रा के लिए स्थानीय शासन की पृथक् सस्थाएँ है। शहरी सस्थाओ की सख्या 400 स कम है। व अपने देश की म्युनिसिपैलटियो तथा निगमो के समान हैं। ग्रामीण क्षेत्रों की सस्थाओ मे काउटिया, कस्बा और विशेष जिला की सस्थाएँ सम्मिलित है। सयुक्त राज्य अमरीका म स्थानीय शासन के तीन आधारभूत रूप निम्नलिखित हैं—

कौंसिल-मेयर रूप—इसके अन्तगत विभिन्न क्षेत्रो स जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियो की एक परिषद् होती है और उसका अध्यक्ष मेयर होता है। इसके भी दो मुख्य रूप हैं—अशक्त मेयर और शक्तिशाली मेयर। प्रथम प्रकार म मेयर की शक्तियाँ बहुत ही कम होती है, वह कौसिल का सभापति होता है। इसम विभिन्न विभागो के अध्यक्ष भी जनता द्वारा चुन जाते हैं। दूसरे प्रकार के स्थानीय शासन का आधार शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त है। कौसिल नीति का निर्धारण करती है, और मेयर जो जनता द्वारा निर्वाचित होता है, कार्यपालिका शक्ति रखता है। मेयर ही महत्त्वपूर्ण अधिकारियो को नियुक्त करता है बजट तैयार करता है और उस कौसिल क

[1] Wright F J *Democratic Government* p 265

[2] The structure of American local government varies not only from State to State but also within the States The constitution or laws of a State often allow some of the local communities a measure of home rule in defining the organs and powers of their government The pattern of local and State administration is confused further by the fact that local government units are both local governments and administrative units of the State —Potter Allen M *American Government and Politics* pp 235 39

से पाच तक प्रतिनिधि, जिनकी सख्या राज्य सरकार निश्चित करेगी और जिनका चुनाव विहित ढग से होगा, (ई) लोकसभा व राज्य विधान सभा के व सभी सदस्य, जिनके निर्वाचन क्षेत्र म खण्ड का कोई भी भाग सम्मिलित हो प्रत्यक ऐसा विधायक, यदि कोई हो, जिसके निर्वाचन क्षेत्र म कोई ग्रामीण क्षेत्र सम्मिलित न हो, परन्तु जिसका निवास स्थान जिले म स्थित हो तो वह सदस्य जिल के किसी खण्ड को विहित ढग से चुनेगा (पसन्द करेगा) और उसका सदस्य रहेगा, और (उ) राज्य सभा व राज्य परिषद् के सभी सदस्य जिनका खण्ड म निवास-स्थान स्थित हो और प्रत्येक ऐसा सदस्य जिसका निवास स्थान जिल म हो, परन्तु ग्रामीण क्षेत्र म न हो, विहित ढग से किसी खण्ड को चुनेगा और उसका सदस्य बनेगा। (2) क्षेत्रीय समितियो की रचना (अथवा पुनरचना) हो जाने क बाद विहित ढग स तथा विहित शर्तों के अनुसार अन्य सदस्य म होगे—(अ) दो तक ऐस विनियुक्त सदस्य जिन्हे विनियुक्त करने वाले सदस्य नियोजन और विकास म अभिरुचि रखने वाला समझें, (आ) यदि सब सक्शन एक म वर्णित सदस्यो म महिला सदस्यो की सख्या पाच से कम हो तो उतनी ही जितनी कम हो महिला सदस्याएँ और नियुक्त की जायेगी, (इ) ऐसे ही यदि सब सक्शन एक म वर्णित सदस्यो म अनुसूचित जातियो के सदस्यो की सख्या आठ से कम हो तो उतन ही उनके सदस्य नियुक्त किये जायेंग।

प्रमुख और उप प्रमुख—प्रत्येक क्षेत्रीय समिति का एक प्रमुख, एक वरिष्ठ (senior) उप प्रमुख और एक कनिष्ठ (junior) उप प्रमुख हैं। प्रमुख का चुनाव क्षेत्रीय समिति क सदस्यो द्वारा किया जाता है। कनिष्ठ व वरिष्ठ उप प्रमुखो का भी चुनाव सदस्यो द्वारा किया जाता है। क्षेत्रीय समितियो की अवधि पाच वष है, पर तु राज्य सरकार सभी या कुछ समितियो की अवधि को अधिक से अधिक एक वष बढा सकती है, अर्थात् उनकी अवधि छः वष से अधिक न होगी।

क्षेत्रीय समिति की सामान्य शक्तियाँ और काय—क्षेत्रीय समिति के काय इस प्रकार हैं—(1) कृषि का विकास, सहकारिता का प्रोत्साहन देना, लघु सिचाई के कार्यों—तालाबो, नहरो आदि का निर्माण व उनको अच्छी स्थिति म रखना, सावजनिक पार्कों, बगीचो को बनाना, वृक्षो को लगवाना, (2) पशु पालन, (3) कुटीर उद्योग, (4) चिकित्सा व सावजनिक स्वास्थ्य, (5) शिक्षा, सामाजिक शिक्षा और सास्कृतिक काय, (6) हरिजन कल्याण काय, (7) नियोजन और आंकडे, (8) अन्य योजनाये, (9) ग्राम सभाओ की देख रेख, और (10) सावजनिक निर्माण-काय।

क्षेत्रीय समिति का काय सचालन—अपने काय सचालन हेतु समिति की प्रति दो माह म कम से कम एक बैठक होगी। समिति का प्रमुख, उसकी अनुपस्थिति म वरिष्ठ उप प्रमुख और यदि वह भी अनुपस्थित हो तो कनिष्ठ उप प्रमुख जब भी उचित व आवश्यक समझे उसकी बैठक बुलायेगा। यदि समिति के कम स कम 1/5 सदस्य बैठक बुलाने के लिए प्राथना करें तो एक माह के भीतर समिति की बैठक बुलायी जायगी। जब कभी समिति चाहे या जिला परिषद् अथवा राज्य सरकार उससे ऐसा करने को कहे तो विकास अधिकारी-ग्राम सभाओ से, नियत समय के भीतर विकास योजनाये मांगेगा और समिति क्षेत्र के लिए विकास योजनायें बनायेंगी। समिति की कायकारिणी खण्ड विकास अधिकारी, उत्पादन समिति और कल्याण समिति की सहायता से जिला परिषद् अथवा राज्य सरकार से मिले निर्देशो को ध्यान मे रखते हुए योजना का मसविदा तैयार करेगी और उसे क्षेत्रीय समिति के सामने पेश करेगी। जिला-परिषद् की नियोजन समिति उस पर विचार करेगी और उसम सशोधन के लिए यदि आवश्यक समझे, सिफारिश करेगी।

क्षेत्रीय सगठन की उप-समितियाँ—समिति की स्थापना के बाद यथाशीघ्र विहित ढग स ये समितियां बनायी जाती हैं—कायकारिणी, उत्पादन और कल्याण। क्षेत्रीय समिति चाहे तो अन्य समितियाँ भी बना सकती है। कायकारिणी, उत्पादन तथा कल्याण समितियो म स प्रत्येक

(5) जिले की सहकारी समिति या समितियो का एक प्रतिनिधि, जिसे विहित ढग से चुना जायेगा, (6) गन्ना यूनियन अथवा यूनियनो का प्रतिनिधि, (7) सामाजिक, सास्कृतिक, साहित्यिक या व्यावसायिक कार्यों मे लगे व्यक्तियो मे से राज्य सरकार द्वारा छाँटे गये अधिक से अधिक तीन व्यक्ति, (8) लोकसभा तथा विधान सभा के ऐसे सभी सदस्य जिनके निर्वाचन-क्षेत्रो मे जिले का कोई भी भाग सम्मिलित हो, और (9) राज्य सभा या विधान सभा के ऐसे सभी सदस्य जिनका निवास स्थान जिले मे स्थित हो।

सदस्यता के सम्बन्ध म अन्य आवश्यक शर्तें इस प्रकार हैं—(अ) विभिन्न क्षेत्रीय समितियो से आने वाले सदस्यो की सख्या का निर्धारण उनकी जनसख्या के आधार पर किया जायेगा, (आ) क्षेत्रीय समितियो से आने वाले कुल सदस्या की सख्या 20 से कम न होगी, (इ) कोई ऐसा व्यक्ति जिसका नाम जिले से विधान सभा के लिए बनी निर्वाचक-सूची मे न हो अथवा जिसे किसी कारण से अयोग्य ठहराया गया हो, परिषद् का निर्वाचित अथवा विनियुक्त सदस्य नही बन सकेगा। (ई) किसी क्षेत्रीय समिति के प्रमुख और म्युनिसिपल वोड के प्रधान का स्थान खाली रहने के दौरान उनके स्थान पर काय करने वाले व्यक्ति परिषद् की बैठको मे भाग ले सकेंगे और उन्ह मतदान का भी अधिकार प्राप्त होगा। (उ) जिस जिले मे सात से अधिक खण्ड न हो, उसकी परिषद् मे से कम से कम तीन और अधिक खण्डो वाले जिले की परिषद् मे पाँच महिला सदस्यायें होगी। यदि इतनी सख्या मे उपर्युक्त प्रकार से महिला सदस्यायें न आयें तो जितनी भी कमी रहेगी उसको जिला परिषद् विनियुक्ति द्वारा पूरी करेगी। (ऊ) यही बात अनुसूचित जातियो के सदस्यो के बारे मे लागू होगी।

कानून के अन्तगत जिस किसी प्राधिकारी को निर्वाचन-सम्बन्धी विवादा का निणय करने का अधिकार हो, वही प्राधिकारी किसी उम्मीदवार को भ्रष्ट व्यवहार के लिए दोषी पाने पर अयोग्य घोषित कर सकता है। अयोग्यता की अवधि पाँच वष तक हो सकती है। भ्रष्ट व्यवहार मे ये बाते सम्मिलित है—(अ) किसी मतदाता को धोखे, मिथ्या व्यपदेशन (false represen tation), बल प्रयोग अथवा चोट पहुँचाने की धमकी देकर किसी मतदाता के पक्ष म मत डालने से रोकना और दूसरे पक्ष मे मत डलवाना, (आ) किसी मतदाता से उसको धन देकर अथवा लाभ व नौकरी का लालच दिलाकर अपने किसी उम्मीदवार के पक्ष मे मत डलवाना, (इ) यदि कोई व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के नाम से मत डाले अथवा डलवाये, (ई) जाति, बिरादरी, धम या सम्प्रदाय के नाम पर चुनाव के मत प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना, और (उ) कोई ऐसा काय करना जिसे राज्य सरकार भ्रष्ट व्यवहार घोषित करे।

इनकी अवधि पाँच वष है, परन्तु राज्य सरकार उसे एक वष के लिए बढ़ा सकती है। यदि किसी सदस्य का स्थान अवधि समाप्त होन स पूर्व खाली हो जाये तो उसे भरने वाले सदस्य की अवधि उस तारीख से प्रारम्भ होगी जिस दिन स वह उस स्थान को भरे। जो व्यक्ति जिला-परिषद् का सदस्य किसी समिति या म्युनिसिपल बोड के प्रधान या समिति के सदस्य की हैसियत से बने, उसकी सदस्यता तभी समाप्त हो जायगी जब वह म्युनिसिपल बोड या समिति का प्रधान अथवा सदस्य न रहे। प्रत्येक जिला परिषद् का एक अध्यक्ष और एक उपाध्यक्ष होता है, वे दोनों विहित नियमो के अनुसार सदस्या द्वारा गुप्त मतदान से चुने जाते हैं। अध्यक्ष की अवधि पाँच वर्ष है, उपाध्यक्ष की अवधि एक वष है और वह केवल परिषद् के सदस्या म से ही चुना जा सकता है।

क्षेत्रीय समितियाँ—क्षेत्रीय समिति के सदस्या म ये अप्रलिखित सम्मिलित है—(1) (अ) खण्ड और क्षेत्र म सम्मिलित प्रत्येक टाउन एरिया का चेयरमन और नोटीफाइड एरिया का प्रधान, (आ) सभी ग्राम सभाओ के प्रधान, (इ) क्षेत्र की रजिस्टड सहकारी समितियो या

जिसकी जनसंख्या 250 या अधिक है, ग्राम सभा की इकाई होता है। इससे कम जनसंख्या होने पर एक साथ 2–3 गांवों को मिलाकर ग्राम सभा बनाई जाती है। इस समय राज्य में 72 हजार से अधिक ग्राम सभाएँ हैं। गांव के सभी बालिग व्यक्ति, जिनकी आयु 21 वर्ष हो चुकी हो, इन सभाओं के सदस्य होते हैं। परन्तु जो व्यक्ति भारत के नागरिक नहीं हैं अथवा जो न्यायालय द्वारा विक्षिप्त घोषित हो गये हैं, ग्राम सभा के सदस्य नहीं हो सकते। गांव की उन्नति के लिए योजना तैयार करना ग्राम-सभा का कर्त्तव्य है। ग्राम सभा द्वारा ही प्रधान और ग्राम पंचायत के सदस्य चुने जाते हैं और ग्राम पंचायत ग्राम-सभा की ओर से ग्राम विकास के सारे कार्यों का संचालन करती है। ग्राम सभा ही पंचायत कर लगा सकती है, कर सूची स्वीकार करती है और बजट पास करती है। ग्राम सभा के नियन्त्रण में ही गांव का प्रधान कार्य करता है। ग्राम-सभा नियमानुसार अविश्वास का प्रस्ताव पास करके प्रधान को हटा सकती है, लेकिन इस प्रस्ताव पर गांव के कुल सदस्यों के कम से कम आधे सदस्यों के हस्ताक्षर होने जरूरी हैं। चल व अचल सम्पत्ति खरीदने, दान स्वरूप या अन्य प्रकार से प्राप्त करने, कब्जा करने, प्रबन्ध अथवा स्थानान्तरण करने का अधिकार ग्राम-सभा को है। यदि कई ग्राम सभाएँ मिलकर कोई कार्य करना चाहें तो संयुक्त समिति बनाने का प्रस्ताव भी ग्राम-सभा पास करती है।

साधारणतः ग्राम सभा की दो बैठकें रबी और खरीफ की फसलों के बाद होती हैं। रबी की बैठक में पिछले वर्ष के हिसाब किताब और प्रधान की रिपोर्ट पर विचार किया जाता है तथा उन्हें स्वीकार किया जाता है। खरीफ की बैठक में अगले वर्ष के लिए आय-व्यय के अनुमानों तथा निर्माण कार्यों के प्रस्तावों पर विचार किया जाता है और स्वीकृति प्रदान की जाती है। इन सामान्य बैठकों के अतिरिक्त ग्राम-सभा के प्रधान को यह अधिकार है कि वह किसी समय भी विशेष बैठक बुला सके। पंचायत निरीक्षक या सहायक विकास अधिकारी अथवा 20 प्रतिशत सदस्यों की लिखित मांग पर भी ग्राम सभा की बैठक भी बुलाई जा सकती है। ग्राम सभा की कार्यवाही के लिए सदस्यों की कुल संख्या के पांचवें भाग की गणपूर्ति अनिवार्य है।

पंचायत व्यवस्था में ग्राम पंचायतों का महत्त्व बहुत है। वस्तुतः ग्राम पंचायतें ग्राम सभाओं की कार्यकारिणी समितियाँ हैं। ये पांच वर्ष के लिए चुनी जाती हैं और इनका एक प्रधान होता है जो ग्राम-सभा के सदस्यों द्वारा चुना जाता है। उप प्रधान का चुनाव पंचायत सदस्यों द्वारा अपने ही में से प्रतिवर्ष किया जाता है। ग्राम सभा के सदस्य हाथ उठाकर ग्राम-पंचायत के सदस्यों को चुनते हैं। इनकी संख्या पन्द्रह से लेकर तीस तक होती है। अभी तक प्रधान भी ऐसे ही चुने जाते थे, किन्तु कुछ समय से प्रधान का चुनाव गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा होने लगा है। पंचायत की बैठक के लिए सदस्यों की एक तिहाई संख्या, जिसमें प्रधान भी शामिल होता है, आवश्यक है। प्रत्येक पंचायत का प्रधान तथा उप प्रधान ग्राम सभा द्वारा चुने जाते हैं और ग्राम सभा दो तिहाई मतों से उन्हें उनके पदों से अलग भी कर सकती है। 1954 के संशोधन के अनुसार प्रधान वही व्यक्ति हो सकता है जिसकी आयु कम से कम तीस वर्ष हो और जो हिन्दी पढ़ लिख सकता हो। पंचायत का प्रधान बैठकों में सभापति होता है और वह कार्यकारिणी तथा वित्त प्रशासन की देख रेख भी करता है। पंचायत द्वारा लगाये गये करों की वसूली करने की जिम्मेदारी उसी पर होती है। पंचायत की सारी सम्पत्ति उसी के नियन्त्रण में रहती है और वह पंचायत की ओर से सब कार्य करता है।

नगरपालिकाओं तथा जिला बोर्डों की तरह इनके कार्य भी दो प्रकार के होते हैं (1) अनिवार्य कार्य—सार्वजनिक रास्तों को बनाना, उनकी मरम्मत व देखभाल करना, सफाई, छूत की बीमारी को फैलने से रोकना, फसल पर रोकथाम करना, ऐसी इमारतों की देख-रेख करना, जो पंचायत को मिल गयी हों, जन्म तथा मरण का लेखा रखना, मुर्दाघाटों तथा कब्रिस्तानों की देखरेख करना,

में इस प्रकार सदस्य हैं—(1) (अ) क्षेत्र के भीतर प्रत्येक मण्डल (circle) से एक सदस्य जिसे उस मण्डल के प्रधान चुनेंगे (आ) समिति के सदस्यों में से पाँच सदस्य चुने जायेंगे। (2) प्रमुख और दोनों उप प्रमुख कार्यकारिणी समिति के पदेन सदस्य होंगे और चेयरमैन तथा वरिष्ठ व कनिष्ठ वाइस चेयरमैन भी रहेंगे। वरिष्ठ उप प्रमुख उत्पादन समिति का पदेन सदस्य व चेयरमैन रहेगा। उस क्षेत्र में यदि कोई कृषि स्कूल हो तो उसका प्रिंसिपल उसका अतिरिक्त सदस्य रहेगा। *कनिष्ठ उप प्रमुख कल्याण समिति का पदेन सदस्य तथा चेयरमैन रहेगा और क्षेत्र में स्थित हायर* तथा जूनियर सैकण्डरी स्कूलों के प्रधानाचार्य व हैड मास्टरों में से एक को विनियुक्त सदस्य बनाया जायगा। उत्पादन और कल्याण समितियाँ अपने सदस्यों में से एक को अपना अपना वाइस-चेयरमैन चुनेंगी। यदि किसी समिति में किसी सदस्य या अधिकारी का स्थान अवधि से पूर्व ही खाली हो जाय तो उसे पूर्ववर्णित ढंग से ही शेष अवधि के लिए भरा जायेगा।

क्षेत्रीय समिति के अधिकारी व सेवक—प्रत्येक समिति में खण्ड विकास अधिकारी उसका मुख्य कार्यकारी अधिकारी होता है। वह अग्रलिखित शक्तियों व कर्त्तव्यों के पालन के अतिरिक्त समिति तथा उप समितियों के संकल्पों (resolutions) को कार्यान्वित करने के लिए उत्तरदायी होता है। उसके मुख्य कार्य अग्रलिखित हैं—(1) समिति के नाम से धन व आय प्राप्त करना और उसे क्षेत्रीय निधि में जमा करना, (2) क्षेत्रीय निधि से धन निकाल कर वितरण करना, (3) जिलाधीश अथवा विहित अधिकारी को आय व्यय का हिसाब व रिपोर्ट देना, जिलाधीश व राज्य सरकार को क्षेत्रीय समिति और अन्य समितियों के प्रस्तावों व संकल्पों आदि की प्रतियाँ भेजना, (4) ग्राम पंचायतों को उसके विकास कार्यों में सहायता देना, (5) क्षेत्रीय समिति के अन्य अधिकारियों व सेवकों की सेवा, छुट्टी, वेतन व भत्तों आदि के सम्बन्ध में उठे प्रश्नों का निर्णय करना, (6) ऐसे सभी कार्य करना जो कि उसे सौंपे जायें, और (7) क्षेत्रीय समिति की ओर से किये जाने वाले सभी कार्यों के उचित पालन व ठेकों आदि के लिए वही उत्तरदायी होगा।

क्षेत्रीय समिति के अन्य कार्य करने के लिए समिति के अधीन अनेक अधिकारी व कर्मचारी रहेंगे। प्रत्येक विकास खण्ड के सभी अधिकारी व कर्मचारी क्षेत्रीय समिति के अधीन कर दिये गये हैं। इनके अतिरिक्त जिला-परिषद् क्षेत्रीय समितियों के अन्य कार्यों के संचालन के लिए अतिरिक्त कर्मचारियों की भी व्यवस्था करेगी। प्रत्येक क्षेत्रीय समिति के लिए एक क्षेत्रीय निधि स्थापित की गयी है जिसमें समिति का सभी स्रोतों से प्राप्त धन, आय व ऋण रखे जाते हैं। क्षेत्रीय समिति उस आय के किसी अंश को किसी विशेष प्रयोजन के लिए अलग कर सकती है। समिति का कोष सरकारी खजाने या बैंक में रखा जाता है। समिति की सम्पत्ति में उसके भवन और भूमि आदि सम्मिलित हैं। समिति का बजट कार्यकारिणी समिति प्रतिवर्ष 31 मार्च से पहले उत्पादन व कल्याण समितियों की सहायता से तैयार करती है। बजट में आगामी वित्तीय वर्ष के लिए आय और व्यय के विस्तृत अनुमान दिये जाते हैं और साथ ही पूरा व्यय का [illegible] भी उस बजट के साथ प्रमुख जिला परिषद् को भेजता है और जिला-परिषद् उसे नियोजन के सामने रखती है। नियोजन समिति द्वारा की गयी जाँच के परिणाम व सिफारिशें [illegible] को भेजी जाती हैं और तब क्षेत्रीय समिति उन सभी बातों पर विचार कर बजट को [illegible] है।

किये जाते हैं जिस क्षेत्र में अपराध हुआ हो। माल के मुकदमे उस क्षेत्र की पंचायती अदालत में दायर किये जाते हैं जिसमें मुकदमे से सम्बन्धित भूमि स्थित हो। इन अदालतों में निम्न प्रकार के मुकदमे सुने जा सकते हैं—

1000 रुपये तक की मालियत के मुकदमे इनके अधिकार क्षेत्र में आते है, परन्तु सरकार चाहे तो इन अदालतों को 5000 रुपये की मालियत तक के मुकदमे सुनने का अधिकार दे सकती है। इन मुकदमों को दायर करने की अवधि तीन वर्ष है, परन्तु पशुओं आदि द्वारा की जाने वाली हानि से सम्बन्धित मुकदमों को छः महीने के भीतर ही दायर किया जा सकता है। ये सरकारी नौकरों पर मुकदमा नहीं चला सकती। ये अदालतें आगे लिखे विभिन्न प्रकार के छोटे अपराधों से सम्बन्धित मुकदमे सुन सकती हैं— (1) सार्वजनिक स्थानों पर झगड़ा करना, (2) 50 रुपये तक की चोरी के मुकदमे, (3) किसी को पीटना या हानि पहुँचाना, इत्यादि।

5 फ्रांस में स्थानीय शासन

केन्द्रीकरण—प्रायः सभी विद्वान् लेखक इस विषय में एकमत हैं कि फ्रांस में राष्ट्रीय प्रशासन की प्रधान विशेषता शक्तियों का केन्द्रीय सरकार के हाथों में एकीकरण अथवा केन्द्रीकरण है। स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय सरकार का प्रायः पूर्ण नियन्त्रण है। इसी कारण फ्रेंच पद्धति को स्थानीय स्वशासन के स्थान पर स्थानीय शासन कहना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। कुछ लेखक तो यह कहते हैं कि फ्रांस में स्थानीय शासन नहीं, वरन् स्थानीय प्रशासन फ्रांस में विभिन्न इकाइयों की चुनी हुई परिषदें अवश्य हैं, किन्तु उनकी शक्तियाँ अत्यन्त परिमित हैं और उन पर बहुत बड़ी सीमा तक प्रीफैक्टों अथवा उप प्रीफैक्टों का नियन्त्रण रहता है। यहाँ पर हम शासन और प्रशासन का अन्तर भी बताना आवश्यक है।[1] शासन का अर्थ नीति और उसके कार्यान्वित करने के लिए शक्तियों के प्रयोग से है, ब्रिटेन में स्थानीय संस्थाओं को स्थानीय मामलों में पहल और उनके प्रबन्ध के अधिकार प्राप्त है अतः उन्हें स्थानीय शासन की इकाइयाँ कह सकते है। इसके विपरीत फ्रांस में स्थानीय इकाइयाँ वास्तव में राष्ट्रीय प्रशासन का ही अंग मात्र हैं।

एकरूपता—उपर्युक्त के ही परिणामस्वरूप सम्पूर्ण देश में एक ही प्रकार की स्थानीय संस्थाये है। फ्रांस के सभी प्रदेशों में एक ही प्रकार की निर्वाचित परिषदें, प्रीफैक्ट और मेयर मिलते हैं, जिनके आधार एक ही राष्ट्रीय कानून है। उनके आय स्रोतों और कृत्यों में भी अत्यधिक समानता है।

केन्द्रीय नियन्त्रण या संरक्षण—शक्तियों के एकीकरण के कारण केन्द्रीय सरकार स्थानीय शासन की इकाइयों पर अत्यधिक नियन्त्रण के अधिकार रखती है। वास्तव में केन्द्रीय नियन्त्रण स्थानीय शासन की एक मुख्य विशेषता है। इस नियन्त्रण को आजकल प्रशासनिक संरक्षण कहते है। इसका आशय यह है कि स्थानीय समुदाय, बालकों की भांति, अपने स्थानीय मामलों का भी प्रबन्ध नहीं कर सकते। इस नियन्त्रण अथवा संरक्षण के कई ढंग हैं, और केन्द्रीकरण की मात्रा स्थानीय शासन की इकाइयों के अनुसार कम या अधिक है। कम्यूनों में सीमित विकेन्द्रीकरण है, परन्तु डिपार्टमेंटों में खुला केन्द्रीकरण है। विकेन्द्रीकरण और संरक्षण साथ साथ चलते है, संरक्षण की सबसे उत्तम परिभाषा इस प्रकार है—'उन सभी शक्तियों का योग जो कानून द्वारा विकेन्द्रीकृत निकायों और उनके कार्यों पर उच्च अधिकारी को इस उद्देश्य से सौंपी जायें कि सामान्य हितों की रक्षा हो सके।' संरक्षण के कई पहलू हैं, परन्तु उन्हें दो मुख्य समूहों में रखा

[1] Characteristic of the organization of French local government has been the rigid and highly centralized pattern of administration —Wright F J *op cit* p 275.

बच्चो की शिक्षा के लिए प्राइमरी स्कूल चलाना, हाटो तथा मेलो का प्रब ध करना, सावजनिक कुआ का बनवाना, उनकी मरम्मत कराना और पचायत की सम्पत्ति की रक्षा करना आदि। पचायते पचायती अदालत के पचो को भी चुनती है। ऐच्छिक काय—साधना क अनुसार पचायते चाह तो य काय कर सकती है—रास्तो के किनारे तथा सावजनिक स्थाना पर पड लगाना, पशुओ की नस्ल को सुधारने तथा उनकी बीमारियो को रोकने का प्रब ध करना, गावो की खेती की उन्नति मे सहायता करना, पुस्तकालय तथा वाचनालय स्थापित करना, आमोद-प्रमोद के लिए व्यवस्था करना, रेडियो आदि का प्रब ध करना, गाव के किसाना के लिए सरकार से तकावी ऋण दिलवाने व बँटवाने म सहायता करना।

पचायते डिस्प सरिया भी खोल सकती है और उ ह चौकीदारो की नियुक्ति व तबादले म भी कुछ भाग लेने का अधिकार है। पचायते गाँव के लेखपाल, पुलिस के चौकीदार तथा टीका लगाने वाले के आचार की जाच कर सकती है और उनके तबादल या पद से हटाये जान की सिफारिश भी कर सकती है। तीसरी पचवर्षीय योजना के अ तगत ग्राम पचायतो को नय उत्तरदायित्व सौपे गय है और उनका विकास करन के हेतु ग्राम सभाओ को ऋण देने की व्यवस्था की गयी है। वह ऋण ऐसी सम्पत्ति बनाने और योजनायें कार्यान्वित करने के लिए दिया जायगा, जिनसे ग्राम सभाये न केवल ऋण का भुगतान कर सके अपितु आय अजन के स्थायी साधन विकसित कर सके।

ग्राम पचायता की बैठकें प्रधान द्वारा या उसकी अनुपस्थिति म उप प्रधान द्वारा किसी भी समय बुलाई जा सकती है। कम से कम एक तिहाई सदस्या की लिखित माग पर प द्रह दिन के अ दर पचायत की बैठक बुलानी आवश्यक है। पचायत की बठक महीने म कम से कम एक बार अवश्य होनी चाहिए। साथ ही बठक की सूचना सदस्यो को कम से कम पाच दिन पहले मिल जानी चाहिए। साथ ही उ ह बैठक की तिथि, समय और स्थान की सूचना के साथ विचारणीय विषयो की जानकारी करा दनी चाहिए। ग्राम पचायत की कायवाही के लिए प्रधान और उप प्रधान को सम्मिलित करके पचायत के सदस्या की कुल सख्या के एक तिहाई सदस्या की उपस्थिति आवश्यक है। गाव पचायतें ऊपर वर्णित कार्यो का सुचारु रूप स चलाने के लिए समितिया बना सकती है। प्रत्येक समिति मे पाच से लकर सात तक सदस्य हो सकत है, जि ह एक वष के लिए चुना जाता है। यदि दो या अधिक पचायते चाह तो विशेष काय के लिए अपन अपने प्रतिनिधियो की मिली जुली समिति भी बन सकती है। तीसरी योजना म पचायत मन्त्रियो क प्रशिक्षण क लिए व्यवस्था की गयी थी।

प्रत्येक ग्राम सभा के सदस्य पचायती अदालत के लिए पाच सदस्य चुनते है। तीन स लकर पाँच ग्राम-सभाओ तक के समूह के लिए एसी अदालत होती है। इस समय उत्तर प्रदेश म इनकी सख्या आठ हजार से कुछ ही अधिक है। पचायती-अदालत के सदस्य अपन म स एक को सरपच चुनत हैं—पर तु सरपच केवल पढा लिखा व्यक्ति हो सकता है। सरपच प्रत्यक मुकदम क लिए पचायती अदालत के सदस्या म स पाच को छाटता है, उनकी छाट करते समय उसे इन बाता का ध्यान रखना आवश्यक है—(1) इनम एक सदस्य ऐसा हो जो मुकदम की कायवाही तथा गवाहा के बयाना को लिख सके (2) एक एक सदस्य उन ग्राम सभाओ का अवश्य होना चाहिए जिनके वादी व प्रतिवादी रहन वाल हो, और (3) शेष पच अ य ग्राम सभाओ के होने चाहियें। पचायती अदालत का मुख्य कार्यालय सरकार द्वारा नियत के द्र म होता है। य पचायतें महीने म जितने दिन आवश्यक हो काय करती है। इनके क्षेत्राधिकार म दीवानी, फौजदारी और माल तीना ही प्रकार के मुकदमे आत है। दीवानी मुकदमे उस क्षेत्र की पचायती अदालत म दायर किय जात है जिस क्षेत्र का प्रतिवादी रहन वाला हो। फौजदारी क मुकदमे उस अदालत म दायर

स्वामियो को सभी प्रकार की सूचना तथा शिकायतें भेजता रहे। वह मन्त्रि-परिषद् के समथन के लिए डिपाटमट के प्रतिनिधियो का मत प्राप्त करान म सहायक होता है। वास्तव म वह अपनी शक्तियो का प्रयोग अपन स्वामियो के हित म करता है। डिपाटमट के कमचारियो के अध्यक्ष के नाते वह डिपाटमट के अनक सदस्यो की नियुक्ति करता है, परिषद् के सामन आन वाल कायक्रम को तयार करता है, परिषद् के निणयो को काय रूप दता है, उसका बजट तैयार करता है और उसके चुनावो की दख रख करता है। प्रीफक्ट परिषद् के प्रति उत्तरदायी नहीं होता, एक प्रकार स वह तो उसका स्वामी होता है। यदि परिषद् और प्रीफक्ट म कोई मतभेद हो जाता है तो उसका निणय इन्टीरियर का मन्त्री करता है। प्रीफक्ट का पद बडे महत्त्व की सस्था है क्योकि सम्पूण स्थानीय शासन पद्धति उसके ऊपर लट्टू की तरह घूमती है। पेरिस म मन्त्रि-मण्डल आते हैं और चल जाते हैं परन्तु प्रीफक्ट और उनके अधीन अधिकारी सम्पूण प्रशासन सुचारु रूप म चलाते रहते है। फ्रास म कहावत है कि 'जो व्यक्ति फ्रास म जन्म लेता है, उसके लिए प्रीफक्ट सभी प्रकार के काय करता है। प्रीफक्ट अपनी जनता के पिता समान है।'

डिपाटमट की कौंसिल—कम्यून की तरह डिपाटमट भी स्थानीय शासन व राज्यीय प्रशासन दोनो का ही क्षेत्र है। दोनो के प्रशासन म अन्तर यह है कि डिपाटमट म प्रान्तीय प्रशासन कार्यालयो के साथ साथ केन्द्रीय मन्त्रालयो के भी विकेन्द्रीकृत कार्यालय हैं। जबकि डिपाटमट म प्रीफक्ट राष्ट्रीय सरकार का प्रतिनिधि होता है, स्थानीय कृत्यो के लिए एक जनरल कौसिल होती है। इस कौंसिल का सभापति प्रधान कहलाता है। ये कौसिलें अपनी रचना के आधार पर महत्त्वपूण सस्थाए है, किन्तु कृत्यो की दृष्टि स उनका महत्त्व बहुत कम है। वास्तव म उन्हे तो बहुत स मामलो म कवल विचार अथवा वाद विवाद का ही अधिकार है, वास्तविक शक्तियाँ तो प्रीफक्ट को ही प्राप्त हैं। कौसिल के सदस्यो का निर्वाचन केन्टनो म होता है। प्रत्यक कौसिल के सदस्यो की सख्या उसके अधीन केन्टनो की सख्या पर निभर करती है, क्योकि प्रत्यक केन्टन उसम एक प्रतिनिधि भेजता है। सबस बडी कौसिल म 67 सदस्य हैं और सबस छोटी म केवल 17। उन सभी का निर्वाचन एक ही प्रकार स होता है, जिसके आधार वयस्क मताधिकार, प्रत्यक्ष चुनाव और गुप्त मतदान हैं। अतएव, भारत की भाँति स्थानीय और राष्ट्रीय चुनावो के लिए मतदान समान है। सदस्यो की अवधि छ वष है, किन्तु आधे सदस्य प्रति तीन वष पश्चात् पदो से निवत्त होते हैं। यह उल्लेखनीय है कि बहुत स सदस्य डिपाटमट की कौंसिल के भी सदस्य रहते है।

कौसिल के प्रतिवष दो नियमित सत्र होते हैं और उनके विशेष सत्र भी बुलाये जा सकते है। यद्यपि कौसिल स आशा यही की जाती है कि वह डिपाटमट की विधायी व मननात्मक सस्था के रूप म काय करे, किन्तु वास्तव म इसके काय बहुत ही सीमित और कम महत्त्वपूण है। अधिकतर विषयो के बारे म कानून राष्ट्रीय ससद ही बनाती है। इसके अतिरिक्त इनके निणयो को राष्ट्रीय अधिकारी उलट सकते है। कौसिल तो केवल उन्ही विषयो पर वाद विवाद कर सकती है,[1] जिन्हे प्रीफक्ट उसके सामने रखवाता है। फिर भी यह वार्षिक बजट पास करती है, एरो डाइजमटो के बीच प्रत्यक्ष करो का वितरण करती है, प्रीफक्ट के लखो की जाँच करती है, सावजनिक भवनो व मार्गो की दख रेख करती है, और विभिन्न प्रकार के अध्यादेश जारी करती है। प्रमुख वास्तविक प्रशासन से उसका कोई सम्बन्ध नही, यह तो केवल इन विषयो से सम्बन्धित प्रशासनिक प्रश्नो पर ही विचार करती है। इसके ससद के उच्च सदन के सदस्यो के

[1] They discuss rather ... on n ... local concern their resolutions have the force of law ... nctio ... the work of the prefect and their own locally elected ex ... al ... France ...

जा सकता है—राजनीतिक तथा वित्तीय। राजनीतिक सरक्षण के दो पहलू है—विकेन्द्रीकृत निकायो के अधिकारियो व सेवको पर नियत्रण और उनके निर्णयो पर नियन्त्रण। वित्तीय सरक्षण के भी दो मुख्य पहलू हैं—बजट की स्वीकृति और स्थानीय निकायो के हिसाबो की जाच पडताल।

स्थानीय क्षेत्रो और अधिकारियो का द्वैध रूप—प्रत्येक डिपार्टमेंट और एरान्डाइजमेंट की स्थापना के दो मुख्य प्रयोजन है—एक ओर तो वे राष्ट्रीय कानूनो को लागू करने, न्यायिक प्रशासन, करो के वसूल करने आदि कार्यो के लिए राष्ट्रीय प्रशासन की इकाइया है, दूसरी ओर, वे स्थानीय शासन के क्षेत्र है, जिनकी अपनी स्थानीय परिषदे, अधिकारी, उप कानून, बजट आदि होते है। इनकी ही भाति इन क्षेत्रो के मुख्य अधिकारियो के अधिकारो व कृत्यो का भी दूहरा रूप है। एक ओर प्रीफेक्ट और उप प्रीफेक्ट अपने अपने क्षेत्र मे राष्ट्रीय प्रशासन के अधिकारी है, जो राष्ट्रीय कानूनो को लागू करते हैं और कर वसूल करते है। साथ ही साथ वे स्थानीय परिषदो के निर्णयो को भी कार्यान्वित करते है इस रूप मे वे उन सस्थाओ मे कार्यकारी अधिकारी है।

स्थानीय शासन का सगठन सक्षेप मे इस प्रकार है तीसरे गणतन्त्र मे तो प्रीफेक्ट अपने क्षेत्र मे केन्द्रीय सरकार का प्रतिनिधि होता था और साथ ही साथ वह डिपार्टमेंट के शासन का अध्यक्ष भी होता था। इस प्रकार उसके हाथो मे स्थानीय शासन की प्राय सभी शक्तिया केन्द्रित थी। प्रीफेक्ट की नियुक्ति इन्टीरियर मन्त्री की सिफारिश पर राष्ट्रपति द्वारा की जाती थी। वर्तमान सविधान के अनुसार प्रीफेक्ट की नियुक्ति मन्त्रिपरिषद् के आदेश द्वारा की जाती है। परन्तु व्यवहार मे पहले भी उसकी नियुक्ति इन्टीरियर मन्त्री द्वारा होती थी और अब भी होती है। प्रीफेक्ट एक प्रकार का स्थायी अधिकारी होता है, किन्तु उसका पद कुछ सीमा तक राजनीतिक है।[1] यद्यपि प्रीफेक्ट दलगत राजनीति मे भाग नही लेता किन्तु उसकी नियुक्ति मन्त्रियो के आज्ञापालन के अधिकार पर की जाती है। प्रीफेक्टो को साधारणत पद से नही हटाया जाता, किन्तु बहुधा नये शासन के पदासीन होने पर उनके तबादले होते रहते है।

अपने डिपार्टमेंट मे प्रीफेक्ट राष्ट्रीय शासन की सम्पूर्ण शक्तियो का प्रतिनिधि होता है। इस रूप मे वह क्षेत्रीय प्रशासन की देख रेख और उस पर नियत्रण करता है। शिक्षा, सार्वजनिक निर्माण कार्यों, सडको के बनवाने और पुलिस आदि के क्षेत्र मे उसकी शक्तिया बहुत ही विस्तृत होती हैं। सार्वजनिक सुरक्षा के क्षेत्र मे तो इसका भाग अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इन्टीरियर का मन्त्री सम्पूर्ण पुलिस पर नियन्त्रण रखता है। साधारण पुलिस व्यवस्था स्थानीय सस्थाओ के अधीन है, किन्तु उस पर प्रीफेक्ट का नियन्त्रण रहता है। उसकी पुलिस शक्तियाँ प्रेस, सार्वजनिक सभाओ, सार्वजनिक स्वास्थ्य आदि को नियमित करने वाले कानूनो के लागू करने तक सीमित है। वही जेलो और अस्पतालो की देख रेख करता है। अपने डिपार्टमेंट मे सैकडो अधीन कर्मचारियो, शिक्षको, कर वसूल करने वालो, अनेक प्रकार के इन्सपेक्टरो की नियुक्ति करता है। वह अपने अधीन कम्यूनो के प्रशासन की भी देख रेख करता है। कम्यूनो की परिषदो के वार्षिक बजट पर उसकी स्वीकृति प्राप्त की जाती है। वह कम्यूनो के कुछ अधिकारियो की नियुक्ति करता है और कम्यूनो के मेयरो या सदस्यो को निलम्बित भी कर सकता है।

राष्ट्रीय सरकार का क्षेत्र मे प्रतिनिधि होने के नाते उसका यह भी एक महत्त्वपूर्ण कार्य है कि वह शासन का समर्थन करे और उनके मतो के प्रचार मे भी सहायक हो और उनके

[1] An outstanding expert has described them as being essentially political agents whose business is to support and spread the opinions and wishes of the government through the whole administration —Neumann R G, *European and Comparative G*... p 300

प्रशासन का अध्यक्ष होता है। प्रथम रूप में वह अपना कृत्य का स्वतन्त्र रूप में, कम्यून कौंसिल के प्रति बिना किसी उत्तरदायित्व के करता है। इस क्षेत्र में उसके ऊपर उप प्रीफेक्ट और प्रीफेक्ट का नियन्त्रण होता है। इस रूप में वह सरकारी प्रादेश, आदेश आदि को लागू करता है, जनगणना, निर्वाचन सूची तैयार कराना, शिक्षा आदि की देख रेख करना भी उसके कृत्य हैं। कम्यून का मुख्य अधिकारी होने के नाते वह कौंसिल की बैठकों का सभापतित्व करता है, रिपोर्ट तैयार करता है, म्युनिसिपल सेवाओं का प्रबन्ध करता है और कौंसिल की स्वीकृति के लिए बजट तैयार करता है। मेयर के नीचे सहायक मेयर होते हैं और स्थायी उच्च अधिकारियों में साधारणतया एक सक्रेटरी जनरल और एक उप सक्रेटरी जनरल। सक्रेटरी-जनरल के अधीन ये विभाग रहते हैं—कानूनी, आर्थिक म्युनिसिपलिटी के उद्यम, वित्त और सम्पत्ति। म्युनिसिपल प्रशासन के अन्य विभाग जैसे रिकार्ड, पुलिस, सांस्कृतिक, सामाजिक और जन स्वास्थ्य उप सक्रेटरी जनरल के अधीन रहते हैं।

पेरिस का म्युनिसिपल शासन—अन्य देशों की भाँति देश की राजधानी अर्थात् पेरिस का स्थानीय शासन विशेष ढंग का है। वास्तव में पेरिस राजनीतिक, बौद्धिक और आर्थिक क्षेत्रों में देश का नेता है वैसे तो पेरिस भी एक कम्यून है, किन्तु अपने विशेष महत्त्व के कारण इसका शासन भिन्न है। पेरिस अथवा सीन के डिपार्टमेन्ट का शासन दो प्रीफेक्टों में विभक्त है। इनमें से एक प्रीफेक्ट तो अन्य प्रीफेक्टों की भाँति डिपार्टमेन्ट का अध्यक्ष होता है और दूसरा प्रीफेक्ट पुलिस का प्रमुख होता है। अतएव उसके मुख्य कृत्य शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना है। पेरिस बीस एरोन्डाइजमेन्टों में बँटा है, प्रत्येक का अध्यक्ष मेयर कहलाता है। परन्तु चूँकि इन मेयरों की नियुक्ति इण्टीरियर के मन्त्री की सिफारिश पर मन्त्रि परिषद् द्वारा की जाती है अतः वे उप प्रीफेक्टों के समान होते हैं। पेरिस की एक नगर परिषद् (city council) भी है, जिसमें 84 सदस्य हैं। *यही डिपार्टमेन्ट की जनरल कौंसिल के काय भी करती है। इसके सदस्यों को वेतन मिलता है,* क्योंकि उनका पद पूरे समय काय का है। परन्तु इस कौंसिल की शक्तियाँ भी सीमित ही हैं।

स्थानीय शासन की समालोचना—विभिन्न लेखकों ने इस पद्धति के पक्ष और विपक्ष में कई युक्तियाँ दी हैं, जो संक्षेप में अग्रलिखित है—पक्ष में—(1) करदाताओं के हितों की रक्षा के लिए केन्द्रीय सरकार का बड़ा नियन्त्रण उपयोगी है, जिससे कि अपव्यय न हो, (2) केन्द्रीय सरकार को अपने कानूनों को कार्यान्वित कराने के लिए स्थानीय अधिकारियों पर नियन्त्रण रखना चाहिए, और (3) स्थानीय शासन का रूप सभी भागों में एक सा है, अतएव नागरिकों के लिए वह सीधा और सरल है। निःसन्देह स्थानीय शासन पद्धति में स्वभावतः महत्त्व और जीवन दोनों ही है। यह ऐसे देश की आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त है जहाँ राष्ट्रीय सरकार स्थानीय अधिकारियों पर अत्यधिक नियन्त्रण रखना चाहती है। फ्रांस की प्रीफेक्ट व उप प्रीफेक्ट की योजना, बेल्जियम, हालैण्ड, ग्रीस, इटली व दूर तथा निकट पूर्व के देशों तक फैल गयी है।

विपक्ष में—(1) इस पद्धति का आधार नौकरशाही है और यह प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों के विरुद्ध है, क्योंकि नागरिकों को स्थानीय क्षेत्र में भी स्वशासन के पर्याप्त अधिकार प्राप्त नहीं है, (2) केन्द्रीय सरकार पर काय भार अत्यधिक है, (3) स्थानीय मामलों पर केन्द्रीय सरकार के अत्यधिक नियन्त्रण के फलस्वरूप स्थानीय जनता के पहल (initiative) पर कठोर रोक लगी है, (4) स्थानीय शासन पर राष्ट्रीय सरकार के मन्त्रिमण्डलों की अस्थिरता का बुरा प्रभाव भी पड़ता है, और (5) देश की राजनीति *इन कारणों से अपेक्षाकृत अधिक मन्दी है। अन्त में, यह प्रश्न* उठना स्वाभाविक है कि यह पद्धति क्यों प्रचलित है? इसके उत्तर में ये बातें दी जा सकती है—(1) मन्त्री और अधिकारीगण अपनी शक्तियों में कमी नहीं चाहते, (2) फ्रेंच जनता इसे सहन *करती आ रही है,* और (3) *आलोचक* किसी सुधार योजना पर सहमत नहीं है।

चुनाव म भी भाग लेते हैं। प्रीफैक्ट के नीचे प्रमुख कायकारी अधिकारी सेक्रेटरी-जनरल होता है। डिपाटमट का प्रशासन कई विभागो म बँटा रहता है यथा पुलिस, वित्त, सावजनिक सहायता, आर्थिक और सामाजिक कृत्य। प्रत्येक विभाग का एक मुख्य अधिकारी होता है। डिपाटमेंट साधारणतया इन सेवाओ का सचालन करते हैं—सैनिक मामलो और नागरिक रक्षण की ब्यूरो, डिपाटमेंट का बुलेटिन, पशु चिकित्सा, भवन निर्माण, पानी की व्यवस्था, अग्नि से रक्षा और आपात्कालीन सहायता, व्यावसायिक योग्यताओ का नियन्त्रण, जन स्वास्थ्य, प्रयोगशालाएँ, शिशु और परिवार की रक्षा, सावजनिक गृह निर्माण इत्यादि।

एरो डाइजमेंट—प्रत्येक डिपाटमेंट कई एरो डाइजमट मे बँटा होता है और प्रत्येक एरो डाइजमट म कई केन्टन होते है। इन उप विभागो का प्रशासन की दृष्टि से महत्त्व बहुत कम है। प्रत्येक एरो डाइजमेंट का अध्यक्ष एक उप-प्रीफक्ट होता है और प्रत्येक की अपनी एक निर्वाचित कौंसिल होती है। केन्टनो का अपना कोई नागरिक जीवन नही है, केन्टन तो केवल एरो डाइजमेंट के किसी बडे नगर के पडोसी क्षेत्र का केन्द्र होता है, उस नगर मे अनेक सरकारी कमचारियो के निवास व दफ्तर का केन्द्र होता है। एरो डाइजमट की कौंसिल के कृत्य नाममात्र के है। यह न कोई कानून बनाती है और न बजट पास करती है। कुछ समय पूर्व तक यह कौंसिल कम्यूनो म डिपाटमट के करो के कोट नियत करा सकती थी, परन्तु अब उससे यह काय भी छीन लिया गया है। तीसरे गणतन्त्र मे कौंसिलो के सदस्य सीनेटरो के चुनाव मे भाग लते थे।

म्युनिसिपल शासन अर्थात् नगरो, कस्बों व गावो का शासन—म्युनिसिपल शासन की इकाइया कम्यून है जिनका स्थानीय शासन म बडा महत्त्व है। कम्यूनो की सख्या 38,000 म कुछ ऊपर है, वे क्षेत्र और जनसख्या म एक दूसरे से भिन्न है। कुछ तो बहुत छोटे और कुछ बडे बडे नगर हैं। प्रत्यक कम्यून की एक निर्वाचित कौंसिल होती है। 500 तक की जनसख्या वाले कम्यून की कौंसिल म 11 सदस्य होते हैं, अधिक जनसख्या वाले नगरो की कौंसिलो की सदस्य सख्या अनुपात म बडी होती है। 60 हजार और अधिक जनसख्या वाले नगरो की कौंसिलो म 37 सदस्य होते है, किन्तु पेरिस कम्यून इसका अपवाद है। इन कौंसिलो की रचना, उनका सगठन आदि कानूनो द्वारा निर्धारित है। इनके सदस्यो का चुनाव भी डिपाटमटो की कौंसिलो की भाति होता है केवल अन्तर यह है कि इनकी अवधि चार वष है और इन सभी का निर्वाचन एक साथ होता है। कौंसिल के सदस्य अपने म से एक मेयर और एक से लेकर बारह तक सहायक मेयर चुनते हैं, जिनकी अवधि कौंसिल के ही समान है। मेयर, सहायक मेयर और कौंसिल के सदस्य मिलकर कम्यून के शासन को चलाते हैं।

दखन म कौंसिल की शक्तियाँ व्यापक और विस्तृत हैं। इन्हें कम्यूनो के सभी मामलो पर विचार करने और स्थानीय हितो पर मत देने के अधिकार प्राप्त हैं। परन्तु वास्तव में इसकी शक्तिया भी कम और सीमित हैं। प्रथम तो कौंसिल केवल मननात्मक निकाय है, वे [illegible] अधिकार नहीं रखती। प्रशासन काय मेयर और सहायक मेयर करते हैं। वे कौंसिल के [illegible] होते हैं किन्तु कौंसिल उनसे अपनी इच्छाओ का पालन कराने म असमर्थ होती [illegible] कौंसिल प्रशासन काय पर नियन्त्रण नहीं रखती। दूसरे, कुछ महत्त्वपूर्ण विषयो में [illegible] तभी कार्यान्वित हो सकते हैं जबकि उन पर उच्च अधिकारियो की स्वीकृति [illegible] पुलिस और शिक्षा आदि म उच्च अधिकारियों (प्रीफैक्ट डिपार्टमेंट [illegible] अधिकारी) को कौंसिल के निर्णयो पर प्रतिषेध (veto) की शक्ति प्राप्त है। [illegible] पानी-व्यवस्था, आग से रक्षा आदि का प्रबन्ध जनक महत्त्वपूर्ण कार्य हैं [illegible] शक्तियाँ मेयर के हाथ म हैं। इन नगरो के मेयरो का [illegible] काय प्रीफैक्ट की भाँति ही प्रकार के होते हैं—वह केन्द्रीय सरकार [illegible]

विभाग देख रख करत है। इन विभागा म य हैं—स्वायत्तता, शिक्षा और कल्याण के मन्त्रालय। दूसरे समूह के कार्यों के सम्बन्ध म प्रत्येक स्थानीय इकाई विधायी और कार्यपालक दोनों ही प्रकार के काय करती हैं। स्थानीय शासन की संस्थाओं क अन्तगत न्यायिक संस्थाएँ नहीं हैं, न्याय-प्रशासन का कार्य राष्ट्रीय सरकार क अधीन है। स्थानीय शासन की संस्थाएँ पूणतया केन्द्रीय सरकार की दया पर नहीं हैं। उनसे सम्बन्धित कानून क अनुसार उनका सम्बन्ध इन कार्यों स है—सावजनिक व्यवस्था बनाये रखना, सावजनिक स्वास्थ्य की रक्षा, पार्कों, खेल क मैदानों नहरों, सिंचाई व्यवस्था, बिजली, गैस, सावजनिक परिवहन, डाकखाना, स्कूलों, पुस्तकालयों, अस्पतालों, संग्रहालयों, वृद्धों क लिए शरणभवनों, जेलों, मुर्दाघाटों, पीडितो की सहायता, निवासियों का रजिस्ट्रेशन, अन्य स्थानीय संस्थाओं क कार्यों म समन्वय स्थापित करना, स्थानीय कर लगाना और उन्हें एकत्रित कराना इत्यादि।

स्थानीय सभायें—प्रीफेक्चरो की सभाओं का आकार कानून द्वारा निर्धारित है, उनमे जनसख्या के आधार पर 40 और 120 के बीच म सदस्य होते हैं। नगर सभाओं के सदस्यों की सख्या भी कानून द्वारा 10 और 100 के बीच निर्धारित है। प्रीफेक्चरों की एसम्बलियों और नगरों की कौंसिलों के सदस्यों का 4 वष की अवधि के लिए चुनाव होता है, परन्तु उन्हें क्रमश गवनर व मेयर विघटित कर सकते हैं। सदस्यों का मतदाताओं द्वारा प्रत्यावर्तन भी हो सकता है, जो सम्पूर्ण निकाय के विघटन की भी माँग कर सकते हैं। स्थानीय निकाय स्थानीय स्वायत्तता कानून म प्रगणित विषयो के बारे में उप विधियाँ बना सकते हैं, क्योंकि विधियाँ (कानून) तो केवल राष्ट्रीय डायट ही बना सकती है। गवनर या मेयर सम्बन्धी निकाय द्वारा पारित उप विधि पर प्रतिषेध का अधिकार रखते हैं परन्तु सम्बन्धित निकाय इस प्रकार से प्रतिषेधित उप विधि को 2/3 के बहुमत से प्राप्त कर सकता है।

गवनर और मेयर भी अपनी अपनी निकाय के मतदाताओं द्वारा चार वष की अवधि के लिए चुने जाते हैं। उन्हें मतदाता प्रत्यावर्तन द्वारा पद से हटा सकते हैं तथा सम्बन्धित सभा के सदस्य अविश्वास क प्रस्ताव द्वारा भी उन्हें अपदस्थ किया जा सकता है। स्थानीय स्वायत्तता कानून म व्यवस्था है कि गवनर राष्ट्रीय सरकार के अग रूप म काय करते हुए क्षमता प्राप्त केबिनेट मन्त्री के निदेशन और देख रेख के अधीन रहता है। ऐसे ही मेयर, जबकि वह राष्ट्रीय सरकार के लिए काय करता है, क्षमता प्राप्त मन्त्री और प्रीफेक्चर व गवनर के निदेशन और देख रेख के अधीन रहता है। इस प्रकार स्थानीय मुख्य कायपालिकाओं को दो स्वामियों की सेवा करनी पडती है, क्योंकि व राष्ट्रीय मामलों म राष्ट्रीय सरकार के अभिकर्ता क रूप म काय करते है और स्थानीय मामलों म व स्थानीय शासनों क अधिकारियों के रूप म काय करते हैं। इस दृष्टि से जापानी गवनर अमरीकी गवनर से बहुत भिन्न है जिसे राष्ट्रीय प्रशासन का अधिकार नहीं होता।[1]

परन्तु केन्द्रीय सरकार अब भी स्थानीय शासन की संस्थाओं पर किसी न किसी रूप म विस्तृत प्रभाव डालती है। यद्यपि गृह मन्त्रालय का 1947 म अन्त हो गया, 1949 म स्थापित स्थानीय स्वायत्तता अभिकरण ने गृह मन्त्रालय के कुछ काय अपने हाथ म ले लिये हैं। यह गवनरों और अन्य अधिकारियों का निदेश देती है स्थानीय अधिकारियों की टोक्यो म मीटिंग बुलाती है, उनके लिए आदश कानून के प्रारूप तयार करती है और उन्हें स्थानीय समस्याओं के विषय म परामश देती है। एक लेखक के मतानुसार स्थानीय शासन की संस्थाओ द्वारा अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त न कर सकने क अग्रलिखित कारण हैं (1) अभी जापान के लोगों म समुदाय का विचार

[1] McNelly T Contemporary Government of Japan p 160

6 जापान में स्थानीय शासन

जबकि पूर्वगामी स्थानीय शासन की प्रमुख विशेषता उच्च मात्रा में केन्द्रीकरण और स्थानीय शासन की संस्थाओं पर अनेक बातों में केन्द्रीय नियंत्रण था वर्तमान संविधान के लागू होने से जापान में विकेन्द्रित स्थानीय शासन स्थापित हुआ है। 1947 में ही स्थानीय शासन की संस्थाओं पर गृह मंत्रालय के नियंत्रण का अंत हो गया था। तब से जापान में उच्च वर्ग के एकात्मक पुलिस राज्य के स्थान पर स्वशासित प्रीफेक्चरों की विकेन्द्रित इकाइयों के समूह की स्थापना हुई।[1] नये संविधान में स्थानीय स्वायत्तता पर बल दिया गया है। संविधान में स्थानीय स्वशासन सम्बन्धी धारायें दी गयी है। धारा 93 में कहा गया है कि स्थानीय सार्वजनिक निकाय कानून के अनुसार एसेम्बली कायम करेगी, जो उनके मननात्मक अंग होंगे। सभी स्थानीय सार्वजनिक निकायों के मुख्य कार्यपालिका अधिकारी, उनकी एसेम्बलियों के सदस्य और कानून द्वारा निर्धारित अन्य स्थानीय अधिकारी लोकप्रिय आधार पर स्थानीय समुदायों द्वारा चुने जायेंगे। धारा 94 के अनुसार स्थानीय सार्वजनिक निकायों को अपनी सम्पत्ति, मामलों और प्रशासन के प्रबंध का अधिकार होगा और ये कानून के भीतर अपने विनियम बना सकेंगे। स्थानीय स्वायत्तता को बनाये रखने के उद्देश्य से संविधान में एक प्राविधान यह भी है कि डायट किसी एक स्थानीय सार्वजनिक निकाय में लागू होने वाला कोई विशेष कानून उस स्थान के मतदाताओं के बहुमत की सहमति के बिना न बना सकेगी।

स्थानीय शासन की संस्थाओं पर मतदाताओं को और भी अधिक नियन्त्रण का प्रयोग करने के लिए अग्रलिखित विधियाँ अपनायी गयी है—(1) कानून द्वारा निर्वाचित अधिकारियों को वापस बुलाने (recall) की शक्ति स्थापित हुई है। इस प्रकार मतदाताओं को गवर्नरों, मेयरों और सदस्यों को उनके पदों से हटाने की शक्ति मिली है। ये स्थानीय एसेम्बलियों का विघटन करा सकते हैं और कुछ अधिकारियों को उनके पदों से हटा भी सकते हैं। (2) नागरिकों को प्रस्तावाधिकार (initiative) की शक्ति मिली है और वे विहित पगों पर चलकर एसेम्बली को कानून बनाने, उनमें परिवर्तन करने या उन्हें हटवाने के लिए विवश कर सकते है। (3) सार्वजनिक निकायों द्वारा नागरिकों के विरुद्ध किये गये अवैध कार्यों के लिए नागरिक उनके विरुद्ध नागरिक कार्यवाही कर सकते है। (4) नागरिकों को अब यह अधिकार मिला है कि वे स्थानीय अधिकारियों के विरुद्ध गलत कार्य करने के लिए कानूनी कार्यवाही कर सकते हैं।

स्थानीय शासन पद्धति का आधार अप्रैल 1947 में पास किया गया स्थानीय स्वायत्तता कानून (Local Autonomy Law, 1947) है। इस समय (होकेडो को छोड़कर सम्पूर्ण) देश 49 प्रीफेक्चरों (टोकियो के राजधानी नगर सहित) में बँटा है। प्रत्येक प्रीफेक्चर, नगर, कस्बे और गाँव में एक प्रतिनिधि सभा है जिसके सदस्यों का निर्वाचन वे ही मतदाता करते हैं जो संसद के सदस्यों को चुनते हैं। प्रशासन की इकाइयाँ अक्टूबर 1964 में इस प्रकार थी—प्रीफेक्चर 36 ग्रामीण जिले 575, नगर 559, कस्बे 1989 और गाँव 850।

जापान में स्थानीय शासन की इकाइयों के कार्य इस प्रकार है—(1) कुछ राष्ट्रीय कानूनों को लागू करना, और (2) अपने स्थानीय क्षेत्र के लिए स्थानीय संस्थाओं द्वारा कानून बनाना तथा उन्हें लागू करना। प्रथम समूह के कार्यों को करने में, उनके ऊपर राष्ट्रीय सरकार के प्रबन्ध—

---

[1] Self government at local levels (Chiho Jiji) along the lines of home rule ... American state constituted one of the most drastic alternations of pre-... been effected by conversion from a highly unitary police state to ... of self governing prefectures —Linebarger et al *Far Eastern Government ... China and Japan* pp 503-04

सदस्या की सख्या कही कही तो 100 तक होती है। इनम पूण सदस्या के अतिरिक्त कुल सख्या के 1/3 उम्मीदवार सदस्य भी होत हैं। इस प्रकार इनकी सदस्य सख्या अधिक बडी है। इन सावियता म भी एक प्रधान या सभापति, एक प्रेसीडियम और कायसमिनि और अनक समितियाँ होती हैं। प्रधान का भाग प्रशासन म अधिक महत्वपूण रहता है। इन सावियता की स्थायी समितिया का सम्बध साधारणतया इन विषया स होता है—सावजनिक शिक्षा, सावजनिक स्वास्थ्य, स्थानीय उद्योग, शहरी आर्थिक व्यवस्था, व्यापार और वित्त। बडी सोवियता म न्याय, सास्कृतिक कायक्रम आदि अन्य मामला के लिए भी स्थायी समितियाँ होती हैं। इनके प्रशासन सचालन के लिए बहुत बडी सख्या म कमचारी होत हैं। सावियता का अपन क्षेत्र म अनेक शक्तियाँ प्राप्त हैं, किन्तु उनका प्रयाग भी उच्चतर शासन के प्रतिनिधिया / अधिकारियो के निरन्तर रोकथाम के अन्तगत होता है। फिर भी शहरी सोवियतें काफी कायशील हैं और अपन क्षेत्र म उनके कार्यों की अन्य देशा की अनक स्थानीय सस्थाआ स अच्छी प्रकार तुलना की जा सकती है।

ग्रामीण सोवियतें—सोवियत सघ अभी तक मुख्यत गाँवा का देश है। यहाँ पर ग्रामा की सख्या लाखो म है और उनम स बहुत बडी सख्या अच्छे बडे ग्रामा की है। छोट ग्रामा म मतदाता वप म 6–8 बार एकत्रित होते और समुदाय की समस्याआ पर विचार तथा निणय करत हैं। तीन वप म एक बार व अपने अधिकारिया व कमचारिया को भी नियुक्त करते हैं। कुछ छोटे ग्रामा म इस प्रकार की सभायें पहले से चली आ रही हैं। बडे ग्रामा म अपनी सोवियतें होती हैं, जबकि छोटे ग्रामा के समूहा के लिए सयुक्त सोवियतें बनायी जाती हैं। इनम भी सदस्य मतदाताओं द्वारा चुन जाते हैं और सदस्यो के साथ साथ 1/3 उम्मीदवार सदस्य भी होते हैं। इन सोवियता को भी अपने क्षेत्र म बडी सत्ता प्राप्त है और य सावियतें ग्रामो के लिए अनेक काय करती हैं। परन्तु व्यवहार म अधिकतर सोवियतें अपनी विस्तृत शक्तिया का प्रयोग नही करती। प्रत्येक सोवियत एक प्रधान, एक सेक्रेटरी और अन्य अधिकारी चुनती है। प्रत्यक सावियत एक कायकारिणी समिति भी नियुक्त करती है और उसके अतिरिक्त अन्य समितियाँ भी जिनका सम्बन्ध सावजनिक शिक्षा, सावजनिक स्वास्थ्य, वित्त, व्यापार, स्थानीय उद्योग कृषि आदि स होता है।

आलोचना—पाश्चात्य लेखको के अनुसार विभिन्न स्तरा की सोवियतो द्वारा केन्द्रीय सोवियत के अतिरिक्त, नीति निर्धारण का काम बहुत कम होता है। विभिन्न स्तरो के निकाया का मुख्य काय उच्चतम स्तर पर निर्धारित नीति को कार्यान्वित करना तथा स्थानीय समस्याओ का हल करना है। परन्तु एक दलीय अधिनायकशाही म उन्ह अपने स्थानीय मामलो के क्षेत्र म भी पर्याप्त स्वतन्त्रता नही हो सकती। सभी स्तरो पर दिखावे म सासद पद्धति को अपनाया गया है और कायकारिणी निकायो को अपनी अपनी सोवियत के प्रति उत्तरदायी बनाया गया है। सघात्मक सिद्धान्त का भी दिखाव म पालन किया गया है, किन्तु किसी भी सोवियत क निणयो को उच्चतर सोवियत रद्द कर सकती है।[1]

(2) चीन—1954 के सविधान के अनुसार प्रादशिक व स्थानीय शासन क विभिन्न स्तरा पर जन काग्रेस और जन परिषदें हैं। साधारणतया उनकी रचना का नमूना वही है जैसा कि राष्ट्रीय जनवादी काग्रेस और राज्य परिषद् का है। प्रत्येक स्तर पर स्थानीय काग्रेस राज्य सत्ता का स्थानीय अग है। उसी स्तर की परिषद् उसके प्रति उत्तरदायी है।[2] सबसे नीचे के स्तर—ग्रामीण

[1] Beukema et al *Contemporary Foreign Governments*, p 355

[2] The Governments of all these units are remarkably uniform throughout the country and are organized as smaller replicas of the central government That is to say each has a People s Congress and a People s Council the latter being elected by the former and nominally responsible to it —*Ibid*, p 84

वहुत कम विकसित हो पाया है, जिसके परिणामस्वरूप नागरिक गौरव का स्तर बहुत गिरा हुआ है। यह राजनीतिक उदासीनता की समस्या का ही अगमात्र है। (2) स्थानीय अधिकारी परम्परा और आदत के अनुसार समस्याओ के निराकरण हेतु स्वय पहल नही करते, वे अभी तक केन्द्रीय शासन के नेतृत्व की ओर देखते है। (3) ऐसी अनेक समस्यायें है यथा सामाजिक सुरक्षा, बेकारी, आर्थिक नियोजन आदि जिनको स्वभावत राष्ट्रीय स्तर पर ही हल किया जाना उचित है। (4) स्थानीय शासन की सस्थाओ के वित्तीय स्रोत भी बहुत सीमित है। आर्थिक सहायता के साथ केन्द्रीय नियन्त्रण भी लागू होना स्वाभाविक है।[1]

स्थानीय शासन की कार्याङ्ग और विधायी शाखाओ के अतिरिक्त प्रीफेक्चरो के स्तर पर और बहुधा नगरो के स्तर पर भी शिक्षा की बोर्ड, सार्वजनिक सुरक्षा के कमीशन, जाच कमीशन, कार्मिक (personnel) कमीशन आदि होत हैं। साधारणतया उनके सदस्यो की नियुक्ति गवर्नर व मेयर द्वारा की जाती है, परन्तु उस स्थानीय सभा या कौसिल की स्वीकृति ली जाती है। स्थानीय स्वायत्तता कानून म प्रस्तावाधिकार, प्रत्यावर्तन और लोक निर्णय की व्यवस्था है इनका प्रयोग स्थानीय निकायो के मतदाता करते हैं। स्थानीय निकाय के मतदाताओ म क 1/50 उमके समक्ष किसी प्रस्ताव के रखने की माग करते ह। 1/3 मतदाताओ के हस्ताक्षरो द्वारा मतदान के आधार पर स्थानीय मुख्य कार्यपालको, कार्यपालक अधिकारियो और स्थानीय सभा या कौसिल के सदस्यो को वापस बुलाया जा सकता है।

7 साम्यवादी राज्यो मे स्थानीय शासन

(1) सोवियत सघ—जार-कालीन रूस का प्रशासन हतु प्रान्तो, काउन्टियो या केन्टनो और ग्रामीण जिला म बाटा हुआ था। साम्यवादी शासको न स्थानीय शासन का बडी मात्रा म पुनगठन किया है। अधिक्तर गणराज्यो म गाव और शहरो की म्युनिसिपल सोवियतो म ऊपर रायोन (raion) या जिल है, जिनके ऊपर रूसी और युक्रेनियन जस गणराज्यो म आब्लास्ट ह। साधारण तया रायोन म 20-25 गाव की सोवियतो का क्षेत्र और कुछ म एक से लकर तीन तक शहरी सोवियतो के क्षेत्र आते हैं। रायोन सोवियत के सदस्य मतदाताओ द्वारा चुने जाते है और उनकी अवधि तीन वर्ष है। साधारण नियम यह है कि प्रति 1,000 व्यक्तियो के पीछे एक प्रतिनिधि चुना जाता है, कुल प्रतिनिधियो की सख्या कम से कम 25 और अधिक से अधिक 60 होती है।

रायोन के शासन का सगठन—उसकी सोवियत का सगठन ऊपर वर्णित अन्य निकायो की सोवियतो जैसा है। उनका एक प्रधान या सभापति, प्रेसीडियम या कार्यकारिणी समिति, एक मन्त्री और कई स्थायी समितिया होती हैं। प्रधान बहुत सा प्रशासनिक काय करते हैं। रायोन के प्रशासन को चलाने के लिए कम या अधिक सरकारी नौकर होते हैं। बडे रायोनो म विभाग भी रखे जाते हैं। रायोनो को गाव व शहरी सोवियतो पर नियन्त्रण के काफी अधिकार हैं तथा अपने क्षेत्र (जिले) से सम्बन्धित मामलो के बारे म भी सत्ता प्राप्त है। सिद्धान्त रूप म वे अपने क्षेत्र म प्राय सभी कुछ कर सकते हैं, किन्तु व्यवहार म वे भी अन्य सोवियतो की तरह उच्चतर सोवियतो के अधीन हैं।[2] उसके बजटो पर ऊपर के अधिकारियो की स्वीकृति प्राप्त की जाती है।

शहरी सोवियतें—म्युनिसिपल सोवियतो म जनसख्या के अनुसार सदस्य होते हैं, किन्तु

[1] Kahin G M (ed) *Major Governments of Asia* p 185

[2] theoretically there is virtually nothing that they cannot do within the ... and in the last ... the raion However the same rule applies here as elsewhere, and the superior ... may act only in so far as what they do is acceptable to the ... Communist party —Ogg and Zink *Modern Foreign Governments* ...

सभी स्तरो पर एक समान है। चेयरमन, कई वाइस चेयरमन और बहुत से साधारण सदस्य होते हैं, पर तु उनके नाम अथवा उपाधियों म अ तर है। प्रा त म उन्ह गवनर और डिप्टी-गवनर कहते हैं, म्युनिसिपलिटी स मेयर और डिप्टी मेयर काउ टी म मजिस्ट्रेट और डिप्टी मजिस्ट्रेट तथा ग्रामीण जिल व कस्बे म वे हैड व डिप्टी हैड कहलाते हैं। प्रत्येक परिषद् व तत्सम्बन्धी काग्रेस का कायकाल एक ही होता है—प्रान्तीय परिषद् का 4 वर्ष और अ य सभी का 2 वर्ष। स्थानीय परिषदो के आकार म स्तर और भूमिगत इकाई के अनुसार भिन्नता है। प्रान्तो व केन्द्रीय शासन के प्रत्यक्ष अधीन परिषदो की सख्या 25 स 55 तक है, काउन्टी परिषदो की 9 स 31 तक, साधारण म्युनिसिपलिटियो म 9 स 21 तक, जिला व कस्बा म 3 स 13 तक। काउन्टी और प्रा तीय स्तरो की परिषदो की बठक कम स कम महीने म एक बार होती है और नीचे के स्तर पर महीने म दो या अधिक बार होती है।

परिषदों के काय और उनकी शक्तियाँ—वे कानून द्वारा विहित सीमा के भीतर अपने अधीन अधिकार क्षेत्रो का प्रशासन करती हैं। य तत्सम्बन्धी स्तरो की काग्रेसो के निणयो को लागू करती हैं और साथ ही उच्च स्तरीय राज्य के प्रशासनिक अगो के निणयो व आदेशो को भी लागू करती है। कानून द्वारा विहित सत्ता की सीमाओ के भीतर स्थानीय जन-परिषदें निणयो व आदेशो को जारी करती है। वे योजनाओ को स्वीकार कर सकती हैं तथा उनकी परीक्षा कर सकती हैं। परिषदें ही काग्रेसो का चुनाव कराती हैं, उसके अधिवेशन बुलाती हैं और उसके सामने प्रस्ताव अथवा विधेयक पेश करती हैं। जिन दिनो काग्रेस का अधिवेशन नही होता, परिषद् निणय और आदेश जारी करती है और काग्रेस के प्रस्तावो तथा राज्य के उच्चतर अगो के निदेशो के पालन हेतु पग उठाती है। वह नीचे के स्तर की परिषद् के काय का निदेशन करती है और यदि उन्ह अनुचित समझे तो वह उनके निणयो व आदेशो को रद्द कर सकती है। वह नीचे के स्तर की काग्रेस द्वारा पास किये गये प्रस्तावो पर कायवाही को निलम्बित भी कर सकती है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि काग्रेसो की तुलना म नीचे स ऊपर तक परिषदो की शक्तियाँ अधिक महत्त्वपूण हैं। उनके कार्यों और शक्तियो के विवचन से स्पष्ट है कि अपने अपने क्षेत्र म शासन के प्रभावी अग परिषदे हैं न कि काग्रेस।[1] पर तु सविधान की धारा 66 म स्पष्ट रूप स कहा गया है कि स्थानीय जन परिषद तत्सम्बन्धी स्तरो की जन-काग्रेसो के प्रति उत्तरदायी है। साथ ही वे उच्च स्तरो पर राज्य के प्रशासनिक अगो के प्रति भी उत्तरदायी हैं। वे अपने कार्यों की रिपोट तत्सम्बन्धी काग्रेसो व उच्च स्तरीय प्रशासनिक अगो के सामने रखती हैं। देश भर म सभी स्थानीय जन परिषदे राज्य के प्रशासनिक अग हैं और व सभी राज्य परिषद् के एकीकृत नेतृत्व क अधीन है। शासन के इन अगो के सगठन व कायप्रणाली से स्पष्ट है कि व प्रजातन्त्रात्मक केन्द्रीकरण के सिद्धान्त पर आधारित है।

(3) यूगोस्लाविया—नागरिको के स्वशासन का आधारभूत राजनीतिक सगठन कम्यून है। कम्यून ही आर्थिक तथा अन्य विकास कार्यों का माध्यम है, जो कि नागरिको की भौतिक, सामाजिक, सास्कृतिक और अन्य आवश्यकताओ के अधिकतम सन्तोष के लिए आवश्यक दशाओ की रचना करन के लिये उत्तरदायी है। कम्यून म ही प्रजातन्त्रात्मक स्वशासन के आधारभूत रूप मिलत है, जो कि नागरिको को सभी सावजनिक मामलो म भाग लेने की प्रत्याभूति देते है, कानून के रक्षण, वैयक्तिक स्वतन्त्रताओ और अधिकारो से सावजनिक उपयोगिता के कार्यों के सचालन

[1] The functions and powers assigned to the local councils show clearly that it is they rather than the local congress which are the effective agencies of government within their respective territories —Tang Peter S H *Communist China Today* p 195

जिला, राष्ट्रीय ग्रामीण जिला, कस्बा, म्युनिसिपल जिला, जिले के बाहर म्युनिसिपलिटी—पर काग्रेस के सदस्य अथवा प्रतिनिधि मतदाताओ द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुने जाते है। परन्तु प्रत्येक उच्चतर स्तर पर उनका चुनाव ठीक नीचे के स्तर की काग्रेसो द्वारा होता है। वतमान निर्वाचन कानून के अन्तगत प्रत्यक स्तर पर काग्रेस का आकार (अर्थात् सदस्यो की सख्या) उस प्रशासनिक इकाई की जनसख्या के अनुसार भिन्न होता है। उदाहरण के लिए 2,000 जनसख्या वाले ग्रामीण जिले या कस्बे की काग्रेस म 20 सदस्य होते है, अन्य काग्रेसा की सख्या 7 स 50 तक हो सकती है। काउन्टी के स्तर पर काग्रेस के सदस्या की सख्या 30 से 450 तक हो सकती है—2 लाख जनसख्या वाली काउन्टी की काग्रेस म 200 सदस्य होते है। प्रान्तीय काग्रेस म कम से कम 50 और अधिक से अधिक 600 सदस्य होते है। दो करोड जनसख्या वाले प्रान्त की काग्रेस मे 400 सदस्य होते है। म्युनिसिपलिटिया म सदस्या की सख्या 50 से लेकर 800 तक हो सकती। प्रत्यक काग्रेस म कुछ स्थान सशस्त्र सेनाओ के प्रतिनिधियो के लिये होते हैं।

निर्वाचन कानून के अनुसार, ग्रामीण क्षत्रा की तुलना म शहरी क्षेत्रा को अधिक प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है, जसा कि एक उदाहरण से स्पष्ट हो जायेगा। काउन्टी के स्तर पर ग्रामीण जिले को 2,000 जनसख्या के पीछे 1 प्रतिनिधि मिलता है। परन्तु शहरो, कस्बा और खनिज व औद्योगिक केन्द्रा को 500 के पीछे 1 प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। प्रान्तीय काग्रेसो का कायकाल 4 वष है। सीधे केन्द्रीय शासन के अधीन म्युनिसिपलिटियो, काउन्टियो अन्य म्युनिसिपलिटियो, म्युनिसिपल जिलो, ह स्याग, राष्ट्रीय ह स्याग और कस्बा की काग्रेसो का कायकाल 2 वष होता है। प्रान्तो, काउन्टियो तथा म्युनिसिपलिटियो की जन काग्रेसो के सदस्या की देखभाल का अधिकार उनको चुनने वाली इकाइयो का है। ह स्याग और कस्बा की जन-काग्रेसो के सदस्यो की देखभाल उनके निर्वाचक करते है। निर्वाचन की इकाइयो और निर्वाचको को कानून द्वारा विहित प्रक्रिया के अनुसार, उनके द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियो (जन काग्रेसो के सदस्यो) को वापस बुलाने का अधिकार है।

स्थानीय काग्रेसिया के काय—प्रत्यक स्थानीय काग्रेस अपने अधिकार क्षेत्र मे कानूनो और आज्ञप्तियो का पालन कराती है तथा उन्हे कायरूप देती है। उसके अन्य कृत्य ये है—स्थानीय आर्थिक और सास्कृतिक विकास तथा सावजनिक निर्माण कार्यो के लिए योजनायें तैयार करना स्थानीय बजटो तथा वित्तीय रिपोर्टों की परीक्षा करना व स्वीकार करना, सावजनिक सम्पत्ति की रक्षा करना, सावजनिक व्यवस्था बनाये रखना, नागरिको के अधिकारो और राष्ट्रीय अल्पसख्यको के सम अधिकारो की रक्षा करना। स्थानीय जन काग्रेस अपने स्तर की जन परिषदो के सदस्यो को चुनती हैं और उन्हे वापस बुला सकती है। काउन्टी के स्तर तथा अन्य उच्च स्तरो पर जन-काग्रेस अपने स्तरो के जन न्यायालयो के प्रधानो का चुनाव करते हैं और उन्हे वापस भी बुला सकते है। स्थानीय जन काग्रेसें कानून द्वारा विहित सत्ता की सीमाओ के भीतर निर्णय करती है और उन्हे जारी करती है। स्थानीय जन काग्रेसा को अपने से ऊँचे नीचे के स्तर की जन काग्रेसा और जन परिषदा के अनुपयुक्त निर्णयो को दोहराने और उन्हे रद्द करने की शक्ति भी प्राप्त है।

स्थानीय जन-परिषदें—इनका चुनाव तत्सम्बन्धी काग्रेसो द्वारा होता है और वे प्रति उत्तरदायी हैं। परन्तु धारा 62 के अनुसार, उनकी सत्ता और उत्तरदायित्व के दो स्थानीय जन-परिषदे अर्थात् स्थानीय जन सरकारें तत्सम्बन्धी स्तरो पर स्थानीय कायपालिका के अग है और वे राज्य के अग हैं। अपनी आन्तरिक रचना मे

पच्चीसवा अध्याय

गैर-पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रियाएँ

1 भूमिका

प्रथम अध्याय मे 'राजनीतिक पद्धति' (Political System) और 'राजनीतिक प्रक्रिया' (Political Process) की व्याख्या की जा चुकी है। हम इन दोना का प्रयोग एक ही अर्थ म कर सकते है, और इस अध्याय म ऐसा ही करेंगे। पुस्तक के विभिन्न अध्यायो म अधिकाशत पाश्चात्य राजनीतिक पद्धतियो अथवा प्रक्रियाओ का सविस्तार विवेचन किया गया है। इस अध्याय मे हम गैर-पाश्चात्य प्रक्रियाओ का विवेचन करेंगे। ऐसा करने से पूर्व, अति सक्षिप्त रूप म, मुख्य पाश्चात्य पद्धतियो और प्रक्रियाओ का उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है। पाश्चात्य राजनीतिक पद्धतियो म मुख्य स्थान—ब्रिटेन तथा अन्य अनेक देशो म चल रही ससद पद्धति, सयुक्त राज्य अमरीका की राष्ट्रपतीय पद्धति, स्विटजरलण्ड की पद्धति, जिसमे दोनो पद्धतियो के गुणो को समाविष्ट किया गया है—का है। इन सभी पद्धतियो की राजनीतिक प्रक्रियाएँ भिन्न-भिन्न है, किन्तु फिर भी उनकी आधारभूत बातो म साम्य है। राजनीतिक प्रक्रियाओ म अग्रलिखित प्रक्रियाएँ विशेष रूप से उल्लखनीय हैं—(1) कार्यकारी प्रक्रिया, (2) विधायी प्रक्रिया, (3) न्यायिक प्रक्रिया, और (4) निर्वाचन प्रक्रिया।

कार्यकारी प्रक्रिया मे कार्यपालिका का स्वरूप—ससद, अध्यक्षात्मक अथवा बहुल और उसकी कार्य प्रणाली सम्मिलित है। विधायी प्रक्रिया म विधानमण्डल की रचना उसका सगठन, विधि-निर्माण प्रक्रिया और वित्तीय प्रक्रिया को सम्मिलित किया जाता है। न्यायिक प्रक्रिया म न्यायपालिका का सगठन, उसका अधिकार-क्षेत्र न्याय प्रशासन का ढग आते है। निर्वाचन प्रक्रिया म मताधिकार, निर्वाचन की विधि, प्रतिनिधित्व का स्वरूप आदि आते है। पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रियाओ का उद्देश्य उनसे सम्बन्धित कानूनो व नियमो का ठीक प्रकार से पालन तथा उन प्रक्रियाओ की आधारभूत भावना, प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्तों के प्रति आस्था और नागरिको के अधिकारो व स्वतन्त्रताओ की रक्षा है। यद्यपि कुछ अन्य राजनीतिक पद्धतियो या प्रक्रियाओं का ऊपरी रूप तथा उनकी ऊपर की सरचना पाश्चात्य प्रक्रियाओ के समान है, किन्तु उनम वास्तविकता का अभाव है।

इटली मे फासीवाद व जर्मनी म नाजीवाद के अन्तगत ससद पद्धति को दखने म कायम रखा गया, पार्लियामेन्ट और मन्त्रिमण्डल जारी रहे किन्तु वास्तविक सत्ता का केन्द्र पार्लियामेन्ट न रही वरन् सारी शक्तियाँ कार्यपालिका के हाथो म आ गयी थी। कार्यपालिका की सत्ता भी सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल म नही वरन् सत्तारूढ दल के प्रमुख नेता म केन्द्रीभूत हो गयी थी और एक प्रकार का अधिनायकतन्त्र स्थापित हुआ था। दोनो ही देशो मे स्थापित अधिनायकतन्त्र का रूप सर्वाधिकारवादी रहा, जिसम राज्य ने सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रो पर नियन्त्रण कायम

कम्यूनो को आर्थिक सहायता देना तथा अन्य समान मामले। 1960 के आरम्भ में सम्पूर्ण युगोस्लाविया में 70 जिले थे। जिला अपने अधिकारो का प्रयोग व कर्तव्यो का पालन अपनी जन समिति निर्वाचको की सभा, जिले में जन निर्णय, स्वशासन के जिले में निकायो तथा स्वशासन करने वाली संस्थाओं और संगठनो द्वारा, उपयुक्त कानूनो व जिले के विधान के अनुसार करता है। जिला अपने स्वशासन को संगठित करता है, विशेष रूप में जिला जन समिति के चुनाव तथा जिले के विभागो और संस्थाओ की स्थापना द्वारा। यह जिले की सामाजिक सम्पत्ति के लिए उत्तरदायी है, यह इस बात को देखता है कि स्वतन्त्र संगठनो व संस्थाओं के कार्य सामान्य सामाजिक हित के विरुद्ध न हों और कम विकसित कम्यूनो की सहायता करता है। जिला स्वतन्त्र रूप में तथा अपने पहल पर अपने क्षेत्र में कम्यूनो के लिए सामान्य हित के मामलो का प्रबन्ध करता है। इनके अतिरिक्त यह कम्यूनो के कार्य का परिवीक्षण करता है, यह सुनिश्चित करने के लिए कि उनका कार्य वैध है।

जिला जन समिति, जिला परिषद् और उत्पादको की जिला परिषद् से मिलकर बनती है। कम्यूनो की भाँति दोनो ही परिषदें जिला जन समिति द्वारा आर्थिक मामलो से सम्बन्धित सभी विनियमो और उप विधियों के जारी करने के बारे में बराबर शक्ति रखती है। जन समिति के विभिन्न बोर्डों और समितियो के चुनाव तथा जिला जन समिति के अधिकार क्षेत्र में आने वाले सभी पदो पर नियुक्तियाँ दोनो परिषदो के संयुक्त अधिवेशन में होती है। जिला परिषद् के सदस्यो का चुनाव जिले के कम्यूनो की जन-समितियों द्वारा अप्रत्यक्ष रीति से होता है और उसमें उनके ही सदस्य चुने जाते हैं। इसी प्रकार जिले में उत्पादको की परिषद् का चुनाव कम्यूनो की ऐसी ही परिषदें अपने सदस्यों में से करती हैं। ये सभी चुनाव गुप्त मतदान द्वारा होते है। जिला जन-समिति आन्तरिक मामलो और सामान्य प्रशासन, सामाजिक योजना, वित्त, वन, कृषि, श्रम, सामुदायिक मामलो आदि के लिए परिषदें कायम करती है। सचिवालय और प्रशासनिक विभाग जिले के प्रशासनिक प्रयोजनो को पूरा करते हैं।

टाउन परिषद—यह शहरी जिलो में होती है। यह उन पार्षदो से मिलकर बनती है जो कि जिले में नगरो की जन समितियो के सदस्य होते है। शहरी जिलो को नगर के म्युनिसिपल प्राधिकारियो पर कुछ अधिकार प्राप्त हैं, जो उन्हें जिले के अन्य कम्यूनो पर प्राप्त नहीं है। टाउन परिषद् इन विषयो के लिए उत्तरदायी है—नगर नियोजन, सामुदायिक मामले, पानी की व्यवस्था, गन्दे पानी की नालियाँ, बिजली की व्यवस्था, गलियाँ, पुल, मुर्दाघाट, परिवहन व सवार आदि। इसे यह भी शक्ति प्राप्त है कि यह कम्यूनो की संयुक्त संस्थाएँ भी स्थापित कर सके। परन्तु टाउन परिषद् का न तो कोई पृथक् बजट होता है और न इसका कोई अपना प्रशासनिक व कार्यकारी तन्त्र ही। टाउन परिषद् को वित्तीय साधन जिले और कम्यूनो के बजटो से प्राप्त होते हैं। जिला अधिकारी टाउन परिषद् के निर्णयो को कार्यान्वित करने के लिए उत्तरदायी है और जिला जन समिति यह सुनिश्चित करने के लिए उत्तरदायी है कि इसका कार्य कानून द्वारा विहित सीमाओं के भीतर होता है।

कम मात्रा में हैं। सभी शासन पद्धतियों में साधारणतया अग्रलिखित चार विशेषताएँ पायी जाती हैं जिन्हें सामने रखकर उनकी तुलना की जा सकती है—(1) सभी पद्धतियों में राजनीतिक संरचना होती है। (2) सभी पद्धतियों में प्राय: वे ही कार्य किये जाते हैं, चाहे उनको करने के लिए संरचनाएँ भिन्न भिन्न हों। (3) सभी राजनीतिक संरचनाएँ, चाहे वे कितनी भी सरल अथवा विशेषीकृत हों, अनेक प्रकार के कार्य करती हैं। (4) सांस्कृतिक अर्थ में, सभी राजनीतिक पद्धतियाँ मिश्रित हैं, अर्थ न तो पूर्णतया आधुनिक और न पूर्णतया आदिम या प्राचीन पद्धतियाँ पायी जाती हैं। उनमें अन्तर आधुनिकता व प्राचीनता के अंशों के मिश्रण का है।

अधिकतर आधुनिक और प्रगतिशील राज्यों में विभिन्न प्रकार की और विशेषीकृत संरचनाएँ—संसदें, भततन्त्र (bureaucracies), न्यायालयों, राजनीतिक दलों, हित-समूहों और संचार माध्यमों की—पायी जाती हैं, किन्तु साथ में कुछ परम्परागत (pre modern) संरचनाएँ भी जैसे किसी औद्योगीकृत देश में भूमि सम्बन्धी पद्धति होती है। राजनीतिक संरचना की यह द्वैतता (dualism) आधुनिक राजनीतिक पद्धतियों की ही विशेषता नहीं है, वरन् गैर-पाश्चात्य और आदिम पद्धतियों की भी, अर्थात् प्राचीन और परम्परागत राजनीतिक पद्धतियों में भी प्राथमिक और द्वैतीयक संरचनाएँ हैं और द्वैतीयक संरचनाओं की आधुनिक (विशिष्ट, सर्वव्यापी और उद्देश्य प्राप्ति के अनुकूल) विशेषताएँ हैं।[1]

यदि इस अर्थ में पाश्चात्य और परम्परागत दोनों ही प्रकार की पद्धतियाँ द्वैध हैं, तो उनमें अन्तर किन बातों में है? वर्बा (Verba) के मतानुसार अन्तर की दो बातें मुख्य हैं—प्रथम आधुनिक पाश्चात्य पद्धतियों में द्वैतीयक संरचनाएँ और सम्बन्ध कहीं अधिक भिन्न प्रकार के और महत्त्वपूर्ण हैं। दूसरा, आधुनिक पद्धतियों में प्राथमिक संरचनाएँ द्वैतीयक संरचनाओं से प्रभावित (उनके द्वारा आधुनिकीकृत) हैं। उदाहरण के लिए, हम कह सकते हैं कि पाश्चात्य और गैर-पाश्चात्य विधायी निकायों में औपचारिक और अनौपचारिक दोनों ही प्रकार की संरचनाएँ हैं, परन्तु पाश्चात्य पार्लियामेन्ट में संसद सदस्य की औपचारिक संसदीय प्रतिमानों के प्रति निष्ठा उसके प्राथमिक समूहों के प्रति उसकी निष्ठा से अधिक होगी। दूसरे शब्दों में, द्वैतीयक संरचनाएँ अधिक प्रभावी होंगी। दूसरे, पाश्चात्य पार्लियामेन्ट की अनौपचारिक संरचना गैर पाश्चात्य पार्लियामेन्ट की अनौपचारिक संरचना से भिन्न होगी। गैर पाश्चात्य पार्लियामेन्ट में अनौपचारिक संरचना विस्तृत कुलीनतन्त्रीय पारिवारिक बन्धनों, धार्मिक सम्प्रदाय, जाति आदि पर आधारित हो सकती है। वास्तव में, इन्हीं समूहों से मिलकर, विधायी समितियों और दलीय गुटों की अपेक्षा, संसद की निर्णय करने वाली संरचना बन सकती है। पाश्चात्य पार्लियामेन्ट में, अनौपचारिक संरचना की अनौपचारिक संरचना से मेल खाने की प्रवृत्ति रहती है, अर्थात् इसकी प्रवृत्ति अपनी संस्कृति में अधिक आधुनिक होने की है। इस प्रकार अनौपचारिक समूह हित या प्रादेशिक समूहों, सामान्य हितों या निवास पर आधारित मित्रताओं के रूप ले सकते हैं।

हाल में प्रकाशित एक लेख में शिल्स (Shils) ने गैर पाश्चात्य जगत के नये राज्यों को अग्रलिखित पाँच समूहों में वर्गीकृत किया है—(1) राजनीतिक प्रजातन्त्र जिनमें स्वायत्तता प्राप्त विधायिकाएँ, कार्यपालिकाएँ, न्यायालय और विभिन्न प्रकार के स्वायत्तता प्राप्त हित समूह राजनीतिक दल तथा संचार के माध्यम पाये जाते हैं। गैर पाश्चात्य क्षेत्रों में जापान, तुर्की, इजराइल और चिली इस नमूने के उदाहरण हैं। (2) संरक्षक प्रजातन्त्र (Tutelary democracies) वे हैं जिन्होंने प्रजातन्त्रात्मक राज्य के औपचारिक प्रतिमानों—सर्वव्यापी मताधिकार, भाषण, लेखन व संघ बनाने की स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्र के संरचनात्मक रूपों को अंगीकार किया

[1] Almond and Coleman (ed), *The Politics of the Developing Areas* pp 11–23

किया। किसी भी प्रकार के विरोध को जीवित न रहने दिया गया, नागरिको की स्वतन्त्रताएँ छीन ली गयी और प्रजात त्र को तिलाजली द दी गयी। इटली व जमनी म स्थापित राजनीतिक पद्धतिया या प्रक्रियाओ को पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रियाओ से बाहर रखा जाता है और एसा करना उचित ही है।

रूस मे क्रांति के बाद साम्यवादी दल का प्रभुत्व स्थापित हुआ, उसका उद्देश्य ही सवहारा वग का अधिनायकत्व स्थापित करना रहा है। वास्तव म, सोवियत सघ म सवहारा वग के नाम से साम्यवादी दल की अधिनायकशाही स्थापित हुई है। स्टालिन के शासन काल म तो अधिनायकशाही दल की नही वरन् स्वय स्टालिन की थी। 1936 के स्टालिन सविधान के अ तगत बाहरी जगत को दिखान के लिए सोवियत सघ म सर्वाच्च सोवियत प्रजात त्री देशो की ससद क समान है और मन्त्रिपरिषद्, मन्त्रिमण्डल के, पर तु यह कोरा दिखावा है। सोवियत सघ म सम्पूण सत्ता साम्यवादी दल के सर्वोच्च अगा म निहित है। सर्वोच्च सोवियत की शक्तिया वास्तविक नही हैं, उसकी काय प्रणाली स्वत त्र नही है और उसके सदस्यो के चुनाव प्रजातान्त्रिक ढग से नही होते। अत यह कहना यायोचित है कि सोवियत सघ म वास्तविक प्रजातन्त्र नही है। यही बात साम्यवादी चीन तथा पूर्वी यूरोप के अनेक साम्यवादी राज्यो के बारे म सच है। इन सभी राज्या म साम्यवादी दल का अधिनायकत त्र है और उसका स्वरूप भी सवाधिकारवादी है। अस्तु, इन राज्या म पाश्चात्य ढग की राजनीतिक प्रक्रियाओ को वास्तव म नही अपनाया गया है, यद्यपि दिखावे मे उ ह राजनीतिक पद्धति का अग बनाया गया है। सभी अधिनायकतन्त्री तथा सर्वाधिकारवादी पद्धतियाँ और उनसे सम्ब धित राजनीतिक प्रक्रियाएँ, वास्तव म, पाश्चात्य पद्धतिया व प्रक्रियाओ के प्रजातन्त्रात्मक प्रतिमानो और मूल्या (Western democratic norms and values) की विरोधी है, अत उ ह गर पाश्चात्य प्रक्रियाआ म सम्मिलित किया जाता है।

पाश्चात्य राजनीतिक पद्धतिया अथवा प्रक्रियाओ को विश्व के अनेक राज्या न अपनाया है, कुछ राज्या म वे सफल रही है और कुछ म आशिक रूप से सफल तथा कुछ दूसर राज्या म अधिकाशत असफल। ससद-पद्धति कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलण्ड, जापान, भारत, श्रीलका व दक्षिण अफ्रीका की यूनियन मे अधिकाशत सफल रही है और इन राज्यो म उससे सम्ब धित प्रक्रियाएँ भी अधिकाशत सफलतापूवक चल रही है। राष्ट्रपतीय पद्धति को कई लटिन अमरीकी राज्यो म अपनाया गया है। अ य अनक राज्या, विशेषकर एशिया और अफ्रीका क नय स्वाधीन राज्या, ने ससद-पद्धति का अगीकार किया, परन्तु जब वह सफलतापूवक न चल सकी तो उसे कुछ नया रूप दिया गया। पाकिस्तान, बमा, इण्डोनेशिया व नपाल न ससद-पद्धति की विफलता के बाद दूसरी पद्धतियाँ अगीकार की। पाकिस्तान न सयुक्त राज्य अमरीका क नमून की राष्ट्रपतीय पद्धति को 1962 के सविधान के अ तगत लागू किया, किन्तु नीचे के स्तर पर शासन सस्थाआ की रचना (बेसिक प्रजात त्र) अपने ढग की रही। इण्डोनेशिया म, भूतपूव राष्ट्रपति सुकण न 'माग-दर्शित प्रजातन्त्र' (guided democracy) का प्रयोग किया, पाकिस्तान क राष्ट्रपति इस्कन्दर मिर्जा ने 1954 म नियन्त्रित प्रजातन्त्र (controlled democracy) को लागू किया। यथाथ म य शासन प्रजातन्त्रात्मक कम और अधिनायकतन्त्री अधिक थे। भारत म गाधीजी न पचायत राज्य और सर्वोदय की स्थापना पर बल दिया, नपाल म इस समय 'पचायत प्रजातन्त्र' चल रहा है। अधिकतर राज्यो म पाश्चात्य ढग की आधुनिक सस्थाआ का ऊपर रखा गया है, किन्तु निम्न व मध्य स्तर पर उनम उनकी परम्परागत सस्थायें चल रही हैं।

यह कथन काफी मात्रा म सत्य है कि पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रियाएँ आधुनिक हैं और उनका आधार सविधानवाद है। उनकी तुलना म अधिकतर दूसर राज्या म चल रही दूसरी प्रकार की प्रक्रियाएँ परम्परागत हैं और उनका आधार विधि का 'शासन' या सविधानवाद

पर निय त्रण रखता है और सम्पूण समाज की ओर स बोलन का प्रयत्न करता है।[1]

चूंकि पाश्चात्य प्रभाव साधारणतया शासन क स्तर पर सबसे अधिक रहा, अत इस बात म कोई आश्चय नही है कि दक्षिण पूर्वी एशिया क नय स्वाधीनता प्राप्त राज्या की औपचारिक शासनिक सरचनायें बडी मात्रा म उनक पुरान शासको क मातृ दशो की सरचनाओ के समान है। इन राज्या म पाश्चात्य शासन क विरोध का अथ पाश्चात्य शासका द्वारा स्थापित शासन सस्थाओ का विरोध न था। वास्तव म इस प्रदश की अनेक गतिशील शक्तिया म से एक के नताओ की यह इच्छा रही है कि व अपन दश म पाश्चात्य ढग की सस्थाओ को स्थापित कर। फिलीपाइन की राष्ट्रपतीय पद्धति अमरीकी नमून की है, सिवाय इस बात के कि यह अधिक व ड्रीकृत है। बर्मा मलाया और इण्डोनेशिया म स्वत त्रता के बाद ससद पद्धति को अपनाया गया था (पर तु बर्मा और इण्डोनेशिया म वह सफलतापूवक न चल सकी)। इन सभी राज्यो म प्राय राजनीतिक एकीकरण का अभाव है। दक्षिण एशिया और अफ्रीका क नयी स्वाधीनता प्राप्त अधिकतर राज्यो क बार म भी पूर्वोक्त बातें न्यूनाधिक मात्रा म लागू होती है। उनम स अनक राज्यो म ऊपर की अथवा द्वैतीयक शासनिक सरचनाये पाश्चात्य दशो की राजनीतिक पद्धतियो स मिलती है। किन्तु उनकी राजनीतिक प्रक्रियायें, वास्तव म पाश्चात्य प्रक्रियाओ की सच्ची भावना स रहित हैं। उनम विधायिकाओ की शक्तियाँ कम और अवास्तविक हैं, विधायी प्रक्रिया दिखावटी अधिक है, वित्तीय प्रक्रिया पर विधायिका का निय त्रण स्थापित नही हो पाया है। यायिक प्रक्रिया नागरिको की स्वत त्रता की रक्षा नही करती और निर्वाचन प्रक्रिया स्वत त्र व निष्पक्ष चुनावो की गारण्टी नही देती।

लूसियन पाई ने अपने विख्यात लख 'The Non Western Political Process' म पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रिया स भिन्न राजनीतिक प्रक्रियाओ की मुख्य सामा य विशेषताओ का गहन विवचन किया है। यह सच है कि गर पाश्चात्य समाजो म अनेक प्रकार की विभिन्नतायें है, फिर भी पाश्चात्य समाजो की तुलना म उनम बहुत सी सामा य विशषतायें है। विद्वान लेखक के अनुसार उनकी सख्या 17 है, किन्तु हम यहाँ पर उनम स मुख्य विशेषताओ का ही सक्षिप्त विवचन करेंग। सवप्रथम गैर पाश्चात्य समाजो म राजनीतिक क्षेत्र और सामाजिक तथा व्यक्तिगत सम्ब धो क बीच स्पष्ट अ तर नही किया जाता। परम्परागत व्यवस्था के शक्तिशाली प्रभावो म वे शक्तिया है जो राजनीति के विशिष्ट क्षेत्र के विकास म बाधक है। परम्परागत समाजो की भाति अधिकतर गर पाश्चात्य समाजो मे राजनीतिक सम्ब धो के नमून का निर्धारण अधिकाशत सामाजिक और व्यक्तिगत सम्ब धो क नमूने स होता है। अत राजनीतिक सघष की प्रवत्ति मान प्रभाव और महत्त्वपूण व्यक्तियो से सम्बन्धित प्रश्नो क चारो ओर घूमने की है, न कि राजनीतिक क्रिया क वकल्पिक मार्गों से सम्बन्धित मार्गो के चारो ओर। गर पाश्चात्य राजनीति की आधारभूत रचना सामुदायिक है, और सम्पूण राजनीतिक व्यवहार सामुदायिक विचारो से रगा होता है। इसी कारण राजनीतिक विचारो का स्वय म प्रभाव कम रहता है। राजनीतिक वाद विवाद या तो समुदायो क आ तरिक सम्ब धो या एक समूह की दूसरे समूह क प्रति क्या स्थिति है, इन बातो से सम्बन्धित वाद विवाद का रूप धारण करता है।

दूसरे, गर पाश्चात्य समाजो म राजनीतिक दल एक प्रकार के विश्व दृष्टिकोण को अपनाते हैं और एक विशेष प्रकार की जीवन शली का प्रतिनिधित्व करते है। साधारणतया राजनीतिक दल किसी उप समाज अथवा किसी प्रभावशाली व्यक्ति के व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करते हैं। लौकिक दलो ने भी, जो राष्ट्रीय प्रभुसत्ता प्राप्त करने म लगे रहे, अनोखे विश्व दष्टिकोण को

[1] James E Caleman *Ibid* p 535

है। इनके अतिरिक्त इन पद्धतियो में उच्च नेता अपने राज्यो को प्रजातन्त्रात्मक बनाने का ध्येय रखते हैं। इन पद्धतियो की विशेषता कार्यपालिकाओ और सैनिक शक्तियो का केन्द्रीकरण है, इनमे विधायिकाएँ शक्तिहीन है और न्यायपालिका की स्वतन्त्रता अभी तक स्थापित नही हुई है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण घाना है।

(3) आधुनिक धनिकतन्त्र (modernizing oligarchies) वे राजनीतिक पद्धतियाँ है, जिनमे नियन्त्रण शक्ति सैनिक या अथवा सनिक अधिकारियो के गुटो मे है, जिनमे प्रजातन्त्रात्मक सविधानो को निलम्बित कर दिया गया है अथवा जिनमे उनका अस्तित्व ही नही है। इनमे आधुनिकता के लिए प्रेरक भावना कार्यकुशलता और बुद्धिपूर्ण व्यवस्था तथा भ्रष्टाचार व परम्परावादिता का लोप करने का प्रयत्न हो सकती है। कमाल अतातुर्क के अन्तर्गत तुर्की, कुछ वर्ष पहले का पाकिस्तान और सूडान इसके अच्छे उदाहरण है। (4) सर्वाधिकारवादी धनिकतन्त्र जैसे कि उत्तरी कोरिया और वियत मिन्ह मे है। इनमे सत्ता शासक समूह मे केन्द्रीभूत है और राज्य का स्वरूप सर्वाधिकारवादी है। इनके शासन की पद्धति सोवियत पद्धति से मिलती जुलती है। इन सभी को बाल्शेविक या साम्यवादी सर्वाधिकारवाद अथवा अधिनायकतन्त्र कह सकते हैं। जमनी की नाजीवादी और इटली की फासीवादी पद्धतियाँ इनकी तुलना मे परम्परागत अधिनायकतन्त्र कहला सकती है। (5) परम्परागत धनिकतन्त्र साधारणतया रूप मे राजनीतिक और वशानुगत होता है। यह सविधान या कानून के बजाय प्रथाओ पर आधारित रहता है। शासक समूह और अधिकारी-वर्ग मे भर्ती रक्त सम्बन्ध और पद के आधार पर होती है। केन्द्रीय शासन सस्थायें स्थानीय सामन्तो (सरदारो), वशानुगत या भूमिगत इकाइयो को बहुत ही सीमित मात्रा मे नियन्त्रित करती है। नेपाल, सऊदी अरब और यमन इस प्रकार की शासन पद्धतियो के अच्छे उदाहरण है।

लूसियन पाई (Lucian W Pye) के अनुसार दक्षिण पूर्वी एशिया के अधिकतर राज्यो मे नगरीकरण (urbanization), लौकिकीकरण (secularization), वाणिज्यीकरण (commercialization) आदि की प्रक्रियाये पाश्चात्य देशो के शासन अथवा उनके सम्पर्क से बहुत प्रभावित हुई हैं किन्तु इन राज्यो को इन क्षेत्रो मे अभी बहुत आगे जाना है। इन सभी राज्यो मे सामाजिक परिवर्तन भी हो रहे है। ये सभी पाश्चात्य देशो से सम्पर्क मे आने के कारण विकास और प्रगति की गति बढाना चाहते है। परन्तु कठिनाई यह है कि इनमे सामाजिक परिवर्तन असमान रूप से हुआ है। अधिकतर राज्यो मे एक दलीय पद्धति का विकास हो रहा है। लेखक अग्रलिखित निष्कर्ष पर पहुँचा है—'दक्षिण पूर्वी एशिया की सभी राजनीतिक पद्धतियो की प्रधान विशेषता यह है कि वे अभी तक, जैसा कि परम्परागत और उपनिवेश कालो मे था कुछ थोडे से शासको जिनका एक विशिष्ट दृष्टिकोण व सस्कृति है और जनता की विशाल बहुसख्या, जो ग्रामीण इकाइयो और कृषक जीवन शैली की ओर अभिमुख है, मे विभाजित हैं। किन्तु शासक समूहो के मूल्यो और सस्कृतियो मे बडे परिवर्तन हुए है, क्योंकि वे अब जनसख्या के सबसे अधिक शहरी और पाश्चात्य अशो का प्रतिनिधित्व करते है।'

कोलमैन के मतानुसार गर पाश्चात्य राज्यो मे तीन विशेषताये सामान्य है—प्रथम, उनकी सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक प्रक्रियाओ का स्वरूप मिश्रित (mixed character) है। अधिकतर देश अभी तक प्रधानत ग्रामीण है और बहुसख्यक जनता निरक्षर है। इन देशो मे आय कदाचित बहुत ही कम है। दूसरी, उनके समाजो मे एकीकरण का अभाव है। यह अशत इस कारण से है कि उन समाजो की एक विशेषता उनका मूलजातीय धार्मिक और सास्कृतिक बहुलवाद है तथा अशत दूसरा कारण उनमे आधुनिकता की प्रक्रिया सीमित और असमान रूप से लागू हो पाई है। तीसरी विशेषता यह है कि उनके आधुनिक उप समाज और परम्परागत बहुसख्या के बीच बडी खाई है। आधुनिक उप समाज (जो सख्या मे कम है) सरकार की केन्द्रीय सरचनाओ

consensus) है । सभी महत्त्वपूर्ण गैर पाश्चात्य समाजो मे एक ओर तो ऐसे व्यक्ति है जिन्होने पाश्चात्य संस्कृति को अंगीकार कर लिया है और दूसरी ओर ग्रामीण किसान है जिनपर पाश्चात्य प्रभाव बहुत ही कम पडा है । विभिन्न राजनीतिक ससारो म रहने के कारण उनसे यह आशा नही की जा सकती कि वे राजनीतिक प्रक्रिया के प्रति एक सामान्य पहुँच को अपना सकेंगे ।

चौथे, गैर पाश्चात्य प्रक्रिया म ऐसे सगठित हित समूहो की सख्या अपेक्षाकृत कम है जिनकी काम करने की विशिष्ट भूमिकाएँ हो । यद्यपि गैर-पाश्चात्य देशो म बहुधा अनौपचारिक सघो की सख्या बडी है, किन्तु वे राजनीतिक दलो व गुटो की भाति ही जीवन के सभी पहलुओ के बारे म विस्तृत दिगविन्यासो को अंगीकार करते हैं । ऐसे सगठनो के भी, जिनके नाम और सरचनाये पाश्चात्य हित समूहो के नमूने पर है यथा व्यापार सघ और वाणिज्य चम्बर (chambers of commerce) स्पष्ट रूप से परिभाषित उद्देश्य नही है । ऐसे समूह वास्तव म शासन या प्रधान दल या आन्दोलन के अभिकर्त्ता है, और उनका प्राथमिक कार्य प्रधान समूह के प्रयोजनो के लिए जनता के एक बिन्दु के समर्थन को प्राप्त करना है। अनौपचारिक सघ शासन के सम्बन्ध मे अपने सदस्यो के सभी हितो की रक्षा करने का प्रयत्न करते है । साथ ही, समाज म अनेक हित स्पष्ट रूप म सगठित नही हैं । यद्यपि सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया से नये हितो के लिए आधार की रचना हो रही है, स्पष्ट हित समूहो का निर्माण उस गति के साथ नही हो रहा है । चूंकि गैर पाश्चात्य समाजो म स्पष्ट रूप से सगठित हित समूहो का अभाव है और सभी भाग लेने वालो का राजनीतिक प्रक्रिया म लगातार प्रतिनिधित्व नही होता, अत राष्ट्रीय नेतृत्व सहज म उपलब्ध होने वाले उन साधनो से वंचित रहता है जिनसे कि समाज म अभिवृत्तियो और मूल्यो के सापेक्ष वितरण का हिसाब लग सके । राष्ट्रीय राजनेता ऐसे व्यक्तियो का सापेक्ष शक्ति का सरलता से निर्धारण नही कर सकता कि जो किसी समूह विशेष के पक्ष अथवा विपक्ष म हो । अपनी अपील को सबसे अधिक व्यापक बनाने के लिए, राजनेता को कभी कभी राष्ट्रवादी भावनाओ पर अधिक केन्द्रीभूत होना पडता है और अपने को इस प्रकार प्रस्तुत करना पडता है कि वह राष्ट्र का प्रतिनिधि है न कि किन्ही हित विशेष का ।

पाचवे, करिश्म वाले व्यक्तित्व के नेताओ (charismatic leaders) की गैर पाश्चात्य राज्यो की राजनीति म प्रधानता है । ऐसे समाज जिनम सांस्कृतिक परिवर्तन हो रहा हो, ऐसे नेताओ के लिए आदर्श दशाओ की व्यवस्था करते है क्योकि ऐसा समाज जिसके मूल्यो के बारे म (confusion) गडबड हो, ऐसे नेता की बातें मानने को अधिक तैयार रहता है जो जनता को यह दिखाता है कि उसका जीवन म कोई लक्ष्य है और उसे ईश्वर ने भेजा है । राजनीतिक सचार की समस्या के कारण करिश्म वाले नेता की स्थिति और अधिक मजबूत हो जाती है । जब तक समाज म सचार की कठिनाइयाँ रहती है, ऐसे नेता को अपने विरोधियो के ऊपर लाभ रहता है, चाहे उन्हे बुद्धिपूर्ण नियोजन (rational planning) म अधिक योग्यता भी प्राप्त हो । गैर पाश्चात्य समाजो के लिए एक अत्यन्त गम्भीर प्रश्न यह है कि क्या ऐसा नेतृत्व बुद्धिपूर्ण कानूनी व्यवहारो के रूप म सस्था बन जायगा, जैसा कि तुर्की म कमाल अतातुर्क के अन्तर्गत हुआ या उस नेता के चले जाने के बाद गडबड और अराजकता फैलेगी ।

अन्त म, गैर पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रिया अधिकांशत राजनीतिक दलालो (political brokers) के लाभ बिना कार्य करती है । पाश्चात्य दृष्टि म, प्रतिनिधिक शासन पद्धति के सुगम सचालन के लिए राजनीतिक दलाल का होना एक पूर्व शर्त है । उसकी कार्यवाहियो के द्वारा ही एक ओर सार्वजनिक नीति और प्रशासन की समस्याये जनसाधारण को स्पष्ट की जा सकती हैं और दूसरी ओर जनता की विभिन्न मांगो को वह राष्ट्रीय नेताओ के सामने उच्चारण कर सकता है । गैर पाश्चात्य समाजो म ऐसे कार्य करने के लिए राजनीतिक दलालो की सस्थागत भूमिका

विकसित किया। वास्तव म, सफल दला म सामाजिक आ दोलन बनने की प्रवृत्ति रही है। राजनीतिक दला के लिए स्वदेशी आधार साधारणत प्रादेशिक मूल वशीय (ethnic) अथवा धार्मिक समूह रह है, जा ऐस विचारो पर बल देते है जिनपर पाश्चात्य लौकिक राजनीति म बल नही दिया जाता। स्वत त्रता प्राप्ति के बाद भी उनमे जीवन शली का प्रतिनिधित्व करने की प्रवत्ति सुदृढ रही है, क्योकि व दल ऐसा अनुभव करते है कि उनका उद्देश्य समाज के भीतर जीवन क सभी पहलुओ का परिवतन करना है। ऐसे दल बहुधा यह कल्पना करते हैं कि व उस नमून का प्रतिनिधित्व करते है जसा कि समय बीतने पर उनका देश बनेगा। इसी कारण गर-पाश्चात्य समाजो की राजनीतिक प्रक्रिया की एक विशेषता राजनीतिक दलो के भीतर गुटा (cliques) का पाया जाना है। व्यक्तियो और समूहो के निश्चित रूप से परिभाषित और विशिष्ट काय नही हात, अत व एसे विशिष्ट हितो का प्रतिनिधित्व नही करते जो कि उनक और दूसरे समूहो क बीच अ तर पदा करे। इसका एक परिणाम यह भी है कि गर-पाश्चात्य समाजो म राजनीतिक वफादारी का स्वरूप (character of political loyalty), राजनीतिक समूहा के नेतृत्व का काम करने की चालो (startegy and tactics) सम्ब धी मामलो के निर्धारण म उच्च मात्रा की स्वत त्रता प्रदान करता है। जब तक ऐसा प्रतीत होता है कि नेता समूह के हिता के लिए काम कर रह हैं, उ ह इस बात की चि ता नही करनी पडती कि सदस्या की वफादारी की परीक्षा उनक निणया पर निभर करेगी। ऐसी दशाओ मे यह सम्भव है कि नेतृत्व समूह के भीतर सस्था का रूप धारण कर ल। इस प्रकार की राजनीतिक प्रक्रिया के अ य दो परिणाम य है—प्रथम, विरोधी दल क्रा तिकारी आ दोलन दिखाई पडते है। शासन करने वाले उच्च वग (ruling elites) यह समझते है कि वे राष्ट्र के सम्पूण हितो का प्रतिनिधित्व करते है, अत वे विरोधी दलो को या तो प्रगति के माग म बाधक अथवा देश का शत्रु मानते है। दूसरा, राजनीतिक प्रक्रिया म भाग लेने वाला म एकीकरण (integration) का अभाव रहता है। अधिक्तर गर-पाश्चात्य समाजो म कोई ऐसी एकरूप सामा य राजनीतिक प्रक्रिया नही है जो कि सम्पूण जनसख्या म अधिकाश राजनीतिक गतिविधिया का के द्र बने, अपितु वहाँ अनेक विशिष्ट और प्राय असम्ब धित राजनीतिक प्रक्रियाय हैं। सबस अधिक उल्लेखनीय विभाजन शहरी तत्वा की राजनीति और ग्राम स्तर की परम्परागत राजनीति के बीच है। उदाहरण के लिए, जो व्यक्ति ग्राम के राजनीतिक जीवन मे भाग लेते ह, व राष्ट्रीय राजनीति का अखण्ड भाग नही हैं, क्योकि वे के द्रीय स्तर पर होने वाली घटनाओ का ध्यान न रखते हुए काय कर सकते हैं।

तीसरे, गैर पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रिया का एक गुण यह है कि उसम राजनीतिक भूमिकाओ के लिए नये तत्वा की भर्ती की दर बहुत ऊँची है। परम्परागत समाजा म लोकप्रिय राजनीति क प्रसार का परिणाम राजनीतिक प्रक्रिया म भाग लेने वाला तथा उसम अ तग्रस्त सघा के प्रकारा म लगातार वद्धि रहा है। इस प्रकार के विकास को शहरी जनसख्या की असाधारण वृद्धि स प्रोत्साहन मिला है, जिसके परिणामस्वरूप ऐसे व्यक्तिया की सख्या मे वद्धि हुई है जो राष्ट्रीय स्तर की राजनीति के बारे मे कुछ समझदारी व भावना रखत है। साथ ही जनसाधारण तक पहुँचन क सचार साधना (mass media) के क्रमिक विस्तार न ग्रामीण तत्वा म भी राजनीति के प्रति जागरूकता को बढाया है। पर तु राजनीतिक प्रक्रिया म भाग लेन वालो की पीढिया के राजनीतिक दिग्वि यासा (political orientations of the generations) म गहर मतभेद पाये जात हैं। उन विचारा और चिह्नो का जि ह वतमान नता गहराई क साथ अनुभव करते हैं और जिनम पश्चिम स सम्ब धित विचार और चिह्न भी सम्मिलित हैं, ऐसी पीढी के जिस औपनिवे शासन (colonial rule) का अनुभव नही है, कोई अथ नही है। साथ ही, उनम गर-पाश्चात्य समाजों म राजनीतिक क्रिया के वध (उचित) ध्ययो व साधना के बारे म बहुत कम सहमति (little

शक्ति के बिना राजनीति के विचार का एक प्रमुख प्रतिपादक एम० एन० राय हुआ, जिसने नये मानवतावाद का विचार दिया। उसके ग्रन्थ 'Politics, Power and Parties' में उसका तर्क इस प्रकार है—'वास्तविक शासन के लिए प्रजातन्त्र प्रत्यक्ष होना चाहिए और शासन जनता के लिए प्रत्यक्ष नियन्त्रण अधीन होना आवश्यक है। जो व्यक्ति प्रजातन्त्र और दलीय पद्धति को वे एक बताते है वे इस तथ्य को भूल जाते हैं कि राजनीतिक दलों का विकास हाल ही में हुआ है। दलीय पद्धति का एक आधारभूत सिद्धान्त यह है कि समाज की भलाई के लिए राजनीतिक शक्ति के बिना कुछ नहीं किया जा सकता, अतः शासन पर नियन्त्रण स्थापित करना कुछ भी करने के लिए प्रथम शर्त है। इसका अर्थ यह हुआ कि शक्ति प्राप्त करने के लिए सब कुछ किया जाना आवश्यक है। अन्य कारणों से श्रेष्ठ व्यक्ति भी दलीय पद्धति द्वारा भ्रष्ट हो जाते हैं। रेडिकल डेमोक्रेटिक पार्टी का लक्ष्य शक्ति पर अधिकार करना नहीं वरन् उसका फैलाव (वितरण) है। मानवतावाद की विजय पाने के लिए राजनीतिक शक्ति की आवश्यकता नहीं है। रेडिकल डेमोक्रेटस और मानवतावादी राजनीतिक दल के रूप में कार्य नहीं करेंगे। दलगत राजनीति को अस्वीकार करने का अर्थ यह संकल्प कर लेना है कि राजनीति को व्यवहार में व्यापक बनाया जाय जिससे कि सम्पूर्ण जनता उसमें सक्रिय भाग ले सके। सबसे अधिक आधारभूत कार्य जनता को शिक्षित करना है। जो संगठित प्रजातन्त्र के विचार का समर्थन करते हैं, उन्हें उसे व्यवहार में परिणत करना चाहिए। संगठित प्रजातन्त्र की आधारभूत इकाइयाँ जन समितियाँ होंगी और जन समितियों के उदय का अर्थ दलगत राजनीति का अन्त होगा।'

गांधीजी ने विकेन्द्रीकृत व्यवस्था और सर्वोदय के विचार दिये जिनका आधार दल विहीन प्रजातन्त्र है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के आचार्य विनोबा भावे और श्री जयप्रकाश नारायण दल विहीन प्रजातन्त्र के प्रमुख प्रतिपादकों में से है। सर्वोदय विचार के प्राय सभी समर्थकों का दल विहीन प्रजातन्त्र में विश्वास है। पाकिस्तान में बेसिक डेमोक्रेसीज की योजना इसी विचार पर आधारित थी और नेपाल में पंचायत प्रजातन्त्र का यही आधारभूत सिद्धान्त है। श्री विश्व प्रधान ने 'पंचायत प्रजातन्त्र' की प्रस्तावना में लिखा है "दल विहीन प्रजातन्त्र जैसा कि हम इसे कहते हैं, नेपाल में राजनीतिक दलों की कार्य प्रणाली के कटु अनुभव से विकसित हुआ है। यह आशा है कि पंचायत पद्धति घास की जड़ों अर्थात् जनसाधारण तक जायगी और गावों में जनता के बीच विकसित होगी। नेपाल जैसे कम विकसित और पिछड़े हुए देश में जहाँ बहुसंख्या निरक्षर है, संसद अथवा शासन का कोई अन्य रूप जिसमें विदेश से लिया जाय, देश के प्रशासन और विकास कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए एकमात्र उपाय नहीं हो सकता।'[1]

जहाँ तक दल विहीन प्रजातन्त्र के सैद्धान्तिक आधार का सम्बन्ध है यह धारणा बड़ी आकर्षक और प्रजातन्त्र को वास्तविक रूप दिलाने वाली प्रतीत होती है, परन्तु विशाल क्षेत्र और जनसंख्या वाले राज्यों में प्रतिनिध्यात्मक प्रजातन्त्र ही सफल हो सकता है और उसके लिए राजनीतिक दलों का होना आवश्यक है। छोटे आधार व कम जनसंख्या वाले राज्यों में प्रजातन्त्र के विभिन्न रूपों को लागू किया जा सकता है। विशालकाय राज्यों में भी यह सम्भव है कि नीचे के स्तरों पर अर्थात् गांवों में पंचायतों को दल विहीन आधार पर संगठित किया जाय।

विकेन्द्रीकरण—यह विशालकाय राज्यों में, जहां सत्ता का केन्द्रीकरण हो और भी अधिक आवश्यक है। वर्तमान प्रवृत्ति विकेन्द्रीकरण के पक्ष में है। आधुनिक शासन प्रभावी होना बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि सरकारी सेवाओं को प्रत्येक क्षेत्र, स्थान और नागरिक तक ले जाया जाय। ग्रामीण गणतन्त्रों अथवा पंचायत राज्य की स्थापना महात्मा गांधी की भारत

[1] Pradhan B *Panchayat Democracy* p 10

(institutionalized role) नही है। उस कमी को आंशिक रूप म मध्यस्था की भूमिका द्वारा पूरा किया जाता है, अर्थात् ऐसे व्यक्ति उच्चवर्गीय नताओ के दृष्टिकोणा को जनसाधारण तक पहुँचाते हैं। ये जनता के मता को उच्च-वर्गीय नताओ तक बहुत ही कम सचार करते है।

परन्तु आल्फ्रेड डिमा (Alfred Dimmont) ने दूसरे अध्याय म इस प्रश्न पर विचार किया है कि क्या कोई गर पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रिया है। उस डर है कि लूसियन पाई द्वारा प्रतिपादित गर पाश्चात्य नमूना (Non western model) तुलनात्मक राजनीति म पाश्चात्य और गर-पाश्चात्य राजनीतिक पद्धतिया के अध्ययन, शोध और अध्यापन के बीच अलगाव की प्रवृत्ति को बढावा देगा। जो अध्ययनकर्त्ता नय विश्व अर्थात् एशिया और अफ्रीका के राज्या के अध्ययन म लगे हैं, वे गर पाश्चात्य पद्धतिया को समझन के लिए पाश्चात्य राजनीति के अध्ययन की सगतता (relevance) को अत्यन्त कम करन का प्रयत्न करते है।

गैर पाश्चात्य राजनीतिक प्रक्रियायें विभिन्न राज्या म, मुख्यत प्रादेशिक तथा स्थानीय स्तरा पर भिन्न भिन्न हैं। उनम परम्परागत अथवा जनजतीय सस्थाओ का बडा भाग है। कई राज्या म तो उन्ह गर्व के साथ पुनर्जीवित किया जा रहा है। आगे के सेक्शनो म हम भारत म गाधीजी द्वारा प्रतिपादित विकन्द्रीकृत पद्धति, नेपाल के पचायत प्रजातन्त्र और युगोस्लाविया के समाजवादी प्रजातन्त्र की रूप रेखा देंगे। ये तीना ही गर-पाश्चात्य नमूने की राजनीतिक पद्धतिया अथवा प्रक्रियाएँ हैं। इनम स प्रथम दो का आधार दल विहीन प्रजातन्त्र (partyless democracy) है तथापि तीनो ही प्रकार की राजनीतिक प्रक्रियाओ की प्रमुख विशेषता विकेन्द्रीकरण है।

2 दल-विहीन प्रजातन्त्र और विकेन्द्रीकरण

दल विहीन प्रजातन्त्र—पाश्चात्य राजनीतिक पद्धतिया (और प्रक्रियाओ) का आधार दलीय पद्धति है। पाश्चात्य राजनीतिक विचारको का विश्वास है कि प्रजातन्त्र मे दलो का होना आवश्यक है, यद्यपि वे भी दलीय पद्धति के दोषा को स्वीकार करते है। परन्तु दलीय शासन और दलगत राजनीति की बुराइयो ने भारत तथा अन्य पडोसी देशा मे दल विहीन प्रजातन्त्र के विचार को प्रोत्साहन दिया है। दल विहीन प्रजातन्त्र का विचार पूणतया नया नही है, क्योकि प्लेटो ने दला के दोषा की कटु आलोचना की और अमरीकी सविधान के निर्माताओ ने भी दलीय व्यवस्था की बात न सोची थी। इससे पूर्व कि हम इस नये विचार की व्याख्या और उसकी परीक्षा करें यह उचित होगा कि हम दलीय-पद्धति के अग्रलिखित दोषा पर दृष्टिपात करें (1) दलीय-पद्धति ही दलगत राजनीति और उसकी बुराइयो के लिए उत्तरदायी है। दलगत राजनीति का उद्देश्य राजनीतिक शक्ति को प्राप्त करना है। इसका प्राथमिक आधार व्यक्ति या समूह का हित होता है, जिसके परिणामस्वरूप वृहत् अथवा राष्ट्रीय हितो को हानि पहुँचती है। व्यवहार म, दल के प्रति निष्ठा को राष्ट्र के प्रति निष्ठा से ऊपर रखा जाता है। (2) दलीय-पद्धति के अन्तगत और दलगत राजनीति के परिणामस्वरूप चुनावा पर अत्यधिक व्यय होता है, उनके कारण अनावश्यक और अवाछनीय राजनीतिक प्रतिद्वद्वताएँ उत्पन्न होती है, फलत वास्तविक प्रश्न पृष्ठभूमि म पड जाते हैं और वाकपटु नेताओ का महत्त्व बढता है। (3) कुछ आलोचका का कथन है कि दल भ्रष्ट और स्वार्थमय सगठन होते है, जिनसे एकता नष्ट होती है। वे ही नेताओ के शासन (boss rule), सगठन तन्त्री राजनीति, भ्रष्टाचार और कुशासन के लिए उत्तरदायी है। (4) दलीय पद्धति से दलगत शासन स्थापित होता है, जोकि लोक शासन के विपरीत इस प्रकार राजनीतिक दल लोक सत्ता के सिद्धान्त का नष्ट करने वाले हैं। (5) दल विहीन के अनुमोदक यह भी कहते हैं कि दलीय पद्धति का उदय आधुनिक काल मे ही हुआ है का तात्पय यह है कि प्रजातन्त्र का दलो के बिना सफलतापूवक सचालन किया जा

रहती। क्षत्रीय निणय के आधार पर काय हो जाते हैं। (4) यह जनता के नतिक दृष्टिकोण के विकसित करने म सहायक होता है विशेष रूप स उन लोगो के दृष्टिकोण को जो प्रशासकीय कार्यों के अधिक निकट होते हैं, क्योंकि विकेन्द्रीकरण के माध्यम स बहुत सी प्रशासकीय क्रियाएँ नागरिको क अधिक निकट आ जाती है। यह उनम पहल करन की भावना, उत्तरदायित्व की भावना तथा साधन सम्पन्नता जसे गुणो का विकास करता है। इनके अतिरिक्त हम चाल्सवथ द्वारा बताये गये अग्रलिखित तथ्यो को इसी म जोड सकते हैं—(अ) यह प्रयोग करने के लिए सुविधा प्रदान करता है जिसम कि समस्त प्रशासन को जोखिम का भय नही रहता। (ब) यह विभिन्न इकाइयो के बीच प्रतिद्वंद्विता और तुलनात्मक उपायो के प्रयोग हेतु सुविधा प्रदान करता है। (स) यह केन्द्रीय अधिकारियो द्वारा अत्यधिक देख रेख तथा भ्रामक विचारो स स्वत त्रता प्रदान करता है।[1]

3 गाधीजी के अनुसार विकेन्द्रीकृत व्यवस्था और सर्वोदय

विकेन्द्रीकृत व्यवस्था—राज्य के विषय म गाधीजी का दृष्टिकोण एक दार्शनिक अराजकतावादी जसा था, यद्यपि यथाथ जीवन म उ होन भारत म एक प्रजात त्र राज्य की स्थापना क लिए सघष किया। 1931 म उन्होने लिखा था मेरे लिए राजनीतिक शक्ति कोई ध्येय नही है, पर तु जनता क लिए एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा वह जीवन क प्रत्येक विभाग म अपनी दशा को सुधार सके। राजनीतिक शक्ति का अथ राष्ट्रीय प्रतिनिधियो द्वारा राष्ट्रीय जीवन को विनियमित करने की क्षमता स है। यदि राष्ट्रीय जीवन इतना पूण हो जाये कि वह स्वय ही विनियमित होने लगे तो प्रतिनिधित्व की आवश्यकता न रहे। तब वही ज्ञानमय अराजकता का राज्य होगा। ऐसे राज्य म प्रत्यक व्यक्ति स्वय अपना शासक है।' 1934 म उन्होने कहा था म राज्य की शक्ति म किसी भी प्रकार की वृद्धि को अधिकतम भय की दृष्टि स देखता हूँ, यद्यपि देखने म ऐसा लगता है कि राज्य कानून द्वारा शोषण को कम करने म जनहित कर रहा है। परन्तु यह मनुष्य मात्र को सबसे बडी हानि पहुचाता है, क्योकि इसके द्वारा व्यक्तिगत विशेषता जो सभी प्रकार की उन्नति की जड है, का नाश होता है। वास्तव म, गाधीजी के अनुसार राज्य एकाग्रीभूत व सगठित हिंसा का प्रतिनिधि है। अत वह राज्य के कम से कम काय व स्वामित्व के पक्ष म थे राज्य की अपेक्षा वह ऐच्छिक सघो के विकास का समथन अधिक करते थे। गाधीजी ऐसे सभी कानूनो को हिंसामय समझते थे जि हे जनता ने स्वय न चाहा हो। ऐसा समाज जिसका सचालन पूण अहिंसा के अनुसार हो, अराजकता का सबसे शुद्ध रूप है। गाधीजी के अनुसार यह आदश अथवा सवश्रेष्ठ समाज होगा जिसमे न राज्य होगा और न वग ही होगे।

गाधीजी का शक्ति के विकेन्द्रीकरण मे विश्वास था, जिसको वह न केवल राजनीतिक एव आर्थिक लाभ के लिए ही उपयुक्त समझते थे, वरन् उसको वह सरल जीवन और उच्च सास्कृतिक आदर्शों के पोषण के लिए भी आवश्यक मानते थे। राम राज्य का वणन करते हुए उन्होने स्वय कहा था 'धार्मिक दृष्टिकोण से इसे पृथ्वी पर ईश्वर का राज्य कहा जा सकता है, राजनीतिक दृष्टिकोण से यह वह पूण जनत त्र है, जिसम सम्पत्ति, वण, जाति धम और लिंग भेद आधारभूत सभी विषमताओ का लोप हो गया हो। इसके अ तगत धरती और राज्य सभी कुछ जनता का होगा। न्याय अविलम्ब, पूण और सस्ता होगा और इसलिए भाषण, धार्मिक कार्यों और समाचार पत्रो की स्वत त्रता होगी और इस सबका आधार नतिक अनुशासन द्वारा स्वय नियोजित नियम का निय त्रण होगा, ऐसा राज्य निश्चित ही सत्य और अहिंसा पर आधारित होगा, जिसम ग्राम और गाव बिरादरियाँ निश्चयात्मक रूप से सुखी, समृद्ध और आत्मनिभर होगी।'

[1] Charlesworth J C *Governmental Administration* p 203

बारे म कल्पना का आदर्श रूप था। पश्चिम म ऐसे प्रजातन्त्र के लिए प्रयुक्त शब्द 'Grass Roots Democracy' है। ऐसी राजनीतिक सरचना म प्रजातन्त्र केवल राष्ट्रीय और प्रादेशिक अथवा राज्यीय) स्तरो तक ही नही रहना चाहिए। दूसरे शब्दो म, प्रजातन्त्र को स्थानीय स्तर था वास्तविक रूप तथा बडी मात्रा म विस्तृत करना चाहिए। यह केवल सत्ता के विकेन्द्रीकरण द्वारा सम्भव है। प्राचीन भारत म स्थानीय स्वशासन की सस्थाएँ थी, ग्राम पचायतें अग्रेजो के भारत म आगमन के बाद लुप्त हो गयी। ब्रिटिश शासन काल मे लगभग 1860 तक केन्द्रीकरण की प्रक्रिया चरम सीमा पर पहुँच गयी। 1861 के भारतीय कौसिल अधिनियम से भारत म विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। विकेन्द्रीकरण की प्रगति बडी धीमी और क्रमिक रही। स्वातन्त्र्य सघर्ष क दौरान राष्ट्रवादी नेताओ ने घोषित किया कि पुनर्जीवित ग्रामो को स्वतन्त्र भारत की प्रमुख विशेषता बनाया जाय। अत यह स्वाभाविक ही था कि भारत के सविधान मे परिगणित राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्तो म एक इस प्रकार है 'राज्य पचायतो को सगठित करने और उन्हे ऐसी शक्ति एव प्राधिकार प्रदान करने के लिए पग उठायेगा जो कि उन्हे स्वशासन की इकाइयो के रूप म कार्य करने के योग्य बनाये।'

सरकारी शक्तियो एव कार्यो के विकेन्द्रीकरण के दो मुख्य रूप प्रशासन के क्षेत्रीय कार्यालयो को शक्तियो का सौपा जाना और राज्यीय तथा स्थानीय प्राधिकरणो को शक्तियो व कार्यो का सौपा जाना है। प्रथम प्रकार की व्यवस्था का स्वरूप प्रशासनिक है और उसम मन्त्रालय या विभाग की शक्तियो का कोई हस्तान्तरण नही होता। न्यागमन (devolution) का अर्थ है विशिष्ट कार्यों का करने के लिए राज्यीय और स्थानीय सरकारो को कानूनी शक्तियो का सौपा जाना।[1] इस प्रकार की व्यवस्था का स्वरूप राजनीतिक तथा प्रशासनिक दोनो प्रकार का होता है अर्थात् शक्तियो का न्यागमन दो प्रकार से किया जा सकता है—(1) भूमिगत (Territorial) और (2) कार्यात्मक (Functional)। भौगोलिक या भूमिगत विकेन्द्रीकरण कर वसूल करने, सीमा शुल्क एकत्रित करने, देशीकरण इत्यादि कार्यों का ठीक प्रकार स करने के लिए बहुत आवश्यक है। कार्यात्मक विकेन्द्रीकरण का अर्थ है कि प्रशासनिक शक्तियो का केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत विभिन्न इकाइयो के बीच वितरण अथवा उनका प्रतिनिधान (delegation)। सघात्मक सरकार म सघीय तथा सघ की इकाइयो के बीच शक्तियो और कार्यो का विभाजन सविधान द्वारा किया जाता है। एकात्मक सरकार म भी केन्द्र और इकाइयो के मध्य शक्तियो का विभाजन सरकार की सुविधा के लिए कानून द्वारा या कार्यपालिका आज्ञप्ति द्वारा होता है।

विकेन्द्रीकरण के गुण—जैसा कि उपर्युक्त विवेचन स स्पष्ट किया गया है विकेन्द्रीकरण केन्द्रीकरण के विपरीत होता है। इसम एकात्मक शासन के दोष सघात्मक शासन के गुणो के रूप म विकसित दीखते है। केन्द्रीकरण के दो मुख्य दोष इस प्रकार है—(1) स्थानीय इकाइयो से केन्द्र के सम्बन्धो के सूत्र म नियन्त्रण की शिथिलता। (2) केन्द्र पर व्यवस्थापन सम्बन्धी बोझ अथवा कार्याधिक्य। इनके साथ साथ विकेन्द्रीकरण के पक्ष म कुछ अन्य तर्क अग्रलिखित है—(1) यह लोकप्रिय नियन्त्रण की परिधि को उन कार्यों तक विस्तृत कर देता है जिन्हे कि स्थानीय इकाइयो के अधिकारी सम्पन्न करते हैं। (2) यह राष्ट्र की नीति को स्थानीय आर्थिक और भौतिक विशेषताओ के साथ सामजस्य करने म सुविधाजनक है। (3) यह विलम्ब और लाल फीताशाही प्रवृत्ति (ये दोनो केन्द्रात्मक नौकरशाही के दो बडे दोष हैं) को दूर करने म सहायक होता है, क्योकि इसमे इकाइयाँ केन्द्रीय सरकार के लिए प्रमुखापेक्षी की तरह शान्त नही पडी

[1] This is an actual transfer rather than merely a delegation of functions and powers even when the power is limited and circumscribed by national regulations —U N *A Handbook of Public Administration* p 64

अनेक आवश्यकताओं के लिए दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा—यह परस्पर सहयोग से काम लेगा। इस प्रकार प्रत्येक गाँव का पहला काम यह होगा कि वह अपनी आवश्यकता के लिए पूर्ण अनाज व कपड़े के लिए पूरी कपास पैदा कर ले। उसके पास इतनी अतिरिक्त भूमि होनी चाहिए जिसमें पशु चर सकें और गाँव के बड़ों व बच्चों के लिए मन-बहलाव के साधन और मैदान आदि की व्यवस्था हो सके। बुनियादी शिक्षा की अंतिम कक्षा तक की पढ़ाई सबके लिए अनिवार्य होगी। जात पाँत और क्रमागत अस्पृश्यता जैसे भेद आज हमारे समाज में पाये जाते हैं, वैसे इस ग्राम स्वराज में बिल्कुल न रहेंगे। सत्याग्रह और असहयोग के शस्त्र के साथ अहिंसा की सत्ता ही ग्रामीण समाज का शासन बल होगी।

गाँव का शासन चलाने के लिए प्रतिवर्ष गाँव के पाँच व्यक्तियों की एक पंचायत चुनी जायेगी जिसके लिए एक विशेष निर्धारित योग्यता वाले गाँव के वयस्क स्त्री-पुरुषों को अधिकार होगा कि वे अपने पंच चुन लें। इन पंचायतों को सब प्रकार की आवश्यक सत्ता और अधिकार रहेंगे। चूँकि इस ग्राम-स्वराज में आज के प्राचीन अर्थों में दण्ड की कोई व्यवस्था न रहेगी, इस लिए यह पंचायत अपने एक वर्ष के कार्यकाल में स्वयं ही विधानसभा, न्यायालय और कार्यकारी सभा का सारा काम संयुक्त रूप से करेगी। इस ग्राम शासन में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर आधारित सम्पूर्ण प्रजातन्त्र काम करेगा। व्यक्ति ही अपनी इस सरकार का निर्माता भी होगा। उसकी सरकार और वह दोनों अहिंसा के नियम के वश होकर चलेंगे।[1]

ग्राम स्वराज्य की अन्य मुख्य बातों को संक्षेप में, इस प्रकार रखा जा सकता है—(1) आदर्श भारतीय गाँव इस प्रकार बसाया और बनाया जाना चाहिए कि वह पूर्णतया निरोग रह सके। गाँव के कार्यकर्ताओं को पहले गाँव की सफाई और आरोग्य के प्रश्न को अपने हाथ में लेना चाहिए। (2) गांधीजी की कल्पना की अर्थव्यवस्था में शोषण का पूर्ण बहिष्कार होगा, क्योंकि शोषण ही तो हिंसा का सार तत्त्व है। (3) गाँव-उद्योग, कला कौशल, स्वास्थ्य और शिक्षा इन चारों का सुन्दर समन्वय होना आवश्यक है। अतः ग्रामीण उद्योगों व दस्तकारियों का विकास होना चाहिए। जन स्वास्थ्य के लिए चिकित्सा सहायता की व्यवस्था होनी चाहिए और बेसिक शिक्षा को अनिवार्य बना देना चाहिए। ग्रामोद्योगों का पुनरुद्धार होना चाहिए और उनमें चरखे व खादी का स्थान केन्द्रीय रखना चाहिए। पशु पालन को सहकारी ढंग से संगठित किया जाना चाहिए। (4) ग्राम पंचायतों का निर्माण प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा होना चाहिए। ग्राम-पंचायतों के ऊपर जिला पंचायतें हों और जिला पंचायतों के ऊपर प्रान्तीय अथवा प्रादेशिक पंचायतें संगठित हों और सबसे ऊपर राष्ट्रीय पंचायत हो। धरातल की पंचायतों की शक्तियाँ बहुत व्यापक होंगी और जितना ऊपर को जायेंगे उनकी सत्ता उतनी ही कम होती चली जायेगी। (5) पंचायत राज का आधार लोकसत्ता और कार्य करने की प्रणाली दल विहीन होगी।

हम गांधीजी के आधारभूत विचारों में सत्य का बड़ा अंश पाते हैं। व्यक्ति की स्वतन्त्रता और शक्ति का विकेन्द्रीकरण तथा दल विहीन प्रजातन्त्र बड़े ही सुन्दर और आकर्षक आदर्श हैं, किन्तु आज के विश्व में कोई भी अकेला राज्य इन आदर्शों पर आधारित व्यवस्था को, व्यवहार में, पूर्णतया नहीं अपना सकता। इस व्यवस्था के अपनाने के परिणामस्वरूप केन्द्रीय सरकार अति क्षीण और नीचे के स्तरों की पंचायतों पर अधिक निर्भर होगी। ऐसी सरकार वर्तमान परिस्थितियों में अधिक समय तक स्थायी नहीं रह सकती।

सर्वोदय—गांधीजी की विचारधारा ही सर्वोदय का उद्गम है। वह रस्किन के ग्रन्थ Unto This Last से बहुत प्रभावित हुए थे। इस पुस्तक का उन्होंने अनुवाद भी किया था

[1] हरिजन सेवक २-८-४२।

गाधीजी के राम राज्य म स्वालम्बन पर बहुत अधिक बल दिया गया है। महात्माजी के भाव को डाक्टर पट्टाभि सीतारमैया न इस प्रकार स व्यक्त किया है—'जहा व्यक्ति स्वावलम्वी हैं वहाँ गाँव स्वावलम्बी है, कस्बे स्वावलम्बी हो जायेंग और शहरा की वृत्ति स्वावलम्बन की ओर रहेगी। यह सब रक्त बहाकर शक्ति के जोर से न होगा। इसके लिए अधिकारियो का निरन्तर आग्रह करन के बजाय, सीधी तरह कर्त्तव्य का अपनाना होगा, जबरदस्ती श्रम करने के बजाय स्वेच्छापूर्वक श्रम करना हागा।' परन्तु गाधीजी यह समझते थे कि आदश राज्य की प्राप्ति शायद ही कभी हो सके, अत उन्होन अहिसा पर आधारित प्रजातन्त्र को दूसरी श्रेणी के राज्य के रूप म स्वीकार किया था। परन्तु वह पाश्चात्य प्रजातन्त्रो का प्रजातन्त्र का सच्चा रूप नही मानते थे। गाधीजी के अनुसार आदश प्रजातन्त्र एक प्रकार के कम या अधिक आत्म निभर और स्वशासित ग्राम समुदायो का सघ होना चाहिए। वह चाहते थे कि प्रत्येक ग्राम का एक छोटा सा गणत न या पचायत हो, जिसे प्राय पूरी शक्तियाँ प्राप्त हो। ऐसे ग्राम म प्रजात न का आधार व्यक्तिगत स्वत त्रता हो और ग्राम समुदाय के सभी काय सहकारिता के आधार पर सचालित हो।

शासनाधिकारो के विषय म गाधीजी विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त में विश्वास रखते थे। वतमान अवस्था म शक्ति और अधिकार ऊपर से नीचे की ओर चलते है। इसके विपरीत उनका विचार था कि अधिकारो का उद्भव शासन की आधारभूत इकाइयो म होना चाहिए और शक्ति नीचे से ऊपर की ओर बहनी चाहिए। देश के लिए एक केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण म वह राष्ट्र की स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखन की आवश्यकता अनुभव करत थ, परन्तु वह पचायतो को यथासम्भव सबसे अधिक अधिकार सौपने के पक्ष म थे। वह ग्राम पचायतो के ऊपर जिला पचायतो, उनके ऊपर राज्य या प्रादेशिक पचायतो और सबसे ऊपर सर्वोच्च पचायत की स्थापना चाहत थे। राज्य सगठन, उनके अनुसार एक पिरामिड जैसा होना चाहिए। जहा तक उनके आदश समाज का सम्ब ध है, गाधीजी का ध्येय प्रधानत साम्यवादियो तथा अराजकतावादियो के ध्येय से मिलता है, परन्तु उनके ध्येय तक पहुँचन के साधन भिन्न है।

गाधीजी के मतानुसार स्वराज्य (स्वतन्त्रता) का अथ भारत के आम लागो की स्वतन्त्रता होना चाहिए, उन पर आज शासन करने वालो की स्वत त्रता नही। स्वतन्त्रता नीचे स आरम्भ होनी चाहिए। प्रत्येक गाँव म पचायत का राज होगा। उसके पास पूण सत्ता या शक्ति होगी जिसका अर्थ यह है कि प्रत्यक गाव को अपने पाँव पर खडा होना होगा। अपनी आवश्यकताये स्वय पूरी कर लेनी हागी जिसस कि वह अपने सभी काय स्वय चला सके, यहा तक कि वह सम्पूण विश्व के विरुद्ध अपनी रक्षा कर सके। इस प्रकार अन्त म हमारी नीव व्यक्ति पर होगी, जिसका यह अथ नही कि पडोसियो या ससार पर भरोसा न रखा जाये। ऐसे समाज की रचना सम्भवत सत्य और अहिंसा पर ही हो सकती है। मेरा मत है कि जब तक ईश्वर पर जीता जागता विश्वास न हो, सत्य और अहिसा पर चलना असम्भव है। ऐसा समाज असख्य गाँवो का बना होगा, उसका फैलाव एक के ऊपर एक के ढग पर नही, वरन् समुद्र की लहरो की भाँति एक के बाद एक घेरे की शक्ल म होगा और व्यक्ति उसका मध्य बिन्दु होगा। इस चित्र म प्रत्येक धम का पूण और ममता का स्थान होगा तथा उस मशीन के लिए कोई स्थान न होगा, जो मनुष्य के श्रम का स्थान लेकर थोडे स लोगो के हाथो म सारी शक्ति एकत्र कर देता है। उसम एसी मशीनो की गुजाइश होगी जो प्रत्येक व्यक्ति को उसके काम म सहायता पहुचाये।[7]

गाधीजी के अपने शब्दो म, ग्राम स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूण प्रजातन्त्र होगा जो अपनी आवश्यकताओ के लिए अपने पडोसियो पर भी निभर नही करगा और

[7] हरिजन सवक, २८-७-४६।

नियमो को निर्धारित समाज करेगा । विकेन्द्रीकृत उद्योगा म उत्पादन के औजारा पर स्वामित्व या तो व्यक्तियो का होगा या सहोद्योग (सहकारी) सस्थाओ का, केन्द्रीभूत उद्योगा पर स्वामित्व समाज का होगा और उनका सचालन सरकार पब्लिक कॉरपोरेशन और सहोद्योग समितिया म से किसी के द्वारा होगा । न्यूनतम आय इतनी होनी चाहिए कि उससे भोजन, वस्त्र, शिक्षा, चिकित्सा और निवास की आवश्यकतायें उचित रूप म पूरी हो जायें । इस समय आय का अधिकतम परिमाण वतमान न्यूनतम का बीस गुना नियत करके, उचित अवधि के भीतर, उस न्यूनतम के दस गुना पर ले आना चाहिए ।

उत्पादन व्यवस्था के लिए निम्नलिखित सिद्धान्ता का पालन करना चाहिए (1) उससे धन का वितरण व्यापक और समान हो । (2) सुख उपभोग की वस्तुएँ तैयार करने से पहले उस लोगो की आवश्यकतायें पूरी करनी चाहिएँ । (3) कृषि और भूमि-व्यवस्था—उत्पादन की योजनाओ का केन्द्र कृषि को और पशु पालन सरीखे कृषि से सम्बन्धित उद्योगो को रखना चाहिए । देश की भूमि व्यवस्था म व्यापक सुधार किये बिना खेती की पैदावार और कुशलता म कोई स्थायी उन्नति नही हो सकती । इसलिए जमीदारी की समाप्ति यथाशीघ्र की जानी चाहिए । छोटे छोटे खेतो को साझे की सहकारी खेतियो म सगठित कर देना चाहिए । भूमिहीन श्रमिको की भूख शान्त करने के लिए और बड़े परिमाण की यान्त्रिक खेतिया की आर्थिक सम्भावनाओ की परीक्षा के रूप म नौतोड भूमि खण्डा पर सामूहिक खेती करा कर देखी जा सकती है । ट्रैक्टर आदि यन्त्रो का प्रयोग केवल जमीन जोतने सरीखे आवश्यक कार्यों तक ही सीमित रखना चाहिए । (4) उद्योग और व्यवसाय के क्षेत्र म माग दशन सिद्धान्त यह होना चाहिए कि जिस किसी वस्तु का उत्पादन विकेन्द्रीकृत उद्योग द्वारा किया जा सके उसका उत्पादन केन्द्रीकृत उद्योगों को विकेन्द्रीकृत उद्योगो ा सहायक मानकर चलाना चाहिए जिससे कि विकेन्द्रीकृत उद्योगो की उत्पादन शक्ति बढ जाय ौर उनको औजार इत्यादि मिलते रह । केन्द्रीभूत उद्योगो पर स्वामित्व समाज का होना चाहि

आचाय श्रीमान् नारायण के अनुसार, जो गाधीवादी आर्थिक व्यवस्था के विशेष ोजन आयोग के भूतपूर्व सदस्य हैं, सर्वोदय के आधारभूत सिद्धान्त इस प्रकार हैं— ारधारा का यह बुनियादी सिद्धान्त है कि शोषण रहित समाज को बनाने के लिए आ ीतिक विकेन्द्रीकरण आवश्यक है । केन्द्रीकरण के कारण न केवल व्यक्ति का विकास रु होता है बल्कि समाज का राजनीतिक व आर्थिक जीवन भी पगु बन जाता है ।

यह सोचना बिल्कुल गलत होगा कि विकेन्द्रीकरण एक दकियानूसी कदम है जो वतम विज्ञान के प्रवाह के विरुद्ध है । सच तो यह है कि विज्ञान की प्रगति के साथ साथ व्यापक विकेन्द्री करण अधिक आवश्यक बन जाता है । जान स्ट्रेची के शब्दों म, भारत और चीन जसे देशो म जह मशीना द्वारा केन्द्रीय व्यवस्था करना बुद्धिमानी न होगी, छोटी छोटी मशीना की सहायता से इस प्रकार केन्द्रित आर्थिक व्यवस्था सयोजित की जा सकती है जिससे मशीन व मनुष्य दोनो शक्तियो का सन्तुलित विकास हो । बेकारी की दृष्टि से भी लगभग सभी अर्थशास्त्री, आर्थिक सयोजक, समाजशास्त्री व राजनीतिज्ञ स्वीकार करते हैं कि लघु उद्योगा के रूप म विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था के अतिरिक्त इस समस्या का भारत जैसे अर्द्ध विकसित देशो मे हल करना सम्भव नही है । इस दृष्टि से भारत की तृतीय पचवर्षीय योजना म लघु ग्राम और कुटीर उद्योगो को महत्त्व का स्थान दिया गया है और सभी प्रदेशो म यह प्रयत्न किया जा रहा है कि जो लोग काम करने को तैयार हो, उन्हें किसी न किसी प्रकार का उत्पादन काय दिया जाय ।

4 नेपाल मे पचायत प्रजातन्त्र

1962 म निर्मित सविधान के भाग आठ म पचायत योजना को दिया गया है ।

और उसका नाम रखा था 'सर्वोदय'। सर्वोदय के सिद्धा त से उ होने ये बाते समझी (1) सबके भल म अपना भला है, (2) वकील और नाई क काम की कीमत एक सी होनी चाहिए, (3) आजीविका का अधिकार दानो को एक समान है, और (4) मजदूर व किसान का सादा जीवन ही सच्चा जीवन है। गाधीजी के निर्वाण के उपरा त 1948 मे सेवा ग्राम (वर्धा) मे हुए रचनात्मक कार्यकर्त्ताओ के सम्मेलन से सर्वोदय समाज का ज म हुआ। इसके उद्देश्यो की घोषणा म कहा गया—'सर्वोदय समाज का उद्देश्य सत्य और अहिंसा पर आधारित ऐसे समाज की रचना करना है, जिसम जात पात न हो, जिसमे किसी को शोषण करने का अवसर न मिले और जिसमे व्यक्ति व समूह दोना को पूर्ण विकास करने का अवसर मिले।' सर्वोदय के आधारो म हम अग्रलिखित को गिन सकते हैं (1) अहिंसा, (2) विकेन्द्रीकरण, (3) ग्राम उद्योग तथा कुटीर व्यवसाय, (4) आर्थिक समता (5) ट्रस्टीशिप, (6) अपरिग्रह अर्थात् त्याग। सर्वोदय समाज के कार्यकर्त्ता को ये व्रत लने होते हैं—सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह, अभय, अस्पृश्यता निवारण, शारीरिक श्रम, सर्वधर्म समभाव, और स्वदेशी।

सर्वोदय विचारधारा को सबसे अधिक व्यवहारिक रूप देने और देश के कोने कोने म इसका प्रचार करने का श्रेय आचार्य विनोबा भावे को है। उ होने भारत के प्रत्येक प्रदेश मे भूदान द्वारा सर्वोदय के सिद्धा तो को व्यावहारिक रूप देन का प्रयत्न किया है और यह आ दोलन अभी जारी है। उनका कहना है कि जिस विज्ञान ने प्रकृति की शक्तियो को वश म करके उ हे मानव की सेवा म लगा दिया था, उसके ही कारण उद्योगो और व्यवसायो मे के द्रीभूत होने की प्रवृत्ति बढन स मानव विज्ञान का स्वामी नही रहा, दास बन गया। मार्क्स चाहता था कि पूजीपतियो की जिस साम्राज्यवादी समाज व्यवस्था न व्यक्ति को सर्वत्र दास बना रखा है और लोकत त्र को असम्भव बना दिया है, उसका हिंसामय क्रा ति द्वारा नाश करके उसके स्थान पर ऐसी समाज-व्यवस्था की प्रतिष्ठा की जाय जिसकी नीव याय, समता, व्यक्ति के अधिकारो और लोकतन्त्र पर रखी गयी हो। सोवियत रूस मे सरकार (शासनत त्र) की समाप्ति के कोई चिन्ह दृष्टिगोचर नही होते, यद्यपि उनकी सरकार मार्क्सवाद के अनुसार सगठित की गयी बतायी जाती है। साम्यवाद (Communism) के समान सब प्रकार के फासीवाद (Fascism) स भी स्वात त्र्य और व्यक्तित्व का नाश हो जाता है। गा धीजी का सर्वोदय आदर्श लेकर प्रविष्ट होता है जिसम कि व्यक्ति और समष्टि (समूह) के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सदाचारी जीवन का एकत्र सम वय करके दिखाया गया है। उनका दृढ विश्वास था कि मनुष्य के सब कार्यों म परस्पर सम्ब ध रहता है और उनस अपने आप आ तरिक एकता कायम हो जाती है, जो सदाचार क मौलिक नियमो पर आधारित होती है। सामाजिक सस्थाओ का निर्माण और गठन व्यक्तियो के ही आचार विचार और आदर्श जीवन से होता है।

सर्वोदय के मुख्य सिद्धान्तो को इस प्रकार स रखा जा सकता है, जिनकी व्याख्या करने की यहाँ आवश्यकता नही है (1) सर्वोदय और मार्क्सवाद म मूलभूत अ तर है। (2) उपयोगितावाद का सिद्धा त—अधिकतम व्यक्तियो का अधिकतम हित भी दोषपूर्ण है। (3) सर्वोदय एक विचार-धारा है। (4) समाज एक इकाई है। (5) सर्वोदय समाज वर्ग-हीन तथा भेद रहित है। (6) साधना की शुद्धता आवश्यक है।

सर्वोदय योजना के आर्थिक पहलू—अहिंसा समाज के शोषण (Exploitation) की समाप्ति और जीवन म पूर्णता की प्राप्ति के लिए रहन-सहन की सादगी अत्य त आवश्यक है। ऐसा समाज जात-पांत और वर्ग या श्रेणी पर आधारित न होगा। सम्पत्ति—जिस सम्पत्ति का समाज उत्पादन करेगा उस पर निय त्रण भी समाज का रहेगा, परन्तु उसका स्वामी कोई भी व्यक्ति हो सकता है और समाज भी। खेती की जमीन का मालिक जोतने वाला होगा, परन्तु उसके

सकता है। कोई भी कर केवल कानून के अनुसार ही लगाया जा सकता है। संचित निधि से कोई भी व्यय केवल राष्ट्रीय पंचायत द्वारा पारित विनियोग कानून या संविधान की धारायें 64 और 65 के अन्तर्गत की व्यवस्था के अनुसार ही किया जा सकता है।

2500 से लेकर 3000 तक जनसंख्या के लिए ग्राम सभायें बनी हैं। इस समय सम्पूर्ण देश में लगभग 3500 ग्राम सभायें (और पंचायतें) हैं, प्रत्येक ग्राम सभा 11 सदस्यों की कार्यकारिणी अर्थात् पंचायत का चुनाव करती है। सदस्यों का चुनाव गुप्त मतदान पद्धति द्वारा होता है। प्रधान पंच और उप प्रधान पंच ग्राम सभा के पदेन सभापति और उप-सभापति रहते हैं। सरकारी अधिकारी, ग्राम सभा के कर्मचारी और जो उसके कर आदि नहीं देते तथा दिवालिये पंचायत के सदस्य नहीं बन सकते। ग्राम पंचायत का कर्तव्य गाँव के विकास के लिए विभिन्न प्रकार के कार्यों में पहल करना है। उदाहरण के लिए, सड़कों का निर्माण और उन्हें अच्छी दशा में बनाये रखना, छोटे पुल व पुलिए बनवाना, सड़कों के दोनों ओर पेड़ लगवाना, सफाई के लिए व्यवस्था करना, छूत के रोगों को फैलने से रोकना, प्राथमिक पाठशालायें चलाना, कुआँ, छोटे तालाबों व नहरों के लिए व्यवस्था करना, कुटीर उद्योग चलाना और उन्हें लोकप्रिय बनाना, कृषि की पैदावार को उन्नत करने के साधनों को अपनाना, इत्यादि। ग्राम सभा का अपना कोष होता है, उस सभा की वर्ष में कम से कम दो बैठकें होना आवश्यक हैं। जिस प्रकार से ग्रामीण क्षेत्रों में ग्राम सभायें और पंचायतें बनी हैं उसी प्रकार नगरों में नगर पंचायतें बनी हैं। वे नगर के कल्याण और उन्नति के लिए अन्य कार्य भी करती हैं।

ग्राम सभा और ग्राम-पंचायत की भाँति जिले में जिला सभायें और पंचायतें हैं। जिला पंचायतें ग्राम पंचायतों का मार्ग दर्शन, परिवीक्षण और नियन्त्रण करती हैं और उनके कार्यों में समन्वय भी कायम करती हैं। जिला पंचायतें जिला स्तर के कार्य भी करती हैं। जिला पंचायत में प्रत्येक ग्राम-पंचायत का एक एक निर्वाचित प्रतिनिधि सदस्य होता है और नगर पंचायतों के प्रतिनिधियों की संख्या उनके कुल निर्वाचित सदस्यों की 1/3 होती है। जिन जिलों में ग्राम पंचायतों की संख्या बीस से कम है और फलतः जिला पंचायत के सदस्यों की संख्या भी बीस से कम रहती है, उनमें राजा उस कमी की पूर्ति नामजद सदस्यों द्वारा कर सकता है। जिला सभा भी ग्यारह सदस्यों की जिला पंचायत चुनती है और एक सभापति तथा एक उप सभापति भी। साधारणतया जिला सभा अग्रलिखित कार्य करती है—(1) जिला पंचायत द्वारा आय और व्यय के लेखों का निरीक्षण, (2) जिला पंचायत द्वारा प्रस्तुत बजट तथा पूरक बजट पर विचार व निर्णय करना, (3) जिला पंचायत द्वारा तैयार की गयी विकास योजना को स्वीकृत करना, (4) जिला पंचायत द्वारा प्रस्तुत प्रगति रिपोर्ट पर विचार करना, और (5) अपने अधिकार क्षेत्र में कर, चन्दे व फीस आदि आरोपित करना।

जिला सभा की वर्ष में कम से कम दो बैठकें होनी आवश्यक है। जिला सभा के सदस्यों का कार्यकाल छः वर्ष है, जिनमें से कुछ निर्वाचित सदस्य प्रति दो वर्ष बाद पद से अलग होते हैं। सभापति व उप-सभापति दो वर्ष के लिए चुने जाते हैं। जिला पंचायत के मुख्य कार्य इस प्रकार हैं—(1) राज्य सरकार द्वारा स्वीकृत जिला स्तर की सभी विकास योजनाओं को कार्यरूप में परिणत करना, (2) प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा के लिए व्यवस्था करना, (3) जिला-स्तर के विकास कार्यों में पहल करना, (4) जिले के भीतर आने वाली ग्राम व नगर पंचायतों का निरीक्षण करना, (5) जिला पंचायत का बजट बनाना, (6) व्यक्तियों और सवारियों पर पुल या घाट आदि पार करने के लिए फीस लगाना, (7) नगर पंचायतों के क्षेत्र से बाहर मकानों पर कर लगाना, जो प्रति मकान 10 रुपये से अधिक नहीं हो सकता, (8) ग्राम और नगर पंचायतों की आय में (सरकारी सहायता को छोड़कर) अधिक से अधिक 5 प्रतिशत का भाग पाना, (9)

को चार स्तरा पर सगठित किया गया है, सबसे नीचे के स्तर पर गाँव (और नगर) पचायते हैं। उनके ऊपर जिला पचायतें और अचल पचायतें ह तथा सबसे ऊपर राष्ट्रीय पचायत है। प्रत्येक नागरिक, जिसकी आयु कम स कम 25 वष हो, पचायत का सदस्य बन सकता है। इस प्रकार प्रत्येक नागरिक पचायत प्रजातन्त्र का अभिन्न अग बन गया है। भारत मे भी पचायत राज्य अथवा लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना लागू हुई है, किन्तु वह सघ व राज्य के स्तरा पर सासद शासन पद्धति के साथ चल रही है। नेपाल म पचायत पद्धति ने सासद प्रजातन्त्र का स्थान लिया है, इस योजना को दलगत शासन की विफलता के सन्दभ म लागू किया गया। शक्ति के विकेन्द्रीकरण के महत्त्व को स्पष्ट करत हुए स्वय राजा महेन्द्र ने कहा था—'मेरी यह इच्छा है कि देश म ऐसी व्यवस्था स्थापित करू जिसम प्रशासन जनता की आवश्यकताओ और आकाक्षाओ को प्रतिबिम्बित करे और जिसके साथ जनता सहयोग कर सके तथा प्रशासनिक और विकास कार्यों से अपन को अनुशासित ढग से सम्बद्ध कर सके।'

सविधान म कहा गया है कि विभिन्न स्तरो पर स्थापित पचायतो की शक्तिया और उनके कार्यों को कानून द्वारा परिभाषित किया जायगा। कानून द्वारा किये गये शक्ति के विकेन्द्रीकरण मे गाँव और जिला पचायतो को अपन अपन अधिकार क्षेत्र म विभिन्न प्रकार के प्रशासनिक और विकास कार्यों को निर्धारित व कार्यान्वित करने की पूण सत्ता सौंपी गयी है। सबसे ऊपर राष्ट्रीय पचायत है, यही देश का सर्वोच्च विधायी अग है। इसमे विभिन्न वर्गों और व्यावसायिक सगठनो का प्रतिनिधित्व निम्न प्रकार है—

नेपाल कृषक सगठन	4 सदस्य	नेपाल श्रमिक सगठन	4 सदस्य
नेपाल युवा सगठन	4 ,,	नेपाल भूतपूव सनिको के सगठन	2 ,,
नेपाल महिला सगठन	4 ,,		

उपर्युक्त के अतिरिक्त ऐसे व्यक्तियो के भी चार प्रतिनिधि सम्मिलित हैं जिन्होंने शास्त्री या स्नातक की उपाधि प्राप्त कर ली हो। चौदह अचल सभायें राष्ट्रीय पचायत के लिए 90 सदस्यो का निर्वाचन करती है। इनके अतिरिक्त राजा को कुछ सदस्य नामजद करने की शक्ति प्राप्त है, एसे सदस्यो की सख्या निर्वाचित सदस्यो के पन्द्रह प्रतिशत से अधिक नहीं हो सकती, राष्ट्रीय पचायत के सदस्यो का कायकाल छ वष है, जिनम से प्रति दो वष बाद 1/3 सदस्य अपना स्थान खाली करते हैं। राष्ट्रीय पचायत के सभापति को राजा उसके सदस्यो म स ही उसकी सिफारिश पर नियुक्त करता है। राष्ट्रीय पचायत के सदस्य अपने म से एक को उप सभापति चुनते है। सभापति और उप सभापति की अवधि दो वर्ष है, किन्तु व पुन नियुक्त अथवा निर्वाचित किये जा सकते है। राष्ट्रीय पचायत ही उसके कार्यो और अन्य मामलो के बारे म परामश देन के लिए इक्कीस सदस्यो की एक स्टीयरिंग कमेटी बनाती है। राष्ट्रीय पचायत के सदस्यो का भाषण की स्वतन्त्रता प्राप्त है और पचायत को अपने आन्तरिक मामलो को विनियमित करन की शक्तिया प्राप्त हैं।

राष्ट्रीय पचायत म, सविधान और पचायत द्वारा अगीकृत नियमो के अधीन, कोई भी सदस्य विधेयक पेश कर सकता है। परन्तु कुछ बातो, विशेषकर वित्तीय मामलो, स सम्बन्धित विधेयक राजा की पूव स्वीकृति प्राप्त हो जान पर या किसी मन्त्री द्वारा ही पेश किय जा सकते है। जब राष्ट्रीय पचायत म कोई विधेयक पास हो जाता है तो उसे राजा की अनुमति के लिए प्रस्तुत किया जाता है। यदि राजा किसी विधेयक पर अनुमति दना न चाहे या उसम कोई सशोधन कराना चाहे तो वह राज्य सभा स मन्त्रणा करके उसे अपन सन्देश के साथ राष्ट्रीय पचायत को लौटा सकता है। राजा की अनुमति मिल जाने पर ही कोई विधेयक अधिनियम बनता है। जब राष्ट्रीय पचायत का सत्र न हो रहा हो, यदि परिस्थितियो के कारण अध्यादेश जारी करने की आवश्यकता पडे, तो राजा राज्य सभा से मन्त्रणा करने के बाद अध्यादेश जारी कर

को साम्यवादी राज्य के रूप म अनोखी स्थिति से हुआ। युगोस्लाविया द्वारा अपनाये गये नये सिद्धा तो को, सामूहिक रूप म, राष्ट्रीय साम्यवाद का नाम दिया जा सकता है। आरम्भ म युगोस्लाविया के सिद्धा त प्रतिपादको न नई स्थिति को मार्क्स और लनिन के सिद्धान्ता पर आधारित करन के प्रयत्न किय। उन्होने न्यूनाधिक रूप म स्टालिन की भांति अपन देश म समाजवाद स्थापित करन के प्रयास का दावा किया। युगोस्लाविया का साम्यवादी राष्ट्रवाद अन्य पजीवादी दशा के राष्ट्रवाद से भिन्न था। उन्होन तो एक सगठित शक्ति के रूप म अन्तर्राष्ट्रीय साम्यवाद के विचार को त्यागा और विशेष रूप से विश्व क्रान्ति के सिद्धान्त का अस्वीकृत किया, फिर भी युगोस्लाविया के साम्यवादी यह मानत है कि विश्व के सभी देश समाजवाद की आर खिच रहे हैं।

युगोस्लाविया के सिद्धान्तवादियो न स्पष्ट रूप म लनिन ने इस विचार को स्वीकृत नही किया कि 'साम्राज्यवाद पूजीवाद की अन्तिम मजिल है, अतएव पंजीवाद युद्ध का कारण है।' परन्तु युगोस्लाव सिद्धा त इस बात पर जोर दता है कि पूजीवाद राष्ट्र आवश्यक रूप म युद्ध प्रिय नही है। मार्शल टीटो ने कहा कि 'विचारधारायें नही वरन् आक्रामक नीतिया युद्ध का कारण हाती ह। युगोस्लाविया के साम्यवादी किसी भी राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र क मामला म हस्तक्षेप तथा उसक विरुद्ध आक्रामक कार्यवाहियो की निन्दा करते हैं। उनक अनुसार न्यायोचित युद्ध वे है जो कि दलित राष्ट्र अपने का सतान वाला के विरुद्ध लडते है तथा किसी आक्रमणकारी के विरुद्ध अपनी प्रतिरक्षा क लिए लड़े गये युद्ध भी न्यायोचित हात है। कुछ बाता म युगोस्लाविया क नये साम्यवादी सिद्धान्त एडवड बर्नस्टीन (Edward Bernstein) और अन्य जर्मन सशोधनवादियो के निकट पहुँचते हैं। युगोस्लाविया के सिद्धा तवादी यह मानत है कि यद्यपि साम्यवाद का आना अवश्यम्भावी है किन्तु फिर भी उसक लिए लडना पडेगा, अत सर्वहारा वग का *अधिनायकत्व* न्यायोचित है। युगोस्लाविया के साम्यवादी 'राष्ट्रीय साम्यवाद' शब्द को भी पसन्द नही करते, क्योकि यह एक ऐसे राष्ट्रवाद का बोधक है जिसे साम्यवाद की आधारभूत विचारधारा के अनुसार अच्छा नही समझा जाता।

मार्क्स और लेनिन को अपना मार्ग दर्शक स्वीकार करते हुए युगोस्लाविया के साम्यवादी सिद्धा ता के प्रतिपादक यह मानते हैं कि राज्य को अवश्य ही मुझाना है। सर्वहारा वग की अधिनायकशाही, आरम्भ म आवश्यक होते हुए भी सदव जारी नही रह सकती। व उद्योगा क राष्ट्रीयकरण तथा राज्य द्वारा प्रब ध को आवश्यक मानते है किन्तु उस समाजवाद का निम्नतम स्तरीय रूप बताते है। उनक अनुसार समाजवादी राज्य का आधार श्रमिक वर्ग का हित होना आवश्यक है। व अतिरिक्त मूल्य और राज्य (समाज) द्वारा स्वामित्व की धारणाओ म विश्वास करते ह परन्तु वे राज्य के नियन्त्रण को अच्छा नही मानते। उनके अनुसार सोवियत सघ म राष्ट्रीय स्वामित्व का अर्थ राज्य के नियन्त्रण स है। इस प्रकार क नियन्त्रण ने श्रमिको को केवल उनके उचित फल स ही वचित नहीं किया है वरन् राज्य के मुर्झाने की प्रक्रिया को भी रोका है। अतिरिक्त मूल्य मे श्रमिको का भाग बढाने क लिए श्रमिका का स्वय उत्पादन साधना के नियन्त्रण म भाग लेना आवश्यक है, परन्तु निजी स्वामित्व की पद्धति पर लौटने का कोई प्रश्न नही उठता। इस समस्या को हल करने के लिए उन्होने 'सामाजिक सम्पत्ति' और राज्य के बजाय 'सामाजिक नियन्त्रण' की भावनायें विकसित की हैं।

मार्शल टीटो ने 1950 म स्पष्ट शब्दा म घोषित किया था 'अब से उत्पादन के साधना पर राज्य का स्वामित्व एक ऊँचे प्रकार के समाजवादी स्वामित्व म परिवर्तित हो रहा है। उसी म समाजवाद क लिए हमारा मार्ग निर्दिष्ट है और वही अर्थव्यवस्था से राज्य के कार्यो के मुर्झाने के लिए ठीक मार्ग है।' सोवियत सिद्धान्त के अनुसार तो सभी वस्तुआ के उत्पादन के लिए केन्द्रीकृत

हड्डी, गुर, सीग आदि एकत्रित करने के लिए ठेका देना तथा नदी घाटों और मछली पकड़ने आदि के लिए भी ठेका की व्यवस्था करना, और (10) पानी के कारखानो (watermills) का प्रयोग करने वालो पर कर लगाना।

प्रत्येक जोन के लिए अचल सभा है और यह भी ग्यारह सदस्यो की अचल पचायत (कार्यकारिणी) का निर्वाचन करती है। अचल सभाये राष्ट्रीय पचायत के सदस्यो का भी चुनाव करती हैं। प्रत्येक अचल सभा के सभापति और उप सभापति का दो वर्ष के लिए चुनाव होता है अन्य सदस्यो का कार्यकाल छ वर्ष है। अचल पचायत के मुख्य कार्य अग्रलिखित है—(1) राष्ट्रीय एकता की भावना को अधिक सुदृढ बनाना तथा प्रजातान्त्रिक मूल्यो के प्रति भावना को जागृत करना, (2) पचायत पद्धति के आदर्शों को लोकप्रिय बनाना, (3) सहकारिता के सिद्धान्त को लोकप्रिय बनाना और व्यवहार मे प्रयोग द्वारा उसका प्रदर्शन करना, (4) नमूने के रूप मे पाइलट पचायतें स्थापित करना, (5) राष्ट्रीय भाषा और सस्कृति का विकास करना तथा विभिन्न विषयो पर गोष्ठियाँ व सम्मेलन सगठित करना और समाचार पत्र निकालना, (6) पचायतो मे गतिशीलता लाने के तरीको के बारे मे अनुसधान का सचालन करना और किए गये कार्यों का मूल्याकन करना।

अचल पचायत अपना वार्षिक बजट अचल सभा के सामने स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करती है। प्रत्येक अचल पचायत मे (जिला पचायत मे भी) सरकार द्वारा नियुक्त एक सक्रेटरी होता है। अचल सभा अपने क्षेत्र मे आने वाली जिला पचायतो की आय का 10 प्रतिशत तक भाग प्राप्त कर सकती है और जिन क्षेत्रो मे यह विशेष निर्माण कार्य करती है, उनमे लाभ उठाने वालो पर कर भी लगा सकती है। उसकी कार्य प्रणाली अन्य बातो मे जिला पचायत के समान है। सविधान के प्राविधानो के अनुसार विभिन्न स्तरो की पचायतो की शक्तियाँ और उनके कार्य व सगठन कानून द्वारा निर्धारित है। कानूनो द्वारा नियत सीमाओ के भीतर वे स्वतन्त्र है किन्तु केन्द्रीय सरकार की निदशन, नियन्त्रण व परामर्श देने की शक्तियो के अधीन।

पचायत प्रजातन्त्र के आर्थिक और सामाजिक लक्ष्यो पर विचार करते हुए, उनकी आधारभूत बातो को इस प्रकार रखा जा सकता है—(1) परिवहन और सचार तथा शक्ति (बिजली) पर इतना अधिक बल कि उन्हे राष्ट्रीय विकास मे उच्चतम प्राथमिकता प्राप्त हो। (2) भूमि व्यवस्था मे सुधार अति आवश्यक है, क्योंकि नेपाल कृषि प्रधान देश है और अभी तक भूमि पर थोडे से व्यक्तियो का स्वामित्व कायम रहा है। (3) कृषि पदावार को वैज्ञानिक तरीको द्वारा उन्नत करना, (4) नियोजित विकास तथा मित्र देशो से प्राप्त आर्थिक सहायता का सदुपयोग। (5) स्वास्थ्य सेवाओ मे समुचित वृद्धि, (6) सभी स्तरो की शिक्षा का विस्तार, (7) सहकारी सस्थाओ का विकास, (8) स्थानीय साधनो का विकास, (9) प्रशासन व्यवस्था मे सुधार, (10) वर्गीय सगठनो को राष्ट्र की सेवा मे लगाना।

अन्त मे, पचायतो की योजना एक नियोजित प्रजातन्त्र (planned democracy) है। यह आधुनिक आकाक्षाओ और परम्परागत मूल्यो मे मेल स्थापित करने का प्रयत्न है। ऐसे देश मे, जहाँ जनता ने केन्द्र के द्वारा किये गये कम से कम हस्तक्षेप के साथ अपनी आवश्यकताओ की स्वय ही पूर्ति की हो, अग्रेजी ढग की राजनीतिक सस्थाये जनता मे अभिरुचि पैदा नही कर सकती थी। उन्हे युगो की उदासीनता व अकर्मण्यता से निकाल कर बाहर लाने के लिए यह आवश्यक था कि प्रशासन को उनके पास तक ले जाया जाय और उसे उसके कार्यों मे भागीदार बनाया जाय।

5 युगोस्लाविया मे समाजवादी प्रजातन्त्र

युगोस्लाविया मे साम्यवादी सिद्धान्त का आरम्भ सोवियत समुदाय के बाहर युगोस्लाविया

अतिरिक्त युगोस्लाविया एक वहु राष्ट्रीय देश है और उसके प्रदेशो के वीच आर्थिक विकास म वडे अ तर है । युगास्लाविया की ऐसी सामाजिक, आर्थिक औ राजनीतिक सरचना ने अपने पुराने वर्गों के नेतत्व म र्थिक विकास की दिशा म आगे वढना असम्भव वना दिया था । केवल कोई क्रा तिकारी आ ालन ही, जिसका व्यवस्थापन समाजवादी हो, दश का पिछडेपन से छुटकारे के नये प्रभावी माग पर आगे ले जा सकता था और इसी कारए क्रा ति सफल रही । इसी प्रकार नय प्रजात त्रात्मक रूप की ओर उन्नति के माग का आरम्भ क्रा ति द्वारा हुआ । क्रा ति क वाद जनता ने पहले देश के औद्योगीकरण के कठिन काय को किया और राज्य को अधिक शक्तिशाली वनाया गया, जिससे कि समाजवादी विकास मे मुख्य चालक शक्ति प्राप्त हुई । पर तु युगोस्लाव नेता यह समझते है कि समाजवाद की स्थापना प्रत्यक्ष प्रजात त्र के द्वारा अधिक अच्छी प्रकार से हो सकती है । यही काम करने वालो के लिए अधिक्तम मात्रा मे प्रजाताि न्त्रक स्वशासन की प्राप्ति करा सकेगी । समाजवादी प्रजात त्र म केवल विके द्रीकरए और काम करने वाला के द्वारा प्रव ध ही अ तग्रस्त नही हैं, वरन् स्थानीय शासन म स्वायत्तता और राजनीतिक अधिकार भी । इस सिद्धान्त के अनुसार युगोस्लाविया म दूसरे दल की आवश्यकता नही है ।

युगोस्लाविया म अव प्रत्येक उद्यम अपने परिचालन म स्वय म पूण है, उस पर जा भी प्रतिब ध है वे केवल आर्थिक योजना और उसक द्वारा सामा य रूप स विहित की गई वातें है । उसकी आय सघीय कानून के प्राविधाना और सघीय योजना के अनुसार राज्य, कम्यून स सम्ब धित उद्यम, और उसके काम करने वालो व कमचारियो मे विभाजित होती है । उद्यमा का प्रव ध, काम करने वालो के सामूहिक सगठनो, काम करन वाला की परिपदा और प्रव ध वोर्डो द्वारा किया जाता है । काम करने वालो के सामूहिक सगठन परिपदो का एक वप की अवधि के लिए चुनाव करते हैं और वे परिपदें प्रव ध वोड चुनती है । प्रव धको की नियुक्ति प्रतियोगिता विधि के अधीन है, अर्थात् पद के लिए पहल से प्राथना-पत्र माग जाते है और अनेक उम्मीदवारो म से एक मिश्रित आयोग द्वारा उनकी छाट की जाती है, जिसके सदस्या मे ½ काम करने वालो की परिपदो के लिए प्रतिनिधि होते है और अ य व्यावसायिक सघा के प्रतिनिधि तथा ऐसे व्यक्ति होते है जि ह समितियाँ अथवा अधिक वडे उद्यमो म गणत त्र या सघ की सरकार नामजद करती है ।

उद्यमो की आर्थिक नीति का सचालन काम करने वाला की परिपद् द्वारा किया जाता है और उसकी तक्नीकी कार्या विति प्रव धक और उद्यम के व्यावसायिक काय निकाय द्वारा की जाती है । उद्यमो म आपस म प्रतियोगिता चलती है, क्योकि वहा पर वाजार स्वत त्र है । उनकी वाजार म सफलता के लिए गुणात्मक उत्पादन और कम कीमतें निर्णायक तत्त्व है । इस कारण से अव सम्पूण पारिश्रमिक पद्धति, जो पहले केवल के द्रीय प्राधिकारियो के निणया पर निभर थी, क्रमिक रूप से विके द्रित हो गई । ऐसे समाजवादी प्रजात त्र का आधार काम करने वालो की परिपदों और उत्पादको के स्वशासन के अ य प्रत्यक्ष अगा के अतिरिक्त कम्यून है जिसका प्रधान अग जन समिति है । पूवगामी काल मे कम्यून के अधिकतर काय जिल करते थ क्योकि स्थानीय समुदाय उन कार्यो को करने के लिए अत्यधिक थे । 1955 से आगे के वर्षों म स्थानीय समुदाया का भूमि-क्षेत्र वढा है और साथ ही उ ह ऐसे काय हस्ता तरित हुए है जो पहल जिल करत थ । *अव जिले केवल कम्यूनो के लिए कुछ सामा य काय करते है, स्थानीय कम्यूना के विकास म* सम वय स्थापित करत ह और अधिक पिछडे हुए कम्यूनो के लिए सहायता प्राप्त कराते हैं । इसी प्रकार गणत त्र (Republic) जिला के सम्व ध म काय करते है और सघ सरकार गणत त्रा के सम्व ध म काय करती है

नियोजन आवश्यक है । परन्तु युगोस्लाविया में सामाजिक सम्पत्ति और श्रमिकों द्वारा प्रबन्ध को वास्तविक बनाने के लिए नये प्रकार के नियोजन सिद्धान्त निकाले गये । नियोजन केवल व्यक्तिगत उत्पादक उद्यमों का मुख्य कार्य हो गया और राज्य केवल उनका समाजवादी नियामक बन गया । इस सिद्धान्त पर आधारित युगोस्लाविया की अर्थव्यवस्था का सरकारी रूप इस प्रकार है—'युगोस्लाविया की अर्थव्यवस्था नियोजित है, परन्तु योजनायें केन्द्रीय तथा कठोर नहीं हैं। युगोस्लाविया की योजनायें उद्यमों के लिए उत्पादन, कीमतों व वस्तुओं के गुणों आदि के बारे में अनिवार्य कार्यों का निर्धारित नहीं करतीं । ये सभी बातें स्वतन्त्र बाजार तथा माँग और पूर्ति की कार्यवाही पर छोड़ दी जाती हैं । युगोस्लाविया की अर्थव्यवस्था में योजनाओं का उद्देश्य सामान्य विकास की प्रवृत्तियों को समर्थित करना तथा उन्हें ठीक मार्ग पर चलाना है ।[1]

ध्यानपूर्वक देखने से पता चलता है कि युगोस्लाविया में साम्यवाद पर नहीं वरन् समाजवाद पर बल दिया जा रहा है । इस दृष्टि से युगोस्लाविया और भारत की अर्थव्यवस्था तथा शासन पद्धति में काफी मात्रा में समानता है । युगोस्लाविया में समाजवादी प्रजातन्त्र को स्थापित किया गया है, परन्तु भारत प्रजातन्त्रात्मक समाजवाद की दिशा में बढ़ रहा है । चूंकि युगोस्लावियावासी अभी तक साम्यवाद में विश्वास रखते हैं, अतएव उनकी आर्थिक राजनीतिक पद्धति को, सोवियत संघ से भिन्न, नया साम्यवाद कहना उपयुक्त है ।

युगोस्लाविया के सिद्धान्तवादियों के अनुसार विकेन्द्रीकरण द्वारा 'राज्य के मुर्झाने' में प्रजातन्त्र अन्तग्रस्त है । एक विचारक ने समाजवाद के लिए राजनीतिक प्रजातन्त्र को आवश्यक बताते हुए यह घोषित किया कि ऐसे समाज में, जो राज्य के मुर्झाने के समाजवादी मार्ग पर पहुँच रहा हो अवश्य ही स्वतन्त्रता व मानव अधिकार मान्य होने चाहिये । समाजवाद की प्रारम्भिक मन्जिलों में स्वतन्त्रता को सीमित करना आवश्यक हो सकता है, किन्तु समाजवाद को अवश्य ही अपने ढंग के प्रजातन्त्र का विकास करना होगा । इसे ही 'समाजवादी प्रजातन्त्र' कहा जाता है । यह एक नई सामाजिक व्यवस्था है । इसकी एक लेखक ने इस प्रकार परिभाषा दी है—ऐसी राजनीतिक पद्धति जिसमें प्रथम, नीति के निर्धारण में काम करने वाले निर्णायक भाग रखते हैं, दूसरे, श्रमिकों के इस भाग को व्यक्तिगत अधिकारों की एक राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक पद्धति द्वारा सुनिश्चित किया जाता है, तीसरे, जो भी राजनीतिक और अन्य निर्णय किये जाते हैं, वे समाजवादी समुदाय के हितों और आकांक्षाओं के अनुरूप होते हैं । एक चौथी बात भी जुड़नी चाहिए—जो श्रमिक (काम करने वाले) नीति का निर्धारण करते हैं, यथासम्भव अधिक मात्रा में वे ही उसे कार्यान्वित करते हैं ।

युगोस्लाविया के समाजवादी विचारकों के अनुसार केन्द्रीकृत राज्य पद्धतियाँ जो उत्पादन के साधनों के राष्ट्रीयकरण और राज्य नियन्त्रण पर आधारित हैं, केवल तब तक जनसाधारण का समर्थन भी पा सकती हैं, जब तक कि उनका ध्येय पुराने शोषणकारी सम्बन्धों को नष्ट करना तथा नये समाजवादी सम्बन्धों की रचना करना रहे । परन्तु जैसे ही वे स्व केन्द्रित होती हैं यह आवश्यक है कि प्रशासनतन्त्र (जो दफ्तरशाही का रूप धारण करता है) और मनुष्यों के बीच आर्थिक और राजनीतिक विरोध पैदा हो । इसी कारण युगोस्लाविया के राष्ट्रीय कर्णधारों ने कुछ समय तक अपने देश में सोवियत संघ के नमूने की राजनीतिक तथा आर्थिक पद्धति को लागू किया और एक नये प्रकार के साम्यवाद अथवा समाजवादी प्रजातन्त्र को अपनाया ।

द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व युगोस्लाविया यूरोप के सबसे अधिक पिछड़े हुए देशों में था । देश की कुल जनसंख्या में से केवल 10% उद्योग में लगे थे और 75% गाँवों में कृषि करते थे । इसके

[1] Yugeslav Economic System (Belgrad 1954) quoted in *Titoism in Action* pp 22-23